

हिंदी शब्दसागर

आठवाँ भाग

['मनः' से 'लहीक' तक, शब्दसंख्या-२०,०००]

मूल संपादक
श्यामसुंदरदास

मूल सहायक संपादक

बालकृष्ण भट्ट	रामचंद्र शुक्ल
अमीरसिंह	जगन्मोहन वर्मा
भगवानदीन	रामचंद्र वर्मा



संपादकमंडल

कमलापति त्रिपाठी

धीरेन्द्र वर्मा
नगेन्द्र
रामधन शर्मा

हरवंशलाल शर्मा
शिवनंदनलाल दर
सुधाकर पांडेय

करुणापति त्रिपाठी (संयोजक संपादक)

सहायक संपादक
विश्वनाथ त्रिपाठी

हिंदी शब्दसागर के सशोधन सपादन का सपूर्ण तथा प्रथम एव द्वितीय भाग के प्रकाशन का साठ प्रतिशत व्ययभार भारत सरकार के शिक्षामन्त्रालय ने वहन किया ।

परिवर्धित, संशोधित, नवीन संस्करण

शकाब्द १८६३

स० २०२८ वि०

१६७१ ई०

नागरीप्रचारिणी सभा वाराणसी मूल्य २५०१

शशुनाथ वाजपेयी
द्वारा
नागरी मुद्रण, वाराणसी
में मुद्रित

प्रकाशिका

'हिंदी शब्दसागर' अपने प्रकाशनकाल से ही कोश के क्षेत्र में भारतीय भाषाओं के दिशानिर्देशक के रूप में प्रतिष्ठित है। तीन दशक तक हिंदी की मूर्धन्य प्रतिभाओं ने अपनी सतत तपस्या से इसे सन् १९२८ ई० में मूर्त रूप दिया था। तब से निरंतर यह ग्रथ इस क्षेत्र में गभीर कार्य करनेवाले विद्वत्समाज में प्रकाशस्तम्भ के रूप में मर्यादित हो हिंदी की गौरवगरिमा का आख्यान करता रहा है। अपने प्रकाशन के कुछ समय बाद ही इसके खड एक एक कर अनुपलब्ध होते गए और अप्राप्य ग्रथ के रूप में इसका मूल्य लोगों को सहज मुद्राओं से भी अधिक देना पडा। ऐसी परिस्थिति में अभाव की स्थिति का लाभ उठाने की दृष्टि से अनेक कोशों का प्रकाशन हिंदी-जगत् में हुआ, पर वे सारे प्रयत्न इसकी छाया के ही बल जीवित थे। इसलिये निरंतर इसकी पुन श्रवतारणा का गभीर अनुभव हिंदी-जगत् और इसकी जननी नागरीप्रचारिणी सभा करती रही, किन्तु साधन के अभाव में अपने इस कर्तव्य के प्रति सजग रहती हुई भी वह अपने इस उत्तरदायित्व का निर्वाह न कर सकने के कारण मर्मांतक पीडा का अनुभव कर रही थी। दिनोत्तर उसपर उत्तर-दायित्व का ऋण चक्रवृद्धि सूद की दर से इसलिये और भी बढ़ता गया कि इस कोश के निर्माण के बाद हिंदी की श्री का विकास बड़े व्यापक पैमाने पर हुआ। साथ ही, हिंदी के राष्ट्रभाषा पद पर प्रतिष्ठित होने पर उसकी शब्दसंपदा का कोश भी दिनोत्तर गतिपूर्वक बढ़ते जाने के कारण सभा का यह दायित्व निरंतर गहन होता गया।

सभा की हीरक जयती के अवसर पर, २२ फाल्गुन, २०१० वि० को, उसके स्वागताव्यक्ष के रूप में डा० सपूर्णानंद जी ने राष्ट्रपति राजेंद्रप्रसाद जी एवं हिंदीजगत् का ध्यान निम्नांकित शब्दों में इस ओर आकृष्ट किया—'हिंदी के राष्ट्रभाषा घोषित हो जाने से सभा का दायित्व बहुत बढ गया है। हिंदी में एक अच्छे कोश और व्याकरण की कमी खटकती है। सभा ने आज से कई वर्ष पहले जो हिंदी शब्दसागर प्रकाशित किया था उसका वृहत् सस्करण निकालने की आवश्यकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि इस काम के लिये पर्याप्त धन व्यय किया जाय और केंद्रीय तथा प्रादेशिक सरकारों का सहारा मिलता रहे।'

उसी अवसर पर सभा के विभिन्न कार्यों की प्रशंसा करते हुए राष्ट्रपति ने कहा—'वैज्ञानिक तथा पारिभाषिक शब्दकोश सभा का महत्वपूर्ण प्रकाशन है। दूसरा प्रकाशन हिंदी शब्दसागर है जिसके निर्माण में सभा ने लगभग एक लाख रुपया व्यय किया है। आपने शब्दसागर का नया सस्करण निकालने का निश्चय किया है। जब से पहला सस्करण छपा, हिंदी में बहुत बातों में और हिंदी के अलावा ससार में बहुत बातों में बड़ी प्रगति हुई है। हिंदी भाषा भी इस प्रगति से अपने को वंचित नहीं रख सकती। इसलिये शब्दसागर का रूप भी ऐसा होना चाहिए जो यह प्रगति प्रतिबिंबित कर सके

और वैज्ञानिक युग के विद्यार्थियों के लिये भी साधारणतः पर्याप्त हो। मैं आपके निश्चयों का स्वागत करता हूँ। भारत सरकार की ओर से शब्दसागर का नया सस्करण तैयार करने के सहायतार्थ एक लाख रुपए, जो पाँच वर्षों में बीस बीस हजार करके दिए जाएँगे, देने का निश्चय हुआ है। मैं आशा करता हूँ कि इस निश्चय से आपका काम कुछ सुगम हो जाएगा और आप इस काम में अग्रसर होंगे।'

राष्ट्रपति डा० राजेंद्रप्रसाद जी की इस घोषणा ने शब्दसागर के पुन संपादन के लिये नवीन उत्साह तथा प्रेरणा दी। सभा द्वारा प्रेषित योजना पर केंद्रीय सरकार के शिक्षामंत्रालय ने अपने पत्र स एफ १४—३१५४ एच० दिनांक ११/५/५४ द्वारा एक लाख रुपया पाँच वर्षों में, प्रति वर्ष बीस हजार रुपए करके, देने की स्वीकृति दी।

इस कार्य की गरिमा को देखते हुए एक परामर्शमंडल का गठन किया गया, इस सवध में देश के विभिन्न क्षेत्रों के अधिकारी विद्वानों की भी राय ली गई, किन्तु परामर्शमंडल के अनेक सदस्यों का योगदान सभा को प्राप्त न हो सका और जिस विस्तृत पैमाने पर सभा विद्वानों की राय के अनुसार इस कार्य का संयोजन करना चाहती थी, वह भी नहीं उपलब्ध हुआ। फिर भी, देश के अनेक निष्णात अनुभवसिद्ध विद्वानों तथा परामर्शमंडल के सदस्यों ने गभीरतापूर्वक सभा के अनुरोध पर अपने बहुमूल्य सुझाव प्रस्तुत किए। सभा ने उन सबको मनोयोगपूर्वक मथकर शब्दसागर के संपादन हेतु सिद्ध त स्थिर किए जिनसे भारत सरकार का शिक्षामंत्रालय भी सहमत हुआ।

उपर्युक्त एक लाख रुपए का अनुदान बीस बीस हजार रुपए प्रति वर्ष की दर से निरंतर पाँच वर्षों तक केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय देता रहा और कोश के संशोधन, सवर्धन और पुन संपादन का कार्य लगातार होता रहा, परंतु इस अवधि में सारा कार्य निपटया नहीं जा सका। मंत्रालय के प्रतिनिधि श्री डा० रामधन जी शर्मा ने बड़े मनोयोगपूर्वक यहाँ हुए कार्यों का निरीक्षण परीक्षण करके इसे पूरा करने के लिये आगे और ६५०००) अनुदान प्रदान करने की सस्तुति की जिसे सरकार ने कृपापूर्वक स्वीकार करके पुन उक्त ६५०००) का अनुदान दिया। इस प्रकार संपूर्ण कोश का संशोधन संपादन दिसंबर, १९६५ में पूरा हो गया।

इस ग्रथ के संपादन का संपूर्ण व्यय ही नहीं, इसके प्रकाशन के व्ययभार का ६० प्रतिशत बोझ भी दो खंडों तक भारत सरकार ने वहन किया है, इसी लिये यह ग्रथ इतना सस्ता निकालना संभव हो सका है। उसके लिये शिक्षामंत्रालय के अधिकारियों का प्रशंसनीय सहयोग हमें प्राप्त है और तदर्थ हम उनके अतिशय आभारी हैं

जिस रूप में यह ग्रथ हिंदीजगत् के समुख उपरि है, उसमें अद्यतन विकसित कोशशिल्प का यथासा

प्रयोग किया गया है, किन्तु हिंदी की और हमारी सीमा है। यद्यपि हम अर्थ और व्युत्पत्ति का ऐतिहासिक क्रमविकास भी प्रस्तुत करना चाहते थे, तथापि साधन की कमी तथा हिंदी ग्रंथों के कालक्रम के प्रामाणिक निर्धारण के अभाव में वैसा कर सकना संभव नहीं हुआ। फिर भी यह कहने में हमें सकोच नहीं कि अद्यतन प्रकाशित कोशों में शब्दसागर की गरिमा आधुनिक भारतीय भाषाओं के कोशों में अतुलनीय है, और इस क्षेत्र में काम करनेवाले प्रायः सभी क्षेत्रीय भाषाओं के विद्वान् इससे आघार ग्रहण करते रहेंगे। इस अवसर पर हम हिंदीजगत् को यह भी नम्रतापूर्वक सूचित करना चाहते हैं कि सभा ने शब्दसागर के लिये एक स्थायी विभाग का सकल्प किया है जो बराबर इसके प्रवर्धन और सशोधन के लिये कोशशिल्प सबंधी अद्यतन विधि से यत्नशील रहेगा।

शब्दसागर के इस सशोधित प्रवर्धित रूप में शब्दों की संख्या मूल शब्दसागर की अपेक्षा दुगुनी से भी अधिक हो गई है। नए शब्द हिंदी साहित्य के आदिकाल, सत एव सूफी साहित्य (पूर्व मध्यकाल), आधुनिक काल, काव्य, नाटक, आलोचना, उपन्यास आदि के ग्रंथ, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, वाणिज्य आदि और अभिनदन एव पुरस्कृत ग्रंथ, विज्ञान के सामान्य प्रचलित शब्द और राजस्थानी तथा डिंगल, दक्खिनी हिंदी और प्रचलित उर्दू शैली आदि से संकलित किए गए हैं। परिशिष्ट खंड में प्राविधिक एव वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दों की व्यवस्था की गई है।

हिंदी शब्दसागर का यह सशोधित परिवर्धित संस्करण कुल दस खंडों में पूरा होगा। इसका पहला खंड पौष, सवत् २०२२ वि० में छपकर तैयार हो गया था। इसके उद्घाटन का समारोह भारत गणराज्य के प्रधान मंत्री स्वर्गीय माननीय श्री लालबहादुर जी शास्त्री द्वारा प्रयाग में ३ पौष, सं० २०२२ वि० (१८ दिसंबर, १९६५) को भव्य रूप से सजे हुए पहाल में काशी, प्रयाग एव अन्यान्य स्थानों के वरिष्ठ और सुप्रसिद्ध साहित्यसेवियों, पत्रकारों तथा गण्यमान्य नागरिकों की उपस्थिति में संपन्न हुआ। समारोह में उपस्थित महानुभावों में विशेष उल्लेख्य माननीय श्री प० कमलापति जी त्रिपाठी, हिंदी विश्वकोश के प्रधान संपादक श्री डा० रामप्रसाद जी त्रिपाठी, पद्मभूषण कविवर श्री प० सुमित्रानंदन जी पंत, श्रीमती महादेवी जी वर्मा आदि हैं। इस सशोधित सर्वधित संस्करण की सफल पूर्ति के उपलक्ष्य में इसके समस्त संपादकों को एक एक फाउंटेन पेन, ताम्रपत्र और ग्रंथ की एक एक प्रति माननीय श्री शास्त्री जी के करकमलो

द्वारा भेंट की गई। उन्होंने अपने सक्षिप्त सांग्रहित भाषण में इस सभा की विभिन्न प्रवृत्तियों की चर्चा की और कहा 'मार्वाजनिक क्षेत्र में कार्य करनेवाली यह सभा अपने ढंग की अकेली संस्था है। हिंदी भाषा और साहित्य की जैनी सेवा नागरीप्रचारिणी सभा न की है वैसी सेवा अन्य किसी संस्था ने नहीं की। भिन्न भिन्न विषयों पर जो पुस्तकें इस संस्था ने प्रकाशित की हैं वे अपने ढंग के अजूबे ग्रंथ हैं और उनसे हमारी भाषा और साहित्य का मान अत्यधिक बढ़ा है। सभा ने समय की गति को देखकर तात्कालिक उपादेयता के वे सब कार्य हाथ में लिए हैं जिनकी इस समय नितांत आवश्यकता है। इस प्रकार यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि भाषा और साहित्य के क्षेत्र में यह सभा अग्रतिम है'।

प्रस्तुत आठवें खंड में 'मन' से लेकर 'ल्टीक' तक के शब्दों का सचयन है। नए नए शब्द, उदाहरण, योगिक शब्द, मुहावरे, पर्यायवाची शब्द और महत्वपूर्ण ज्ञातव्य सामग्री 'विशेष' से संकलित इस भाग की शब्दसंख्या लगभग २०,००० है। अपने मूल रूप में यह ग्रंथ कुल ४२८ पृष्ठों में था जो अपने विस्तार के साथ इस परिवर्धित सशोधित संस्करण में लगभग ५६४ पृष्ठों में आ पाया है।

संपादकमंडल के प्रत्येक सदस्य ने यथासामर्थ्य निष्ठापूर्वक इसके निर्माण में योग दिया है। स्व० श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़ नियमित रूप से नित्य सभा में पधारकर इसकी प्रगति को विशेष गंभीरतापूर्वक गति देते थे और प० कल्याणपति त्रिपाठी ने इसके संपादन और संयोजन में प्रगाढ़ निष्ठा के साथ घर पर, यहाँ तक कि यात्रा पर रहने पर भी, पूरा कार्य किया है। यदि ऐसा न होता तो यह कार्य संपन्न होना संभव न था। हम अपनी सीमा जानते हैं। संभव है, हम सबके प्रयत्न में छुटियाँ हों, पर सदा हमारा परिनिष्ठित यत्न यह रहेगा कि हम इसको और अधिक पूरा करते रहे क्योंकि ऐसे ग्रंथ का कार्य अस्थायी नहीं, सनातन है।

अंत में शब्दसागर के मूल संपादक तथा सभा के संस्थापक स्व० डा० थ्यामसु दरदास जी को अपना प्रणाम निवेदित करते हुए, यह सकल्प हम पुनः दुहराते हैं कि जब तक हिंदी रहेगी तब तक सभा रहेगी और उसका यह शब्दसागर अपने गौरव से कभी न गिरेगा। इस क्षेत्र में यह नित नूतन प्रेरणादायक रहकर हिंदी का मानवर्धन करता रहेगा और उसका प्रत्येक नया संस्करण और भी अधिक प्रभोज्यत्व होता रहेगा।

ना० प्र० सभा, काशी
भेष संक्रांति, २०२८ वि० }

सुधाकर पांडेय
प्रधान मंत्री

संकेतिका

[उद्धरणों में प्रयुक्त संदर्भग्रंथों के इस विवरण में क्रमशः ग्रंथ का संकेताक्षर, ग्रंथनाम, लेखक या संपादक का नाम और प्रकाशन के विवरण दिए गए हैं ।]

अंधेरे०	अंधेरे की भूख, डा० रागेय राघव, किताब महल, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण	अर्चना	अर्चना, प० सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', कला-मंदिर, इलाहाबाद
अकबरी०	अकबरी दरबार के हिंदी कवि, डा० सरजूप्रसाद अग्रवाल, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, सं० २००७	अर्थ०	अर्थशास्त्र, कीटिल्य, (५ खंड) सपा० आर० शामशास्त्री, गवर्नमेंट ब्राच प्रेस, मैसूर, प्र० स०, १९१९ ई०
अखिलेश (शब्द०)	अखिलेश कवि	अर्थ०	अर्थकथानक, सपा० नाथूराम प्रेमी, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बबई, प्र० स०
अग्नि०	अग्निशास्य, नरेंद्र शर्मा, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० स०	अष्टांग (शब्द०)	अष्टांगयोग संहिता
अजात०	अजातशत्रु, जयशंकर प्रसाद, १६वीं सं०	अष्टांग०	अष्टांगयोग संहिता
अखिमा	अखिमा, प० सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', युग मंदिर, उन्नाव	अर्षी	अर्षी, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, पंचम सं०
अतिमा	अतिमा, सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० स०	आकाश०	आकाशदीप, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, पंचम सं०
अधखिला (शब्द०)	अधखिला फूल (उपन्यास), अयोध्यासिंह उपाध्याय	आचार्य०	आचार्य रामचंद्र शुक्ल, चंद्रशेखर शुक्ल, वाणी वितान, वाराणसी, प्र० स०
अनामिका	अनामिका, प० सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', प्र० स०	आश्रय अनु-	आश्रय अनुक्रमणिका
अनुराग०	अनुरागसागर, सपा० स्वामी युगलानंद विहारी, वैकटेश्वर प्रेस, बबई, प्र० स०	क्रमणिका (शब्द०)	आदिभारत, अर्जुन चौदे काश्यप, वाणी विहार, बनारस, प्र० स०, १९५३ ई०
अनुराग बाग (शब्द०)	अनुराग बाग	आदि०	आधुनिक कविता की भाषा
अनेक (शब्द०)	अनेकार्थ नाममाला (शब्दसागर)	आधुनिक०	कवि आनंदधन
अनेकार्थ०	अनेकार्थमञ्जरी और नाममाला, सपा० बलभद्र-प्रसाद मिश्र, युनिवर्सिटी आफ इलाहाबाद स्टडीज, प्र० स०	आनंदधन (शब्द०)	आराधना, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', साहित्यकार ससद्, इलाहाबाद, प्र० स०
अपरा	अपरा, प० सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग	आराधना	आर्द्रा, सियारामशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगांव, झांसी, प्र० स०, १९८४ वि०
अपलक	अपलक, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', राजकमल प्रकाशन, प्र० सं०, १९५३ ई०	आर्द्रा	आर्यकालीन भारत
अभिषाप्त	अभिषाप्त, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४४ ई०	आर्य० भा०	आर्यों का आदिदेश, सपूर्णानंद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, १९९७ वि०, प्र० स०
अमित०	अमित स्मृति, महावीरप्रसाद द्विवेदी, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, १९३० ई०	आर्यों०	इंद्रजाल, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० स०
अमृतसागर (शब्द०)	अमृतसागर	इंद्र०	इंद्रावती, सपा० श्यामसुंदरदास, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० स०
अयोध्या (शब्द०)	अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'	इंद्रा०	इशा, उनका काव्य तथा रानी केतकी की कहानी, सपा०, ब्रजरत्नदास, कमलमणि ग्रंथ-माला, बुलानाला, काशी, प्र० स०
अरस्तू०	अरस्तू का काव्यशास्त्र, डा० नरेंद्र, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०, २०१४ वि०	इंशा०	इतिहास और आलोचना, नामवर सिंह, प्र० स०
		इति०	

इतिहास	हिंदी साहित्य का इतिहास, प० रामचंद्र शुक्ल, ना० प्र० सभा, वाराणसी, नवां स०	कादंबरी (शब्द०)	कादंबरी शब्द
इत्यलम्	इत्यलम्, 'अज्ञेय,' प्रतीक प्रकाशन केंद्र, दिल्ली	कानन०	काननकुसुम, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, पंचम स०
इनशा (शब्द०)	इनशा अल्ला खौं	कामायनी	कामायनी, जयशंकर प्रसाद, नवम स०
हरा०	हरावती, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, चतुर्थ स०	काया०	कायाकल्प, प्रेमचंद, सरस्वती प्रेस, बनारस, ६वां स०
उत्तर०	उत्तररामचरित नाटक, धनु०प० सत्यनारायण कविरत्न, रत्नाश्रम, आगरा, पंचम स०	काले०	काले कारनामे, 'निराला,' कल्याण साहित्य मंदिर, प्रयाग, २००७ वि०
एकात०	एकातवासी योगी, अनु० श्रीधर पाठक, इडियन प्रेस, प्रयाग, प्र० स०, १९८६ वि०	वाव्य०	काव्यशास्त्र
ककाल	ककाल, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, सप्तम स०	काव्य० निषध	काव्य और कला तथा अन्य निषध, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद चतुर्थ स०
कठ० उप० (शब्द०)	कठवल्ली उरनिषद्	काव्य० य० प्र०	काव्य यथार्थ और प्रगति, ए० रागेय राघव, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, प्र० स०, २०१२ वि०
कट्टी०	कट्टी मे कोयला, पाठेय बेचन शर्मा 'उग्र', गऊघाट, मिर्जापुर, प्र० स०	काशीराम (शब्द०)	काशीराम कवि
कबीर प्र०	कबीर प्र यावली, सपा० श्यामसुंदरदास, ना० प्र० सभा, काशी	काश्मीर०	काश्मीर सुपमा, श्रीधर पाठक, इडियन प्रेस, इलाहाबाद, प्र० स०
कबीर० बानी	कबीर साहब की बानी	काष्ठजिह्वा (शब्द०)	काष्ठजिह्वा स्वामी
कबीर बीजक	कबीर बीजक, कबीर ग्रंथ प्रकाशन समिति, वाराणसी, २००७ वि०	कासीराम (शब्द०)	कासीराम कवि
कबीर बी०	कबीर बीजक, सपा० हंसदास, कबीर ग्रंथ प्रकाशन समिति, वाराणसी, २००७ वि०	किन्नर०	किन्नर देश में, राहुल सांकृत्यायन, इडिया पब्लिशर्स, प्रयाग, प्र० स०
कबीर म०	कबीर मसूर (२ भाग), वैकटेश्वर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, बवई, सन् १९०३ ई०	किशोर (शब्द०)	किशोर कवि
कबीर० रे०	कबीर साहब की ज्ञानगुदडी व रेस्ते, बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, इलाहाबाद	कीर्ति०	कीर्तिलता, स० वायूराम सप्तसेना, ना० प्र० सभा, वाराणसी, तृ० स०
कबीर० श०	कबीर साहब की शब्दावली (४ भाग) बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, इलाहाबाद, सन् १९०८	कुकुर०	कुकुरमुत्ता, 'निराला', युगमंदिर, उन्नाव
कबीर (शब्द०)	कबीरदास	कुणाल	कुणाल, सोहनलाल द्विवेदी
कबीर सा०	कबीर सागर (४ भा०) सपा० स्वा० श्री युगलानंद बिहारी, वैकटेश्वर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, बवई	कृपि०	कृपिशास्त्र
कबीर सा० सं०	कबीर साखी सप्रह, बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग प्रेस, इलाहाबाद, १९११ ई०	केशव (शब्द०)	केशवदास
कमलापति (शब्द०)	कवि कमलापति	केशव प्र०	केशव प्र यावली, सपा० प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० स०
करुणा०	करुणालय, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, तृ० स०	केशव० अमी०	केशवदास की अमीघूँट
करुण०	सेनापति करुण, लक्ष्मीनारायण मिश्र, किताब महल, इलाहाबाद, प्र० स०	कोई कवि (शब्द०)	अज्ञातनाम कोई कवि
कर्पूर मजरी (शब्द०)	कर्पूरमजरी नाटक, भारतेंदु लिखित	कुलार्णव तत्र (शब्द०)	कुलार्णव तत्र
कविद (शब्द०)	कविद कवि	कोटिल्य अ०	कोटिल्य का अर्थशास्त्र
कविता कौ०	कविता कौमुदी (१-४ भा०), सपा० रामनरेश त्रिपाठी, हिंदी मंदिर, प्रयाग, तृ० स०	कवासि	कवासि, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', राजकमल प्रकाशन, बवई, १९५३ ई०
विस्त०	कवित्तरत्नाकर, सपा० उमाशंकर शुक्ल, हिंदी परिषद्, विश्वविद्यालय, प्रयाग	खानखाना (शब्द०)	अबुल रहीम खानखाना
		खालिक०	खालिकवारी, सपा० श्रीराम शर्मा, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० स०, २०२१ वि०
		खिलीना	खिलीना (मासिक)
		खुदाराम	खुदाराम और चंद हसीनो के खतूत, पाठेय बेचन शर्मा 'उग्र', गऊघाट, मिर्जापुर, छाठवां स०
		खुसरो (शब्द०)	पमीर खुसरो
		खेती की पहली पुस्तक (शब्द०)	खेती की पहली पुस्तक

गंग प्र०	गंग कवित्त (प्रथावली), संपा० बटेकृष्ण ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० स०	चंद्र०	चंद्रगुप्त, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, प्रयाग, नवाँ स०
गदाधर०	श्रीगदाधर मट्ट जी की बानी	चक्र०	चक्रवाल, रामधारी सिंह 'दिनकर', उदया-चल, पटना, प्र० स०
गदाधर सिंह (शब्द०)	गदाधर सिंह	धरण (शब्द०)	धरणदास
पवन	गवन, प्रेमचंद, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, २६वाँ स०	धरणचंद्रिका (शब्द०)	धरणचंद्रिका
गर्ग संहिता (शब्द०)	गर्ग संहिता	धरण० बानी	धरणदास की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहा-बाद, प्र० स०
गालिव०	गालिव की कविता, स० कृष्णदेवप्रसाद गोड, वाराणसी, प्र० स०	चादिनी०	चादिनी रात श्रीर अजगर, उपेंद्रनाथ 'अशक', नीलाम प्रकाशन गृह, प्रयाग, प्र० स०
गि० दा०, गि० दास	} गिरिधरदास (बा० गोपालचंद्र)	चाणक्य नीति (शब्द०)	चाणक्य नीति
गिरिधरदास (शब्द०)		चाणक्य (शब्द०)	चाणक्य नीति दर्पण
गिरिधर (शब्द०)	गिरिधर राय (कूडलियावाले)	चित्ता	चित्त प्रजेय सरस्वती प्रेस, प्र० स०, सन् १९४० ई०
गीतिका	गीतिका, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०	चित्तामणि	चित्तामणि (२ भाग), रामचंद्र शुक्ल, इंडियन प्रेस, लि०, प्रयाग
गुजन	गुजन, सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०	चित्तामणि (शब्द०)	कवि चित्तामणि त्रिपाठी
गुधर (शब्द०)	गुधर कवि	चित्रा०	चित्रावली, स० जगन्मोहन वर्मा, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०
गुमान (शब्द०)	गुमान मिश्र	चुभते०	चुभते चौपदे, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरि-मोघ,' खड्गविलास प्रेस, पटना, प्र० स०
गुलाब (शब्द०)	कवि गुलाब	चोखे०	चोखे चौपदे, " " "
गुलाल०	गुलाल बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९१० ई०	चाटी०	चाटी की पकड़, 'निराला,' किताब महल, इलाहाबाद, प्र० स०
गोकुल (शब्द०)	कवि गोकुल	छंद०	छंद प्रभाकर, भानु कवि, भारतजीवन प्रेस, काशी, प्र० स०
गोदान	गोदान, प्रेमचंद, सरस्वती प्रेस, बनारस, प्र० स०	छत्र०	छत्रप्रकाश, स० विलियम प्राइस, एजुकेशन प्रेस, कलकत्ता, १८२९ ई०
गोपाल उपासनी (शब्द०)	गोपाल उपासनी	छिनाई०	छिनाई वार्ता, सपा० माताप्रसाद गुप्त, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० स०
गोपाल० (शब्द०)	गिरिधर दास (गोपालचंद्र)	छीत०	छीत स्वामी, सपा० ब्रजभूषण शर्मा, विद्या विभाग, अष्टछाप स्मारक समिति, काँकरोली, प्र० स०, सवत् २०१२
गोपालभट्ट (शब्द०)	गोपालभट्ट, वाल्मीकि रामायण के अनुवादक	जतुप्रवध (शब्द०)	जतुप्रवध ग्रथ
गोरख०	गोरखबानी, सं० डा० पीतावरदत्त बडधवाल, हिंदी साहित्य समेलन, प्रयाग, द्वि० स०	जग० बानी	जगजीवन साहब की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९०६, प्र० स०
ग्राम०	ग्राम साहित्य, संपा० रामनरेश त्रिपाठी, हिंदी मंदिर, प्रयाग, प्र० स०	जग० श०	जगजीवन साहब की शब्दावली
ग्राम्या	ग्राम्या, सुमित्रानंदन पंत, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० स०	जगन्नाथ (शब्द०)	जगन्नाथप्रसाद 'भानु'
घट०	घट रामायण (२ भाग), सतगुरु तुलसी साहित्य, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, तृ० सं०	जनमेजय०	जनमेजय का नागयज्ञ, जयशंकर 'प्रसाद' भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, पंचम स०
घनानंद	घनानंद, संपा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, प्रसाद परिषद्, वाणीवितान, ब्रह्मनाल, वाराणसी	जनानी०	जनानी ड्योड़ी, अनु० यशपाल, अशोक प्रकाशन, लखनऊ
घाघ०	घाघ और भट्टरी, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद		
घासीराम (शब्द०)	घासीराम कवि		
चद०	चद हसीनों के खतूत, 'उग्र', हिंदी पुस्तक एजेंसी, कलकत्ता, प्र० स०		

जमाना (शब्द०) जय० प्र०	जमाना अखबार (शब्द०) । जयशकर प्रसाद, नदबुलारे वाजपेयी, भारती भडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० स०, १९६५ वि०	तेग अली (शब्द०) तेग०, तेगचहादुर (शब्द०) तेज० तोप (शब्द०) त्याग०	वदमाश दर्पण के रचयिता तेग अली गुरु तेगचहादुर तेजविद्वानिपद कवि तोप त्यागपत्र, जैनेंद्रकुमार, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बबई, प्र० स०
जयसिंह (शब्द०) जरासघवघ (शब्द०) जायसी ग्र०	जयसिंह कवि जरासघवघ नाम का काव्य जायसी ग्र थावली, सपा० रामचंद्र शुक्ल, ना० प्र० सभा, द्वि० स०	द० सागर दक्खिनी० दयानिधि (शब्द०) दरिया० बानी दश०	दरिया सागर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९१० ई० दक्खिनी का गद्य श्रीर पद्य, सपा० श्रीराम एर्मा, हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद, प्र० स० दयानिधि कवि दरिया साहब की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, द्वि० स० दशरूपक, सपा० डा० मोलाशकर व्यास, चौखमा विद्याभवन, वाराणसी, प्र० सं०
जायसी (शब्द०) जिप्सी	जायसी ग्र थावली, सपा० माताप्रसाद गुप्त, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० स०, १९५१ ई० मलिक मुहम्मद जायसी जिप्सी, इलाचंद्र जोशी, सेंट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद, प्र० स०, १९५२ ई०	दशम० (शब्द०) दहकते० दादू० दादूदयाल ग्रं० दादू० (शब्द०) दिनेश (शब्द०) दास (शब्द०) दिल्ली दिव्या	दशम स्कंध भागवत दहकते भगारे, नरोत्तमप्रसाद नागर, भ्रम्युदय कार्यालय, इलाहाबाद श्री दादूदयाल फी बानी, सपा० सुधाकर द्विवेदी, ना० प्र० सभा, वाराणसी दादूदयाल ग्र थावली दादूदयाल कवि दिनेश कवि भिखारीदास दिल्ली, रामधारी सिंह 'दिनकर,' उदयावल, पटना, प्र० स० दिव्या, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४५ ई०
जुगलेश (शब्द०) ज्ञानदान	जुगलेश कवि ज्ञानदान, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ १९४२ ई०	दीन० ग्र० दीनदयाल (शब्द०) दीप० दी० ज०, दीप ज० दुर्गाप्रसाद मिश्र (शब्द०) दुर्गाप्रसाद (शब्द०) दुर्गेशनदिनी (शब्द०) दूलह (शब्द०) देवकीनदन (शब्द०) देव० ग्र० देव (शब्द०)	भापा दशम स्कंध भागवत दहकते भगारे, नरोत्तमप्रसाद नागर, भ्रम्युदय कार्यालय, इलाहाबाद श्री दादूदयाल फी बानी, सपा० सुधाकर द्विवेदी, ना० प्र० सभा, वाराणसी दादूदयाल ग्र थावली दादूदयाल कवि दिनेश कवि भिखारीदास दिल्ली, रामधारी सिंह 'दिनकर,' उदयावल, पटना, प्र० स० दिव्या, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४५ ई० दीनदयाल गिरि प्रभावली, सपा० श्याम- सु दरदास, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं० कवि दीनदयाल गिरि दीपशिखा, महादेवी वर्मा, किताबिस्तान, इलाहाबाद, प्र० स०, १९४२ ई० दीप जलेगा, उर्पेन्द्रनाथ 'भरक,' नीलाम प्रकाशन गृह, प्रयाग दुर्गाप्रसाद मिश्र दुर्गाप्रसाद कवि दुर्गेशनदिनी, उपन्यास, मूल लेखक वकिमचंद्र चटर्जी (अनुवाद) कवि दूलह देवकीनदन खत्री देव ग्र थावली, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं० देव कवि
ज्ञानरत्न	ज्ञानरत्न, दरिया साहब, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद		
भरना	भरना, जयशकर प्रसाद, भारती भडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, सातवाँ स०		
भाँसी०	भाँसी की रानी, वृदावनलाल वर्मा, मयूर प्रकाशन, भाँसी, द्वि० स०		
टैगोर०	टैगोर का साहित्यदर्शन, अनू० राधेश्याम पुरोहित, साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, प्र० स०		
ठडा०	ठडा लोहा, धर्मवीर भारती, साहित्य भवन लि०, प्रयाग, प्र० स०, १९५२ ई०		
ठाकुर०	ठाकुर शतक, सपा० काशीप्रसाद, भारत- जीवन प्रेस, काशी, प्र० स०, सवत् १९६१		
ठेठ०	ठेठ हिंदी का ठाठ, भयोष्मासिंह उपाध्याय, खड्गविलास प्रेस, पटना, ६० स०		
ढोला०	ढोला मारू रा दूहा, सपा० रामसिंह ना० प्र० सभा, काशी, द्वि० स०		
तितली	तितली, जयशकर प्रसाद, लीडर प्रेस, प्रयाग, सातवाँ स०		
तिथितत्व (शब्द०) तुलसी	तिथितत्व निरुण्य तुलसीदास, 'निराला', भारती भडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, चतुर्थ स०		
तुलसी ग्र०	तुलसी ग्र थावली, सपा० रामचंद्र शुक्ल, ना० प्र० सभा, काशी, तृतीय स०		
तुलसी सुधाकर (शब्द०) तुरसी श०, तुलसी श०	तुलसी सुधाकर तुलसी साहब (हाथरसवाले) की शब्दावली, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९०६, १९११		

देव (शब्द०)	देव कवि (मैनपुरीवाले)	निबंधमालादर्शन (शब्द०)	निबंधमालादर्शन (म० प्र० द्विवेदी), निबंधसंग्रह
देवदत्त (शब्द०)	देवदत्त कवि	निश्चलदास (शब्द०)	सत निश्चलदास जी
देवीप्रसाद (शब्द०)	मुशी देवीप्रसाद ।	नील०	नीलकुसुम, रामधारीसिंह 'दिनकर', उदयाचल, पटना, प्र० स०
देशी०	देशी नाममाला	निहाल (शब्द०)	निहाल कवि
दैनिकी	दैनिकी, सियारामशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० स०, १९६६ वि०	नूतनामृतसागर (शब्द०)	नूतनामृतसागर नाम का ग्रंथ
दो सौ बावन०	दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता (दो भाग), शुद्धाद्वैत एकेडमी, काँकरोली, प्रथम स०	नूर (शब्द०)	'नूर' उपनाम के कवि
द्वंद्व०	द्वंद्वगीत, रामधारी सिंह 'दिनकर,' पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, पटना, प्र० स०	नुपशुभु (शब्द०)	शिवाजी के पुत्र महाराज शभाजी
द्वि० अभि० प्र०	द्विवेदी अभिनन्दन ग्रंथ, ना० प्र० सभा, वाराणसी	नेपाल०	नेपाल का इतिहास, प० बलदेवप्रसाद, वैकटेश्वर प्रेस, बबई, १९६१ वि०
द्विज (शब्द०)	द्विज कवि	पचवटी	पचवटी, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० स०
द्विजदेव (शब्द०)	अयोध्यानरेश महाराजा मानसिंह 'द्विजदेव'	पजनेस०	पजनेस प्रकाश, सपा० रामकृष्ण वर्मा, भारत जीवन यंत्रालय, काशी, प्र० स०
द्विवेदी (शब्द०)	आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी	पदमावत	पदमावत, सं० वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी, प्र० स०
धरनी० बानी	धरनी साहू की बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९११ ई०	पदु०, पदुमा०	पदुमावती, सपा० सुर्यकांत शास्त्री, पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर, १९३४ ई०
धरम० शब्दा०, धरम०	धरमदास की शब्दावली	पद्माकर प्र०	पद्माकर ग्रंथावली, सपा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
धीर (शब्द०)	'धीर' कवि	पद्माकर (शब्द०)	पद्माकर मट्ट
धूप०	धूप और धुआँ, रामधारीसिंह 'दिनकर,' अजता प्रेस, लि०, पटना ४	प० रा०, प० रासो	परमाल रासो, सपा० श्यामसुंदरदास, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०
ध्रुव०	ध्रुवस्वामिनी, प्रसाद, भारती भंडार	परमानद०	परमानदसागर
नद० प्र०, नददास प्र०	नददास ग्रंथावली, सपा० ब्रजरत्नदास, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०	परमेश (शब्द०)	परमेश कवि
नई०	नई पौध, नागाजुन, किताब महल, इलाहाबाद, प्र० स०, १९५३	परिमल	परिमल, 'निराला', गंगा ग्रंथागार, लखनऊ, प्र० स०
नट०	नटनागर विनोद, सपा० कृष्णबिहारी मिश्र, इडियन प्रेस, इलाहाबाद, प्र० स०	पर्दे०	पर्दे की रानी, इलाचंद्र जोशी, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० स०, १९६६ वि०
नदी०	नदी के द्वीप, 'अज्ञेय,' प्रगति प्रकाशन, दिल्ली, प्र० स०, १९५१ ई०	पलदू०	पलदू सहव की बानी (१-३ भाग), बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९०७ ई०
नया०	नया साहित्य नए प्रश्न, नददुलारे वाजपेयी, विद्यामंदिर, वाराणसी, २०११ वि०	पल्लव	पल्लव, सुमित्रानंदन पंत, इडियन प्रेस लि०, प्रयाग, प्र० स०
नरेश (शब्द०)	'नरेश' कवि	पाणिनि०	पाणिनिकालीन भारतवर्ष, वासुदेवशरण अग्रवाल, मोतीलाल बनारसीदास, प्र० स०
नागयज्ञ	जनमेजय का नागयज्ञ, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, प्रयाग, सप्तम स०	पारिजात०	पारिजातहरण
नागरी (शब्द०)	नागरीदास कवि	पार्वती	पार्वती, रामानंद तिवारी शास्त्री, भारतीनंदन, मंगनभवन, नयापुरा, कोटा (राजस्थान), प्र० स०, १९५५ ई०
नाथ (शब्द०)	नाथ कवि	पा० सा० सि०	पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धांत, लीलाचर गुप्त, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० स०, १९५२ ई०
नाथसिद्ध०	नाथसिद्धों की वानियाँ, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० स०		
नानक (शब्द०)	सत नानक गुरु		
नाभादास (शब्द०)	नाभादास सत		
नारायणदास (शब्द०)	नारायणदास		

विजरे०	विजरे की उद्यान, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४६ ई०	फूनी०	फूनी का कुर्ता, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, प्र० सं०
पूर्ण (शब्द०)	पूर्ण कवि	बमाल०	बमाल का याल, हरिप्रकाश 'वचन,' भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९४६ ई०
पू० म० भा०	पूर्वमध्यकालीन भारत, वामुदेव उपाध्याय भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०, २००६ वि०	बदन०	बदनधार, वैद्येन्द्र मर्यादा, प्रगति प्रकाशन, दिल्ली, १९४९ ई०
पू० रा०	पृथ्वीराज रासो (५ खंड), सपा० भोदूनलाल विष्णुलाल पट्टना, प्यामसुंदर दास, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०	उद०	उदमान हपणु, तैगधाली, भारतजीवन प्रेस, बनारस, प्र० सं०
पू० रा० (उ०)	पृथ्वीराज रासो [४ खंड], स० कविराज मोहनसिंह, साहित्य सस्थान, राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर, प्र० सं०	उत्तवार (शब्द०)	उत्तवीर कवि
पोद्दार अभि० ग्र०	पोद्दार अभिनदन ग्र०, सपा० वामुदेवशरण मन्नाल, मखिल भारतीय प्रज साहित्यमंडल, मयुरा, स० २०१० वि०	उत्तमद्र (शब्द०)	उत्तमद्र कवि
प्र० सा०	प्रगतिशील (वादी) साहित्य	उत्की० १०, } वादीदास प्र० }	उत्की० रासो (तीन भाग), सपा० राम-नारायण दूगट, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
प्रताप ग्र०	प्रतापनारायण मिश्र ग्रंथावली सपा० विजय-शंकर मल्ल, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०	उत्की० रा	उत्की० रा
प्रताप (शब्द०)	ष्यमार्थ बोगुदी के रचयिता प्रताप कवि	वापू	वापू, पत्रितासप्रद, मिदागमनरत्न गुप्त, प्र० सं०
प्रताप सिंह (शब्द०)	प्रताप सिंह	जानरत्न (शब्द०)	जानरत्न
प्रबन्ध०	प्रबन्धपत्र, 'निराला', गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ, प्र० सं०	जालमुकुंद (शब्द०)	जालमुकुंद गुप्त
प्रभावती	प्रभावती, 'निराला,' सरस्वती भंडार, लखनऊ, प्र० सं०	जिग्हा (शब्द०)	जिग्हा गीत
प्राण०	प्राणसगली, सपा० मत्त सपूरणसिंह, बेन-वेडियर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० सं०	विले०	विलेसुर वकिल्हा निराला, युगमंदिर, उद्यान प्र० सं०
प्रा० भा० प०	प्राचीन भारतीय परंपरा और इतिहास डा० रांगेय राघव, आत्मागम ऐंड सस, दिल्ली, प्र० सं०, १९५३ ई०	विसाराम (शब्द०)	विसाराम रवि
प्रिय०	प्रियप्रवास, मयोव्यासिंह उपाध्याय 'हरिप्रौढ', हिंदी साहित्य कुटीर, बनारस, पण्ड सं०	विहारी २०	विहारी रत्नाकर, संपा० जगन्नाथदास 'रत्नाकर', गंगा प्रकाश, लखनऊ, प्र० सं०
प्रिया० (शब्द०)	प्रियादास	विहारी (शब्द०)	कवि विहारी
प्रेम०	प्रेमपथिक, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, तृ० सं०	वी० रासो	वीसलदेव रासो, सपा० सत्यजीवन शर्मा, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०
प्रेम० और गोकर्ण	प्रेमचंद और गोकर्ण, सपा० पाचौरानी गुर्दा, राजकमल प्रकाशन लि०, बंबई, १९५५ ई०	वीसल० रास	वीसलदेव रास, सपा० आनाप्रनाथ गुप्त, प्र० सं०
प्रेमघन०	प्रेमघन सर्वस्व, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्र० सं०, १९६६ वि०	वी० श० मटा०	वीसली इनामदी के महापाठ्य, डा० प्रतिपाल-मिह, मीन्टि टन बुकटिपो, देहली, प्र० सं०
प्रे० सा० (शब्द०)	प्रेमसागर	बुद च०	बुदचरित, रामचंद्र पुगल, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० सं०
प्रेमाजलि	प्रेमाजलि, डा० गोपालशरण सिंह, इडियन प्रेस लि०, प्रयाग, १९५३ ई०	वृक्ष०	वृक्षसंहिता
फिसाना०	फिसाना ए आजाद (चार भाग), प० रतननाथ 'सरदार,' नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, चतुर्थ सं०	वृक्षसंहिता (शब्द०)	वृक्षसंहिता
		वेनी (शब्द०)	कवि वेनी प्रचीन
		वेला	वेला, 'निराला,' हिंदुस्तानी पब्लिशिंग, इलाहाबाद, प्र० सं०
		वेलि०	वेलि फिसन रत्नमणी री, सपा० ठाकुर रामसिंह, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० सं०, १९३१ ई०
		वेनाल (शब्द०)	वेनाल कवि
		बोधा (शब्द०)	कवि बोधा
		ब्रज०	ब्रजविलास, सपा० श्रीकृष्णदास, लक्ष्मी वैक-टैगवर प्रेस, बंबई, तृ० सं०
		ब्रज० प्र०	ब्रजनिधि ग्रंथावली, सपा० पुरोहित हरिना-रायण शर्मा, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० सं०

क्षेत्रमाधुरी०	क्षेत्रमाधुरी सार, सपा० वियोगी हरि, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तृ० स०	भोज० भा० सा०	भोजपुरी भाषा और साहित्य, डा० उदय-नारायण तिवारी, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, प्र०स०
ग्रह्य (शब्द०)	ग्रह्य कवि (वीरबल)	मति० प्र०	मतिराम ग्र थावली, सपा० कृष्णबिहारी मिश्र, गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ, द्वि० स०
भक्तमाल (प्रि०)	भक्तमाल, टीका० प्रियादास, वैकटेश्वर प्रेस, बबई, १९५३ वि०	मतिराम (शब्द०)	कवि मतिराम त्रिपाठी
भक्तमाल (श्री०)	भक्तमाल, श्रीभक्तिसुधाविदु स्वाद, टीका० सीतारामशरण, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, द्वि० स०, १९८३ वि०	मधु०	मधुकलश, हरिवशराय 'बच्चन,' सुषमा निकुज, इलाहाबाद, द्वि० स०, १९३९ ई०
भक्ति०	भक्तिसागरादि, स्वामी चरणदास, वैकटेश्वर प्रेस, बबई, सवत् १९६० वि०	मधुज्वाल	मधुज्वाल, सुमित्रानन्दन पंत, भारती भंडार, इलाहाबाद, द्वि० स०, १९३९ ई०
भक्ति प०	भक्ति पदार्थ वर्णन, स्वामी चरणदास, वैकटेश्वर प्रेस, बबई, सवत् १९६०	मधु मा०	मधुमालती वार्ता, सपा० माताप्रसाद गुप्त, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० स०
भगवत्तरसिक (शब्द०)	भगवत्तरसिक	मधुशाला	मधुशाला, हरिवशराय 'बच्चन,' सुषमा निकुज, इलाहाबाद, प्र० स०
भजन (शब्द०)	भजन	मधुसूदन (शब्द०)	मधुसूदन कवि ।
भट्ट (शब्द०)	बालकृष्ण भट्ट	मनविरक्त०	मनविरक्तकरण गुटका सार (चरणदास)
भस्मानुत्त०	भस्मानुत्त चिनगारी, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लखनऊ, १९४६ ई०	मनु०	मनुस्मृति
भा० इ० ल०	भारतीय इतिहास की रूपरेखा, जयधर विद्यालकार, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० स०, १९३३ वि०	मन्नालाल (शब्द०)	कवि मन्नालाल
भा० प्रा० लि०	भारतीय प्राचीन लिपिमाला, गोरीशकर हीराचंद श्रोक्ला, इतिहास कार्यालय, राजमेवाड, प्र० स०, १९५१ वि०	मल्लूफ० बानी	मल्लूफदास की बानी, बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग
भारत०	भारतभारती, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्यसदन, चिरगाँव, झाँसी, नवम स०	मल्लूक० (शब्द०)	मल्लूकदास
भा० भू०, भारत० नि०	भारत भूमि और उसके निवासी, जयचंद्र विद्यालकार, रत्नाश्रम, आगरा, द्वि० स०, १९८७ वि०	मह्वा०	महाराणा का महत्व, जयशकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, चतुर्थ स०
भारतीय०	भारतीय राज्य और शासनविधान	महावीरप्रसाद (शब्द०)	पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी
भारतेंदु प्र०	भारतेंदु प्रथावली (४ भाग), सपा० ब्रजरत्न-दास, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०	महाभारत (शब्द०)	महाभारत
भा० शिक्षा	भारतीय शिक्षा, राजेंद्रप्रसाद, आत्माराम ऐंड सस, दिल्ली, १९५३ ई०	महाराणा प्रताप (शब्द०)	महाराणा प्रताप ग्र थ
भाषा शि०	भाषाशिक्षण, प० सीताराम चतुर्वेदी	माधव०	माधवनिदान, लक्ष्मी वैकटेश्वर प्रेस, बबई, चतुर्थ स०
भिखारी ग्र०	भिखारीदास ग्र थावली (दो भाग), सपा० प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, ना० प्र० सभा, काशी	माधवानल०	माधवानल कामकदला, बोधा कवि, नवल-किशोर प्रेस, लखनऊ, प्र० स०, १८९१ ई०
भीखा श०,	भीखा शब्दावली प्र० स०	मान०	मानसरोवर, प्रेमचंद, इस प्रकाशन, इलाहाबाद
भुवनेश (शब्द०)	भुवनेश कवि	मानव	मानव, कवितासकलन, भगवतीचरण वर्मा
भूपर (शब्द०)	भूपर कवि	मानव०	मानवसमाज, राहुल साकृत्यायन, किताब महल, इलाहाबाद, द्वि० स०
भूपति (शब्द०)	भूपति कवि	मानस	रामचरितमानस, सपा० शम्भुनारायण चौवे, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०
भूपण ग्र०	भूपण ग्र थावली, सपा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, साहित्य सेवक कार्यालय, काशी, प्र० सं०	मिट्टी०	मिट्टी और फूल, नरेंद्र शर्मा, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० स०, १९९९ वि०
भूषण (शब्द०)	कवि भूषण त्रिपाठी	मिलन०	मिलनयामिनी, हरिवशराय 'बच्चन,' भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्र० स०, १९५० ई०
		मीरा (शब्द०)	मक्त मीरा वाई
		मीर हमन (शब्द०)	मीर हसन
		मुंशी अभि० प्र०	मुंशी अभिनन्दन ग्र थ, सपा० डा० विश्वनाथ-प्रसाद, हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा

भुक्रुंदलाल (शब्द०)	मुकुदलाल कवि	रत्नाकर	रत्नाकर [दो भाग], ना० प्र० सभा, काशी, चतुर्थ, द्वि० और प्रथम स० १९८०
मुबारक (शब्द०)	मुबारक कवि	रत्नावली (शब्द०)	रत्नावली नाटिका
मुरारिदान (शब्द०)	कवि मुरारिदान	रश्मि०	रश्मिवच, लुमिदानदन पत गजानमन प्रकाशन, दिल्ली
सृग०	सृगनयनी, वु वाचनलाल वर्मा, मयूर प्रकाशन, भौंसी	रस०	रसमीमांसा, सपा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, ना० प्र० सभा, काशी, द्वि० म०
मैला०	मैला श्रीचल, फणीश्वरनाथ 'रेणु,' समता प्रकाशन, पटना-४, प्र० स०	रस क०	रसकलश, प्रयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिप्रोथ,' हिंदी साहित्य कूटीर, बनारस, तृतीय स०
मोहन०	मोहनविनोद, स० कृष्णविहारी मिश्र, इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस, प्र० स०	रसखान०	रमयान और घनानंद, सपा० प्रमी-सिंह, ना० प्र० सभा, द्वि० स०
यशो०	यशोधरा, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगांव, भौंसी, प्र० स०	रसखान (शब्द०)	संगद इम्राहिम रसखान
यामा	यामा, महादेवी वर्मा, किताबिस्तान, प्रयाग प्र० स०	रस र०, रसरत्न	रसरत्न, सपा० शिवप्रसाद सिंह, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० स०
युग०	युगवाणी, सुमित्रानंदन पत, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० स०	रसनिधि (शब्द०)	राजा पुष्पसिंह
युगपथ	युगपथ ,, ,, ,,	रसिधा (शब्द०)	रसिधा कवि ? रसिधा गीत ?
युगलेश (शब्द०)	कवि युगलेश	रहिमन (शब्द०)	रहीम कवि
युगात	युगात, सुमित्रानंदन पत, इद्र प्रिंटिंग प्रेस, मल्मोडा, प्र० स०	रहीम (शब्द०)	शब्दुरहीम खानखाना
योग०	योगवाशिष्ठ (वैराग्य मुमुक्षु प्रकरण), गगा-विष्णु श्रीकृष्णदास, सक्षमी बैंकटेश्वर छापाखाना, कल्याण, बंबई, स० १९६७ वि०	रहीम०	रहीम रत्नावली
रगभूमि	रगभूमि, प्रेमचंद, गगा प्रयागार, लखनऊ, प्र० स०, १९८१ वि०	राज० इति०	राजपूताने का इतिहास, गोरीशंकर हीराचंद शोभा, प्रजमेर, १९६७ वि०, प्र० स०
रघु० ह०	रघुनाथ रूपक गीतारो, सपा० महताबचंद्र खारेड, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०	राज०	राजतरंगिणी
रघु० हा०, रघुनाथदास (शब्द०)	रघुनाथदास	रा० ह०	राजरूपक, सपा० प० रामवर्ण, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०
रघुनाथ (शब्द०)	रघुनाथ	रा० वि०	राजविलास, सपा० मोतीलाल मेनायिया, ना० प्र० सभा, वाराणसी, प्र० स०
रघुराज, रघुराज सिंह (शब्द०)	रीवानरेश महाराज रघुराजसिंह, स० १८८०-१९३६ वि०	राजनीतिक	राजनीतिक विचारधाराएँ
रजत०	रजतशिखर, सुमित्रानंदन पत, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, २००८ वि०	राज्यश्री	राज्यश्री, जयशंकर प्रसाद, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, सातवाँ स०
रज्जब०	रज्जब जी फी बानी, ज्ञानसागर प्रेस, बंबई, १९७५ वि०	राम०	रामचरितमानस, सपा० विजयानंद त्रिपाठी, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० स० १९७३ वि०
रत्न०	रत्नचहूआरा, सपा० श्री जगन्नाथप्रसाद श्रीवास्तव, भारतजीवन प्रेस, काशी, प्र० स०, १९८२ ई०	राम, रामकवि (शब्द०)	राम कवि
रत्नि०	रत्निनाथ की चाची, नागार्जुन, किताब महल, इलाहाबाद, द्वि० स०, १९५३ ई०	रामकृष्ण (शब्द०)	रामकृष्ण
रत्न० (शब्द०)	रत्नसार	राम० ध०	सक्षित रामचंद्रिका, सपा० लाला भगवानदीन, ना० प्र० सभा, वाराणसी, पठ स०
रत्नपरीक्षा (शब्द०)	रत्नपरीक्षा	राम० धर्म०	रामस्नेह धर्मप्रकाश, सपा० मालचंद्र जी शर्मा, चौकसराम जी (सिंहल), बडा रामद्वार, बीकानेर ।
		राम० धर्म० स०	रामस्नेह धर्मसंग्रह, सपा० मालचंद्र जी शर्मा, चौकसराम जी (सिंहल), बडा रामद्वार, बीकानेर ।
		रामरसिका०	रामरसिकावली (भक्तमाल)
		रामसहाय (शब्द०)	रामसहाय कवि कृत सतसई

रामानंद०	रामानंद की हिंदी रचनाएँ, संपा० पीतावर- दत्त बहधवाल, ना० प्र० सभा, प्र० स०	शकर०	शकरसर्वस्व, संपा० हरिशंकर शर्मा, गयाप्रसादे एंड सस, आगरा, प्र० स०
रामाश्व०	रामाश्वमेध, ग्रंथकार, मन्नालाल द्विज, त्रिपुरा भैरवी, वाराणसी, १९३६ वि०	शमु (शब्द०)	शमु कवि, शिवाजी के पुत्र सभ जी
रिखिनाथ (शब्द०)	कवि रिखिनाथ	शकु०	शकु तला, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्य सदन, चिरगाँव, झाँसी
रेगुका	रेगुका, रामधारी सिंह 'दिनकर,' पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, पटना, प्र० स०	शकुतला	शकुतला नाटक, अनु० राजा लक्ष्मणसिंह, हिंदी साहित्य समेलन, प्रयाग, चतु० सं०
रै० बानी	रैदास बानी, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद	शाहजहाँनामा (शब्द०)	शाहजहाँनामा
लक्ष्मणसिंह (शब्द०)	राजा लक्ष्मणसिंह	शाङ्गधर स०	शाङ्गधर सहिता, टी० सीताराम शास्त्री, मूवई वैभव मुद्रणालय, सवत् १९७१
लल्लू, लल्लूलाल (शब्द०)	लल्लूलाल	शिखर०	शिखर वशोत्पत्ति, सपा० पुरोहित हरिनारायण शर्मा, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०, १९८५
लवकुश चरित्र (शब्द०)	लवकुश चरित्र	शिरमौर (शब्द०)	कवि शिरमौर
लहर	लहर, जयशकर प्रसाद, भारती भंडार, इलाहाबाद, पचम स०	शिवप्रसाद (शब्द०)	राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद
लाल (शब्द०)	लाल कवि (छत्रप्रकाशवाले)	शिवराम (शब्द०)	शिवराम कवि
वर्ण०, वर्णरत्नाकर	वर्णरत्नाकर	शुक्ल० अभि० ग्र०	शुक्ल अभिनदन ग्रंथ, मध्यप्रदेश हिंदी साहित्य समेलन
वाल्मीकीय० (शब्द०)	वाल्मीकीय रामायण	शृ० सत० (शब्द०)	शृ गार सतसई
विद्यापति	विद्यापति, सपा० खगेंद्रनाथ मिश्र, यूनाइटेड प्रेस, लि०, पटना	शृगार सुधाकर (शब्द०)	शृगार सुधाकर
विनय०	विनयपत्रिका, टीका० प० रामेश्वर भट्ट, इडियन प्रेस लि०, प्रयाग, तृ० स०	शेखर (शब्द०)	शेखर कवि
विशाख	विशाख, जयशकर प्रसाद, लीडर प्रेस, प्रयाग, तृ० स०	शेर०	शेर श्री मुखन, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, प्र सं.
विश्राम (शब्द०)	विश्रामसागर	शैली	शैली, प० करुणापति त्रिपाठी, प्र० स०
विश्वनाथ सिंह (शब्द०)	रीवाँ नरेश महाराज विश्वनाथ सिंह जी (स० १८४६-१९११ वि०)	श्यामबिहारी (शब्द०)	श्यामबिहारी कवि
विश्रवास (शब्द०)	विश्रवास ?	श्यामा०	श्यामास्वप्न, सपा० डा० कृष्णलाल, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०
वीणा	वीणा, सुमित्रानंदन पत्र, इडियन प्रेस, लि० प्रयाग, द्वि० सं०	श्रद्धानंद (शब्द०)	स्वामी श्रद्धानंद
वेणी (शब्द०)	वेणी (या वेनी) कवि	श्रद्धाराम (शब्द०)	श्रद्धाराम फुल्लोरी
वेनिस (शब्द०)	वेनिस का बाँका	श्रीकृष्णसदेश (शब्द०)	श्रीकृष्णसदेश
वैशाली०, वै० न०	वैशाली की नगरवधू, चतुरसेन शास्त्री, गीतम बुकडिपो, दिल्ली, प्र० स०	श्रीधर (शब्द०)	श्रीधर कवि
वो दुनिया	वो दुनिया, यशपाल, विप्लव कार्यालय, लख- नऊ, १९४१ ई०	श्रीधर पाठक (शब्द०)	श्रीधर पाठक
व्यंग्यार्थं	व्यंग्यार्थं कौमुदी प्रताप कवि कूठ, बाबू राम- कृष्ण वर्मा, भारत जीवन प्रेस, काशी, प्र० स०, सवत् १९५७	श्रीनिवास ग्र०	श्रीनिवास ग्रंथावली, सपा० डा० कृष्णलाल, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०
व्यंग्यार्थं (शब्द०)	व्यंग्यार्थं कौमुदी	श्रीपति (शब्द०)	श्रीपति कवि
व्यास (शब्द०)	अधिकारदत्त व्यास	सतति०	चंद्रकाता सतति, देवकीनंदन खत्री, वाराणसी सचिता (कवितासंग्रह)
व्रज (शब्द०)	व्रज विलास	सत तुरसी०	सत तुरसीदास की शब्दावली, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद ।
श० दि० (शब्द०)	शकरदिविजय	स० दरिया, सत० दरिया सत कवि दरिया, सं० धर्मेंद्र ब्रह्मचारी, विहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, प्र० स०	सगीत दामोदर
शरक (शब्द०)	शकर कवि	स० दा० (शब्द०)	सगीत शाकुतल
		सं० शा० (शब्द०)	
		सत र०	सत रविदास श्रीर उक्का काव्य, स्वामी

	रामानन्द शास्त्री, भारतीय रविदास सेवासघ, हरिद्वार, प्र० स०		हरिनागयण शर्मा, राजम्नान रिमचं मोसा-यटी, कलकत्ता
संतवाणी०, सत०सार०	सतवाणी सार सग्रह (२ भाग), वेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद	सुदरीसिद्धर (शब्द०)	सुदरी सिद्धर, कवितामग्रह
सन्यासी	मन्यासी, इलाचन्द्र जोशी, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० स०	मुकुवि (शब्द०)	सुकवि जगन्नाम नाम के कवि
सपूर्ण० अभि० ग्र०	सपूर्णनिद अभिनदन ग्रथ, सपा० आचार्य नरेंद्रदेव, ना० प्र० सभा, याराणसी	सुखदा	सुपदा, जैनेंद्रकुमार, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली, प्र० स०
स० दर्शन	समीक्षादर्शन, रामलाल सिंह, इडियन प्रेस, प्रयाग, प्र० स०	सुखदेव (शब्द०)	कवि 'सुखदेव'
सरय०	कविरत्न सरयनारायण जी की जीवनी, श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वि० स०	सुधाकर (शब्द०)	मह महोपाध्याय प० सुधाकर द्विवेदी
सत्यार्थप्रकाश (शब्द०)	सत्यार्थप्रकाश, स्वामी दयानन्द	सुजान०	सुजानचरित (नूदनदृत्त), सपा० राधाचरण, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी, प्र० स०
सबल (शब्द०)	सबलसिंह चौहान (महाभारत)	सुधानिधि	कवि तोष और गुधानिधि, म० नुरेंद्र गाडुर, ना० प्र० स० काशी, प्र० स०
सभा० वि० (शब्द०)	सभाविलास	सुनीता	सुनीता, जैनेंद्रकुमार, साहित्यमण्डल, बाजार सीताराम, दिल्ली, प्र० स०
सरस्वती (शब्द०)	सरस्वती मासिक पत्रिका	सुदर (शब्द०)	सुदर कवि, नुदरदाग जी
सर्वाध्यातचिन्त्रिस्ता (शब्द०)	सर्वाध्यात चिन्त्रिस्ता	सूत०	सूत की माला, पत श्रीर बच्चन, भारती भंडार, इलाहाबाद, प्र० स०
स० शास्त्र	समीक्षाशास्त्र, प० सीताराम चतुर्वेदी, मखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी, प्र० स०	सूदन (शब्द०)	सूदन कवि (भरतपुरवाले)
स० सप्तक	सतसई सप्तक, सपा० श्यामसुदरदास, हिंदु-स्तानी एकेडमी, प्रयाग, प्र० स०	सूर०	सूरसागर (दो भाग), ना० प्र० सभा, द्वितीय स०
सरलाबाई (शब्द०)	सरलाबाई, कवयित्री ।	सूर० (शब्द०)	सूरदास
सहजो०	सहजो बाई की बानी, भेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद, १९०८ वि०	सूर० (राधा०)	सूरसागर, सपा० राधाकृष्णदास, वैकटेश्वर प्रेस, प्र० स०
साकेत	साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, साहित्यसदन, चिर-गाँव, भौसी, प्र० स०	सेवक (शब्द०)	'सेवक' कवि
सागरिका	सागरिका, ठा० गोपालशरण सिंह, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० स०	सेवक श्याम (शब्द०)	सेवक श्याम कवि
साम०	सामवेनी, रामधारी सिंह 'दिनकर,' उदयाचल, पटना, द्वि० स०	सेवासदन	सेवासदन, प्रेमचंद, हिंदी पुस्तक एजेंसी, कल-कत्ता, द्वि० स०
सा० दर्पण	साहित्यदर्पण, सपा० शालिग्राम शास्त्रा, श्री मृत्यु जय शोधालय, लखनऊ, प्र० स०	सेर कु०	सेर कुहमार, प० रतननाथ 'सरमार,' नवल-फिपोर प्रेस, लखनऊ, च० स०, १९३४ ई०
सा० लहरी	साहित्यलहरी, सपा० रामलोचनशरण विहारी, पुस्तक भंडार, लहेरियासराय, पटना	सी भजान० (शब्द०)	सी भजान और एक सुजान, त्रयोव्यासिंह उपाध्याय 'हरिशीघ'
सा० समीक्षा	साहित्य समीक्षा, कालिदास कपूर, इडियन प्रेस, प्रयाग	स्कद०	स्कदगुप्त, जयशंकर प्रसाद, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० स०
साहित्य०	साहित्यालोचन, श्री श्यामसुदर दास, इडियन प्रेस, इलाहाबाद	म्वरुं०	स्वरुंकिरण, सुमित्रानन्दन पत, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० स०
सिद्धांतसग्रह (शब्द०)	सिद्धांतसग्रह	स्वाधीनता (शब्द०)	स्वाधीनता
सीतल (शब्द०)	कवि सीतल	स्वामी रा० (शब्द०)	स्वामी रामकृष्ण
सीताराम (शब्द०)	सीताराम कवि	स्वामी हरिदास (शब्द०)	स्वामी हरिदास
सुदर० प्र०	सुदरदास ग्रथावली (दो भाग), सपा०	हस०	हसमाला, नरेंद्र शर्मा, भारती भंडार, लीडर प्रेस, प्रयाग, प्र० स०
		हसरज (शब्द०)	हसरज
		हकायके०	हकायके हिंदी, ले० मीर प्रबुल वाहिद, प्र० सपा० 'रुद्र' काशिकेय, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०

हनुमन्नाटक (शब्द०)	हनुमन्नाटक	हिंदी प्रदीप (शब्द०)	हिंदी प्रदीप
हनुमान, हनुमान कवि (शब्द०)	हनुमान कवि	हिंदी प्रेमगाथा०	हिंदी प्रेमगाथा काव्यसंग्रह, गणेशप्रसाद द्विवेदी, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, १९३९ ई०
हम्मीर०	हम्मीरहठ, सपा० जगन्नाथदास 'रत्नाकर,' इडियन प्रेस लि०, प्रयाग	हिंदी प्रेमा०	हिंदी प्रेमाख्यानक काव्य, डा० कमल कुलश्रेष्ठ, चौधरी भानसिंह प्रकाशन, कचहरी रोड
ह० रासो०	हम्मीर रासो, सपा० डा० श्यामसुंदरदास, ना० प्र० सभा, काशी, प्र० स०	हि० प्र० चि०	हिंदी काव्य मे प्रकृतिचित्रण, किरणकुमारी गुप्त, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
हरिजन (शब्द०)	कवि हरिजन	हि० सा० भू०	हिंदी साहित्य की भूमिका, हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बबई, तृ० सं०, १९४८
हरिदास (शब्द०)	स्वामी हरिदास	हिंदु० सभ्यता	हिंदुस्तान की पुरानी सभ्यता, वेनीप्रसाद, हिंदुस्तानी एकेडमी, प्रयाग, प्र० स०
हरिश्चंद्र (शब्द०)	भारतेंदु हरिश्चंद्र	हित हरिवंश (शब्द०)	वैष्णव सत हित हरिवंश
हरिसेवक (शब्द०)	हरिसेवक कवि	हिम कि०	हिमकिरीटिनी, माखनलाल चतुर्वेदी, सरस्वती प्रकाशन मंदिर, इलाहाबाद, तृ० सं०
हरी घास०	हरी घास पर क्षण भर, अज्ञेय, प्रगति प्रकाशन, नई दिल्ली, १९४९ ई०	हिम त०	हिमतरंगिणी, माखनलाल चतुर्वेदी, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्र० स०
हर्ष०	हर्षचरित एक सांस्कृतिक अध्ययन, वासुदेव-धरण अग्रवाल, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, प्र० स०, १९५३ ई०	हिम्मत०	हिम्मतबहादुर विरदावली, लाला भगवान-दीन, ना० प्र० सभा, काशी, द्वि० स०
हालाहल	हालाहल, हरिवंशराय बच्चन, भारती भंडार, प्रयाग, १९४६ ई०	हिल्लोल	हिल्लोल, शिवमगल सिंह 'सुमन', सरस्वती प्रेस, बनारस, द्वि० स०
हिंदी आ०	हिंदी आलोचना	हुमायूँ०	हुमायूँनामा, अनु० प्रजरत्नदास, ना० प्र० सभा, वाराणसी, द्वि० स०
हिंदी का०	हिंदी काव्य की अंतश्चेतना	हृदय०	हृदयतरंग, सत्यनारायण कविरत्न कवि हृदयराम
हि० का० प्र०	हिंदी काव्य पर अंग्ल प्रभाव, रवींद्रसहाय वर्मा, पद्मजा प्रकाशन, कानपुर, प्र० सं०	हृदयराम (शब्द०)	
हि० क० का०	हिंदी कवि और काव्य, गणेशप्रसाद द्विवेदी हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, प्र० स०		
हि० ना०	हिंदी के नाटक		

[व्याकरण, व्युत्पत्ति आदि के संकेताक्षरों का विवरण]

अ०	अग्नेजी	इव०	इवरानी
अ०	अरवी	उ०	उदाहरण
अक० रूप	अकर्मक रूप	उच्चा०	उच्चारण सुविधायं
अनु०	अनुकरण शब्द	उडि०	उडिया
अनुध्व०	अनुध्वन्यात्मक	उप०	उपसर्ग
अनु० मू०	अनुकरणार्थमूलक	उभय०	उभयलिङ्ग
अनुर०	अनुरणनात्मक रूप	एकव०	एकवचन
अप०	अपभ्रंश	कनाडी	कन्नड भाषा
अर्ध० मा०	अर्धभागवी	कहावत	कहावत
अल्पा०	अल्पार्थक	काव्यशास्त्र	काव्यशास्त्र
अव०	अवधी	[को०], (को०)	अन्य कोश
अव्य०	अव्यय	३	सभाव्य व्युत्पत्ति
इता०	इतालवी	१	अनिश्चित व्युत्पत्ति

कॉक०	कॉकरी	वंग०	वंगला भाषा
क्रि०	क्रिया	वरमी०	वरमी भाषा
क्रि० झ०	क्रिया धर्मक	बहुव०	बहुवान
क्रि० प्र०	क्रिया ऽयोग	बु० ख०	बु देलगट की बोली
क्रि० वि०	क्रिया विशेषण	बुदेल०	" "
क्रि० स०	क्रिया सकर्मक	बोल०	बोलचाल
क्व०	क्वचित्	भाव०	भाववाचक सज्ञा
गीत	लोकगीत	भू०	भूमिका
गुज०	गुजराती	भू० क०	भूत कृदत
ची०	चीनी भाषा	मरा०	मराठी
छ०	छद	मल०	मलयानी या मलयानम भाषा
जापा०	जापानी	मला०	मलाया की भाषा
जावा०	जावा द्वीप की भाषा	मि०	मिलाए
जी०, जीवन०	जीवनचरित	मुसल०	मुसलमानों द्वारा प्रयुक्त
ज्या०	ज्यामिति	मुहा०	मुहावरा
ज्यो०	ज्योतिष	यू०	यूनानी
डि०	डिगल	यी०	योगिक
त०	तमिल	राज०	राजन्यानी
तर्क०	तर्कशास्त्र	लश०	लशकरी
ति०	तिष्ठती भाषा	ला०	लाक्षणिक
तु०	तुर्की	लं०	लैटिन
हू०	हूहा या हूहला	व० क०	वर्तमान कृदत
तुल०	तुलनीय	वण वि०	वणविपर्यय
दे०	देखिए	वि०	विशेषण
देश०	देशज	वि० द्वि० मू०	विपमद्विदक्तिमूलक
देशी	देशी	वै०	वैदिक
धर्म०	धर्मशास्त्र	व्या०	व्याकरण
नाम०	नामधातु	व्यय	व्यंग्यार्थ मे प्रयुक्त
ना० घा०	नामधातुज क्रिया	(शब्द०)	हिंदी शब्दसागर प्र० स०
नामिक धातु	नामिक धातु	स०	संस्कृत
ने०	नेपाली	सयो०	सयोजक अव्यय
न्याय०	न्याय या तर्कशास्त्र	सयो० क्रि०	सयोजक क्रिया
प०	पंजाबी	स०	सकर्मक
परि०	परिशिष्ट	सक० रूप	सकर्मक रूप
पा०	पाली	सधु०	सधुक्कडी भाषा
पुं०	पु लिंग	सर्व०	सर्वनाम
पुर्त०	पुर्तगाली	सिंहली	सिंहली भाषा
पृ० हिं०	पुरानी हिंदी	स्वे०	स्वेनी भाषा
पू० हिं०	पूर्वी हिंदी	स्त्रि०	स्त्रियों द्वारा प्रयुक्त
पु०	पुठ	स्त्री०	स्त्रीलिंग
प्र०	प्रकाशकीय या प्रस्तावना	स्त्रि०	हिंदी
प्रत्य०	प्रत्यय	स्त्रि०	काव्यप्रयोग, पुरानी हिंदी
प्रा०	प्राकृत	स्त्रि०	व्युत्पन्न
प्रे०	प्रेरणाार्थक रूप	स्त्रि०	प्रातीय प्रयोग
फ०	फर्रांसीसी भाषा	स्त्रि०	भ्राम्य प्रयोग
फकीर०	फकीरों की बोली	स्त्रि०	धातुचिह्न
फा०	फारसी	स्त्रि०	

हिंदी शब्दसागर

मन.—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनस्] मन ।
 मन कल्पित—वि० [सं०] मन द्वारा कल्पित । मनगढत [को०] ।
 मन कात—वि० सञ्ज्ञा पुं० [सं० मन कान्त] सं० 'मनस्कात' ।
 मन काम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनोरथ । मनस्काम [को०] ।
 मन कार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मन का एकाग्र करना । मुख दुःख आदि का पूर्ण ज्ञान वा जानकारी ।
 मन क्षेप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मन का उद्वेग ।
 मन पति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
 मन पर्याप्त—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मन में मकल्प विकल्प वा बोध प्राप्त करने की शक्ति ।
 मन पर्याय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जैन शास्त्रानुसार वह ज्ञान जिसमें चित्तित अर्थ का साक्षात् होता है । यह ज्ञान ईर्ष्या और अतराय नामक ज्ञानावरणों के दूर होने पर निर्वाण या मुक्ति की प्राप्ति के पूर्व की अवस्था में प्राप्त होता है । इसमें जीवों को मनरूपी द्रव्य के पर्यायों का साक्षात् ज्ञान होता है ।
 मन पाप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानसिक पाप । मन का पाप [को०] ।
 मन पीडा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानसिक सताप या क्लेश [को०] ।
 मन पूत—वि० [सं०] जिसे मन पवित्र मानता है । जिसे अतरात्मा अगीकार करती हो [को०] ।
 मन प्रणीत—वि [सं०] १ मन कल्पित । मनगढत । २ रुचिकर या मन को सुख देनेवाला [को०] ।
 मन प्रसाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मन की प्रसन्नता । उ०—मन प्रसाद चाहिए केवल क्या कुटीर फिर क्या प्रासाद ?—पंचवटी, पृ० १० ।
 मन प्रसूत—वि [सं०] मन से उत्पन्न । मन से कल्पित [को०] ।
 मन प्रिय—वि० [सं०] जो मन को प्रिय हो या अच्छा लगे [को०] ।
 मन प्रीति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मन की प्रसन्नता ।
 मन शक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मन की शक्ति । मनोबल [को०] ।
 मन शास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें मन और मनोविकारों का वर्णन हो । मनोविज्ञान । उ०—मन शास्त्र कुछ और बताता है, पर जो हो ।—रजत०, पृ० १७ ।
 मन शिल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मैनसिल ।
 मन शिला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मैनसिल ।
 मन शीघ्र—वि० [सं०] मन की तरह तीव्र [को०] ।
 मन सकल्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मन सकल्प] मन की इच्छा । हृदय की चाहना [को०] ।
 मन सग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मन सग] मन की किसी विषय में आमक्ति [को०] ।

मन सताप—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मन पन्ताप] मानसिक पीडा या मन का क्लेश [को०] ।
 मन सुख—वि [सं०] जो मन को रुचे । रुचिकर ।
 मन सुख—सञ्ज्ञा पुं० मन का मुख [को०] ।
 मन स्थैर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मन की दृढता । चित्त की स्थिरता [को०] ।
 मन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनस्] १ प्राणियों में वह शक्ति या कारण जिसमें उनमें वेदना, सकल्प, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, बोध और विचार आदि होते हैं । अतः करण । चित्त ।
 विशेष—वैज्ञानिक दर्शन में मन एक अप्रत्यक्ष द्रव्य माना गया है । सख्या परिमाण, पृथक्त्व, सयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, और सम्कार इसके गुण बतलाए गए हैं और इसे अणुरूप माना गया है । इसका वर्म मकल्प विकल्प करना बतलाया गया है तथा इसे उभयात्मक लिखा है, अर्थात् उसमें ज्ञानेंद्रिय और कर्मेंद्रिय दोनों के वर्म हैं । (एकादश मनो विद्धि स्वगुणो-नोभयात्मकम् ।—गोता) । योगशास्त्र में इसे चित्त कहा है । बौद्ध आदि इसे छठी इन्द्रिय मानते हैं । विशेष 'चित्त' ।
 २ अतः करण की चार वृत्तियों में से एक जिससे सकल्प विकल्प होता है ।
 मुहा०—किमी से मन अटकना या उलझना = प्रीति होना । प्रेम होना । मन आना या मन में आना = नमस्कृत होना । जंचना । उ०—(क) म गल मूरति कचन पत्र की मन रचो मन आवत नीठि है ।—दास (शब्द०) । (ख) और दीन बहु रतन पखाना । सोन रूप जो मनहि न आना ।—जायसी (शब्द०) ।
 मन का खराब होना = (१) मन फिरना । (२) नाराज होना । अप्रसन्न होना । (३) रागो होना । बीमार होना । अपने मन का होना = (१) अपनी इच्छा या रुचि आदि के अनुकूल होना । उ०—यही कारण था कि लोग अपने मन के नहीं हो सकते ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २७६ । (२) किमी की सलाह या बात पर ध्यान न देना । स्वतंत्र, स्वच्छद एव जैसा जी में आवे वैसा करना । मन टूटना = साहम छूटना । हताश होना । उ०—फूटो निज कर्म नहि लूटो मुख जानकी को टूटो न घनुप टूट गए मन सबके ।—हनुमत्नाटक (शब्द०) । मन का दाग = मन का मैल । पापवृत्ति । दुष्प्रवृत्ति । उ०—साखी शब्द बहुत सुना, मिटा न मन का दाग । सगति से मुवरा नहीं, ता का बड़ा अभाग ।—कवीर मा० सं०, पृ० ५६ । मन की दौड़ = मन की गति । मन का पहुँच । उ०—है जहाँ पर न दौड़ मन की भी, वीं विचारी निगाह क्या दीडे ।—चोखे०, पृ० २ । मन बिगड़ना = (१) मन का हट जाना । मन का उदासीन

हो जाना । (२) मतली आना । कै मालूम होना । (३) उन्मत्त होना । पागल होना । मन चढना = साहम बढना । उत्माह बढना । प्रोत्साहित होना । उ०—(क) सुनि मन धीरज भयल हो रमैया राम । मन बढि रहल लजाय हो रमैया राम ।—कवीर (शब्द०) । (ख) आपम के नित के वर से श्रुयो का मन बढा ।—शिवप्रसाद (शब्द०) । किसी का मन बूझना = किसी के मन की थाह लेना । उ०—तुम्हारा मन बूझने के लिये ही मैंने यह बातें कहीं ।—हरिश्चन्द्र (शब्द०) । मन का बूझना या मानना = मन में शांति होना । मन में धर्य आना । मन मन = मन ही मन । मन में । उ०—पिय संग सोवत सोय न जाई । मन मन इमि मोचै सुख दाई ।—नद० ग्र०, पृ० १४६ । मन मानना = मन में शांति होना । सतोप होना । जैसे,—हमारा मन नहीं मानता, हम उन्हें देखने अवश्य जायेंगे । मन का भेद पाना = हृदय को गूढ बात समझना । मन का रहस्य जानना । उ०—मन का भेद न पावै कोई ।—जग० श०, पृ० ५४ । मन का मारा = रिप्रहृदय । दुखी चिन्तवाला । मन का मैला = मन का खोटा । कपटी । घाती । मन की मनै रहना = २० 'मन की मन में रहना' । उ०—मन की मनै रही मन माया । ज्यों तरंग जल जलें समाया ।—पु० रा०, २६।५६ । मन को जाना = विस्मयान्वित होना । चकित होना । उ०—पै यह सगुन स्वरूप तुम्हारी । ह्यं मन कोयो बात हमारी ।—नद० ग्र०, पृ० २६६ । मन छूना = (१) मन को आह्लादित करना । मन को प्रसन्न करना । मन को प्रभावित करना । (२) आंतरिक बात समझना । हृदय की बात जानना । (३) पूर्ण प्राप्ति न कराना । पूरी तरह से किसी वस्तु को न देना । नाम करना । उ०—मन छूना, शोभा बरसना, दिन ढलना या झूना उदासी टपकना, इत्यादि ऐसी ही कविसमयसिद्ध उक्तियाँ हैं जो बोलचाल में रुढि होकर आ गई हैं ।—रस० पृ० ४१ । मन ठिकाने रहना = चित्त स्थिर रहना । मन शांत रहना । उ०—चर्चा वार्ता बिना मन ठिकाने रहत नाही ।—दी सौ बावन०, भा० १, पृ० ११७ । मन धरना = (१) २० 'मन छूना' । (२) मन में धारण करना । उ०—कसौ कसौटी तासु का, जो कसनी ठहराइ । खोटे खरे बु मन धरे, त्याग विरद लजाइ ।—ग्रज० ग्र०, पृ० १० । मन हरा होना = मन प्रसन्न होना । चित्त प्रसन्न रहना । मन की मन में रहना = इच्छा पूरी न होना । जैसे,—मन की मन में ही रह गई, और वे चले गए । मन के लड्डू खाना = ऐसी बात को सोचकर प्रसन्न होना, जिसका होना असंभव या दुःसाध्य हो । व्यर्थ की आशा पर प्रसन्न होना । उ०—विरह से पागल प्रेमी लोग मन के लड्डू से मूख बुझा लेते हैं ।—हरिश्चन्द्र (शब्द०) । मन खोलना = दुःख छानना । निष्कपट होना । शुद्ध हृदय होना । मन चलना = इच्छा होना । प्रवृत्ति होना । जैसे,—बीमारी में किसी चीज पर मन नहीं चलता । किसी का मन टटोलना या मन को टटोलना = किसी के मन की थाह लेना । किसी की इच्छा को जानना । जैसे,—आश्रो, कुछ आमीद प्रमोद की बातें कर उसका मन टटोलें । मन

ढोलना = (१) मन का चनायमान होना । मन का चंचल होना । (२) लालच उत्पन्न होना । लोभ आना । मन डोलाना = (१) मन में चंचलता उत्पन्न करना । मन चनायमान करना । उ० भोजन करत गागो कर स्वामिनि गौरे देव जो मन न डोलावै । पूरदाय प्रमु जय विधिदया जापर ह्या गौरे जन पावै ।—गूर (शब्द०) । (२) नाच उत्पन्न करना । लोभ दिलाना । अपना मन डोलना = नाचन करना । मन देना = (१) जी लगाना । मन लगाना । उ०—(क) प्य पाव जो मन देद सेवा । सेवाहि फल प्रनय होइ दया ।—जायसी (शब्द०) । (ख) न्युपतिपुरी जनमु तव भयऊ । पुनि ते मन सेवा मम दयऊ ।—तुर्गा (शब्द०) । (२) ध्यान देना । किसी को मन देना = किसी पर प्राप्त होना । मोहित होना । किसी पर मन धरना = ध्यान देना । मन लगाना । उ०—(क) प्राय भयो प्रपराध आप तनि अन्तुन करत स्वै । गुरदाय स्वामी मनमोहन नामे जन न वै ।—गूर (शब्द०) । (ख) जोई शक्ति गाजन मन धर । साई हरि गा मिलि प्रनुसरे ।—तनू (शब्द०) । मन तोड़ना या हारना = भनोत्साह होना । माह्य छोड़ना । उ०—प्रा बिनु है नर्व नहीं एको फरै नुनत दान नवन पुर तप मेर गुनि मनहि तोर ।—गूर (शब्द०) । (किसी से) मन पट जाना या फिर जाना = घृणा होना । नकरन होना । उ०—ता घनै धमरन रं, वले प्रगत्यो वेध । मन फाटी साटा चिता, रूटे दाव न वेध ।—रा० श०, पृ० ३४५ । मन फिराना = २० 'मन फेरना' । मन फेरना = चित्त को हटाना । मन को किसी श्रेय में प्रलग करना । प्रवृत्ति बदलना । उ०—किरि फिर केनि देनि के घो मै हरी को मन फेर फिरो पुनि पुनि भाग को नली घरी ।—केजव (शब्द०) । मन बदना = नात्म निताना । उताड़ बढाना । प्रोत्साहित करना । उ०—रियो शिरपाय नृनाउ ने महर को आप पहगानी मव रिवाग । आतहि पुच पाइ कै लियो मिर नाइ क हरि नदाव व मन बडाए ।—गूर (शब्द०) । मन चढना या उह पढना = चित्त का किमी आर ढल जाना । मन का वाचक किमी आर चने जाना । उ०—व्या जागो जन मन वाहे प । गुरि जा व निमल कर ।—नद० ग्र०, पृ० २६१ । मन में चबना = मन में चुभना । पसद आना । अच्छा लगना । रुचना । माना । जैसे,—उनको मूरत तो मेर मन में जग गई है । उ०—गूर के भेला जिव डरे काया छीजनहा । कुमति कमाई मन वने लागु जुवा की लार ।—दवार (शब्द०) । मन चहलाना = चित्त या दुखी चित्त को किमी काम में लगाकर आनदित करना । दुख छोड़कर आनंद में समय काटना । चित्त प्रसन्न करना । जी बहलाना । उ०—ना किसान अब समाचार तहै आप सुनै । ना नाऊ को वाते सबको मन बहलै ।—श्रीवर पाठक (शब्द०) । मन भरना = (१) प्रतीति होना । निश्चय या विश्वास होना । (२) मतोप होना । तृप्ति होना । तृप्ति होना । उ०—यह वीसो फूलो पर गया, पर इसका मन न भरा ।—अयोध्या (शब्द०) । मन भर जाना = (१) श्रवा जाना । तृप्ति

होना । (२) अधिक प्रवृत्ति न रह जाना । मैन भाना = भला लगना । पसद होना । रुचना । उ० (क) वामिनि को वामदेव कामिनि को कामदेव रण जयथम रामदेव मनये जू ।—केशव (शब्द०) । (ख) भाँति अनेक विहगम सु दर फूलै फलै तरु ते मन भावै । प्रताप (शब्द०) । (ग) हरिहर ब्रह्मा के मन भाई । विधि अक्षर लै युगुति बनाई ।—कबीर (शब्द०) । (घ) कहेहु नीक मोरेहु मन भावा । यह अनुचित नहि नेवत पठावा । - तुलसी (शब्द०) । (ङ) वाला वसंधि मैं छवि पावै । मन भावै मुँह कहत न आवै । - नद० प्र०, पृ० १२१ । मन भागी करना = दुखी होना । उदास होना । मन मरना = इच्छा ममात होना । किसी प्रकार की रुचि न होना । उ०—मन मरना, मन छूना शोभा बरसना, उदासी टकना इत्यादि ऐसी ही कविसमयसिद्ध उक्तियाँ हैं जो बोलचाल में रुढ़ि होकर आ गई हैं ।—रस०, पृ० २१ । मन मरा होना = बिलकुल उदास या निष्क्रिय होना । उ०—चोट पर हे चोट चित को लग रही । आज उनका मन बहुत ही है मरा ।—चुभते०, पृ० २८ । मन मानना = (१) मतोप होना । तसल्ली होना । उ०—(क) मधुकर कहे कम मन मान । जिनके एक अनन्य व्रत सुभे क्यो दूजो उर आनै—सूर (शब्द०) । (ख) राजा भा निश्च मन माना । बाँधा रतन छोड़ि के आना ।—जायसी (शब्द०) । (२) निश्चय होना । प्रतीति होना । उ०—(क) कै विनु सपथ न अम मन माना । सपथ बोलु वाचा परमाना ।—जायसी (शब्द०) । (३) अच्छा लगना । रुचना । पसद आना । भाना । उ०—सप्त प्रबध सुभग सोपाना । ज्ञान नयन निरखत मन माना । - तुलसी (शब्द०) । (४) स्नेह होना अनुराग होना । उ०—सखी री श्याम सो मन मान्यो । नीके करि चित कमल नैन सौं घालि एक ठो मान्यो ।—सूर (शब्द०) । मन मारना = इच्छा नष्ट करना । इच्छा को दवाना । उ०—दिन गए मिघ मार लेने के । है भला कौन मार मन पाता ।—चुभते०, पृ० ७१ । किसी से मन मिलना = (१) प्रेम होना । अनुराग होना । (२) मित्रता होना । दोस्ती होना । उ०—ए जेते दिन मन मिल गए तिय पिय विन मीको, तेते दिन मेरे आन लेखे ।—अकबरी०, पृ० २९ । मन में आना = (१) मन में किसी भाव का उत्पन्न होना । उ०—तासों उन कट्टु बचन सुनाए । पं ताके मन कछु न आए ।—सूर (शब्द०) । (२) समझ पडना । ध्यान में आना । उ०—यह तनु क्या ही दियो न आवे । और देत कछु मन नहि आवे ।—सूर (शब्द०) । (३) अच्छा जान पडना । भला लगना । मन में आना = दे० 'मने में लाना' । मन में जमना या बैठना = (१) ठीक जँचना । उचित या युक्तियुक्त प्रतीत होना । (२) विचार में आना । ध्यान में आना । मन में ठानना = निश्चय करना । हठ सकल्प करना । मन में धरना = दे० 'मन में रखना' । मन में भरना = हृदयगम करना । मन में जमाना । मन में रखना = (१) गुप्त रखना । प्रकट न करना । जैसे,—अभी यह बात मन में ही रखना, किसी से कहना मत । (२)

स्मरण रखना । जैसे,—हमारी सब बातें मन में रखना, भूल न जाना । मन में होरी लगना = विरह व्यथा से पीडित होना । उ०—होरी नाहक खेळूँ मैं वन में, पिया विनु होरी लगी मेरे मन में ।—भारतेंदु प्र०, भा० २, पृ० ३८४ । मन में लाना = विचार करना । सोचना । ध्यान देना । उ०—कहै पदमाकर भक्कोर भिन्ली शोरन को मोरन को महत न कोऊ मन ल्यावतो ।—पद्माकर (शब्द०) । मन मोहना या मन को मोहना = किसी के मन को अपनी ओर आकृष्ट करना । लुभाना । अनुरक्त करना । उ०—जग अदपि दिगबर पुष्पवती नर निरखि निरखि मन मोहै । केशव (शब्द०) । मन भिलना = दो मनुष्यों की प्रकृति या प्रवृत्तियों का अनुकूल अथवा एक समान होना । जैसे,—मन मिले का मेल । नहीं तो सबसे भला अकेला । (शब्द०) । मन मारना = (१) खिन्न चित्त होना । उदास होना । उ०—(क) भूमत शत्रु थान किन हेरत लखत मोहि मन मारै । मुनि रिपु पुत्रवधु किन वैरिन मोको देत सवारै ।—सूर (शब्द०) । (ख) मौन गहाँ मन मारे रहाँ निज पीतम की कहीं कौन कहानी ।—प्रताप (शब्द०) । (२) इच्छा को दवाना । मन को वश में करना । उ०—मन नहि मार मना करी सका न पाँच प्रहारि । सील साँच सरवा नही अजहूँ इद्रि उधारि ।—कबीर (शब्द०) । मन मारे हुए या मन मारे = दुखी । उदास । खिन्नचित्त । उ०—(क) कहँ लगि सहिय रहिय मन मारे । नाथ साथ वनु हाथ हमारे ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) प्रिया वियोग फिरत मन मारे परे सिधु तट आनि । ता मुँह रि हित मोहि पठायो सकौं न हौं पहिचानि ।—सूर (शब्द०) । (ग) भवन ही मन मारि बँठी सहज सखे इक आई । देखि तनु अति विरह व्याकुल कहति वचन बनाई ।—सूर (शब्द०) । (घ) उर धरि वीरज गउए दुप्रारे । पूछैह सकल देखि मन मारे ।—तुलसी (शब्द०) । मन मैला करना = मन में खिन्न होना । अप्रसन्न या असंतुष्ट होना । उ०—माइ मिले मन का करिही मुह ही के मिले ते किए मन मैले ।—केशव (शब्द०) । किसी से मन मोटा होना = किसी से अनबन होना । किसी का मन मोटा होना = विराग होना । उदासीन होना । मन मोहना = प्रवृत्ति या विचार को दूसरी ओर लगाना । उ०—विधाता ने हमारा तुम्हारा वियोग कर दिया, मृभे भव मन मोढ लेना पडा ।—तोताराम (शब्द०) । किसी का मन रखना = किसी की इच्छा पूर्ण करना । किसी के मन में आई हुई बात पूरी करना । जैसे—यहाँ के राजाओं से सारे वादशाह दबते थे और इनका वे लोग सब तरह मन रखते थे । उ०—पत रखे जो पत रखाना हो हमे । चूक है मन रख न जो हम मन रखें ।—चोखे०, पृ० ३८ । मन लगना = (१) जी लगना । तबीयत लगना । (२) चित्त विनोद होना । उ०—विरहागि हूँ दुगुनी जग । मन बाग देखत ना लग ।—गुमान (शब्द०) । मन लगाना = (१) चित्त लगाना । मनोयोग देना । (२) चित्त विनोद करना । मन की उदासी मिटाना । (३) प्रेम करना । अनुराग करना । मन लाना (४) = मन लगाना । जी लगाना ।

उ०—(क) गगन मंडल माँ भा उजियारा उलटा फेर लगाया । कहीं कवीर जन भए विवेकी जिन मंत्री मन लाया । कवीर (शब्द०) । (ख) छमिर्हहि मज्जन मोर ढिठाई । मुनिर्हहि वाल बचन मन लाई।—तुनसी (शब्द०) । (ग) किए जो परम तत्व मन लावा । घूमि मात सुनि श्रीर न भावा ।—जायमी (शब्द०) । (२) प्रेम करना । श्राप्त होना । उ०—पवन साँस तोसो मन लाई । जोवै मारग टट्टि विछाई ।—जायमी (शब्द०) । मन से उतारना=(१) मन में आदर भाव न रह जाना । तिरस्त्रत होना । घृणित ठहरना । (२) याद न रहना । विस्मृत होना । मन से उतारना=(१) मन में पहले का सा आदर भाव न रखना । तिरस्कार करना । घृणा करना । (२) चिन्त से उतारना । विस्मृत करना । भुलाना । मन हरना=मुग्ध करना । मोहित करना । मोह लेना । अपने ऊपर अनुरक्त करना । उ०—(क) चेटक लाइ हरहि मन जब लागे हो गरि फँट । माठनाट उठि भार्गहि ना पहिचान न भँट ।—जायमी (शब्द०) । (ख) वट देखो युवति वृद्ध मे ठाढी नील वसन तनु गोरी । मूरदाम मेरो मन वाकी चितवन देखि हरेउ री ।—सूर (शब्द०) । (ग) कानन लमत बिजुरिया मन हरि लीन । निन पर परँ बिजुरिया जिन रचि दीन ।—रहीम (शब्द०) । (घ) स्वप्न रूप भाषण मुधि करि करि । गयो दुहुन के यहि विधि मन हरि ।—श० दि० (शब्द०) । मन ही मन रिंघना=जलना । मन ही मन दुःखी होना । मन ही मन ईर्ष्या करना । उ०—जब तक ख्याल श्रा जाता और वह मन ही मन रिंघने लगता ।—अभिषम, पृ० १० । किसी का मन हाथ में लेना या करना=वशीभूत करना । अपने वश में करना । मन ही मन=हृदय में । चुपचाप बिना कुछ कहे हुए । भीतर ही भीतर । उ०—(क) ललिता मुख चितवत मुसुकाने । आप हँसी पिय मुख श्रवलोक्त दुहुनि मनहि मन जाने ।—सूर (शब्द०) । (ख) प्रथम केनि तिय कलह की, कथा न कछु कहि जाय । अतनु ताप तनुही महै, मन ही मन श्रकुलाय ।—पद्माकर (शब्द०) ।

३ इच्छा । इरादा । विचार ।

मुहा०—मन करना=इच्छा करना । चाहना । उ०—मन न मनावन को करै देत रठाय रठाय । कौतुक लाग्यो पिय प्रिया खिजहु रिभावति जाय ।—विहारी (शब्द०) । मनमाना=अपने मन के अनुसार । यथेच्छ मन चाहा । उ०—दुहँ और की सहचरी करत दुहुन की भीर । मन मान्यो मौसर मिल्यो मिठी मदन की पीर ।—ब्रज० प्र०, पृ० ६५ । मन होना=इच्छा होना । उ०—उमगत अनुराग मभा के मराहे भाग देखि दभा जनक की कहिये को मनु भयो ।—तुलसी (शब्द०) । मनमाना घर जाना=मनमानी । स्वेच्छाचारिता ।

मन^१—सज्ञा पु० [सं० मणि] मणि । बहुमूल्य पत्थर ।

मन^२—सज्ञा पु० [?] चालीस मेर का एक मान या तोल ।

मनहीं^३—सज्ञा पु० [सं० मानव] मनुष्य । आदमी । उ०—वरने नीर भराभर मनई उवर न पाए ।—गि० दा० (शब्द०) ।

मनकना—क्रि० श्र० [अनु०] १ हिलना । डोचना । चेटा करना । हाथ पर चलाना । उ०—आए दरवार विललान छरीदार देखि जापता करनहागे नेकट्ट न मनके ।—भूपण (शब्द०) । २ तर्क वितर्क करना ची चपड करना ।

मनकरा^४—वि० [हि० मणि + कर (प्रत्य०)] चमकदार । प्रकाशमान । उ०—दुहज नटाट अधिक मनकरा । शकर देखि माथ भुइँ बरा ।—जायसी (शब्द०) ।

मनकर्पन वि० [सं० मन. + कर्षण] आकर्षक । उ०—याको नाम एक मकर्पन । जन हर्पन मक्के मनकर्पन ।—नद० प्र०, पृ० २४४ ।

मनका^५—सज्ञा पु० [सं० मणिक या मणिका] १ पत्थर लकड़ी आदि का वेधा हुआ गोन गूड या दाना जिसे पिराकर माला या मुमिरनी आदि बनाई जाती है गुरिया । उ०—माला फेरन जग मुग्धा गया न मन का फेर । कर का मनका छाँडि क मन का मनका फेर ।—कवीर (शब्द०) । २ माला या मुमिरनी । (क्व०) ।

मनका^६—सज्ञा पु० [सं० मन्यका (=गले का नम)] गरदन के पीछे की टुंडा जो रीठ के त्रिलकुन ऊपर होती है ।

मुहा०—मनका ढलना या ढलकना=मरने के समय गरदन टेटी हो जाता । मृत्यु के समय गरदन का एक और झुक जाना ।

विशेष—यह श्रवम्था ठीक मरने के समय होती है, और इसके उपरांत मनुष्य नहीं बचता ।

मनकामना—सज्ञा स्त्री० [हि० मन + कामना] मनोरथ । अभिलाषा इच्छा । उ०—मुनु मिय मत्य अमीस हमारी । पूजहि मनकामना तुम्हारी ।—तुलसी (शब्द०) ।

मनकूला—वि० स्त्री० [अ०] स्थिर या स्थावर का उनटा । चर ।

यौ०—जायदाद मनकूला=चर मपत्ति । गैर मनकूला=स्थिर । स्थायी । स्थावर ।

मनकूहा—वि० स्त्री० [अ० मनकूहत्] जिसके साथ निकाह हुआ हो । विवाहिता । पाणिग्रहीता । जैसे, मनकूहा औरत ।

मनककना^७—क्रि० श्र० [हि०] १ 'मनकना' । उ०—किरव्यान कुतु भरै बैसु कक्की । मनो बीजलट्टी कुलट्टा मनक्की ।—पृ० रा०, २४।१५७ ।

मनखा^८—सज्ञा पु० [सं० मनुष्य] १ 'मनुष्य' । उ०—मनखा जनम पदारथ पायो ऐसो बहुर न आती ।—मतवाणी०, पृ० ६८ ।

मनगढत^९—वि० [हि० मन + गढ़ना] जिसकी वास्तविक सत्ता न हो, केवल कल्पना कर ली गई हो । कपोलकल्पित । जैसे,—आपकी सब बातें मनगढत ही हुआ करती हैं ।

मनगढत^{१०}—सज्ञा स्त्री० कोरी कल्पना । कपोलकल्पना । जैसे,—यह सब आपकी मनगढत है ।

मनगमता^{११}—वि० [हि० मन + गम, गुज० गमवु (=अच्छा लगना, भाना)] मनोभीष्ट । मन को रचनेवाला । उ०—मनगमता पाम्या नहीं ऊँटकाला खाइ ।—ढोला०, दू० ४२७ ।

मनचला—वि० [हि० मन + चलना] १ धीर । निडर । जैसे, मनचला सिपाही । २, साहसी । हिम्मतवाला । ३, रसिक ।

मनचाहना—पि० [हि० मन + चाहना] [मी० मनचाहती, मन-चाहती] १ जिसे मन चाहे। प्रिय। २ मन के अनुकूल। उ०—मस्विए गाहिव आत्रिया, मनचाहदी मोइ। बाडी ह्या वधांमणा, मज्जण मिलिया मोइ।—ढोना०, २० ५३२।

मनचाहा—पि० [हि० मन + चाहना] [पि० स्त्री० मनचाही] उच्छ्रित। अभिनवित।

मनचीत, मनचीता—पि० [हि० मन + चेतना] [पि० स्त्री० मनचीती] मनचाहा। मनभाया। मन मे मोचा ह्या। उ०—(क) घर घर मिमरेड वढेड उछाह। मनचीते हरि पायो नाह।—गूर (शब्द०)। (ख) मेरे मन को दुय परिहरी। मनचीतो मारज मव करी।—लखू (शब्द०)। (ग) पूरे जदपि भयो नही मनचीत्यो रति नाह।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०)। (घ) क्या लाए थे निपट पराजय तुम अपने मनचीत, मधे?—अपनक, पृ० ७०।

मनछाई—मज्ञा स्त्री० [म० मत्स्य] मन्त्रिणी। मत्स्य। उ०—पछी जन मो घर करे, मनछा चटे अकाम।—रामानंद०, पृ० ३२।

मनजम - पि० [अ० मनजम] छद्मोद्भक्त क्लो०।

मनजात—मज्ञा पुं० [हि० मन + म० जात] कामदेव। उ०—मनजात किगत निपात तिए। मृग लोग कुभोग गरे न हिए।—तुलसी (शब्द०)।

मनडा(७)—सज्ञा पुं० [हि० मन + डा (स्वा० प्रत्य०)] १० 'मन'। उ०—चेतरे अरुं मनडा चतुर, रट रट श्री भीतारमण।—रघु० १०, पृ० ४३।

मनतोरवा—मज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का पक्षी।

मनन—मज्ञा पुं० [म०] १ विचार। चिंतन। नीचना। २ भली-भाँति अध्ययन करना। ३. वेदांत शास्त्राचार मुने हुए वाक्यो पर बार बार विचार करना श्रीर प्रश्नोत्तर या शकामभावान द्वारा उसका निश्चय करना।

मननशील—पि० [म० मनन + शील] जो किसी विषय पर बहुत प्रच्छी तरह विचार करता हो। विचारशील। विचारवान्।

मननाना—क्रि० अ० [मन् मन् से अनु०] गुजारना। गुंजना। उ०—मननान भौर भूपण शमोल भननात भ्रमर भूलनि गरने।—गुमार (शब्द०)।

मननीय—पि० [म०] मनन करने योग्य। विचारणीय क्लो०।

मनफल(८)—सज्ञा पुं० [हि० मन + फल] मन मे दक्षिण फल या परिणाम। मनोरथ। उ०—मनफन पाय तोरि जरी गुनपाज है।—सज० १० पृ० २३।

मनवद्वित(९)—पि० [हि० मन + म० वाडिद्धत] १० 'मनवद्वित'। उ०—हित नितकनि मरा मनवद्वित की फन विभाषा षाडु शए।—परानंद, पृ० ४८२।

मनवांछित—पि० [हि० म० मनोवांछित] १० 'मनोवांछित'। उ०—जागी महरि पुन मुन थाउ मानद पूर बजाई। कवन

तम डेम दिज पूजा चरन भरन निपात। दिन शती व प्रमे कुमुमनि फूलनि गोमुन ठाई। उद पर दग्धा नय पूरी मनवांछित फन पाई।—गूर (शब्द०)।

मनभग—मज्ञा पुं० [म० मन + भग] बदरिनाथम के एक परंत का नाम।

मनभाया—पि० [हि० मन + भाया] [पि० स्त्री० मनभाई] जो मन से भावे। जो अत्रा लग। मीठुपुन। उ०—(१) पूरा प्रभु रमिक जिगोमग तियो जान्ह ग्यानिनि मनभाया।—गूर (शब्द०)। (२) व्यास नाभाय कहै तरे गोपान के आण अनि मानम तरे वड नरके।—पद्य ११ (शब्द०)। (३) करत मुदाय मुदाय मनभाय पर पाय नर नर ननुदाय शोधाय श्रवणन है।—प्रताप (शब्द०)। (४) धातु पिय कलि दरी मुभरी निभ भन दरी मन भाट।—(शब्द०)।

मनभाँवरौ(१०)—पि० [हि० मन + भाँवरा] १ मन का अत्रा लगन वाला। २ मन का भ्रमर। उ०—जमुनन नरन विगुरा नदन दुय फदन मनभाँवरौ। नद० प्र०, पृ० ३५१।

मनभावत(११)—पि० [हि० मन + भावना] १० 'मनभावना'। उ०—एवत जन दरपन धन नू जाकर कत। चाही जग मनोहर मिला मो मनभावन।—जायसी (शब्द०)।

मनभावता—पि० [हि० मन + भावना] [पि० स्त्री० मनभावती] १. जो मन को भला लगता हो। २ प्रिय। प्यारा। उ०—(क) तहि पठई मनभावती पिय आसन की जात। पूनी आंगन मे फिर आंग न अग ममात।—विहारी (शब्द०)। (ख) मोहि तुम्है न उम्है न इम्है, मनभावती मो न मनावन एहै।—पदाकर (शब्द०)।

मनभावन—पि० [हि० मन + भावना] [पि० स्त्री० मनभावनी] १ मन का अच्छा लगनेवाला। उ०—चरगु धोइ चरगादव नांनो मांगि देळें मनभावन। नीन पेट ननुमा ही नाहीं परगु-कुटी का छावन।—गूर (शब्द०)। २. प्रिय। प्यारा। उ०—(क) भल मुदिन भण पूत अमर अजरानन र। एग दुग जीपहू कान्ह मवाहि मनभावन र।—गूर (शब्द०)। (२) कनादान नुदर अवन ब्रजमुदरी क माना मनभावन के भाषी भवा है।—वैजय (शब्द०)। (३) जय भनि निशान वाजहि नचा नुद नुदावनी। भाट वाणे जिरद नारी उवन कहै मन-भावनी।—गूर (शब्द०)।

मनमत(१२)—पि० [म० मद्मत] १० 'मद्मत'। उ०—१.३ मिर छत्र गाहि मुनन। गा धोत्र मनमो।—पृ० १००, २४२५२।

मनमत(१३)—पि० [म० मद्मत] १० 'मद्मत'।

मनमत(१४)—पि० [म० मन्मथ] १० 'मन्मथ'। उ०—१.३ कामिनि मे भो करनगा। उदय तनमर भाव मरगा।—दरिया० रानी०, पृ० ६५।

मनमति—पि० [हि० मन + मति] धन का मन का का करनेवाला। मन्मथवादी। उ०—भाइ, ते मा पीन भा दग्धा उरी, किनो पौ दात मान नी ली ताहि।—पदाकर (शब्द०)।

मनमत्थ ④—सज्ञा पुं० [म० मन्मथ] ३० 'मन्मथ' । उ०—उपास्य तूनीर पुनि ह्यधी त्तन निपग । भाथ मनो मनमत्थ की पिंडुरी मरी सुरग ।—अनेकार्थ०, पृ० ३६ ।

मनमथ—सज्ञा पुं० [म० मन्मथ] ३० 'मन्मथ' ।

यौ०—मनमथपिता = हृदय । उ०—स्वातहृदय मनमथपिता आतम मानस नाँउ ।—नद० प्र०, पृ० ३० ।

मनमथन—सज्ञा पुं० [मं०] कामदेव [को०] ।

मनमथी ④—वि० [हि० मन्मथ + ई (प्रत्य०)] मन्मथ सबधी । उ०—करि रस अनग क्रीडा वडिय मुवे ने मुमन मनमथी ।—पृ० रा०, २४।४६० ।

मनमानता—वि० [हि० मन + मानना [वि० स्त्री० मनमानती] मनमाना । मनचाहा । मनावाञ्छित । उ०—सब ग्वाना न प्रमन्न हो निवडक फूल तोड मनमानती भेनिया भर ली ।—लल्लू (शब्द०) ।

मनमाना—वि० [हि० मन + मानना] [वि० स्त्री० मनमानो] १ जिसे मन चाहे । जो मन को शच्छा नगे । उ०—तुलसी विदेह की मनेह की दमा सुमिरि, मेरे मनमाने राउ निपट मयाने हैं ।—तुलसी (शब्द०) । २ मन के अनुकूल । मनोनीत । पसद । उ०—पालने आन्यो, मवहि अति मनमान्यो नीको सो दिन धराइ, सखिन मगल गवाइ, रगमहल मे पढ्यो हं कन्हैया ।—सूर (शब्द०) । ३ यथेच्छ । इच्छानुकूल । मनचाहा । जैसे,—आप किसी की बात तो मानते ही नहीं । हमेशा मनमाना करते हैं ।

मनमानिव ④—वि० [हि० मन + मानना] मनमाना । यथेष्ट । अत्यधिक । प्रचुर । उ०—जिते यज के योग्य तिते द्रव सब मनमानिव ।—ह० रामो, पृ० १० ।

मनमानी—सज्ञा स्त्री० [हि० मनमाना] इच्छानुकूल काम करने की प्रवृत्ति । स्वेच्छाचारिता ।

मनमुख ④—वि० [हि० मन + मुखी] ३० 'मनमुखी' । उ०—इन चारो प्रकार के लागो मे कोई गुरुमुख नहीं है सब मनमुख है ।—कवीर म०, पृ० ३६२ ।

मनमुखी—वि० [हि० मन + म० मुख्य] मनमाना काम करनेवाला । स्वेच्छाचारी । उ०—गुरु द्रोही श्री मनमुखी नारी पुरुष विचार । ते नर चौरामी अर्माहि जब लगी शाशि दिनकार ।—कवीर (शब्द०) ।

मनमुटाव—सज्ञा स्त्री० [हि० मन + मोटा] मन म भेद पढना । मन मोटा होना । वैमनस्य होना ।

क्रि० प्र० पढ़ना ।—होना ।

मनमेलू ④—वि० [हि० मन + मिलाना] मन मिलानेवाला । हित् । उ०—मो मी मनमेलू मो रूखी परति अचगरी निपट पुढाई ही की ।—घनानंद, पृ० ५४१ ।

मनमोदा—सज्ञा पुं० [?] एक प्रकार का द्विगल गीत । इसमें पहले दोहा और फिर कडखा रहता है । उ०—गुण दोहै सी भाल

गन, ऊपर कडपो आण । हुवै गीत मनमोद हृद वद रघुपत वाखाण ।—रघु० ६०, पृ० १७३ ।

मनमोदक—सज्ञा पुं० [हि० मन + मोदक] प्रपनी प्रसन्नता के लिये बनाई हुई अमभव या कतिपत वात । मन का लड्डू । उ०—वृथा मरहु जनि गान वजाई । मन मोदकन्हि कि भूय बुताई ।—तुलसी (शब्द०) ।

मनमोहन—वि० [हि० मन + मोहन] [वि० स्त्री० मनमोहनी] १ मन को मोहनेवाला । मन को तुमानेवाला । चित्ताकर्षक । सुग्वकारक । उ०—(क) रूप जगत मनमोहन जेहि पद्मावति न.उं । कोटि दरव तुहि देहीं आनि करेनि इक ठाउँ ।—जायसी (शब्द०) । (ख) पटुली कनक की निही वानक को वनी मनमोहनी ।—नद० प्र०, पृ० ३७५ । २ प्रिय । प्यारा ।

मनमोहन—सज्ञा पुं० १ श्रीकृष्णचंद्र का एक नाम । उ०—मनमोहन खेलत चौगान । द्वारावती कोट कचन मे रच्यो रुचिर मैदान ।—सूर (शब्द०) । २ एक मायिक छंद का नाम जिसके प्रत्येक चरण में चौदह मात्राएँ होती हैं, जिनमें से अंतिम मात्राओं का लघु हाना आवश्यक है । जैसे—तुमहि निहारे खुले करम तुमही भजे पावही धरम । ३ एक प्रकार का सदावहार वृत्त ।

विशेष—यह वृत्त बरमा, जावा आदि देशों में हाता है । यह सोवा और ऊंचा होता है । इसको लकड़ी साफ हाती है और इसपर रंग खूब खिलता है । इसके फूल बहुत सुगंधित होते हैं जिनसे अंतर निकाला जाता है । इस इतर को 'इलग' कहते हैं और यूरोप में इसको बहुत खपत होती है । इसे अब लोण बगाल में भी बागों में लगाते हैं । यह बीजों से उगता है ।

मनमौजी—वि० [हि० मन + मौज] मन की मौज के अनुसार काम करनेवाला ।

मनरज ④—वि० [हि० मन + रजना] मनोरजन करनेवाला । मनोरजक । उ०—तुमसो काँजै मान बयो बहु नाहक मनरज । बात कहत यो वाल कै भरि आए हग कज ।—मतिराम (शब्द०) ।

मनरजन—वि० [हि० मन + रजना] मनोरजन करनेवाला । मन को प्रमन्न करनेवाला । मनोरजक । उ०—(क) भूगी री भज चरण कमल पद जहँ नहि निशि को आम । जहँ विधु भान ममान प्रभा नख सो वारज सुखराम । जिहि किजल्क भक्ति नव लक्षण काम ज्ञान रम एक । निगम सनक शुक नारद शारद मुनिजन भृग अनेक । शिव विरचि खजन मनरजन छिन छिन करत प्रवेश । अखिल कोश तहँ वसत सुदृत जन परगत श्याम दिनेश । सुनि मधुकरि भरम तजि निर्भय राजिव वर की आम । सूरज प्रेम विधु मे प्रफुलित तहँ चलि करे निवास ।—सूर (शब्द०) । (ख) विरकत सहज सुभाव सौ चलत चपल गत सैन । मनरजन रिभवार के खजन तेरे नैन ।—रसनिधि (शब्द०) ।

मनरजन—सज्ञा पुं० [हि०] ३० 'मनोरजन' ।

मनरति (७) — वि० [हि० मन + म० रति] मन मे रमण करनेवाली । मन को अच्छी लगनेवाली । उ०—देवराज रावत सुता देवन्तनि जहीन । गौरि नाम सारग वर मनरति मूरति जौन ।—पृ० २०, १।३६२ ।

मनरोचन—वि० [सं० मन + रोचन] मन को मुग्ध करनेवाला या रुचनेवाला सुंदर । उ०—तापर भौर भलो मनरोचन लोक त्रिलोचन को सधिरी है ।—केशव (शब्द०) ।

मनरौन (७) —सज्ञा पुं० [हि० मन + सं० रमण > हि० रौन] मन-रमण । प्रियतम । उ०—सहज सुभावनि सौं भौहनि के भावनि सौं, हरति है मन 'मतिराम' मनरौन को ।—मति० ग्रं० पृ० ३४५ ।

मनलाहू (७) —सज्ञा पुं० [हि० म + लहू] दे० 'मनमोदक' । उ०—धर्म अर्थ कामना मुनावत सब मुख मुक्ति समेत । काकी भूख गई मनलाहू सो देखहु चित चेत ।—मूर (शब्द०) ।

मनवच्छित (७) —वि० [सं० मनोवाच्छित] दे० 'मनोवाच्छित' । उ०—मेन्ही चाँवर बइसणइ, मनवच्छित भोजन अर चीर ।—वी० रामी, पृ० ६२ ।

मनवाँ ^१—सज्ञा पुं० [देश०] नरमा । देवकपास । रामकपास । उ०—चहुँ कित चितवै चित चकित सजल किए चल नैन । लखि सनवा मनवाँ परै मन बाके नहि चैन ।—स० सप्तक, पृ० २६२ ।

मनवाँ (७) ^२—सज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मनुश्रा' । उ०—मोग मनवाँ है तुमी मन लागीली ।—धनानद, पृ० ३६२ ।

मनवाना ^१—क्रि० सं० [हि० मानना का प्रे० रूप] मानने का प्रेरणार्थक रूप । मानने के लिये प्रेरणा करना । किमी को मानने मे प्रवृत्त करना । उ०—भावत ही की सखी सो भद्र मनमानते भावती को मनबायो ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

मनवाना ^२—क्रि० सं० [हि० मनाना] मनाने का काम दूसरे से कराना । दूसरे को मनाने मे प्रवृत्त करना ।

मनवार (७) —सज्ञा पुं० [हि० मन या मनुहार] निहोरा । खातिरी । उ०—गाल जुगायाँ गावही, नर मुख उचत म गाल । अमल गाल मनवार कर, का सुभ वचन उगाल ।—वाँकी ग्रं०, भा० ३, पृ० ७८ ।

मनशा—सज्ञा स्त्री० [अ० मन्शद्] १ इच्छा । विचार । इरादा । २ तात्पर्य । मतलब । अर्थ । ३ उद्देश्य । कारण । सबव (को०) । ४ मनोकामना । मनोरथ (को०) ।

मनश्चक्षु—सज्ञा पुं० [सं०] मन की आँख । अतश्चक्षु । अतर्दृष्टि । उ०—देख रहे मानव भविष्य तुम मनश्चक्षु वन अपलक, धन्य, तुम्हारे श्री चरणों से घरा आज चिर पावन ।—ग्राम्या, पृ० ५३ ।

मनसना (७) —क्रि० सं० [हि० मानस, सं० मनस्यन्] १ इच्छा करना । विचार करना । इरादा करना । उ०—(क) भँवर जो मनसा मानसर लीन्ह कमल रस आय । घुन हियाव ना के सका भूर काठ तस खाय ।—जायसी (शब्द०) । (ख) पवन

वाँध अपसरहि अकामा । मनसाहि जहाँ जाहि तहँ वामा ।—जायसी (शब्द०) । (ग) याही ते गूल रही जिणुपालहि । सुमिरि सुमिरि पछिताति सदा वह मान भग के कालहि । दुलहिनि कहति दौरि दीजहु द्विज पाती नंद के तालहि । वर मुवरात बुलाइ बडे हित मनसि मनोहर वालहि ।—सूर (शब्द०) । २ सकल्प करना । दृढ निश्चय या विचार करना । उ०—जोई चाहै सोई लेइ मने नहि कोजै यह शिव के चढाइये को मनस्यो कमल है ।—रघुनाथ (शब्द०) । ३ हाथ मे जल लेकर संकल्प का मंत्र पढ़कर कोई चीज दान करना ।

मनसफ (७) ^१—सज्ञा पुं० [अ० मनसब] दे० 'मनसब-३' । उ०—मनोदास कह वकमी कोन्हा । मनसफ है कागद लिख दीन्हा ।—संत० दरिया, पृ० ५ ।

मनसव—सज्ञा पुं० [अ०] १ पद । स्थान । उ०—पक्का मतो करि मालिच्छ मनसव छोड मक्का के मिसि उतरत दरियाव हैं ।—भूषण (शब्द०) ।

यौं—मनसबदार ।

२ कर्म । काम । ३ अधिकार । ४ वृत्ति ।

मनसवदार—सज्ञा पुं० [फा०] वह जो किसी मनसब पर हो । उच्चपदस्थ पुरुष । ओहदेदार । उ०—मसन की कहा है मतगनि के माँगिये को मनसवदारनि के मन ललकत हैं ।—मतिराम (शब्द०) ।

मनसा ^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक देवी का नाम ।

विशेष—पुराणानुसार यह जरत्कार मुनि की पत्नी और आस्तीक की माता थी तथा कश्यप की पुत्री और वासुकि नाग की बहिन थी ।

मनसा ^२—सज्ञा स्त्री० [सं० मानस या अ० मनशाद्] १ कामना । इच्छा । उ०—(क) तन मराय मन पाहरु मनसा उतरी श्राय । कोठ काहू को है नहीं मव देखे ठोक वजाय ।—कवीर (शब्द०) । (ख) छिन न रहै नंदलाल इहाँ विनु जो कोउ कोटि सिखावै । सूरदास ज्यो मन ते मनसा अनत कहूँ नहि जावै ।—सूर (शब्द०) । २ सकल्प । अध्यवसाय । इरादा । उ०—(क) देव नदी कहँ जोजन जानि किए मनसा कुल कोटि उवारे ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) मानहुँ मदन दुदुभी दीन्ही । मनसा विश्व विजय कहँ कीन्ही ।—तुलसी (शब्द०) । ३. अभिलाषा । मनोरथ । उ०—(क) मनसा को दाता कहै श्रुति प्रभु प्रवीन को ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) कहा कमी जाको राम धनी । मनसा नाथ मनोरथ पूरण सुखनिधान जाको मोज धनी ।—तुलसी (शब्द०) । ४ मन । उ०—विफल होहि सब उद्यम ताके । जिमि परद्रोह निरत मनसा के ।—तुलसी (शब्द०) । ५ बुद्धि । उ०—युगल कमल सो मिलन कमल युग युगल कमल ले मग । पाँच कमल मधि युगल कमल लखि मनसा भई अपग ।—सूर (शब्द०) । ६ अभिप्राय । तात्पर्य । प्रयोजन । उ०—प्रभु मनसाहि लवलीन मनु चलत वाजि छवि पाव । भूपित उडगन तडित घन जनु वर वरहि नचाव ।—तुलसी (शब्द०) ।

मनसा^१—वि० १ मन मे उत्पन्न । २ मन का । उ०—धर्म विचारत मन मे होई । मनसा पाप न लागत काई ।—मू (शब्द०) ।

मनसा—क्रि० वि० मन मे । मन के द्वारा । उ०—मनसा वाचा कर्मगा इम मो छाडहू नेह । राजा को विपदा परी तुम तिनको मुधि लेह ।—केशव (शब्द०) ।

मनसा^१—सज्ञा पुं० 'ममो' ।

मनसा^१—सज्ञा स्त्री० [म०] एक प्रकार की घाम जो बहुत शीघ्रता मे बढ़ती और पान्धो के लिये बहुत पुष्टिकारक समझी जाती है । मकड़ा । मधाना । खमकरा । विशेष 'मकड़ा' ।

मनसाकर(पु)—वि० [हि० मनसा + सं० कर (प्रत्य०)] मनोवाञ्छित फल देनेवाला । मनोकामना पूर्ण करनेवाला । उ०—वह शुभ मनसाकर कहलामय अरु शुभ तरगिनी गोभ मनी ।—केशव (शब्द०) ।

मनसादेवी—सज्ञा स्त्री० [हि० मनसा + देवी] एक देवी जो माँपो के कुल की अधिष्ठात्री मानी जाती है । प्राय लोग माँप के काटने पर इनकी मित्रता करते है ।

मनसाना^१—क्रि० अ० [हि० मनसा] उमग में आना । तरग मे आना । उ०—पार्द भेद गरुड मनसाना ।—कवीर सा०, पृ० ५८७ ।

मनसाना^१—क्रि० म० [हि० मनसा का प्रे० रूप] मनसने का काम दूसरे से कराना । सकल्प का मत्र आदि पढ़कर या पढाकर दूसरे से दान आदि कराना ।

मनसाना^१—क्रि० अ० [हि० मानुस + आना] मनुष्यता आना । पुण्यत्व जगना । मनुमाई आना ।

मनसापचमी—सज्ञा स्त्री० [म० मनसापचमी] आषाढ की षष्ठा पचमी । इस दिन मनसा देवी का उत्सव होता है ।

मनसायन^१—क्रि० [हि० मानुस (= मनुष्य) + आयन (प्रत्य०)] १ वह स्थान जहाँ मनवहलाव के लिये कुछ लोग हों ।

मुहा०—मनसायन करना या रखना = वातचीत आदि के द्वारा इस प्रकार किसी का मन बहलाना जिसमे उसे अकेले होने का कष्ट न जान पड़े ।

२ मनोरम स्थान । गुनजार जगह ।

मनसिकार—सज्ञा पुं० [म०] हृदय मे धारण कर लेना । मन मे ग्रहण कर लेना [क्रि०] ।

मनसिज—सज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । २ वासना । काम (क्रि०) ।

मनसिमन्द—वि० [सं० मनसिमन्द] प्रेम मे शिथिल या निश्चेष्ट [क्रि०] ।

मनसिधाय—सज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । २ चद्रमा [क्रि०] ।

मनमूखा—वि० [अ० मन्सूख] १ जो अप्रामाणिक ठहरा दिया गया हो । अतिवर्तित । जैसे,—डिगरी मनमूख कराना । २ परि-न्यक्त । त्यागा हुआ । जैसे,—हमने वहाँ जाने का इरादा मनमूल कर दिया ।

मनमूखी—सज्ञा स्त्री० [अ० मनमूखी] मनमूख होने का भाव या प्रिया ।

मनसूख—वि० [अ० मन्सूख] १ सवधित । २ मंगेतर । ३ मनो-वाञ्छित । इच्छानुकूल । उ०—भूलै जो मुखद हिंडोलना मनसूख मुवा पाय ।—गुलाल०, पृ० ८० ।

मनसूवा—सज्ञा पुं० [अ० मनसूवह] १ युक्ति । आयोजन । ढग । उ०—(क) अरव कीजै वसा मनसूवा । हैं हैरान मीगरे मूवा ।—लाल (शब्द०) । (ख) लक की विशालता लै उरज उतग भए रग कवि दूरह है तेरे मनसूवे को ।—दूलह (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—करना ।—ठानना ।—होना ।

मुहा०—मनसूवा बाँधना = युक्ति निकालना । ढग गोचना । उ०—उसने पक्का मनसूवा बाँधा था कि यदि लडाई हो तो आप घनुप वान लेके हाथी पर फौज के साथ जावे ।—शिव-प्रमाद (शब्द०) ।

२ इरादा । विचार । उ०—शकटार अपने मनसूवे का ऐसा पक्का था कि शत्रु से बढला लेने को इच्छा से अपने प्राण नहीं त्याग किए ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) ।

मनसूर—सज्ञा पुं० [अ०] एक प्रसिद्ध मुसलमान साधु जो सूफी मत का आचार्य माना जाता है । उ०—रोशन दिलो के बीच भक्ति ज्यो भूटा पठा । साखन लिया मनसूर दूर काढ दे मठा ।—तुलसी० श०, पृ० १४१ ।

विशेष—यह नवीं शताब्दी में वैजानगर मे हुसेन हल्लाज के घर उत्पन्न हुआ था । यह 'अनहलक' अर्थात् 'अह ब्रह्मास्मि' कहा करता था । बगदाद के खलीफा मकतदिर ने इसे इस्लाम का विरोधी समझकर सन् ९१६ ईस्वी मे मुली पर चढा दिया और इसके शव को भस्म करा दिया था ।

मनसेधूँ—सज्ञा पुं० [सं० मनुष्य] पुरुष । भादमी ।

मनस्क—सज्ञा पुं० [सं०] मन का अल्पार्थक रूप । (इसका प्रयोग ममस्त पदो मे देखा जाता है) । जैसे, अत्यमनस्क ।

मनस्कात^१—वि० [सं० मनस्कान्त] १ मनोनीत । मन के अनुकूल । २ प्रिय । प्यारा ।

मनस्कात^१—सज्ञा पुं० मन की अभिलाषा । मनोरथ ।

मनस्काम—सज्ञा पुं० [सं०] मन की अभिलाषा । मनोरथ ।

मनस्कार—सज्ञा पुं० [सं०] १ पूर्ण ज्ञान । पूर्ण चेतना । २ (सुख दुःख का) पूर्ण ज्ञान । ३ ध्यान । ४ निश्चय [क्रि०] ।

मनस्तत्व—सज्ञा पुं० [सं० मनस् + तत्व] मन सबधो वात । मन के विषय मे कोई गूढ ज्ञातव्य तथ्य । उ०—मनस्तत्व के किसी सिद्धांत का आविष्कार करनेवाले हो क्या ?—ज्ञानदान, पृ० ४३ ।

मनस्तात्त्विक—सज्ञा पुं० [सं० मनस् + तात्त्विक] मनोवैज्ञानिक । मनो-वैज्ञानिक । उ०—फ्रायड, अडलर, युग आदि मनस्तात्त्विको ने यह सिद्ध कर दिखाया है ।—मा० समीक्षा, पृ० १५१ ।

मनस्ताप—सज्ञा पुं० [सं०] १ मन पीडा । आंतरिक दुःख । उ०—मुझ पथिकिनि को भी आश्रय दो, मनस्ताप मेरा हर के ।—वीरगा, पृ० ११ । २ अनुताप । पश्चात्ताप । पछतावा ।

मनस्ताल—सञ्ज्ञा पुं० [मं०] १ हस्ताल । २ दुर्गा देवी के वाहन सिंह का नाम ।

मनस्तुष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] मनस्तोष । मन का सतोष [को०] ।

मनस्तुष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] मन की तृप्ति । मनस्तुष्टि [को०] ।

मनस्तोका—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] दुर्गा जी का एक नाम ।

मनस्विता—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] मनस्वी होने का भाव । दृढ निश्चय या स्थिरचित्त होना । विचार की स्थिरता । उ०—नहीं तो आज इतनी भी तो स्वतंत्रता, निश्चितता, मनस्विता और उत्साह चित्त में न होता ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १४५ ।

मनस्विनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १ मृकडु ऋषि की पत्नी का नाम । २ प्रजापति की एक स्त्री का नाम जिससे सोम की उत्पत्ति हुई थी । ३ दुर्गा का एक नाम [को०] । ४ उच्च विचारवाली स्त्री । सती स्त्री । उ०—माव्वी सती मनस्विनी मुचरित्रा मुचि होय । अनेकार्थ०, पृ० ५२ ।

मनस्वी—वि० [स० मनस्विन्] [स्त्री० मनस्विनी] १ श्रेष्ठ मन में मपन्न । बुद्धिमान् । उच्च विचारवाला । २ स्थिर चित्तवाला । दृढनिश्चयी । ३ मनमौजी । स्वेच्छाचारी ।

मनस्वी—सञ्ज्ञा पुं० अरज ।

मनहस—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मन + हस] पद्मह अक्षरो के एक वर्णिक छद का नाम जिसके प्रत्येक चरण में सगण, फिर दो जगण, फिर भगण और अत में रगण होता है (स ज ज भ र) । इसे मानमहम भी कहते हैं । जैसे,—विरहीन को पलखात ही यहि नाम सो । यहि ते पलाण प्रसिद्ध हो गति वाम सो । कछु फूल लागत लाल है तेहि हेतु सों । इमि देखि के पुहुमी पुरदर चेत सो ।

मनहर—वि० [हिं० मन + हरना वा मं० मनोहर] मन को हरनेवाला । मनोहर ।

मनहर—सञ्ज्ञा पुं० घनाक्षरी छद का एक नाम । दे० 'घनाक्षरी' ।

मनहरण—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मन + हरण] १ मन हरने की क्रिया या भाव । २ पद्मह अक्षरो का एक वर्णिक छद जिसके प्रत्येक चरण में पाँच सगण होते हैं । इसे नलिनी और अमरावली भी कहते हैं । जैसे,—दुर्जन की हानि विरघापनोई करै पर गुण लोप होत इक मोतिन को हार ही । (शब्द) ।

मनहरण—वि० मनोहर । सुदर ।

मनहरण—सञ्ज्ञा पुं० [मं० मनहरण] दे० 'मनहरण' ।

मनहरण—वि० [स्त्री० मनहरणी] मन हरनेवाला । उ०—(क) नदपि पुराने वक तरु सरवर निपट कुचाल । नए भए तु कहा भए ये मनहरण मराल ।—विहारी (शब्द०) । (ख) कलिमल हरनी मगलकरनी । मनहरनी श्रीमुक मुनि वरनी ।—नद० ग्र०, पृ० १६० ।

मनहार—वि० [हिं०] दे० 'मनोहारी' ।

मनहारि—वि० [हिं०] दे० 'मनोहारी' ।

मनहुँ—वि० [हिं० मानना या मानो] मानो । जैसे । यथा । उ०—(क) चाहहुं मुनइ राम गुन गूढा । कीन्हहुं प्रश्न मनहुँ अति मूढा ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) पंडित अति मिगरी पुरी मनहुँ गिरा गति मूढ । मिहिनि युत जनु चडिका मोहत मूढ अमूढ ।—केशव (शब्द०) ।

मनहूस—वि० [अ०] १ अशुभ । बुरा । जैसे,—उंगलियाँ तोडना 'बहुत मनहूस है' । २ अप्रियदर्शन । जो देखने में बेरौनक जान पड़े जैसे,—वाह क्या मनहूस सूरत है । ३ मुस्त । आलसी । निकम्मा ।

मनहूसियत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मनहूस] दे० 'मनहूसी' ।

मनहूसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मनहूस + ई] उदासी । उदामीनता । विराग [को०] ।

मना—वि० [अ० मन्त्र] १ जिसके सब घ में निषेध हो । निषिद्ध । वर्जित । जैसे—मनु जी के धर्मशास्त्र में पामा खेलना मना है । २ जो कुछ करने से रोका गया हो । वारण किया हुआ ।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग केवल विधेय रूप में होता है । जैसे,—'यह काम मना है' । यह नहीं कहते 'मना काम न करना चाहिए' ।

३ अनुचित । नामुनासिब ।

मना—सञ्ज्ञा पुं० रोक । निषेध । वारण ।

मनाही—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मनाही] दे० 'मनाही' ।

मनाक—वि० [म०] १ अल्प । थोडा । २ मद ।

यौ०—मनाककर । मनाकप्रिय ।

मनाक—वि० [स० मनाक] अल्प । थोडा । जरा सा । उ०—(क) दूटत पिनाक के मनाक वाम राम से ते नाक विनु भए भृगुनायक पलक में ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) दाहिनी दियो पिनाकु महमि भयो मनाकु महाव्याल विकल बिलोकि जनु जरी है ।—तुलसी (शब्द०) ।

मनाका—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] हथिनी ।

मनाकर—वि० [म०] कुछ भी काम न करनेवाला । मट्टर । मुस्त । काहिल [को०] ।

मनाकप्रिय—वि० [स०] बहुत कम प्रिय । अल्पप्रिय [को०] ।

मनाग—वि० [म० मनाग्] दे० 'मनाक' । उ०—अस्थिमात्र होइ रहे मरीरा । तदपि मनाग मनहि नहि पीरा ।—तुलसी (शब्द०) ।

मनादी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुनादी' ।

मनाना—क्रि० स० [हिं० मानना का प्रे० रूप] १ दूसरे को मानने पर उद्यत करना । यह कहलवाना कि हाँ कोई बात ऐसी ही है । स्वीकार कराना । मकरवाना । २ जो अप्रमत्त हो, उसे सतुष्ट या अनुकूल करना । स्टे हुए को प्रमत्त करना । राजी करना । जैसे,—वह ठठा था, हमने मना लिया । उ०—(क) मों मृकती सुचि मत मुमते ससील मयात मिगेमनि स्व ।

सुर तीरथ ताहि मनावन आवत पावन होत है तात न छूवै ।—
तुलसी (शब्द०) । (ख) मोहि तुम्है न उन्है न इन्है मनभावती सो
न मनावन आइहै ।—पद्याकर (शब्द०) । ३ अप्रसन्न को प्रसन्न
करने के लिये अनुनय विनय करना । रुठे हुए को प्रसन्न
कने के लिये मीठी मीठी बातें करना । मनुहार करना ।
उ०—(क) जैसे आव तैसे साधि सौहिन मनाइ लाई तुम इक
मेरी बात एती विसरैयो ना ।—पद्याकर (शब्द०) । (ख) केतो मनाव पाजें परि केतो मनाव रोइ । हिंदू पूज देवता
तुष्क न काहुक होइ ।—कवीर (शब्द०) । (ग) लाज कियो
जो पिय नहि पाऊँ । तजो लाज कर जोरि मनाऊँ —जायसी
(शब्द०) । ४ देवता आदि से किसी काम के होने के लिये
प्रार्थना करना । उ० (क) यह कहि कहि देवता मनावति ।
भोग समग्री धरति उठावति ।—सूर (शब्द०) । (ख) सुकृति
सुमिरि मनाइ पितर सुर सीस ईस पद नाइ कै । रघुवर कर
धनुभग चहत सब आपनौ सो हित चित लाइ कै ।—तुलसी
(शब्द०) । ५ प्रार्थना करना । स्तुति करना । (क) तुम
सब सिद्ध मनावहु, होइ गणेश सिध लेहु । चेला को न चलावै
मिलै गुरु जेहि भेउ ।—जायसी (शब्द०) । (ख) ताके युग पद
कमल मनाऊँ । जासु कृपा निरमल मति पाऊँ ।—तुलसी
(शब्द०) । (ग) करी प्रतिशा कहेउ भोष्म मुख पुनि पुनि देव
मनाऊँ ।—सूर (शब्द०) ।

मनायी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मनावी' [को०] ।

मनार—सज्ञा पुं० [म०] दे० 'मोनार' ।

मनारा—सज्ञा पुं० [म० मनारह] दे० 'मनार' [को०] ।

मनाल^१—सज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का चकोर जो शिमले की
ओर होता है । इसके सुंदर परों के लिये इसका शिकार किया
जाता है ।

मनाल^२—सज्ञा पुं० [म०] धन संपत्ति । रकम । जायदाद [को०] ।

मनावछत^१—वि० [सं० मनोवाञ्छित] दे० 'मनोवाञ्छित' । उ०—
विकट पूरै मनावछत गहर गुण गाजै ।—रघु० रू०, पृ० १५० ।

मनावन^१—सज्ञा पुं० [हिं० मनाना] १ मनाने की क्रिया । उ०—
फूलनि माल बनावन लाल पहिरि पहिरावन । सुभग सरोज
सुधावन जोत मनोज मनावन ।—नद० ग्र०, पृ० २८ । २
रुठे हुए को प्रसन्न करने का काम । ३ मनाने का भाव ।

मनावी—सज्ञा स्त्री० [सं०] मनु की स्त्री का नाम ।

मनाही—सज्ञा स्त्री० [म० मन्ही का बहु व०, अथवा हिं० मना]
न करने की आज्ञा । रोक । अवरोध । निषेध । उ०—मुकरर
तादाद से जियादा जमीन, गाय, बैल, बकरी रखने की मनाही
थी ।—शिवप्रसाद (शब्द०) ।

मनि—सज्ञा स्त्री० [सं० मणि] दे० मणि । उ०—बिच बिच छहरति
मनो बूंद मुक्ता मनि पोहति ।—भारतेंदु ग्र०, भा० १, पृ० २८२ ।

मनिका^१—सज्ञा स्त्री० [सं० मणि] माला में पिरोया हुआ दाना ।
गुरिया । दाना । उ०—माला फेरत युग गया गया न मन का

फेर । करका मनिका छोडिकै मन का मनिका फेर ।—कवीर
(शब्द०) ।

मनिख^१—सज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'मानुख' । उ०—मनमुखि मनिख
भूत पशु गुरुमुख्य ज्ञाता देव । रजव०, पृ० ८ ।

मनित—वि० [सं०] ज्ञात । जाना हुआ ।

मनिधर^१—सज्ञा पुं० [सं० मणिधर] दे० 'मणिधर' ।

मनियर^१—सज्ञा पुं० [सं० मणिधर, प्रा० मणियर] दे० 'मणिधर' ।
२ वह जो मणि के समान दीप्तोऽज्वल हो ।

मनिया—सज्ञा स्त्री० [सं० माणिक्य, हिं० मनिका] १ गुरिया ।
मनिका । दाना जो माला में पिरोया हो । २ कठा । गुरिया ।
माला । उ०—हैं करि रही कठ में मनियाँ निर्गुन कहा रमहि
ते काज । मूरदास सरगुन मिलि मोहन रोम रोम मुख साज ।
सुर (शब्द०) ।

मनियार^१—वि० [हिं० मणि + आर (प्रत्य०)] १ देदीप्यमान ।
उज्वल । चमकीला । उ०—प्रथमहि दीप अमर मनियारा ।
तहर्वा मूल मुरति वैठारा ।—कवीर मा०, पृ० ६३६ । २
दर्शनीय । शोभायुक्त । स्वच्छ । रौनकदार । मुहावना । उ०—
वन कुसुमित गिर गन मनियारा । सत्रहि मकल मरिनामृत
धारा ।—तुलसी (शब्द०) ।

मनिप^१—सज्ञा पुं० [सं० मनुष्य] दे० 'मनुष्य' । उ०—जिन रथी
मदि उठे असुर धर्ष ज्वाल तिन मुप विपय । नर भपय जहाँ
लसकर सहर मिलै मनिप तेते भपय ।—पृ० रा०, १।५११ ।

मनिसार^१—वि० [सं० मणि + हिं० सार (प्रत्य०)] मणि के समान ।
देदीप्यमान । मनियार । उ०—पुरुष अमान अजर मनिसारा ।
—कवीर सा०, पृ० ६२ ।

मनिहार^१—सज्ञा पुं० [हिं० मणिकार, प्रा० मनियार] [स्त्री०
मनिहारिन] चूड़ी बनानेवाला बुडिहारा जो स्त्रियों को चूडियाँ
पहनाता है ।

मनिहार^२—वि० [हिं० मणि + हार (प्रत्य०)] देदीप्यमान ।
दर्शनीय । मनियार । मनोहर । उ०—नेत्र रमाल वदन
मनिहारा ।—कवीर सा०, पृ० १६०४ ।

मनिहारिन - सज्ञा स्त्री० [हिं० मनिहार] चूड़ी बनाने, वेचने और
पहनानेवाली स्त्री । बुडिहारिन ।

यौं—मनिहारिन बीजा = श्रुक्ण की एक लाला जिसमें वे
मनिहारिन का वेश बनाकर राधा को चूड़ी पहनाने जाया
करते थे ।

मनी^१—सज्ञा स्त्री० [फा० तुल० हिं० मान (= अभिमान)] अहंकार ।
उ०—(क) होये मनो ऐसे ही अजहुँ गए राम सरन परिहरि
मनी । भुजा उठाइ साखि सकर करि कसम खाइ तुलसी
मनी ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) मति समान जाके मनी नैक
न आवत पास । रसनिधि भावक करत है ताही मन मे वास ।
—रसनिधि (शब्द०) ।

मनी^२—वि० घमडी । अभिमानी । उ०—मनो मारे गर्व गाफिल
वेमेहर बेपीर वे ।—रै० वाणी, पृ० ३२ ।

मनी^३—सज्ञा स्त्री० [म०] घातु । शुक । वीर्य ।

मनी^७ सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मणि] ३० 'मणि' । ३० 'मणि'

मनी —सञ्ज्ञा पु० [अ०] रुपया पैसा । सिक्का ।

मनीबार्डर—सञ्ज्ञा पु० [अ०] रुपए की हुडी जो किसी के रुपया चुकाने पर एक डाकखाने से दूसरे डाकखाने में इसलिये भेजी जाती है कि वह वहाँ के किसी मनुष्य को हुडी में लिखी रकम चुका दे । एक स्थान से दूसरे स्थान पर रुपया प्रायः लोग इसी प्रकार डाकखाने की मारफत भेजा करते हैं ।

क्रि० प्र०—आना ।—फरना ।—जाना । भोजना ।—लगाना ।

मनीक —सञ्ज्ञा पु० [स०] आज्ञन ।

मनीजर—सञ्ज्ञा पु० [अ० मनेजर] व्यवस्थापक । प्रबन्धक । उ०—कोऊ मनीजर सरकारी रखि काम चलावत ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० १४ ।

मनीवैग—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] चमड़े आदि का बना हुआ एक प्रकार का छोटा बटुआ जिसके अंदर कई खाने होते हैं जिनमें रुपए, रेजगी आदि रखते हैं ।

मनीमर्ना—क्रि० वि० [हि० मन + ही + मन] मन ही मन । मन में । बिना बोले । उ०—मनीमन में ईश्वर को धन्यवाद देता ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १४६ ।

मनीरर्ना—सञ्ज्ञा स्त्री० [दिग०] मोरनी ।

मनीपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १ बुद्धि । अकल । २. स्तुति । प्रणसा । ३ आकाक्षा । इच्छा (को०) ।

मनीपिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] १ बुद्धि । मनीपा । २ इच्छा (को०) ।

मनीपित्त—वि० [स०] मनोमिलपित । वाद्धित ।

मनीपित्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] बुद्धिमत्ता । बुद्धिमानी ।

मनीपी^१—वि० [म० मनीषिन्] १ पंडित । ज्ञानी । विद्वान् । २ बुद्धिमान् । मेधावी । अकलमद । चतुर । ३ स्तुति करनेवाला (को०) ।

मनीपी^२—सञ्ज्ञा पुं० १ विद्वान् व्यक्ति । पंडित । ज्ञानी पुरुष । २ वह जो स्तुति या स्तवन करता हो (को०) ।

मनु^१—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ ब्रह्मा के पुत्र जो मनुष्यों के मूल पुरुष माने जाते हैं ।

विशेष वेदों में मनु को यज्ञों का आदिप्रवर्तक लिखा है । ऋग्वेद में कश्यप और आत्र को यज्ञप्रवर्तन में मनु का सहायक लिखा है । शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि मनु एक बार जलाशय में हाथ धोते थे, उसी समय उनके हाथ में एक छोटी सी मछली आई । उसने मनु से अपनी रक्षा की प्रार्थना की और कहा कि आप मेरी रक्षा कीजिए, मैं आपकी भी रक्षा करूँगी । उसने मनु से एक आनेवाली बाढ की बात कही और उन्हें एक नाव बनाने के लिये कहा । मनु ने उस मछली की रक्षा की, पर वह मछली थोड़े ही दिनों में बहुत बड़ी हो गई । जब बाढ आई, मनु अपनी नाव पर बैठकर पानी पर चले और अपनी नाव उस मछली की आड़ में बाँध दी । मछली उत्तर को चली और हिमालय पर्वत की

चोटी पर उनकी नाव उसने पहुँचा दी । वहाँ मनु ने अपनी नाव बाँध दी । उस बड़े भ्रूष से अकेले मनु ही बचे थे । उन्हीं से फिर मनुष्य जाति की वृद्धि हुई । ऐतरेय ब्राह्मण में मनु के अपने पुत्रों में अपनी सपत्ति का विभाग करने का वर्णन मिलता है । उसमें यह भी लिखा है कि उन्होंने नाभानेदिष्ठ को अपनी सपत्ति का भागी नहीं बनाया था । निघट्ट में 'मनु' शब्द का पाठ द्युस्थान देवगणों में है और वाजसनेय संहिता में मनु को प्रजापति लिखा है । पुराणों और सूयसिद्धात आदि ज्योतिष के ग्रंथों के अनुसार एक कल्प में चौदह मनुओं का अधिकार होता है और उनके उस अधिकारकाल को मन्वतर कहते हैं । चौदह मनुओं के नाम ये हैं—(१) स्वायम् । (२) स्वारीचिष् । (३) उत्तम । (४) तामस । (५) रवत । (६) चाक्षुष । (७) वैवस्वत । (८) सार्वणि । (९) दक्षसार्वणि । (१०) ब्रह्मसार्वणि । (११) धमसार्वणि । (१२) रुद्रसार्वणि । (१३) देवसार्वणि और (१४) इन्द्रसार्वणि । वर्तमान मन्वतर वैवस्वत मनु का है । मनुस्मृत में मनु को विराट् का पुत्र लिखा है और मनु स दस प्रजापातियों का उत्पात्त लिखा है ।

२ विष्णु । ३ अत करण । मन । ४ जैनियों के अनुसार एक जिन का नाम । ५ कृष्णाश्वक एक पुत्र का नाम । ६ मन्त्र । ७ वैवस्वत मनु । ८ आग्न । ९ एक रुद्र का नाम । १०, १४ की सख्या । ११. ब्रह्मा ।

मनु —सञ्ज्ञा स्त्री० १. मनु की स्त्री । मनावी । २ बनमेधी का साग । पृक्का ।

मनु^२—अव्य० [हि० मानना] मानो । जैसे । उ०—(क) रतन जडित ककण बाजूबंद नगन मुद्रिका सीहै । डार डार मनु मदन विटप तरु विकच देखि मन माहै ।—सुर (सब्द०) । (ख) मोर मुकुट की चाद्रकन यो राजत नंदनद । मनु सास सखर की अकस किए सिखर सत चद ।—विहारी (शब्द०) ।

मनुआ^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मन] मन । उ०—(क) मनुआ चाह देख औ भोगू । पथ भुलाइ वनासँ जागू ।—गायसा (शब्द०) । (ख) चचल मनुआ दुहुँदसि धावत अचल जाह ठहराना । कहुँ नानक यहि वधि का जो नर मुक्ति ताह तुम माना ।—तेगवहादुर (शब्द०) ।

मनुआ^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मानव] मनुष्य । उ०—खाय पकाय लुटाय ले ऐ मनुआ मजवान । लना होय सो लेइ ले यही गोइ मैदान ।—कबीर (शब्द०) ।

मनुआ^३—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] देव कपास । नरमा मनवाँ ।

मनुक्ख^७—सञ्ज्ञा पुं० [स० मनुष्य] मनुष्य । मानव । मनुज । चारहू लाख मनुक्खा देही । लख चौरासी यह सुनि लेही ।—सहजो०, पृ० ३६ ।

मनुख^७—सञ्ज्ञा पुं० [स० मनुष्य] मनुज । मानव । मानुख । उ०—लख चौरासी भरमि, मनुख तन पाइल हो ।—धरम०, पृ० ६४ ।

मनुग —सञ्ज्ञा पुं० [स०] प्रियव्रत के पौत्र और द्युतिमान् के पुत्र का नाम ।

मनुष्यः—सज्ञा पुं० [म० मनुष्य] '० 'मनुष्य' । उ०—विघ्ननहारे
चित्रि तू रे चतुरगी नाह । का चहुथान सु कित्ति कवि मन
मनुष्य हरि नाह ।—पृ० १०, १ । ७६६ ।

मनुज—सज्ञा पुं० [स०] [स्त्री० मनुजा, मनुजी] मनुष्य । आदमी ।
मनुजता—सज्ञा स्त्री० [म० मनुज + ता (प्रत्य०)] मनुष्यता ।
मानवता ।

मनुजत्व—सज्ञा पुं० [स० मनुज + त्व (प्रत्य०)] मनुष्यत्व ।
मानवता ।

मनुजा—सज्ञा स्त्री० [म०] मानवी । स्त्री [को०] ।

मनुजात—वि० [स०] मनु से उत्पन्न ।

मनुजात—सज्ञा पुं० मनुष्य । आदमी ।

मनुजाद—वि० [स०] नरभक्षक । मनुष्यो को खानेवाला ।

मनुजाद—सज्ञा पुं० [स०] 'तन्म' । उ०—(क) चिन्न वंताल,
मनुजाद मन, प्रेतगन रोग भोगीष वृश्चिक विकारम् ।—तुलसी
ग्र०, पृ० ४८९ । (ख) मान ह अपमान को मनुजाद नू जब तक
न कर ।—बेला, पृ० ६८ ।

मनुजाधिप—सज्ञा पुं० [स०] राजा । मनुष्यो का अधिप । उ०—
याह न मारि दखि । दमि मेरी । हौ अनुजा मनुजाधिप
तेरी ।—नद० ग्र०, पृ० २३१ ।

मनुजेंद्र—सज्ञा पुं० [सं० मनुजेंद्र] राजा [को०] ।

मनुजेश्वर—सज्ञा पुं० [म०] राजा [को०] ।

मनुजोत्तम—सज्ञा पुं० [म०] श्रेष्ठ मनुष्य । उत्तम पुरुष ।

मनुज्येष्ठ—सज्ञा पुं० [स०] १ तलवार । २ लाठी ।

मनुयुग—सज्ञा पुं० [सं०] मन्वतर ।

मनुवाँ—सज्ञा पुं० [हि० मन] मन । उ०—मनुवाँ चहै दरव
श्री भोगू ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० २२२ ।

मनुश्रेष्ठ—सज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

मनुप—सज्ञा पुं० [स० मनुष्य] १ मनुष्य । आदमी । उ०—कह्यो तिन
तुम्हे हम मनुप जानत नही जगतपितु जगतहित देह धारधो
करोगे काज जो कियो ना कोउ नृपति किए जस जाय हम दोष
मारो ।—सूर (शब्द०) । २ पति । खाविद । उ०—माप
मोर मनुप है श्रुति मुजान । धवा कूटि कूटि करै विहान ।—
कबीर (शब्द०) ।

मनुपी—सज्ञा स्त्री० [स०] स्त्री ।

मनुष्य—सज्ञा पुं० [स०] जरायुज जाति का एक स्तनपायी प्राणी
जो अपने मस्तिष्क या बुद्धिबल की अधिकता के कारण सब
प्राणियों में श्रेष्ठ है । आदमी । नर ।

विशेष—मनुष्य महाभूत कहा गया है । प्राचीन ग्रंथों में सृष्टि के
आदि में प्रायः सब जीव जंतुओं की उत्पत्ति एक साथ बताई
गई है । पर आधुनिक प्राणिविज्ञान के अनुसार मूल अणुजीवों
से क्रमशः उत्पत्ति प्राप्त करते हुए एक के पीछे दूसरे उन्नत
जीव होने गए हैं । जैसे बिना रोहवाले जीवों से गीढवाले
अर्धज जीव हुए । फिर उन्हीं से जरायुज हुए । जरायुजों में

मनुके पीछे क्रिष्णप र्ग के वदर या वनमानुष हुए । वनमानुषों
में होते होते अंत में मनुष्य हुए । वैज्ञानिकों ने मनुष्य का पाच
प्रधान जातियों में बाँटा है (१) काकेशी, जिसके अंतर्गत आर्य
और अर्यु (मार्मी) हैं । (२) मंगोल, चीन, जापान आदि के
पीले लोग । (३) ह शी । (४) अमेरिकन । और (५) मलाया ।

पर्या०—मानुष । मनुज । मानव । नर । ।द्वपद । पुमान् ।
पचजन । पुरुष । पूरुष ।

मनुष्यकार—सज्ञा पुं० [म०] पुष्पकार उद्योग । प्रयत्न ।

मनुष्यकृत—वि० [म०] मनुष्य द्वारा बनाया हुआ । मानवकृत ।
० वृद्धि । जो प्राकृतिक न हो [को०] ।

मनुष्यगणना—सज्ञा पुं० [स० मनुष्य + गणना] '० 'मर्दमशुमारी' ।

मनुष्यगति—सज्ञा स्त्री० [सं०] जन्म पाम्बानुसार वह कर्म जिसके
करने में मनुष्य बार बार मरकर मनुष्य का ही जन्म पाता
है । ऐसे कर्म परम्प्रीगमन, मामभक्षण, चारी आदि बतलाए
गए हैं ।

मनुष्यजाति—सज्ञा स्त्री० [म०] मानव जाति । मानव मनुदाय [को०] ।

मनुष्यता—सज्ञा स्त्री० [म०] १ मनुष्य का भाव । आदमीपन ।
२ दया भाव । चित्त की कोमलता । शील । ३ मन्मता ।
शिष्टता । व्यवहार ज्ञान । तमीज । आदमीपन ।

मनुष्यत्व—सज्ञा पुं० [म०] मनुष्यता । आदमीपन । उ०—मनुष्यत्व
का मत्व तत्व यो किमने ममभा वृक्षा है ।—माकेत,
पृ० ३७१ ।

मनुष्यधर्मा—सज्ञा पुं० [सं० मनुष्यधर्मन्] कुवेर ।

मनुष्ययज्ञ—सज्ञा पुं० [म०] अतिथि अन्त्यागत का आदर समान ।
अतिथियज्ञ । नृयज्ञ ।

मनुष्ययान—सज्ञा पुं० [सं०] पालकी [को०] ।

मनुष्यरथ—सज्ञा पुं० [सं०] वह रथ जिसे मनुष्य खींचते हैं । नररथ ।

मनुष्यराशि—सज्ञा स्त्री० [सं०] कन्या राशि ।

मनुष्यलोक—सज्ञा पुं० [स०] मर्त्यलोक । भूलोक ।

मनुष्यहार—सज्ञा पुं० [स०] मनुष्य का अपहरण या चोरी [को०] ।

मनुष्यहारी—वि० [स० मनुष्यहारिद्] मनुष्य को चुरानेवाला [को०] ।

मनुष्येतर—वि० [सं०] मनुष्य से भिन्न । मानव से भिन्न । उ०—
मनुष्येतर बाह्य प्रकृति का आलवन के रूप में ग्रहण पाया
जाता है ।—रम०, पृ० ६ ।

मनुसहिता—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मनुस्मृति' ।

मनुसाई—सज्ञा स्त्री० [हि० मनुष्य + साई] १ पुरुषार्थ ।
पराक्रम । बहादुरी । उ०—(क) माखामुग के बढ मनुसाई ।
साखा तें साखा पर जाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) जो
अस करउं न तदपि बडाई । मुयेहि बधे कछु नहि मनुसाई ।
—तुलसी (शब्द०) । २ मनुष्यता । आदमीपन ।

मनुसाना—क्रि० प्र० [स० मनुष्य + हि० आना (प्रत्य०)] मनुष्य
का भाव जगना । मनुष्य होने का भाव उत्पन्न होना ।

मनुस्मृति—सज्ञा स्त्री० [सं०] धर्मशास्त्र के एक प्रसिद्ध ग्रंथ का नाम जो मनुप्रणीत है। मनुसंहिता। मानव धर्मशास्त्र।

विशेष कहा जाता है, पहले मनुस्मृति में एक लाख श्लोक थे। फिर उसका सन्धेप १२ हजार श्लोकों में किया गया और अंत में उसका सन्धेप चार हजार श्लोकों में किया गया। आजकल की मनुस्मृति में ढाई हजार से कुछ ही अधिक श्लोक मिलते हैं। यह भृगुप्रोक्त कहलाती है और इसमें वारह अध्याय हैं। इसमें सृष्टि की उत्पत्ति, मस्कार, नित्य और नैमित्तिक कर्म, आश्रमधर्म, राजधर्म, वर्याधर्म, प्रायश्चित्त आदि विषयों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त एक नारदप्रोक्त मनुसंहिता का भी पता चलता है, पर वह पूरी नहीं मिलती।

मनुहर (पु)—वि० [सं० मनोहर] २० 'मनोहर'। उ—मनुहर कटि-थल मेखला, पग भाँकर भरणकार।—ढोला०, दू० ४८१।

मनुहार—सज्ञा स्त्री० [हि० मान + हरना] १ वह विनती जो किसी का मान छुड़ाने या क्रोध शांत करने के लिये की जाती है। मनौआ। खुशामद। उ०—मारौ मनुहारन भरी गारिउ भरी मिठाहिं। वाको अति अनखाहटौ मुसुकाहट विनु नाहिं।—विहारी (शब्द०)।

मुहा०—'किसी को मनुहार कराना = विनती करना। खुशामद करना। मनाना। उ०—(क) तुम्हरे हेतु हरि लियो अवतार। अब तुम जाइ करो मनुहार।—सूर (शब्द०)। (ख) दुसह रोप मूरति भृगुपति अति नृपति निकर पयकारी। क्यों मौपेउ सारग हारि हिय करिहैं बहु मनुहारी।—तुलसी (शब्द०)। (ग) कहत रुद्र मन माहिं विचारि। अब हरि की कीजै मनुहारि।—लल्लू (शब्द०)। (घ) जो मेरो कृत मानहु मोहन करि लाओ मनुहारि। सूर रसिक तबही पै बदिहौं मुरली मकी न संभारि।—सूर (शब्द०)। २ विनय। प्रार्थना। उ०—(क) तापसी करि कहा पठवति नृपति को मनुहारि। बहुरि तेहि विधि भाइ कहिहै साधु कोउ हितकारि।—तुलसी (शब्द०)। (ख) सबै करति मनुहारि ऊवो कहियो हो जैसे गोकुल भावें।—सूर (शब्द०)। ३ सत्कार। आदर। उ०—सौहैं किए हू न सो हैं करे मनुहार करेहू न सूब निहारे।—केशव (शब्द०)।

मनुहार—सज्ञा स्त्री० [हि० मन + हरना] शांति। तृप्ति। उ०—कुरला काम केरि मनुहारी। कुरला जेहि नहिं सो न मुनारी।—जायसी ग्र०, पृ० १४०।

मनुहारना (पु)—क्रि० सं० [हि० मान + हरना] १ मनाना। खुशामद करना। उ०—(क) पूजा करेउ बहूत मनुहारी। बोले मीठे वचन विचारी।—सबलसिंह (शब्द०)। (ख) कै पदुता परवीन तिया मनुहारि सुवाल कहै मन माने।—प्रताप (शब्द०)। २ विनय करना। प्रार्थना करना। उ०—निग्रहा-नुग्रह जो करे अरु देख आशिष गारि। सो सबै सिर मान लीजै सर्वथा मनुहारि।—केशव (शब्द०)। ३. सत्कार करना। आदर करना। उ०—सुरभी ऐन कुम सम, धारै। नदिनि वेनु सरिम मनुहारै।—मन्नालाल (शब्द०)। ४. खुशामद करना।

मनुहारि (पु)—सज्ञा स्त्री० [हि०] ३० 'मनुहार'। उ०—करत लाल मनुहारि, पै तू न लखति इहि ओर।—मति० ग्र०, पृ० ४०८।

मनुहारी (पु)—सं० स्त्री० [हि० मनुहार] ३० 'मनुहार'। उ०—तुम न विहारी नेकु मानो मनुहारी हम पायँ परि हारी अरु करि हारी नहियाँ।—तोप (शब्द०)।

मनू (पु)—अव्य० [हि०] ३० 'मानो'। उ०—चह तेज मनू ऊगत मूर।—ह० रासो०, पृ० ६१।

मनूरी—सज्ञा स्त्री० [अ० मुनोवर] एक प्रकार की वृक्षी जो मुरादाबादा कलई के बर्तनों को उजला करने में काम आती है। यह वातुओं को गलाने की पुरानी धरियों को कूटकर बनाई जाती है।

मनो—वि० [अ० मनश्च, हि० मना] ३० 'मना'। उ—(क) जानि नाम अजान लान्हे नरक जमपुर मने।—तुलसी (शब्द०)। (ख) शिव सुपूजन माँह मने कर। मनहु मो अकौरति मो भरे।—गुमान (शब्द०)।

मनेजर—सज्ञा पुं० [अ० मनेजर] किसी कार्यालय आदि का वह प्रधान अधिकारी जिसका काम सब प्रकार की व्यवस्था और देख रेख करना हो। प्रबन्धकर्ता।

मनों—अव्य० [हि० मानना] मानो। जैसे। उ०—(क) मनो सर्व स्त्रीन में कामवामा। हनुमान ऐसी लखी रामरामा।—केशव (शब्द०)। (ख) मकराकृत गोपाल के कुडल सोहत कान। घस्यो मनो हिय घर समर बयोढी लसत नसान।—विहारी (शब्द०)।

मनोकामना—सज्ञा स्त्री० [हि० मन + कामना] इच्छा। अभिलाषा।

मनोगत—वि० [सं०] १ जो मन में हो। मन में आया हुआ। दिली। २ इच्छित।

मनोगत—सज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव। २ आकाक्षा। इच्छा (ज्ञो०)। ३ विचार (ज्ञो०)।

मनोगति—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मन की गति। चित्तवृत्ति। उ०—तीखे तुरग मनोगति चचल पौन के गौन हूँ ते बढि जाते।—तुलसी ग्र०, पृ० २०७। २ इच्छा। आंतरिक अभीष्ट। खाहिश। उ०—किंतु विधिना की यही मनोगति थी।—दुर्गेशनदिनी (शब्द०)।

मनोगवी—सज्ञा स्त्री० [सं०] इच्छा। अभिलाषा।

मनोगुप्त—वि० [सं०] मन में छिपाया हुआ। अव्यक्त (विचार आदि)।

मनोगुप्ता—सज्ञा स्त्री० [सं०] मनमिल।

मनोगृहीत—वि० [सं० मन + गृहीत] मन में गृहीत या ग्रहण किया हुआ।

मनोगुप्ति—सज्ञा स्त्री० [सं०] जैन शास्त्रानुसार मन को अग्रुभ प्रवृत्ति से हटाने की क्रिया या भाव।

मनोग्राही—वि० [सं० मन + ग्राहिन्] मन को ग्रहण करनेवाला। मन को अपनी ओर खींचनेवाला। आकर्षक।

मनोग्राह्य—वि० [सं०] जो मन या चित्त द्वारा ग्रहण हो सके । मन द्वारा ग्रहण के योग्य [को०] ।

मनोज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव । मदन । उ०—जय सच्चिदानन्द जग-पावन । अस कहि चलेउ मनोज नसावन ।—तुलसी (शब्द०) ।

यौ०—मनोज पचमी = माघ शुक्ल पचमी । वसंत पचमी । उ०—आजु मनोज पचमी मुभ दिन रग बढैए हिलमिलि आनदधन बरसैए ।—घनानन्द, पृ० ३६२ ।

मनोजन्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनोजन्मन्] * 'मनोज' [को०] ।

मनोजव'—वि० [सं० मनोजवम्] [वि० स्त्री० मनोजवा] १ मन के समान वेगवान् । अत्यंत वेगवान् । २ पितृतुल्य ।

मनोजव'—सञ्ज्ञा पुं० १ विष्णु । २ अनिल या वायु के एक पुत्र का नाम जो उसकी शिवा नाम की पत्नी से उत्पन्न हुआ था । ३ रुद्र के एक पुत्र का नाम । ४ एक तीर्थ का नाम । ५ छठे मन्वतर में होनेवाले इन्द्र का नाम ।

मनोजवस—वि० [सं०] * 'मनोजव' [को०] ।

मनोजवा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कलिहारी । करियारी । २ मार्कंडेय पुराणानुसार अग्नि की एक जिह्वा का नाम । ३ स्कन्द की माता का नाम । ४ क्रौंच द्वीप की एक नदी का नाम ।

मनोजवी—वि० [सं० मनोजविन्] मनोजव । अति वेगवान् । बहुत तेज चलनेवाला ।

मनोजवृद्धि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कामवृद्धि नामक क्षुप । इसे कर्णाट में कामज कहते हैं ।

मनोजीवी—वि० [सं० मनस् + जीवी] बुद्धिजीवी । उ०—वनजीवी, पशुजीवी मनुज, मनोजीवी तब नहीं बना था ।—युगपथ, पृ० १२४ ।

मनोज्ञ'—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मनोज्ञा] मनोहर । सुन्दर ।

मनोज्ञ'—सञ्ज्ञा पुं० १ कुद नामक फूल । २ एक गधर्व का नाम (को०) । ३ सरल का वृक्ष (को०) ।

मनोज्ञता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सुन्दरता । मनोहरता । खूबसूरती ।

मनोज्ञा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कलौजी । मंगरौला । २ जावित्री । ३ मदिरा । शराब । ४ वाँफू ककोडा । आवर्तकी । ५ मन शिला । मँसिल (को०) । ६ राजपुत्री । राजकुमारी (को०) ।

मनोदड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनोदण्ड] मन की वृत्तियों का निरोध । चित्त को चंचलता से रोककर एकाग्र करना । मन का निग्रह ।

मनोदत्त—वि० [सं०] १ मन द्वारा दिया हुआ वा सकल्पित । २ दत्तचित्त । विचारमग्न (को०) ।

मनोदाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनस्ताप । मानसिक जलन । आतंरिक कष्ट । उ०—जीवन तृष्णा, प्राण क्षुधा श्री मनोदाह से क्षुब्ध, दग्ध, जर्जर जनगणा चीत्कार कर रहे ।—युगपथ, पृ० १२० ।

मनोदाही—वि० [सं० मनोदाहिन्] [वि० स्त्री० मनोदाहिनी] मन को जलानेवाली । हृदयदाही ।

मनोदुष्ट—वि० [सं०] जिमका मन दूषित हो । जो मन ही मे पापी हो । जिमका अतं करण कनुषित हो । दुष्ट या खराब हृदयवाला ।

मनोदृष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मन + दृष्टि] आतंरिक दृष्टि । मानसिक दृष्टि । उ०—मौर्ध्य उसकी मनोदृष्टि का एक व्यापार मात्र है ।—न० दर्शन, पृ० ६६ ।

मनोदेवता—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अतराम्ना । त्रिवेक ।

मनोध्यान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मयूर्य जाति का एक राग जिममे सत्र शुद्ध स्वर लगते हैं ।

मनोनयन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चुनाव । चुनना । पसंद करना ।

मनोनिग्रह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चित्त की वृत्तियों का निरोध । मन का निग्रह । मन का वश में रखना । मनोगुति ।

मनोनियोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनस् + नियोग] एकाग्रता । उ०—हम दोनों एक दूसरे के आखेट हैं और अनिवार्य, अटल मनो-नियोग से एक दूसरे का पीछा कर रहे हैं ।—चिंता, पृ० ५६ ।

मनोनिवेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मन + निवेश] एकाग्रता । मनोयोग । उ०—उमने देखा कि महामयी बड़े कुतूहल और मनोनिवेश में कुलपुत्रों का परिचय मुन रहा है ।—इन्द्र०, पृ० १३१ ।

मनोनीत—वि० [सं०] १ जो मन के अनुकूल हो । पसंद । २ चुना हुआ ।

मनोवल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मन + बल] आतंरिक शक्ति । मानसिक शक्ति या बल । उ०—लिच्छिवी कुमारी में इतना मनोवल कहाँ कि वह यो भठ जाती ।—मजात०, पृ० ३३ ।

मनोभग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनोभङ्ग] १ नैगश्य । २ उदामी ।

मनोभव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव । उ०—जाग मनोभव मुण्डू मन वन मुभगता न परं कहीं ।—मानस, १।८६ ।

मनोभाव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मन की स्थिति । मनोवृत्ति । २ मन का भाव । हार्दिक अभिप्राय । उ०—नीगा मंगोरमा के मनोभावो को जानती थी । उसने सोचा इस श्रवला को कितना दुःख है ।—काया०, पृ० २५६ ।

मनोभावना—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनो + भावना] * 'मनाभाव' । उ०—उनके नाटको मे घटनाओं के आकर्षण की अपेक्षा चरित्रों की विविधता और उनकी मनोभावनाओं का उन्मेप और प्रदर्शन अधिक है ।—नया०, पृ० १५७ ।

मनोभिराम—वि० [सं०] मनोज्ञ । सुन्दर ।

मनोभिलाप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मन की इच्छा । मनोकामना [को०] ।

मनोभू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव । मदन ।

मनोभूत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चद्रमा । उ०—मनोभूत कोटिप्रभा श्री शरीरम् ।—तुलसी (शब्द०) ।

मनोमथन—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कामदेव ।

मनोमय—वि० [सं०] मनोरूप । मानसिक ।

मनोमय कोश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वेदात शास्त्रानुसार पाँच कोशों

मे मे तीसरा कोश । मन, अहंकार और कर्मेन्द्रियाँ इस कोश के अंतर्गत मानी जाती हैं । इसे बौद्ध दर्शन में 'सज्ञा स्कंध' कहते कहते हैं । उ०—मनोमय कोश पंच कर्म इन्द्रिय प्रसिधि पंच ज्ञान इन्द्रिय विज्ञान कोश जानिए ।—सुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ५६८ ।

मनोमालिन्य—सज्ञा पु० [म०] मन में मूल उत्पन्न होना । मनमुटाव । उ०—केदार बाबू तो बहुत सचरित जान पड़ते हैं फिर स्त्री पुरुष में इतना मनोमालिन्य क्यों हो गया ?—मान०, भा० १, पृ० ६८ ।

मनोमुखी—वि० [सं० मनस् + मुख + ई (प्रत्य०)] अंतर्मुखी । आभ्यन्तर जगत् में विचरण करनेवाला । उ०—मनोमुखी है काया । शुभे । आज शुभ दिन ही आया ।—कुराल०, पृ० ४६ ।

मनोमोहिनी—वि० [सं० मनस् + मोहिनी] मन को मोहित करनेवाली । उ०—तुम शुद्ध मच्चिदानंद ब्रह्म, मैं मनोमोहिनी माया ।—अपरा, पृ० ७१ ।

मनोयायी—वि० [सं० मनोयायिन्] १ अपनी इच्छा या मोज से जानेवाला । २ मन की तरह तेज [को०] ।

मनोयोग—सज्ञा पु० [सं०] मन को एकाग्र करके किसी एक पदार्थ पर लगाना । चित्त की वृत्ति का निरोध करके एकाग्र करना और उसे एक पदार्थ पर लगाना । उ०—विजय की सामग्री बड़े मनोयोग से हँडवेग में सजा रही थी ।—ककाल, पृ० ६२ ।

मनोयोनि—सज्ञा पु० [सं०] कामदेव ।

मनोरञ्जक—वि० [सं० मनोरञ्जक] मन को प्रसन्न या आह्लादित करनेवाला [को०] ।

मनोरजन—सज्ञा पु० [सं० मनोरञ्जन] [वि० मनोरञ्जक, मनोरजनीय] १ मन को प्रसन्न करने की क्रिया या भाव । मन का सप्रसादन । मनोविनोद । दिल बहलाव । उ०—मनोरजन वह शक्ति है जिससे कविता अपना प्रभाव जमाने के लिये मनुष्य की चित्तवृत्ति को स्थिर किए रहती है, उसे इधर उधर जाने नहीं देती ।—रस०, पृ० २६ । २ एक वगला मिठाई का नाम ।

मनोरजन—वि० [वि० स्त्री० मनोरजिनी] १ 'मनोरञ्जक' । उ०—तुम मृदु मानस के भाव और मैं मनोरजिनी भाषा ।—अपरा पृ० ७० ।

मनोरथ—सज्ञा पु० [सं०] अभिलाषा । वाछा । इच्छा । उ०—(क) करत मनोरथ जस जिय जाके । जाहि सनेह सुरा सब छाके ।—मानस, २। २२५ । (ख) वस मनोरथ पिय मिले घट भया उजारा ।—कवीर श०, भा० १, पृ० ७२ ।

मनोरथतृतीया—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक व्रत का नाम जो चंद्र शुक्ल तृतीया को होता है ।

मनोरथदायक—वि० [सं०] इच्छा पूरी करनेवाला [को०] ।

मनोरथदायक—सज्ञा पु० कल्पतरु का नाम ।

मनोरथद्वादशी—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक व्रत का नाम जो चंद्र शुक्ल पक्ष की द्वादशी के दिन पड़ता है ।

मनोरथसिद्धि—सज्ञा स्त्री० [सं०] इच्छा पूरी होना । इच्छा को पूर्ति होना [को०] ।

मनोरना—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की कपास ।

मनोरम—वि० [म०] [वि० स्त्री० मनोरमा] मनोज । मनोहर । सुंदर ।

मनोरम—सज्ञा पु० मखी छद्म के एक भेद का नाम । इसके प्रत्येक चरण में चौदह मात्राएँ होती हैं और ५, ४ और ५ पर विराम होता है । इसका मात्राक्रम २+३+२+२+३+२ है और तीसरी तथा दूसरी मात्रा सदा लघु होती है । जैसे,—जानकी नार्थ, भजो रे । और सब धवा तजो रे । सार है जग में जू येही । को प्रभु सो जन सनेही ।

मनोरमण—वि० [सं० मनस् + रमण] जिसमें मन रमण करे । जो मन में रमे । उ०—देखा है, प्रातः किरण फूटी है मनोरमण ।—ग्रचना, पृ० ६ ।

मनोरमा—सज्ञा स्त्री० [म०] १ गोरौचन । २ सात सरस्वतियों में से चौथी का नाम । ३ बौद्ध धर्मागुमार बुद्ध की एक शक्ति का नाम । ४ छंदोमजरी के अनुसार एक छद्म जिसके प्रत्येक चरण में दस वर्ण होते हैं जिनमें पहला, दूसरा, तीसरा, सातवाँ और नवाँ वर्ण लघु और शेष गुरु होते हैं । ५ महाकवि चंद्रशेखर के अनुसार आर्या के ५७ भेदों में एक जिसमें १२ गुरु और ३३ लघु वर्ण होते हैं । ६ दम अक्षर के एक वर्णिक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में नगण, गगण और अत में गुरु होता है । जैसे,—लहत मुक्ति पाप हो क्षमा । ७ केशव के मतानुसार चौदह अक्षरों का एक वर्णिक वृत्त जिसके प्रत्येक पाद में ४ सगण और अत में दो लघु होते हैं । जैसे,—यह शासन पठए नृप कानन । ८ केशव के मतानुसार दोषक छद्म का एक नाम जिसके प्रत्येक चरण में ४ भगण और दो गुरु होते हैं । ९ मूदन के मतानुसार दस अक्षरों के एक वर्णिक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में तीन तगण और एक गुरु होता है । जैसे,—बीते कुछ घास ही में जहाँ । १० मार्कण्डेय पुराणानुसार इदीवर नामक एक गर्भव की कन्या का नाम ।

मनोरवा—(पु०)—सज्ञा पु० [म० मनोरम] १ मनोरम । सुंदर । मधुर । २ दे० 'मनोरा' । उ०—ऊठत नाम मनोरवा हो हो सतन के यह ज्ञान । याहि सुफल जिन्ह जान्यो वाजत अभय निमान ।—गुलाल०, पृ० २८ ।

मनोरा—सज्ञा पु० [सं० मनोरम या मनोरमा] दीवार पर गोबर से बनाए हुए चित्र जो कार्तिक के महीने में द्रीवालो के पीछे बनाए जाते हैं । स्त्रियाँ और लड़कियाँ इन्हें रंग विरग के फूल पत्तों से सजाती हैं, प्रतिदिन सायंकाल को पूजती हैं और दीपक जलाकर गीत गाती जाती हैं । भिम्भिया । लोडिया । उ०—जेहि घर पिय सा मनोरा पूजा । मोकहँ विरह, सवति दुख दूजा ।—जायसी (शब्द०) ।

यौ०—मनोरा भूमक = एक प्रकार का गीत जिसे स्त्रियाँ फागुन में गाती हैं और जिनके अंत में यह पद (मनोरा भूमक) आता है। उ०—(क) कहूँ मनोरा भूमक होई। कर श्री फूल लिए सब कोई। जायसी (शब्द०)। (ख) गोकुल सकल ग्वालिनी हो घर खेलै फाग, मनोरा भूमक रे।—सूर (शब्द०)।

मनोराग - सञ्ज्ञा पुं० [म०] मन का राग। अनुराग। प्रेम। उ०—तीव्र मनोराग उत्पन्न करने की शक्ति कामायनी में ही है। - बी० श० महा०, पृ० ३१५।

मनोराज - सञ्ज्ञा पुं० [म० मनोराज्य] मानसिक कल्पना। मन की कल्पना। उ०—राग को न गाज न विराग जोग जाग जिय, काया नहि छोडे देत ठाठिबो कुठाट को। मनोराज करत अकाज भयो आञ्जु लागि, चाहै चारु चीर पै लहै न टूक टाट को।—तुलसी (शब्द०)।

मनोराज्य—सञ्ज्ञा पुं० [म०] कल्पनालोक। हवाई किना। ख्याली पुलाव [को०]।

मनोरिया - सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मनोहर या देश०] एक प्रकार की सिकड़ी की जजोर जिसकी कड़ियों पर चिकनी चपटी दाल जड़ी रहती है और जिसमें घुंघुरुओं के गुच्छे लगातार बदनवार को तरह लटकते हैं।

विशेष—यह जजोर स्त्रियों की साडी या ओढनी के किनारे पर उस जगह टाकी जाती जो ओढते समय ठीक सिर पर पडता है। घू घट काढने पर यह जजोर मुंह और मिर के चारो ओर आ जाती है।

मनोरुक्—सञ्ज्ञा पुं० [स० मनोरुज्] हृदय की पीडा। मनोव्यथा [को०]।

मनोर्थ(पुं०)—सञ्ज्ञा पुं० [म० मनोरथ] १० 'मनोरथ'। उ०—मवको मनोर्थ पूरा कियो।—ह० रासो, पृ० ३३।

मनोलय—सञ्ज्ञा पुं० [म०] चेतना का लय या समाप्ति होना। चेतना-शून्यता [को०]।

मनोलौल्य—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मन का लोलुपता। चित्त की चंचलता। सनक [को०]।

मनोल्लास—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनम् + उल्लास] मन की खुशी। प्रसन्नता। उ०—सारा मनोल्लास आमुओं के प्रवाह में वह गया, विलीन हो गया।—मान०, भा० १, पृ० ३६।

मने वती --सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १ पुराणानुसार मेरु पर्वत पर के एक नगर का नाम। २ चित्रागद विधाधर की कन्या का नाम।

मनोवर्गण—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] जँनों के अनुमार वे सूक्ष्म तत्व जिनसे मन की रचना हुई है।

मनोवल्लभा—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] प्रियसी। प्रियतमा [को०]।

मनोवाछा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मनोवाञ्छा] इच्छा। अभिलाषा। आकांक्षा। स्वाहिष।

मनोवाञ्छित—वि० [म० मनोवाञ्छित] इच्छित। मनमाँगा। यथेच्छ। जैसे,—इससे आपको मनोवाञ्छित फल मिलेगा।

मनोवाञ्छित—सञ्ज्ञा पुं० १० 'मनोवाछा'।

मनोविकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मन की वह अदम्यथा जिनमें किसी प्रकार का मुत्पद या दुःखद भाव, विचार या विकार उत्पन्न होता है। जैसे, राग, द्वेष, क्रोध, दया आदि चित्तवृत्तियाँ। चित्त का विकार।

विशेष—मनोविकार किसी प्रकार के भाव या विचार के कारण होता है और उसके माथ मन का लक्ष्य किसी पदार्थ या वात की ओर होता है। जैसे, किसी को दुखी देखकर दया अथवा अत्याचारी का अत्याचार देखकर क्रोध का उत्पन्न होना। जिन समय कोई मनोविकार उत्पन्न होता है, उस समय बुद्ध शारीरक विक्रियाएँ भी होती हैं, रोमांच, स्वेद, कप आदि। पर ये विक्रियाएँ साधारणतः इतनी सूक्ष्म होती हैं कि दूसरों का दिगर्द नहीं देतीं। हाँ, यदि मनोविकार बहुत तीव्र रूप में हो, तो उसके कारण होनेवाली शारीरिक विक्रियाएँ अमशय ही बहुत स्पष्ट होती हैं और बहुधा मनुष्य की आकृति में ही उसका मनोविकारो का स्वरूप प्रकट हो आता है।

क्रि० प्र०—उठना।—होना।

मनोविकृति—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १० 'मनोविकार' [को०]।

मनोविज्ञान—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ वह शास्त्र जिसमें चित्त की वृत्तियों का विवेचन होता है। वह विज्ञान जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि मनुष्य के चित्त में कौन सी वृत्ति कब, क्यों और किस प्रकार उत्पन्न होती है। चित्त की वृत्तियों को भीमासा करनेवाला शास्त्र।

यौ०—मनोविज्ञानवेत्ता = १० 'मनोविज्ञानिक'।

मनोविज्ञानी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनोविज्ञान + ई (प्रत्यय०)] १० 'मनोविज्ञानिक'। उ०—उनमें में (६ भावों में में) हाथ, उत्साह और निर्वेद को छोड़ दोष सब भाव वे ही हैं जिन्हें आधुनिक मनोविज्ञानियों ने मूल भाव कहा है।—रस०, पृ० १७३।

मनोविनोद—सञ्ज्ञा पुं० [म०] आनंद। मनोरजन [को०]।

मनोविश्लेषण—सञ्ज्ञा पुं० [म० मन विश्लेषण] १ मन में उठनेवाले विचारों का विश्लेषण। मन की समझना। २ मनोविज्ञान के अनुसार मन में प्रवृत्तमान विचारों का सूक्ष्म निरीक्षण और उनसे उत्पन्न कारणों को समझना जो मानसिक रोगों को जन्म देने है। यह मनोविज्ञान को एक विशेष धारा है।

मनोविश्लेषणवादी—वि० [स० मनोविश्लेषण + वादिन्] मनोविज्ञान की मनोविश्लेषण धारा का अनुयायी। मनोविश्लेषण को माननेवाला। उ०—उन्होंने जहाँ इस यथार्थवाद की महिमा स्वीकार की वहाँ मनोविश्लेषणवादी लेखकों की भर्त्सना की।—इति०, पृ० १२२।

मनोवृत्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] चित्त की वृत्ति। मनोविकार। विशेष—१० 'मनोविकार'।

मनोवृत्त्यात्मक—वि० [स० मनोवृत्ति + आत्मक] मनोवृत्ति से संबंधित। प्रवृत्तिविषयक। उ०—छायावाद की मनोवृत्त्यात्मक

मण्डिता मे व्यक्तित्व की स्थापना है ।—आचार्य०,
पृ० २१६ ।

मनोवेग—सञ्ज्ञा पु० [स०] मन का विकार । मनोविकार ।

यौ०—मनोवेगमूलक = मनोवेग मे सबधित । जिसके मूल मे मनोवेग हो । उ०—कोई कविता का स्वरूप उमका आनन्द-दायक होना, कोई मनोवेगमूलक होना मानते हैं ।—वी० श० महा०, पृ० ८ ।

मनोवैज्ञानिक—सञ्ज्ञा पु० [म०] मनोविज्ञान का ज्ञाता ।

मनोवैज्ञानिक—वि० मनोविज्ञान मन्धी । मनोविज्ञान का ।

मनोव्यथा—सञ्ज्ञा पु० [स०] मनस्ताप । मानसिक पीडा [को०] ।

मनोव्याधि—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] मानसिक रोग या वेदना [को०] ।

मनोव्यापार—सञ्ज्ञा पु० [म०] मन की क्रिया । मन का व्यापार । मक-प विकल्प । विचार ।

मनोसर(पु०)—सञ्ज्ञा पु० [म० मन ?] मन की वृत्ति । मनोविकार । उ०—सर्व मनोसर जाय मग्नि जो देखै तम चार । पहले मो दुख वरनि के वरनी बहक मिंगार ।—(शब्द०) ।

मनोहत—वि० [म०] निराश । हताश [को०] ।

मनोहर—वि० [स०] [सञ्ज्ञा मनोहरता । १ मन हरनेवाला । चित्त को आकर्षित करनेवाला । २ सुदर । मनोज । उ०—इम प्रकार मे घूमते छोटे काम सब श्रीर । देखी नृप ने निज प्रिया एक मनोहर ठौर ।—शकु०, पृ० ११ ।

मनोहर—सञ्ज्ञा पुं० १ छप्पय छद के एक भेद का नाम, जिसमे १३ गुरु, १२६ लघु, १४६ वर्ण और १५२ मात्राएँ अथवा १३ गुरु, १२२ लघु, १३५ वर्ण और १४८ मात्राएँ होती हैं । २ एक मकर राग का नाम जो गौरी, मावा और त्रिवरा के मिलने से बना है । ३ कुद पुष्प । ४ मुवर्ण । मोना ।

मनोहरता—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] मनोहर होने का भाव । सुदरता । उ०—राजकुशर तेहि अवसर आए । मनहु मनोहरता तन छाए ।—मानस, १।२४० ।

मनोहरताई(पु०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मनोहरता] सुदरता । मनोहरता । उ०—(क) मगल सगुन मनोहरताई । रिवि सिधि मुख सपदा मुहाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) किलकनि नटनि चलनि चित्तवनि भजि मिलनि मनोहरतैया । मनि खमनि प्रतिबिब भनक छवि छलकहै भरि अंगनैया ।—तुलसी (शब्द०) ।

मनोहरपन—सञ्ज्ञा पुं० [म० मनोहर + हि० पन (प्रत्य०)] मनोहरता । सुदरता । उ०—ऐसे कवियों के बनाए नाटक कि जो मनोहर-पन मे पूर्ण हैं ।—प्रमथन०, भा० २, पृ० २६ ।

मनोहरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] १ जाती पुष्प । २ स्वर्णखुही । सोनखुही । ३ त्रिशिर का माता का नाम । ४ एक अप्सरा का नाम ।

मनोहरी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मनोहर + ई (प्रत्य०)] कान मे पहनने की एक प्रकार की छोटी वाली ।

मनोहर्ता—सञ्ज्ञा पु० [म० मनोहर्तृ] १ 'मनोहर्ता [को०] ।

मनोहारिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १ 'मनोहारित्व' ।

मनोहारित्व—सञ्ज्ञा पु० [म०] मनोहरता । सुदरता । उ०—ऐसे वैज्ञानिक हुए हैं जिन्होंने अपनी कृतियों को साहित्यिक को मनोहारित्व प्रदान किया है । पा० सा० सि०, पृ० ८ ।

मनोहारी—वि० [स० मनोहार्त्वि] [वि० स्त्री० मनोहारिणी] १ मनोहर । चित्तकर्षक । सुदर । २ हृदय चुरानेवाला ।

मनोह्लाद—सञ्ज्ञा पु० [म०] मन की प्रमत्तता [को०] ।

मनोह्लादो—वि० [स० मनोह्लादिन्] [वि० स्त्री० मनोह्लादिनी] १ मन को प्रसन्न करनेवाला । दिल खुश करनेवाला । २ मनोहर । सुदर ।

मनोह्ला—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] मन णिला । मँसिल ।

मनो(पु०)—अव्य० [हि०] १ 'मानो' । उ०—कनक दड जुग जघ तुव लखियत आभा ऐन । वर जोवन खरसान पर मनो खरादे मँन ।—स० सप्तक, पृ० ३४७ ।

मनोज(पु०)—सञ्ज्ञा पुं० [स० मनोज] १ 'मनोज' । उ०—ताकि ताकि चोटे करत उद्भट मुभट मनोज ।—ब्रज० ग्र०, पृ० २० ।

मनौती(पु०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मानना + औती (प्रत्य०)] १ अमनुष्ट को सनुष्ट करना । मनाना । मनुहार । उ०—कभी गालियाँ देता था कभी धमकाता था, कभी इनाम का लालच दिखलाता था, कभी मनौती करता था, पर कोठरी का दरवाजा किसी ने न खोला ।—शिवप्रसाद (शब्द०) । २. किमी देवता की विशेष रूप से पूजा करने की प्रतिज्ञा या सकल्प । मानता । मन्त ।

क्रि० प्र०—उतारना ।—करना ।—चढ़ाना ।—मानना ।

मनौरथ(पु०)—सञ्ज्ञा पुं० [स० मनौरथ] १ 'मनौरथ' । उ०—जौन मनौरथ रथ तहँ होई । क्यो पहुँचै पिय पै तिय सोई ।—नद० ग्र०, पृ० १५७ ।

मन्त्र(पु०)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मन्] १ मन । चालीस सेर वजन का एक परिमाण । उ०—दस लख कोटि दस सहस मन्त्र ।—ह० रासो, पृ० ६० ।

मन्त्र(पु०)—सञ्ज्ञा पुं० [स० मन्स्] मन । चित्त ।

मन्त्रत—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मानना] किसी देवता की पूजा करने की वह प्रतिज्ञा जो किसी कामनाविशेष की पूर्ति के लिये की जाती है । मानता । मनौती । उ०—(बाबर ने) मन्त्रत मानी कि अग्रर साँगा पर फतह पाऊँ, फिर कभी शराव न पीऊँ और दाढी बढने दूँ ।—शिवप्रसाद (शब्द०) ।

मुहा०—मन्त्रत उतारना या बढाना = पूजा की प्रतिज्ञा पूरी करना । मन्त्रत मानना = यह प्रतिज्ञा करना कि अमुक कार्य के हो जाने पर अमुक पूजा की जाएगी ।

मन्ना—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] शब्द की तरह का एक प्रकार का मीठा निर्याम जो वाँस आदि कुछ विशेष वृक्षों मे से निकलता है और जिसका व्यवहार शोषण के रूप मे होता है ।

मन्मथ—सज्ञा पुं० [म०] १ कामदेव । २ कपित्थ । कथ । ३ कामचिन्ता । ४ साठ सवत्सरो मे से उनतीसवें सवत्सर का नाम ।

यौ०—मन्मथमन्मथ = कामदेव के मन को मथनेवाला, अत्यन्त आकर्षक वा सौन्दर्यशील ।

मन्मथकर^१—सज्ञा पुं० [स०] कुमार के एक अनुचर का नाम ।

मन्मथकर^२—वि० कामोद्दीपक । कामचिन्तावर्धक [को०] ।

मन्मथजल^(पु)—सज्ञा पुं० [म० मन्मथ + जल] स्त्रीशुक्र । रज । उ०—पातुर लोभी अधिक छिटाई । मन्मथजल विरगिय वसाई ।—चित्रा०, पृ० २१४ ।

मन्मथप्रिया—सज्ञा स्त्री० [म०] कामदेव की प्रिया । रति [को०] ।

मन्मथवधु—सज्ञा पुं० [म० मन्मथवन्धु] चद्रमा [को०] ।

मन्मथयुद्ध—सज्ञा पुं० [स०] कामवासना की तुष्टि । स्त्रीभोग । मैथुन [को०] ।

मन्मथलेख—सज्ञा पुं० [सं०] प्रेमपत्र ।

मन्मथसख—सज्ञा पुं० [सं०] कामदेव का मित्र, वसत [को०] ।

मन्मथा—सज्ञा स्त्री० [म०] दुर्गा । दाक्षायणी [को०] ।

मन्मथानन्द—सज्ञा पुं० [सं० मन्मथानन्द] १ एक प्रकार का आम जिसे महाराज श्रुत भी कहते हैं । २ विषयानन्द । विषयजन्य सुख या आनन्द ।

मन्मथानल—सज्ञा पुं० [सं०] कामाग्नि [को०] ।

मन्मथालय—सज्ञा पुं० [सं०] १ आम का पेड़ । २ कामियो के मनोरथ पूर्ण होने की जगह । प्रेमी और प्रेमिका के मिलने का स्थान । विहारस्थल । २ योनि । भग [ले०] ।

मन्मथाविष्ट—वि० [सं०] कामोद्दीप्त [को०] ।

मन्मथी—वि० [सं० मन्मथिन्] कामी । कामुक ।

मन्मथोद्दीपन^१—सज्ञा पुं० [म०] कामोत्तेजन होना ।

मन्मथोद्दीपन^२—वि० कामोत्तेजक [को०] ।

मन्मथ—सज्ञा पुं० [म०] १ दपति की गोपनीय एव मदस्वर मे की जानेवाली वातचीत । २ गोपनीय कानाफूसी । ३. मदन । कामदेव [को०] ।

मन्मथनत्व—सज्ञा पुं० [सं०] बोलने में जीभ का हकलाना जो एक दोष है [को०] ।

मन्मथ—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मन्मथी] तन्मय का विलोम । मुग्धमे लीन । मुग्धमे अनुरक्त । उ०—अकस्मात् नि शब्द आए जयी, मनीवृत्ति थी नाथ की मन्मथी ।—साकेत, पृ० ३०५ ।

मन्थ^१—वि० [म०] अपने को समझनेवाला । अपने को श्रमक जैसा माननेवाला (समासात् मे प्रयुक्त) जैसे पठितमन्थ [को०] ।

मन्थ^(पु)^२—सज्ञा पुं० [सं० मान या प्रा० मण्यण] मान । इज्जत । उ०—धन रगा तोर त्तिय धध्य । जिन रस्यो जीवत नृप मन्थ ।—पृ० रा०, ७।१८२ ।

मन्थका—सज्ञा स्त्री० [म०] गले पर की एक शिरा या नस जो पीछे की ओर होती है । मया ।

मन्थ्या—सज्ञा स्त्री० [म०] १ गले की एक शिरा या नस । मन्थका । २ ज्ञान । ममभ [ले०] ।

मन्थ्याका—सज्ञा स्त्री० [म०] २० 'मन्थका' [यौ०] ।

मन्थ्यास्तम्भ—सज्ञा पुं० [सं० मन्थ्यास्तम्भ] एक रोग का नाम जिगमे गले पर की मन्थ्या शिरा कटी हो जाती है और गरदन इधर उधर नहीं घूम सकनी ।

मन्थु—सज्ञा पुं० [सं०] १ स्तोत्र । २. कर्म । ३ शोक । ४ याग । ५ वीप । क्रोध । उ०—क्रोध क्रोध आगर्प रठ रोप मन्थु तम मोद ।—अनेकार्थ०, पृ० २५ । ६ दीनता । ७ अहंकार । ८ शिव । ९ अग्नि । १० भागवत के अनुचर वितथ राजा के पुत्र का नाम । ११ माह्य । उन्माह [को०] ।

मन्थुदेव—सज्ञा पुं० [म०] १ क्रोध का अधिमान्नी देवता । २. एक ऋषि का नाम ।

मन्थुपर्णी—सज्ञा स्त्री० [सं०] भेकपर्णी । मल्लपर्णी ।

मन्थुमान^१—वि० [म० मन्थुमत] शोक, क्रोध, दीनता या अहंकार में युक्त ।

मन्थुमान^२—सज्ञा पुं० अग्नि [को०] ।

मन्थुसूक्त—सज्ञा पुं० [म०] ऋग्वेद के दशम मण्डल का एक सूक्त जो मन्थुदेव के प्रात है [को०] ।

मन्थतर—सज्ञा पुं० [सं० मन्थन्तर] १ इकहत्तर चतुर्युगी का काल । ब्रह्मा के एक दिन का चादहवाँ भाग । विधेय—द० 'मन्थु' । उ०—समीचीन धर्म की प्रवृत्ति । मो कहिए मन्थतर वृत्ति ।—नद० ग्र०, पृ० २१७ । २ दुर्भिक्ष । अकाल । कहत ।

मन्थतरा—सज्ञा स्त्री० [सं० मन्थन्तरा] प्राचीन काल का एक प्रकार का उन्मव जो आषाढ शुक्ल दशमी, श्रावण कृष्ण अष्टमी और भाद्र शुक्ल तृतीया का होना था ।

मन्थाद्य—सज्ञा पुं० [सं०] धान्य ।

मन्थोला—सज्ञा पुं० [देश०] तमाल ।

मप्पना^(पु)—क्रि० सं० [म० मापन या देशी मप्प (=माप)] दे० 'मापना' । उ०—वचि उचारि सुमत तिहि मरमथ मप्पिय बांह ।—पृ० रा०, २४ । ३७६ ।

मफर—सज्ञा पुं० [अ० मफर] १ भागकर छिपने का स्थान । २. रक्षा । बचाव । ३ उपाय । तरीका [को०] ।

मफरर—वि० [अ० मफर] १ भगोडा । भागा हुआ । २ फरार । उ०—वह दूमेरे मामले मे मफरर था ।—फूलो०, पृ० ६४ ।

मवादा—अव्य० [फा०] ऐसा न हो । उ०—छुपा राख तूँ आज ते राज यो । मवादा मुन कोई आवाज यो ।—दक्खिनी०, पृ० ८६ ।

मम—मर्व० [सं० अह < अस्मद् शब्द का पक्षे एकवचन रूप] मेरा

या मेरी । उ०—(क) साई यो मति जानियो प्रीति घटै मम चित्त । मरुं ता तुम सुमरत मरुं जीवन सुमरुं नित्त ।—कवीर (शब्द०) । (ख) नील सरोरुह श्याम, तरुन अरुन वारिज नयन । करहु भो मम उर घाम, सदा क्षीरसागर सयन ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) महाराज तुम तौ हौ साध । मम कन्या ते भयो अपराध ।—सूर (शब्द०) ।

ममकार (पु) —सञ्ज्ञा पुं [सं०] ममत्व । ममता । अहंकार । उ०—रोम सरकार का गम्म कंस लह शब्द क संग ममकार होई ।—राम० धर्म, पृ० १३६ । २ वयक्तिक वा निज को सपत्ति ।

ममकृत्य—सञ्ज्ञा पुं [सं०] 'ममकार' [को०] ।

ममत (पु) —सञ्ज्ञा पुं [सं० ममत्व] दे० 'ममत्व', 'ममता' । उ०—गुरु पग परसें बधन छूटै । मोह ममत का फाँसा टूट ।—सहजो०, पृ० ६ ।

ममता—सञ्ज्ञा स्त्री [सं०] १ 'यह मेरा है' इस प्रकार का भाव । किसी पदार्थ को अपना ममभने का भाव । ममत्व । अपनापन । उ०—सुमति न जान नाम न जानै मै ममता मार ।—जग० श०, पृ० ११४ । २ स्नेह । प्रेम । ३ वह स्नेह जो माता पिता का अपनी सतानो के साथ होता है । ४ मोह । लोभ । ५ गर्व । अभिमान ।

यौ०—ममतायुक्त । ममताशून्य = ममत्व या ममता से रहित ।

ममताई (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री [सं० ममता + हिं० ई (प्रत्य०)] ममता । मोह । उ०—गर्व गुमान त्यागि ममताई । ह्वं सताल कार रहि दिनताई ।—जग० श०, पृ० ११८ ।

ममतायुक्त—वि० [सं०] १ अभिमानो । गर्वो । २ कृपण । ३ जिसमे ममता हो ।

ममत्व—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ ममता । अपनापन ।

यौ०—ममत्वयुक्त । ममत्वशून्य । ममत्वहीन = ममता वा स्नेह से रहित । उ०—पत्नी का सा जीवन, हँसमुख किंतु ममत्वहीन निर्दय वालो के लिये । अपरा, पृ० १३९ ।

ममनाई (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री [सं० मम] १ शासन । राज्य । २ मनमाने कार्य । उ०—तहँवा हस करत ममनाई ।—कवीर सा०, पृ० १४ ।

ममनून—वि० [अ०] आभारी । अनुगृहीत । कृतज्ञ । उ०—मैं बहुत ममनून हूँगा । अगर आप इसपर अपनी राय फरमावें ।—प्रेम० और गोर्को, पृ० ५३ ।

ममारखी—सञ्ज्ञा स्त्री [देश० या अ० सुबारक] बधावा ।

ममरी—सञ्ज्ञा स्त्री [म० बरबरी] वनतुलसी । बवाई ।

ममरी (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री [हिं० मम + री (प्रत्य०)] माता । उ०—ऐसे हमकूँ राम पियारे । ज्यो बालक कू ममरी ।—बरण० बानी, पृ० ६० ।

ममाखी—सञ्ज्ञा स्त्री [व० मीमाञ्ची] गृहद की मक्खी । मधुमक्खी । उ०—उत्तमता इमका निजस्व है, अचुजवाले सर सा देखो । जीवन मधु एकत्र कर रही उन ममाखियो सा बस लेखो ।—कामायनी, पृ० २७१ ।

ममान, ममाना—सञ्ज्ञा पुं [हिं० मामा + आना (प्रत्य०)] मामा का घर । ममियौरा ।

ममारख—वि० [अ० सुबारक] शुभ । बल्याणप्रद । सौभाग्यशाली ।

ममारखी (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री [अ० सुबारकी ?] बवाई । मुवारिकी । उ०—देति ममारखो बारहि बार करै सिगरी सब और सलामै ।—हम्मीर०, पृ० ६ ।

ममासा (पु) —सञ्ज्ञा पुं [म० मवास] किला । गढ़ । उ०—तेही आस चढ तोरै ममासा ।—कवीर सा०, पृ० ८६ ।

ममिता (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री [म० ममता] दे० 'ममता' । उ०—योखा देइ जीव सब राखा ममिता अदल चलाई ।—सत० दरिया, पृ० १३५ ।

मामिया—वि० [हिं० मामा + इया (प्रत्य०)] जन्म सबब से मामा के स्थान पर पढता हो । मामा के स्थान का । जैसे, ममिया ससुर, ममिया सास ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग सबबसूचक शब्दों के साथ होता है ।

यौ०—ममिया ससुर = पति वा पत्नी का मामा । ममिया सास = पति अथवा पत्नी की मामी । ममिया बहिन = मामा की कन्या ।

ममियाउरा—सञ्ज्ञा पुं [हिं० ममिया + उरा] दे० 'ममियौरा' ।

ममियौरा—सञ्ज्ञा पुं [हिं० ममिया + औरा (प्रत्य०)] मामा का घर । ममाना ।

ममी—सञ्ज्ञा स्त्री [म० ममी] वह शव जो रासायनिक पदार्थ या मसाला आदि लगाकर नष्ट होने से बचाकर रखा जाता है । सुगन्धित द्रव्यादि के लेप द्वारा सुरक्षित शव ।

विशेष—मिस्त्र के परामिडो में ऐसे शव प्राप्त होते हैं, जो तीस हजार वर्षों से भी अधिक पहले के हैं ।

ममीरा—सञ्ज्ञा पुं [अ० मामीरान] हलदी की जाति के एक पौधे की जड़ ।

विशेष—इस पौधे को कई जातियाँ होती हैं । यह आँख के रोगों को अपूर्व शोषधि मानी जाती है । यह पौधा सम शीतोष्ण प्रदेशों में होता है । आसाम के पूर्व के देशों के पहाड़ों स्थानों में भी यह बहुत होता है । कुछ दूसरे पौधों की जड़ें भी, जो इससे मिलती जुलती होती हैं, ममीरे के नाम से विक्रित हो रही हैं और उन्हें नकली ममीरा कहते हैं ।

ममोला—सञ्ज्ञा पुं [देश०] १ धोबिन नाम का छोटा पक्षी जिसके पेट पर काली धारियाँ होती हैं । उ०—मैलो मेरी गेंद ममोला, दिल मेरा वाई लिया माँ ।—दक्खिनी०, पृ० ३६० । २ वीर बहूटी । ३ छोटा और प्यारा बच्चा । ४ एक प्रकार का घोडा । उ०—अमोला ममोला लिए मोल लक्षो ।—प० रासो पृ० १६७ ।

ममोलिया (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री [देश०] वीर बहूटी । ममोला । उ०—लूँवाँ भड नदियाँ लहर बक पगत भर बाध । मोरा सोर ममोलिया, सावण लायो साथ ।—ब्रौकी० अ०, भा० २, पृ० ७ ।

मयोभय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

मयोभू—वि०] सं०] यज्ञ के फल से उत्पन्न ।

मरद—सञ्ज्ञा पुं० [म० मरन्द, मकरन्द, प्रा० मरद] मकरद । उ०—
जाने नहि तव माधुरी नद मरदमुगव ।—दीन० ग्र०, पृ० ६२ ।

मरदकोश—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरन्द + कोश] १ फूल का वह भाग
जिसमें 'सुवा' या रस रहता है । मकरदकोश । २ मधु-
मन्त्रियों का छत्ता ।

मर^१—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ मृत्यु । २ समार । जगत् । ३ प्राणी ।
मरणाघर्षा । जीव । उ०—मर क्या, अमर अधीन हमार कर्मों
के हैं ।—साकेत, पृ० ४१६ । ४ पृथ्वी ।

मर^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० सुरा] २० 'मुरा' ।

मरक^१—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ मृत्यु । मरण । २ वह रोग जिसमें
थोड़े ही काल में अनेक मनुष्य ग्रस्त होकर मरते हैं । वह भीषण
सक्रामक रोग जिसमें बहुत से लोग मरें । मरी । ३ मार्कंडेय
पुराणानुसार एक जाति का नाम ।

मरक^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरकना (=दवाना)] १ दवाकर सकेत
करना । सकेत । इशारा । उ०—अर ते टरत न वर परै दई
मरक यनु मैं । होडाहोडा बढि चले चित चतुराई नैन ।—
विहारी (शब्द०) । २ हौसला । उ०—मन की मरक काढि
सब दिन की निघरक ह्वै रस भेलिए ।—घनानन्द, पृ० ४०३ ।
३ खिचाव । उ०—एक गाँव बसि वरी ऐसी राखिए
मरक ।—घनानन्द०, पृ० १३५ । ४ बदला । उ०—मदन मरक
कबहूँ कि काढिहै भोरी पुहप लाग वरन वरन मटकन ।—
घनानन्द, पृ० ३६० । ५ दे० 'मडक' ।

मरकज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मरकज] १ वृत्त का मध्य बिंदु । २
प्रधान या मध्य स्थान । केंद्र ।

मरकजी—वि० [अ० मरकज] केंद्रीय । मुख्य ।

मरकट^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरकट] २० 'मर्कट' ।

मरकट—वि० [सं० मृतकवत्] १ दुर्बल । दुबला पतला । कम-
जोर । २ अशुभ । मनहूस (लात्त०) । उ०—सुवह सुवह नशा
के श्वाव मे, भया नही वावू नही, चाँदी नही मोना नही—
यह साला मरकट सामने आ फटा ।—शराबी, पृ० ६० ।

विशेष—प्रातः वदर का मुँह देखना अशुभ माना जाता है अतः
यह अर्थ बोलचाल में प्रचलित है ।

मरकत - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पन्ना ।

यौ०—मरकत पत्ती = एक लता । पाची । मरकतमन्दर = पन्ना
का पहाड़ । मरकतमण्डप = पन्ना । मरकतशिला = पन्ना की
चट्टान या सिल्ली । मरकतश्याम = पन्ना के समान गहरा हरा
या काला ।

मरकताल—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] ममुद की तरंगों की उतार की सब में
अंतिम अवस्था । भाटा की धरम अवस्था जो प्रायः अमावास्या
और पूर्णिमा से दो चार दिन पहले होती है ।

मरकद्—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मर्कद्] कन्न । समाधि । उ०—रसा हाजत

नही कुछ रीणनी की कुंजे मर्कद मे ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २,
पृ० ८४८ ।

मरकना—क्रि० अ० [अ० म०] १ दवाकर मरमराना । दवाव के नीचे
पडकर दूटना । दवना । उ०—मुनत ही मीतिन कजेजा करकन
लाग्या मरकन लाग्यो मान भवन मन हारघा मा ।—देव
(शब्द०) । २ दे० 'मुरकना' । उ०—कंठवामी धमवारिन को
रकवा जहँ मरकत । बीच बीच कटकित वृत्त जाके बढि
लरकत ।—प्रेमघन० भा० १, पृ० ६ ।

मरकहा—वि० [हि० माग्ना = हा (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० मरकही]
सींग में मारनेवाला । जो सींग में बहुत माग्ता हो (पशु) ।
उ०—मरकहा वैन रात दिन फूँ फूँ किया करता है ।—भारतेंदु
ग्र०, भा० १, पृ० ५५६ । २ किसी को मारने पीटने-
वाला (कव०) ।

मरकाना—क्रि० म० [हि० मरकना] १ दवाकर चूर करना ।
इतना दवाना कि मरमराहट का शब्द उत्पन्न हो ।
तोडना । उ०—यो राहत कूँ दुनियाँ के मरकान कर, ल्या
राखे पग तनै आनकर ।—शिवलिंग०, पृ० १४६ । २ दे०
'मुडकाना' ।

मरकूम—वि० [अ० मरकूम] [वि० स्त्री० मरकुमा] लिखित ।
लिखा हुआ । उ०—जो कुछ कि कजा काजी में मरकूम हुआ
है ।—कवीर म०, पृ० १४१ ।

मरकोटी—सञ्ज्ञा पुं० [२०] एक प्रकार की मिठाई ।

मरकत^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरकत] दे० 'मरकत' । उ०—मानो
मरकत सैल विसाल म फँलि चली वर वीर बहूटी ।—तुलसी
ग्र०, पृ० १६५ ।

मरखडा—वि० [हि० मारना] दे० 'मरखन्ना' ।

मरखन्ना—वि० [हि० मारना + न्ना (प्रत्य०)] [वि० स्त्री०
मरखन्नी] सींग से मारनेवाला । मरकहा (पशु) ।

मरखम—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मरखम] वह खूँटा जो कातर में गाड़ा
रहता है ।

मरगजा^(१)—वि० [हि० मलना + गीजना] [वि० स्त्री० मरगजी]
मला दला । मसला हुआ । गीजा हुआ । मलित दलित । उ०—
(क) सब अरगज मरगज भा लाचन पीत सरोज । सत्य कहहु
पद्मावत सखी परी सत्र खोज ।—जायसी (शब्द०) । (ख) धर
पठई प्यारी अक भरि । कर अपने मुख परसि त्रिया के
प्रेम सहित दाऊ भुज धरि धरि । संग मुख लूटि हरप भई हिरदय
चली भवन भाषिनि गजगति दरि । अंग मरगजी पटारी राजति
छवि निरखत ठाढे ठाढे हरि ।—मूर (शब्द०) । (ग) तुम
सौतिन देखत दई अपने हिय ते लाल । फिरत सबन में डहडही
डहै मरगजी भाल ।—विहारी (शब्द०) । (घ) अटपटे मूपन
मरगजी सारी, वदन परस्यो भाल सो ।—छोत०, पृ० ७१ ।

मरगजा^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मलगजा' ।

मरगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरना, मि० फ्रा० मर्ग] फँलनेवाला रोग ।
मरक । मरी ।

मरगोल—सञ्ज्ञा पु० [अ० मरगोल] गाने में ली जानेवाली गिटकिरी ।
स्वर कपन । (सर्गीत) ।

क्रि० प्र०—मरना ।—लेना ।

मरगोलना (पु०)†—क्रि० अ० [हि० मरगोल] मुदर स्वर में बोलना ।
गिटकिरी लेते हुए बोलना । उ०—सुआ देखा एकस के हाथ
में । जो मरगोलता है वो हर बात में ।—दक्खिनी०,
पृ० ७८ ।

मरगोला—सञ्ज्ञा पु० [अ० मरगोला] दे० 'मरगोल' ।

मरघट^१—सञ्ज्ञा पु० [हि० मर (= मृत्यु) + घाट] वह घाट या स्थान जहाँ
मुर्दे फूँके जाते हैं । मुर्दों को जलाने की जगह । स्मशान घाट ।
ममान । उ०—(क) जा घर माधु न सेवइ पारव्रह्म पात नाहि ।
ते घर मरघट मारिखा भूत बसे ता माहि ।—कवीर (शब्द०) ।
(ख) हरिश्चन्द्र का पुत्र राहित मर गया । उस मृतक का ले
रानी मरघट गई ।—लत्तू (शब्द०) ।

मुहा०—मरघट का भुतना = प्रेत ।

मरघट^२—वि० १ बहुत ही कुरूप और विकराल आकृति का । कुरूप ।
२. जो सदा उदाम रहता हो । मनहूस । रोना । ३ चेष्टाहीन ।
निष्क्रिय ।

मरचा—सञ्ज्ञा पु० [हि०] दे० 'मिरचा' ।

मरचूवा—सञ्ज्ञा पु० [देश०] दे० 'मरचोवा' । उ०—मरचूवा मितवर से
नवबर तक बोते हैं ।—कृपि०, पृ० २३६ ।

मरचोवा—सञ्ज्ञा पु० [देश०] एक प्रकार की तरकारी जिसका व्यवहार
योरप में अधिकता से होता है ।

मरज—सञ्ज्ञा पु० [अ० मर्ज] १ रोग । बीमारी । उ०—(क)
आली कछू को कछू उपचार करै पै न पाइ सकै मरजै री ।
—पद्माकर (शब्द०) । (ख) नेह तरजनि विरहागि सरजनि
सुनि मान मरजनि गरजनि बदरान की ।—श्रीपति (शब्द०) ।
२ बुरी लत । खराब आदत । कुटेव । जैसे,—आपको तो
बकने का मरज है । (इस अर्थ में इसका प्रयोग अनुचित बातों
के लिये होता है ।)

मरजाद (पु०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्यादा] १ सीमा । हद । उ०—गुरु
नाम है गम्य का शिष्य सीख ले मोय । विनु पद ई मरजाद विनु
गुरु शिष्य नहि होय ।—कवीर (शब्द०) । (ख) सुदरता
मरजाद भवानी । जाड न कोटिन बदन वखानी ।—तुलसी
(शब्द०) । २ प्रतिष्ठा । आदर । इज्जत । महत्व । उ०—(क)
गुरु मरजाद न भक्तिपन नहि पिय का अधिकार । कहै कवीर
व्यभिचारिणी आठ पहर भरतार ।—कवीर (शब्द०) (ख)
यह जो अघ वीस हू लोचन छल बल करत आनि मुख हेरी ।
आइ श्रुगाल सिंह बलि मागत यह मरजाद जात प्रभु तेरी ।
—मूर (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—खोना ।—जाना ।—रखना ।

३ रीति । परिपाटी । नियम । विधि । उ०—मत ममु श्रीपति
अपवादा । मुनिय जहाँ तहँ अस मरजादा ।—तुलसी (शब्द०) ।

श्री०—मरजादवाला = समानित व्यक्ति । महान् पुण्य । उ०—
लाज जो सतारता है मरजादवालो की ।—सपदा, पृ० ६४ ।

मरजादा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्यादा] दे० 'मरजाद' । उ०—करति
न लाज हाट घर वर की कुछ मरजादा जाति डगी सी ।
भारतेंदु अ०, भा० १, पृ० ४६२ ।

मरजादि (पु०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरजादा] दे० 'मर्यादा' । उ०—
होइ सुधाता सन्द सम, समझी कवि मरजादि ।—पोद्दार
अभि० अ०, पृ० ५३१ ।

मरजिया^१—वि० [हि० मरना + जीना] १ मरकर जीनेवाला ।
जो मरने से बचा हो । उ०—(क) तस राजै रानी कँठ लाई ।
पिय मरजिया नारि जनु पाई ।—जायसी (शब्द०) । २
मृतप्राय । जो मरने के समीप हो । मरणासन्न । उ०—पद्मावति
जो पावा पीऊ । जनु मरजिये परा तनु जीऊ ।—जायसी
(शब्द०) । ३ जो प्राण देने पर उतारू हो । मरनेवाला ।
उ०—अब यह कौन पानि में पीया । भै तन पाँख पतंग
मरजीया ।—जायसी (शब्द०) । ४. अधमरा । उ०—जहँ अस
परी सनुँद नग दीया । तेहि किम जिया चहै मरजीया ।
—जायसी (शब्द०) ।

मरजिया^२—सञ्ज्ञा पु० जा पानी में डूबकर उसके भीतर से चीजों को
निकालता है । समुद्र में डूबकर उसके भीतर से मोती आदि
निकालनेवाला । जिवकिया उ०—(क) जस मरजिया समुँद
धंसि मारे हाथ आव तव सीप । डूँढि लेहु जो स्वर्ग दुआरे
चढे सो सिंहल दीप ।—जायसी (शब्द०) । (ख) कविता चेला
विधि गुरु सीप सेवातो बुद, तेहि मानुष का आस का जो
मरजिया समुद ।—जायसी (शब्द०) । (ग) तन समुद्र मन
मरजिया एक बार धंसि लेइ । की लाल लै नीकमे की लालच
जिउ देइ ।—कवीर (शब्द०) ।

मरजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मर्जी] १ इच्छा । कामना । चाह ।
उ०—(क) वरजी हूँ और मुनाइवे को कहि तोप लख्यो
सिगरी मरजी ।—तोप (शब्द०) । (ख) दरजी किते तिते धन
गरजी । व्योतहि पटु पट जिमि नृप मरजी ।—गोपाल
(शब्द०) । २ प्रसन्नता । खुशी । ३ आज्ञा । स्वीकृति ।
उ०—(क) वा विधि सँवरे रावरे की न मिली मरजी न मजा
न मजारै ।—पद्माकर (शब्द०) । (ख) इनकी सबकी मरजी
करिकै अपने मन को समुझावने है ।—ठाकुर (शब्द०) । (ग)
मरजी जो उठी पिय की सुधि लै चपला चमकै न रहै वरजी ।
—(शब्द०) ।

मरजीवा—सञ्ज्ञा पु० [हि० मरना + जीना] दे० 'मरजिया' । उ०—
मोती उपजे सीप में सीप समुदर माहि । कोइ मरजीवा काडेसो
जीवन की गम नाहि ।—कवीर (शब्द०) ।

मरज्याद (पु०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्याद] दे० 'मरजाद' । उ०—
मिले राज भक्त मरज्याद छुट्टी । उमा सत्त सामत की मक्ति
पुट्टी ।—पृ० रा०, १२ २७८ ।

मरट (पु०)†—सञ्ज्ञा पु० [सं० मरत्त (= मृत्यु)] मौत । मृत्यु । उ०—घार
मुर्द मुख ना मुर्द मरट मुच्छ क्रत जोह ।—पृ० रा०, २५, ४४३ ।

मरण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १, मरने का भाव । मृत्यु । मौत । २,

वत्मनाभ । वृद्धनाग । ३ कुडली मे ग्राठवाँ स्थान (को०) ।
४ वद हाना । रक जाना । सभास होना । जमे वपाँ का ।

मरणधर्मा—वि० [सं० मरणधर्मन्] मरणशील । मरणस्वभाव । जो
मरता हो ।

मरणशील वि० [सं०] ३० मरणधर्मा ।

मरणशीलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मरणधर्मिता । मरने का भाव ।

मरणात् मरणात्क—वि० [सं० मरणान्त, मरणान्तक] जिसकी
ममाप्त मृत्यु हो । अत मे जिमसे मृत्यु प्राप्त हो (को०) ।

मरणाशंसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शीघ्र मरने की इच्छा । जल्दी
मरने की कामना । (जैन) ।

मरणाशोच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शूद्रक । किसी की मृत्यु होने पर परि-
वार तथा जातिवधु को लगनेवाला श्रगौच ।

मरणीय—वि० [सं०] मरणशील । मरणधर्मा (को०) ।

मरणोन्मुख—वि० [सं०] जो मृत्यु के निकट हो । जिसकी मृत्यु
आ गई हो (को०) ।

मरत(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ?] मरण । मृत्यु । मौत ।

मरतवा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मरतवह्] १ पद । पदवी । श्रोहदा ।

क्रि० प्र०—पाषा । बढना ।—बढाना ।—मिलना ।

२ वार । दफा । जैसे,—मैं आपके घर कई मरतवा गया था ।

मरतवान—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृतवायह] ३० 'अमृतवान' ।

मरद(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मर्द] ३० 'मर्द' । उ०—अर्थ धर्म काम
मोक्ष श्रमत विनोक्तनि मे कामी करामात जोगी जागता मरद
की ।—तुलसी (शब्द०) ।

मरदई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मर्द + ई (प्रत्यय०)] १ मनुष्यत्व ।
आदमीयत । २ माहम । ३ वीरता । बहादुरी ।

क्रि० प्र०—धरना ।—दखाना ।

मरदन(पु) सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्दन] ३० 'मर्दन' ।

मरदना(पु) क्रि० म० [सं० मर्दन] १ मसलना । मर्दन करना ।
मलना । उ०—(क) अति करहि उपद्रव नाथा । मरदहि मोहि
जानि अनाथा ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) पदन मरदि मद
मदन शत्रु मुर लोक पठावत ।—गोपाल (शब्द०) । २. बस
वरना । चूर्ण करना । उ०—अमल कमल कुल कलित ललित
गति वेनि सा बलित मधु मावकी को पानिए । मृगमद मरदि
कपूर घूरि नूरि पग केमारे को केशव विलास पहिचानिए ।—
केजव (शब्द०) । ३ माटना । गुँवना । जैसे, आटा मरदना ।

मरदनिया—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मर्दाना] वह पृष्ठतनु भृत्य जो बड़े आदमियों
के श्रग मे तेल आदि मला करता है । शरीर मे तेल मलनेवाला
नेवक । उ०—लिए तेल मरदनिया आए । उवटि सुगघ धूपरि
अन्हवाण ।—लल्लू (शब्द०) ।

मरदान(पु)—वि० [फा० मर्दानह्] ३० 'मरदाना' । उ०—जहं मगद
मरदान कन्ह तहें जानि नाग भुध । मिले तकि क तरवार
भारि उम्भारि सीम दुअ ।—पृ० रा०, ८, १५८ ।

मरदानगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १. वीरता । शूरता । शौर्य । उ०—

काम इहै मरदानगी की आन परे गु लिए बहने है ।—ठाकुर०,
पृ० ३१ । २. माहस ।

क्रि० प्र०—दिखाना ।

मरदाना^१—वि० [फा० मरदानह्] [वि० स्त्री० मरदानी] १ पुरुष
सबधी । पुरुषो का । जैसे, मरदानी बैठक । २ पुरुषा का मा ।
जैसे, मरदाना भेम, । ३ वीरोचित । जैसे, मरदाना काम ।
४ बहादुर । जवाँमर्द ।

मरदाना^२—क्रि० अ० [हिं० मरद] साहस करना । वीरता दिखाना ।

मरदुआँ—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मर्द] १ मर्द बनेवाला । भूठा या
दिखावटो मर्द । तुच्छ आदमी । कायर । उ०—बाहर बाहरे
मरदुए, कुरबान जाऊँ तेरे ईमान पर ।—रगभूमि, भा० २,
पृ० ६६२ । २ अपरिचित व्यक्ति । गैर आदमी । ३. खाविद ।
पति । (सि०) ।

मरदूद—वि० [अ०] १ तिरस्कृत । २ लुच्चा । नीच । उ०—
मरदूद तुम्हे मरना सही । काइम अकल करके कही ।—तुरसी
श०, पृ० २४ ।

मरह(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मर्द] ३० 'मर्द' । उ०—सजे सेंग चद
पुँडरी मरह ।—प० रासो०, पृ० ७५ ।

मरन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरण] ३० 'मरण' । उ०—(क) अरव भा
मरन मत्य हम जाना ।—मानस, ४, २७ । (ख) मरन भएउ
कछु ससय नाही ।—मानस, ४, २६ ।

यौ०—मरनपुर = मृत्युलोक । मर्त्यलोक । उ०—हैं तो अहा
अमरपुर जहाँ । इहाँ मरनपुर आएँ कहाँ ।—जायमी अ०,
(गुप्त), पृ० २०१ ।

मरना—क्रि० अ० [सं० मरण] १ प्राणियो या वनस्पतियो के
शरीर मे ऐसा विकार होना जिससे उनकी सब शारीरिक
क्रियाए बंद हो जायँ । मृत्यु को प्राप्त होना । उ०—(क) माई
यो मत जानियो प्रीति घट मम चित्त । मरूँ तो तुम सुमिरत
मरूँ जीवत सुमिरो नित्त ।—कवीर (शब्द०) । (ख) कर गहि
खग तोर बध करिही सुनि मारिच डर मान्यो । रामचंद्र के
हाथ मरूँगो परम पुरुष फल जान्यो ।—सूर (शब्द०) । (ग)
लघु आनन उत्तर देत बढे लरिहैं मरिहैं करिहैं कछु साके ।—
तुलसी (शब्द०) । (घ) मरिखे को साहस कियो बढो बिरह की
पीर । दौरति हूँ समुहै ससी सरसिज सुरभि समीर ।—बिहारी
(शब्द०) । (ङ) मरल गौ कई वार जियाया ।—कवीर
सा०, पृ० १५११ ।

मुहा०—मरना जीना = शादी गमी । शुभाशुभ अवसर । सुख
दुख । मरने की छुट्टी न होना या न मिलना = बिलकुल छुट्टी न
मिलना । श्रवकाश का अभाव होना । दिन रात कार्य मे फँसा
होना । मरता क्या न करता = जीवन से निराश व्यक्ति का सब
कुछ करने को तैयार हो जाना । पराजय या असफलता को
जान लेनेवाले व्यक्ति का सब कुछ करने को तैयार होना ।
मरते गिरते = किसी तरह । गिरते पडते । मरते जीते = ३०
'मरते गिरते' । मरते दम तक = ३० 'मरते मरते' । मरते
मरते = आखिरी दम तक । अंतिम समय तक । मरा सा =
श्रत्यत दुर्बल । क्षीणकाय । मरे या मरते को मारना = पीड़ित

को और पीडा पहुँचाना । उ०—मरे को मारे शाह मदार (बोल०) ।

२. बहुत अधिक कष्ट उठाना । बहुत दुःख सहना । पचना । उ०—
(क) एक बार मरि मिले जो आए । दूसरा बार मरि कित
जाए ।—जायसी (शब्द०) । (ख) तुलसी भरोसो न भवेस
भोरानाथ को तो कोटिक कलेस करो मरो छार छानि सो ।—
तुलसी (शब्द०) । (ग) तुलसी तेहि सेवत कौन मरै, रज ते
लघु को करं मेरु से भारै ।—तुलसी (शब्द०) । (घ) कठिन दुहूँ
विधि दीप को मुन हो मीत मुजान । सब निसि विनु देखे जर
मरं लखै मुख भान ।—रसनिधि (शब्द०) ।

मुहा०—किसी के लिये मरना = हैरान होना । कष्ट सहना ।
।कसी पर मरना = लुब्ध होना । आसक्त होना । मर पचना =
अत्यंत कष्ट सहना । मर मरकर = बहुत अधिक कष्ट उठाकर ।
उ०—२३ मील पहाड़ी यात्रा थी, किंतु कल तो मर मरकर
में पंदल ही २१ मील चला आया था ।—किन्नर०, पृ० ३४ ।
।कसी की बात पर मरना या किसी बात के लिये मरना =
दुःख सहना । मर मिटना = श्रम करते करते विनष्ट हो जाना ।
उ०—मरने मर मिटने की ठान ली थी ।—इन्शा (शब्द०) ।
मरा जाना = (१) व्याकुल होना । व्यग्र होना । जैसे,—सूद
देते देते कियान मरे जाते हैं । (२) उत्सुक होना । उतावली
करना ।

३. मुरझाना । कुम्हलाना । मुखना । जैसे, पान का मरना, फल
का मरना । ४ मृतक के समान हो जाना । लज्जा, सकोच
या घृणा आदि के कारण मिर न उठा सकना । उ०—(क)
यहि लाज मरियत ताहि तुम सो भयो नातो नाथ जू । अर
और मुख निरखै न ज्यो त्यो राखिए रघुनाथ जू ।—केशव
(शब्द०) । (ख) तव मुधि पट्टुमावति मन भई । मंवरि विछोह
मुरछि मरि गई ।—जायसी (शब्द०) । ५ किसी पदार्थ का
किसी विकार के कारण काम का न रह जाना । जैसे, आग
का मरना, चूने का मरना, मुहागा मरना, घूल मरना ।

मुहा०—पानी मरना = (१) पानी का दीवार या दीवार की नीव
में बँसना । (२) किसी के मिर कोई कलक आना । उ०—
पुनि पुनि पानि वही ठाँ मरै । फेर न निकसे जो तहँ परै ।—
जायसी (शब्द०) ।

६. खेल में किसी गोटी या लडके का खेल के नियमानुसार किमी
कारण से खेल से अलग किया जाना । जैसे, गोटी का मरना,
गोइर्या का मरना, इत्यादि । ७ किसी वेग का शांत होना ।
दबना । जैसे, भूख का मरना, प्यास का मरना, उल्ल का मरना,
पित्त का मरना इत्यादि । उ०—मुँह मोरे मोरे ना मरति रिमि
केशवदास मारहु घौ कहे कमल सनाल सो ।—केशव (शब्द०) ।
८ डाह करना । जलना । ९ झखना । झनखना । पछताना ।
रोना । १० हारना । वशीभूत होना । पराजित होना ।
उ०—तू मन नाथ मार के स्वाँसा । जो पै मरहि आप कर

नासा । चारिहु लोक चार कह बाता । गुप्त लाव मन जो सो
राता ।—जायसी (शब्द०) । ११ भस्म होना । कुशता होना ।
जैसे, धातु आदि का मरना । १२ डूब जाना । प्राप्ति या
वसूली की आशा न रह जाना । जैसे, बकाया या
पावना आदि ।

मरनि^०—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] ढं० 'मरनी' ।

मरनी^०—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरना] १ मृत्यु । मौत । २ दुःख ।
कष्ट । हैरानी । उ०—मुनि योगी की अम्मर करनी । न्योरी
विरह विथा की मरनी ।—जायसी (शब्द०) । ३ वह शोक
जो किमी के मरने पर उसके मवधियों को होता है । ४ वह
कृत्य जो किसी के मरने पर उसके सबबी लोग करते हैं ।

यौ०—मरनी करनी = मृत्यु और मृतक की अत्येष्टि क्रिया ।

मरबुली—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार का कद जो पहाड़ी प्रदेशो
में उत्पन्न होता है ।

विशेष—इसके टुकड़े गज गज भर के गड्ढे खोदकर बोए जाते
हैं । बोवाई मदा हो सकती है, पर गर्मी के दिनों में इसमें
पानी देने की आवश्यकता होती है । यह दो प्रकार की होती
है—मीठी और तीक्ष्ण या गला काटनेवाली । दोनों से
तीखुर बनाया जाता है । इसकी जड़ को आलू या कद भी
कहते हैं । कद को बोकुर उसके लच्छे बनाते हैं । फिर लच्छे
को दवाकर या कुचलकर रस निकालते हैं जिसे सुखाकर मत्त
बनता है जो तीखुर कहलाता है । रस निकले हुए खोइए को
भी सुखा और पीसकर कोका के नाम में बेचते हैं । इसकी
खेती पहाड़ों में अधिकता से होती है ।

मरभख—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] वह जो सदैव खाने के लिये लालायित
रहता है ।

मरभुखा—वि० [हि० मरना + भूखा] १ भूख का मारा हुआ ।
भुखड । २ कगल । द्रिष्टि ।

मरभूखा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मरना + भूख] भुखड । भुखमरा ।
उ०—न जाने कहाँ के मरभूखे जमा हो गए हैं ।—रगभूमि,
भा० २, पृ० ४६८ ।

मरमनि—वि० [स० मर्म] मर्मवानी । दुःखियारी । उ०—मरमनि,
सोइ रे चादर ताँनि, माइलि बोले बोलने भावज बोले बोलने ।
—पोद्दार अभि०, ग्र०, पृ०, ६२७ ।

मरम—सञ्ज्ञा पुं० [स० मर्म] ३० 'मर्म' । उ०—जिय को मरम तुम
साफ कहत किन काहे फिरत मँडराए हो ।—भारतेंदु ग्र०,
भा० १, पृ० ५४५ ।

मरमती—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष ।

विशेष—इस वृक्ष की लकड़ी कड़ी और बहुत टिकाऊ होती है
तथा खेती के शौजार और घर के संगहे आदि बनाने के काम
आती है । यह पेड़ छोटा होता है और भारतवर्ष के प्रायः सभी
भागों में मिलता है । यह बीजों से उत्पन्न होता है ।

मरमर—मन्ना पुं० [यू०] एक प्रकार का दानेदार चिकना पत्थर जिस-पर घोटने से अच्छी चमक आती है।

विशेष—उसमें चूने का अणु अधिक होता है और इसे जलाने से अच्छी कली निकलती है। यद्यपि समार के भिन्न भिन्न प्रदेशों में अनेक रंगों के मरमर मिलते हैं, पर सफेद रंग के मरमर ही को लोग विशेषकर मरमर या 'मग मरमर' कहते हैं। जो मरमर काला होता है, उसे 'सग मूसा' कहते हैं। मरमर पत्थर की मूर्तियाँ, खिलौने, बरतन आदि बनाए जाते हैं और उसकी पटिया और टोके मकान बनाने में भी काम आते हैं। अच्छा मरमर इटली से आता है, पर भारतवर्ष में भी यह जोधपुर, जयपुर, वृत्खण्ड और जबलपुर आदि स्थानों में मिलता है।

मरमराई—मन्ना पुं० [हि० मल या अनु०] वह पानी जो थोड़ा खारा हो।

मरमराई—मन्ना पुं० [अनु०] एक पत्नी का नाम।

मरमराई—वि० जो सहज में टूट जाय। जरा सा दवाने पर मर मर अन्द करके टूट जानेवाला।

मरमराना—क्रि० घ० [अनु०, तुलु सं० महमदायिता] १ मरमर शब्द करना। २ अधिक दबाव पाकर पेड़ की शाखा या लकड़ी आदि का मरमर अन्द करके दबना। उ०—भयो भूरि भार बरा बलत बरा कुमार करत चिकार चार दिग्गज सहित सोग। गिरिभरदास भूमि बडल मरमरात अति धवरात से परात हैं दित्तन लोग। परम बितेस भार सहि ना सकत सेस एक तिर बल्ल बड सहस बरन बोग। लटक लटक सीस कटक कटक चित्त अटक अटक डारै पटक पटक भोग। —गोपाल (शब्द०)।

मरमराहट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरमराना] १ किमी लकड़ी या शाखा के टूटने का शब्द। चरमराहट। २ बीमो धीमी आवाज। मूखे पत्ते आदि के पैरो से दबने की ध्वनि। ३ ङ्रमतोप प्रकट करने की क्रिया। भुनभुनाहट।

मरमा—मन्ना पुं० [सं० मर्म] दे० 'मर्म'। उ०—घायल भए नाद के लागे मरमा है सवद कटारी हो।—पलटू०, भा० ३, पृ० ८४।

मरमिन—वि० स्त्री० [सं० मर्म] मरमवाली। दुखियारी। दे० 'मर्म'। उ०—एक नारि दूजे मरमिन ह्वै कित दुख में भोके री। 'हरीचन्द' कहवाइ मुघर क्यो बढवति सोके री।—भारतेंदु प्र०, भा० २, पृ० ३८२।

मरमी—वि० [सं० मर्मिन] रहस्य जाननेवाला। उ०—सखी मरमी प्रभु सठ धनी। बंद बदि कवि भानम गुनी।—मानस, ३।२०।

मरम्म—मन्ना पुं० [सं० मर्म] दे० 'मर्म'। उ०—मरम्मय मुद्दय विद्दय मेल।—प० रासो, पृ० ४२।

मरम्मत—मन्ना स्त्री० [अ०] किमी वस्तु के टूटे फूटे अंगों को ठीक करने की क्रिया या भाव। दुरुम्ती। जीर्णोद्धार। जैसे, मकान की मरम्मत, घड़ी की मरम्मत।

मुहा०—मरम्मत करना = (१) टूटे फूटे अंशों को दुरुम्त करना या सँवारना। (२) पीटना। ठोकना। मारना।

मरयाद—मन्ना स्त्री० [सं० मर्यादा] दे० 'मर्यादा'। उ०—रहो मरयाद बोले तुम हमेशा, करेगा फजल सँ ई बात आगाह।—दक्खिनी०, पृ० ११६।

मरल—मन्ना पुं० [दश०] एक प्रकार की मछली। यह दो हाथ तक लंबी होती है और दलदलो या ऐसे तालाबों में पाई जाती है जिसमें घाम फूम अधिक उगता है।

मरल—वि० [हि० मरना का भोजपुरी रूप 'मृत'] मृत। मरा हुआ। उ०—मरल गौ कई वार जियाया। बहुतक अचरज तिन दिखनाया।—कवीर सा०, पृ० १५११।

मरवट—मन्ना स्त्री० [हि० मरना] वह माफी जमीन जो किसी के मारे जाने पर उसके लडके वालों को दी जाती है।

मरवट—मन्ना स्त्री० [दश०] पट्टे की कच्ची छाल जो निकालकर मुखाई गई हो। सन का उलटा।

मरवट—मन्ना स्त्री० [हि० मरवट] वे लकीरें जो रामलीला आदि के पात्रों के गालों पर चदन या रंग आदि से बनाई जाती हैं। उ०—धंधरी लाल जरकसी मारी सोधे भीनी चोली जू, मरवट मुख पै शिर पै सौरी मेरी दुलहिया भोली जू।—भारतेंदु प्र०, भा० २, पृ० ४४६।

मरवा—मन्ना पुं० [हि०] दे० 'मरुआ'।

मरवाना—क्रि० सं० [हि० मारना का प्रे० रूप] १ मारने का प्रेरणार्थक रूप। मारने के लिये प्रेरणा करना। २ बध कराना।

सयो० क्रि०—हालना।

३ दे० 'मराना'।

मरसा—मन्ना पुं० [सं० मारिप] एक प्रकार का माग जिसकी पत्तियाँ गोल भुर्रादार और कोमल होती हैं। उ०—मरसा (लाल साग) के बड़े बड़े पत्तों को देखकर मुह से लार टपकती है।—किन्नर०, पृ० ७०।

विशेष—इसके पेड़ तीन चार हाथ तक ऊँचे होते हैं। इसके डठलो और पत्तियों का साग पकाकर लोग खाने हैं। मरसा दो प्रकार का होता है। एक लाल और दूसरा सफेद। लाल मरसा खाने में अधिक स्वादिष्ट होता है। मरसा बरसात के दिनों में बोया जाता है और भादो कुआर तक इसका साग खाने योग्य होता है। पूरी बाढ़ के पहुँचने पर इसके सिरे पर एक मजरी निकलती है जो एक बानिश्त से एक हाथ तक लंबी होती है। उम समय इसके ठठल और पत्तियाँ भी कड़ी हो जाती हैं और देर तक पकाई जाने पर कठिनाई से गलती हैं। मजरी में सफेद मफेद छोटे फूल लगते हैं और फूलों के मुरभा जाने पर बीज पडते हैं। बीज छोटे, गोल, चिपटे और चमकीले काले रंग के होते हैं। यह बीज थोपवि में काम आते हैं। वैद्यक में इसके स्वाद को मधुर, इसकी प्रकृति शीतल और गुण रक्तपित्तनाशक,

वातकफवर्धक और विष्टभकारक लिखा है, और लाल मरसे को हल्का, चरपरा और सारक बताया गया है।

भरसिया—सज्ञा पुं [अ०] १ शोकमूचक कविता जो किसी की मृत्यु के सवध में बनाई जाती है। यह उर्दू भाषा में अनेक छंदों में लिखी जाती है। इसमें किसी के मरने की घटना और उसके गुणों का ऐस प्रभावोत्पादक शब्दों में वर्णन किया जाता है जिससे सुननेवालों में शोक उत्पन्न हो। ऐसी कविता प्राय मुहूर्त के दिनों में पढ़ी जाती है। उ०—इसे कजली क्यों, भरसिया कहना चाहिए।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३६२।

क्रि० प्र०—पढ़ना।—लिखना।—सुनाना।

२ सियापा। मरणशोक। रोना पीटना।

क्रि० प्र०—पढ़ना।

यौ०—भरसियाखवाँ = भरसिया पढ़नेवाला। भरसियाखवानो = भरसिया पढ़ने का कार्य। भरसिया पढ़ना।

भरहट (उ०)†—सज्ञा पुं [हि० भरघट] मसान। भरघट। उ०—कविरा मंदिर आपन नित उठि करता आल। भरहट देखी डरपता चोडे दीया जाल।—कवीर (शब्द०)।

भरहट (उ०)†—सज्ञा स्त्री [दृश्य] मोठ। उ०—मूंग माख भरहट की पहिती चनक कनक सम दारी जी।—रघुनाथ (शब्द०)।

भरहटा—सज्ञा पुं [सं० महाराष्ट्र] १ महाराष्ट्र देश का रहनेवाला। भरहटा। २ उन्तीस मात्राओं के एक मात्रिक छंद का नाम जिसमें १०, ८ और १२ पर विश्राम होता है तथा अंत में एक गुरु और लघु होता है। उ०—अति उच्च अगारनि वनी पगारानि जनु चितामणि नारि। बहुसत मख धूपनि धूपित अगनि हरि की सी अनुहारि। चित्री बहु चित्रान परम विचित्रिनि केशवदास निहारि। जनु विश्वरूप को विमल आरसी रची विरचि विचारि।—केशव (शब्द०)।

भरहटी—सज्ञा स्त्री [हि० महाराष्ट्री, प्रा० भरहटी, भरहठी] मराराष्ट्र की भाषा। मराठी। भरहटी। उ०—हिंदुस्तान में हिंदी, उर्दू, ब्रज, मारवाडी, भरहटा, गुजराती आदि अनेक भाषा बोलती जाती हैं।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० ६।

भरहट (उ०)†—सज्ञा पुं [सं० महाराष्ट्र, प्रा० भरहट, भरहठ] भरहटा। महाराष्ट्रीय। उ०—ताहन उधर गूढ न एस। भरहट देस वधु कुच जैस।—नद० ग्र०, पृ० ११८।

भरहठी—सज्ञा पुं [हि० भरघट] [वि० भरहठी] भरघट। श्मशान। उ०—फाका फरी ज्ञान का गदका बांधो भरहठी बाना।—कवीर श०, भा० १, पृ० ३८।

भरहठा—सज्ञा पुं [सं० महाराष्ट्र, प्रा० भरहठ] [स्त्री० भरहठिन] महाराष्ट्र देश का रहनेवाला। महाराष्ट्र। विशेष दे० 'महाराष्ट्र'।

भरहठी—वि० [हि० भरहठा] महाराष्ट्र या भरहठी से सवध रखनेवाला। भरहठी का। जैसे, भरहठी कपडा, भरहठी चाल।

भरहठी—सज्ञा स्त्री वह भाषा जो महाराष्ट्र देश में बोली जाती है। भरहठी की बोली। मराठी।

भरहवा—सज्ञा स्त्री [अ० भरहवह] धन्य। बहुत खूब। साधु। शावाम [को०]।

भरहम—सज्ञा पुं [अ०] श्लोपधियों का वह गाढ़ा और चिकना लेप जो घाव पर उसे भरने के लिये अथवा पीड़ित स्थानों पर लगाया जाता है। उ०—मसजिद लखि विमुनाथ ढिग परे हिये जो घाव। ता कहँ भरहम सरिस यह तुव दरसन नर-राव।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ६६६।

क्रि० प्र०—लगाना।

यौ०—भरहम पट्टी = (१) आघात की चिकित्सा। घाव पर भरहम और पट्टी लगाना। (२) किसी जीर्ण पदार्थ की थोड़ी बहुत मरम्मत।

भरहमत—सज्ञा स्त्री [अ०] १ अनुग्रह। दया। कृपा। २ नजर। उपहार। भेंट [को०]।

भरहला—सज्ञा पुं [अ० भरहलह] १ वह स्थान जहाँ यात्री रात के समय ठहर जाते हैं। टिकान। मजिल। पटाव। २ दिन भर की या १२ मील की यात्रा। लवो यात्रा। ३ किले के चारों ओर के गुंबद वा ऊँचा स्थान जहाँ से निगरानी और सवध किया जाय (को०)। ४ भूमेला। कठिन या मुश्किल काम। ५ भोपडी। ६ दर्जा। मरातिव।

मुहा०—भरहला तय करना = भूमेला निवटाना। कठिन काम पूरा करना। भरहला पढ़ना या मचना = भूमेला पढ़ना। कठिनता उपस्थित होना। भरहला डाखना = भगडा खडा करना।

यौ०—भरहलेदार = यात्रामार्ग की देखरेख करनेवाला।

भरहून—वि० [अ०] जो रेहन किया हो। गिरो रखा हुआ। (कच०)। उ०—कहे तू भूठ क्यूँ बोला है सपना। पिदर कूँ तूँ कर्या भरहून अपना।—दक्खिनी०, पृ० ३३६।

भरहूना—वि० [फा०] जो रेहन किया गया हो। जो गिरो रखा गया हो। जप्त, जायदाद भरहूना। (कच०)।

भरहूम—वि० [अ०] [वि० स्त्री० भरहूमा] १ स्वर्गवासी। मृत। विशेष—इस शब्द का प्रयोग किसी आदरणीय मृत व्यक्ति की चर्चा करते हुए उसके नाम के अंत में किया जाता है। २ क्षमा किया हुआ (फो०)।

भराठा—सज्ञा पुं [सं० महाराष्ट्र, प्रा० भरहट] महाराष्ट्र देश का निवासी। महाराष्ट्रीय।

भराठी—सज्ञा स्त्री [सं० महाराष्ट्र] महाराष्ट्र की भाषा। महाराष्ट्री। मराठी भाषा।

भराठी—वि० महाराष्ट्र से सवधित। महाराष्ट्रीय।

भरातिव—सज्ञा पुं [अ०] १ दरजा। पद। २ उत्तरोत्तर आनेवाली अवस्थाएँ।

मुहा०—भरातिव तै करना = किसी विषय के सारे अंगों का निवटारा करना।

३. पृष्ठ। तह। ४. मकान का खड। तल्ला। उ०—प्रति उतग

मुदर शिक्षणाना मात मरातिववारे ।—रघुनाथ (शब्द०) ।
५ ध्वजा । भडा । उ०—जामवत हनुमत नल नील मरातिव
साथ । छरी छत्रीनी शोभिजै दिक्पालन के हाथ ।—केशव
(शब्द०) ।

यौ०—माही मरातिव=एक प्रकार की ध्वजा जो मुसलमान
राजाओं की सवारी के आगे हाथियों पर चलती है । ये ध्वजाएँ
सभ्या या प्रकार मे सात होती है, जिनपर क्रमशः सूर्य, पञ्जा,
तुला, नाग, मछली, गोल तथा सूर्यमुखी के चिह्न होते हैं ।

मराना—क्रि० सं० [हि० मारना फा प्र०रूप] १ मारने के लिये
प्रेरणा करना । मरवाना । उ०—(क) पिता तुम्हारे राज
कर भोगी । पूजै विप्र मरावै जोगी ।—जायमी (शब्द०) ।
(ख) पच कहै सिव मती विवाही । पुनि अरवडेरि मराएन्हि
नाही ।—तुलसी (शब्द०) । २ किसी को अपने ऊपर आघात
करने के लिये प्रेरणा करना या करने देना । ३ गुदाभजन
कराना । (वाजारू) ।

मराय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एकाह यज्ञ । २ एक प्रकार का साम ।
मरायल^(१)—वि० [हि० मारना + आचल (प्रत्य०)] १ जो किसी
से कई बार मार खा चुका हो । पीटा हुआ । उ०—सठहु
सदा तुम्हें मार मरायल । कहि अम कोपि गगन पथ धायल ।
—तुलसी (शब्द०) । २ नि सत्व । सत्वहीन । जैसे, मरायल
अन्न, मरायल पीषा । ३ मरियल । निर्बल । निर्जीव । ४.
घाटा । टोटा ।

क्रि० प्र०—आना ।—पहना ।

मरार'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खलिहान ।

मरारा'^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] कोयरी । काछी ।

मराल'^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मराली] १ एक प्रकार की
वस्तु जो हलकी ललाई लिए मफेद रंग की होती है । २
घोडा । ३ हाथी । ४ कारडव नामक पक्षी । ५ हंस ।
उ०—मेवक मन मानस मराल से । पावन गग तरंग माल से ।
—तुलसी (शब्द०) । ६ अनार की वाटिका । ७ काजन । ८
बादल । ९ दुष्ट । खल ।

मराल'^२—वि० मृदु । कोमल । मुलायम [क्रि०] ।

मरालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हंस पक्षी [क्रि०] ।

मरालिका—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिकारिके का पीषा या उसकी
फनी [क्रि०] ।

मराली^(१)—वि० [सं० मराल + हि० ई (प्रत्य०)] हंस का । हंस
सम्बन्धी । विवेक और ज्ञान का । उ०—मैं पामर गुणहीन
हुकार्ना । तुम्हें दीन्हें भोहि पथ मराली ।—कबीर सा०
पृ० ४३८ ।

मरिन्ड^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] १ २० 'मरिन्द', 'मरिन्द' । २ दे०
'मरद' ।

मरिन्डम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मन्ड + स्वम्भ, हि० मन्डखभ] दे० 'मन्डखभ' ।

मरिन्ड—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिरिच । काली मिरिच । उ०—नीपर

मरिच मगलिय आनहु । शूठी हरर बहेर बखानहु ।—प०
रासो०, पृ० १७ ।

मरिचा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरिच] बड़ी लाल मिरिच । विशेष—दे०
'मिरिच' ।

मरिजीवा^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मरजीवा' । उ०—मुदर
वैठि सकै नहि जीवत दै डुबकी मरिजीवहि जाही ।—मुदर०
प्र०, भा० १, पृ० ७ ।

मरियम—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ वह बालिका जिमका विवाह न
हुआ हो । कुमारी । कन्या । २ पतिव्रता और साध्वी स्त्री ।
३ ईसा मसीह की माता का नाम ।

विशेष—कहते हैं, इन्हे कौमार अवस्था मे ही विना किसी पुरुष के
सयोग के, ईश्वरी माया से, गर्भ रह गया था जिससे महात्मा
मसीह का जन्म हुआ था ।

मरियम का पञ्जा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मरियम + हि० पञ्जा] एक प्रकार
की मुगधित वनस्पति जिसका आकार हाथ के पंजे का सा
होता है ।

विशेष—ऐसा प्रसिद्ध है, कि ईसा मसीह की माता मरियम ने प्रसव के
समय इस वनस्पति पर हाथ रखा था, जिससे इसका आकार
पंजे का सा हो गया । इसी कारण इसके सबध मे यह भी
प्रसिद्ध हो गया है कि प्रसव पीडा के समय गर्भवती स्त्री के
सामने इसे रख देने से पीडा शांत हो जाती है और सहज मे
तथा शीघ्र प्रसव हो जाता है ।

मरियल—वि० [हि० मरना + इयल (प्रत्य०)] बहुत दुर्बल ।
दुबला और कमजोर ।

यौ०—मरियल टट्टू=बहुत सुस्त या कमजोर आदमी ।

मरिया'^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरना] १ वह रस्ती जो खाट मे
पायताने की ओर उचन लगाकर ऊपर से एक पट्टी से दूसरी
पट्टी तक वाने की तरह बाँधी जाती है । २ नाव में वह तस्ला
जो उसके पंढे मे गूढे के नीचे वेडे बल में लगा रहता है ।
मढिया ।

मरिया'^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मारना] लोहे की एक छोटी हथौडी जिससे
धातुओं पर खुदाई का काम करनेवाले कलम को ठोकते हैं ।

मरी'^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मारी] वह रोग जो स्पर्शदोष से फैलता
है और जिसमे एक साथ बहुत से लोग मरते हैं । मारी ।
उ०—इस ही बीच ईति विस्तरी । परी आगरे पहिली मरी ।—
अर्व०, पृ० ५२ ।

मरी'^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मारना] एक प्रकार का भूत । मरही ।

विशेष—लोगों का विश्वास है कि यह किमी ऐसी दुष्ट स्वभाव-
वाली स्त्री की प्रेतात्मा होती है जो किसी रोग, आघात अथवा
किसी अन्य कारणावश पूर्णायु को न पहुँचकर अल्पायु मे
मरी हो ।

मरी'^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] देगी सागूदाने का पेड ।

विशेष—यह भारतवर्ष तथा लका सिगापुर आदि द्वीपों मे
उत्पन्न होता है । यह पेड देखने मे बहुत मुदर मालूम होता है ।

इससे ताड़ी निकाली जाती है जिसे लोग पीने हैं और जिससे गुड़ भी बनाते हैं। इसकी कोमल वाली या मजरी की तरकारी बनाई जाती है। इसके पुराने स्कव मे के गूदे से मागूदाना निकलता है जो पानी में पकाकर खाया जाता है या पीसकर जिसकी रोटियां बनाई जाती है, और ग्रेसे से कूंची, ब्रुण, रस्ती और जाल बनाए जाते हैं। इसकी लकड़ी मजबूत और टिकाऊ होती है। इसे भेरवा भी कहते हैं।

मरीच'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मरिच', 'मिरिच' [को०]।

मरीच(पु)'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मारीच] २० 'मारीच'। उ०—कचन मृग रूप मरीच कियो, सीता मुख आगल नीसरियो।—रघु० ६०, पृ० १३३।

मरीचि'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक ऋषि का नाम।

विशेष—पुराणों में इन्हें ब्रह्मा का मानसिक पुत्र लिखा है, एक प्रजापति माना है और सप्तर्षियों में गिनाया गया है। किसी किसी पुराण में इनकी स्त्री का नाम 'कला' और किसी किसी में 'सभूति' लिखा है।

२ एक मरु का नाम। ३ एक ऋषि का नाम जो भृगु के पुत्र और कश्यप के पिता थे। ४ दनु के एक पुत्र का नाम। ५ प्रियव्रतवशी एक राजा का नाम। ६ एक प्राचीन मान जा छह त्रसरेणु के बराबर होता है। ७ एक दंत्य का नाम। ८ कृष्ण का एक नाम (को०)। ९ एक पुरातन स्मृतिकार का नाम (को०)। १० कृपण। कदर्य (को०)।

मरीचि'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ किरण। उ०—(क) अति मुकुमारी वृषभान की दुलारी सो कैसे सहै प्यारी मरीचि मारतड की।—सरलाबाई (शब्द०)। (ख) किति मुधा दिग भित्त पखारत चद मरीचिन को करि कूचो।—मतिराम (शब्द०)। (ग) रघुनाथ पिय बस करिवे को चली बाल मुख को मरीचि जल दिसि मडि कै लई।—रघुनाथ (शब्द०)। २ प्रभा। काति। ज्योति। उ०—कीर्षो मृगलोचन मरीचिका मरीचि किर्षो रूप की रुचिर रुचि शुचि सो दुराई है।—केशव (शब्द०)। ३ मरीचिका। मृगतृष्णा। उ०—बीच मरीचिनु के मृग लौं श्रव धारै न रे सुन काहू नरिद के।—देव (शब्द०)।

मरीचिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मृगतृष्णा। सिरोह। २ किरण। उ०—वारिज बरत विन वारे वारि वारु बीच बीच बीच बीचिका मरीचिका भी छहरी।—देव (शब्द०)। (ख) चहचही सेज चहूँ चहक चमेलिन सो, बेलिन सो मजु मजु गुजन मलिद जाल। तैसेई मरीचिका दरीचिन के दीवे ही में, छपा की छवीली छवि छहरत तत्काल।—देव (शब्द०)।

मरीचिगर्भ'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. सूर्य। २ दक्षसावर्णि मन्वतर में होनेवाले एक प्रकार के देवताओं का गण।

मरीचिगर्भ'—वि० प्रकाशकणों से युक्त [को०]।

मरीचिजल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगतृष्णा।

मरीचितोय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगतृष्णा।

मरीचिप—वि० [सं०] प्रकाश कणों का पान करनेवाले (वानखि ऋषि)।

मरीचिमान—वि०, सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरीचिमात्] २० 'मरीचिमानी'

मरीचिमाली'—वि० [सं० मरीचिमालिन्] [वि० स्त्री० मरीचिमालिनी] किरणयुक्त। ज्योतिर्मय। चमकना हुआ [को०]।

मरीचिमाली'—सञ्ज्ञा पुं० सूर्य।

मरीची'—वि० [सं० मरीचिन्] [वि० स्त्री० मरीचिनी] किरण युक्त। जिममें किरणों हो।

मरीची'—सञ्ज्ञा पुं० १ सूर्य। २ चंद्रमा।

मरीज वि० [अ० मरीज्] रोगी। रोगग्रस्त। बीमार।

मरीजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मरीजह्] बीमार स्त्री। रोगिणी [को०]।

मरीना—सञ्ज्ञा पुं० [स्पेनी० मेरिनो] एक प्रकार का बहुत मुलायम ऊनी पतला कपड़ा जो मरीनो नामक भेड़ के ऊन से बनता है।

मरुंडा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मरुण्डा] उच्च ललाटवाली स्त्री [को०]।

मरु'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वह भूमि जहाँ जल न हो और केवल बलुआ मैदान हो। मरुस्थल। निर्जल स्थान। रेगिस्तान मरुभूमि। २ वह पर्वत जिममें जल का अभाव हो। ३ मारवाड और उसके आसपास के देश का नाम। ४ मरुप्र नामक पौधा। ५ एक सूर्यवशी राजा का नाम। ६ तरकासुर के एक सहचर असुर का नाम। ७ कुरवक नामक पौधा।

मरु(पु)'—वि० [सं० मेरु या हि० मरना] कठिन। दुरुह। दे० 'मरु'। उ०—कल्प समान रैन तेहि बाढी। तिल तिल मरु जुग जुग पर गाढी।—जायसी (शब्द०)।

मरुअटि'—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] वे रोली के टोके जो हल्दी चढ़ जाने के बाद मुँह पर लगाए जाते हैं। उ०—भूआ भेना करे आरती, माथें मरुअटि लगवामे, ऊपर चामर चुपटामे।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ६३५।

मरुआ'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुव] वनतुलसी या बवरी की जाति के एक पौधे का नाम। नागबेल। नादबोई। उ०—अति व्याकुन भइ गोपिका हूँदत गिरिवारी। वृभक्ति है वनवेलि सो देव वनवारी। वृष्णा मरुआ कुद नौ कहे गोद पमारी। बकुल बहुल बट कदम पै ठाढी ब्रजनारी।—सूर (शब्द०)।

विशेष—यह पौधा बागों में लगाया जाता है। इसकी पत्तियां बवरी की पत्तियों से कुछ बड़ी, नुकीली, मोटी, नरम और चिकनी होती हैं जिनमें से उग्र गंध आती है। इसका दल देवताओं पर चढ़ाए जाने है। इसका पेट डब दो हाथ ऊंचा होता है और इसकी फुनगी पर कातिक अग्रहन में तुनसी की भांति मजरी निकलती है जिसमें नन्ह नन्ह सफेद फूल लगते हैं। फूलों के भड़ जाने पर बीजों से भरे हुए छोटे छोटे वाजकोश निकल आते हैं जिनमें से पकन पर चढ़ते बीज निकलते हैं। ये बीज पानी में पहन पर ईसवगोन की तरह फूल जाते हैं। यह पौधा बीजों से उगता है, पर यदि इसकी कोमल टहनी या फुनगी लगाई जाय तो वह भी लग जाती है। रग के भेद

मरुश्री दो प्रकार का होता है, काला और सफेद। काले मरुण का प्रयोग श्लोपधि रूप में नहीं होता और केवल फूल आदि के साथ देवताओं पर चढ़ाने के काम आता है। सफेद मरुश्री श्लोपधियों में काम आता है। बंधक में यह चरपरा, कड़ुआ, रूखा और रुचिकर तथा तीखा, गरम, हलका, पित्तवर्धक, कफ और वात का नाशक, विष, कृमि और कुष्ठ रोग नाशक माना गया है।

पर्या०—मरुवक। मरुत्तक। फणिज्जक। प्रस्थपुष्प। समीरण। कुलसौरभ। गधपत्र। खटपत्र।

मरुश्री—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुड या मेरु या अनु०] १ मकान की छाजन में सब स ऊपर की वल्ली जिसपर छाजन का ऊपरी सिरा रहता है। बंडेर। २ जुलाहों के करवे में लकड़ी का वह टुकड़ा जो डेढ़ बालिशत लंबा और आठ अंगुल मोटा होता है और खत की कडी में जड़ा होता है। ३ हिंडोले में वह ऊपर की लकड़ी जिसमें हिंडोला लटकाया जाना है या हिंडोले का लटकाने की लकड़ी जड़ी या लगाई जाती है। उ०—कचन के रख मयारि मरुश्री डंडी सचित हीरा बीच लाल प्रवाल। रेमन बुनाई नवरतन लाई पालनो लटकन बहुत पिरोजा लाल।—सूर (शब्द०)।

मरुश्री—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मरुड] मरुड।

मरुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मोर। २ एक प्रकार का मृग।

मरुकच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बृहत्संहिता के अनुसार एक प्रदेश का नाम। विशेष—यह दक्षिण दिशा में है और हस्त, चित्रा और स्वाती नक्षत्रों के अधिकार में माना गया है।

मरुकातार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुकान्तार] बालू या रेत का मैदान। रेगिस्तान। मरुभूमि।

मरुकुच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुकुत्स, प्रा० मरुकुच्च] दे० 'मरुकुत्स'।

मरुकुत्स—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बाराही महिता के अनुसार एक देश का नाम जो कूर्म विभा के अनुसार पश्चिमोत्तर दिशा में है और जो उत्तरापाड, श्रवण और घनिष्ठा नक्षत्रों के अधिकार में है।

मरुचीपट्टन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बृहत्संहिता के अनुसार दक्षिण दिशा के एक देश का नाम जो हस्त, चित्रा और स्वाती के अधिकार में है।

मरुज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नख नामक मुगाधेत द्रव्य। २ बांस का कल्ला।

मरुजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] इद्रायण की जाति की एक लता जो मरुस्थल में होती है।

मरुजाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कपिकच्छु। केराच। कौछ।

मरुटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसका ललाट ऊंचा हो।

मरुत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक देवगण का नाम।

विशेष—वेदों में इन्हें रुद्र और वृषिन का पुत्र लिखा है और इनकी संख्या ६० की तिगुनी मानी गई है, पर पुराणों में इन्हें

कश्यप और दिति का पुत्र निर्या गया है जिसे उसके वैमात्रिक भाई रुद्र ने गर्भ काटकर एक से उनचाम टुकड़े कर डाले थे, जो उनचाम मरुद् हुए। वेदों में मरुद्गण का स्थान अतरिक्त लिखा है, उनके घोड़े का नाम 'पृशित' बतलाया है तथा उन्हें इद्र का मखा लिखा है। पुराणों में इन्हें वायुकोण का दिक्पाल माना गया है।

२ वायु। वात। हवा। ३ प्राण। ४ हिरण्य। मोना। ५ एक माध्य का नाम। ६ मोदर्य। ७ बृहद्रथ राजा का एक नाम। ८ मरुपा। ९ ऋत्विक्। १० गठपतन। ११ श्रमवर्ग। १२ दे० 'मरुत्'।

मरुतजरा(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुत् + जन] राज्ञम। उ०—कत कमला कलह रटक पाणा करे, धाव बाणा क कटक धाया, मरुतजरा मोह मू।—रघु० १०, पृ० १३१।

मरुतवान(७) - सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुत्वत्] दे० 'मरुत्वान्'।

मरुत्कर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजमाप। उडद।

मरुत्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक चक्रवर्ती राजा जो चंद्रवर्षी महाराज करधर के पुत्र अवीक्षित का पुत्र था।

विशेष—इसने अनेक बार बड़े बड़े यज्ञ किए थे जिनमें समस्त यज्ञपात्र सोने के बनवाए थे। इसके प्रभावती, सीवीरा, मुकेशी, केकयी, मरुध्री, वसुमती और मुद्योभना नाम की मात रानियां थी, जिनसे अठारह लड़के उत्पन्न हुए थे। भागवत में इसे यदुवशी और करधर का पुत्र लिखा है।

मरुत्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मरुश्री नामक पीषा।

मरुत्तनय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हनूमान्। २ भीमसेन [को०]।

मरुत्पट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पाल [को०]।

मरुत्पति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इद्र।

मरुत्पथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आकाश।

मरुत्पाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इद्र।

मरुत्पलव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंह। शेर।

मरुत्फल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घोला।

मरुत्वती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मरुत्वती] धर्म की पत्नी का नाम। यह प्रजापति की कन्या थी।

मरुत्वर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुत्वर्मन्] आकाश [को०]।

मरुत्वान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुत्वत्] १ इद्र। २ महाभारत के अनुसार देवताओं के एक गण का नाम जो धर्म के पुत्र माने जाते हैं। २ हनूमान्।

मरुत्सख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ इद्र। २ अग्नि।

मरुत्सहाय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अग्नि।

मरुत्सुत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हनुमान। २ भीम।

मरुत्सुतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हनुमान। २ भीम [को०]।

मरुत्तोम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का एकाह यज्ञ।

मरुथल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुस्थल] दे० 'मरुस्थल'। उ०—सूख गए

सर, सरित, क्षार निस्पीम जलघ का जल है। ज्ञानघूर्ण पर चढा मनुज को मार रहा मरुथल है।—नील०, पृ० ८४।

मरुद्—सञ्ज्ञा पुं० [स०] 'मरुत्' का समासगत रूप [को०]।

मरुदाढोल—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ धौकनी। २ प्राचीन काल की एक प्रकार की धौकनी जो हरिन या भैस के चमड़े से बनती थी।

मरुदिष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [स०] गुग्गुल। गुग्गुल।

मरुदेव—सञ्ज्ञा पुं० [म०] ऋषभदेव के पिता का नाम।

मरुद्गण—सञ्ज्ञा पुं० [म०] देवगण जो पुराणों में ४६ माने जाते हैं। विशेष दे० 'मरुत्-१'।

मरुद्रथ—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ घोडा। २ वह यान जिसमें देव-मूर्तियाँ रखकर घुमाई जाती हैं। देवयान [को०]।

मरुद्वर्त्म—सञ्ज्ञा पुं० [म०] आकाश।

मरुद्वधा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] पजाब की एक नदी का वैदिक नाम।

मरुद्बाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ धूम्रा। २. आग।

मरुद्विप—सञ्ज्ञा पुं० [स०] ऊँट।

मरुद्वीप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह उपजाऊ और सजल हरा भरा स्थान जो मरुस्थल में हो। ओसिस।

मरुद्वेग—सञ्ज्ञा पुं० [स०] एक दैत्य का नाम।

मरुधन्वा—सञ्ज्ञा पुं० [स० मरुधन्वन्] १ मरुस्थल। निर्जल प्रदेश। २ हृदीवर नामक विद्याभर के पुत्र का नाम।

मरुधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मारवाड देश। उ०—प्यासे दुपहर जेठ के थके सवे बल सोधि। मरुधर पाय मतीरहू मारु कहत पयोधि।—विहारी (शब्द०)। २ मरुभूमि। मरुस्थल।

मरुन्माला—सञ्ज्ञा पुं० [स०] पृक्का नाम की लता। असवर्ग।

मरुभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] बालू का निर्जल मैदान जहाँ कोई वृक्ष या वनस्पति आदि न उगती हो। रेगिस्तान।

मरुभूमि—सञ्ज्ञा पुं० [स०] करील का पेड।

मरुमरीचिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मरु + मरीचिका] दे० 'मृगतृष्णा'। उ०—भारी मरुमरीचिका की सी ताक रही उदास आकाश।—अपरा, पृ० १०८।

मरुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूर्वा] गोरचकरा।

मरुरना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मरुरना] 'मरुरना' का अकर्मक रूप। ऐँठना। बल खाना। उ०—(क) तीखी दीठ तूख सी पतूख सी अहरि अग ऊख सी मरुरि मुख लागति मरुख सी।—देव (शब्द०)। (ख) मरुरत अगन अमर रतरग केश मरुरत नाथ देव जीति कै जगत है।—देव (शब्द०)।

मरुल—सञ्ज्ञा पुं० [स०] जगली वृत्तक की एक जाति का नाम। कारडव।

मरुव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मरुआ। २ राहु (को०)।

मरुवक—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ एक कंटीले पेड का नाम जिसे मनी

कहते हैं। २ मरुआ। नागदीना। ३ तिल का पीधा। ४ व्याघ्र। वाघ। ५ राहु।

मरुवट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मरुवट'। उ०—मौर वँध्यो सिर कानन कुडल मरुवट मुखहि मुभाएँ।—नद० ग्र०, पृ० ३४६।

मरुवा—सञ्ज्ञा पुं० [स० मरुवक] दे० 'मरुआ'। उ०—सुभग सेज पदुली मुख बाढ्यो मरुवा वेलिन प्राची कोरै। नद० ग्र०, पृ० ३७६।

मरुसम्भव—सञ्ज्ञा पुं० [स० मरुसम्भव] एक प्रकार की छोटी मूली।

मरुसम्भवा—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मरुसम्भवा] १ महेद्रवाहणी। २ एक प्रकार का खैर जिसका पेड बहुत छोटा होता है। ३. छोटा बमास। जूद्र जवास। ४ एक प्रकार का कनेर।

मरुसाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मरसा'।

मरुस्थल—सञ्ज्ञा पुं० [म०] बालू का मैदान जिसमें निर्जल होने के कारण कोई वृक्ष या वनस्पति न उगती हो। मरुभूमि। रेगिस्तान। उ०—नवकोटि मरुस्थल वीर वर। दश अठु सुअर्बुद राज घर।—पृ० रा०, १२।४३।

मरुस्था—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] छोटा बमास।

मरु(पु)—वि० [स० मरु या हि० मरना] कठिन। दुरूह।

मुहा०—मरु करि के या मरु करि(पु) = कठिनाई से। ज्यो त्यो करके। बहुत मुश्किल से। उ०—(क) ता कहँ ती अब लो वहराइ कै राखी बसाई मरु करि मै है।—केअव (अब्द०)। (ख) देह में नेक संभार रह्यो न यहाँ लगी भाजि मरु करि भाई।—मति० ग्र०, पृ० २८६। (ग) अंसुआ ठहरात गरी घहरात मरु करि आधिक बात कही।—देव (अब्द०)। (घ) चौस तो वीत्यो मरु करिके अब आई है राति मो कैसे वीतिहै।—(शब्द०)।

मरुक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ एक प्रकार का मृग। २ मयूर। मोर। ३ मेढक (को०)।

मरुद्ववा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. जवास। २ कपास। ३ एक प्रकार का खैर।

मरुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गोरचकरा।

मरुर(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरोड़] पीडा। उ०—भरति मरुरनि विमूरनि उदेग वढि चित चरपटी मति चिता पागिए रहै।—घनानद, पृ० ५८७। २ दे० 'मरुरा'।

मरुर—वि० ऐँठवाला। बली। उ०—जुरे रजपुत्त मरुद मरुर।—प० रासो, पृ० ४१।

मरुरा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मरोड़] ऐँठन। बल। मरोड।

मुहा०—मरुरा देना = बल देना। मरोडना। उमेठना। उ०—मुख के पवन परस्पर मुखवत गहे पानि पिय जुरो। वृभक्ति जानि मन्मथ चिनगी फिर मानो दिया मरुरो।—सूर (शब्द०)।

मरुल—सञ्ज्ञा पुं० [म० मूर्वा] गोरचकरा। मरुर।

मरेठी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरुना + ऐँठना] वह रस्मी जिससे हेगा

या पटेला बाँधकर खेत में गीँचा या चलाया जाता है। वरहा।
वेड। गुरिया। वखर।

मरेठी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुलेठी, तुल० म० मधुयष्टि] दे० 'मुलेठी'।
मरेरना—क्रि० स० [हि० मरोरना] पीडित करना। व्यथा पहुँचाना।
उ०—कवि ठाकुर वे पिय दूर वसै तन मैं मरोर मरेरती मी।
—ठाकुर०, पृ० ७८१।

मरोड़—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरोड़ना] १ मरोड़न का भाव या क्रिया।
उ०—मानत लाज लगाम नहिं नेकु न गहत मरोर। होत
तोहि लखि बाल के दृग तुग्य भँह जोर।—मतिराम
(शब्द०)।

मुहा०—मरोड़ खाना = चक्कर खाना। उ०—रहाय वमन
पहिरन लगी वम न चलयो चित चोर। खाय मरोड़ खडे
गिरथो गडे कडे कुच कोर।—राममहाय (शब्द०)। मन में
मरोड़ करना = मन में दुराव या कपट रखना। कपट करना।
उ०—माधू श्रावत दोख के मन में करत मरोर। मो होवगा
चूडडा वसे गाँव की ओर।—कबीर (शब्द०)। मरोड़ की
बात = पेंचदार बात। घुमाव की बात।

२ मरोड़ने से पडा हुआ घुमाव। ऐँठन। बल। ३ उद्वेग आदि
के कारण उत्पन्न पीडा। व्यथा। क्षाम। उ० (क) घिरि
आए चहुँ ओर घन तेहि तकि मारेम सार। मोर सोर मुनि
होत री तन में श्रयिक मरोर।—राममहाय (शब्द०)। (ख)
भिलत भक्कोर रहै जावन को जोर रहै समद मरोर रहै शां रहै
तव मी।—पद्माकर (शब्द०)। (ग) इक ता मार मरोर ते
मरति भरति है मांस। दूजे जारत मास री यह मुचि लीं मुचि
मास।—राममहाय (शब्द०)।

मुहा०—मरोड़ खाना = उलझन में पडना। उ०—गुलफनि लो
ज्यो त्यो गयो करि करि साहम जोर। फिर न फिरघा मुखान
चापि चित श्रति खात मरोर।—राममहाय (शब्द०)।

४ पेट में ऐँठन और पीडा होना। पेट ऐँठना। ५ घमड। गर्व।
उ०—आए आप भली कही भेटन मान मरोर। दूर करो यह
देखिहै छला छिगुनिया छोर।—विहारी (शब्द०)। ६ क्रोध।
गुस्सा।

मुहा०—मरोड़ गहना = क्रोध करना। उ०—रह्यो मोह मिलना
रह्यो यो कहि गहँ मरोर। उत दै नखिहि उराहनो इत
चितई मो ओर।—विहारी (शब्द०)।

विशेष—पुरानी कविताओं में प्रायः 'मरोड़' के स्थान में 'मरोर'
ही पाया जाता है।

मरोड़ना^१—क्रि० स० [हि० मोड़ना] १ एक ओर से घुमाकर
दूसरी ओर फेरना। बल डालना। ऐँठना। उ०—(क) नाँह
मरोरे जात ही मोहि सोवत लियो जगाय। कहै कबीर पुकारि
कँ यहि पँडे ह्वँ कँ जाय। कबीर (शब्द०)। (ख) गोड चाप
नँ जीभ मरोरी। दधि ढरकायो भाजन फोरी।—सूर (शब्द०)।
(ग) कोपि कूदि दोउ घरेसि वहीरी। महि पटकत भजे भुजा
मरोरी।—तुलसी (शब्द०)। (घ) मोहि भ्रुकभोरि डारी

मुच को मरोर डारी तोरि डारी कमनि त्रिधोरि डारी वेनी
त्यो।—पद्माकर (शब्द०)।

क्रि० प्र०—देना।—डालना।—पड़ना।

मुहा०—अग मरोड़ना = अंगुठा उठाना। उ०—मव अग मरोरि
पुरो मन में भरि पूरि रही रम में न भई। गुमान (शब्द०)।
भौंह मरोड़ना या दृग (आदि) मरोड़ना = (१) भ्रूभंग करना।
श्राँख से इशारा करना या कनकों मारना। उ०—(क) अतर
में पति की मुरति गहि गहि गहृषि गुनाह। दृग मरोरि मुप मोरि
तिय छुवन देत नहिं टाह।—पद्माकर (शब्द०)। (ग) पान दिवो
हसि प्यार मो प्यारो वडू लखि द्यो हँमि भौंह मरोरी।—देव
(शब्द०)। (२) नाक भौंह चटाना। भाँह सिफोटना। उ०—
(क) हौ हँ गही पडुमाकर दीरि ना भौंह मरोरत मेज ना
आई।—पद्माकर (शब्द०)। (ख) मुनि मोतिन के गुन की
चरचा द्विज जू तिय भौंह मरारन लागी।—द्विजदेव (शब्द०)।

२ ऐँठकर नष्ट करना या मार डालना। उ०—(क) महावीर
वापुरे बगकी बाँह पीर वयो न तकिनी ज्यो लात घात ही
मरोर मारियो। तुलसी (शब्द०)। (ख) मोटि मारयो
कलह वियोग मारयो वोरि कँ मरोरि मारयो अमिमान भरयो
भय मान्यो है।—केशव (शब्द०)। (ग) कपि पुनि उपवन
वारिहि तोरी। पच मेनपति सेन मरोरी।—पद्माकर (शब्द०)।

क्रि० प्र०—डालना।—देना।

३ पीटा देना। दुख देना। वेदना उत्पन्न करना। उ० (क)
वार वधू पिय पथ लखि अंगरानी अग मोरि। पीडि रही
परयक मनु डारी मदन मरोरि।—मतिराम (शब्द०)। (ख)
एक आनी गई कहि कान में आइ परी जहाँ मैं मरोरी गई।
—वेणो (शब्द०)। ४ मलना। मीजना। ममनना।

मुहा० हाथ मरोड़ना(पु) = हाथ मलना। पछताना। उ०—
(क) अरव पछताव दरव जन जोरी। करहुँ स्वर्ग पर हाथ
मरोरी।—जायसी (शब्द०)। (ख) पुष्प पुरातन छाडि कर
चली आन के साथ। लोभो मगत वीडुडी खडी मरोरह हाथ।
—दादू (शब्द०)।

विशेष—पुरानी कविताओं में 'मरोड़ना' का रूप प्रायः 'मरोरना'
ही पाया जाता है।

मरोड़ना^२—क्रि० अ० पेट ऐँठना। पेट में ऐँठन उत्पन्न होना।

मरोड़फलो—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरोड़ + फली] एक प्रकार की फली
जो प्रायः पेट के मरोड़ के लिये गुणकारी होती है। मुर्दा।
अवतरनी।

मरोड़ा—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरोड़ना] १ ऐँठन। मरोड़। उभेठ।
बल। २ पेट की वह पीडा जिसमें अदर की ओर कुछ ऐँठन
सी जान पडती हो।

विशेष—यह एक रोग है जिसमें मलोत्सर्ग के समय पेट में ऐँठन
सां होती है और प्रायः कोष्ठवद्ध रहता है। कभी कभी श्राव
के साथ भी मरोड़ होता है।

क्रि० प्र०—उठना।—पड़ना।

मरोड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरोड़ना] १. एँठन । घुमाव । बल ।
मुहा०—मरोड़ी करना = खीचातानी करना । झधर उधर करना ।
 २ वह वक्ती जो आटे आदि मे सने हुए हाथो से मलने पर छूटकर निकलती है । ३ गुत्थी । गाँठ ।
मरोर—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मरोड़' ।
मरोरना^१—क्रि० सं० [हि०] दे० 'मरोड़ना' ।
मरोरी^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मरोड़ना] दे० 'मरोड़ी' ।
मुहा०—मरोरी करना = झधर उधर करना । खीचातानी करना ।
 उ०—नख सिख लों चित चोर सकल अंग चीन्हे पर कत करत मरोरी । एक सुनि सूर हहरघो मेरो सरबस अरु उलटी डोलो संग डोरी ।—सूर (शब्द०) ।
मरोलि—सञ्ज्ञा पुं० [म०] मकर की जाति का एक बड़ा सामुद्रिक जनु ।
मरोह^(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मरोर] मरोर । मसोस । उ०—सपन जान चित उठा मरोह । आँटि करेज पानि या लोहू ।—चित्रा०, पृ० ३६ ।
मरौर^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मरोड़' । उ०—उतही ते मोरति दगन आवत अलि जिहि और । सीखति है मुग्धा मनो भयमिस भुकुटि मरौर ।—शकुतला, पृ० १७ ।
मर्क—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ देह । शरीर । २ वायु । हवा । ३. शुक्राचार्य के एक पुत्र का नाम । ४ वदर ।
मर्कक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मकड़ा । २ हरगीला नामक पक्षी ।
मर्कट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वदर । बानर । उ०—मर्कट भूठि स्वाद नहि बहुरै घर घर रटत फिरौ ।—कवीर ग०, भा० २, पृ० १४० । २ मकड़ा । ३ हरगीला नामक पक्षी । ४ एक प्रकार का विष । ५ दोहे के एक भेद का नाम जिसमें सत्रह गुरु और चौदह लघु मात्राएँ होती हैं । जैसे,—ब्रज में गोपन सग में राधा देखे प्रियाम । ६ छप्पय का आठवाँ भेद जिसमें ६३ गुरु, २६ लघु कुल ८९ वर्ण या १५२ मात्राएँ या ६३ गुरु, २२ लघु कुल ८५ वर्ण या १४८ मात्राएँ होती है ।
मर्कटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बानर । वदर । २ मकड़ी । ३. एक प्रकार की मछली । ४ मड्डुआ नामक अन्न । ५ मकरा नामक घाम । ६ एक दैत्य का नाम ।
मर्कटतिन्दुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्कटतिन्दुक] कुपीलु ।
मर्कटपाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वदरो का राजा, सुग्रीव ।
मर्कटपिप्पली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अपामार्ग । चिचडा ।
मर्कटप्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खिरनी का पेड़ ।
मर्कटवास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मकड़ी का जाला ।
मर्कटशीर्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हिंगुल ।
मर्कटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. बानरी । बँदरी । २ मकड़ी । ३ भूरी केवाँच । कौँछ । ४. अपामार्ग । ५ अजमोदा । ६ एक प्रकार का करज । ७ छद्म के २ प्रत्ययो मे से अंतिम प्रत्यय ।
विशेष—इसके द्वारा मात्रा के प्रस्तार मे छद्म के लघु, गुरु, कला और वर्णों की सख्या का परिज्ञान होता है ।

मर्कटेंदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्कटेंदु] कुचिला ।
मर्कत^(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरकत] दे० 'मरकत' ।
मर्कब—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ मवारी । वाहन । २ घोडा । अश्व ।
 उ०—खाक बाव अरु आतरस लाया । सिकम माए कं मर्कब बनाया ।—सत० दरिया, पृ० १३ ।
मर्कर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भृगराज । भंगरा । भंगरैया ।
मर्करा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मुरग । २ तहखाना । ३. भाँडा । वर्तन । ४ वार्फ स्त्री ।
मर्ग—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] मीत । उ०—नालए रशक न हो वायसे दरदे सरे मर्ग । गँर के सर पै लगाता है वह मदल घिस्के ।—श्री-निवास ग०, पृ० ८६ ।
मर्घटी^(७)—वि० [हि० मरघट] मरघट का । श्मशान सबधी । मसान का । उ०—हाड की कठ मैं चार माला धरे । मर्घटी खोपडी मे अहारै करे ।—भारतेंदु ग०, भा० १, पृ० ५६ ।
मर्चा—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मिर्च' ।
मर्चे ट—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] व्यापार वाणिज्य करनेवाला । व्यापारी । सौदागर ।
मर्ज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मर्ज] १ रोग । व्याधि । वीमारी । २. आदत । लत । व्यसन । ३ दुःख । कष्ट [को०] ।
मर्जवान—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मर्जवान] किसान । कृपक । काश्तकार । उ०—यह मुगल सलतनत का मर्जवान था और उसका सरबराकार विनायक था ।—शुक्ल अग्नि० ग०, पृ० ६७ ।
मर्जादा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्यादा] दे० 'मर्यादा' । उ०—आज समुद्र ने अपनी मर्जादा छोड दी ।—श्रीनिवास ग०, पृ० ७३ ।
मर्जी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मर्जी] दे० 'मरजी' ।
मर्जू^१—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ घोवी । २ गुदाभजन करानेवाला । लौंडा [को०] ।
मर्जू^३—सञ्ज्ञा स्त्री० घोना । साफ करना [को०] ।
मर्त—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ मनुष्य । २. भूलोक ।
मर्तवा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मर्तवाह] १ पद । पदवी । जैसे,—आज कल वे अच्छे मर्तवे पर हैं । (शब्द०) ।
 क्रि० प्र०—चढ़ना ।—देना ।—पाना ।—बढ़ना ।—मिलना ।
 २ वार । बेर । दफा । जैसे,—मैं आपके मकान पर कई मर्तवा गया था, पर आप नहीं मिले ।
मर्तवान^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृद्भाण्ड, हि० अमृतवान] रोगनी वर्तन जिसमे अचार, मुरब्बा, धी आदि रखा जाता है । अमृतवान ।
मर्तवान^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश० वा बरसी] भारत की पूर्वी सीमा मे मटे हुए बर्मा राज्य के पेगू प्रदेश का एक नगर और ममुद्र की खाडी । रगून, मोलमिन वदरगाह इसी खाडी मे है ।
मर्त्य^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मनुष्य । २ भूलोक । ३ जरीर ।
मर्त्य^३—वि० मरणशील । नश्वर [को०] ।

मर्त्यधर्मा—वि० [सं० मर्त्यधर्मन्] मरणशील । नश्वर [को०] ।

मर्त्यभाव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानव स्वभाव । मानवीय प्रकृति [को०] ।

मर्त्यमुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मर्त्यमुखी] किष्कर ।

मर्त्यलोक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] पृथ्वी । मनुष्यलोक ।

मर्द^१—सञ्ज्ञा पुं० [फा०, तुल० सं० मर्त्त और मर्त्य] १ मनुष्य । पुरुष । आदमी । २ साहसी पुरुष । पुष्पार्थी मनुष्य । उ०—मर्द शीघ्र पर नवे मर्द बोली पहिचाने । मर्द खिलवे खाप मर्द चित्ता नहि आने । मर्द देय श्री लेय मर्द को मर्द बचावे । गहरे संकरे काम मर्द के मर्दे आवे । पुनि मर्द उन्ही को जानिए दुख सुख साथी कर्म के । बंताल कहे सुन विक्रम, तू ये लक्षण मर्द के ।—(शब्द०) ।

मर्दा०—मर्द आदमी = (१) भला आदमी । मय्य पुरुष । (२) वीर । बहादुर । मर्द बच्चा = वीर बालक । मर्द की दुम = अपने को बहादुर लगानेवाला (व्यग्य) । उ०—बड़े मर्द की दुम हो गेली बलाओ न जब जानें ।—फिसाना०, भा० ३, पृ० ६० ।

३ वीर पुरुष । योद्धा । जवान । उ०—चलेउ भूप गोनर्द वर्द बाहन समान बल । सग लिए बहु मर्द गर्द लखि होत अपरदल ।—गिरधरदास (शब्द०) । ४ पुरुष । नर । जैसे—मर्द और औरतें । ५ पति । भर्ता ।

मर्द^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पीसना । मर्दन [को०] ।

मर्दक—वि० [सं०] दे० 'मर्दक' ।

मर्दन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मर्दन' । उ०—(क) तेरा नाम तभी है, जब तू इस रावण सरीखे शत्रु का मुकुट अपने चरणतल में मर्दन करे ।—राधाकृष्ण (शब्द०) । (ख) मर्दनीक मर्दन करे बड़े घात तन बेल ।—पृ० २०, ६।१३० ।

मर्दना^७—क्रि० सं० [सं० मर्दन] १ अग्न आदि पर जोर से हाथ फेरना । मालिश करना । उ०—तन मर्दति पिय के तिया, दरमावति भुट रोप ।—पद्माकर (शब्द०) । २ उबटन तेल आदि को अग्नो पर चुपडकर बलपूर्वक चुपडे हुए स्थान पर बार बार हाथ फेरना जिससे अग्न में उसका सार या स्निग्ध अग्न घुस जाय । मलना । ३ चूर्णित करना । तोड फोड डालना । ४ मसककर विहृत करना । नाश करना । कुचलना । रौंदना । उ०—(क) कबहुं विटप भूधर उपारि पर सेन बरक्खे । कबहुं वाजि सन वाजि मदि गजराज करक्खे ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) खाऐसि फल अरु विटप उपारे । रच्छक मदि मदि महि डारे ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) जेहि शर मधु मद मदि महामुर मर्दन कीन्हो । मारधो कर्कश नरक शख हनि शख सुलीन्हो ।—केशव (शब्द०) ।

मर्दनीक^७—वि० [सं० मर्दन + हि० ईक (प्रत्य०)] मर्दन करनेवाला । मालिश करनेवाला । उ०—करि पावन पवित्र वर मोहन सुरभि सुतेल । मर्दनीक मर्दन करे, बड़े घात तन बेल ।—पृ० २०, ६।१३० ।

मर्दल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पखावज के ढग का एक प्रकार का वाजा

जिसका व्यवहार प्राय वगाल में कीर्तन आदि के समय होता है । मादल । मर्दल ।

मर्दानगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] दे० 'मर्दानगी' ।

मर्दाना—वि० [फा० मर्दानह्] १ पुरुष मवयो । २ मनुष्योचित । ३ वीरोचित । ४ वीर । माहर्मा । ५ पुरुष का मा । पुरुषवत् । यौ०—मर्दानावार = वीरोचित । मर्द का मा । मर्द की तरह ।

मर्दित—वि० [सं०] दे० 'मर्दित' ।

मर्दा—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] मर्दानगी । वीरता । बहादुरी ।

मर्दुआ—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मर्द + हि० उआ (प्रत्य०)] १ नाम का मर्द । तुच्छ मनुष्य । २ पति । ३ पराया वा गैर आदमी (स्त्रिया) ।

मर्दुम—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ मनुष्य । आदमी । २ ग्रान्त की पुतली । कनीनिका (नी०) ।

यौ०—मर्दुमशुमार = अत्याचारी । मर्दुमशुजारी = लोगों को सताना । अत्याचार । मर्दुमशुमेज = लोगों में धुलमिलकर रहनेवाला । मर्दुमशुपोर । मर्दुमशुनाम = बुढ़े भजे की परख करनेवाला । मर्दुमशुमारी ।

मर्दुमक—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] कनीनिका । ग्रान्त की पुतली [को०] ।

मर्दुमखोर—वि० [फा० मर्दुमखोर] मनुष्य को खा जानेवाला । नरभक्षी । उ०—लगा काटनेवालों और रक्तपिपायु मर्दुमखोरों के बीच आ फंसा है ।—प्रेम० और गोकों, पृ० ७ ।

मर्दुमशुमारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ किसी देश में रहनेवाले मनुष्यों की गणना । मनुष्यगणना । जनगणना ।

विशेष—यद्यपि भारतवर्ष के मद्रास और पंजाब प्रांतों में समय समय पर वहा के रहनेवालों की गिनती करने की प्रथा बहुत पूर्व से चली आती थी, पर पाश्चात्य देशों में नवीन प्रणाली की मनुष्यगणना की प्रथा रोम से आरंभ हुई है, जहाँ स्वतंत्र मनुष्यों के कुटुंब, संपत्ति, दान और मुसिया की परिस्थिति आदि का विवरण यथामय लिखकर मनुष्यों की गणना की जाती थी । इंग्लैंड में सबसे पहले मनुष्यगणना सन् १८०१ में प्रारंभ हुई और १८११ में आयरलैंड में गणना की चेष्टा हुई पर सन् १८५१ तक की मनुष्यगणना परिपूर्ण नहीं कही जा सकती । सन् १८६१ में नियमित रूप में इंग्लैंड, स्कॉटलैंड और आयरलैंड में मनुष्यगणना प्रारंभ हुई, जिसमें प्रत्येक गाँव और नगर के मनुष्यों की आयु, वैवाहिक सवध, पेशे, जन्मस्थान आदि का सविस्तार विवरण लिखा गया, और सन् १८७१ में व्यवस्थित रूप में राजकोय या इपीरियल मनुष्यगणना हुई । ठीक इसी समय अर्थात् सन् १८६७ और १८७२ में भारतवर्ष में भी मनुष्यगणना प्रारंभ हुई । पर उस समय काश्मीर, हैदराबाद, राजपुताने और मध्यभारत के देशी राज्यों में मनुष्यगणना नहीं हुई और गणना का प्रवध भी समुचित नहीं था । भारतवर्ष की ठीक ठीक मनुष्यगणना का आरंभ १८८१ से माना जा सकता है । यह मनुष्यगणना १७ फरवरी को हुई थी । तबसे प्रति दसवें वर्ष प्रत्येक गाँव और नगर में रहने-

वालो का नाम, आयु, वर्म, जानि, जिज्ञा, भापा, व्यापार
आदि का विवरण लिखा जाता है।

२. किमी स्थान में रहनेवाले मनुष्यों की मर्यादा। जनमर्यादा।
आवादी।

मर्दमी—सज्ञा स्त्री० [फा०] १ मरदानगी। पौष्टि। वीरता। २ पुस्तक।

क्रि० प्र०—दिसल्लाना।—रखना।

मर्दूद—वि० [फा०] दे० 'मरदूद'। उ०—कौन मर्दूद कह मकता
है।—सैर कु०, पृ० १२।

मर्दे आदमी—सज्ञा पु० [फा०] शरीर वा सज्जन व्यक्ति।

मर्देखुदा—सज्ञा पु० [फा० मर्देखुदा] पवित्रात्मा। भक्त। उ०—
नाम अपना जब सुने मर्देखुदा। किए दिल में यहाँ तो मैं हसवा
हुआ।—दक्खिनी०, पृ० २०३।

मर्देपीर—वि० [फा० मर्दे + पीर] पवित्रात्मा। फकीर। उ०—राह
में एक बुजुर्ग मर्देपीर मियाँ साहब मिले।—प्रेमघन०, भा० २,
पृ० २०३।

मर्द—सज्ञा पु० [सं०] दे० 'मर्द'।

मर्दक—वि० [सं०] १. मर्दन करनेवाला। मर्दनकारक। २
दबानेवाला। तिरोभावक।

मर्दन—सज्ञा पु० [सं०] [वि० मर्दित] १. कुचलना। रीदना।
उ०—भगवान करे, इस दरवार में तुझे वहाँ मिले जो महादेव
जो के सिर पर है और तुझे वह शास्त्र पढाया जाय जो
काँटो को मर्दन करता है।—हरिश्चन्द्र (शब्द०)। २. दूमरे
के अंगो पर अपने हाथों से बलपूर्वक रगड़ना। मलना। जैसे,—
तेल मर्दन करना। उ०—(क) तेल लगाइ कियो रुचि मर्दन
वस्त्रादिक रुचि रुचि घाए। तिलक बनाइ चले स्वामी ह्वै
विषयनि के मुख जोए।—सूर (शब्द०)। (ख) हरि मिलन
सुदामा आयो। विधि करि श्रद्ध पावड़े दीन्ह अंतर प्रेम
बढायो। आदर बहुत कियो यादवपति मर्दन करि अन्हवायो।
चोवा चदन और कुमकुमा परिमल अंग चढायो।—सूर
(शब्द०)। (ग) पादपद्म निरति मर्दन करई। तन छाया सम
निति अनुसरई।—श० दि० (शब्द०)। ३. तेल, उबटन
आदि शरीर में लगाना। मलना। उ०—भाव दियो आवेंगे
श्याम। अंग अंग आभूषण माजति राजति अपन धाम। राते
रण जानि अलग नृपात मो आप नृपति राजति बल जोरति।
आत सुगंध मर्दन अंग अंग ठनि वान वान भूपन भेषात।
—सूर (शब्द०)। ४. दूद युद्ध में एक मल्ल का दूमरे मल्ल
की गर्दन आदि पर हाथों से घस्ता लगाना। घस्ता। उ०—
आकर्षण मर्दन भुजववन। दाव करत भे कर धार कधन।
—गोपाल (शब्द०)। ५. ध्वम। नाश। उ०—जैहि शर
मधुमद मर्दि महासुर मर्दन कौन्हो। मारघो रुकेश नरक शख
हान शख मुलान्हा।—केशव (शब्द०)। ६. रमेश्वरदशन
के अनुसार अठारह प्रकार के ससस्कारा में दूसरा सस्कार।
इसमें पारे आदि का आपणियों के साथ खरल करते या घोटते
है। घोटना। ७. घाटना। रगड़ना।

मर्दन—वि० [वि० ला० मर्दनी] नाशक। विनाशक। महादुर्गा।

उ०—(क) कुद इंदु मम देह उमारमण करना अयन। जाहि दीन
पर नेह कर्दु टुपा मर्दन मयन।—तुनगी (शब्द०)। मिन
गजपति मर्दन प्रवल मिट्ट पीजरा दीन।—हरिश्चन्द्र (शब्द०)।

मर्दल—सज्ञा पु० [सं०] प्राचीन काल का मृदग की तरह का एक
प्रकार का बाजा।

विशेष—इस बाजे का उल्लेख महाभारत में है और आजकल
इसका प्रचार बंगाल में पाया जाता है, जहाँ यह विशेषकर
मृतकों की अर्थों के माय अथवा हारकीर्तन आदि के समय
बजाया जाता है।

मर्दित—वि० [सं०] १ जो मर्दन किया गया है। मना या मगना
हुआ। २ टुकड़ टुकड़ किया हुआ। ३ नष्ट किया हुआ।

मर्म—सज्ञा पु० [सं० मर्म या मर्मन्] १. स्वरूप। २ रहस्य।
तत्व। भेद।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—लेना।

यो०—मर्मज्ञ।

३. सविस्थान। 'ध' प्राणिया के शरीर में वह स्थान जहाँ
आघात पहुँचने से आँसूक बढ़ना होता है।

विशेष—बँधक में मांस, खिरा, स्नायु, अस्थि और मांस के
साक्षपात स्थान का मर्म माना गया है और वहाँ प्राणा का
निवासस्थान निखा गया है। प्रकृति, स्थान और परिणाम
भेद से मर्म पाँच प्रकार के होते हैं और कुल मर्मा का मर्यादा
१०७ माना गई है। प्रकृत के विचार से मर्मों का मर्यादा इस
प्रकार है—मांस मर्म ११, अस्थि मर्म ८, सवि मर्म २०,
स्नायु मर्म २७ और शिरा मर्म ४१। स्थान के विचार से
मर्मा की मर्यादा इस प्रकार है—साक्ष्य (मर्यादा) या पैरो
में २२, भूजाग्र में २२ उर और कुक्ष म १२, पृष्ठ म
१४ तथा प्राणा और ऊर्ध्व भाग में ३७। प्राणायाम के विचार से
मर्मा का मर्यादा इस प्रकार है—सद्यः प्राणहर १६, कानांतर
मारक ३, वैकल्पकारक ४४, गजाकारक ८ और विशन्त्यन्त ३।

यो०—मर्मच्छेदन। मर्मप्रहार। मर्मभेदक। मर्मभेदी। मर्मवचन।
मर्मस्पर्शी।

मर्मकील—सज्ञा पु० [सं०] स्वामी। शोहर। पति [को०]।

मर्मग—वि० [सं०] अत्यंत तीक्ष्ण वा ताद्र। मर्मभेदा। मर्मनुद।

मर्मघाती—वि० [सं० मर्मघातिन्] मर्म पर चाट पहुँचानेवाला।
अत्यंत पाँट दनवाला [को०]।

मर्मघत—वि० [सं०] अत्याधिक कष्टकर [को०]।

मर्मचर—सज्ञा पु० [सं०] हृदय।

मर्मच्छेद—वि० [सं०] दे० 'मर्मच्छेदी'।

मर्मच्छेदक—वि० [सं०] मर्मभेदक। मर्म भेदाग्राहक।

मर्मच्छेदन—सज्ञा पु० [सं०] १. प्राणघातन। जान देना। २.
आधिक कष्ट देना। बहुत नताना।

मर्मच्छेदी—वि० [सं० मर्मच्छेदिन्] प्राणघातक। अत्यंत कष्ट-
कर [को०]।

मर्मछवि—सज्ञा स्त्री० [सं० मर्म + छवि] सुंदर रूप। वह रूप या

छवि जो मन को आकर्षित करे। उ०—हमारी समझ में यह प्रस्तुत अर्थ जीवन या जगत् की मर्मछवियों, वहाँ अनुस्यूत मूल्यों का ही पर्याय हो सकता है।—आचार्य०, पृ० १४५।

मर्मज्ञ—वि० [सं०] १ जो किसी बात का मर्म या गूढ़ रहस्य जानता हो। तत्त्वज्ञ। २. भेद की बात जाननेवाला। रहस्य जाननेवाला।

मर्मपीडा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्मपीडा] मन को पहुँचनेवाला क्लेश। आतंरिक दुःख।

मर्मप्रहार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह आघात जो मर्मस्थान पर हो। मर्मस्थान की चोट।

विशेष—वैद्यक में इसे ब्रह्म का एक भेद माना है। इसमें रोगी गिरता पड़ता, अटपट बकता, धवराता और मूर्च्छित होता है। उसके शरीर में गरमी छटकती है, गरमी का बहुत अधिक अनुभव हाता है, और इद्रियाँ ढोली पड़ जाती हैं।

मर्मभिद्—वि० [सं०] मर्मच्छिद्। मर्मभेदी। उ०—दुष्ट रावण कुम्भकरण पाकारिजिद् मर्मभिद् कर्म परिपाकदाता।—तुलसी (शब्द०)।

मर्मभेद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रहस्योद्घाटन। महत्वपूर्ण बातों का प्रकट होना। २. हृदय वा मर्म का वेधन [को०]।

मर्मभेदक—वि० [सं०] १ मर्म छेदनेवाला। २ हृदयविदारक। वृत्त अधिक हार्दिक कष्ट पहुँचानेवाला।

मर्मभेदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बाण। तीर [को०]।

मर्मभेदी—वि० [सं० मर्मभेदिन्] हृदय पर आघात पहुँचानेवाला। आतंरिक कष्ट देनेवाला। जैसे,—आपको इस प्रकार की मर्मभेदी बातें न कहनी चाहिए।

मर्मभेदी—सञ्ज्ञा पुं० बाण। तीर [को०]।

मर्ममय—वि० [सं०] रहस्यपूर्ण।

मर्मर—सञ्ज्ञा पुं० [यू०] दे० 'मर्मर'।

मर्मर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पत्ती के चरमराने या हवा वा अन्य किसी कारण से उनके हिलने में होनेवाला शब्द। २. एक प्रकार का पहनावा [को०]।

मर्मरित—वि० [सं०] मर्मर की ध्वनि से युक्त।

मर्मरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार का देवदार वृक्ष। २. हल्दी। ३. कान के बाह्य भाग की एक नस [को०]।

मर्मरीक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दरिद्र व्यक्ति। मिखारी। २. दुष्ट आदमी [को०]।

मर्मवचन—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मर्म + वचन] वह बात जिससे सुननेवाले को आतंरिक कष्ट पहुँचे। मर्मभेदी बात। उ०—मर्मवचन सीता तब बोला। हरि प्रेरित लछिमन मन बोला।—तुलसी (शब्द०)।

मर्मवाक्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रहस्य की बात। भेद की या गूढ़ बात।

मर्मवाणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्म + वाणी] भेदभरी वाणी। गूढ़

वात। मर्मवाक्य। उ०—श्रीमृग में श्रीगृष्ण के मुना था जहाँ भारत ने गीतागीत गिहनाद मर्मवाणी जीवन मग्राग का, सार्थक समन्वय ज्ञान कर्म भक्ति योग का।—अनामिका, पृ० ५८।

मर्मविद्—वि० [सं०] मर्म या तत्त्व जाननेवाला। मर्मज्ञ।

मर्मविदारण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मर्मच्छेदन। मर्मच्छेद।

मर्मवेदी—वि० [सं० मर्मवेदिन्] मर्मज्ञ।

मर्मवेधी—वि० [सं० मर्मवेधिन्] दे० 'मर्मभेदी'।

मर्मव्यथा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मर्म पीडा। तीव्र वेदना [को०]।

मर्मशरीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्म + शरीर] निर्यस्वरूप। मुख्य रूप। गूढ़ अंग। अनिर्वार्य लक्षण। उ०—पर ज्या ज्या जान्तीय विचार गभीर और मूढम होता गया त्यो त्यो माध्य और माधनो को विविक करके काव्य के नित्यस्वरूप या मर्मशरीर का अंग निकालने का प्रयाम बढ़ता गया।—रस०, पृ० ५०।

मर्मस्थल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मर्मस्थान। विशेष दे० 'मर्म'। २. हृदय। मन। अतस्तान। उ०—कविता अपनी मनोरजन शक्ति द्वारा पढ़ने या सुननेवाले का चित्त रमाए रहती है, जीवनपट पर उक्त कर्मों की मुदरता या विरूपता अंकित करके हृदय के मर्मस्थलों का स्पर्श करती है।—रस०, पृ० २७।

मर्मस्थान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मर्मस्थल। मर्म। विशेष दे० 'मर्म'।

मर्मस्पर्शिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्मस्पृश] मर्मस्पर्शा होने का भाव। मार्मिकता। उ०—रागात्मक गुण के अतर्गत मर्मस्पर्शिता एव मजीवता की इन लोगों ने गणना की है।—शैली, पृ० ८८।

मर्मस्पर्शा—वि० [सं० मर्मस्पर्शिन्] दे० 'मर्मस्पृश'।

मर्मस्पृश—वि० [सं०] हृदय को स्पर्श करनेवाला। हृदय पर प्रभाव डालनेवाला। मर्मस्पर्शा।

मर्मतक—वि० [सं० मर्मन्तक] मन में चुभनेवाला। मर्मभेदक। हृदयस्पर्शा। उ०—मानव दुर्गति की गाथा में श्रोत प्रीत मर्मतक।—ग्राम्या, पृ० १४।

मर्मतिक—वि० [सं० मर्मन्तिक] दे० 'मर्मतक'। उ०—फिर देता दृढ संदेश देश को मर्मतिक, भापा के बिना न रहती अन्य गद्य प्रातिक।—अनामिका, पृ० ८६।

मर्मघात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मर्मस्थल पर आघात। मार्मिक पीडा [को०]।

मर्मतिग—वि० [सं०] मर्मस्थल पर पहुँचनेवाला। मर्म को वेधनेवाला [को०]।

मर्मनुभूति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्म + अनुभूति] मार्मिक अनुभूति। मर्मस्पर्शा अनुभूति। उ०—शुद्ध मर्मनुभूति द्वारा प्रेरित कुशल कवि भी प्राचीन आख्यानों को बराबर लेते आए हैं, और भव भी लेते हैं।—रस०, पृ० ६४।

मर्मन्वेपण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] किसी बात का तत्व या गूढ़ रहस्य जानना। तत्वानुसंधान।

मर्मभास—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्म + भास] रहस्यपूर्ण अनुभव।

भेदभरे तथ्य की भूलक । उ०—योग भोग, जप तप, धन सच्य गार्हस्थाश्रम, दृढ सन्यास । त्याग तपस्या, व्रत सब देखा पाया है जो मर्माभाम ।—अनामिका, पृ० १६६ ।

मर्माभिघातज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्म + अभिघातज] एक प्रकार का दाह । उ०—इममे मर्मस्थान मे मर्माभिघातज दाह होय सो सातवां असाध्य है ।—माधव०, पृ० १२० ।

मर्माविद्—वि० [सं०] मर्म भेदनेवाला । मर्मभेदी ।

मर्माविध्—वि० [सं० मर्म + आविध्] मर्म भेदनेवाला । मर्मभेदी ।

मर्माहत—वि० [सं० मर्म + आहत] जिसके मर्म को बहुत अधिक चोट पहुँची हो । जिसके हृदय को बहुत अधिक पीडा मिली हो । उ०—मर्माहत स्वर भर ।—अपरा, पृ० ६३ ।

मर्मिक—वि० [सं०] मर्मविद् । मर्मज्ञ ।

मर्मी—वि० [हि० मर्म] रहस्य जाननेवाला । तत्त्वज्ञ । मर्मज्ञ । उ०—(क) ममा मूल गहल मन माना । मर्मी होय सो मर्महि जाना ।—कवीर (शब्द०) । (ख) मर्मी सज्जन सुमति कुदारी । ज्ञान विराग नयन उरगारी ।—तुलसी (शब्द०) ।

मर्मोद्घाटन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रहस्योद्घाटन । रहस्य का प्रकट होना [को०] ।

मर्मोपघाती—वि० [सं० मर्मोपघातिन्] ३० 'मर्माविध्' [को०] ।

मर्म्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मनुष्य । २ युवक व्यक्ति [को०] । ३ नर । मादा का विलोम [को०] । ४ प्रेमी पुरुष [को०] । ५ उष्ट्र । ऊँट [को०] । ५ बीजाश्व । दे० 'सौंड' [को०] ।

मर्म्य^३—वि० मरणशील । मर्म्य [को०] ।

मर्म्यक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. छोटा या ठिगना व्यक्ति । २ नर । मादा का विलोम [को०] ।

मर्म्या—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सीमा [को०] ।

मर्म्याद्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्म्यादा] दे० 'मर्म्यादि' । उ०—रोक रहजन को प्रगति का, फेर से, बाधक जो हो । दर बंदर भटका उसे, मर्म्यादि तू जब तक न कर ।—बेला, पृ० ६८ ।

मर्म्यादा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मर्म्यादा' ।

मर्म्यादाधावन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सीमारेखा या चिह्न की ओर दौटना [को०] ।

मर्म्यादाधुर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्म्यादा + धुर्य] दे० 'कोटपाल' । उ०—प्रतिहार साम्राज्य मे सीमा का रक्षक कोटपाल ही 'मर्म्यादाधुर्य' कहा गया है ।—पू० म० भा०, पृ० १०४ ।

मर्म्यादापर्वत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मर्म्यादागिरि' । उ०—पूरव और पच्छिम तरफ की जमीन का उठाव दीखता है, जो हिमालय के साथ के सीमात के पहाडो या मर्म्यादापर्वतो को सूचित करता है ।—भारत० नि०, पृ० २५ ।

मर्म्यादापुरुषोत्तम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्म्यादा + पुरुषोत्तम] भगवान् रामचंद्र । उ०—मर्म्यादापुरुषोत्तम के सर्वोत्तम अनन्य, लीला सहचर, दिव्य भावधर इनपर प्रहार करने पर होगी देवि तुम्हारी विषम हार ।—अपरा, पृ० ४३ ।

मर्म्यादामार्गी—वि० [सं० मर्म्यादा + मार्गिन्] मर्म्यादा का अनुगमन करनेवाला । मर्म्यादावादी । उ०—त्रहों कृष्णदास को एक मर्म्यादामार्गी वैष्णव को सग मर्मो ।—दो सो वावन०, भा० १, पृ० २३४ ।

मर्म्यादावादी—वि० [सं० मर्म्यादा + वादिन्] मर्म्यादा को माननेवाला । मर्म्यादानुयायी । उ०—पर शुक्ला जी, जैमा मैंने निवेदन किया, मर्म्यादावादी थे ।—आचार्य०, पृ० १३६ ।

मर्म्यादाव्यतिक्रम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सीमा पार करना । सीमोल्लघन करना [को०] ।

मर्म्यादित—वि० [सं०] सीमित । सीमावद्ध । उ०—मर्म्यादित रहता है इनका जोवन पारावार । अपने छोटे मे जग मे है सीमित इनका प्यार ।—ग्रामिका, पृ० ८८ ।

मर्म्यादी^१—वि० [सं० मर्म्यादिन्] १ सीमा मे रहनेवाला । सीमोल्लघन न करनेवाला । २ मर्म्यादावादी । मर्म्यादा को माननेवाला । उ०—नाके पाम तीन तूँवा, काँधे पर तो खासा काँ, पीछे कटि पर मर्म्यादी मेवकी काँ, आगे कटि पर बाहिर काँ, या भाँति सो रहै आवैं ।—दो सी वावन०, भा० २, पृ० ४३ ।

मर्म्यादी^२—सञ्ज्ञा पुं० पडोसी । सीमा के निकट रहनेवाला [को०] ।

मर्म्या^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सीमा ।

मर्म्यादा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्म्यादा] १ दे० 'मर्म्यादा' । उ०—भो मर्म्यादि बहुत सुख लागा । यहि लेखे सब सशय भागा ।—कवीर (शब्द०) । २ रीति । रसम । प्रथा । ३ चाल । ढग । ४ विवाह मे वर पक्षवालो का वह भोज जो उन्हें विवाह के तीसरे दिन कन्यापक्ष की ओर से दिया जाता है । बडहार । बढार ।

मुहा०—मर्म्यादा रहना = बरात का विवाह के तीसरे दिन ठहरकर भोज मे सम्मिलित होना ।

मर्म्यादा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. सीमा । हद । २ कूल । नदी या समुद्र का किनारा । ३ दो या दो स अधिक मनुष्यो के बीच की प्रतिज्ञा । मुआहिदा । करार । ४ नियम । ५ सदाचार । ६ मान प्रतिष्ठा । गौरव ।

क्रि० प्र०—रखना ।

मुहा०—मर्म्यादा जाना = साख खन्म होना । विश्वास जाता रहना । मर्म्यादा खेना = लज्जा उतारना । लज्जित करना । ७ धर्म ।

मर्म्यादागिरि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सीमा पर का पहाड । वह पहाड जो सीमा का निर्धारण करे [को०] ।

मर्म्यादावध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्म्यादावन्ध] १ अधिकार की रक्षा । २ नजरबंदी ।

मर्म्यादी^३—वि० [सं० मर्म्यादिन्] सीमावान । सीमायुक्त ।

मरना^७—क्रि० श्र० [हि० मरमराना श्रु०] मर मर की ध्वनि करते गिरना । चरमराकर गिरना । उ०—पीना भा समार जाठि ऊपर मरनी ।—पलटू०, पृ० ५६ ।

भरती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० भरना] वह भूमि जो कर्ज लेनेवाले ने मूद के बदले में महाजन को दी है।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गभीर विचार। २ राय। ममति। ३ नस्य। मुषनी [को०]।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रगटना। २ परीक्षा। जाँच। ३ विचार। ४ राय देना। ५ अलग करना। हटाना। ६ व्याख्या करना [को०]।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] क्षाति।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ क्षमा। माफी। २ धरणा। रगड।

भरती—वि० १ नाशक। ध्वंसक। २ दूर करनेवाला। रोकने या हटानेवाला। उ०—लहरा भव पादप, भरती मन मोडेगी। अपरा, पृ० २०७।

भरतीय—वि० [सं०] क्षमा करने के योग्य। क्षम्य।

भरती—वि० [सं०] १ सहन किया हुआ। २ क्षमा किया हुआ [को०]।

भरती—वि० [सं० भरतिन्] सहन करनेवाला। क्षमाशील [को०]।

भरतियाखाँ—सञ्ज्ञा पुं० [भ० भरतिया + फा० खाँ] १ 'भरतियाखाँ'। उ०—कई भरतियाखाँ और कई गजल सुनाते हैं—प्रेमधन०, भा० २, पृ० ८७।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [फा० (मलग = आपसे बाहर)] १. एक प्रकार के मुसलमान साधु। ये मदाराशाह के अनुयायी होते हैं तथा सिर के बाल बढ़ाते और नगे सिर तथा नगे पैर अकेले भीख माँगते फिरते हैं। उ०—(क) कौडा भ्रामू वूँद, करि माँकर बरती सजल। कौने बदन न मूँद, दग मलग डारे रहै।—विहारी (शब्द०)। (ख) किधौँ मैं मलग चढ्यो थल तुग अँजीर अरी न परै भटकी।—मुकुदलाल (शब्द०)। २ एक प्रकार का बड़ा बगुला जो स्वच्छ, सफेद रंग का होता है। यह भारतवर्ष और बरमा में होता है, और प्रायः एकात में और अकेला रहता है।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] ३० 'मलग'।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मैल। कीट। जैसे, धातुओं का मल। उ०—जीला सगुन जो कहीं वखानी। सोई स्वच्छता करइ मल हानी।—तुलसी (शब्द०)। २. शरीर से निकलनेवाली मैल या विकार।

विशेष—ये मल बारह प्रकार के माने गए हैं।—(१) वसा, (२) शुक्र, (३) रक्त, (४) मज्जा, (५) मूत्र, (६) विष्टा, (७) कर्णमल या खूँट, (८) नख, (९) श्लेष्मा या कफ, (१०) आँसू, (११) शरीर के ऊपर जमी हुई मैल और (१२) पसीना।

३ विष्टा। पुरीप। ४ दूषण। विकार। ५ शुद्धतानाशक पदार्थ। ६ पाप। ७ दोष। बुराई। ऐव। ८ हीरे का एक दोष। ९ जैन शास्त्रानुसार आत्माश्रित दुष्ट भाव। यह पाँच प्रकार का माना गया है—(१) मिथ्या ज्ञान, (२) अधर्म, (३) शक्ति, (४) हेतु और (५) च्युति। १० कपूर। ११ प्रकृतदाप। जैसे, वात, पित्त, कफ।

भरती—वि० १ गदा। अणुद्ध। २ नीच। दुष्ट। ३ नास्तिक [को०]।

भरती—[प्य०] फीलवाना का एक मार्केतिक गन्द जो हाथियों को उठाने के लिये कहा जाता है।

भरती—वि० [भ० भरती] तिरमृत। दुष्ट। विमृत। उ०—यह लक्ष्मण लेकर वह भरती। मक्क की तरफ फीता है मुँट।—दक्खिनी०, पृ० २२१।

भरती—मज्ञा पुं० [भ०] देवता। फग्निता [को०]।

भरती—मज्ञा पुं० [हि० भरताना] १. भ्रातृ के खोने वद करने की क्रिया। दृष्ट को स्थिर न रखना। २. हिनना डोलना। उ०—लागत पनक मनक नाँट लावै।—कवीर मा०, पृ० १५८६।

भरती—क्रि० भ० [हि० भरताना] १. हिनना डोलना। २. इतराना। इठाना। उ०—कूमत चनि मद मत्त गयँद ज्यौँ, मलकत बाँट दुगइ।—नद० ग्र०, पृ० ३८६।

भरती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० भरताना] भरताने की क्रिया। हिनने डोलने या इठानने की क्रिया। उ०—मोहन पिय की भरतानि डलकनि मार मुकुट की। सदा बसो मन भर करकनि पियरे पट की।—नद० ग्र०, पृ० २२।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [प्य०] बरतन पर नकारा करनेवालों का एक भोजन जिसने खादने पर दोहरी लकीर बनती है।

भरती—वि० [सं०] भाफ करनेवाला। गदगी दूर करनेवाला [को०]।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [भ० भरतीकुलमौत] ३० भरतीकुलमौत'। उ०—जैहि विधि पारा मरै न मारा। मनकनमौत मो करै विचार।—मत० दरिया, पृ० २३।

भरती—सञ्ज्ञा स्त्री० [भ० भरतीकुल] वादशाह या महाराज की पटरानी। महारानी। उ०—भरती मलका। चुवन, कल जैसा दिन दुश्मन की किम्मत में भो न आए।—पिजरे०, पृ० १२२।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [हि० भरती + काछ] ठाकुरों के शृंगार के लिये एक प्रकार का कछनी जिसमें तीन भूँवे लग होते हैं।

भरती—क्रि० म० [अनु०] १ हिनाना। डोलाना। विचलित करना। जैसे, भ्रातृ भरती।

भरती—क्रि० भ० बना बनाकर बातें करना।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [भ०] मुसलमानों के अनुसार वह फरिश्ता जो अत समय य प्राण लेन क लिये आता है।

भरती—वि० [भ०] पावित्र। फरिश्ता से मवाधित। उ०—जिन ताकूँ नदार ककारे तो मजिल भरती तूज।—दक्खिनी०, पृ० ५६।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० १ शासन। राज्य। २ स्वर्ग। देवलोक। ३ फरिश्ता। दवगरा [को०]।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] ३० 'मलखम'।

भरती—सञ्ज्ञा पुं० [सं० भरती + हि० खभा] १ लकड़ी का एक प्रकार का खभा जिसपर कपूर करनेवाले फुरती से चढ़ और उतरकर कसरत करते हैं। मलखम।

विशेष—मलखम तीन प्रकार के होते हैं—गडा मलखम, लटका

मलखम और वेत का मलखम । गडा मलखम एक लवा मोटा चार पाँच हाथ ऊँचा मुगदर के आकार का खभा होता है जो भूमि में गडा रहता है । लटका हुआ या लटकौआँ मलखम छत या किसी और घरन के सहारे ऊपर से अधोमुख लटका रहता है । जब इस खभे की जगह घरन आदि में बँत लटकाया जाता है, तब इसे वेत का मलखम कहते हैं । इसपर कसरत करनेवाले वेत को हाथ में पकटकर उसपर अनेक मुद्राशो से कसरत करते हैं । इसे बाँस, लगी या मलखानी भी कहते हैं । मलखम की कसरत भारतवर्ष की एक प्राचीन मल्ल नामक क्षत्रिय जाति को निकाली हुई है । इसी मल्ल जाति को आविष्कार की हुई कुशती को मल्लयुद्ध भी कहते हैं । मलखम पर चढ़ने उतरने को 'पकड' कहते हैं । इस कसरत से मनुष्य में फुरती आती है और रानें हठ होती हैं ।

२ वह कसरत जो मलखम पर या उसके सहारे से की जाय । ३. पत्थर या लकड़ी के पुरानी चाल के कोल्हू में लकड़ी का एक खूँटा जो कातर या पाट में कोल्हू से दूसरी छोर पर गाडा जाता है और जिसमें ढँके की रस्सी बाँधी जाती है, अथवा जिसमें रस्सी लगाकर ढँकी बाँधकर जाट के ऊपर लगाते हैं । इसे मरखम भी कहते हैं ।

मलखाना—वि० [हि० मल्ल + खाना] मल खानेवाला । उ०—कोउ न जग में होत कुटिल जैसे मलखाने । उसर वैठि मरजाद भ्रष्ट आचार न जाने ।—गिरिभरदाम (शब्द०) ।

मलखाना—सञ्ज्ञा पु० [सं० मल्ल + हि० खान] १. महोदये के राजा परमान के भतीजे मलखान का नाम । यह पृथ्वीराज चौहान का समकालीन था । २ पश्चिमी उत्तरप्रदेश में बसनेवाले एक प्रकार के राजपूत जो मुसलमान बना लिए गए थे । इन लोगों का आचार विचार अब तक प्रायः हिंदुओं का सा है ।

मलखानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मल्लखम] एक ऊँचा गोल और सीधा पतला खभा जिसपर वेत में मलखम की कसरत की जाती है । इसे बाँस और लगी भी कहते हैं । विशेष दे० 'मलखम' ।

मलगाजा(पु) —वि० [हि० मलना + गीजना] मला दला हुआ । गीजा हुआ । मरगजा ।

मलगाजा—सञ्ज्ञा पु० वेसन में लपेटकर तेल या घी में छाने हुए बंगन, कुँहडा आदि के पतले टुकड़े ।

मलगिरी—सञ्ज्ञा पु० [हि० मल्लयागिरि] एक प्रकार का हल्का कथई रंग ।

विशेष—यह रंग रंगने के लिये कपडा पहले हठ के हलके काढ़े में और फिर कसीम के पानी में डुबोते हैं, और फिर उसे एक रंग में जिसमें कल्या, चूना, मेहदी की पत्ती और चदन का चूरा पीसकर घोला रहता है और छैलछबीला, नागरमोथा, कपूर-कचरी, नख, पाँजर, विरमी, मुगधवाला, सुगध कोकल, वालछड़, जराकुश, बुढना, सुगधर्मत्री, लौग इलायची, केशर और कस्तूरी का चूर्ण मिला रहता है, डालकर पहर भर उवालेते हैं और उतारने पर उसे दिन रात उसी में पडा रहने देते हैं । दूसरे दिन कपडे को उसमें से निकालकर निचोड

लेते हैं और वर्तन के रंग को छानकर उसमें हिना का इत्र मिलाकर उसमें फिर उस कपडे को डुवाकर सुखाते हैं । पर आजकल प्रायः रंगरेज मलगिरि रंग रंगने में कपडे को कत्ये और चूने के रंग में रंगते हैं, फिर उसे कसीस के पानी में डुवा देते हैं इसके बाद रंगे हुए कपडे को आहार देकर निचोडते और सुखाते हैं और अंत में उसपर हिना का इत्र मल देते हैं ।

मलगिरि—वि० मलगिरि रंग का ।

मलधन—सञ्ज्ञा पु० [सं० मलधन] एक प्रकार की कचनार, जो लता रूप में होती है ।

विशेष—यह हिमालय की तराई, मध्य भारत और टेनासरम के जंगलो में पाई जाती है । इसकी छाल मलू कहलाती है जिसपर रंग अच्छा चढता है और जो कूटने पर ऊन की तरह चमकदार हो जाती है । इस ऊन में मिलाकर तागा काता जाता है जिससे ऊनी कपडे बुने जाते हैं । यह छाल ऐसी साफ होती है कि ऊन में मिलाने पर इसकी मिलावट बहुत कम पहचानी जाती है ।

मलधन—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मलधनी] मलनाशक ।

मलधन—सञ्ज्ञा पु० १ शाल्मली कद । सेमल का मुमला । २ कचनार का एक भेद । 'मलधन' ।

मलधनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नागदीना ।

मलज—सञ्ज्ञा पु० [सं०] पीव ।

मलजुद्ध(पु)—सञ्ज्ञा पु० [सं० मल्लयुद्ध] दे० 'मल्लयुद्ध' । उ०—मलजुद्ध समुद्र सुवीर करै ।—ह० रामो, पृ० १५७ ।

मलज्वर—सञ्ज्ञा पु० [सं० मल्ल + ज्वर] अमृतसागर के अनुसार एक प्रकार का ज्वर जो मल के रुकने के कारण होता है । इससे रोगी के पेट में शूल और सिर में पीडा होती है, मुँह सूखा रहता है, जलन होती है, भ्रम होता है और कभी कभी मूर्छा भी आती है ।

मलभ्रन—सञ्ज्ञा पु० [दश०] एक प्रकार की बेल जो वागों में लगाई जाती है ।

मलत—सञ्ज्ञा पु० [अ० मैलेट] १ लकड़ी का हथौडा जिससे खूँटे आदि गाडे जाते हैं । २ काठ का वह हथौडा जिससे छापने के पहले सीसे के अक्षर ठोककर बँटाए और बराबर किए जाते हैं ।

मलतनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मल्लत्व, प्रा० मल्लत्तण या हि० मल (=मल्ल) + तन (प्रत्य०)] बहादुरी । शक्ति का अभिमान । उ०—सम भागी सिद्धाँ की मलतनी ।—प्राण०, पृ० १२० ।

मलता—वि० [हि० मलना] मला या धिसा हुआ (सिक्का) । जैसे, मलता पैसा, मलती शठनी ।

मलद—सञ्ज्ञा पु० [सं०] वाल्मीकीय रामायण के अनुसार एक प्रदेश का नाम ।

विशेष—कहते हैं, ताडका यहीं रहती थी । इसे मल्लभूमि भी कहते थे ।

मलदूपित—वि० [सं०] मलीन । मैला ।

- मलद्राघी**—सज्ञा पुं० [सं० मलद्राघिन्] जयपाल । जमालगोटा ।
- मलद्वार**—सज्ञा पुं० [सं०] १ शरीर की वे इन्द्रियाँ जिनसे मल निकलते हैं । २ पाखाने का स्थान । गुदा ।
- मलधात्री**—सज्ञा स्त्री० [सं०] वह धाय जो बच्चों का मलमूत्र घोने पर नियुक्त हो ।
- मलधारो**—सज्ञा पुं० [सं० मलधारिन्] एक प्रकार के जैन माधु जो शरीर में मल लगाए रहते हैं और उमको घाते और शुद्ध नहीं करते ।
- मलन^१**—सज्ञा पुं० [सं०] १ मर्दन । २. पोतना । लेप करना । लगाना । ३ तबू । शामियाना (फ़ो) ।
- मलन^२**—वि० ममलनेवाला । पीस डालनेवाला । मल देनेवाला । उ०—अफजल का मलन शिवराज आया मरजा ।—भूपण ग्र०, पृ० ११७ ।
- मलन^३**—वि० [हि०] दूषित । दुरा । ३० 'मलिन' । उ०—मलन काज में खलन की मति अति होति अनूप ।—दीन० ग्र०, पृ० ८१ ।
- मलना**—क्रि० म० [सं० मलन] १ हाथ अथवा किसी और पदार्थ में किसी तल पर उसे माफ, मुलायम या अच्छा करने के लिये रगड़ना । हाथ या किसी और चीज से दवाते हुए घिसना । मर्दन । मीजना । ममलना । जैसे, लोई मलना, घोड़ा मलना वरतन मलना । उ०—(क) यहि मर घड़ा न बूडता मगर मलि मलि न्हाय । देखल बूडा कलम लो पत्ति पियामा जाय ।—कवीर (शब्द०) । (ख) चलि मलि तेहि मरोवर जाहि । जेहि मरोवर कमल कमला रवि बिना विकसाहि । हस उज्वल पख निर्मान अग मलि मलि न्हाहि । मुक्ति मुक्ता अबु के फन तिन्है चुनि चुनि खाहि ।—मूर (शब्द०) ।
- सयो० क्रि०**—डालना ।—देना ।
- मुद्दा**—दलना मलना = (१) चूर्ण करना । पीसकर टुकड़े टुकड़े करना । उ०—रन मल रावण सकल मुभट प्रचड भुजवल दलमले ।—तुलसी (शब्द०) । (२) मसलना । हाथों से रगड़ना । घिसना । हाथ मलना = (१) पछताना । पश्चात्ताप करना । उ०—बार बार करतल कहँ मलि कै । निज कर पीठ रदन सो दलि कै ।—गोपाल (शब्द०) । (२) क्रोध प्रगट करना । उ०—चलो मुकमा वीर भलो अवर तन धारे । मलो करहि भरि क्रोध हलोरन नद बहुवारे ।—गोपाल (शब्द०) ।
- २ किसी तरल पदार्थ या चूर्ण आदि को किसी तल पर रखकर हाथ से रगड़ना । मालिश करना । जैसे, तेल मलना, मुरती मलना । उ०—(क) मधु सो गीले हाथ हँ ऐँचो धनुष न जाइ । ते पराग मलि कुमुम धर बेघत मोहि बनाइ ।—गुमान (शब्द०) । (ख) चलेउ भूप पुनमित्र मित्रहृति मगध मित्र मन । पट पवित्र मनि चित्र सहित मलि इत्र धरे तन ।—गोपाल (शब्द०) । ३ किसी पदार्थ को टुकड़े टुकड़े या चूर्ण करने के लिये हाथ से रगड़ना या दवाना । मसलना । मीजना ।

उ०—जो कहो तिहागे बल पार्ये पार्ये हाथ नाथ, आंगुंगी सो मेरु मलि डारो यह छिन में ।—दुनुमत्राटक (शब्द०) । ४. मरोडना । गँठना । जैसे, मुँह मलना, नाक मलना, कान मलना ।

सयो० क्रि०—डालना ।—देना ।

५ हाथ से बार बार रगड़ना या दवाना । जैसे, छाती मलना, गान मलना ।

मलनी—सज्ञा स्त्री० [हि० मलना] आठ दम अगुल लवा, दो अगुल चौडा, मुडील और चिकना कतजन के आकार या बाम का एक टुकड़ा जिममें कुम्हार मलकर सुराहियाँ आदि चिकनी करते हैं ।

मलपकी—वि० [सं० मलपकिन्] १ मनीन । मिला । २ कीचड में मना हुआ ।

मलपाक—सज्ञा पुं० [सं० मल+पाक] शरीर की वह स्थिति जिममें दोषों की प्रवृत्ति बदल जाती है, वे हलके हो जाते हैं, शरीर हलका हो जाता है और इन्द्रियाँ निर्मल हो जाती हैं ।—माघव०, पृ० २८ ।

मलपात्र—सज्ञा पुं० [सं० मल+पात्र] वह पात्र जो शीश के उपयोग में लाया जाता है । कपोट ।

मलपू—सज्ञा पुं० [सं०] कड़मर ।

मलपृष्ठ—सज्ञा पुं० [सं०] पुस्तक का पहला या बाह्य पृष्ठ (को०) ।

मलपपना^१—क्रि० अ० [प्रा० मलपपय] १ पहलवानों के समान मस्ती भरी चाल चलना । क्रीडा में कुदान करना । उ०—नरत केलि सारमी मलपपते महा रमी । विरह नेक बोलते पलक चण खोबते ।—पृ० रा०, १७।६० ।

मलफ^१—सज्ञा स्त्री० [हि० मलफना] कूद । कुदान । उ०—गोज मलफ पता गुणाँ, मोहाँ काज मरत ।—वाँकी०, ग्र० भा० १, पृ० १७ ।

मलफना^१—क्रि० अ० [हि०] कूदना । कुदान भरना । उ०—तैं जेहा दोधा तुरी, मृग जीपण मनफत । चढे जिक्काँ अन पह चढे तारण वारण तत ।—वाँकी०, ग्र०, भा० ३, पृ० १० ।

मलफूफ—वि० [अ० मन्फूफ] १ जो लपेटा हुआ हो । जिमपर कागज या कपडा चढा हो । २ जो लिफाफे में बंद हो । उ०—प्रेम वत्तीसी हिस्सा दोयम का किस्सा 'खून गजमत' मलफूफ है ।—प्रेम० और गोर्की, पृ० ५४ ।

मलबा—सज्ञा पुं० [हि० मलभार] १ कूडा फर्कट । कतवार । २ दूटी या गिराई हुई इमारत की ईंटें, पत्थर और चूना आदि । ३ एक प्रकार की उगाही या वेहरी जो गाँव में पट्टीदारों से दौरे के हाकिमों आदि के खर्च के लिये वसूल की जाती है ।

मलभाड—सज्ञा पुं० [सं० मल+भाण्ड] ३० 'मलपात्र' ।

मलभुज—सज्ञा पुं० [सं०] कौवा ।

मलभेदिनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] कुटकी ।

मलमई^१—वि० [सं० मल+हि० मई (प्रत्य०)] मलयुक्त ।

लोक सृष्टि मिरजति यह माया । तुम तें दूरि मलमई काया ।
नद० प्र०, पृ० ३१५ ।

मलमल—मञ्जा स्त्री० [सं० मलमल्लक] एक प्रकार का पतला कपडा जो बहुत बारीक सूत में बुना जाता है। उ०—(क) मलमल खासा पहनते खाते नागर पान । टेढा होकर चालते करते बहुत गुमान । —कवीर (शब्द०) । (ख) कमरी थोर दाम की आवैं बहुतें काम । खासा मलमल वाफता उनकर गखैं मान । —गिरधरराय (शब्द०) ।

विशेष—प्राचीन काल में यह कपडा भारतवर्ष में विशेषकर बंगाल और बिहार में बुना जाता था और वहीं से भिन्न भिन्न देशों में जाता था । अब तक ढाके और मुशिदावाद में अच्छी मलमल बनती है ।

मलमला—मञ्जा पुं० [देश०] कुलफे का माग ।

मलमलाना—क्रि० म० [हि० मलना] १ बार बार स्पर्श करना । लगातार छुलाना । २ बार बार खोलना और ढकना । जैसे, पलक मलमलाना । ३ पुन पुन आनिगन करना । उ०—नवल सुनि नवल पिया नयो नयो दरख बिचि तन मलमले प्राखपति पीय को अक्षर भरओ रो । प्रीति की रीति प्राख अचल करत निरखि नागरी नन चिबुक सो मोरी । तब कामकेलि कमनीय अदय अकोर चातक स्वाति बूँद परओ रो । सुनि मूरदास रस राखि रस बरमि कं चली जनु हरति ले कुहू सु गोरी ।—मूर (शब्द०) ।

मलमलाना—क्रि० प्र० [अनु०] पश्चात्ताप करना । अफसोस करना । अफसाना ।

मलमलाहट—मञ्जा स्त्री० [अनु०] मलमलाने की क्रिया या भाव । पश्चात्ताप । अफसोस ।

मलमल्लक—मञ्जा पुं० [म०] कोपीन ।

मलमाँस—मञ्जा पुं० [हि०] १० 'मलमास' । उ०—अली शुभ तीरथ तीर लसै मलमाँस पवित्र नदी जुग सग ।—श्यामा०, पृ० ३२६ ।

मलमा—मञ्जा पुं० [हि० मलवा] १० 'मलवा' ।

मलमास—मञ्जा पुं० [म०] वह अमात मास जिसमें सक्रांति न पडती हो । इसे अधिक मास भी कहते हैं ।

विशेष—यो तो माघारण रीति से वारह महीने का वर्ष माना जाता है, पर कभी कभी तेरह महीने का भी वर्ष होता है । पर यह बात केवल चाद्र मास में ही होती है, और मास सदा वर्ष में वारह ही होते हैं । चाद्र मास की वृद्धि का हेतु यह है कि दिन रात्रि का मान, जिसे दिनमान कहते हैं, ६० दंड का माना जाता है । पर एक तिथि का मान ५८ दंड का माना जाता है । इसलिये ३० दिन में ३१ तिथियाँ पडती हैं । इस हिसाब से चाद्र वर्ष और सामान्य वर्ष में प्रति वर्ष वारह दिन का अंतर पडा करता है जो पाँच वर्ष में पूरे दो महीने का अंतर डाल देता है । ऐसे अधिक महीने को मनमास

कहते हैं । वह चाद्र मास, जिसमें सूर्य की सक्रांति पडती है, शुद्ध मास कहलाता है । पर सक्रांतिवर्जित मास तीन प्रकार के माने गए हैं जिन्हें भानुनाधिन, क्षय और मलमास कहते हैं । भानुनाधिन और मलमास वे मान कहलाते हैं जिनमें सूर्य-सक्रांति न पडे । पर यदि सूर्यसक्रांति शुक्ल प्रतिपदा को पडी हो, तो उसे क्षय मान कहते हैं । वारह महीने का अयना में बाँटे गए हैं एक वर्षास्र म कुग्रार तक, दूसरा कार्तिक में चंत तक । यह मनमान प्राय फागुन न अग्रहन तक दस ही महीनों में पडता है । शेष दो महीनों में न पून म तो कभी कभी मलमास पडता हो नहीं, और माघ में वृद्ध हो कम पटा करता है । इसका नियम यह है कि यदि दक्षिणायन और उत्तरायण दोनों अयनों में मलमासयुक्त मास पडे, तो दक्षिणायन का मास भानुनाधिन और उत्तरायण का मास मलमास कहनावेगा । पर यदि एक ही अयन में दो मास मलमास-लक्षण युक्त हो, तो पहला मलमास और दूसरा भानुनाधा कहलावेगा । पर गेम दो उगी वर्ष में पडत है जिसमें क्षय मास भी पडता है । पर कार्तिक, अग्रहन और पून के महीने में क्षय मास नहीं जाता । विवाहादि शुभ कृत्य जिस प्रकार मनमास में वर्जित हैं, उसी प्रकार भानुनाधिन और क्षय मास में भी वर्जित हैं ।

पर्या०—अधिक मास । पुरुषोत्तम । मल्लिभुव । अधिमास । असक्रांत मास । नपु सक मास ।

मलय—मञ्जा पुं० [सं० मलय (=पर्वत)] १ दक्षिण भारत के एक पर्वत का नाम ।

विशेष—(१) यह पश्चिमी घाट का वह भाग है जो मंगूर राज्य के दक्षिण और द्रावकोर के पूर्व में है । यहाँ अदन बहुत उदपन्न होता है । पुराणों में इसे मान कुलपवतो में गिनाया गया है ।

(२) मलय गव्द पवन, मंगोर, वायु आदि शब्दों के आदि में समस्त होकर (१) मुगाधित और (२) दक्षिणा वायु का अर्थ देता है । जैसे, मलयमंगोर, मलयपवन, आदि ।

पर्या०—आपाद । दक्षिणाचल । चदनद्रि । मलयाचल ।

२ मन्नावार देश । ३ मन्नावार देश के रहनेवाले मनुष्य । ४. एक उपद्वीप का नाम । ५ मफेद चदन । उ०—दाग विचार कि करण कोउ बदेय मलय प्रमग ।—मानम, १।१० । ६. गरुड के एक पुत्र का नाम । ७ नदन नद । ८ उद्यान । उपवन । दाग (श्लो०) । ९ छप्पय के एक भेद का नाम । इसमें २५ गुण, १०२ लघु, कुल १२७ वर्णों या १५२ मात्राएँ होती हैं । १० पहाड का एक प्रदेश । तैनाग । ११. ऋग्वेद के एक पुत्र का नाम ।

मलयगिरि—मञ्जा पुं० [म०] १ मन्त्र नामक पवन जो भानुनाधिन दक्षिण दिशा में है ।

विशेष—यहाँ चदन अधिक और उत्तम उदपन्न होता है । यह पश्चिमी घाट का वह भाग है जो मंगूर के दक्षिण ओर

द्रावकोर के ' मेवपू है। पुराणो मे इसे कुलपर्वतो मे गिनाया है।

- २ मलयगिरि में उत्पन्न चदन। उ०—वेधी जानि मलयगिरि वामा। मीस चढी लोटहि चहुं पामा।—जायसी (शब्द०)।
३ हिमालय पर्वत का वह देश जहाँ कामरूप और आसाम है। ४ दे० 'मलयगिरी'।

मलयगिरी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मलयगिरि] दार्चीनी की जाति का एक प्रकार का बड़ा और बहुत ऊँचा वृक्ष जो कामरूप, आसाम और बार्जिलिंग मे उत्पन्न होता है।

विशेष—इसकी छाल दो अंगुल से चार पाँच अंगुल तक मोटी होती है और लकड़ी भारी, पीलापन लिए सफेद रंग की होती है। इसकी छाल और लकड़ी दोनों सुगंधित होती हैं। लकड़ी बहुत मजबूत होती है और साफ करने पर चमकदार निकलती है जिसमे दीमक आदि कीड़े नहीं लगते। इससे मेज, कुरमी, सटूक आदि बनते हैं और इमारत आदि मे भी यह काम आती है। वसत ऋतु मे बीज बोने से यह वृक्ष उगता है।

मलयज^१—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ चदन। २०—मलयज घसि घनसार में रौरि किए गयगोनि। सेत वसन सजि तजि गली चली चाँदनी रैन।—म० मत्तक, पृ० २५०। २ राहु।

मलयज^२—वि० मलय पर्वत से आनेवाली। मलय पर्वत की। उ०—सोता तारक किरन पुलक रोमावलि मलयज वात।—लहर, पृ० ४२।

यौ०—मलयजरज = चदन का चूर्ण। मलयजवात = दक्षिण की वायु। मलयानिल।

मलयद्रुम—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ चदन। २ मदन। मैना या मैनी नामक पेड़।

मलयपवन—सञ्ज्ञा पुं० [स०] दे० 'मलयानिल'।

मलयभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हिमालय के एक प्रदेश का नाम।

मलयवासिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

मलयसमीर—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मलयानिल। मलय पवन। दक्षिणी वायु [को०]।

मलया^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १ त्रिवृता। निमोय। २ सोमराजी। वावची। वकुची।

मलया^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मलय] श्वेत चदन। मलयज। मलय। उ०—मलया कं परसग से सोतल होअत साँप।—पलदू०, पृ० ३७।

मलयागिरि—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] १ 'मलयगिरि'। उ०—मलयागिरि कं पीठि मँवारी। वेनी नाग चडा जनु कारी।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० १६६।

मलयाचल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मलयगिरि। मलय पर्वत।

मलयात्रि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मलयाचल। मलय पर्वत [को०]।

मलयानिल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मलय पर्वत की ओर से आनेवाली वायु। दक्षिण की वायु। उ०—जा, मलयानिल, लोट जा, यहाँ

श्रवधि का शाप। लगे न लू होकर कही तू अपने को श्राप।—साकेत, पृ० २१२। २ सुगंधित वायु। ३. वसत काल की वायु।

मलयालम^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मलय (= पर्वत) + अलम (= उपत्यका)] दक्षिण के एक पहाड़ी देश का नाम जो पश्चिमी घाट के किनारे किनारे फैला हुआ है। इसे केरल भी कहते हैं। यहाँ की भाषा मलयालम कहलाती है। यहाँ नायर नामक हिंदुओं और मोपला नामक मुसलमान जाति की आवादी है। केरल।

मलयालम^२—सञ्ज्ञा स्त्री० केरल प्रदेश मे प्रचलित भाषा जो दक्षिण की चार प्रमुख भाषाओं मे से एक है।

मलयालि—सञ्ज्ञा पुं० [त० मलयालम] मलयालम मे बसनेवाली एक पहाड़ी जाति का नाम। इस जाति के लोग पशुपालन और खेती करते हैं और तमिल भाषा बोलते हैं।

मलयाली^१—वि० [त० मलयालम] १ मलावार देश का। मलावार देश सबधी। २ मलावार देश मे उत्पन्न।

मलयाली^२—सञ्ज्ञा स्त्री० मलावार देश की भाषा। केरल मे प्रचलित भाषा।

मलयुग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मल (= पाप) + युग] दे० 'कलियुग'। उ०—नाम श्रोत श्रव लगि बच्यो मलयुग जग जेरो। श्रव गरीब जन पोपिए पायवो न हेरो।—तुलसी (शब्द०)।

मलयोद्भव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चदन।

मलराना^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मल्ह] दे० 'मल्हाना'।

मलरुचि—वि० [सं०] दूषित रुचि का। पापी। उ०—सेइय सहित सनेह देह भरि कामधेनु कलि कासी। समनि सोक सताप पाप रुज सकल मुमगल रासी। दडपानि भँरव विपान मलरुचि खलगत भे दासी। लोल दिनेस त्रिलोचन लोचन करनघट घटा सी।—तुलसी (शब्द०)।

मलरोधक—वि० [सं०] जो मल को रोके। जिसके खाने से कोष्ठ वृद्ध हो। कब्जियत करनेवाला। काविज।

मलरोधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विषम। कोष्ठवृद्ध। कब्जियत।

मलवधा—वि० [?] स्वादरहित और अरुचि उत्पन्न करनेवाला। उ०—आकास का मलवधा स्वाद।—गोरख०, पृ० २२३।

मलवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ऋतुमती स्त्री [को०]।

मलवा^१—सञ्ज्ञा पुं० [बरमी] हावर की जाति का एक पेड़ जो बरमा मे होता है।

विशेष—यह बहुत अधिक उँचा नहीं होता। इसकी लकड़ी चिकनी और नारगी रंग की होती है और मेज, आदि बनाने के काम में आती है।

मलवा^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मलवा'।

मलवाना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मलना का प्रे० रूप] मलने के लिये प्रेरणा करना। मलने का काम दूसरे से कराना।

मलवासा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ऋतुमती स्त्री। वह स्त्री जो अपने मासिक धर्म मे हो [को०]।

मलविनाशिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ शखपुष्पी । २ चार । ३ निर्मली ।

मलविसर्जन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मलत्याग । शौच होना [को०] ।

मलवंग—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अतीसार ।

मलशुद्धि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पेट का साफ होना । कोष्ठवृद्धता दूर होना [को०] ।

मलसा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मल्लक] घो रखने का कुप्पा ।

मलसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मलसा] मिट्टी का वर्तन जिम्मे प्रायः मुसलमान खाना पकाते हैं ।

मलसूत—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मवसूत] भारी बोझ उठाकर गाड़ी या नाव आदि पर लादने का यंत्र । गोघ्न । दमकला ।

मलहत्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मलहन्त्र] सेमल का मूल ।

मलहम्—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मरहम्] श्लेष्मिकों के योग से बना हुआ चिकना चमकोला लेप जो घाव, फोड़े आदि पर लगाया जाता है । मरहम् ।

मलहर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जमालगोटा । जयमाल ।

मलहा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हरिवंश के अनुसार राजा रौद्राक्ष को कन्या का नाम ।

मलहारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भगी । मेहतर ।

मला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ चमटा । २ चमड़े से बना हुआ पदार्थ । ३ कसकुट । ४. मुई आँवला । ५. विच्छू का डक । ६. आँवा हलदी ।

मलाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश० या अ० माल (= सार तत्व)] दूध की सादी । उ०—छाछ को ललात जैसे राम नाम के प्रसाद खात खून मात सँधे दूध की मलाई है ।—तुलसी (शब्द०) ।

विशेष—जब दूध हलकी आँच पर गरम किया जाता है, तब वह गाढा होता जाता है और उसके ऊपर सार भाग की एक हलकी तह जमती है । यही तह बार बार जमने से मोटी हो जाती है । इसी को मलाई कहते हैं । यह मुलायम और चिकनाई से भरी होती है तथा जमाए जाने पर इसी मलाई को मथकर ममका निकाला जाता है ।

क्रि० प्र०—आना ।—जमाना ।—पहना ।

२ सारतत्व । रस । उ०—भूरि दई विप भूरि भई । प्रह्लाद सुधाई सुधा की मलाई ।—(शब्द०) । ३ एक रग का नाम जो बहुत हलका बादामी होता है ।

मलाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मलना] १ मलने की क्रिया या भाव । २ मलने की मजदूरी ।

मलाकर्पी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मलाकर्पिन्] [स्त्री० मलाकर्पिणी] मलहारक । भगी । मेहतर ।

मलाका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कामिनी स्त्री । उ०—नद लला यहि मे न मलाकान कोने धो काम कला तुलकी ।—अकबरी०, पृ० ३५१ । २ वेश्या । ३ दूती । ४. हथिनी ।

मलाट—सञ्ज्ञा पुं० [दश० या अ० मौटिल्ड] एक प्रकार का मोटा घटिया कागज जो प्रायः खाकी रंग का होता है और कागजों के बडल बाँधने या इसी प्रकार के और कामों में आता है ।

मलान्(पु)—वि० [सं० म्लान] दे० 'म्लान' । उ०—वरषे चारि दस विपिन वास करि पितु वचन प्रमान । आइ पायें पुनि देखिहकं मन जनि करसि मलान ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) सुनि सजनी सुर भान है अति मलान मति मद । पूनी रजनी मे जुगलि देत उगलि यह चद ।—शृ० सं० (शब्द०) ।

मलानि(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० म्लानि] दे० 'म्लानि' । उ०—जानि जिय अनुमानही सिय सहस विधि सनमानि । राम सदगुन धाम परमित भई कछुक मलानि ।—तुलसी (शब्द०) ।

मलापहं—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मलापहा] १. मलनाशक । मल दूर करनेवाला । २. पापनाशक ।

मलावार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मलय + हिं० वार (= किनारा)] भारत के दक्षिणी प्रात का वह प्रदेश जो पश्चिमा किनारे पर है । यह प्रदेश पश्चिमी घाट के पच्छिमी समुद्र के तट पर है ।

मलावारी—वि० [हिं० मलवार + ई (प्रत्य०)] मलावार का निवासी ।

मलामत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १. लानत । फटकार । दुतकार । उ०—आया राज क्यामत मलामत से पाक हुए, रहेगा सलामत खुदाई आप आप ते ।—(शब्द०) ।

यौ०—लानत मलामत ।

२ किसी पदार्थ में का निष्कृष्ट या खराब अंश । गंदगी ।

क्रि० प्र०—निकलना ।—निकालना ।

मलामती—वि० [फा०] १. जो मलामत करने के योग्य हो । दुतकारने या फटकारने योग्य । २. घृणित । जघन्य ।

मलायक—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मलक का बहु० मलाइक] देववाण [को०] ।

मलारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मलारि] सगीत शास्त्रानुसार एक राग का नाम । उ०—पूरा मास सुनि सखिन पै साई चलत सवार । गहि कर विन परवान तिय राग्यो राग मलार ।—विहारी (शब्द०) ।

विशेष—कुछ आचार्य इसे छह प्रवान रागों के अंतर्भूत मानते हैं, पर दूसरे इसके बदले हिंडाल या मेघराग को स्थान देते हैं । यह राग वर्षा ऋतु में गाया जाता है । बिलावली, पूरबी कान्हडा, माधवी, काडा और केदारिका ये छह इसका रागिनयाँ हैं । यह सपूर्ण जात का राग है और इसके गाने की ऋतु वषा और ममय रात का दूसरा पहर है । सगीत-सार ने इस मेघ राग का छठों पुत्र माना है । इसका रग श्याम, आकृति भयानक, रंग म साँप का माला पहने, फूला के आभूषण धारण किए सस्त्रोंक वनलाया गया है । इसका स्थान विंध्याचल, वल्ल केली का पत्ता और मुकुट केली को कलिका कहा जाता है । इसका अस्त्र धनुष, कटारों और छुरा लिखा है ।

मुहा०—मलारि गाना = बहुत प्रसन्न होकर कुछ कहना, विशेषतः गाना । जैसे,—आप ता दिन भर घर पर बैठे मलारि गाय करते हैं ।

मलारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चार ।

मलारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मन्तारी] वमत राग की एक रागिनी का नाम ।

मलाल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] ? दुःख । रज ।

मुहा०—मलाल आना या मलाल पैदा होना = (१) रंज होना ।

मन मे दुःख होना । (२) मन मे मेल उत्पन्न होना । मलाल निकलना = मन मे दवा हुआ दुःख कुछ बक भककर दूर करना ।

२ उदारमानता । उदारमी ।

मलावरोध—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मल का रुकना । कठिञ्जयत [को०] ।

मलावह—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मनु के अनुमार पापों की एक कोटि ।

विशेष—इसमे कृमिकीटो और पक्षियों की हत्या, मद्य के साथ एक पात्र मे लाग हुए पदार्थों को खाना, फल, ईंधन और फूल की चोरी और अर्चय ममिलित है ।

मलाशय—सञ्ज्ञा पुं० [स०] ? पेट । २ श्रंतडियाँ [को०] ।

मलाह(पु) —सञ्ज्ञा पुं० [हि० मल्लाह] द० 'मल्लाह' । उ०—रूप कहर दरियाव मे तरिको है न मलाह । नैनन ममुभावत रहे निसि दिन ज्ञान मलाह ।—रत्ननिधि (शब्द०) ।

मलाहत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] चेहरे पर का नमक । मींदर्य । उ०—शोर दरिया तक मलाहत का तेरी पहुँचा है शोर । वेनमक आगे तेरे लव के नमकदाँ हो गया ।—कविता० की०, भा० ४, पृ० ४० ।

मलिंग—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मलग] द० 'मलग' ।

मलिद—सञ्ज्ञा पुं० [स० मिलिन्द] अमर । भीरा । उ०—(क) मलिकान मजुल मलिद मतवारे मिले, मद मद मान्त मुहीम मनसा की है ।—पद्माकर (शब्द०) । (ख) नेह मरीखी रज्जु नहिं, कविवर करै विचार । वारिज वाँध्यो मलिद लखि, दार विदारन हार ।—दीनदयाल (शब्द०) । (ग) मजुल मजरी पै हो मलिद विचारि कै भार मन्हारि कै दीजियो ।—व्यंग्यार्थ (शब्द०) ।

मलिक—सञ्ज्ञा पुं० [अ० । स०] [स्त्री० मलिका] १ राजा । उ०—तब्बे चितइ मलिक असलान, सब्ब सेन मह पलइ पातिमाह ।—कीर्ति०, पृ० ११० । २ अधीश्वर । ३ मुमलमानो की एक जाति का नाम जो प्राय कृषि कर्म करती है । ये लोग मध्यम श्रेणी के माने जाते हैं । ४ किन्नरो और कथको के एक वर्ग की उपाधि ।

मलिकजादा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मलिक + फा० जादह] बादशाह का लडका । शाहजादा [को०] ।

मलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मलिकह] १ रानी । २ अधीश्वरी ।

मलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] द० 'मलिनका' ।

मलिच्छ—(पु) सञ्ज्ञा पुं० [स० म्लेच्छ] द० 'म्लेच्छ' । उ०—तबही विश्वामित्र तहँ विविध मुआयुध वाहि । व्याकुल कोन्ह मलिच्छ दल सब शक यवन विदाहि ।—पद्माकर (शब्द०) ।

मलिच्छ(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [स० म्लेच्छ] द० 'म्लेच्छ' । उ०—तेज तम अश पर, कान्ह जिमि बस पर, त्यौं मलिच्छ बस पर सेर सिवराज है ।—भूपण ग्र०, पृ० ३७ ।

मलिच्छ—(पु) [स० म्लेच्छ या मलिच्छ (= मलिन)] मंग्ग । गदा ।

मलिच्छ(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [स० म्लेच्छ, हि० मलिच्छ] द० 'मलिच्छ' ।

उ०—अरे मलिच्छ तिमवामो दवा । कन मे आड तीहि तीरि मेरा ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० २५६ ।

मलित—सञ्ज्ञा पुं० [स०] एक प्रकार का छोटी कूची जिमसे मृत्तान्त नकाशों के गहनों को साफ करत है ।

मलिन—(पु) [स०] [वि० म्लो मलिन, मलिन] १ मनुष्य । मीना । गंदना । स्वच्छ का उलटा । उ०—वाहन चपवनी को थलो मनिनी ननिनी कि टिगान सिवारी ।—तेजव (शब्द०) । २ दूगिन । चरग । ३ जिमका रंग मग्न हा । मटर्मना । धूमिन । बदरग । उ०—मलिन भग रम माल मनेवर मुनिजन मानम हम ।—गूर (शब्द०) । ४ पापात्मा । पापी । ५ योमा । फीना । जैन, ज्योति मलिन होना । ६ म्यान । विपरण । उदारान । जैमे, मलिन-मन, मलिनमुख ।

यौं—मलिनप्रभ । मलिनमुख । मलिनाकाश = धूमिन आकाश । उ०—धूमि धूम अर मेव करि दीर्घ मलिनाकाश ।—मुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ७७८ ।

मलिन—सञ्ज्ञा पुं० १ एक प्रकार के माधु जो मीना कुचैना रुपवा पहनते है । पाशुपत । २ मट्टा । ३ मोहाग । ४ काला अग्नर या अग्नर चदन । ५ गो ता ताजा दूध । ६ हम । ७. दस्ता । मूठ । ८ दोप । ९ रत्नों की चमक और रंग का फीका और धुंधला होना । रत्नों के लिये यह एक दाप समझा जाता है ।

मलिनता—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] मलिन होने का भाव । मीलापन ।

मलिनत्व—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मलिन होने का भाव । मलिनता । मीलापन मालिन्य ।

मलिनप्रभ—वि० [स०] जिमकी कांति मलिन हो । धूलिधूमर । धुंधला [को०] ।

मलिनमुख—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ अग्नि । आग । २ वन की पूछ । ३ प्रेत । ४ एक प्रकार का बदर (को०) ।

मलिनमुख—वि० १ जिमका मुँह उदाम हो । उदामीन वदन । २ क्रूर । ३. खन ।

मलिनाधु—सञ्ज्ञा पुं० [स० मलिनाम्बु] ममी । स्याही ।

मलिना—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १ रजस्वला स्त्री । २ लाल नाँट । ३ छोटी भटकटैया ।

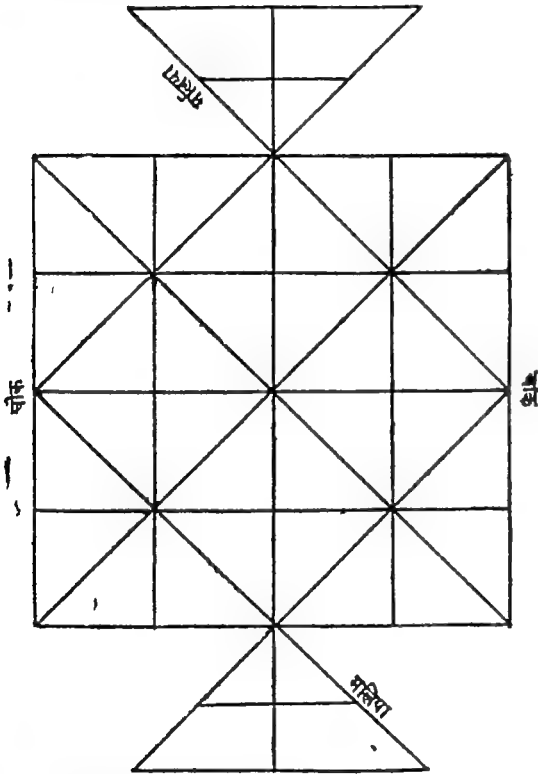
मलिनाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मलिन + आई (प्रत्य०)] मीलापन । मलिनता । उ०—(क) मुसी भए मुरमत भूमि मुर खलगन मन मलिनाई । सर्व मुमन विकसत रवि निकसत कुमुद विपित चिलखाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) होम हुताशन धूम नगर एक मलिनाइय ।—केशव (शब्द०) ।

मलिनाना(पु)—क्रि० अ० [हि० मलिन से नामिक धातु] मीला होना । उ०—अरे नेह सोहँ खरे निपट रहे मलिनाय ।—शृ० स० (शब्द०) ।

मलिनिया^७—मञ्जा स्त्री० [हि० मालिन] दे० 'मालिनी' । उ०—
वतिया मुघरि मलिनिया सुदर गातहि हो ।—तुलसी ग्र०, पृ० ४ ।
मलिनी—मञ्जा स्त्री० [म०] रजस्वला स्त्री ।
मलिनीकरण—मञ्जा पुं० [स०] पापो की एक कोटि का नाम ।
मलावह ।

मलिम्लुच—मञ्जा पुं० [स०] १ मनमास । २ अग्नि । ३ चोर ।
४ वायु । ५ चित्रक वृक्ष (को०) । ६ पचयज्ञ न करने-
वाला पुरुष ।

मलिया—मञ्जा स्त्री० [म० मल्लक या मल्लिका, हि० मरिया]
१ मिट्टी के एक वर्तन का नाम जिसका मुँह तग होता है ।
इसमें घी, दूध, दही आदि पदार्थ रखे जाते हैं । २ गोटी के
खेल में वह त्रिकोण चक्र जो चौक के दोनों ओर बीच में बना
रहता है । इस खेल को अठारह गोटी कहते हैं ।



विशेष—यह खेल दो आदमी खेलते हैं और प्रत्येक पक्ष में अठारह
गोटियाँ होती हैं जिनमें से छह गोटियाँ मलिया में और शेष
बारह ढाई पक्तियों में रखी जाती हैं । केवल बीच का बिंदु
खाली रहता है । गोटियों की चाल एक बिंदु से दूसरे बिंदु
तक लकीरो के मार्ग से होती है । जब एक गोटी किसी दूसरी
गोटी का उल्लंघन करती है, तब वह पहली गोटी मारो मर
जाती है और खेल में से निकालकर अलग कर दी जाती है ।
दोनों ओर की सब गोटियाँ जब मलिया से चौक में निकल
आती हैं, तब यदि किसी पक्षवाला 'मलियामेट' शब्द कह दे
तो दोनों ओर की मलिया मिटा दी जाती है और फिर गोटियाँ
चौक में ही रहती हैं । पर यदि कोई मलियामेट न कहे तो
गोटियाँ बराबर मलिया में आती जाती रहती हैं ।

थौं—मलियामेट ।

३, घेरा । चक्कर । लपेट ।

मुहा०—मलिया बांधना = रस्मी को मोहकरे बाँधना । (नश०) ।

मलियाचल^७—मञ्जा पुं० [म० मलयाचल] दे० 'मनयाचल' ।
उ०—विम्ब सुवामित होय जिके मुख वामहूँ । मलियाचल
महकत वमत विनासहूँ ।—वाँकी० ग्र०, भा० ३ पृ० ३६ ।

मलियामेट—मञ्जा पुं० [हि० मलिया + मिटाना] मत्तानाश । तहस
नहम । जैसे,—उमने मारा घर मलियामेट कर दिया ।

मलिष्ट—वि० [सं०] १ अत्यंत मलिन । बहुत अधिक मैला
कुचैला । २ पापी (को०) ।

मलिष्टा—मञ्जा स्त्री० [म०] ऋतुमती स्त्री (को०) ।

मलिस—मञ्जा स्त्री० [द्य०] छेनी के आकार का मुनारो का एक औजार
जिममें हँसुली की गिरह या धुडियाँ उभारी जाती हैं ।

मलीण^१—मञ्जा पुं० [?] स्त्रियों की तरह नखरा । जनखापन ।
उ०—मावटियो महिला तरणी मारे रोज मलीण ।—वाँकी०
ग्र०, भा० २, पृ० १४ ।

मलीदा—मञ्जा पुं० [फा०] १ चूरमा । २ एक प्रकार का बहुत
मुलायम ऊनी वस्त्र ।

विशेष—यह वस्त्र बहुत मुलायम और गरम होता है । यह बुने
जाने के बाद मलकर गफ और मुलायम बनाया जाता है ।
यह प्रायः काश्मीर और पंजाब में आता है ।

मलीन^१—वि० [सं० मलिन] १ मैला । अस्वच्छ । उ०—(क)
जिनके जस प्रताप के आगे । समि मलीन रवि सीतल लाग ।
—तुलसी (शब्द०) । (ख) मन मलीन मुख मुदर कैसे । विप
रस भरा कनक घट जैसे ।—तुलसी (शब्द०) । २ उदास ।
उ०—अति मलीन वृषभानु कुमारी । हरिश्चम जल अतर तनु
भीजे ता लालच न घुवावात सारी ।—सूर (शब्द०) ।

मलीन^७—मञ्जा पुं० पाप । उ०—अनं वृजिन दुवृन दुग्ति अघ
मलीन मसि पक ।—अनेकार्य०, पृ० ५५ ।

मलीनता—मञ्जा स्त्री० [हि० मलीन + ता (प्रत्य०)] दे० 'मलिनता' ।

मलीनी^७—वि० [हि० मलीन + ई (प्रत्य०)] मैला । अस्वच्छ ।
मलीन । उ०—तस हों अहा मलीनी करा । मिलेउं आइ तुम्ह
भा निरभरा ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० ३७३ ।

मलीमस^१—मञ्जा पुं० [सं०] १ लोहा । २ पीले रंग का कसीम ।
३, पाप ।

मलीमस^२—वि० १ मलिन । मैला । २, काला । ३, पापी ।

मलीयस्—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मलीयसी] अत्यंत मलिन ।
बहुत अधिक मैला कुचैला ।

मलुक—मञ्जा पुं० [सं०] १ उदर । पेट । २ एक प्रकार का पशु ।

मलुकाना^७—क्रि० अ० [सं० आलोकन या हिं० मुलकाना]
दिखाई देना । उ०—निर्मल जोति नहीं मनुकाई । नानक
अनहदि शब्दि ममाई ।—प्राण०, पृ० १७१ ।

मल्ल—मञ्जा स्त्री० [म० मालु] १ मलधन नामक कचनार को छाल ।
यह बहुत दृढ होती है और रंगने पर कूटकर ऊन में मिलाई
जाती है । २, मलधन नामक वृक्ष ।

मल्लक'—सज्ञा पुं [मं०] १ एक प्रकार का कीड़ा । २ एक प्रकार का पत्ता । उ०—मैनः मल्लक कोइल कपोत । बगहस और कलहस गोत ।—सूदन (शब्द०) । ३ बौद्ध शास्त्रानुसार एक सख्यास्थान । ४ द० 'अमल्लक' ।

मल्लक'—वि० [दश०] मुदर । मनोहर । उ०—प्यारी प्यारी वे मल्लक हारयाला कुजे । शाभा छवि आनद मरी सब सुख की पुजे ।—श्रीधर (शब्द०) ।

मल्लकदास—सज्ञा पुं [दश०] एक सत कवि । उ०—तेरोइ एक भरोसः मल्लक को तेरे ममान न दूजा जसी ह । एहो मुरार पुकार कहीं अब मरी हसी नाह तेरी हंमी है ।—कावता फौ०, भा० १, पृ० १६७ ।

विशेष—ये इलाहाबाद के कडा गाँव के लाला सुदरदास कक्कड (खत्री) के पुत्र थे । इनका जन्म सवत् १६३१ वैशाख कृष्ण ५ को हुआ और १०८ वर्ष की अवस्था में सवत् १७३६ में इन्होंने अपना शरीर त्याग किया था ।

मल्लन—सज्ञा पुं [सं० मन] पक्वाशय में विष्टा से उत्पन्न एक प्रकार के काड़े । उ०—इन (कृमियो) के पांच नाम हैं—ककेरुक, मकेरुक, सौसुराद, मल्लन जोर लेलिह ।—माधव०, पृ० ७१ ।

मल्लल—वि० [अ०] दुखी । रजीदा । उदास । उ०—मला अपने दिल कू करो मत मल्लल, रखो उस कतै खोल मानिद फूल ।—दाखनी०, पृ० २३६ ।

मलेच्छ—सज्ञा पुं [सं० म्लेच्छ] द० 'म्लेच्छ' ।

मलेच्छ—सज्ञा, पुं [सं० म्लेच्छ] द० 'म्लेच्छ' । उ०—पाछे एक मलेच्छ वा गाम ऊपर चढ़ि के (आयो), वो लराई मे कृष्णदास देह छोरी ।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० २३८ ।

मलेच्छ ①—सज्ञा पुं [सं० म्लेच्छ, हिं० मलेच्छ, मलेच्छ] द० 'म्लेच्छ' । उ०—मलेच्छ सोई जा मल के खावे सो मल, कवहि ना धोवै ।—सत० दरिया, पृ० ६७ ।

मलेटरी—सज्ञा स्त्री० [अ० मिलिटरी] सेना । फौज । उ०—मलेटरी ने बहुरा चैयरू को गिरफ्त कर लिया है ।—मैला०, पृ० १ ।

मलेपज—सज्ञा पुं [दश०] अधिक अवस्था का घोड़ा । बुड़ा घोड़ा ।

मलेया ①—सज्ञा पुं [सं० मलय] मलयागिरि चदन । श्वेत उ०—पवन भई सा हाए भुअगा । करहि जोग मलेया के सगा ।—सत० दरिया, पृ० १४ ।

मलेरिया—सज्ञा पुं [अ०] एक प्रकार का ज्वर जो वर्षा ऋतु में फैलता है ।

विशेष—यह जाड़ा देकर आता है । पहले डाक्टरों का विश्वास था कि वस्तुओं के मडन या किसी अन्य कारण से वायु में विप फैलता है जिसमें सविराम, अर्थात् अंतरिया, तिजरा, चौधिया आदि ज्वर, जो मलेरिया के अंतर्गत हैं, फैलते हैं । पर अब उन्होंने यह निश्चय किया है कि मच्छड़ों के दश से मलेरिया का विप मनुष्या के रक्त में पहुँचता है जिससे सविराम ज्वर का रोग उत्पन्न होता है ।

मलैगिरि—सज्ञा पुं [सं० मलयगिरि] द० 'मलयगिरि' । उ०—वेना नाग मलैगारे पीठी । सास माथ होइ दुइजि बईठी ।—जायमी ग्र० (गुप्त), पृ० १४६ ।

मलैया—सज्ञा स्त्री [हिं० मलाई] एक प्रकार का दूध का भाग जो जाड़ के दिनों में रात भर दूध को आँस में रखकर मथने से तैयार होता है ।

मलोत्सर्ग—सज्ञा पुं [म०] मलत्याग । शौच [नौ०] ।

मलोल—सज्ञा पुं [अ० मलूल] द० 'मलाला' ।

मलोलना—क्रि० अ० [अ० मलूल, हिं० मनोन] दुखी होना । पछताना ।

मलोला—सज्ञा पुं [अ० मलूल या चलवला] १ मानसिक व्यथा । दुःख । रज । उ०—राध अहो हरि भावत का भरिक भुज भोटए मेटि मलोलै ।—देव (शब्द०) ।

मुहा०—मलाला या मलोलै आना = दुःख होना । पछतावा होना । पश्चात्ताप होना । मलोलै खाना = मानसिक व्यथा सहना । दुःख उठना । उ०—उन्हाने मनोम के मनोलै खा के कहा ।—इ शाश्रलाह (शब्द०) । इटल के मलोलै निकालना = महास निकालना । कुछ वक झककर मन का दुःख दूर करना ।

२ वह इच्छा जो उमट उमडकर मानसिक व्याकुलता उत्पन्न करे । अरमान । जैसे,—मेरे मन का मलाला कब होगा । (गीत) ।

क्रि० प्र०—आना ।—ठठना ।—निकालना ।

मल्यागिरि ①—सज्ञा पुं [हिं० मलयागिरि] द० 'मलयगिरि' उ०—नाम अतर मल्यागिरि भाई । पीवता विप अमृत हो जाई ।—कवीर सा०, पृ० ८६२ ।

मल्ल—सज्ञा पुं [सं०] १ एक प्राचीन जाति का नाम ।

विशेष—इस जाति के लोग द्रव्ययुद्ध में बड़े निपुण होते थे, इसीलिये द्रव्ययुद्ध का नाम मल्लयुद्ध और कुशता लड़नेवाले का नाम मल्ल पड गया है । महाभारत में मल्ल जाति, उनके राजा और उनके दश का उल्लेख है । भारतवर्ष के अनेक स्थान जम मुलतान (मल्लस्थान) मालव, मालभूमि आदि में मल्ल शब्द वस्तुतः रूप में मलता है । त्रिपिटक में कुशनगर में मल्लो के राज्य का होना पाया जाता है । मनुस्मृति में मल्ला को लिच्छिवी (लिच्छव) आदि के साथ सस्कारच्युत या श्राय क्षत्रिय लिखा है । पर मल्ल आदि क्षत्रिय जातियाँ बौद्ध मतावलवी हो गई थी । इसका उल्लेख स्थान स्थान पर त्रिपिटक में मलता है जिससे ब्राह्मणों के अधिकार से उनका निकल जाना और ब्राह्म्य होना ठाक जान पड़ता है और कदाचित् इसीलिये स्मृतियों में य ब्राह्म्य कहे गए हैं ।

२ द्रव्ययुद्ध करनेवाला । पहलवान । पट्टा । उ०—कं निसेपति मल्ल अनेक । बाध उठ बठ कतरत करत ।—भारतेंदु ग्र०, भा० १, पृ० ४५६ । ३ मनुस्मृतिक अनुसार एक ब्राह्म्य क्षत्रिय जाति का नाम । ४ ब्रह्मवत के अनुसार लटपता तीवरी माता से उत्पन्न एक वर्णसंकर जाति का नाम । ५ पराशर पद्धत के अनुसार कुंदकार पिता और ततुवाय माता

से उत्पन्न एक वर्णमकर जाति । ६ पात्र ॥ ७ कपोल । ८ एक प्रकार की मछली । ९ एक प्राचीन देश का नाम जो विराट देश के पास था । १० दीप । उ०—दगदगाति जो मल्ल सी अग्नि राशि की कानि । सोई मणि माणिक विपे, कानि रग की भांति ।—रत्नपरीक्षा (शब्द०) ।

मल्लक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ दाँत । २ दीवट । चिरागदान । ३ दीप । दीया । ४ नारियल के छिलके का बना हुआ पात्र । ५ बर्तन । पात्र । ६ डन्वे या सपुट का पल्ला ।

मल्लकाछ—सञ्ज्ञा पु० [सं० मल्ल+हिं० काछ] दे० 'मलकाछ' । उ०—तव तो मोर मुकुट, काछनी, बोती, उपरेना, वागा, पाग, फँटा, कुलही, टिपारो, मल्लकाछ, पिछोरा या प्रकार भाँति भाँति के सिंगार करे ।—दो सौ बावन०, भा० २, पृ० ६३ ।

मल्लक्रीडा—सञ्ज्ञा पु० [सं० मल्लक्रीडा] मल्लयुद्ध । कुश्ती ।

मल्लखंभ—सञ्ज्ञा पु० [सं० मल्ल+हिं० खंभ] दे० 'मलखंभ' ।

मल्लज—सञ्ज्ञा पु० [सं०] काली मिर्च ।

मल्लतरु—सञ्ज्ञा पु० [सं०] पियाल या पियार का पेड़ । चिरौजी ।

मल्लताल—सञ्ज्ञा पु० [सं०] सगीत शास्त्रानुसार एक ताल का नाम जिसमें पहले चार लघु और फिर दो द्रुत मात्राएँ होती हैं । यह ताल के आठ मुख्य भेदों में से एक माना जाता है ।

मल्लतूर्य—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का नगाडा जो रस्साकसी के समय बजाया जाता था [को०] ।

मल्लनाग—सञ्ज्ञा पु० [सं०] काममूत्र के रचयिता वात्स्यायन का एक नाम ।

मल्लपछार—वि० [सं० मल्ल+हिं० पछारना] पहलवानों को पछाड़नेवाला । उ०—मदहारी श्री मुकुटवर, मधुपुर मल्लपछार ।—दरिया० बानी, पृ० १८ ।

मल्लभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मल्लभूमि' [को०] ।

मल्लभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मलद नामक देश । २, कुश्ती लड़ने की जगह । अखाडा ।

मल्लयुद्ध—सञ्ज्ञा पु० [सं०] परस्पर द्वन्द्वयुद्ध जो बिना शस्त्र के केवल हाथों से किया जाय । बाहुयुद्ध । कुश्ती ।

पर्या०—नियुद्ध । बाहुयुद्ध ।

विशेष—यह युद्ध प्राचीन मल्ल जाति के नाम से प्रख्यात है । इस जाति के लोग अखाडों में व्यायाम और युद्ध किया करते थे । महाभारत काल में इनकी युद्धप्रणाली को राजा लोग इतना पसंद करते थे कि प्रायः सभी राजाओं के दरबार में मल्ल नियुक्त किए जाते थे और उन्हें अखाडों में लड़ाया जाता था । कितने लोग मल्लों को रखकर उनसे स्वयं शिक्षा प्राप्त करते थे और मल्लयुद्ध में निपुणता बड़े गौरव की बात मानी जाती थी । जरासन्ध और भीम मल्लयुद्ध के बड़े व्यमनी थे । जरासन्ध के यहाँ मल्लों की एक मेना भी थी ।

मल्लविद्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कुश्ती की कला या विद्या । मल्लयुद्ध की विद्या ।

मल्लशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मल्लयुद्ध करने का स्थान । मल्लभूमि । अखाडा ।

मल्ला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ स्त्री । नारी । २ मल्लिका । चमेली । ३ एक लता का नाम । पत्रवल्ली ।

मल्ला^२—सञ्ज्ञा पु० [देश०] १. जुलाहों के हथ्या नामक औजार का ऊपरी भाग जिसे पकड़कर वह चलाया जाता है । २ एक प्रकार का लाल रंग जो कपड़े को लाल या गुलाबी रंग के माठ में बचे हुए रंग में डुबाने से आता है ।

मल्लार—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मलार नामक राग । विशेष दे० 'मलार' ।

मल्लारि^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ कृष्ण । २ शिव ।

मल्लारि^२—सञ्ज्ञा स्त्री० एक रागिनी । दे० 'मल्लारी' ।

मल्लारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वसत राग की एक रागिनी का नाम ।

विशेष—हलायुव ने इमे मेघ राग की रागिनी और श्रोडव जाति को माना है और घ, नि, रि, ग, म, घ, इसका स्वरग्राम बतलाया है ।

मल्लाह—सञ्ज्ञा पु० [अ०] [स्त्री० मल्लाहिण] एक अत्यज जाति जो नाव चलाकर और मछलियाँ मारकर अपना निर्वाह करती है । केवट । धीवर । माभी ।

मल्लाही^१—वि० [फा०] मल्लाह संबंधी । मल्लाह का ।

मुहा०—मल्लाही काँटा = लोहे का एक काँटा जिसका सिर चिपटा करके मोड़ा या घुमाया होता है । ऐसा काँटा नाव की पटरियों के जड़ने में काम आता है ।

मल्लाही^२—सञ्ज्ञा स्त्री० मल्लाह का काम, मजदूरी या पद ।

मल्लि^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] जैन शास्त्रानुसार चौबीस जिनों में उन्नीसवें जिन का नाम । इन्हें मल्लिनाथ कहते हैं ।

मल्लि^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मल्लिका ।

मल्लिक^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. एक प्रकार का हंस जिसके पैर और चोंच काली होती है । २ जोलाहों की ढरकी । ३. माघ का महीना ।

मल्लिक^२—सञ्ज्ञा पु० [हिं०] दे० 'मलिक' ।

मल्लिक^३—सञ्ज्ञा पु० बगालियों की एक जाति और अल्ल या उपनाम ।

मल्लिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार का बेला जिसे मोतिया कहते हैं । उ०—दृगजल से सानद, खिलेगा कभी मल्लिकापुंज ।—भरना, पृ० ६ ।

विशेष—वैद्यक में इसका स्वाद कड़वा और चरपरा, प्रकृति गरम और गुण हलका, वीर्यवर्धक, वात-पित्त-नाशक, अरुचि और विप में हितकर तथा ब्रण और कोढ़ का नाशक लिखा है । इसका फूल सफेद और गोल तथा गंध मनोरम होती है । कुछ लोग भ्रमवश इसे चमेली समझते हैं ।

२ आठ अक्षरों का एक वर्णिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में रगण, जगण और अत में एक गुरु और एक लघु होता है । जैसे— एक काल रामदेव । मोघु वधु करत सेव । शोभिजै सब नो और । मत्रि मित्र ठौर ठौर । ३ सुमुखि वृत्ति का एक नाम ।

४ एक वाद्य का नाम (को०) । ५ दीघट (को०) ६ एक प्रकार का मिट्टी का बर्तन (को०) ।

मल्लिकात्—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ एक प्रकार का घोड़ा जिमकी आँख पर सफेद धब्बे होते हैं । २ घोड़े की आँख पर के सफेद धब्बे । ३ एक प्रकार के हंस का नाम ।

मल्लिकात्—वि० सफेद आँखवाला । कजा ।

मल्लिकात्ती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] आँख पर सफेद धब्बेवाली कुतिया (को०) ।

मल्लिकाख्य—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'मल्लिकात्' (को०) ।

मल्लिकाख्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मनिकापुष्प (को०) ।

मल्लिकामोद—सञ्ज्ञा पु० [सं०] ताल के माठ मुख्य भेदा में से एक भेद का नाम जिममें चार विराम होते हैं ।

मल्लिकाछन्द—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दोषक का आच्छादन । (अं) लैप शेड (को०) ।

मल्लिकापुष्प—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ मल्लिका का फूल । २ कुटजवृक्ष ।

मल्लिकार्जुन—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक शिवलिंग का नाम जो श्रीशैल पर है । यह द्वादश ज्योतिर्लिंग में से एक है ।

मल्लिकाधि—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मल्लिकान्धि] अग्रर ।

मल्लिकानाथ—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ अनियों के उन्नीसवें तीर्थकर का नाम । २ सस्त्रुत काव्यों (रघुवन्ध, कुमारसम्भव, किराताजुनीय, भिक्षुपालनध, नैषधचरित, मेघदूत आदि) के प्रसिद्ध टीकाकार जिनका समय १४वीं १५वीं शताब्दी के लगभग है । इनका पूरा नाम मल्लिकानाथ सूरि था ।

मल्लिकपत्र—सञ्ज्ञा पु० [सं०] छत्रक । कुकुरमुत्ता (को०) ।

मल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मल्लिका । उ०—लपटत डव माधविका सुनाम । फूनी मल्ली मिनि करि उजाम ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ३११ । २ मुदगे वृत्ति का एक नाम ।

मल्लु—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ भालू । २ वदर ।

मल्लू—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'मल्लु' ।

मल्लुनों—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की नाव जिमका अगला भाग अर्धवृत्त चोड़ा होता है ।

मल्लुपना(१)—क्रि० अ० [प्रा० मल्लु] लीना करना । लीला के साथ धीरे धीरे चलना । उ०—सही समांणी साथि करि, मदिर कूं मल्लुपत ।—ढोला०, दू० ६८ ।

मल्लुम—सञ्ज्ञा पु० [प्रा० मल्लुम] दे० 'मल्लुम' । उ०—हाय हाय मुख तें कडं परे इस्क के धाव । मल्लुम यहि महि जानियो मोहन दरस दिखाव ।—ब्रज० ग्र०, पृ० ३५ ।

मल्लुराना(१)—क्रि० सं० [सं० मल्लु (= गोस्तन)] चुप करना । पुचकारना । मल्लुराना । उ०—रुचिर सैज लै गई मोहन को भुजा उछल्य सुवावति है । सुरदाम प्रभु सोई कन्हैया हलरावति मल्लुरावति है ।—सूर (शब्द०) ।

विशेष—गौश्री को दुहते समय जब दुहनेवाला उनके स्तन से दूध निकालता है, तब नई गौएँ बहुत उछलती कूदती और

लात चलाती है । इसके लिये दुहनेवाले उन्हें चुमकारते पुचकारते हैं जिमसे वे शांत हो और दुहने दें । इसीलिये 'मल्लु' शब्द ने, जिमका अर्थ गोस्तन है, मल्लुराना, मल्लुराना, मल्लुराना आदि क्रियाएँ चुमकारने के अर्थ में बनी हैं ।

मल्लुराना(१)—क्रि० सं० [सं० मल्लु (= गोस्तन)] चुमकारना । पुचकारना । मल्लुराना । उ०—(क) यजोरा हरि पाननहि भुलावै । हनगवै दुलगाइ मल्लुवै जोइ गार्द कथु गार्व ।—सूर (शब्द०) । (ख) बल्लु छरीनि छीना दगन गगन में फहति मल्लुइ मल्लुई । मानुज हिय हुनमति, तुनी के प्रभु की ललित ललित तरिकाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) कहीति मल्लुइ मल्लुइ उर छिन छिन नगन छरीनि चटि उंधा । मोद कद कुल कुमुद चद मेरे रामचंद्र रघुईया ।—तुलसी (शब्द०) ।

मल्लुराना(२)—क्रि० अ० [अ० मल्लु] पुचकारना । विमो का चरित्र-गान करना । रह रहकर गाना । उ०—कण देम तई आविया, किहा तुम्हारउ वाम । कण डोलउ, कुंग मानवि, राति मल्लुराया जाग ।—ढोला०, दू०, १६५ ।

मल्लुचेल—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मौला नाम की तैल जो प्राय वृक्षों पर चढ़कर उन्हें बहुत अधिक हानि पहुंचाती है । विशेष दे० 'मौला' ।

मल्लुरा—सञ्ज्ञा पु० [हि०] दे० 'मल्लुरा' ।

मल्लुराना—क्रि० सं० [हि०] दे० 'मल्लुराना' ।

मल्लुविकल—सञ्ज्ञा पु० [अ० मुवक्किल] [स्त्री० मल्लुविकला (व०)] १ अपनी ओर से वकील या प्रतिनिधि नियत करनेवाला पुरुष । मुकदमे में अपनी ओर से कचहरी या न्यायालय में काम करने के लिये अधिकारी प्रतिनिधि नियत करनेवाला पुरुष । २ किसी को अपना काम मुपुर्द करनेवाला । अमामी ।

मल्लु(१)—वि० [सं० मौन] दे० 'मौन' । उ०—काउ ना मल्लु काऊ नगन विचार है ।—भारता० श०, पृ० ५५ ।

मल्लु(२)—वि० [हि० मापना] १ मापित । मापा या नापा हुआ । २ विचारित । उ०—मल्लु मत चुक्की न मोइ वर मत विचारो ।—पृ० रा०, २७ । २३ ।

मल्लुनी(१)—वि० [सं० मौनी] दे० 'मौनी' । उ०—पेम पियाला पीवे मल्लुनी ।—कबीर रे०, पृ० २ ।

मल्लुवर—सञ्ज्ञा पु० [सं०] बौद्ध मतानुसार एक बहुत बड़ी मन्थ्या ।

मल्लुखि—वि० [अ०] लिखित ।

मल्लुसर(१)—सञ्ज्ञा पु० [अ० मुयस्सर] मौसर । दर्शन का अवसर । उ०—मल्लुसर तिका कुमुम फल मजर । साख प्रसाख सरूप मुरतर ।—रा० रू०, पृ० ३५३ ।

मल्लुजिव—सञ्ज्ञा पु० [अ०] नियमित माया में नियमित समय पर मिलनेवाला पदार्थ । भृति । जैसे, वेतन, महसूल आदि । उ०—फकीरो के मल्लुजिव वद हो गए ।—शिवप्रसाद (शब्द०) ।

मल्लुजी—वि० [अ० मल्लुजी] अनुमान किया हुआ । अनुमानित ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग रूपए और गाँव के अणो का द्योतन करने के लिये होता है। जैसे, मवाजी दस आना, पवाजी पाँच बीघा छह विस्वा।

मवाद—सज्ञा पुं० [अ०] १ सामग्री। सामान। मसाला। २ पीव। मवाद। ३ प्रमाण। सबूत (ज्ञे०)।

मवाली—सज्ञा पुं० [अ०] १ यार दोस्त। सगी माथी। २ बदमाश। गुडा। ३ दक्षिण भारत की अर्धसभ्य और उच्छृंखल एक जाति।

मवास—सज्ञा पुं० [मं०] १ रक्षा का स्थान। त्राणस्थल। आश्रय। शरण। उ०—(क) चलन न पावत निगम पथ जग उपजी अति त्राम। कुच उतग गिरिवर गह्नी मोना मन मवास।—विहारी (शब्द०)। (ख) दैन लर्ग मन मृगहि जब विरह अहेरी त्रास। जाइ लेत हैं दौरि तब प्रीतम सुवन मवास।—रसनिधि (शब्द०)।

मुहा०—मवास करना = बसेरा करना। निवास करना। उ०—कहै पदमाकर कलिदी के कदवन पं, मधुवन कीन्हो आइ महत मवामो है।—पद्याकर (शब्द०)।

२ किला। दुर्ग। गढ। उ०—(क) हठी मरहठी ता मे राह्यो न मवाम कोऊ छीने हथियार डोलै वन वनजारे से।—भूपण (शब्द०)। (ख) रहि न सफी सब जगत मे मिसिर मोत के भास। गरमि भाज गढवै भई तिय कुच अचल मवास।—विहारी (शब्द०)। (ग) मिधु तरे वडे वीर दले खल जोर हैं लक से बक मवासे।—तुलसी (शब्द०)। ३ वे पढ जो दुर्ग के प्राकार पर होते हैं। उ०—जहाँ तहाँ होरो जरै हरि होरी है। मनहुँ मवामे आगि अहो हरि होरी है।—मूर (शब्द०)।

मवासी—सज्ञा स्त्री० [हि० मवास] छोटा गढ। गढी। उ०—(क) जम ने जाइ पुकागिया टडा दीया डारि। सत मवासी त्वै रहा फाँमि न परै हमारि।—कवीर (शब्द०)। (ख) कोट किरौट किए मतिराम करं चढि मोरपखानि मवासी।—मतिराम (शब्द०)।

मुहा०—मवासी तोड़ना = (१) गढ तोड़ना। (२) विजय करना। सग्राम जीतना। उ०—कव दत्त मवासी तोरी। कव मुकदेव तोपची जोरी।—कवीर (शब्द०)।

मवासी—सज्ञा पुं० १ गढपति। किलेदार। उ०—(क) आइ मिले सब विकट मवासी। चुक्यौ अमल ज्यो रँयत खासी।—लाल (शब्द०)। (ख) हुते शत्रु जेते भए ते भिखारी। मवासे मवासीन की जोम झारी।—सूदन (शब्द०)। २ प्रधान। मुखिया। अघिनायक। उ०—(क) गोरम चुराइ खाइ वदन दुराइ राखै मन न घरत वृद्रावन को मवासी। मूर श्याम तोहि घर घर सब जानै इहाँ को है तिहारी दासी।—मूर (शब्द०)। (ख) वन में बसी बजावत डोलत घर में भए हौ मवासी।—घनानद, पृ० ४४४।

मवेशी—सज्ञा पुं० [अ० माशियहू का बहु व० मवाशी] पशु। ढोर। डगर।

यौ०—मवेशीखाना।

मवेशीखाना—सज्ञा पुं० [फा० मवेशीखानहू] वह बाडा जिसमे मवेशी रखे जाते हैं।

विशेष—वर्तमान सरकारी राज्य मे स्थान स्थान पर ऐसे मवेशीखाने है जिनमे ऐसे मवेशी बंद किए जाते हैं जिन्हें कृषक उनकी खेती को हानि पहुँचाने पर हाँककर ले जाते हैं। वे मवेशी नवतक उम मवेशीखान मे बंद रहते हैं जबतक कि उनका मालिक प्रति मवेशी कुछ दंड और खुराक खर्च वहाँ के कर्मचारी को नही दे देता। मवेशीखाने का कर्मचारी 'मुहरिर मवेशी' कहलाता है।

मश—सज्ञा पुं० [म०] १ क्रोध। २ मच्छड।

मशक'—सज्ञा पुं० [स०] १ मच्छड। २ गार्ग्य गोत्र मे उत्पन्न एक आचार्य का नाम जो एक कल्पमूत्र के रचयिता थे। ३ महाभारत के अनुसार शकद्वीप मे क्षत्रियो का एक निवास-स्थान। ४ मसा नामक चर्मरोग।

मशक'—सज्ञा स्त्री० [फा०] चमडे का बना हुआ थैला जिसमे पानी भरकर एक स्थान मे हमरे स्थान पर ले जाते हैं।

मशककृटी—सज्ञा स्त्री० [मं०] मच्छड हाँकने की चोरी।

मशकबीन—सज्ञा पुं० [फा० मशक + हि० बीन] एक प्रकार का मुँह से फूँककर बजाया जानेवाला बाजा जिसमे थैला सा बना रहता है और जिममे एक नली फूँकने के लिये तथा अन्य स्वर सयोजनार्थ होती है। यह शब्द (अ० वैग पाइप का) हिंदी रूपांतर है।

मशकहरी—सज्ञा स्त्री० [मं०] १ 'मसहरी'।

मशकावती—सज्ञा स्त्री० [मं०] एक नदी का नाम।

मशकी—सज्ञा पुं० [सं० मशकित्] उदुगर। गूलर का पेड जिममे मशक रहते हैं [को०]।

मशकूर—वि० [अ०] कृतज्ञ [को०]।

मशककत—सज्ञा स्त्री० [अ० मशककत] १ मेहनत। श्रम। परिश्रम। २ वह परिश्रम जो जेलखाने के कैदियो को करना पडता है। जैसे, चक्की पीसना, कोल्हू पेरना, मिट्टी खोदना रस्सी बटना आदि। ३ कण्ट। दुख। तकलीफ [को०]।

मशककती—वि० [अ० मशककत] मेहनत करनेवाला। मेहनती। परिश्रमी।

मशगला—सज्ञा पुं० [अ० मशगलहू] १ उद्यम। व्यवसाय। २, व्यापार। शगल। ३ कार्य। काम [को०]।

मशगूल—वि० [अ० मशगूल] काम मे लगा हुआ। प्रवृत्त। लीन।

मशरब—सज्ञा पुं० [अ० मशरब] १, पानी पीने का स्थान। २ मत। अकीदा। विश्वास [को०]।

मशरिक—सज्ञा पुं० [अ० मशरिक] सूर्य निकलने का स्थान। उदयाचल। २, पूर्व। पूरव। उ०—यो सुन्या हूँ शहर मशरिक

का नकन, वादशाह उम शहर म्याने था अकल ।—दक्खिनी०,
पृ० ३६३ ।

मशरिकी—पि० [अ० मश्रिकी] १ पूर्वोय । पूरव का । २ जो
पश्चिमी या यूरोप का न हो, एशिया का हो [को०] ।

मशरू—नवा पुं० [अ० मशरूअ] एक प्रकार का धारीदार कपडा ।
विशेष—यह रेपम और सूत से बुना जाता है । मुसलमान स्त्री पुग्ग
इसका पायजामा बनाकर पहनते हैं । यह अधिकतर बनारस में
बनता है ।

मशविरा—मज्ञा पुं० [अ० मश्वरह्] १० 'मशविरा' ।

मशविरा मज्ञा पुं० [अ० मश्वरह्] मलाह । परामर्श । मत्रणा ।

यौ०—मलाह मशविरा = परामर्श । उ०—उन्होंने समझा कि
मुद्गर पूर्व में भी एक प्रबल जक्ति का प्रादुर्भाव हुआ और बड़े
बड़े राजकीय मामलों में श्रव श्रागे उसमें भी मलाह मशविरा
करने की जरूरत पडा करेगी ।—द्विवेदी (शब्द०) ।

मशहूर—वि० [अ०] प्रख्यात । प्रसिद्ध ।

मशाता—सज्ञा स्त्री० [अ० मशशातह्] १ प्रमाधिका । २ कुटनी ।
दूती । उ०—छिपी थी सो एक माह मद की छत्रीली । मशाता
हो ईदी निगारत दिखाया ।—दक्खिनी०, पृ० ७३ ।

मशात—सज्ञा पुं० [सं० शमशान] मरघट । उ०—बसे मशान भूत
संग लिये । रक्त फूल की माला दिए ।—लल्लू (शब्द०) ।

मशायरा—सज्ञा पुं० [अ० मशायरह्] दे० 'मुशायरा' । उ०—आज
इस महल्ले में एक जगह मशायरा होगा इस वास्ते दो घंटी
वहाँ जाने का इरादा है ।—श्रीनिवास श०, पृ० ३६ ।

मशाल—सज्ञा पुं० [अ० मशअल, मिशअल] एक प्रकार की मोटी
बत्ती जिसके नीचे पकटने के लिये काठ का एक दस्ता लगा
रहता है और जो हाथ में लेकर प्रकाश के लिये जलाई
जाती है ।

विशेष—यह कपड़े की बनाई जाती है और चार पाँच अंगुल
के व्यास की तथा दो ढाई हाथ लम्बी होती है । जलते रहने
के लिये इसके मुँह पर बार बार तेल की धारा डाली जाती है ।

मुहा०—मशाल लेकर या जलाकर हूँढ़ना = अच्छी तरह हूँढ़ना ।
बहुत हूँढ़ना । उ०—अगर मशाल लेकर भी हूँढोगी तो इतना
बडा दुश्मन न मिलेगा ।—फिमाना०, भा० ३, पृ० ६१३ ।

मशालची—सज्ञा पुं० [फा०] [स्त्री० मशालचिन] मशाल दिखलाने-
वाला । मशाल जलाकर हाथ में लेकर दिखलानेवाला ।

मशी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १० 'मसि' [को०] ।

मशीखत—सज्ञा स्त्री० [अ० मशीखत] १ बढप्पन । बुजुर्गों (जे०) ।
२ शेखी । घमड ।

मुहा०—मशीखत बघारना = बढ बढकर बातें करना । शेखी
बघारना ।

मशीन—सज्ञा स्त्री० [अ०] किसी प्रकार का यंत्र जिसकी सहायता
से कोई चीज तैयार की जाय । कल ।

यौ०—मशीनगन = एक प्रकार की बटूक जिसे बहुत तेजी से
गोलियाँ छूटती हैं । मशीनमेन = मशीन चलानेवाला आदमी ।
प्रेम मैन ।

मशीनगी—सज्ञा स्त्री० [अ०] १ किसी नगरमाने के यंत्रों का
समूह । २ कार्यप्रक्रिया । रचनापद्धति [को०] ।

मशीर—सज्ञा पुं० [अ०] मजबूत देनेवाला । मजह देनेवाला ।
मशरणा देनेवाला । मशी ।

मशुन—सज्ञा पुं० [सं०] श्वान । कुत्ता [को०] ।

मशक—सज्ञा पुं० [अ० मशक] किसी काम को अच्छी तरह करने
का अभ्यास । उ०—दिवा मन्त मुद्रिकन मशक दवीक । था
पानी का वाँ टक चषमा अमीक ।—दक्खिनी०, पृ० ३४७ ।

मशकरी—सज्ञा स्त्री० [हि० मशकरी] १० 'ममलरी' । उ०—दुष्ट
राशे ने मशकरी के साथ विप को चरशाशुन कहलाकर
भिजवाया ।—राम० वर्मा०, पृ० २८२ ।

मशकूक—वि० [अ०] १ जिमपर शक हो । मदिश्व । २ जिमको
शक हो । शकावान । शकित [को०] ।

मशकूर—वि० [अ०] १० 'मजकूर' ।

मशशाक—वि० [अ० मशशाक] जिसे कोई काम करने का खूब
अभ्यास हो । अग्र्यन्त ।

मशशाकी—सज्ञा स्त्री० [अ० मशशाक] अभ्यस्त होना । निपुण
होना । निपुणता [को०] ।

मशशाता—सज्ञा स्त्री० [अ० मशशातह्] प्रमाधिका । दे० 'मशाता' ।

मप—सज्ञा पुं० [सं० मप] १० 'मप' । उ०—दक्ष लिए मुनि बोलि
सब करन लगे बड जाग । नेवते मादर सकल मुग्ग जे पावत
मप भाग ।—मानस, १ । ६० ।

मपार(पु)—पि० [सं० अमर्ष] १ ईयालु । द्वेषी । २ क्रोधी ।
३ चिकना चुपडा । उ०—फदैत कुरंग ने दन मार । जर हेम
पट्ट डोरी मपार ।—पृ० रा०, ५८ । २१ ।

मपि—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ काजल । मुग्गा । ३ म्याही ।

मपिकूपी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दावात ।

मपिघटी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दावात ।

मपियान—सज्ञा पुं० [सं०] दावात ।

मपिपरय—सज्ञा पुं० [सं०] लिखन का काम करनेवाला । वह जो
लिखने का काम करता हो । लेखक ।

मपिप्रसू—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ दावात । २ कलम ।

मपिमणि—सज्ञा स्त्री० [सं०] दावात ।

मपी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १० 'मपि' ।

मष्ट—वि० [सं० मष्ट, प्रा० मष्ट = मष्ट] १ सस्कारणून्य । जो
भूल गया हो । २ उदासीन । मौन । उ०—(क) सो अरवगुन
कित कीजिए जिव दीजै जेहि काज । अरव कहनो है कछु नही
मष्ट भलो पखिराज ।—जायसी (शब्द०) मुनिहैं लोग
मष्ट अरवहुँ करि तुमहि कहाँ की लाज । सूर म्याम मरौ माखन
भोगी तुम आवति वेकाज ।—सूर०, १० । ७७५ ।

मुह्रां—मण्ट करना=चुप रहना। मुह्र न खोलना। उ०—
 (क) बोलत लखनाहि जनक डेराही। मण्ट करहु अनुचित
 भल नाही।—तुलसी (शब्द०)। (ख) बूभेसि सचिव
 उचित मत कहहू। ते सब हँसे मण्ट करि रहहू।—तुलसी
 (शब्द०)। (ग) स्याम तन देखे री आपु तन देखिए।
 भीति जो हाइ तो चित्र श्वरेखिए। कहाँ मेरे कान्ह की
 तनक सी आंगुरी वडे वडे नखनि के चिन्ह तेरें। मण्ट कर
 हँसंगे लोग, अकवार भरि भुजा पाई कहाँ श्याम मेरे।—
 मूर०, १०।३०७। मण्ट धारना=मौन धारण करना। चुप्पी
 साधना। उ० मुन्यो वमुदेव दोउ नदमुवन आए। त्रिया
 साँ कहत कछु सुनत है री नारि, रातिहू सपन कछु ऐसे पाए।
 गए अक्रूर तोह नृपति माँगे बोलि, तुरत आए आइ कस मारे।
 कहा पिय कहत, सुनिहै वात पौरिया, जाय कहिहै रहौ
 मण्ट धारे।—सूर०, १०।३०८६। मण्ट मारना=मौन धारण
 करना। चुपचाप रहना। उ०—एक दिन वह रात्रि समय
 स्त्री के पास सेज पर तन छीन मन मलीन मण्ट मारे बँठा
 मन ही मन कुछ विचार करता था।—लल्लू (शब्द०)।

मष्णार—सज्ञा पु० [सं०] ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार एक प्राचीन
 स्थान का नाम।

मष्णारी(५)—वि० [सं० मत्सर या अमर्ष, हि० माखना] मत्सरवाला।
 क्रोधयुक्त। उ०—गजन पति दुलि ढाल तत्त तोपार पष्णारिय।
 जत्र गोर गहरान मिलत मेछान मष्णारिय।—पृ० रा०,
 ३३।२६।

मसंद(५)—सज्ञा स्त्री० [अ० मसनद, हि० मसनद] दे० 'मसनद'।
 उ०—हम्मीर राव राजत मसद। दुहुँ घोर चौर ढारँअमद।
 —ह० रासो, पृ० १११।

मस(५)†—सज्ञा स्त्री० [सं० मसि] स्याही। रोशनाई। उ०—सात
 स्वर्ग को कागद करई। धरती समुद दुहुँ मस भरई।—जायसी
 (शब्द०)।

मस†—सज्ञा पुं० [सं० मशक] मच्छड़। मशक। उ०—दादुर
 काकोदर दसन परे मसन मात ध्याउ।—दीन० ग्र०,
 पृ० २०६।

यौ०—मसहरी=दे० 'मशहरी'।

मस†—सज्ञा स्त्री० [सं० श्मश्रु] मोछ निकलने से पहले उसके स्थान
 पर की रोमावली। उ०—उनके भी उगती मसो से रस का
 टपका पडना और अपनी परछाई से अकडना इत्यादि।—
 शिवप्रसाद (शब्द०)।

मुह्रां—मस भीजना=मूछों का निकलना आरंभ होना। मूछों की
 रेखा दिखाई पडने लगना। उ०—उठत वैस मस भीजत
 सलोने सुठि सोभा देखवैया विनु चित्त ही विकहै।—
 (शब्द०)।

मस^०—सज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'मसा'।

मस^१—सज्ञा पुं० [सं०] माप। तौल [को०]।

मस^२—सज्ञा पुं० [अ०] १ चूसना। चूषण। २. छूना। ३.
 पसद। रुचि [को०]।

मसक—सज्ञा पुं० [सं० मशक] मसा। मच्छड़। डाँस। उ०—
 मसक समान रूप कपि परी। लकहि चलेउ सुमिरि मन
 हरी।—तुलसी (शब्द०)।

मसक^३—सज्ञा स्त्री० [फ्रा० मशक] दे० 'मशक'। उ०—छूछी मसक
 पवन पानी ज्या तैसेई जन्म विकारी हो।—सूर (शब्द०)।

मसक^४—सज्ञा स्त्री० [अनु०] मसकने की क्रिया या भाव।

मसक^५—सज्ञा पुं० [हिं० मसक] एक प्रकार का वाजा।
 मशकवीन। उ०—भाँक मर्जारे मसक समय अनुमार।—
 प्रेमघन०, भा० १, पृ० ७८।

मसकची—सज्ञा पुं० [फ्रा० मशक + तु० चा (प्रत्य०)] भस्ती।
 मसकवाला। उ०—उस समय बादशाह का गुनाम एक मसकचो
 था।—हुमायूँ, पृ० ६६।

मसकत(५)†—सज्ञा स्त्री० [अ० मशकत] दे० 'मशकत'। उ०—
 तुम कब मो मो पतित उवारधा। काहे को प्रभु विरद बुलावत
 विन मसकत को तारयो।—सूर (शब्द०)।

मसकन—सज्ञा पुं० [अ० मस्कन] निवासस्थान। घर। मकान।
 उ०—मुवारक शहर मगरिव ये मसकन। बलियाँ मे सब अर्थ
 अफजल हर एक मन।—दक्खिनी०, पृ० ११५।

मसकना^१—क्रि० सं० [अनु०] १ खिंचाव या दबाव में डालकर
 कपडे को इस प्रकार फाडना कि बुनावट के सब तनु टूटकर
 अलग हो जायँ। २ किसी चीज को इस प्रकार दवाना कि
 वह बीच में से फट जाय या उसमें दरार पड जाय। उ०—
 महावली बालि को दवतु दलकत भूमि तुलसी उछरि सिधु
 मेह ममकतु है।—तुलसा (शब्द०)। ३. जोर से दवाना।
 जोर से मलना। उ०—सो सुख भापि सक अश्व को रिस कै
 कसकै ममकै अतिया छिये। राति की जागी प्रभात उठी अंग-
 रात जम्हात लजात लगी हिये।—पद्माकर (१०, पृ० १७१)।
 †४. वैलो को बलपूवक हाँकना। दाँडाना। मगाना। उ०—
 गाटी वारे मसकि द बैल अरु पुरवैया के बादर अत आए।
 —शुक्ल अभि० ग्र०, पृ० १५६।

सयो० क्रि०—डालना।—देना।

मसकना^२—क्रि० अ० किसी पदार्थ का दबाव या खिंचाव आदि के
 कारण बीच में से फट जाना। जैसे,—कपडा मसक गया,
 दीवार मसक गई।

सयो० क्रि०—जाना।

२. (चित्त का) चितित हाना। दुःख के कारण बँसना। उ०—
 राजकुमार धारे से उसी स्थान पर बँठ गए। पूर्वकालीन वार्ते
 स्मरण हाने लगी और कलेजा मसकन लगा।—गदावरसिंह
 (शब्द०)।

मसकरा(५)—सज्ञा पुं० [अ० मसकरा] दे० 'मसकरा'। उ०—(क)
 जूझेंगे तब कहेंगे श्रव क्या कहे वनाय। भीर परं मन मसकरा
 लई कियोँ भगि जाय।—कबीर (शब्द०)। (ख) दाहू यहू मन
 मसकरा, जिनि काई पतियाइ।—दाहू, पृ० २०६।

मसकरी(५)—सज्ञा स्त्री० [हिं० मसखरी] दे० 'मसखरी'। उ०—

काँद न देइ मसकरी करई । कहु हुइ भाति कसे निस्तरई ।
—कवीर वी० (शिणु०), पृ० २०६ ।

मसकला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मसकलह्] १ सिकलीगरो का एक श्रोजार जो हंसिया के आकार का होता है और जिसमे काठ का एक ष्स्ता लगा रहता है । इससे रगडने मे धातुओ पर चमक आ जाती है । प्राय तलवारों आदि भी इसी से साफ की जाती हैं । उ०—(क) गुरु मिकलीगर कौजिए, जान मसकला देइ । मन की मँल छुडाइ कै, सुचि दर्पण कर लेइ ।—कवीर (शब्द०) । (ख) शिष्य खाँट गुरु मसकला, चढै शब्द खरमान । शब्द सहे मन्मुख रहे, निपजे शिष्य सुजान ।—कवीर (शब्द०) । २ सँकल या मिकली करने की क्रिया ।

मसकली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] 'मसकना' ।

मसका'—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मस्कह्] १ नवनीत । मक्खन । नैनू २ ताजा निकाला हुआ घी ।

मसका'—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. दही का पानी । २. रासायनिक परिभाषा मे, बाँधा हुआ पारा । ३. चूने की बरी का वह चूर्ण जो उमपर पानी छिडकने से हो जाता है । ४. कायस्थ । (सुनार) ।

मसका (पु) —सञ्ज्ञा पुं० [सं० मशक] द० 'मसक' । उ०—मसका कहत मेरी सरभरि कौन उडै । मेरे आगे गण्ड की कतीयक जर है ।—मुदर० प्र०, भा० २, पृ० ४६६ ।

मसकाना†—क्रि० स०, अ० [अनु०] दे० 'मसकना' ।

मसकाना (पु) —क्रि० अ० [अनु०] खाना । भक्षण करना । उ०—आफू पाय भाँगि मसकावै । ताँ मैं अकलि कहाँ तै आवै । चढ़ताँ पित्त उत्तरताँ बाई । ताँतै गोरख भाँगि न खाई ।—गोरख०, पृ० ६६ ।

मसकाला (पु) †—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मसकलह्] दे० 'मसकला' । उ०—कहाँ ग्यान कहाँ ग्यान का म्याँन कहाँ म्याँन का मसकाला ।—रामानन्द०, पृ० १३ ।

मसकीन (पु) †—वि० [अ० मिसकीन] १ गरीब । दीन । बेचारा । उ०—हूँ मसकीन कुलीन कहाँवो तुम योगी सन्यासी । ज्ञानी गुणी शूर कवि दाता ई मति काहु न नासी ।—कवीर (शब्द०) । २ साधु । सत । उ०—क्या मूढी भूमिहि शिर नाए क्या जल देह नहाए । खून करै मसकीन कहाँवै गुण को रहे छिपाए ।—कवीर (शब्द०) । ३ दरिद्र । कगाल । ४ भोला भाना । ५ सुशील ।

मसखरा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मसखरह्] १. बहुत हँसी मजाक करनेवाला । हँसीढ । ठट्टेवाज । उ०—कविरा यह मन मसखरा कहूँ तो माने रोम । जा मारग साहब मिलै तहाँन चालै कोस ।—कवीर (शब्द०) । २ विद्वषक । नक्काल ।

मसखरापन—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मसखरा + हि० पन (प्रत्य०)] दिल्लीगी । ठठेली । हँसी । ठट्टा । उ०—मुझको तो आपके मुसाहरो मे मिवाय मसखरापन के और कोई लियाकत नहीं मानूम होती ।—श्रीनिवामदास (शब्द०) ।

मसखरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मसखरा + हि० ई (प्रत्य०)] दिल्लीगी । हँसी । मजाक । उ०—जो कह भूठ मसखरी जाना । कनियुग सोइ गुनवत बराना ।—तुलसी (शब्द०) ।

मसखवा†—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मास + खाना] वह जो माम खाता हो । मामाहारी । उ०—बूडहे हस्ति घोर मानवा । चहु दिम प्राय जुँ मसखवा ।—जायमी (शब्द०) ।

मसजिद—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मसजिद] मिजदा करन का म्यान । मुसलमानों के एकत्र होकर नमाज पढ़न तथा इश्वरवदना करने के लिये विशिष्ट रूप में बना हुआ म्यान ।

विशेष—मसजिद मावारगत चौकार बनाई जाती है और उममे आगे की ओर कुछ खुला हुआ स्थान तथा हाथ मुँह घेन के लिये पानी का हौज होता है । पीन्द्र की ओर नमाज पढ़न के लिये दालान होता है जिसके ऊपर प्राय एक से चार तक ऊँची मीनारें भी हाती ह, जिनमे से किना एक पर चढकर अजान या नमाज के समय की मूचना दी जाती है ।

मसडी'—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिसरी] फद । (डि०) ।

मसडी'—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] एक प्रकार का पत्ती ।

मसतक (पु) —सञ्ज्ञा पुं० [सं० मस्तक] दे० 'मस्तक' । उ०—मा घण इणि परि राखिजई, जिम सिव मसतक गग ।—ढोला०, दू० ४५३ ।

मसती—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मस्त] हाथी । (डि०) ।

मसनद (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मसनद] दे० 'मसनद' । उ०—नर घर वर मसनद सीम उसमीस घराइअ ।—मुजान०, पृ० २३ ।

मसन'—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का टुकुआ जिसकी महायता से ऊन के कई तागे एक साथ मिलाकर बटे जाते हैं ।

मसन'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ तौलना । मापना । २. एक प्रकार की जडी । ३ चोट । आघात । [को०] ।

मसनद—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ बडा तकिया । गाव तकिया । २ तकिया लगाने की जगह । ३ अमीरों को बैठने की गद्दी । उ०—क्या मसनद तकिये मुल्क मकाँ, क्या चीकी कुरमी तख्त छतर ।—नजीर (शब्द०) ।

मसनदनशीन—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मसनद + फा० नशीन] मसनद पर बैठनेवाला । बडा आदमी । अमीर ।

मसनवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मसनवी] उर्दू काव्य का एक प्रकार जिसमे कोई कहानी या उपदेश एक ही वृत्ति मे होता है और जिसमे हर शेर के दोनो मिसरे सानुप्रास होते हैं पर हर शेर का तुक भिन्न होता है । उ०—जहि के मसनवी जगत महँ, अगम निगम अवगाह ।—हिंदी प्रेमगाथा०, पृ० २३२ ।

मसना—क्रि० स० [हि० मसजना] १ मसलना । उ०—(क) स्वास को चारु प्रकाम बयाँन मद सुगध हियो मसती है ।—रघुनाथ (शब्द०) । (ख) आजु परघो जानि जब आपने मैं सुने कान वाको सबाधन मोसो कसो ही मसतु है ।—रघुनाथ

(शब्द०) । २ गूँघना । जैसे—नेत्रो के आस पास उर्द के मने हुए आटे की एक अगुल ऊँची दीवार सी बना दो ।

मसजूई—वि० [अ० मसजूई] १ बनावटो । कृत्रिम । २ झूठा । तथ्यरहित । ३ अस्वाभाविक । अत्राकृतिक [को०] ।

मसपूरज (पु०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०, अस्थि । हड्डी जिसके आधार पर माम स्थिर रहता है । उ०—नदी सहस नाडियों प्रगत परवत मसपूरज ।—रघु० ६०, पृ० ४५ ।

मसमुद (पु०)†—वि० [मस ? + मूँदना (= बढ होना)] कणमकण । ठेलमठेल । धक्कमधक्का । उ०—तवहीं मूरज के मुभट निकट मचायो दुद । निकमि मकै नहि एकहू कस्यो कटक मसमुद ।—मूदन (शब्द०) ।

मसयारा (पु०)†—सञ्ज्ञा पु० [अ० मशयल, १ मशाल । उ०—(क) जानहुँ नखत करहि उजियारा । छिय गए दोपक श्री ममयारा ।—जायसी (शब्द०) । (ख) बारह अभरन सोरह सिंगारा । तोहि मोहे पिय ससि ममयारा ।—जायसी (शब्द०) । २ मशालची । मशाल दिखानेवाला । उ०—मूक मुनेटा सिम ममयारा । पवन करै नित वार बोहारा ।—जायसी (शब्द०) ।

मसरना (पु०)†—क्रि० स० [हि० मसलना] दे० 'मसलना' । उ०—कुँवर कान्ह जमुना में न्हात । मसरत मुभग साँवरे गात ।—घनानद, पृ० १८३ ।

मसरफ—सञ्ज्ञा पु० [अ० मसरफ] १. व्यवहार मे आना । काम मे आना । उपयोग । २ व्यय करने की जगह, मीका वा अवमर (को०) । ३ प्रयोजन । हेतु (को०) ।

क्रि० प्र०—मैं आना ।—मैं लाना ।

मसरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] मसुर (को०) ।

मसरू—सञ्ज्ञा पु० [अ० मशरू] एक प्रकार का रेशमी कपडा । विशेष दे० 'मशरू' ।

मसरूका—वि० [अ० मसरूकड] चोरी किया हुआ । चुराया हुआ । जैसे, माल मसरूका । (कचहरी) ।

मसरूफ—वि० [अ० मसरूफ] काम मे लगा हुआ । काम करता हुआ ।

मसल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ कहावत । कहनूत । लोकोक्ति । उ०—हिंदू हृदय जो आरति पावे । राम नाम कै मसल चलावे ।—गुलाल०, पृ० १२५ । २ ममान । तुन्य । मिम्ल (को०) ।

मसलति—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० ममलहत] १ 'मसलहत' । उ०—बोलि खान मुलतान तब, ममलति करी जु माहि ।—ह० रामो, पृ० ६३ ।

मसलन—वि० [अ०] मिसाल के तौर पर । उदाहरण के रूप मे । उदाहरणार्थ । जिस तरह । यथा । जैसे ।

मसलन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मसलना] १ ममलने का कार्य या स्थिति । रगडने का भाव । उ०—चचल किशोर मुदरता की, मैं करती रहती रखवाली । मैं वह हलकी सी मसलन हूँ, जो वनती कानो की लाली ।—कामायनी, पृ० १०३ । २ स्पर्श । छुन्न ।

मसलना—क्रि० म० [हि० मलना] १ हाथ से दवाते हुए रगडना । मलना । २ जोर से दवाना । उ०—आज किसी के मसले तारो की वह दरागत भकार । मुझे बुलाती है सहमी मी भक्ता के परदों के पार ।—यामा, पृ० १४ ।

स यो० क्रि०—दालना । देना ।

३ आटा गूँघना ।

मसलहत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] ऐसी गुप्त युक्ति अथवा छिपी हुई भलाई जो सहमा ऊपर से देखने से जानी न जा सके । अप्रकट शुभ हेतु । जैसे—(क) इसमे एक मसलहत है जो अभी तक आपकी समझ मे नही आई । (म) इस समय उसे यहाँ से उठा देने मे एक मसलहत थी । २. परामर्श । मलाह । उ०—घरे ममलहत करै बडुरिकै सौ सौ धावै ।—पलटू०, पृ० ७० ।

यौ०—मसलहतअदेश = ममभकर कार्य करनेवाला । ममलहत-पसद = (१) शुभकामो । खैरखाह । (२) 'ममलहतअदेश' । मसलहतेवक्त = समय की पुकार ।

मसलहतिका (पु०)†—वि० [अ० मसलहत] परामर्श देनेवाला । सलाह-देनेवाला । उ०—काम श्री क्रोध ममलहतिका वे दोऊ ।—पलटू०, पृ० ४२ ।

मसला' सञ्ज्ञा पु० [अ० मसलह] कहावत । कहनूत । लोकोक्ति । उ०—आप भतो ती जग भलो यह मसलो जुअ गोइ । जो हरि हित करि चित गहो कहो कहा दुख होइ ।—स० मत्तक, पृ० २४६ ।

मसला'—सञ्ज्ञा पु० [अ०] १. ममस्या । त्रिपय । प्रश्न । सवाल (को०) ।

मुहा०—मसला हल होना = ममस्या हल होना ।

मसवई—सञ्ज्ञा स्त्री० [मसोवा द्वीप] एक प्रकार का बबूल का गोद जो अदन से आता है । यह पहले मसोवा द्वीप से आता था, इसी से इसका यह नाम पडा ।

मसवारा—सञ्ज्ञा पु० [हि० मास + वारा (प्रत्य०)] प्रसूता का वह स्नान जो प्रसव के उपरांत एक मास समाप्त होने पर होता है ।

मसवासी—सञ्ज्ञा पु० [सं० मासवासी] १ एक स्थान पर केवल एक मास तक निवास करनेवाला विरक्त । वह साधु आदि जो एक मास से अधिक किसी स्थान मे न रहे । उ०—कोई मुरिखेमुर कोइ सनियासी । कोई सुरामजति कोई ममवासी ।—जायसी (शब्द०) । २. एक महीने से अधिक किसी पुत्र के पास न रहनेवाला स्त्री । गरिका । उ०—तिरिया जो न होइ हरिदासी । जो दासी गरिका मम जानो दुष्ट राई मसवामी ।—रघुराज (शब्द०) ।

मसविदा—सञ्ज्ञा पु० [अ० मुसविदा] १. वह लेख जो पहली बार काट छाँट के लिये तैयार किया गया हो और अभी साफ करने की बाकी हो । खर्चा । मसौदा । २. युक्ति । उपाय । तरकीब ।

क्रि० प्र०—निकालना ।

मुहा०—मसविदा बोधना = युक्ति रचना । उपाय सोचना ।

भस्महरी—सज्ञा स्त्री० [सं० भस्महरी] १ पलंग के ऊपर और चारो ओर लटकाया जानेवाला वह जालीदार कपड़ा जिसका उपयोग मच्छड़ों आदि से बचने के लिये होता है। २ ऐसा पलंग जिसके चारो पायों पर इस प्रकार का जालीदार कपड़ा लटकाने के लिये चार ऊँची लकड़ियाँ या छड़ लगे हों।

विशेष—ऊपर की ओर भी ये चारो लकड़ियाँ या छड़ लकड़ी की चार पट्टियों या छड़ों से प्रायः जोड़े रहते हैं।

भस्महार(पुं)—सज्ञा पुं० [सं० मासाहारिन्] मामाहारी। मास खानेवाला। उ०—(क) घटे नहीं कोह भरे उर छोह। नटे भस्महार घरे मन मोह।—मूदन (शब्द०)। (ख) भस्महार छाए नभ वरनि धाए स्यार।—सूदन (शब्द०)।

भस्महर—वि० [अ० भस्महर] दे० 'भस्महर'।

भस्मान(पुं)—सज्ञा पुं० [हि०] उ०—धमसान भस्मान मु ज्योति जगो।—ह० रासो, पृ० १५७।

भसा—सज्ञा पुं० [सं० मासकील] १ शरीर पर कहीं कहीं काले रंग का उभरा हुआ मास का छोटा दाना जो वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का चर्मरोग माना जाता है, और जो शरीर में अपने होने के स्थान के विचार से शुभ अथवा अशुभ माना जाता है। यह प्रायः सरसो अथवा मूग के आकार से लेकर बेर तक के आकार का होता है। उ०—अदाज से जियादा निपट नाज सुख नहीं। जो खाल अपने हृद से बड़ा सो भसा हुआ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० १२। २ बवामीर रोग में मास के दाने जो गुदा के मुँह पर या भीतर होते हैं। इनमें बहुत पीड़ा होती है और कभी कभी इनमें से खून भी बहता है।

भसा—सज्ञा पुं० [सं० भसाक] मच्छड़।

भसाइक—सज्ञा पुं० [अ० मुशायख (शेख का बहुवचन)] दे० 'शेख'। उ०—पीर पैग़र किया पयाना। शेख भसाइक सब समाना।—दादू०, पृ० ५७३।

भसाण(पुं)—सज्ञा पुं० [राज०] दे० 'भसान'। उ०—काहे रे नर करहु डफाण। अतिकालि घर गोर भसाण।—दादू०, पृ० ४२४।

भसान—सज्ञा पुं० [सं० भस्मान] १ वह स्थान जहाँ मुरदे जलाए जाते हों। भस्मघट। उ०—सब भसान पर हमरा राज। कफन मांगने का है काज।—भारतेंदु ग्र०, भा० १, पृ० २६२।

पर्या०—पितृवन। शतानक। रुद्राक्रीड। दाहमर। अतशय्या। पितृकानन।

मुहा०—भसान जगाना = तत्रशास्त्र के अनुसार भस्मान पर बैठकर शव की सिद्धि करना। मुरदा सिद्ध करना। उ०—कपट सयानि न कहति कडु जागति मनहु भसान।—तुलसी (शब्द०)। भसान पढ़ना = सनाटा हो जाना।

२. भूत पिशाच आदि।

यौ०—भसान की बीमारी = बच्चों को होनेवाला एक प्रकार का रोग जिसमें वे घुल घुलकर मर जाते हैं।

३. रणभूमि। रणक्षेत्र। उ०—तुलसी महेश विधि लोकपाल

देवगन देखत विमान चढि कौतुक मसान के।—तुलसी (शब्द०)।

भसाना—सज्ञा पुं० [अ० भसानह] पेट में की वह थैली जिसमें पेशाब जमा रहता है। पेशाब की थैली। मूत्राशय। वस्ति।

भसाना(पुं)—सज्ञा पुं० [सं० भस्मान] दे० 'भसान'। उ०—लोक पडी भूराय उठन हैं गिद्ध ममाना।—पलटू०, पृ० ७६।

भसानिया—सज्ञा पुं० [हि० भसान (भस्मान) + इया (प्रत्य०)] १ भस्मान पर रहनेवाला डोम। २ वह जो भस्मान पर रहकर किसी प्रकार की साधना करता हो। ३ वह जो भाड़ फूँककर भूत प्रेत आदि उतारता हो। सयाना। शोभा।

भसानो—सज्ञा स्त्री० [सं० भस्मानी] भस्मान में रहनेवाली पिशाचिनी, डाकिनी इत्यादि। उ०—माइ भसानो सेठि मीतला, भँरू भूत हनुमत। साहब से न्यारा रहै जो इनको पूजत।—कवीर (शब्द०)।

भसायख—सज्ञा पुं० [अ० शेख] दे० 'भसाइक'। उ०—ना कोइ पीर भसायख काजी।—कवीर श०, भा० २, पृ० १५२।

भसार—सज्ञा पुं० [सं०] इद्रनील मणि। नीलम।

भसाल—सज्ञा स्त्री० [अ० भसाल] दे० 'भसाल'। उ०—आनि इतै छन वारि दे छवि घनसार भसाल। कौन काज तहँ राज जहँ सुवन वदन दुतिजाल।—रामसहाय (शब्द०)।

भसालची—सज्ञा पुं० [फा० भसालची] दे० 'भसालची'।

भसालदुम्मा—सज्ञा पुं० [हि० भसाल + दुम] एक प्रकार का पत्ती जिसकी दुम बिलकुल काली रहती है, बाकी सारा शरीर चाहे जिस रंग का हो।

भसालहत—सज्ञा स्त्री० [अ० भसालहत] सुलह। मेल। सधि। समझौता [को०]।

भसाला—सज्ञा पुं० [फा० भसालह] १ किसी पदार्थ को प्रस्तुत करने के लिये आवश्यक सामग्री। वे चीजें जिनकी सहायता से कोई चीज तैयार होती है। जैसे, (क) मकान बनाने के लिये सुर्खी, चूना, ईंटें, आदि। (ख) रसोई बनाने के लिये हलदी, धनिया मिर्च, जीरा, तेजपत्ता आदि। (ग) कपड़ा पर टाँकने के लिये गोटा, पट्टा, किनारी आदि। (घ) ग्रथ या लेख आदि लिखने के लिये दूसरे ग्रथ आदि।

यौ०—गरम भसाला। भसालेदार। भसाले का तेल।

२. अविधियों अथवा रासायनिक द्रव्यों का योग या मसूह। जैसे, पत्तिल साफ करने का भसाला, पान का भसाला सिर मलने का भसाला, तेल में सिलाने का भसाला। ३. साधन। जैसे,—श्रव तो आपको भी दिल्ली का अच्छा भसाला मिल गया। ४. तेल। जैसे,—रोशनी बुझ रही है, भसाला लेते आना। ५. आतिशबाजी। जैसे,—उसकी वारात में अच्छे अच्छे भसाले छूटे थे। ६. नवयावना और मुदरी स्त्री (वाजाह)। ७. टार्च या चौरवक्ती में लगनेवाला भसाला। बंदरी का तेल।

मसाली—सज्ञा स्त्री० [अ० मशाल ?] रस्सी । डोरी । (लश०) ।

क्रि० प्र०—कसना । बांधना ।

मसाले का तेल—सज्ञा पुं० [हिं० मसाला + तेल] एक प्रकार का सुगंधित तेल जो साधारण तिल के तेल में कचूर कचरी, बालछड आदि सुगंधित द्रव्य मिलाकर बनाया जाता है ।

मसालेदार—वि० [अ० मसालह् + फा० दार (प्रत्य०)] जिसमें किसी प्रकार का मसाला लगा या मिला हो ।

विशेष—इसका प्रयोग प्रायः खाद्य पदार्थों के लिये ही होता है ।

मसाहत—सज्ञा स्त्री० [अ०] नापना । पैमाइश [को०] ।

मसिंदर—सज्ञा पुं० [अ० मेसेंजर] जहाज में का वह बहुत बड़ा रस्सा जो चरखी या दौड़ में लपेटा रहता है और जिसकी सहायता से जहाज का गिराया हुआ लंगर उठाया जाता है । (लश०) ।

मसि—सज्ञा स्त्री० [म०] १ लिखने की स्याही । रोशनाई । उ०—तुम्हरे देश कागद मसि खूटो—सूर (शब्द०) । (ख) परम प्रेममय मृदु मसि कीन्ही । चारु चित्त भीती लिखि लीन्ही ।—तुलसी (शब्द०) । २ निर्गुंडी का फल । ३ काजल । ४ कालिख । उ०—जनु मुँह लाई गेरु मसि भए खरनि असवार ।—तुलसी (शब्द०) । ५ पाप । उ०—अन वृजिन् दुकृत दुरित अध मलीन मसि पक ।—अनेकार्थ०, पृ० ५५ । ६ नई उगती मूछी की रेख । मूँछ । उ०—उन्नत नामा अधर विव सुक की छवि छीनी । तिन बिच अदभुत भाँति लसति कछुइक मसि भीनी ।—नद० ग्र०, पृ० ३ ।

मसिआरा(७)—वि० [सं० मसि + हिं० आरा (प्रत्य०)] १ कालिमायुक्त । २ कलकयुक्त । कलकी । उ०—सूक सौँहिया समि मसिआरा । पवन करै निति बार बुहारा ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० २६६ ।

मसिक—सज्ञा पुं० [म०] माँप का बिल [को०] ।

मसिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] शोफालिका । निर्गुंडी ।

मसिकूपी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दावात ।

मसिजल—सज्ञा पुं० [सं०] लिखने की स्याही । रोशनाई ।

मसिजीवी—वि० [म० मसि + जीविन्] लेखनकार्य करके आजीविका चलानेवाला ।

मसित—वि० [म०] पीसा या चूर्ण किया हुआ [को०] ।

मसिदानो—सज्ञा स्त्री० [सं० मसि + फा० दानो] दावात । मसिपात्र ।

मसिधान—सज्ञा पुं० [सं०] दावात ।

मसिधानो—सज्ञा स्त्री० [सं०] दावात [को०] ।

मसिपण्य—सज्ञा पुं० [सं०] लिखने का काम करनेवाला । लेखक ।

मसिपथ—सज्ञा पुं० [सं०] कलम ।

मसिपात्र—सज्ञा पुं० [म०] दावात ।

मसिप्रसू—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ कलम । २ दावात [को०] ।

मसिवुदा—सज्ञा पुं० [म० मसिविन्दु] दे० 'मसिविन्दु' । उ०—(क) मुनि मन हरत मजु मसिवुदा । ललित वदन बलि बालमुकुदा ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) उर वषनहा कठ कँठुना भँडूले वार । वेनी नटकन मसिवुदा मुनिमनहार ।—सूर (शब्द०) ।

मसिमणि—सज्ञा स्त्री० [म०] दावात ।

मसिमुख—वि० [सं०] जिसके मुँह में स्याही लगी हो । काले मुँहवाला । दुष्कर्म करनेवाला । उ०—जो भागै सत छाँडि कै मसिमुख चढै वरात ।—(शब्द०) ।

मसियर(७)†—सज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मशाल' । उ०—चहुँ दिसि मसियर नखत तहाई । सूरज चढा चाँद कै ताई ।—जायसी (शब्द०) ।

मसियाना—क्रि० अ० [हिं० मस] मली भाँति भर जाना । पूरा हो जाना । उ०—नेगी नेज मिले अरकाना । पँवरथ बाजे घर मसियाना ।—जायसी (शब्द०) ।

मसियार(७)†—सज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मशाल' । (क) धरती सरग चहुँ दिमि पूरि रहे मसियार ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० ३१३ । (ख) छवि गा दीपक औ मसियारा ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० ३१३ ।

मसियारा(७)—सज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'मशालची' ।

मसिवर्ण—वि० [सं०] स्याही के रंग का काला [को०] ।

मसिविन्दु—सज्ञा पुं० [सं० मसिविन्दु] काजल का बुदा जो नजर से बचने के बच्चों को लगाया जाता है । दिठौना । उ०—लोयन नील सरोज से भू पर मसिविन्दु विराज ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) ललित भाल मसिविन्दु विराजै । भृकुटी कुटिल श्रवण अति आजै ।—विश्राम (शब्द०) ।

मसिली—सज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'मसिल' ।

मसहानी(७)—सज्ञा स्त्री० [सं० मसिधानी] दावात । उ०—मन मसिहानी साँच की स्याही ।—धरनी० बानी, पृ० ३ ।

मसी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मसि' । उ०—दरमन ही ते लागै जममुख मसी है ।—भारतेंदु ग्र०, भा० १, पृ० २८२ ।

मसीका—सज्ञा पुं० [हिं० माशा] १. आठ रत्तो का मान । माशा । २. चवन्नी । (दलाल) ।

मसीत(७)—सज्ञा स्त्री० [फा० मसजिद] मुसलमानों का वदना-स्थान । मसजिद । उ०—कविरा काजी स्वाद वस जीव हते तव दीय । चढि मसीत एको कहै कयो दरगह साँचा होय ।—कवीर (शब्द०) ।

मसीद(७)—सज्ञा स्त्री० [अ० मसिजद] दे० 'मसजिद' । उ०—माँगि कै खैवो मसीद को मोइवो लेनो है एक न देनो है दोऊ ।—तुलसी (शब्द०) ।

मसीना—सज्ञा पुं० [अ०, सं० मस्यन्न (=कदन्न ?)] मोटा अन्न । कदन्न ।

मसीह—सज्ञा पुं० [अ०] ईसाइयों के धर्मगुरु हजरत ईसा का नाम ।

मसीहा—सज्ञा पुं० [फा०] १. ईसाई धर्म के प्रवर्तक ईसा मसीह । २. वह जो मृतकों को जीवित करता हो । उ०—क्यों न दवा

मसृण—वि० [म०] जो रुखा या कडा न हो। चिकना और मुलायम।

मसृणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] अलसी [को०]।

मसेवरां—सञ्ज्ञा पुं० [हि० माम + वरा (प्रत्य०)] माम की वनों चीजें। जैसे, कोफता, कवाव आदि। उ०—फाँह मसेवरा मीफि रसोई। जो किछु सबै माँमु माँ होई।—जायसी (शब्द०)।

मसोढां—सञ्ज्ञा पुं० [ङ०] मोना, चाँदी आदि गलाने की धरिया। (कुमाऊँ)।

मसोढां—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मसूढा'।

मसोस(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मसूपन] दे० 'मसूम'। उ०—हाँ उपाय कहा करौं, हाय भरौं किहि भाय मसोस यौं मारौं।—घनानंद, पृ० १५६।

मसोसना क्रि० अ० [हि० मसोस + ना (प्रत्य०)] दे० 'मसूगना'।

मसोसा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मसोसना] १ मानसिक दुःख। मन में होनेवाला रज। २ पश्चात्ताप। पछतावा।

मसोदा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मसुध्विदा] १ काट छाँट करने दोहराने और साफ करने के उद्देश्य से पहली बार लिखा हुआ लेख। खर्चा। मसविदा। २ उपाय। युक्ति। तरकीब।

मसौदा—मसौदा गौठना या बाँधना = कोई काम करने की युक्ति या उपाय सोचना। तरकीब सोचना।

मसौदा—मसौदानवीस = मसौदा तैयार करनेवाला। मसौदेवाज।

मसौदेवाज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मसौदा + फा० वाज (प्रत्य०)] १ वह जो अच्छा उपाय निकालता है। अच्छी युक्ति सोचनेवाला। २ धूर्त चालाक।

मस्कत—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मस्कत] १ अरब का एक राज्य और उसका प्रधान नगर। २ उक्त राज्य का अनार [को०]।

मस्कर—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ वश। वाम। २ पोला वाम। ३ गति। ४ जान।

मस्करा(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मसखरा'।

मस्करां—सञ्ज्ञा पुं० [म० मस्करिन्] १ वह जो चौथे आश्रम में हो। मन्थामी २ भिक्षु। ३ चद्रमा।

मस्करी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मसखरी'।

मस्कला(७)—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मस्कला] दे० 'मसकला'। उ०—शब्द मस्कला करे ज्ञान का कुर्रंड चलावै।—पलटू०, पृ० २।

मस्का—सञ्ज्ञा पुं० [अ० फा० मस्कह्] १. मखन। नवनीत। २. दे० 'मसका'।

मस्करां—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मसूढा'।

मसखरा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मस्खरह्, हि० मसखरा] दे० 'मसखरा'।

मसखरागी—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मस्खरगी] दे० 'मसखरी'। उ०—वडी

मस्त दिमने लगी ऐव ते। हुई मस्वरागां वडी गैव ते।
—दक्खिनी०, पृ० ६०।

मस्जिद—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मसजिद, मस्जिद] दे० 'मसजिद'। उ०—क्या भो वजू व मजन कीन्हे, क्या मस्जिद सिर नाए। हृदया कण्ट निमाज गुजारै कह भो मक्का जाए, —कवीर (शब्द०)।

मस्त वि० [फा०। मि० म० मस्त] १. जो नशे आदि के कारण मत्त हो। मतवाला। मदीमत्त। जैसे,—वह दिन रात शराव में मस्त रहता है। २. जिसे किसी बात का पता न लगता हो। जिसे किसी की चिंता या परवाह न होती हो। मदा प्रमत्त और निश्चित रहनेवाला। ३. जो अपनी पूरी जवानी पर आने के कारण आपे में बाहर हो रहा हो। यौवनमद से भरा हुआ। जैसे, मस्त हाथी, मस्त औरत। ४. जिसे मद हो। मदपूरण। जैसे, मस्त आँखें। ५. परम प्रमत्त। मग्न। आनंदित। जैसे,—वह अपने बालवच्चो में ही मग्न रहता है। ६. अभिमानी। घमडी। जैसे,—आजकल के मजदूर मस्त हो रहे हैं। इनस काम लेना कुछ महज नहीं है।

मस्त वि० [म०] उच्च। ऊँचा [को०]।

मस्त सञ्ज्ञा पुं० [म०] उत्तमाग। मस्तक। सिर [को०]।

मस्तौ—मस्तदारु। मस्तमूलक।

मस्तक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] मिर। उ०—मस्तक टीका काँध जनेऊ। कवि विभ्राम पंडित सहदेऊ।—जायसी (शब्द०)।

मस्तकज्वर = क्षिरोव्यथा। मस्तकमूलक = दे० 'मस्तमूलक'। मस्तकशुग = मस्तिष्क के चारो ओर की छोटी छोटी शिराएँ। मस्तकशूल = दे० 'मस्तकज्वर'। मस्तकस्नेह = दिमाग।

मस्तकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'मस्तगी'।

मस्तगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मस्तकी] दवा के काम आनेवाला एक प्रकार का बढिया पीला गोद जिसे रूमी मस्तगी भी कहते हैं।

विशेष—यह गोद भूमध्य सागर के ग्रामपास के प्रदेशों में होनेवाली एक प्रकार की सदाबहार झाड़ी के तनों को पाछकर निकाला जाता है, और जो अपने उत्पत्तिस्थान 'रूम' के कारण प्रायः 'रूमी मस्तगी' कहलाता है। यह गोद वार्निश में मिलाया जाता है और औषधि रूप में भी काम आता है। दाँतो के अनेक रोगों में यह बहुत उपकारी होता है। इससे दाँतो का हिनना, पोडा, दुर्गंध आदि दूर जाती है। और भी कई रोगों में इसका व्यवहार किया जाता है।

मस्तदारु—सञ्ज्ञा पुं० [म०] दवादारु का वृक्ष [को०]।

मस्तमूलक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] गरदन [को०]।

मस्तरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मस्तरी] १ धातु गलाने की भट्टी। (शाहजहाँपुर)।

मस्तान(७)—वि० [फा० मस्तानह्] दे० 'मस्ताना'। उ०—रयना रटि जेहि लागिगे चोख भयो मस्तान।—सतवाणी०, भा० १, पृ० १३४।

मस्ताना'—वि० [फा० मस्तानद्ध्] १ मस्तो का सा । मस्तो की तरह का । जैसे, मस्तानी चाल । २ मस्त । मत्त ।

मस्ताना'—क्रि० अ० [फा० मस्त + हि० आना (प्रत्य०)] मस्ती पर आना । मस्त होना । पत्त होना ।

सयो० क्रि०—जाना ।

मस्ताना'—क्रि० म० मस्ती पर जाना । मस्त करना । मत्त करना ।

सयो० क्रि०—देना ।

मस्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] माप । तौल [को०] ।

मस्तिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १० 'मस्तिक' । उ०—साहिब तबही छाया कीन्हा । मस्तिक हाथ आमिन के दीन्हा ।—कबीर सा०, पृ० १०१५ ।

मस्तिकी - सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मस्तकी] १० मस्तगी' ।

मस्तिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मस्तक के अदर का गूदा । भेजा । मगज ।

विशेष—कहा जाता है, भोजन का परिपाक होने पर जो रस बनता है, वह क्रमशः मस्तक में पहुँचकर स्निग्ध रूप धारण करता है और उमी के द्वारा मृत्ति और बुद्धि काम करती है । उसी को 'मस्तिक' कहते हैं ।

२ बुद्धि के रहने का स्थान । दिमाग ।

मस्ती—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ मस्त होने की क्रिया या भाव । मत्तता । मत्तवालापन ।

क्रि० प्र०—आना ।—उतरना ।—चढ़ना ।—दिखाना ।

मुहा —मस्ती ऋदना = मस्ती दूर होना । मस्ती आदना = मस्ती दूर करना ।

२ भोग की प्रबल कामना । प्रसंग की उत्कट इच्छा ।

क्रि० प्र०—आना ।—उठना । चढ़ना ।—ऋदना ।—में आना ।

मुहा०—मस्ती निश्चालना = प्रसंग करके वीर्यपात करना । समोग करके वीर्य स्खलित करना ।

३ वह स्त्राव जो कुछ विशिष्ट पशुओं के मस्तक, कान, आँख, आदि के पास से कुछ विशिष्ट श्रवसरो पर, विशेषतः उनके मस्त होने के समय होता है । मद । जैसे, हाथी की मस्ती, ऊँट की मस्ती ।

क्रि० प्र०—टपकना ।—उहना ।

४ वह स्त्राव जो कुछ विशिष्ट वृक्षों अथवा पत्थरो आदि में से कुछ श्रवसरो पर हाता है । जैसे, नीम की मस्ती, पहाड की मस्ती ।

क्रि० प्र०—टपकना । बहना ।

५ अभिमान । घमड । गर्व । गरूर । ६ युवावस्था का मद । जवानी का नशा ।

मस्तु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दही का पानी । २ छेने का पानी ।

मस्तुलुग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मस्तुलुङ्ग] मस्तिक । मगज ।

मस्तूरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मस्तुरा] घातु गलाने की भट्टी (फतहपुर) ।

मस्तूल—सञ्ज्ञा पुं० [पुर्व०] बड़ी नावों आदि के बीच में खड़ा गाढा जानेवाला वह बटा लट्ठा या गहतीर जिसमें पाल बाँधने हैं । उ०—उसका ऊँचा मस्तूल झुका टूटा ऐसा दिखाई देता है मानी वह अपने प्यारे जलयान की समाधि को गले लगाकर रो रहा है ।—भारतेंदु ग०, भा० १, पृ० ५५२ ।

मस्सा—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] १० 'मसा' । उ०—तिल और मस्सा भी पूर्व कर्मानुसार ही प्रकट होते हैं ।—कबीर सा०, पृ० ६८१ ।

मस्सीत(५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मस्जिद] १० 'मसीत' । उ०—कौन मक्कान महजीत मस्सीत में ।—जमी अममान विच कौन ठाई ।—तुरमी शा०, पृ० १६ ।

महगाँ—सञ्ज्ञा पुं० [देशी] उप० । ऊँट [को०] ।

महत'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महत् (= बड़ा)] १ माधुमडली या मठ का अधिष्ठाता । माधुओं का मुखिया । २ महान्मा । सज्जन । उ०—तख्त दगनि करि मेघ महत । देखे नाप तपै सब जत । नद० प्र०, पृ० २८६ ।

महत'—वि० बड़ा । श्रेष्ठ । प्रवान । मुखिया । उ०—गखा प्रवीन हमारे तुम हौ तुम हौ नहीं महत ।—(शब्द०) ।

महताई'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] १० 'महती' ।

महताना'—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मेहनत, हि० मेहनताना] ३० 'मेहनताना' ।

महती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महत + ई (प्रत्य०)] १ महत का भाव । २ महत का पद ।

क्रि० प्र०—पाना ।—मिलना ।

महथ(५)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महान्त] ३० 'महत' । उ०—पलटू कीन्हो दडवत वे बोले कछु नाहि । भगत जो बर्न महथ से नरक परै सो जाहि ।—पलटू०, भा० ३, पृ० ११४ ।

महदस'—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहद्दिस] हदीस अर्थात् पैगंबर की कही हुई बातों का जाननेवाला विद्वान् । उ०—मद्वम के देह हात मे जाम शाह । कहा यो जवान खोल बहराम शाह ।—दक्खिनी०, पृ० २६० ।

महदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मेहदी] १० 'मेहदी' । उ०—मुप नाग-वल्ली विरज्य वरग । महदी नप जावक रग पग ।—पृ० रा०, ६७।८१२ ।

महँ(५)†—अव्य० [सं० मध्य] मे । उ०—एहि महँ रघुपति नाम उदारा । अति पावन पुगन श्रुतिमारा ।—राम०, पृ० १० ।

महँई(५)†—वि० [सं० महा अथवा म० महति, मदाति या महत्, प्रा० महइ, महई] महात् । भारी । उ०—विदित पठान राज महँ रहई । रहे पठान प्रबल तहँ महई ।—(शब्द०) ।

महँई^२—अव्य० [सं० मध्य] ३० 'मह' ।

महँक—सञ्ज्ञा स्त्री० [प्रा०] १० 'महक' ।

महँकना—क्रि० अ० [हि० महँक + ना (प्रत्य०)] ३० 'महकना' ।

महंगा—वि० [हि०] २० 'महंगा' । उ०—पारम कं परमग मे लोहा महंग विकान ।—पद्म०, भा० १, पृ० ३७ ।

महंगा वि० [म० महावर्ष] जिसका मूल्य माधारण या उचित की अपेक्षा अधिक हो। अधिक मूल्य पर विकनेवाला। जैसे,—आजकल कपडा और गल्ला दोनों महंगा है। उ०—कारण अगर रहत है सगा। कारण अगर विकत सो महंगा।—विश्राम (शब्द०) ।

महंगाई—सज्ञा स्त्री० [हि० महंगा + ई (प्रत्य०)] २० 'महंगी' ।

महंगापन—सज्ञा पुं० [हि० महंगा + पन (प्रत्य०)] महंगा होने का भाव। महंगी। उ०—करुणामय तत्र समभोगे इन प्राणा का महंगापन ।—दामा, पृ० १६ ।

महंगी सज्ञा स्त्री० [हि० महंगा + ई (प्रत्य०)] १ महंगे होने का भाव। महंगापन। २ महंगे होने की अवस्था। ३ दुर्भिक्ष। अकाल। कहत।

क्रि० प्र०—पढ़ना ।

महँडा—सज्ञा पुं० [श०] भुने हुए चने (विहार) ।

मह—अव्य० [हि०] २० 'मह' । उ०—एह मह रघुपति नाम उदारा ।—मानस, १ ।

मह—वि० [स० महत्] १ महा। अति। बहुत। उ०—पिय विन तिय यह दुखिया जान। तब यो गौरी कियो बखान ।—लल्लू (शब्द०) । २ महत्। श्रेष्ठ। बडा।

यौ०—महसुन = महाशून्य। उ०—मन पवनहि जीतो जर्व महसुन माहि समाध ।—गुलाल०, पृ० १४१ ।

मह—सज्ञा पुं० [सं०] १ उत्सव। २ यज्ञ। ३ दीप्ति। चमक। ४ महिप। भैमा [को०] ।

महकदना—क्रि० अ० [प० हि० महकना] २० महकना। उ०—या देहो परिमल महकदा। ता मुम विमरे परमानदा।—गत-वाणी०, पृ० ७ ।

महक—सज्ञा स्त्री० [हि० गमक, या, स० प्र + √ छ, प्रा० धात्वा० मघमघ > महमह या स० महक्क (= फँसनेवाली पुणवृ)] गव। वान। गमक। वृ।

यौ०—महकदार। महकीला।

महक—सज्ञा पुं० [सं०] १. प्रतिष्ठित व्यक्ति। २ कच्छप। कछुपा। ३. विष्णु [को०] ।

महकदार—वि० [हि० महक + फा० दार (प्रत्य०)] जिसम महक हो। महकनेवाला। गव देनेवाला।

महकना—क्रि० अ० [हि० महक + ना (प्रत्य०)] गव देना। वाग देना। उ०—महकन जेहि ठा सकन मुनासा।—गाथवानल०, पृ० १६६ ।

महकमा—सज्ञा पुं० [अ०] किमी विविध कार्य के लिये प्रयुक्त किया हुआ विभाग। सीमा। कारिस्ता। जैसे, चुर्मा वा महकमा, रजिन्दरी का महकमा।

महकान—सज्ञा पुं० [हि० महक] २० 'महक'। उ०—कनक

वरन जगमग तन मे अम चदन की महकान ।—देवयानी (शब्द०) ।

महकाली—सज्ञा स्त्री० [स० महाकाली] पार्वती। (हि०) ।

महकीला—वि० [हि० महक + ईला (प्रत्य०)] किमी अन्तरे मत्क आती हो। न्युगधित। महकदार। न्युगदूरा।

महकूम—वि० [अ० महकूम] १ अधीन। राज भू। शासन। २ जिसे हुकम दिया गया हो। उ०—जय म् ताकिम और हिंदू महकूम थे।—प्रमथन०, भाग २, पृ० ६८ ।

महकूमी—सज्ञा स्त्री० [अ० महकूमी] पराधीनता। दासता। गुलामी [को०] ।

महघ—वि० [प० महावर्ष] २० 'महंगा'। उ०—जन प्रगाह की छुन महघ मये मिल एहि ठाम।—विद्यारति, पृ० ३८३ ।

महघा—वि० [स० महावर्ष] २० 'महंगा'। उ०—नउ नगाई वावने परधो प्रेयने काल। महघा अन न पाउण भयो जगत वेहाल।—अर्थ०, पृ० ११ ।

महचक्र—सज्ञा पुं० [हि०] मूर्ध।

महज—वि० [अ० महज] १. जुद्ध। खालिग। जंग, —यह तो महज पानी है। २ केवल। मात्र। सिर्फ। जंग,—रहज आरणी खातिर से मे यहा आ गया। ३ सरामर। एकदन।

महजनी—वि० [हि० महाजनी] महाजन का काम। उ०—मनुवा इमिल धुमल म अरुभय छूटलि नाम महजनी।—भीष्मा षा०, पृ० १० ।

महजवीन—वि० [स० फा० महाजवी] जिसका भाल चाद जैसा उज्वल हो। उ०—दिल्ला का गजबज नवा किना माजूक महजवान न कम ह।—प्रमथन०, भा० १, पृ० १३४ ।

महजर—सज्ञा पुं० [अ० महजर] १ उपास्यत होने का जगह। २ वह साक्षात् जनपर प्रदूषा लागा क हस्ताक्षर हो [को०] ।

महजरनामा—सज्ञा पुं० [अ० महजर (= खल) + फा० नामा] वह लय जिसम किसी का हत्या होने का प्रनामा हो। हत्या अधमा हत्यार क लवध का साक्षात्पत्र। हत्या विषयक नासापत्र।

महजित—सज्ञा स्त्री० [अ० महजित] २० 'महजिद' ।

महजिद—सज्ञा स्त्री० [अ० महजिद] + २० 'महजिद' । उ०—तन महजिद मन मुनासा र्म।—द्वार०, पृ० ३८ ।

महजीत—सज्ञा स्त्री० [अ० महजिद] २० 'महजिद' । उ०—तन मन महजीत वाच राग नपाना। नूकी दर दर जिध उठै अवाजा।—गुरसा० ज०, पृ० ८६ ।

महजीद—सज्ञा स्त्री० [अ० महजिद] २० 'महजिद' । उ०—तन मन महजीत वाच राग नपाना। नूकी दर दर जिध उठै अवाजा।—गुरसा० ज०, पृ० ८६ ।

महजूज—वि० [प० महजूज] प्रामाणिक। शय्य। सुगम। सुविधा। उ०—रहत महजूज मे तो न्याय का तन पर, दुनिया को सर्व मार दीन का महजुजा है।—मजूक०, पृ० २० ।

महजूम—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मञ्जून] भाँग मिलाकर बनाई हुई एक प्रकार की मादक मिठाई। उ०—कहूँ करही उबलत मूखन महजूम बनत कहूँ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३४।

महज्जन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] द० 'महाजन' [को०]।

महण^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] समुद्र। उ०—मुरभ थॉन मेवाड, राँगा राजॉन सरीखा। महण देव अवध, करँ कुण वध परीखा।—रा० ६०, पृ० २३।

महण^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मथन, प्रा० महण] मथन। मथना।

यौ०—महणारभ = मथना। मथने की क्रिया। उ०—मन समुद्र गुरु कमठ हूँ किया जू महणारभ।—रज्जव०, पृ० ४।

महत^१—वि० [सं०] १ महान्। वृहत्। बटा। २ सबसे बढकर। सर्वश्रेष्ठ। ३ भारी। ४ ऊँचा। उच्च (श्लो०)। ५ तीव्र (श्लो०)। ६ प्रधान (को०)।

यौ०—महत्कथ। महज्जन। महच्छक्ति = महान् शक्ति। बडी शक्ति। उ०—मिल जाना उम महच्छक्ति से।—इत्यलम, पृ० १०३। महत्त्व।

महत^२—सञ्ज्ञा पुं० १ प्रकृति का पहला विकार महत्त्व। २ ब्रह्म। ३ राज्य। ४ जल।

महत^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महत्त्व] दे० 'महत्त्व'। उ०—कहै पद्माकर भक्कोर भिल्ली भोरन को मोरन को महत न कोऊ मन ल्यावती।—पद्माकर (शब्द०)।

महत^४—वि० [सं० महत्] अत्यधिक। उ०—मशुहि बहुत प्रससि कै कहत महत हरसाइ।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० ४६३।

महतवान—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] करघे में पीछे की ओर लगी हुई वह खूँटी जिसमें ताने को पीछे की ओर कसकर खींचे रहनेवाली डोरी लपेटकर बरतेले में बांधी जाती है। पिडा। मुन्नी। हथेला।

महता^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महत् (गुज० महेता, मेहता)] १ गाँव का मुखिया। सरदार। महतो। २ लेखक। मोहूरर। मुशी। ३ ५ प्रमुख व्यक्ति। प्रधान। उ०—कवन काजो तहाँ कवन महता।—प्राण०, पृ० ८२।

महता^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महत्ता] अभिमान। घमड। उ०—महता जहाँ तहाँ प्रभु नहीं सो दूँता क्यो मानो।—(शब्द०)

महता^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ महत्त्व। विज्ञान शक्ति। २ महाभारत के अनुसार एक नदी का नाम।

महताई^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० महत्ता] मुखियागिरी। प्रधान बनने का कार्य। प्रधानता। उ०—घर्मदाम बहु किए महताई। मवा पाँच मुद्रा लेहु भाई।—कवीर सा०, पृ० ४३६।

महताव^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [प्रा० (तुल० सं० महत् + आभ ?)] १ चाँदनी। चंद्रिका। उ०—मोद मदमाती मन मोहन मिल के काज माजि मणि मंदिर मनोज कर्मि महताव।—पद्माकर (शब्द०)। २, एक प्रकार की आतिशबाजी। दे० 'महतावी'।

उ—(क) जब चंद नगनाली देखि चप्यो तप जोनि किनी महताव मे है।—वमलापति (शब्द०)। (ख) चाँदनी में कवि समु मनो चहु ओर विगजि रही महतावै।—शमु (शब्द०)। ३ जहाज पर रात के समय मकेत के लिये होनेवाली एक प्रकार की नीनी रोजनी जो काठ की एक नदी में कुट ममाले भरकर जगाई जाती है। (जग०)।

महताव^२—सञ्ज्ञा पुं० [प्रा०] १ चाँद। चंद्रमा। जणि। उ०—आई वारवधू छवि छार्ट ऐमी गाँउ वीच, जाके मुख आगे दब जोति महताव की।—रनुनाय (शब्द०)। २ एक प्रकार का जगली कौआ। मूतरी। महान्त।

महतावी—सञ्ज्ञा स्त्री० [प्रा०] १ मोमवती क आकार की बनी हुई एक प्रकार की आतिशबाजी जो मोट कागज में वास्द, गवक आदि ममाले लपेटकर बनाई जाती है और जिमके जलने में बहुत तेज प्रकाश होता है। इसकी रोजनी मफेद, लाल, नीली, पीली आदि कई प्रकार की होती है। उ०—छाय रही मन्वि विरह सो वे आवी तन छाम। पी आए नन्वि वरि उठी महतावी सी वाम।—म० मत्क, पृ० २०६। २ किमी बडे प्रामाद के आगे अथवा वाग के बीच में बना हुआ गोल या चौकार ऊँचा चतूतरा जिसपर लोग रात के समय बैठकर चाँदनी का आनंद लेते हैं। ३, एक प्रकार का बडा नीवू। चकोनरा। (पूरव)।

महतारी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माता] माँ। माता। जननी। उ०—(क) कौशल्या आदिक महतारी आरति करनि बनाइ।—सूर (शब्द०)। (ख) हरपित महतारी मुनि मनहारी अद्भुत रूप निहारो।—तुलसी (शब्द०)।

महत्तिया^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महत्] मन्दार। उ० पाँच के उपर पचोम महत्तिया, इन परपच पमारा।—घरम०, पृ० २४।

महती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ नारद की वीणा का नाम। २ वृहती। कंटाई। बनभटा। ३ कुश द्वीप की एक नदी का नाम जो पागियाय पर्वत से निकली है। ४ महिमा। महत्त्व। बडाई। उ० मातु पितु गुरु जाति जान्या भनी खोई महति।—सूर (शब्द०)। ५ योनि का फल जाना जो एक रोग माना जाता है। ६, वह हिचको जिमसे गर्भस्थान पोडित हो और देह में कप हो। ७, वंशयो को एक जाति।

महती द्वादशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की वह द्वादशी जो श्रवण नक्षत्र में पड़े। ऐसी द्वादशी को व्रत आदि करने का विधान है।

महतु^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महत्त्व] महिमा। बडाई। महत्त्व। उ०—वृदावन व्रज को महतु का पै बरन्यो जाय।—सूर (शब्द०)।

महतो—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० महता] १ बुद्ध गयावाल पडो की एक उपाधि। २ कहार (पूरव के पटना आदि जिलो में)। ३ तुलाहो का वह खूटा जो भाँज के आगे गडा रहता है और जिसमें भाँज की डोरी फँसाई रहती है। ४ गाँव का प्रमुख व्यक्ति। चौधरी।

महत्कथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो मीठी भीठी बातें करके बड़े आद-भियो को प्रमत्त करता हो। खुशामदी।

महत्त्व—सज्ञा पु० [सं० महत्त्व] १ माख्य के अनुसार पचीस तत्वों में से तीसरा तत्व जो प्रकृति का पहला विकार है और जिसमें अट्कार की उत्पत्ति होती है। प्रकृति का पहला कार्य या विकार। बुद्धितत्व। विशेष—२० 'तत्व' और 'प्रकृति'। २ कृष्ण तान्त्रिकों के अनुसार समार के सात तत्वों में से सबसे अधिक सूक्ष्म तत्व। ३ जीवात्मा।

महत्तम—वि० [म०] सबसे अधिक बड़ा या श्रेष्ठ।

यौ०—महत्तम समापवर्तक = गणित में वह बड़ी संख्या जिसका भाग दा या अधिक संख्याओं में पूरा पूरा किया जा सके।

महत्तर—वि० [म०] दो पदार्थों में से बड़ा या श्रेष्ठ। महत् म श्रेष्ठ। उ०—सद्ध नहीं, तुम लोकसद्ध के साधन बने महत्तर। —प्राप्त्या, पृ० ५२।

महत्तर—सज्ञा पु० शूद्र।

महत्तरक—सज्ञा पु० [सं०] दरवारी [को०]।

महत्ता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. बड़ाई। बडप्पन। २ उच्चता। श्रेष्ठता। गुरुता। ३ ऊँचा पद। ४ महत्व। महिमा। उ०—नहीं किमी की रही एक मी जग में सत्ता। किंतु समय की क्षीण न होती कभी महत्ता।—प्रेमाजलि, पृ०, ४।

महत्पुरुष—सज्ञा पु० [सं०] पुरुषोत्तम।

महत्त्व—सज्ञा पु० [सं० महत्त्व] १. महत् का भाव। बडप्पन। बड़ाई। गुरुता। २ श्रेष्ठता। उत्तमत्ता। ३ अधिक आवश्यक या परिणामजनक।

यौ०—महत्त्वपूर्ण = जिसका महत्त्व हो। महत्त्वशाली। महत्त्वयुक्त = महत्त्वपूर्ण। महत्त्वशाली = महत्त्वपूर्ण।

महत्वाकांक्षा—सज्ञा स्त्री० [सं० महत्त्व + आकांक्षा] महत्त्व की इच्छा। श्रेष्ठता का कामना। महत्त्वशाली बनन की आकांक्षा।

महत्वाकांक्षी—वि० [सं० महत्वाकांक्षिन्] [वि० स्त्री० महत्वाकांक्षिणी] जिसकी बहुत बड़ी आकांक्षा हो। उच्चाभिलाषी। उ०—वहाँ पहुँचने को चिर व्यग्र, महत्वाकांक्षी।—रजत०, पृ० ७।

महत्वान्वित—वि० [म० महत्त्व + अन्वित] महत्त्व में युक्त—जिसे महत्ता वा श्रेष्ठता प्राप्त हो। महत्त्वपूर्ण। उ०—मुख्य विषय के विवरण एवं उनकी व्याख्या के लिये योजित अप्रस्तुत वस्तु का स्थान गौरा ही रहे, वह मुख्य से भी अधिक महत्वान्वित न हो जाय।—शैली, पृ० ८३।

महद्—वि० [सं०] २० 'महत्'। उ०—क्या जगाई है तुम्हीं ने, सजन फिलिमिल दीपमाला ? इस महद् अह्लाड भर में खूब फैला है उजाला।—क्वासि, पृ० ४१।

महदावास—सज्ञा पु० [सं०] विस्तृत भवन। विशाल लबा चौडा भवन [को०]।

महदाशय—वि० [सं०] उच्च विचारवाला। ऊँचे मन का।

महदाशा—सज्ञा स्त्री० [सं०] उच्चाशा। उच्च कामना। आशा [को०]।

महदाश्रय—सज्ञा पु० [सं०] महान् से सरक्षण प्राप्त करना। श्रेष्ठ के आश्रय में रहना [को०]।

महर्ष—सज्ञा पु० [अ० महर्षी] १ धार्मिक नेता। हादी। २ रहनुमा। राह दिखानेवाला। ३ शीघ्रा सप्रदाय के वारह्वे इमाम जिनके विषय में यह माना जाता है कि कयामत के समय वे फिर आममान में आएँगे [को०]।

महर्षद—वि० [अ०] जिसकी हृद बँधी हो। घेरा हुआ। सीमाबद्ध। परिमित। निश्चित। नियत।

महर्षदेव^(५)—सज्ञा [म० महादेव] शंकर। शिव। दे० 'महादेव'। उ०—महर्षदेव मेव तुम चरन रत, पति पवित्र मन माह वरि। —पृ० १०, २४। ४५६।

महर्षश्वर—सज्ञा पु० [सं०] मंमूर में होनेवाली बँलो की एक जाति। इस जाति के बँल बहुत हृष्ट पुष्ट और बलवान् होते।

महर्षगुण—वि० [म०] महान् पुरुष के गुणों से युक्त। श्रेष्ठ गुणों से युक्त [को०]।

महर्षिक—सज्ञा पु० [म०] जैनियों के एक देवता का नाम।

महर्षारूपा—सज्ञा स्त्री० [सं०] महर्षवारुणी नाम की लता।

महन^(५)—सज्ञा पु० [सं० मथन, प्रा० महण] दे० 'मथन'। उ०—मथन महन पुर दहन गहन जानि आनि कै मर्व को मारु वनुष गढायो है।—तुलसी (शब्द०)।

महना^(५)—क्रि० सं० [सं० मथन, मन्थन] १ दही या मठा आदि मथना। महना। विलोना। २ किमी बात या विषय का आवश्यकता में अधिक विवेचन करना। बहुत पिष्टपेपण करना।

यौ०—महनामथन = व्यर्थ का बहुत अधिक वाद विवाद करना। महनामथ = हाथ तोबा। चीख पुकार। उ०—वस इत्ता सुनता था कि जँम हाथों के नीते उड गए, वह महनामथ मचाई कि तोबा ही भली।—सँर कु०, पृ० ७।

महना^१—सज्ञा पु० मयानी। रई।

महनारभ—सज्ञा पु० [हि० महना] मथन की क्रिया। उ०—नीर होइ तर ऊपर मोई। महनारभ ममुँद जम होई।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० २२५।

महनि^(५)—सज्ञा पु० [सं० मन्थन] १ खलवली। हलचल। २ विलोडन। धर्पण। उ०—महनि मच्चि जव मुरनि बुद्ध अमुराँ मुर जव्वह।—पृ० १०, ६।६२।

महनियाँ—सज्ञा पु० [हि० महना (= मथना) + इया (प्रत्य०)] वह जो मथता हो। मथनेवाला।

महनीय—वि० [म०] १. पूजन करने योग्य। पूजनीय। मान्य। २ गौरवपूर्ण। महिमायुक्त।

महन^(५)—सज्ञा पु० [सं० मथन] मथन करनेवाला। मिनाशक। उ०—नाम वामदेव दाहिना सदा असंग रग अर्ध अग अगना अनग को महनु है।—तुलसी (शब्द०)।

महनूर—वि० [फा० माह + नूर] चाँद जैसी चमकवाता। उ०—

रज मिति सु गति अनत भती । महनूर अदब्ब न जाइ भती ।
—पृ० रा०, ६१ । ६३७ ।

महन्ताना—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मेहनत] ३० 'मेहनताना' । उ०—महर-
वानो कर्के मेरा पूरा महन्ताना मुफकी दिला दो मैं इसी मे
तुम्हारा बड़ी सहायता समझूंगा ।—श्रीनिवास ग्र०,
पृ० ३५५ ।

महफ़िज़—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० महफ़िल] १ मनुष्यों के एकत्र होने का
स्थान । मजलिम । सभा । समाज । जलमा । २ नृत्य गीत
होने का स्थान । नाच गान होने का स्थान ।

क्रि० प्र०—जमना ।—भरना ।—लगना ।

महफूज़—वि० [अ० महफूज] जिमकी हिफाजत की गई हो ।
सुरक्षित । बचाया हुआ । रक्षा किया हुआ ।

महव—वि० [अ० महव] पूण रूप मे रत । लीन । उ०—जिम
वक्त आदमी का दिल किसी बात के ख्याल मे महव हो ।—
श्रीनिवास ग्र०, पृ० ३१ ।

महवूब—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह जिमसे प्रेम किया जाय । जिससे दिल
लगाया जाय । उ०—रसनधि आवत देखके मनमोहन महवूब ।
उमडी डिठ वरनीन की हगन बघाई दूब ।—रसनधि
(शब्द०) ।

महवूबा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] वह स्त्री जिसमे प्रेम किया जाय ।
प्रेमिका । माणूका । उ०—आशिकहूँ पुनि आप तौ महवूबा पुनि
आप । चाहनहारो आप त्यो वैपरवाही आप ।—रसनधि
(शब्द०) ।

महमत—वि० [सं० महा + मत्त] मस्त । उन्मत्त । मदमत्त ।
उ०—काया कजरी बन अहै मन कुजर महमत । अकुश ज्ञान
रतन है फेरै माधु मत ।—कवीर (शब्द०) ।

महमद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुहम्मद] ३० 'मुहम्मद' । उ०—साँफो
समद धन कियो सीरणगार । सीरह महमद गलि मोती हार ।—
वी० रामो, पृ० ११४ ।

महम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] चिंता । फिर । उ०—लागी महम गनीम
पर काल कटक कटकन ।—कवीर ग्र०, पृ० ५६० ।

महमद—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहम्मद] ३० 'मुहम्मद' । उ०—परवल
भजन गरुअ महमद मदगामी ।—कोर्ति०, पृ० १०० ।

महमदी—वि० [अ० मुहम्मदी] मुहम्मद का मतानुयायी ।
मुसलमान ।

महमह—क्रि० वि० [हिं० महकना] सुगंधि के साथ । खुशबू के
के साथ । उ०—(क) महमह महमह महकत बरती रोम
रोम जनु पुलकि उठी ।—देवस्वामी (शब्द०) । (ख) चार
चमेली बन रही महमह महकि सुवास ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) ।

महमहण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महि + मथन] विष्णु (हिं०) ।

महमहा—वि० [हिं० महमह] [वि० स्त्री० महमही] सुगंधित ।
सुगन्धदार । उ०—(क) महमही मद मद माखत मिलनि, तैसी
गहगही खिलनि गुलाब के कलीन की ।—रमखनि (शब्द०) ।
(ख) महमहे लोक दस चारहू सुगवन तैं उमहे महेश अज आदि

मुग् ठूठ हैं ।—(शब्द०) । (ग) मेत गारी मोहत उजारी
मुख चद की मी महगनि मद मुमकयान की महमही ।—मति०
ग्र०, पृ० ३०८ ।

महमहाना—क्रि० अ० [हिं० महमह अथवा महकना] गमकना ।
मुगधि बना । उ०—मन्नी टूम वलिन ललित पारिजात पुज
मजु बन वेनिन, चमेलिन महमहात ।—रमकुमुमाकर (शब्द०) ।

महमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महिमा] २० 'महिमा' ।

महमाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महामाया] २० 'महमाय' । उ०—
चारगु भाट जर्ज महमाई । भोजक भाट तहाँ चलि आई ।
—कवीर मा०, पृ० ५४० ।

महमान—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मेहमान] २० 'मिहमान' ।

महमानिय—वि० [सं० महा + मान्य] अत्यंत ममानित ।
महामान्य । उ०—कहिय वक्त भूपति महमानिय ।—प० रामो,
पृ० ५१ ।

महमानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मेहमानी] ३० 'मेहमानी' ।

महमिल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] ऊँट का पाठ पर कमा जानेवाला हीदा ।
पलान [को०] ।

महमाय—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महामाया] पार्वती । (हिं०) । उ०—बाल
वृद्ध भजन करो, हम का र्द महमाय ।—पृ० रा०, २२११० ।

महमूदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० महमूद + ई (प्रत्यय)] मल्लम की तरह
का एक प्रकार का मोटा देशी कपडा ।

महमूदी—सञ्ज्ञा पुं० एक प्रकार का पुराना छोटा निक्का ।

महमेज—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० महमेज] एक प्रकार की लोहे की नाल ।
विशप—यह जूते मे पीछे की आर एही के पाम लगाई जाती
है और इसको सहायता से घाडे क सवार उसे चलाने के
लिये एड लगाते ह । उनके पीछे एक छोटा घूमनेवाला
काटेदार पाह्या लगा होता है, जा घाड की पाठ पर लगता
है और घूमता ह ।

महम्मद—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहम्मद] ३० 'मुहम्मद' ।

महम्मदा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] २० 'महमदी' ।

महर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महत् या महाई, हिं० महरा (= बडा, श्रेष्ठ)
[स्त्री० महरि] १ अज मे बोला जानवाना एक आदर-
सूचक शब्द जिमका व्यवहार विजेपत जमादारो और वैश्यो
आद के सबब मे होता है । (कभी कभी इम शब्द का
व्यवहार केवल आठ्या के पालक और पिता नद के
लिये भी बिना उनका नाम लिए ही हाता ह) । उ०—महर
विनय दोऊ कर जोरे घृत मिष्टान पय बहूत मगायो ।—सूर
(शब्द०) । (ख) शूर आभेलापन को चाखन के माखन तैं
दाखन मधुर भरे महर मंगाय रे ।—दीन (शब्द०) । (ग)
ब्रज की विरह अरु मग महर की कुविराह बरत न नेकु लजान ।
—तुलसी (शब्द०) । २ एक प्रकार का पत्नी । उ०—
सारी सुवा महर कोकिला । रहसत आर पपीहा मिला ।
—जायसी (शब्द०) । ३ द० 'महरा' । उ०—नाऊ वारी
महर सब, धाऊ धाय सभेत ।—रघुराज (शब्द०) ।

महर^२—वि० [फा० मेहर (= दया)] दयावान् । दयालु । (हिं०) ।

महर^१—सज्ञा पुं [अ०] १ मुसलमानों में वह मपत्ति या धन जो विवाह के समय वर की ओर से कन्या को देना निश्चित होता है ।

मुहा०—महर बख्शवाना = महर के लिये निश्चित किए गए धन को पत्नी से कह सुनकर पति द्वारा माफ कराना । महर बंधना = महर के लिये धन या मपत्ति नियत करना

महर^(पुं)—सज्ञा स्त्री [फा० मेहर] दया । वृषा । उ०—किकरि ऊपर महर कर, मकर सेट सँदेह ।—रघु० ६०, पृ० ५६ ।

महर^४—वि० [हिं० महक] महमहा । सुगन्धित । उ०—(क) महर महर घर बाहर राउर देह । लहर लहर छवि तम जिमि, ज्वलन मनेह ।—रहिमन (शब्द०) । (ख) महर महर करं फूल नोद नहि आइल हो ।—घरम० श०, पृ० ६२ ।

महरई^(पुं)—सज्ञा स्त्री [हिं० महराई] श्रेष्ठता । प्रधानता । उ०—जौ महाराज चाहौ महरईये, तौ नाथौ ए मन वीरा हो ।—कवीर ग्र०, पृ० ११२ ।

महरवान—सज्ञा पुं [फा० मेहरवान] दे० 'मेहरवान' ।

महरम^१—सज्ञा पुं [अ०] १, मुसलमानों में किसी कन्या या स्त्री के लिये उमका कोई ऐसा वहुत पाम का मन्वी जिमके माथ उसका विवाह न हो सकता हो । जैसे, पिता, चाचा, नाना, भाई, मामा आदि । मुसलमानी धर्म के अनुमार स्त्रियों को केवल ऐसे ही पुरुषों के सामने बिना परदे या घूँघट के जाना चाहिए । २ मित्र । दोस्त (स्त्री) । ३ भेद का जाननेवाला । रहस्य से परिचित । उ०—दिल का महरम कोई न मिलिया जो मिलिया सों गरजी । कह कवीर असमान फाटा क्यो कर सीवै दर्जी ।—कवीर (शब्द०) ।

महरम^२—सज्ञा स्त्री १ अंगिया का मुलकट । अंगिया को कटोरी । २ अंगिया । उ०—गए जदपि मुनि मूर तन पथर घन चलाय । व्यापै तन जे फूल वे महरम घाले आय । रमनिधि (शब्द०) ।

महरमदिली—सज्ञा स्त्री [फा० मेहर + दिली] सदयता । मेह्रवानी । दयालुता । उ०—मारो कि तारो तुममो श्रव है कछू न सागे । महरमदिली सो दिलवर टुक दीजिए सहारो ।—ब्रज० ग्र०, पृ० ४२ ।

महरमी—वि० [अ० महरम] जाननेवाला । जानकार । ज्ञाता । उ०—घाट श्री वाट के भेद का महरमी । उसी की नाव पर पाँव दीजै ।—पलटू०, भा० २, पृ० १ ।

महरलोक—सज्ञा पुं [सं० महर्लोक] दे० 'महर्लोक' । उ०—सत्यलोक जनलोक तप श्रीर महर निजलोक । सूर (शब्द०) ।

महरसी^(पुं)—सज्ञा पुं [सं० महर्षि] दे० 'महर्षि' । उ०—जान महरसी सत ताहि की निदा करते ।—पलटू०, पृ० ८३ ।

महरा^१—सज्ञा पुं [हिं० महता] [स्त्री० महरी] १ कहार । उ०—सइयाँ, महरा मोर डोलिया फँदावै हो ।—घरम० श०, पृ० ७४ । २ नौकर । सेवक । उ०—महरा ने आकर कहा सरकार कोई स्त्री आपसे मिलने आई है ।—मान०, भा०, ५,

पृ० २७४ । ३ श्वसुर के लिये आदरसूचक शब्द । (चमार) । ४ सरदार । नायक । उ०—दसवँ दाँव कै गा जा दसहरा । पलटा सोइ नाव लेइ महरा ।—जायसी (शब्द०) । ५. दे० 'मेहरा' ।

महरा^२—वि० प्रधान । श्रेष्ठ । बड़ा ।

महराई^(पुं)—सज्ञा स्त्री [हिं० महर + आई (प्रत्य०)] प्रधानता । श्रेष्ठता । उ०—कुडल श्रवनन देउं गलाई । महरा की सौपौं महराई ।—जायसी (शब्द०) ।

महराज^१—सज्ञा पुं [हिं०] दे० 'महाराज' । उ०—चलेउ मद्र महाराज सुमट सिरताज साज सजि ।—गोपाल (शब्द०) ।

महराज^२—सज्ञा पुं [हिं०] [स्त्री० महारजिन] वह ब्राह्मण जो किसी के घर या मेम में रसोई बनाता हो ।

महराजा^(पुं)—सज्ञा पुं [हिं०] दे० 'महाराज' ।

महराण—सज्ञा पुं [सं० महार्णव] समुद्र (हिं०) । उ०—मनरा महराण समापण मोजाँ, कायण दीना तरणा कुरंद ।—रघु० ६०, पृ० १६ ।

महराना^१—सज्ञा पुं [हिं० महर + आना (प्रत्य०)] महरो के रहने का स्थान । महरो के रहने की जगह, महल्ला या गाँव । उ०—(क) तुमको लाज होत की हमको बात परै जो कहुँ महराने ।—मूर (शब्द०) । (ख) गोकुल में आनद होत है मगल ध्वनि महराने डोल ।—मूर (शब्द०) ।

महराना^२—सज्ञा पुं [हिं०] [स्त्री० महरानी] दे० 'महाराणा' ।

महरानी^१—सज्ञा स्त्री [हिं० महरानी] पटरानी । महारानी । उ०—वृदावन राज दुवौ साजै सुख के साज । महरानी रावा उतै महाराज ब्रजराज ।—स० सप्तक, पृ०, ३४३ ।

महराव—सज्ञा स्त्री [हिं०] दे० 'मेहराव' । उ०—वाट वाट बहु द्वार विराजत चामीकर महराव ।—रघुराज (शब्द०) ।

महराव^(पुं)—सज्ञा पुं [सं० महाराज, प्रा० महाराव] दे० 'महाराज' । उ०—राणी कहँ सुनो महराव ।—हा० रासो, पृ० ११८ ।

महरि—सज्ञा स्त्री [हिं० महर] १ एक प्रकार का आदरसूचक शब्द जिसका व्यवहार ब्रज में प्रतिष्ठित स्त्रियों के संबोध में होता है ।

विशेष—कभी कभी इस शब्द का व्यवहार केवल यशोदा के लिये भी बिना उनका नाम लिए ही होता है ।

२ गृहस्वामिनी । मालकिन । घरवाली । उ०—वाल वोलि डहिक विरावत चरित लखि गोपीगन महरि मुदित पुलकित गात ।—तुलसी (शब्द०) । ३ ग्वालिन नामक पक्षी । दहिगल । उ०—दही दही कर महरि पुकारा । हारिल विनवइ आपु निहारा ।—जायसी (शब्द०) ।

महरो—सज्ञा स्त्री [हिं० महर] ग्वालिन नामक पक्षी । दहिगल । २ दे० 'महरि' । उ०—करे नद जसोदा महरी । पल भर कृष्ण राख ना बहरी ।—कवीर सा०, पृ० ४४ ।

महर्ष्या—सञ्ज्ञा पु० ['श'] जस्ता । (सुनार) ।

महर्ष—सञ्ज्ञा पु० ['श'] १ चहु पीने की नली । २. एक प्रकार का वृक्ष ।

महर्ष—वि० [फा० माहर्ष] चद्रवदन । चद्रमुख । उ०—वह कुल्फ मेर महर्ष खमदार कहाँ है।—कवीर म०, पृ० ३२४ ।

महर्षुम—वि० [अ०] १ जिसे प्राप्त न हो । जिसे न मिले । वचित । उ०—इत्सान खबर खर से महर्षुम हुआ है ।—कवीर म०, पृ० १४१ ।

क्रि० प्र०—करना ।—रखना ।—रहना ।

२ वजिन । जो रोका गया हो (को०) । ३ निषिद्ध (को०) । ४ वेनमीव । अभागा (को०) । ५ जो किसी काम का न हो । नाकाम । बेकाम (को०) ।

महरेटा—सञ्ज्ञा पु० [हि० महर + एटा (प्रत्य०)] १ महर का वेटा । महर का लडका । २ श्रीकृष्ण ।

महरेटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महरेटा] वृषभानु महर की लडकी, श्रीरार्थिका । उ०—(क) नूपुर की धुनि मुनि रीझन है महरेटी खोलति न याते जव जव आपु गमि जात ।—रघुनाथ (शब्द०) । (ख) लानी महरेटी के अघर मरसान लागे अघरन वान लागे बतिया रसाल की ।—रघुराज (शब्द०) ।

महरो—वि० [देशी] असमर्थ ।—देशी०, पृ० २५७ ।

महर्षता—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] महर्षे का भाव । महर्षे ।

महर्षानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० महरवानी] १ 'महर्षानी' । उ०—हमको तो आपकी महर्षानी चाहिए ।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० ३७ ।

महर्लोक—सञ्ज्ञा पु० [म०] पुरागानुमार भू, भुव आदि चौदह लोको मे से एक ।

विशेष—१४ लोको में से ७ ऊर्ध्वलोक और ७ अधालोक है । महर्लोक इन ऊर्ध्वलोको मे मे चौथा है ।

महर्षभी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कौछ । केवाँच ।

महर्षि—सञ्ज्ञा पु० [म० महा + ऋषि] १ बहुत बडा और श्रेष्ठ ऋषि । ऋषीश्वर । जैसे, वेदव्यास, नाद, अगिरी इत्यादि । २ एक राग जो भरवराग के आठ पुत्रों मे से एक माना जाता है । उ०—पचम ललित महर्षि बिलावल अरु वैशाख मुमाधव पिगल । महित समृद्धि आठ मताना । भैरव के जानहु नर वाना ।—गोपाल (शब्द०) ।

महर्षिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मफेद कटकारी । भटकटैया ।

महर्ष—सञ्ज्ञा पु० [अ०] १ राजा या रईस आदि के रहने का बहुत बग और बढिया मकान । प्रामाद । उ०—निम गई पच पल एक जाम । राजन्न महर्ष प्रावेम ताम ।—पृ० रा०, १।३६९ । २ राजप्रामाद का वह विभाग जिसमे रानिया आदि रहती हैं । रनिवास । अत पुर । उ०—कुज कुज नवपुज महल सुबस वनो यह गाव री ।—स्वामी हारदास (शब्द०) ।

३ बडा कमरा । ४ अरुमर । मौका । वक्त । ५ पहाडी मधु-मखी । मारग । उगर । ६ पत्नी । बीवी (को०) । ७ मकान । घर (को०) । ८ जगह । स्थान (को०) ।

श्री० महलदार = वह व्यक्ति जो मकान की व्यवस्था और रक्षा करे । महलसरा । महलख म = पटरानी । बडी वेगम ।

महल(पु)¹—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० महिला] १ 'महिला' । उ०—जो माह-बीजी महल आखइ फूठ एवाल ।—ढोला०, दू० ४४० ।

महलम—वि० [अ० महलम] १ सर्वप्रधान । सर्वप्रमुख । २ गोचर । व्यक्त । ३ ईश-रूपा-प्राप्त । उ०—महनम जुगपति चिजेजिवे जीवथु म्यागदीन मुरतान ।—विद्यापति, पृ० २ ।

महलसरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० महल + फा० सरा] महल का वह भाग जिसमे रानियाँ या वेगमे आदि रहती हैं । अत-पुर । रनिवास । जैसे, शाही महलम ।

महलाठ—सञ्ज्ञा पु० ['श'] एक प्रकार का पत्ती जिसकी दुम लंबी, ठोर नालों, उती खी, पीठ खानी रंग की और पर काले होते हैं ।

महलायत(पु)²—सञ्ज्ञा पु० [अ० महल] महल । प्रामाद । उ०—दखा महलायत एक पलका के तगन मे ।—तट०, पृ० ११२ ।

महलियाँ(पु)³—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० महल + हि० इया (प्रत्य०)] छोटा महल । उ०—भरि लाग महलिया गगन घहराय ।—वरम० श०, पृ० ३३ ।

महली(पु)⁴—वि० [अ० महल + हि० ई (प्रत्य०)] महल (शरीर) मे रहनेवाला (जीव) । उ०—गुरमुखि माचा जोग रुमाउ । निज घरि महली पावहि थाउं ।—प्राण०, पृ० १०६ ।

महली पटैला—सञ्ज्ञा पु० [हि० महल + पटैला] एक प्रकार की बडी नाव जिसपर केवल लकडी या पत्थर आदि लादा जाता है ।

महल्ल—सञ्ज्ञा पु० [सं०] राजा के अत पुर मे रहनेवाला । रिजडा (को०) ।

विशेष—मस्कृत मे यह शब्द अश्वी मे आगत माना गया है ।

महल्ल(पु)⁵—सञ्ज्ञा पु० [अ० महल्ल] १ 'महल' । उ०—चढे नोक चलै, मसोताँ महल्ल । भरोखो सभायौ, उठी माह आयौ ।—रा० रू०, पृ० ३२ ।

महल्लक—वि० [म०] कमजोर । पुराना । जर्जर । जीरा (को०) ।

महल्लक—सञ्ज्ञा पु० १ १ 'महल्ल' । २. बडा मकान । प्रामाद (को०) ।

महल्ला—सञ्ज्ञा पु० [अ० महल्लह] शहर का कोई विभाग या टुकडा जिसमे बहुत से मकान आदि हो ।

थो०—महल्लेदार = महल्ले का चौधरी या प्रधान ।

महल्लिक—सञ्ज्ञा पु० [म०] हिजडा । जनसा । पुरुषेंद्रियरहित स्त्रीस्वभाव का व्यक्ति (को०) ।

महवट(पु)⁶—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महावट] माघ की वर्षा । १ 'महावट' । उ०—नैन चुर्हाजिस महवट नीरु । तोहि विन अग लाग सर चीरु ।—जायसी ग्र०, पृ० १५५ ।

महशर—सञ्ज्ञा पु० [अ० महशर] १ महाप्रलय । २ कयामत का दिन । मुसलमानी धर्म के अनुसार वह अंतिम दिन जब ईश्वर सब प्राणियों का न्याय करेगा । उ०—रखता हूँ क्यूँ जफा को तुझ पर रखा ऐ जालिम । महशर मे तुझमे आखिर मेरा हिसाब होगा ।—क० कौ०, भा० ४, पृ० ८ । ३ कयामत का मैदान । बहुत से लोगो के एकत्र होने का स्थान । ४ हगामा । उपद्रव ।

मुहा०—महशर बरपा होना = भारी हगामा मचना ।

महसिल—सञ्ज्ञा पु० [अ० मुहसिल] तहसील वमूल करनेवाला । महसूल आदि वमूल करनेवाला । उगाहनेवाला । उ०—मोत नैन महसिल नए बँठत नहिं हुई सीन । तन बोधा पै करत है ये मन की तहसील ।—रसनिधि (शब्द०) ।

महसीर—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] एक प्रकार की मछली । विशेष द० 'महासीर' ।

महसूद—वि० [अ० महसूद] जिमसे ईर्ष्या की गई हो । ईर्षित (को०) ।

महसूब—वि० [अ० महसूब] १ हिमाचल में जोड़ा या गिना हुआ । २ मुजरा किया हुआ (को०) ।

महसूर—वि० [अ० महसूर] १ घेरे में आया हुआ । घिरा हुआ । २ शत्रु के घेरे में आया हुआ (को०) ।

महसूल^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. वह धन जो राजा या कोई अधिकारी किसी विशिष्ट कार्य के लिये ले । फर । २ भाडा । किराया । जैसे,—आजकल रेल का महसूल कुछ बढ़ गया है । ३. भूकर । मालगुजारी । लगान ।

महसूल^२—वि० प्राप्त किया हुआ । हामिल (को०) ।

महसूली—वि० [अ०] १ जिसपर किसी प्रकार का कर या महसूल हो या लग सकता है । महसूल के योग्य । २ जिसपर लगान या महसूल देना पड़ता है ।

महसूस—वि० [अ० महसूस] १ जिसका अनुभव किया जाय । अनुभूत । २. मालूम । ज्ञात । ३. प्रकट । स्पष्ट (को०) ।

यौ०—करना । - होना ।

महसूसात—सञ्ज्ञा पुं० [अ० महसूस का बहु व०] अनुभूति का समुच्चय । अनुभूतियाँ (को०) ।

महस्वान्—वि० [सं० महस्वत्] ज्योतिर्मय । तेजयुक्त । शानदार । २ महान् । शक्तिमपन्न (को०) ।

महस्वी—वि० [सं० महस्विन्] दे० 'महस्वान्' (को०) ।

महाग^१—वि० [सं० महाङ्ग] भारी भरकम । मोटा (को०) ।

महाग^२—सञ्ज्ञा पुं० १ ऊँट । २ एक प्रकार का चूहा । ३. शिव । ४. गोखरू । ५. रक्त चित्रक वृक्ष (को०) ।

महाजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाञ्जन] एक पर्वत का नाम (को०) ।

महातक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महान्तक] १ मृत्यु । मौत । २. शिव (को०) ।

महाधकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महान्धकार] १ घोर धँवेरा । भयकर अधकार । २ आत्मा सबधी घोर अज्ञान (को०) ।

महाबुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाबुक] शिव (को०) ।

महाबुज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाबुज] १ दम शरव । २ दस उर्व ।

महाँ^१—अव्य० [हिं० महाँ] दे० 'मह' । उ०—प्रभु -त्य करी प्रह्लाद गिरा प्रगटे नर केहरि खभ महाँ ।—तुंगी (शब्द०) ।

महाँ^२—वि० [सं० महा] दे० 'महा' ।

महाँ^३—वि० [सं०] १ अत्यत । बहुत । अधिक । उ०—महाँ अजय समार रिपु जीत मकइ मो वीर । जाके अम रथ होइ दृढ सुनहु सखा मतिधीर ।—तुलसी (शब्द०) । २. सर्वश्रेष्ठ । सबसे बढकर । उ०—महाँ मत्र जोइ जपत मेहेसू । कासी मुकुते हेतु उपदेशु ।—तुलसी (शब्द०) । ३. बहन बडा । भारी । जैसे, मन्नावाहु, महासमुद्र । उ० - (क) बुद सोखि गो कहा महा समुद्र छीजई ।—केशव (शब्द०) । (ज) कहै पद्माकर मुवास तैं जवाम तैं मुफूलन को राम तैं जगी है महा साम तै ।—पद्माकर (शब्द०) ।

विशेष—ब्राह्मण, पात्र, यात्रा, प्रस्थान, निद्रा, तैल और मान इन शब्दों में 'महा' शब्द लगाने में इन शब्दों के अर्थ कुर्मित हो जाते हैं । जैसे,—महाब्राह्मण = कहहा ब्राह्मण । महापान = कहहा ब्राह्मण । महायात्रा = मृत्यु । महाप्रस्थान = मृत्यु । महानिद्रा = मृत्यु । महामान = मनुष्य का मान ।

यौ०—महाबली = अत्यत शक्तिवान् । बलवान । ममर्थ । उ०—माचा ममरथ गुण मिन्या, तिन तत दिया बताइ । दादू मोटा महाबली घटि घृत मथि करि स्याइ ।—दादू०, पृ० ७ । महाबिरही = अत्यत वियोगपीडित । उ०—मनहु महाबिरही अति कामी ।—मानस, ३।२८ । महाबिरहिनी = अति वियोगिनी । उ०—छिनक मरि बरनी तिहि वाला । महाबिरहिनी हूँ तिहि कागा ।—नद० २०, पृ० १६४ । महामनि = मणि जिमसे मर्षविष दूर होता है । उ०—मत्र महामनि विषय व्याल के ।—मानस, १।३२ ।

महा^४—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० महना] मट्टा । छाछ । उ०—गोकुल बूको मत्र की प्रतीति प्रीते एही द्वार दूव नौ जग्घो पिवत फूँक फूँक मह्यो ही ।—तुलसी (शब्द०) ।

महा^५—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गाय । २ गोपवली (को०) ।

महाअरभ^६—वि० [सं० महा + रभ (= गोर, हलचल)] बहुत गोर । बहुत हलचल । उ०—नौर होइ नर, ऊपर मोटै महाँ-अरभ ममुद जम होई । जायमी (शब्द०) ।

महाअहि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शेषनाग ।

महाई^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मथन, हिं० महना + आई (प्रत्य०)] १. मथने का काम । २. नील की मवाई । नील के रंग को मथन का काम । ३. मथने का भाव । ४. मथने की मजदूरी ।

महाईस^८—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महेश + महा + ईस] महादेव । उ०—महाईस जगदीम जोगिमनि महादेव निव नभु स्यापर ।—घनानन्द, पृ० ४८६ ।

महाउत्त^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'महावत' । उ०—हूँ इत पर
मैन महाउत्त लाज के श्राँदू परे गथि पायन ।—पचाकर
(शब्द०) ।

महाउर—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'महावर' । उ०—(क) प्यारो लगे
यह जाकी सनेह महा उर बीच महाउर को रंग ।—देव
(शब्द०) । (ख) मोहि तो साध महा उर है री महाउर नाइन
तोसो दिवारकं ।—दास (शब्द०) ।

महाऔपधी^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [पुं० महौपधि] सोंठ । उ०—विस्वा नागर
जगभिपक महाऔपधी नाउ ।—अनेकार्थ०, पृ० १०४ ।

महाककर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाककर] वीदों के अनुसार एक बहुत
बड़ी मरुया ।

महाकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाकन्द] १ लहसुन । २ प्याज ।
उ०—सवा मै पान जीव प्रति लाओ । सवासेर महाकद
मंगाओ ।—कवीर सा०, पृ० २१५ ।

महाकबु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाकम्बु] शिव ।

महाकच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ समुद्र । २ वरुण देव । ३ पर्वत ।
पहाड । ४ एक प्राचीन देश का नाम ।

महाकन्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रवरकार ऋषि का नाम ।

महाकपर्द—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की सीपी या शस्त्र [को०] ।

महाकपाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक राक्षस का नाम । २ शिव
के एक अनुचर का नाम ।

महाकपि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिव के एक अनुचर का नाम । २
एक बोधिमत्त्व का नाम ।

महाकपित्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बैल का वृक्ष । २ रक्त लशुन ।
लाल लहसुन [को०] ।

महाकपोत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुञ्जुत के अनुसार २६ प्रकार के बहुत
ही विषधर साँपो में से एक प्रकार का साँप ।

महाकपोल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव के एक अनुचर का नाम ।

महाकरज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाकरज्ज] एक प्रकार का करज जो
बड़ा होता है ।

विशेष—इसका व्यवहार औषध रूप में होता है । वैद्यक में इसे
तौक्षणा, उष्णा, कटु तथा विष, कडु, कुष्ठ, व्रण और त्वचा के
दोषों का नाशक माना है ।

पर्या०—हस्तिचारिणी । विषधनी । काकधनी । मदहस्तिनी ।
मधुमती । रसायनी । हस्तिकरज । काकमाडी । मधुमत्ता ।

महाकर'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम ।

महाकर^३—वि० १ लवे हाथवाला । महाबाहु । २ जिससे अच्छी
श्यामवनी होती हो [को०] ।

महाकर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिव । २. एक नाग का नाम ।

महाकर्णा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम ।

महाकर्णिकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अमलतास ।

महाकर्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाकर्मन्] शिव का एक नाम [को०] ।

महाकला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शुक्ल पद्म की प्रतिपदा की गत [को०] ।

महाकल्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार उतना बाल जितने में एक
ब्रह्मा की आयु पूरी होती है । त्रयाकल्प । विशेष दे० 'कल्प' ।

यौ०—महाकल्पात् = महाकल्प का अन्त समय । उ०—महाकल्पात्
ब्रह्माऽ मडल दयन भवन कैनाश आगीन वामी ।—तुलसी
(शब्द०) ।

महाकवि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महा + कवि] १. महान् कवि । गरसे
बडा कवि । जैसे, कालिदास, भवभूति, वाण, माघ, भारवि,
हर्ष आदि । उ०—उपाध्याय जी की एक मात्र महाकवि
श्रीर प्रशस्त आचार्य कहते में रचक भी नहीं हिचन्चिचान ।—
रम क०, पृ० ३ । २. णुकाचार्य (ने०) ।

महाकपाय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कायफल [को०] ।

महाकात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाकान्त] शिव ।

महाकाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महाकान्ता] पृथ्वी । धरा ।

महाकातार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाकान्तार] एक प्राचीन देश का नाम ।

महाकाय^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिव जी का बड़ा नामक गण और
द्वारपाल । २ शिव [को०] । ३ विष्णु [को०] । ४ मगल गृह
[को०] । ५ हाथी ।

महाकाय^२—वि० विशालकाय । भारी भरकम शरीरवाला । [को०] ।

महाकार्तिकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिक की वह पूर्णिमा जो रोहिणी
नक्षत्र में हो । यह बहुत बड़ी पुरयतिथि मानी जाती है ।

महाकाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सृष्टि और प्रणियों का अन्त करने-
वाले, महादेव । शिव का एक स्वरूप । उ०—करण महाकाल
काल वृपाल ।—तुलसी (शब्द०) । २ शिव के द्वादश ज्योति-
लिंगों में से एक जो उज्जैन (उज्जयिनी) में है । ३ विष्णु का
एक नाम [को०] । ४ समय जो विष्णु के समान अखंड और
अनंत है । ५ तृती लता । कटुतुवी [को०] । ६ शिव के एक
गण का नाम । ७. पुराणानुसार शिव के एक पुत्र का नाम ।

विशेष—कालिका पुराण में लिखा है कि एक बार देवताओं ने
अग्नि से शिव का वीर्य धारण करने के लिये कहा था । जब
वह वीर्य धारण करने लगा, तब उसमें दो वृद्ध अलग जा
पड़ी जिनसे महाबाल और भृगी नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए ।
एक बार इन दोनों पुत्रों ने भवानी को उन समय देख लिया
था जिस समय वे शिव के साथ विहार करने के उपरांत बाहर
निकल रही थीं । भवानी ने उन्हें शाप दिया जिससे ये दोनों
वैताल और भैरव हुए ।

महाकालपुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] उज्जैन [को०] ।

महाकालफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का फल जो लाल होता
है और जिसका बीज काला होता है [को०] ।

महाकाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ महाकाल स्वरूप शिव की पत्नी
जिसके पाँच मुख और आठ भुजाएँ मानी जाती हैं । २ दुर्गा
की एक मूर्ति । ३. शक्ति की एक अनुचरी का नाम । ४. जैनों

के अनुसार सोलह विधा देवियों में से एक जो अक्सर पिण्डों के पाँचवें अर्धवृत्त की देवी है।

महाकालेय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम।

महाकाव्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'काव्य'—१।

महाकाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम।

महाकाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महा + आकाश] अनवच्छिन्न आकाश। पूर्ण आकाश। उ०—महाकाश माँहि सब घट मठ देपियत, बाहिर भीतर एक गगन ममायौ है।—सुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ६०८।

महाकीर्तन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मकान। गृह [को०]।

महाकुड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाकुण्ड] शिव के एक अनुचर का नाम।

महाकुमार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा का सबसे बड़ा पुत्र। युवराज।

महाकुमुदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गभारी।

महाकुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ उच्च कुल। श्रेष्ठ कुल। २ वह जो बहुत उत्तम कुल में उत्पन्न हुआ हो। कुलीन।

महाकुल—वि० उच्च कुल में उत्पन्न। खानदानी [को०]।

महाकुलीन—वि० [सं०] दे० 'महाकुल' [को०]।

महाकुष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुष्ठ के अठारह भेदों में से वह जिसमें हाथ पैर की उँगलियाँ गलकर गिर जाती हैं। गलित कुष्ठ।

महाकुट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक परोपजीवी कीटभेद [को०]।

महाकूट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक देश का नाम।

महाकृच्छ्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु का एक नाम। २ कठोर तपस्या। महान् तप।

महाकृष्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का बहुत जहरीला साँप। २ एक प्रकार का चूहा।

महाकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव।

महाकेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'महाकोश' [को०]।

महाकोश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिव। २ बहुत बड़ा पिधान, आच्छादन या आधार [को०]।

महाकोशल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आधुनिक मध्य प्रदेश का एक भाग।

महाकोशा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक नदी का नाम।

महाकोशातकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तनुआँ या धीया तरौई नाम की तरकारी।

महाक्रतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महान् यज्ञ। बहुत बड़ा यज्ञ। जैसे राजसूय, अश्वमेध आदि।

महाक्रम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम।

महाक्रोध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव।

महाक्लीतन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शालिपर्णी।

महाक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २ विष्णु।

महाक्षयव्यय निवेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह उपनिवेश या भूमि जिसके रखने में बहुत खर्च हो।

विशेष—कौटिल्य का मत है कि ऐसे प्रदेश को या तो बेच देना

चाहिए अथवा उसमें अपराधियों, राजद्रोहियों, प्रमादियों आदि को भेज देना चाहिए।

महाक्षीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ईख। ऊख।

महाक्षीरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बहुत दूध देनेवाली भैंस। महिपी [को०]।

महाक्षेत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कालिका पुराण के अनुसार एक तीर्थ जो सुमदना नदी के पूर्व ब्रह्माक्षेत्र के पश्चिम में है।

महाक्षौभ्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों के अनुसार एक बहुत बड़ी सख्या।

महाखर्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बहुत बड़ी सख्या जो सौ खर्व की होती है।

महागगा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महागङ्गा] महाभारत के अनुसार एक नदी का नाम।

महागध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महागन्ध] १. कुटज। २ जलवेत। ३ चन्दन। मलयज।

महागध—वि० अत्यंत सुगन्धित। तीव्र गन्धवाला [को०]।

महागधा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महागन्धा] १. नागवाला। २ केवडा। केतकी। ३ चामुडा का एक नाम।

महागज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दिग्गज।

महागण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ महासमुद्र। २ बहुत में लोगों का समूह। मजमा। भीड।

महागणपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिव के एक अनुचर का नाम। २ गणपति। गणेश।

महागति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों के अनुसार एक बड़ी सख्या।

महागद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. ज्वर। बुखार। २. वह रोग जो कठिनता से अच्छा हो। जैसे, प्रमेह, कोड, भगदर, बवासीर आदि। ३ एक प्रकार की औषध जो सोठ, पीपल और गोल मिर्च आदि से बनती है।

महागत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ विष्णु। २ शिव [को०]।

महागर्दभगधिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महागर्दभगन्धिका] भारगी नामक वनस्पति [को०]।

महागर्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु। २. शिव। ३. एकदानव का नाम।

महागल—वि० [सं०] जिसकी गर्दन लची हो [को०]।

महागव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गवय। नील गाय [को०]।

महागिरि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बड़ा पहाड़। २ कुवेर के आठ पुत्रों में से एक।

विशेष—पिता के शिवपूजन के लिये यह सूँघकर कमलपुष्प लाया था। इसी दोष पर कुवेर में शाप पाकर यह कस का भाई हुआ था और कृष्ण के हाथों मारा गया था।

महागीत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव।

महागुण—वि० [सं०] अत्यंत लाभदायक। जैसे, औषध।

महागुद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाधि चरक के अनुसार एक प्रकार के काड़े जो कफ से उत्पन्न होते हैं। (चरक)।

महागुनी—सञ्ज्ञा पुं० [अं० महोगनी] दे० 'महोगनी' ।

महागुरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अत्यन्त समानित या श्रद्धेय पुरुष ।

विशेष—दत्तकी मख्या तीन कही गई है—माता, पिता और गुरु ।

महागुल्मा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सोमलता ।

महागृष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह गौ जिसके कंकुद बड़े हो [को०] ।

महागोधूम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बड़े दाने का गहूँ ।

महागोपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शारिवा । अन्तमूल ।

महागौरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. दुर्गा । २. पुराणानुसार एक नदी जा विन्ध्य पर्वत से निकली है ।

महाग्रन्थिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाग्रन्थिक] वह श्रोष्व जिसके सेवन से रोग निश्चित रूप से रुक जाय और बढ़ने न पावे ।

महाग्रह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गुरु ।

महाग्रीव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । २. शिव के एक अनुचर का नाम । ३. पुराणानुसार एक देश का नाम । ४. ऊँट ।

महाग्रीवी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाग्रीविन्] ऊँट । उष्ट्र [को०] ।

महाघूर्णा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुग्धा । शराव ।

महाघृत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १११ वर्ष का पुराना घी जो बहुत गुणकारी माना जाता है । बंदक में इस कफनाशक, बलकारक और मेवाजनक माना है ।

महाघोष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. भारी शब्द । २. हाट । बाजार ।

महाघोष—वि० जोर की आवाजवाला [को०] ।

महाघोषा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] काकडासिगी ।

महाचक्षु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाचक्षु] एक प्रकार का साग । चेंच ।

महाचङ्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाचरङ्ग] १. यम के दूत । २. शिव के अनुचर का नाम ।

महाचङ्ग—वि० प्रचंड । भयानक ।

महाचङ्गा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महाचरङ्गा] चासु डा का एक नाम ।

महाचक्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक दानव का नाम ।

महाचक्रवर्ती—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाचक्रवर्तिन्] बहुत बड़ा चक्रवर्ती राजा । सम्राट् ।

महाचक्रजल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वीटो के अनुसार एक पर्वत का नाम ।

महाचक्रो—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाचक्रिन्] १. विष्णु । २. वह जो पङ्क्यत्र रचने में बहुत प्रवीण हो ।

महाचपला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह आर्या छंद जिसके दोनों दलो में चपला छंद के लक्षण हो ।

महाचम—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] विशाल मेना [को०] ।

महाचार्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाचार्य] १. शिव । २. प्रधान अचार्य ।

महात्रिना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक अप्सरा का नाम ।

महाचूडा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महाचूडा] स्कंद की एक मातृका का नाम ।

महाच्छाय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बट वृक्ष । बड का पेड़ ।

महाछिद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] महामेदा [को०] ।

महाजघ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाजङ्घ] ऊट [को०] ।

महाजबीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाजम्बार] कमला नीवू ।

महाजलु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाजम्बु] बडा जामुन ।

महाजभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाजम्म] शिव के एक अनुचर का नाम ।

महाजट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम [को०] ।

महाजटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. केशा की लकी जटा । २. शिव की अस्तव्यस्त केशराशि [को०] ।

महाजनु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम [को०] ।

महाजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. बडा या श्रेष्ठ पुरुष । उ०—महामल्ल मुखर मोहक मित्र महाजन मनस्वी पंडित पाठक ।—वर्ण०, पृ० १० । २. साधु । ३. धनी व्यक्ति । धनवान । दौलतमद । ४. रुपए पैस का लेन देन करनेवाला व्यक्ति । कोठीगाल । उ०—महती से मुगुल महाजन मे महाराज डाडि लीन्हें पकरि पठान पटवारी से ।—भूपण (श.द०) । ६. प्रामाणिक आचरणवाला व्यक्ति । भलामानुस । उ०—पथ मी जाइ महाजन थापे ।—रघुनाथ (शब्द०) । ७. जनसमाज । जनसमूह ।

महाजनपद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महा + जनपद] महादेश । बडा देश । उ०—ईसा पूर्व ६०० में भारतवर्ष में सोलह राज्य फैले हुए थे जिन्हें सोलह महाजनपद कहा जाता है ।—पू० म० भा०, पृ० ११ ।

महाजनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महाजन + ई (प्रत्य०)] रुपए के लेन देन का व्यवसाय । हुँडी पुरजे का काम । कोठीवाली । २. एक प्रकार की लिपि जिसमें मात्राएँ आदि नहीं लगाई जाती । यह लिपि महाजनो के यहाँ बही खाता लिखने में काम आती है । मुडिया ।

महाजय—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा ।

महाजल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] समुद्र । उ०—मलय तनु मिलि लमति मोभा महाजल गभीर । निरखि लोचन भ्रमत पुनि पुनि धरत नहि मन वीर ।—सूर (शब्द०) ।

महाजव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कृष्णसार । मुग [को०] ।

महाजवा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुमार की अनुचरी एक मातृका का नाम । २. एक नदी का नाम ।

महाजनु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव के एक अनुचर का नाम ।

महाजालि, महाजाली—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक पौधा । सोनामुखी [को०] ।

महाजावालि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम ।

महाजिह्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । २. पुराणानुसार एक दैत्य का नाम ।

महाजिह्व—वि० जिसकी जीभ लकी हो । लकी जीभवाला [को०] ।

महाज्ञानी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाज्ञानिन्] १. वह जो बडा ज्ञानी हो । २. शिव ।

महाज्योति—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाज्योतिम्] १ शिव । २ मूर्त्यु [को०] ।

महाज्योतिष्मती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी मालकङ्गनी ।

महाज्वाल'—वि० अत्यधिक ज्योतिर्मय । बहुत अधिक दीप्त या चमकता हुआ [को०] ।

महाज्वाल^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हवन की अग्नि । २ पुराणानुसार एक नरक का नाम ।

विशेष—कहते हैं, जो लोग अपनी पुत्रवधु या कन्या के साथ गमन करते हैं, वे इस नरक में जाते हैं ।

३ महादेव । शिव ।

महाज्वाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जैनियों की एक विद्यादेवी का नाम ।

महाह्वय—वि० [सं०] धन संपत्ति में भरापूरा । अत्यंत धनी [को०] ।

महातत्व^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महा + तत्व] दे० 'महत्तत्व' । उ०—त्रिगुणा तत्त्व ते महातत्व, महातत्व ते अहकार । मन इन्द्रिय शब्दादि पञ्चो ताते किए विस्तार ।—सूर (शब्द०) । (ख) देव प्रकृति महातत्व शब्दादि गुणा देवता व्यौम मरुदग्नि अनिलाबु उर्वी ।—तुलसी (शब्द०) ।

महातपा'—वि० [सं० महातपस्] कठिन तपस्या करनेवाला ।

महातपा^३—सञ्ज्ञा पुं० १ महान् तपस्वी । २ विष्णु [को०] ।

महातप्तकृच्छ्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक व्रत जिसमें तीन दिन तक गरम दूध, गरम घी या गरम जल पीकर चौथे दिन उपवास किया जाता है ।

महातम^७—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० माहात्म्य] दे० 'माहात्म्य' । उ०—(क) करि प्रणाम देखत बन वागा । कहत महातम अति अनुरागा ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) सब मुखनिधि हरि नाम महातम पायो है नाहिन पहिचानत ।—सूर (शब्द०) ।

महातल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चौदह भुवनो में से पृथ्वी के नीचे का पाँचवाँ भुवन या तल । उ०—अतल वितल अरु सुतल तलातल और महातल जान । पाताल और रसातल मिलि मातौ भुवन प्रमान ।—सूर (शब्द०) ।

महाताव^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महाताव] दे० 'महाताव' । उ०—निशिचद को देखि लखै महाताव क्यों तारन देखि लखै जुगनू ।—श्यामा०, पृ० १७३ ।

महातारा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों की एक देवी का नाम ।

महातिक्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ महानिब । वकायन । २ चिरायता ।

महातीक्ष्ण'—वि० [सं०] १ अत्यंत तीक्ष्ण या तेज । २ बहुत कड़वा या भालदार ।

महातीक्ष्ण^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० महातीक्ष्णा] भिलावाँ ।

महातेजा'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महातेजस्] १ शिव । २ पारा । ३ कार्तिकेय (को०) । ४ वीर । योद्धा (को०) । ५ अग्नि (को०) ।

महातेजा^२—वि० १ महान् तेजवाला । २ अत्यंत शक्तिशाली [को०] ।

महात्मन्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'महात्मा' (सर्वो०) । उ०—मुक्त हुए तुम मुक्त हुए जन, हे जगवध महात्मन् ।—ग्राम्या, पृ० ५३ ।

महात्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महात्मन्] १ वह जिसकी आत्मा या आशय बहुत उच्च हो । वह जिसका स्वभाव, आचरण और विचार आदि बहुत उच्च हो । महानुभाव । २ बहुत बड़ा साधु, सन्यासी या विरक्त । ३ दुष्ट । पाजी । (व्यग्य) । ४ परमात्मा । ६ महादेव । शिव । ७ महत्तन्त्र ।

महात्म्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माहात्म्य] दे० 'माहात्म्य' । उ०—तथापि गोता ने जान का महान्म्य माना है क्योंकि ज्ञानी परमेश्वर को समझता है ।—टिड्डु० मम्यता पृ० १८७ ।

महात्रिफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बहेडा, आँवला और हट इन तीनों का समूह ।

महात्याग'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दान । २ शिव (को०) ।

महात्याग^२—वि० दे० 'महात्यागी' [को०] ।

महात्यागी^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महात्यागिन्] शिव ।

महात्यागी^४—वि० बहुत बड़ा त्यागी । अत्यंत दयालु [को०] ।

महादड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महादण्ड] १ यम के हाथ का दड । २ यम के दूत । ३ लकी भुजा (को०) । ४ कठोर दड (को०) ।

महादडधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महादण्डधर] यमराज [को०] ।

महादडधारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महादण्डधारिन्] यमराज । उ०—करै कोतवाली महादडधारी । सफा मेघमाला, शिखी पाककारी ।—केगव (शब्द०) ।

महादत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महादन्त] १ महादेव । २ हातीदाँत । ३ बड़े दाँतवाला हाथी (को०) ।

महादता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महादन्ता] नागवेज ।

महादष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ महादेव । शकर । २ एक राक्षस का नाम । ३ विद्याधर ।

महादशा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार मानव जीवन में किसी एक ग्रह का निर्धारित भोग्य काल । विशेष—दे० 'दशा—४' ।

महादान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार तुला पुरुष, सोने की गी या घोड़ा आदि तथा पृथ्वी, हाथी, रथ, कन्या आदि पदार्थों का दान जिसमें स्वर्ग की प्राप्ति होती है । २ वह दान जो ग्रहण आदि के समय डोमो, चमारो आदि जातियों को दिया जाता है ।

महादानि^७—वि० [सं० महा + दानि] बहुत बड़ा दानी । उ०—मागहु बर जोइ भाव मन महादानि अनुमानि ।—मानस, १।१४८ ।

महादानी—वि० [सं० महादानिन्] दे० 'महादानि' । उ०—दान समै गनै धन तुन सो कुवेर हू को तनक मुमेर महादानी ऊँचे मन को ।—मति० प्र०, पृ० ३६४ ।

महादारु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] देवदारु ।

महादूत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमदूत ।

महादूषक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का धान ।

महादेइ^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महादेवी] महारानी ।

महादेव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शकर । शिव ।

महादेवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दुर्गा । २ राजा की प्रधान पत्नी

या पटरानी की एक पदवी जो हिंदू काल में भारत में प्रचलित थी ।

महादेश—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'महाद्वीप' ।

महादैत्य—सज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार भौत्य मन्वन्तर के एक दैत्य का नाम ।

महाद्रावक—सज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का औषध जो गोनमन्खो, रमाजन, समुद्रफेन, मज्जी आदि से बनाया जाता है ।

महाद्रुम—सज्ञा पुं० [सं०] १ अश्वत्थ । पीपल । २ ताड़ । ३ महुआ । ४ पुराणानुसार एक वर्ष या दश का नाम ।

महाद्रोण—सज्ञा पुं० [सं०] १ शिव । २ सुमेरु पर्वत ।

महाद्रोणा—सज्ञा स्त्री० [सं०] द्रोणपुष्पी ।

महाद्वार—सज्ञा पुं० [सं०] १ विशाल दरवाजा । बड़ा फाटक । २ मंदिर का प्रधान दरवाजा [को०] ।

महाद्वीप—सज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणों के अनुसार पृथिवी के मात मुख्य विभाग । २ पृथ्वी का वह बड़ा भाग जो चारों ओर नैसर्गिक सीमाओं से घिरा हुआ हो, जिसमें अनेक देश हो और अनेक जातियाँ बसती हो । जैसे, एशिया, अफ्रीका आदि (आधुनिक भूगोल) ।

महाधन'—वि० [सं०] १ बहुमूल्य । अधिक मूल्य का । उ०—(क) बाहु विशाल ललित नायक धनु कर ककन केयूर महाधन ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) तहँ राजत निज वीर शेषनाग ताके तर कूरम बरात महाधन धीर ।—सूर (शब्द०) । बहुत धनी ।

महाधन'—सज्ञा पुं० १. स्वर्ण । सोना । २. धूप । सुगंध धूप । ३. कृषि । खेती । ४. बहुमूल्य वस्तु [को०] । ५. बहुत बड़ा युद्ध [को०] ।

महाधनुस्—सज्ञा पुं० [सं० महाधनुस्] शिव [को०] ।

महाधरं—सज्ञा पुं० [सं० महा+धर] महान् । श्रेष्ठ । महा धुरधर । मनक, सनदन, सनातन और सनत्कुमार । उ०—चारि महाधर बारह चेला येककारी हूवा ।—गोरख०, पृ० १३३ ।

महाधातु—सज्ञा पुं० [सं०] १ सोना । २ शिव । ३. सुमेरु पर्वत [को०] ।

महाधिकृत—सज्ञा पुं० [सं० महा+अधिकृत] सेनापति । सेनानायक । उ०—सेनापति शब्द के स्थान पर प्राचीन लेखों में बलाधिकृत या महाधिकृत शब्द पाए जाते हैं । —पू० म० भा०, पृ० १०३ ।

महाधिपति—सज्ञा पुं० [सं०] तांत्रिकों के एक देवता का नाम ।

महाध्वनि—सज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक दानव का नाम ।

महाध्वनिक—सज्ञा पुं० [सं०] वह जो पुरणकार्य के लिये हिमालय में गया हो, और वहाँ मर गया हो ।

महानद—सज्ञा पुं० [सं० महानन्द] १ मगध देश का एक प्रतापी राजा जिसके डर से सिक्दर आगे न बढ़कर पजाब ही से

अपने देश को लौट गया था । २ दम अगुल की मुरली । इस वाद्य के देवता ब्रह्मा मान गए हैं । ३ मुक्ति । मोक्ष । ४. आध्यात्मिक आनंद की स्थिति । उ०—विना रमना जहँ राग वतीमो हीन महानद पूरा ।—कवीर ग०, भा० १, पृ० ८५ ।

महानदा—सज्ञा स्त्री० [सं० महानन्दा] १ मुग । शराव । २. माघ शुक्ला नवमी । इस तिथि को दान, होम और व्रत आदि करने का विधान है । ३ बगाल की एक छोटी नदी का नाम जो हिमालय के अतगत दार्जिलिंग से निकली है ।

महान्—वि० [सं० महत्] बहुत बड़ा । विमान । जैसे,—देशसेवा का कार्य महान् है जा सब लोग नहीं कर सकते ।

महान—वि० [सं० महान्] दे० 'महान्' ।

महानक—सज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का वाजा जिसपर चमड़ा मढ़ा होता था ।

महानगर—सज्ञा पुं० [सं० महा+नगर] बड़ा शहर । विशाल शहर ।

महानग्न—सज्ञा पुं० [सं०] १. प्रेम । प्रेम करनेवाला । २ स्त्री का यार । उपपत्त । जार । ३. प्राचीन काल का एक राज-कर्मचारी जो बहुत ऊँचे पद पर होता था ।

महानट—सज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

महानता—सज्ञा स्त्री० [हि० महान+ता (प्रत्य०)] दे० 'महत्ता' ।

महानद—सज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणानुसार एक नदी का नाम । उ०—सानुज राम समर जमु पावन । मिलेउ महानद सोन सुहावन ।—मानस, १।४०। २ एक तीर्थ का नाम ।

महानदी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ विशाल नदी । जैसे, गंगा । २ एक नदी जो बगाल की खाड़ी में गिरती है [को०] ।

महानरक—सज्ञा पुं० [सं०] २१ नरकों में से एक नरक का नाम [को०] ।

महानल—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नरसल [को०] ।

महानवमी—सज्ञा स्त्री० [सं०] आश्विन शुक्ल नवमी । आश्विन के नवरात्र की नवमी ।

महानस—सज्ञा पुं० [सं०] पाकशाला । रमोईघर ।

महानसावलेही—सज्ञा पुं० [सं०] चौरा खराब करनेवाला ।

विशेष—चंद्रगुप्त मौर्य के समय में जो लोग ब्राह्मण के चौंके को छूकर अथवा और किसी प्रकार खराब कर देते थे, उनको जीभ उखाड़ ली जाती थी ।

महानाटक—सज्ञा पुं० [सं०] नाटक के लक्षणों से युक्त दस अकोवाला नाटक । विशेष—द० 'नाटक' ।

महानाद—सज्ञा पुं० [सं०] १ हाथी । २ ऊट । ३ सिंह । ४ भेड़ । बादल । ५ शख । ६ बड़ा ढोल । ७ महादेव । शिव । ८. बहुत जोर की आवाज [को०] । ९ कान । श्रोत्र [को०] ।

महानाभ—सज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का मंत्र जिससे शत्रु के फेके हुए शस्त्र व्यर्थ जाते हैं । उ०—पद्मनाभ अरु महानाभ दोउ

द्र दहु नाभ मुनाभा ।—रघुनाथ (शब्द०) । २ एक दानव का नाम । ३ पुराणानुसार हिरण्यकशिपु के एक पुत्र का नाम ।

महानायक—सज्ञा पुं [म०] मोतियो की माला के बीच में का बड़ा रत्न । २ सर्वोच्च या प्रधान नेता [को०] ।

महानारायण—सज्ञा पुं [स०] विष्णु ।

महानास—सज्ञा पुं [स०] महादेव ।

महानिर्व—सज्ञा स्त्री [म० महानिम्ब] बकायन ।

महानिद्रा—सज्ञा पुं [स०] मृत्यु । मरण । मौत ।

महानिधान—सज्ञा पुं [स०] बुभुक्षित घातुभेदी पारा जिसे 'बावन तोला पाव रत्ती' भी कहते हैं । उ०—महाराज का कल्याण हो, आपकी कृपा से महानिधान सिद्ध हुआ । आपको बघाई है ।—हरिश्चन्द्र (शब्द०) ।

महानियम—सज्ञा पुं [सं०] विष्णु ।

महानियुत—सज्ञा पुं [स०] बौद्धों के अनुसार एक बहुत बड़ी सख्या का नाम ।

महानिरय—सज्ञा पुं [म०] एक नरक का नाम ।

महानिर्वाण—सज्ञा पुं [म०] परिनिर्वाण जिसके अधिकारी केवल अर्हत् या बुद्धगण माने जाते हैं । उ०—महानिर्वाण वह, नहीं रहते जब कर्म, करण या कारण कुछ ।—अनामिका, पृ० १०१ ।

महानिशा—सज्ञा स्त्री [स०] १. रात्रि का मध्यभाग । रात्रि का दूसरा और तीसरा प्रहर । आधी रात । २. कल्पात या प्रलय की रात्रि । ३. दुर्गा [को०] ।

महानिशीय—सज्ञा पुं [स०] जैनियों के एक संप्रदाय का नाम ।

महानीच—सज्ञा पुं [म०] श्रौवी ।

महानीचू—सज्ञा पुं [स० महा + नीचू] विजौरा नीचू ।

महानीम—सज्ञा स्त्री [स० महानिम्ब] १. बकायन । २. तुन का पेड़ ।

महानील—सज्ञा पुं [स०] १. भृगराज पर्वत । २. एक प्रकार का नीलम जो सिंहल द्वीप में होता है । ३. एक प्रकार का गुग्गुलु । ४. एक पर्वत का नाम जो मेरु पर्वत के पास माना जाता है । ५. एक प्रकार का माप । एक नाग का नाम ।

महानील^१—वि० जो अत्यधिक नीला हो [को०] ।

महानीली—सज्ञा स्त्री [म०] नीली अपराजिता ।

महानुभाव—सज्ञा पुं [स०] कोई बड़ा और आदरणीय व्यक्ति । महापुरुष । महाशय ।

महानुभावता—सज्ञा स्त्री [सं० महानुभाव + ता (प्रत्य०)] महानुभाव होने का भाव । बड़प्पन । जैसे,—यह आपकी महानुभावता है कि आपने अपनी गलती मान ली ।

महानृत्य—सज्ञा पुं [सं०] शिव ।

महानेत्र—सज्ञा पुं [सं०] शिव । त्रिनेत्र ।

महानेमि—सज्ञा पुं [स०] कौश्या ।

महापक—सज्ञा पुं [सं० महापङ्क] महापाप । (बौद्ध) ।

महापक्ति—सज्ञा स्त्री [सं० महापङ्क्ति] एक प्रकार का छद [को०] ।

महापञ्चमूल—सज्ञा पुं [सं० महापञ्चमूल] बेल, अरनी, सोनापाटा, काश्मरी और पाटला इन पाँचों वृक्षों की जड़ों का समूह जिसका व्यवहार वैद्यक में होता है ।

महापञ्चविप—सज्ञा पुं [सं० महापञ्चविप] शृगी, कालकूट मुस्तक, बछनाग और शखणों इन पाँचों विषों का समूह ।

महापञ्चागुल—सज्ञा पुं [सं० महापञ्चाङ्गुल] लाल श्रद्धी का वृक्ष ।

महापञ्च^१—सज्ञा पुं [सं०] १. गरुड । २. उल्लू । ३. एक प्रकार का राजहंस ।

महापञ्च^२—वि० १. बड़े पखोवाला । २. बड़े दल, समूह या परिवार-वाला [को०] ।

महापद्मी—सज्ञा पुं [सं० महापद्मिन्] उलूक । उल्लू [को०] ।

महापद्मा—सज्ञा स्त्री [सं०] १. एक प्राचीन नदी का नाम । २. बड़ी नदी । महानदी ।

महापट—सज्ञा पुं [सं०] त्वक् । त्वचा [को०] ।

महापथ—सज्ञा पुं [सं०] १. बहुत लंबा और चौड़ा रास्ता । राजपथ । २. याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार २१ नरकों में से १६ वाँ नरक । ३. परलोक का मार्ग । मृत्यु । मौत । ४. सुपुम्ना नदी । ५. हिमालय के एक तीर्थ का नाम । ६. वह मार्ग जिससे पांडव स्वर्ग गए थे [को०] । ७. शिव ।

महापथगमन—सज्ञा पुं [सं०] मरण । देहात ।

महापथिक—सज्ञा पुं [म०] वह जो मरने के उद्देश्य से हिमालय पर्वत पर जाय ।

महाप—सज्ञा पुं [सं०] १. नौ निधियों में से एक निधि । २. आठ दिग्गजों में से एक दिग्गज जो दक्षिण दिशा में स्थित है । ३. हाथी की एक जाति । ४. फनवाली जाति के अंतर्गत एक प्रकार का साँप । ५. एक प्रकार का दंत्य । ६. सफेद कमल । ७. महाभारत काल के एक नगर का नाम जो गंगा के किनारे पर था । ८. षोडश पद्य की मत्था । ९. कुवेर के अनुचर एक किन्नर का नाम । १०. नारद का एक नाम [को०] । ११. जैनों के अनुसार महाहिमवान् पर्वत पर के जलाशय का नाम । १२. नद नरेश का नाम [को०] ।

महापद्य—सज्ञा पुं [सं०] महाकाव्य ।

महापनस—सज्ञा पुं [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का साँप ।

महापर्ण—सज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का शाल वृक्ष ।

महापविद्मन्त्र—सज्ञा पुं [सं०] विष्णु ।

महापातक—सज्ञा पुं [सं०] मनु के अनुसार पाँच बहुत बड़े पाप जो ये हैं—ब्रह्महत्या, मद्यपान, चोरी, गुरु की पत्नी के साथ व्यभिचार और ये सब पाप करनेवालों का साथ करना ।

विशेष—कहते हैं, जो लोग ये महापातक करते हैं वे नरक भोगने के उपरांत भी सात जन्म तक घोर कष्ट भोगते हैं।

महापातकी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महापातकिन्] वह जिसने महापातक किया हो।

महापातर(पु)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महापात्र] १ 'महापात्र'। उ०—नाँव नहापातर मोहि तेहक भिखारी ढीठ।—जायमी ग्रं०, पृ०, ३०२।

महापात्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ महाब्राह्मण या कट्टहा ब्राह्मण जो मृतक कर्म का दान लेता है। २ महामन्त्री। प्रधान मन्त्री।

महापाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव।

महापाप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बहुत बड़ा पा महापातक [को०]।

महापाप्मा—वि० [सं० महापाप्मन्] घोर पापी अथवा दुष्ट [को०]।

महापाय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महापातक।

महापार्श्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक दानव का नाम। २ एक राजस का नाम।

महापाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्रकार का यमदूत।

महापाशुपत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बकुल। मीलसिरी। २ शैवों का एक प्राचीन मन्त्रदाय जिसमें पशुपति की उपासना होती थी।

महापासक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध भिक्षु। भ्रमण।

महापितृयज्ञ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का श्राद्ध या पितृयज्ञ जो शाकमेव में दूसरे दिन होता था।

महापीठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ 'पीठ'।

महापीलु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पीलु वृक्ष।

महापीलुपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महापीलु + पति] हाथी का निरीक्षक। हाथी की देखभाल करनेवाला।—उ०—सेन लेख मे महापीलुपति तथा महाव्यूहपति शब्दों का प्रयोग मिलता है। पहले शब्द से हाथी के निरीक्षक का तात्पर्य माना गया है। पू० म० भा०, पृ० १०४।

महापुडरीक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महापुण्डरीक] जैनो के अनुसार रुक्मिण पर्वत पर के बड़े जलाशय या झील का नाम।

महापुट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भावप्रकाश के अनुसार रस आदि तैयार करने का एक प्रकार।

विशेष—इसमें दो हाथ लवा, दो हाथ चीड़ा और दो हाथ गहरा एक गड्ढा खोदकर उसमें एक हजार उपले रखते हैं, और उन उपलों पर मिट्टी के बर्तन में शोषधि आदि ढालकर उसका मुंह बंद करके रख देते हैं, और तब ऊपर से पाँच सौ उपले रखकर आग लगा देते हैं।

महापुण्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक बोधिसत्व का नाम। २ बहुत बड़ा पुण्य। महान् पुण्य [को०]।

महापुण्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम।

महापुत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लडके का पुत्र। पोता। पौत्र।

महापुमान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक पर्वत का नाम।

महापुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह नगर जो दुर्ग आदि में भली भाँति रक्षित हो। २ महाभारत के अनुसार एक तोर्य का नाम।

महापुराण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दे० 'पुराण'। २ अपभ्रंश के कवि स्वयंभु कृत एक ग्रंथ का नाम।

महापुरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजधानी।

महापुरुष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नारायण। २ श्रेष्ठ पुरुष। महात्मा। ३ दुष्ट। पाजी। (व्यग्य)।

महापुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कुद का वृक्ष। २ काला मूंग। ३. लाल कनेर। ४ मुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का कीड़ा।

महापुष्पा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अपराजिता।

महापूजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा की वह पूजा जो आश्विन के नवरात्र में होती है।

महापृष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ऋग्वेद के एक अनुवाक का नाम जो अश्वमेध यज्ञ के सवध में है। २ ऊँट।

महापकृति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार दुर्गा का एक नाम जो सृष्टि का मूल कारण मानी जाती है।

महाप्रजापति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

महाप्रतिहार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्राचीन काल का एक उच्च कर्मचारी जो प्रतिहारों अथवा नगर या प्रासाद की रक्षा करनेवाले चौकीदारों का प्रधान होता था। २ नगर में शांति रखनेवाला अधिकारी। कोतवाल।

महाप्रधान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'महामात्य'। उ०—परमार राजा यशोवर्मा के लेख में 'महाप्रधान' शब्द का प्रयोग मिलता है। गहड़वाल ताम्रपत्रों में महामात्य शब्द आता है।—पू० म० भा०, पृ० १०२।

महाप्रवीण(पु)—वि० [सं० महा + प्रवीण] अत्यंत चतुर। उ०—जसुमति महा प्रवीण, एकु द्विज नारि बुलाई।—नद० ग्रं०, पृ० १९४।

महाप्रभ—वि० [सं०] अत्यंत कातियुक्त। अति दौतिसय [को०]।

महाप्रभा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम।

महाप्रभु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बल्लभाचार्य जी को एक आदरसूचक पदवी। २ बगाल के प्रसिद्ध वैष्णव आचार्य चैतन्य की एक आदरसूचक पदवी। ३ ईश्वर। ४ शिव। ५ इन्द्र। ६ विष्णु। ७ राजा। ८ मन्यासी या साधु।

महाप्रयाण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महा + प्रयाण] दे० 'महाप्रस्थान'।

महाप्रलय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार वह काल जब संपूर्ण सृष्टि का विनाश हो जाता है और अनंत जल के अतिरिक्त कुछ भी बाकी नहीं रहता। ऐसा समय प्रत्येक कल्प अथवा ब्रह्मा के दिन के अंत में आता है। विशेष—दे० 'प्रलय'।

महाप्रलै(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाप्रलय] दे० 'महाप्रलय'। उ०—

महाप्रलं कौ जन वल लं गिरि पर वग्स्थो हरि ।—नद० प्र०,
पृ० ३८ ।

महाप्रसाद—सज्ञा पुं० [सं०] ? ईश्वर या देवताओं का प्रसाद ।
उ०—सो भव ताडं महाप्रसाद लियो नाही है ।—दो मी
बावन०, भा० २, पृ० ६५ । २ जगन्नाथ जी का चढा हुआ
भात । ३ मास (देवी का प्रसाद) (व्यग्य) । ४ अखाद्य पदार्थ
(व्यग्य) ।

महाप्रसूत—सज्ञा पुं० [सं०] एक बहुत बड़ी सख्या का नाम ।

महाप्रस्थान—सज्ञा पुं० [सं०] ? शरीर त्यागने की कामना से
हिमालय की ओर जाना । मरण-दीक्षा-पूर्वक उत्तर की ओर
अभिगमन । २ मरण । देहात ।

महाप्राज्ञ—वि० [सं०] अत्यंत विद्वान् । महाजानी ।

महाप्राण^१—सज्ञा पुं० [सं०] व्याकरण के अनुसार वह वर्ण जिमके
उच्चारण में प्राणवायु का विशेष व्यवहार करना पड़ता है ।

विशेष—वर्णमाला में प्रत्येक वर्ण का दूसरा तथा चौथा अक्षर
तथा हिंदी में कुछ अन्य ध्वनियाँ महाप्राण हैं । जैसे,—

कवर्ण का—ख, घ ।

ववर्ण का—छ, झ ।

चवर्ण का—ठ, ढ, ढ ।

तवर्ण का—थ, ध ।

पवर्ण का—फ, भ । तथा ष, प, स और ह तथा ङ्ह, ङ्ह
लह आदि ।

२ वह तीव्र या महाप्राण श्वास जो महाप्राण वर्णों के उच्चारण
में लेनी पड़ती है (को०) । ३ काला कौआ (को०) ।

महाप्राण—वि० अत्यधिक मत्वयुक्त ।

महाफल^१—वि० [सं०] ? बहुत अधिक फल देनेवाला । २ बहुत
अधिक पुरस्कार देनेवाला (को०) ।

महाफल—सज्ञा पुं० बेल का पेड़ (को०) ।

महाफला—सज्ञा स्त्री० [सं०] ? तितलीकी । २ महाकोशातकी । ३
राज जवू । ४ इद्रवारुणी । ५ एक प्रकार का भाला (को०) ।

महाफा, महाफी—सज्ञा स्त्री० [अ० महफहद्, फा० मुहाफहद्] बड़ी
पदोंदार डोली । सवारी । पालकी । उ०—मेरी औरत महाफी
में बिठाकर, ले जाया कर जबर्दस्ती सरामर ।—दक्खिनी०,
पृ० ३१५ ।

महावन—सज्ञा पुं० [सं०] ? बहुत घना और विशाल वन । उ०—
फिरेउ महावन परेउ भुलाई ।—मानस, १।१५७। २ वृदावन
के एक वन का नाम ।

महावल^१—वि० [सं०] अत्यंत बलवान् । बहुत बड़ा ताकतवर ।
उ०—(क) भोपम कहत मेरे अनुमान हनुमान सागिखी
त्रिकाल न त्रिलोक महावल भो ।—तुलसी (शब्द०) । (ख)
मत मति जय जय धारि विपृष्ट भट चलयौ महावल ।—गोपाल
(शब्द०) । (ग) मेघनाथ से पुत्र महावल कुम्भकरण से माई ।
—सूर (शब्द०) ।

महावल—सज्ञा पुं० ? पितरो के एक गण का नाम । २ बुद्ध । ३
तामस और रौप्य मन्वतर के इद्र का नाम । ४ वायु । ५

शिव के एक अनुचर का नाम । ६ एक नाग का नाम । ७
ठोम वाम (को०) । ८ मकर । नक्र (को०) । ९ तान वृत्त
(को०) । १० मीमा ।

महावला—सज्ञा स्त्री० [सं०] ? सहदेवी नाम की जटी । पीली
महदेइया । २ पिप्पली । पीपल । ३ वी । ४ नील का पीघा ।
५ कार्तिकेय की एक मातृका का नाम । ६ एक बहुत बड़ी
सख्या का नाम ।

महावलाधिकृत—सज्ञा पुं० [सं० महावला + अधिकृत] मन्में बड़ा
सेनाधिकारी । प्रधान मनापति । उ०—क्या । महावलाधिकृत
अव नहीं हैं । शोक ।—स्कंद०, पृ० ४ ।

महावलि—सज्ञा पुं० [सं०] ? आकाश । २ गुफा । ३ मन ।

महावलेश्वर—सज्ञा पुं० [सं०] एक शिवलिंग जो उड़ीसा में आधुनिक
महावलेश्वर के निःसृत है (को०) ।

महावाहु^१—वि० [सं०] ? लंबी भुजावाला । २ बन्ने । बलवान् ।

महावाहु^२—सज्ञा पुं० ? धृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम । २ एक राक्षस
का नाम । ३ विष्णु का एक नाम ।

महाबुद्ध—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार के बुद्ध जो भावाग्न बुद्धों में
श्रेष्ठ माने जाते हैं ।

महाबुद्धि—वि० [सं०] ? बहुत बुद्धिमान् । २ वृत्त ।

महाबृहती—सज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक छंद जो तीन पाद का होता
है और जिसके प्रत्येक पाद में १२ वर्ण होते हैं ।

महावेधका—सज्ञा पुं० [सं० महा + वेधक] महायुद्ध । उ०—
वाजिया वेढक महावेधक, मार सावल सौटडा ।—रा० ह०,
पृ० २८० ।

महावोधि—सज्ञा पुं० [सं०] ? बुद्धदेव । २ वीद्ध भिक्षु (को०) ।

महाब्राह्मण—सज्ञा पुं० [सं०] ? वह ब्राह्मण जो मृतक कृत्य का
दान नेता हो । कट्टहा । (साधारणतः लोक में ऐसा ब्राह्मण
निहित माना जाता है) । २ निःसृत ब्राह्मण । ३ जानी, पठिन
और विद्वान् विप्र (को०) ।

महाद्वि—सज्ञा पुं० [सं०] महासागर । उ०—वन के मान के वीच
को जर्जर कर, महाद्वि ज्ञान का बहा जो भर गर्जन साहित्यिक
स्वर ।—अनामिका पृ० १८ ।

महाभद्र—सज्ञा पुं० [सं०] ? पुराणानुसार एक पर्वत का नाम ।
२ पुराणानुसार मेरु पर्वत के उत्तर के एक मरोवर का नाम ।

महाभद्रा—सज्ञा पुं० [सं०] ? गंगा । २ काश्मरी ।

महाभय—सज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार अर्धर्म के एक पुत्र
का नाम जो निःश्रुति के गर्भ में उत्पन्न हुआ था ।

महाभया—सज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम ।

महाभरु—वि० [सं० महाभट] वीर बौद्ध । उ०—स्वामि धर्म
उर बरहु रहहु, मम मत्थ महाभरु ।—प० रामी, पृ० १६१ ।

महाभरा—सज्ञा स्त्री० [सं०] कुम्भजन । पान की जड़ ।

महाभाग—वि० [सं०] १ भाग्यवान् । किष्मत्तवर । २ महान् विशिष्ट । ३ पवित्रात्मा ।

महाभागवत—सज्ञा पुं० [सं०] १ वारह महाभक्त अर्थात् मनु, सनकादि, भरत, जनक, कपिल, ब्रह्मा, वलि, भीम, प्रह्लाद, गुकदेव, धर्मराज और शशु । २ एक प्रकार के छंद का नाम । २६ मात्राओं के छंदों की मज्ञा । ३ परम प्रेम्णाव । ४ 'भागवत' (पुराण) ।

महाभागा—सज्ञा स्त्री० [सं०] दाक्षायिणी का एक नाम ।

महाभागी—वि० [सं० महाभागिन्] अत्यंत भाग्यवान् [को०] ।

महाभारत—सज्ञा पुं० [सं०] १ एक परम प्रसिद्ध प्राचीन ऐतिहासिक महाकाव्य जिसमें कौरवों और पांडवों के युद्ध का वर्णन है ।

विशेष—यह ग्रंथ आदि, सभा, वन, विराट, उद्योग, भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, सौप्तिक, स्त्री, शांति, अनुश्रामन, अश्वमेध, आश्रमवासी, मौसल, महाप्रस्थान और स्वर्गरोहण इन अष्टादश पर्वों में विभक्त है । कुछ लोग हरिवंश पुराण को भी इसी के अंतर्गत और इसका अंतिम अंश मानते हैं । इन ग्रंथ में लगभग ८०-९० हजार श्लोक हैं । ऐतिहासिक और धार्मिक दोनों दृष्टियों से इस ग्रंथ का महत्व बहुत अधिक है । यों तो महाभारत ग्रंथ कौरव-पांडव-युद्ध का इतिहास ही है पर इसमें वैदिक काल की यज्ञों में कही जानेवाली अनेक गाथाओं और आख्यानों आदि के साथ ही के अतिरिक्त धर्म, तत्त्वज्ञान, व्यवहार, राजनीति आदि अनेक विषयों का भी बहुत अच्छा समावेश है । कहते हैं, कौरव-पांडव-युद्ध के उपरान्त व्यास जी ने 'जय' नामक ऐतिहासिक काव्य की रचना की थी । वैशंपायन ने उसे और बढ़ाकर उसका नाम 'भारत' रखा । मवके पीछे सौंति ने उसमें और भी बहुत सी कथाओं आदि का समावेश करके उसे वर्तमान रूप देकर 'महाभारत' बना दिया । महाभारत में जिन बातों का वर्णन है, उसके आधार पर एक और तो यह ग्रंथ वैदिक साहित्य तक जा पहुंचता है और दूसरी ओर जैनो तथा बौद्धों के आरंभिक काल के साहित्य से भी मिलता है । हिंदू इसे बहुत ही प्रामाणिक धर्मग्रंथ मानते हैं ।

२ कोई बहुत बड़ा ग्रंथ । २. कौरवों और पांडवों का प्रसिद्ध युद्ध जिसका वर्णन उक्त महाकाव्य में है । ४ कोई बड़ा युद्ध या लड़ाई झगडा । जैसे, यूरोपीय महाभारत । उ०—अबकी बार प्रत्यक्ष महाभारत होइ गया ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३०७ ।

महाभाष्य—सज्ञा पुं० [सं०] पाणिनि के व्याकरण पर पतञ्जलि का लिखा हुआ प्रसिद्ध भाष्य ।

महाभासुर—सज्ञा पुं० [सं०] विष्णु का एक नाम [को०] ।

महाभिन्नु—सज्ञा पुं० [सं०] भगवान् बुद्ध ।

महाभिपत्र—सज्ञा पुं० [सं०] सोम का रस [को०] ।

महाभिनिष्क्रमण—सज्ञा पुं० [सं० महा + अभिनिष्क्रमण] १ बाहर जाना । २ प्रव्रज्या के लिये बाहर जाना ।

महाभीत—सज्ञा पुं० [सं०] १ राजा शातनु का एक नाम । २ शिव के शृंगी नामक द्वारपाल का एक नाम ।

महाभीता—सज्ञा पुं० [सं०] लजालू ।

महाभीम—सज्ञा पुं० [सं०] १ राजा शातनु का एक नाम । २ शिव के शृंगी नामक द्वारपाल का एक नाम ।

महाभीम^३—वि० अत्यंत भयानक । बहुत भयङ्कर [को०] ।

महाभीरु—सज्ञा पुं० [सं०] स्वामिन नाम का परमात्मी कवि ।

महाभीष्म—सज्ञा पुं० [सं०] राजा शातनु का एक नाम ।

महाभुज—सज्ञा पुं० [सं०] वह जिसकी दाहिं बहुत बड़ी ही । आजानुवाह ।

महाभूत—सज्ञा पुं० [सं०] पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश ये पंचतत्त्व । उ०—बालहू के कान महाभूतनि के महाभूत करम के करम निदान के निदान ही ।—तुलसी (शब्द०) । विशेष—द० 'भूत' ।

महाभृङ्ग—सज्ञा पुं० [सं० महाभृङ्ग] नीले फूलवाला भंगरा ।

महाभैरव—सज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

महाभैरवी—सज्ञा स्त्री० [सं०] तांत्रिकों के अनुसार एक विद्या का नाम ।

महाभोग—सज्ञा पुं० [सं०] १ साँप । २ द० 'महाप्रमाद' ।

महाभोगा—सज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा ।

महाभोगी—सज्ञा पुं० [सं० महाभोगिन्] बड़े फनमाना साँप ।

महामडल—सज्ञा पुं० [सं० महा + मडल] १ बहुत बड़ा मघटन । बड़ा मघ । २ बहुत विशाल परिधि या घेरा ।

महामडलिक—सज्ञा पुं० [सं० महा + मडलिक] प्राचीन राजाओं की एक उपाधि । उ०—प्रतिहार तथा पाल नरेशों के लेखों में उनके लिये राजन, राजन्यक, राजनक, नामत अथवा महासामत शब्दों का प्रयोग मिलता है । कहीं कहीं वह महामडलिक के नाम में भी पुकारा जाता था ।—पू० म० भा०, पृ० ६८ ।

महामत्र—सज्ञा पुं० [सं०] १ वेद का कोई मंत्र । वेदमंत्र । २ सबसे बड़ा मंत्र । उत्कृष्ट मंत्र । उ०—महामत्र जोइ जपत महेशू । कासी मुकुति हेतु उपदेशू ।—मानस, १।१६ । ३ वह मंत्र या मलाह जिसको महायता से किसी काम का होना निश्चित हो । अच्छी और बढिया सलाह । उ०—राजा राज-पुरोहितादि मुहूर्तो मंत्री महामंत्र दा ।—केशव (शब्द०) ।

महामत्री—सज्ञा पुं० [सं० महामन्त्रिन्] राजा का प्रधान या सबसे बड़ा मंत्री ।

महामट्ट—सज्ञा पुं० [सं० महा + मट्टक] बड़ा मटका । ताँद, जिसमें रंगरेज कपड़े रंगते हैं । उ०—फटे कुभ प्राहार शोन अजेज । महामट्ट फुट्या मनो रंगरेज ।—पृ० रा०, १२ । ३७८ ।

महामणि—सज्ञा पुं० [सं०] १ मूल्यवान् रत्न । २ शिव [को०] ।

महामति^१—वि० [सं०] १ जो बहुत बड़ा बुद्धिमान् हो । २ जो बहुत अधिक उदार विचार का हो [को०] ।

महामति^३—सज्ञा पुं० १ गणेश । २ एक यज्ञ का नाम । ३ एक बोधिमत्त्व का नाम । ४ बृहस्पति (ने०) ।

महामत्स्य—सज्ञा पु० [स०] जैनो के एक अनुसार वह बहुत बड़ी मछली जो स्वयंभूरमणा सागर में थी ।

महामद—सज्ञा पुं० [सं०] मस्त हाथी ।

महामना—वि० [सं० महामनस्] १ उदारचिन्तित । दयालु । २ उच्च विचारवाला । उच्चमना । जैसे, हिंदू विश्वविद्यालय के मस्थापक, हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान के अनन्य उपासक महामना मदनमोहन मालवीय । ३ समर्थ । साहकार [को०] ।

महामना^२—सज्ञा पु० आख्यान वर्णित एक जंतु । शरभ [को०] ।

महामयूरो—सज्ञा स्त्री० [सं०] बौद्धों की एक देवी का नाम ।

महामह—सज्ञा पुं० [सं०] बहुत बड़ा उत्सव । महोत्सव ।

महामहिम—वि० [सं० महा + महिमा] १ महान् महिमायुक्त । महिमान्वित । उ०—सत्ता का महामहिम रख जब वैभव के पथ पर चलता है । करते हैं उसका विजयघोष अगाएत अनुचर अगणित चारण । २ राजा, महाराजा, स्वतंत्र भारत के राष्ट्रपति और राज्यपाल आदि के लिये आदरार्थ प्रयुक्त संबोधन । आदरयुक्त संबोधन ।

महामहोपाध्याय—सज्ञा पुं० [सं०] १ गुरुओं का गुरु । बहुत बड़ा गुरु । २ सस्कृत के मूर्धन्य विद्वानों को शासन से मिलनेवाली एक प्रकार की उपाधि ।

विशेष—स्वतंत्रताप्राप्ति के पूर्व भारत में सस्कृत के विद्वानों को यह उपाधि ब्रिटिश सरकार की ओर से मिलती रही है । अब यह उपाधि उसी प्रकार विद्वानों को स्वतंत्र भारत की सरकार द्वारा प्राप्त होती है ।

महामांडलिक—सज्ञा पुं० [सं० महा + मण्डलिक] मंडल या राष्ट्र का अधिपति ।

महामास—सज्ञा पुं० [सं०] १ गोमास । गौ का गोशत । उ०—जिधर देरिए महामास से भरे टोकरे अधिकता से ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १६ । २ मनुष्य का मास ।

विशेष—कुछ लोग मनुष्य, गौ, हाथी, घोड़े, भैंस, सूअर, ऊँट और साँप इन आठ जीवों के मास को महामास मानते हैं । महामास खाना परम निषिद्ध कहा गया है ।

महामार्ग—सज्ञा स्त्री० [सं० महा + हि० मार्ग] १. दुर्गा । उ०—अये गवरि, ईस्वरि सब लायक । महामार्ग वरदाइ मुभायक ।—नद० ग्र०, पृ० २६८ । २ काली ।

महामात्य—सज्ञा पुं० [सं०] राजा का प्रधान या सबसे बड़ा अमात्य । महामंत्री ।

महामात्र^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ महामात्य । २ महावत । ३. हाथियों का निरीक्षक ।

महामात्र^२—वि० १ प्रधान । बड़ा । २ बहुत बढिया । ३. समृद्ध । संपन्न । ४. वनवान् । अमीर ।

महामात्री—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. महामात्य की पत्नी । २. आध्यात्मिक गुरु की स्त्री [को०] ।

महामानव—सज्ञा पुं० [सं० महा + मानव] अत्यंत महान् पुरुष । देवी पुरुष । ईश्वरीय अवतार ।

महामानसिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] जैनियों की एक देवी का नाम ।

महामानसी—सज्ञा स्त्री० [सं०] जैनियों की एक देवी । महामानसिका ।

महामान्य—वि० [सं० महा + मान्य] अत्यंत समानार्थ । परम प्रतिष्ठित ।

महामाय^१—सज्ञा पुं० [सं०] १, शिव । २ विष्णु । ३ एक अमुर का नाम । ४ एक पिछावर का नाम ।

महामाय^२—वि० मायावी ।

महामाय(पु)^३—सज्ञा स्त्री० [सं० महामायी] १ 'महामाई' । उ०—महामाय, वरदाय, सुमकर तुमरे नायक —नद० ग्र०, पृ० २०६ ।

महामाया^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ प्रकृति । २ दुर्गा । ३ गंगा । ४ शुद्धोदन की पत्नी और बुद्ध की माता का नाम । ५ आर्या छंद का तेरहवाँ भेद जिसमें १५ गुरु और २७ लघु वर्ण होते हैं ।

महामायी—सज्ञा पुं० [सं० महामायिन्] विष्णु [को०] ।

महामारी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. वह सक्रामक और भीषण रोग जिसमें एक साथ ही बहुत से लोग मरें । बवा । मरी । जैसे, हैजा, चेचक, प्लेग इत्यादि । २. महाकाली का एक नाम ।

महामाल—सज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

महामालिनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] नाराच छंद का एक नाम ।

महामाप—सज्ञा पुं० [सं०] राजमाप । बड़ा उडद ।

महामापतैल—सज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का तेल जो माचाराण तिल के तेल में चने की दाल, दणमूल और बकरी का मास आदि मिलाकर पकाने में बनता है ।

महामुड—सज्ञा पुं० [सं० महामुण्ड] बोग नामक गंधद्रव्य ।

महामु डनिका—सज्ञा स्त्री० [सं० महामुण्डनिका] गोरखमुडी ।

महामु डी—सज्ञा स्त्री० [सं० महामुण्डी] गारखमुडी [को०] ।

महामुख—सज्ञा पुं० [सं०] १ कुभीर नामक जनजंतु । घडियाल । २ नदी का मुहाना । वह स्थान जहाँ नदी गिरती है । ३ महादेव ।

महामुद्रा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ योग के अनुसार एक प्रकार की मुद्रा या अंगों की स्थिति । २ एक बहुत बड़ी सख्या का नाम । ३ राजमुद्रा । राजमुहर ।

महामुद्राधिकृत—सज्ञा पुं० [सं० महा + मुद्रा + अधिभूत] प्राचीन काल का एक राजकीय पद जिसका अधिकारी विदेशियों को देश में आने का अनुमतिपत्र देता था । उ०—महामुद्राध्यक्ष का भी एक उपविभाग था जो राज्य में प्रवेश के लिये विदेशियों को अनुमतिपत्र देता था । लक्ष्मणभक्त क लख म इस महा-मुद्राधिकृत कहा गया है ।—सू० म० भा०, पृ० १०६ ।

महामुद्राध्यक्ष—सज्ञा पुं० [सं० महा + मुद्रा + अधिभूत] १ 'महामुद्राधिकृत' । उ०—द्वय विभाग के अंतर्गत महामुद्राध्यक्ष का

भी एक उपविभाम था जो राज्य में प्रवेश के लिये विदेशियों को अनुमति पत्र देता था।—पू० म० भा०, पृ० १०६।

महामुनि—सज्ञा पुं० [सं०] १ मुनियों में श्रेष्ठ। बहुत बड़ा मुनि। २ कपटी व्यक्ति। ठग। बोखेवाज (व्यग्य, । ३ अगस्त्य ऋषि। ४ बुद्ध। ५ कृपाचार्य । ६ काल। ७ व्यास। ८ एक जिन का नाम। ९ तुंबुरु का वृद्ध।

महामूर्ति—सज्ञा स्त्री० [सं०] विष्णु।

महामूल—सज्ञा पुं० [सं०] प्याज।

महामूल्य—सज्ञा पुं० [सं०] मारिणक।

महामूल्य—वि० १, जिसका मूल्य बहुत अधिक हो। बहुमूल्य। २ महंगा। महाघ।

महामृग—सज्ञा पुं० [सं०] हाथी।

महामृत्युजय—सज्ञा पुं० [सं० महामृत्युञ्जय] १ शिव। २ शिव जी का एक मंत्र। कहते हैं, इसके जप में प्रकालमृत्यु टल जाती और आयु बढ़ती है।

महामेघ—सज्ञा पुं० [सं०] शिव।

महामेद—सज्ञा पुं० [सं०] १० 'महामेदा'।

महामेदा—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का कद जो मौरग देश में पाया जाता है।

विशेष—यह देखने में अदरक के समान होता है। इसकी लता चलती है। वैद्यक में इसे शीतल, रुचिकर, कफ और शूल को बढ़ानवाली, दाह, रक्तपित्त, क्षय और वात को नाश करनेवाली माना है। यह जड़ी आजकल नहीं मिलती। इसके स्थान पर च्यवनप्राश आदि में दूसरी ओषधि डालते हैं।

पर्या०—देवमणि। वसुच्छिद्रा। देवेष्ट। सुरमेदा। दिव्या। त्रिदत्ता। सोमा।

महामोघ—सज्ञा पुं० [सं०] शिव (को०)।

महामोघा—सज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा (को०)।

महामैत्र—सज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम।

महामोदकारी—सज्ञा पुं० [सं०] एक वैष्णव वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में छह मंगल होते हैं। इसका दूसरा नाम क्रीडाचक्र भी है।

महामोह—सज्ञा पुं० [सं०] १ सामारिक मुखों के भोग की इच्छा जो अविद्या का स्पातर मानी गई है। उ०—जै जै कलयुग राज की, जै महामोह महाराज की।—भारतेंदु ग्र०, भा० १, पृ० ४८३। २ भारी मोह। तांत्र आमक्ति (को०)।

महामोहा—सज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

महाप० वि० [सं० महा] महान्। बहुत। अधिक। ज्यादा। उ०—(क) तीमर अपनी रूप रचि व्यक्त शैल नराय। कही मकल जिग्यन करहु यासे प्रीति महाय।—रघुराज (शब्द०)। (ख) याके सनमुख हम दोऊ वैठी रूप बनाय। हमपै तनक तर्क नही अचरज लगन महाय।—रघुराज (शब्द०)।

महायज्ञ—सज्ञा पुं० [सं०] १ यज्ञों का राजा। २ एक प्रकार के बौद्ध देवता।

महायज्ञ—सज्ञा पुं० [सं०] १ हिंदू धर्मशास्त्र के अनुसार नित्य किए जानेवाले कर्म जो मुख्यत पाँच हैं—(क) ब्रह्मयज्ञ = सध्यापासन, (२) देवयज्ञ = हवन, (३) पितृयज्ञ = तर्पण, (४) भूतयज्ञ = वलि और (५) नृत्यज्ञ = अतिथिसत्कार।

विशेष—इन पाँचों कर्मों के नित्य करने का विधान है। कहते हैं, मनुष्य नित्य जो पाप करता है, उनका नाश इन यज्ञों के अनुष्ठान से हो जाता है। २ महान् कार्य। ऐसा कार्य जिसका लक्ष्य अत्यंत ऊँचा हो।

महायम—सज्ञा पुं० [सं०] यमराज।

महायशा—सज्ञा पुं० [सं० महायशस्] महायशस्वी। अत्यंत प्रसिद्ध। ख्यात। समानित (को०)।

महायाग—सज्ञा पुं० [सं०] १ ३० 'महायज्ञ'। २ बहुत बड़ा यज्ञ। जैसे, श्रद्धमेघ, राजसूय आदि। उ०—इमीलिये श्रव ये महायाग मिर्फ पुराने महोत्सवों को निर्जाव नकल तथा पुरोहितों की आमदनी का एक जरिया मात्र रह गया।—भा० इ० ६०, पृ० १५२।

महायात्रा—सज्ञा स्त्री० [सं०] मृत्यु। मौत।

महायान—सज्ञा पुं० [सं०] १ एक विद्याधर का नाम। २ बौद्धों के तीन मुख्य संप्रदायों में से एक संप्रदाय।

विशेष—महात्मा बुद्धदेव के परिनिर्वाण के थोड़े ही दिनों बाद उनके शिष्यों और अनुयायियों में मतभेद होने के कारण यह संप्रदाय चला था। इसका प्रचार नेपाल, तिब्बत, चीन, जापान आदि उत्तरीय देशों में है जहाँ इसमें तत्र भी बहुत कुछ मिला हुआ है। जिस प्रकार शिव की शक्तियाँ हैं, उसी प्रकार बुद्ध की कई शक्तियाँ या देवियाँ हैं जिनकी उपासना की जाती है।

३ चौड़ा मार्ग। प्रशस्त पथ। उ०—यह वह महायान या चौड़ा मार्ग था जिसपर सकीर्णता को दूर करके सबको चलने का निमंत्रण दिया गया।—पोद्दार अभि० ग्र० पृ० ६५४।

महायाम—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम।

महायाम्य—सज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

महायुग—सज्ञा पुं० [सं०] सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि इन चारों युगों का समूह जो देवताओं का एक युग माना जाता है।

महायुत—सज्ञा पुं० [सं०] एक बड़ी सख्या जो सौ अयुत की होती है।

महायुद्ध—सज्ञा पुं० [सं० महा+युद्ध] बहुत बड़ा युद्ध। १; ऐसा युद्ध जिसमें ससार के अनेक शक्तिशाली देश भाग लें।

विशेष—ईस्वी सन् की बीसवीं शताब्दी के विगत काल में दो महायुद्ध हुए हैं एक सन् १९१४-१८ तक और दूसरा सन् १९३९-४५ तक।

महायुध—सज्ञा पुं० [सं०] शिव।

महायोगी—सज्ञा पुं० [सं० महयोगिन्] १ शिव। २. विष्णु। ३. मुर्गा (को०)।

महायोगेश्वर—मन्त्रा पुं० [सं०] पितामह, पुलस्त्य, वसिष्ठ पुलह, अगिरा, क्रतु और कश्यप जो बहुत बड़े ऋषि और योगी माने जाते हैं।

महायोगेश्वरी—मन्त्रा स्त्री० [सं०] १ दुर्गा। २ नागदमनी।

महायोनि—मन्त्रा स्त्री० [सं०] वैद्यक के अनुसार स्त्रियों का एक प्रकार का रोग जिसमें उनकी योनि बहुत बढ जाती है।

महायोगिक—मन्त्रा पुं० [सं०] २६ माशाओं के छदों की सजा।

महारग—मन्त्रा पुं० [सं० महारङ्ग] अभिनय करने का विशाल रंगमंच (को०)।

महारभ—वि० [सं० महारम्भ] जिसका आरंभ करने में बहुत अधिक यत्न करना पड़े। बहुत बड़ा। उ०—सच है छोटे जी के लोग थोड़े ही कामों में ऐसा धरारा जाते हैं मानो सारे समार का बोझ इन्हीं पर है। पर जो बड़े लोग हैं, उनके सब काम महारभ होते हैं, तब भी उनके मुख पर कही से व्याकुलता नहीं झलकती।—हरिश्चंद्र (शब्द०)।

महारभ—मन्त्रा पुं० बड़ा काम (को०)

महारक्त—मन्त्रा पुं० [सं०] मूगा।

महारक्षा—मन्त्रा स्त्री० [सं०] बौद्धों के अनुसार महाप्रतिमरा, महामयूरी, महामहस्रप्रमदिनी, महाशीतवती और महामत्रानुसारणी ये पांच देवियाँ।

महारजत—मन्त्रा पुं० [सं०] १ सोना। मुवर्ण। उ०—जातरूप कलघात पुनि चामीकर तपनीय। रुक्म रुद्र रोदन कनक महारजत रमनीय।—अनेकार्थ०, पृ० १६। २ धतूरा।

महारजन—मन्त्रा पुं० [सं०] १ कुसुम का फूल। २ सोना।

महारण्य—मन्त्रा पुं० [सं०] घोर जंगल। घना जंगल (को०)।

महारत—मन्त्रा स्त्री० [सं०] १ अभ्यास। भ्रक। २ योग्यता। कौशल (को०)। ३ ज्ञान। जानकारी (को०)।

महारत्न—मन्त्रा पुं० [सं०] मोता, हीरा, वंदूर्य, पद्मराग, गोमेद, पुष्पराग (पुखराज), पन्ना, भूंगा और नीलम इन ती रत्नों में से कोई रत्न।

महारत्नवर्षा—मन्त्रा स्त्री० [सं०] तान्त्रिकों की एक देवी का नाम।

महारथ—मन्त्रा पुं० [सं०] १ बहुत भारी घोड़ा जो अकेला दस हजार घोड़ाओं में लड सके। २ बहुत बड़ा रथ। विशाल रथ (को०)। ३ आकाक्षा। मनोरथ (को०)।

महारथी—मन्त्रा पुं० [सं० महारथिन्] १ दे० 'महारथ'। उ०—पूरण प्रकृति मात वीर वीर है विख्यात रथी महारथी अतिरथी रण साज कै।—रघुराज (शब्द०)। २ किसी विषय का प्रकांड विद्वान् या जानकार व्यक्ति। जैसे, शास्त्रार्थमहारथी।

महारथ्या—मन्त्रा स्त्री० [सं०] चौड़ा रास्ता। सडक।

महारम—मन्त्रा पुं० [सं० महारिम] १ परिचित या जान पहचान का व्यक्ति। २ दोस्त। ३ भेद का जानकार। उ०—क्यों मिलेगा घर तुम्हें चुप शाह का। होयगा क्या महारम उस दरगाह का?—दक्खिनी०, पृ० १७७।

महारस—मन्त्रा सं० [सं०] १ काँजा। २ खजूर। ३ कसेरू। ४. ऊख। ५ पारा। ६ कातीमार लोहा। ७ इंगुर। ८ सोनामक्खी। ९ रूपांमक्खी। १० अन्नरू। ११ जामुन का वृक्ष।

महारस—वि० जिममें बहुत रस हो। अधिक रसवाला (को०)।

महारा(पुं०)—सर्व० [हिं० हमारा] दे० 'हमारा'। उ०—अग अग मदन उमग बल धारे रे। जारे उर कठिन महारे यो महारे हारे, प्यारे अब न्यारे हूँ कै चित्त सो विसारे रे।—नट०, पृ० ५२।

महाराज—मन्त्रा पुं० [सं०] [स्त्री० महारानी] १ राजाओं में श्रेष्ठ। बहुत बड़ा राजा। २ ब्राह्मण, गुरु, धर्माचार्य या और किसी पूज्य के लिये एक संबोधन। ३ एक उपाधि जो भारत में ब्रिटिश सरकार की ओर से राजाओं को दी जाती थी। ४ उर्गलियों का नाखून (को०)।

महाराजचूत—मन्त्रा पुं० [सं०] एक प्रकार का आम (को०)।

महाराजाधिराज—मन्त्रा पुं० [सं०] १ बहुत बड़ा राजा। अनेक राजाओं महाराजाओं में श्रेष्ठ। सम्राट्। २ एक प्रकार की पदवी जो ब्रिटिश भारत में सरकार की ओर से बड़े बड़े राजाओं को मिलती थी।

महाराजिक—मन्त्रा पुं० [सं०] एक प्रकार के देवता जिनकी संख्या कुछ लोगों के मत से २२६ और कुछ लोगों के मत से ४००० है।

महाराज्ञी—मन्त्रा स्त्री० [सं०] १ दुर्गा। २ महारानी।

महाराज्य—मन्त्रा पुं० [सं०] बहुत बड़ा राज्य। साम्राज्य।

महाराणा—मन्त्रा पुं० [सं० महा + हिं० राणा] मेवाड, चित्तौर और उदयपुर के राजाओं की उपाधि।

महारात्र—मन्त्रा पुं० [सं०] आधी रात (को०)।

महारात्रि—मन्त्रा स्त्री० [सं०] १ महाप्रलयवाली रात, जब ब्रह्मा का लय हो जाता है और दूसरा महाकल्प होता है। २ तान्त्रिकों के अनुसार ठीक आधी रात बीतने पर दो मुहूर्त का समय।

विशेष—यह काल बहुत ही पवित्र समझा जाता है। कहते हैं कि इस समय जो पुण्य कृत्य किया जाता है, उसका फल अक्षय होता है।

३ दुर्गा। ४ आश्विन शुक्ल पक्ष की अष्टमी की रात्रि जिस दिन निशीथ में भगवती का पूजन किया जाता है। ५. दे० 'शिवरात्रि'।

महारावण—मन्त्रा पुं० [सं०] पुराणानुसार वह रावण जिमके हजार मुख और दो हजार भुजाएँ थी। अद्भुत रामायण के अनुसार इसे जानकी जी ने मारा था।

महारावल—मन्त्रा पुं० [सं० महा + हिं० रावल] जैसेलमेर, हूंगरपुर आदि राज्यों के राजाओं की उपाधि।

महाराष्ट्र—मन्त्रा पुं० [सं०] १. दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध राज्य।

विशेष—यह राज्य अरब सागर के तट पर, गुजरात के दक्षिण, कर्णाट के उत्तर और तेलंग प्रदेश के पश्चिम में है। काकण

प्रदेश इमी का दक्षिणी भाग है। बहुत प्राचीन काल में इस प्रदेश का उत्तरी भाग दडक वन कहलाता था। यहाँ सात-वाहन, चालुक्य, कलचुरी और यादव आदि वंशों का राज्य बहुत दिना तक था। मुसलमानों के राजत्व काल में यहाँ बहमनी, निजामशाही और कुतुबशाही आदि वंशों का राज्य था। पोछे मुसलिख वीर महाराज शिवाजी ने इस देश में अपना साम्राज्य स्थापित किया था। यह प्रदेश पहले आधुनिक बर्बई प्रांत के लगभग रहा है और यहाँ के निवासी भी महाराष्ट्र कहलाते हैं।

२ इस राज्य के निवासी, विशेषतः ब्राह्मण निवासी। ३ बहुत बड़ा राष्ट्र। जैम, अमेरिकन महाराष्ट्र।

महाराष्ट्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार की प्राकृत भाषा जो प्राचीन काल में महाराष्ट्र देश में बोली जाती थी। उ०—वही अत को महाराष्ट्री प्राकृत भी कहलाई।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३७५। २ महाराष्ट्र की आधुनिक देशभाषा। ३ जलपीपल।

महारास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण की वह लीला जो शरत्पूर्णिमा के दिन गोपियों के साथ रास नृत्य के रूप में हुई थी।

महारुद्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव।

महारूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिव। २ मर्ज रम। राल (को०)।

महारूपक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नाटक।

महारुह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगों की एक जाति।

महारुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महावृक्ष] १ शूहर। सेंहुड। स्तुही। २. एक जगली वृक्ष जो बहुत सुंदर होता है।

विशेष—इस वृक्ष की लकड़ी से आरायशी सामान बनता है। इसकी छाल में सुगंध होती है। मद्रास और मध्यप्रदेश में यह अधिकता से पाया जाता है।

महारेता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महारेतम्] शिव (को०)।

महारोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बहुत बड़ा रोग। जैसे, पागलपन, कोढ़, तपेदिक, दमा, भगदर आदि।

विशेष—उन्माद, राजयक्ष्मा, श्वासरोग, त्वक्दोष अर्थात् कुष्ठ मधुमेह, अशमरी, उदररोग (संभवतः मग्नहृषी) और भगदर, आयुर्वेद में उक्त आठ रोग महारोग कहे गए हैं। कहते हैं, इस प्रकार के रोग पूर्वजन्म के पापों के परिणामस्वरूप होते हैं। वैद्य लोग ऐसे रोगों की चिकित्सा करने से पहले रोगी से प्रायश्चित्त आदि कराते हैं।

महारोगी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महारोगिव्] जिसे कोई महारोग हो।

महारौद्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव। २ एक प्रकार का छंद। २२ मात्राओं के छंदों की सञ्ज्ञा।

महारोत्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

महारौरव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणानुसार एक नरक का नाम।

विशेष—कहते हैं, जो लोग देवताओं का घन चुराते या गुरु की पत्नी के साथ गमन करते हैं, वे इस नरक में भेजे जाते हैं। २ एक प्रकार का नाम।

महार्घ—वि० [सं०] १ बहुमूल्य। बड़े मूल्य का। २ जिसका मूल्य ठीक में अधिक हो। महंगा।

महार्घ—सञ्ज्ञा पुं० महासोमलता।

महार्घता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] महार्घ होने का भाव। महंगी।

महार्घ्य—वि० [सं०] १ 'महार्घ'।

महार्णव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बहुत बड़ा समुद्र। महामागर। २ शिव, ३ पुराणानुसार एक दैत्य जिसे भगवान् ने कूर्म अवतार में अपने दाहिने पैर में उत्पन्न किया था।

महार्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक दानव का नाम।

महार्थ—वि० [सं०] १ बड़े या गंभीर अर्थवाला। महत्पूर्ण। २ अत्यधिक मपत्तिवाला। प्रचुर वनयुक्त (को०)।

महारत्रक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जगली अदरक। २ मोठ।

महारुद्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सौ करोड़ या दस अरुद्र की मन्था।

महार्ह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सफेद चंदन।

महार्ह—वि० सं० 'महार्घ'। उ०—उसे राज्य में भा महार्ह वन देता आकर कौन अहो।—साकेत, पृ० ३७१।

महाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महल का बहु व०] १ वह स्थान जहाँ बहुत में बड़े मकान हो। मुहल्ला। टाला। पुरा। पाडा। उ०—एह जितके महाल ते मव भानुजा मधि गग के।—मुजान०, पृ० ८६। २ बंदोबस्त के काम के लिये किया हुआ जमीन का एक विभाग, जिसमें कई गाँव होते हैं। ३ भाग। पट्टी। हिस्सा। उ०—कैधों रमाल के ताल फले कुच दोऊ महाल जगीर अतग के।—(शब्द०)

महालक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ लक्ष्मी देवी की एक मूर्ति का नाम। २. पुराणानुसार नारायण की एक शक्ति का नाम। ३ एक वार्षिक वृत्त जिसके प्रत्येक चरण में तीन रण्य होते हैं। जैसे—(क) रात्रि द्यौमी रहै कामनी। पीव की जो मनोगामिनी। भापती वोन वोलै अमी। जानेए सो महालक्ष्मी (ख) राधिका बल्लभै गाइ ले चित्रनी इद्र से पाइ ले।

महालय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कुश्रार का वृष्णपक्ष जिसमें पितरों के लिये तर्पण और श्राद्ध आदि किया जाता है। पितृपक्ष। २. तीर्थ। ३ पुराणानुसार एक तीर्थ का नाम। ४ नारायण, 1जन्म महदादि तत्व का लय होता है। ५ संपूर्ण विश्व का लय। प्रलय।

महालया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अश्विन वृष्ण अमावस्या जिस दिन पितृविसर्जन होता है। पितृपक्ष की आतम तिथि।

महालिङ्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महालिङ्ग] महादेव।

महालील—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महा + लीला] महान् लीला करनेवाले, श्रीकृष्ण। उ०—महालील मायी महा, महापुरुष मतिमान।—घनानंद, पृ० २६८।

महालोक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महा + लोक] १ 'महलोक'।

महालोघ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पठानी लोघ।

महालोभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] क्रोधा।

महालोल

महालोल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कौप्रा ।

महालोह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चुंबक [को०] ।

महावश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक मुप्रमिद्ध बौद्ध ग्रंथ का नाम जो पाली में ५वीं शताब्दी में लिखा गया और जिसमें बौद्धधर्म और सिंहाल का इतिहास है [को०] ।

महावक्षा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महावक्षस्] महादेव ।

महावक्षा^२—वि० विशाल वक्षवाला [को०] ।

महावट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० माह (= माघ) वट (प्रत्य०)] पूस माघ की वर्षा । वह वर्षा जो जाड़े में हो । जाड़े की ऋद्धी । उ०—पैठी हो सरदी रग रग में और वर्षा पिघलता हो पत्थर । ऋद्ध बाँध महावट पडती हो और तिस पर लहरें ले लेकर । मन्नाटा बाव का चलता हो तव देख वहारें जाड़े की ।—नजीर (शब्द०) ।

महावत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महामात्र] हाथी हाँकनेवाला । फीलवान । हाथीवान । उ०—(क) हूँ इत पर मैं महावत लाज के आदू परे जउ पाइन ।—पद्माकर (शब्द०) । (ख) द्वार कुवलया गज ठडियावा । अयुत नाग बल तासे पावा । कहेसि महावत ते गोहराई । प्रविशत ते डारे चपवाई ।—विश्राम (शब्द०) ।

महावतारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महावतारिन्] २५ मात्राओं के छंदों की सज्ञा ।

महावथ^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० महावत] दे० 'महावत' । उ०—मत्त महावथ हृथ्य महँ भल्लारी श्रति डील ।—प० रासो, पृ० ६१ ।

महावध—सञ्ज्ञा पुं० [म०] वज्र ।

महावन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'महावन' [को०] ।

महावर^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महावर्ण ?] लाख से बना हुआ एक प्रकार का लाल रंग जिससे सौभाग्यवती स्त्रियाँ अपने पाँवों को चित्रित कराती हैं । यावक । जावक । उ०—(क) पलन पीक अजन अधर धरे महावर भाल । आज मिले सु भली करी भले बने हौ लाल ।—विहारी (शब्द०) । (ख) आई हौ पायँ दिवाय महावर कुजन ते करि कै सुख सेनी ।—मतिराम (शब्द०) । (ग) काहू दियो लाख रस सोई । जासो तुरत महावर होई ।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०) ।

महावर^(२)—वि० [सं० महावर्ण] दे० 'महावल' । उ०—कुंवरपण प्रथिराज तर्प तेजह सु महावर । मुकल बीजु दिन हुतें कला दिन चढत कलाकर ।—पृ० रा०, ५ । २ ।

महावरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] दूब ।

महावरा^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहावरा] दे० 'मुहावरा' ।

महावराह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भगवान् का वराह अवतार ।

महावरी—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० महावर] महावर की बनी हुई गोली या टिकिया जिससे स्त्रियों के पैर चित्रित किए जाते हैं । उ०—(क) पायँ महावर देन को नाइन वैठी श्राय । फिरि फिरि जानि

महावरी एंडी मीडति जाय ।—विहारी (शब्द०) । (ख) छैल छवीली का छवा लहि महावरी सग । जानि परै नाइन लगै जर्वाहि निचोरन रग ।—रामसहाय (शब्द०) ।

महावरेदार—वि० [हिं० महावरा] दे० 'मुहावरेदार' । उ०—कमिटी ने सिफारिश की कि नवर १ का तरजमा बहुत महावरेदार देशी भाषा में किया जाय ।—सरस्वती (शब्द०) ।

महावरोह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पलाश । २. वरगद (को०) ।

महावल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ माधवी लता । २. बहुत बड़ी लता ।

महावस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मगर वा शिशुमार नामक जलजंतु ।

महावसु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ इन्द्रावरुण का एक नाम । २ रजत । चाँदी (को०) ।

महावाक्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सोह गवद । २ शंकराचार्य जी के मतानुयायियों के मत से 'अहं ब्रह्मास्मि', 'तत्त्वमसि', 'प्रज्ञानं ब्रह्म' और 'अयमात्मा ब्रह्म' इत्यादि उपनिषद् के वाक्य । ३ दान आदि के समय पढा जानेवाला सकल्प ।

महावात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जोर की हवा । आँधी तूफान ।

महावादी—वि० [सं० महावादिन्] शास्त्रार्थ करने में शक्तिशाली [को०] ।

महावामदेव्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम जो शांति कार्यों के समय पढा जाता है ।

महावायु—सञ्ज्ञा पुं० स्त्री० [सं०] तूफान ।

महावारुणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गंगास्नान का एक योग ।

विशेष—यदि चंद्र कृष्ण त्रयोदशी को अतभिषा नक्षत्र हो तो उस दिन वारुणी योग होता है । यदि यह योग शनिवार को पड़े तो महावारुणी कहलाता है । पुराणों के अनुसार इस योग में गंगास्नान का बहुत अधिक फल होता है ।

महावार्ताकिनो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बनभटा । जगली बंगन ।

महावार्तिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कात्यायन के वार्तिक का नाम जो पाणिनि के सूत्रों पर है ।

महावाहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बहुत बड़ी मख्या का नाम [को०] ।

महाचिक्रम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सिंह । २ एक नाग का नाम ।

महाविड—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बनाया हुआ नमक । कृत्रिम नमक [को०] ।

महाविदेहा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] योगशास्त्र के अनुसार मन की एक बहिर्वृत्ति ।

महाविद्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ तत्र में मानी हुई दस देवियाँ जिनके नाम इस प्रकार हैं—(१) काली, (२) तारा, (३) षोडशी, (४) भुवनेश्वरी, (५) भैरवी, (६) छिन्नमस्ता, (७) धूमावती, (८) वगलामुखी, (९) मातंगी और (१०) कमलात्मिका । इन्हें सिद्ध विद्या भी कहते हैं । कुछ तांत्रिकों का यह मत है कि इन्हीं दस महाविद्याओं ने दस अवतार धारण किए थे । २ दुर्गा देवी । ३ गंगा ।

महाविद्यालय—सञ्ज्ञा पुं० [म० महा + विद्यालय] बड़ा विद्यालय । उच्च शिक्षा की मस्था । कालेज ।

महाविद्येश्वरी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा की एक मूर्ति का नाम ।

महाविभूत—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक बहुत बड़ी मरुया का नाम ।

महाविभूति—सज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

महाविरति—सज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०] ।

महाविल—सज्ञा पुं० [सं०] १ आकाश । २ अत करण ।

महाविष—सज्ञा पुं० [सं०] १ वह साँप जिसके काटते ही तुरत मृत्यु हो जाय । २ दो मुँहवाला साँप [को०] ।

महाविषुव—सज्ञा पुं० [सं०] वह समय जब सूर्य मीन से मेष राशि में जाता है और दिन रात दोनों समान होते हैं । इस दिन की गणना पुराणतिथियों में होती है । मेष मकराति । चैत की मकराति ।

महावीचि—सज्ञा पुं० [सं०] मनु के अनुसार एक नरक का नाम ।

महावीत—सज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार पुष्कर द्वीप के एक पर्वत का नाम ।

महावीर^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ हनुमान जी । २ गौतम बुद्ध का एक नाम । ३ गरुड । ४ देवता । ५ सिंह । ६ मनु के पुत्र मरवानल का एक नाम । ७ वज्र । ८ सफेद घोडा । ९ राज पत्नी । १० कोयल [को०] । ११ विष्णु का एक नाम [को०] । १२ यज्ञ की अग्नि [को०] । १३ यज्ञ में प्रयुक्त पाश [को०] । १४ जैनियों के चौबीसवें और अंतिम जिन या तीर्थंकर को महापराक्रमी राजा सिद्धार्थ के वीर्य में उनकी रानी त्रिशला के गर्भ से उत्पन्न हुए थे ।

विशेष—कहते हैं, त्रिशला ने एक दिन मोलह शुभ स्वप्न देखे थे जिनके प्रभाव में वह गर्भवती हो गई थी । जब इनका जन्म हुआ तब इद्र इन्हें ऐरावत पर बैठाकर मद्राचल पर ले गए थे और वहाँ इनका पूजन करके फिर इन्हें माता की गोद में पहुँचा गए थे । इनका नाम वर्षमान पडा था । ये त्रुहट ही शुद्ध और शांत प्रकृति के थे और भोगविलास को और इनही प्रवृत्ति नहीं होती थी । कहते हैं, तीस वर्ष की अवस्था में कोई बुद्ध या अर्हत् आकर इनमें ज्ञान का मन्वार कर गए थे । मार्गशीर्ष कृष्ण दशमी को ये अपना राज्य और सारा वैभव छोड़कर वन में चले गए और वारह वर्ष तक इन्होंने वहाँ घोर तपस्या की । इसके उपरांत ये इधर से उबर घूमकर उपदश देने लगे । एक बार इन्होंने भोजन त्याग दिया, जिसे वंशाख कृष्ण दशमी को इन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ था । इन्होंने मौन धारण करके राजगृह में रहना आरंभ किया । वहाँ देवताओं ने इनके लिये एक रत्नजटित प्रामाद बनाया था । वहाँ इद्र के भेजे हुए वदुत ने देवता आदि इनके पास भाए, जिन्हें इन्होंने अनेक उपदेश दिए और जैन धर्म का प्रचार आरंभ किया । कहते हैं कि इनके जीवनकाल में ही सारे मगध देश में जैन धर्म का प्रचार हो गया था । जैनियों के अनुसार ईसा से ५२७ वर्ष पूर्व महावीर ने निर्वाण प्राप्त किया था, और तभी से 'वीर मवत्' चला है ।

महावीर^२—वि० बहुत बड़ा वीर । बहुत बड़ा बहादुर ।

महावीरा—सज्ञा स्त्री० [सं०] क्षीरकाकोली ।

महावीर्य^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ अह्मा । २ एक मुद्र का नाम । ३ जैनो के एक अर्हत् का नाम । ४ ताम्र शोच्य मन्वतर के एक इद्र का नाम । ५ वराहीकर ।

महावीर्य^२—वि० अत्यंत वीर्यवान् [को०] ।

महावीर्या—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ सूर्य की पत्नी सज्ञा का एक नाम । २ वनकपास । ३ महाशतावरी ।

महावृत्त—सज्ञा पुं० [सं०] १ मेहुट । शूहर । २ बट्ट बटा पेट । ३ करज । ४ ताट । ५ महापीनु ।

महावृष—सज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणानुसार एक तीर्थ जो मुख्य पर्वत के पास है । २ बड़ा गाँव [को०] ।

महावेग^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ शिव । २ गण्ड । ३ तीव्र गति । तेज चान [को०] । ४ कर्प । मर्कट [को०] ।

महावेग^२—वि० अत्यंत वेगवान् [को०] ।

महावेगा—सज्ञा स्त्री० [सं०] स्कन्द की अनुचरी एक मातृका का नाम ।

महावेल—वि० [सं०] तरंगयुक्त । लहरीला [को०] ।

महाव्याधि—सज्ञा स्त्री० [सं०] २० 'महागेग' ।

महाव्याहृति—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ पुराणानुसार ऊपरवाले नात लोको में न पहले तीन लोकों का समूह । भू भुव और स्व ये तीन लोक । २ मत महाव्याहृतियों में प्रारंभ की तीन व्याहृतियाँ जिनका रूप प्रणव में युक्त कहा गया है ।—ॐ भू, ॐ भुव, ॐ स्व ।

महाव्यूह—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का समाधि ।

महाव्रण—सज्ञा पुं० [सं०] २० 'दुष्टवण' ।

महाव्रत^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ वेद की एक ऋचा का नाम । २ वह व्रत जो वारह वर्षों तक चलता रहे । ३ आश्विन की दुर्गापूजा । ४ माघ मास में शरणादय के समय स्नान करना [को०] । ५ बहुत कठिन व्रत ।

महाव्रत^२—वि० महाव्रत करने या देनेवाला [को०] ।

महाव्रती—सज्ञा पुं० [सं० महाव्रतेन्] १ वह जिनमें कोई महाव्रत धारण किया है । २ शिव ।

महाशस्त्र—सज्ञा पुं० [सं० महाशस्त्र] १ तनाट । २ कनपटी की हड्डी । ३ मनुष्य की ठठरी । ४ नी निधियों में से एक । ५ बड़ा शर । ६ एक प्रकार का सर्प । ७ एक बहुत बड़ी मरुया का नाम । ८ एक प्रकार का वृक्ष ।

महाशक्ति^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ कार्तिकेय । २ शिव । ३ पुराणानुसार कृष्ण के एक पुत्र का नाम ।

महाशक्ति^२—सज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा । उ०—उतरी पा महाशक्ति रावण से ग्रामशरण ।—अपरा, पृ० ४६ ।

महाशठ—सज्ञा पुं० [सं०] १ पीला धतूरा । राजधतूरा । २ अत्यंत शठ, मूर्ख वा छली व्यक्ति ।

महाशता—सज्ञा स्त्री० [सं०] महाशतावरी । बड़ी शतावरी ।

महाशतावरी—सज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी शतावरी । विशेष दे० 'सतावर' ।

- महाशन—वि० [म०] अतिभोजी । पेहू । बहुत खानेवाला [को०] ।
 महाशय^१—मज्ञा पुं० [सं०] १, उच्च आणयवाला व्यक्ति । महानुभाव ।
 महात्मा । मजन । २ समुद्र ।
 महाशय^२—वि० उच्चात्मा । २ उदारमत्ता ।
 महाशय्या—मज्ञा स्त्री० [म०] राजाश्रो की शय्या या सिंहासन ।
 महाशर—मज्ञा पुं० [म०] दे० 'रामशर' ।
 महाशक्त—मज्ञा पुं० [सं०] भिगा मछली ।
 महाशाखा—मज्ञा स्त्री० [सं०] नागवला । गंगेरन ।
 महाशाल—मज्ञा पुं० [मं०] वह व्यक्ति जिसका निवास या गृह
 विशाल हो । महान् गृहस्थ [को०] ।
 महाशालि—मज्ञा पुं० [म०] एक प्रकार का लवा और खूणवृद्धार
 चावल [को०] ।
 महाशासन^१—मज्ञा पुं० [म०] १ राजा की आज्ञा । २ राजा का
 वह मंत्री जो उसकी आज्ञाश्रो या दानपत्रो आदि का प्रचार
 करता हो । ३ उपनिषदों द्वारा व्याख्यात ब्रह्मज्ञान या परमार्थ
 बोध [को०] ।
 महाशासन—वि० महान् या श्रेष्ठ शासनवाला [को०] ।
 महाशिरा—मज्ञा पुं० [सं० महाशिरस्] एक प्रकार का साँप [को०] ।
 महाशिव—मज्ञा पुं० [सं०] महादेव ।
 महाशिवरात्रि—मज्ञा स्त्री० [म०] शिवचतुर्दशी । शिवरात्रि [को०] ।
 महाशीतवती—मज्ञा स्त्री० [म०] बौद्धों की पाँच महादेवियों में से
 एक देवी का नाम ।
 महाशीता—मज्ञा स्त्री० [सं०] शतमूली ।
 महाशीप—मज्ञा पुं० [मं०] शिव के एक अनुचर का नाम ।
 महाशील—मज्ञा पुं० [मं०] जनसेजय के एक पुत्र का नाम ।
 महाशुडी—मज्ञा स्त्री० [सं० महाशुण्डी] हाथीमूँड नामक क्षुप ।
 महाशुक्ति—मज्ञा स्त्री० [सं०] सीप । मोती की सीप ।
 महाशुक्र—मज्ञा पुं० [सं०] जैनों के अनुसार दसवें स्वर्ग का नाम ।
 महाशुक्ला—मज्ञा स्त्री० [म०] मरस्वती ।
 महाशुभ्र—मज्ञा पुं० [सं०] चाँदी ।
 महाशूद्र—मज्ञा पुं० [म०] १ ऊँचे पदवाला शूद्र । उच्च पदस्थ
 शूद्र । २ खाला । गोप [को०] ।
 महाशुद्धी—मज्ञा स्त्री० [सं०] गोप की स्त्री । खालिन [को०] ।
 महाशून्य—मज्ञा पुं० [सं०] आकाश ।
 महाशोण—मज्ञा पुं० [सं०] सोन नदी ।
 महाशमशान—मज्ञा पुं० [सं०] काशी नगरी का एक नाम ।
 महाश्मा—मज्ञा पुं० [मं० महाश्मन्] कीमती पत्थर [को०] ।
 महाश्रमण—मज्ञा पुं० [सं०] भगवान् बुद्ध का एक नाम ।
 महाश्रावणिका—मज्ञा स्त्री० [म०] गोरखमुंडी ।
 महाश्री—मज्ञा स्त्री० [मं०] बुद्ध की एक पत्नी का नाम ।

- महाश्रेष्ठी—मज्ञा पुं० [सं० महाश्रेष्ठिन] बहुत बड़ा मठ । उ०—
 विशारदा का विनाह पुण्यमयन से हुआ था जो मार्केत के
 महाश्रेष्ठी मिगार का पुत्र था ।—हिंदु० सभ्यता, पृ० २४४ ।
 महाश्लक्षणा—मज्ञा स्त्री० [सं०] मिकना । प्रालुसा । रन [को०] ।
 महाशवास—मज्ञा पुं० [म०] १ एक प्रकार का रोग । २ वह
 अतिम मर्म जो मरने के समय चरती है । उ० मद्राष्वाम
 जिम पुरुष को होय वह तत्काल मरण का प्राप्त होय ।—
 माधव०, पृ० ६५ ।
 महाश्वेता—मज्ञा स्त्री० [मं०] १ मरस्वती । २ दुर्गा । ३ मफेद
 अपराजिता । ४ चीनी । शर्करा ।
 महापट्टो—मज्ञा स्त्री० [सं०] १ दुर्गा । २ मरस्वती [को०] ।
 महाष्टमी—मज्ञा स्त्री० [म०] आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी ।
 महासक्रांति—मज्ञा स्त्री० [मं० महासङ्क्रान्ति] १ 'सक्रांति' ।
 महामख(पु)—मज्ञा पुं० [मं० महाशद्ध] दे० 'महाशग्' । उ०—
 तन्मप शिवदेव महामख धानार्नी । दोऊ मिले अवेव माहिव सेवक एक
 से ।—अर्व०, पृ० २२ ।
 महासद्विविग्रह—मज्ञा पुं० [मं० महासन्धिवाग्रह] परराष्ट्रमन्त्री का
 कार्यालय जहाँ में सवि और सवर्ष भी ममन्या हल की
 जाती है ।
 महासंस्कार—मज्ञा पुं० [सं०] अत्येष्टि । दाह संस्कार । उ०—
 आज नरपति का महामस्कार । उमडने दो लोक पारावार ।—
 मार्केत, पृ० १६५ ।
 महासस्कारी—मज्ञा पुं० [सं० महासस्कारिन्] एक प्रकार का छद्म ।
 १७ मात्राओं के छंदों की मज्ञा ।
 महासती—मज्ञा स्त्री० [सं०] अत्रत तत्रतना एव मच्चरित महिला ।
 परम साव्वी स्त्री [को०] ।
 महासत्ता—मज्ञा स्त्री० [सं०] जैनों के अनुसार वह विश्वव्यापिनी
 सत्ता जिमसे विश्व के ममस्त जीवों और पदार्थों की सत्ता
 अतर्भुक्त है । सवने बडी और प्रवान सत्ता जो सब प्रकार की
 सत्ताओं का मून आधार है ।
 महासत्ति(पु)र्गा—मज्ञा स्त्री० [मं० महासत्ते] एक जतु जो शृगाता में
 भिन्न होता है । उ०—डाँवी महामत्ति फेरुइ ।—वी०
 रासो, पृ० ६१ ।
 महासत्त्व—मज्ञा पुं० [मं०] यमराज ।
 महासत्य^१—मज्ञा पुं० [मं० महामत्तर] १ कुवेर । २ शास्य मुनि ।
 ३ एक त्रौधिमत्त्व का नाम । ४ विशानकाय पशु । बडे शरीर
 का पशु [को०] ।
 महासत्य^२—वि० १ योग्य । महान् । २ अन्यचित्त शक्तिपानी । ३
 न्यायपूर्ण । न्यायाचित्त [को०] ।
 महासन—मज्ञा पुं० [मं०] मिहामन ।
 महासभा—मज्ञा पुं० [मं० महासभा] १ बहुत बडी सभा ।
 विशाल समारोह । २ बहुत बडा मण्डन । अज्ञान यम । ३

लोक निर्वाचित प्रतिनिधियों की सभा। उ०—इंग्लैंड आदि देशों की पार्लियामेंट आदि महासभाओं में भी कई दल रहते हैं।—प्रेमचन०, भा० २, पृ० २६१।

महासमगा—सज्ञा स्त्री० [म० महासमज्ञा] कंगही या कवी नामक पौधा।

महासमर—सज्ञा पुं० [सं०] महान् युद्ध। विश्वयुद्ध।

महासमुद्र—सज्ञा पुं० [सं०] बहूत बड़ा समुद्र। महासागर।

महासर्ग—सज्ञा पुं० [सं०] जगत् की रचना जो महाप्रलय के उपरांत फिर से होती है।

महासर्ज—सज्ञा पुं० [सं०] कटहल का वृक्ष।

महासह—सज्ञा पुं० [सं०] कुञ्जक वृक्ष। कुरकट। वारणपुष्प [को०]।

महासहा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मापपर्याय। २ अन्धान वा कुञ्जक वृक्ष [को०]।

महासांतपन—सज्ञा पुं० [सं० महासान्त्वितपन] एक व्रत जिनमें पाँच दिन तक क्रम से पचगव्य, छठे दिन कुशजल पीकर सातवें दिन उपवास किया जाता है।

महासाधिविग्रहिक—सज्ञा पुं० [सं० महासान्त्विविग्रहिक] प्राचीन काल का वह राजकीय अधिकारी या मंत्री जो अन्य देश से सधि और भगडे की समस्या सुलझाता था। उ०—महामाधिविग्रहिक। साधु। यह वशपरपरागत तुम्हारी ही विद्या है।—स्कन्द०, पृ० १३।

महासागर—सज्ञा पुं० [सं०] विशाल समुद्र। जैसे, भारतीय महासागर, प्रशांत महासागर, आदि।

महासार—सज्ञा पुं० [सं०] खदिर वृक्ष का एक भेद [को०]।

महासारथि—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'अरुण' [को०]।

महासाहस—सज्ञा पुं० [सं०] अत्यधिक उग्रता, बलात्कारिता, घृष्टता और निर्लज्जतापूर्णा काम [को०]।

महासाहसिक—सज्ञा पुं० [सं०] १. चोर। डाकू। २. वह व्यक्ति जो अत्यंत साहसी हो।

महासिंह—सज्ञा पुं० [सं०] १. दुर्गादेवी का वाहन सिंह। २. शरभ [को०]।

महासि—सज्ञा स्त्री० [सं०] बड़ी तलवार [को०]।

महासिद्धि—सज्ञा स्त्री० [सं०] महान् सिद्धि। एक तांत्रिक शक्ति। इनकी सख्या ८ कही गई है।

महासिद्धि^७—सज्ञा स्त्री० [सं० महासिद्धि] दे० 'महामिद्धि'। उ०—बगर बोहारति अष्ट महासिद्धि। द्वारे सधिया पूरति नौ निवि।—नन्द० ग्र०, पृ० ३३१।

महासिल—सज्ञा पुं० [सं०] १. आय। आमदनी। २. राजस्व। मालगुजारी। भूमिकर। लगान।

महासिल^७—वि० लगान या कर आदि वसूल करनेवाला। उ०—काल महासिल साहु का मिर पर पहुँचा आय।—पलटू०, भा० १, पृ० २४।

महासीर—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली जो पहाड़ी नदियों में पाई जाती है और जिसका मांस बहुत अच्छा माना जाता है।

महासुख—सज्ञा पुं० [सं०] १. शृंगार। मजाबट। २. बुद्धदेव का एक नाम। ३. मैथुन। सभोग [को०]। ४. वज्रयानी बौद्धों के अनुसार निर्वाण के तीन अवयवों में से एक। उ०—निर्वाण के तीन अवयव ठहराए गए, शून्य, विज्ञान और महासुख।—इतिहास, पृ० ११।

विशेष—प्रज्ञा और उपाय के योग से मुग्ध गृहवास का यह सुख निर्वाण के मुख के समान माना जाता है। इसमें सावक हा प्रकार विलीन हो जाता है जिन प्रकार नमक पानी में।

महासुन्न^७—सज्ञा पुं० [सं० महाशून्य] दे० 'महाशून्य'। उ०—पारब्रह्म महासुन्न मंभारा।—कवीर श०, भा० ३, पृ० ७१।

महासुर—सज्ञा पुं० [सं०] एक दानव का नाम।

महासुरी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

महासूक्ष्मा—सज्ञा स्त्री० [सं०] रेत। बालू [को०]।

महासूचि—सज्ञा स्त्री० [सं०] युद्ध के समय की एक प्रकार की व्यूहरचना।

महासूत—सज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जो युद्धक्षेत्र में बजाया जाता था।

महासेन—सज्ञा पुं० [सं०] १. कार्तिकेय। स्वामितार्तिक। २. शिव। ३. बहुत बड़ा या मंत्रसे प्रधान सेनापति।

महासौपिर—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का राग जिसमें दाँतों के मसूदे सड़ जाते हैं और मुँह में से बहुत दुर्गंध आती है।

विशेष—कहते हैं, जब यह रोग होता है, तब आदमी गत दिनों के अदर मर जाता है।

महास्कंध—सज्ञा पुं० [सं० महास्कन्ध] ऊँट।

महाकरधा—सज्ञा स्त्री० [सं० महाकरुन्धा] जामुन या वृक्ष।

महास्थली—सज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी [को०]।

महास्नायु—सज्ञा पुं० [सं०] वह प्रधान नाडी जिसमें से रक्त बहता है। इसे कडरा या अस्थिवदन नाडी कहते हैं।

महास्पद—वि० [सं०] १. ऊँच पद पर आसीन। उच्चपदस्व। २. शक्तिशाली। बलवान [को०]।

महास्मृति—सज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

महास्वन—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का ढोल जिसमें बहुत जोरों की आवाज निकलती हो [को०]।

महाहस—सज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का हस। २. निप्पु।

महाहनु—सज्ञा पुं० [सं०] १. शिव। २. तच्छक की जाति का एक प्रकार का साँप। ३. एक दानव का नाम।

महाहविस्—सज्ञा पुं० [सं० महाहविष्] घृत। घी [को०]।

महाहस्त—सज्ञा पुं० [सं०] शिव।

महाहास—सज्ञा पुं० [सं०] जोर से ठाकर हँसना। प्रहृहास।

महाहि—सज्ञा स्त्री० [सं०] वायुकि नाग।

महाहिक्का—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का हिक्की का रोग जिसमें हिक्की आने के समय सारा शरीर काँप उठता है और

मर्मस्थान मे वेदना हाती है। उ०—जा हिचकी मर्मस्थान मे पीटा करती हुई और मर्ममात्र की कंवाती हुई मर्मकाल प्रवृत्त होय उमका महाहिमका कहत है।—भाव०, पृ० ६३।

महाहिमवान्—सजा पु० [सं० महाहिमवत्] जना के अनुसार दूसरा पर्वत जो हैमवत और हरि नाम के दो सटा मे विभक्त है।

महाह—सजा पु० [सं०] प्रपगह। दिन का तीगरा पहर [ने०]।

महाहु०—[सं० महाह्वय] महत्वपूर्ण। महान्। मूल्यावान्। उ०—वै रत्न महाह्।—प्राण०, पृ० १७।

महाहृद्—सजा पु० [सं०] शिव।

महाह्रस्व—सजा पु० [सं०] [स्त्री० महाह्रस्वा] केंचाच। काय।

महि(पु)०—अव्य० [हि०] २० 'मह'।

महि०—मर्म० [हि०] २० 'महि'। उ०—ते राज राज सर्वे मुमति निपि क्रमद गति प्रापयी।—पृ० रा०, २६।११।

महिजक—सजा पु० [सं० महिजक] चूहा।

महिधक—सजा स्त्री० [सं० महिन्धक] १ चूहा। २. नेवला। ३. भार उठान का छीका। मिकट्टर जिसे बहंगों के दोना छोरों मे बांधकर कहार बांध उठाते हैं।

माह—सजा स्त्री० [सं०] १ पृथ्वी। धरती। २ महिमा। ३ महत्ता। ४ महत्त्व।

महिका—सजा स्त्री० [सं०] १. पृथ्वी। धरती। २ हिम। बर्फ।

यौ०—महिकाशु = चंद्रमा। शीताशु।

महिस(पु)०—सजा पु० [सं० महिष] २० 'महिष'। उ०—महाराज दल भेल, पील जायाण, पधारे। महिष पच मंगल सगत पोती सग धार।—रा० ८०, पृ० ३५१।

महिसुरी—सजा स्त्री० [?] अट्टारित मायाश्रा के एक छद का नाम जिनमे चौदह मायाश्रा पर यति होती है।

महित०—सजा पु० [सं०] १. शिव का धनुष। पिनाह। २. पिग्ल। ३. पूजित (कि०)।

महित०—वि० पूजित। भगानित। अट्ट (कि०)।

महितारी०—सजा स्त्री० [हि०] २० 'महतारी'। उ०—कविन महितारी कवत पिता।—प्राण०, पृ० १२४।

महित्व—सजा पु० [सं०] शक्ति। प्रभुत्व। गौरव (कि०)।

महिदास—सजा पु० [सं० महिदास] २० 'महीदास'।

महिदेव—सजा पु० [सं०] ब्राह्मण। उ०—मुदेत महिष महिदेवन्ट दोन्ही।—मानस, १।३१।

महिधर—सजा पु० [सं० महिधर] १ २० 'महिधर'। २. नेप-नाय। उ०—जा गदतीनु महामु महिधर लगन मचराचर मयी।—मानस, २।२६।

महिनु०—वि० [हि०] २० 'महीन'। उ०—बंठि चौदरी जल लहरि ठ महिनु पट धारा।—अक्ष ४०, पृ० १०४।

महिनि०—सजा पु० [सं०] प्रभुत्व। ईश्वर (कि०)।

महिनी०—सजा पु० [सं० माद] मानक नृति। २० 'महीना-२'।

उ०—मो वा म्नेच्छ ने गोपालदान जनार्दन्या। ती दो वा दरोगा म्नेच्छ वो इन तीनों के माहता काट।—रा० ३। नो वावन०, भा० १, पृ० २४२।

महिष—सजा पु० [सं० महिष] राजा। नरेश। उ०—महिष मति जह लंग प्रभुताई।—मान, २।२५३।

महिपाल(पु)०—सजा पु० [सं० महिपाल] २० 'महीपाल'। उ०—तहाँ राम रघुवम मनि मुदाव महा महिपाल।—मानस, १।२२२।

महिफर—सजा पु० [सं० मयुकल] मनु। नरेश।

महिवाल(पु)०—सजा पु० [सं० महिवाल (=पु०)] भाग। योग। उ०—कुज अगारक भोम पुने नाहनाग महिवाल।—अक्ष ४०, पृ० ७२।

महिमड(पु)०—वि० [हि० महि + मड] महिमयुक्त। नासा डड। उ०—पार पार कोऊ न मझी है। मयवता है आऊ, नाग। तर चारन मुनीम महिमड है।—घनानंद, पृ० १८२।

महिम०—सजा पु० [सं० महिमा] महत्त्व। गौरव। उ०—तनाह महिम बरती न जाइ।—पृ० रा०, ७।६१।

महिमा—सजा स्त्री० [सं० महिमन्] महत्त्व। महत्त्व। प्रशंसा। गौरव। उ०—सउही हना एक मरावा अय पुह महिमा का कौन। मयोगा।—करीर मा०, पृ० ६५४। २. पनाक। प्रभाव। उ०—गुन आचरज करइ जान काई। मत पगत नाहना नहि गोंई।—तुलसी (स.२०)। ३. आरामा आदि आठ प्रलय का सिद्धियो या ऐश्वर्यों मे स पांचवीं जिनमे मित्त मयी धनत आपकी बहुत बडा बना लेता है।

यौ०—महिमाधर = महिमावान्। उ०—जागी मरमयत्र महिमाधर फिर देवा।—तुलसी०, पृ० १३। साहनामस्त = २० 'महिमावान्'। महिमामाहत = गौरवयुक्त। महिमामय = २० 'महिमावान्'। महिनामसा = महिनायुक्त।

महिमान(पु)०—सजा पु० [सं० महिमान + ई] २० 'महीमान'। उ०—रपि पच दिन राज चद धावर वहु। तनी। नाजम नाय ममान प्रीति महिमान मु किन्ही।—पृ० रा०, ५८।१५३।

महिमानी(पु)०—सजा स्त्री० [हि० महिमान + ई] २० 'महीमानी'। उ०—महिमानी पठई मुपात सब मथ क हैन।—२० रागी, पृ० ५३।

महिमावान्—सजा पु० [सं० महिमावन्] मार्कंडेय पुराणादुपात एक प्रकार के पितृवण।

महिमावान्—वि० महिमायुक्त। प्रतापी। गौरवयुक्त। ५८।

माहज—सजा पु० [सं०] १. राज का एक प्रयत्न। २. उ०—दवाचाय ने रवा पी। २. शिव, विष्णु महिमावन्त। ३. माहमावन्त स्नान।

महिय(पु)०—सजा पु० [सं० महि] २० 'मही'। उ०—म. ग. २. दत्त नरी त ना नाय मजा गदतान। ३. उ०—म. १२. २६। दिना, पारान विमतीर नाके पर।—पृ० रा०, २। ३।

यौ०—महिपताल = पूजा का स्थान, २ रागी। उ०—म. १२. भूतपात मुन्व भूतल नह बा। ३।—२० रागी, पृ० २२।

महियल(७) — सञ्ज्ञा स्त्री० [म० महियल] दे० 'मही' । उ०—कहि महियल बल किनी, एक वहु हरि धारिय । कहि वामिग बल किनी मु पुनि करि नेजा मारिय ।—मृ० रा०, १ । ७८० ।

महियाँ पु — अग्र्य० [स० मध्य, प्रा० मज्ज (= महँ)] मे । उ०—(क) जेती लाज गापालहि मेगी । तेती नाहि वधू हौं जाकी अवर हरत सबन तन हेरी । पति अति रोप करै मनी महियाँ भीपम वई वेद विधि टरी ।—सूर (शब्द०) । (ख) सर्व मिलि पूजा हरि की बाह्या । जो नहि नेत उठाइ गोवधन को बाचत ब्रज महियाँ । कोमल कर गिरि घरयो घोष पर शरद कमल की छहियाँ । सूरदास प्रभु तुमरे दरश आनद होत ब्रज महियाँ ।—सूर (शब्द०) ।

महियाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हि० महया] ईख के रम का फेन जो उवाल खान पर निकलता है ।

महियाउर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मही (= महा) + चाउर (= चावल)] मठे मे पका हुआ चावल । उ०—माऊ महि महियाउर नावा । भीज बरा नैनू जनु खावा ।—जायमी (शब्द०) ।

महिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मिहिर] १ सूर्य । २ मदार का पीया (को०) ।

महिरावण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महि + रावण] एक राक्षस का नाम । विशेष—कहते हैं, यह रावण का लटका था और पाताल मे रहता था । यह रामचंद्र और लक्ष्मण का लका के शिविर से उठाकर पाताल ले गया था । रामचंद्र और लक्ष्मण को ढूँढते हुए हनुमान जो पाताल गए थे और महिरावण को मारकर राम लक्ष्मण को ले आए थे । यह कथा वाल्मीकि रामायण और पुराणा मे नही पाई जाती ।

महिला(७) —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महिल्या] १ 'महिला' । उ०—(क) जमुन उत्तरि नावट निकट, मिलिय महिल इन रूप ।—पृ० रा०, ६१ । १४४ । (ख) मिलि महिल सगुन भरूप । द्रग अण्प निरखत भूप ।—पृ० रा०, ६१ । १४६ । (ग) वो महिल को वर गेह ।—पृ० रा०, ६१ । १४४ ।

महिला'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ स्त्री । २ फूलप्रियणु की लता । ३. रेणुका नामक गवद्वय । ४ कामुक या मदीमन्त स्त्री (को०) ।

महिला(७) —सञ्ज्ञा पुं० [अ० महल] महल । उच्च स्थान । परम पद । उ०—ती मागी महिला देप महिला नाही लहिला वो महिला ।—सुदर० ग्र०, भा० १, पृ० २३५ ।

महिप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० महिषी] १ भैंसा । २ वह राजा जिमका अभिषेक शास्त्रानुसार किया गया हो । ३ एक राक्षस का नाम जिसे पुराणानुसार दुर्गा देवी ने मारा था । ४ एक वर्णसकर जाति का नाम जो स्मृतियों मे क्षत्रिय पिता और तीवरी माता मे उत्पन्न कही गई है । ५ एक साम का नाम । ६ पुण्ड्रानुमार कुश द्वीप क एक पर्वत का नाम । ७ कुश द्वीप के एक वर्ष का नाम । ८ भागवत के अनुसार अनुहाद के पुत्र का नाम । ९ निरक्त के अनुसार देवगण का एक भेद (को०) । १० मत्स्यपुराणानुसार एक प्रकार की अग्नि (को०) ।

महिपकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महिपकन्द] शुभ्रातु । भैंसाकद ।

महिपक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] एक वगमार जाति का नाम ।

महिषदनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] दुर्गा ।

महिषवज्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यमराज । २ जंत शास्त्रानुसार एक अर्हत का नाम ।

महिपपाल, महिपपालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भैंसा पालनेवाला (को०) ।

महिपमस्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली जो काले रंग की होती है । इसके नेत्र बड़े बड़े होते हैं । यह बल वीर्यकारी और दीपन गुणयुक्त मानी जाती है ।

महिपमदिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा का एक नाम ।

महिपमन्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार जटहन धान ।

महिपवल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छिरेटा ।

महिपवहन, महिपवाहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमराज ।

महिपाक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भैंसा गुग्गुन ।

महिपाक्षक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] गुग्गुल (को०) ।

महिपाईन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] स्कद का एक नाम ।

महिपासुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक अमुर का नाम जो रभ नामक दैत्य का पुत्र था ।

विशेष—कहते हैं, इसकी आकृति भैंसे की थी और इने दुर्गाजी ने मारा था । माकडेय पुराण मे इसकी मविन्तर कथा लिखी है ।

महिपी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ भैंस । २ गनों, विशेषत पटरानी । ३. संरिघ्नी । ४ व्यभिचारिणी स्त्री । ५ पत्नी के व्यभिचार से प्राप्त सपत्ति । महिपिक (को०) । ६ एक प्रकार की चिडिया । ७ एक औषधि का नाम ।

यौ०—महिपीकद । महिपीपाल = भैंस पालनवाला । महिपी-प्रिया । महिपीस्तभ ।

महिपीकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महिपीकन्द] एक प्रकार का कद जिसे भैंसा कद भी कहते हैं । शुभ्रातु ।

महिपीप्रिया—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जूनी नामक घास ।

महिपेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ महिपामुर । उ०—महामोह महिपेश विशाला । राम कथा फालिका कराला ।—सुमली (शब्द०) । २ यमराज । उ०—कह महिपेश वहाँ ले जाओ । चित्रगुपित्री बाहि देवाओ ।—विश्राम (शब्द०) ।

महिपोत्सर्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञ ।

महिष्ठ—वि० [म०] बहुत बड़ा ।

महिसुता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी की पुत्री, माता (को०) ।

महिष्व(७) —सञ्ज्ञा पुं० [म० महिष] दे० 'महिष' ।

महिसुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'महीसुर' । उ०—सुर महिसुर हरिजन अरु गाई । हमरे कुल इनपर न मुराई ।—मानम, १ । १७३ ।

मही'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पृथ्वी । २ मिट्टी । ३ अक्काश-देश । स्थान । ४ नदी । ५ क्षेत्र का आधार । ६ सेना ।

७. मुट। गमूह। ८ एक ति यथा। ९ गाय। १०
दृष्टुम्। इन्द्रत। ११ एत उदया नाम जिसम एक ऋषि
श्रीर एक गुरु याथा होती है। जंग, मदा, तगा, नदा
इत्यादि। १२ नू गवति। उमान जायराइ (ति०)। १३
बहुत बड़ी मना। विज्ञान मना (ति०)।

मही^१—नञ् स्त्री० [सं० मथित, हि० महना] मट्टा। छाद्य। उ०—(क)
तुलसी मुदित दून भयो मानहुं अमिय लार मागत मही।—तुनगा
(शब्द०) (न) छ्राष्टि उनर माण रत्न अमोक्तक यान को
फिरन महा। ऐसी तू र चतुर विवा। पय नजि पयन मही।—
मूर (शब्द०)। (ग) दूय दही मागन मही उन नही प्रज
माक। ऐसी चोरो करवु ह फिरवु भार अर ताक।—
लन्नु (शब्द०)।

महाअल्लु—मञ् स्त्री० [सं० महातल] भूमि। पृथा। उ०—यानु
अहेरी जीअन छोड जान धान मट्टाअल मार।—प्राण०,
पृ० १३८।

महीचित्त—मञ् स्त्री० [सं०] राजा।

महीखडी—मञ् स्त्री० [सं०] गिरनीगरो का एक शीजार जिसकी
घार कुद हाती है और जिसमें लकड़ा का दस्ता लगा रहता
है। इससे वर्तन आदि खुरचकर माफ। का जात है और उनपर
जिला की जाती है।

महीज—सञ् स्त्री० [सं०] १ अदरक। आदी। २ मगल ग्रह। ३
गरकामुर (को०)।

महीजा—सञ् स्त्री० [सं०] महीसुता। माता (को०)।

महीतल—मञ् स्त्री० [सं०] पृथ्वी। गमार।

महीदास—मञ् स्त्री० [सं०] एतत्त्रय ब्राह्मण के रचयिता एत अरुपि का
नाम। यह उत्तरा नामक दानी के पुत्र थे।

महीदुर्ग—मञ् स्त्री० [सं०] मिट्टी का किला (को०)।

महीदेव—सञ् स्त्री० [सं०] ब्राह्मण।

महीधर—मञ् स्त्री० [सं०] १. पर्वत। २. बौद्धों के अनुमान एक
देवपुत्र का नाम। ३. शैवनाम। उ०—धर्म करत अत अर्थ
बडावत। मत्तति हिन रवि रोविर गायन। मत्तति उपजत
ही निजि धानर। माधत तन मन मुक्ति महीधर।—कैचर
(शब्द०)। ४. एक बणिग पुत्र का नाम जिसमें चौदह बार
ध्रम में लघु और गुरु माने है। यथा, मदा कुमग तारये, नही
कुमग मारिय, तगाय चिन सीग मानिये गरो। ५. जगन्म
(को०)। ६. वेदभाष्य के एत रचयिता जिनका भाष्य महीधर
भाष्य नाम का है।

महीधर—मञ् स्त्री० [सं०] १. महीधर। पर्वत। उ०—जम मन पटो
गमुपत महीधर अग अवन के अत म विरदत, वरा प्रसार
भा।—यानु, पृ० १५। २. मिश्रु का नाम (को०)। ३. मही
ती न. या का वाचक शब्द (को०)।

महीधर—मञ् स्त्री० [सं०] १. महीधर। २. एक राजा का नाम।

महीन^१—मञ् स्त्री० [सं० महा-अभि-स्त्री (सं० छीम)] १. शिगरी
मादरि का सेना मूल ही भव हो। 'मही' का उच्चारण।

महीन^२—मञ् स्त्री० [सं० महा-अभि-स्त्री (सं० छीम)] २. शिगरी
मादरि का सेना मूल ही भव हो। 'मही' का उच्चारण।

गुहा^०—महात्म का = वह काव जितार पर मे प्रकृत वाच्यता मार
श्रीग गडने का अर्थशक्तता पटना टा। १. नाम, लज्जारा,
गुनी वम आदि।

३ जो प्रान्त वम या ऊना या तजन टा। १। २। ३। ४। ५। ६। ७। ८। ९। १०।
विशेष—उन अर्थ म यह शब्द प्रायः शब्द मार मार क. १३१ का
आता है।

महीन^३—मञ् स्त्री० [सं०] राजा।

महीना—मञ् स्त्री० [सं० माम या मा, मि. क्रा० मह] १. रात्र
का एक परमाण जो वष र बार, वै अज र परापर जाता है।

विशेष—वह साधारणतया नाम इस का होता है। पर यदि रात्र
महीन इसमें अधिक और घून् भा टले है। साधारण भागन-
वष म कई प्रकार के महीन प्रकार है—दही मर्या प्राण
अधेजी। दही या द्वि महीन चार प्रकार के होते हैं—मौर
माम चाद्र माम, नक्षत्र माम और माना मान (विज्ञान
के अल्प दस्त 'मान')। अधेजी महीना पर प्रकार का चार
भाग है जो शुभ अशुभा के प्रारभ होता है। अणरजा
महीना चार भाग का एक भेद है जिसमें अशान्त म महीना
पही अशुभता किन्तु प्रयेत मान है इसा अशुभता है। जो
काल प्रचलन का चार वर्ष म, उन् मौर वर्ष है अणरर
रतन के अल्प जोश जाता है, उन चार महीना है, मौर
यह महीना एक महीना का भाग है, का उा तीस का
महीना या मन्मथान बत है (" मन्मथान ")। का वष
म प्रात जानने वर्ष पतनाय होता है मौर उा मन्मथ उा म
वास्तु महीन न गार तरह पतन ता है। मन्मथ उा म
प्रति चौब वर्ष चार महीना दिन चार महीना का है पर
छर्या महीना अ महीन मौर उा म मन्मथान का वि
तीस का भाग पती है। अणरर, महीना अ मन्मथ उा म
मा मर्ष म मन्मथ म महीना अ मन्मथ उा म। अणरर
महीनों के नाम का प्रकार —

मन्मथ	द्वि
नक्ष	ती
मिनाम	उं म
मै	ती
मामा	मन्म
मामा	मन्म
मन्मथ	मन्म

श्राश्विन	कुम्हार, आमोज या आसो
कार्तिक	कार्तिक
मार्गशीर्ष	अग्रहन या भंगसर
पौष	पूस
माघ	माघ या माह
फाल्गुन	फाल्गुन

अरवी मन्त्रीनो के नाम इस प्रकार हैं—गुहर्म्म, सफर, रवी उल् श्रव्वल, जमादि उल् अश्रव्वल, रवी उस् सानी, रज्जव, शावान, रमजान, शौवाल, जीफाद, जिलहिज्ज। अंगरेजी महीनो के नाम इस प्रकार हैं—जनवरी, फरवरी, मार्च, अप्रैल, मई, जून, जुलाई, अगस्त, सितवर, अक्टूबर, नवबर, दिसबर।

२ वह धेतन जो महीना भर काम करने के बदले मे काम करनेवाले को मिले। मासिक वेतन। दरमाहा। ३ स्त्रियो का रजोवर्ग या मासिक धर्म।

मुहा०—महीने से होना = स्त्रियो का रजस्वला होना। रजोवर्ग स हाना।

महीनाथ—सञ्ज्ञा पु० [म०] नरेश। राजा [को०]।

महीप—सञ्ज्ञा पु० [म०] राजा। उ०—महा महीप भए पमु आई।
—मानस, १।२८३।

महीपति—सञ्ज्ञा पु० [स०] राजा। उ०—सुनहु महीपति मुकुट मनि तुम्ह सम धन्य न कोउ।—मानस, १।२९१।

महीपाल—सञ्ज्ञा पु० [स०] राजा।

महीपुत्र—सञ्ज्ञा पु० [म०] मंगलग्रह।

महीपुत्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] सीता [को०]।

महीप्रकप—सञ्ज्ञा पु० [स० महीप्रकम्प] भूडोल। भूकप [को०]।

महीप्ररोह—सञ्ज्ञा पु० [स०] वृक्ष।

महीप्राचीर—सञ्ज्ञा पु० [म०] समुद्र।

महीप्रावर—सञ्ज्ञा पु० [स०] समुद्र।

महीभर्ता—सञ्ज्ञा पु० [स० महीभर्तृ] [स्त्री० महभर्त्री] महीप।
राजा। महीपति।

महीभुक्—सञ्ज्ञा पु० [म०] राजा।

महीभुज्—सञ्ज्ञा पु० [स०] राजा।

महीभृत्—सञ्ज्ञा पु० [म०] १ राजा। २ पर्वत।

महीमडल—सञ्ज्ञा पु० [स० महीमण्डल] पृथ्वी। भूमडल।

महीम—सञ्ज्ञा पु० [देश०] एक प्रकार का गन्ना।

विशेष—यह पीलापन लिए हरे रंग का होता है। इसे पूने का पौढा भी कहते हैं।

महीमय—वि० [स०] मृत्तिकानिर्मित। मृत्तिकामय [को०]।

महीमान(५)—सञ्ज्ञा पु० [स० महीमान्] विशाल। दे० 'महीमान्'।
उ०—प्रगटि पुरातन खडना, महीमान मुख मंडना।—दादू०,
पृ० ५४५।

महीमृग—सञ्ज्ञा पु० [स०] एक प्रकार का जंतु।

महीयस्—वि [सं०] [वि० स्त्री० महीयसी] बहुत बडा। महान्।
२ बलवान् (को०)।

महीयान—वि० [म० महीयस् (= महीयान्)] १ अपेक्षाकृत बडा।
बडा। विशाल। २ जक्तियानी। प्रमान। उ०—लोहित
लोचन रावण मद मोचन महीयान।—अपरा, पृ० ३०।

महीर^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मही] १ वह तलछट जो मक्खन तपाने
मे नीचे बँठ जाती है। उ०—ग्रह्य में जगत ग्रह ऐसी विधि
देखियत जंभी विधि देखियत फूनरी महीर में।—सुदर० ग्र०,
भा० २, पृ० ६५०। २ मट्टे मे पकाया हुआ चावन।
मट्टे की बनी रीर।

महीरण—सञ्ज्ञा पु० [स०] पुराणानुसार धर्म के एक पुत्र का नाम।
यह विश्वेदेवा के अतर्भूत हैं।

महीरावण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] अद्भुत रामायण के अनुसार रावण
के एक पुत्र का नाम। विशेष दे० 'महिरावण'।

महीरिपर्य(५)—सञ्ज्ञा पु० [स० महर्षि] महर्षि। महान् ऋषि।
उ०—तिन पुच्छिय बत्त महीरिपर्य।—पृ० १०, ५९।५८।

महीरूह—सञ्ज्ञा पु० [स०] वृक्ष। पेड। उ०—विशीर्ण डालियाँ
महीरूहो की टूटने लगी। शमा की भातरें व टक्करो से फूटने
लगी।—सामवेनी, पृ० ७६।

महीलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] केतुप्रा।

महीला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शरीर। नारी। महिला [को०]।

महीश—सञ्ज्ञा पु० [स०] राजा।

महीस(५)—सञ्ज्ञा पु० [स० महीश] दे० 'महीश'। उ०—जौ जगदीस
तो अति मलो, जौ महीस ती भाग। तुलसी चाहत जनम भरि
रामचरन अनुराग।—तुलसी ग्र०, पृ० ९३।

महीसुत—सञ्ज्ञा पु० [स०] १ मंगल ग्रह। २ नरकामुर (को०)।

महीसुता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सीता [को०]।

महीसुर—सञ्ज्ञा पु० [स०] ब्राह्मण। उ०—तदपि महीसुर साप बत्त
भार सकल अष रूप।—मानस, १।१७६।

महीसूनु—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ मंगलग्रह। २ दे० 'महीसुत'।

महुँ(५)—अव्य० [हि०] दे० 'महै'। उ०—मट महु प्रथम लोक जग
जासू।—मानस, १।१८०।

महु(५)—सञ्ज्ञा पु० [सं० मधु, प्रा० महु] १ दे० 'मधु'। २ मधु का
छत्ता (लात्त०)। उ०—महु ताज चलत मुहाल अन्य तरु साप
लगन कहुँ।—पृ० १०, ७।२३।

महुअर^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मयूक, प्रा० महुअ, हि० महुआ] १ वह
भेड जिमका जल कालापन लिए लाल रंग का होता है। २.
वह रोटी जो महुआ मिलाकर पकाई गई हो।

महुअर^२—सञ्ज्ञा पु० [स० मधुकर, प्रा० महुअर] १ एक प्रकार का
वाजा जिसे तुमडी या तुवी भी कहते ह।

विशेष—यह कडवी पतली तुवी का होता है जिममे दोना और दो
नालियाँ लगी होती हैं। एक धार को नला को मुँह मे लगाकर
और दूसरी और की नली की छद पर उगलियाँ रखकर इसे

वजाते हैं। प्रायः मदारी लोग साँपो को मस्त करने के लिये इसे वजाते हैं।

२. एक प्रकार का इद्रजाल का खेल जो महुअर वजाकर किया जाता है।

विशेष—इसमें दो प्रतिद्वंद्वी खेलाडी होते हैं जिनमें से प्रत्येक महुअर वजाकर दूसरे को मूर्च्छित अथवा चलने फिरने में अममर्थ करने का प्रयत्न करता है।

महुअर (५)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मधुकर] [स्त्री० महुअरि, महुअरी] अमर। दे० 'मधुकर'। उ०—मअरदपाण विमुद्ध महुअर सद् मानस मोहिया।—कीर्ति०, पृ० २६।

महुअरि—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० महुअर] दे० 'महुअर'। उ०—श्रीर खेल खेलत छवि पावत। महुअरि वेनु वजावत गावत।—नद० ग्र०, पृ० २५६।

महुअरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० महुअ] वह रोटी जो आटे में महुअ्रा मिलाकर बनाई जाती है।

महुअ्रा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मधु०, प्रा० महुअ] एक प्रकार का वृक्ष जो भारतवर्ष के सभी भागों में होता है और पहाड़ों पर तीन हजार फुट की ऊँचाई तक पाया जाता है।

विशेष—इसकी पत्तियाँ पाँच सात अंगुल चौड़ी, दस बारह अंगुल लंबी और दोनों ओर नुकीली होती हैं। पत्तियों का ऊपरी भाग हलके रंग का और पीठ भूरे रंग की होती है। हिमालय की तराई तथा पजाब के अतिरिक्त सारे उत्तरीय भारत तथा दक्षिण में इसके जंगल पाए जाते हैं जिनमें यह स्वच्छद रूप से उगता है। पर पजाब में यह सिवाय बागों के, जहाँ लोग इसे लगाते हैं, और कहीं नहीं पाया जाता। इसका पेड़ ऊँचा और छतनार होता है और डालियाँ चारों ओर फैलती हैं। यह पेड़ तीस चालीस हाथ ऊँचा होता है और सब प्रकार की भूमि पर होता है। इसके फूल, फल, बीज, लकड़ी सभी चीजें काम में आती हैं। इसका पेड़ बीस पचास वर्ष में फूलने और फलने लगना और सैंकड़ों वर्ष तक फूलता फलता है। इसकी पत्तियाँ फूलने के पहले फागुन चैत में झड़ जाती हैं। पत्तियों के झड़ने पर इसकी डालियों के सिरो पर कलियों के गुच्छे निकलने लगते हैं जो कूँची के आकार के होते हैं। इसे महुए का कुचियाना कहते हैं। कलियाँ बढ़ती जाती हैं और उनके खिलने पर कोश के आकार का सफेद फूल निकलता है जो गुदारा और दोनों ओर खुला हुआ होता है और जिसके भीतर जीरे होते हैं। यही फूल खाने के काम में आता है और महुअ्रा कहलाता है। महुए का फूल बीस बाइस दिन तक लगातार टपकता है। महुए के फूल में चीनी का प्रायः आधा अंश होता है, इसी से पणु, पच्ची और मनुष्य सब इसे चाव से खाते हैं। इसके रस में विशेषता यह होती है कि उसमें रोटियाँ पूरी की भाँति पकाई जा सकती हैं। इसका प्रयोग हरे और सूखे दोनों रूपों में होता है। हरे महुए के फूल को कुचलकर रस निकालकर पूरियाँ पकाई जाती हैं और पीसकर उसे आटे में मिलाकर रोटियाँ बनाते हैं जिन्हें 'महुअरी' कहते हैं। सुखे महुए को

भूनकर उसमें पियार, पोस्ते के दाने आदि मिलाकर कूटते हैं। इस रूप में इसे लाटा कहते हैं। इसे भिगोकर और पीसकर आटे में मिलाकर 'महुअरी' बनाई जाती है। हरे और सूखे महुए लोग भूनकर भी खाते हैं। गरीबों के लिये यह बड़ा ही उपयोगी होता है। यह गौअ्रो, भैंसों को भी खिलाया जाता है जिससे वे मॉटी होती है और उनका दूध बढ़ता है। इसमें शराब भी खींची जाती है। महुए की शराब को संस्कृत में 'माध्वी' और आजकल के गँवार 'ठर्रा' कहते हैं। महुए का फूल बहुत दिनों तक रहता है और बिगड़ता नहीं। इसका फल परवल के आकार का होता है और कलेंदी कहलाता है। इसे छील उवालकर और बीज निकालकर तरकारी भी बनाई जाता है। इसके बीच में एक बीज होता है जिससे तेल निकलता है। वैद्यक में महुए के फूल को मधुर, शीतल, धातु-वर्धक तथा दाह, पित्त और वात का नाशक, हृदय को हितकर और भारी लिखा है। इसके फल को शीतल, शुक्रजनक, वातु और बलवर्धक, वात, पित्त, तृषा, दाह, श्वास, क्षयी आदि को दूर करनेवाला माना है। छाल रक्तपित्तनाशक और ब्रणशोधक मानी जाती है। इसके तेल को कफ, पित्त और दाहनाशक और सार को भूत-वाया-निवारक लिखा है।

पर्याय—मधूक। महुअ्रील। मधुखव। मधुपुप। रोअ्रपुप। माधव। वानप्रस्थ। मध्वग। तीक्ष्णसार। महाद्रुम।

महुअ्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० महुए की बनी शराब। उ०—शोर, हँसी, हुल्लड, हूडदग, घमक रहा थागडाग मूदग। मार पीट बकवास, भडप में, रंग दिखाती महुअ्रा भग। यह चमार चौदस का ढग। ग्राम्या, पृ० ४६।

महुअ्रा दही—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० महना + दही] वह दही जिसमें से मयकर मक्खन निकाल लिया गया हो। मखनिया दही।

महुअरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० महुअ्रा + वारी] महुए का जंगल।

महुकम (५)—वि० [अ० मुहकम] दे० 'मुहकम'। उ०—जग मरजादा में रहे ते महुकम लूटे।—सुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ८६६।

महुमास (५)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मधुमास] दे० 'मधुमास'। उ०—तम् महुमासहि पढम पणख पचमी कहिअजे।—कीर्ति०, पृ० १६।

महुर (५)—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुह] दे० 'मोहर-३'। उ०—हरिसिद्ध जाइ कीनी प्रनाम। दुअ सहस महुर दुज दिन्न दाम।—पृ० रा०, ६१। ६८५।

महुरत (५)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुहूर्त] दे० 'मुहूर्त'। उ०—ले मुहुरत चाल्योळ तिणि ठई। चिहुँ पड जोवज्यो भूपति राय।—वी० रासो०, पृ० ७।

महुरि (५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० महुअरि] दे० 'महुअर'। उ०—तिन मैं परम सुहावनी हो महुरि, वामुरी चग।—नद० ग्र०, पृ० ३८३।

महुअ्री—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महोत्सव प्रा० महुस्सव, महुस्सव, महोच्छव, मि० प० महोछा] महोत्सव। उ०—कथा कीरतन मगन महुअ्री करि मतन वीर। कवहु न काज विगरै नर तेरो मत सत कहै कवीर।—कवीर (शब्द०)।

महुल(५) —सञ्ज्ञा पु० [अ० महल] २० 'महल' । उ०—रवि महल मधु-
रिति मधुग्य भ्रम छडि मडि मु पिथ्यय पृ० रा०, ५६ । २२ ।

महुलां'—वि० [हि० महुला] [स्त्री० महु] महुए के रग का ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग प्रायः वैलो, गौआ आदि के मधु मे
होता है ।

महुला^२—सञ्ज्ञा पु० वह वैल जिमके शरीर पर लाल और काले रग के
बाल हो ।

विशेष—ऐसा वैल निकम्मा समझा जाता है ।

महुव(५) —सञ्ज्ञा पु० [सं० मधूक] २० 'महुआ' उ०—कोई अंबिलि
कोई महुक खजूरी—जायमी ग्र० (गुप्त), पृ० २४७ ।

महुवरि(५) —सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महुअर] महुअर नाम का बाजा ।
तूँबडी । उ०—नैं कत तोरघो हार नीमर को । मोती बगरि रहे
सब बन मे गयो कान की तरवो । ए अवनुन जो परत गोकुल
मे तिनक दिए केमरि को । डोट गुवाल दही मे माते ओडन हारि
कमरि को । जाइ पुकारै जसुमति आये कहत जु मोहन लरि को ।
मर श्याम जानी चतुराई जेहि अभ्याम महुवरि को ।—
सूर (शब्द०)

महुवा—सञ्ज्ञा पु० [सं० मधूक] २० 'महुआ' ।

महूख—सञ्ज्ञा पु० [सं० मधूक] १ महुआ । उ०—(क) छिनक छवैले
लाल बहू जी लगी नहि वतराय । ऊख महूख पियूख की ती लगी
भूख न जाय ।—विहारी (शब्द०) । (ख) ऊख रम केतकु
महूख रम मीठी है पियूखहु की पैली धाहे जाको नियराइए ।—
(शब्द०) (ग) कहीं ऊख महूख मे एती मिठास पियूख हूँ ना
हरिऔध हूँ । जितो चास्ता कोमलता नुकुमारता माधुरता
अवरा म अहै ।—हरिऔध (शब्द०) । २ मधु । शब्द । उ०—
महुवा मिश्री दूध घृत अति मिगार रस मिष्ट । ऊख, महूख,
पियूख जाने कंगव माचो इष्ट ।—कंगव ग्र०, भा० १, पृ०
१२५ । ३ जठामधु । मुलेठी ।

महूमर्—सञ्ज्ञा पु० [अ० मुहिम] युद्ध । चढाई । उ०—दिगविजय
काज महूम को, अरि देव देवन धूम को ।—पद्माकर ग्र०,
पृ० ६ ।

महूमहु(५) —अव्य० [सं० मुहु मुहु] बार बार । पुन पुन ।
मुहुमुहु । उ०—प्यारे नटनागर के अतर समै को पाय मोहि
का सतावत है विरहा महु महु ।—नट०, पृ० ६२ ।

महूरत(५) —सञ्ज्ञा पु० [सं० मुहूर्त] १२ क्षण या २ दंड का समय ।
दे० 'मुहूर्त' । उ०—गंगो मिलतां खान मुँ, एक महूरत वेर ।—
रा० ६०, पृ० ३२७ ।

महूरति(५) —सञ्ज्ञा पु० [हि०] २० 'मुहूर्त' । उ०—घरती अवर ना हता
कीन या पडित पाम । कीन महूरत थापिया चाँद सूर आकाम ।—
कवीर (शब्द०) ।

महेद्र—सञ्ज्ञा पु० [सं० महेन्द्र] १ विष्णु । २ इद्र । ३ भारतवर्ष के
एक पर्वत का नाम जो मात कुलपर्वत मे गिना जाता है ।
महेद्राचन ।

यो०—महेन्द्रकदली = एक प्रकार का केला । महेन्द्रनगरी,

महेन्द्रपुरी—अमरावती । इद्र की नगरी । महेन्द्रमन्त्री = वृहस्पति
का नाम । महेन्द्रवाष्णी । महेन्द्रवाह = ऐरावत टापी ।

महेन्द्रनगरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [महेन्द्रनगरी] अमरावती ।

महेन्द्रव(५) —सञ्ज्ञा पु० [सं० महेन्द्र] दे० 'महेद्र' । उ०—तिन व
उपमा कवि चद करी । मनी मेघ महेद्रव वीज भरी ।—पृ०
रा०, २५ । ५३३ ।

महेद्रवारुणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महेन्द्रवारुणी] बडी इद्रायण ।

महेद्राल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महेन्द्र + अलि] गुजरात की महेन्द्र
नामक नदी का नाम ।

महेद्रो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महेन्द्रो] एक नदी का नाम जो गुजरात
वहती है । इसे महेद्राल भी कहते हैं ।

महेर^१—सञ्ज्ञा पु० [हि० मही + एर (प्रत्य०)] २० 'महेरा' ।

महेर^२—सञ्ज्ञा पु० [देश०] भगडा । बखेडा ।

मुहा०—किसी बात या काम मे महेर डालना = (१) अडचन
डालना । बखेडा खडा करना । (२) देर लगाना ।

महेर^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] २० 'महेरी' ।

महेरणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शल्लकी का वृक्ष (को०) ।

महेरा^१—सञ्ज्ञा पु० [हि० मही + एरा (प्रत्य०)] [स्त्री० महेर, महेरी]
महेरी] एक प्रकार का व्यजन जो दही मे चावल पकाकर
बनाया जाता है । महेला । महेरी । महेर ।

विशेष—यह दो प्रकार का होता है—सलोना और मीठा । सलोना
मे हल्दी, राई आदि मसाले डाले जाते हैं और मीठे
गुड पडता है ।

२ एक भोज्य पदार्थ जो खेसारी के आटे को दही मे उवालेने
वनता है । ३ मही । मठा । उ०—जस धिउ होइ जराइ
तस जिउ निरमल होइ । महे महेरा दूरि कर भोग करै सु
मोह ।—जायमी (शब्द०) ।

महेरा^२—सञ्ज्ञा पु० [सं० माप + हि० एरा] २० 'महेला' ।

महेरि—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महेर या मही] महेरा नामक खाद्य पदार्थ
उ०—भोजन भयो भावती मोहन । नातोइ जेई जाहु म
गोहन । सीर खाड खीचरी सवारी । मधुर महेरि सो गोप
प्यारी ।—सूर (शब्द०) ।

महेरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महेरा] उवाली हुई ज्वार जिसे लोण
नमक मिर्च से खाते हैं । २ मठे मे उवाली हुई ज्वार ज
मीठी या नमकीन होती है ।

महेरी^२—वि० [हि० महेर] अडचन डालनेवाला । बखेडा खडा
करनेवाला ।

महेरूह(५) —सञ्ज्ञा पु० [सं० महीरूह] २० 'महीरूह' । उ०—गो
खाइ दूर में परा । मुख आनद महेरूह हरा ।—इद्रा०, पृ० ८५

महेला^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० माष] पशुओं को खिलाने का एक पदार्थ
विशेष—यह चने, उर्द, मोठ आदि को उवालेकर और उसमे गुड
धो आदि डालकर बनाया जाता है । इसके खिलाने से घोड़े
बैल आदि पुष्ट होते हैं और गौएँ भी आदि अधिक दूध देती है

- महेला^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] स्त्री [स्त्री०] ।
 महेलिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] स्त्री 'महेला'^२ [स्त्री०] ।
 महेश—सज्ञा पुं० [सं०] १ महादेव । शिव । २ ईश्वर ।
 महेशबधु—सज्ञा पुं० [सं० महेशबन्धु] बेल । विल्व ।
 महेशसखा—सज्ञा पुं० [सं०] कुवेर का एक नाम [स्त्री०] ।
 महेशान—सज्ञा पुं० [सं० महा + ईशान] [स्त्री० महेशानी] शिव ।
 महेशानी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा ।
 महेशी^(५)—सज्ञा स्त्री० [सं० महेश्वरी] महेश्वरी । पार्वती ।
 महेशुर^(५)—सज्ञा पुं० [सं० महेश्वर] दे० 'महेश्वर' । उ०—मैं तोहि कैसे विमरुँ देवा ब्रह्मा विश्नु महेशुर ईशा ते भी बछै सेवा ।—दरिया० बानी, पृ० ५० ।
 महेश्वर—सज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० महेश्वरी] १ महादेव । शंकर । शिव । २ ईश्वर । परमेश्वर । ३ मफेद मदार । ४ मोना । स्वर्ण ।
 महेश्वरी—सज्ञा स्त्री० [सं०] पार्वती ।
 महेषुवि—वि० [सं०] बडा वनुधारी ।
 महेषवास—वि० [सं०] बडा धनुर्वारी । श्रेष्ठ योद्धा ।
 महेश^(५)—सज्ञा पुं० [सं० महेश] दे० 'महेश' । उ०—गई समीप महेश तब हंसि पूछी कुसलात ।—मानस, १।५५ ।
 महेशिया—सज्ञा पुं० [हि० महेश] एक प्रकार का उत्तम अगहनी धान ।
 महेशी^(५)—सज्ञा स्त्री० [सं० महेश + हि० ई (प्रत्य०)] महेश्वरी । पार्वती । उ०—हिय महेश जो कहै महेशी । कित सिर नारवाह ए परदेसी ।—जायमी (शब्द०) ।
 महेशुर^(५)—सज्ञा पुं० [सं० महेश्वर] महेश्वर । शिव । २ महेश्वर नामक शैव मप्रदाय । उ०—कोई सु महेशुर जगम जती । कोइ एक परखै देवी सती ।—जायमी (शब्द०) ।
 महै^(५)—अव्य० [हि०] दे० 'महै' । उ०—नजर महै सवकी पडे कोऊ देखै नाहि ।—पलटू०, पृ० ४४ ।
 महैकोहिष्ट—सज्ञा पुं० [सं०] वह श्राद्ध जो मरने के बाद पहले पहल अशौच के अंत में मृत प्राणी के उद्देश्य से किया जाता है ।
 महैतरेय—सज्ञा पुं० [सं०] ऐतरेय उपनिषद् ।
 महैरड—सज्ञा पुं० [सं० महा + एरड] एक प्रकार का बडा रेंड जिसके बीज भी बडे होते हैं ।
 महैला—सज्ञा स्त्री० [सं०] बडी इलायची ।
 महौडा[†]—सज्ञा पुं० [हि०] १ दे० 'मोहडा' । उ०—और महौडे आगे अस्ती विस्त अमन्नामन् धरयो है ।—दो सौ वावन०, भा० १, पृ० ३३० । २ मुख । मुहँ । उ०—पाछे वा जुगली करनेवारे को महौटो स्याम होइ गयो ।—दो सौ वावन०, भा० १, पृ० १३१ ।
 महोक—सज्ञा पुं० [सं० मधूक, हि० महोख, महोखा] दे० 'महोखा' ।

- महोक्ष—सज्ञा पुं० [सं०] बडा बेल ।
 महोख—सज्ञा पुं० [सं० मधूक] दे० 'महोखा' । उ०—(क) हारिल शब्द महोख मुहावा । काग कुगाहर करहि सोआवा ।—जायमी (शब्द०) । (ख) कूजत पिक मानो गज माते । ढँक महोख ऊँट विसराते ।—तुलसी (शब्द०) ।
 महोखा—सज्ञा पुं० [सं० मधूक, प्रा० महूक] एक प्रकार का पत्ती जो कौए के बराबर होता है और भारतवर्ष में, विशेषकर उत्तरी भारत में भाडियो और बंसवाडियो में मिलता है । विशेष—इसकी चोच, पैर और पूँछ काली, आँखें लाल और सिर, गला और डंठे खैरे रंग के या लाल होते हैं । यह भाडियो के आस पास रहता है और कीड़े मकोड़े खाता है । यह बहुत तेज दौड सकता है, पर बहुत दूर तक नहीं उड सकता । इसकी बोली बहुत तेज होती है और यह बहुत देर तक लगातार बोलता है ।
 महोगनी—सज्ञा पुं० [सं०] भारत, मध्य अमेरिका और मैक्सिको आदि में होनेवाला एक प्रकार का बहुत बडा पेठ जो मदा हरा रहता है । विशेष—इसकी लकडी कुछ नगई लिए भूर रंग की, बहुत ही दृढ और टिकाऊ होती है और उमपर वाणिज बहुत खिलती है । यह लकडी बहुत महंगी विकती है और प्राय मेजें, कुर्सियाँ और सजावट के दूसरे सामान बनाने के काम में आती है ।
 महोच्छ्व^(५)—सज्ञा पुं० [सं० महोत्सव, प्रा० महोच्छ्व] बडा उत्सव । महोत्सव । उ०—मरना भला विदेम का जहँ अपना नहि कोय । जोव जतु भोजन करे महज महोच्छ्व होय ।—कवीर (शब्द०) ।
 महोच्छो^(५)—सज्ञा पुं० [सं० महोत्सव, प्रा० महोच्छ्व] दे० 'महोत्सव' । उ०—कियो मो महोच्छो, ज्ञाति विप्रन को न्योता दियो ।—भक्तमाल (श्री०), पृ० ३६८ ।
 महोच्छ्व^(५)—सज्ञा पुं० [सं० महोत्सव, प्रा० महोच्छ्व] दे० 'महोत्सव' । उ०—कथा कीरतन मंगल महोच्छ्व, कर माघन को भीर ।—कवीर श०, भा० २, पृ० १०६ ।
 महोच्छा—सज्ञा पुं० [सं० महोत्सव] १ दे० 'महोच्छ्व' । २ † खत्रियो में होनेवाला उनके एक प्रसिद्ध महात्मा (वावा लालू जसराय) का पूजन जो श्रावण मास के वृष्ण पक्ष में होता है ।
 महोटिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] बृहती । कटैया ।
 महोटो—सज्ञा स्त्री० [सं०] बृहती । कटैया ।
 महोती—सज्ञा स्त्री० [हि० महोत्था] महोत्सव का फल । कौंदा । गुलेंदा । कौयेंदा ।
 महोत्का—सज्ञा पुं० [सं०] महोत्का । बडी उल्का ।
 महोत्पल—सज्ञा पुं० [सं०] १ बडे आकार का नील कमल । २. मारम पत्ती [स्त्री०] ।
 महोत्सग—सज्ञा पुं० [सं० महोत्सग] सबसे बडी मत्स्या ।
 महोत्सव—सज्ञा पुं० [सं०] १ बडा उत्सव । २, कामदेव (को०) ।

महोत्साह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो अत्यंत शक्तिशाली वा शक्ति-
मत हो। २ असवाह्य गर्व। अत्यंत गर्व [को०]।

महोदधि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ समुद्र। सागर। २. इंद्र का एक
नाम [को०]।

महोदय^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० महोदया] १ आधिपत्य। २.
स्वर्ग। ३ महाफूल। ४ स्वामी। ५ कान्यकुब्ज देश और
उसकी राजधानी। ६ महापुरुष। महात्मा [को०]। ७ मधु-
मिश्रित खट्टा दूध या दधि [को०]। ८ बढो के लिये एक आदर-
सूचक शब्द। महाशय। महानुभाव।

महोदय^२—वि० १ भाग्यवान्। गौरवशाली। २ अति समृद्ध। संपत्ति-
शाली। ३ महानुभाव [को०]।

महोदया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ नागवला। गंगेरन। गुलशकरी।
२ बढी या समान्य महिलाओं के लिये एक आदरसूचक शब्द।

महोदर^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. एक नाग का नाम। २. एक राक्षस का
नाम। ३ शृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम। ४ शिव। ५ एक
रोग। जलोदर।

महोदर^२—वि० [वि० स्त्री० महोदर] जिसका पेट बढा हो।

महोदरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] भगवती दुर्गा का एक रूप [को०]।

महोदार—वि० [सं०] १ अत्यंत उदार। २. शक्तिशाली। बल-
वान [को०]।

महोद्यम—वि० [सं०] अत्यंत उद्यमशील। महोत्साह [को०]।

महोद्रेक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चार प्रस्थ का एक मान [को०]।

महोन्नत—वि० [सं०] अत्यंत ऊंचा। अत्यंत उन्नत।

महोन्नति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अत्यंत उच्चता वा श्रेष्ठता।

महोना—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुंह] पशुओं के एक रोग का नाम जिसमें
उनके मुंह और पैर पक जाते हैं।

महोपाध्याय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बहुत बढा पठित। विद्वान् अध्या-
पक [को०]।

महोवा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] बुदेलखड का एक प्राचीन नगर। उ०—
चहुआन महोवाँ जुद्ध हुअ गेहाँ गिद्ध उठाह्योँ।—पृ० रा०,
६१।१००७।

विशेष यह हमीरपुर जिले में है और इस नाम की तहसील और
परगने का प्रधान नगर है। यहाँ बहुत काल तक चंदेल राजाओं
की प्रधान राजधानी थी और इस वंश के भूल पुरुष चद्रवर्मा की
छतरी का चिह्न अब तक रामकुंड के किनारे मिलता है। यहाँ
प्राचीन दुर्ग अब तक वर्तमान है। पृथ्वीराज के समय में यहाँ
परमाल नामक चंदेल राजा था जिनके यहाँ आल्हा और उदयन
या ऊदल नामक दो प्रसिद्ध वीर योद्धा थे। कवि जगनिक
के परमाल रासो में चंदेल राजाओं के वंश का और पृथ्वीराज
से परमाल के युद्ध का विस्तृत वर्णन है। लोकप्रचलित आल्ह-
खड में भी परमाल के सामंत आल्हा ऊदल की युद्धगाथा का
वर्णन है। यहाँ का पान बहुत अच्छा होता है।

महोदिया—वि० [हिं० महोवा + द्या (प्रत्य०)] दे० 'महोवी'।

महोचिहा—वि० [हिं० महोवा + द्या (प्रत्य०)] दे० 'महोवी'।

महोवी—वि० [हिं० महोवा + ई (प्रत्य०)] महोवे का।

महोरग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बड़ा साँप। २ तगर का पेड़। ३
जैनियों के एक प्रकार के देवताओं का नाम।

विशेष—यह व्यतर नामक देवगण के अंतर्गत हैं।

महोरस्क^१—वि० [सं०] जिमका वनस्थल विशाल हो।

महोरस्क^२—सञ्ज्ञा पुं० शिव का एक नाम [को०]।

महोर्मि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महोर्मिन्] समुद्र [को०]।

महोला^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहेल] ? हीला। वहाना। उ०—
बाहर क्या देरराइए अतर जपिण राम। कहा महोला खलक
सो परेउ घनी से काम।—कवीर (शब्द०)। २ घोखा।
चकमा। उ०—मती शूर तन ताइया तन मन कीया धान।
दिया महोला पीव को तव मरघट करै वखान।—कवीर
(शब्द०)।

महोला^२—सञ्ज्ञा पुं० [अ० महल्ला, हिं० मुहल्ला] ममुदाय। मय।
समूह। उ०—(क) सेन के प्रमाण कोन कहा साह बोले। सेना-
पति कोन मीर देखन महोले।—रा० ह०, पृ० ११०। (ख)
सब कूँ बुलाय वैया प्रकवर साह बोले। मेरी निर्माखातरी है
तुमारे महोले।—रा० ह० पृ० ११२।

महोविशीय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम।

महौष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ समुद्र की बाढ। तूफान। २ वह
जिसका प्रवाह प्रखर एवं विशाल हो [को०]। ३ एक बहुत
बढी सख्या [को०]।

महौजस्क—वि० [सं०] अति तेजस्वी। बहुत तेजवान्।

महौजा^१—वि० [सं० महौजस्] अति तेजस्वी।

महौजा^२—सञ्ज्ञा पुं० काल के पुत्र एक असुर का नाम।

महौदवाहि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आश्वलायन गृह्यसूत्र के अनुसार एक
आचार्य का नाम।

महौली—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] पापडी नामक वृक्ष जिसकी लकड़ी बहुत
मजबूत होती है और इमारत के काम में आती है। विशेष
दे० 'पापडा'।

महौषध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भूम्याहुत्य। भुजित खर। २ सोठ।
३ लहमुन। ४ वाराहीकद। गेठी। ५ वरमनाम। बछनाग।
६ पीपल ७ अतीस।

महौषधि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दूव। २ लजापू। ३ मजीवनी।
४ कुछ विशिष्ट औषधियों का समूह जिनका चूर्ण महास्नान
या अभिषेकादि के जल में मिलाया जाता है।

महौषधी—सञ्ज्ञा स्त्री [सं०] १ सफेद भटकटया। श्वेत कटकारी।
२ ब्राह्मी। ३ कुटकी। ४ अतिबला। ५ हिलमोचिका।

महात्तर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक जाति का नाम।

महो^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० महना] दे० 'मही'। उ०—कोऊ दहो
कोऊ महो, कोऊ माखन जोरि जोरि भली विधि सो आढो
अच्छती लाई।—नद० ग्र०, पृ० ३६१।

मांगलगीत—सञ्ज्ञा पु० [सं० माङ्गल्यगीत] वह शुभ गीत जो विवाह आदि मंगल के अवसरों पर गाए जाते हैं। मंगलगीत।

मांगलिक^१—वि० [सं० माङ्गलिक] [वि० स्त्री० मांगलिकी] मंगल प्रकट करनेवाला। शुभ।

मांगलिक^२—सञ्ज्ञा पु० नाटक-का वह पात्र जो मंगलपाठ करता है।

मांगलीक—वि० [सं० माङ्गलिक] दे० 'मांगलिक'।

मुद्दा०—मांगलीक उतारना = बाहर से आए हुए व्यक्ति की मंगल भाव से आरती उतारना। उ०—राई अगली राजा पहुँतो जाई। मांगलीक उतारै हो माई।—वी० रासो, पृ० ६६।

मांगल्य^१—वि० [सं० माङ्गल्य] शुभ। मंगलकारक।

मांगल्य^२—सञ्ज्ञा पु० १ मंगल का भाव। मांगलिकता। २ मंगल द्रव्य (को०)।

मांगल्यकाया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माङ्गल्यकाया] १ दूब। २. हलदी। ३ ऋद्धि। ४ गोरोचन। ५ हरेँ।

मांगल्यकुसुमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माङ्गल्यकुसुमा] शखपुष्पी।

मांगल्यप्रवरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माङ्गल्यप्रवरा] वच।

मांगल्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माङ्गल्या] १ गोरोचन। २ शमी का वृक्ष। ३ जीवती।

मांगल्यार्हा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माङ्गल्यार्हा] त्रायमाण लता (को०)।

माजिष्ठ^१—वि० [सं० माजिष्ठ] [वि० स्त्री० माजिष्ठी] १ मजीठ का सा। मजीठ के समान। २ मजीठ के रंग का।

माजिष्ठ^२—सञ्ज्ञा पु० १ लाल रंग। मजीठ रंग (को०)। २ एक प्रकार का मूत्ररोग या प्रमेह जिसमें मजीठ के रंग का लाल पेशाब होता है।

माडप—वि० [सं० माण्डप] मडप सबधी। मडप का (को०)।

माडलिक^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० माण्डलिक] १ वह जो किसी मडल या प्रात की रक्षा अथवा शामन करता हो। २ शासनकार्य। ३ वह छोटा राजा जो किसी सार्वभौम या चक्रवर्ती राजा के अधीन हो और उसे कर देता हो। उ०—क्या कोई माडलिक हुआ सहसा विद्रोहा।—साकत, पृ० ४१२।

विशेष—शुक्र नीति के अनुसार माडलिक नरेश वे कहे जाते हैं जिनके राज्य की वार्षिक आय ४ लाख से १० लाख तक होती है।

माडलिक^२—वि० [वि० स्त्री० माडलिकी] मडल सबधी। मडल के शासन से सबद्ध (को०)।

यौ०—माडलिक नृपति = मडल का वह राजा जो किसी बड़े राजा के अधीन हो। सामत। उ०—इससे स्पष्ट है कि परमारवंश का प्रतिष्ठापक उपेन्द्र या कृष्णराज, आरभ मे प्रतीहारों या राष्ट्रकूटों का माडलिक नृपति (सामत) रहा होगा।—आदि०, पृ० ५३३।

माडवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माण्डवी] राजा जनक के भाई कृष्णवज की कन्या जो भरत को व्याही थी। उ०—माडवी चित्तचातक नवाबुद वरन सरन तुलसीदास अभयदाता।—तुलसी (शब्द०)।

मांडव्य—सञ्ज्ञा पु० [सं० माण्डव्य] १. एक प्राचीन ऋषि। उ०—विदुर सु धर्मराइ अवतार। ज्यों भयो कहीं सुनो चित्तधार। मांडव्य ऋषि जब शूली दयो। तब सो काठ हरयो ह्वं गयो।—सूर (शब्द०)।

विशेष—बात्यावस्था के किए हुए पाप के अपराध के कारण यमराज ने इनको शूली पर चढवा दिया था। इसपर ऋषि ने यमराज को शाप दिया कि तुम शूद्र हो जाओ, जिससे यमराज दासी के गर्भ से पंडु के यहाँ उत्पन्न हुए थे।

२. एक प्राचीन जाति का नाम। ३. एक प्राचीन नगर का नाम।

माडहार्हा^(पु)—सञ्ज्ञा पु० [सं० मण्डप, हिं० मँडवा] दे० 'मडप-४'। उ०—ए च्यारइ वेद उचरइ चउरी दीसउ माडहार्हाहि।—वी० रासो, पृ० २१।

मांडूक—सञ्ज्ञा पु० [सं० माण्डूक] प्राचीन काल के एक प्रकार के ब्राह्मण जो वैदिक मंडूक शाखा के अंतर्गत होते थे।

मांडूकायनि—सञ्ज्ञा पु० [सं० माण्डूकायनि] एक वैदिक आचार्य का नाम।

मांडूक्य^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० माण्डूक्य] एक उपनिषद् का नाम।

मांडूक्य^२—वि० मंडूक सबधी।

मात्र—वि० [सं० मात्र] १. वेदमंत्र सबधी। वेदमंत्र का। २. तत्र सबधी। तात्रिक (को०)।

मात्रिक^१—वि० [सं० मात्रिक] मात्र सबधी। मात्र (को०)।

मात्रिक^२—सञ्ज्ञा पु० १. वह व्यक्ति जो तत्र मन्त्रादि का ज्ञाता हो। २. वह जो वेदमंत्रों का ज्ञाता हो (को०)।

माथर्य—सञ्ज्ञा पु० [सं० मान्थर्य] १. मथरता। धीमापन। मुस्ती। २. कमजोरी। शैथिल्य (को०)।

माद—सञ्ज्ञा पु० [सं० मान्द] १. तालाव का जल। २. ग्रहों की रवि या चंद्र सबधी नावोच्च या मदाच्च गति।

मादलु^(१)—सञ्ज्ञा पु० [सं० मद्दल] दे० 'मादर'। उ०—कवीर सब जग ही। फरया मादलु कव चढाइ।—कवीर प्र०, पृ० २६०।

मादार^१—वि० [सं० मान्दार] मदार सबधी। मदार का।

मादार^२—सञ्ज्ञा पु० मदार का पेड़ (को०)।

मादार्य—सञ्ज्ञा पु० [सं० मान्दार्थ] वह जो विषयो या रागद्वेष आदि से परे हो गया हो। वीतराग।

माद्य—सञ्ज्ञा पु० [सं० मान्द्य] १. कमी। न्यूनता। घटी। २. मद होने की क्रिया या भाव। जैसे, आग्निमाद्य। ३. राग। बीमारी।

माधाता—सञ्ज्ञा पु० [सं० मान्धातृ] एक प्राचीन सूर्यवंश राजा जा युवनाश्व का पुत्र था और जिसका राजधानी अयाध्या म था। उ०—कह्यो माधाता सो जाइ। पुत्री एक देहु माहँ राइ।—सूर (शब्द०)।

विशेष—कहते हैं, राजा युवनाश्व कोई सतान न हाने पर भी ससार त्याग करवन से ऋषियों के साथ रहन लगा था। ऋषिपति ने उसपर दया करके उसके घर सतान हान के लिये यज्ञ किया

श्राधी रात के समय जब यज्ञ समाप्त हो गया, तब ऋषियों ने एक घड़े में अभिमंत्रित जल भरकर वेदी में रख दिया और प्राण सो गए। रात के समय जब युवनाश्व को बहुत अधिक प्यास लगी, तब उसने उठकर वही जल पी लिया जिसके कारण उसे गर्भ रह गया। समय पाकर उस गर्भ से दाहिनी कोख फाड़कर एक पुत्र उत्पन्न हुआ जो यही माघाता था। इद्र ने इसे अपना भ्रूण ठा चुमाकर पाला था। आगे चलकर वह बड़ा प्रतापी और चक्रवर्ती राजा हुआ था और इमने शर्णाविदु की कन्या विदुमती के साथ विवाह किया था, जिसके गर्भ में इस पुंक्तुत्स, श्रवरीप और मुञ्जुकुद नामक तीन पुत्र और पचास कन्याएँ उत्पन्न हुई थीं।

मांस'—सज्ञा पुं० [सं०] १ मनुष्यों और पशुआ आदि के शरीर के अतगत वह प्रसिद्ध चिकना, मुलायम, लचीला, लाल रंग का पदार्थ जो शरीर का मुख्य अवयव है और जो रेशेदार तथा चरबी मिला हुआ होता है। गोष्ठ।

विशेष—शरीर का यह अणु टह्ठी, चमड़े, नाडी, नस और चरबी आदि से भिन्न है। इसका एक अणु ककाल से लगा हुआ छोटे छोटे टुकड़ों में बँटा रहता है और वह ऐच्छिक कहलाता है, अर्थात् इच्छानुसार उसका मचालन किया जा सकता है। ये टुकड़े आपस में मुत्रों के द्वारा जुड़े रहते हैं और उन सूयों के हटाने पर मूत्र में अलग हो सकते हैं। इन टुकड़ों को मासपेशी कहते हैं। ये मासपेशियाँ छोटी, बड़ी, पतली, मोटी आदि अनेक प्रकार की होती हैं। आशयों, नलियों, मार्गों और हृदय आदि अणु का मास पेशियों में विभक्त नहीं होता। इन अणु में मास की केवल पतली या मोटी तहें रहती हैं जो आपस में एक दूसरी से बिलकुल मिली हुई होती हैं। ऐसा मास अनैच्छिक या स्वाधीन कहलाता है, अर्थात् इच्छानुसार उसका मचालन नहीं किया जा सकता। मास अथवा मासपेशी मुलायम होने के कारण चाकू आदि में मूत्र में कट जाती है। शरीर में सभी जगह थोड़ा बहुत मास रहता है और शरीर के भार में उसका अणु प्रति सँकड़े ४२-४३ के लगभग होता है। शरीर की सब प्रकार की गतियाँ मास के ही द्वारा होती हैं। मास आवश्यकता पढ़ने पर सिकुड़कर छोटा और मोटा होता है और फिर अपनी पूर्व अवस्था में आ जाता है। मुश्रुत के अनुसार मासपेशियों की संख्या ५०० तथा आधुनिक पाश्चात्य चिकित्सकों के मत से ५१६ है। वँद्यक के अनुसार यह रक्त से उत्पन्न तीसरी वातु है। भावप्रकाश के अनुसार जब शरीर की अग्नि अथवा ताप के द्वारा रक्त का परिपाक होता है और वह वायु के संयोग से घनीभूत होता है, तब वह मास का रूप धारण करता है। वँद्यक के अनुसार साधारणतः सभी प्रकार का मास वायुनाशक, उपचयकारक, बलवर्धक, पुष्टिकारक, गुण, हृदयश्राही और मधुररस होता है।

पर्याय—आमिष। पिशित। पलाज। क्रन्ध। पज। आशज।

धौ०—मास का घी = चरबी।

२ कुछ विशिष्ट पशुओं के शरीर का उक्त अणु जो प्रायः खाया जाता है। गोष्ठ।

विशेष—हमारे यहाँ यह मांस दो प्रकार का माना गया है। जागृत और आनूप। जघान, विनम्य, गुहाशय, पर्णमृग, विष्किर, प्रतुद, प्रमह और ग्राम्य इन आठ प्रकार के जगती जीवों का मांस जागृत कहलाता है, और वँद्यक के अनुसार मधुर, कपाय, रक्त, लघु, वनकारक, शुक्रवर्धक, अग्निदीपक, दापन और वधिगता, अग्नि, वसि, प्रमेह, मुखरोग, शनीपद और मन्गड आदि का नाशक माना जाता है। कुतेचर, प्लव, कोण्मथ, पादी और मन्थ इन पाँच प्रकार के जावा का मांस आनूप कहलाता है और वँद्यक के अनुसार साधारणतः मधुररस, स्निग्ध, गुण, अग्नि का मद करनेवाला, कफकारक तथा मागपोषक होता है। पक्षियों में ये पुंक्तु जाति अथवा नर का और चोंपायों में स्त्री जाति अथवा मादा का मांस अच्छा कहा गया है। इसके अतिरिक्त भिन्न भिन्न जीवों के मांस के गुण भी भिन्न भिन्न होते हैं। साधारणतः प्रायः सभी देशों और सभी जातियों में कुछ विशिष्ट पशुओं, पक्षियों और गच्छलियों आदि का मांस बहुत अविनता से खाया जाता है। पर भारत के कुछ धार्मिक मप्रदायों के अनुसार मांस खाना बहुत ही निषिद्ध है। पुराणों में इसका खाना पाप माना गया है। कुछ आधुनिक वैज्ञानिकों और चिकित्सकों आदि का मत है कि मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन नहीं है और उसका खाने में अनेक प्रकार के घातक तथा असाध्य रोग उत्पन्न होते हैं।

यौ०—मासाहारी।

३. मछली का मांस (को०)। ४. फल का गूदावाला भाग (को०)।
५. कीड़ा। कीट (को०)। ६. मांस बेचनेवाली एक सकर जाति (को०)। ७. काल। ममय (को०)।

मांसकदी—सज्ञा स्त्री [सं० मांसकन्दी] मांस की स्फीति। सूजन। शोथ (को०)।

मांसकच्छप—सज्ञा पुं० [सं०] मुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का रोग जो तालू में होता है।

मांसकारी—सज्ञा पुं० [सं० मांसकारिन्] रक्त। लहू।

मांसकीलक—सज्ञा पुं० [सं०] ववासीर का ममा।

मांसकेशी—सज्ञा पुं० [सं० मांसकेशिन्] वह घोड़ा जिसके पैरों में मांस के गुठले निकलते हों।

मांसक्षय—सज्ञा पुं० [सं०] शरीर (को०)।

मांसखोर—सज्ञा पुं० [सं० मांस + फा० खोर] मांस खानेवाला। मासाहारी।

मांसग्रथि—सज्ञा स्त्री [सं० मांसग्रन्थि] मांस की गाँठ जो शरीर के भिन्न भिन्न अणु में निकल आती है।

मांसच्छदा—सज्ञा स्त्री [सं०] मांसरोहिणी या मासी नाम की लता।

मांसज—सज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो मांस से उत्पन्न हो। २ मांस से उत्पन्न शरीर में की चरबी।

मांसतान—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का भीषण रोग ।

विशेष—वैद्यक के अनुसार इस रोग में गले में सूजन होकर चारों ओर फैल जाती है जिसमें बहुत अधिक पीडा होती है । इससे कभी कभी गले की नाडी घुटकर बंद हो जाती है और रोगी मर जाता है ।

मांसतेज—सञ्ज्ञा पु० [सं० मांसतेजस्] चर्मा ।

मांसदलन—सञ्ज्ञा पु० [सं०] प्लीहघ्न वृक्ष [को०] ।

मांसद्रावी—सञ्ज्ञा पु० [सं० मांसद्राविन्] अम्लवेत ।

मांसधरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुश्रुत के अनुसार शरीर के चमड़े की सातवीं तह जो स्थूलापर भी कहलाती है ।

मांसनिर्यास—सञ्ज्ञा पु० [सं०] शरीर के बाल । रोम [को०] ।

मांसप—सञ्ज्ञा पु० [सं०] पिशाच या राक्षस [को०] ।

मांसपचन—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मांस पकाने का बरतन [को०] ।

मांसपाक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का लिंग का रोग जिसमें लिंग का मांस फट जाता है और उसमें पीडा होती है ।

मांसपिंड—सञ्ज्ञा पु० [सं० मांसपिण्ड] १ शरीर । देह । २ मांस का पिंड या लोदा (को०) ।

मांसपिंडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मांसपिण्ड हि० + ई] शरीर के अंदर होनेवाली मांस की गाँठ ।

विशेष—कहते हैं, पुरुषों के शरीर में इस प्रकार की ५०० और स्त्रियों के शरीर में ५२० गाँठें होती हैं ।

मांसपिटक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ मांस की टोकरी । २ डेर का मांस [को०] ।

मांसपित्त—सञ्ज्ञा पु० [सं०] हड्डी ।

मांसपुष्टिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का पीषा जिसमें मुदर फूला लगते हैं और जिसे 'अमरारि' भी कहते हैं ।

मांसपेशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ शरीर के अंदर होनेवाला मांसपिंड । विशेष दे० 'मांस' । उ०—मांसपेशी अर्थात् मांस-बोटी जो है सो बल करती है ।—शाङ्गधर०, पृ० ५१ । २ भावप्रकाश के अनुसार गर्भ की वह अवस्था जो गर्भधारण के सात दिनों के बाद होती है और प्रायः एक सप्ताह तक रहती है ।

मांसफल—सञ्ज्ञा पु० [सं०] तरबूज ।

मांसफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ भिंडी । २ भटे का पौधा (को०) ।

मांसभक्ष—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १, वह जो मांस खाता हो । मामाहारी । २ पुराणानुसार एक दानव का नाम ।

मांसभक्षी—सञ्ज्ञा पु० [सं० मांसभक्षिन्] मांस खानेवाला । मामाहारी । गोशतखोर ।

मांसभेत्ता—वि० [सं० मांसभेत्] मांस काटनेवाला [को०] ।

मांसभेदी—वि० [सं० मांसभेदिन्] मांसभेत्ता ।

मांसभोजी—सञ्ज्ञा पु० [सं० मांसभोजिन्] मांस खानेवाला । मामाहारी ।

मांसमड—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मांस का झाल या रमा । गोरवा । यखनी ।

मांसमासा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मासपर्याय ।

मांसयोनि—सञ्ज्ञा पु० [सं०] रक्त मांस से उत्पन्न जीव ।

मांसरक्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मांसरोहिणी । रोहिणी ।

मांसरज्जु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुश्रुत के अनुसार शरीर के अंदर होनेवाले स्नायु जिनसे मांस दंडा रहता है । २ मांस का रमा । शोरवा ।

मांसरस—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मांस का रमा । यखनी । शोरवा ।

मांसरुहा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मांसरोहिणी ।

मांसरोहिणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का जगली वृक्ष ।

विशेष—इसकी प्रत्येक डाली में खिरनी के पत्ता के आकार के सात सात पत्ते लगते हैं और इसके फल बहुत छोटे छोटे होते हैं । वैद्यक में इस उष्ण, त्रिदोषनाशक, वीर्यवर्धक, मार्क और ब्रण के लिये हितकारी माना है ।

पर्याय—अतिरुहा । वृत्ता । चर्मरूपा । वसा । प्रहारवल्ली । विकसा । वीरवती । अग्निरुहा । कशामासी । महामासी । मासागोहा । रसायनी । सुलोमा । लोमकर्णी । रोहिणी । चद्रवल्लभा ।

मांसल—वि० [सं०] १, मांस से भरा हुआ । मांसपूर्ण (अग) । जैसे, चूतड़, जाँघ आदि । उ०—गजहस्तप्राय जानुयुगल पीन मांसल कूर्मपृष्ठाकार श्रोणी गभीर ।—वर्णा०, पृ० ४ । २ मोटा ताजा । पुष्ट । ३ भरा या गदराया हुआ । उ०—प्राणों की मर्मर से मुखरित जीवन की मांसल हरियाली ।—युगात, पृ० २ । ४ बलवान् मजदूर । दृढ । ५ रक्ताभ । लाल । उ०—पत्रों में मांसल रंग खिला ।—युगात, पृ० ८ ।

मांसल^३—सञ्ज्ञा पु० १ काव्य में गौडी रीति का एक गुण । २ उड्ड ।

मांसलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मांसल होने का भाव । २ स्थूलता और पुष्टि । ३ बली । चर्मसकोच (को०) ।

मांसलफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ भिंडी । २ तरबूज । ३ वैगन । भटा (को०) ।

मांसलिप्त—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हड्डी ।

मांसवारुणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार की मदिरा जो हिरन आदि के मांस में बनाई जाती है ।

मांसविक्रय—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मांस की विक्री । मांस बेचना [को०] ।

मांसविक्रयी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मांसविक्रयिन्] १ वह जो मांस बेचता हो । कमाव । २ वह जो धन के लिये अपनी कन्या या पुत्र बेचता हो ।

मांसवृद्धि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शरीर के किसी अंग के मांस का बढ़ जाना । जैसे, वेधा, फीलपाँव आदि ।

मांससवात—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें तालू में कुछ दूषित मांस बढ़ जाता है । इसमें पीडा नहीं होती ।

मांससमुद्भवा—सज्ञा स्त्री० [सं०] चर्बी ।
 मांससार—सज्ञा पुं० [सं०] १ शरीर के अतर्गत भेद नामक वातु ।
 २ वह जो हृष्ट पुष्ट हो ।
 मांसस्नेह—सज्ञा पुं० [सं०] चर्बी ।
 मांसहासा—सज्ञा पुं० [सं०] चमडा ।
 मांसाद्—सज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो मांस खाता हो । २ राक्षस ।
 मांसादो—सज्ञा पुं० [सं० मांसादिन्] १ 'मांसाद' ।
 मांसारि—सज्ञा पुं० [सं०] अम्लवेत ।
 मांसार्गल—सज्ञा पुं० [सं०] मुँह से लटकता हुआ मांस का टुकड़ा या लोथटा । ललरी [को०] ।
 मांसावृद्ध—सज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का रोग जिसमें लिंग के ऊपर कड़ा फुसियाँ हा जाती है । २ शरीर में मुखके आदि के आघात से होनेवाला एक प्रकार की सूजन ।
 विशाप—उसमें शरीर का वह स्थान जहाँ आघात हुआ रहता है, पत्थर के समान कड़ा हो जाता है और उसमें पीडा नहीं होती । ऐसी सूजन असाध्य ममकी जाती है ।
 मांसाशन—सज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'मांसाशी' ।
 मांसाशी—सज्ञा पुं० [सं० मांसाशिन्] १ वह जो मांस खाता हो । मांसाहारी । २ राक्षस ।
 मांसाष्टका—सज्ञा स्त्री० [सं०] माघ कृष्ण अष्टमी ।
 विशेप—प्राचीन काल में इस दिन मांस के बने हुए पदार्थों में श्राद्ध करने का विधान था ।
 माहासारी—सज्ञा पुं० [सं० मांसाहारिन्] मांसभक्षी । मांस भोजन करनेवाला ।
 मांसिक—सज्ञा पुं० [सं०] कसाई । मांसविक्रेता ।—गपूर्णा० अभि० प्र०, पृ० २४६ ।
 मांसिका, मांसिनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] जटामासी ।
 मांसी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ जटामासी । २ काकोली । ३, मामरो-हिंगी । ४ चदन आदि का तेल । ५ इलायची ।
 मांसेष्टा—सज्ञा स्त्री० [सं०] चल्गुला । चमगादड़ [को०] ।
 मांसोदन—सज्ञा पुं० [सं०] १ मांस का भोजन । २, मांस के साथ पकाया हुआ चावल [को०] ।
 मांसोपजीवी—सज्ञा पुं० [सं० मांसोपजीविन्] १ 'मांसिक' ।
 मांसौदनिक—वि० [सं०] मांसोदन खाने या प्राप्त करनेवाला । मांस और भात खानेवाले को मांसौदनिक कहते थे ।—सपूर्णा० अभि० प्र०, पृ० २४६ ।
 माँ—सज्ञा स्त्री० [सं० मातृ = माता या अम्बा या मा (= लक्ष्मी माता)] जन्म देनेवाली, माता । जन्ती । उ०—दोउ भया जँवत माँ आगे पुनि लै लै दधि खात कन्हूई और जननि पै माँगि ।—सुर (शब्द०) ।
 यौ०—माँ जाई = सगी बहिन । माँ जाया = सगा भाई । सहोदर ।
 माँ बाप = (१) माता और पिता । (२) माता और पिता के समान अर्थात् रक्षण और पालन पापण करनेवाला ।
 माँ—अव्य० [सं० मध्य] मे । उ०—(क) इन युग माँ को बड़

मुखरामो । बोन तव रघुनाथ उपासी ।—रघुनाथ (शब्द०) ।
 (ख) कहु गुरु द्रोह केर फल का है । तेरी गति मत्र शास्त्रन माँ है ।—रघुराज (शब्द०) । (ग) लख चौगसी धार माँ तहाँ दीन जिउ वान । चाँदह जम रसवारिया चारि वेद विश्वाम ।—रवीर (शब्द०) ।

माँड़ी—अव्य० [हिं० माँड़] दे० 'माँह' । उ०—पठ मांस माँड़ मिले माँड़ अन्न पाई वाम ए ।—राम० वर्म०, पृ० २५७ ।

माँकड़ी—सज्ञा स्त्री० [हिं० मकड़ी] १. 'मकड़ी' । २. कमखात्र बुननेवाली का एक श्रांजार ।

विशेष—इसमें डेढ़ डेढ़ बलिधन में पाँच तंतिया होती हैं और नीचे तिरछे बल में इतनी ही बड़ी एक और तीली होती है । यह ठाठ मवा गज लकी एक लकड़ी पर चढ़ा हुआ होता है जा करके के लम्बे पर रखी जाती है । ३ पतवार के ऊपरी सिरे पर लगी हुई और दाता और निक्ली हुई वह लकड़ा जगके दोनों सिरा पर वे रस्मिया बंधा होती है, जिनकी महायता से पतवार घुमाते ह । (लग०) । ४ जहाज में रस्स बंधन के सूटे आदि का वह बनाया हुआ ऊपरी भाग जिसमें लकड़ी या लाहा दाता या चारा और उग अभिप्राय में निकला हुआ रहता है कि जगम उस सूटे में बाधा हुआ रस्सा ऊपर न निकल आवे । (लग०) ।

माँखण्ड—सज्ञा पुं० [सं० मख्य] मध्य । बीच । उ०—देखि देखि मा रो इन माये । खुली निगाह भई कै आसे ।—चित्रा०, पृ० २६ ।

माँखण्ड—सज्ञा पुं० [हिं०] मखन । नवनीत ।

माँखनण्ड—सज्ञा पुं० [हिं०] २० 'मखन' । उ०—होत परमपर पार माखन के गेंदुरु करे ।—नद० प्र०, पृ० ३३४ ।

माँखना—क्रि० अ० [सं० मख] क्रुद्ध होना । क्रोध करना । गुस्सा करना । २० 'माखना' । उ०—ठावहि ठाँव कुँवर सब माये । केई अरव लहि जोगी जिउ राखे ।—पदमावत, पृ० ११२ ।

माँखी—सज्ञा स्त्री० [सं० मखिनी, प्रा० मखिनीया] दे० 'मखिनी' । उ०—(क) ल चले नागर नगवर नवल तिया को ऐमे । माँखिन श्रांखिन धूर धूर मधुहा मधु जँन ।—नद प्र०, पृ० २१० । (ख) यो ता श्रोनाथ जा के चरणस्पर्श मायी हू करत है ।—दा माँ वावन०, भाग १, पृ० ३१ ।

माँग—सज्ञा स्त्री० [हिं० मागना] १ मागने की क्रिया या भाव । २ विक्री या खपत आदि के कारण किसी पदार्थ के लिये होनेवाली आवश्यकता या चाह । जैसे,—आजकल बाजार में देशी कपडों की माँग बढ़ रही है ।

माँग—सज्ञा स्त्री० [सं० मार्ग, प्रा० मग्ग] १ सिर के बालों के बीच की वह रेखा जो बालों को दो ओर विभक्त करके बनाई जाती है । सीमत ।

विशेष—हिंदू सौभाग्यवती स्त्रियाँ माँग में सिंदूर लगाती हैं और इसे सौभाग्य का चिह्न समझती हैं ।

यौ०—माँग उजड़ना = विधवा होना । माँग चोटी = स्त्रियों का केशविन्यास । माँगजली = विधवा । राँड ।

मुहा०—माँग कोख से सुखी रहना या जुटाना = स्त्रियो का मौभाग्यवती और सतानवती रहना । उ०—आनंद श्रवनि राजरानी सब माँगटु कोखु जुटानी ।—तुलसी (शब्द०) ।
माँग पट्टी करना = केशविन्यास करना । बालो मे कषी करना ।
माँग पारना या फरना = केशो को दो ओर करके बीच मे माँग निकालना । माँग बाँधना = कषी चोटी करना । (क्व०) ।
२ किमी पदार्थ का ऊपरी भाग । मिरा । (क्व०) । ३ सिल का वह ऊपरी भाग जो कुटा हुआ नहीं होता और जिसपर पीसी हुई चीज रखी जाती है । ४ नाव का गावदुमा सिरा ।
५ 'माँगी' ।

माँगटीका—सज्ञा पुं० [हि० माँग + टीका] स्त्रियो का एक गहना जो माँग पर पहना जाता है और जिसके बीच मे एक प्रकार का टिकडा होता है जो माये पर लटका होने के कारण टीके के समान जान पटना है ।

माँगरण—सज्ञा पुं० [डि०] दे० 'माँगन' ।

माँगरणगर(उ)—वि० [सं० मार्गण, प्रा० मग्गण, हि० माँगना + प्रा० गार (प्रत्य०)] माँगनेवाला । याचक । उ०—माँगरणगारा रीभ्रवइ, त्यावइ माल्ह कुमार ।—ढोला०, दू० १०२ ।

माँगणहार(उ)—सज्ञा पुं० [डि० माँगण + हि० हार (प्रत्य०)] माँगनेवाला । चारण । ढाढी । याचक । उ०—मेन्हि सखी तेढाविया मारु माँगणहार ।—ढोला०, दू० १०६ ।

माँगन(उ)†—सज्ञा पुं० [हि० माँगना] १ माँगने की क्रिया या भाव । २ याचक । भिक्षुक । भिखमगा । मगन । उ०—(क) नृप करि विनय महाजन केरे । मादर सकल माँगने टेरे ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) रीति महाराज की निवाजिए जी माँगने सो दोष दुख दारिद दरिदक के छोड़िए ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) रुचै माँगनेहि माँगिबो, तुलसी दानिहि दानु ।—तुलसी ग्र०, पृ० १०६ ।

माँगनहार(उ)—सज्ञा पुं० [हि० माँगना + हार (प्रत्य०)] माँगनेवाला । याचक । उ०—गुरु विन दाता कोइ नही जग माँगनहारा ।—कवीर श०, भा० १, पृ० ७२ ।

माँगना—क्रि० सं० [सं० मार्गण (= याचना)] १ किमी से यह कहना कि तुम अमुक पदार्थ मुझे दो । कुछ पाने के लिये प्रार्थना करना या कहना । याचना करना । जैसे,—(क) मैंने उनसे १० रुपए माँगे थे । (ख) तुम अपनी पुस्तक उनसे माँग लो । उ०—(क) सो प्रभु सो सरिता तरिवे कहँ माँगत नाउ करारे हँ अडे ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) माँगउं दूमर वर कर जोरी ।—तुलसी (शब्द०) । २ किसी से कोई आकांक्षा पूरी करने के लिये कहना । जैसे,—हम तो ईश्वर से दिन रात यही माँगते हैं कि आप निरोग हो । उ०—माँगत तुलसिदाम कर जोरे । वसहि रामसिय मानम मोरे ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुहा०—माँग जाँचकर = इधर उधर से माँगकर । लोगो से लेकर । माँग तोँकर = दे० 'माँग जाँचकर' । माँग बुलाना = किमी के द्वारा किसी को अपने पास बुलवाना ।

माँगफूल—सज्ञा पुं० [हि० माँग + फूल] दे० 'माँगटीका' ।

माँगी—सज्ञा स्त्री० [सं० मार्ग ? हि० माँग] धुनियो की धुनकी मे की वह लकडी जो उसकी उस ढाँडी के ऊपर लगी रहती है जिसपर ताँत चढाते हैं ।

माँच—सज्ञा पुं० [दश०] १ पाल मे हवा लगने के लिये चलते हुए जहाज का रुख कुछ तिरछा करना । । गोम (लश०) । २ पाल के नीचेवाले कोने मे बंधा हुआ वह रस्सा जिसकी सहायता से पाल को आगे बढाकर या पीछे हटाकर हवा के रुख पर करते हैं । (लश०) ।

माँचना(उ)†—क्रि० अ० [हि० मचना] १ आरंभ होना । जारी होना । शुरू होना । उ०—देव गिरा सुनि सुदर साँची । प्रीति अलौकिक दुहुँ दिसि माँची ।—तुलसी (शब्द०) । २ प्रसिद्ध होना । उ०—श्री हरिदास के स्वामी स्याम कुज विहारी की अटल अटल प्रीति माँची ।—काष्ठजिह्वा (शब्द०) ।

माँचना(उ)†—क्रि० सं० [हि०] मानना । उ०—करै प्रेम की टोक रोक एको नहिँ माँचत ।—नद० ग्र०, पृ० ३८७ ।

माँचां—सज्ञा पुं० [सं० मञ्च, हि० मञ्चा] [स्त्री० अल्पा० माँची] १ पलंग । खाट । मञ्चा । २ खाट को तरह की बुनी हुई छोटी पीढी जिसपर लोग बैठते हैं । ३ मचान ।

माँची—सज्ञा स्त्री० [हि० माँचा] बलगाटियो आदि मे बैठने की जगह के आगे लगी हुई वह जालीदार भोली जिसमे माल असबाब रखते हैं ।

माँछी†—सज्ञा पुं० [सं० मत्स्य, प्रा० मच्छ] मछली । उ०—आए सुगुन सुगुनअइ ताका । दहिउ माँछ रूपइ कर टाका ।—जायसी (शब्द०) ।

माँछी—सज्ञा पुं० [दश०] दे० 'माँच' ।

माँछना—क्रि० अ० [सं० मध्य ?] घुमना । घँसना । पैठना । (लश०) ।

माँछरा†—सज्ञा स्त्री० [सं० मत्स्य] मछली ।

माँछली†—सज्ञा स्त्री० । सं० मत्स्य] मछली ।

माँझी—सज्ञा स्त्री० [सं० मञ्जिका] दे० 'मक्खी' ।

माँज—सज्ञा स्त्री० [दश०] १ दलदली भूमि । २ तराई । कछार । ३ वह भूमि जो किसी नदी के पीछे हट जाने के कारण निकल आती है । गगवरार ।

माँजना†—क्रि० सं० [सं० मञ्जन या मार्जन] १ जोर से मलकर साफ करना । किसी वस्तु मे रगडकर मल छुडाना । जैसे, वरतन माँजना । उ०—माँजत माँजत हार गया है, घागा नहीं निकलता है ।—कवीर श०, भा० पृ० ८१ । २ थपुके के तवे पर पानी देकर उसे ठीक करने के लिये उसके किनारे भुंकाना (कुम्हार) । ३ सरेस को पानी मे पकाकर उमसे तानो के सूत रँगना । ४ सरेस और शीशे की बुकनी आदि लगाकर पतंग की नख के डोर को दृढ करना । माँझा देना ।

माँजना†—क्रि० अ० १ अग्याम करना । मक्क करना । जैसे, हाथ माँजना । २ किसी गीत या छंद को बार बार आवृत्ति करके पक्का करना ।

माँजर(उ)†—सज्ञा स्त्री० [हि० पजर या पाँजर] हड्डियो की कठरी ।

पत्र । उ०—सुर सुर मॉजर वन भट्टि रिद्ध की लागी प्राग ।
—जायमी (शब्द०) ।

मॉजरपुं—सज्ञ पुं [म० मॉजर] १० 'मॉजर' । उ०—दाहू मास
त्रहानी के नरा, ते नर मिह सिपाल, वग मॉजर मुनहा नही,
तेना पतव रात्र ।—दाद०, पृ० २५० ।

मॉजा—सज्ञ पुं [म०] पत्नी वर्षा रा फेन जो मछलियों के लिये
मादक होता है । उ०—(क) नयन मजल तन थर थर बाँपी ।
माजहि राट मीन जनु माँपी ।—तुलसी (शब्द०) । (ख)
नलपत विषम मोह मन मापा । मॉजा मनहुँ मीन कहँ व्यापा ।
—तुलसी (शब्द०) ।

मॉ जाया—सज्ञा पुं [हि० मॉ + जाया (= जात)] [स्त्री० मॉजाई]
मा ने उ पत्र मगा भाई ।

मॉजिणउपुं—सज्ञा पुं [म० मज्जन, प्रा० मज्जण, मज्जण] ३०
'मज्जन' । उ०—नागिए ऊगट मॉजिणउ खिजमनि करड
अनन ।—टाला०, पृ० ५३५ ।

मॉकपुं—स्रव्य० [म० मध्य] मे । भीतर । बीच । अदर । उ०—
(१) त्रुहि चनी आई अरव मॉक । मुरमी मर्व लेहु आगे करि
नि होए पुनि वनही मॉक ।—सूर (शब्द०) । (२) तुम्हे
कटक मॉक मुनु अंगद । मो मन भिरहि कवन यावा वद ।
—तुलसी (शब्द०) । (३) आपुम मॉक महोदर साँचै । क्या
तुम वी विगधित राचै ।—केशव (शब्द०) । (४) रेज करि
गौतन मनेज मो निकेत मॉक, पर पति हेत सेज साँक ते
पवारती ।—प्रताप (शब्द०) ।

मॉकपुं—सज्ञ पुं / अतर । फरक ।

सुहा०—मॉक पडना या होना = बीच पटना । अतर पडना ।
उ०—द्वारज राण मॉक भयो तव ही पिता मेवा मावधान मन
नीता कर शानिए ।—प्रियादाम (शब्द०) ।

० नदी के बीच म पडी हुई रतीली भूमि ।

मॉकलपुं—स्रव्य० [हि० मॉक + ल (प्रत्य०)] २० 'मॉक' ।
उ०—अरि देग्ये आराण में, नृण मुख मॉकन त्याह ।—
वाकी० प्र०, भा० १, पृ० १ ।

मॉका'—सज्ञा पुं [मध्य] १ नदी के बीच की जमीन । नदी मे का
टाप । २ एक प्रकार का आभूषण जो पगडी पर पहना जाता
है । उ०—पंग मे लगर पाग पर मॉका आदि यावत् प्रतिष्ठा
वागता है ।—राधाकृष्णदाम (शब्द०) । ३ एक प्रकार का
लौहा जो गोटेई के बीच मे रहता है और जो पाई को जमीन
पर गिरन म रोकता (जुवाटे) । ४ वृद्ध का तना । ५ वे
पाने लपडे जो कहीं कहीं वर और कन्या को विवाह से दो
तीन दिन पहले हलदी चटने पर पहनाए जाते हैं ।

मॉना'—सज्ञा पुं [हि० मॉजना] पतंग या गुड्डी उड़ाने की डोर या
नर प ममे और जीरे के चूरे आदि ने चढाया जानेवाला
तन्त्र विममे डोरे या नर मे गजद्वी आती है । उ०—मिहीन
मृत नद उन नातै नाँका प्रेम भगति वा ।—श्रीरं १०,
गा०, पृ० ८८ ।

वि० प्र०—चढाना ।—देना ।

मॉभा'—सज्ञा पुं ३० 'मंभा' ।

मॉफिन, मॉफिसां(पुं) वि० [म० मध्यम, प्रा० मफिमम, राज०
मॉफिम] ३० 'मध्यम' । उ०—(क) का हमि करि म्हाँ सीख
दे खडिस्याँ माफिन रात ।—ढोला०, दू० २७८ । (ख) किणहीं
अवगुण कूँकडी कुरली मॉफिम रत्त ।—ढोला०, दू० ५७ ।

मॉफिला(पुं) क्रि० वि० [म० मध्यम] बीच का । मध्य का ।
बीचवाला । उ०—बोला मॉफिन तलय तुरग तेंतीम जू । लावहु
मम हित माँगि ग्राम गुह वीम जू ।—विश्राम (शब्द०) ।

मॉफि' सज्ञा पुं [म० मध्य, हि० मॉफ या देश०] १ नाव बेनेवाला ।
केवट । मल्लाह । २ दो व्यक्तियों के बीच मे पढकर मामला
तै करा देनेवाला । उ०—संवारी रकन नैनन भरि चुवा । रोइ
हँकारेमि मॉफि मुवा ।—जायमी (शब्द०) । ३ जोरावर ।
बलवान् । (डि०) ।

मॉफि(पुं) वि० मुख्य । अग्रणी । उ०—मुदर घर बाहर अजवमाह,
एतला आद मॉफि अयाह ।—रा० ८०, पृ० १८४ ।

मॉट(पुं) सज्ञा पुं [म० मट्टक] मिट्टी का बडा बरतन जिसमें
अनाज या पानी आदि रखते हैं । मटका । कुडा । उ०—(क)
पुनि कमडलु वरयो तहाँ सो बढि गयो कुम धरि बहुरि पुनि मॉट
राख्यो ।—सूर (शब्द०) । (ख) मानो नील मॉट महुँ बोरे लै
यमुना जु पबारे ।—सूर (शब्द०) । २ घर का ऊपरी
भाग । अटारी ।

मॉटी(पुं) सज्ञा स्त्री [हि० मिट्टी] ३० 'माटी' । उ०—जी नियान
तन होइहि छारा । माटी पीखि मरै को भारा ।—जायमी प्र०
(गुप्त), पृ० २०८ ।

मॉठ—सज्ञा पुं [म० मट्टक] १ मटका । मिट्टी का बडा बरतन ।
२ नील घोलने का मिट्टी का बना बडा बरतन ।

मॉठी(पुं) सज्ञा स्त्री [दश०] १ एक प्रकार को फूल घातु
की ढली हुई चूडियाँ जो पूरव मे नीच जाति की स्त्रियाँ
हाथ मे कलाई से लेकर कोहनी तक पहनती हैं । इसे 'मठिया'
भी कहते हैं । २ मट्टी या मठरी नामक पकवान जो मैदे का
बना होता है ।

मॉड'—सज्ञा पुं [म० मण्ड] पकाए हुए चावलो मे से निकला हुआ
लनदार पानी । भात का पसेव । पीच । पमाव । उ०—चावल
रंग मॉड मँटँ भनसै ।—घट०, पृ० ८७ ।

मॉड'—सज्ञा स्त्री [हि० मॉडना] १. माडने की क्रिया या भाव ।
२ संवारी या बनावटी वात । झूठी वात । उ०—पाड्यो कहु
कइ परतिप (इ) मॉड । झूठ कथइ छइ बोलइ छइ मॉड ।
—श्री० रामो०, पृ० ४१ ।

मॉड'—सज्ञा पुं [दश०] एक प्रकार का राग ।

मॉडना(पुं) क्रि० म० [म० मण्डन] मर्दन करना । मलना ।
ममनना । मीजना । मानना । गुँवना । जैसे, आटा मॉडना ।
उ०—तव पीरै जव पहिने घोए । कापरछान मॉड भल
होए ।—जायमी (शब्द०) । २ लगाना । पोतना । लेपन
करना । जैसे, मुँह में केसर या गुलाब मॉडना । उ०—बेद

मत्र पढि साधि करम विधि यज्ञ करत जेहि लागी जू । ताको मुख माँडत केशरि सो ब्रज युवती रमपागी जू ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ३७८ । ३ रचना । बनाना । सजाना । †४ लगाना । मारना । जमाना । जैसे, आसन माँडना । उ०—स्वामी जी वसत भवना जागन बैठे आसरा माँड वाली ।—रामानंद०, पृ० १४ । ५ किमी अन्न की बाल मे मे दाने भाडना । उ०—साँचो मो लिखवार कहावै । माँडि माँडि खरिहान क्रोध को फोता भजन भरावै । —सूर (शब्द०) । ६ मचाना । ठानना । जैसे, युद्ध माँडना । और मत्र कुछ उर जनि आनो आजु सुकपि रन माँडाँह ।—सूर (शब्द०) । ६ धरना । लगाना । करना । उ०—साप काचली छाँडे बीस ही न छाँडे उदक मे वक ध्यान माडे ।—दक्खिनी०, पृ० ३५ । ७ लेना । उठाना । उ०—जनम जनम अनते नहि जाँचो फिर नहि माँडो भोली जू । —नद० ग्र०, पृ० ३३७ । ६ स्थिर करना । स्थिरतापूर्वक रखना । उ०—कायर मेरी ताकवै मूरा माँडे पाँव ।—कवीर सा० म०, भा० १, पृ० २६ ।

माँडनी—मझ स्त्री [म० मण्डन] मजाफ । मग्जी । गोट । हाशिया । किनारा । उ०—आँगया नील माँडनी रानी निरखत नैन चुराई । सूर (शब्द०) । (ख) नील कचुकी माँडनि नाल । भुजनि नवइ आभूषण माल ।—सूर (शब्द०) ।

माँडहा—सङ्घ पुं [सं० मण्डपा, हिं० माँडवा] विवाह का माँडव । विवाहमण्डप । उ०—ए च्यारइ वेद उचरइ, चउरी दीसउ माँडहा माँहि ।—बी० रामो, पृ० २१ ।

माँडली—सङ्घ स्त्री [म० मडली] वँठक । उ०—खेलाँ मेल्ह्या माँडली । बइम माँहि मोहेउ छइ गइ ।—बी० रासो, पृ० ३ ।

माँडव—सङ्घ पुं [म० मण्डप] विवाह आदि अथवा दूसरे शुभ कृत्यो के लिये छाया हुआ मण्डप । उ० (क) आलेहि वाँस के माँडव मनिगन पूरन हो । मोतिन भालर लागि चहुँ दिमि भूनन हो ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) मुनिगन कटेउ नृप माँडव छावन गावहि गीत सुआमिन वाज वधावन ।—तुलसी (शब्द०) ।

माँडा'—सङ्घ पुं [म० मण्ड] आँख का एक रोग जिसमे उमके ऊपरी पर्दे के अदर महीन झिल्ली सी पड जाती है ।

विशेष—इस झिल्ली का रंग चावल के माड के समान होता है । यह श्रौषधोपचार या शस्त्रक्रिया से निकाला भो जाता है ।

माँडा—सङ्घ पुं [सं० मण्डप] मण्डप । मंडवा ।

माँडा—सङ्घ पुं [हिं० मँडना (= गूँघना)] १ एक प्रकार की बहुत पतली रोटी जो मँदे की होती है और घों में पकती है । लुचई । उ०—(क) मुर्दा दोजख मे जाय या विहिश्त मे, हमे तो अपने हलुवे मँडे से काम है । (कहावत) । (ख) काकी भूख गई वयारि भख विना दूध घृत मँडे ।—सूर (शब्द०) । २ एक प्रकार की रोटी जो तवे पर थोडा घों लगाकर पकाई जाती है । पराँठा । उलटा ।

माँडी—सङ्घ स्त्री [सं० मण्ड] १ भात का पसावन । पीच । माँड । २ कपडे या सूत के ऊपर चढाया जानेवाला कलफ जो भिन्न

भिन्न कपडो के लिये भिन्न भिन्न प्रकार से तैयार किया जाता है । उ०—सुरति ताना करै, पवन भरनी भरै, माँडी प्रेम अंग अंग भीरै ।—पलटू०, पृ० २५ ।

विशेष—यह माँडी आटे, मँदे अनेक प्रकार के चावलो तथा कुछ बीजो से तैयार की जाती है और प्राय लेई के रूप में होती है । कपडो में इसकी सहायता से कडापन या करारापन लाया जाता है ।

क्रि० प्र०—देना ।—लगाना ।

माँडौ—सङ्घ पुं [सं० मण्डित या मण्डप] विवाह का मण्डप । उ०—माँडौ गडो रगमदिर के आँगन वेद विधाना । ता ऊपर जरकसी रज्जु अरु मणिमय विशद विताना ।—रघुराज (शब्द०) ।

माँड्यो—सङ्घ पुं [सं० मण्डप] १ आगतुक लोगो के ठहरने का स्थान । अतिथिशाला । २ विवाहादि के घर में वह स्थान जहाँ संपूर्ण आहूत देवताओं का स्थापन किया जाता है । ३ विवाह का मण्डप । मंडवा । उ०—आए नाथ द्वारिका नीके रच्यो माँड्यो छाया । व्याह केलि विधि रची सकल सुख सौज गनी नहि जाय ।—सूर (शब्द०) ।

माँडाँ—सङ्घ पुं [हिं०] दे० 'माँडव' । उ०—नयरी नइ माँडे वीचई । हस्ती पायक अत न पार ।—बी० रासो, पृ० १० ।

माँगाँ—सङ्घ पुं [सं० मान] दे० 'मान' ।

माँगास—सङ्घ पुं [सं० मानुष, प्रा० मानुस] दे० 'मानुस' । उ०—दादू सतगुरु पसु मानस करै, माणस थै सिध सोइ ।—दादू०, पृ० ३ ।

माँत—वि० [म० मत्त] १ उन्मत्त । मस्त । मत्त । वेमुष । २. दीवाना । पागल ।

माँत—वि० [हिं० माता या सं० मन्ध] १ वैरोनक । उदास । बदरग । उ०—पडा मात गोगख कर चेला । जिय तन छाँडि स्वर्ग कहँ खेला ।—जायसी (शब्द०) । २ हारा हुआ । पराजित । मात ।

माँतना—क्रि० अ० [म० मत्त + हिं० ना (प्रत्य०)] मतवाला होना । उन्मत्त होना । पागल होना ।

माँता—वि० [सं० मत्त] [वि० स्त्री० माँती] मतवाला । उन्मत्त । उ०—(क) आठ पहर अमला रा माँता हेलौ देता डोलौ ।—घनानंद, पृ० ४४५ । (ख) श्री कलवारि प्रेम मधु माँती ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० २४६ ।

माँथा—सङ्घ पुं [सं० मस्तक] माथा । सिर । उ०—रावन चहा सौहँ होइ हेरा उतरि गए दम माँथ ।—जायसी ग्र०, (गुप्त), पृ० २२६ ।

माँथबंधन—सङ्घ पुं [हिं० माँथ + बंधन] १ सूत या ऊन की डोरी जिससे स्त्रियाँ सिर के बाल बाँधती हैं । पराँदा । चक्की । चंवरी । २ सिर पर लपेटने या बाँधने का कपडा । जैसे, पगडी, साफा आदि ।

माँद^१—वि० [सं० मन्द] बेरोनक । उदास । बदरग । २ किसी के मुकाबले में फीका । सराब या हलका ।

क्रि० प्र०—करना ।—पढ़ना ।—होना ।

३ पराजित । हारा हुआ । मात ।

माँद^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] १ गोबर का वह ढेर जो पड़ा पड़ा सूख जाता है और जो प्रायः जलाने के काम आता है । इसकी आँच उपलो की आँच के मुकाबले में मंद या धीमी होती है । २ हिंसक जंतुओं के रहने का विवर । बिल । गुफा । चुर । खोह ।

माँद^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० माँदगी] बीमारी । रोग । उ०—माषडिया तन मँण रा मिटै कदे नह माँद । बाँकी ग्र०, भा० २, पृ० २१ ।

माँदगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ बीमारी । रोग । २ थकावट ।

माँदर, माँदल—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मँदल] मृग का एक भेद जिसे मँदल कहते हैं । उ०—(क) बाजहिं डोल डुडु अरु भेरी । माँदर तूर भाँक चहुँफेरी ।—जायसी (शब्द०) । (ख) कबीर सब जग हौं फिरघो माँदलु कष चढाइ ।—कबीर ग्र०, पृ० २६० ।

माँदा^१—वि० [फा० माँदह] १ थका हुआ । आत । २ बचा हुआ । बाकी । अवशिष्ट ।

माँदा^२—सञ्ज्ञा पुं० [स्त्री० माँदी] रोगी । बीमार । उ०—अब मुझे डर लगता है । मैं माँदी हो जाऊँगी ।—पिंजरे०, पृ० ६३ ।

माँदिनी^१—वि० स्त्री० [सं० उन्मादिनी, या मतिनी] उन्मादिनी । मदबिह्वल । उ०—फूले कँवल धनत चहुँ दिसि चाँदनी । सुदर विरहनि देखि भई है माँदिनी ।—सुदर० ग्र०, भा० १ पृ० ३६४ ।

माँदी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश० माँद ?] १ विवर । बिल । २ कोप । मियान । उ०—जब लगि माँदी महँ रहि गोई । तवही लहु निरभँ सब कोई ।—चित्रा०, पृ० १४२ ।

माँनस^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानुष] दे० 'मानुष' । उ०—मला घरीं रा माँनसाँ नै कानाँ लागि विगाड है ।—घनानन्द, पृ० ३३४ ।

माँनुछ^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मनुष्य] दे० 'मानुष' । उ०—माँनुछ न जानियतु देवगति ।—पृ० रा०, १२।२६४ ।

माँनो^१—अव्य० [हिं०] दे० 'मानो' । उ०—नददास पुहुपन मधि माँनो मधुप पुज सोवत कलमले ।—नद० ग्र०, पृ० ३५३ ।

माँपना^१—क्रि० प्र० [हिं० माँपना] नशे में चूर होना । उन्मत्त होना । उ०—नयन सजल तन थर थर काँपी । माँजहिं खाइ मीन जनु माँपी ।—तुलसी (शब्द०) ।

माँपना^२—क्रि० प्र० [सं० मापन] दे० 'मापना' ।

माँमा^१—वि० [हिं० मामला (= लडाई), हिं० ?] युद्ध करनेवाला । उ०—रुके आटा रक्खणा मोटा कामाँ माँमा ।—रा० रू०, पृ० १३७ ।

माँमला^१—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मुआमलह, हिं० मामला] युद्ध । लडाई । उ०—मीसण पडिया माँमला ।—रा० रू०, पृ० ४० ।

माँय^१—अव्य० [सं० मध्य, हिं० माँक] मे । बीच । मध्य । अदर । उ०—वरप एक के माँयें, एकदशी चौबिस परें । सुनी सवन के माँयें, फल ममेत वर्णन कए ।—विश्राम (शब्द०) ।

माँसा^१—सं० पुं० [सं० माम] महीना । मास । उ०—ठारी सी र पचोतरा पूस माँस मित पच्छ ।—मुजान०, पृ० ३७ ।

माँस^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माम] दे० 'माम' । उ०—अमिपत्र विपिन महँ चलह । खायो माँस मोई फल लहह ।—कबीर सा०, पृ० ४६७ ।

माँसी^१—वि० [सं० माष] उर्द के रग का ।

माँसी^२—सञ्ज्ञा पुं० उर्द के रग के समान एक प्रकार का हरा रग ।

माँसी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० माँसी] दे० 'मामी' या 'मौमी' ।

माँसु, माँसू^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माम] दे० 'माम' । उ०—जेहि तन पेस कहाँ तेहि माँसू । कथा न रकत न नैनन आँसू ।—जायसी (शब्द०) ।

माँह^१—अव्य० [सं० मध्य] मे । बीच । अदर । भीतर ।

माँहट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० महावट] दे० 'महावट' । उ०—पिय विनु हिय धन गहवर आवा । नैनह मिलि माँहट बरिमावा ।—चित्रा०, पृ० १७३ ।

माँहा^१—अव्य० [हिं०] दे० 'माँह' । उ०—भएउ हलास नवल रितु माँहाँ ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० २४४ ।

माँहि^१—अव्य० [हिं०] दे० 'माँह' ।

माँहिला^१—अव्य० [हिं० माँहि] मध्य का । भीतरी । उ०—जिम दरिया मतगुर चवै, देख माँहिला भाव ।—दरिया०, वानी, पृ० ४ ।

माँही^१—अव्य० [सं० मध्य] दे० 'माँह' ।

माँहें, माँहैं^१—अव्य० [हिं०] 'माँह' । उ०—मायारा आडवर माँहें वदा केम बँवारणो ।—रघु० रू०, पृ० १६ ।

माँहोमाँहि^१—अव्य० [हिं० माँह] बीचोबीच । उ०—मिश्रत माँहो माँहि मिल, वाँचँ उक्त विशेष ।—रघु० रू०, पृ० ४८ ।

मा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ लक्ष्मी । उ०—सिधु सुता मा इदिरा विण्णुवल्लभा सोइ ।—अनेकार्थ० (शब्द०) । २ माता । ३ ज्ञान । ४ दीप्ति । प्रकाश । ५ माप । (को०) ।

मा^२—सर्व० न । नहीं । मत ।

यौ०—मानाय । माप । मापति = दे० 'माप' । मावर = विष्णु ।

माअनी—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] तात्पर्य । मतलब । अर्थ । उ०—अब मैं कबीर के माअनी अरबी में प्रगट करता हूँ ।—कबीर म०, पृ० ४२० ।

माई, माई^१—अव्य० [सं० मध्य, हिं० माँयें, माँहि] 'माँह' । उ०—(क) सो ब्रह्म वतायो गुरु आप माई ।—रामानन्द०, पृ० ८ (ख) पावक देख डरे वह नाही हँसत बैठ सरा माई ।—कबीर श०, भा०, १ पृ० ३५ । (ग) पट मास माई मिले साई अचल पाई वाम ए ।—राम० धर्म० पृ० २५७ ।

माई, माई^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृ] छोटा पुत्रा जिससे विवाह में मातृपूजन किया जाता है ।

मुहा०—माईन में थापना = पितरों के समान आदर करना ।

उ०—जो ली ही जीवन मर जीवो सदा नाम तुव जपिहीं ।
दधि श्रोदन दोना करि दैहीं अरु माईन मे थपिही।—
सूर (शब्द०) ।

माई, माई^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] पुत्री । लडकी । कन्या ।

माई, माई^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मामा] मामा की स्त्री । मामी ।

माई^५—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृ] दे० 'माई' । उ०—(क) तव
पूछियो रघुराड । सुख है पिता तन माइ ।—केशव (शब्द०) ।
(ख) मेरे गुरु को धनुष वह सीता मेरो माइ ।—केशव (शब्द०) ।
२ सखी । उ०—भल भेल माइ हे कुदिवम मेला । चाँद कुमुद
दुहु दरसन भेल ।—विद्यापति, पृ० २८२ ।

माइक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] ध्वनिविस्तारक यंत्र । अंगरेजी के माइक्रो-
फोन शब्द का बोलचाल में सञ्चित रूप ।

माइका^१—सञ्ज्ञा पुं० [म० मातृ + गृह] स्त्रियों के लिये उसके माता
पिता का घर । नहर । उ०—(क) और ता माहि सबै सुख
री दुख री यहै माइके जान न दत ह । पन्नाकर (शब्द०) ।
बैठी हुती तिय माइके में समुरारै को काहू सदस सुनायो ।—
मातिराम (शब्द०) ।

माइका^२—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] अवरक । अभ्रक ।

माइन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ खान । २ वारुद की सुरग ।

माइना^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मानी] अर्थ । अभिप्राय । उ०—दोय हरफ
म माइना सवही वेद पुरान ।—दरिया० बाना पृ० ४३ ।

माइनारिटो—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १. अल्प सख्या । श्राव से कम
सख्या । २ वह पाटा या दल जिसके वाट कम हो ।

माइल^५—वि० [अ०] आकापित । आसक्त । प्रवृत्त । उ०—मुरली
वाले न माइल काता दारु दरसन पावा ।—धनानंद
पृ० ४३२ ।

माई^६—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मातृ] १ माता । जननी । मा ।

यी०—माई का लाल = (१) उदार चित्तवाला व्याक्त । उ०—
क्या । फर काइ देवनदन जसा माई का लाल न जनमंगा ।—
अयोध्या (शब्द०) । (२) वीर । शूर । बली । शक्तवान ।
उ०—(क) क्या एभा काई माई का लाल नहो ह जो मुझका
इनके हाथी स बचाव ।—अयोध्या (शब्द०) । (ख) एक वार
एक पजावी हाजा को बद्धुआ न घर लया । उसने अपना
कमर से रुपय निकालकर सामने रख दिए और ललकार कर
कहा कि कोई माई का लाल हो, तो इसे मेरे सामने से ल
जाय ।—सरस्वती (शब्द०) ।

२. बूढी या बड़ी स्त्री के लिये आदरसूचक शब्द । उ०—(क) सत्य
कहौ मोहि जान दे माई ।—तुलसा (शब्द०) । (ख) कहाँ भूठ
फुरि बात बनाई । त प्रिय तुमाँह करुइ म माई ।—तुलसी
(शब्द०) । (ग) सोय स्वयवरु माई दाऊ भाई आए देखन ।—
तुलसी (शब्द०) । ३ महामाया । भगवती । देवी । ४
शीतला । चेचक । माता । उ०—हेतुआ के चेहरे पर माई की
गोटी के दाग थे ।—नई०, पृ० ३४ ।

माई^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष जिसका फल माजू से
मिलता जुलता होता है और जिसका व्यवहार प्राय हकीम लोग
श्रोणवि के रूप में करते हैं ।

माई लार्डे—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] लाटो तथा हाइकोर्ट के जजों को
सवाधन करने का शब्द । जैसे,—माई लार्ड, आपका इस बात
का बड़ा अभिमान है कि अंग्रेजों में आपकी भाँति भारतवर्ष के
विषय में शासननीति समझनेवाला और शासन करनेवाला
नहीं है ।—बालमुकुद (शब्द०) ।

माउट पुलिस—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० माउटेड पुलिस] घुडसवार पुलिस ।

माउल्लहम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] हिंमत्त में मास का बना हुआ एक
प्रकार का अरक जो बहुत अधिक पुष्टकारक माना जाता है
और जिसका व्यवहार प्राय जाड के दिनों में शरीर का बल
बढ़ाने के लिये होता है ।

माकद—सञ्ज्ञा पुं० [माकन्द] १ आम का वृक्ष । २ द० 'मानकद' ।

माकदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माकन्दा] १ आँवला । २ पाला चदन ।
३ महाभारत काल के एक गाव का नाम ।

विशेष—युष्ठाष्टर ने दुर्योधन से जो पाँच गाव माँग थे, उनमें से
एक यह भी था ।

माकर—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माकरी] १ मकर से सञ्चित ।
२ मकर का ।

यी०—माकराकर = समुद्र । मकराकर । माकरभ्यूह = सेना की
मकर के रूप में व्यवहृत स्थिति । मकरासन = द० 'मकरासन' ।

माकरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मरुआ ।

माकरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] माष शुक्ला सप्तमी जो एक पुण्यतिथि
मानी जाती है ।

माकल—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] इद्रायन नाम की लता ।

माकाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चंद्रमा । २ इद्र क मारयी मातल का
एक नाम ।

माकूली—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का साँप ।

माकूल^१—वि० [अ० माकूल] १. उचित । वाजव । ठीक । २
लायक । योग्य । उ०—मुहारेर भी आपका बहुत ही माकूल
मिल गए ह ।—प्रमथन०, भा० २, पृ० ६४ । ३ यथष्ट । पूरा ।
४ अच्छा । बढिया । ५ जसने वादीववाद में प्रतपज्ञा की
बात मान ली हो । जा निरुत्तर हो गया हो । ६ मन्थ ।
शिष्ट (को०) । ७ शुद्ध (को०) ।

माकूल—सञ्ज्ञा पुं० तकशास्त्र । न्याय दर्शन [को०] ।

माकूलियत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० माकूलियत माकूलियत] १.
श्रीचर्य । माकूल होने का भाव । २ शिष्टता । सज्जनता ।
३ उत्तमता । अच्छाई [को०] ।

माकूली—वि० [अ० माकूली] न्यायिक । न्यायशास्त्र का ज्ञाता [को०] ।

माकूस—वि० [अ०] १. उलटा । शीघ्र । २ विपरीत [को०] ।

मात्तिक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. शहद । मधु । २. सानामक्खी ।
३. रूपामक्खी ।

माक्षिक^१—वि० (मधु की) मक्खियो से मवधित या मक्खियो का ।
 माक्षिकज—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मोम ।
 माक्षिकधातु—सञ्ज्ञा पु० [सं०] स्वर्णमाक्षिक । सोनामक्खी [को०] ।
 माक्षिकफल—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का नारियल [को०] ।
 माक्षिकशर्करा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मधु मे निर्मित मिसरी [को०] ।
 माक्षिकात—सञ्ज्ञा पु० [सं० माक्षिकान्त] माघवी नामक मद्य ।
 महुए की शराव ।
 माक्षिकाश्रय—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मोम ।
 माक्षीक^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ मधु । शहद । २ सोनामक्खी ।
 ३ रूपामक्खी ।
 माक्षीक—वि० ३० 'माक्षिक' ।
 माख^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माखी] यज्ञ मवधी । यज्ञीय । यज्ञ
 या मख का [को०] ।
 माख^२—सञ्ज्ञा पु० [सं० मत्त] १ अप्रसन्नता । नाराजगी । नाखुशी ।
 क्रोध । रिम । उ०—(क) देखेउँ आय जो कछु कपि भाखा ।
 तुम्हरे लाज न रोस न माखा ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) लीबे
 को लाख करै अभिलाप करै कहु माख परे कवहुँ हँसि ।—वेनी
 (शब्द०) । २ अभिमान । घमड । ३ पछतावा । ४ अपने
 दोष को ढकना ।
 माखन—सञ्ज्ञा पु० [हि०] 'मक्खन' । उ०—(क) माखन ते मन
 कोमल है यह वानि त जानति कौन कठोर है ।—आनदधन
 (शब्द०) । (ख) ता खिन ते इन आखिन ते न कढो वह माखन
 चाखनहारो ।—पद्माकर (शब्द०) । (ग) माखन सो मेरे मोहन
 को मन काठ सी तेरी कठेठी ये वातै ।—केशव (शब्द०) ।
 यौ०—माखनचोर = श्रीकृष्ण ।
 माखना^१—क्रि० अ० [हि० माख से नामिक] अप्रसन्न होना ।
 नाराज होना । क्रोध करना । उ०—(क) अत्र जनि कोउ माखइ
 भट मानी । वीरविहीन मही मैं जानी ।—तुलसी (शब्द०) । (ख)
 माख नखन कुटिल भई भौहैं । रदपुट फरकत नैन रिसीहैं ।—
 तुलसी (शब्द०) । (ग) पत्र सुनत रतनावती मुहन कीन्ही
 केश । सुनत माखि मारन चह्यी रतनावतिहि नरेश ।—रघुराज
 (शब्द०) । (घ) कळू न थिरता लहै छनक रीकै छन
 मारै ।—व्याम (शब्द०) ।
 माखनी—वि० [हि० माखन + ई] मक्खन के रग का । सफेद ।
 उ०—वटन रोज बहु लाल, ताम्र माखनी रग के कोमल ।
 —ग्राम्या, पृ० ७६ ।
 माखा^१—सञ्ज्ञा पु० [हि० माखी] मक्खी का पुलिंग । नर मक्खी ।
 उ०—वा माखी के माखा नाही गरम रहा विन पानी ।—
 पट०, ३५६ ।
 माखी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माक्षिक] १ मक्खी । उ०—(क)
 दूध की माघ उजागर वीर मो हाय मैं आखिन देखत
 खाई ।—ठाकुर (शब्द०) । (ख) चदन पास न बैठे माखी ।—
 जायमी (शब्द०) । (ग) भामिनि भयउ दूध कर माखी ।—
 तुलसी (शब्द०) ।

२ सोनामक्खी ।

माखी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मक्खी] शहद की मक्खी । (पश्चिम) ।
 माखी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुख ? या देश०] लोगो मे फलनेवाली
 चर्चा । जनरव ।
 मागध—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ एक प्राचीन जाति जो मनु के अनुसार
 वैश्य के वीर्य से क्षत्रिय कन्या के गर्भ से उत्पन्न है । इस जाति
 के लोग वशक्रम से विरुदावलो का वर्णन करते हैं और प्रायः
 'भाट' कहलाते हैं । उ०—(क) मागध बदी सुत गया विरद
 बर्दाहि मति धीर ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) मागध
 वशावली बखाना ।—रघुराज (शब्द०) । २ जरासध का एक
 नाम जो मगध का नरेश था । उ०—मागध मगध दश ते आयो
 लीन्हे फीज अपार ।—सूर (शब्द०) । ३ जीरा । ४
 पिप्पलीमूल ।
 मागध^२—वि० [सं० मगध] मगध दश का ।
 मागधक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ मागध । भाट । २ मगध देश
 का निवासी ।
 मागधपुर—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मगध की पुरानी राजधानी, राजगृह ।
 मागधा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मगध की राजकुमारी । २ पिप्पली ।
 मागधिक—वि० [सं०] मगध देश मवधी । मगध का ।
 मागधिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पिप्पली । पीपल । २ मगध की
 राजकुमारी ।
 मागधी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मगध देश की प्राचीन प्राकृत भाषा ।
 २ जूही । यूथिका । ३ शक्कर । चीनी । ४ छोटी पीपल ।
 पिप्पली । ६ सुफेद जीरा (को०) । ७ एक नदी का नाम ।
 शोणा नदी (को०) । ८ मगध की राजकन्या (को०) । ९ मागध
 जाति को महिला (को०) ।
 मागरवाल^१—वि० [हि० मोगना + वाल (प्रत्य०)] मांगनेवाला ।
 उ०—मागरवाल जू आदिया देमे मान्ह मुजाण । ढोलां,
 दू० १८४ ।
 मागि^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० मार्ग, प्रा० मग्ग, माग] दे० 'मग' ।
 उ०—उक्कवी मिर हृथ्यडा, चाहती रस लुध्ध । अँची चढि
 चातृगि जिउं, मागि निहालइ मुध्ध ।—ढोलां, दू० १६ ।
 माघ—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ ग्यारहवाँ चाद्र मास जो पूम के बाद और
 फागुन से पहले पडता है । उ०—माघ मकर गत रवि जब
 होई । नीरथपतिहि आव सब कोई ।—तुलसी (शब्द०) । २
 संस्कृत के एक प्रसिद्ध कवि का नाम । ३ उपर्युक्त कवि का
 बनाया हुआ एक प्रसिद्ध काव्यग्रन्थ जिमसे कृष्ण द्वारा शिशुपाल
 का वध वर्णन किया गया है ।
 माघ^२—सञ्ज्ञा पु० [सं० माघ्य] कुद का फूल । उ०—मुसुकान कर्दाहि
 रद माघ से फाल्गुन मो जोधा महत ।—गोपाल (शब्द०) ।
 माघवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पूर्व दिशा ।
 माघी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माघ + ई] माघ मास की पूर्णिमा जो मघा
 नक्षत्र से युक्त होती है । कहते हैं कि कलियुग का आरंभ इसी
 तिथि को हुआ था ।
 माघी^२—वि० माघ का । जैसे, माघी मिर्च ।

माघीन—सज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० माघीनी] पूर्व दिशा ।

माध्य—सज्ञा पुं० [सं०] कुद का फूल ।

माच^(५)—सज्ञा पुं० [सं० मञ्च] १. 'मचान' । उ०—जत्र यदुपति कुल कमहि मारथो । तिहूँ भुवन भयो सोर पमारथो , तुरत माच तें धरनि गिरायो । ऐमेहि मारत बिलम न लाया ।—सूर (शब्द०) ।

माच^२—सज्ञा पुं० [सं०] मार्ग । रास्ता ।

माचना^(५)—क्र० म० । हि० मचना] दे० 'मचना' । उ०—(क) इमि मगर माचत भयो मधुवन के सत्र शोर ।—गोपाल (शब्द०) । (ख) द्वादस दिवस चहुँ दिसि माच्यो फागु सकल ब्रज मांझ ।—सूर (शब्द०) । (ग) बर्दा कौसल्या दमि प्राची । कौरते जामु सकल जग माचा ।—तुलसी (शब्द०) । (घ) कहँ पदमाकर त्यो तिनको अवाहन के, माचि रहँ जार सुरलोकन मे सोर है ।—पद्माकर (शब्द०) ।

माचल^(५)—वि० [हि० मचलना] १. मचलनेवाला । जिद्दी । हठी । उ०—महा माचल मारिवे की मकुच नाहिन माहि । परथी हौँ प्रण किए द्वारे लाज प्रण की तोहि ।—सूर (शब्द०) । २. मचला ।

माचल—सज्ञा पुं० [सं०] १. ग्रह । २. राग । वीमारो । ३. बदी । कंदी । ४. ग्राह (को०) । ५. चार ।

माचा^१—सज्ञा पुं० [सं० मञ्च] बैठने की पीढी जो खाट की तरह बुनी होती है । बड़ी मचिया ।

माचिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. मक्खी । २. अमडे का वृक्ष ।

माचिस—सज्ञा पुं० [अ० मैच] दियासलाई । दियासलाई की तीली । उ०—इसी तरह सेमल की लकड़ी से माचिस बनाने व विभिन्न प्रकार के खिलौने तैयार करने, वांस से टोकनियाँ व चटाइयाँ आदि बनाने के कुटीर उद्योग राज्य के हजारों विधोद्रेत ग्रामों मे पाए जाते हैं ।—शुक्ल० अभि० ग्र०, पृ० ७५ ।

माची^१—सज्ञा स्त्री० [सं० मञ्च] १. हल जोतने का जुआ । वह जुआ जो हल जोतते समय बँलो के कचे पर रखा जाता है । बँलगाडी मे वह स्थान जहाँ गाडीवान बँठता और अपना सामान रखता है । ३. बैठन की वह पीढी जो खाट की तरह बुनी हुई होती है ।

माचीक—सज्ञा पुं० [सं०] देवदार ।

माचीपत्र—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साग जिसे मुरपर्ण भी कहते हैं ।

माछी^१—सज्ञा पुं० [सं० मत्स्य० प्रा० मच्छ] मछली । उ०—चारा मेलि घरा जस माछू ।—जायसी (शब्द०) ।

माछर^१—सज्ञा पुं० [हि० मच्छर] १. 'मच्छर' ।

माछर^२—सज्ञा पुं० [सं० मत्स्य] दे० 'मछली' । उ०—वह कैलाश इद्र कर वासू । जहाँ न अन्न न माछर मांसु ।—जायसी (शब्द०) ।

माछी^१—सज्ञा स्त्री० [सं० मच्छिका] १. मक्खी । उ०—काँचो रोटी

कुचकुची परती माछी वार । फूहर वही मराहिए परसत टपकै लार । गिरधर (शब्द०) । विशेष दे० 'मछिया' ।

माछी^१—सज्ञा स्त्री० [सं० मत्स्य] मछली । (वच०) ।

माजरा—सज्ञा पुं० [अ०] १. हाल । वृत्तात । २. घटना ।

माजल—सज्ञा पुं० [सं०] चाम पत्ती (को०) ।

माजी—वि० [अ० माजी] बीता हुआ काल । अतीत समय । भूतकाल । उ०—सुखन मूँ होवे वाजे माजी व हाल । गुजश्न्या का ममाज मे आवे अहवाल ।—दक्खिनी०, पृ० २३६ ।

माजू—सज्ञा पुं० [फ्रा०] एक प्रकार का भाँडो जो यूनान और भारत आदि देशों में बहुतायत से होती है ।

विशेष—इसको आकृति मरो की सी हाती है । इसकी डालियों पर से एक प्रकार का गोद निकलता है जो 'माजूफल' कहलाता है और जिसका व्यवहार रंग तथा ओपचि के लिये होता है ।

माजून—सज्ञा स्त्री० [अ०] १. औषधक रूप में काम आनेवाला कोई मीठा अदलेह । २. वह बरफी या अदलेह जिसमें भाँग मिली हो ।

यौ०—माजूनरुश = माजून निकालने की सुर्वनी आदि ।

माजूफल—सज्ञा पुं० [फ्रा० माजू + हि० फल] माजू नामक भाँडो का गोटा या गोद जो ओषध तथा रँगई के काम में आता है ।

पर्या०—मायाफला । माईफल । सागरगोटा ।

माजूर—वि० [अ० माजूर] १. जिसे किसी सेवा या परिश्रम का फल दिया गया हो । प्रतिफलित । २. असमर्थ । लाचार । विवश । उ०—बेचारी आँखों से माजूर हो गई थी ।—रंगभूमि, भा० २, पृ० ७०४ ।

माझ—वि० [सं० मध्यस्थ ? या माध्यक ?] १. मुखिया । मुख्य । उ०—(क) अरी ढाहि ढहीरि माझी कनक्के ।—पृ० रा०, ६१।२।७६ । (ख) माझी वर मरदान मान मरदा मिलि तोरन ।—पृ० रा०, ६१।२०७७ । (ग) माझी खिराक मिजाज, वे अदवी तारुँ विसन ।—वांकी० ग्र०, भा० १, पृ० ६२ । २. मध्यस्थ । उ०—सँवरि रक्त नैनिहि भरि चूआ । राई हँकारेसि माझा सूआ ।—जायसी ग्र०, पृ० ६६ ।

माटक—सज्ञा पुं० [सं० माटङ्क] नमक का बाजार । नमक की हाट (को०) ।

माट'—सज्ञा पुं० [हि० मटका] १. मिट्टी का बना हुआ एक प्रकार का बड़ा बरतन जिसमें रंगरेज लोग रंग बनाते हैं । इसे 'मठोर' भी कहते हैं । २. माठ । मिट्टी का बहुत बड़ा बरतन, जिसमें किसान लोग अन्न भरते हैं ।

मुहा०—माट विगड़ जाना = किसी के स्वभाव का ऐसा विगड़ जाना कि उसका मुवार असभव हो ।

२. बड़ी मटको जिसमें दही रखा जाता है । उ०—(क) सिर दधि माखन के माट गावत गीत नए । कर मांझ मृदग वजाइ सब नंद भवन गए ।—सूर (शब्द०) । (ख) एक भूमि ते भाजन बहु विधि कुडा करवा हडिया माट ।—सुंदर ग्र०, भा० १, पृ० ७३ ।

माटि—सजा पुं० [शब्०] एक प्रकार की वनस्पति जिगका व्यवहार तरकारी के रूप में होता है।

माटा—सजा पुं० [हि० मटा] लान चूँटा जिगके भुज में भुज पत्ता के आक में ग्राम के पेड़ों पर रहते हैं।

माटि—सजा पुं० [म०] कच। अनुशास (को०)।

माटी(पु) —सजा स्त्री० [सं० मृत्तिका, हि० मिट्टी] १ '० मिट्टी'। २ साल भर का जोतार्ई या उमारी महनत। जन्म,—यह उन चार माटी का बला है। ३ मृत शरीर। शत्रु। लक्षण। उ०—(क) कहना मुनता दयता, लेता दता प्राण। सद् मो पतुं गया, माटी बरी ममान।—शू (शब्द०)। (ख) मरनो भनो विदग ता जहा न श्रवना कथ। माटा ताय जावरस मटा मटाक्षर हाथ।—कवीर (शब्द०)। ४ शरीर। दह। उ०—तान आइ शिगरा माटा। उठ जिउ चना टाडि के माटी—जायमी (शब्द०)। ५ पाच तत्वा क श्रतर्मत पृथ्वी नामक तत्त्व। उ०—पानी पवन प्राण अरु माटा। मय ती पीठ नोर ह माटी।—जायमी (शब्द०)। ६ धूल। रज। उ०—(ग) गड गार फूट भए सब माटी। दन्नि हराय तटा ता चांटा।—जायमी (शब्द०)। (घ) मटो माटी मग हू की मृगदर पाव जू। बुनमी (शब्द०)। (घुटां न तिये '० 'मिट्टी')।

माठि—सजा पुं० [सं०] माग। पव। मउर (को०)।

माठि—सजा पुं० [हि० मीठा] एक प्रकार की मिठाई। उ०—भद जो मिठाई कही न जाई। सुय मेनत मत जाय बिगाड। मत्तव छान और मरकोरी। माठ पिरांर और बुंभीरी।—जायमी (शब्द०)।

विशेष—मंद की एक मोटी और बड़ी पुरी पकाकर ज्वर के पाग में उसे पाग लेते हैं। इसी को माठ कहा है। यहाँ मिठाई जब छोट्टे आकार में बनाई जाती है, तब उसे 'मठरी' या 'टिकिया' कहते हैं। मठी नगकीन भी बनाई जाती है।

माठि—सजा पुं० [हि० मटकी (सं० मात्त)] मिट्टी वा पात्र जिगमें कोई तरल पदार्थ भरा जाय। मटकी। उ०—(क) मानो मजीठ की माठ ढगी इक और ते चांदनी वाग आवत।—जशु तपि (शब्द०)। (ख) धरत जहा ही जहाँ पग है गुप्यागी तहाँ, मबुन मजीठ ही की माठ मी धरत आवत।—पद्माकर (शब्द०)। (ग) स्वामिदसा लखि लखन मभा कपि पघिने हूँ श्राव माठ मानो धिय के।—तुलसी (शब्द०)। (घ) दूट कय गिर परे तिरारे। माठ मंजीठ जानु रखा धारे।—जायमी (शब्द०)।

विशेष—कविता में यह शब्द प्रायः स्तौत्रिक ही मिलता है।

माठी^४—वि० [सं० मष्ट, प्रा० मष्ट] मोन। दे० 'मष्ट'। उ०—(क) रह रह, सुदरि, माठ करि, हलफन लग्यो काइ।—ढोला०, दू० ३२१। (ख) काइ लखतउ माठि करि परदेशी प्रिय श्रांशि।—ढोला०, दू० ३४।

मुहा० माठ करना = दे० 'मष्ट' शब्द का मुदावरा।

माठर—सजा पुं० [म०] १ सूर्य के एक पारिपार्श्वक जो यम माने जाते हैं। २ व्यासदेव का नाम। ३ ब्राह्मण। ४ कलाल। ५ एक गीम का नाम (को०)।

माठा^१—सजा पुं० [हि०] '० 'मट्टा' वा 'मटा'।

माठा^२—सजा पुं० [हि०] प्रगण। कंत्रम।

माठी^१—सजा स्त्री० [शब्०] एक प्रकार की वनस्पति जो वन में, प्रायः और उन्नत प्रकृत में प्रचलित होती है। आशुतल यह वनस्पति वन में पाई जाती है। उ०—सूर प्रभु की श्रामर श्रतिरी नई भय री, वन चति मडि शृगा माडि माठी गग वाग आरि पाज।—मग (शब्द०)।

माठी^२—सजा पुं० [म०] दय।

माठी^३—सजा पुं० [म०] पुत्र पाप का पाप ही का पुत्र। मठपा। एक प्रकार का पाप जो कि म पाप का नाम है।

माठी^४—सजा पुं० [म०] सग।—शब्द० २०, पृ० १०७।

माठू—सजा पुं० [म०] १ बर। माता। २ सुर्ग। (परिचय)।

माडू^१—सजा पुं० [म०] १ सजा की जात का एक पद। २ नाव।

माडू^२—सजा पुं० [सं० मरु] दे० 'माट'।

माडना(पु)^१—सजा पुं० [सं० मरु] ठाना। मनाया। मना। उ०—(क) तिराग मुदाव का रण मन म नरो जग पतिवद मा तुड माया।—सूर (शब्द०)। (ख) मनुदा य विरह श्रु श्रि नित माता गार। तन्मायाधि धर माटि मगद धरतो मरुद शिगर।—सूर (शब्द०)। (ग) तात तन्नि मुदाव धव रमाति ता म्मा माटि।—सूर (शब्द०)। (घ) ही सुम ता फिर मुदाव माटी। तपित वन वा रन न छटो।—केना (शब्द०)। (ङ) माताय मा माट्यो नाभि मुद मे।—देव (शब्द०)।

माडना^२—सजा पुं० [सं० मरु] १ मंडित पात्र। पूजित पात्र। २ वाग्य पात्र। पराया। उ०—तय मातन छाया पूराग माडा ताई तपित वयाय।—केना (शब्द०)। ३ आदर पात्र। पूजा। उ०—ताते म्म पराज भरे पुव छाटा। सूदव मनाउपन प पर माटी।—केना (शब्द०)।

माडना^३—सजा पुं० [सं० मरु] १ मंडित करना। परं ता हाथ में मसलाता। मलना। उ०—काउ काजर बाउ बदन माडतो टपटि करीट कातन।—सूर (शब्द०)। २ धूनना। फरना। उ०—उठा वस्तु फिर ताहा त छोट। माया ता सब क पर माटि।—विशाम (शब्द०)।

माडनि(पु)^१—सजा पुं० [हि० माडना] माडना का भाव या सति। उ०—दाको माडनि मठ रही, चहुँ दिग रोनि वाट।—कवीर शब्०, भा० २, पृ० १२६।

माडल^१—सजा पुं० [सं० मडल] १ आदत। प्रतिरूप। प्रतिमान। २ आकार। आर्त। नक्शा। डांचा। साका। ३ अनुकरणीय व्यक्ति या वस्तु।

माडव^१—सजा पुं० [सं० मरु] दे० 'माठी' वा 'मडप'।

माडव^२—सजा पुं० [सं० मडव] एक वखलकर जाति जो पुराणनुसार लेट पिता और तीवर माता के गर्भ से उत्पन्न है।

माडां—वि० [सं० मन्द] १ खराप । निकम्मा । २ दुबला । दुर्बल । (पश्चिम) । ३ वीमाग । रोगी (पश्चिम)

माडि—सज्ञा पु० [सं०] प्रासाद । महल [को०] ।

माडुक, माडुकिक—सज्ञा पु० [सं०] नगाडा बजानेवाला । ढोल बजानेवाला ।

माडौं—सज्ञा पु० [सं० मण्डप] १ विवाह का मंडवा । दे० 'मडप' । उ०—रवि रवि मानिक माडौं छार्वाह ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० ३०७ । २ घूप और हवा के तीखे भोके से बचाव के लिये पान के भीटे के ऊपर वांस, फूप आदि का मडप । पान का बंगला । विशेष दे० 'पान' । उ०—पानवाडी की दीवारें जिनको टट्टी कहते हैं बहुत मोटी बनाई जाती है ताकि अदर हवा न जा सके, लेकिन छत जिसे माडी कहते हैं बहुत हलकी बनती है ।—कृपि०, पृ० १८२ ।

माडा①—सज्ञा पु० [सं० मण्डप] १ अटारी पर का वह चौवारा जिसकी छत गोल मडप के आकार की हो । २. अटारी पर का चौवारा (चाहे वह किसी बनावट का हो) । उ०—को पलग पीढे को माडे । सोवनहार परा बंद गाडे ।—जायसी (शब्द०) ।

माडा②—सज्ञा पु० [हि० महना, मथना] दे० 'मठा' ।

माडी①—सज्ञा स्त्री० [हि० मडी] दे० 'मडी' । उ०—अंगिया वनी कुचन सो माडी ।—सूर (शब्द०) । २ मच । मचिया ।

माडी②—सज्ञा स्त्री० [सं० माडि, माडी] १ दांतों का मूल । २ पखडी या पत्ते जो पूरी तरह फूले न हों (को०) । ३ विपाद । विपरणता (को०) । ४ दरिद्रता । गरीबी । निर्धनता (को०) । ५ क्राध । कोप । अमर्ष (को०) । ६ वस्त्र का किनारा वा अचल (को०) ।

माडू—सज्ञा पुं० [देश०] मनुष्य । उ०—माडू ज्योग मारजै, पीहरा जिकां पडत । बांकी ग्र०, भा० १, पृ० २३ ।

माणक—सज्ञा पुं० [सं०] मानकद ।

माणतु डिक—सज्ञा पुं० [सं० माणतुडिक] एक प्रकार का जनचर पत्नी ।

माणव—सज्ञा पुं० [सं०] १ मनुष्य । आदमी । २ बालक । बच्चा । ३ सोलह लडी का हार । ४ छोटा आदमी । क्षुद्र नर । छोकाडा । (तिरस्कार सूचक) ।

माणवक—सज्ञा पुं० [सं०] १ सोलह वर्ष की अवस्थावाला युवक । २ बीस या सोलह लडी का हार । ३ विद्यार्थी । बटु । ४ निदित या नीच आदमी । छोटा आदमी (उपेक्षासूचक) । ५ मूर्ख व्यक्ति । ६ एक छद । माणवक्रीडा ।

माणवक्रीडा—सज्ञा पुं० [सं० माणवक्रीडा] एक वर्णाश्रित जिनके प्रत्येक पद में आठ वर्ण (एक ऋण, एक तगण और दो लघु) होते हैं ।

माणवविद्या—सज्ञा स्त्री० [सं०] कीटित्य अर्थशास्त्र के अनुसार जादू टोना । जय मंत्र की विद्या ।

माणविका—सज्ञा स्त्री० [सं०] वाला । किशोरी । वानिका [को०] ।

माणवीन—वि० [सं०] माणव सदधी । बालको का । बच्चो की तरह ।

माणव्य—सज्ञा पुं० [सं०] वातको का समूह । शिशुसमूह । बच्चो का भुड या गोल ।

माणस—सज्ञा पुं० [सं० मानुष, प्रा० माणस, अण०, राज० माणस] मनुष्य । व्यक्ति । उ०—मालवणी का माणसां, आण मित्या अजाण ।—ढोला०, दू० १८५ ।

माणिक—सज्ञा पुं० [सं०] जीहरी । रत्नो का पारखी [को०] ।

माणिक—सज्ञा पुं० [सं० नाणिक्य] दे० 'माणिक्य' । उ०—परि-पूरण सिद्धूर पूर कैंधी गगल घट । किधीं गरु को छत्र मळ्यो माणिक मयूत्र पट ।—केशव (शब्द०) ।

माणिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक तौल जो आठ पल की होती है ।

माणिक्य—सज्ञा पुं० [सं०] १ लाल रंग का एक रत्न जो 'लाल' कहलाता है । पद्मराग । चुन्नी । विशेष—दे० 'लाल' । उ०—अनेक राजा गणो के मुकुट माणिक्य से सर्वदा जिनके पदतल लाल रहते हैं, उन महाराज चद्रगुप्त ने आपके चरणो में दडवत करके निवेदन किया है ।—मुद्राराक्षस (शब्द०) ।

पर्या०—रवित्त्वक । शृ गारी । रगमाणिक्य । तरुण । रत्न-नयक । रत्न । सँगधिक । लोहितिक । कुरुविंद ।

२ भावप्रकाश के अनुसार एक प्रकार का केला ।

माणिक्य—वि० सर्वश्रेष्ठ । शिरोमणि । परम आदरणीय । उ०—नृप माणिक्य मुदेश, दक्षिण तिय जिय भावती । कटि तट सुपट मुदेश, कल कांची गुम मडई ।—केशव (शब्द०) ।

माणिक्या—सज्ञा स्त्री० [सं०] छिपकली ।

माणिक्य ध—सज्ञा पुं० [सं० माणिक्यध] मेंधा नमक ।

माणिक्य मथ—सज्ञा पुं० [सं० माणिक्यमथ] मेंधा नमक ।

मातग—सज्ञा पुं० [सं० मातङ्ग] १ हाथी । २ श्वपच । चाडाल । उ०—मदमत्त यदपि मातग सग । अति तदपि पतित पादन तरग ।—केशव (शब्द०) ।

विशेष—इस उदाहरण में श्लेष से यह शब्द दोनों अर्थों में प्रयुक्त है ।

३ एक ऋषि का नाम ।

विशेष—ये शिवरी के गुरु और मातंगी देवी के उपासक थे । ये मौन रहा करते थे, इसीलिये जिन पर्वत पर ये रहते थे, उनका नाम ऋष्यमूक पड गया था ।

४ अश्वत्थ । ५ भवर्तक मेघ का एक नाम । ६ पर्वतवामी किरात । ७ एक नाग का नाम ।

मातगज—सज्ञा पुं० [सं० मातङ्गज] हाथी । हस्ती [को०] ।

मातगडिवाकर—सज्ञा पुं० [सं० मातङ्गडिवाकर] एक कवि का नाम ।

मातगनक—सज्ञा पुं० [सं० मातङ्गनक] एक प्रकार का बहुत बड़ा कुभीर (जलजंतु) ।

मातगमकर—सज्ञा पुं० [सं० मातङ्गमकर] विज्ञानकाव कुभीर । मातगनक ।

- मातगलीला**—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातङ्गलीला] चिकित्सा संबंधी एक ग्रंथ (को०) ।
- मातग्री**—सञ्ज्ञा स्त्री० [उ०] १ कश्यप की एक कन्या ।
विशेष—कहते हैं, हाथी इमी से उत्पन्न हुए थे ।
२ तांत्रिकों के अनुसार दम महाविद्याओं में से नवी महाविद्या ।
३ वशिष्ठ ऋषि का पत्नी का एक नाम (को०) । ४ श्वपच-कन्या । चाडाल की कन्या (को०) ।
- मात'**—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृ] १ जननी । माता । उ०—तात को न मात को न आत को कहा कियो ।—पद्माकर (शब्द०) ।
२ कोई पूज्य या आदरणीय बड़ी महिला । उ०—को जान मान विभक्तो पीर । मौलि को साल साल सररीर ।—शृ० रा०, १ । ३७५ ।
- मात^३**—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] पराजय । हार । उ०—रविकुल रवि प्रताप के आगे रिपुकुल मानत मात ।—राधाकृष्णदास (शब्द०) ।
क्रि० प्र०—करना । देना ।
- मात^३**—वि० [अ०] पराजित । उ०—(क) तुव दग मतरंज बाज सो मेरो वम न वमात । पातपाह मन को करै छवि मह देकर मात ।—रमनिधि (शब्द०) । (ख) देख्यौ वादशाह भाव, कू दे पने गहे पाव, देखि करामात मात भए मव लोक है ।—विश्वनाथ सिंह (शब्द०) । (ग) जासो मातलि मात अरु गति जाति सदा रुक ।—गोपाल (शब्द०) ।
- मात^४**—वि० [सं० मत्त] मदमस्त । मतवाला । (कव०) । उ०—वदन प्रभा मय चंचल लोचन, आनंद उर न ममात । मानहुं भीह जुवा रथ जोते, समि नचवत मृग मात ।—मूर०, १० । १८०५ ।
- माता**—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० माता] माता । परिमाण । उ०—आयो तेजह लै अगुर मेछ परबखण मात ।—रा० ६०, पृ० ३३० ।
- मातदिल**—वि० [अ० मोऽतदिल] मध्यम प्रकृति का । जा गुण के विचार से न बहुत ठंडा हो और न बहुत गरम ।
विशेष—इम शब्द का प्रयोग प्रायः ओषधियों या जलवायु आदि के मवध में होता है ।
- मातना**—क्रि० अ० [सं० मत्त] मस्त होना । मदमत्त हो जाना । नशे में हो जाना । उ०—(क) जो अचवत माताह तृप तई । नाहिन माधु मभा जिन सेई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) पियत जहाँ मधु रसना मातत नैन । भुक्त अतनुगते अवरनि कहत वनै न ।—रहीम (शब्द०) । (ग) साधू रहै लगाए छाता ताहि देखि नृप अमरप माता ।—रघुराज (शब्द०) ।
- मातवर**—वि० [अ० मातवर] विश्वास करने योग्य । विश्वसनीय । जैसे—इन्हे रुपए दे दीजिए, ये मातवर आदमी हैं ।
- मातवरी**—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] मातवर होने का भाव । विश्वसनीयता ।
- मातम**—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ मृतक का शोक । वह रोना पीटना आदि जो किसी के मरने पर होता है । उ०—जब वादशाह मर जाता है, तो मारे मुल्क के आदमी सौ दिन तक मातम रखने हैं और कोई काम खुशी का नहीं करते ।—शिवप्रसाद (शब्द०) ।

यौ०—मातमपुरसी ।

२ किसी दुःखदायिनी घटना के कारण उत्पन्न शोक ।

मातमखाना—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मातम+फा० खाना] मातम का स्थान । वह घर जिममें मृत्युशोक हो ।

मातमपुरसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मातमपुरसी] दे० 'मातमपुरसी' ।
उ०—मियाँ साहब ने मुन्ते ही मिर पीटा, रोए गए, विछोने से अलग बैठे, सोग माना, लोग भी मातमपुरसी को आए ।—भारनेंदु ग्र०, भा० २, पृ०, ६७७ ।

मातमपुरसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] जिमके यहाँ कोई मर गया हो, उसके यहाँ जाकर उसे धारस देने का काम । मृतक के मवधियों को सात्वना देना ।

मातमी—वि० [फा०] १ मातम मवधी । शोकमूचक । जैसे, मातमी पोशाक, मातमी मूरत, मातमी रग । २ मनहूम । अप्रिय । बुरा । उ०—इमो एक बात में इनके मातमी मत की नि सारता झलक पडती ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २७५ ।

मातमी लिवास—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] शोकमूचक पहनावा । काले रंग का कपडा ।

मातमुख—वि० [हिं०] मूर्ख ।

मातरिपुरुष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो केवल घर में अपनी माता आदि के सामने ही अपनी वीरता प्रकट करता हो, बाहर या शत्रुओं के सामने कुछ भी न कर सकता हो ।

मातरिश्वा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातरिश्वन्] १ अंतरिक्ष में चलनेवाला, पवन । वायु । हवा । २ एक प्रकार की अग्नि । अग्नि ।

मातलि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इद्र के सारथी या रथ हाँकनेवाले का नाम । उ०—सुरपति निज रथ तुरत पठावा । हरप सहित मातलि लै आवा ।—तुलसी (शब्द०) ।

यौ०—मातलिसारथि = इद्र । मातलिसूत ।

मातलिसूत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इद्र । उ०—कौशिक वामव वृत्रहा मघवा मातलिसूत ।—नददास (शब्द०) ।

मातली—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार के वैदिक देवता जो यम और पितरों के साथ उत्पन्न माने गए हैं ।

मातहत—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] किसी की अधीनता में काम करनेवाला । अधीनस्थ कर्मचारी ।

मातहती—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मातहत + ई (प्रत्य०)] मातहत या अधीनता में होने का काम या भाव ।

माता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृ] १ जन्म देनेवाली स्त्री । जननी । उ०—जो बालक कह तोतरि वाता । मुनिहि मुनिदत मन पितु अरु माता ।—तुलसी (शब्द०) । २ कोई पूज्य या आदरणीय बड़ी स्त्री । उ०—दूँ द्रव्य कह्यो माता सिधाव ।—पृ० रा०, १।३७६ । ३ गौ । ४ भूमि । ५ विभूति । ६ लक्ष्मी । ७ बेटी । ८ इन्द्रवारी । ९ जटामासी । १० शीतला । चेचक । ११ आखुर्गी (को०) । १२ जाव (को०) । १३ आकाश (को०) । १४ दुर्गा (को०) । १५ शिव वा स्कंद की मातृकाएँ जिनकी मख्या कुछ लोगों के मातानुसार सात है, कुछ के अनुसार आठ और कुछ लोगों के मत में १६ कही गई है ।

माता^२—वि० १ नाप या माप करनेवाला । २ निर्माणाकर्ता । बनाने-
वाला । ३ ठीक ठीक जानकारी रखनेवाला [को०] ।

माता^३—वि० [सं० मत्] [स्त्री० माती] मदमस्त । मतवाला ।
उ०—(क) आठ गांठ कोपीन के साधु न मानें शक । नाम
श्रमल माता रहै गिनै इद्र को रक ।—कबीर (शब्द०) । (ख)
जोर जगी जमुना जलवार मे वाम धमी जन के न को माती ।—
पद्माकर (शब्द०) । (ग) चला मानारि माहाग माहाता । श्री
कलवारि प्रेममद माती । जायमी (शब्द०) ।

मातापिता—सञ्ज्ञा पु० [सं० मातृपितृ] मा बाप ।

मातामह—सञ्ज्ञा पु० [सं०] [स्त्री० मातामही] माता का पिता ।
नाना ।

मातामही—सञ्ज्ञा पु० [सं०] नानी ।

मातृ(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृ] माता । माँ । जननी । उ०—(क)
कवहूँ करताल वजाय कँ नाचन मातु मव मन माद भरे ।—
तुलसी (शब्द०) । (ख) तुलसी प्रभु भजिहँ सभु वनु, भूरि माग
सिय मातु पिती री ।—तुलसी (शब्द०) ।

मातुल—सञ्ज्ञा पु० [सं०] [स्त्री० मातुला, मातुलानी] १ माता
का भाई । मामा । उ० कहीं मत मातुल विभोपण हू वार
वार अचल पसारि पिय पाँय लै लँ ही परी ।—तुलसी (शब्द०)
(ख) भुनि मातुल मुहि तात कहि नित प्रेम बढत ।—पृ० रा०,
६१।५६ । २ धतूरा उ०—ह मृगाल मातुल उभै हूँ कदाल
खभ बिन पात ।—मूर (शब्द०) । ३ एक प्रकार का वान ।
४ एक प्रकार का साप । ५ मदन वृक्ष । ६ सौर वर्ष (को०) ।
यौ०—मातुलपुत्रक = (१) ममेरा भाई । मामा का पुत्र । (२)
धतूरे का फल ।

मातुला, मातुलानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मामा की स्त्री । यामी ।
२ मन । ३ प्रियगु । ४ भाँग ।

मातुलाहि—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का माप ।

मातुली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मामा की स्त्री । यामी । २ भाँग ।

मातुलुग—सञ्ज्ञा पु० [सं० मत्तुलुग] विजोग नीबू ।

पर्या०—मातुलिग । वीजपूरक । मातुलुगक ।

मातुलेय—सञ्ज्ञा पु० [सं०] [स्त्री० मातुलेयी] मामा का लटका ।
ममेरा भाई ।

मातृ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'माता' ।

मातृक—वि० [सं०] माता संबंधी ।

मातृक—सञ्ज्ञा पु० १ माता का भाई । मामा । २ मातृत्व । माता
होने का भाव (को०) ।

मातृकच्छिद्र—सञ्ज्ञा पु० [सं०] पशुराम ।

मातृका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दूध पिलानेवाली दाई । धाय । २
माता । जननी । ३ उपमाता । मौलेनी माता । ४ ताम्रिको की
सात देविया—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, चण्डी, चारही,

इद्राणी और चामुडा । ५ वर्गमाला की चारहूँटी । ६ ठोड़ी
पर की आठ विशिष्ट नमें । ८ पिता की माता । दादी ।
आजी (को०) ।

मातृकाकुण्ड—सञ्ज्ञा पु० [सं० मातृकाकुण्ड] वधक के अनुमार गुदा
का एक फोडा या ब्रण जो बहुत छोटे बच्चों को होता है ।

मातृकेशट—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मामा ।

मातृगधिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृगन्धिनी] १ उपमाता । सीनेली
माता । २ पिता को उपपत्नी ।

मातृगण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'मातृका-४' । उनकी मध्या मतातर
म सात, आठ और १६ कहा गई है ।

मातृगामी—सञ्ज्ञा पु० [सं० मातृगामिन्] वह व्यक्ति जो माता के
साथ व्यभिचार या गमन करे ।

मातृगोत्र—सञ्ज्ञा पु० [सं०] माता का गोत्र या कुल ।

मातृघात, मातृघातक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'मातृघाती' ।

मातृघाती—सञ्ज्ञा पु० [सं० मातृघातिन्] [स्त्री० मातृघातिनी]
मातृहत्या करनेवाला व्यक्ति । माता का हत्यारा (को०) ।

मातृचक्र—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मातृगण । मातृका समूह ।

मातृतीर्थ—सञ्ज्ञा पु० [सं०] हथेलों में सबसे छोटी उगली के नीचे
का स्थान ।

मातृत्व—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ माता होने का भाव । सत्तानवती
होना । २ माता का पद ।

मातृदेव—सञ्ज्ञा पु० [सं०] वह जो माता को देवता के सदृश माने ।
माँ के प्रति देवता की भावना करनेवाला व्यक्ति ।

मातृदेवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ताम्रिको की एक देवी का नाम ।

मातृदेश—सञ्ज्ञा [सं०] मातृभूमि । जन्मभूमि ।

मातृदोष—सञ्ज्ञा पु० [सं०] माना में दोष या हीनता होना । माता
का निम्नजातीय होना ।

मातृनदन—सञ्ज्ञा पु० [सं० मातृनदन] १ ताम्रिकेय । २ महाकरज
का पेड़ ।

मातृनटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृनन्दा] शाक्तों की एक देवी का नाम ।

मातृपक्ष—सञ्ज्ञा पु० [सं०] माना का कुल, नाना, मामा आदि ।

मातृपालित—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक दानव का नाम ।

मातृपितृ—सञ्ज्ञा पु० [सं०] माता और पिता । माबाप ।

यौ०—मातृपितृहीन = जिसका माता पिता न हो । बिना माँ
बाप का ।

मातृपूजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृपूजन] विवाह की एक रीति जिसमें
विवाह के दिन से एक दो दिन पूर्व छोटे छोटे मीठे पूए बनाकर
पितरों का पूजन किया जाता है । इसी को 'मातृपूजा' या
'मातृकापूजन' कहते हैं ।

मातृवधु—सञ्ज्ञा पु० [सं० मातृवधु] माता के वध वा कोई
आत्मीय ।

विशेष—मिताक्षरा के अनुसार माता की कूआ, माता की मौमी और माता के मामा की सतान मातृवधु कही जाती है।

मातृवांधव - सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृवान्धव] दे० 'मातृवधु'।

मातृभक्त - वि० [सं०] माता का अनुगत। माता का भक्त [को०]।

मातृभापा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह भापा जो बालक माता की गोद में रहते हुए बोलना सीखता है। माता पिता के बोलने की और सब से पहले सीखी जानेवाली भापा।

मातृभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मातारूपी धरती। स्वदेश। जन्मभूमि।

मातृमण्डल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृमण्डल] १ दोनो आँखों के बीच का स्थान। २ मातृकागण।

मातृमाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृमातृ] १ माता की माता। नानी। २ दुर्गा।

मातृमुख - वि० [सं०] अनाड़ी। मूर्ख। अज्ञ।

मातृयज्ञ - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञ जो मातृकाओं के उद्देश्य से किया जाता है।

मातृरिष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार एक दोष जो सतान के ऐसे बुरे लग्न में जन्म लेने से होता है जिसके कारण माता पर सकट आवे या उसके प्राण चले जायें।

मातृवत्सल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कार्तिकेय।

मातृवध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माता की हत्या करना।

विशेष—यह बौद्धों के अनुसार पाँच महापापों में है और अक्षय्य अपराध होने से इसका फल भोगना ही पड़ता है।

मातृवाहिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की चिड़िया। बलुला। चमगादड़ [को०]।

मातृवियोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माता का विछोह वा वियोग।

मातृशासित—वि० [सं०] मूर्ख। मातृमुख।

मातृष्वसा - सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृष्वसु] माँ की वहन। मासी। मौमी।

मातृष्वसेय - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मातृष्वसेयी] माता की वहन का लडका। मौमेरा भाई।

मातृष्वसेयी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मौसेरी वहन। मौसी की लडकी।

मातृष्वस्त्रीय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मातृष्वस्त्रीया] मातृष्वसेय। मौसेरा भाई [को०]।

मातृसपत्नी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] साँतेनी माता। विमाता।

मातृस्तन्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माता का दूध।

मातृहता—वि० सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृहन्तृ] दे० 'मातृघाती'।

मातृहीन—वि० [सं०] माता से रहित। जिसकी माँ गत हो गई हो। बिना माँ का।

मात्र - अर्थ [सं०] केवल। भर। सिर्फ। जैसे, नाममात्र, तिल मात्र। उ० - (क) रहे तुम सत्य कहावत मात्र। श्रवै सह सत्य करौं सब गात्र।—गोपाल (शब्द०)। (ख) केवल भक्त चारि युग केरे। तिनके जे है चरित घनेरे। सोई मात्र कथौं यहि माहीं। कछुक कथा उपयोगिन काही।—रघुराज (शब्द०)।

मात्रा - सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ परिमाण। मित्तर। जैसे,—झमें पानी की मात्रा अधिक है। २ एक बार गाने योग्य श्रौपव। ३ उतना काल जितना एक ह्रस्व अक्षर का उच्चारण करने में लगता है।

विशेष—छंदशास्त्र में इन्हीं मत्त, मत्ता, कन या फला भी कहते हैं।

४ वारदखटी लिखाने समय दृष्ट स्वर्गमूचक रेखा जो अक्षर के ऊपर नीचे या प्रागे पीछे लगाई जाती है। ५ किमी चीज का कोई निश्चित छोटा भाग। ६ हाथी, घोड़ा आदि। परिच्छद। ७ कान में पहनने का एक आभूषण। ८ इन्द्रिय जिसके द्वारा विषय का अनुभव होता है। ९ शक्ति। १० इन्द्रियों की वृत्ति। इन्द्रियवृत्ति [को०]। ११ घन। द्रव्य [को०]। १२ शिलोच्चय। पर्वत [को०]। १४ अयय। अग। १५ रूप। मूक्षम रूप। १६ समीत में गीत श्रौं याद्य का समय निरूपित करने के लिये उतना काल जितना एक स्वर के उच्चारण में लगता है।

विशेष—एक ह्रस्व स्वर के उच्चारण में जितना समय लगता है उसे 'ह्रस्व मात्रा' कहते हैं, दो ह्रस्व स्वरों के उच्चारण में जितना समय लगता है, उसे 'दीर्घ मात्रा' कहते हैं, और तीन अथवा उससे अधिक स्वरों के उच्चारण में जितना समय लगता है, उसे 'प्लुत मात्रा' कहते हैं।

मात्राच्युतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की काव्यरचना जिसकी कोई मात्रा हटा देने से दूसरा अर्थ हो जाता है।

मात्राभस्त्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] घन या रूप आदि रखने की धैली। मनीवेग।

मात्रालाभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] द्रव्य की प्राप्ति या उपलब्धि।

मात्रावस्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक की एक क्रिया जिसमें रोगी को दस्त कराने के लिये उमड़ी गुदा में पिचकारी आदि से तेल आदि मिला हुआ कोई तरल पदार्थ भरते हैं।

मात्रावृत्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह काव्य जिसमें मात्राओं की गणना की जाय। मायिक छंद। जैसे, श्रार्या।

मात्रासमक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक छंद जिसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ और अत में गुरु होता है।

विशेष—चौपाई नामक छंद के मन्त्रमक, वानवासिका, चित्रा और विशनोक नामक चार भेद इसी के अंतर्गत हैं।

मात्रास्पर्श—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अपने अपने विषय के साथ इन्द्रियों का संयोग। इन्द्रियवृत्ति [को०]।

मात्रिक - वि० [सं०] १ मात्रा मवधी। मात्रा का। जैसे, एकमात्रिक। २ मात्राओं के हिमाववाला। जिसमें मात्राओं की गणना की जाय। जैसे, मात्रिक छंद।

यौ० - मात्रिकछंद = दे० 'मात्रावृत्त'।

मात्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मातृका-३, ४, ५'।

मात्सर - वि० [सं०] [वि० स्त्री० मात्सरि] मत्सर युक्त।

मात्सरिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मात्सरिकी] दे० 'मात्सर' [को०]।

मात्स्य^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मत्स्य का भाव । किसी का सुख या उसकी सपना न देख सकने का स्वभाव । किसी को अच्छी दशा में देखकर जलना । ईर्ष्या । डाह ।

मात्स्य^१—वि० [सं०] मछली सबधी । मछली का ।

यौ०—मात्स्यन्याय ।

मात्स्य^२—सञ्ज्ञा पु० एक ऋषि का नाम ।

मात्स्य न्याय—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मछलियों का न्याय । एक दृष्टांत-वाक्य । उ०—हात्स की प्राकृतिक स्थिति मात्स्य न्याय की स्थिति थी ।—राजनीतिक०, पृ० ८ ।

विशेष—जिस प्रकार समुद्र में बड़ी मछली छोटी मछलियों को खा जाती है उसी प्रकार समाज में जब कोई उच्चवर्गीय या शक्तिशाली जन अपने से निम्न एवं अशक्त का शोषण करता है तब इस दृष्टांतवाक्य का प्रयोग किया जाता है ।

मात्स्यक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मछली मारनेवाला । मछुआ ।

माथ^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ रास्ता । पथ । मार्ग । २ मथना । मथन । मथन । ३ विव्वस । नाश । विनाश [को०] ।

माथ^२—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मस्त, (= शिर), प्रा० मथ्य] दे० 'माथा' । उ०—माणु माथ अरुही देहु तोहा ।—मानस, २ ।

माथना^१—क्रि० सं० [सं०] मन्थन] दे० 'मथना' । उ०—नीर होइ तर ऊपर सोई । माथे रग समुद्र जस होई ।—जायसी (शब्द०) ।

माथा^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मस्तक, प्रा० मथ्य] १ सिर का ऊपरी भाग । मस्तक ।

मुहा०—**माथा कूटना** = दे० 'माथा पीटना' । **माथा विसना** = नम्रता प्रकट करना । मित्रत खुशामद करना । **माथा खपाना** या **खाली करना** = बहुत अधिक समझाना या सोचना । **सिर खपाना** । **मगजपच्ची करना** । (किसी के आगे) **माथा झुकाना** या **नवाना** = बहुत अधिक नम्रता या अधीनता प्रकट करना । **माथा टेकना** = सिर झुकाकर प्रणाम करना । **माथा ठनकना** = पहले से ही किसी दुर्घटना या विपरीत बात होने की आशंका होना । उ०—दूसरे पहर पर आए वहाँ मा सन्नाटा । माथा ठनका कि कुछ दाल म काला है ।—फिसाना०, भा० ३, पृ० २२३ । **माथा धुनना** = दे० 'माथा पीटना' । **माथापच्ची करना** = दे० 'माथा खपाना' । **माथा पाटना** = सिर पर हाथ मारकर बहुत अधिक दुःख या शांति करना । **माथा मारना** = दे० 'माथा खपाना' । **माथा रगड़ना** = दे० 'माथा विसना' । **माथे चढ़ाना** या **धरना** = शिरोधार्य करना । सादर स्वीकार करना । उ०—मम आयुस तुम माथे धरी । छल बल करे मम कारज करी ।—सूर (शब्द०) । **माथे टांका होना** = किसी प्रकार का विशेषता या अधिकता होना । जैसे,—क्या तुम्हारे माथे टांका है जो तुम्हीं को सब चाजें दे दी जायें ? **माथे पढ़ना** = उत्तरदायित्व आ पढ़ना । ऊपर भार आ पढ़ना । जैसे,—वह तो खसक गए, अब सब काम हमारे माथे आ पड़ा । **माथे पर चढ़ना** = दे० 'सिर पर चढ़ना' । **माथे पर बल पड़ना** = आकृत स क्रोध, दुःख या

असतोप आदि के चिह्न प्रकट होना । शकल से नाराजगी जाहिर होना । जैसे,—रूप की बात सुनते ही उनके माथे पर बल पड़ गए । **माथे भाग होना** = भाग्यवान् होना । तकदीरवर होना । **माथे मढ़ना** = गले बाँधना । गले मढ़ना । जवरदस्ती देना । **माथे मानना** = शिरोधार्य करना । सादर स्वीकार करना । उ०—(क) कह रावसुत मम कारज होई । माथे मानि करव हम सोई ।—सवलसिंह (शब्द०) । (ख) सूरदास प्रभु के जिय भावें आयुस माथे मान ।—सूर (शब्द०) । **माथे मारना** = बहुत ही उपेक्षा या तिरस्कारपूर्वक किसी को कुछ देना । बहुत तुच्छ भाव से देना । जैसे,—वह रोज तगादा करता है, उसका कताव उसका माथ मारा । **माथे लना** = माथे धरना या मानना । अधीकार करना । उ०—फगुआ कुँवरि कान्ह बहु दानो । प्रेम प्रीत कार माथे लीनो ।—नद० ब्र०, पृ० ३६३ ।

यौ०—**माथापच्ची** या **माथापिटन** = बहुत अधिक बकना या समझाना । सिर खपाना । मगजपच्ची करना ।

२ वह चित्र आदि जनमें मुख और मस्तक का आकृति बनी हो । (लश०) । ३ किसी पदार्थ का अगला या ऊपरी भाग । जैसे, नाव का माथा, आलमारा का माथा ।

मुहा०—**माथा मारना** = जहाज का वायु के विपरीत इस प्रकार जोर मारकर चलना कि मस्तूल, पाल तथा ऊपरी भागों पर बहुत जोर पड़े ।

४ यात्रा । सफर । ५ खेप । (लश०) ।

माथा^२—सञ्ज्ञा पु० [दश०] एक प्रकार का रेशमी कपड़ा ।

माथुर^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] [स्त्री० माथुरानी] १ मथुरा का निवासी । वह जो मथुरा का रहनेवाला हो । २ ब्राह्मणों की एक जाति । चौबे । ३ कायस्थों की एक जाति । ४ वैश्यों की जाति । ५ माथुरा प्रात ।

माथुर^२—वि० मथुरा सबधी । मथुरा का ।

माथ—क्रि० वि० [हिं०] माथा] १ माथे पर । मस्तक पर । सिर पर । उ०—नागार गूजार ठांग लीनो मेरो लाल गोरोचन को तिलक माथ मोहना ।—हरिदास (शब्द०) । २ भरोसे । सहारे पर । उ०—सो जनु हमरे माथे काढा । दिन चलि गयउ व्याज बहु वाढा ।—तुलसी (शब्द०) ।

माथे^१—क्रि० वि० [हिं०] माथा] दे० 'माथ' ।

माद^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ आभमान । शेखी । घमंड । २ हर्ष । प्रसन्नता । ३. मत्तता । मस्ता ।

माद^२—सञ्ज्ञा पु० [दश०] छोटा रस्ता । (लश०) ।

माद^३—सञ्ज्ञा पु० दे० 'माद'—२' । उ०—आडग डग से भूमि जल नभ पर फेर जीवन नहीं । दुदशा को सिहनी की माद तू जवतक न कर ।—वेला, पृ० ६८ ।

मादक—वि० [सं०] [वि० श्लो० मादिका] नशा उत्पन्न करनेवाला । जिससे नशा हो । नशाला । २ आनंदप्रद । आनंददायक । हर्षप्रद ।

मादक—सज्ञा पुं० १ प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र जिम्मे विषय में यह प्रसिद्ध है कि उसके प्रयोग में शत्रु में प्रमाद उत्पन्न होता था। २ यह चीज जिम्मे खाने में नशा हो। नशा उत्पन्न करनेवाला पदार्थ। जैस, अफीम, भांग, शराब आदि। ३ एक प्रकार का हिरन। ४ दाखूह पक्षी (को०)।

मादकता—सज्ञा स्त्री० [सं०] मादक होने का भाव। नशीनापन। उ० कनक कनक तें मोगुना मादकता अधिकाय। यह पाण वीरात है यह पाण वीराय।—विहारी (शब्द०)।

मादगाव—सज्ञा स्त्री० [फा० माउण गाव] गी। गाय। उ०—नरम मादगाव एक लागर हकीर। जगन बीच पीती है मन्त्रे का शीर।—दाक्षिणी०, पृ० ३०२।

मादन—नरा पुं० [सं०] १ लाग। २ मदन वृद्ध। ३ कामदेव। ४ बतूरा। ५ मतवातापन। मन्तता (को०)।

मादन—वि० सं० 'मादक'।

मादनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] भांग।

मादनीय—वि० [सं०] मादकता या नशा उत्पन्न करनेवाला। मादक। नशीला।

मादर—सज्ञा स्त्री० [फा०] [गि० सं० मादर > मातर, अ० मदर] माँ। माता। जननी।

शौ०—मादरजन = मास। श्वश्रू।

मादर—सज्ञा पुं० [सं० मर्दक्ष] दे० 'मादल'। उ०—तुम्ह पिउ माहम बाँधा में पिय माग मँटूर। दोउ सभारे होइ नंग बाज मादर तूर।—जायसी (शब्द०)।

मादरजाद—वि० [फा० मादरजाद] १ जन्म का। पैदाइशी। जैसे, मादरजाद अधा। २ एक मा में उत्पन्न। गहोदर (भा०)। ३ जैसा मा के पेट में निकला जा, वैसा ही। त्रिलकुल नगा। दिगवर।

शौ०—मादरजाद नगा = एकदम नगा। पूरी तोर में विषय।

मादरिया—सज्ञा स्त्री० [फा० मादर + हि० इया (प्रत्य०)] सं० 'मादर'। उ०—सामु ननदि मिलि अदल चनाई। मादरिया घर वेटी आई।—कवार (शब्द०)।

मादरी—वि० [फा०] माता मववी। माता रा।

शौ०—मादरी जवान = मातृभाषा।

मादल—सज्ञा पुं० [सं० मर्दल] पखावज के ढग का एक प्रकार का बाजा जो प्राय बगाल में कोतन आदि के समय बजाया जाता है।

मादलिया—सज्ञा स्त्री० [सं० या हि० मादल + इया (प्रत्य०)] तावीज। उ०—के नाड के कचुए, बाँध्या रेगी बय। कामरा रा रागै कर्न, मादलिया मन मय।—रफी० ग्र०, भा० २, पृ० १०।

मादा—सज्ञा स्त्री० [फा० मादह] रा जाति का प्राणी। नर का उलटा। जैसे,—(क) माँड की मादा गाय कहनाती है। (ख) इस कपूतर की मादा कही खा गइ है।

विशेष—एक प्रकार का व्यन्तार तथा जीव अणुवा के नियम होता है। जम, मादक अन्वय = धा।। मादक आह = रगिगा। मादक सर = गर्दभा। मादक राय = गौ, शारि।

मादक—वि० [सं० मादक] दे० 'मादक'। उ०—गायिका रगिगि तुमान ता पाया। कर् दिदको उ उर्क को।—घनानन्द, पृ० ४३।

मादकता—सज्ञा स्त्री० [सं० मादकता (प्रत्य०)] सं० 'मादकता'।

मादिक—सज्ञा स्त्री० [सं० मादिक] दे० 'मादिक'।

मादी—सज्ञा स्त्री० [फा० मादी] सं० 'मादी'। उ०—नर तो रगिगि प्राण सर उ०। मा। शरा रीत ता रती।—वट० पृ० २४१।

मादीनी—सज्ञा स्त्री० [फा०] सं० 'मादी'।

मादु—सज्ञा पुं० [सं०] भांग। नश [सं०]।

मादूम—वि० [सं० मादूम] [सं० मादूम] नश [सं०]। उ०—तुम्ह पिय माहम बाँधा में पिय माग मँटूर। दोउ सभारे होइ नंग बाज मादर तूर।—जायसी (शब्द०)।

मादुल, **मादुल**—वि० [सं०] [वि० मादुल, मादुली] में समान। मुझ जग। मर तुम [सं०]।

माहा—सज्ञा पुं० [सं० माह] १ वह मूक तथा अनावादि पदार्थ बना रहा। २ शब्द का व्युत्पत्त। जग रा मून। ३ योग्यता। पायना। जन,—यापमे य राय ममकन का राय हीनरी है। ४ विवेक। तमाज (को०)। ५ जग। मून। तुनगाद (को०)। ६ राव। जान। ममक (को०)। ७ मवाद। पौर।

माद्वती—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ राजा परीक्षित की स्त्री का नाम। २ राजा पादु की दूसरी पत्नी। माद्री (को०)।

माद्विनदन—सज्ञा पुं० [सं० माद्विनदन] सं० 'माद्विनदन' (को०)।

माद्विसुत—सज्ञा पुं० [सं०] माद्री के पुत्र नकुल और महदेव।

माद्री—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ पादु राजा की द्वितीय पत्नी और नकुल तथा महदेव की माता जो महदेव के राजा की कन्या थी। राजा पादु के मरने पर यह उनका मातृ मती हुई थी। २ अतिविद्या। अतीसा।

माद्रीपति—सज्ञा पुं० [सं०] पादु।

माद्वेय—सज्ञा पुं० [सं०] माद्री के पुत्र नकुल और महदेव।

माधव—वि० [सं०] १ मधु जैसा। जहद के समान। गीठ। २ मधुनिमित्त। ३ वसत कृतु मववी। वसती (को०)।

माधव—सज्ञा पुं० १ विशु भगवान्। नारायण। २ श्रीकृष्ण। ३ वैशाख मास। उ०—पियो गमन जनु दिननाय उत्तर मग मधु माधव निग।—तुन्सी प्र०, पृ० ४८। ४ वसत कृतु। ५ एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में आठ जगम होते हैं। इसी का दूसरा नाम 'मुक्तहर' है। ६ एक राग जो भैरव राग के आठ पुरों में से एक माना जाता है। ७ एक प्रकार का मकर राग जो मल्लार, विलावल और नट

नारायण को मिलाकर बनाया गया है। ८ मधुक वृद्ध। मधुआ। ९ काला उर्द। १० उर्द (को०)। ११ परशुराम (को०)। १२ यादव गण (को०)। १३, मायणाचार्य के भाई का नाम।

विशेष—ये १५वीं शती में थे। ऋग्वेद की टीका इन्होंने और मायण ने मयुक्तरूप में की थी। स्मृति के व्याख्याताओं में इनका स्थान प्रमुख है। इनके पिता का नाम मायण था।

यो०—माधवद्रुम = मधुक। माधवनिदान = आयुर्वेद का निदान-विषयक प्रसिद्ध ग्रंथ। माधववल्ली = माधवी। माधवश्री।

माधवक—सज्ञा पु० [म०] महुए या मधु की शराब।

माधवश्री—सज्ञा स्त्री० [म०] वासतिक या वसंतकालीन शोभा।

माधविका—सज्ञा स्त्री० [म०] माधवी लता।

माधवी—सज्ञा पु० [स०] १ प्रसिद्ध लता जिसमें इमी नाम के प्रसिद्ध गुग्गुलु फूल लगते हैं।

विशेष—यह चमेली का एक भेद है। वंशक के अनुसार यह कटु तिक्त, कपाय, मधुर, शीतल, लघु और पित्त, खामी, व्रण, दाह आदि की नाशक मानी जाती है।

२ ओडव जाति की एक रागिनी जिसमें गांधार और धैवत वर्जित हैं। ३ मवैया छंद का एक भेद। ४ एक प्रकार की शराब।

५ तुलसी। ६ दुर्गा। ७ माधव की पत्नी। ८ कुटनी। ९ शहद की चीनी। १० मधु की मदिरा। मधुनिर्मित मद्य (को०)।

माधवीलता—सज्ञा स्त्री० [म०] माधवी नामक गुग्गुलु फूलों की लता। विशेष—दे० 'माधवी—१'।

माधवेष्टा—सज्ञा स्त्री० [स०] वाराही कद।

माधवोचित—सज्ञा पु० [स०] एक प्रकार का परिमल या इत्र (कक्कोल)।

माधवोद्भव—सज्ञा पु० [म०] खिरनी का पेड़।

माधी—सज्ञा पु० [देश०] भैरव राग के एक पुत्र का नाम। (मदिग्ध)।

माधुक—सज्ञा पु० [स०] १ मंत्रेयक नाम की वर्णसकर जाति। २ महुए की शराब।

माधुकर—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माधुकरि] भैंरे के समान। मधुकर जैसा। भ्रमर के समान। जैसे, माधुकरि वृत्ति।

माधुकरि—सज्ञा पु० [सं०] १ भिक्षा का सकलन जो दरवाजे दरवाजे घूमकर किया जाय जैसे भ्रमर मकरंद मचय करता है। २ पाँच विभिन्न स्थानों से मांगी हुई भिक्षा (को०)।

माधुपर्किक—सज्ञा पु० [म०] वह पदार्थ जो मधुपर्क देने के समय दिया जाता है।

माधुर—सज्ञा पु० [सं०] मल्लिका। चमेली।

माधुरई^७—सज्ञा स्त्री० [म० माधुरी] मधुरता। मिठास। उ०—ए श्रुति या बलि के अधरानि में आनि मदी कछु माधुरई सी।—पद्माकर (शब्द०)।

माधुरता^७—सज्ञा स्त्री० [सं० मधुरता] मिठास। मिठास। उ०—जितनी चाखता कोमलता मुकुमारता माधुरता अधरा में अहै।—(शब्द०)।

माधुरिया^७—सज्ञा स्त्री० [म० माधुर्य] 'माधुरी'। उ०—लक्षण को बकर्म कछु चाखि मुभाखि कं माधुरिया अधिकार्ड।—रतुराज (शब्द०)।

माधुरी^७—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मिठास। २ माधुर्य। जोभा। मुदरता। उ०—(क) भायप मलि चहुँ वधु का जल माधुरी मुवाग।—तुलसी (शब्द०)। (ख) रामचंद्र की देवि माधुरी दर्पण दम्ब दिराव।—सूर (शब्द०)। ३ मद्य। पुराव।

माधुरी^७—सज्ञा पु० [म० मधुमास] माधव मास। वंशात्। उ०—गज श्रोन चर्ल रज दाम पाम। मना माधुरी मास फूले पलाम।—तृ० रा०, १।४५८।

माधुर्य^७—सज्ञा पु० [म०] १ मधुर होने का भाव। मधुरता। २ मुदरता। नावगय। ३ मठाई। मिठास। मिठास। ४ पाचनो रात के अंतर्गत काव्य का एक गुण।

विशेष—इसके द्वारा चित्त बहुत ही पमत्त होता है। यह शृंगार, करुण और शांत रस में ही अधिक होता है। एसा रचना में प्राय ट, ठ, ड, ढ और ए नहीं रहते, क्योंकि इनसे माधुर्य का नाश होना माना जाता है। 'उपनागरका' वृत्ति में यह अधिकता से होता है।

५ सार्वत्रिक नायक का एक गुण। बिना कनी प्रकार के शृंगार आदि के ही नायक का मुदर जान पडना। ६ वाक्य में एक से अधिक अर्थों का होना। वाक्य का श्लेष। ६ श्राद्धपूजा के प्रारंभ का भाव। मधुरा या रागानुगा भाक्त।

माधुर्यप्रधान—सज्ञा पु० [सं०] १. वह काव्य जिसमें माधुर्य गुण की प्रधानता हो। २ गाने का एक प्रकार। वह गाना जिसमें माधुर्य का अधिक ध्यान रखा जाय और उसके शुद्ध रूप के विगडन की परवाह न का जाय।

माधूक^७—सज्ञा पु० [सं०] मनु के अनुसार एक वर्णसकर जाति का नाम।

विशेष—इन जाति के लोग मधुर शब्दों में नागा की प्रशंसा करते हैं, इसीलिये ये 'माधूक' कहलाते हैं। कुछ लोग 'वदी' को ही 'माधूक' मानते हैं।

माधूक^७—वि० मिष्टभाषी। मिठवाला। मृदुभाषी।

माधैया^७—सज्ञा पु० [म० माधव + हि० ऐया] दे० 'माधव'। उ०—हारित् मरा माधैया। देहरी चढत परत गिर गिर, करपल्लव जो गहत हरी मैया।—सूर (शब्द०)।

माधो^७—सज्ञा पु० [सं० माधव] १ श्रीकृष्ण। उ०—(क) जब मायो हीइ जात मकल तनु गवा विरह दह।—सूर (शब्द०)। (ख) शोण नाइ वर जोर कहया तव नारद मभा सहैम। तच्छण भौम वनजय गावा धन्य दृजत का भम।—सूर (शब्द०)। २. श्रीरामचंद्र। उ०—आधा पल माघा जू के दस दिन आई जणि सीता का वसन वह होत दुन्दरई ह।—शिव (शब्द०)।

माधौ^७—सज्ञा पु० [म० माधव] दे० 'माधव'।

माध्यदिन^७—सज्ञा पु० [म० माध्यन्दिन] १ दिन का मध्य भाग। मध्याह्न। दोपहर। २ दे० 'माध्यदिनी'।

माध्यदिन^२ = वि० १ मध्य का। विचन। मध्यम। २ दिन के मध्य का [को०]।
 माध्यदिनी—सज्ञा स्त्री० [सं० माध्यन्दिनी] शुक्ल यजुर्वेद की एक शाखा का नाम।
 माध्यदिनीय—सज्ञा पुं० [सं० माध्यन्दिनीय] नारायण। परमेश्वर।
 माध्य—वि० [सं०] मध्य का। बीच का।
 माध्यम^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माध्यगी] मध्य का। जो मध्य में हो। बीचवाला।
 माध्यम^२—सज्ञा पुं० वह जिसके द्वारा कोई कार्य मध्य हो। कार्यमिष्टि का आवार, उपाय या साधन। उ०—यह वह समय है जब समार की भी जातियां में आदान प्रदान चल रहा है, मेन मिलाप हो रहा है। साहित्य इगका माध्यम है।—गीतिका (भू०), पृ० ५।
 विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग बहुत हाल में होने लगा है।
 माध्यमक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माध्यमिका] मध्यमता। तीव्र का [को०]।
 माध्यमिक^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ शीघ्रता का एक भेद।
 विशेष—इस वर्ग के शीघ्रता का विग्रहण है कि मत्र पदार्थ मूत्र में उत्पन्न होते हैं और अतः में शून्य हो जाते हैं। बीच में जो कुछ प्रतीत होता है, वह केवल उनी समय तक रहता है, पत्रात् मत्र शून्य हो जाता है। जैसे, 'घट' उत्पत्ति के पूर्व न तो था और न टूटने के पत्रात् ही रहता है। बीच में जो जान होता है, वह चित्त के पदार्थों में जाने से नष्ट हो जाता है। अतः एक शून्य ही तत्व है। इनके मत में मत्र पदार्थ क्षणिक हैं और ममस्त समार स्वप्न के समान है। जिन लागाने निराण प्राप्त कर लिया है और जिन्होंने नहीं प्राप्त किया है, उन दोनों का ये लोग समान ही मानते हैं।
 २ मध्य देश। ३ मध्य देश का निवासी।
 माध्यमक^२—वि० [वि० स्त्री० माध्यमिका] द० 'माध्यमक'। मध्यवर्ती। जैसे, माध्यमिक विद्यालय। माध्यमिक शिक्षा।
 माध्यस्थ^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो दो मनुष्यों या पक्षों के बीच में पडकर किसी वाद विवाद आदि का निपटारा करे। पंच। विचवर्डी। मध्यस्थ। २ दलाल। ३ कुटना। ४ व्याह करानेवाला ब्राह्मण। बरेली।
 माध्यस्थ^२—वि० मध्यस्थ। तटस्थ।
 माध्यस्थ्य—सज्ञा पुं० [सं०] मध्यस्थ होने का भाव। मध्यस्थता।
 माध्याकर्षण—सज्ञा पुं० [सं०] पृथ्वी के मध्य भाग का वह आकर्षण जो मदा सब पदार्थों का अपनी ओर खींचता रहता है और जिसके कारण सब पदार्थ गिरकर जमीन पर आ पडते हैं।
 विशेष—इंग्लैंड के प्रसिद्ध तत्ववेत्ता न्यूटन ने वृत्त से एक सेव को जमीन पर गिरते हुए देखकर यह सिद्धांत स्थिर किया था कि पृथ्वी के मध्य भाग में एक ऐसी आकर्षण शक्ति है, जिसके द्वारा सब पदार्थ, यदि बीच में कोई चीज बाधक न हो तो, उसकी ओर खिंच आते हैं।

माध्याह्निक^१—सज्ञा पुं० [सं०] वह कार्य जो ठोस मध्याह्न के समय किया जाता है। ठोस सापेक्ष के समय दिया जायता है, विशेषतः आमतौर पर।
 माध्याह्निक^२—वि० [वि० स्त्री० माध्याह्निका] दिन का मध्य भाग। सापेक्ष या मध्याह्न का [को०]।
 माध्व^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ यज्ञवाक्य का मध्यम प्रकाश में से एक जो न माराय का जायता हुआ है। उन मत का मानने वाले जाना विद्वान् जगति है शार पवित्र्य प्रकाशित होते रहते हैं। २ मनु का पराज। ३ मनुस्मृत्य का नाम का पत्रिका।
 माध्व^२—वि० [वि० स्त्री० माध्वी] मीठा। मधु मिश्रित।
 माध्वक^१—सज्ञा पुं० [सं०] मधु या मधु का जगर।
 माध्वक^२—सज्ञा पुं० [सं०] जहर काट्टा कन्दकाता।
 माध्वी^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मदिरा। जगर। २ यह जगर जो मधु या मधु में पार्ई जाता है। ३ मधुस्मृत्य का नाम का मद्रवी। ४ पुत्राणुत्तार एक पदार्थ का नाम। ५ एक प्रकार का सजूर। मधुसूता (को०)। ६ माता का नाम। उ०—माध्वी कुदवाता जलना पपता परत नहु भाति।—प्रकाशार्थ०, पृ० २०।
 माध्वीक^२—सज्ञा पुं० [सं०] १ मधु का जगर। २ मधु। मकरद। ३ राय का जगर। ४ तम।
 माध्वीका—सज्ञा स्त्री० [सं०] नाम।
 माध्वीमधुरा—सज्ञा स्त्री० [सं०] मीठा मजूर।
 मान—सज्ञा पुं० [सं०] १ किसी पदार्थ का भाग, तीन या नाप आदि। पारमाण्य। २ वह भाग जिनके द्वारा कोई चीज नापी या तोनी जाय। पमान। जैसे, गज, ग्राम, मेर आदि। ३ किया विषय न यह समझना कि हमारे समान कोई नहीं है। आभमान। अहकार। गर्व। जेता।
 विशेष—स्वाय दशा के यजुत्तार जो गुण अज्ञा में न हो, उसे भ्रम न अपना म ममकार उसके कारण हमसे से अपन आपको श्रेष्ठ समझना मान गहनाता है।
 मुहा० मान मयना = मान भग करना। गव चूर्ण करना। देगी ताजना। उ०—इन जगामध मश्चन मम मान मधि बांध विनु काज चल इहा धान।—रूर (शब्द०)।
 ४ प्रतिष्ठा। इज्जत। गमा। उ०—भोजन करत तुष्ट घर उनके राज मान भग टारत।—रूर (शब्द०)।
 मुहा०—मान रखना = इज्जत रखना। प्रतिष्ठा करना। उ०—कमरी शार नाम को आदि बहुत काम। जामा मलमल वाफता उनकर राये मान।—गरधर (शब्द०)।
 यौ०—मान महत = आदर सरकार। प्रतिष्ठा।
 ५ साहित्य के अनुमा मन म होनेवाला वह विकार जो अपने प्रिय व्यक्ति का कोई दाप या अपराध करत देखकर होता है। रुठना। उ०—विधि विधि के विकर टर, नही परेहू पान। चित्तै कितै तै लै धरया इती इतै तन मान।—विहारी (शब्द०)।

विशेष—मान बहुधा स्त्रियाँ ही करती हैं। अपने प्रेमी को किसी दूसरी स्त्री की ओर देखते अथवा उससे बातचीत करते देखकर, कोई अभिलषित पदार्थ न मिलने पर अथवा कोई कार्य इच्छानुसार न होने पर ही प्राय मान किया जाता है; यह लघु, मध्यम और गुरु तीन प्रकार का कहा गया है।

मुहा०—मान मनाना = दूसरे का मान दूर करना। रुठे हुए को मनाना। उ०—घरी चारि परम सुजान पिय प्यारी रीझि, मान न मनाओ मानिनी को मान देख रह्यो।—रघुनाथ (शब्द०)। **मान मोरना** = मान का त्याग करना। मान छोड़ देना। उ०—मुख को निहारो जो न मान्यो सो भली करी न केशौराय की सौं तोहि जो तू मान मोरि है।—केशव (शब्द०)।
६ पुराणानुसार पुष्कर द्वीप के एक पर्वत का नाम। ७ सामर्थ्य। शक्ति। ८ उत्तर दिशा के एक देश का नाम। ९ ग्रह। १० मंत्र। ११ आत्मसमान। आत्मगौरव (ज्ञे०)। १२ प्रमाण। सबूत (को०)। १३ मानक। मानदंड। उ०—उलभन प्राणो की धागो की मुलभन का समझूँ मान तुम्हे।—कामायनी, पृ० ६६। १४ सगीत शास्त्र के अनुसार ताल में का विराम जो सम, विषम, अतीत और अनागत चार प्रकार का होता है।

मानकद—सज्ञा पुं० [सं० माणक] १ एक प्रकार का मीठा कद।

विशेष—यह कंद बगल में बहुत अधिक होता है और प्राय तरकारी के रूप में या दूसरे अनाजों के साथ खाया जाता है। यह बहुत जल्दी पचता है। इसलिये दुर्बल रोगियों आदि के लिये बहुत लाभदायक होता है। कहीं कहीं आरारोट या सागुदाने की तरह भी इसका व्यवहार होता है। यह मृदु, विरेचक, भूयकारक और बवासीर तथा कटिजयत के लिये बहुत उपयोगी माना जाता है।

२ एक प्रकार की मिस्त्री जो सालिव मिस्त्री के नाम से बाजारों में मिलती है।

मानक^१—सज्ञा पुं० [सं०] मानकचू। मानकद।

मानक^२—सज्ञा पुं० [सं० माणिक्य] दे० 'माणिक्य'। उ०—अमर वरपै धरती निपजँ अद्रि वरपदाई। गुरु हमारा बानी वरप चुनि चुनि मानक लेई।—रामानद०, पृ० १३।

मानक^३—सज्ञा पुं० वह जिसके आधार पर किसी वस्तु के ठीक वेठीक होने का निर्णय किया जाय। आदर्श, जिसके नमूने पर कोई चीज तैयार की जाय।

मानकचू—सज्ञा पुं० [दश०] दे० 'मानकद'।

मानकलह—सज्ञा पुं० [सं०] १ ईर्ष्या। डाह। मानजनित कलह। २ प्रतिद्वंद्विता। चढा ऊपरी।

मानक्रीड़ा—सज्ञा स्त्री० [सं० मानक्रीडा] सूदन के अनुसार एक प्रकार का छंद। जैसे,—बदन मुत चाइकै। भरतपुर जाइकै। थपिनु सिरदार कौं। जतत पितरार की।—सूदन (शब्द०)।

मानगृह—सज्ञा पुं० [सं०] सठकर बैठने का स्थान। कोपभवन। उ०—बैठी जाय एकात भवन में जहाँ मानगृह चार।—सूर (शब्द०)।

मानग्रथि—सज्ञा स्त्री० [सं० मानग्रथि] १ ईर्ष्या से उत्पन्न कोप। २ अपराध। जुर्म।

मानचित्र—सज्ञा पुं० [सं०] किसी स्थान का बना हुआ नक्शा। जैसे, एशिया का मानचित्र।

मानज^१—सज्ञा पुं० [सं०] क्रोध।

मानज^२—क्रि० मान से उत्पन्न।

मानतरु—सज्ञा पुं० [सं०] खेतपापडा।

मानता—सज्ञा स्त्री० [हिं० मानना + ता (प्रत्य०)] मनीती। मन्नत।

क्रि० प्र०—उतारना।—चढ़ाना।—मानना।

मानदंड—सज्ञा पुं० [सं० मानदण्ड] वह डंडा या लकड़ी जिससे कोई चीज नापी जाय। पैमाना।

मानद—सज्ञा पुं० [सं०] १ विष्णु। २ वह व्यक्ति जो समान वा आदर दे। प्रतिष्ठा देनेवाला। प्रियतम। उ०—मान मनावत हू करै, मानद को अपमान। दूनों दुख तिन विनु लहै अभिस-घिता बखान।—केशव० ग्र०, पृ० ४१। ३ 'आ' अक्षर। (तांत्रिक)।

मानदा—सज्ञा स्त्री० [सं०] चंद्रमा की दूसरी कला या लेखा (को०)।

मानद्रुम—सज्ञा पुं० [सं०] सेमल का पेड़।

मानधन—सज्ञा पुं० [सं०] वह जिसका धन मान वा प्रतिष्ठा हो। वह जो बहुत बड़ा अभिमानी हो।

मानधाता—सज्ञा पुं० [सं० मानधाता] दे० 'माघाता'।

मानधानिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] ककड़ी।

मानन—सज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मानना] आदर करना। मान करना। समान (को०)।

मानना^१—क्रि० अ० [सं०] १ अगीकार करना। स्वीकार करना। मजूर करना। जैसे,—(क) हम मानते हैं कि आप उनकी बुराई नहीं कर रहे हैं। (ख) मान न मान, मैं तेरा मेहमान। (कहा०)। २ कल्पना करना। फर्ज करना। ममभना। जैसे,—मान लीजिए कि हम लोग वहाँ न जा सके, तो फिर क्या होगा? ३ ध्यान में लाना। समभना। जैसे, बुरा मानना, भला मानना।

सयो० क्रि०—जाना।—लेना।

४ ठीक मार्ग पर आना। अनुकूल होना। जैसे,—यह लडका सोधी तरह से नहीं मानेगा।

सयो० क्रि०—जाना।

मानना^२—क्रि० म० १ कोई बात स्वीकार करना। कुछ मजूर करना। जैसे,—याप किसी का कहना नहीं मानते। २ किसी को पूज्य, आदरणीय या योग्य समभना। किसी के बड़प्पन या लियाकत का कायल होना। आदर करना। जैसे,—(क) उन महात्मा को यहाँ के बहुत लोग मानते हैं। (ख) लड़ाई भगडा लगाने में मैं नुस्हे मानता हूँ।

विशेष—कभी कभी कर्ता को छोड़कर उसके गुण या कार्य के

मन्त्र में भी इस शब्द का इस अर्थ में प्रयोग होता है।
जंमे,—उनका गाना बजाना अच्छे अच्छे उस्ताद मानते थे।
३ दत्त समझना। पारगत समझना। उस्ताद समझना। ४
वार्मिक दृष्टि से श्रद्धा या विश्वास करना। जैसे,—शिव को
माननवाले जीव कहलाते हैं। ५ देवता आदि की भेंट करने
का प्रण करना। चढ़ाना चढ़ाने आदि का दृष्ट करके करना।
मन्त्र करना। जैसे,—(१) के लड़कू गरीश जी को मानो तो
इस्तहान में पास हो जाओगे। ६ ध्यान में लाना। समझना।
जंमे,—यह ता किमी को कुछ भी नहीं मानता। ७ स्वीकृत
करके अनुकूल कार्य करना। जंमे,—शिवरात्रि किसी ने आज
माना है और किसी ने कल। ८ किसी पर बहुत अनुरक्त
होना। किसी के साथ बहुत प्रेम करना (वाजा)।

माननि, माननी—(५) सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मानिनी] दे० 'मानिनी'। उ०—
(क) नददास प्रभु कहीं लौं वरनू वेदहु आपुन मुख कछ्या यह
माननि बड भाग।—नद० प्र०, पृ० ३६७। (ख) मान मति
करै माननी पिय संग करहु विलास।—ब्रज० प्र०, पृ० ६।

माननीय—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माननीया] जो मान करने योग्य
हो। पूजनीय। आदरणीय। मान्य।

मानपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [म० मान + पत्र] दे० 'आभनदनपत्र'।

मानपरिखण्डन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानपरिखण्डन] १ अग्रमान।
तिरस्कार। २ दे० 'मानभग'।

मानपरेखा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मान + परीक्षा] आशा। विश्वास।
भरोसा।

मानपात—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मान + पात] दे० 'मानकद'।

मानभग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानहानि। (नायिका के) मान का
हूटना।

मानभरी—वि० स्त्री० [मान + भरना] मान में भरी हुई। गुमान
से ऐठी हुई।

मानभाव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चोचला। नखरा।

मानभृत्—वि० [सं०] मानवाला। अभिगानी। गर्वयुक्त [को०]।

मानमन्दिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मान + मन्दिर] १ स्त्रियों के रूठकर
बैठने का एकांत स्थान। २ वह स्थान जिसमें ग्रहों आदि के
वेध करने का यंत्र तथा सामग्री हो। ज्येशाला।

मानमनीती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मान + मनीती] १ मानता। मन्त्रत।
मनीती। २ पारस्परिक प्रेम। ३ रूठने और मानने की क्रिया
उ०—उसे खिलाने के लिये लोगों को मान मनीती करने की
आवश्यकता है।

मानमनीवल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मान + मनावना] मनीती। रूठने और
मानने की क्रिया। उ०—रामेश्वर के परिवार का स्नेह, उनके
मधुर भगड़े, मानमनीवल, समझौता और अभाव में सतोप,
कितना सुदर। मैं कल्पना करने लगा।—आँधी, पृ० ७।

मानमरोर—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मान + मरोर] मन मुटाव। रजिहा।
उ०—राधे मुजान इतै चित दै हित में कत कीजतु मानमरोर
है।—घनानन्द (शब्द०)।

मानमान्यता—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] इज्जत। प्रतिष्ठा।

मानमोचन—सञ्ज्ञा पुं० [म०] साहित्य के अनुसार हठे हुए प्रिय को
मनाना जो नीचे लिखे छह उपायों के द्वारा बतलाया गया
है,—(१) साम, (२) दाम, (३) भेद, (४) प्रणति,
(५) उपेक्षा, और (६) प्रसंगविव्रम।

मानयोग—सञ्ज्ञा पुं० [म०] नाप और तौल की ठीक ठीक विधि या
रीति [को०]।

मानरध्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मानरध्रा] जनधडी जिमका व्यवहार
प्राचीन काल में समय जानने के लिये होता था।

विशप—इसमें एक छोटा कटोरा होता था जिमके पेंदे में एक
छोटा सा छेद होता था। वह कटोरा किसी बड़े जलपात्र में
छोड़ दिया जाता था और उम छेद के द्वारा वाँग कीरे कटोरे
में पाना भरने लगता था। वह कटोरा ठीक एक दूध या घटी
में भर जाता था और पानी में डूब जाता था। फिर उसे
निकालकर खाली करके उसी प्रकार पानी में छाड देते थे और
इस प्रकार समय का निरूपण करते थे।

मानरध्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मानरध्री] दे० 'मानरध्रा'।

मानर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्ल, हि० मादल] मादल वाजा। उ०—
मानर की मद आवाज रिग रिग ता विन ता।—मैला०,
पृ० १२६।

मानव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मनु में उत्पन्न, मनुष्य। आदमी। मनुज।
२ वानक। वच्चा (की०)। ३ एक प्रकार के छद्म का नाम।
१४ मात्राओं के छंदों की सञ्ज्ञा। इनके ६१० भेद हैं। ४
मनुस्मृति में एक उपपुराण [को०]। ५ मनुष्य की माप (लवाई)।

मानव—वि० [वि० स्त्री० मानवी] १ मनु का। मनु ने सबद्ध।
२ मनुष्योचित। मानवोचित।

मानवक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानव] १ छोटे कद का आदमी।
वानन। वौना। २ तुच्छ आदमी।

मानवत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मानवती] वह जो मान करता
हो। हठ हुआ।

मानवता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मानव होने का भाव। मनुष्यता।
मानुपता।

मानवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] वह नायिका जो अपने पति या प्रेमी
से मान करती हो। मानिनी। उ०—करै ईरपा मो जू तिय
मनभावन मो मान। मानवती तानो कहत, कवि मातराम
सुजान।—मातराम (शब्द०)।

मानवदेव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा। उ०—बलि मिस देखे दवता
कर मिस मानवदेव। भुए मार मुविचार हत स्वारथ माधन
एव।—तुलसी (शब्द०)।

मानवधर्मशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनुस्मृति [को०]।

मानवपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा। नरेंद्र।

मानवपन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानव + हि० पन (प्रत्य०)] दे०
'मानवता'। उ०—पावक पग धर आवे नूतन। हो पल्लवित
नवल मानवपन।—युगात, पृ० ३।

मानवर्जित—वि० [म०] निरभिमान । गर्व या मानहीन । नीच । अप्रतिष्ठित ।

मानवर्तिक—सज्ञा पुं० [म० मानवर्तिक] पुराणानुसार एक प्राचीन देश का नाम जो पूर्व दिशा में था । जंतों के हरिवंश के अनुसार यह देश वर्तमान मानभूमि है ।

मानवशास्त्र—सज्ञा पुं० [म०] वह शास्त्र जिसमें मानव जाति की उत्पत्ति और विकास आदि का विवेचन होता है ।

विशेष—इस शास्त्र से यह भी जाना जाता है कि समस्त के भिन्न भिन्न भागों में मनुष्यों की किननी जातियाँ हैं, सृष्टि के अन्यान्य जीवा में मनुष्य का क्या स्थान है, मनुष्यों की सृष्टि कब और कैसे हुई, उसकी सम्यक्ता का कब विकास हुआ, इत्यादि इत्यादि ।

मानवा(५)—सज्ञा पुं० [सं० मानवा] मानव । मनुष्य । उ०—मपने सोया मानवा, खोल देखि जो नैन । जीवपग बहु लूट में, ना कडु लेन न देन ।—कवीर सा० स०, पृ० ६५ ।

मानवाचल—सज्ञा पुं० [म०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम ।

मानवास्त्र—सज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र ।

मानवी^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ स्त्री । नारी । श्रीगत् । २ पुराणानुसार स्वायम्भुव मनु की कन्या का नाम ।

मानवी^२—वि० [सं० मानवीय] मानव मवधी । मनुष्य का ।

मानवीकरण—वि० [सं० मानवी + करण] किसी सूक्ष्म वस्तु में मानवता के गुणधर्म या मानवता का आरोप या स्थापन करना । उ०—'हरिश्चन्द्र' जी ने पवन द्वारा रावा का सदेश भिजवाने के लिये मानवीकरण का ही प्रयोग किया है ।—हिंदी प्रेमा०, पृ० ६४ ।

मानवीय—वि० [सं०] मानव सवधी । मानव का ।

मानवीयता—सज्ञा स्त्री० [सं० मानवीय + हिं० ता] १ 'मानवता' । उ०—पतलपत्र यह कि मानवीयता की व्यापक भूमि पर ही कोई अनुभूति गहरी ही मकनी है ।—इति०, पृ० ९ ।

मानवेन्द्र—सज्ञा पुं० [सं० मानवेन्द्र] राजा ।

मानवेश—सज्ञा पुं० [सं०] मानवेन्द्र ।

मानव्य—सज्ञा पुं० [म०] दे० 'मानव' ।

मानस^१—सज्ञा पुं० [म०] १ मन । हृदय । उ०—मांगत तुलसिदाम कर जोने । बसहि राम मिय मानस मोरे ।—तुलसी (शब्द०) । २ मानसरोवर । उ०—रोष महामारी परतीष महतारी दुनी दरिए दुवारी मुनि मा । म मरालिके—तुलसी (शब्द०) । ३ कामदेव । ४ मकरप विकल्प । ५ एक नाग का नाम । ६ शात्मली द्वीप के एक वर्ष का नाम । ७ पुष्कर द्वीप के एक पवन का नाम । ८ दूत । चर । उ०—(क) मानस पठाए मुधि को लाग साच श्रांच लाग करी साध्याग बात मानी भाग फले हैं ।—प्रयादाग (शब्द०) । (ख) दैवे बहु भाति मा पठाए

मग मानस हू श्रावो पहुँचाइ तत्र तुम पर रोभिए ।—प्रियादाग (शब्द०) । ९ गोस्वामी तुलसीदास कृत रामायण । रामचरित-मानस । १० विष्णु का एक रूप (की०) । ११ एक प्रकार का नमक (की०) ।

मानस^२—वि० १ मन में उत्पन्न । मनोभव । २ मन का विचार हुआ । उ०—कलि कर एक पुनीत प्रतापा । मानस पुन्य होइ नहि पापा ।—तुलसी (शब्द०) ।

मानस^३—क्रि० वि० मन के द्वारा । उ०—रहे गडकी मुत मुस वीचा । पूज्यो मानस शिर करि नीचा ।—विश्राम (शब्द०) ।

मानस(५)^४—सज्ञा पुं० [सं० मानस] मनुष्य । आदमी । उ०—कोमल मृणालिका भी मल्लिका को मालिका भी बालिका बु डारी भाउ मानस कं पशु है ।—केशव (शब्द०) ।

यौ०—मानसदेव ।

मानसकोश—सज्ञा पुं० [सं०] मन रूपी कोण या समझ । उ०—मेरे मानसकोश में दोनो (प्रेमभाव या लोभ) का अर्थ प्रायः एक ही निकलता है ।—रम०, पृ० ११३ ।

मानसचारी—सज्ञा पुं० [सं० मानसचारिन्] एक प्रकार का हस्त जो मानसरोवर में होता है ।

मानसजन्मा—सज्ञा पुं० [सं० मानसजन्मन्] १ मनोभव । कामदेव । २ हस्त ।

मानसजप—सज्ञा पुं० [सं०] जप का एक प्रकार । वह जप जो मन ही मन किया जाय ।

मानसतीर्थ—सज्ञा पुं० [सं०] वह मन जो राग द्वेष आदि में नितात रहित हो गया हो ।

मानसदेव(५)—सज्ञा पुं० [सं० मानस + देव] राजा । नरेश ।

मानसपुत्र—सज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार वह पुत्र या सतान जिसकी उत्पत्ति इच्छामान में ही हुई हो । जैसे,—मनरु, मनदन आदि ब्रह्मा के मानसपुत्र हैं ।

मानसपूजा—सज्ञा स्त्री० [म०] पूजा के दो प्रकारों में से एक । वह पूजा जो मन ही मन की जाय और जिसमें अर्घ्य, पाद्य आदि ग्राह्य उपकरणों की आवश्यकता न रहे ।

मानसर(५)—सज्ञा पुं० [सं० मानसर] दे० 'मानसरोवर' । उ०—दुरे हन मानसर ताहि में कलानधर, सुधा मरवर तोक छोडि गयो दुनिय ।—भूपण ग्र०, पृ० ३२ ।

मानसरोदक(५)—सज्ञा पुं० [हिं० मानसर + उदधि] मानसरोवर के समान मुदर मनोवर । उ०—मानसरोदक वरनी बाहा ।—जायसी ग्र०, पृ० १२ ।

मानसरोवर—सज्ञा पुं० [सं० मानस + सरोवर] हिमालय के उत्तर की एक प्रसिद्ध चटो भौल ।

विशेष—इस भौल के विषय में यह प्रसिद्ध है कि ब्रह्मा ने अपने रज्जु मानस से ही इसका निमाण किया था । इस मनोवर का

जल बहुत ही मुदर, स्वच्छ और गुणकारी है तथा इसके चारो ओर की प्राकृतिक शोभा बहुत ही श्रद्धास्पन है। हमारे यहाँ के प्राचीन ऋषियों ने इसके आस पास की भूमि को स्वर्ग कहा है।

मानसत्रत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य आदि का पालन या व्रत।

मानसशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें इस बात का विवेचन होता है कि मन किस प्रकार कार्य करता है और उसकी वृत्तियाँ किस प्रकार उत्पन्न होती हैं। मनोविज्ञान।

मानसशास्त्री—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानसशास्त्र का पंडित। मनोवैज्ञानिक।

मानससन्न्यासी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दसनामी सन्न्यासियों के अतर्गत एक प्रकार के सन्न्यासी।

विशेष—ऐसे सन्न्यासी मन में सच्चा वैराग्य उत्पन्न होने पर गृहस्थाश्रम का त्याग करके जंगल में जा रहते हैं और वहाँ तपस्या करते हैं। ये लोग गैरिक वस्त्र आदि नहीं धारण करते।

मानससर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानसरोवर। मानस सरोवर।

मानसहस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वृत्त का नाम। इसके प्रत्येक चरण में 'स ज ज भ र' होता है। इसका दूसरा नाम 'मानहस' या 'रगाहस' है।

मानसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम।

विशेष—कहते हैं, तृणविटु नामक एक ऋषि इसे मानसरोवर से लाए थे।

मानसालय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हस।

मानसिक^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मानसिकी] १ मन की कल्पना से उत्पन्न। २ मन संबंधी। मन का। जैसे, मानसिक कंठ, तानमिक चिंता।

मानसिक^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

मानसी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मानस पूजा। वह पूजा जो मन ही मन की जाय। उ०—आभरण नाम हरि साधु सेवा कर्ण फूल मानसी सुनय सग अजन बनाइए।—प्रियादास (शब्द०)। २ पुराणानुसार एक विद्या देवी का नाम।

मानसी^२—वि० मन का। मन से उत्पन्न। उ०—मानसी स्वरूप मे अग्रदास जब करत वयार नाभा मधुर संभार सो। प्रियादास (शब्द०)।

मानसीगंगा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मानसीगङ्गा] गोवर्धन पर्वत के पाम के एक सरोवर का नाम। उ०—सो एक समै देसाधिपति के डेरा गोवर्द्धन मे मानसी गंगा पर मए।—दो सी वावन०, भा० १, पृ० १४२।

मानसीपूजा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानसी + पूजा] दे० 'मानसपूजा'। सोलह घडी तथा तीस पल अक्षर चार और मानसी पूजा सोहम्भाव से पूजना।—कवीर म०, पृ० ३१६।

मानसूत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ करघनी। २. नापने का फीता।

मानसून सञ्ज्ञा पुं० [अ० मि० अ० मौसिम] १ एक प्रकार की वायु जो भारतीय महासागर में अप्रैल से अक्टूबर मास तक बराबर दक्षिणपश्चिम के कोण से चलती है और अक्टूबर से अप्रैल तक उत्तरपूर्व के कोण से चलती है। अप्रैल से अक्टूबर तक जो हवा चलती है, प्रायः उमी के द्वारा भारत में वर्षा भी हुआ करती है।

क्रि० प्र०—आना।—उठना।—टवना।

२ वह वायु जो महादेशों और महाद्वीपों तथा अनेक ग्राम पास के समुद्रों में पडनेवाले वातावरण सर्वथी पारस्परिक अंतर के कारण उत्पन्न होती है और जो प्रायः छह मास तक एक निश्चित दिशा में और छह मास तक उमकी विपरीत दिशा में बहती है।

मानसौका—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानसौकम्] हस। मानसचारी। मनोनिवासी।

मानहस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में स ज ज भ र होते हैं। इसके अन्य नाम 'रगाहस' और 'मानमहस' भी हैं।

मानहानि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अप्रतिष्ठा। अनादर। अपमान। वैज्ञती। हतक इज्जत।

मानहुँ—अव्य [हिं०] दे० 'मानो'।

माना^१—सञ्ज्ञा पुं० [इद्वरानी] एक प्रकार का मीठा नियाम।

विशेष—यह नियाम इटली और एशिया माइनर आदि देशों के कुछ विशिष्ट वृक्षों में रो छेव लगाकर निकाला जाता है, अथवा कभी कभी उन वृक्षों पर कुछ कीड़ों आदि की कई क्रियाओं से उत्पन्न होता है और जो पीछे से कई रासायनिक क्रियाओं में शुद्ध करके शोषण के रूप में काम में लाया जाता है। भारत के कई प्रकार के बाँसों तथा हमारे अनेक वृक्षों पर भी यह कभी कभी पाया जाता है। यह रेशक होता है और इसके व्यवहार के उपरांत मनुष्य विशेष निर्मल नहीं होता। देखने में यह पीले रंग का, पारदर्शी और हलका होता है और प्रायः बहुत महंगा मिलता है।

माना^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मान] अनादि नापने का एक पात्र।

विशेष—इसमें पाव भर अन्न आता है। यह लकड़ी, मिट्टी या धातु का बना होता है। इससे तरल पदार्थ भी नाप जाते हैं।

माना^३—क्रि० सं० [सं० मान अथवा हिं० मापना] १. नापना। तोलना। उ०—देखि विवर सुध पाय गीध मे सवनि अपनी वलु मायो।—तुलसी (शब्द०)। २. जाँचना। परीक्षा करना।

माना—क्रि० अ० दे० 'समाना' या 'ग्रमाना'। उ०—(क) इतनी बचन श्रवण सुनि हरण्यो फूण्यो अग न मात। लै लै चरन रेनु निज प्रभु की रिपु के शोणित न्हात।—सूर (शब्द०)। (ख) माई कहीं यह माहगी दीपति जो दिन दो यहि भाँति बडेगी।—केशव (शब्द०)।

मानाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लक्ष्मी के पति, विष्णु। उ०—मदन

मर्दन मयातीत माया रहित मंडु मानाय पायोज पानी । — तुलसी (शब्द०) ।

मानिद—वि० [फ्रा०] समान । तुल्य । सदृश । जैसे, —वे भी आपके ही मानिद शरीफ हैं । उ०—क्यों न हम शर्म की मानिद जलें दूर खड़े । जब उदू वायसे गरमी हो तेरी मजलिस के ।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० ८६ ।

मानि(५)†—सज्ञा पुं० [सं० मान] समान । दे० 'मान-३' । उ०—मानि महातम कछू न चाहै, एक दसा सदा निरवाहै ।—रामानंद० पृ० ५३ ।

मानिक^१—सज्ञा पुं० [सं० माणिक्य] एक मणि का नाम ।

विशेष—यह लाल रंग का होता है और हीरे को छोड़कर सबसे कड़ा पत्थर है । रासायनिक विश्लेषण द्वारा मानिक में दो भाग अल्युमिनम और तीन भाग आक्सिजन का पाया जाता है, जिससे रसायनशास्त्रियों के मत से यह कुरड की जाति का पत्थर प्रतीत होता है । इसमें एक और विशेषता यह भी है कि बहुत अधिक ताप से सुहागे के योग से यह काँच की भाँति गल जाता है और गलने पर इसमें कोई रंग नहीं रह जाता । प्राजकल के रासायनिकों ने काँच से नकली मानिक बनाया है जो असली मानिक से बहुत कुछ मिलता जुलता होता है । मानिक पत्थर गहरे लाल रंग से लेकर गुलाबी रंग और नारंगी से लेकर बैंगनी रंग तक के मिलते हैं । मानिक की दो प्रधान जातियाँ हैं—नरम चुन्नी और मानिक । नरम चुन्नी का विश्लेषण करने से मैग्नेशियम, अल्युमिनम और आक्सिजन मिलते हैं । उसपर यदि मानिक से रगड़ा जाय, तो लकीर पड़ जाती है ।

अग्रस्त जी के मत से मानिक के तीन प्रधान भेद हैं—पद्मराग, कुरुविद और सौगधिक । कमल पुष्प के समान रगवाला पद्मराग गाढ रक्तवर्ण सा ईपत् नील वर्ण सौगधिक और टेसू के फूल के रंग का कुरुविद कहलाता है । इनमें सिंहल में पद्मराग, कालपुर और आंध्र में कुरुविद और तुकर में सौगधिक उत्पन्न होता है । मत्तातर से नाङ्गधिक नामक एक और जाति का मानिक होता है जो नीलापन लिए रक्तवर्ण या लाखी रंग का माना गया है । इसकी खानें बरमा, स्याम, लका, मध्य एशिया यूरोप आस्ट्रेलिया आदि अनेक भूभागों में पाई जाती हैं । जिस मानिक में चिह्न नहीं होते और चमक अधिक होती है, वह उत्तम माना जाता है और अधिक मूल्यवान् होता है । वैद्यक में मानिक को मधुर, स्निग्ध और वात-पित्त-नाशक लिखा है ।

पर्या०—पद्मराग । कुरुविद । शोणरत्न । सौगधिक । लौहितक । तरुण । शृ गारी । रविरदनक ।

मानिक^२—सज्ञा पुं० [सं०] आठ पल का एक मान ।

मानिकखभ—सज्ञा पुं० [हिं० मानिक+खभ] १. वह खूँटा जो कातर के किनारे गड़ा रहता है और जिसमें घुसे को रस्सी से बाँधकर जाठ के सिरे पर अटकाते हैं । मरखम । २. वह खभा जो विवाह में मंडप के बीच में गाड़ा जाता है । ३. मालखम । मलखम ।

मानिकचदी—सज्ञा स्त्री० [हिं० मानिकचंद] साधारण छोटी सुपारी ।

मानिकजोड़—सज्ञा पुं० [हिं० मानिक+जोड़] एक प्रकार का बड़ा बगुला जिसकी चौच और टाँगे लवी होती हैं ।

मानिकजोर—सज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'मानिकजोड़' ।

मानिकदीप—सज्ञा पुं० [सं० माणिक्य+दीप] एक प्रकार का दीपक । पूजन, मंगल कार्य, विवाह आदि पर आटे या पिसान का सादे ढग का बना हुआ दीपक जिसमें चार बत्तियाँ रहती हैं जिन्हें प्रज्वलित कर आरती की जाती है । उ०—मानिक दीप बराय बंठि तेहि आसन हो ।—तुलसी ग्र०, पृ० ३ ।

मानिकरेत—सज्ञा स्त्री० [हिं० मानिक+रेत] मानिक का चूरा जिससे गहने आदि साफ किए जाते हैं और उनपर चमक लाई जाती है ।

मानिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. मद्य । २. आठ पल या साठ तोले का एक मान ।

मानिटर—सज्ञा पुं० [अ०] पाठशाला को कक्षा में वह प्रधान छात्र जो अन्य छात्रों पर कुछ विशेष अधिकार रखता हो ।

मानित—वि० [सं०] समानित । प्रतिष्ठित । आदृत ।

मानिता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. मानिष्य । समान । आदर । २. गौरव । ३. अहंकार । गर्व ।

मानित्व—पज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मानिता' ।

मानिनी^१—वि० स्त्री० [सं०] १. मानवती । गर्ववती । अभिमान युक्त । २. मान करनेवाली । छटा ।

मानिनी^२—सज्ञा स्त्री० साहित्य में वह नायिका जो नायक के दोष को देखकर उससे रूठ गई हो । उ०—मान करत वरजत न हौं उलाटे दिवावत सीह । करी रिसाँही जायँगी सहज हँसौही भौह ।—विहारी (शब्द०) ।

मानि^३—वि० [सं० मान्] [वि० स्त्री० मानिनी] १. अहंकारी । घमडी । २. समानित । गौरवान्वित । ३. मनायागी । ४. मान करनेवाला (को०) । ५. माननेवाला । समझनेवाला । जैसे, पाठमाना, भटमाना । उ०—अब जाने कोउ भाखँ भटमाना ।—मानस, १, २५२ ।

मानो^३—सज्ञा पुं० १. सिंह । २. साहित्य में वह नायक जो नायिका से अपमानित होकर रूठ गया हो ।

माना^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. कुम । घडा । २. प्राचीन काल का एक प्रकार का मानपात्र जिसमें दस अजुली या आठ पल आता था । ३. चक्की के ऊपर क पाट में लगाई हुई वह लकड़ी जिसके छेद में काली रहती है । जूआ न हान पर यह लकड़ा ऊपर के पाट के छेद में जडा रहती है । ४. कुदाल, बसुले आदि का वह छेद जिसमें बेंट लगाई जाता है । ५. किसी चीज में बनाया हुआ छेद जिसमें कुछ जडा जाय । ६. अन्न का एक मान जो सोलह सर का होता है । ७. साधारण छेद ।

मानो^२—सज्ञा स्त्री० [अ०] १. अर्थ । मतलब । तात्पर्य । २. तत्व । रहस्य । ३. प्रयोजन । ४. हेतु । कारण ।

मानु(५)—सज्ञा पुं० [सं० मान] दे० 'मान' । उ०—मानु जनावति

सवनि कौं, मन न मान की ठट। वाल मनावन कौ लखै
लाल तिहारी वाट।—मति० प्र०, पृ० ३५१।

मानुख^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानुष] मनुष्य। उ०—मानुख जनम
अमोल, अपन सो खोइल हो।—चरम०, पृ० ६४।

मानुख^८—वि० [सं० मानुष्य, प्रा० माणुस्स] दे० 'मानुष्य'।
उ०—मानुख मद मति मद तन, पुव्व भाव चहुआन भिर।
—पृ० रा०, २।५८६।

मानुष^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मानुषी] मनुष्य भववी।
मनुष्य का।

मानुष^२—सञ्ज्ञा पुं० १ मनुष्य। २ याज्ञवल्क्यस्मृति के अनुसार
प्रमाण के दो भेदों में से एक। इसके तीन उपभेद हैं—
लिखित, भुक्ति और साक्षी।

मानुषक—वि० [सं०] मनुष्य संबंधी। मनुष्य का।

मानुषता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मनुष्य का भाव या धर्म। मनुष्यता।
आत्मियता।

मानुषत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मानुषता'।

मानुषिक—वि० [सं०] मनुष्य संबंधी। मनुष्य का।

मानुषिद्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनुष्य शरीरधारी बुद्ध। जैसे, गौतम
बुद्ध आदि।

विशेष—ये ध्यानी बुद्ध से पृथक् होते हैं।

मानुषी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ स्त्री। औरत। २ तीन प्रकार की
चिकित्साओं में से एक। मनुष्यों के उपयुक्त चिकित्सा।

विशेष—शेष दो चिकित्साएँ आसुरी और दैवी कहलाती हैं।

मानुषी^२—वि० मनुष्य संबंधी। मनुष्य का। जैसे, मानुषी वाक्,
मानुषी तनु। उ०—दूरि जब लीं जरा रोगरु चलत इद्री
भाई आपनो कल्याण करि ले मानुषी तनु पाई।—सूर
(शब्द०)।

मानुषीय—वि० [सं०] मनुष्य संबंधी। मनुष्य का।

मानुषोत्तर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जैनों के अनुसार एक पर्वत का नाम
जो पुष्कर द्वीप की दो समान भागों में विभक्त करता है।

मानुष्य^१—वि० [सं०] मनुष्य संबंधी। मनुष्य का।

मानुष्य^२—सञ्ज्ञा पुं० १. मानवता। मनुष्यता। २. मानव शरीर।
३. मानव समूह। ४. मनुष्यलोक। मर्त्यलोक (को०)।

मानुष्यक^१—वि० [सं०] मनुष्य संबंधी। मनुष्य का।

मानुष्यक^२—सञ्ज्ञा पुं० दे० 'मानुष्य'।

मानुस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानुष] मनुष्य। आदमी। उ०—का निश्चित
रे मानुस अपनी चित्ता आछ। लेहु मजग होइ अगमन पुनि
पढतासि न पाछ।—जायमी (शब्द०)।

यौ०—भलामानुस। मानुसहरा = मनुष्य को हरनेवाला या
मानवशून्य। उ०—दीप गभस्थल आरन परा। दीप मद्दुस्थल
मानुसहरा।—पदमावत, पृ० १०।

माने—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मानो] अर्थ। मतलब। आशय।

मानो—अव्य० [हि० मानना] जैसे। गोथा। उ०—(क) मयनमहर्ष
पुरदहन गहन जानि आनि कै नदी की मारु अनुप गढायो है।
जनक मदिनि जहाँ भले भले भूमिपाल कियो बलहीन बल
आपनो बढायो है। कुनिम कठोर कुर्म पीठ तें कठिन अति
हठि न पिनाक काहू चपरि चढायो है। तुलसी सो गम के नराज
पानि परसत दृष्ट्यौ मानो वाग ते पुरानि ही पढायो है।—
तुलसी (शब्द०)। (ख) तिलक भाल पर परम मनोहर गोगोचन
को दीन्हो। मानो तीन लोक की शोभा प्रबिक उदय मो
कीन्हो।—सूर (शब्द०)। (ग) प्रिय पठयो मानो नखि मुजान।
जगभूपरा को भूपरा निधान। निज आँइ हम को मीस्य देन।
यह किर्षी हमारो भरम नेन।—केशव (शब्द०)।

मानोज्ञक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनाज्ञता। मनोहरता (को०)।

मानोखी—सञ्ज्ञा स्त्री० [द्य०] गम प्रकार की। चढया।

मानो^७—अव्य० [हि० मानना] दे० 'मानो'।

मान्य^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मान्या] १. मानने योग्य।
माननीय। २. आदर के योग्य। समान के योग्य। पूजनीय।
पूज्य। ३. प्रार्थनीय।

मान्य^२—सञ्ज्ञा पुं० १. विष्णु। २. शिव। महादेव। ३. भंजावकण।

मान्य^३—सञ्ज्ञा पुं० दे० 'मान'।

मान्यक^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मानिक्य] दे० 'मानिक'। उ०—
हार गुह्यो मेरा राम ताग, दिव विच मान्यक एक लाग।—
कवीर प्र०, पृ० २१३।

मान्यता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. मानने का भाव। मान्य होने का
भाव। मान्य होना। उ०—आप की मान्यताएँ इतनी रोमांटिक
होगी ऐसा नहीं समझती थी।—नदी०, पृ० ३०। २. स्वीकृति
या प्रामाणिकता। जैसे,—समृत विद्याधियों को भी प्रतियो-
गिता परीक्षाओं में सम्मिलित होने की मान्यता प्राप्त
हो गई है।

मान्यस्थान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आदर या मान का कारण।

विशेष—मनु जी ने पाँच मान्यस्थान लिखे हैं—वित्त, बधु,
वय, कर्म और विद्या। अथात् धन संपत्ति, सबध, अवस्था,
कार्य और योग्यता इन पाँच कारणों से मनुष्य का आदर किया
जाता है।

माप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु (को०)।

माप^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मापना] १. मापने की क्रिया या
भाव। नाप।

यौ०—मापतौल = जाँच।

२. वह मान जिससे कोई पदार्थ मापा जाय। अहंडा। मान।
३. परिमाण।

मापक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मान। माप। अहंडा। पैमाना। २.
वह जिससे कुछ मापा जाय। मापने की चीज। ३. वह
जो मापता हो।

मापक^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अन्न मापने का काम करनेवाला। बया।

विशेष—प्राचीन काल में भारत में अन्न तुला से नहीं तोला जाता था। भिन्न भिन्न तीलों के वस्तु-वस्तु में अनाज भर भरकर देखा जाता था। कौटिल्य ने लिखा है कि माप में भेद आने पर २०० पण जुर्माना किया जाता था।

मापत्य—सज्ञा पुं० [स०] कामदेव [को०]।

मापन—सज्ञा पुं० [स०] १ नपना। तराजू।

मापना—सज्ञा स्त्री० [स०] दे० 'मापन' [को०]।

मापना—क्रि० स० [स० मापन] १ किसी पदार्थ के विस्तार, आयतन वा वर्गत्व और घनत्व का किसी नियत मान से परिमाण करना। नापना। जैसे,—अगुल के मान में किसी पट्टी को लंबाई और चौड़ाई का मान निकालना कि इसकी लंबाई इतने अगुल वा चौड़ाई इतने अगुल है। किसी कोठरी के वर्गत्व का मान करना कि वह इतने वर्ग गज की है। उ०—(क) कहि घां शुक्र कहा घां कीजै आपुन भए भिखारा। जै जैकार भयो भुव मापत तीन पैड भइ सारी।—मूर (शब्द०)। (ख) दावन को पद लोकन मापि ज्यो दावन के वपु मांह मिघायो।—केशव (शब्द०)। (ग) हंमन लगी महचरि सबै देखहि नयन दुराइ। मानो मापति लोयननि कर परसनि फेलाइ।—गुमान (शब्द०)। २ किसी मान वा पैमाने में भरकर द्रव वा चूर्ण वा अन्नादि पदार्थों का नापना। जैसे, दूध मापना, चूना मापना। ३ पदार्थ के परिमाण को जानने के लिये कोई क्रिया करना। नापना।

मापना—क्रि० अ० [स० मत्त] मतवाला होना। उ०—नयन मजल तन थर थर कांपी। मांजहि खाइ मीन जनु मापी।—तुलसी (शब्द०)।

माफ—वि० [अ० मुश्नाफ] जो क्षमा कर दिया गया हो। क्षमित।

मुहा०—माफ करना = क्षमा करना। उ०—(क) प्रभु जू मैं ऐसी अमल कमायो। साविक जमा टूती जो जोरी मीजा कुल तल लायो। वडो तुम्हार वरामद हू को लिखि कीन्हों है साफ। सुरदास को वह मुहासिवा दस्तक कीजो माफ।—सूर (शब्द०)। (ख) खलनि को योग जहाँ नाज ही में देखियतु माफ करिवेही माहं होत कर नाशु है।—गुमान (शब्द०)।

माफकत—सज्ञा स्त्री० [अ० मुश्नाफिकत] १ अनुकूल होने का भाव। अनुकूलता। २ मेल। मंत्री।

यौ०—मेल माफकत।

माफल—सज्ञा पुं० [?] एक प्रकार का खट्टा नौवू।

माफिकर—वि० [अ० मुश्नाफिक] १ अनुकूल। अनुमार।

क्रि० प्र०—आना।—पढ़ना। होना।

२ योग्य। मुनासिब।

माफिकत—सज्ञा स्त्री० [अ० मुश्नाफिकत] दे० 'माफकत'।

माफी—सज्ञा स्त्री० [अ० मुश्नाफी] १ क्षमा।

मुहा०—माफी चाहना वा माँगना = क्षमा माँगना। माफ किए जाने के लिये प्रार्थना करना।

२. वह भूमि जिसका कर सरकार से माफ हो। बाध।

यौ०—माफीदार = माफी की भूमि का मालिक। जिसकी भूमि को मालगुजारी सरकार ने माफ की हो।

३ वह भूमि जो किसी को दिना कर के दी गई हो।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

मावत—सज्ञा पुं० [अ० मञ्जवूद] ईश्वर। परमात्मा। वह जिसकी उपामना की जाय।—दादू, पृ० १०८।

माम(पु)—सज्ञा पुं० [सं० मामक] १ ममता। अटकार। उ०—रहू संभारे राम विचारे कहत अही जो पुकारे हो। मूँड मुडाय फूलि कं वैंठे मुद्रा पहिर मजूसो हो। ताह उपर कछु छार लपेटे भितर भितर घर मूना हो। गाउ बमत है गर्व भारती माम काम रूकारा हो। मोहन जहाँ तहाँ लै जैहै नाही रहे तुम्हारा हो।—कवीर (शब्द०)। २ शक्ति। अतिकार। इख्तियार। उ०—भगी साह भेना तज ग्रव्य माम।—पृ० २१०, ५७, २०८। ३. प्रिय मित्र वा दोस्त (को०)। ४ चाचा। ताऊ। (सवावन में प्रयुक्त)।

मामक—सज्ञा पुं० [सं०] १ मेरा। हमारा या अपना की बुद्धि। स्व की बुद्धि। २ मातुल। मामा। ३ कृपया। कजूम [को०]।

मामक—वि० [वि० स्त्री० मामिका] १ मेरा। स्वयं का। २ लालची। स्वार्थी। ३ ममतायुक्त [को०]।

मामकीन—वि० [सं०] मेरा। स्वयं का [को०]।

मामता—सज्ञा स्त्री० [सं० ममता] १ अपनापन। आत्मीयता। २ प्रेम। मुहव्वत। अनुराग।

मामरी—सज्ञा स्त्री० [दश०] एक प्रकार का पेड़।

विशेष—यह हिमालय की तराई में रावी नदी से पूर्व की ओर तथा मद्रास और मध्य भारत में होता है। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत और चिकनी होती है, जिसपर रोगन करने से बहुत अच्छी चमक आती है। इसकी लकड़ी से मेज, कुर्सी आलमारी आदि आरायशी चीजें बनाई जाती हैं। इसकी छाल शोषक के काम में आती है और जड़ माँप के काटने की शोषक है। यह बीजों से उगता है। इसे 'चोरी' और 'हही' भी कहते हैं।

मामलत—सज्ञा स्त्री० [अ० मुश्नामिलत] दे० 'मालत'।

मामलति(पु)—सज्ञा स्त्री० [अ० मुश्नामिलत] १ मामिला। व्यवहार की बात। २ विवादास्पद विषय। उ०—वही जो मामलति पहले चुकाई। करी सो जइ तरे हाय भाई।—सूदन (शब्द०)।

मामला—सज्ञा पुं० [अ० मुश्नामिलत] १. व्यापार। काम। धंधा। उद्यम।

मुहा०—मामला बनाना = काम साधना।

२ पारस्परिक व्यवहार। जैसे, लेन देन, क्रय विक्रय इत्यादि।

३ व्यावहारिक, व्यापारिक या विवादास्पद विषय।

मुहा०—मामला करना = (१) बातचीत करना। बात पक्की करना। (२) पारस्परिक वैपश्य दूर करके निश्चयपूर्वक कुछ निर्धारण करना। फैसला करना। मामला बनाना = काम ठीक करना। बात पक्की करना।

४ पत्रकी या तै की हुई बात । कौल करार । ५ भगडा । विवाद । मुकदमा ।

मुहा०—दे० 'मुकदमा' के मुहा० ।

६ बात । घटना । उ०—कुँघर को देखने ही बचाई का चारो ओर से शोर मच गया । कुँघर बहुत चकपकाया कि यह मामला क्या है ।—भारतेंदु ग्र०, भा०, ३, पृ० ८०८ । ७ प्रधान विषय । मुख्य बात । ८ मुदर स्त्री । युवती । (बाजारू) । ९ समाग । स्त्रीप्रसंग ।

मुहा०—मामला बनाना = संभोग करना । प्रसंग करना ।

मामा^१—सञ्ज्ञा पुं० [अनु० मि० सं० मातुल] [स्त्री० मामी] माता का भाई । मा का भाई ।

मामा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ माता । माँ । उ०—आदम आदि सिद्धि नहि पावा । मामा हीवा कहँ ते आवा ।—कबीर (शब्द०) । २ रोटी पकानवाली स्त्री ।

यौ०—मासागिरी = दूमरो की राटी पकाने का काम ।

३ बुड्डो स्त्री । बुडिया । ४ नीकरानी । दाई । दासी । लौंडी ।

मामिला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुआमिला] दे० 'मामला' ।

मामी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मा (= निपेधार्थक)] आरोप को ध्यान में न लाना । अपने दोष पर ध्यान न देना ।

मुहा०—मामी पीना = दोषारोपण को ध्यान में न लाना । मुकर जाना । अपने दोष पर ध्यान न देना । उ०—(क) ऊधो हरि काहे के अतर्यामी । अजहु न आई मिले यहि औसर अवधि चतावत लामी । कोन्ही प्रीति पुहुप सडा की अपने काज के कामी । तिनको कौन परेखा कीजै जे हँ गरुड के गामी । आई उछरि प्रीति कलई सी जैसे खाटी आमी । सूर इते पर खुनपनि मरियत ऊधो पीवत मामी ।—सूर (शब्द०) । (ख) लाज कि और कहा कहै केशव जे मुनिए गुण ते सब ठाए । मामी पिए इनको मेरी माइ को हे हरि आठहू गाँठ अठाए ।—केशव (शब्द०) ।

मामी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मामा] मातुलानी । मामा की स्त्री ।

मामी^४—वि० [सं०] हामी । स्वीकृति । उ०—ध्यानदघन अघग्रोध बहावन सुदृष्टि जियावन वेद भरत है मामी ।—धनानन्द, पृ० ४१८ ।

मामू—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु० मि० सं० मातुल] [स्त्री० ममानी] माता का भाई । (मुमलमान) ।

मामूर—वि० [अ०] आवाद । भरा हुआ । समृद्ध । उ०—हो मुक्ति से मामूर मारी जमीन ।—कबीर म०, पृ० १३१ ।

मामूल^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] टेव । लत । उ०—इनका दीवानखाने म वैठकर खाना खाने का मामूल है ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ८५ । २ रीति । रिवाज । परिपाटी । ३. वह धन जो किसी को स्वाज आदि के कारण मिलता हो । ४ समोहित या वशोद्धत व्यक्ति । वह व्यक्ति जिसके ऊपर समोहन किया गया हो (को०) ।

मामूल^२—वि० जिसपर अमल किया जाय । अमल किया हुआ ।

मामूली—वि० [अ० मामूल + ई] १ निर्यामत । नियत । २. सामान्य । साधारण ।

मायँ(५)—अव्य० [वि० मध्य, प्रा० मज्ज] दे० 'माहि' ।

माय(५)^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृ] १ माता । माँ । जननी । उ०—जसुमति माय लाल अपने को शुभ दिन डोल झुलायो ।—सूर (शब्द०) । २ किमी बडो वा आदरगाय स्त्री के त्रिये सर्वोपन का शब्द । उ०—नव जानकी सामु पग लागो । मुनिय माय में परम अमागो ।—तुलसी (शब्द०) ।

माय^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० माया] दे० 'माया' । उ०—(क) ईश माय विलो के कै उपजाइयो मन पूत ।—केशव (शब्द०) । (ख) मुनि वेप किए किर्वी ब्रह्म जीव माय हँ ।—तुलसी (शब्द०) ।

माय^३—अव्य० [सं० मध्य] दे० 'माहि' । उ०—पाछे लोक पाल सब जीते सुरपति दियो उठाय । बरुण कुवेर अभिन यम मारुत स्ववम किए क्षण माय ।—सूर (शब्द०) ।

माय^४—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. पीतावर । २. अमुर ।

माय^५—वि० [सं०] मायावी । माया करनेवाला (को०) ।

मायक^१—वि०, सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माया करनेवाला । मायावी । उ०—(क) सायक सम मायक नयन रंगे त्रिविध रंग गत । भरनो लखि दुरि जाति जल लसि जलजात लजात ।—विहारी (शब्द०) । (ख) हस गति नायक कि गूढ गुण गायक कि श्रवण सुहायक कि मायक ह मय के ।—केशव (शब्द०) ।

मायक^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृ + क] दे० 'मायका' ।

मायका—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृ + का (प्रत्य०)] नहर । पीहर । उ०—(क) पठई समुभाय सहेलिन या कोऊ मायके मे मिलती न कहा ।—दूलह (शब्द०) । (ख) सो जा सखी भरमै मति री यह राजा हमार ही मायक वारो ।—दूलह (शब्द०) । (ग) मायके मे मन भावन को रति कीरति शम्भु । गरा हू न गावति ।—शम्भु (शब्द०) ।

मायण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वेद का भाष्य करनेवाले सायण और माधव के पिता का नाम । इन्हे मायन भी कहत थे ।

मायन(५)^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृका + आनयन] १ वह दिन वा तिथि जिसमे विवाह मे मातृकापूजन और पितृनिमन्त्रण होता है । उ०—वनि वनि आचत नार जान गृह मायन हो ।—तुलसी (शब्द०) । २ उर्ध्वुक्त दिन का कृत्य । मातृकापूजन या पितृनिमन्त्रण आदि कार्य । उ०—अभ्युदयिक करवाय आदि विधि सब विवाह के चारा । कृत्य तेल मायन करवहँ व्याह विधान अपारा ।—रघुराज (शब्द०) ।

मायनी(५)^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मा यन्] दे० 'मायाविनी' । उ०—प्रचड कोप ताडका अखड श्रोज मायनी । गिरी धरा घडाक दं सुरेश शाक दायनी ।—रघुराज (शब्द०) ।

मायनी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मानी] अर्थ । मतलब । आशय ।

मायल—वि० [अ० माइल, फ्रा०] १ झुका हुआ । रुजु । प्रवृत्त ।

उ०—इक तो हायल रहत हौं मायल हूँ वा चाय। तापर घायल कँ गई पायल वाल बजाय।—रामसहाय (शब्द०)। २ मिश्रित। मिखा हुआ। जैसे,—सब्जी मायल सफेद रंग का पत्ती देखने मे बहुत सुदर लगता है।

मायव—सज्ञा पुं० [सं०] मायु के गोत्र के लोग।

माया^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. लक्ष्मी। २. द्रव्य। धन। संपत्ति। दौलत। उ०—(क) माया त्यागे क्या भया मान तजा नहि जाय।—कवीर (शब्द०)। (ख) वह माया को दोष यह जो कवहूँ घटि जाय। तो रहीम मरिबो भलो दुख सहि जिय बनाय।—रहीम (शब्द०)। (ग) जो चाहै माया बहु जोरी करै अनर्थ सो लाख करोगी।—निश्चल (शब्द०)। ३. श्रविद्या। श्रज्ञानता। भ्रम। ४. छल। कपट। धोखा। चाल-बाजी। उ०—(क) सुर माया बस केकई कुसमय कीन्ह कुचाल।—तुलसी (शब्द०)। (ख) घरि कँ कपट भेप भिन्नुक को दसकधर तहँ आयो। हरि लीन्हो छिन मे माया करि अपने रथ बैठायो।—मूर (शब्द०)। (ग) तब रावण मन मे कहै करौँ एक भव काम। माया को परपच कँ रचौ सु लछमन राम।—हनुमन्नाटक (शब्द०)। (घ) साहस अनृत चपलता माया।—तुलसी (शब्द०)। ५. सृष्टि की उत्पत्ति का मुख्य कारण। प्रकृति। उ०—(क) माया, ब्रह्म जीव जगदीसा। लच्छि अलच्छि रक भवनीसा।—तुलसी (शब्द०)। (ख) माया माहि नित्य लै पावै। माया हरि पद माहि समावै।—सूर (शब्द०)। (ग) माया जीव काल के करम के सुभाव के करैया राम वेद कहै ऐसी मन गुनिए।—तुलसी (शब्द०)। ६. ईश्वर की वह कल्पित शक्ति जो उसकी आज्ञा से सब काम करती हुई मानी गई है। उ०—तहँ लखि माया की प्रभुताई। मरिण मंदिर सुच सेज सुहाई।—(शब्द०)। ७. इद्रजाल। जादू। छलमय रचना। उ०—जीति कौ सकँ अजय रघुराई। माया ते अस रची न जाई।—तुलसी (शब्द०)। ८. द्रव्यज्ञा नामक वर्ण-वृत्त का एक उपभेद। यह वर्णवृत्त इद्रव्यज्ञा और उर्ध्वव्यज्ञा के मेल से बनता है। इसके दूमरे तथा तीसरे चरण का प्रथम वर्ण लघु होता है। जैसे,—राधा रमा गौरि गिरा सु सीता। इन्है विचारे नित नित्य गीता। कटै अपारे अघ शोध मीता। हूँ है सदा तीर भला सुवीता। ९. एक वर्णवृत्त जिसमे क्रमशः मगण तगण, यगण, सगण और एक गुरु होता है। जैसे,—लीला हीं सो वासव जी मे अनुरागौ। तीनी लेकँ पालत नीके सुख पागौ। जो जो चाहो सो तुम वासो सब लीजौ। कीजै मेरी और कृपा सो सर भीजौ।—गुमान (शब्द०)। १०. मय दानव की कन्या जो विश्रवा को व्याही थी और जिससे खर, दूषण, त्रिशिरा और मूर्धनखा पैदा हुए। उ०—माया सुत जन में करि लेखा। खर, दूषण, त्रिशिरा सुपनेखा।—विश्राम (शब्द०)। ११. देवताओं मे से किसी की कोई लीला, शक्ति, इच्छा वा प्रेरणा। अ०—(क) रामजी की माया, कही घूप कही छाया। (कहावत)। (ख) अति प्रचंड रघुपति कँ माया। जेहि न मोह अस को जग जाया।—तुलसी (शब्द०)। (ग)

तेहि आश्रमहि मदन जब गयऊ। निज माया वसत निरयमऊ।—तुलसी (शब्द०)। (घ) बोले विहँसि महेश हरि माया बल जानि जिय।—तुलसी (शब्द०)। १२. कोई आदरणीय स्त्री। १३. प्रज्ञा। बुद्धि। अक्ल। १४. शांता। शठता (क्रो०)। १५. दम। गर्व (क्रो०)। १६. दुर्गा का एक नाम। १७. बुद्धदेव (गौतम) की माता का नाम।

यौ०—मायाकार। मायाजीवी।

माया^१—सज्ञा स्त्री० [हिं० माता] माता। माँ। जननी। उ०—बिनवै रतनसेन की माया। माये छात पाट नित पाया।—जायसी (शब्द०)।

माया^१—सज्ञा स्त्री० [हिं० ममता] १. किसी को अपना समझने का भाव। उ०—उमपर तुम्हे न हो, पर उसको तुमपर ममता माया है।—साकेत, पृ० ३७०। २. कृपा। दया। अनुग्रह। उ०—(क) भलेहि आय भव माया कीजै। पहुँनाई कहुँ आयसु दीजै।—जायसी (शब्द०)। (ख) माँचेहु उनके मोह न माया। उदासीन धन धाम न जाया।—तुलसी (शब्द०)। (ग) डड एक माया कर मोरे। जोगिनि होउँ चली संग तोर।—जायसी (शब्द०)।

माया^१—सज्ञा पुं० [फा० मायह] १. उपकरण। सामान। २. योग्यता। कविल होना। ३. पूंजी। धन। दौलत (क्रो०)।

यौ०—मायादार = धनी। पूंजीवाला। मालदार।

मायाकार—सज्ञा पुं० [सं०] जादूगर। ऐंद्रजालिक।

मायाकृत—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मायाकार' (क्रो०)।

मायाकृत—वि० [सं०] माया द्वारा किया हुआ। मायारचित। उ०—सुनहु तात मायाकृत गुन अरु दोष अनेक।—मानस, ७।४१।

मायाचेत्र—सज्ञा पुं० [सं०] दक्षिण के एक तीर्थ का नाम।

मायाचार—सज्ञा पुं० [सं०] मायावी (क्रो०)।

मायाजाल—सज्ञा पुं० [सं०] सासारिक मोह, माया, धर, गृहस्थी आदि का जजाल।

मायाजीवी—सज्ञा पुं० [सं० मायाजीविन्] जादूगरी मे जाँविका निर्वाह करनेवाला। जादूगर।

मायातत्र—सज्ञा पुं० [सं० मायातन्त्र] एक प्रकार का तत्र।

मायाति—सज्ञा पुं० [सं०] तांत्रिकों की वह नरखलि जो अष्टमी या नवमी को दुर्गा के सामने दी जाती है।

मायाद—सज्ञा पुं० [सं०] कुमीर। मगर।

मायादेवी—सज्ञा स्त्री० [सं०] बुद्ध की माता का नाम।

मायाधर—सज्ञा पुं० [सं०] मायावी। मायापटु।

मायापटु—सज्ञा पुं० [सं०] मायावी।

मायापति—सज्ञा पुं० [सं०] ईश्वर। परमेश्वर। उ०—मायापति सेवक सन माया। करइ त उलटि परइ मुरराया।—मानस, २।२१७।

मायापात्र—सज्ञा पुं० [सं० माया (= धन) + पात्र] वह जिसके पास बहुत धन हो। धनवान। श्रीर।

- मायापाश—मज्ञा पुं० [म०] मायाजान । माया का फंदा ।
- मायापुगी—मज्ञा स्त्री० [म०] एक प्राचीन नगरी का नाम ।
- माय प्रयोग—मज्ञा पुं० [म०] १ छल का प्रयोग । धूर्तता । २ उद्गमन करना । जादू का प्रयोग करना (को०) ।
- मायाफल—मज्ञा पुं० [म०] माजूफल ।
- मायामय वि० [सं०] मायायुक्त । उ०—मायामय तेहि कीन्हि रमोई । विजन बहु गनि मर्क न कोई ।—मानम, १।१७३ ।
- मायामृग—मज्ञा पुं० [म०] माया का हिरन । सीता को छलने के लिये मारीच राज्ञम का स्वर्णमृग रूप । कपट मृग । उ०—मायामृग पाये सोइ धावा ।—मानम, ३।२१ ।
- मायामोह—मज्ञा पुं० [म०] पुराणानुसार विष्णु के शरीर से निकला हुआ एक कल्पित पुरुष जिसकी सृष्टि अमुरों का दमन करने के लिये हुई थी ।
- मायायत्र—सज्ञा पुं० [सं० मायायन्त्र] कमी को मोहने की विद्या । समोहन ।
- मायायुद्ध—मज्ञा पुं० [म०] माया की लड़ाई । माया के बल अथवा छल से किया जानेवाला युद्ध (को०) ।
- मायारवि—सज्ञा पुं० [सं०] सपूर्ण जाति का एक राग जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं ।
- मायावचन—सज्ञा पुं० [म०] कपटपूर्ण कथन । झूठा वचन । छल से भरी बात (को०) ।
- मायावत्—सज्ञा पुं० [म०] १ मायावी । २ राज्ञम । अमुर । ३ वम का एक नाम ।
- मायावती—मज्ञा स्त्री० [सं०] कामदेव की स्त्री रति का एक नाम ।
- मायावाद—मज्ञा पुं० [म०] ईश्वर के अनिर्दिष्ट सृष्टि की समस्त वस्तुओं का अनित्य और अमर्य मानने का सिद्धान्त जिसके अनुसार यह सारी सृष्टि केवल माया या मिथ्या समझी जाती है । उ०—मेघ मायावाद सिंह वादी अतुल धर्म वृष जयति गुणारामि वल्लभ मुग्रत, —भारतेडु ग्र०, भा० ३, पृ० ५२७ ।
- मायावादी—मज्ञा पुं० [म०] मायावादिन् । ईश्वर के सिवा प्रत्येक वस्तु को अनित्य माननेवाला । वह जो मायावाद के अनुसार सारी सृष्टि को माया या भ्रम समझता है ।
- मायावान—सज्ञा पुं० [सं०] मायावत् । दे० 'मायावत्' ।
- मायाविनी—मज्ञा स्त्री० [म०] छल वा कपट करनेवाली स्त्री, ठगिनी ।
- मायावी^१—मज्ञा पुं० [सं०] मायाचिन् । [स्त्री०] मायाविनी । १ बहुत बड़ा चालाक । छलिया । धोखेवाज । फरेवी । २ एक दानव का नाम जो मय का पुत्र था और बालि में लडने के लिये किष्किवा में प्राया था । वाल्मीकि के अनुसार यह दुदुर्भा नामक दैत्य का पुत्र था । उ०—मयसुत मायावी तेहि नाळें । आत्रा मो प्रभु हमरे गाळें ।—तुलसी (शब्द०) । ३ परमात्मा । ४ माजूफल (को०) । ५ विन्नी ।
- मायावी^३—वि० १ छलिया । फरेवी । २ माया या जादू करनेवाला (को०) ।

- मायावीज—मज्ञा पुं० [म०] 'ह्री' नामक तांत्रिक मंत्र ।
- मायासीता—सज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार वह कल्पित सीता जिसकी सृष्टि सीताहरण के समय अग्नि के योग से हुई थी । माया द्वारा निर्मित सीता । उ०—पुनि मायासीता कर हरना । श्री रघुवीर विरह कछु बरना ।—मानम ७।६६ ।
- विशेष—कुछ पुराणों तथा रामायणों में यह बतथा है कि सीता-हरण के समय अग्नि ने वास्तविक सीता को हटाकर उनके स्थान पर माया से एक दूसरी सीता खड़ी कर दी थी ।
- मायासुत—सज्ञा पुं० [सं०] माया देवों के पुत्र, बुद्ध ।
- मायासृष्टि—सज्ञा पुं० [सं०] मायावादियों के अनुसार दृश्यमान भ्रमात्मक जगत् जो 'नाशमान' है । उ०—यह मायासृष्टि सर्वव्यवधान में रहती है ।—कबीर म०, पृ० ३६ ।
- मायास्र—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का कल्पित अस्त्र जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इसका प्रयोग विश्वामित्र ने श्रीरामचन्द्र जी को सिखाया था ।
- मायिक^१—सज्ञा पुं० [म०] माजूफल ।
- मायिक^३—वि० [म०] १. माया से बना हुआ । जो वास्तविक न हो बनावटी । जाली । उ०—कहि जग गति मायिक मुनिनाथा । कहे कछुक परमारथ गाथा ।—तुलसी (शब्द०) । २ मायावी । माया करनेवाला ।
- मायी^१—सज्ञा पुं० [सं०] मायिन् । १ माया का अविद्याता, परब्रह्म । ईश्वर । २ माया करनेवाला व्यक्ति । ३ जादूगर । ४ अग्नि (को०) । ५ शिव (को०) । ६ कामदेव (को०) ।
- मायी^३—वि० दे० 'मायिक' ।
- मायी^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] मायि प्रा माइ । दे० 'माई' ।
- मायु—मज्ञा पुं० [सं०] १ पित्त । २ शब्द । ३ वाक्य । ४ सूर्य ।
- मायुक—वि० [सं०] शब्द करनेवाला ।
- मायुराज—सज्ञा पुं० [सं०] कुवेर के एक पुत्र का नाम ।
- मायूर^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ वह रथ जो मयूरों में चलता हो । २ मयूर । मोर ।
- मायूर^३—वि० १ मयूर सबवी । मोर का । २ मयूरप्रिय । मोर को प्रिय (को०) । ३ मयूरपक्ष का । मोर के पक्ष से बना हुआ (को०) ।
- मायूरक—सज्ञा पुं० [सं०] वह जो जगली मोरा को पकड़ता हो ।
- मायूरा—सज्ञा स्त्री० [सं०] कलमर ।
- मायूरिक—सज्ञा पुं० [सं०] मायूरक । मोर पकड़नेवाला (को०) ।
- मायूरी—सज्ञा स्त्री० [सं०] अजमोदा ।
- मायूस—वि० [फा०] निराश । नाउम्मेद । उ०—मायूस नजर में कब किमने दुनिया की सच्चाई देखी ।—मिलन०, पृ० ६६ ।
- मायूसी—सज्ञा स्त्री० [फा०] मायूस + ई (प्रत्य०) । निराशा । नाउम्मेदी ।
- मायोभव—सज्ञा पुं० [सं०] १ शुभ । अच्छा । २ सौभाग्य ।

मार^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । उ०—(क) क्रीडत गिलोल जव लाल कर तव मार जानि चापक सुमन ।—पृ० रा०, १।७२७ । (ख) ऐसी और न जानिवी जग अनौति कर नार । जामँ उपज्यौ सरन मौ ताकी वेधत मार ।—स० सप्तक, पृ० ३६५ । २ विघ्न । ३ विप । जहर । ४ घतूरा । ५ मारण । मार डालना । वध (को०) । ६ मृत्यु । मौत । मरण (को०) ।

मार^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मारना] १ मारने की क्रिया या भाव । २ आघात । चोट । ३ जिस वस्तु पर मार पड़े । निशाना । ४ मार पीट । ५ कष्ट । पीडा । क्लेश । ६ युद्ध । लड़ाई ।

यौ — मारकाट । मारघाड़ = मारपीट । मारपछड़ = लड़ाई भगड़ा या मार पेच । मारपेच ।

मार^३ अव्य० [हिं० मारना] १ अत्यत । बहुत । उ०—(क) सुनत द्वारावती मार उतसौ भयो ।—सूर (शब्द०) । (ख) सोने की अटारी चित्रसारी मार जारी जैसे घास की अटारी जर गई फिरे वाँस ते ।—राम (शब्द०) ।

मार(पु)^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० माला] माल । उ०—अमल कपोलँ आरसी बाहू चपक मार ।—केशव (शब्द०) ।

मार सञ्ज्ञा स्त्री० [द्य०] काला मिट्टी की जमान । करैल मिट्टी की भूमि । मरवा भूमि ।

मार —सञ्ज्ञा पुं० [फा०] सर्प । माँप । उ०—कई मार हुआ है कई नेवल कई प्यासा भुका कई जल ।—दक्खिनी पृ० ३२४ ।

मार्कंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्कण्ड] १० 'मारकडेय' (को०) ।

मारकडेय—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्कण्डेय] पुराणानुसार एक ऋषि का नाम । मार्कण्डेय ।

विशेष—ये अष्ट चिरजीवियों में से एक माने जाते हैं इनके पिता का नाम मुकड था । इनके विषय में यह प्रसिद्ध है कि ये सदा जीवित रहते हैं और रहेगे ।

मुहा०—मारकडेय की आयु होना = दीर्घजीवी होना । चिरायु होना । (आशीर्वाद) ।

मारक^१—वि० [सं०] १ मार डालनेवाला । मृत्युकारक । संहारक । उ०—(क) लै उतारि यातै नृपति भलो चढायो वान । निर-दोषिन मारक नहीं यह तारक दुखियान ।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०) । (ख) मुकवि मिलन की आस एक अवलव उधारक । नहीं तो कैसे वचती माख्यौ मार मुमारक ।—व्यास (शब्द०) । २. किसी के प्रभाव आदि को नष्ट करनेवाला । घात पर प्रति-घात करनेवाला । जैसे,—यह श्रापघ अनेक प्रकार के विपों का मारक है ।

मारक^२—सञ्ज्ञा पुं० १ वध करनेवाला । जन्लाद । २. कामदेव का एक नाम । ३ श्येन पक्षी । बाज । ४ महामारी ५ प्रलयकालीन प्राणिनाश । ६ मिदूर (को०) ।

यौ०—मारकस्थान = कुडली में वे स्थान जिनमें क्रूर ग्रहों की स्थिति से कष्ट एव मृत्यु होती है ।

मारका^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मार्क] १ चिह्न । निशान । २. किसी प्रकार का चिह्न जिससे कोई विशेषता सूचित हो ।

मारका^२—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ युद्ध । लड़ाई । २ युद्धस्थल । लड़ाई का मैदान (को०) । ३ लड़ाई भगडा । हगामा (को०) । ४ बहुत बड़ी या महत्वपूर्ण घटना ।

मुहा०—मारके की बात या काम = कोई महत्वपूर्ण या बड़ी बात या काम । मारका जीतना या सर करना = मैदान फतह करना । महत्व का काम अपने अनुकूल कर लेना ।

मारकाट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मारना + काटना] १ युद्ध । लड़ाई । जग । २. मारने काटने का काम । ३. मारने काटने का भाव ।

मारकायिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वीदों के अनुसार मार के अनुचर ।

मारकीन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मैनकिन्] एक प्रकार का मोटा कोरा कपडा जो प्राय गरीबों को पहनने के काम में आता है । उ०—मारकीन मलमल बिना चलत कछू नहिं काम । परदेसी जुलहान के मानहु भए गुलाम ।—भारतेंदु प्र०, भा० ३, पृ० ७३५ ।

मारकेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार जन्म कुडली में पडनेवाले कुछ विशिष्ट ग्रहों का योग जिसके परिणाम-स्वरूप उस व्यक्ति को मृत्यु हो जाती है अथवा वह मरणामन्त्र हो जाता है ।

मारखोर—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मारखौर] एक प्रकार की बकरी वा भेड़ जो काश्मीर और अफगानिस्तान में होती है ।

विशेष—यह प्राय दो तीन हाथ ऊँची होती है और ऋतु के अनुसार रंग बदलती है । इसके सींग जब में प्राय सटे रहते हैं और इसकी दाढ़ी बहुत लंबी और घनी होती है ।

मारग(पु)^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्ग] राह । रास्ता । मार्ग । उ०—(क) मारग हुत जो अथेर असूफा । भा उजेर सब जाना वृष्ठा ।—जायसी (शब्द०) । (ख) मारग चलहिं पयादेहि पाएँ । कोतल सग जाहिं डोरियाएँ ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) मवहिं भांति पिय सेवा करिहीं । मारग जनित सकल अम हरिहीं ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुहा०—मारगचीन्हना = मार्ग पहचानना । उद्देश्यामिद्धि के लिये रास्ता जान लेना । उ०—दीपक लेसि जगत कहँ दीन्हा । भा निरमल जग मारग चीन्हा ।—जायसी (शब्द०) । मारग मारना = रास्ते में पथिक को लूट लेना । उ०—मारग मारि महीसुर मारि कुमारग कोटिक केँ घन लीयो ।—तुलसी (शब्द०) । मारग लगना = रास्ते लगना । रास्ता लेना । चला जाना । उ०—(क) जोगी हीहु तो जुक्ति सो मांगहु । भुगुति लेहु लै मारग लागहु ।—जायसी (शब्द०) । (ख) यह सुनि मुनि मारग लगे सुख पायो नरदेव ।—केशव (शब्द०) । मारग लेना = दे० 'मारग लगना' ।

मारगन(पु)^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्गण] १ बाण । तीर । उ०—तानेउ चाँप सवन लगी छँडे विभिख कराल । राम मारगन

गन चले लहलहात जनु खान।—बुधमी (शब्द०)। २
भिन्नुक। याचक। निरामगा।

मारगीर—सज्ञा पुं० [फा०] मकारी। सपेरा [को०]।

मारजन—सज्ञा पुं० [सं० मार्जन] दे० 'मार्जन'।

मारजनी—सज्ञा स्त्री० [सं० मार्जनी] दे० 'मार्जनी'।

मारजार—सज्ञा पुं० [सं० मार्जार] दे० 'मार्जार'।

मारजित्त—सज्ञा पुं० [सं०] १ वह जिसने कामदेव को जीत लिया हो। २ शिव [को०]। ३ युद्ध।

मारण—सज्ञा पुं० [सं०] १ मार डालना। प्राण लेना। हत्या करना। २ एक कल्पित तांत्रिक प्रयोग जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि जिस मनुष्य के मारने के लिये यह प्रयोग किया जाता है, वह मर जाता है। उ०—(क) मारण मोहन वसिकरण उच्चाटन अर थभ। आकर्षण वह भाँति के पढे सदा करि दभ।—रघुनाथदास (शब्द०)। 'स' सोखी सवै मिलि घातु कर्मनि द्रव्य बाढत जाइ। आकर्षणादि उच्चाट मारण वशीकरण उपाइ।—केशव (शब्द०)।

मारतड(पु)—सज्ञा पुं० [सं० मार्तण्ड] दे० 'मार्तण्ड'। उ०—मारतंड परचढ महँ फरकत जुग भुजदड। रघुनदन दसकध लखि टकोरघो कोदड।—स० सप्तक, पृ० ३६७।

मारतडमडल—सज्ञा पुं० [सं० मार्तण्डमण्डल] दे० 'मार्तण्डमण्डल'।

मारतडसुत—सज्ञा पुं० [सं० मार्तण्डसुत] दे० 'मार्तण्डसुत'।

मारतौल—सज्ञा पुं० [पुर्त० मार्टोली] एक प्रकार का बड़ा हथौड़ा। उ०—जब मैं परेग को मारतौल से मारता हूँ।—वैलेन्टाइन (शब्द०)।

मारन(पु)—सज्ञा पुं० [सं० मारण] १ मार डालना। उ०—घाय मुवा लै मारन गई। समुक्ति ज्ञान हिये महँ भई।—जायसी (शब्द०)। २ दे० 'मारण'। उ०—सतगुरु शब्द सहाई। मारन मोहन उच्चाटन वसिकरण मनहिं माहिं पाछिताई।—कवीर श०, भा० २, पृ० २८।

मारना—क्रि० सं० [सं० मारण] १ वध करना। हनन करना। घात करना। प्राण लेना। उ०—(क) जिन वेधत मुख लक्ष लक्ष नृप कुँवर कुँवरमनि। तिन वानन वाराह बाघ मारत नहिं मिहनि।—केशव (शब्द०)। (ख) सुआ सो राजा कर विसरायी। मारि न जाय चहै जेहि स्वामी।—जायसी (शब्द०)। २ दड देने के लिये किसी को किसी वस्तु से पीटना या आघात पहुँचाना। जैसे, लात, थप्पड़, मुक्का, लाठी, छूता, तलवार आदि मारना। उ०—(क) एक ठौर देखत भयो वृषभ एक एक गाय। भय बस भागे जात दोउ एक नर मारत जाय।—विश्राम (शब्द०)। (ख) जो न मुदित मन आज्ञा देही। लाग्यो मारन तुरत तेही।—विश्राम (शब्द०)। ३ जरब लगाना। ठोकना। उ०—जब मैं परेग को मारतौल से मारता हूँ, तो यह परेग इस लकड़ी से घुस जाती है।—वैलेन्टाइन (शब्द०)। ४ दुख देना। मताना। जैसे,—मुझे तुम्हारी चिंता मार रही है।

उ०—देखी राम दुखित महतारी। जनु सुवेलि अरवली हिम मारी।—तुलसी (शब्द०)। ५ कुशती या मल्लयुद्ध में विपत्ती को पछाड़ देना। जैसे,—इस पहलवान को मेरे पहलवान ने दो बार मारा है। ६ वद कर देना। जैसे, किवाड़ा मारना। ७ शस्त्र आदि चलाना। फेंकना। जैसे,—उसने कई तीर मारे। उ०—पारथ बाण चहुँ दिगि मारै। यूय यूय छत्री सहारै।—सवल सिंह (शब्द०)।

मुहा०—गोली मारना = (१) किसी को बंदूक की गोली से मार देना। किसी पर बंदूक चलाना या छोड़ना। (२) जाने देना। त्याग देना। ध्यान न देना। तुच्छ वा अनावश्यक समझना। जैसे,—मारो गोली इस बात में धरा ही क्या है। बंदूक मारना = किसी पर बंदूक की गोली छोड़ना। बंदूक दागना। फेंक करना। उ०—दुश्मनो ने भी हर तरफ से वहाँ आकर मुकाबिले के वास्ते दीवारों और बुरजों बनाईं जिनमे बंदूको के मारने के वान्ते जगह रखी।—देवीप्रसाद (शब्द०)।

८ किसी शारीरिक आवेग या मनोविकार आदि को रोकना। ९ नष्ट कर देना। अत कर देना। न रहने देना। जैसे,—(क) पाले ने फमल मार दी। (ख) तुमने उनका रोजगार मार दिया। (ग) उसने बार बार उपवास करके अपनी भूख मार ली है। (घ) भूख मारने से शक्ति, तद्रा, दाह और बल का नाश होता है। (ङ) उसने बहुतेरे घर मारे हैं। १० शिकार करना। अहेर करना। आखेट करना। जैसे, मछली मारना, हिरन मारना। ११ किसी वस्तु को इस प्रकार फेंकना कि वह किसी दूसरी वस्तु से जोर से टकरा जाय। उ०—उसने ढोंके को ऊँचा करके जोर से उस खम्भे पर मारा जिनमे खम्भा हिल उठा। देवकीनदन (शब्द०)।

मुहा०—दे मारना = (१) पटकना। (२) पछाड़ना। वह मारा = वस अब कार्य सिद्ध हो गया। विजय प्राप्त हुई। जो चाहते थे सो हो गया। उ०—यह आपकी मेहरबानी है, मैं किस काबिल हूँ। (मन में) वह मारा, अब कहाँ जाती है। आज का शिकार तो बहुत हो नफीम है।—राधाकृष्ण दास (शब्द०)।

१२ गुप्त रखना। छिपाना। दवाना। उ०—(क) रिस उर मारि रक जिमि राजा। विपिन बमै तापम के साजा। तुलसी (शब्द०)। (ख) खोज मारि रथ हाँकहु ताता। ग्रान उपाय बर्नाहि नहि वाता।—तुलसी (शब्द०)। १३ चलाना। मचालित करना।

मुहा०—गाल मारना = पीटना। बड बडकर बातें करना। उ०—(क) मूढ मृषा जनि मारेमि गाला। राम बँर होइहि अस हाला।—तुलसी (शब्द०)। (ख) काहू को सर सूघो न परै मारत गाल गली गली हाट।—हरिदास (शब्द०)। (ग) मारत गाल कहा इतनो मन मोहन जू अपने मन ऊटे।—रघुनाथ (शब्द०)। कुछ पढ़कर मारना = मत्र से फूँकर कोई चीज किसी पर फेंकना। जैसे, मूँग मारना। साप पर मरसो मारना। जादू मारना = किसी पर जादू का प्रयोग करना। किसी पर मत्र या तंत्र करना। डींग मारना = शेखी वधाएना। वडी

वही बातें करना जिनका होना अर्थभव हो। उ०—वाह ऐसा ही था ताँ चूड़ी पहिर लेते, जर्वाँमर्दों की डींग बयो मारते हैं।—दवकीनदन (शब्द०)। मत्र मारना=जादू करना। मत्र पढकर फूँकना। उ०—गट्टी को एक दिवाल पर फेंक देना और ऐसा मत्र मारना कि पाहचाना हुआ ही ताश उसमें चिपक जाय, बाकी सब गिर पड़ें।—रामकृष्ण (शब्द०)।

१४ धातु आदि को जलाकर उसका भस्म तैयार करना। जैसे, पारा मारना, सोना मारना। १५ अनुचित रूप से, विना परिश्रम के अथवा बहुत आसक्ति प्राप्त करना। (इस अर्थ में इसका प्रयोग प्रायः माल या रकम आदि शब्दों के ही साथ होता है।) जैसे, माल मारना, किसी का हक मारना। १६ करना। लगाना। जैसे, गोता मारना, चक्कर मारना। १७ विजय प्राप्त करना। जीतना। जैसे, मैदान मारना। १८. ताश या शतरंज आदि खेलों में विपक्षी के पत्ते या गोट आदि को जीतना। १९ जो कुछ देना बाजब है, वह न देना। अनुचित रूप से रख लेना। जैसे,—हमारे (१००) उसने मार लिए। २० बल या प्रभाव कम करना। मारक होना। जैसे,—जहर को जहर मारता है। २१ किसी योग्य न रहने देना। निर्जिव सा कर देना। जैसे,—इन्हें तो फजूलखर्चों ने मारा है। २२ डसना। काटना। डक मारना। जैसे, बाँधी मारना। २३ रगाना। देना। जैसे, टाका मारना। २४. गुदाभजन करना। पुरुष का पुरुष के साथ सभोग करना। २५ सभोग करना। स्राप्रसंग करना।

विशेष—(क) यह शब्द भिन्न भिन्न सज्ञाओं तथा कुछ विशेष क्रियाओं के साथ मुहावरों के रूप में अनेक प्रकार के अर्थ देता है। जैसे, दम मारना, लकीर मारना, कोर मारना, धार मारना, पीस मारना, सता मारना, आदि। (ख) इसकी साथ प्रायः 'डालना' और 'देना' आदि संयोज्य क्रियाएँ आती हैं।

मारपीट—सज्ञा स्त्री० [हि० मारना + पीटना] मारने और पीटने की क्रिया। ऐसा लड़ाई जिसमें आघात किया जाय।

मारपेच—सज्ञा पुं० [हि० मारना + पेच] वह युक्ति जो किसी को धोखे में रखकर उसकी हानि करके या उस नीचा दिखाने के लिये की जाय। धूतता। चालबाजी।

मारफत^१—अव्य० [अ० मारफत] द्वारा। वसीले से। जरिए से। उ०—(क) सध मागध मारफत यह काज अम बनु आसु।—गोपाल (शब्द०)। (ख) नेपाल में एक अगरेजा दूत रहता है। उस रजाडेट कहत है। उसा को मारफत नेपाल राज्य और हिंदुस्तान का गवर्नरसत आवश्यकतानुसार लिखा पढ़ी होतो है।—द्विवेदी (शब्द०)।

मारफत^२—सज्ञा स्त्री० आध्यात्मिक बुद्धि या ज्ञान अथवा आध्यात्मिक रचना। अथवा ज्ञान।—दादू, पृ० ११०।

मारव—सज्ञा पुं० [सं०] १ मरु देवता। २. मरुभूमि। जागल प्रदेश (की०)। ३. राजतरंगिणी के अनुसार एक प्राचीन देश। उ०—मरु मारव माहृदेव जवासा।—मानस, १।६।

मारवा—सज्ञा पुं० [देश०] १. एक सकर राग जो परज, विभास और गौरी को मिलाकर बनाया जाता है। कुछ लोग इसे भ्रम से श्री राग का पुत्र मानते हैं। २ एक प्रकार का खयाल जो तिलवाडा ताल पर बजाया जाता है।

मारवाड—सज्ञा पुं० [हि० मेवाड] १ मेवाड राज्य। २० 'मेवाड'। २ राजपूताने का एक प्रांत जहाँ अब बीकानेर और जोधपुर के राज्य हैं। मेवाड के आस पास का प्रांत।

मारवाड़ी^१—सज्ञा पुं० [हि० मारवाड़ + ई] [स्त्री० मारवाडिन] १ मारवाड देश का निवासी। २. मारवाड देश की भाषा।

मारवाड़ी^२—वि० [हि० मारवाड] मारवाड देश का। मारवाड देश संबंधी।

मारवीज—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का मंत्र।

मारा(पु)—वि० [हि० मारना] जो मार डाला गया हो। मारा हुआ। निहृत। उ०—परखेसु माहि एक पखवार। नहि आवहुँ तो जानेसु मारा।—तुलसी (शब्द०)।

मुहा०—मारा फिरना, मारा मारा फिरना = व्यर्थ घूमना फिरना। बुरी दशा में इधर उधर घूमना। उ०—दुक हिम हवा की छोड़। मर्या मत देश विदेश फिरे मारा।—नजार (शब्द०)।

मारात्मक—वि० [सं०] १. हिंसक। २ दुष्ट। ३. प्राणनाशक। साधातिक। उ०—वह भारत में मजहब के मारात्मक नशे की व्यापकता का समझता था।—पिजरे, पृ० १५३।

माराभिभू—सज्ञा पुं० [सं०] बुद्ध देव।

मारामार^१—क्रि० वि० [हि० मारना] अत्यंत शीघ्रता से। बहुत जल्दी। उ०—मे अयोध्या के राजा का सारथी हूँ। दमयती का स्वयंवर आज ही सुनके मारामार घोड़ा का यहाँ लाया हूँ।—शिवप्रसाद (शब्द०)।

मारामार^२—सज्ञा स्त्री० दे० 'मारपीट'।

मारि^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. मार डालना। बध करना। २ एक व्याधि। मरा (रोग)।

मारि^२—सज्ञा स्त्री० [हि० मार] १ लड़ाई। युद्ध। २ मारपीट।

मारिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] मरी (रोग)। महामारी (की०)।

मारिच(पु)^१—स्त्री० पुं० [सं० मारीच] दे० 'मारीच'।

मारिच^२—सज्ञा पुं० [अ० मार्च] दे० 'मार्च'।

मारिच^३—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मारिची] काली मिर्च मिश्रित। काली मिर्च द्वारा निमित्त (की०)।

मारिचिक—वि० [सं०] जिसमें मिर्च मिला हो। मिर्च का। मिर्च-युक्त (की०)।

मारित(पु)—वि० [सं०] १ जो मार डाला गया हो। निहृत। २ जो भस्म कर दिया गया हो। (बैद्यक)।

मारिप—सज्ञा पुं० [सं०] १ नाटक का सूत्रधार। २ नाटक में किसी मान्य या प्रतापशत व्याक्त के लिये मबोधन। ३ भरसा नामक साग।

मारिपा—सज्ञा स्त्री० [सं०] दक्ष की माता का नाम।

मारी'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मारना] कोई ऐसा मरकामक रोग जिसके कारण बहुत से लोग एक साथ मरें। मरी। जैसे, हैजा, प्लेग, चेचक इत्यादि। दे० 'मरी'। उ०—ईति भीति ग्रह प्रेत चौरानल व्याधि वाघा ममन घोर मारी।—तुलसी (शब्द०)। (ख) मव जदपि अमारी घर तदपि मारी सम परदल घंसत।—गोपाल (शब्द०)।

मारी'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मारिन्] हत्या करनेवाला। घातक।

मारी'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ चढी। २ माहेश्वरी शक्ति। ३ मरी। (रोग)।

मारीच'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रामायण के अनुसार वह राक्षस जिसने मोने का हिरन वनकर रामचन्द्र को धोखा दिया था। २ मिर्च के पौधे। मिर्च की भाँडी (को०)। ३ बड़ा हाथी। विशाल गज (को०)। ४ ककूल (को०)।

मारीच'—वि० मरीचि सर्ववी। मरीचि ऋषि निर्मित (को०)।

मारीचपत्रक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सरल वृक्ष।

मारीचवल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मिर्च का पेड़।

मारीची'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार के देवता।

मारीची'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ शाक्य मुनि की माता। माया देवी। २ बुद्ध की देवियाँ। ३ एक अप्सरा का नाम (को०)।

मारीच्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अग्निश्वाता।

मारीप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मरसा साग।

मारुग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मारुङ्ग] कोमलता। मृदुता। मार्दव (को०)।

मारुड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मारुण्ड] १ साँप का अण्ड। २ गोमय। गोबर (को०)। ३ गोबर से भरा हुआ रास्ता (को०)। ४ रास्ता। मार्ग। पथ (को०)।

मारु(७)'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मार'।

मारुअ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मरु देश। मारु नाम का देश। मरु वग दश। उ०—कालि कहल पिपाए साभे हिर जाएव मोये मारुअ देम।—विद्यापति, पृ० ११७।

मारुका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मारी] तांत्रिकों की एक देवी। मरी। चढी मारी।

मारुत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वायु। पवन। हवा। २ वायु का अधिपति देवता।

शौ०—मारुतनदन=मारुतसुत। वायुपुत्र। मारुततनय=हनुमान।

३ विष्णु (को०)। ४ हस्ति शुङ्घ (को०)। ५ स्वाती नक्षत्र (को०)।

मारुतसुत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हनुमान। ल०—मारुतमुत में कपि हनुमान।—मानम, ७। २ भीम।

मारुतात्मज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मारुतमुत'।

मारुतापह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वरुण वृक्ष।

मारुतायन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गवाक्ष। वातायन। खिडकी (को०)।

मारुताशन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कार्तिकेय। २ साँप। सर्प।

मारुति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हनुमान। २ भीम।

मारुती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पश्चिमोत्तर दिशा। वायव्य दिशा (को०)।

मारुदेव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन पर्वत का नाम।

मारुध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन देश का नाम।

मारु'—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मारना] १. राग जो युद्ध के समय बजाया और गाया जाता है। उ०—(क) भेरि नफीरि वाज सहनाई। मारु राग सुमट सुखदाई।—तुलसी (शब्द०)। (ख) सँयद समर्थ भूप अली अकबर दल चलत बजाय मारु दुदुभी बुकान की।—गुमान (शब्द०)। (ग) मारुवणी भगताविया मारु राग निपाइ। दूहा सदेशा तरुण दीया तिर्या सिखाइ।—ढोला०, दू० १०६। (घ) रण की टकार गाजे दुंदुभी मे मारु वाजे तेरे जीय ऐसी रुद्र मेरी और लरंगे।—हनुमान (शब्द०)। २ बहुत बड़ा ढका या नगाडा। जगो धौसा। उ०—उम काल मारु जो बजाता था, भो तो मेघ सा गाजता था।—लल्लू (शब्द०)।

विशेष—इसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं। यह श्री राग का पुत्र माना जाता है। इसे 'माँड' और 'माण' भी कहते हैं। वीर रस का व्यञ्जक यह राग शृंगार रस का भी प्रवाही है। मारवाड में यह राग विशेष लोकप्रिय है।

मारु'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरुभूमि] १ मरुदेश के निवासी। मारवाड के रहनेवाले। उ०—प्यासे दुपहर जेठ के थके सवै जल सोधि। मरु घर पाय मतीरहू मारु कहत पयोधि।—विहारी (शब्द०) २ मरु देश। मारवाड। उ०—(क) मारु देस उपन्रियाँ सर ज्यउँ पच्चरियाह।—ढोला०, दू० ६६७। (ख) मारु कामिणि दिखणी वर हरि दीयइ तउ होइ।—ढोला०, दू० ६६८।

मारु'—वि० [हि० मारना] १ मारनेवाला। २ हृदयवेधक। कटीला। उ०—काजल लगे हुए मारु नयनों के कटाक्ष अपने सामने तरुणियों को क्या ममभते थे।—गदाधरसिंह (शब्द०)।

मारु'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का शाहवृक्ष।

विशेष—यह शिमले और नैनीताल में अधिकता से पाया जाता है। इसकी लकड़ी केवल जलाने और कोयला बनाने के काम में आती है। इसके पत्तों और गोद चमड़ा रंगने में काम आते हैं। २ काररेजी रंग।

मारुजा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मारुजह] १. प्रार्थना। निवेदन। २ प्रार्थनापत्र। अर्जा (को०)।

मारुत'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मारना ?] घोड़ों के पिछले पैरों की एक भौरी जो मनहूस समझी जाती है।

मारुत'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मारुति] हनुमान (डि०)।

मारुफ—वि० [सं० मारुफ] १. प्रसिद्ध। विद्युत। ख्यात। उ०—जो कि एक मशहूर और मारुफ खानदानी है।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ६०। २ जिसका कर्ता मारुफ हो (क्रिया)।

मारे—अव्य० [हि० मरना] वजह से। कारण से। उ०—(क) नैन गए फिर, फेन वहै मुख, चैन रह्यो नहिँ मैन के मारे। पयाकर (शब्द०)। (ख) परतु आश्रम को छोड़ते हुए दुख के मारे पाँव आगे नहीं पडते।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०)। (ग) मेरे नाम से चून्हे की राख भी रखी रहे, ती भी लोगों के मारे बचने नहीं पाती।—दुर्गाप्रसाद मिश्र (शब्द०)। (घ) कुँवर कछी वे बुद्ध विचारे। छाँड़ि धर्म प्यास के मारे।—रघुनाथ-

दाम (शब्द०) । (ड) तिस समय एक बड़ी आंधी चली कि जिसके मारे पृथ्वी डोलने लगी।—लल्लूलाल (शब्द०) ।

मार्कंड—सज्ञा पुं० [सं० मार्कण्ड] दे० 'मार्कण्डेय' ।

मार्कण्डिका - सज्ञा स्त्री० [सं० मार्कण्डिका] परवल के आकार का एक छोटा फल जिसकी तरकारी बनती है। ककोडा। विशेष दे० 'खेकसा' ।

मार्कण्डेय—सज्ञा पुं० [सं० मार्कण्डेय] मृकड ऋषि के पुत्र जिनके विषय में यह प्रसिद्ध है कि वे अपने तपोबल में सदा जीवित रहते हैं और रहेंगे ।

मार्कण्डेय पुराण—सज्ञा पुं० [सं० मार्कण्डेय पुराण] अष्टादश मुख्य पुराणों में से एक ।

विशेष—इसमें नव महत्त्व श्लोक हैं। जैमिनी ऋषि के समक्ष शकुनि को संबोधित कर मार्कण्डेय ऋषि ने इसे कहा है। इस प्रकार यह पक्षी और मार्कण्डेय ऋषि के सवाद रूप में है। प्रसिद्ध दुर्गा सप्तशती इसी का एक अंश है ।

मार्कण्ड—सज्ञा पुं० [अ०] १. दे० 'मार्का' । २. जर्मनी में चलनेवाला चाँदी का एक सिक्का ।

विशेष—यह प्रायः एक शिलिग या बारह आने मूल्य के बराबर होता है ।

मार्कण्ड—सज्ञा पुं० [सं०] भृगराज । भंगरैया ।

मार्कण्ड—वि० [सं०] मार्कण्डेय । वानरी ।

यौ०—मार्कण्ड पिपीलिका = छोटा और काला एक प्रकार की चिउंटा ।

मार्कर, मार्कव—सज्ञा पुं० [सं०] भृगराज । भंगरैया ।

मार्का—सज्ञा पुं० [अ०] कोई अन्न वा चिह्न जो किसी विशेष बात का सूचक हो। चिह्न। सकेत। छाप ।

मार्केट—सज्ञा पुं० [अ०] बाजार । हाट ।

मार्किविस—सज्ञा पुं० [अ०] [स्त्री० मार्शनेस] इंग्लैंड के सामंतों और बड़े बड़े भूम्यधिकारियों को वशपरा के लिये दी जानेवाली एक प्रतिष्ठामुचक उपाधि जिसका दर्जा ड्यूक के बाद है। विशेष दे० 'ड्यूक' ।

मार्ग—सज्ञा पुं० [सं०] १. रास्ता । पथ । २. गुहा । ३. कस्तूरी । ४. अग्रहन का महीना । ७.—हिम ऋतु मार्ग मास सुखमूला । प्रह तिथि नखत योग अनुकूला ।—रघुनाथदास (शब्द०) । ५. भृगुणिरा नक्षत्र । ६. विष्णु । ७. लाल अपामार्ग ।

मार्ग—वि० [सं०] मृग संबधी ।

मार्गक—सज्ञा स्त्री० [सं०] अग्रहन का महीना ।

मार्गण—सज्ञा पुं० [सं०] १. अन्वेषण । हूँटना । २. प्रेम । ३. याचक । मिखमगा । ४. याचना । निवेदन (को०) । ५. वारण । तीर (को०) । ६. एक नख्या । पाँच की नख्या (को०) ।

मार्गणक—सज्ञा पुं० [सं०] १. याचक । मिथुक । २. निवेदक । निवेदन करनेवाला (को०) ।

मार्गतोरण—सज्ञा पुं० [सं०] स्वागत, अभिनंदन आदि के निमित्त मार्ग में बनाया हुआ तोरण ।

मार्गद—सज्ञा पुं० [सं०] केवट ।

मार्गदर्शक—वि० पुं० [सं०] [वि० स्त्री० मार्गदर्शिका] पद-प्रदर्शक । रास्ता दिखानेवाला ।

मार्गद्रग—सज्ञा पुं० [सं० मार्गद्रग] रास्ते पर बना हुआ ग्राम, शहर, कमवा आदि ।

मार्गधेनु—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक योजन का परिमाण । चार कोम ।

मार्गधेनुक—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मार्गधेनु' ।

मार्गण(पु)—सज्ञा पुं० [सं० मार्गण] वारण । तीर ।

मार्गनिरोधक—सज्ञा पुं० [सं०] चलने रास्ते को खराब करना या रोकना ।

विशेष—कीटिल्य के समय में इसके लिये भिन्न भिन्न दंड नियत थे ।

मार्गप—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मार्गपति' ।

मार्गपति—सज्ञा पुं० [सं०] राज्य का वह कर्मचारी जो मार्ग का निरीक्षण करता हो ।

मार्गपरिणायक—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मार्गदर्शक' (को०) ।

मार्गपाली—सज्ञा स्त्री० [सं०] राह का रक्षक स्तंभ जिसकी स्थापना और पूजा एक देवी के रूप में की जाती थी (को०) ।

मार्गप्रवर्तक—सज्ञा पुं० [सं०] नया मार्ग या पथ चतानेवाला । धर्म या आचार का नया ढंग सिखानेवाला । उ०—गोरक्ष मित्रात सग्रह में मार्गप्रवर्तकों के ये नाम गिनाए गए हैं।—इतिहास, पृ० १५ ।

मार्गवध—सज्ञा पुं० [सं०] रास्ता रोकने के लिये निमित्त प्राचीर वा पत्थर, बल्ले आदि का अवरोध ।

मार्गरक्षक—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मार्गपति' (को०) ।

मार्गव—सज्ञा पुं० [सं०] एक सकर जाति जिसकी उत्पत्ति निपाद पिता और आयेगवी माता से मानी जाती है ।

मार्गवटी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मार्गवती' (को०) ।

मार्गवती—सज्ञा स्त्री० [सं०] वह देवी जो मार्ग चलनेवालों की रक्षा करनेवाली मानी जाती है ।

मार्गवेद—सज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक ऋषिकुमार का नाम ।

मार्गशिर—सज्ञा पुं० [सं०] अग्रहन का महीना । मार्गशीर्ष ।

मार्गशिरस्—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मार्गशीर्ष' ।

मार्गशीर्ष—सज्ञा पुं० [सं०] अग्रहन का महीना ।

मार्गशोधक—सज्ञा पुं० [सं०] १. शोधक । २. रास्ता सजाने या समझानेवाला । प्रणाली (को०) ।

मार्गसंस्करण—सज्ञा पुं० [सं०] राह का मस्कार । रास्ते की मफाई ।

विशेष—शुक्रर्नाति के अनुसार रास्ते का नस्कार या मफाई प्रतिदिन होगी चाहिए ।

मार्गस्थ—वि० [सं०] रास्ता चलता हुआ (को०) ।

मार्गहर्म्य—सज्ञा पुं० [सं०] राजमार्ग पर बना हुआ प्रामाद ।

मार्गिक—सज्ञा पुं० [सं०] १. पथिक । यात्री । २. मृगों को मारने-वाला, व्याध ।

मार्गित—वि० [म०] खोजा हुआ । अन्वेषित (को०) ।
 मार्गी—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] सगीत में एक मूर्च्छना जिसका स्वरग्राम इस प्रकार है,—नि, स, रे, ग, म, प, घ । म, प, घ, नि, म, रे, ग, म, प, घ, नि स ।
 मार्गी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्गिन] १ मार्ग पर चलनेवाला व्यक्ति । रास्ता चलनेवाला । बटोही । २ पथप्रदर्शक । अगुआ ।
 मार्गीयव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का सामगान ।
 मार्ग्य—वि० [सं०] १ मार्जनीय । मार्जन के योग्य । २ अन्वेषण योग्य । अन्वेषणीय (को०) ।
 मार्च—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ अंगरेजी तीमरा मास जो प्राय फागुन में पड़ता है । फरवरी के बाद और अप्रैल के पहले पड़नेवाला अंगरेजी महीना । २ गमन । गति । ३ सेना का कूच । सेना का प्रस्थान ।
 मार्ज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मार्जन । २ विष्णु । ३ घोड़ी ।
 मार्जक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मार्जिका] मार्जन या मफाई करनेवाला (को०) ।
 मार्जन—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ भाग करने का भाव । निर्मल करना । स्वच्छ करना । २ मन्त्रों द्वारा शरीर पर जल छिड़कना जो कुशा द्वारा किया जाता है । उ०—फिर इस जल से मैं मार्जन कल्पा ।—भारतेंदु० प्र०, भा० १, पृ० २७१ । २ मफाई । ३ लोच का वृद्ध । ४ लोच । श्वेत और रक्त लोच । ५ आतुरों के लिये विहित एक प्रकार का स्नान जिसमें शिर नहीं भिगाते ये अथवा गीले वस्त्र से शरीर पोछते थे (को०) । ७ नहाना । स्नान करना ।
 मार्जना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ नफाई । मार्जन । २ क्षमा । माफी । ३ मृदगध्वनि ।
 मार्जनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ झाड़ू । समार्जनी । बुहारी । उ०—उडती अलकें जटा बनी, बनने को प्रिय पाद मार्जनी ।—साकेत, पृ० ३२२ । २ सगीत में मध्यम स्वर की चार श्रुतियों में से आतम श्रुति । ३ रजकी । घोविन (को०) ।
 मार्जनी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्जनिव्] अग्नि । अमल (को०) ।
 मार्जनीय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अग्नि ।
 मार्जनीय—वि० मार्जन करने योग्य ।
 मार्जार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मार्जारी] १ बिलार । बिल्ली । २ लाल चीता (वृक्ष) । ३ पूतिमारा ।
 मार्जारकठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्जारकठ] मोर ।
 मार्जारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मोर । २ बिल्ली ।
 मार्जारकरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रति की एक मुद्रा । एक प्रकार का रतिवच (को०) ।
 मार्जारकणिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चामुडा का एक नाम ।
 मार्जारकर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चामुडा (को०) ।
 मार्जारगधा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्जारगन्धा] मुद्गपर्णी ।

मार्जारपाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का घोंटा जो बुरे लक्षण-वाला होता है ।
 मार्जारलिङ्गी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्जारलिङ्गिन्] वह जो बिल्ली के स्वभाववाला हो (को०) ।
 मार्जारारु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यौटिलीय अर्थशास्त्र के अनुगार एक प्रकार का रत्न ।
 मार्जारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मत्तूरी । २ गज नाकुली । ३ बिल्ली । मादा बिल्ली ।
 मार्जारी टोडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मार्जारी + टि० टोडी] नपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें म३ कोमल स्वर लगते हैं ।
 मार्जारीय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बिल्ली । २ गूढ़ । ३ वह जो अपना मार्जन करता हो । कार्यपोषण (को०) ।
 मार्जाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ 'मार्जार' ।
 मार्जालीय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बिल्ली । २ गूढ़ । ३ गिव । ४ एक ऋषि का नाम । ५ ० 'मार्जारीय' ।
 मार्जित—वि० [सं०] स्वच्छ किया हुआ । साफ किया हुआ ।
 मार्जित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मार्जिता] एक प्रकार का प्राचीन खाद्य पदार्थ ।
 विशेष—यह दही, चीनी, गूहद, घृत और मिर्च आदि को मिलाकर और उनमें कपूर डालकर बनाया जाता था । इसका 'रमाला' भी कहते हैं ।
 मार्तंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मार्तण्ड] १ सूर्य । २ आक या मदार का वृक्ष । ३ मूषर । ४ मोनामवली । ५ एक सख्या । १२ की सख्या क्योंकि सूर्य १२ कह गए हैं (को०) ।
 मार्तण्डवल्लभा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मार्तण्डवल्लभा] सूर्य की पत्नी । छाया ।
 मार्तिक—वि० [सं०] मृत्तिकाभिन्नि । मिट्टी में बना हुआ (को०) ।
 यो०—स तिकशकल = मिट्टी का टुकड़ा । मृत्तिका पिंड ।
 मार्तिक—सञ्ज्ञा पुं० १ कसोरा । पुरवा । २ शराव ।
 मार्त्तिकावत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणानुसार चेदि नामक राज्य का एक प्राचीन नगर । २ उस देश का निवासी ।
 मार्त्य—वि० [सं०] नश्वर । मरणाशील ।
 मार्त्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नश्वरता । अनित्यता । मरणाशीलता ।
 मार्दग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मादङ्ग वह व्यक्ति जो मृदग बजाता हो । मृदग बजानेवाला । २ नगर । शहर (को०) ।
 मार्दङ्गिक—वि० [मार्दङ्गि] मृदगवादक । मृदग बजानेवाला ।
 मार्दव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अहंकार का त्याग । अमिमान रहित होना । २ दूसरे की दुःखी देखकर दुःखी होना । ३ सरलता । ४ एक प्राचीन सकर जाति । इस जाति के लोग बहुत मृदु स्वभाव के होते थे । ५ मृदुता । कोमलता (को०) ।
 मार्दीक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अमूर की शराव ।
 मार्फत—अव्य० [अ० मार्फत] द्वारा । जरिए से । जैसे,—आपकी मार्फत सब काम हो जायगा ।

मार्शल—सज्ञा पुं० [अं०] संगमरमर ।

मार्मिक—वि० [सं०] १ मर्म को जाननेवाला । मर्मज्ञ । २ मर्म-स्थान पर प्रभाव डालनेवाला । जिमका प्रभाव मर्म पर पड़े । विशेष प्रभावशाली । जैसे, मार्मिक व्याख्यान । मार्मिक कवित्त । उ०—किसी अर्थपिशाच कृपण को देखिए जिसने केवल अर्थ-लोभ के वशीभूत होकर क्रोध, दया, श्रद्धा, भक्ति, आत्माभिमान आदि भावों को एकदम दबा दिया है और ससार के मार्मिक पक्ष से मुँह मोड़ लिया है ।—रस०, पृ० २४ ।

मार्मिकता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मार्मिक होने का भाव । २ किसी वस्तु के मर्म तक पहुँचने का भाव । पूर्ण अभिज्ञता । जैसे,—सगीत के सबब में आपकी मार्मिकता प्रसिद्ध है ।

मार्मिकपक्ष—सज्ञा पुं० [सं०] मर्मस्पर्शी अणु । हृदय को प्रभावित करनेवाला भाग । मन को द्रवित करनेवाला अणु । उ०—और ससार के मार्मिक पक्ष से मुँह मोड़ लिया है ।—रस०, पृ० २४ ।

मार्शल—सज्ञा पुं० [अं०] सेना का एक वृत्त बड़ा अफसर जो प्रधान सेनापति या समरसचिव के अधीन होता है ।

मार्शल ला—सज्ञा पुं० [अं०] सैनिक व्यवस्था या शासन । फौजी कानून या हुकूमत ।

विशेष—समर, विद्रोह या इसी प्रकार के आपत्काल में साधारण कानून या दंडविधान से काम चलता न देखकर देश का शासन-सूत्र सैनिक अधिकारियों के हाथ में दे दिया जाता है और इसकी घोषणा कर दी जाती है । सैनिक अधिकारी इस सकट काल में, विद्रोह आदि दमन करने में, कठोर से कठोर उपायों का अवलंबन करते हैं ।

मार्ष—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मारिप' ।

मार्षिक—सज्ञा पुं० [सं०] मरसा का साग । मारिप शाक [को०] ।

मार्श्टि—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मार्जन । शोधन । २ शरीर में तैल जगाना [को०] ।

माल^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ क्षेत्र । ऊँचा क्षेत्र । ऊँचा भूखण्ड । २ कपट । ३ वन । जंगल । उ०—चकित चहूँ दिसि चहति, विधुर जनु मुगी माल तैं ।—नद० अ०, पृ० २७० । ४ हरतान । ५ विष्णु । ६ एक प्राचीन अनार्य जाति । भागवत में इसे म्लेच्छ लिखा है । ७ एक देश का नाम जो वगाल के पश्चिम वा दक्षिणपश्चिम की ओर है । इसे मेदिनी-पुर कहते हैं ।

माल^२—सज्ञा पुं० [सं० मल्ल] कुशती लडनेवाला । दे० 'मल्ल' । उ०—(क) कहीं माल देह विसाल सैल समान अति बल गर्जही ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) योगी घर मेले सब पाछे । उत्तरे माल आए रन काछे ।—जायसी (शब्द०) । †२ राजपथ या सड़क के आस पास की वह भूमि जो कच्चा हो ।

माल^३—सज्ञा स्त्री० [सं० माला] १ माला । हार । उ०—(क) विनय प्रेम बस भई भवानो । खसी माल मूरति मुसुकानो ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) पहिर लियो छत मारि अमुर बल औरउ नखन विदारी । रुधिर पान करि आंत माल धरि जय जय

शब्द पुकारी ।—सूर (शब्द०) । (ग) चदन चित्रित रग, सिंधु राज यह जानिए । बहुत बाहिनो सग मुकुता माल विसाल उर ।—केशव (शब्द०) । (घ) कितने काज चलाइयतु चतुराई की चाल कहे देत गुन रावरे सब गुन निर्गुन माल ।—विहारी (शब्द०) । २ वह रस्सी वा सूत की डोरी जो चरखे में मूढी वा बेलन पर से होकर जाती है और टेकुए को घुमाती है । †२ चौड़ा मार्ग । चौड़ी सड़क । ४ पक्ति । पंती । उ०—(क) सेवक मन मानस मराल से । पावन गग तरंग माल से ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) बालघी विमाल विकराल ज्वाल माल मानो लक लीलिवे को काल रसान पसारी है ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) धाम धामनि आगि की बहु ज्वाल माल विराजही । पवन के भ्रुकभोर ते भ्रुकरी भरोखे बाजही ।—केशव (शब्द०) । (घ) गाँधन की माल कहुँ जवुक कराल कहुँ नाचत बँताल लै कपाल जाल जात से ।—हनुमन्नाटक (शब्द०) ।

माल^४—सज्ञा पुं० [अं०] १ सपत्ति । धन । उ०—(क) भली करी उन श्रमाम बँचाएँ । बरज्यो नही कछो उन मेरी अति आतुर उठि घाए । अल्प चोर बहु माल लुभाने सगी सबन बराए । निदरि गए तैमो फल पायो अब वे भए पराए ।—सूर (शब्द०) । (ख) धाम श्री वरा की माल बाल श्रवला को अति तजत परान राह चहत परान की ।—गुमान (शब्द०) । (ग) मालिन चोरी सो श्री परकि रहेउ नँदलाल । चोरन लागै अब लखी नेहिन को मन माल ।—रसनिधि (शब्द०) ।

माल^५—मालखाना । मालगाड़ी । मालगोदाम । मालजामिन, माल मनकूला । माल गैरमनकूला । मालदार आदि ।

मुहा०—माल उडाना = (१) बहुत रुपया खर्च करना । धन का अपव्यय करना । (२) किसी की सपत्ति को हड़प लेना । दूसरे का माल अनुचित रूप से ले लेना । माल काटना = किसी के धन को अनुचित रूप से अधिकार में लाना । माल उडाना । माल चौरना = पराया धन हड़पना । माल उडाना । माल मारना । माल मारना = अनुचित रूप से पराए धन पर अधिकार करना । पराया धन हड़पना । दूसरे की सपत्ति दबा बँठना ।

२ सामग्री । सामान । असवाव । उ०—(क) कहो तुमहि हम को का वृभक्ति । लै लै नाम सुनावहु तुम ही मो सो कहा अरुभक्ति । तुम जानति मैं हूँ कछु जानत जा जो माल तुम्हारे । डारे देहु जा पर जो लागै मारग चलौ हमारे ।—सूर (शब्द०) (ख) मितो ज्वार भाटा हू की शीघ्र ही निकारें । लोग कहत हैं भर माल कू कूति हु डारें ।—श्रीधर (शब्द०) ।

मुहा०—माल काटना = चलती रेल गाड़ी में से या मालगुदाम आदि में से माल चुराना । माल टाल = धन सपत्ति । माल असवाव माल मत्ता = माल असवाव । माल मस्ती = धन का मद । माल की मस्ती । माल महकमा = माल का महकमा या विभाग । राजस्व सबधी विभाग ।

३ क्रय विक्रय का पदार्थ । ४ वह धन जो कर में मिलता है । ५ फसल की उपज । ६, उत्तम और सुस्वादु भोजन ।

मुद्गा०—माल उडाना = मुस्वाटु श्रीर बहुमूल्य भोजन करना ।

७ गणित मे वर्ग का घात । वर्ग अक्षर । ८ किसी वस्तु का सार द्रव्य । वह द्रव्य जिममे कोई चीज बनी हो । जैसे,—(क) इस अंगूठी का माल अच्छा है । (ख) इस कडे का माल खोटा है । (ग) एक बीघे पोस्त से दो मेर अच्छा माल निकलता है । ९ मुदर स्त्री । युवनी । (वाजाह) ।

माल'—प्रत्य० [फा०] मला दला । मर्दित । जैसे, पामाल = पैरो से मर्दिप या मला दला ।

मालकंगनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० माल + कंगनी] श्रौषध के काम आनेवाली एक लता का नाम ।

विशेष—यह लता हिमालय पर्वत पर भेलम नदी से आसाम तक ४००० फुट की ऊँचाई तक, तथा उत्तरीय भारत, बर्मा और लका मे पाई जाती है । इसकी पत्तियाँ गोल और कुछ कुछ नुकीली होती ह । यह लता पेढों पर फैलती है और उन्हें आच्छादित कर लेती है । चँत के महीने मे इसमे घोंद के घोंद फूल लगने ह और मारी लता फूलों मे लदी हुई दिखाई पडती है । फूलों के झड जाने पर इसमे नीले नीले फल लगते हैं जो पत्रने पर पीले रंग के और मटर के बराबर होते हैं और जिनके भीतर से लाल लाल दाने निकलते हैं । इन दानों मे तेल का अश अधिक होता है जिममे इन्हे पेरकर तेल निकाला जाता है । मद्रास मे उत्तरीय अरकाट तथा विशाखापटम, दनौरा आदि स्थानों मे इसका तेल बहुत अधिक तैयार होता है । यह तेल नारंगी रंग का होता है और श्रौषध मे काम आता है । वैद्यक के अनुसार इसका स्वाद चरपरापन लिए कटुवा, इसकी प्रवृत्ति रुक्ष और गर्म तथा इसका गुण अग्नि, मेधा स्मृतिवर्धक और वात, कफ तथा दाह का नाशक बतलाया गया है ।

पर्या०—महाज्योतिष्मती । तीक्ष्णा । तेजोवती । फनकप्रभा । सुरलता । अग्निफला । मेधावती । पीता, इत्यादि ।

माल अदालत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० माल + अदालत] वह अदालत जिसमे लगान, मालगुजारी आदि के मुकदमे दायर किए जाने हैं ।

मालकंगनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मालकंगनी' ।

मालक'—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ स्वयं पत्र । २ नीम । ३ गाँव के ममीप त्त वन (ज्ञे०) । ४ नारियन का वना पात्र (को०) । ५ पर्ण-जाना । निकुज । लतामडप (ज्ञे०) । ६ माला । माल्य (ज्ञे०) ।

मालक'—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मालिक] दे० 'मालिक' ।

मालकगुनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मालकंगनी' ।

मालक'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] माला ।

मालकुडा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० माल + कुडा] वह कुडा जिममे नील कटाहे म डाले जाने मे पहले रखा जाता है ।

मालकौश—सञ्ज्ञा पुं० [म०] एक राग का नाम जिसे कौशिक राग भी कहते हैं । हनुमत् ने इने छह मुख्य रागों के अतर्गत माना

हैं । उ०—भैरव मालकोश हिंदोल दीपक श्रीराग मेघ सुरहि ले श्राऊँ ।—अकवरी०, पृ० १०५ ।

विशेष—यह मपूर्णा जाति का राग है । इसका स्वरूप वीररस-युक्त, रक्त वर्ण, वीर पुरुषो से आवेष्टित, हाथ मे रक्त वर्ण का दड लिए और गले मे मुडमाला धारण किए लिखा गया है । कोई कोई इसे नील वस्त्रधारी, श्वेत दड लिए और गले मे मोतियों की माला धारण किए हुए मानते हैं । इसकी ऋतु शरद और काल रात का पिछला पहर है । कोई कोई शिशिर और वसंत ऋतु को भी इसकी ऋतु बतलाते हैं । हनुमत् के मत से कौशिकी, देवगिरी, दरवारी, लोहनी और नीलावरी ये पाँच इसकी प्रियाएँ और वागेश्वरी, ककुभा, पर्यका, शोभनी और खमाती ये पाँच भार्याएँ तथा माधव, शोभन, सिधु, मारु, मेवाड, कुतल, केलिंग, सोम, बिहार और नीलरग ये दस पुत्र हैं । परतु अन्यत्र वागेश्वरी, बहार, शहाना, अताना, छाया और कुमारी नाम की इसकी रागिन्याँ, शकरी और जयजयवती सहचरियाँ, केदारा, हम्मीर नट, कामोद, खम्माच और बहार नामक पुत्र और भूपाली, कामिनी, किभोटी, कामोदी और विजया नाम की पुत्रवधुएँ मानी गई हैं । कुछ लोग इसे सकर राग मानते हैं और इसकी उत्पत्ति पटसारग, हिंडोल, वसत, जयजयवती और पचम के योग से बतलाते हैं । राग-माला मे इसे पाटल वर्ण, नीलपरिच्छद, यौवनमदमत्त, यण्टि-धारी और स्त्री गण से परिवेष्टित, गले मे शत्रुओं के मुड की माला पहने, हास्य मे निरत लिखा है, और चौडी, गौरी, गुणकरी, खमाती और ककुभा नाम की पाँच स्त्रियाँ, मारु, मेवाड, बडहस, प्रबल, चद्रक, नद, भ्रमर और खुल्लर नामक आठ पुत्र बतलाए हैं, और भरत ने गौरी, दयावती, देवदाली, खंभावती और कोकमा नाम की पाँच भार्याएँ और गाधार, शुद्ध, मकर, त्रिजन, सहान, भक्तवल्लभ, मालीगौर और कामदेव नामक आठ पुत्र और धनाश्री, मालश्री, जयश्री, मुधारावो, दुर्गा, गावारी भीमपलाशी और कामोदी नाम की उनकी भार्याएँ लिखी हैं ।

मालकोस—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मालकोश' ।

मालकौश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक राग । दे० 'मालकोश' । उ०—ज्यो मालकोश नव वीणा पर ।—अपरा, पृ० १७६ ।

मालखाना—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मालखानह] वह स्थान जहाँ पर माल असवाव जमा होता हो वा रखा जाता हो । भंडार ।

मालगाडी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० माल + गाडी] रेल मे वह गाडी जिसमे केवल माल असवाव भरकर एक स्थान मे दूसरे स्थान पर धुक्चाया जाता है । ऐसी गाडियों मे यात्री नहीं जाने पाते ।

मालगुजार—सञ्ज्ञा पुं० [फा० माल + गुजार] १ मालगुजारी देनेवाला पुरुष । २ मध्यप्रदेश मे एक प्रकार के जमीदार जो किमानो से वसूल करके मालगुजारी सरकार को देते थे ।

मालगुजारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मालगुजार + ई (प्रत्य०)] १ वह भूमिकर जो जमीदार से सरकार लेती है । २ लगान ।

मालगुर्जरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सपूर्णा जाति की एक रागिनी जिसमे

मत्र शुद्ध स्वर लगते हैं। कुछ लोग इसे गौरी और गोरठ से बनी हुई मकर रागिनी मानते हैं।

मालगोदाम—गद्य पुं० [हिं० माल + अ० गोडाउन > हिं० गादाम]
१ वह स्थान जहाँपर व्यापार का माल रखा जाता है या जमा रहता है। २ रेल के स्टेशनो पर वह स्थान जहाँ मालगाड़ी में भेजा जानेवाला अथवा आया हुआ माल रहता है।

मालचक्रक—गद्य पुं० [म०] पुट्टे पर का वह जोड़ जो कमर के नीचे जाँघ की हड्डी और कूल्हे में होता है। कूल्हा। चाका।

मालची(पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मालती] १ 'मालती'। उ०—(क) कहीं नागवेली निवेली निवेली। कहीं मालची घेरि भोर मुवेम। (ख) कहीं दाडिमी पिड पञ्जर भुल्ली। कहीं मालची मन्न भर भार मल्ली।—पृ० रा०, २।४७१।

मालजातक—गद्य पुं० [सं०] गधविडाल। गधमार्जार।

मालजादा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मालजादह] रडी का लटका। यश्या का पुत्र।

मालजादी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मालजादा] १ वेश्यापुत्री। २ व्यभिचारिणी औरत। ३ एक गानी की०।

मालजामिन—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मालजामिन] नकद जमानत देने या करनेवाला।

मालटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० माल्टा] एक प्रकार की नान रंग की नारंगी।

विशेष—देखने में यह बहुत गुदर और खाने में बहुत स्वादिष्ट होती है। गुजराँवाला और लखनऊ में यह बहुतायत में होती है।

मालती(पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मालति] २० 'मालती'। उ०—है इद्रावति आप अकेली। कमल चमेली मालती बेली।—ईशान, २७।

मालति(पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] २० 'मालती'। उ०—(क) मरद राति मानति मधन फूलि रही अन वाम। दीपक माला काम की हरि भय मुविकय वास।—पृ० रा०, २।३६०। (ख) कुमुन मान असि मानति पाई।—जायभी प्र० (गुप्त), पृ० ३३५।

मालतिमाला(पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मालतिमाला] मानती के फूलों की माला। उ०—अच्युतचरन तरगिनी मिव निर मानतिमान। हरि न बनायो मुरमरी कीनो इदर माल।

मालतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिकेय की एक मातृका का नाम।

मालती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार की लता का नाम जिसमें फूलों में भीनी मधुर सुगंध होती है। उ०—(क) मोनपद वर फूलो सेवती। स्वमजरी और मालती।—जायसी (शब्द०)। (ख) देवदूषी प्राणपति निकल मली की गति, मालती नो मिन्धो चाह लेने नाथ आनिनी।—केशव (शब्द०)। (ग) घाम परीक निवारण कलित ललित मनि पुज। जमुना तो तमान तर मिलित मानवी गुज। विरारी (शब्द०)।

विशेष—यह लता विमान्य और विश्व पर्यटन के लोगों में अधिक प्यारी होती है। इसकी पत्तियाँ चर्चारेगी और सुगंधित, यदि तीन अंगुल चौड़ी और चार पंच यगृत लता होती है। यह युग्मपत्रक लता है और पत्ते में बड़े बुरा पर भी लतादार पत्तियाँ हैं। इसमें फूलों के बौद्ध लगे हैं। प्रभाव के पत्तन में पूरती है। फूल मफेद होता है जिसमें अनुचितता है। जिसमें नीचे दो अंगुल का लता उठन होता है। इस फूल में भीनी मधुर सुगंध होती है। फूल लठन पर उठने के नीचे फूलों का विद्योना या विश्व जाता है। जब यह लता फूलती है, तब भीरे और मधुमतिवया प्राप्त रात्र उगपन चारों ओर गुंजावती फिरती है। यह उद्यान में भी लगाई जाती है, पर इसके फूलने के लिय बड़े वृक्ष या मंडप आदि की आवश्यकता होती है। यह कवियों की बड़ा पुरानी परिचित गुणवत्ता है। कानिदान में लेकर आज तक प्राय सभी कवियों ने अपनी कविता में इसका वर्णन अत्यंत किया है। किता ताजा लता में अमवश इसे चमत्तों भी चिता है।

२ छह अक्षरों की एक वर्णगुणिका का नाम। इसके प्रयोग चरणा में दो जगण होत हैं। उ०—जो पय त्रिष जोग। तजो मय शोर। सरान तौर। नही गुण कानि। केसर (शब्द०)। ३ चारह अक्षरों की एक वर्णगुणिका का नाम। इसका प्रयोग चरणा में नगण, दो जगण और अंत में रगण होता है। उ०—विपिन विराघ बलिष्ठ देखिए। नृपतनया भवनीन निरति। तव रघुनाथ वाण कैं हयो। निज निर्णया पंच को ठयो।—केशव (शब्द०)। ४ सर्वथा से मत्तगधद नामक भेद का दूसरा नाम। ५ युवती। ६ चादनी। ज्यो न्ना। ७ रागि। राग। ८ पाठा। पाठा। ९ जायफल का पेड़। जाती।

मालतीचारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गायगा।

मालतीजात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोहावा।

मालती टोडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मालती + टोडी] लक्ष्मी शक्ति की एक रागिनी जिसमें मत्र शुद्ध स्वर लगते हैं।

मालतीतीरज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माहागा।

मालतीपत्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जानीपरी। पत्रिका।

मालतीफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जायफल।

मालतीमाधव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नाट्यकार भवभूति का एक प्रसिद्ध नाटक।

मालतीमाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मालतीपुष्प की माला। मानती के फूलों का लता। २ एक प्रकार का लता, ३।

मालती—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. यन्त्रोपकरण का नाम जिसका एक पदक या नाम जिसका नाम है। २. एक प्रकार का लता, ३. मालतीपुष्प के समुदाय का नाम। ४. मालतीपुष्प का नाम।

मालती—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मालतीपुष्प का नाम। २. एक प्रकार का लता का नाम जिसका नाम है। ३. एक प्रकार का लता का नाम। ४. मालतीपुष्प के समुदाय का नाम। ५. मालतीपुष्प का नाम।

मालदहा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] दे० 'मालदह' । उ०—तब तक कहीं माल-
दहा (लंगडा) का भी समय न चला जाए ।—किन्नर० पृ० ८२ ।

मालदही—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मालदह] १ एक प्रकार की नाव जिसमें
माफ़ी छप्पर के नीचे बैठकर खेते हैं । २ एक प्रकार का रेशमी
डोरिया (कपडा) जो पहले मालदह में बनता था और जिसके
लहंगे बनाए जाते थे ।

मालदा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] दे० 'मालदह' ।

मालदार—वि० [फा०] धनवान । धनी । सपन्न ।

मालद्वीप—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मलयद्वीप] भारतीय महासागर में भारत-
वर्ष के पश्चिम ओर के एक द्वीपपुञ्ज का नाम । इस द्वीपपुञ्ज में
चार छोटे छोटे द्वीप हैं ।

मालधनी—सञ्ज्ञा पुं० [अ० माल + सं० धनिन्] माल का मालिक ।
धन का धनी या स्वामी । उ०—पाप पुन्य मिलि करीह दिवानी,
नगरी अदल न होई । दिवस चोर घर मूसन लागे मालधनी गा
सोई ।—पलटू०, भा० ३, पृ० ६८ ।

मालिन—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मालिन्] दे० 'मालिन' ।

मालपुञ्जा—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मालपूञ्जा' ।

मालपूञ्जा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० माल + सं० पूज] एक पकवान का नाम ।
विशेष—गेहूँ के आटे वा सूजी को शक्कर के रस से गीला धोलते
हैं । फिर उसमें चिरौजी, पिस्ता आदि मिलाकर घीमी आंच
पर घी में थोड़ा थोड़ा डालकर सिझाकर छान लेते हैं । कभी
कभी पानी की जगह धोलते समय इसमें दूध वा दही भी
मिलाते हैं ।

मालपूवा—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मालपूञ्जा' ।

मालवरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मालावार] एक प्रकार की ईख जो
सुरत में होती है ।

मालभञ्जिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मालभञ्जिका] प्राचीन काल के एक
प्रकार के खेल का नाम । प्राचीन काल की एक क्रीडा ।

मालभडारी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० माल + भडारी] जहाज पर का वह
कर्मचारी जिसके अधिकार में लदे हुए माल रहते हैं । (लश०) ।

मालभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मल्लभूमि] एक प्रदेश का नाम जो
नेपाल के पूर्व में है ।

मालमत्री—सञ्ज्ञा पुं० [अ० माल + सं० सं० मत्री] राजस्व विभाग
का मत्री ।

मालय^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चदन । २ गरुड के पुत्र का नाम ।
३ व्यापारियों का कुंड । ४ पथिकों, यात्रियों के ठहरने की
जगह (को०) । ५ चदन निमित्त श्रम्यजन वा अनुलेप (को०) ।

मालय^२—वि० मलय सबधी । मलय गिरि सबधी ।

मालव^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मालवा देश ।

यौ०—मालव गौड़ । मालवदेश = मालवा । मालवनृपति । मालव-
विषय = मालव देश । मालवाधीश, मालवेंद्र = मालव देश का
नृपति ।

२ एक राग का नाम, जिसे भरव राग भी कहते हैं ।

विशेष—सगीतदामोदर में इसका रूप माला पहने, हरित वस्त्र-

धारी, कानो में कुडल धारण किए, सगीतशाला में स्त्रियों के
साथ बैठा हुआ लिखा है । इसकी घनाश्री, मालश्री, रामकीरी,
सिंधुवा, आसावरी और भरवी नाम को छह रागिनियाँ हैं ।
कोई कोई इसे पाडव जाति का और कोई सपूर्ण जाति का
राग मानते हैं । पाडव माननेवाले इसमें 'मध्यम' स्वर वर्जित
मानते हैं । यह रात को १६ दड से २० दड तक गाया
जाता है ।

३ मालव देशवासी वा मालव देश में उत्पन्न पुरुष । ४ मफेद
लोच ।

मालव^२—वि० मालव देश सबधी । मालवे का ।

मालवक^१—वि० [सं०] मालवा देश सबधी । मालवे का ।

मालवक^२—सञ्ज्ञा पुं० मालव देश का निवासी ।

मालवगौड—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पाडव जाति का एक सकर राग
जिसमें पचम स्वर नहीं लगता ।

विशेष—इसका स्वरग्राम म, घ, नि, स, रि, ग, म, है । इसका
उपयोग वीर रस में किया जाता है । कुछ लोग इसे सपूर्ण
जाति का मानते हैं और इसके गाने का समय सायकाल
बतलाते हैं ।

मालवर—वि० [अ० माल + फा० वर (प्रत्य०)] माल वा धन
संपत्ति रखनेवाला । मालदार । मालवाला । उ०—यहाँ के लोग
तो बड़े मालवर दिखाई पडते हैं ।—भारतेंदु ग्र०, भा० १,
पृ० ६६० ।

मालवर्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जाति का नाम ।

मालवश्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] श्री राग की एक रागिनी का नाम ।

विशेष—यह सपूर्ण जाति की रागिनी है और इसके गाने का
समय सायकाल है । नारद इसे मालव की रागिनी मानते हैं
और हनुमत् इसे हिंडोल राग की रागिनी लिखते हैं । हनुमत्
इसे श्रोडव जाति की मानते हैं और इसके गाने में बँवत और
गावार को वर्जित लिखते हैं । इसे मालश्री और मालसी भी
कहते हैं ।

मालवा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मालव] एक प्राचीन देश का नाम जो
अब मध्य भारत में है ।

विशेष—इसकी प्रधान नगरी अवती है जो सप्तमोक्षदायिनी पुरियों
में गिनी गई है और जिसे आजकल उज्जैन कहते हैं । इंदौर,
भूपाल, धार, रतलाम, जावरा, राजगढ़, नृसिंहगढ़ और
ग्वालियर का राज्य नीमच तक इसी मालवा राज्य की सीमा
के अंतर्गत है । यह बहुत प्राचीन देश है और अथर्व वेद की
सहिता तक में इसका नाम मिलता है ।

२ एक राग का नाम । विशेष दे० 'मालव-२' ।

मालवा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम ।

मालविका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] निसोय ।

मालवितपी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कुमोवृद्ध ।

मालविभाग—सञ्ज्ञा पुं० [अ० माल + सं० विभाग] राजस्व विभाग ।

उ०—यूसुफ आदिल शाह के शासन काल में भी माल विभाग में अनेक हिंदू अधिकारी रखे गए थे ।—अकबरी०, पृ० २३ ।

मालवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ श्री राग की एक रागिनी का नाम ।

विशेष—यह श्रोत्रव जाति की है और हनुमत् के मत से इसका स्वरग्राम नि, सा, ग, म, घ, नि, है । इसमें ऋषभ और पचम स्वर वर्जित हैं । कोई कोई इसे हिंडोल राग की रागिनी मानते हैं ।

२. पाढा नाम की एक लता । विशेष ३० 'पाढा' ।

मालवी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मालव + हिं० ई (प्रत्य०)] मालव देश की भाषा । उ०—विभिन्न राजस्थानी बोलियाँ तथा मालवी, कोशली या पूर्वी हिंदी, भोजपुरी, इत्यादि।—पोद्दार अभि० पृ० ७५ ।

मालवी^४—वि० ४० 'मालवीय' ।

मालवीय—वि० [सं०] मालव देश संबंधी । मालवे का । २ मालव देश का निवासी । मालवे का रहनेवाला ।

मालवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ३० 'मालवश्री' ।

मालसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १० 'मालवश्री' । २ एक वृक्ष का नाम । दुर्गपुष्पी (जो०) ।

मालहायन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम ।

मालाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मालाङ्क] भूस्तृण ।

माला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. पक्ति । श्रवली । जैसे, पर्वतमाला । २. फूलों का हार । गजरा ।

विशेष—मालाएँ प्रायः फूलों, मोतियों, काठ या पत्थर के मनकों, कुछ वृक्षों के बीजों अथवा सोने, चाँदी आदि धातुओं से बने हुए दानों से बनाई जाती हैं । फूल या मनके आदि धागे में गुंथे होते हैं और धागे के दोनों छोर एक साथ किसी बड़े फूल या उसके गुच्छे या दाने में पिरोकर बाँध दिए जाते हैं । मालाएँ प्रायः शोभा के लिये धारण की जाती हैं । भिन्न भिन्न संप्रदायों की मालाएँ भिन्न भिन्न आकार और प्रकार की होती हैं और उनका उपयोग भी भिन्न होता है । हिंदुओं का जप करने की मालाएँ १०८ दानों या मनकों की अथवा इसके आधे, चौथाई या छठे भाग की होती हैं । भिन्न भिन्न संप्रदायों के लोग भिन्न भिन्न पदार्थों की मालाएँ धारण करते हैं । जैसे, वैष्णव तुलसी की, शैव रुद्राक्ष की, शक्ति रक्तचंदन, स्फटिक या रुद्राक्ष की तथा अन्य संप्रदाय के लोग अन्य पदार्थों की मालाएँ धारण करते हैं । वह माला जिसमें अठारह या नौ दाने होते हैं, सुमिरनी कहलाती है ।

पर्या०—माक्ष्य । स्रक् । मालिका । गुणिका । गुणतिका ।

मुहा०—माला फेरना = जपना । जप करना । भजन करना ।

३. समूह । झुंड । जैसे, मेघमाला । ४. एक नदी का नाम । ५. दुर्वा । द्वव । ६. भुईं आँवला । ७. कतार । श्रेणी । लर (जो०) । ८. उपजाति छंद के एक भेद का नाम । इसके प्रथम और द्वितीय चरण में जगण, तगण, जगण और अत में दो गुरु तथा

तीसरे और चौथे चरण में दो तगण, फिर जगण और अत में दो गुरु होते हैं । १६. काठ की लकी डोकिया जिसमें बच्चा के लगाने का उबटन और तेल आदि रखा जाता है ।

मालाकट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मालाकट] १. अपामार्ग । २. एक गुल्म का नाम ।

मालाकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मालकन्द] एक प्रकार का कद ।

विशेष—वैद्यक में इसे तीक्ष्ण, दीपन, गुल्म और गडमाला रोग का हरनेवाला तथा वात और कफ का नाशक लिखा है ।

पर्या०—मालकट । यक्षकद । पक्वित कद । त्रिशिरसदत्ता । अग्नि दत्ता । कदलता ।

मालाकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ३० 'मालाकार' ।

मालाका—सञ्ज्ञा स्त्री [सं०] माला । हार (जो०) ।

मालाकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० मालाकारी] १. पुराणानुसार एक वर्णसंकर जाति का नाम ।

विशेष—ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार यह जाति विश्वकर्मा और शूद्रा से उत्पन्न है, पर पराशर पद्धत के अनुसार यह जाति तैलिन और कर्मकार से उत्पन्न कही गई है ।

२. माली । उ०—जैसे जल लें बाग का सिंचत मालाकार ।—दीन० ग्र०, पृ० ८६ ।

मालागिरी^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मलयगिरि] एक रंग का नाम ।

विशेष—यह रंग टेसू और नासफल से बनाया जाता है । सेर भर टेसू का फूल पानी में आठ दिन तक भिगोया जाया है जिसे दिन में दो बार चलाया जाता है । इसी प्रकार आध सर नासफल की बुकनी पाना में भिगोई जाती और प्रतिदिन दो बार चलाई जाता है । फिर आठ दिन बाद दाना क रंग अलग अलग छान लिए जाते और फिर मिला लिए जाते हैं । फिर इसमें डेढ़ माश हरा रंग मिला दिया जाता है और तब उसमें दो बार कपडा रंगा जाता है । मुग्ध क लिये इसमें कपूर-कचरी का जड़ भाँ पासकर मिलाई जाती है ।

मालागिरी^२—वि० मालागिरी रंग में रंगा हुआ ।

मालागुण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गले का हार ।

मालागुणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का असाध्य रोग जिसे 'बूता' कहते हैं ।

मालाग्रथि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मालाग्रन्थि] २० 'मालादूर्वा' (जो०) ।

मालावृण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भूस्तृण ।

मालादीपक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक अलंकार का नाम ।

विशेष—इसमें एक धर्म के साथ उत्तरोत्तर धर्मियों का नवध वर्णित होता है या पूर्वकथित वस्तु को उत्तरोत्तर वस्तु के उत्कर्ष का हेतु बतलाया जाता है । इस अलंकार को कविराज मुरारिदान ने सवर अलंकार माना है और इसे दीपक तथा श्रुत्वलाकार का समुच्चय कहा है । जैन,—रम सा काव्य ग्रंथ

काव्य मो मोहत वचन महान । वाणी ही सो रसिक जन तिन
मो सभा मुजान ।

मालादूर्वा—मञ्जा स्त्री० [म०] एक प्रकार की दूब जिसमें बहुत सी
गाँठें होती हैं ।

विशेष—इसे गडदूर्वा, ग्रथिदूर्वा, मालाग्रथि भी कहते हैं । वैद्यक
में इसका स्वाद मधुर, तिक्त और गुण पित्त तथा कफनाशक
माना गया है ।

मालाधर^१—सञ्जा पुं० [म०] सत्रह अक्षरों के एक वर्णिक वृत्त का
नाम जिसके प्रत्येक चरण में नगण, सगण, जगण फिर सगण
और यगण और अत में एक लघु और फिर गुरु होता है ।
जैसे,—फिरत हम माय बधु तुम्हरीहि चिता भरे ।

मालाधर^२—वि० जिसने माला धारण की हो । जो माला पहने हुए
हो [को०] ।

मालाधार—सञ्जा पुं० [सं०] दिव्यावदान के अनुमार वीद्वों के एक
देवता का नाम ।

मालाप्रस्थ—सञ्जा पुं० [सं०] एक प्राचीन नगरी का नाम ।

मालाफल—सञ्जा पुं० [सं०] रत्नाक्ष ।

मालामत्र—सञ्जा पुं० [सं० मालमन्त्र] एक प्रकार का मन्त्र ।

मालामणि—सञ्जा पुं० [सं०] रत्नाक्ष ।

मालामनु—सञ्जा पुं० [सं०] दे० 'मालामत्र' ।

मालामाल—वि० [फा०] धनवान्य से पूर्ण । मपन्न ।

मालारिष्टा, मालारिष्ठा—सञ्जा स्त्री० [सं०] पाची या पाटी नाम की
लता जिसके पत्तों की गणना मुग्धि द्रव्य में होती है ।

मालालिका—सञ्जा स्त्री० [सं०] पृक्का । असवरग ।

मालाली—सञ्जा स्त्री० [सं०] पृक्का । असवरग ।

मालावती—सञ्जा स्त्री० [सं०] एक सकर रागिनी का नाम जो पचम,
हम्मौर, नट और कामोद के सयोग से बनती है । कुछ लोग
इसे मेघ राग की पुत्रवधू भी मानते हैं ।

मालिद्य—सञ्जा पुं० [सं० मालिन्य] एक प्राचीन पर्वत का नाम ।

मालिक^१—सञ्जा पुं० [सं०] १ माली । २ एक प्रकार की चिडिया ।
३ रजक । धोवी । ४ रंगरेज [को०] ।

मालिक^२—पुं० [अ०] [स्त्री० मालिका] १ ईश्वर । अधिपति । ३०—
माया जीव ब्रह्म अनुमाना । मानत ही मालिक वीराना ।—
कवीर (शब्द०) । २ स्वामी । ३ पति । शौहर ।

मालिका—सञ्जा स्त्री० [सं०] १ पत्नी । २ माला । ३ गले में
पहनने के एक आभूषण का नाम । ४ पक्के मकान के ऊपर
का खड । रावटी । ५ ब्राह्मण । अगूर की शराव । ६
मद्य । ७ पुत्री । ८ चमेली । चद्रमल्लिका । ९ अलसी ।
१० मालिन । ११ मुरा । १२ राजभवन । प्रामाद [को०] ।
१३, ससला । मातला ।

मालिकाना^१—सञ्जा पुं० [फा० मालिकानह्] १ वह कर, दस्तूरी
या हक जो मालिक प्रदना या कब्जेदार मालिक ताल्लुकेदार की

देता है । २ स्वामी का अधिकार या स्वत्व । मिलकियत ।
स्वामित्व ।

मालिकाना^२—क्रि० वि० मालिक की भाँति । मालिक की तरह । जैसे,
मालिकाना तौर पर ।

मालिकी—सञ्जा स्त्री० [फा० मालिक + ई (प्रत्य०)] १ मालिक होने
का भाव । २ मालिक का स्वत्व ।

मालिल—वि० [सं०] १ जिसे माला या हार पहनाया गया हो ।
२ जो किमी के द्वारा घिरा वा घेरा गया हो [को०] ।

मालिन—सञ्जा स्त्री० [सं० मालिन्] १ माली की स्त्री । २ माली
का काम करनेवाली स्त्री ।

मालिनी—सञ्जा स्त्री० [सं० मालिन + ई (प्रत्य०)] १ मालिन ।
२ चपा नगरी का एक नाम । ३ स्कंद की सात माताओं में
से (जिन्हें मातृकाएँ कहते हैं) एक माता का नाम । ४ गीरी ।
५ एक नदी का नाम जो हिमालय पर्वत में है ।

विशेष—पुराणानुसार इसी के वट पर मनका के गर्भ में शकुतला
का जन्म हुआ था ।

६ मदाकिनी । गगा । ७ कलियारी । करियारी । ८ दुगलभा ।
जवासा । ९ एक वर्णिक वृत्त का नाम ।

विशेष—इसके प्रत्येक पद में १५ अक्षर होते हैं जिनमें पहले छह
वर्ण, दसवाँ और तेरहवाँ अक्षर लघु और शेष गुरु होते हैं
(न न म य य) । जैसे,—'अनुलित वलघाम स्वर्णशैलामदेह' या
'दसरथ सुत द्वेपी ख ब्रह्मा न भाम' । इसे कोई कोई मायिक
भी मानते हैं ।

१० मदिरा नाम की एक वृत्ति का नाम । ११ महाभारत के
अनुसार एक राजसी का नाम । १२ मार्कंडेय पुराण के अनु-
सार रौच्य मनु की माता का नाम । १३ विराट के महल में
गुप्त वास करते सयय द्वीपदी का नाम । १४ विभीषण की
माता का नाम । ३०—उनमें पुष्पोत्कटा में रावण, कुम्भकर्ण,
मालिनी से विभीषण तथा राका से खर और शूर्पणखा
हुए ।—प्रा० भा० प०, पृ० ८६ ।

मालिन्य—सञ्जा पुं० [सं०] १ मलीनता । मैलापन । १ अपवित्रता ।
२ अधकार । अधेरा ।

मालिमहन—सञ्जा पुं० [सं० मालिमण्डन] पुराणानुसार एक राजा
का नाम ।

मालियत—सञ्जा स्त्री० [अ०] १ कीमत । मूल्य । २ सपत्ति । धन ।
३. मूल्यवान् पदार्थ । कीमती चीज ।

मालिया^१—सञ्जा पुं० [अ०] मोटे रस्सों में दी जानेवाली एक प्रकार
की गाँठ जिसका व्यवहार जहाज के पाल बाँधने में होता है ।
(लश०) ।

मालिया^२—सञ्जा पुं० [अ० मालियह्] राजस्व । मालगुजारी ।
लगान [को०] ।

मालियाना—अव्य० [अ० मालियानह्] राजस्व । लगान ।

मालिवान^३—सञ्जा पुं० [सं० माल्यवान्] दे० 'माल्यवान्' ।

माल्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ फूल । २ माला । ३ वह माला जो सिर पर धारण की जाय ।

माल्यक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दमनक दौना । २ माला ।

माल्यजीवक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मालाकार । माला बनानेवाला । माली ।

माल्यपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मन का पेड़ । मनई ।

माल्यवत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माल्यवत् > माल्यवान्] एक राज्ञस्य । दे० 'माल्यवान्' । उ०—माल्यवत् अति सचिव सयाना । —मानस, ६।४० ।

माल्यवत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'माल्यवान्' ।

माल्यवत्—वि० [स्त्री० माल्यवती] जो माला पहने हो ।

माल्यवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन नदी का नाम ।

माल्यवती—वि० स्त्री० जो माला पहने हो ।

माल्यवान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणानुसार एक पर्वत का नाम ।

विशेष—सिद्धातशिरोमणि मे इसे केतुमाल और इलावृत वर्ष के बीच का सीमापर्वत लिखा है और नील पर्वत से निपद्य पर्वत तक इसका विस्तार कहा है ।

२ एक राज्ञस्य जो मुकेश का पुत्र था ।

विशेष—यह गधर्व की कन्या देववती से उत्पन्न हुआ था । इसके भाई का नाम सुमाली था जिसकी कन्या कंकसी से रावण को उत्पत्ति हुई थी ।

३ बवई प्रात मे रत्नगिरि जिले के अतर्गत एक परगने का नाम ।

माल्यवान्—वि० [सं० माल्यवत्] [वि० स्त्री० माल्यवती] जो माला पहने हो ।

माल्यवृत्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मालाकार । माली ।

माल्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की घास ।

माल्ल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वर्णभङ्ग जाति जो ब्रह्मवैवर्त मे लेट पिता और धीवरी माता से उत्पन्न कही गई है । २ दे० 'मल्ल' ।

माल्लवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मल्लो की विद्या या कला ।

माल्द—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'माल' ।

माल्द—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मल्ल, हिं० माल] दे० 'मल्ल' ।

मावडिया—सञ्ज्ञा पुं० [?] जनजा । मोगा । स्त्रियों के सपर्क में अधिक रहनेवाला । स्त्री स्वभाववाला । उ०—मेछा हृदा मुलक मे जो मावडियो जाय । महदुर्बा री मिसल में किल सरदार कहाय ।—बांकी० ग्रं०, भा० २, पृ० १३ ।

मावत—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'महावत' । उ०—दियो पठाय श्याम निज पुर को मावत सह गजराज । आगे चले सभा में पहुचे जहँ नृप सकल समाज ।—मूर (शब्द०) ।

मावली—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] दक्षिण भारत की एक पहाड़ी वीर जाति का नाम । इस जाति के लोग शिवाजी की सेना में अधिकता से

ये । उ०—मावन भादी की भारी कुट्ट की अंध्यारी चढि दुग्ग पर जात मावली दन मचेत हैं ।—भूषण (शब्द०) ।

मावली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मथार, मथालु] प्रेमल । स्नेहपूर्ण । उ०—सो पैदा हुई एक दाई भली, मेहरजान होर गुन मरी मावली ।—दक्खिनी०, पृ० १६१ ।

मावस—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० अमावस्या] २० 'अमावस' । उ०—दुग्गह दुराज प्रजानु कीं कयो न वढै दुग्ग ददु । अचिक अचिरी जग करत माल मावस रवि चदु ।—विहारी २०, दो० ३५७ ।

मावा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मण्ड, हिं० मॉड] १ मॉड । पीच । २. सत्त । निष्कर्ष ।

मुहा०—मावा निकालना = खून पीटना । कचूमर निकालना ।

३ वह दूध जो गेहूँ आदि को भिगोकर वा कच्चा मलकर निचोडने से निकलता है । ४ प्रकृति । ५ खोया । ६ अडे के भीतर का पीला रस । जग्दी । ७ चदन का इन जिसे आघार बनाकर फूलो और गधद्रव्यो का द्रव्य उतारा जाता है । जमीन । ८ वह गाढा लसदार सुगन्धित द्रव्य जिसे तमाकू में डालकर उसे सुगन्धित करते हैं । खमीर । ९ ममाला । सामान । १० हीरे की बुकनी जिससे मलकर सोने चाँदी को चमकाते हैं या उनपर कुदन या जिला करते हैं ।

मावा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मातृ] माता । माँ ।

मावा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] रक्षास्थल । आश्रय स्थान । [को०] ।

मावासी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मवास] दे० 'मवासी' ।

माश—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मि० सं० माप] दे० 'माप' ।

माशा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माप, ज० मप माह, फा० माशह] आठ रत्ती का एक प्रकार का वाट या मान ।

विशेष—इसका व्यवहार सोने, चाँदी, रत्नो और ओपधियो के तोलने मे होता है । यह आठ रत्ती के बराबर होता है और एक तोले का बारहवां भाग होता है ।

माशा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महाशय, बंग० मोशाय] १ भला आदमा । सज्जन । शरीफ । (बंगाली) । २ बग देश का निवासी । बंगाली ।

माशाअल्लाह—पद [अ०] एक प्रशंसासूचक पद । बहुत अच्छा है । क्या कहना है ।

विशेष—इस पद का प्रयोग दो प्रकार से होता है । एक तो किसी अच्छी चीज को देखकर उसकी प्रशंसा के लिये, और दूसरे किसी श्रवच्छी चीज का जिक्र करते हुए यह भाव प्रकट करने के लिये कि ईश्वर करे, इसे नजर न लगे ।

माशी—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० माप (= उद्द)] १ एक रग जो कालापन लिए हरा हाता है ।

विशेष—कपडे पर यह रग कई पदार्थों मे रंगने से आता है जिनमे हड का पानी कसीस, हलदी और अनार की छाल प्रधान है । इनमे रंगे जाने के बाद कपडे को फिटकरी के पानी मे डुबाना पडता है ।

२ जमीन की एक नाप जो २४० वर्ग गज की होती है।

माशी^२—त्रि उदद के रग का। कालापन लिए हरा रग का। माशी रग का।

माशूक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] [स्त्री० माशूका] वह जिमके साथ प्रेम किया जाय। प्रियतमा। प्रेमपात्र।

यौ०—माशूके हकीकी = परमात्मा। ईश्वर।

माशूका—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० माशूकह्] प्रेमास्पदा। प्रेयसी। प्रेमिका।

माशूकाना वि० [फा०] नाज नखरे से भरा हुआ। माशूको जैसा।

माशूकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० माशूकी] माशूक होने का भाव। प्रेम-पात्रता। हाव भाव।

यौ०—आशिकी माशूकी।

माष^१—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ उदद। २ आठ रत्ती के बराबर का वाट या मान। माशा। ३ शरीर के ऊपर काले रग का उभरा हुआ दाग या दाना। मसा।

माष^२—वि० मूर्ख।

माष^३—सञ्ज्ञा स्त्री० दे० [हि०] माख'।

माषक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ माशा। (तौल)। २ उदद।

माषकलाय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] उरद।

माषतैल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का तेल जो अर्घांग, कप आदि रोगों में उपयोगी माना जाता है।

माषना^३—क्रि० सं० [हि० माख] दे० 'माखना'।

माषपत्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मापपर्णी'।

माषपर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वनमाष। जंगली उदद।

विशेष—वैद्यक में इसको वृष्य, बलकारक, शीतल और पुष्टिवर्धक माना है।

पर्या०—सिंहपुच्छी। ऋषिप्रोक्ता। कृष्णवृत्ता। पाहु। लोमपर्णी।

माषवटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] उदद की बनी हुई बड़ी। दे० 'बड़ी'।

मापभक्तबलि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तांत्रिकों के अनुसार एक प्रकार की बलि जो दुर्गा, काली आदि को चढाई जाती है। इसमें उदद, भात, दही आदि कई पदार्थ होने हैं।

मापयोनि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पापड।

मापरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मांड। पीच।

मापरावि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाटघायन सूत्रानुसार एक ऋषि का नाम। ये मापराविन् ऋषि के गोत्र में थे।

मापवर्द्धक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] स्वर्णकार। सुनार।

मापाज्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घृत के योग से पकाई हुई उरद। एक विशिष्ट भोज्य वस्तु [को०]।

मापाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कछुआ।

मापाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अश्व। घोडा।

मापाशी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मापाशिन्] [स्त्री० मापाशिनी] घोडा।

मापोण—सञ्ज्ञा पुं० [म०] उदद का खेत। माप का खेत।

माप्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माप बोलने योग्य खेत। मशार।

मास^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चद्रमा। २ महीना। माम।

मास^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] काल के एक विभाग का नाम जो वर्ष के बारहवें भाग के बराबर होता है। महीना।

विशेष—मास (क) मौर, (ख) चाद्र, (ग) नाक्षत्र या वार्हस्पत्य और (घ) सावन भेद से चार प्रकार का होता है। (क) सौर मास उतने काल को कहते हैं जितने काल तक सूर्य का उदय किसी एक राशि में हो, अर्थात् सूर्य की एक सक्रांति में दूसरी सक्रांति तक का समय सौर मास कहलाता है। यह मास प्रायः तीस, इकतीस और कभी कभी उनतीस और बत्तीस दिन का भी होता है। (ख) चाद्र मास चद्रमा की कला की वृद्धि और ह्रासवाले दो पक्षों का होता है जिन्हें शुक्ल और कृष्ण कहते हैं। यह मास दो प्रकार का होता है—एक मुख्य और दूसरा गौण। जो मास शुक्ल प्रतिपदा से आरंभ होकर अभावस्या को समाप्त होता है, उसे मुख्य चाद्र माम कहते हैं। इसका दूसरा नाम अमात भी है। गौण चाद्र मास कृष्ण प्रतिपदा से आरंभ होता है और पूर्णिमा को समाप्त होता है इसे पूर्णिमात भी कहते हैं। दोनों प्रकार के मास अट्ठाइस दिन के और कभी कभी घट बढ़कर उन्तीस, तीस और सत्ताइस दिन के भी होते हैं। (ग) नाक्षत्र मास उतना काल है जितने में चद्रमा सत्ताइस नक्षत्रों में भ्रमण करता है। यह माम लगभग २७ दिन का होता है और उस दिन से आरंभ होता है जिम दिन चद्रमा अश्विनी नक्षत्र में प्रवेश करता है, और उस दिन समाप्त होता है, जिम दिन वह रेवती नक्षत्र से निकलता है। (घ) सावन माम का व्यवहार व्यापार आदि व्यावहारिक कामों में होता है और यह तीस दिन का होता है। यह किमी दिन में आरंभ होकर तीसवें दिन समाप्त होता है। सौर और चाद्र भेद से इसके भी दो भेद हैं। सौर सावन माम सौर माम की किमी तिथि से और चाद्र सावन मास चाद्र मास की किमी तिथि या दिन से आरंभ होकर उसके तीसवें दिन समाप्त होता है। प्रत्येक मंवत्सर में बारह सौर और बारह ही चाद्र मास होने हैं, पर मौर वर्ष ३६५ दिनों का और चाद्र वर्ष ३५५ दिनों का होता है, जिससे दोनों में प्रतिवर्ष १० दिन का अंतर पडता है। इन वर्षमय को दूर करने के लिये प्रति तीसरे वर्ष बारह के स्थान में तेरह चाद्र माम होते हैं। ऐसे बड़े हुए मास को अधिमास या मलमाम कहते हैं। विशेष दे० 'अधिमास' और 'मलमास'।

वैदिक काल में माम शब्द का व्यवहार चाद्र मास के लिये ही होता था। इसी से संहिताओं और ब्राह्मण में वही बारह महीने का सवत्सर और कटीं तेरह महीने का नवत्सर मिलता है।

२ चद्रमा (ने०)। ३ एक मन्व्या। १२ की मन्व्या।

मास^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मास] दे० 'माम'। उ०—वहक न वहि वहनापरे जब तव वीर विनाम। वचन न बड़ी मवीरू चोन्ह धोमुआ मास।—विहारी (जन्द०)।

मासक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महीना। माम। उ०—भेद की बात मुने

एल-एल० एम० । मास्टर अब् साइन्स = विज्ञान की एक डिग्री । एम० एस-सी० । मास्टर फी = एक विशिष्ट ताली जिससे विभिन्न कुजियो से खुलनेवाले बहुत से ताले खुल जायें । मास्टर-पीस = अत्यंत उत्कृष्ट वा कनामय । मास्टरशिप = प्रभुत्व । प्रधानता ।

मास्टरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मास्टर + ई (प्रत्य०)] ? मास्टर का काम । अध्यापकी । २ मास्टर का भाव ।

मास्य—वि० [सं०] महीने भर का । जो एक महीने का हो । मासीन ।

माहँ(५)—अव्य० [सं० मध्य, प्रा० मज्झ] बीच में । उ०—यह शिशुपाल भजैत श्री दीनवधु व्रजनाथ कबै मुख देखिहौं । कहि रहिमण मन माहँ सबै सुख लेखिहौं ।—पूर (शब्द०) ।

माहँ—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ मास । महीना । उ० सखि हे हामारि दुखेर नाहि ओर । ए भर वादर माहँ भादर, शून्य मदिर मोर ।—विद्यापति, पृ० ४७३ । २ चद्रमा । चाँद । उ०—छिपी थी सो एक माहँ मद की छवीली । मशाता हो ईदी निगारत दिखाया ।—दक्खिनी०, पृ० ७३ ।

माहँ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माघ, प्रा० माह] माघ । उटद ।

माहँ^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माघ, प्रा० माह] माघ नाम का महीना । उ०—(क) गहली गरव न कीजिए समै सुहागहि पाय । जिय की जीवनि जेठ सो माहँ न छाहँ सुहाय ।—विहारी (शब्द०) । (ख) नाचैगी निकसि शशिवदनी विहँसि तहाँ को हमै गनत मही माहँ मे मचति सी ।—देव (शब्द०) ।

माहँ(५)^४—अव्य० [सं० मध्य] दे० 'माहँ' । उ० सोहत अलक कपोल पर चढ छवि सिंधु अथाह । मनौ पारसी हरफ इक लसत आरसी माहँ ।—१० सप्तक, पृ० ३४६ ।

माहँ—सञ्ज्ञा पुं० [देशी] कुद का फूल [को०] ।

माहकस्थलक—वि० [सं०] १. माहकरयली में रहनेवाला । २ माहकस्थली में उत्पन्न । ३ माहकस्थली सबधी । माहकस्थली का ।

माहकस्थली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन जनपद का नाम ।

माहकि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महक नामक ऋषि के गोत्र में उत्पन्न पुरुष । २ एक आचार्य का नाम ।

माहजबी—वि० [फा०] प्रशस्त ललाटयुक्त । चाँद जैसा उज्वल । चाँद सा मुदर । उ०—किसी माहजबी माशूक की फुर्कत में बेकरार है ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ६२ ।

माहत(५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महत्ता] महत्व । महत्ता । बडाई ।

माहताब—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ चद्रमा । २ दे० 'महताबी' । ३ चाँदनी । चाँदिका । उ०—वगल में माहताब हो या आफताब, या साकी हो या शराब ।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० ३६७ ।

माहताबी—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १. दे० 'महताबी' । २ एक प्रकार का कपडा जिसपर सूर्य, चंद्रादि की सुनहरी या रुपहली आकृतियाँ बनी रहती हैं । ३. प्राँगन में ऊँचा खुला हुआ

चबूतरा जिसपर लोग चाँदनी में बैठते हैं । ४ तरबूज । ५. चक्रांतरा नीबू ।

माहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण जो अव्यय होता है ।

माहना(५) - क्रि० अ० [हिं०] दे० 'उमाहना' ।

माहनामा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० माहनामह] मासिक पत्र ।

माहनीय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ब्राह्मण ।

माहर^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माहिर (= इद्र)] इद्रायन । इनारू ।

मुहा०—माहर का फल = जो देखने में मुदर हो, पर दुर्गुणों से भरा हो ।

माहर^२—वि० [अ० माहिर] दे० 'माहिर' ।

माहरुख वि० [फा०] चाँद की तरह मुखवाला । चद्रानन [को०] ।

माहरू—वि० [फा०] दे० 'माहरुख' ।

माहली सञ्ज्ञा पुं० [हिं० महल] १ वह पुरुष जो अत पुर में आता जाता हो । महली । खोजा । २ सेवक । दाम । उ०—तुलसी सुभाइ कहै नहीं किए पत्तपात कीन ईस कियो, कीस भालु खास माहली ।—तुलसी (शब्द०) ।

माहवार^१ क्रि० वि० [फा०] प्रतिमास । महीने महीने ।

माहवार^२—वि० हर महीने का । मासिक ।

माहवार^३—सञ्ज्ञा पुं० महीने का वेतन ।

माहवारी—वि० [फा०] हर महीने का । मासिक ।

माहवाह(५)^४—वि० [सं० मह + बाहु] बड़े हाथवाला । उ०—धूप दान क्रीत राम माहवाह मोटा घरणी ।—रघु० रू०, पृ० २४७ ।

माहवो, माहवौ—अव्य० [सं० मध्य] बीच बीच में । उ०—माहवौ माहवौ मोह्यो आइ ।—दादू०, पृ० ६०१ ।

माहसो(५)^५—वि० [सं० महत्] महान् । बडा । उ०—परस, कदमा चली जुगत भवभूम पर, माहसो नदी भव भुगत मेनै ।—रघु० रू०, पृ० २६० ।

माहँ(५)^६—अव्य० [हिं०] दे० 'महँ' । उ०—दीन्हैसि कड बोल जेहि माहँ ।—जायसी ग्रं०, पृ० ४ ।

माहा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गाय [को०] ।

माहाकुल—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माहाकुली] उच्च कुलोत्पन्न ऊँचे कुल में उत्पन्न [को०] ।

माहाकुलीन—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माहाकुलीनी] श्रेष्ठ कुल वा वंश का । माहाकुल [को०] ।

माहाजनिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माहाजनिकी] १. महाजनों अर्थात् व्यापारियों के लिये उचित । २ महान् व्यक्तियों के लिये उचित । महाजनोचित [को०] ।

महाजनीन—वि० [सं०] [वि० स्त्री० माहाजनीनी] दे० 'माहाजनिक' ।

माहिर'—वि० [अ०] १ ज्ञाता । जानकार । तत्त्वज्ञ । उ०—मूषी
मृधा सी मुभाय भरी पं, खरी रति केलि कलान मे माहिर ।
—जवाहिर (शब्द०) । २ कुशल । निपुण । चतुर (को०) ।

माहिर^३—नञ्ज पुं० [सं०] इन्द्र ।

माहिला^७—मञ्ज पुं० [अ० मल्ल इह] मांकी । मल्लाह । उ०—
कविरा मन का माहिला अन्ना वहे अत्तोल । देखत ही दह में
पढं देइ किसी को दोन ।—कवीर (शब्द०) ।

माहिप'—वि० [सं०] [वि०स्त्री० माहिपी] १ भैंस का (दूध
आदि) । २ भैंस सवधी ।

माहिप^४—मञ्ज पुं० [सं०] अत,पुर । जनानखाना । रनिवास [को०] ।

माहिपक—सञ्ज पुं० [सं०] १, एक प्राचीन देश का नाम । २ इस
देश में रहनेवाली एक जाति का नाम । ३ भैंस आदि का
पालक (को०) ।

माहिपवल्लरी—सञ्ज स्त्री० [सं०] काला विधारा । कृष्ण वृद्धदारक ।

माहिपवल्ली—सञ्ज स्त्री० [सं०] छिरहटी ।

माहिपश्चली—सञ्ज स्त्री० [सं०] एक प्राचीन जनपद का नाम ।

माहिपाक्ष—मञ्ज पुं० [न०] भैंसा गुग्गुन ।

माहिपिक—सञ्ज पुं० [सं०] १ व्यभिचारिणी स्त्री का पति । २,
भैंस से जीविका निर्वाह करनेवाला व्यक्ति । ३, वह व्यक्ति जो
पत्नी के व्यभिचार द्वारा उपाजित धन से जीविका निर्वाह
करता हो (को०) ।

माहिपिका—मञ्ज स्त्री० [सं०] एक नदी का नाम ।

माहिपेय—मञ्ज पुं० [सं०] पट्टाभिपिक्त रानी या पटरानी का पुत्र ।
युवराज [को०] ।

मा'हृषमती—मञ्ज स्त्री० [सं०] दक्षिण देश का एक प्रसिद्ध प्राचीन
नगर का नाम ।

विशेष—इसका उल्लेख पुराणों, महाभारत और बौद्ध ग्रंथों में
आया है । यह माहिपमट्ट नामक जनपद की राजधानी थी ।
पुराणों में इसे नर्मदा नदी के किनारे लिखा है । महाभारत
यही का रहनेवाला था । महाभारत में माहिषमता और त्रिपुर
का नाम साथ आया है । त्रिपुर को प्राजकाल त्रिपुरा कहते हैं,
पर माहिषमती का शबलक ठीक पता नहीं है । पुरातत्त्वविद्
कनिषम माह्व ने 'माहिपमट्ट' के 'मट्ट' शब्द को लेकर
'मं'ला' नगर का माहृषमती लिखा है ।

माहिष्य—मञ्ज पुं० [सं०] रमृतिपों के अनुगार एक गकर जाति ।

विशेष—याज्ञवल्क्य इसे क्षत्रिय पिता और वश्य्या माता की श्रौत
मतान मानते हैं । आश्वत्थान इसे मृग्य नामक जाति में वर्ग
जाति की माता में उष्य मानते हैं । तद्यथा मट्ट में इसकी
यज्ञोपवीत आदि चन्वारों का धर्या का समान अधिकारी बड़ा
है, पर आश्वत्थान इसे यज्ञ करने का निषेध करते हैं । इस
जाति के लोग प्रत्त त्त वाचि दीप ने मित्रो है और अपने को
माहिष्य क्षत्रिय करने हैं । मनन्त ये लोग त्रिगो समय माहिष्य-
मन्त देन के रहनेवाले होंगे ।

माही(७) —अर्थ [हि०] 'माहि' । मे । पर । उ०—अनचर देह धरी छिति माही । अतुलित वन प्रताप तिन्ह पाही ।—तुलसी (शब्द०) ।

माही'—सज्ञा स्त्री० [फा०] मछली । उ०—माही जल मृग के मु वृत्त सज्जन हित कर जीव तुन्वक धीवर दुष्ट नर तिन काग्न दुप नीव ।—ब्रज० ग०, पृ० ७५ ।

धौं—माहीगीर । माहीपुस्त । माहामरातिव ।

माही'—सज्ञा स्त्री० [सं० माहेय] दक्षिण देश की एक नदी का नाम जा सभात की खाड़ी में गरती है ।

माहीगीर—सज्ञा पुं० [फा०] मछली पकड़नेवाला । मछुवा ।

माहीपुस्त'—वि० [फा०] जो मछली का पीठ की तरह बीच में उभरा हुआ और किनारे किनारे ढालुआँ हो ।

माहीपुस्त'—सज्ञा पुं० एक प्रकार का कारचोवी का काम जो बीच में उभरा हुआ और इधर उधर ढालुआँ हाता है ।

माहीमरातिव—सज्ञा पुं० [फा०] राजा प्राक आगे हाथी पर चलनेवाले सात भेड़ जिनपर अलग अलग मछली, ताता ग्रहा आदि की आठतिर्या कारचोवा की बनी होती है ।

विशेष—इस प्रकार के भेड़ों का आरंभ मुगलमानों के राजत्व काल में हुआ था । (१) सूर्य, (२) पजा, (३) तुला, (४) अजगर, (५) सूर्यमुखा, (६) मछली और (७) गोल, ये सात शकलें भेड़ों पर हाती हैं ।

माहीयत—सज्ञा स्त्री० [अ०] 'माहियत' [फि०] ।

माहीला(७)।—वि० [सं० मध्य] विचला । मध्य का । बीच का । उ०—माहीने कीये जीमणी अपी काली तिल भमर जीसो ।—वी० रासो, पृ० ७७ ।

माहूट(७)।—सज्ञा पुं० [हि०] 'महावट', उ०—नैन चुवाहि जम माहूट नीह ।—जायसी ग० (गुप्त), पृ० ३५६ ।

माहुर—सज्ञा पुं० [सं० मधुर, प्रा० माहुर (= विष)] विष । जहर । उ०—(क) साप बीछ को मय ह, माहुर फार जाय । विकट नारि के पाले परा काट करजा खाय ।—कवीर (शब्द०) । (ख) दानव देव उच अर नाचू । अमिय मजोवन माहुर मोचू ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुहा०—माहुर की गांठ = (१) भारी विपत्ती वस्तु । (२) अत्यंत दुष्ट या कुटिल मनुष्य ।

माहूल—सज्ञा पुं० [सं०] महल के नीचे में उन्नत पुष्प ।

माहूँ—सज्ञा स्त्री० [अ०] एक छोटा बोटो जा सरमा, राई आदि की फल पर लगता है ।

विशेष—यह कीटा राई, गरनी, मूली आदि की फसल में उनके डठलों पर फूलन के समय या उत्तक पहले भेदे द देना है, जितने फल नितान हीन होकर नष्ट हो जाती है । यह फल रंग का परदार युक्त क आकार का कांज होता है और जाड के दिना में फल पर लगता है । यदि पानी बरस जाय तो ये कीड़े नष्ट हो जाय ह । प्रायः अधिक बदली के दिनों में, जब पानी नहीं बरसता, ये काड भेद देते हैं और फल क डठलो

पर फूलों के आमषाग उत्पन्न हो जाते हैं । इसे माहूँ, माहूँ आदि भी कहते हैं ।

मुहा०—माहूँ लगना = माहूँ का फलन के हरे डठल पर भेदे देना ।

माहू—सज्ञा पुं० ['श०] कनकनाई नाम का बरमनी कीटा जो प्रायः कान में घुस जाता है । गिजाई ।

माहूट(७)।—वि० [अ०] जो दिन में नष्ट हो । उ०—यह माहूट ठीका जो पूरा हुआ ।—कवीर गं०, पृ० १३४ ।

माहेंद्र'—वि० [सं० माहेन्द्र] [फि० की० माहेंद्र] १. जन्मा देवता महेंद्र हो । २. महेंद्र गर्वयो । ३. महेंद्र तन्वो ।

माहेंद्र'—सज्ञा पुं० [सं०] १. जन्मा के एक रसता जो तन्वम नामक वैमानिक देवगण में है । २. एक अक्ष का नाम । ३. वार के अनुसार भिन्न भिन्न रस में पड़ता है यह नाम जिसमें यात्रा करने का विधान है ।

विशेष—यह याग प्रति वार का क्रमातुता परत का प्रकार है । प्रतिदिन के दहा में ये चार चार याग अलग अलग क्रम में होते रहते हैं—माहेंद्र, वरुण, वायु वार यम । ये चारों याग नितान के प्रतिदिन इस प्रकार प्राया करते हैं—

दिन	प्रथम दंड	द्वितीय दंड	तृतीय दंड	चतुर्थ दंड
रवि	वायु	वरुण	यम	माहेंद्र
चंद्र	माहेंद्र	वायु	वरुण	यम
भौम	वरुण	यम	माहेंद्र	वायु
बुध	माहेंद्र	वायु	वरुण	यम
गुरु	वायु	वरुण	यम	माहेंद्र
शुक्र	माहेंद्र	वायु	यम	वरुण
शनि	यम	माहेंद्र	वायु	वरुण

इन चारों योगों में माहेंद्र योग विजयकारक वरुण वायु, वायु नित्य फिगानेवाला और यम मृत्युकारक कहा जाता है ।

४. मुशुत के अनुसार एक देवग्रह जिनके आक्रमण करने में अत्यन्त पुरप में माहात्म्य, शीर्ष, शान्तमुदिता, 'पृथ्वरुण आदि युग एकाएक आ जाते हैं । ५. जेना के अनुसार भीम नर्म का नाम ।

माहेंद्रवाणी—सज्ञा स्त्री० [सं० माहेन्द्रवाणी] महाभारत के अनुसार एक नदी का नाम ।

माहेंद्री—सज्ञा स्त्री० [सं० माहेन्द्र] १. इन्द्राणी । २. गंगा । ३. इन्द्रावनी । ४. गाल माहेंद्राणी म न एत । यह एत की मूला है । ५. इन्द्र का माल । ६. पूर्व राजा (१०) ।

माहेतावा—सज्ञा पुं० [सं०] चनमवा ।

माहेंय'—वि० [सं०] [फि० की० माहेया] मूली का अर्थ होता है ।

माहेंय'—सज्ञा पुं० १. मूला । २. मूला । ३. मूला । ४. मूला का पुत्र । मूलापुर (१०) ।

माहेया—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. गंगा । २. गंगा ।

माहूल—सज्ञा पुं० [सं०] एक महल का अर्थ होता है ।

माहेंश—वि० [सं०] महल, महलवा । महल का ।

माहेशी— [सं०] दुगा ।

माहेश्वर'— [सं०] माहेश्वर मन्त्री । महेश्वर का ।

माहेश्वर'— [सं०] १ एक राजा का नाम । २ एक उपपुत्र का नाम । ३ माहेश्वर के चार भ्रातर जिनमें स्वयं और व्यंजन शर्मा का भ्रातर प्रतापशर्म चिया गया है ।

विशेष उक्त शिष्य ने योग का सिद्धांत दे कि वे सूत्र जिन जी के शास्त्रानुसार नमस्कार उक्त में निकले थे । सूत्र ये हैं—
षडङ्ग । षड्वर् । षडाष्ट । ऐश्वर्य । श्यवर्ग । नष्ट । क्रमङ्-
नाम् । क्रमङ् । पञ्चात् । जगद्वन्द्व । अफष्टयचदतत् ।
पदम् । अत्तम् । नद ।

४ जैत्र मन्त्र का एक शब्द । ५ एा शस्त्र का नाम ।
नाश्वरनाम् ।

माहेश्वरी— [सं०] १ दुगा । २ एक नावृत्त का नाम ।
३ एक शब्द का नाम । ४ यवतिस्ना । जगिनी लता (ने०) ।
५ एक नदी का नाम । ६ वैश्या की एक जाति ।

माहेश्वरि— [सं०] १ भारतीय चंद्रमा ।
नाश्वरि । त्रिभुजान का शब्द । २ एक समानपूर्ण खिताब
का प्रशिद्धता का शब्द दिया गया था । उ०— यथार्थ खिताब
'माहेश्वरि' पार्श्व भारतेषु पद प्रदान किया ।— प्रेमधन०,
भा० २, ६३ ।

माहेशी— [सं०] १ 'माहेशी' ।

मिगनी— [सं०] १ 'मिगनी' ।

मिगी— [सं०] १ 'मिगी' । उ०— मिगी गी मिगी
करि जगि पागमर के उदर विदार ।— जगि श०, भा० ४,
पृ० २२ ।

मिजारी— [सं०] १ माजारी । उ०— मूर्ति मिजारी
रजि गीता । नामक मूर मिनि उनटी चीनी ।— प्राण०,
पृ० १३६ ।

मिट'— [सं०] १ वह स्थान जहां मिट्टी ढलने लगे ।
दुष्कार । २ एक प्रकार का चट्टान मोटा । टामारी मोटा ।

मिट्टी— [सं०] १ 'मिट्टी' ।

मिट्टवारी— [सं०] १ 'मिट्ट' । उ०— इद्र त
वापक जव नरि नारी । इद्रि पूरि तव सब मिट्टवारी ।— नद०
ग्र०, पृ० २६० ।

मिहार्द्र— [सं०] १ मीठन या मीठन का शिवा
या भाग । २ माहेश्वर की मन्त्रवृत्ति । ३ देवी छोटी की छपाई
का नाम प्रिया का शब्द का शब्द के उपान और धोत से
पाना जाता है ।

विशेष— इति शब्द पार्श्व । मनी एक नीर में कुछ रेंडी का तब
धीरे धीरे जो तब तक शक और मसाले दाते जाते हैं,
और उनके पाना तथा चट्टान मोटा पाना दिन एक भिगाया
जाता है । पाना चक । पाने पर चक प्रिया को मोटा पाना भी
शक जाता है । मीठन मिहार्द्रक कल्या धोत के शर्मा भेजा
जाता है । १६५० उक्त शब्द पार्श्व और धोत शक ही जाता
है । १६५० ।

मित^०— [सं०] २० 'मित' । उ०— (क) शाली
श्रीर मित को मेरो मित्रो मिलाप ।— मतिराम (पद०) ।
(ख) तू हेरे भीतर मी मित । नोई करै जेहि नहि न चित ।
— जावमी (जन्द०) ।

मिदर^०— [सं०] १ 'मिदर' । उ०— सुगुटी मिदर
बंठा माघा वहाँ जाय दरमन कीजै ।— रामानंद०, पृ० २८ ।

मिदर— [सं०] १ 'मिदर' । उ०— राजा करो, राय
बहादुर करो, कौमिल का मिदर करो हम तुमको प्रणाम करते
हैं ।— भारतेंदु ग्र०, भा० ३, पृ० ८५७ ।

मिमिण— [सं०] एक प्रकार का रोग । तकिया-
कर बोलना । उ०— मिमिण कहिए गिनगिनाय कर ताक से
बोले । यह भी रोग है ।— मावव०, पृ० १४४ ।

मिहंदी— [सं०] १ 'मिहंदी' ।

मिआद— [सं०] १ 'मिआद' ।

मिआदी— [सं०] १ 'मिआदी' ।

मिआन'— [सं०] १ 'मिआन' ।

मिआन'— [सं०] १ 'मिआन' ।

मिऊद— [सं०] १ 'मिऊद' । गुदा ।

मिऊदार— [सं०] १ 'मिऊदार' परिमाण । मात्रा । मान ।
जैसे,— यह दवा ज्यादा मिऊदार में नहीं खानी चाहिए ।

मिऊनातीस— [सं०] १ 'मिऊनातीस' ।

मिऊराज— [सं०] १ 'मिऊराज' । कर्तनी । कतरनी ।
कैंची (को०) ।

मिऊराजा— [सं०] १ 'मिऊराजा' । वह तीर जिनके फल
में दा गमि हो । २ एक प्रकार की मिठाई । ३ कुश्ती का एक
दाँव । कैंचा ।

मिऊडो— [सं०] १ 'मिऊडो' । जापान के मआद की उपाधि ।

मिऊसचर— [सं०] १ 'मिऊसचर' । ऐसी तरल शीष्य जिनमें कई शोषधियाँ
मिनी हो । मिश्रित शीष्य । जैसे, किनाइल मिऊसचर ।

मिग^०— [सं०] १ 'मिग' । मृग । हिरन ।

मिगम्सर^०— [सं०] १ 'मिगम्सर' । उ०—
माम मिगम्सर द्वादशी, इन पुढ पन्थ शंधियां ।— ग० २०,
पृ० २२८ ।

मिचकना— [सं०] १ 'मिचकना' । बार बार
पुनरा और बद होना । २. (पत्रको का) कपकना या बद
होना ।

मिचकाना— [सं०] १ 'मिचकाना' । बार बार (श्राव्यो)
गोचना और बद करना । २. (पत्रको का) कपकना या बद
करके दाना । जैसे, श्राव्यो मिचकाना ।

सयो० मि०— [सं०] १ 'सयो० मि०' । लेना ।

मिचही^०— [सं०] १ 'मिचही' । पत्रको की कपकनी । पत्रको
या मिचकना । उ०— शयुर् मिगमिमीयो मिचही दे, जाहि
हिलायत ।— पीदार अभि० ग्र०, पृ० ८६५ ।

मिचना—क्रि० अ० [हि० मीचना का अक० रूप] (आँखों का) वद होना । जैसे,—मारे नींद के आँखें मिचि जाती हैं ।

मिचराना—क्रि० अ० [मिचर, चाबने के शब्द से अनु०] त्रिना भूख के खाना । इच्छा न होने पर भी भोजन करना ।

विशेष—बहुत धीरे धीरे खाने पर विशेषतः बालकों के मवच में बोलते हैं ।

मिचराना[†]—क्रि० अ० [हि० मिचलाना, दे० 'मिचलाना'] उ०—जाइ मो मैं डारत ही मो चिपचिपावे लगो और जी मिचराइ कै उल्टी आइ गई ।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० ४२ ।

मिचलाना—क्रि० अ० [हि० मथना, मतलाना] कै आने को होना । उबकाई आना । मतली आना ।

मिचली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिचलाना] जी मिचलाने की क्रिया या भाव । कै होने की इच्छा ।

मिचवाना—क्रि० स० [हि० मीचना का प्रे०रूप] मीचने का काम दूसरे से कराना । दूसरे को मीचने में प्रवृत्त करना । दूसरे में आँखें वद कराना ।

मिचिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] एक प्राचीन नदी का नाम ।

मिचुा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मृत्यु, प्रा० मिच्यु] मृत्यु । मौत ।

मिचौनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मीचना] १ (आँख) १. मीचने की क्रिया । २ दे० 'आँखमिचौली' । उ०—दृई बहुत दिन खेल मिचौनी ।—निशा०, पृ० ६६ ।

मिचौलना—क्रि० स० [हि०] दे० 'मीचना' ।

मिचौली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मीचना] दे० 'आँखमिचौली' ।

मिचौहाँ[Ⓔ]—वि० [हि० मीचना] आघात मुँदा हुआ । अघमुँदा । उ०—भूपकोह पल देखियतु कहत हँसाहै वन । अतमौह मी गात कत करत मिचौहँ नैन ।—स० सप्तक, पृ० ३८७ ।

मिच्छक—सञ्ज्ञा पुं० [स०] एक बौद्ध स्थविर का नाम ।

मिच्छ[Ⓔ]—सञ्ज्ञा पुं० [म० म्लेच्छ] दे० 'म्लेच्छ' । उ०—कहै दूत प्रथिराज सम मिच्छ सेना वरजोर । महर निकसि बाहर भए वव बज्जि घनघोर ।—पृ० रा०, १३।२६ ।

मिछ्ठा^{Ⓔ†}—वि० [स० मृपा] दे० 'मिथ्या' ।

मिजमानी[Ⓔ]—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मेजवान] महमानदारी । मेजवानी । उ०—रानिय आई मल्हन दे, बहु मिजमानिय कौन ।—प० रासो, पृ० ६८ ।

मिजराब—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिज़राब] तार का बना हुआ एक प्रकार का छल्ला जिममें मुड़े तार की एक नोक आगे निकली रहती है और जिससे सितार आदि के तार पर आघात करके बजाते हैं । डका । कोण । नाखुना ।

मिजवानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मेजवानी] दे० 'मेजवानी' ।

मिजाज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मिज़ाज] १. किसी पदार्थ का वह मूल गुण जो सदा बना रहे । तासीर । २. प्राणी की प्रधान प्रवृत्ति । स्वभाव । प्रकृति । जैसे,—उनका मिजाज बहुत सख्त है, वे

वात वात पर विगड जाते हैं । ३. शरीर या मन की दशा । तबीयत । दिल ।

यौ०—मिजाज आली । मिजाज शरीर । मिजाज पुरसी ।

मुहा०—'मिजाज खराब होना = (१) मन में किसी प्रकार की अप्रमत्तता आदि उत्पन्न होना । ग्लानि आदि होना । (२) अस्वस्थता होना । मिजाज विगडना = दे० 'मिजाज खराब होना' । मिजाज बिगाडना = किसी के मन में क्रोध, अभिमान आदि मनोविकार उत्पन्न करना । मिजाज पाना = (१) किसी के स्वभाव से परिचित होना । (२) किसी को अनुकूल या प्रसन्न देखना । मिजाज पूछना = (१) तबीयत का हाल पूछना । यह पूछना कि आपका शरीर तो अच्छा है । (२) अच्छी तरह खबर लेना । दड देना । मिजाज में आना = ध्यान में आना । समझ में आना । जैसे,—अगर आपके मिजाज में आव तो आप भी वहाँ चलिए । मिजाज सीधा होना = अनुकूल या प्रसन्न होना । तबीयत ठिकाने होना ।

४. अभिमान । घमड । शेखी ।

मुहा०—मिजाज आना = अभिमान करना । घमड होना । मिजाज में आना = अभिमान करना । घमड करना । जैसे,—इस वक्त कुछ न पूछो, आप मिजाज में आ गए हैं । मिजाज मिजना = घमड दूर होना । वशवर्ती होना । उ०—चगुल तर चिचिर्यहो हो, तव मिलिहै मिजाज ।—पलटू०, भा० ३, पृ० १६ । मिजाज न मिजना = अभिमान के कारण किसी का अलग रहना । घमड के कारण वात न करना । जैसे,—आजकल तो आपके मिजाज नहीं मिलते । (विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग बहुधा बहुवचन में होता है ।) मिजाज सातवें आसमान पर होना = घमड का बहुत अधिक बढ़ जाना । मिजाज होना = घमड में होना । घमड में आना ।

यौ०—मिजाजदाँ । मिजाजदार । मिजाजवाला = मिजाजदार । मिजाजशनास = मिजाजदाँ । मिजाजशनासी = स्वभाव जानना ।

मिजाज आली?—[अ० मिज़ाज आली] एक वाक्यांश जिसका व्यवहार किसी का शारीरिक कुशल मगल पूछने के समय होता है । आप अच्छे तो हैं ?

मिजाजदाँ—वि० [अ० मिज़ाज + फा० दा (प्रत्य०)] मिजाज पहचाननेवाला । स्वभाव से परिचित (को०) ।

मिजाजदार—वि० [अ० मिज़ाज + फा० दार (प्रत्य०)] जिसे बहुत अभिमान हो । घमडी ।

मिजाजपीटा—वि० [अ० मिज़ाज + हि० पीटना] [वि० स्त्री० मिजाजपीटी] जिसे बहुत अधिक घमड हो । अभिमानो । घमडी । (स्त्री०) ।

मिजाजपुरसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिज़ाज + फा० पुरसी] किसी से यह पूछना कि आपका मिजाज तो अच्छा है । तबीयत का हाल पूछना । शारीरिक कुशल मगल पूछना ।

मिजाज शरीफ?—[अ० मिज़ाज शरीफ] एक वाक्यांश जिसका

व्यवहार किसी का शारीरिक कुशल मगल पूछने के लिये होता है। आप अच्छे तो हूँ ? आप मकुशल तो हैं ?

मिजाजी—वि० [अ० मिजाज + ई (प्रत्य०)] बहुत अधिक मिजाज करने या रखनेवाला। अभिमानी। घमडी।

मिजाजी—वि० स्त्री० [अ० मिजाज + ओ (प्रत्य०)] घमडी। अभिमाना।

मिजाजू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मज्जा] मज्जा। चर्वा। उ० चाम ही चाम घमता गुरदेव दिन दिन छोज काया। होठ कठ तालुका मोपी काटि मिजाजू खाया।—गोरख०, पृ० १४५।

मिहमान—सञ्ज्ञा पु० [हि० मेहमान] दे० 'मेहमान'। उ०—माहन उदमाद्या जी म्हाँर आया छै मिहमान।—अज० अ०, पृ० १६७।

मिहमानी पु—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मेहमानी] दे० 'मेहमानी'। उ०—ठानी मिहमानी जब दुयाधन माधव को, बाजी गजराज निजराने का जने रहे।—राम० अ०, पृ० २७१।

मिहोना—सञ्ज्ञा पु० [सं० मध्य, पु० हि० मांस्क] वह खूँटी जो हल में बड़े तल में लगी हुई लकड़ी के बीच में रूती है। (बुदेल०)।

मिटका—नद्या पु० [हि०] दे० 'मटका'।

मिटना—क्र० अ० [सं० मृष्ट, प्रा० मिह] १ किसी अकित चिह्न आदि का न रह जाना। जैसे,—इस पत्र के कई अक्षर मिट गए हैं। २ नष्ट हो जाना। न रह जाना। ३ खराब होना। बर्बाद होना। जैसे, घर मिटना। ४ रद्द होना। जैसे, विवाता का लेख मिटना।

सयो० क्रि०—जाना।

मिटाना—क्रि० म० [हि० मिटना का सक्र० रूप] १ रेखा, दाग, चिह्न आदि का दूर करना। उ०—कर्म रेख नहिं मिटे मिटाई।—कवीर सा०, पृ० ६६०। २ नष्ट करना। न रहने देना। दूर करना। उ०—ताकर तोहिं भेद ममझाऊँ मनोकामना सकल मिटाऊँ।—कवीर सा०, पृ० १००६। ३ खराब करना। चापट करना। बर्बाद करना। ४ रद्द करना।

सयो० क्रि०—जाना।—देना।

मिटिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिटा + इया (प्रत्य०)] मिट्टी का छोटा बरतन जिसमें प्रायः दूब आदि रखा जाता है। मटकी।

मिटिया—वि० [हि० मिट्टी + इया (प्रत्य०)] मिट्टी का।

मिटियाना—क्रि० म० [हि० मिट्टी + आना (प्रत्य०)] मिट्टी लगाकर साफ करना, रगड़ना या चिकना करना। जैसे, लोटा मिटियाना।

मिटियाफूस—वि० [हि० मिटिया + फूस] जो कुछ भी टूट न हो। बहुत ही कमजोर।

मिटियामहल—सञ्ज्ञा पु० [हि० मिटिया + फा० महल] मिट्टी का मकान। झोपडी। (व्यग्य)।

मिटियासोप—सञ्ज्ञा पु० [हि० मिटिया + सोप] मटमैले रंग का एक प्रकार का साँप जिसके ऊपर काले रंग की चित्तियाँ होती हैं।

मिट्टिहा—वि० [हि० मिट्टी + हा (प्रत्य०)] मिट्टी का। मिट्टी-वाला। उ०—रुची दिवाल मिट्टिहा मंदिर कचन कलई लाया। रोदत खाक जाक मव भूलेव पाक भया नहिं कागा।—सत० दरिया, पृ० १२३।

मिट्टना—क्रि० अ०, सं० [हि० मिटना] दे० 'मिटना'। उ०—(क) यह कह करे द्विजराज चलि फेरि रोकि कहि नारि। म्हाँ कलक को मिट्टइय उठारते कहहु विचारि।—प० रासो, पृ० १०। २ दे० 'मिटना'। उ० तिहि परसे ताप मिट्टव सरार। ह० रानो, पृ० १६।

मिट्टी—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मृत्तिका, प्रा० मिट्टिआ] १ पृथ्वी। भूमि। जमान। जैसे,—जा चाज मिट्टी में बनती है, वह मिट्टी में ही मिल जाती है।

मुहा०—मिट्टी पकड़ना = जमीन पर दृढतापूर्वक जम जाना।

२ वह भुरभुरा पदार्थ जो पृथ्वी के ठोस विभाग अथवा स्थल में साधारणतः सब जगह पाया जाता है और जो ऊपरी तल की प्रधान वस्तु है। खाक। धूल।

मुहा०—मिट्टी करना = नष्ट करना। खराब करना। चापट करना। जम, रगड़ना मिट्टी करना, इज्जत मिट्टी करना, शरीर मिट्टी करना, कपड़े मिट्टी करना। मिट्टी के भोज = बहुत मस्ता। बूत हा थोड़े मूल्य पर। जैसे—वह मकान तो मिट्टी के मोल विक रहा है। मिट्टी डालना = (१) किसी बात को जाने देना। छाड़ देना। (२) किसी के दोष छिपाना। परदा डालना। (३) एक प्रकार का प्रयोग जिसमें किसी की कोई छोटी मोटी चीज, विशेषतः गहना आदि, खो जान पर सब लाग एक स्थान पर जाकर थोड़ी थोड़ी मिट्टी डाल आते हैं। इस प्रकार कभी कभी चुरानेवाला भा भयवश अथवा और किसी कारण से चुराई हुई चीज उसी मिट्टी के साथ वहाँ रख आता है, जिससे मालिक का चीज ता मिल जाती है और यह नहीं प्रकट होने पाता कि कौन चोर है। मिट्टा डालना = चोरी गई हुई चीज का पता लगाने के लिये लोगों में किसी स्थान पर मिट्टी डालने के लिये कहना। विशेष दे० 'मिट्टी डालना'। मिट्टी देना = (१) मुमनमानों में किसी के मरने पर सब लोगों का उमकी कब्र में तीन तीन मुट्टी मिट्टी डालना जो पुण्य कार्य समझा जाता है। (२) कब्र में गाड़ना। (मुनल०)। मिट्टी पकड़े या छूए साना होना = भाग्य का प्रबल होना। मिटारना चमकना। साधारण काम में भा विशेष लाभ होना। मिट्टी में मिलना = (१) नष्ट होना। चापट होना। खराब होना। (२) मरना। मिट्टी में मिलाना = नष्ट करना। चापट करना। बर्बाद करना। मिट्टी हाना = (१) नष्ट होना। खराब होना। (२) गदा या मँला कुचैला होना।

यौ०—मिट्टी का पुतला = मानव शरीर। मिट्टी की सूरत = मानव शरीर। मिट्टी के माधव = मूर्ख वेवकूफ। भादू। मिट्टी खराबी = (१) दुर्दशा। (२) बर्बादी। नाश।

३ किसी चीज को जलाकर तैयार की हुई राख। भस्म। जैसे, पारे की मिट्टी। लोने की मिट्टी। ४, कुछ विशेष प्रकार की

अथवा साफ की हुई मिट्टी जो भिन्न भिन्न कामों में आती है। जैसे, मुलतानी मिट्टी, पीली मिट्टी। ५ शरीर। जिस्म। वदन।

मुहा०—किसी की मिट्टी पलीढ या चरवाढ करना = दुर्दशा करना। खराबी करना। (इस अर्थ में मुहावरा अर्थ म० ६ के साथ भी लगता है। मिट्टी खराब करना = बर्बाद करना। रूप प्रिगाडना। उ० लोम कजली की मिट्टी खराब कर रहे ह। —प्रेमघन०, भा० २, पृ० ३४४।

६ शव। लाश।

मुहा० मिट्टी उठना = शव को अन्त्येष्टि के लिये ले जाना। जनाजा उठना। मिट्टी ठिकाने लगना = शव की उचित अन्त्येष्टि क्रिया होना। मिट्टी ठिकाने लगाना = शव की उचित अन्त्येष्टि क्रिया करना।

७ खाने का गोश्त। मास। फनिया। (क्व०)। ८ शारीरिक गठन। वदन की बनावट। जैसे,—उमकी मिट्टी बहुत अच्छी है, साठ वर्ष का होने पर भी जवान जान पड़ता है।

मुहा०—मिट्टी ढह जाना = शरीर में बुढ़ापे के चिह्न दिखाई देना।

९ चदन की जमीन जो इत्र में दी जाती है।

मिट्टी का तेल—इश पु० [हि० मिट्टी + का + तेल] एक प्रसिद्ध ज्वलनशील, खनिज, तरल पदार्थ जिसका व्यवहार प्रायः मन्दिरे ससार में दीपक आदि जलाने और प्रकाश करने के लिये होता है।

विशेष—यह ससार के भिन्न भिन्न भागों में जमीन के अदर पाया जाता है। कभी कभी तो जमीन में आपसे आप दरारें पड़ जाती हैं जिनमें से यह तेल निकलने लगता है, और इस प्रकार वहाँ इसके चश्मे बन जाते हैं। पर प्रायः यह जमीन में बड़े बड़े सुराख या छिद्र करके पिचकारी की तरह बड़े बड़े यंत्रों की सहायता से ही निकाला जाता है। कभी कभी यह जमीन के अदर मीनों के जोर करने के कारण भी अपने आप फूट पड़ता है। कुछ लोग कहते हैं, जमीन के अदर जो लौह मिश्रित बहुत गरम कार्बोनाइड होता है, उसपर जल पड़ने से यह तैयार होता है, और कुछ लोगों का मत है कि जमीन के अदर अनेक प्रकार के जीवों के मृतक शरीरों के सड़ने से यह तैयार होता है। एक मत यह भी है कि इसकी उत्पत्ति का संबंध नमक की उत्पत्ति से है क्योंकि अनेक स्थानों में यह नमक की खान के पास ही पाया जाता है। इसी प्रकार इसकी उत्पत्ति के संबंध में और भी अनेक मत हैं। अमेरिका के संयुक्त राज्यों तथा रूस में इसकी खानें बहुत अधिक हैं और इन्हीं दोनों देशों में सबसे अधिक मिट्टी का तेल निकलता है। भारत में इसकी खानें या तो पंजाब और बलोचिस्तान की ओर हैं या आसाम और बरमा की ओर। परंतु पश्चिमी प्रांतों से अभी तक बहुत थोड़ा तेल निकाला जाता है और पूर्वी प्रांतों से अपेक्षाकृत अधिक। इधर गुजरात तथा कच्छ आदि में भी इसकी प्राप्ति हो रही है। अरब देशों में यह रेगिस्तान के नीचे मिला है और समुद्र तल के नीचे भी यह प्राप्त हुआ है। बहुत बढिया तेल का रंग

सफेद और स्वच्छ जन के समान होता है, पर साधारण तेल का रंग कुछ लाली या नीलापन लिए और घटिया तेल का रंग प्रायः काला होता है। बढिया माफ किया हुआ तेल पतला और घटिया तेल गाढ़ा होता है। प्रकाश करने के अतिरिक्त इसका उपयोग छोटे इजन चलाने, गैस तैयार करने, अनेक प्रकार के तेलों और वारनिशों आदि को गनाने और मोमवत्तियाँ आदि बनाने में होता है। इसमें एक प्रकार की उग्र और अप्रिय गंध होती है। आटी मात्रा में जमान पर लगने या गले के नीचे उतरने पर यह कं नाता है, और अधिक मात्रा में भीषण विष का काम करता है। मोटरो आदि में जो पेट्रोलियम जलाया जाता है, वह भा इसी का एक भेद है।

मिट्टी का फूल—सञ्ज्ञा पु० [हि० मिट्टी + फूल] मिट्टी या जमीन के ऊपर जम आनेवाला एक प्रकार का छार जिसका व्यवहार कड़ा घोंने और शोशा बनाने में होता है। रेह।

मिट्टी खरिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिट्टी + खडिया] दे० 'खडिया'। मिट्टी—वि०, सञ्ज्ञा पु०। म० मिट्ट] दे० 'मीठा'। उ०—देसिल वगना सब जन मिट्टा। तर्तमन जपयो अवहृदा।—कौर्त्ति०, पृ० ६।

मिट्टी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मीठा] चुवन। चूमा। (इस शब्द का व्यवहार स्त्रियाँ प्रायः छोटे बालकों के साथ करती हैं)।

क्रि० प्र०—देना।—लेना।

मिट्टू—सञ्ज्ञा पु० [हि० मीठा + ऊ (प्रत्य०)] १ मधुरभाषी। मीठा बोलनेवाला। २ तोता।

मुहा०—अपने मुँह आप मियाँ मिट्टू बनना = अपनी प्रशंसा आप करना। अपने मुँह में अपनी बटाई करना।

मिट्टू—वि० १ चुप रहनेवाला। न बोलनेवाला। २ प्रिय बोलनेवाला। मधुरभाषी।

मिट्टू—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मिट्टी'।

मिट्टा—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मिट्टी'।

मिठ वि० [हि० मीठा] मीठा का सत्तत रूप जिसका व्यवहार प्रायः योग्य बनाने के लिये होता है और जो किसी शब्द के पहले जोड़ा जाता है। जैसे, मिठलोना, मिठबोला।

मिठबोलना—सञ्ज्ञा पु० [हि० मीठा + बोलना] दे० 'मिठबोला'।

मिठबोला—सञ्ज्ञा पु० [हि० मीठा + बोलना] १ वह जो मीठी मीठी बातें करता है। मधुरभाषी। उ०—रामेनी का घरवाला अच्छा पंडित था, नेवनीयत और मिठबोला।—नई०, पृ० २३ २ वह जो मन में कपट रखकर मीठी मीठी बातें करता हो।

मिठरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मिठी'।

मिठलोना—सञ्ज्ञा पु० [हि० मीठा (= कम) + लोन (= नोन)] वह जिसे बहुत ही कम नमक हो। थोड़े नमकवाला।

मिठहा—वि० [हि० मीठा + हा (प्रत्य०)] अधिक मीठा खानेवाला।

मिठाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मीठा + आई (प्रत्य०)] १. मीठा होने का

भात्र । मिठाम । माधुरी । ० कोई खाने की मीठी चीज ।
जैसे लड्डू, पे-र, बर्फी, जलेबी आदि ।

मुद्रा०—मिठाई चढना = मनोवाञ्छित कार्य पूरा होने पर पहले से
नकल्पित मिठाई किसी देवता को अर्पित करना । मिठाई
बॉटन = मनोवाञ्छित कार्य पूरा होने पर प्रमत्ततास्वरूप
मिठाई वाटना । अधिक मिठाई में कीड़े पडते हैं = आवश्यकता
से अधिक प्रेम होने पर उम प्रेम में वाचाएँ आती हैं । जो प्रेम
आवश्यकता से अधिक होता है, वही खराब होता है । गई नारि
जो खाई मिठाई = यदि स्त्री मिठबोली और उदार स्वभाव
की है, तो उसके मतीत्व खो बैठने या हानि उठाने की संभावना
रहती है । (लोकोक्ति) ।

३ दोठे अच्छा पदार्थ या बात ।

मिठाना—क्रि० अ० [हि० मीठा + आना (प्रत्य०)] मीठा होना ।
मधुर होना । उ०—मारचौ मनुहारिन भरी, गारचौ खरी
मिठाई । वाकौ अति अनखाहटौ, मुमकाहट विनु नाहि ।
—विहारी (शब्द०) ।

मिठाम—मज्ञा स्त्री० [हि० मीठा + आस (प्रत्य०)] मीठा होने का
भाव । मीठापन । माधुर्य । जैसे,—इसकी मिठाम तो बिलकुल
मिमरी के समान है ।

मिठौरी—मज्ञा स्त्री० [हि० मोठा + वरी] पीसे हुए उबड़ या चने
की बनी हुई बरी ।

मिडना०—क्रि० अ० [हि० मीडना] १ मला जाना । मसला
जाना । उ०—सुमन मेज तँ लगि रहे सुवरि तेरे गात ।
मुरभिन हू मिडि के भए मुटुननाल जलजात ।—शकुतला,
पृ० ४४ । २ चिपकना । लग जाना । उ०—वनआनंद एडिनि
आनि मिडे तरवानि तरे नैं भरे न उगै ।—घनानंद, पृ० १४ ।

मिडाई—मज्ञा स्त्री० [हि०] ३० 'मिठाई' ।

मिटिल^१—वि० [अ०] किसी पदार्थ का मध्य । बीच ।

मिडिल^२—मज्ञा पुं० शिक्षाक्रम में एक छोटी कक्षा या दरजा जो
स्कूल के अंतिम दर्जे इट्रेंस से छोटा होता था ।

विशेष—अप यह नाम प्रचलित नहीं है । मिडिल स्कूलों को अब
जूनियर हाई स्कूलों में बदल दिया गया है ।

मिडिलची—मज्ञा पुं० [हि० मिडिल + ची (प्रत्य०)] वह जो मिडिल
परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ हो । मिडिल पान (उपेक्षा०) ।

मिडिल स्कूल—मज्ञा पुं० [अ०] वह स्कूल या विद्यालय जिसमें
केवल मिडिल तक की पढ़ाई होती हो ।

मिहुलिया।—मज्ञा स्त्री० [हि० मडी] मडी । कुटी । मढिया ।

मिण०—मज्ञा स्त्री० [हि०] २० 'मणि' । उ०—मिण रासै मिण,
नामत्रम, रीकै मिधू राग ।—वांकी० २०, भा० १, पृ० ७ ।

यो०—मिणधारी = मणि को वारण करनेवाला । मुख्य । उ०—
मागणियो मुदर मिणधारी ।—रा० ६०, पृ० १४० ।
मिणियर = मनिवर । मणिपाला । प्रधान । मुख्य । उ०—
मिणियरु दल न्हे धर मगल—रा० ६०, पृ० ३१४ ।

मितग०—मज्ञा पुं० [सं० मितङ्गम] हाथी ।

मितगम^१—वि० धीरे धीरे चलनेवाला । मदगामी ।

मितगम^२—मज्ञा पुं० हाथी [को०] ।

मितपच—वि० [सं० मितम्पच] १ नया तुला पकानेवाला । थोड़ी
मात्रा में अन्न पकानेवाला । २ लघु या छोटे आकार का
(वतन) । ३ मितव्ययी । अल्प व्यय करनेवाला [को०] ।

मित^१—वि० [सं०] १ जो सीमा के अंदर हो । नपातुला । परिमित ।
२ थोड़ा । कम । जैसे,—मितव्ययी, मितभाषी । ३ फेंका
हुआ । क्षिप्त ।

मित०—मज्ञा स्त्री० परिमाण । सीमा ।

मितरु०—मज्ञा पुं० [सं० मिश्र] मीत : साजन । प्रियतम । उ०—
मिनरु मडैया मुनी करि गैलो ।—धरम० शा०, पृ० १२ ।

मितद्र—मज्ञा पुं० [सं०] समुद्र । सागर ।

मितत्री—मज्ञा स्त्री० [?] प्रागैतिहासिक आर्य जाति जो मध्य एशिया
में थी । उ०—हाल में ही पच्छिम एशिया के बोगजक्वाई
नामक स्थान पर मितत्री लेख मिले हैं जो ई० पू० १४०० के
हैं और जिनमें वैदिक देवताओं का उल्लेख है ।—हिंदु०
सम्यता, पृ० २७ ।

मितपन०—मज्ञा पुं० [हि० मीत + पन (प्रत्य०)] मित्रता । स्नेह ।
प्रेम । उ०—मोहन लाल कहत राधा मो मेरें तो तुम ही सो
मितपन ।—छीत०, पृ० ६२ ।

मितभाषिता—मज्ञा स्त्री० [सं०] सयमित होकर बोलना । समझ
बूझ के साथ थोड़ा बोलने की क्रिया । उ०—शिष्टता, नम्रता,
सरलता, मितभाषिता, अतिथिप्रियता आदि उसके गुणों की
ख्याति भारत में ही नहीं, प्रत्युत इंग्लिस्तान आदि सुदूरवर्ती
देशों तक फैली हुई है ।—राज० इति०, पृ० ११७० ।

मितभाषी०—मज्ञा पुं० [सं० मितभाषिन्] [स्त्री० मितभाषिणी]
१ वह जो बहुत कम बोलता हो । थोड़ा बोलनेवाला । २
समझ बूझकर बात कहनेवाला ।

मितभुक्त—वि० [सं०] २० 'मितभोजी' ।

मितभोजी—वि० [सं० मितभोजिन्] कम खानेवाला । अल्प आहार
करनेवाला [को०] ।

मितमति०—मज्ञा पुं० [सं०] वह जिसमें बहुत कम बुद्धि हो ।
थोड़ी बुद्धिवाला ।

मितराई०—मज्ञा स्त्री० [सं० मिश्र + हि० आई (प्रत्य०)] मित्रता ।
मिताई । उ०—झूठी बात करे लवराई । नामो हेतु कर्
मितराई । कबीर भा०, पृ० ५४३ ।

मितविक्रय—मज्ञा पुं० [सं०] कौटिलीय अर्थशास्त्र के अनुसार माप कर
पदार्थ बेचना ।

मितली—मज्ञा स्त्री० [हि०] ६० 'मिचला' । उ०—उमके मन में
मितली भी होने लगी ।—सुनीता, पृ० ६३ ।

मितव्यय—मज्ञा पुं० [सं०] कम खर्च करना । किराया ।

मितव्ययिता—सज्ञा स्त्री० [सं०] कम खर्च करने का भाव । उ०—
रूप चयन, अवयव मयोजन, शक्ति व्यजना इगित, सूक्ष्म
मितव्ययिता करते अद्भुत प्रभाव सवर्धन ।—अतिमा,
पृ० १०३ ।

मितव्ययी—सज्ञा पुं० [सं० मितव्ययिन्] वह जो कम खर्च करता
हो । कफायत करनेवाला ।

मिताइयाँ—सज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मिताई' । उ०—पाहन हूँ हूँ
सब गए, विनि भितियन के चित्र । जासो कियो मिताइया,
सो घन भया न हिय ।—कवीर वी० (शिशु०), पृ० २१५ ।

मिताई^(१)—सज्ञा स्त्री० [सं० मित्र, हिं० मीत + आई (प्रत्य०)]
मित्रता । दोस्ती । उ०—मन मतग मारि दे तै, तोरि दे
मिताई । - जग० श०, पृ० १२२ ।

मिताक्षरा—सज्ञा स्त्री० [सं०] याज्ञवल्क्य स्मृति की विज्ञानेश्वर
कृत टीका ।

मितार्थ^१—सज्ञा पुं० [सं०] साहित्य मे तीन प्रकार के दूतों मे से एक
प्रकार का दूत । वह दूत जो बुद्धिमत्तापूर्वक थोड़ी बातें कहकर
अपना काम पूरा करे ।

मितार्थ^२—वि० नपे तुले अर्थवाला । परिमित अर्थवाला [को०] ।

मितार्थक—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मितार्थ' [को०] ।

मिताशन—सज्ञा पुं० [सं०] कम भोजन करना । थोड़ा खाना ।

मिताशी—सज्ञा पुं० [सं० मिताशिन्] [स्त्री० मिताशिनी] वह जो
बहुत थोड़ा खाता हो । कम भोजन करनेवाला ।

मिताहार—वि० [सं०] परिमित आहार करनेवाला । कम खाने-
वाला । मितभोजी ।

मिताहार^२—सज्ञा पुं० स्वल्पाहार । कम खाना । अल्पाहार [को०] ।

मिताहारी—वि० [सं० मिताहार + ई (प्रत्य०)] दे० 'मिताहार' ।
उ०—हम ऐसे फलाहारी और मिताहारी नहीं है ।—सुनीता,
पृ० ८६ ।

मिति—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मान । परिमाण । उ०—गारुडिय
ग्रहो अमृत मितिय विपम विष्प मल उत्तरै ।—पृ० रा०, ६१ ।
१५५८ । २ सीमा । हृद । मान मानति । उ०—रामकथा के
मिति जग नाही । असि प्रतीति तिन्हके मन माही ।—मानस,
१।३३ । ३ काल की अवधि । दिया हुआ वक्त ।

मुहा०—मिति पूजना = आयु के दिन पूरा होना । दे० 'मिती' ।

मिती—सज्ञा स्त्री० [सं० मिति] १ देशी महीने की तिथि या
तारीख । जैसे,—मिती आषाढ सुदी ४ म० १६८१ की चिट्ठी
मिती ।

मुहा०—मिती चढ़ाना = तिथि लिखना । तिथि डालना । मिती
उगना या पूजना = हुडी का नियत समय पूरा होना । हुडी के
भुगतान का दिन आना । जैसे,—इम हुडी की मिती पूजे दो
दिन हो गए, पर रुपया नहीं आया ।

२ दिन । दिवस । जैसे — उसके यहाँ अभी तीन मिती का व्याज

और बाकी है । ३ वह तिथि जब तक का व्याज देना हो ।
जैसे,—इस हुडी की मिती मे अभी चार दिन बाकी है ।
(महाजन) ।

मुहा०—मिती काटना = सुद काटना ।

मितीकाटा—सज्ञा पुं० [हिं० मिती + काटना] १ वह हिसाब जिसके
अनुसार मर्राफ लोग हुडी की मुद्दत तथा व्याज लेते है । २
सूद लगाने का वह ढग जिममे प्रत्येक रकम का सूद उसकी
अलग अलग मिती से जोड़ा जाता है ।

मित्त^(१)—सज्ञा पुं० [सं० मित्र, प्रा० मित्त] दे० 'मित्र' । उ०—पत्र
परन औ पत्र सर, बाहन पत्र सुचित्त । पत्र पख विधि ना
दिए, जिन उडि मिलते मित्त ।—नद० श०, पृ० ५० ।

मित्तराँ—सज्ञा पुं० [सं० मित्र] १ वह लडका जो किसी खेल मे
और सब लडकों का प्रधान या अगुआ होता है । २ मित्र ।
दोस्त ।

मिती^(१)—सज्ञा स्त्री० [सं० मिति] मान । मिति । उ०—कलिकाल
कित्ति मित्तिय इतिय ।—पृ० रा०, १२।६ ।

मित्र—सज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो सब बातों मे अपना साथी,
सहायक, समर्थक और शुभचिंतक हो । सब प्रकार मे अपने
अनुरूप रहनेवाला और अपना हित चाहनेवाला । शत्रु या
विरोधी का उलटा । बधु । सखा । सुहृद । दोस्त । २ अति-
विषा नाम की लता । अतीस । ३ सूर्य का एक नाम । उ०—
अघकार मे मलिन मित्र की धुँवली आभा लीन हुई ।—
कामायनी, पृ० १४ । ४ वारह आदित्यों मे से पहले आदित्य
का नाम । ५ पुराणानुसार मरुद्गण में से पहले मरुद् का
नाम । ६ वशिष्ठ के एक पुत्र का नाम जो ऊर्जा के गर्भ से
उत्पन्न हुआ था । ७ आर्यों के एक प्राचीन देवता का नाम ।

विशेष—ऋक्महिता में लिखा है कि ननु से अदिति को जो आठ
पुत्र हुए थे, उनमें से सात को अपने साथ लेकर आदिति देवलोक
को चली गई थी, केवल मार्तंड नामक पुत्र को फँक दिया था ।
ये आठ पुत्र मित्र, वरुण, घाता, अर्थमा, अश, भग, विवस्वान्
और आदित्य या मार्तंड थे । इनमें से पहले मातो को गिनती
आदित्यो में होती है परतु महाभारत और पुराणों मे द्वादश
आदित्य का वर्णन है, जिनमे से एक मित्र भी हैं, वेदों में मित्र
ही सर्वप्रधान आदित्य माने गए हैं, परतु पुराणों आदि मे
उनका स्थान गौण है । वेदों मे मित्र और वरुण की बहुत
अधिक स्तुति की गई है, जिमसे जान पड़ता है कि ये दोनों
वेदिक ऋषियों के प्रधान देवता थे । वेदों मे यह भी लिखा है
कि मित्र के द्वारा दिन और वरुण के द्वारा रात होती है ।
यद्यपि पीछे से मित्र का महत्व घटने लगा था, तथापि पहले
किसी समय सभी आर्य मित्र की पूजा करते थे । पारसियों मे
इनकी पूजा 'मित्र' के नाम से होती थी । मित्र की पत्नी 'मित्रा'
भी उनकी पूजनीय थी और अग्नि की अधिष्ठात्री देवी माना
जाती थी । कदाचित् असीरियावानों की 'माह्लेना' तथा

अरववालो की 'आलिता देवी' भी यही मित्रा थी ।

८ भारतवर्ष में एक प्रसिद्ध प्राचीन राजवंश का नाम जिसका राज्य उदुवर और पांचाल आदि स्थानों में था ।

विशेष—कुछ लोग इसे शुंग वंश की एक शाखा बतलाते हैं, तथा कुछ लोग इस वंशवालों को शाकद्वीपी ब्राह्मण और कुछ शक क्षत्रिय मानते हैं । इसी पहली और दूसरी शताब्दी में इसका बहुत जोर था । भानुमित्र, सूर्यमित्र अग्निमित्र, जयमित्र, इन्द्रमित्र, आदि इस वंश के प्रधान राजा थे । इनके जो सिक्के पाए गए हैं उनमें से कुछ में शंखों के, कुछ में बैलगावों के और कुछ में सौरो के चिह्न पाए जाते हैं ।

मित्रकर्म—सज्ञा पुं० [सं० मित्रकर्मन्] मित्रोचित काम । मित्र के योग्य कार्य [को०] ।

मित्रकृत्—सज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार वारहवें मनु के एक पुत्र का नाम ।

मित्रकृत्य—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मित्रकर्म' ।

मित्रधन—सज्ञा पुं० [सं०] वह जो मित्र की हत्या करनेवाला हो । २. विश्वासघातक । ३. एक राजस का नाम ।

मित्रधना—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक नदी का नाम ।

मित्रज्ञ—सज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो मित्र को जानता हो । अपने दोस्त मित्र को जानने पहचानने और उचित समादर करनेवाला व्यक्ति । २. एक राजस का नाम जो यज्ञ की सामग्री आदि छीन ले जाया करता था ।

मित्रता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. मित्र होने का धर्म या भाव । २. मित्र का धर्म ।

मित्रत्व—सज्ञा पुं० [सं०] १. मित्र होने का धर्म या भाव । २. दोस्ती । मित्रता ।

मित्रदेव—सज्ञा पुं० [सं०] १. वारहवें मनु के एक पुत्र का नाम । २. महाभारत के अनुसार एक राजा का नाम । ३. मित्र नाम के आदित्य । विशेष दे० 'मित्र' ।

मित्रद्रोह—सज्ञा पुं० [सं०] मित्र का अनिष्ट करना ।

मित्रद्रोही—वि० [सं० मित्रद्रोहिन्] मित्र का द्रोह करनेवाला । मित्र को बोखा देनेवाला । मित्र का अहित करनेवाला ।

मित्रपञ्चक—सज्ञा पुं० [सं० मित्रपञ्चक] वैद्यक के अनुसार धौ, शहद, गुजा, सुहागा और गुग्गुल इन पाँचों का समूह ।

मित्रपद—सज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

मित्रप्रकृति—सज्ञा पुं० [सं०] विजेता के चारों ओर रहनेवाले मित्र-राष्ट्र या राजा ।

मित्रप्रवर—सज्ञा पुं० [सं० मित्र+प्रवर] मित्रों में श्रेष्ठ मित्र । आदरणीय मित्र । सं०—विश्राम के लिये मित्र प्रवर, बैठे थे ज्यो, बैठे पथ पर ।—तुलसी०, पृ० २४ ।

मित्रवाहु—सज्ञा पुं० [सं०] १. वारहवें मनु के एक पुत्र का नाम । २. श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम ।

मित्रभ—सज्ञा पुं० [सं०] अनुराधा नक्षत्र का नाम [को०] ।

मित्रभानु—सज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक राजकुमार का नाम ।

मित्रभाव—सज्ञा पुं० [सं०] मित्रता । दोस्ती [को०] ।

मित्रभेद—सज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो दो मित्रों में लड़ाई कराता हो । मित्रों में भगटा फगनगाना । २. मित्रता में पाया पैदा होना । मित्रता भग होना । ३. यंत्र तंत्र का एक तंत्र ।

मित्रयु—सज्ञा पुं० [सं०] १. मित्र । दोस्त । २. वह व्यक्ति जो लोगों को अपना मित्र बना ले [को०] ।

मित्रयुद्ध—सज्ञा पुं० [सं०] मित्रों में भगडा हो जाना [को०] ।

मित्रलाभ—सज्ञा पुं० [सं०] १. मित्रों को प्राप्त करना । मित्रप्राप्ति । २. हिनोपदेश के पहले श्रवण का नाम ।

मित्रवती—सज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार श्रीकृष्ण की एक कन्या का नाम ।

मित्रवत्सल—वि० [सं०] मित्रों के प्रति उदार । अपने मित्रों को चाहनेवाला [को०] ।

मित्रवन—सज्ञा पुं० [सं०] पञ्जाब के मुन्तान नामक नगर का एक प्राचीन नाम ।

मित्रवर्द्धन—सज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक राजा का नाम ।

मित्रवान्—वि० [सं० मित्रवत्] [वि० स्त्री० मित्रवती] जिसे मित्र हो । मित्रोवाला ।

मित्रवान्—सज्ञा पुं० १. एक अनुर का नाम । २. वारहवें मनु के एक पुत्र का नाम । ३. पुराणानुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम ।

मित्रवाह—सज्ञा पुं० [सं०] वारहवें मनु के एक पुत्र का नाम ।

मित्रविन्द—सज्ञा पुं० [सं० मित्रविन्द] १. अग्नि । २. वारहवें मनु के एक पुत्र का नाम । ३. पुराणानुसार श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम ।

मित्रविदा—सज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार श्रीकृष्ण की एक पत्नी का नाम ।

मित्रविक्षिप्त—वि० [सं०] मित्र के देश में पड़ी हुई (मना) ।

मित्रविद्—सज्ञा पुं० [सं०] गुप्तचर । जासूस ।

मित्रविपय—सज्ञा पुं० [सं०] दोस्ती । मित्रता [को०] ।

मित्रवैर—सज्ञा पुं० [सं०] वह जो मित्र से वैर या द्वेष करता हो ।

मित्रसप्तमी—सज्ञा स्त्री० [सं०] मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी ।

विशेष—कहते हैं, इसी दिन कश्यप के वीर्य में अदिति के गर्भ से मित्र नामक दिवाकर की उत्पत्ति हुई थी, इसी से इसका यह नाम पडा ।

मित्रसह—सज्ञा पुं० [सं०] कल्माषपाद राजा का एक नाम ।

मित्रसाहसा—सज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत के अनुसार स्वर्ण में रहनेवाली एक देवी का नाम ।

मित्रसेन—सज्ञा पुं० [सं०] १. वारहवें मनु के एक पुत्र का नाम । २. श्रीकृष्ण के एक पुत्र का नाम । ३. एक बुद्ध का नाम ।

मित्रा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मित्र नामक देवता की स्त्री का नाम । विशेष दे० 'मित्र-७' । २ शत्रुघ्न की माता । सुमित्रा । ३, महाभारत के अनुसार एक अक्षरा का नाम । ४, पराशर के शिष्य मैत्रेयी की माता का नाम ।

मित्राई^७—सज्ञा स्त्री० [सं० मित्र + हि० आई (प्रत्य०)] मित्रता । दोस्ती ।

मित्राक्षर—सज्ञा पुं० [सं०] छद के रूप में बना हुआ तुकात पद । अमित्राक्षर का उलटा ।

मित्रायु—सज्ञा पुं० [सं०] राजा दिवोदास के एक पुत्र का नाम ।

मित्रावरुण—सज्ञा पुं० [सं०] मित्र और वरुण नामक देवता ।

मित्रावसु—सज्ञा पुं० [सं०] विश्वावसु के एक पुत्र का नाम ।

मित्रो^१—सज्ञा स्त्री० [म०] दशरथ की पत्नी सुमित्रा जो लक्ष्मण और शत्रुघ्न की माता थीं । सुमित्रा ।

मित्रो^२—सज्ञा पुं० [सं० मित्र] दे० 'मित्र' । उ०—मात पिता बधू तिय पुत्र सुवेष ।—नट०, पृ० ११७ ।

मित्रेयु—सज्ञा पुं० [सं०] राजा दिवोदास के पुत्र का नाम ।

मिथ—अव्य० [सं० मिथस्] परस्पर । आपस में । अन्योन्य [को०] ।

मिथ—सज्ञा पुं० [अ०] पुराणकथा । पुरावृत्त । पौराणिक आख्यान ।

मिथन^७—सज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मिथुन'—२ । उ०—गृह कुटब महि पलचिन्ना मोह मिथन दुर्गघ ।—प्राण०, पृ० २४३ ।

मिथनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] मेथी ।

मिथा^७—वि० [सं० मिथ्या] दे० 'मिथ्या' । उ०—मिथा ब्रूज कर चुप यह झूठा जमाना । अरे मन नको रे नको हा दिवाना ।—दक्खिनी०, पृ० २५४ ।

मिथि—सज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार राजा निमि के पुत्र जनक का एक नाम ।

विशेष—कहते हैं, राजा निमि को कोई पुत्र नहीं था । मुनियों को यह भय हुआ कि निमि के मरने के उपरांत कहीं अराजकता न उत्पन्न हो, इसलिये उन लोगों ने निमि के शरीर को अरणी से मथा जिससे जनक की उत्पत्ति हुई । ये मथन से उत्पन्न हुए ये, इसलिये इनका एक नाम मिथि भी था । इन्हें उदावसु नामक एक पुत्र हुआ था ।

मिथिनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] मेथी ।

मिथिल—सज्ञा पुं० [सं०] राजा जनक का एक नाम ।

मिथिला—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ वर्तमान तिरहुत का प्राचीन नाम । राजा जनक इसी प्रदेश के राजा थे । उ०—मिथिला नगरी रहत हैं, रच्यो स्वयवर राय ।—कबीर सा०, पृ० ३६ । २. इस प्रात की प्राचीन राजधानी ।

यौ०—मिथिलापति = राजा जनक ।

मिथु^१—सज्ञा पुं० [सं०] असत्य । मिथ्या । झूठ ।

मिथु^२—अव्य० १. झूठमूठ । २ यथाक्रम । ३ साथ साथ [को०] ।

मिथुन—सज्ञा पुं० [सं०] १. स्त्री और पुरुष का युग्म । मर्द और

श्रीरत का जोड़ा । २ संयोग । समागम । ३. मेष आदि राशियों में से तीसरी राशि ।

विशेष—इस राशि में मृगशिरा नक्षत्र के अंतिम दो पाद, पूरा आर्द्रा और पुनर्वसु के आरंभिक तीन पाद हैं । इसके अविष्टता देवता गदाधारी पुरुष और वीणाधारिणी स्त्री मानी गई है । इसका दूसरा नाम जितुम है ।

४ ज्योतिष में मेष आदि लग्नों में से तीसरा लग्न ।

विशेष—कहते हैं, इस लग्न में जन्म लेनेवाला प्रियभाषी, द्विमात्रिक, शत्रुओं का नाश करनेवाला, गुणी, धार्मिक, कार्यकुशल और प्रायः रोगी रहनेवाला होता है, और उसकी मृत्यु मनुष्य, साँप, जहर या पानी आदि के द्वारा होती है ।

यौ०—मिथुनभाव = (१) जोड़ा बनाना । जोड़ा बनाने का भाव । (२) मैथुन । मिथुनयमक = यमक अलंकार का एक भेद । मिथुनविवाह = प्रचलित विवाह प्रथा । वह विवाह प्रथा जो आजकल चल रही है । मिथुनव्रती = सयोगरत । सयोगस्थ ।

मिथुनत्व—सज्ञा पुं० [सं०] मिथुन का भाव या धर्म ।

मिथुनी—सज्ञा पुं० [सं० मिथुनिन्] खजन पत्नी [को०] ।

मिथुनीकरण—सज्ञा पुं० [सं०] जोड़ा बनाना । नर मादा को परस्पर मिलाना [को०] ।

मिथुनीभाव—सज्ञा पुं० [सं०] सभोग । मैथुन [को०] ।

मिथुनेचर—सज्ञा पुं० [सं०] चक्रवाक [को०] ।

मिथ्या—वि० [सं०] १. असत्य । झूठ । २. बेकार । व्यर्थ ।

यौ०—मिथ्याकोप = बनावटी क्रोध । मिथ्याग्रह = निरर्थक हठ । दुराग्रह । मिथ्याचर्या । मिथ्याजिपित = झूठा कथन । असत्य भाषण । मिथ्याज्ञान = भूल । गलती । भ्रम । मिथ्यादृष्टि । मिथ्यापडेत् । मिथ्याभाषी = असत्यवक्ता । झूठ बोलनेवाला । मिथ्यावचन = असत्य कथन । झूठी बात । मिथ्यावाद । मिथ्यासाक्षी ।

मिथ्याचर्या—सज्ञा स्त्री० [सं०] झूठा या कपटपूर्ण व्यवहार ।

मिथ्याचार—सज्ञा पुं० [सं०] १ कपटपूर्ण आचरण । २ वह जो कपटपूर्ण आचरण करता हो ।

मिथ्यात^७—सज्ञा पुं० [सं० मिथ्यात्व] झूठापन । असत्यता । उ०—मिथ्यात ममता कुमति कुदया चारि डींही आहि ।—सुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ६१६ ।

मिथ्यात्व—सज्ञा पुं० [सं०] १ मिथ्या होने का भाव । २. माया । ३ जैनों के अनुसार अठारह दोषों में से एक ।

मिथ्यादृष्टि—सज्ञा स्त्री० [सं०] नास्तिकता ।

मिथ्याध्यवसिति—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक अर्थालंकार जिसमें कोई एक असंभव या मिथ्या बात निश्चित करके तब कोई दूसरी बात कही जाती है, और इस प्रकार वह दूसरी बात भी मिथ्या ही होती है । जैसे,—जो आँजै नभ कुसुम रस, लखै सो अहि के कान ।

मिथ्यानिरसन - सज्ञा पु० [म०] शपथपूर्वक किसी मन्ची बात का अस्वीकार करना ।

मिथ्यापद्धित - सज्ञा पु० [म० मिथ्यापद्धित] वह जो कुछ न जानता हो और झूठमूठ पद्धित बनता हो ।

मिथ्यापन - सज्ञा पु० [स० मिथ्या + हि० पन (प्रत्य०)] असत्यता । मिथ्यात्व । उ०—मिथ्या ही वतला देती, मिथ्या का रे मिथ्यापन ।—गुजन, पृ० १६ ।

मिथ्यापर - वि० [स० मिथ्या + पर (प्रत्य०)] मिथ्यापरायण । असत्य का अनुयायी । उ०—मधु मुख, गरलहृदय, निजतारत मिथ्यापर देगा समार जगह तुम्हें तब ।—अनामिका, पृ० १६६ ।

मिथ्यापवाद - सज्ञा पु० [सं०] झूठा अभियोग । झूठा दोष । कलक ।

मिथ्यापुरुष - सज्ञा पु० [सं०] दे० 'छायापुरुष' ।

मिथ्याप्रतिज्ञ - वि० [सं०] झूठी प्रतिज्ञा करनेवाला । वचन का पालन न करनेवाला (को०) ।

मिथ्याभियोग - सज्ञा पु० [सं०] किसी पर झूठमूठ अभियोग लगाना । अभ्याख्यान ।

मिथ्याभिशासन - सज्ञा पु० [म०] किसी पर झूठमूठ कलक लगाना ।

मिथ्यामति - सज्ञा स्त्री० [सं०] १ भ्राति । घोखा २ भूल । गलती ।

मिथ्यायोग - सज्ञा पुं० [सं०] चरक के अनुसार वह कार्य जो रूप, रस या प्रकृति आदि के विरुद्ध हो । जैसे, मल मूत्र आदि का वेग रोकना शरीर का मिथ्यायोग है, कठोर वचन आदि कहना वाणी का मिथ्यायोग है, तीव्र गंध आदि का सूँघना और भीषण शब्द आदि सुनना घ्राण और श्रवण का मिथ्यायोग है । उ०—पुरुष का इष्ट नाशादि सुनना मिथ्यायोग है ।—माधव०, पृ० १२६ ।

मिथ्यावाद - सज्ञा पुं० [न०] मिथ्या वचन । झूठी बात । झूठ (को०) ।

मिथ्यावादी - सज्ञा पुं० [सं० मिथ्यावादिन्] [वि० स्त्री० मिथ्यावादिनी] वह जो झूठ बोलता हो । असत्यवादी । झूठा ।

मिथ्याविहार - सज्ञा पुं० [म०] देह पुरुषार्थ से विशेष कामना करना । शरीर की शक्ति से अधिक कार्य करना ।

मिथ्याव्यय - सज्ञा पुं० [सं० मिथ्या + व्यय] अपव्यय । दिखावे के लिये या अनुचित ढंग में खर्च करना । उ०—वारात बुलाकर मिथ्याव्यय में कई, नहीं ऐमा मुसमय ।—अनामिका, पृ० १३१ ।

मिथ्याव्यवहार - सज्ञा पुं० [सं०] किसी विषय को न जानते हुए भी उसमें दखल देना । अनधिकार चर्चा ।

मिथ्यासाक्षी - सज्ञा पुं० [सं० मिथ्यासाक्षिन्] वह जो झूठी गवाही देता हो । झूठा गवाह ।

मिथ्याहार - सज्ञा पुं० [सं०] अनुचित या प्रवृत्ति के विरुद्ध भोजन करना । जैसे, मछली के साथ दूब ।

मिथ्योत्तर - सज्ञा पुं० [सं०] याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार व्यवहार

में चार प्रकार के उत्तरो में से एक प्रकार का उत्तर । अभियुक्त का अपना अपराध छिपाने के लिये झूठ बोलना ।

मिथ्योपचार - सज्ञा पुं० [सं०] १ झूठी दवा या सेवा । २ दिखावे की प्रणसा । खुशामद । ३ अमत्स्य चिकित्सा । झूठा इलाज (को०) ।

मिथि (पु) - अव्य० [सं० मध्य] दे० 'मव्य' । उ०—वम गुन ही गुन निरखत तिहि मिथि सर्गल प्रकृति कौ प्रेरी ।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० ८६३ ।

मिन (पु) - सज्ञा पुं० [सं० मीन] मछली । मीन । उ०—मलेछ मोई मिन माम जो खारै । मलेछ माई जेहि ज्ञान न भावै ।—सत० दरिया, पृ० ६ ।

मिनकना - क्रि० अ० [अनु०] १. धीरे में बोलना । कुछ कहना । २ हूँ हों करना । मुगबुगाना । उ०—दरजी खरटिं ले रहा था मिनका तक नहीं ।—फिसाना०, भा० ३, पृ० ८८ । ३ मय के साथ बोलना ।

मिनकारा - सज्ञा पुं० [अनु० ?] जिसस मिन मिन किया जाय अर्थात् मुख या चाँच । उ०—अधिक तेज काँटे ते की सख्त बोल । लग्या बोलन ताई मिनकार खोल ।—दक्खिनी०, पृ० ६० ।

मिनकी (पु) - सज्ञा स्त्री० [दश०] बिल्ली । उ०—मूमा इत उत फिर ताकि रही मिनकी ।—सुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ३६८ ।

मिनखा (पु) - सज्ञा पुं० [सं० मनुष्य] दे० 'मानुष' । उ०—यो मिनखा तन पाइक भज्यो नहीं भगवान । जन हरिया तव मानखो मिनै नहीं आसान — राम० वर्ण०, पृ० ६६ ।

मिनखी (पु) - सज्ञा स्त्री० [दश०] बिल्ली । मिनकी । उ०—मावडियो वन माँझली सो नहीं जाय सिकार । डोला मिनखी सूँ डरै मूसा ज्यो मुरदार ।—वाँकी० ग्र०, भा० २, पृ० १६ ।

मिनट - सज्ञा पुं० [अ०] एक घटे का साठवाँ भाग । साठ सेकेंड का समय ।

मुहा० - मिनटों में = बात की बात में । जैसे—वह यह काम मिनटों में कर डालेगा । मिनट भर = अत्यल्प समय । बहुत थोड़ा समय । जैसे,—व मिनट भर पहले गए हैं ।

मिनती^१ - सज्ञा स्त्री० [सं० चिनति] प्रार्थना । विनती ।

मिनती^२ - सज्ञा पुं० [अनु० मक्खी के शब्द से] मक्खी की बोली के समान, धीमा, कुछ नाक से निकला स्वर ।

मिनमिन^१ - क्रि० वि० [सं०] मक्खी की मनमनाहट के रूप में । धीमे दवे हुए स्वर में । कुछ नाक से निकले धीमे स्वर में । जैसे,—वह मिनमिन बोलता है, इसी से उसे सीधा समझने हो ।

मिनमिन^२ - वि० नकियाकर बोलनेवाला । मिनमिन बोलनेवाला ।

मिनमिन - सज्ञा स्त्री० मिनमिन की आवाज । अस्पष्ट ध्वनि ।

मिनमिना - वि० [हि० मिनमिन] १. मिनमिन शब्द करनेवाला । नाक से स्वर निकालकर धीमे बोलनेवाला । २ थोड़ी सी बात पर कुढ़नेवाला । ३ सुस्त । मट्टर ।

मिनमिनाना - क्रि० अ० [हि० मिनमिन] १ मिन मिन शब्द करना । नाक से बोलना । नकियाना । २ कोई काम बहुत धीरे धीरे करना । बहुत सुस्ती से काम करना ।

मिनमिनाहट—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] मिनमिन् की ध्वनि या आवाज ।
मिनवाल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] करवे में का वह वेलन जिसपर बुना हुआ कपड़ा लपेटा जाता है और जो बुननेवाजे के ठीक आगे रहता है ।

मिनहा—वि० [अ०] जो काट या घटा लिया गया हो । मुजरा किया हुआ । जैसे, अभी इसमें दो तीन रकमें मिनहा होने को हैं ।

मिनहाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिनहा] कटौती ।

मिनाक^(७)—सञ्ज्ञा पुं० [स० मैनाक] दे० 'मैनाक' । उ०—पूजा पाइ मिनाक पहिं, मुरसा कपि मवादु । मारग अगम सहाय सुभ, होइहि राम प्रसादु ।—तुलसी ग्र०, पृ० ८६ ।

मिनारां—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मिनार] दे० 'मिनार' ।

मिनित—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'मिनट' ।

मिनितवुक—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] वह वही या किताब जिसमें किसी सभा, समिति के अधिवेशनों में सपन्न हुए कार्यों का विस्तृत विवरण लिखा जाता है ।

मिनिस्टर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ मंत्री । सचिव । दीवान । वजीर । २ राजदूत । एलची । ३ धर्मोपदेष्टा । धर्माचार्य । पादरी । (ईमाई) ।

मिनिस्ट्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १. मन्त्रिमंडल । शासन । हुकूमत । ३. मन्त्रित्व । मन्त्रिपद । उ०—आज काउमिल की मिनिस्ट्री पाकर भी शायद उतना आनंद न होता ।—मान०, भा० ५, पृ० ११० ।

मिन्—प्रत्य० [अ०] से ।

मिन्जानिव—क्रि० वि० [अ०] ओर से । तरफ से । (कचहरी०) ।

मिन्जुमला—क्रि० वि० [अ०] सब में से । कुल में से ।

मिन्नत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०, मि० स० विनति, हिं० मिनती] १. प्रार्थना । निवेदन । २. दीनता । दैन्य ।

यौ०—मिन्नत खुशामद = दीनतापूर्वक की हुई प्रार्थना । मिन्नत समाजत = विनय । प्रार्थना । उ०—यो तो मैं विनय की मिन्नत समाजत करूँ, तो वह रियासत से चले जाने पर राजी हो जायेंगे ।—रगभूमि, भा० २, पृ० ४७८ ।

३. एहसान । कृतज्ञता । (क्व०) ।

क्रि० प्र०—उठाना ।—करना ।

मिन्मिन, मिन्मिल^१—वि० [स०] नाक के स्वर में बोलनेवाला । नकियाकर बोलनेवाला ।

मिन्मिन, मिन्मिल^२—सञ्ज्ञा पुं० नकियाकर बोलना जो एक रोग है [को०] ।

मिमत्—सञ्ज्ञा पुं० [स०] एक प्राचीन ऋषि का नाम ।

मिमासा^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मीमासा] दे० 'मीमासा' । उ०—करम ईसर मिमासा में वरन ब्राह्मण सुनाते हैं ।—तुरसी० श०, पृ० ३४ ।

मिमियाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मिमियाना + ई (प्रत्य०)] बकरी ।

मिमियाना—क्रि० अ० [मिन् मिन् से अनु०] बकरी या भेंड का 'मि मि' शब्द करना । भेंड या बकरी का बोलना ।

मियाँ—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ स्वामी । मालिक । २ पति । खसम । जैसे,—मियाँ के मियाँ गए, बुरे बुरे सपने आए ।

यौ०—मियाँ बीवी ।

३ बडों के लिये एक प्रकार का सवोधन । महाशय । (मुसल०) । ४. बच्चों के लिये एक प्रकार का सवोधन । ५. शिक्षक । उस्ताद ।

यौ०—मियाँगरी, मियाँगीरी = शिक्षक का कार्य । अध्यापन । मियाँ जी = शिक्षक ।

६ पहाड़ी राजपूतों की एक उपाधि । जैसे, मिया रामसिंह । ७ मुसलमान । जैसे,—वे सब मियाँ ठहरे, एक ही में खा पका लेंगे । ८ चर । कासिद । दूत (को०) । ९ कुटना । चुगलखोर (को०) । †१०. गायक । पक्की चोंजें गानेवाला । उस्ताद ।

मियाँ ठाकुरां—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मियाँ + हिं० ठाकुर] एक जाति जो अपने को न हिंदू मानती है और न मुसलमान, वरन् उभय मानती है । उ०—ये 'मियाँ ठाकुर' कहलाना पसंद करते हैं । ये मानते हैं कि ये न तो हिंदू हैं और न मुसलमान, बल्कि उभय हैं ।—पत० दरिया पृ० ११ ।

मियाँ मिट्टू—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मियाँ मिट्टू] १ मीठी बोली बोलनेवाला । मधुभाषी ।

मुहा०—अपने मुँह मियाँ मिट्टू बनना = अपने मुँह से अपनी प्रशंसा करना । बिना कुछ समझाए याद कराना । २ तोता ।

मुहा०—मियाँ मिट्टू बनाना = तोते की तरह रटाना । बिना समझाए पढ़ाना ।

३ मूर्ख । बेवकूफ ।

मुहा०—मियाँ की जूती मियाँ का सिर = जिसकी चीज हो, उसका उसी के विरुद्ध व्यवहार करना । बेवकूफ बनाना ।

मियान^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० म्यान] दे० 'म्यान' ।

मियान^२—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] मध्य भाग । बीच का हिस्सा ।

यौ०—दरमियान = मध्य में । बीच में ।

मियानतह—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मियान (= मध्य) + हिं० तह] वह साधारण कपड़ा जो किसी अच्छे कपड़े के नीचे उसकी रक्षा आदि के लिये दिया जाता है । जैसे, रजाई की मियानतह ।

मियानतही—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मियातिही] १ वह विस्तर जिसके दोनों पल्लों के बीच रुई न हो । २ दे० 'मियानतह' ।

मियानवाला—वि० [फा०] मामान्य कद का । साधारण आकार का । न ठिगना, न लवा [को०] ।

मियाना^१—वि० [फा० मियानह] न बहुत बड़ा और न बहुत छोटा । मध्यम आकार का ।

मियाना^२—सञ्ज्ञा पुं० १ वे खेत जो किसी गाँव के बीच में हों । २. एक प्रकार की पालकी । ३. गाड़ी में आगे की ओर बीच में

लगा हुआ वह वाम जिसके दोनों शोर घोड़े जोते जाते हैं ।
बम । बल्ली । ४ वह घोडा जो मभोले कद का हो (को०) ।
५ वह बडा मोती जो हार को लडी के बीच मे हो (को०) ।

यौ०—मिथाना कद = मभोले आकार का । न लवा न ठिगना ।
मिथाना रवी = मध्यम मार्ग । सरलाचार । मिथाना रौ =
मध्यममार्ग । सरलाचारी ।

मिथानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मिथान + ई (प्रत्य०)] पायजामे मे वह
कपडा जो दोनों पार्श्वो के बीच मे पडता है

विशेष—इसे कही कही रुमाल भी कहते हैं ।

मिथारी—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० भँकार ?] वह लकडी जो कूएँ के ऊपर
दो खभो पर लगी होती है और जिममें गराडी पड़ी रहती है ।

मिथाला—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० भँकार ?] दे० 'मिथार' ।

मिथेध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १, पशु । २ यज्ञ ।

मिरगा—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] प्रवाल । मूंगा ।

मिरकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] चौपायो को होनेवाली मुँह की एक
बीमारी । (श्रवध) ।

मिरखभ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'मिरखम' ।

मिरखम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेरुस्तम्भ, प्रा० मेरखम] कोल्हू मे वह
लकडी जो बैठकर हाँकने की जगह खडे बल में लगी रहती है ।

मिरग^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृग] मृग । हरिन ।

मिरगचिडा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मिरग + चिडा] एक प्रकार का छोटा
पक्षी ।

मिरगछाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृग + हिं० छाल] दे० 'मृगछाला' ।

मिरगनी^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मिरग] दे० 'मृगी' । उ०—पाँच मिरग
पच्चीस मिरगनी तिन मे तीन चितारे ।—कवीर श०, भा० २,
पृ० ३५ ।

मिरगमद^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगमद] दे० 'मृगमद' । उ०—गौलोचन
गोसीम मिरगमद नाभि तें जानौं । भिन्न भिन्न गुण होय नीर
एक हि पहिचानौ ।—पलटू०, पृ० ६६ ।

मिरगला^७—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मिरग + ला (प्रत्य०)] दे० 'मृग' ।
उ०—यहू वन हरिया देखि करि, फूल्यो फिरँ गंवार । दाहू
यहू मम (?) मिरगला, काल अहेही लार ।—सतवाणी०,
पृ० ८० ।

मिरगा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मृगा] दे० 'मृग' । उ०—जैसे मिरगा शब्द
सनेही शब्द मुनन को जाई ।—कवीर श०, भा० १, पृ० ३५ ।

मिरगानी^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृग] मृगचर्म की आसनी । मृगछाला ।
उ०—कवनु मुद्रा कवनु मिरगानी ।—प्राण०, पृ० ७६ ।

मिरगारन^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगारण्य] जगली जानवरो का वन ।
मृगारण्य ।

मिरगिया—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मिरगी + ह्या (प्रत्य०)] वह जिसे मिरगी
का रोग हो ।

मिरगिसिरा^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगशिरस्] दे० 'मृगशिरा' । उ०—

तपनि मिरगिसिरा जे सटहि अद्रा ते पलुहत ।—जायमी ग्र०
(गुप्त), पृ० ३७४ ।

मिरगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगी] एक प्रमिद्व मानसिक रोग । अपस्मार ।

विशेष—इम रोग का बीच बीच मे दौरा हुआ करता है और
इसमे रोगी प्राय मूर्छित होकर गिर पडता है, उसके
हाथ पर ऐँठने लगते हैं और उसके मुँह मे काग निबलने लगता
है । कभी कभी रोगी के केवल हाथ पर ही ऐँठने हैं और उमे
मूर्छा नही आती । यह रोग वातज, पित्तज, कफज और
सन्निपातज भेद मे चार प्रकार का कहा गया है । विशेष दे०
'अपस्मार' ।

क्रि० प्र०—आना ।—होना ।

मिरगु^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृग] दे० 'मृग' ।

मिरघ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बौद्धो के अनुसार एक बहुत बडी सख्या ।

मिरचा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मरिच] लान मिर्च ।

मिरचाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मिरचा + ई (प्रत्य०)] १ दे० 'मिर्च' ।
२ दे० 'काला दाना' ।

मिरचियागव—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मिर्च + गध] रुगा घाम ।

मिरचो—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मिर्च] छोटी, पर बहुत तेज लाल मिर्च ।

मिरजई—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मिरजा] एक प्रकार का बददार अग्रा
जो कमर तक और प्राय पूरी बोट का होता है ।

मिरजा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मिरजा, मीरजा] १. मीर या अमीर का
लडका । मीरजाया । अमीरजादा । २ राजकुमार । कुँवर ।
३ मुगलो की एक उपाधि । ४ तमूर वंश के शाहजादो की
उपाधि ।

मिरजा^३—पि० कोमल । नाजुक । (व्यक्ति) ।

मिरजाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ मिरजा का भाव या पद । २.
सरदारी । नेतृत्व । ३ अभिमान । घमड । ४ दे० 'मिरजई' ।

मिरजान—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] प्रवाल । मूंगा ।

मिरजानी—पि० [फा०] मूंगे का [को०] ।

मिरजा मिजाज—पि० [फा० मिरजा + मिजाज] नाजुक दिमाग का ।

मिरत—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृत्यु] दे० 'मृत्यु' ।

यौ०—मिरतलोक^७ = दे० 'मृत्युलोक' । उ०—मिरतलोक से
हमा आए, पुहप दीप चल जाई ।—कवीर श०, भा० १,
पृ० ६३ ।

मिरतका—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृतक] दे० 'मृतक' । उ०—मिरतक
वाँधि कूप मे डारे, भाभी सोच मरे ।—घट०, पृ० २६५ ।

मिरथा^७—पि० [सं० मृथा (= व्यक)] निरर्थक । बेकार । उ०—
विनु गुरु ज्ञान नाम ना पैहो, मिरथा जनम गंवाई हो ।
—कवीर श०, भा० ३, पृ० २४ ।

मिरदग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृदङ्ग] दे० 'मृदङ्ग' ।

मिरदगी—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मिरदग + ई (प्रत्य०)] वह जो मृदङ्ग
बजाता हो । पखावजी । उ०—बीली नाचे मुस मिरदगी खरहा
ताल बजाव ।—सत० दरिया, पृ० १२६ ।

मिरनाल(७)—मू० पुं० [सं० मृणाल] दे० 'मृणाल' । उ०—शोभित कर मिरनाल सरोजा ।—कवीर सा०, पृ० ९६ ।

मिरवना(७)†—क्रि० सं० [हिं० मिलाना] दे० 'मिलाना' ।

मिरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. मूर्वा । २. मदिरा । शराव ।

मिरास—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मीरास] दे० 'मीरास' । उ०—इन सबो के लिये हिंदी अपने पितृपुरुषो से प्राप्त मिरास या रिक्थ है ।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० ७५ ।

मिरासी—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मीरासी] दे० 'मीरासी' ।

मिरिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की लता ।

मिरिग(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृग] दे० 'मृग' । उ०—नैन कँवल जानहुँ घनि फूले । चित्तवनि मिरिग सोवत जमु भूले ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० ३३६ ।

मिरिगारन(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगारण्य] जगल जिनमे पशु रहते हैं । मिरगारन । उ०—मिरिगारन महँ भएउ वसेरा ।—जायसी ग्र०, पृ० ५८ ।

मिरिच—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मरिच] दे० 'मिर्च' ।

मिरिचियाकटक—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मिरिच + गध] रोहिम घास ।

मिरियास, मिरियासि(७)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मीरास] किसी के मरने पर उसके उत्तराधिकारी को मिलनेवाली संपत्ति । मीरास । उ०—नाही मानम हस यह नहि मोतिन की रासि । ये तो मवुक मलिन सर करटन की मिरियासि ।—दीन० ग्र०, पृ० १०१ ।

मिरोरना(७)—क्रि० सं० [हिं०] दे० 'मरोडना' । उ०—ताकै नैन मिरोरि नही चित्त अतै टारै ।—पलटू०, पृ० ५१ ।

मिर्ग(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृग] दे० 'मृग' । उ०—मिर्ग की नाम कस्तूरी ।—तुरसी० श०, पृ० ३१ ।

मिर्गी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगी] दे० 'मिरगी' ।

मिर्च—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मरिच] १ कुछ प्रसिद्ध तिक्त फलो और फलियो का एक वर्ग जिसके अंतर्गत काली मिर्च, लाल मिर्च और उनकी कई जातियाँ हैं । २ इस वर्ग की एक प्रसिद्ध तिक्त फली जिमका व्यवहार प्रायः सारे ससार में व्यजनों में मसाले के रूप में होता है और जिसे प्रायः लाल मिर्च और कहीं कहीं मिरचा, मरिचा या मिरचाई भी कहते हैं ।

विशेष—इस फली का क्षुप मकोय के क्षुप के समान, पर देखने में उससे अधिक भाडदार होता है, और प्रायः सारे भारत में इसी फली के लिये उसकी खेती की जाती है । इसके पत्ते पीछे की ओर चौड़े और आगे की ओर अनीदार होते हैं । इसके लिये काली चिकनी मिट्टी की अथवा बाँगर मिट्टी की जमीन अच्छी होती है । दुम्मट जमीन में भी यह क्षुप होता है, पर कड़ी और अधिक बालूवाली मिट्टी इसके लिये उपयुक्त नहीं होती । इसकी बोआई असाढ़ से कार्तिक तक होती है । जाड़े में इसमें पहले सफेद रंग के फूल आते हैं तब फलियाँ लगती हैं । ये फलियाँ आकार में छोटी, बड़ी, लंबी, गोल अनेक प्रकार

की होती हैं । कहीं कहीं इनका आकार नारंगी के समान गोल और कहीं कहीं गाजर के समान भी होता है पर साधारणतः यह उगनी के बराबर लंबी और उतनी ही मोटी होती है । इन फलियो का रंग हरा, पीला, काला, नारंगी या लाल होता है और ये कई महीनों तक लगातार फलती रहती हैं । प्रायः कच्ची दशा में इनका रंग हरा और पकने पर लाल हो जाता है । मसाले में कच्ची फलियाँ भी काम आती हैं और पकी तथा सुखाई हुई फलियाँ भी । कुछ जाति की फलियाँ बहुत अधिक तिक्त तथा कुछ बहुत कम तिक्त होती हैं । अचार आदि में तो ये फलियाँ और मसालो के साथ डाली ही जाती हैं, पर स्वयं इन फलियो का भी अचार पड़ता है । इसके पत्तों की तरकारी भी बनाई जाती है । इसका स्वाद तिक्त होने के कारण तथा इसके गरम होने के कारण कुछ लोग इसका बहुत कम व्यवहार करते हैं अथवा बिलकुल ही नहीं करते । वैद्यक में यह तिक्त, अग्निदीपक, दाहजनक तथा कफ, अरुचि, विशूचिका, ब्रण, आर्द्रता, तद्रा, मोह, प्रलाप और स्वरभेद आदि को दूर करनेवाली मानी गई है । त्वचा पर इसका रस लगने से जलन होती है, और यदि इसका लेप किया जाय तो तुरत छाले पड़ जाने हैं । इसके सेवन से हृदय, त्वचा, वृक्क और जननेंद्रिय में अधिक उत्तेजना होती है । पर यदि इसका बहुत अधिक सेवन किया जाय तो बल और वीर्य की हानि होती है । वैद्यक, हिकमत और डाक्टरों सभी में इसका व्यवहार औषधि रूप में होता है ।

पर्याय—कटुवीरा । रक्त मरिच । कुमारिच । तीक्ष्ण । उज्वला । तीव्रशक्ति । अजहा ।

मुहा०—मिर्चा लगना=असह्य होना । उत्तर में कही गई बात बहुत बुरी लगना ।

२ एक प्रकार का प्रसिद्ध काला छोटा दाना जिसे काली मिर्च या गोल मिर्च भी कहते हैं और जिसका व्यवहार व्यजनों में मसाले के रूप में होता है ।

विशेष—यह दाना एक तता का फल होता है । इस लता की खेती पूर्वभारत में आसाम में, तथा दक्षिणभारत में मलाबार कोचीन, ट्रावनकोर आदि प्रदेशों में अधिकता में होती है । देहगढ़न और सहारनपुर आदि कुछ स्थानों में भी इसकी बहुत खेती होती है । यह लता प्रायः दूसरे वृक्षों पर चढ़ती और उन्हीं के सहारे फैलती है । यह लता बहुत दृढ होती है और इसके पत्तों पीपल के पत्तों के समान और ५-७ इंच लंबे तथा ३-४ इंच चौड़े होते हैं । इसकी लंबी लंबी डंडियों में गुच्छों में फूल और फल लगते हैं । प्रायः वर्षा ऋतु में पान की बेल की तरह इस लता के भी छोटे छोटे टुकड़े करके बड़े बड़े वृक्षों की जड़ों के पास गाड़ दिए जाते हैं जो थोड़े दिनों में लता के रूप में बढ़कर उन वृक्षों पर फैलने लगते हैं । नारियल, कटहल और आम के वृक्षों पर यह लता बहुत अच्छी तरह फैलती है । तीमरे या चौथे वर्ष इन लताओं में फल लगते हैं और प्रायः बीस वर्ष तक लगते

रहते हैं। कच्ची दशा में ये फल लाल रंग के होते हैं, पर पकने और सूखने पर काले रंग के हो जाते हैं, और प्रायः इसी रूप में बाजारों में मिलते हैं। कभी कभी इन सूखे फलों को पानी में भिगोकर उनका ऊपर छिलका अलग कर लिया जाता है जिम्मे अदर से सफेद या मटमैले रंग के फल निकल आते हैं और जो बाजारों में 'सफेद मिर्च' के नाम से विकते हैं। इस दशा में उनका तीतापन भी कुछ कम हो जाता है।

भारतवर्ष में इसका व्यवहार और उपज बहुत प्राचीन काल से होती आई है और यहाँ से बहुत अधिक मात्रा में यह विदेश भेजी जाती रही है। वैद्यक में यह कड़वी, चरपरी, हलकी, गरम, रूखा, तीक्ष्ण, अवृष्य, छेदक, शोषक, पित्तकारी, अग्नि-प्रदीपक, रुचिकारी, तथा कफ, वात, श्वास, शूल, कृमि, खाँसी, हृदयरोग और प्रमेह तथा बवाभीर का नाश करनेवाली मानी गई है। साधारणतः इसका व्यवहार मसाले के रूप में ही होता है, पर हिक्मत और डाक्टरों में यह ओषधि के रूप में भी काम आती है। जिन लोगों को लाल मिर्च अप्रिय या हानिकारक होती है वे प्रायः इसी का व्यवहार करते हैं, क्योंकि यह उसमें कम तिक्त भी होती है और उत्तेजक तथा दाहजनक भी कम होती है।

पर्या०—मरिच । वैशुज । यनवप्रिय । वल्लीज । कोल । कृष्ण । शुद्ध । कोलक । धमपचन । ऊपण । वरिष्ठ । फटुक । वैशुक । शिरोवृत्त । चार आदि ।

मिर्च^३—वि० जिसका स्वभाव बहुत ही उग्र, तीव्र या कटु हो । (ब०) ।

मिर्चना^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिर्च + न (प्रत्य०)] ऋद्धेरी के फलों का चूर्ण जो नमक मिर्च मिलाकर चाट के रूप में बेचा जाता है ।

मिर्चिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिर्च] रोहिस घास ।

मिर्त^५—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृत्यु वा मृत्यु] मृत्युलोक । नरलोक । उ०—मुर्ग मिर्त पाताल कहा, कहा तीन लोक विस्तार ।—दरिया० वानो, पृ० ५ ।

मिर्तक^५—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृतक] दे० 'मृतक' । उ०—(क) मिर्तक परा वैद कह कई ।—हिंदी प्रेमगाथा०, पृ० २१८ । (ख) तुम तन मिर्तक देखि कै कियो वैद कर वेस ।—हि० क० का०, पृ० २१६ ।

मिल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिहस] १ कपडा बुनने का कारखाना । पुतलीघर । उ०—मिल बनती या भाड में जाती ।—रगभूमि, भा० २, पृ० ६२६ । २ आटा आदि पीसने, लकड़ी काटने या चीरने तथा चीनी आदि बनाने का कल या कारखाना ।

यौ०—मिल मजदूर = मिल में काम करनेवाला मजूर । मिल मालिक = मिल या कारखाने का मालिक ।

मिलक^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिलक] १ जमीन जायदाद । जमींदारी । मिलकियत । २ जागीर । उ०—ब्रज की भूमि इद्र ते मानो मदन मिलक करि पाई ।—सूर (शब्द०) ।

मिलकना^१—क्रि० अ० [देख०] दीप का जलना या प्रकाशित होना । मिलकाना^१—क्रि० सं० [हि० मिलकना] दीया जलाना या वालना । दीप जलाना ।

मिलकाना^२—क्रि० सं० [हि०] दे० 'मलकाना' वा 'मुलकाना' । जैसे, आँखें मिलकाना ।

मिलकी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिलक + ई (प्रत्य०)] १. वह जिनके पास जमीन जायदाद हो । जमींदार । २. वह जिसके पास धन संपत्ति हो । दौलतमद । अमीर ।

मिलन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिलने की क्रिया या भाव । मिलाप । भेंट । समागम । योग । २ मिश्रण । मिलावट । ३. एकत्र होना । इकट्ठा होना ।

मिलनसार वि० [हि० मिलन + सार (प्रत्य०)] जो सबसे प्रेमपूर्वक मिलता हो । सबसे हेलमेल रखनेवाला । सुशील और सद्व्यवहार रखनेवाला ।

मिलनसारी सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिलनसार + ई (प्रत्य०)] सबसे प्रेमपूर्वक मिलने का गुण । सबसे हेलमेल रखना । सद्व्यवहार और सुशीलता ।

मिलना^१ क्रि० अ० [सं० मिलन] १ एक पदार्थ का दूसरे में पडना । समिलित होना । मिश्रित होना । जैसे, दाल में नमक मिलना । २ दो भिन्न भिन्न पदार्थों का एक होना । बीच में का अंतर मिटना । जैसे,—अब ये दोनों मकान मिलकर एक हो गए हैं । ३ समिलित होना । समूह या समुदाय के भीतर होना । जैसे,—(क) हमारी किताबें भी इन्हीं में मिल गई हैं । (ख) अब वह भी जात में मिल गए हैं ।

यौ०—मिलानुज्ञा = (१) समिलित । (२) मिश्रित ।

मुहं—मिलीमार = ऊपर से मिला रहना और भीतर से हानि पहुँचाने की कोशिश करना । उ०—मानो मार की मिली मार कर कुतूहल दिखला रही है ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १२५ ।

४ सटना । जुटना । चिपकना । ५ आकृति, गुण आदि में समान होना, विलकुल या बहुत कुछ बराबर होना । जैसे,—(क) इन दोनों पुस्तकों का विषय बहुत कुछ मिलता है । (ख) इन दोनों का स्वभाव बहुत कुछ मिलता है ।

यौ०—मिलता जुलवा = एक सा । समान । तुल्य ।

६ भेंट होना । मुलाकात होना । देखादेखा होना । जैसे,—वह मुझसे रोज मिलते हैं ।

यौ०—मिलनातुर = मिलने के लिये व्यग्र ।

७ विरोध या द्वेष दूर होना । मेल मिलाप होना । ८ मभोग करना । मंथन करना । ९ किसी के पक्ष में हो जाना । जैसे,—अब तो आप भी उधर ही जा मिले । १० लाभ होना । नफा होना । फायदा होना । जैसे,—इस सौदे में आपको भी कुछ मिलकर ही रहेगा । ११ प्रत्यक्ष होना । सामने आना । पता लगना । जैसे, रास्ता मिलना ।

सयो० क्रि०—जाना ।

१२ वजने से पहले बाजो का सुर या आवाज ठीक होना । जैसे, तबला मिलना, सारंगी मिलना । १३ प्राप्त होना । उपलब्ध होना । जैसे,—यह पुस्तक बाजार में मिलती है । १४. मूल्य पर प्राप्त होना । जैसे,—गेहूँ एक रुपए का सवा सेर मिलता है । १५ मुलाकात करना । भेंटना । १६ श्रावण करना । छाती से लगाना । गले लगाना । भेंटना । जैसे, राम और भरत का मिलना ।

मुहा०—मिल जुलकर = एक होकर । सघटित होकर । मिलना जुलना = अन्य लोगों में भेंट मुलाकात करना । परस्पर सवध रखना । मिल बाँटकर खाना = ममान भाव से किसी वस्तु का उपयोग करना । बराबर हिस्सा लगाकर किसी वस्तु को लेना ।

मिलना ①—क्रि० स० [?] गौ आदि का दूध दुहना ।

मिलनि ②—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिलना] दे० 'मिलन' । उ०—(क) मिलनि विलोकि भरत रघुवर को ।—मानस, २।२४० । (ख) घुमडनि मिलनि देखे डर आवै ।—नद० ग्र०, पृ० १३२ ।

मिलनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिलना + ई (प्रत्य०)] १ विवाह की एक रस्म जो कही तो कन्यादान हो चुकन क उपरात और कही उससे पहले होती है । इसमें कन्यापक्ष क लोग वरपक्ष के लोगों से गले मिलते और उन्हें कुछ नकद देते हैं । कही कही यह रस्म स्त्रियों में भी होती है । २ दे० 'मिलन' ।

मिलपत्र—सञ्ज्ञा पु० [म० [अशमतक वृत्त] बहेडे का पेड ।

मिलवन ③—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिलावना] मिलाने पहुंचान या झुड में करने की क्रिया या भाव । उ०—नया मिलवन मिस उठि भोर । गहगोरी गवनी उहि वोर ।—नद० ग्र०, पृ० १७२ ।

मिलवना ④—क्रि० म० [हि० मिलाना] दे० 'मिलाना' । उ०—उन हटकी हंसि कै इतै इन सौपी मुसकाइ । नैन मिलै मन मिलि गए दोऊ मिलवत गाइ ।—विहारी (शब्द०) ।

मिलवाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिलवाना + ई (प्रत्य०)] १ मिलवाने की क्रिया या भाव । २ वह धन या पुरस्कार जो मिलवाने के बदले में दिया जाय ।

मिलवाना—क्रि० स० [हि० मिलाना का प्र० रूप] १. मिलने का काम दूसरे में कराना । दूसरे को मिलन में प्रवृत्त करना । २ भेंट या परिचय कराना । ३ मेल कराना । ४ सभोग कराना ।

मिलौण ⑤—सञ्ज्ञा पु० [हि० मिलान] डेरा । शिविर । उ०—अमली ममली आरती । जाई बगैरइ दियो मिलान ।—वी० रामो, पृ० १२ ।

मिलाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिलाना + ई (प्रत्य०)] १. मिलाने की क्रिया या भाव । २ मिलाने की मजदूरी । ३ विवाह की मिलनी नामक रस्म । विशेष दे० 'मिलनी' । ४ जाति से निकाले हुए आदमी को फिर से जाति में मिलाने का काम ।

मिलान—सञ्ज्ञा पु० [हि० मिलाना] १ मिलाने की क्रिया या भाव । २ तुलना । मुकाबला । ३ ठीक होने को जाँच । ४ मेल । भेंट । ५ मिलने का स्थान । डेरा । शिविर । पडाव । उ० समाचार वसुदेव जु पाए । सखहि मिलान मिलानहि आए ।—नद० ग्र०, पृ० २३५ ।

क्रि० प्र०—करना—मिलना ।—होना ।

मिलाना—क्रि० स० [स० मिलन, हि० मिलाना का सक० रूप] १ एक पदार्थ में दूसरा पदार्थ डालना । मिश्रण करना । जैसे, दूध में पानी मिलाना । २ दो भिन्न भिन्न पदार्थों को एक करना । बीच में अंतर न रहने देना । जैसे,—दोनों दीवारों में मिला दी गई । ३ समिलित करना । एक करना । जैसे,—यह रकम भी उसी में मिला दी गई है ।

सयो० क्रि०—डालना ।—देना ।

४ सटाना जोडना । चिपकाना । ५ दो पदार्थों की तुलना करना । मुकाबला करना । जैसे,—दोनों कपडे मिलाकर देख लीजिए । ६ यह देखना कि प्रतिलिपि आदि मूल के अनुसार है या नहीं । ठीक होने को जाँच करना । जैसे,—नकल तो पूरी हो चुकी है पर मिलाना अभी बाकी है ।

सयो० क्रि०—लेना ।

७ भेंट या परिचय कराना । ८ दो व्यक्तियों का विरोध या द्वेष दूर करके उनमें मेल कराना । सुलह या सधि कराना । ९ स्त्री और पुरुष का सयोग कराना । सभोग या सवध कराना ।

सयो० क्रि०—देना ।

१० किसी को अपने पक्ष में करना । अपना भेदिया या साथी बनाना । साँटना । जैसे,—हम उन्हें अपनी ओर मिला लेंगे ।

सयो० क्रि०—लेना ।

यौ०—मिलाना जुलाना ।

११ वजाने से पहले बाजो का सुर या आवाज ठीक करना । जैसे, खंजावज मिलाना, सारंगी मिलाना ।

मिलाप—सञ्ज्ञा पु० [हि० मिलना + आप (प्रत्य०)] १ मिलने की क्रिया या भाव । २ मेल या सद्भाव होना । मित्रता ।

यौ०—मेल मिलाप ।

३ भेंट । मुलाकात । ४ एक साथ वजनेवाले बाजो का एक सुर में होना । ५ सभोग । सयोग । ६ दे० 'मिलाई' ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग अधिकतर मनुष्यों या प्राणियों के मवध में होता है, वस्तुओं के मिश्रण के लिये नहीं ।

मुहा०—मिलाप का पुतला = मेल मिलाप का प्रेमी या समर्थक । उ०—आइए ऐ मिलाप के पुतले । हम पलक पाँवडे विद्या देंगे ।—चुभते०, पृ० ६ ।

मिलाव—सञ्ज्ञा पु० [हि० मिलावना + आव (प्रत्य०)] १ मिलाने की क्रिया या भाव । मिलावट । २ दे० 'मिलाप' ।

मिलावट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मिलाना + आवट (प्रत्य०)] १.

मिलाए जाने का भाव । किसी अच्छी या बढिया चीज में किसी घटिया चीज का मेल । खोट । जैसे,—यह सोना ठीक नहीं है, इसमें कुछ मिलावट है ।

विशेष—इम शब्द का प्रयोग केवल वस्तुओं के मिश्रण के लिये होता है प्राणियों के संयोग के लिये नहीं ।

मिलावनी (७)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मिलाना] मिलाने का कार्य । ताल । थपक । उ०—थोद थलकि बर चाल, मनो मुदग मिलावनी ।—नद० श०, पृ० ३३४ ।

मिलिंद (७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मिलिन्द] भौरा । अमर । उ० मदरस मत्त मिलिन्द गन, गान मुदित गननाथ ।—मतिराम (शब्द०) ।

मिलिटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मिलिन्दक] एक प्रकार का साँप ।

मिलिक (७)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिलिक] १ जमींदारी । मिलिकियत । २ जागीर । उ०—ब्रज की भूमि ईद तें मानो मदन मिलिक करि पाई ।—सूर (शब्द०) ।

मिलिटरी^१—वि० [अ०] १ सेना या सैनिक संबंधी । फौजी । जैसे,—मिलिटरी डिपार्टमेंट । २ युद्ध संबंधी । सामरिक । जंगी । ३ लडाका । योद्धा । जैसे,—यह मिलिटरी आदमी है ।

मिलिटरी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] सैन्य दल । पलटन । फौज । जैसे, दगे के दिनों में नगर में मिलिटरी का पहरा था ।

मिलित—वि० [सं०] मिला हुआ । सगमित । युक्त ।

मिलिश—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] ऐसे जवानों का दल जिन्हें किसी सीमा या स्थान की रक्षा के लिये शिक्षा दी गई हो और जिनसे समय समय पर रक्षा का काम लिया जाता हो । खड़ी पलटन । इसका सघटन स्थायी नहीं होता । जैसे, वजोरिस्तान मिलिश ।

मिलिशिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिलिश] दे० 'मिलिश' ।

मिलेठी†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुलेठी' ।

मिलोना^१—क्रि० सं० [हिं० √मिल + ओना (प्रत्य०)] १ दे० 'मिलाना' । २ गौ का दूध दूहना ।

मिलोना^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की बढिया जमीन जिसमें कुछ बालू भी मिली होती है ।

मिलौअल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० √मिल + औअल (प्रत्य०)] १ परस्पर मिलने की क्रिया या भाव । २ भेंटना । गले लगाना । उ०—किसी से गले मिलौअल, किसी से झुक झुककर आदाव ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १४६ ।

मिलौनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मिलना + औनी (प्रत्य०)] १ मुसलमानों में विवाह की एक रस्म जिसमें बरातियों आदि को कुछ नकद या वस्तुएँ भेंट की जाती हैं । मिलाई । दे० 'मिलनी' । २ किन्ती अच्छी चीज में कोई खराब चीज मिलाना । ३ दे० 'मिलाई' । ४ मिलने की क्रिया या भाव । मिलावट । ५ मिलाने के बदले में मिला हुआ धन ।

मिल्क—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ जमींदारी । २ जागीर । मुआफी । ३ जमीन की एक प्रकार की मिलिकियत या मालिकाना । हक ।

विशेष—यह हक जिसे प्राप्त होता है, वह जमींदार को किसी प्रकार का लगान आदि नहीं देता । इस प्रकार की मिलिकियत जमींदारी और काश्तकारी के बीच की होती है और मुरादावाद आदि कुछ पश्चिमी जिलों में ही पाई जाती है ।

४ धन । संपत्ति । उ०—काम ना आता दिसे ये मुल्को माल, देव मुझे या रब तूँ मिलके वेजवाल ।—बकिरदनी०, पृ० १८५ । ५ अधिकार । मिलिकियत ।

मिल्कियत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ जमींदारी । २ जागीर । माफी । ३ धनसंपत्ति । जायदाद । ४ वह पदार्थ या धनसंपत्ति जिसपर नियमानुसार अपना स्वामित्व हो सकता हो या अधिकार पहुँच सकता हो । जिसपर मालिकों का सा हक हो । जैसे,—वह सब तो हमारी मिल्कियत ठहरी, हम छोड़ कैसे सकते हैं ।

मिल्की—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ मिल्क का स्वामी या अधिकारी । जमींदार । २ जागीरदार । माफीदार ।

मिल्कीयत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिलिकियत] दे० 'मिल्कियत' ।

मिल्लत^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मिलन + त (प्रत्य०)] १ मेल जोल । घनेश्रुता । मिलाप । जैसे,—उनमें मिल्लत बहुत है ।

मुहा०—मिल्लत का = जिसमें मिलनसारी हो । मिलनसार । जैसे,—वह बहुत मिल्लत का आदमी है ।

३ समूह । मडली । जत्था । (ब०) ।

मिल्लत^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] मजहब । संप्रदाय । पथ । मत । जैसे,—हर मिल्लत के आदमी से वह अच्छा व्यवहार करता है । उ०—जर मजहबों मिल्लत मेरा, वदी हूँ मैं जर की । जर हीं मेरा अल्लाह है जर राम है मेरा ।—भारतेंदु अ०, भा० २, पृ० ७६१ ।

मिशन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ वह व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह जो किसी विशेष कार्य या उद्देश्य से कहीं भेजा जाय । विशेष कार्य के लिये भेजे हुए आदमी या मडल । २ उद्देश्य । महान् लक्ष्य । ३ वह सस्था, विशेषत ईसाइयों की सस्था, जो सघटत रूप से ईसाई धर्म के प्रचार का उद्योग और लोगों को ईसाई धर्म में दीक्षित करती है । ४ ऐसी सस्था का केंद्र या कार्यालय आदि । ५ राजनीतिक उद्देश्य से भेजा हुआ दूत-मडल ।

मिशनरी—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह ईसाई पादरी जो किसी मिशन का सदस्य होता है और अनेक स्थानों में ईसाई धर्म का प्रचार करने के लिये जाता है । २ ईसाइयों का कोई धर्मपुरोहित । पादरी ।

मिशि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मिशी' ।

मिशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जटामासी । २ मधुरिका । सोआ । ३ साँफ । ४ मेथी । ५ दाभ । बडी डामी ।

मिशकी—वि० [फा० मिशकी] १ कस्तूरी की सुगंध से पूरित । जैसे, मिशकी काकुलें । २ कस्तूरी की तरह काला या स्याह । उ०—अब वह मिशकी चुल्हों की वनावट ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० २५८ ।

मिश्र^१—वि० [सं०] १. मिला या मिलाया हुआ । मिश्रित । समुक्त । जैसे, मिश्र घातु । २. श्रेष्ठ । बड़ा । ३. जिसमें कई भिन्न-भिन्न प्रकार की रकमा (जंमे, रूपया, आना, पाई, मन, सेर छटांक) की संख्या हो । जैसे, मिश्र भाग, मिश्र गुणा । (गणित) ।

मिश्र^२—सज्ञा पुं० [सं०] १. हाथया की चार जातियों में से एक जाति । २. सानपात । ३. रक्त । लहू । ४. मूली । ५. ज्योतिष के अनुसार उग्र आदि सात प्रकार के गणा में से आतम या सातवाँ गण जा कृत्तल और वगाखा नक्षत्र के याग में होता है । ६. सरयूरागीण, कान्यकुब्ज, सारस्वत, मथिल और शाक-द्वीपीय, ब्राह्मणा के एक वर्ग का उपाधि । ७. श्रेष्ठ व्यक्ति । समानित जन । जैसे, आर्य मिश्र (को०) । ८. ताल (सगोत में) ९. मूल और व्याज (धन के साथ प्रयुक्त) ।

मिश्रक^१—सज्ञा पुं० [सं०] १. खारी नमक । २. बंदक में एक प्रकार का बग या राँगा जिसे खुरा रागा भी कहते हैं । ३. देवताओं का उद्यान । नदन वन । ४. एक तीर्थ का नाम । ५. जस्ता । ६. मूली ।

मिश्रक^२—वि० १. मिलानवाला । मिश्रण करनेवाला । २. मूलक ।

मिश्रकस्नेह—सज्ञा पुं० [सं०] बंदक में एक प्रकार की औषध जो त्रिफला, दशमूल और दती का जड़ आदि से बनाई जाती है और जमका व्यवहार गुन्म आदि रोगों में होता है ।

मिश्रकावण—सज्ञा पुं० [सं०] देवताओं का उद्यान । नदन । इद्रवन ।

मिश्रकेशी—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक अप्सरा का नाम जो मेनका की सखी थी ।

मिश्रज—सज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो दो भिन्न जातियों के मिश्रण से बना या उत्पन्न हुआ हो । खच्चर ।

मिश्रजाति—वि० [सं०] जो दो जातियों के मिश्रण से उत्पन्न हुआ हो । वर्णमकर । दोगला ।

मिश्रण—सज्ञा पुं० [सं०] १. दो या अधिक पदार्थों को एक में मिलाने की क्रिया । मेल । मिलावट । २. जोड़ लगाने की क्रिया । जोड़ना (गणित) ।

मिश्रणीय—वि० [सं०] जो मिश्रण करने योग्य हो । मिलाने योग्य ।

मिश्रता—सज्ञा स्त्री० [सं०] मिश्रित होने का भाव । मिलने या मिलाने का भाव ।

मिश्रधान्य—सज्ञा पुं० [सं०] एक में मिलाए हुए कई प्रकार के धान्य ।

मिश्रपुष्पा—सज्ञा स्त्री० [सं०] मेथी ।

मिश्रवन—सज्ञा पुं० [सं०] भटा ।

मिश्रवर्ण^१—सज्ञा पुं० [सं०] १. काला अंगरु । २. गन्ना । पीठा ।

मिश्रवर्ण^२—वि० मिले जुले रंगों का । अनफ रंगों का (को०) ।

मिश्रवर्णफला—सज्ञा स्त्री० [सं०] भटा (को०) ।

मिश्रव्यवहार—सज्ञा पुं० [सं०] गणित की एक क्रिया ।

मिश्रशब्द—सज्ञा पुं० [सं०] खच्चर ।

मिश्रि^१—सज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मिश्री' । उ०—ताके लिये मेवा मिश्रि डारि कै लहुआ किए ।—दो सौ वाचन०, भा० १, पृ० २८७ ।

मिश्रित—वि० [सं०] १. एक में मिलाया हुआ । मिश्रण किया हुआ । २. मिला हुआ ।

मिश्रिता—सज्ञा स्त्री० [सं०] मदा आदि मत्त प्रकार की स्रक्तातियों में से एक प्रकार की स्रक्ताति । वह मूर्धस क्रमण जो कृत्तिका और विशाखा नक्षत्र के समय हो ।

मिश्री^१—सज्ञा पुं० [सं० मिश्रिन्] १. मिलानेवाला । मिश्रण करनेवाला । २. एक नाग का नाम ।

मिश्री^२—सज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मिमरी' ।

मिश्रीकरण—सज्ञा पुं० [सं०] मिलाने की क्रिया । मिश्रण करना ।

मिश्रोतुत्थ—सज्ञा पुं० [सं०] खपरिया । खर्पर । सग बसरी ।

मिश्रेया—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. मधुरिका । मोरी । २. एक प्रकार का साग । ३. शतपुष्पा । तालपर्ण ।

मिश्रोदन—सज्ञा पुं० [सं०] खिचटो ।

मिप—सज्ञा पुं० [सं०] १. छल । कपट । २. बहाना । हीला । मिस । उ०—सोखने सी वह लगी भय मिप भृकुटि सचार ।—शकुं०, पृ० ८ । ३. ईर्ष्या । डाह । ४. स्पर्धा । होड़ । ५. दर्शन । ६. सेचन । सीचना ।

मिपि—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. जटामासी । २. साँझा । ३. सीफ । ४. अजमोदा । ५. खस । उशीर ।

मिपिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. मोझा । २. सीफ । ३. जटामासी । बालछड ।

मिपी—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मिपि' ।

मिष्ट^१—सज्ञा पुं० [सं०] १. मीठा रस । २. मिष्टान्न । मिठाई (को०) । ३. स्वादिष्ट भोजन (को०) ।

मिष्ट^२—वि० १. मीठा । मधुर । २. सित्त । तर (को०) । ३. भेंका, भूना या पकाया हुआ ।

मिष्टकर्ता—सज्ञा पुं० [सं० मिष्टकर्तृ] मिष्टान्न तैयार करनेवाला, हलवाई (को०) ।

मिष्टत(उ)—वि० [सं० मिष्ट हिं० + त (प्रत्य० न्वाथि०)] मीठा । मधुर । उ०—चाढ कदम्ब बुल्ले सुप्रभु मधुरित मिष्टत वानि ।—पृ० रा०, २ । ३७६ ।

मिष्टनिंब—सज्ञा पुं० [सं० मिष्टान्ब] मीठा नीम ।

मिष्टनिंबु—सज्ञा पुं० [सं० मिष्टान्बु] मीठा नींबू । जमोरी नींबू ।

मिष्टपाक—सज्ञा पुं० [सं०] मुरब्बा ।

मिष्टपाचक—सज्ञा पुं० [सं०] वह जो बहुत अच्युता भोजन बनाता हो । जिसका बनाया भोजन बहुत स्वादिष्ट होता है ।

मिष्टभापी—सज्ञा पुं० [सं० मिष्टभापन्] वह जो मीठा बालता हो । मधुरभापी ।

मिष्टवाताद्—सज्ञा पुं० [सं०] मीठा वादान ।

मिष्टाई(उ)—सज्ञा स्त्री० [सं० मिष्ट] दे० 'मिठाई' । उ०—मिष्टाई ।वह विचित्र । मिष्टाई रूप पावत्र ।—पृ० रा०, ६१।७५६ ।

मिष्टान^७—सज्ञा पुं० [सं० मिष्टान्न] दे० 'मिष्टान्न' । उ०—दस
महत्त संग हेमरा मिष्टान महारे ।—प० रासो, पृ० १७६ ।

मिष्टान्न—मज्ञा पुं० [म०] मिठाई ।

मिस'—मज्ञा पुं० [सं० मिस] १ वहाना । हीला । जैसे,—उन्होंने
उपदेश के मिस ही उन्हें बहुत कुछ खरी खोटी कह सुनाई ।
० नकल । पाषड । उ०—भौंड पुकारै पीर बस, मिस मधुभै
मव कोय ।—वृद (शब्द०) ।

मिस—मज्ञा पुं० [फा०] ताँवा ।

यौ०—मिसगर = ताँवे का काम करनेवाला । तमेरा ।

मिस'—सज्ञा स्त्री० [अ०] कुंआरी लडकी । कुमारी ।

मिस^७—सज्ञा स्त्री० [सं० मिस्र] दे० 'मिस्र' । उ० मिस्र भीने
मुमयक मुख निपट विराजत नूर । मनौ वीर उर काम के उगे
श्रानि अकुर ।—पृ० रा०, १।७५५ ।

मिसकाली—सज्ञा पुं० [अ० मिस्काल (= चार माशे की तौल ?)
एक प्रकार का पुराना सिक्का । उ०—बादशाह ने उस
बाग के स्वामियो को जो उसके सबधी थे एक महत्त सिक्का
मिमकाली दिया ।—हृमायूँ, पृ० ६ ।

मिसकीन—वि० [अ० मिस्कीन] १ जिसमें कुछ भी सामर्थ्य या
बल न हो । बेचारा । दीन । २ नम्र । विनम्र । खाकसार ।
उ०—शाह सिकदर देखकर, बहुत गए मिसकीन ।—कवीर म०,
पृ० ११४ । ३ गरीब । निर्धन । ४ सोधा सादा ।

मिसकीनता^७—सज्ञा स्त्री० [अ० मिसकीन + हि० ता (प्रत्य०)]
१ दीनता । गरीबी । २ नम्रता । उ०—एही दरवार है
गरब तें गरब हानि, लाभ जोग छेम को गरीबी मिसकीनता ।—
तुलसी (शब्द०) ।

मिसकीनी—सज्ञा स्त्री० [अ०] मिसकीन होने का भाव । दीन या
दरिद्र होने का भाव ।

मिसकौट—मज्ञा पुं० [हि० मिस्कोट] गुप्त मन्त्रणा । दे० 'मिस्कोट' ।
उ०—इधर तो यह मिसकौट हो रही थी ।—रगभूमि, भा० २,
पृ० ५८६ ।

मिसटॉन, मिसटॉण^७—सज्ञा पुं० [सं० मिष्टान्न] दे० 'मिष्टान्न' ।
उ०—(क) माँपहि पैपान मिसटॉन महा अमृत कै, उगलत
कालकूट हूँ मैं अभिमान कै ।—मुदर० ग्र० (जी०),
पृ० १०४ । (र) अदतारां घर ऊखरस, नँह कारण मिस-
ठाण । मन कारण मिसठाणरो, जठे भूख रम जाण ।—
दांकी० ग्र०, भा० ३, पृ० ८१ ।

मिसन—सज्ञा स्त्री० [हि० मिसना (= मिलना)] ऐसी भूमि
जिसकी मिट्टी में बालू भी मिली हो । बालू मिली हुई मिट्टी
की जमीन ।

मिसना^७—क्रि० अ० [सं० मिश्रण] मिश्रित होना । मिलना ।

मिसना^३—क्रि० अ० [हि० 'मीसना' का अक० रूप] मीजा या
मना जाना । मीमा जाना ।

मिसमार—वि० [अ० मिस्मार] नष्ट । समाप्त । ध्वस्त । उ०—

एक साल और निकला था, शहर भर के मकानों को मिसमार
कर दिया ।—फिसाना०, भा० ३, पृ० ५०८ ।

मिसमुपी^७—सज्ञा स्त्री० [सं० मसि + हि० मुख + ई (प्रत्य०)]
मसिमुखी । लेखनी । उ०—लेखन रदनी मिसमुपी कठी कलम
कहायो —अनेकार्थ०, पृ० ११२ ।

मिसर^१—सज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मिस्र' ।

मिसर^३—सज्ञा पुं० [हि०] श्रेष्ठ व्यक्ति । विद्वान् । पंडित । दे० 'मिस्र' ।
उ०—वेद पढता ब्राह्मण मारा सेवा करता स्वामी । अरथ
करता मिसर पछाढ्या, तूर फिरै मैमती ।—कवीर ग्र०,
पृ० १५१ ।

मिसरा—सज्ञा पुं० [अ० मिसरश्च] कविता, विशेषत उर्दू या
फारसी आदि की कविता का एक चरण । पद ।

मुहा०—मिसरा लगाना = किसी एक मिसरे में अपनी ओर से
रचना करके दूसरा मिसरा जोड़ना ।

यौ०—मिसरा तर = सुदर और उपयुक्त मिसरा । मिसरा तरह ।
मिसरये सानी = दूसरा मिसरा ।

मिसरातरह—सज्ञा पुं० [अ० मिसरा + फा० तरह] वह दिया हुआ
मिसरा जिसके आधार पर उसी तरह की गजल कही जाती
है । पूर्ति के लिये दी हुई (उर्दू या फारसी कविता की)
समस्या ।

मिसरी^१—सज्ञा पुं० [अ० मिस्त्री] १ मिश्र देश का निवासी । मिश्र
नामक राष्ट्र का नागरिक ।

मिसरी^३—सज्ञा स्त्री० १ मिस्र में बोली जानेवाली भाषा । मिस्र देश
की भाषा । २ दोबारा बहुत साफ करके कूजे या थाल में
जमाई हुई दानेदार या रवेदार चीनी । उ०—कहाँ मिसरी कँह
ऊँख रस नहीं पियूस समान । कलाकद कतरा कहा तुव अघरा
रस पान ।—स० सप्तक, पृ० ३४६ ।

विशेष—प्राय यह कूजे या कतरे के रूप में बाजारों में विक्री
है । यह वैद्यक में स्निग्ध, घातुवर्धक, मुखप्रिय, बलकारक,
दस्तावर, हलकी, तृप्तिकारी, सब प्रकार के रोगों को
शांत करनेवाली और रक्तपित्त को दूर करनेवाली मानी
गई है ।

मुहा०—मिसरी की डली = बहुत ही माठा या मधुर पदार्थ ।

मिसरी^३—सज्ञा स्त्री० [दश०] एक प्रकार की शहद की मक्खनी ।

मिसरोटी—सज्ञा स्त्री० [हि० मिस्सा + रोटी] १ मिन्मे आटे की
बनी हुई रोटी । विशेष दे० 'मिस्सा' । २ कडे आदि पर सँक-
कर बनाई हुई बाटी । अगकडी ।

मिसल—सज्ञा स्त्री० [अ० मिसिल] १ सिक्खों के वे अनेक समूह
जो अलग अलग नायकों की अधीनता में स्वतंत्र हो गए थे ।

विशेष—गुरु नानक के वंश नामक शिष्य की देखादेखी और भी
अनेक सिक्ख सरदारों ने अपने अपने समूह स्थापित कर लिए
थे, जिन्हें वे मिसल कहते थे । जैसे, भगियो की मिसल,
रामगडिया मिसल, अहलुवालिया मिसल आदि ।

२ समूह। फुड। पक्ति। श्रेणी। दल। उ०—देखि कुसग पाँव नहिं दीजै जहाँ न हरि की गल रे। जो ना मोक्ष मुक्ति कूँ चाहे सता वमि मिसल रे।—राम० धर्म० पृ० १४५। ज—गेर मिसल ठाढो किया, अतरजामी नाम।—शिखर, पृ०, ३१०।

मुहा०—मिसल बिगाडना=मुकदमे के सिलसिलेवार कागजात इषर उधर कर देना। उ०—क्रोध कोतवाल लोभ नाजर की मिसलत ज्ञान मुद्ई की जिन मिसल बिगारी है।—राम० धर्म०, पृ० ५७। मिसल बैठाना=सिलसिला या क्रम ठीक करना। उ०—इस पेचदार बात की मिसल बैठान के वास्ते मैं अपनी प्यारी मनमोहनी को बुलाता हूँ।—श्रीनिवान ग्र०, पृ० ३४।

मिसलत, मिसलति(५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मसलहत] दे० 'मसलहत'। उ०—(क) क्रोध कोतवाल लोभ नाजर को मिसलत ज्ञान मुद्ई की जिन मिसल बिगारी है।—राम० धर्म०, पृ० ५७ (ख) करि मिसलति कौ सलि जुरी, सब भर सरस मुदेस।—ह० रासो, पृ० ५०।

मिसहा—वि० [हि० मिस (=वहाना) + हा (प्रत्य०)] वहाना करनेवाला। छल करनेवाला। उ०—मै मिसहा सोयौ समुफि, मुँह चूम्यो ढिग जाइ। हँस्यो खिसानी गल गह्यो रही गरै लपटाइ।—बिहारी (शब्द०)।

मिसाना(५)—क्रि० सं० [हि० मीसना का प्रे० रूप] मीसने के लिये दूसरे को प्रेरित करना। मिसवाना। २ हटाना। दूर कराना। उ०—मन का मैल लेह मिसाय। तब तिरवेनी घाट नहाय।—जग० वानी, पृ० ११८।

मिसाल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ उपमा। सादृश्य, जैसे,—लोग आँखो की मिसाल बादाम से देते हैं। २ उदाहरण। नमूना। नजीर। जैसे,—यो ही कहने मे काम न चलेगा, कोई मिसाल भी दीजिए।
क्रि० प्र०—देना।

३ कहावत। लोकोक्ति। मसल। ४ चित्र। तसवीर (को०)। ५ परवाना। आदेशपत्र (को०)। ६ स्वप्नलोक जो स्थूल जगत् का ही एक रूप है।

मिसालन—अव्य० [अ०] मिसाल के तौर पर। उदाहरण-स्वरूप (को०)।

मिसाली—वि० [अ०] उदाहरणरूप। मिसाल रूप में। नमूने का (को०)।

मिसि^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. जटामासी। बालछड। २ साँफ। ३ सोआ। ४ अजमोदा। ५ खस।

मिसि(५)^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मिस'। उ०—सजोगी साधन मिसि अति सच्चु पायी।—नद० ग्र०, पृ० ३७३।

मिसिमिल(५)—सञ्ज्ञा पुं० [अ० बिसमिल्लाह] दे० 'बिसमिल्लाह'। उ०—कतहु वाँग कतहु वेद, कतहु मिसिमिल कतहु छेद। कौति०, पृ० ४२।

मिसिरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मिसरी'।

मिसिल^१—वि० [अ०] समान। तुल्य। बराबर। २० 'मिस्ल'।

मिसिल^२—सञ्ज्ञा स्त्री० १ किसी एक मुकदमे या विषय में सबब रखने-वाले कुल कागज पत्रों आदि का समूह। २ किसी पुस्तक के अलग अलग छपे फार्म जो सिलाई आदि के काम के लिये क्रम से लगाकर रखे जाते हैं। ३ २० 'मिसल'।

मुहा०—मिसल उठाना=पुस्तक के अलग अलग फार्मों को मीने के लिये पहले एक क्रम से लगाना। (दफ्तरी)।

मिसिली—वि० [हि० मिसिल + ई (प्रत्य०)] १ जिनके सबब में अदालत में कोई मिसल बन चुकी हो। २ जिनमें न्यायालय में दह मिल चुका हो। सजायापता।

मुहा०—मिसिलचोर या बदमाश=बहुत बड़ा चोर या बदमाश जिसके अपराध अदालत की मिसिला तक से प्रमाणात होते हैं।

मिसी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मिसि, मिपि, मिशी] १ दे० 'मिशी'। २. ३० 'मिसि'।

मिसी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [प्रा०] स्त्रियों का एक दतमजन। २० 'मिस्मी' (को०)।

मिसीन(५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मशीन] ३० 'मशीन'।

मिसु(५)—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] २० 'मिस'। उ०—हाइहि एहि मिमु दिस्टि मेरावा।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० २३०।

मिस्कला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मिस्कलह] सिकली करनेवाले का वह औजार जिसकी सहायता से वे सिकली करते हैं।

मिस्काल—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मिस्काल] साढे चार मासे की या चार मासे और साढे तीन रत्ती की एक तौल। उ०—दूसरी मूर्ति में एक माणिक था जो पानी से भी ज्यादा माफ था और शीशे से भी ज्यादा चमकदार था, तौन में ४५० मिस्काल था।—हि० पु० रा०, पृ० ५५०।

मिस्कीन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. दीन। बेचारा। उ०—कोई भी मिस्कीन मुसाफिर या मुहताज।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ८५। २ दरिद्र। गरीब। ३ भूखा नगा। कगाल। ४ मीधा सादा। सुशील।

यौ०—मिस्कीनमुरत।

मिस्कीनसूरत—वि० [अ० मिस्कीन + फा० सूरत] जो देखने में मीधा सादा या दीन, पर वास्तव में दुष्ट या पाजी हो।

मिस्कीनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिस्कीन + ई (प्रत्य०)] १ दीनता। २ गरीबी। ३ सुशीलता।

मिस्कीट—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मेस (=भोज)] १ भोजन। खाना। २ एक साथ बैठकर खाने पीने वालों का समूह। ३ गुप्त परामर्श।

मिस्टर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] महाशय। महोदय।

विशेष—इस शब्द का व्यवहार प्रायः अंगरेजों में अथवा अंगरेजी ढंग से रहनेवाले लोगों के नाम के साथ होता है। जैसे, मिस्टर जॉन, मिस्टर गुप्त।

मिस्तर^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मिस्तरी ?] १. काठ का वह औजार

जिससे राज लोग छन या पलस्तर आदि पीटते हैं। पिटना।
२ वह कल जिममे नोल की टिकियां बनाई जाती हैं।

मिस्तर^१—सज्ञा पुं [अ०] दफनी का बह बडा टुकडा जिसपर समानातर पर डोरे लपेट या सी लेते हैं और जो लिखने के समय लकोरें सीबी रखने के लिये लिखे जानेवाले कागज के नीचे रख लिया जाता है, गयना जिसपर रखकर कागज दबा लिया जाता है।

मिस्तर^३—सज्ञा पुं [हिं०] दे० 'भेहतर'।

मिस्तरी—सज्ञा पुं [अ० मास्टर (= उस्ताद)] वह जो हाथ का बहुत अच्छा कारीगर हो। चतुर शिल्पकार।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग बहुधा लोहारों, बढइयों, राजगीरों और कल पेंच आदि का काम करनेवालों के लिये हो होता है।

मिस्तरीखाना—सज्ञा पुं [हिं० मिस्तरी + फा० खाना] वह स्थान जहाँ लोहार, बढई या कल पेंच आदि का काम जाननेवाले बठकर काम करते हैं।

मिस्ता^१—सज्ञा पुं [अ०] १ वह मैदान जिसमे किसी प्रकार की हरियानी न हो। बजर। २ अनाज दान के लिये तैयार को हुई मम भूमि।

मिस्त्री—सज्ञा पुं [हिं०] १ मिस्तरी'। उ०—ग्राप अपने मिस्त्री-खाने जाकर मिली को समझा रहे है।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ४२।

यौ०—मिस्त्रीखाना = दे० 'मिस्तरीखाना'।

मिस्मार—वि० [अ०] ध्वस्त। नष्ट। उ०—बहिर घाव दीखै नही भीतर भया मिस्मार।—दरिया०, पृ० १०।

मिस्र—सज्ञा पुं [अ०] एक प्रसिद्ध देश जो अफ्रिका के उत्तर पूर्वी भाग मे मधुद्र के तट पर है और जो बहुत प्राचीन काल मे अपनी मम्यता और उन्नति के लिये बहुत विख्यात था।

विशेष—इसके उत्तर मे भूमध्यसागर, पूर्व मे स्वेज की खाडी और पश्चिम मे सहारा का रंगिस्तान है। दक्षिण मे यह नील नदी के उद्गम तक चला गया है। नील नदी मे प्रतिवर्ष बहुत बडी बाढ़ आती है जिसके कारण उसके आम पास का प्रदेश बहुत अधिक उपजाऊ है। इसके अतगत चौदह प्रात हैं। इसकी राजनगरी वा राजधानी काहिरा है और इसका सबसे बडा वदरगाह अस्कदरिया है। इवर बहुत दिनों से यह देश तुर्कों के अधीन था और वही का राजप्रतिनिधि इसका शासन करता था, पर अब इसे अंगरेजो ने अपने सरदार मे ले लिया। इस देश के विशुद्ध प्राचीन निवासी अब यहा नहीं रह गए हैं और उनकी वर्णमकर सतान बचा हैं, जिसका वर्म प्राय इस्लाम और भापा अरबी से उत्पन्न है। किसी समय मे इस देश के निवासी उन्नति और मम्यता की चरम सीमा पर पहुँच गए थे, और यह देश रोम, भारत, चीन आदि का ममकत्त माना जाता था, पर अब इसका पतन हो गया है। कहने हैं कि नूह के पुत्र मिस्र ने अपने नाम पर एक नगर बसाया था, जिसके नाम पर इस देश का नाम पडा। बडे बडे भवनो और

इमारतो के जितने प्राचीन खंडहर इस देश मे मिलते हैं उतने और कही नही पाए जाते। पिरामिडो के लिये भी यह देश अत्यंत प्रसिद्ध है अंग्रेजों का मन्त्रालय और उनकी इजारेदारी कर्नल नासिर के नेतृत्व मे समाप्त करने के बाद अब मिस्र एक स्वतंत्र देश है।

मिस्रा—सज्ञा पुं [अ०] १ 'मिसरा'।

मिस्री—सज्ञा स्त्री [हिं] १ दे० 'मिसरी'।

मिस्ल—वि० [अ०] समान। तुल्य। बराबर। जैसे,—यह घोडा मिस्ल तीर के जाता है।

मिस्सर(५)—सज्ञा पुं [म० मिश्र] पूज्य। आदरणीय। उ०—पाँवे मिस्सर अधुले, काजी मुल्ला कोरु। तिनो पान न भिटीयै जो सबदे दे चोरु।—सतवाणी०, पृ० ७०।

मिस्सा—सज्ञा पुं [म० मिश्रण, हिं० मिथना (= मिलना) या मीसना (= मलना)] १ सूँग, मोठ आदि का भूसा जो भेडो और ऊँटो के लिये बहुत अच्छा समझा जाता है। २ कई तरह की दालो आदि को पीसकर तैयार किया हुआ आटा जिसको रोटी गरीब लोग बनाकर खाया करते है। ३ किसी प्रकार की दाल को पीसकर तैयार किया हुआ मोटा आटा जिमको रोटी बनाकर गरीब लोग खाते है।

यौ०—मिस्सा कुस्सा = (१) बहुत ही मोटा अनाज या उमका बना खाद्यपदार्थ। (२) मोटा अन्न। कदन्न।

मिस्सी—सज्ञा स्त्री [फा० मिसी (= ताँवे का)] १ एक प्रकार का प्रसिद्ध मजन जो माजूफल, लोहचून और तूतिए आदि से तैयार किया जाता है और जिसे सच्चा स्त्रियाँ दाँतो मे लगाती हैं। इसमे दाँत काले हो जाते और मुँदर जान पडते ह। उ०—पान भी खाया है मिस्सी भी जमाई हैगो।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ७६०।

क्रि० प्र०—मलना।—लगाना।

मुहा०—मिस्सी काजल करना = स्त्रियो का बनाव सिंगार करना। मिस्सी और काजल आदि लगाना।

यौ०—मिस्सीदान या मिस्सीदानी = मिस्सी रखने का पात्र या ढिबिया।

२ किसी वेश्या का पहले पहल किसी पुरुष से समागम होना, जिसके उपलक्ष्य मे प्राय कुछ गाना बजाना और जलमा भी होता है। सिर ढकाई (मुमलमान वेश्या)।

मिहताना^१—सज्ञा पुं [हिं०] २० 'मेहताना'। उ०—बहुत अधिक मिहताना लेकर।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ७५।

मिहँदी(५)—सज्ञा स्त्री [म० मेन्धिकका] २० 'मेहँदी'। उ०—बिरी अधर, अजन नयन, मिहँदी पग अरु पानि।—मति० ग्र०, पृ० ३४६।

मिह—सज्ञा पुं [स०] बरसता हुआ बादल। मेह।

मिहचना^१—क्रि० स० [हिं० मीचना] २० 'मीचना'। उ०—प्रीतम हग मिहचत प्रिया पानि परस सुखु पाइ। जानि पिछानि अजान लौं नैकुं न होति जनाइ।—विहारी (शब्द०)।

मिहतर—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मेहतर' ।

मिहदार—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मिह (= मिहन्त) + दार (प्रत्यय)] वह मजदूर जिसे नकद मजदूरी दी जाती हो, अन्न आदि के रूप में न दी जाती हो । (खेल०) ।

मिहदी^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेन्धिक्रा] दे० 'मेहदी' । उ०—वदन पर अक्रमर गहने, भी मिहदी से रंगते हैं ।—भारतेंदु ग्रं०, भा० १, पृ० २४ ।

मिहन्त—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'मेहन्त' ।

मिहन्ताना—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मिहन्त] दे० 'मेहन्ताना' ।

मिहन्ती—वि० [हि० मिहन्त + ई] दे० 'मेहन्ती' ।

मिहना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेहना] दे० 'मेहना' ।

मिहमान—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मेहमान] दे० 'मेहमान' ।

मिहमानदारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मेहमानदारी] दे० 'मेहमानदारी' ।

मिहमानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मेहमानी' ।

मिहर^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मिहर] मूर्य ।

मिहर^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मेहर] दे० 'मेहर' । उ०—करहा मुगिया सुदर कहइ मिहर करउ मो आज ।—ढोला०, दू० ३५५ ।

यौ०—मिहरनजर = कृपादृष्टि । उ०—कहर नजर कूं छाडि के मिहर नजर कूं कीजै । सत कोटि गोपियो का उगता मवाव लीजै ।—ब्रज० ग्रं०, पृ० ४१ ।

मिहरवान—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मेहरवा] दे० 'मेहरवान' ।

मिहरवानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मेहरवानी] दे० 'मेहरवानी' ।

मिहरा—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] १ दे० 'मिहरा' । २ दे० 'महरा' ।

मिहराना^१—क्रि० अ० [हि० मेहर या मेहरा] कुछ कुछ आर्द्र या नम होना ।

मिहराव—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिहराव, मेहराव] दे० 'मेहराव' । उ०—कुदरती कावे की तू मिहराव मे मुन गौर से । आ रही धुर से सदा तेरे बुलाने के लिये ।—मत तुरसी, पृ० ५ ।

मिहरारू^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मेहरारू' ।

मिहल^७—सञ्ज्ञा पुं० [अ० महल] दे० 'महल' । उ०—पाच पचीसो तीन गुण, एक मिहल मे राख ।—कवीर सा०, पृ० ८७१ ।

मिहानी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० महना] दे० 'मथानी' ।

मिहिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ आसमान से पडनेवाली वरफ । पाला । २ श्रोम । ३ कपूर ।

मिहिर^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मूर्य । उ०—करना होगा यह तिमिर पार । देखना सत्य का मिहिर द्वार ।—तुलसी०, पृ० २० । २ आक का पीवा । ३ ताँवा । ४ बादल । ५ हवा । ६ चद्रमा । ७ राजा । ८ दे० 'वराहमिहिर' ।

मिहिर^३—वि० वृद्ध । बुढ़ा ।

मिहिरकुल—सञ्ज्ञा पुं० [फा० महगुल का सं० रूप] शाकल प्रदेश के प्रसिद्ध हूण राजा तोरमाण (तुरमान शाह) के पुत्र का नाम ।

विशेष—इसने गुप्त सम्राटो पर विजय प्राप्त करके मध्य भारत पर अनिकार जमाया था । यह बौद्धो का बहुत बडा शत्रु था ।

एक वार मगघ के राजा वालादित्य ने इसे पकड लिया था, पर फिर अपनी माता के कहने से छोड दिया था । इसने कुछ दिनों तक काश्मीर पर भी शासन किया था । यह ईसवी छठी शताब्दी के मध्य में हुआ था ।

मिहिराय - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

मिहीं^७—वि० [हि०] दे० 'महीन' । उ०—जैसे मिहीं पट में चटकीलो, चढे रंग तीसरी वार के वोरें ।—मैतिराम शब्द० ।

मिहीं^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] १ मध्य प्रदेश में होनेवाली एक प्रकार की अरहर जिसके दान कुछ बडे होते हैं, और जो कुछ देर में तैयार होती है । २ गडक नदी का एक प्राचीन नाम । उ०—आजकल जिसे गडक कहते हैं, उन दोनों उसका नाम मिहीं था ।—वंशाली०, पृ० १ ।

मिहीं^७—वि० [हि० महीन] १ झीना । महीन । दे० 'मिहीं' । २ आर्द्र । तर । गीला । उ०—मिहीं अर्गोछनि पोछ लै फैल्यो काजर नैन । सरद चद अति मंद यह चाहत समता ऐन ।—स० मसक, पृ० ३४८ ।

मिहींनी^१—वि० [हि०] दे० 'महीन' । उ०—कबहु वादले रग रग के कतरि मिहीं उढावै ।—भारतेंदु ग्रं०, भा० २, पृ० ४१० ।

मींगनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] दे० 'मगनी' ।

मींगो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुद्गा (= दाल)] बीज के अदर का गूदा । गिरी ।

मीचना—क्रि० सं० [सं० मिष (= रूपकना) या अभ्यजन] दे० 'मीचना' । उ०—छिपने पर स्वयं मृदुल कर से, क्यों मेरी आँखें मीच रही ।—कामायनी, पृ० ६७ ।

मीजना^१—क्रि० सं० [हि० मीजना] १ हाथों से मलना । मसलना । जैसे, छाती मीजना, हाथ मीजना । २ मर्दन करना । दलना । रगडना ।

मीजना^३—क्रि० सं० [हि० मीचना] मूंदना । बंद करना । (आँखों के लिये) । उ०—दूध माफ़ जस धीउ है ममुद माँह जस मोति । नैन मीजि जो देखहु चमक उठै तस जोति ।—जायसी (शब्द०) ।

मीटना^७—क्रि० सं० [हि० मीचना, मीटना] दे० 'मीचना' । उ०—समाधि लगाइ करि आँखि मीटियतु है ।—सुदर० ग्रं०, भा० २, पृ० ६५७ ।

मीड—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मीडम्] सगीत में एक स्वर से दूसरे स्वर पर जाते समय मध्य का अंश इस सुदरता से कहना जिसमें दोनों स्वरों के बीच का सवच स्पष्ट हो जाय, और यह न जान पड़े कि गानेवाला एक स्वर से कूदकर दूसरे स्वर पर चला आया है । जैसे, 'सा' का उच्चारण करने के उपरांत 'रि' का उच्चारण करते समय पहले कोमल रिपभ का उच्चारण करना । गमक ।

विशेष—मीड की आवश्यकता कभी स्वर से केवल उसके दूसरे परवर्ती स्वर पर ही जाने में नहीं पडती बल्कि किसी एक स्वर से दूसरे स्वर पर जाने अथवा उतरने में भी पडती है । अर्थात् आरोहण और अवरोहण दोनों में उसके लिये स्थान है ।

जैसे, 'मा' के उपरांत 'म' का अग्रया नि' के उपरांत 'ग' का उच्चारण करने में भी मीड का प्रयोग ही मकता और होता है। स्वरो की मूर्धनाओं का उच्चारण भी की महायता से ही होना है। देशी वाजो में मे वीन, रवाव, सरोद, सितार, नारगा आदि में मीड बहुत अच्छी तरह निकाली जाती है, पर पियानो और हारमोनियम आदि अगरेजों टग के वाजो में यह किमी प्रकार निकल ही नहीं सकती। विद्वानों का यह भी मत है कि मीड निकालने के लिये स्त्रियों के कंठ की अपेक्षा पुरुषों का कंठ बहुत अधिक उपयुक्त होना है, और इसका कारण यह है कि पुरुषों की स्वरनालिका स्त्रियों की स्वरनालिका की अपेक्षा अधिक लंबी होती है।

मीडक (उ) - सज्ञा पुं० [हि० मेडक] दे० 'मेडक'। उ०—(क) मन मीडक भूँ मारिये सका सरन निवारि।—दादू०, पृ० १५१। (ख) मान कियोडी महल ज्यूँ बुगला ज्यूँ कम बोल। भावडियो घर मीडको पुरुखपणारी पोल।—वांकी० ग्र०, भा० २, पृ० २३।

मीडना—क्रि० म० [हि० मीडना] १ हाथों से मलना। ममलना। जैसे, घाटा मीडना। २ (श्रांखें) मलना। बार बार (श्रांखें) ददाना। ३—मो वह श्रांख मीड मीड क फिर फिर के देखन लाग्यो, जो मोंको यह भ्रम तो नही मयो।—दो मौ ब्रावन०, भा० २, पृ० ६।

मीडासीगी—सज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मैंडासीगी'।

मीत (उ) - वि० [सं० भक्त] दे० 'भक्त'। उ०—मनो मतवार लरै रस मीत।—पृ० रा०, ६१। ६४०।

मीयाँ—सज्ञा पुं० [फा० मियाँ] दे० 'मियाँ'। उ०—मीयाँ मैंदा आव घरि, वाढी वत्ता लोइ।—दादू० पृ० ६३।

मीयाद—सज्ञा स्त्री० [अ०] १ किमी कार्य की समाप्ति आदि के लिये नियत समय। अवधि।

क्रि० प्र० - गुजरना।—बढ़ना।—वदना।—बोतना।

२ कारागार के दंड का काल। कंद की अवधि।

मुहा०—मीयाद फाटना = कारागार का दंड भोगना। सजा भुगतना। मीयाद बोलना = कारावाग का दंड देना। कंद की सजा देना।

मीयादी—वि० [हि० मीयाद + ई (प्रत्य०)] १ जिसके लिये कोई समय या अवधि निश्चित हो जैसे, मीयादी हुडी।

यौ०—मं आदी खुस्वार = एक प्रकार का ज्वर जो दो सप्ताह से लेकर छह सप्ताह तक चलाता है।

० जो कारागार में रह चुका हो। जो जेलखाने में रहकर सजा भुगत चुका हो। जैसे, मीयादी चोर।

मीयादी हु डी—सज्ञा स्त्री० [हि० मीयादी + हुँडी] वह हुडी जिसका रूपा तुरत न देना पड़े, बल्कि एक नियत समय या अवधि पर देना पड़े। वह हुडी जो मिति पूजने पर भुगतार्ई जाय।

मीच (उ) - सज्ञा स्त्री० [सं० मृत्तु, प्रा० मिच्छु] मृत्तु। मौत। उ०—

मीच गई जर बीच ही विरहानल की भार।—मतिराम (शब्द०)।

मीचना—क्रि० सं० [सं० मिप (= भपकना) या मिच्छ (= रोकना)] (श्रांखें) बंद करना। मूंदना।

मीचु (उ) - सज्ञा स्त्री० [सं० मृत्तु, प्रा० मिच्छु] मृत्तु। मौत।

मीजना—क्रि० सं० [सं० मर्दन] दे० 'मीजना'।

मीजा—सज्ञा स्त्री० [अ० मिजाज] १ अनुकूलना। २ स्वभाव।

मुहा०—मीजा पटना या मिलना = दो व्यक्तियों का परस्पर मेल जोल होना। स्वभाव मिलने के कारण मेल होना।

३ समति। राय।

क्रि० प्र०—लेना।

मीजान—सज्ञा स्त्री० [अ०] १ तुला। तराजू। २ तुला राशि। ३ कुल सख्याओं का योग। जोड़। (गणित)।

क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

यौ०—मीजान मिजना = जमा खर्च का जोड़ बराबर होना। ४ दे० 'मीजा'।

मीटना—क्रि० अ० [हि०] दे० 'मीचना'।

मीटर—सज्ञा पुं० [अ०] वह यंत्र या मशीन जो व्यय किए गए पानी या विजली आदि की मात्रा बतलाती है।

मीटिंग—सज्ञा स्त्री० [अ०] परामर्श आदि के लिये एक स्थान पर बहुत से लोगों का जमावडा। अधिवेशन। सभा।

मीठ (उ) - वि० [म० मिष्ट, प्रा० मिट्ट] प्रिय। रुचिकर। मधुर। दे० 'मीठा-६'। उ०—मीठ बहुत सतनाम है पियत निकारै जान।—पल्लव०, भा० १, पृ० ६।

मीठम (उ) - वि० [सं० मिष्ट + तम (प्रत्य०)] दे० 'मीठा-१'। उ०—ऊब गिरी घर ऊपरै, पल खांडांमय आव। तूवा मीठम होय तो, सुवाँ, होय मवाव।—वांकी० ग्र०, भा० ३, पृ० ८१।

मीठा—वि० [सं० मिष्ट, प्रा० मिष्ट] [वि० स्त्री० मीठी] १ जो स्वाद में मधुर और प्रिय हो। चीना या शहद आदि के स्वाद-वाला। 'खट्टा' या 'नमकीन' का उलटा। मधुर। जैसे,—(क) जितना गुड डालोगे उतना, मीठा होगा। (ख) यह आम बहुत मीठा है।

मुहा०—मीठा और कठौता भर = अच्छा भी और अधिक भी। जो चीज अच्छी होती है वह अधिक मात्रा में नहीं मिलती। उ०—मीठो अरु कठवति भरो रौताई अरु खेम।—तुलसी ग्र०, पृ० ८८। मीठा होना = किसी प्रकार के लाभ या आनंद आदि की प्राप्ति होना। अपने पक्ष में कुछ भलाई होना। जैसे,—हमें ऐसा क्या मीठा है, जो हम नित्य दौड दौडकर तुम्हारे पाम आया करें।

२ जिसका स्वाद बहुत अच्छा हो। स्वादिष्ट। जायकेदार। जैसे, मीठा मीठा हण, कडुआ कडुआ धू। ३ धीमा। मुस्त। जैसे,—यह घोडा कुछ मीठा चलता है। ४ जो बहुत अच्छा

न हो। साधारण या मध्यम श्रेणी का। मामूली। ५. जो तीव्र या अधिक न हो। हलका। मद्धिम। मद्। जैसे,—ग्राज नवेरे से पेट में मीठा मीठा दर्द हो रहा है।

यौ०—मीठा मीठा = हलका हलका। मद्। जैसे, दर्द।

६ जिसमें पुस्त्व न हो, या कम हो। नामर्द। नपुसक। ७ जो गुदाभजन कराता हो। शीवा। ८ जो बहुत अधिक सुशील हो। किसी का कुछ भी अनिष्ट न करनेवाला। बहुत अधिक सीधा। जैसे,—इतने मीठे न बनो कि कोई चट कर जाय। ९ प्रिय। रुचिकर। जैसे, मीठे वचन, मीठी बात। उ०—वह चाहता है कि हम सबसे मीठे बने रहे।

मीठा^१—सज्ञा पुं० १ मीठा खाद्यपदार्थ। मिठाई। २, गुड़। ३ हलुआ। ४ एक प्रकार का कपड़ा जो प्रायः मुसलमान लोग पहनते हैं और जिसे गीरीवाफ भी कहते हैं। ५ मीठा तेलिया। बछनाग नामक विप। ६ मीठा नीबू।

मीठा अमृतफल—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + अमृतफल] मीठा चकोतरा।

मीठा आलू—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + आलू] शकरकंद।

मीठा इद्रजौ—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + इद्रजौ, ठुण्डा कुटज। काली कुडा।

मीठा कद्दू—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + कद्दू] कुम्हडा।

मीठा गोखरू—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + गोखरू] छोटा गोखरू।

मीठा चावल—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + चावल] वह चावल जो चीनी या गुड़ के शरबत में पकाया गया हो।

मीठा जहर—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + अ० जहर] वत्सनाभ। बछनाग विप।

मीठा जीरा—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + जीरा] १, काला जीरा। २, सौंफ।

मीठा ठग—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + ठग] झूठा और कपटी मित्र। जो ऊपर से मिला रहे, पर धोखा दे।

मीठा तवाकू—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + तवाकू] तवाकू जो कडी न हो। तीखापन दूर करने के लिये जूसी मिली तवाकू।

मीठा तेल—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + तेल] १ तिल का तेल। २ पॉस्ते के दाने या खमखस का तेल।

मीठा तेलिया—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + तेलिया] बछनाग। वत्सनाभ विप।

मीठा नीबू—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + नीबू] जमीरी नीबू। चकोतरा।

मीठा नीम—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + नीम] एक प्रकार का छोटा वृक्ष जो प्रायः सारे भारत में पाया और कहीं कहीं लगाया जाता है।

विशेष—इसमें एक प्रकार की मीठी गंध निकलती है। इसकी छाल पतली और खाकी रंग की होती है और पत्ते बकायन या नोम के पत्तों के समान होते हैं। इसके फल भी नीम के फल के

ही समान होते हैं जो फूले रहने पर हरे, और पकने पर काले हो जाते हैं। उनमें दो बीज रहते हैं। नीम वनास में इनके गुच्छों में छोटे छोटे फूल लगते हैं। इनकी मूत्र, छाल और पत्तियाँ औषध्य के रूप में काम आती हैं। रीछक में इनके चम्परा, कटुप्रा, कर्मला और दाट, पगामीर, गुन आदि का नागक माना गया है।

मीठा पानी—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + पानी] नीबू का पगरेजो मत्त मिला तथा पानी जो ताजागो में रद में तथा में मिनता है। लेमनेड।

मीठा पोइया—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + पो.या] घोंटे की वह चाल जो न बहन नेज हो और न उरत पीनी।

मीठा प्रमेह—सज्ञा पुं० [हि० मीठ + प्र० प्रमेह] मधुमेह।

मीठा वरस—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + वरस] चित्रा जी पवण्या का अठारहवा और कुछ लोगों के विचार में तेरहवा प्रसंग जो उनके लिये कठिन समझा जाता है। मीठा वरस।

मीठा भात—सज्ञा पुं० [हि० मीठ + भात] दे० 'मीठा चानन'।

मीठा चिप—सज्ञा पुं० [हि० मीठ + चिप] वत्सनाभ। बछनाग।

मीठा साल—सज्ञा पुं० [हि० मीठा + साल] दे० 'मीठा वरस'।

मीठी—वि० स्त्री० [हि०] दे० 'मीठा'।

मुहा० - मीठी को खट्टी मान लेना = अन्धध्या बुद्धि होना। और का और समझ लेना। कुछ का कुछ समझ लेना। उ०—जाति को है अगर जिला रचना। तब मीठी को मान ले खट्टी।—बुधने०, पृ० ५६।

मीठी खरखोड़ी—सज्ञा स्त्री० [हि० मीठी + खरखोड़ी] पीली जीवती। स्वर्ण जीवती।

मीठी गाली—सज्ञा स्त्री० [हि० मीठी + गाली] मधुर गाली। वह गाली जो अप्रिय न लगे। जैसे, विवाहादि के अवसर पर गाई हुई गाली।

मीठी छुरी—सज्ञा स्त्री० [हि० मीठ + छुरी] १, वह जो देखने में मित्र, पर वास्तव में शत्रु हो। विरामापातक। २, वह जो देखने में नीचा पर वास्तव में कुछ हो। चपटी। कुट्टिन।

मुहा०—मीठी छुरी चलाना = विरामापातक बनना कपट करना। उ०—हमारे हित के मूल में मीठी छुरी चलान है।—पेमघन०, भा० २, पृ० २१०।

मीठी चूँची—सज्ञा स्त्री० [हि० मीठी + चूँची] चूँची।

मीठी विचार—सज्ञा स्त्री० [हि० मीठी + विचार] तपती चूँची।

मीठी सजर—सज्ञा स्त्री० [हि० मीठी + सजर] दे० 'मीठी चिप'। प्रेमभरी सजर।

मीठी नींद—सज्ञा स्त्री० [हि० मीठ + नींद] सुखी नींद। ताजाग और निश्चिन्ता का नींद। उ०—नींद में नींद नींद नींद नींद

वहत जल्द ऐसी मीठी नीद सोएंगे कि हर्ष (हृष) तक न जायेंगे।—फिगाना०, भा० ३, पृ० ८७।

मीठी मार—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मीठी + मार] ऐसी मार जिसकी चोट प्रदर हो और जिसका ऊपर से कोई चिह्न न दिखाई दे। भीतरी मार।

मीठी लकड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मीठी + लकड़ी] मुलेठी।

मीड—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मीड] दे० 'मीड'। उ०—भावती मोड मररो दिए धन आनंद सोयुने रग सो गाजै।—घनानंद, पृ० ४४।

मीडका—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मेडक] [स्त्री० मीडकी] मंडूक। मेढक।

मीडना(फ़)—क्रि० म० [हि० मीडना (= मीजना) सं० मर्दान] मलना। दे० 'मीडना'। उ०—गजराज इंद्र दिव्य न तथ्य। मीडत मणिका जेम हृष्य।—पृ० रा०, २।३६७।

मीड—वि० [सं०] १ पेशाव किया हुआ। मूत्र के मार्ग से निकला या निकाला हुआ। २ मूत्र के समान। मूत्र का सा।

मीडुप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इद्र के एक पुत्र का नाम।

मीडुप^२—वि० दयाद्रं। रहमदिल।

मीडुष्टम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिव। महादेव। २ सूर्य। ३ चोर।

मीड्वा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मीड्वस्] दे० 'मीडुष्टम' [को०]।

मीत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मित्र, प्रा० मित्त] मित्र। दोस्त। उ०—(क) मीत मैं मांगा देगि विवानू। चला सूर संवरा अस्थानू।—जायसी (शब्द०)। (ख) हम हीं नर के मीत सदा सचि हितकारी। इक हमहीं संग जात तजत जब पितु सुत नारी।—भारतेंदु (शब्द०)।

मीन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मछली। उ०—(क) कहि न सकत कछु चितवत ठाढे। मीन दीन जनु जल ते काढे।—मानस, २।७०। (ख) विरच महादेव से मीन बहुतै जहाँ होय परगट कमी जोत मारा।—चरण० वानी, पृ० १३०। २. मेप आदि राशियों में से प्रतिम या वारहवीं राशि।

विशेष—इस राशि में पूर्वभाद्रपद नक्षत्र का अंतिम पद और उत्तर भाद्रपद तथा रेवती नक्षत्र हैं। इस राशि की अविष्ठाश्री देवियाँ दो मछलियाँ हैं और यह चरणरहित, कफ-प्रकृति, जनचारी, नि शब्द, पिगलवर्ण, स्निग्ध, बहुत सतानवाली और ग्राहण वर्ण की मानी गई है। कहते हैं, इस राशि में जो जन्म लेता है, वह क्रोधी, तेज चलनेवाला, अपवित्र और अनेक विवाह करनेवाला होता है।

पर्या०—कीट। जलज। सीम्य। अगन। युग्म। सय। भक्ष्य। गुटत्रेण। दीनात्मक।

३. मेप आदि वारह लग्नों में से अंतिम लग्न।

विशेष—फनित ज्योतिष के अनुसार इस लग्न में जन्म लेनेवाला कार्यदक्ष, अल्पभोजी, स्त्री का बहुत कम साथ करनेवाला, चंचल, अनेक प्रकार की बातें करनेवाला, घूर्त, तेजस्वी, बलवान्, विद्वान्, धनवान्, चर्मरोगी, विकृतमुख, पराक्रमी, पवित्रतापूर्वक और शास्त्रानुकूल आचार आदि से रहनेवाला,

विनीत, संगीतप्रेमी, कन्या सततिवाला, कीर्तिशाली, विश्वासी और धीर होता है और इसकी मृत्यु मूत्रकृच्छ्र, गुह्य रोग या उपवास आदि से होती है।

मीनक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नयनाजन। एक तरह का सुरमा।

मीनकाक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सफेद कनेर।

मीनकेत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मीनकेतु] दे० 'मीनकेतन'। उ०—तेरी ये वगी लगै मीनकेत की वान।—म० मत्तक, पृ० १८७।

मीनकेतन^१—वि० [सं०] जिमकी पताका में मीन का चिह्न हो। उ०—हुआ होगा बनना सफल जिसे देखकर मज्जु मीनकेतन अनग का।—लहर, पृ० ८३।

मीनकेतन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव।

मीनकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव [को०]।

मीनगधा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मीनगन्धा] मत्स्यगधा या मत्स्यवती का एक नाम।

मीनगधिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मीनगन्धिका] दे० 'मीनगोधिका'। [को०]।

मीनगोधिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जलाशय, तालाब या झील आदि।

मीनघाती^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मीनघातिन्] बगला।

मीनघाती^२—वि० मछली मारनेवाला।

मीनति(७)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० विनती] दे० 'विनती'। उ०—पुन सराहिप सुंदरि मीनति जाहीरे।—विद्यापति, पृ० २२०।

मीनध्वज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव [को०]।

मीननाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गोरखनाथ के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ का एक नाम। मछंवरनाथ।

मीननेत्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गाडर दूब।

मीनपित्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुटकी नामक औषधि।

मीनमेख—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मीन + मेप] सोच विचार। आगा-पीछा। असमजम। उ०—(क) मीनमेख भा नारि के लेखे। कस पिउ पीठि दीन्हि मोहिं देवे।—जायसी (शब्द०)। (ख) मीनमेख विनु बात करत तुम कहूँ मिथुन ललचाने।—भारतेंदु० ग्र०, भा० २, पृ० ४५६।

मुहा०—मीनमेख निकालना = (१) गुणदोष निकालना। गुणदोष देखना। उ०—तुम उसमें खामख्वाह मीनमेख निकालने लगते हो।—रगभूमि, भा० २, पृ० ६३३। (२) सोचविचार या आगापीछा।

मीनरक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मीनरक] जलकौवा। मुरगावी। मीनरग।

मीनरग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मीनरग] १ मछरग नामक पक्षी जो मछली खाता है। २ जलकीआ।

मीनर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शाखोट वृक्ष। सहोरा। २ मकर। घडियाल (को०)।

मीनहा(७)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मीन + हा (प्रत्य०)] वंशी जिससे मछली पकड़ी जाती है। उ०—बडिस कुवेनी मीनहा मत्स्यावानी नाम।—अनेकार्थ०, पृ० ६२।

मीनाडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मीनाण्डी] एक प्रकार की शक्कर ।
मीना^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] ऊषा की कन्या का नाम जिसका विवाह कश्यप से हुआ था ।

मीना^२—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] राजपूताने की एक प्रसिद्ध थोड़ा जाति ।
 उ०—ज्यारि सहस मीना प्रवल बैठे आइ वलाइ ।—
 पृ० रा०, ७। ७८ ।

विशेष—इस जाति के लोग बहुत वीर होते हैं और युद्ध में इनकी प्रवृत्ति बहुत होती है । किसी समय ये बहुत बलशाली थे और प्रायः लूटमार करके अपना निर्वाह करते थे । महाराणा प्रताप को अपने युद्धों में इनसे बहुत सहायता मिली थी ।

मीना^३—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ रग विरगा शीशा । २ एक प्रकार का नीले रग का कीमती पत्थर । ३ कीमिया । ४ सोने, चाँदी आदि पर किया जानेवाला रग विरग का काम ।

यौ०—मीनाकारी ।

५ शराव रखने का कटर या सुराही । उ०—मीना की ग्रीवा से भर भर गाती हो मदिरा स्वर्णम स्वर ।—मधु०, पृ० ६४ ।

मीनाकार—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] वह जो चाँदी या सोने आदि पर रंगीन काम बनाता हो । मीना करनेवाला ।

मीनाकारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ सोने या चाँदी पर होनेवाला रंगीन काम । २ किसी काम में निकाली या की हुई बहुत बड़ी वारीकी ।

मुहा०—मीनाकारी छोटना=व्यर्थ का छिद्रान्वेषण करना ।
 निरर्थक दोष निकालना । बाल की खाल निकालना ।

मीनाङ्ग^१—वि० [स०] मछली के समान मुदर आँखोवाला ।

मीनाङ्ग^२—सञ्ज्ञा पुं० एक राज्ञम का नाम ।

मीनाङ्गी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १. भगवती दुर्गा का एक नाम । एक एक देवी जिनका मूर्ति मधुराई (तामलनाडु) में है । २. कुबेर की कन्या का नाम । ३. गडर दूब । ४. ब्राह्मण बूटा । ५. शक्कर । चीनी ।

मीनाबाजार—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मीनाबाजार] १ बाजार जिसमें हारा मोता जैसा कामता वस्तुएँ बिकती हैं । २. वह बाजार जिसमें खिया के उपयोग का हा सारा चाज हा और जन्हे वे ही खरीदता बेचती हो । उ०—इस उत्सव में मीनाबाजार भी लगाया जाता था, जहाँ सब अमीर उमरावा को खियाँ आकर दुकानें लगाती थी और सादा भी प्रायः जनाना रखा जाता था ।—राज० इति०, पृ० ७६६ ।

विशेष—अकबर ने एक ऐसे ही बाजार का संचालन किया था ।

मीनामोण—सञ्ज्ञा पुं० [स०] खजरीट पत्ता । ममाला । खजन ।

मीनार—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मिनार] १ ईंट, पत्थर आदि की वह चुनाई जो प्रायः गोलाकार चलती है । यह प्रायः किसी प्रकार की स्मृति के रूप में तैयार की जाती है । स्तम्भ । लाठ । २. मसजिदों आदि के कोनों पर बहुत ऊँची उठी हुई इसी प्रकार की गोल इमारत जो खम्भे के रूप में होती है । ३. वह ऊँचा स्थान जहाँ रोशनी की जाती है ।

मीनारा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मिनार, हिं० मीनार] दे० 'मीनार' ।

मीनालय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] समुद्र ।

मीनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मीम] दे० 'मीम' । उ०—दग मीनी का ध्यान धरि, पसू विचारे खाइ ।—दादू०, पृ० २०७ ।

मीमासक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो किसी बात की मीमांसा करता हो । मीमांसा या व्याख्या करनेवाला । आलोचक । समीक्षक । उ०—अव्य काव्य के मीमासक वाणी के वैचित्र्य का काव्य का लक्षण मानते थे और दृश्य काव्य के विवेचक रस का ।—रस०, पृ० १ । २. वह जो मीमांसा शास्त्र का ज्ञाता हो । मीमांसा का पंडित । ३. पूर्व मीमांसा के सूत्रकार जैमिनि ऋषि । ४. कुमांगिल भट्ट का एक नाम । ५. भाष्यकार शबरस्वामी का एक नाम । ६. रामानुज का एक नाम । ७. माधवाचार्य का एक नाम ।

मीमासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० मीमांसित] किसी प्रश्न की मीमांसा या निर्णय करने का काम ।

मीमासा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी तत्व का विचार, निर्णय या विवेचन । अनुमान, तर्क आदि द्वारा यह स्थिर करना कि कोई बात कैसी है । उ०—अश्लीलता का मामासा क समय अपन पक्ष को न देखकर दूसरे पक्ष को भी देखना चाहिए ।—रस०, पृ० ४ । २. हिंदुओं के छह दर्शनों में से दो दर्शन जा पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा कहलाते हैं ।

विशेष—साधारणतः मीमांसा शब्द से पूर्व मीमांसा का ही ग्रहण होता है, उत्तर मीमांसा 'वेदात' क नाम से ही आधिक प्रसिद्ध है ।

३. जैमिनि दृष्ट दर्शन जिसे पूर्व मीमांसा कहते हैं और जिसमें वेद के यज्ञपरक वचना की व्याख्या वह विचार क साथ की गई है ।

विशेष—इसके सूत्र जैमिनि के हैं और भाष्य शबर स्वामी का है । मामासा पर कुमांगिल भट्ट के 'कातत्रवार्तिक और श्लोकवार्तिक' भी प्रसिद्ध हैं । माधवाचार्य ने भी 'जैमिनीय न्यायमाला विस्तार' नामक एक भाष्य रचा है । मामासा शास्त्र में यज्ञों का विस्तृत विवेचन है, इससे इसे 'यज्ञविद्या' भी कहते हैं । बारह अध्याया में विभक्त होने के कारण यह मीमांसा 'द्वादशलक्षणा' भी कहलाती है ।

'न्यायमाला विस्तार' में माधवाचार्य ने मीमांसासूत्रों के विषय में सन्क्षेप में इस प्रकार बताया है—पहले अध्याय में विधि, अर्थवाद, मन्त्र, स्मृत और नामवय की प्रामाण्यता का विचार है । दूसरे में अपूर्व कर्म और उसके फल का प्रातपादन तथा विधि और निषेध का प्राक्रिया है, तीसरे में श्रुतांग वाक्याद की प्रामाण्यता और अप्रामाण्यता कहा गई है, चौथे में अन्वय और निर्मातक यज्ञों का विचार है, पाँचवें में यज्ञ और श्रुतवाक्या के पूवापर सबंध पर विचार किया गया है, छठे में यज्ञों का करण और करानेवाला के माधकार का निर्णय है, सातवें और आठवें में एक यज्ञ की विधि को दूसरे यज्ञ में करने का वयान है, नवें में मन्त्रों के प्रयोग का विचार है, दसवें में यज्ञों में वृद्ध कर्मों का

मीरकारवाँ—'मीरकाफिला' ।

मीरजा—सज्ञा पुं० [फा० मीरजा] १ अमीर या सरदार का उच्चा अमीरजादा । २ मुगल शाहजादों का एक उपाधि । ३ मयद मुसलमानों की एक उपाधि । उ०—'यकग्ग' ने तलाश किया हे बहुत बले । मजहर मा इस जहा मे कोई मीरजा नही । विशेष—दे० 'मिरजा' ।

मीरजाई—सज्ञा स्त्री० [फा० मीरजाई] १ मीरजा होने का भाव । २ मीरजा का पद या उपाधि । ३ सरदारी । अमीरी । ४ अमीरों या शाहजादों का सा ऊँचा दिमाग होना । ५ अभिमान घमड़ । शेरी । ६ दे० 'मिरजाई' ।

मीरफर्शी—सज्ञा पुं० [फा० मीरफर्ज] वे गोल, ऊँचे और भारी पत्थर जो बड़े बड़े फर्शा या चाँदनिया आदि के कोनों पर झललिये रखे जाते हैं जिससे वे हवा में उड़ न जायें ।

मीरवल्शी—सज्ञा पुं० [फा० मीरवल्शी] मुसलमानी राजत्व काल का एक प्रधान कर्मचारी जिसका काम वेतन बाँटना होता था ।

मीरवहर—सज्ञा पुं० [फा० मीरवह] दे० 'मीरवहरी' ।

मीरवहरी—सज्ञा पुं० [फा०] १ मुसलमानी राजत्वकाल में जनसेना का प्रधान अधिकारी । २ वह प्रधान कर्मचारी जो बदरगाहों आदि का निरीक्षण करता था ।

मीरवार—सज्ञा पुं० [फा०] पुराने मुसलमानी समय का वह अधिकारी जो लोगों को किसी सरदार या बादशाह के मामले उपस्थित होने में पहले उन्हें देखता और तब उपस्थित होने की आज्ञा देता था ।

मीरभुचड़ी—सज्ञा पुं० [फा० मीर + देश० भुचड़ी] एक कल्पित पीर जिसे हिजडे अपना आदि पुरुष और आचार्य मानते हैं और जिसके वश में वे अपने आप को समझते हैं ।

विशय—कहते हैं कि ये स्त्रियों के वेश में रहते, चरखा कातकर अपना निर्वाह करते और छद्म महाने स्त्री तथा छद्म महान पुरुष रहा करते थे । जब हीजडों में कोई नया हीजडा आकर सम्मिलित होता है, तब वे उसका नाम की कड़ाही तलते और उसे पकवान खिलाते हैं । कहते हैं, जो कोई यह पकवान खा लेता है, वह भी हीजडों की तरह हाथ पैर पटकान लगता है ।

मीरमजिल—सज्ञा पुं० [फा० मीर + देश० मजिल] वह कर्मचारी जो बादशाहों या लखर आदि के पहुंचन से पहले ही मजिल या पटाव पर पहुंचकर वहाँ सब प्रकार की व्यवस्था करे ।

मीरमजलिस—सज्ञा पुं० [फा०] नभा या अन्वेषण का प्रधान अधिकारी । सभापति ।

मीरमहल्ला—सज्ञा पुं० [फा० मीर + देश० महल्ला] किंगी महल्ले का प्रधान या सरदार ।

मीरमुशी—सज्ञा पुं० [फा० मीर + देश० मुशी] मुजियों में प्रधान या सरदार । सबमें बड़ा मुशी ।

मीरसिकार—सज्ञा पुं० [फा०] वह प्रधान कर्मचारी जो अमीरों या बादशाहों के शिकार की व्यवस्था करता है ।

मीरसामान—सज्ञा पुं० [फा०] वह प्रधान कर्मचारी जो अमीरों या बादशाहों की पाकजाता की व्यवस्था करता है ।

मीरहाज—सज्ञा पुं० [फा० मीर हाज + देश०] हाजिरा या सरदार या हाजियों के समूह का प्रधान ।

मीरगस—सज्ञा स्त्री० [अ०] वह धन संपत्ति जो किसी के मरने पर उसके उत्तराधिकारी को मिले । तरका । उपाधि ।

मीरगसी—सज्ञा पुं० [अ० मीरगस] [स्त्री० मीरगसिन] एक प्रकार का मुसलमानों का पश्चिम में पाए जाते हैं ।

विशेष—ये प्रायः गाने बजाने का काम करते हैं और नाच की तरह मारतारपन करके लोगों को प्रमत्त करते हैं ।

मीरी—सज्ञा स्त्री० [फा० मीर + ई (प्रत्यय)] १ मीर होने का भाव । २. वन में किसी लड़के का मरप्रथम हाता । ३ वन में लड़कों का अपना दाँव खेलकर खेल में अग्रगण्य हो जाना ।

मील—सज्ञा पुं० [सं०] १ वन । जंगल । २. निगम (पिं) ।

मील—सज्ञा पुं० [अ०] दूरी का एक नाप जो १७६० गज की होती है । स्ते भावारण काम का आधा मानते हैं ।

मील—मील के पत्थर = प्रगति का प्रतीक । यात्रा का एक मंजिल का सूचक ।

मीलक—सज्ञा पुं० [सं०] रोहिन मछली । रोह ।

मीलन—सज्ञा पुं० [सं०] [पिं० मीलनीय, मीलित] १. वद करना । जैम, नेत्रमोचन । २. मञ्जुचित करना । निकोउना ।

मीलित—वि० [सं०] १ वद किया हुआ । २. गिकोजा हुआ ।

मीलित—सज्ञा पुं० एक अन्कार जिनमें यह कहा जाता है कि एक होने के कारण दो वस्तुया (उपमेय और उपमान) में भेद नहीं जान पड़ता, वे एक में मिली जान पड़ती हैं । जैम, —पंचुरी लगी गुलाब की रात न जानी जाय ।

मीवग—सज्ञा पुं० [सं०] एक बहुत बड़ी मय्या का नाम । (बौद्ध) ।

मीवर—वि० [सं०] १ हिनक । २ पूज्य ।

मीवर—सज्ञा पुं० मनापति ।

मीवा—सज्ञा पुं० [सं० मीवन्] १ पट में का कौटा । २ वायु । हवा । ३ मार । तप्य ।

मीशान—सज्ञा पुं० [सं०] महारज्यव बृज । अमननाम ।

मुगा—सज्ञा स्त्री० [सं० मुगा] पुराणानुसार एक स्त्री का नाम ।

मुंवन(०)—सज्ञा पुं० [सं० मुञ्च] दे० 'मानन' ।

मुचना(०)—क्रि० म० [सं० मुञ्च] मारना मारना । मारना । मुक्त करना । उ०—मारा मुने घमिराम । अन्धित बनि जत मुदर न्यान ।—नर० प्र०, पृ० ११५ ।

मुद्धार—वि० [सं० मुद्धार] मुद्धार । मुद्धारुक्त । रोहित ।

मुद्धार—वि० [सं० मुद्धार + धार (प्रत्यय)] १ मुद्धार । मीर । मीर का मुख्य मन्त्रोपदेश । २ अन्ध मूल । अन्ध, अन्ध ।

मुद्धार—वि० [सं० मुद्धार + धार (प्रत्यय)] १ 'मुद्धार' ।

मुज—सज्ञा पुं० [सं० मुञ्ज] १ मूत्र नाम की धातु । २ धातु मूत्र या रस का भोजन या मूत्र का मूत्र पर्यन्त का शक्ति ।

मुंजक—सज्ञा पुं० [सं० मुञ्जक] पौधों की धातु का एक रोग की

कीडो के कारण नेत्रपटल पर होता है। जब यह बढ़ जाता है, तब 'मुजजालक' कहलाता है।

मुंजकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जकेतु] महाभारत के अनुसार एक राजा का नाम।

मुजकेश—सञ्ज्ञा पुं० [म० मुञ्जकेश] १ जिव। २ विष्णु। ३ महाभारत के अनुसार एक राजा का नाम।

मुजकेशी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जकेशिन्] विष्णु।

मुजग्राम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जग्राम] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन नगर का नाम।

मुजजालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जजालक] घोंडो की आँख के मुजक रोग का उस समय का नाम जब वह बहुत बढ़ जाता है।

मुजपृष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जपृष्ठ] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन प्रदेश का नाम जो हिमालय पर्वत में था।

मुजमणि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुञ्जमणि] पुष्पराग मणि। पुत्रराज।

मुजमेखला—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मुञ्जमेखला] मूँज की बनी हुई वह मेखला जो यज्ञोपवीत के समय पहनी जाती है।

मुंजमेखली—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जमेखलिन्] १ विष्णु। २ जिव।

मुजर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जर] १ कमल की जड़। २ कगल की नाल। मृणाल।

मुजली (पु) —वि० [हिं० मुज + ली (प्रत्य०)] मूँज मयवी। मूँज की।

मुजवट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जवट] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

मुजवान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जवत्] १ नुश्रुत के अनुसार एक प्रकार की सोमलता। २ महाभारत के अनुसार कलाश पर्वत के पास के एक पर्वत का नाम।

मुजाट, मुजाटक—पुं० [म० मुञ्जाट मुञ्जटक] एक पीपे का नाम [को०]।

मुंजातक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जातक] १ मूँज। २ गुजरा कद।

मुजाद्रि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जाद्रि] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

मुजानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गल्या प्रदेश (कवोज) की एक भाषा। का नाम।

मुंजारन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जारण्य] मूँज वन। उ०—अथ मुनि उनइसर्वीं अघ्याइ। स्याम राम मुजारन जाइ।—नद० अ०, पृ० २८६।

मुजारा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुञ्जारा] एक प्रकार का कद। मुजरा कद।

मुठि (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुठि, प्रा० मुठ्ठि] १ मुठि। मुठ्ठी। मूठी। उ०—मुच्छुट्टिय घाव करै दिठ मुठि।—पृ० रा०, ६१।६३६।

मुड'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्ड] १ गरदन के ऊपर का अंग जिसमें केश, मस्तक, आँख, मुँह आदि होते हैं। सिर। २ पुराणानुसार राजा बलि के सेनापति एक दैत्य का नाम। ३ शुभ के सेनापति एक दैत्य का नाम।

विशेष—यह शुभ की आज्ञा से भगवती के साथ लडा था और उर्हीं के हाथों मारा गया था। इसका भाई चड था। चड और

मुठ का बंध करने के कारण ही भगवती का नाम चाभुंडा पडा था।

४. नद गट। ५. मुडन कर्गमाता, हज्जाम। ६. वृज का दूँठ। ७. कटा हुआ तिर। ८. रौत नामक गव द्रव्य। ९. एक उपनिषद् का नाम। १०. मुण्डित शिर (ने०)। ११. एक प्रकार का लोह। महुँ। १२. गात्र का महुँ या मज्ज।

मुड'—वि० १. मुँड दूँडा। मुँड। जिना मान वा। २. अघम। नीच।

मुडक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डक] १. मस्तक। सिर। २. मुँडेवाता, हज्जाम। ३. एक उपनिषद् का नाम।

मुडकर—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुड + कर, अ० पौल ट्रेकम] प्रत्येक नागरिक पर लगाया हुआ कर। उ०—कर न नास्त ते गवनेर का फाम ये उपनिषद गचिप वा तार मिना हे जिमम उन्हे हिदायत की गडे हे कि नवा टाम मिलने ता प्रन्नाचित मुडकर का लगाना रोक रौं।—वाज (१।१।३६), पृ० ४।

मुडकरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [मूँड + करी (प्रत्य०)] १. 'मुँडकरी'।

मुडकिट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डकिट्ट] महुँ।

मुँडचणक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डचणक] १. चना। २. कनाय (ने०)।

मुडधान्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डधान्य] नुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का शानिधान्य जो मुडशानि भी कहलाता है। बारी घान।

मुडन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डन] १. सिर की उत्तरे से मूँज की श्रिया। २. द्विजातिया ते १६ मन्थारों में से एक जो बाल्यावस्था में यज्ञोपवीत में पहने होता है जिमम बालक का सिर मूँडा जाता है।

मुडनक—सञ्ज्ञा पुं० [म० मुण्डनक] १. मुडशालि नामक धान्य। बारी घान। २. वट का वृक्ष।

मुडनिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डनिका] मुडशालि। बारी घान।

मुडपृष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डपृष्ठ] एक प्राचीन जापद का नाम।

मुडफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डफल] नारियल।

मुडमडली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डमडली] अशिक्षित सेना। बिना सीखी हुई फौज।

मुडमाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डमाल] १. 'मुडमाला'।

मुडमाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डमाला] १. बटे हुए सिरों या खापडियों की माला जो राव वा काली दवी के गले में होती है। २. बगल की एक नदी का नाम।

मुडमाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गले में खापडियों की माला पहनने वाली, काली।

मुडमालिनी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डमालिन्] मुड की माला धारण करनेवाले, शिव।

मुडली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्ड (साफ करना) + हिं० ली (प्रत्य०)] १. 'मुडी'। काटना। उ०—अधली आखिन काजल किया, मुडली माग सवारौ।—नुदर० अ०, भा० २, पृ० ८७३।

मुडलोह—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डलोह] महुँ।

मुडवेदाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डवेदाग] महाभारत के अनुसार एक नागासुर का नाम।

मुंडशालि—सञ्ज्ञा पुं० [म० मुण्डशालि] बोगे धान ।

मुंडा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्ड] [स्त्री० मुंडी] १ वह जिसके सिर के बाल न हों या मूँडे हुए हों । २. वह जो सिर मुंडाकर किमी साधू या जोगी आदि का शिष्य हो गया हो । ३ वह पशु जिसके सींग होने चाहिए, पर न हों । जैसे, मुंडा बैल, मुंडा बकरा । ४ वह जिसके ऊपरी अथवा इधर उधर फैलनेवाले श्रग न हों । जैसे, मुंडा पेड़ । ५ एक प्रकार की लिपि जिसमें मात्राएँ आदि नहीं होती और जिसका व्यवहार प्रायः कोठी-वाल करते हैं । कोठीवाली । ६ एक प्रकार का जूता जिसमें नोक नहीं होती और जो प्रायः सिपाही लोग पहना करते हैं ।

मुंडा^२—वि० १ मुडित । २ गजा । खल्वाट । ३ शृगहीन । विना सींग का । ४ जिसमें नोक न हो । विना नोक का ।

मुंडा^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डा] १ गोरखमुंडी । २ वह स्त्री जिसका सिर मुडित हो ।

मुंडा^४—सञ्ज्ञा [देश०] छोटा नागपुर में रहनेवाली एक असभ्य जंगली जाति ।

मुंडा^५—सञ्ज्ञा पुं० मुंडा जाति की भाषा ।

मुंडाख्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डाख्या] गोरखमुंडी ।

मुंडायस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डायस] एक प्रकार का लोहा । महर ।

मुंडासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डासन] योग के अनुसार एक प्रकार का आसन ।

मुंडासाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुंड (=सिर) + आसा (प्रत्य०)] सिर पर बाँधने का साफा ।

क्रि० प्र०—कसन ।—बाँधना ।

मुंडा हिरन—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुंडा + हिरन] पाठी मृग ।

मुंडिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डिक] प्रत्येक यात्री से लिया जानेवाला कर । मुंडकर । उ०—जिसमें आवू पर जानेवाले यात्रियों आदि से जो 'दारण' (राहदारी, जगात), 'मुंडक' (प्रति यात्री से लिया जानेवाला कर), 'बलावी' (मार्गरक्षा का कर) तथा घोड़े बैल आदि से जो कर लिए जाते थे, उनको माफ करने का उल्लेख है —राज० इति०, पृ० ६३० ।

मुंडित^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डित] लोहा ।

मुंडित^२—वि० मुंडा हुआ । उ०—(क) मुंडित सिर सडित भुज वीसा । —मानस, ५।११ । (ख) बहुतक मुंडित पूजा राखि ।—चरण० वानी०, पृ० ७७ ।

मुंडितिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डितिका] गोरखमुंडी ।

मुंडिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डिनी] कस्तूरी मृग ।

मुंडिभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि जो वाजसनेय संहिता के कई मंत्रों के द्रष्टा या कर्ता कहे जाते हैं ।

मुंडी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँडना + ई (प्रत्य०)] १ वह स्त्री जिसका सिर मुंडा हो । २. विधवा । रांड । (गाली) । ३ एक प्रकार की विना नोकवाली जूती ।

मुंडी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डी] गोरखमुंडी ।

मुंडी^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डिन] १ वह जिमका मुंडन हुआ हो । मुंडा हुआ । २ नापित । हज्जाम । ३ सन्यासी । मुंडिया । ४ शिव ।

मुंडी^४—वि० १ जिसके सिर के बाल मूँट दिए गए हों । २ विना सींग का । सींगरहित ।

मुंडीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुण्डीर] सूर्य [को०] ।

मुंडीरिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डोरिका] गोरखमुंडी ।

मुंडीरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुण्डीरी] गोरखमुंडी ।

मुंडो—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँडना + ओ (प्रत्य०)] १ वह स्त्री जिसका सिर मुंडा गया हो । २ स्त्रियों की एक प्रकार की गाली जिससे प्रायः विधवा का बोध होता है । रांड । उ०—वा मुंडो का मूड मुंडाऊँ जो सरवर करँ हमारी ।—कवीर० श०, भा० ३, पृ० २६ ।

मुहा०—मुंडो का = (१) एक प्रकार की बाजारी गाली जिसका अर्थ हारामी या बर्णामकर आदि होता है । (२) विधवा स्त्री के गर्भ से उसके वैधव्य काल में उत्पन्न पुरुष ।

मु तकिल—वि० [अ० मु तकिल] १ एक स्थान से दूसरे स्थान पर गया हुआ या जानेवाला । २ एक जगह में दूसरी जगह पर हटनेवाला या हटाया हुआ ।

मुहा०—मु तकिल करना = एक के नाम से हटाकर दूसरे के नाम करना । दूसरे को देना । जैसे, जायदाद मु तकिल करना ।

मु तखब—वि० [अ० मु तखब] १ इतखाब किया हुआ । २ छाँटा या चुना हुआ ।

मु तजिम—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मु तजिम] वह जो इंतजाम करता हो । प्रबन्ध करनेवाला । व्यवस्था करनेवाला ।

मु तजिर—वि० [अ० मु तजिर] इ तजार करनेवाला । प्रतीक्षा करनेवाला । राह देखनेवाला ।

क्रि० प्र०—रखना ।—रहना ।—होना ।

मु तफ़ी—वि० [अ० मु तफ़ी] नष्ट होने या बुझनेवाला [को०] ।

मु तशिर—वि० [अ०] १ घस्त व्यस्त । तितर वितर । बिखरा हुआ । २ चितित । उद्विग्न । परेशान ।

म तहा—वि० [अ०] पराकाष्ठा को प्राप्त । पारगत [को०] ।

मु तही—वि० [अ०] १ पराकाष्ठा या हृद को पहुँचनेवाला । २. विद्याभो में पारगामी । विद्वान् [को०] ।

मु द^१—वि० [सं० मुग्ध, अ० मु ध] दे० 'मुग्ध' ।

मु द्वाँ—सञ्ज्ञा पुं० [म० मुद्रा] मुंदरी । मुद्रिका । उ०—देश्म हाय कउ मु दडउ, सोवन सिंगो नई कपिला गाई ।—वी० रासी०, २।२५ ।

मु द्रा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुद्रा] दे० 'मुद्रा' या 'मुंदरा' । उ०—है हजूरि कति दूरि बतावह । सुदर बावह मु दर पावह ।—कवीर श०, पृ० ३२६ ।

मु द्राँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मुद्रा] दे० 'मुद्रा' या 'मुंदरा' । उ०—सुरति सिमृति दुइ कनी मु दा परिमिति बाहर खिया ।—कवीर श०, पृ० २२८ ।

मुद्रित^७ वि० [न० मुद्रित, प्रा० मुद्र (= बंद करना)] मुद्रा लुपा ।
बंद । उ०—अथ मुद्रितं ननन च्चै पारं । मृगद्वीनहि मनी
प्रांघ सी श्रावै । नद० प्र० पृ० १४६ ।

मुद्रा—सज्ञा स्त्री० [स० मुद्रा] दे० मुद्रा' । उ०—मुद्रा सवन
कठ जप माला । जायमी श० (गुप्त), पृ० २०५ ।

मुद्रा—वि० [स० मुद्र, पा०, मुध्, अ० मुध्] आगत । मोहित ।
लुभाया हुआ । मुग्ध । उ०—दिमि चाहती मज्जणा नेहान्दो
मुध ।—ढोला०, दू २०४ ।

मुशियाना—वि० [अ० मुशी + हि० ह्याना (प्रत्य०) या फा०
मुशियानह्] मुशियो का सा । मुशियो की तरह का ।

मुशी—सज्ञा पुं० [अ०] १ लेप या निबध आदि लिखनेवाला । लेखक ।
लिखापढी का काम या प्रतिलिपि आदि करनेवाला ।
मुहरिर । लेखक । २ वह जो बहुत नुदर अक्षर, विशेषत
फारसी आदि के अक्षर, लिखता हो ।

मुशीखाना—सज्ञा पुं० [अ० मुशी + फा० खाना] वह स्थान जहां
मुशी या मुहरिर आदि बैठकर काम करते हो । दफ्तर ।

मुशीगिरी—सज्ञा स्त्री० [अ० मुशी + फा० गिरी (प्रत्य०)] मुशी का
काम या पद ।

मुसरिम—सज्ञा पुं० [अ०] १ प्रवध या व्यवस्था करनेवाला ।
इतजाम करनेवाला । २ कचहरी का वह कर्मचारी जो दफ्तर
का प्रधान होता है और जिसके सुपुर्द मिसलें आदि ठीक करना
और ठिकाने से रखना होता है ।

मुसरिमी—सज्ञा स्त्री० [अ० मुसरिम + ई (प्रत्य०)] मुसरिम का
काम या पद ।

मुसलिक—वि० [अ०] साथ में बांधा या नृत्यो किया हुआ ।
(कच०) ।

मुसिफ—सज्ञा पुं० [अ० मुसिफ] १ वह जो न्याय करता हो ।
इन्साफ करनेवाला । २ दीवानी विभाग का एक न्यायाधीश जो
छोटे छोटे मुकदमों का निर्णय करता है और जो सब जज से
छोटा होता है ।

यौ०—मुसिफमिजाज = जिसके स्वभाव में न्यायशीलता हो ।
न्यायनिष्ठ । इमाफपसद ।

मुसिफाना—वि० [फा० मुसिफानह्] मुसिफो जैसा । न्यायपूर्ण ।
न्यायोचित (को०) ।

मुसिफी—सज्ञा स्त्री० [अ० मुसिफ + ई (प्रत्य०)] १ न्याय करने का
काम । २ मुसिफ का काम या पद । ३ मुसिफ की श्रदालत ।
मुसिफ की कचहरी ।

मुंगना—सज्ञा पुं० [हि० मुनगा] सहिजन । मुनगा ।

मुंगरा—सज्ञा पुं० [म० मुगदर, प्रा० मुगगर, मोगगर] [स्त्री० मुंगरी]
हथौड़े के आकार का काठ का बन्ना हुआ वह शौजार जो किसी
प्रकार का आघात करने या किसी चीज के पीटने ठोकन आदि
के काम आता है । जैसे, खूँटा गाडने का मुंगरा, घंटा बजाने
की मुंगरी, रंगरेजो की मुंगरी आदि । उ०—कहै कबीर नर
अजहं न जागा । जम की मुंगरा बरसन लागा ।—कबीर० श०,
भा० २, पृ० ४३ ।

मुंगरा—सज्ञा पुं० [हि० मोगरा] नाकीन बुदिया ।

मुंगवनी—सज्ञा पुं० [म० मुद्रग] मोठया वनमूंग नाम का वृक्ष ।

मुंगिया—सज्ञा पुं० [हि० मूंग + र्या (प्रत्य०)] एक प्रकार का
धागीदार या चाग्गानेदार कपटा । वि० दे० 'मुंगिया' ।

मुंगीली—सज्ञा स्त्री० [म० मुद्रगपध्या, प्रा० मुग्गपच्छा > हि०
मुंगीली, चयना हि० मूंग + श्रीली (प्रत्य०)] मूंग की बनी
हुई बरी । मुंगारी । उ०—भई मुंगीली मिर्चै परी ।—नायकी
(पद्य०) ।

मुंगौरा—सज्ञा पुं० [हि० मूंग + वरा] मूंग के बने हुए ढाँचे । मूंग
का बरा । उ०—कोन्ह मुंगौरा श्री बटु परी ।—जायसी
(पद्य०) ।

मुंगौरा—सज्ञा स्त्री० [हि० मूंग + वरी] मूंग की बनी हुई बरी ।

मुँडकरी—सज्ञा स्त्री० [हि० मुँड + करी (प्रत्य०)] घुटनों में निर
देकर बैठना या सोना, या प्राय बहुत दुःख के समय होना है ।

मुहा०—मुँडकरा माना = घुटनों में निर देकर, बहुत दुःखी हो
कर बैठना ।

मुँडचिरा—सज्ञा पुं० [हि० मुँड + चिरना ?] एक प्रकार के फकीर ।

विशेष—ये फकीर प्राय अथा मित् श्रौच या नाक आदि छुने
या नुकीने हथियार ने घायल करके भिजा मांगते हैं और भिजा
न मिलने पर अटक बँठ जाते हैं और अपने अंगों को और भी
अधिक घायन करते हैं । ऐसे फकीर प्राय मुनममान
ही होते हैं ।

२ वह जो लेन देन में बहुत हज्ज और हठ का ।

मुँडचिरापन—सज्ञा पुं० [हि० मुँडचिरा + पन (प्रत्य०)] लेन देन
आदि में बहुत हज्जत और हठ ।

मुँडना—क्रि० स० [अ० मुडन] १. मूँटा जाना । सिर के बालों की
नफाई होना । २ लूटा जाना । लुटना । ३ ठगा जाना । धोके
में आना । ४ हाति उठाना ।

सयो० क्रि०—जाना ।

मुँडला—सज्ञा पुं० [हि० मुँड] चरने का वह भाग जिमपर माल
रहती है ।

मुँडवाना—क्रि० स० [हि० मुँड] दे० 'मुडाना' ।

मुँडाई—सज्ञा स्त्री० [हि० मुँडना + णाई (प्रत्य०)] १ मूँडने या
मुँडाने की क्रिया अथवा भाव । २ मूँडने या मुँडाने के
बदले में मिला हुआ धन ।

मुँडाना—क्रि० म० [स० मुण्डन] दे० 'मुडाना' ।

मुँडावलि—वि० [म० मुण्ड + वलि] मुडमाल । मुँडा की
माला । उ०—भरत कुमुम गयनग, धरत गर ईन मुँडावलि ।
—पृ० २०, ६१।१६०० ।

मुँडासा—सज्ञा पुं० [हि० मुण्ड (= सिर) + आसा (प्रत्य०)] सिर
पर बाँधने का साफा । उ०—बैठे हरा मुँडासा बावे पाँत
बाँधर पर्वत ।—हंस०, पृ० ६२ ।

क्रि० प्र०—फसना ।—बाँधना ।

मुँडामावद—नञ् प्र० [हि० मुँडामा + वद (प्रत्य०)] वह जो कपडे से पगडी बनाने का काम करता है। दस्तारवद।

मुँटिया—नञ् स्त्री० [हि० मुँड (= सिर) का भी०] मुँट। सिर।

मुँडिया—नञ् प्र० [हि० मुँडना + श्या (प्रत्य०)] वह जो गिर मुँडाकर माघू या जोगी आदि का जिय हो गया हो। मन्यासी। उ०—जिनके जोग जोग यह ऊगो, ते मुँटिया वसे कामी।—नृ (शब्द०)।

मुँडेर—नञ् स्त्री० [हि० मुँडेरा] १. मुँडेरा। २. घेत के चारों ओर सीमा पर श्रयवा क्यारियो मे का उभरा हया अण। मेठ। डेला।

क्रि० प्र०—बँधना।—बोधना।

मुँडेरा—नञ् प्र० [हि० मुँड (= सिर, + ण (प्रत्य०)] १. जोगी का वह ऊपरी भाग जो मरसे ऊपर की डा के चारों ओर कुछ कुछ उठा हुआ होता है। २. किसी प्रकार का बाँधा हुआ पृथता।

क्रि० प्र०—बँधना।—बोधना।

मुँडेरी—नञ् स्त्री० [हि०] छोटी मुँडेरी। *० 'मुँडे'।

मुँडिया—नञ् स्त्री० [हि० मोड़ा + श्या (प्रत्य०)] बँधने का छोटा मोड़ा।

मुँडना—क्रि० अ० [सं० मुद्रण] १. खुली हुई वस्तु का ढक जाना। बंद होना। जैसे, धाँस मुँडना। उ०—भीर भए जैसे पुमोदनी मुँडति कस भय गोहे।—नद० प्र०, पृ० ३३१। २. लुप्त होना। छिपना। जैसे, दिन मुँडना, सूर्य मुँडना। ३. टिड्रा आदि का पूर्ण होना। जेद, बिल आदि का बंद होना।

सयो० क्रि०—जाना।

मुँडरा—नञ् प्र० [हि० मुँडरी] १. एक प्रकार का कुजल जो जोगी लोग बान में पहने है। २. एक प्रकार का आभूषण जो कान में पहना जाता है।

मुँडरी—नञ् सण [सं० मुद्रा] १. उँगली में पहनने का पादा छुन्ला। उ०—नाय हाय माये घरेड प्रभु मुँडरी मुँट भेलि।—तुलसी० प्र०, ३। २. अमूडा। मगुठ।

मुँह—नञ् प्र० [सं० मुख] १. प्राणी का वह अंग जिमने पर बोना और भोजन करता है। मुखविवर। उ०—रत्नमोह दंत्य मारि मुँह मेवत लनयो उगनि वन कूडा।—विद्यापति, पृ० ७३०।

विशेष—प्राय मभी प्राणिपुवा का मुँह सिर में होता है और उभसे वे मागे का काम सेा है। मरुद तितालने वाले प्राणी उममें बोलने का भी काम लेने है। मरिपान जीवों के मुँह में जीभ, दाँत और जबड़े होते है, और उने खोजने का बंद करने के निचे प्राण की घोर साड होा है। पक्षियों तथा कुछ घोर जीवों के मुँह में दाँत नहीं होते। कुछ छोटे छोटे जीव एने भी होते है। जनता मुँह पेट का कठोर क सिमी की भाग में होता है।

२. मगुण का मुगविर।

मुँडा—मुँह थाना = मुँह के धरर छाले पटना और नेहवा सूजना।

विशेष—प्राय मभी आदि के रोग म पाग धारि मुँह सिनिष्ट औरध मान मे म्या होता है।

मुँह का कपरा = (१) (घो०) जो लगाम का कपरा न गह मने (२) जिनको मात का कोई विधान न हो। भूठा। (३) जो किसी बात को गुप्त न रख पाता हो। हर एक बात मने गह देनेवाला। मुँह का कप = (१) (घो०) जो हाँसनेवाले के इच्छानुसार चलते। नगाम के मकेत को मुँह न ममभनेवाला। (२) लला। तेज। (३) उद्दृष्टापूर्वक बातें करनेवाला। मुँह किलना = मुँह का रंगना या बंद किया जाना। मुँह की बात छीनना = जो बात सीरे दूसरा करता चाहता हो, यही यह देना। मुँह की मफरी न उठा सपना = बहुत अधिक दुर्वचन रहना। मुँह कीकना = खोजने में रोचना। चुप करना। मुँह रसरा परना = (१) जमान का म्दार विगलना। (२) जमान में मदी बातें रहना। मुँह खुलना = उद्दृष्टापूर्वक बातें रखने की शान्त पटना। जंन,—आजकल मुँहा मुँह बहुत खुल गया है, किसी शिं धोजा समोने। मुँह खुलवाना = किसी को उद्दृष्टापूर्वक बातें करने के निचे मार्य करना। मुँह खुरक होना = ३० 'मुँह गुगना'। मुँह खोलकर रह जाना = मुँह कटने कटने मज्जा या मकोल के कारण चुप हो जाना। सहमकर रह जाना। मुँह खोलना = (१) कटना। बोलना। उ०—माग नूनार वाय देन हैं घोर हनने न खोज मुँह पाया।—चौ०, पृ० १३। (२) मालिमी देना। पराय बातें रहना। (किसी को) मुँह चदाना = (१) किसी को बहुत उद्दृष्ट बनाना। बाँ करन में घुट करना। खोज करना। जैसे,—आपने इन नीकर का बहुत मुँह चडा रया है। (२) मपना। पारश्वता और प्रिय बनाना। मुँह चठना = (१) खोज होना। मारया जाना। (२) मुँह में व्यर्थ की बातें या दुर्वचन बिलाना। उ०—जय बनाए न मात नल साड। नय मना किम मरु न मुँह चठता।—मुना०, पृ० १२। मुँह चलागा = (१) खाना। खोजन करना। (२) खाना। मरना। (३) मालिमी देना। दुर्वचन करना। (४) दाँत का दाडना, विगत पाठि का गदना। मुँह चिना = किसी को विमान के निचे उभरी धारति, लकनम या मरु की बहुत विगाडना मरुप करना। मुँह चूमकर छोड देना = मज्जा मने छोड देना। मर्गमरा मरते छोड देना। मुँह छुगना = [सं० मुँहसुभाह] = (१) नाम मात्र त लिा कटना। जन म मी, कोल मरुद न मरगा। जैसे,—मुँह छुग म निर के मुँ भी निमनम मे मरु है। (२) निमोदत बात करना। मुँह खर होना = कहुपा पराम मने के कारण मुँह म बहुत मालि ममुपतट होना। मुँह छुगना या खर कना = जन मात्र क निचे मुँह मरगा। मुँह खीना = मरु (खर मरु मने) और छोडे बात करना।

कानाफूमी करना । मुँह जोड़ना = आसरा ताकना । भरोमा देखना । मुँह डालना = (१) किसी पशु आदि का खाद्य पदार्थ पर मुँह चलाना । (२) मुरगो का लडना या आक्रमण करना । (मुर्गवाज) । मुँह तक आना = जवान पर आना । कहा जाना । मुँह थकना = बहुत अधिक बोलने के कारण शिथिलता आना । मुँह थकना = बहुत अधिक बोलकर अपने आपको शिथिल करना । मुँह देना = किसी पशु आदि का किसी वरतन या खाद्य पदार्थ में मुँह डालना । जैसे,— इस दूध में बिल्ली मुँह दे गई है । मुँह पकड़ना = बोलने से रोकना । बोलने न देना । जैसे,— कहीं न, कोई तुम्हारा मुँह पकड़ता है । मुँह पर न रखना = तनिक भी स्वाद न लेना । जरा भी न खाना । जैसे,— लडके ने कल से एक दाना भी मुँह पर नहीं रखा । मुँह पर बात आना = (१) कुछ कहने को जी चाहना । (२) कुछ कहना । मुँह पर मोहर करना = बोलने से रोकना । कहने न देना । चुप कराना । मुँह पर लाना = मुँह से कहना । बर्णन करना । जैसे,— अपनी की हुई नेकी मुँह पर नहीं लानी चाहिए । मुँह पर हाथ रखना = बोलने से जबरदस्ती रोकना या मना करना । मुँह पसारकर दौड़ना = कुछ पाने के लालच में बहुत उत्सुक होकर आगे बढ़ना । मुँह पसारकर रह जाना = (१) परम चकित हो जाना । हक्का बक्का हो जाना । (२) लज्जित होकर रह जाना । शरमाकर रह जाना । मुँह पेट चलना = कं दस्त होना । हैजा होना । मुँह फटना = चूना आदि लगने के कारण मुँह में छोटे छोटे घाव हो जाना । मुँह फाड़कर कहना = बेहया बनकर जवान पर लाना । निर्लज्ज होकर कहना । जैसे,— हमने उनसे मुँह फाड़कर कहा भी, पर उन्होंने कुछ ध्यान ही न दिया । मुँह फँसाना = (१) दे० 'मुँह बाना' । (२) अधिक लेने की इच्छा या हठ करना । जैसे,— कचहरीवाले तो जरा जरा सी बात पर मुँह फँसाते हैं । मुँह फोड़कर कहना = दे० 'मुँह फाड़कर कहना' । मुँह बढ़ करना = चुप कराना । बोलने से रोकना । मुँह बढ़ कर लेना = बिलकुल चुप हो जाना । कुछ न बोलना । मुँह बंद होना = चुप होना । जैसे तुम्हारा मुँह कभी बंद नहीं होता । मुँह बाँधकर बैठना = चुपचाप बैठना । कुछ न बोलना । मुँह बाँधना या बाँध देना = चुप करा देना । बोलने न देना । मुँह घाना = (१) मुँह फाड़ना या खोलना । (२) जँभाई लेना । (३) अपनी हीनता सिद्ध होने पर भी हँस पडना । (४) बुरी तरह से हँसना । बेहूदेपन से हँसना । मुँह विगडना = (१) मुँह का स्वाद खराब होना । जैसे,— तुमने कंसा आम खिला दिया, बिलकुल मुँह विगड गया । (२) किसी बात या काम पर नाराजी व्यक्त करना । (३) उपेक्षा व्यक्त करना । मुँह विगाडना = मुँह का स्वाद खराब करना । मुँह भर आना = (१) मुँह में पानी भर आना । किसी चीज को लेने के लिये बहुत लालच होना । (२) मितली आना । जी मिचलाना । कं करने को जी चाहना । मुँह भरके = (१) मुँह तक । लबालब । (२) जहाँ तक इच्छा हो । जितना जी चाहे । जैसे—(क) जो

कुछ माँगना हो, मुँह भरके माँग लो । (ख) उन्होंने मुझे मुँह भरके गालियाँ दी । (३) पूरी तरह से । भली भाँति । मुँह भर बोलना = अच्छी तरह बोलना । जैसे,— वहाँ मुझसे कोई मुँह भर बोला तक नहीं । मुँह भरना = (१) शिथिल देना । घूस देना । (२) खिलाना । भोजन कराना । (३) मुँह बंद करना । बोलने से रोकना । मुँह मारना = (१) खाने को चीज में मुँह लगाना । (२) दाँत लगाना । काटना । (३) जल्दी जल्दी भोजन करना । (किसी का) मुँह मारना = (१) किसी को बोलने से रोकना । चुप करना । (२) शिथिल देना । (३) कान काटना । बढकर होना । जैसे,— यह ढपडा रेशम का मुँह मारता है । मुँह मठ, करना = (१) मिठाई खिलाना । (२) देकर प्रसन्न करना । मुँह मंठा होना = (१) खाने को मिठाई मिलना । (२) प्राप्ति होना । लाभ होना । (३) मँगनी होना । (बात) मुँह में आना = कहने को जी चाहना । कहने की प्रवृत्ति होना । जैसे,— जो कुछ मुँह में आता है, कह चलते हो । मुँह में खून या लहू लुगा = चसका पडना । चाट पडना । जैसे— एक दिन में तुम्हें रुपए क्या मिल गए, तुम्हारे मुँह में खून लग गया । मुँह में जवान होना = कहने की सामर्थ्य होना । बोलने की ताकत होना । मुँह में तिनका लेना = बहुत अधिक दीनता या अधीनता प्रकट करना । मुँह में पडना = खाया जाना । खाने के काम आना । (बात का) मुँह में पडना = बात का मुँह से निकलना या कहा जाना । जैसे,— जो बात तुम्हारे मुँह में पड़ी, वह सारे शहर में फँल जायगी । मुँह में पानी भर आना = (१) कोई पदार्थ प्राप्त करने के लिये बहुत लालायित होना । जैसे,— सेव का नाम सुनते ही तुम्हारे मुँह में पानी भर आता है । (२) ईर्ष्या होना । मुँह में बोलना या बात करना = इतने धीरे धीरे बोलना कि जल्दी औरो को सुनाई न दे । मुँह में लगाम देना = समझ-बूझकर बातें करना । कम और ठीक तरह से बोलना । मुँह में लगाम न होना = बोलने के समय सचेत न रहना । जो मुँह में आवे, सो कह देना । मुँह खाना = खाना । चखना । मुँह सँभालना = व्यर्थ बकने या गालीगलौज से जवान को रोकना । जवान में लगाम देना । अपना मुँह सीना = बोलने से रकना । मुँह से बात न निकालना । बिलकुल चुप रहना । मुँह सूखना = प्यास या रोग आदि के कारण गला खुश्क होना । गले और जवान में कटि पडना । मुँह से दूध की बू आना = दे० 'मुँह से दूध टपकना' । मुँह से दूध टपकना = बहुत ही अनजान या बालक होना । (परिहास) । जैसे,— आप इन बातों को क्यों जानने लगे, आपके मुँह से तो अभी दूध टपक रहा है । मुँह से निकालना = कहना । उच्चारण करना । जैसे,— ऐसी बात मुँह से मत निकाला करो जिससे किसी को दुख हो । मुँह से फूटना = कहना । बोलना । (उपेक्षा या व्यंग) । जैसे,— आखिर तुम भी तो कुछ मुँह से फूटो । मुँह से फूल ऋडना = मुँह से बहुत ही मुदर और प्रिय बातें निकलना । उ०—रगतें

हित की न जब उनमें रही। फूल मुँह से तब झड़े तो क्या झड़े।—चोखे०, पृ० २६। मुँह से बात छीनना, या टपकना = किसी के कहते कहते उसकी बात कह देना। किसी के कहने में पहने ही उसका विचार या भाव प्रकट करना। किसी के मन की बात कह देना। मुँह से बात न निकलना = क्रोध या भय के मारे कुछ बोला न जाना। मुँह से शब्द न निकलना। मुँह से भाप न निकलना = भय आदि के कारण सन्न हो जाना। घूँ तक न करना। मुँह से लार गिरना = दे० 'मुँह से लार टपकना'। मुँह से लार टपकना = कोई चीज प्राप्त करने के लिये अत्यंत लालच होना। पाने के लिये परम उत्सुकता होना। जैसे,—जहाँ तुमने कोई अच्छी पुस्तक देखी, वहाँ तुम्हारे मुँह से लार टपकने लगी। मुँह से लाल उगलना = दे० 'मुँह से फूल झड़ना'।

३ मनुष्य अथवा किसी और जीव के मिर का अगला भाग जिसमें माथा, आँखें, नाक, मुँह, कान, ठोड़ी और गाल आदि अंग होते हैं। चेहरा।

मुह।०—अपना सा मुँह लेकर रह जाना = लज्जित होकर रह जाना। काम न होने कारण शर्मिदा होना। इतना सा मुँह निकल आना = दे० 'मुँह उतरना'। मुँह अघेरे = प्रभात के समय। तडके। (किसी के) मुँह आना = किसी के सामने होकर कोई कठोर वचन कहना। किसी से हुज्जत करना। उ० - जो आता है खोजी को देखकर कहकहा लगाता है। कोई मुसकराता है कोई मुँह आता है।—फिसाना०, भा० ३, पृ० १६२। मुँह उजला होना = प्रतिष्ठा रह जाना। बात रह जाना। इज्जत न जाना। मुँह उजाले या मुह उठे = प्रभात के समय। तडके। बहुत सवेरे। मुँह उठना = किसी और चलने की प्रवृत्ति होना। जैसे,—हमारा क्या, जिधर मुँह उठा, उधर ही चल देंगे। मुँह उठाए चले जाना = वेधक चले जाना। बिना रुके हुए चले जाना। मुँह उठाकर कहना = बिना सोचे समझे कहना। जो मुँह में आवे सो कहना। मुँह उठकर चलना = नीचे की ओर बिना देखे हुए, केवल ऊपर की ओर मुँह करके चलना। अधाधुध चलना। मुँह उतरना = (१) दुर्बलता के कारण सुस्त होना। चेहरे पर रौतक न रह जाना। (२) विफनता, हानि या दुःख आदि के कारण उदास होना। विवर्णता होना। चेहरे का तेज जाता रहना। (अपना) मुँह काला करना = (१) व्यभिचार करना। अनुचित सभोग करना। (२) अपनी बदनामी करना। (दूसरे का) मुँह काला करना = उपेक्षा से हटाना। त्यागना। जैसे,—मुह काला करो, क्यों इसे अपने पाम रखे हो? मुँह की खाना = (१) थप्पड़ खाना। तमाचा खाना। (२) वेदज्जत होना। दुर्दशा कराना। (३) मुँह तोड़ उत्तर मुनना। (४) लज्जित होना। शर्मिदा होना। (५) धोखा खाना। चूक जाना। (६) बुरी तरह परास्त होना। उ०—क्यामत की सफाई थी। मुँह चढा मुँह की खाई सामने गया और शामत आई।—फिसाना०, भा० १, पृ० ७। मुँह के बल गिरना = (१) ठीकर खाना। धोखा खाना। उ०—

इतना भारी भरकम आदमी और जरी से इशारे में तड से मुँह के बल गिर गए।—फिसाना०, भा० ३, पृ० २२। (२) बिना सोचे समझे किसी और प्रवृत्त होना। कोई वस्तु प्राप्त करने के लिये लपकना। मुँह खोलना = चेहरे पर से घूँघट आदि हटाना। चेहरे के आगे का परदा हटाना। मुँह चढ़ाना = दे० 'मुँह फुलाना'। मुँह चाटना = खुशामद करना। ठकुरसुहाती करना। लल्लोपत्तो करना। मुँह छिपाना = लज्जा के मारे सामने न होना। मुँह झटक जाना = रोग या दुर्बलता आदि के कारण चेहरा उतर जाना। मुँह झुलसाना = (१) मुँह में आग लगाना। मुँह फूँकना। (स्त्रि० गाली)। २ दाह कर्म करना। मुरदे को जलाना। (उपेक्षा०)। (३) कुछ ले देकर दूर करना। (अपना) मुँह देढ़ा करना = मुँह फुलाना। अप्रसन्नता या असतोष प्रकट करना। (दूसरे का) मुँह देढ़ा करना = दे० 'मुँह तोड़ना'। मुँह ढाँकना = किसी के मरने पर उसके लिये शोक करना या रोना। (मुसल०)। (किसी का) मुँह ताकना = (१) किसी का मुखापेक्षी होना। किसी के मुँह की ओर, कुछ पाने आदि की आशा से देखना। उ०—जो रहे ताकते हमारा मुँह हम उन्हीं की न ताक में वंटे।—चोखे०, पृ० २७। (२) टक लगाकर देखना। (३) विवश होकर देखना। (४) चकित होकर देखना। आश्रय से देखना। मुँह ताकना = आकर्षण होकर चुपचाप बंठे रहना। जैसे,—सब लोग अपने अपने रूप ले आए, और आप मुँह ताकते रहे। मुँह तोड़ या तोड़कर जवाब देना = पूरा पूरा जवाब देना। ऐसा जवाब देना कि कोई बोल ही न सके। मुँह थामना = बोलने से रोकना। बालने न देना। चुप करना या रखना। उ०—पर यदि कोई कहे कि यह सब कुछ नहीं, यह एक सांप्रदायिक सिद्धांत का काव्य के ढग पर स्वाकार मात्र है, तो हम उसका मुँह नहीं थाम सकते।—चिंता०, भा० २, पृ० ६६। मुँह थुथाना = मुँह की थूथन की तरह बनाना। मुँह फुलाना। क्रोध या अप्रसन्नता प्रकट करना। मुँह दिखाना = सामने आना। उ०—इमाम जाबिन को दोहाई जिस तरह पीठ दिखाते हो उसी तरह मुँह भी दिखाओ।—फिसाना०, भा० ३, पृ० २७०। मुँह देखकर उठना = प्रात काल सोकर उठने के समय किसी को सामने पाना। जैसे,—आज न जान किसका मुँह देखकर उठे ये कि दिन भर भोजन ही न मिला।

विशेष—प्रायः लग मानते हैं कि प्रात काल सोकर उठने के समय शुभ या अशुभ आदमी का मुँह देखने का फल दिन भर मिला करता है।

मुँह देखकर बात करना = खुशामद करना। मुँह देखकर जीना = (किसी के) भरोस स जीना। (किसी का) आसरा ताकना। उ०—जो हमारा मुँह देखकर जीते हैं, हम उन्हीं को निगल रहे हैं।—चुभते० (दो दो०), पृ० ४। (फिसा का) मुँह देखना = (१) सामना करना। किसी के नामने जाना। किसी के साथ देखादेखी या साक्षात्कार करना। (२) चकित होकर देखना। (अपना) मुँह देखना = दर्पण में अपने मुँह

का प्रतिविव देखना । (किसी का) मुँह देखकर = (१) किसी के प्रेम में लगकर । किसी के प्रेम के आसरे । जैसे,—पति मर गया, पर बच्चों का मुँह देखकर धीरज धरो । (२) किसी को सतुष्ट या प्रसन्न करने के विचार से । जैसे,—तुम तो उनका मुँह देखकर बात करते हो । मुँह धो रखना = किसी पदार्थ की प्राप्ति में निराश हो जाना । आशा न रखना । (व्यग्य) । जैसे,—आपको यह पुस्तक मिल चुकी, मुँह धो रखिए । मुँह न देखना = किसी से बहुत घृणा करना । किसी से देखा-देखी तक न करना । न मिलना जुलना । जैसे,—मैं तो उस दिन से उनका मुँह नहीं देखता । मुँह न फेरना या मोड़ना = (१) दृढतापूर्वक समुल्ल ठहरे रहना । पीछे न हटना । (२) विमुख न होना । अस्वीकार न करना । मुँह निकल आना = रोग या दुर्बलता आदि के कारण चेहरे का तेज जाता रहना । चेहरा उतर जाना । मुँह पर = सामने । प्रत्यक्ष । रूबरू । जैसे,—(क) तुम तो मुँह पर झूठ बोलते हो । (ख) वह मुँह पर खुशामद करता है और पीठ पीछे गालियाँ देता है । मुँह पर फहना = आमने सामने कहना । उ०—बात लगती बेकहो को बेघडक, हम कहेगे औ न बयो मुँह पर कहे ।—चुभते०, पृ० १७ । मुँह पर चढ़ना = लड़ने या प्रतियोगिता करने के लिये सामने आना । मुकाबला करना । मुँह पर थूकना = बहुत अधिक अप्रतिष्ठित और लज्जित करना । मुँह पर नाक न होना = शरम न होना । लज्जा न होना । निर्लज्ज होना । जैसे,—तुम्हारे मुँह पर नाक तो है ही नहीं, तुमसे कोई क्या बात करे । मुँह पर पानी फिर जाना = चेहरे पर तेज आना । प्रमत्तवदन होना । मुँह पर फेंकना या फेंक मारना = बहुत अप्रसन्न होकर किसी को कोई चीज देना । मुँह पर या मुँह से बरसना = आकृति से प्रकट होना । चेहरे से जाहिर होना । जैसे,—पाजीपन तो तुम्हारे मुँह पर बरस रहा है । मुँह पर वसत फूलना या खिलना = (१) चेहरा पीला पड जाना । (२) उदास या भयभीत हो जाना । मुँह पर मारना = दे० 'मुँह पर फेंकना' । मुँह दर मुँह फहना = मुँह पर कहना । सामने कहना । मुँह पर मुरदनी फिरना या झाना = (१) मृत्यु के चिह्न प्रकट होना । अंतिम समय समीप आना । (२) चेहरा पीला पडना । (३) भयभीत, लज्जित या उदाम होना । मुँह पर रखना = किसी के सामने ही कोई बात कह देना । पूरा पूरा उत्तर देना । मुँह पर हवाई उड़ना या झूटना = भय या लज्जा आदि के कारण चेहरा पीला पड जाना । जैसे,—मुझे देखते ही उनके मुँह पर हवाई उड़ने लगी । (किसी का) मुँह पाना = प्रवृत्ति को अपने अनुकूल देखना । रख पाना । मुँह पीट लेना = बहुत अधिक क्रोध या दुःख की अवस्था में दोनों हाथों से अपने मुँह पर आघात करना । मुँह फफ होना = चेहरे का रंग उड जाना । विवर्णता होना । भय या आशंका से चेहरा पीला पड जाना । मुँह फिरना या फिर जाना = (१) मुँह का टेढा, कुरूप या खराब हो जाना । जैसे,—एक थप्पड दूंगा, मुँह फिर जायगा । (२) लकवे का रोग हो जाना । (३) सामना करने के योग्य न रह जाना । सामने से हट या

भाग जाना । जैसे,—घंटे भर की लड़ाई में ही शत्रु का मुँह फिर गया । मुँह फुलाना या फुलाकर बैठना = आकृति से असतोप या अप्रसन्नता प्रकट करना । जैसे,—तुम तो जरा भी बात पर मुँह फुलाकर बैठ जाते हो । मुँह फूँकना = (१) मुँह में आग लगाना । मुँह भुलमाना । (स्नि० गाली) जैसे,—ऐसे नौकर का तो मुँह फूँक देना चाहिए । (२) दाहकर्म करना । मुरदे को जलाना । (उपेक्षा०) । (३) कुछ दे लकर दूर करना । हटाना । मुँह फूलना = अप्रसन्नता या श्रमताप होना । नाराजगी होना । जैसे,—मैं कुछ कहूँगा, तौ अभी तुम्हारा मुँह फूल जायगा । (किसी का) मुँह फेरना = (१) परास्त करना । दवा लेना । (अपना) मुँह फेरना = (१) किसी की ओर पीठ करना । (२) उपेक्षा प्रकट करना । (३) किसी ओर से अपना मन हटा लेना । मुँह बंद कर देना = कहने पर प्रतिविव लगा देना । उ०—बंद होगा न देखना मुनना । आप मुँह क्यों न बंद कर देंगे ।—चुभते०, पृ० १८ । मुँह बनाना या बन जाना = ऐसी आकृति होना जिसमें श्रमतोप या अप्रसन्नता प्रकट हो । जैसे,—मेरी बात मुनते ही उनका मुँह बन गया । मुँह बनवाना = किसी कार्य अथवा प्राप्ति के योग्य अपनी आकृति बनवाना । (व्यग्य) , जैसे,—पहले आप अपना मुँह बनवा लीजिए, तब यह कोट माँगिएगा । मुँह बनाना = ऐसी आकृति बनाना जिससे अक्षतोप या अप्रसन्नता प्रकट हो ।

विशेष—इसके साथ सयो० स्नि० लेना या बैठना आदि का भी प्रयोग होता है ।

मुँह विगाडना = चेहरे की आकृति खराब होना । मुँह विगाडना = चेहरा खराब करना । उ०—हो गए पर विगाड विगाडे का । मुँह विगाडना जिगाडना देखा ।—चोखे० पृ० ५५ । (दूसरे का) मुँह विगाडना = असतोप या अप्रसन्नता प्रकट करना । मुँह बुरा बनाना = असतोप या अप्रसन्नता प्रकट करना । मुँह भर बोलना = स्नेह से बोलना । उ०—आपका मुँह ताकते ही रह गए । आप तो मुँह भर कभी बोले नहीं ।—चोखे०, पृ० ५४ । मुँह में कालिख पुतना या लगना = बहुत अधिक वदनाम होना । कलक लगना । मुँह माँगी मुराद पाना = इच्छित वस्तु प्राप्त करना । उ०—हुमायूँ वागवाँ दिल ही दिल में हँस रहे थे कि मुँहमाँगी मुराद पाई ।—फिसाना०, भा० ३, पृ० १११ । मुँह म छाती देना = स्तन से दूध पिलाना । उ०—मोह में माती हुई मा के सिवा, कौन मुँह में दे कभी छाती सकी ।—चोखे०, पृ० ६ । (अपना) मुँह मोड़ना = किसी ओर से प्रवृत्ति हटा लेना । ध्यान न देना । दे० 'अपना मुँह फेरना' । उ०—सच्चा हितैपी उनसे मुँह मोड गया ।—प्रमथन०, भा० २, पृ० ६१ । (३) इत-कार करना । अस्वीकृत करना । जैसे,—हम कभी किसी बात से मुँह नहीं मोड़ते । दूसरे का मुँह मोड़ना = परास्त करना । हराना । जैसे,—थोड़ी ही देर में सैनिकों ने डाकुओं का मुँह मोड दिया । (किसी के) मुँह लगना = (१) किसी के सिर चढ़ना । किसी के सामने बढ़ बढ़

कर बातें करना। उद्दंड बनना। (२) बातें करना। जवाब सवाल करना। जैसे,—सबके मुँह लगना ठीक नहीं। मुँह लगाना = मिर चढाना। उद्दंड बनाना जैसे,—तुमने भी लडकी को मुँह लगा रखा है। मुँह लपेटकर पडना = (१) बहुत ही दुःखी होकर पडा रहना। उ०—क्यों दुःखा की लपेट में आवे। क्यों पडे मुँह लपेटकर कोई।—चोखे०, पृ० ३०। (२) निरुद्यम होना। आलसी होना। अलसाना। मुँह लाल करना = (१) मुँह पर थप्पड़ आदि मारकर उसे सुजा देना। (२) पान तवाकू से आदर सत्कार करना। मुँह लाल होना = मारे क्रोध के चेहरा तमतमाना। आकृति से बहुत अधिक क्रोध प्रकट होना। मुँह ५ भाँखना = बातचीत में मर्यादा और शिष्टता का ध्यान रखना। उ०—पाँव तो देख भाँखकर डाले। मुँह संभाले संभालकर बोले।—चोखे०, पृ० ३०। मुँह सफेद होना = भय या लज्जा से चेहरे का रंग उड जाना। उदासी छा जाना। मुँह सिकोडना = आकृति से अप्रसन्नता या अमतीप प्रकट करना। नाक भी चढाना। (अपना) मुँह सुजाना = आकृति से असतीप या अप्रसन्नता प्रकट करना। नाराजो जाहिर करना। किसी का मुँह सुजाना = थप्पड़ मार मगरकर मुँह लाल करना। मुँह सुर्ख होना = क्रोध के मारे चेहरा तमतमाना। गुस्से से चेहरा लाल हाना। मुँह सूखना = भय या लज्जा आदि से चेहरे का तज जाता रहना।

४. किसी पदार्थ के ऊपरी भाग का विवर जो आकार आदि में मुँह से मिलता जुलता हो। जैसे,—इस बरतन का मुँह बाँधकर रख दो। ५. सुराख। छेद। छद्र। जैसे,—दाँदन में इस फोडे में मुँह हो जायगा। ६. मुलाहजा। मुरव्वत। लिहाज। जैसे,—हमें तो खाली तुम्हारा मुँह है, उसमें तो हम कभी बात ही नहीं करते।

थौ०—ह मुलाहजा।

मुहा०—मुँह करना = मुलाहजा करना। ख्याल करना। जैसे,—घनवानो का तो सभी लोग मुँह करते हैं, पर गरीबो को कोई नहीं पूछता। मुँह देखे का = जो हार्दिक न हो, केवल ऊपरी या दिखायी हो। जो केवल सामना होने पर हो। मुलाहजे का। मुरव्वत का। जैसे,—(क) आपका प्रेम तो मुँह देखे का है। (ख) ये सारी बातें मुँह देखे की हैं। मुँह पर जाना = किसी का ध्यान करना। लिहाज करना। जैसे,—मैं तुम्हारे मुँह पर जाता हूँ, नहीं तो अभी इसकी गत बनाकर रख देता। मुँह मुझाहजे का = जान पहचान का। परिचित। मुँह रखना = किसी का लिहाज रखना। ध्यान रखना। जैसे,—आप इतनी दूर से चलकर आए हैं, आपका मुँह रखो।

७. योग्यता। सामर्थ्य। शक्ति। जैसे,—तुम्हारा मुँह नहीं है कि तुम उसके सामने जाओ।

मुहा०—(अपना) मुँह तो देखो = पहले यह तो देखो कि इस योग्य हो या नहीं। (व्यग्य)। मुँह देखकर बात करना =

किसी के साथ उसकी योग्यता के अनुसार बात करना।

८. साहस। हिम्मत।

मुहा०—मुँह पडना = साहस होना। हिम्मत होना। जैसे,—उनके सामने कुछ कहने का भी तो मुँह नहीं पडता।

९. ऊपरी भाग। उपर की सतह या किनारा।

मुहा०—मुँह तक आना या भरना = पूरी तरह से भर जाना। लजालव होना। जैसे,—तालाव में पानी मुँह तक आ गया है।

मुँहअंधेरे—क्रि० वि० [हि०] बहुत सवरे। तडके।

मुँहअखरी—वि० [हि० मुँह + अखर] जो केवल मुँह से कहा जाय, लिखा न जाय। जवानी। शाब्दिक।

मुँहउजाले—क्रि० वि० [हि०] पी फटते। बहुत सवरे।

मुँहकाला—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + काला] १ अप्रतिष्ठा। बेहज्जती। २ बदनामी। ३ एक प्रकार की गाली। जैसे,—जा तेरा मुँहकाला हो।

मुँहचग—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] एक बाजा। दे० 'पुरचग'।

मुँहचटौवल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह + चाटना + औवल (प्रत्य०)] १ चुवन। चूमाचाटी। २ वक्रवक्र। वक्रवाद।

मुँहचोर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + चोर] वह जो दूसरों के सामने जाने से मुँह छिपाता हो। लोगों के सामने जाने में सकोच करनेवाला।

मुँहचोरई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] मुँह चुराने की क्रिया या भाव। मुँहचोर का क्रिया या स्थिति।

मुँहचोरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] मुँहचोर होना।

मुँहछुआई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह + छूना + आई (प्रत्य०)] केवल मुँह से छूने के लिये, ऊपरी मन से कुछ कहना।

मुँहछुट—वि० [हि० मुँह + छुटना] जिसका मुँह थोड़ी या कटु बातें कहने के लिये खुला रहे। मुँहफट।

मुँहजली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह + जली] [पुं० मुँहजला] स्त्रियों की गाली। जले मुँहवाली। मुँहभौंसी। उ०—यही तुम्हारा दर्शन है। यहाँ इस मुँहजली को लेकर पडे हो।—आकाश०, पृ० ६८।

मुँहजोर—वि० [हि० मुँह + जोर] १ वह जो बहुत अधिक बोलता हो। वक्रवादी। २ दे० 'मुँहफट'। ३ जो जल्दी किसी के वश में न आता हो। तेज। उद्दंड। जैसे, मुँहजोर घोडा।

मुँहजोरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँहजोर + ई (प्रत्य०)] १. मुँहजोर होने की क्रिया या भाव। २. तेजी। उद्दंडता।

मुँहभौंसा, मुँहभौंसा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + भौंसना] [स्त्री० मुँहभौंसी, मुँहभौंसी] स्त्रियों की गाली। मुँहजला। उ०—परतु यदि उस मुँहभौंसे रोज को पा गई तो ताप, बहुत या तलवार से सच्चा नाम बतलाए विना न मानूँगी।—भौंसी०, पृ० ३५०।

मुँहड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह] दे० 'मोहरी'। उ०—यह सबी मुँहड़ी का पायजामा?—प्रेमघन०, भा० २, पृ० ८७।

मुँहदिवरावनी ॐ [हि० मुँह + दिखराना] दे० 'मुँह-दिखाई' ।

मुँहदिवलाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह + दिखलाना] दे० 'मुँह-दिखाई' ।

मुँहदिखाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह + दिखाई] १ नई वधू का मुँह देखने की रस्म । मुँहदेखनी । २ वह धन जो मुँह देखने पर वधू को दिया जाय ।

मुँहदेखनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मुँहदिखाई' ।

मुँहदेखा—वि० [हि० मुँह + देखा] [स्त्री० मुँहदेखी] १ केवल सामना होने पर होनेवाला (काम या व्यवहार) । जो हार्दिक या आतुरिक न हो । जो किसी को केवल सतुष्ट या प्रसन्न करने के लिये हो । जैसे, मुँहदेखी बात । २ सदा आज्ञा की प्रतीक्षा में रहनेवाला । सदा मुँह ताकता रहनेवाला ।

मुँहनाल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह + नाल (= नली)] १ घातु की बनी हुई वह नली जो हुक्के की सटक या नैचा आदि के अगले भाग में लगा देते हैं और जिसे मुँह में लगाकर धूम्रौं खींचते हैं । २ घातु का वह टुकड़ा जो म्यान के निरे पर लगा होता है ।

मुँहपटा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + पट्टा] घोड़े के मुँह पर लगाया जानवाला एक साज जिस सिरवद भी कहते हैं ।

मुँहपड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + पटना] वह जो सब लोगों के मुँह पर हो । प्रासन्न । मशहूर । (कव०) ।

मुँहपातर ॐ [हि० मुँह + पातर (= पतला)] मुँह का हलका । कसा मुनी हुई गोप्य बात को दूसरे से कह देनावाला ।

मुँहफट—वि० [हि० मुँह + फटना] जो अपनी जवान को वश में न रख सके और जो कुछ मुँह में आवे कह दे । ओछी या कटु बात कहने में सकोच न करनेवाला । जिसकी बागी सयत न हो । बालने में इस बात का विचार न करनेवाला कि कोई बात किसी को बुरी लगेगी या भली । बदजवान ।

मुँहवद—वि० [हि० मुँह + वद] १ जिसका मुँह वद हो, खुला न हो । जैसे, मुँहवद बोलल । २ अविश्वसित । जो खिला न हो ३ कुँभारी । अक्षतयोनि । (वाजारू) ।

मुँहबँधा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + बँधना] एक प्रकार के जैन साधु जो प्रायः मुँह पर कपड़ा बाँधे रहते हैं ।

मुँहबोला—वि० [हि० मुँह + बोलना] (सववी) जो वास्तविक न हो, केवल मुँह से कहकर बनाया गया हो । वचन द्वारा निरूपित । जैसे, मुँहबोला भाई, मुँहबोली बेटी ।

मुँहभर—क्रि० वि० [हि०] अक्षी तरह । ठीक ढग से । जैसे, मुँहभर बोलना या बात करना ।

मुँहभराई—सञ्ज्ञा स्त्री० [मुँह + भरना + आई (प्रत्य०)] १ मुँह भरने की क्रिया या भाव । २ वह धन आदि जो किसी का मुँह वद करने के लिये, उसे कुछ कहने या करने से रोकने के लिये, दिया जाय । रिश्वत । धूस ।

मुँहलगा—वि० [मुँह + लगना] सिरचढा । शोख । ढाँठ ।

क्रि० प्र०—लेना ।—देना ।

मुँहमांगा—वि० [हि० मुँह + मांगना] अपनी इच्छा के अनुसार । अपने मांगने के अनुमार । इच्छानुकूल । जैसे, मुँहमांगा वर पाना, मुँहमांगी मुराद पाना, मुँहमांगा दाम पाना । उ०—(क) मुँहमांगी मोन नहीं मलती । (कहा०) । (ख) शुभे, और क्या कहूँ, मिले मुँहमांगा तुम्हारे ।—माफत, पृ० ४०६ ।

मुँहाचही ॐ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह + चाहना] परस्पर की प्रेम-पूर्ण बात । प्रेमी प्रेमिका का एक दूसरे से बालचाल करना । उ०—मुँहाचही चुकितन तव कीनी ।—सूर० (राधा०), पद १२६७ ।

मुँहाचुहा ॐ—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] मुँह देखे की बात । चुभने या लगनेवाली बात । उ०—नृपति वचन यह मत्राने मुनायो । मुँहाचुही संनापति कीन्ही सकटें गर्व बढ़ायो ।—सूर०, १०६१ ।

मुँहामुँह—क्रि० वि० [हि० मुँह + मुँह] मुँह तक । अदर से । बलकुन ऊपर तक । लवालम । भरपूर । जैसे,—(क) गगरा मुँहामुँह तो भरा ह, और पानी क्यों ढालते हो ? (ख) अब की एक ही वषा में तालाव मुँहामुँह भर गया ।

मुँहासा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + आसा (प्रत्य०)] मुँह पर के वे दाँते या फुसियाँ जो युवावस्था में निकलता ह और यौवन का चिह्न मानी जाता ह । जैसे,—बूढे मुँहासे, लोग देखें तमामे । (कहा०) ।

विशेष—मुँहासों के निकलने से चेहरा कुछ भद्दा हो जाता है । इन्हें 'ढाडमा' भा कहते ह । ये केवल युवावस्था में ही २० से २५ वष तक प्रकट होते हैं, इसके पूव या पर बहुत कम रहते ह ।

मु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ महेश । २ वधन । ३ श्रीवर्द्धिक चिता । ४. लालमायुक्त भूरा वा गिगल रग । ५. मुक्त । मोक्ष [को०] ।

मुअज्जन—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअज्जन] वह जो मसजिद में नमाज के समय प्रजापन देना ह । नमाज के लिये सब लोगों को पुकारनेवाला ।

मुअज्जम—वि० [अ० मुअज्जम] [वि० स्त्री० मुअज्जमा] पूज्य । वुर्जुग । महान् । श्रेष्ठ । उ०—मुअज्जम इसमें अंगाली हमेहा । बलियाँ मव मिल किये हैं दर वजोफा ।—दक्खिनो०, पृ० ११४ ।

मुअज्जिज—वि० [अ० मुअज्जिज] प्रतिष्ठेन । इज्जतदार ।

मुअज्जिन—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअज्जिन] दे० 'मुअज्जन' । उ०—बजी न मदिर में घाडयानो, चढी न प्रतिमा पर माला, बँडा अपने भवन मुअज्जिन देकर मस्जिद में ताला ।—मधुशाला, पृ० २० ।

मुअत्तल—वि० [अ०] १ जिनके पास काम न हो । खाली । २ जो काम से कुछ समय के लिये, दडस्वरूप, अलग कर दिया गया हो ।

क्रि० प्र०—फरना ।—होना ।

मुअत्तली—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुअत्तल + ई (प्रत्य०)] १ मुअत्तल

होने का भाव । वेकारी । २ काम से कुछ दिन के लिये अलग कर दिया जाना ।

मुअद्द—वि० [अ०] गर्णित । गिना या शुमार किया हुआ ।

मुअद्दव—वि० [अ०] शिष्ट । अदववाला । सम्य [को०] ।

मुअद्दा—वि० [अ०] अदा किया हुआ । शोधित [को०] ।

मुअन्नस—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] (व्याकरण मे) स्त्रीलिंग ।

मुअम्मर—वि० [अ०] वयोवृद्ध । बडी आयुवाला । वृद्ध ।

मुअम्मा—सञ्ज्ञा पु० [अ०] १ रहस्य । भेद ।

मुहा०—मुअम्मा खुलना या हल होना = रहस्य खुलना । भेद प्रकट होना ।

२, पहली । उ०—ख्याल के बाहर की बातें भला कोई क्यों कर तोले । ताकत क्या है, मुअम्मा तेरा कोई हल कर जो ले । —भारतेंदु प्र०, भा० २, पृ० १६४ । ३ घुमाव फिराव की बात । ऐसी बात जो जल्दी समझ में न आवे ।

मुअल्लक—वि० [अ० मुअल्लक] अघर में लटका हुआ । उ०—उठा उठाकर ले को यूसुफ मुअल्लक । अपम के हात के ऊपर इमलक । —दक्खिनी०, पृ० ३४२ ।

मुअल्ला—वि० [अ०] १ उत्तुंग । श्रेष्ठ । ऊँचा । आला । २ उच्च-पदस्थ । ऊँचे मरतवेवाला ।

मुअल्लिम—सञ्ज्ञा पु० [अ० मुअल्लिम] [स्त्री० मुअल्लिमा] अध्यापक । शिक्षा देनेवाला । शिक्षक ।

मुअा—वि० [सं० मृतक, प्रा० मुअा] [वि० स्त्री० मुअी] १ मृत । मरा हुआ । गतप्राण । उ०—मुए जिआए भालुकपि, अरघ विप्र को पूत । मुमिरहु तुलसी ताहि वू जाको मारति दूत । —तुलसी प्र०, पृ० १७६ । २ निगोडा । लुद्र । (वस्तु वा व्यक्ति के लिये स्त्रियों द्वारा प्रयुक्त) । उ०—(क) और मुए पहाड पर रखा ही क्या है आखिर ?—सैर० पृ० १५ । (ख) खुदा जाने मुइयाँ मदीं पर क्या जादू कर देती है कि विलकुल उनके बस में हो जाते हैं ।—सैर०, पृ० १४ ।

मुअाइना—सञ्ज्ञा पु० [अ० मुअाइनह्] दे० 'मुअायना' ।

मुअाफ—वि० [अ० मुअाफ] दे० 'माफ' । उ०—जब सरकार आपको मुअाफ कर देगी तो मुकदमा कैसे चलाएगी ।—गवन, पृ० २८६ ।

मुअाफकत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुअाफकत] १. मुअाफिक या अनुकूल होने का भाव । २ साथ । दोस्ती । मेल जोल । हेल मेल ।

यौ०—मेल मुअाफकत ।

मुअाफिक—वि० [अ० मुअाफिक] १ जो विरुद्ध न हो । अनुकूल । २ सदृश । समान । ३ ठीक ठीक । न अधिक, न कम । बराबर । ४ मनोनुकूल । इच्छानुसार ।

मुअाफिकत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुअाफिकत] १ अनुरूपता । २ अनुकूलता । ३ मित्रता । दोस्ती ।

यौ०—मेल मुअाफिकत ।

क्रि० प्र०—करना । रखना ।

मुअाफी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुअाफी] दे० 'माफी' ।

मुअाफीनामा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअाफीनामह्] माफीनामा । क्षमापत्र । उ०—जब सरकार आपको मुअाफ कर देगी तो मुकदमा कैसे चलाएगी । आपको तहरीरी मुअाफीनामा दिया जायगा ।—गवन, पृ० २८६ ।

मुअामला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअामला] दे० 'मामला' ।

यौ०—मुअामलादाँ = मुअामले की समझनेवाला । दूरदर्शी । मुअामला ना दाँ = जो मामला न समझे । बेवकूफ । मुअामला-फहम, मुअामलागनास, मुअामलासज = दे० 'मुअामला दाँ' ।

मुअायना—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअायना] देखनाल । पर्यवेक्षण । जाँच पड़ताल । निरीक्षण ।

मुअालिज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअालिज] इलाज करनेवाला । चिकित्सक ।

मुअालिजा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअालिजह्] इलाज । चिकित्सा ।

यौ०—इलाज मुअालिजा ।

मुअावजा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअावजह्] १ बदला । पलटा । २ वह धन जो किसी कार्य अथवा हानि के बदले में मिले । ३ वह रकम जो जमींदार को उम जमीन के बदले में मिलती है, जो किसी सार्वजनिक काम के लिये कानून की सहायता से ले ली जाती है ।

क्रि० प्र०—दिलाना ।—देना ।—पाना ।—मिलना ।

मुअाहिदा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुअाहिदा] पक्की बातचीत । दृढ निश्चय । कौल करार ।

मुऐयन—[वि० अ०] नियत । मुकर्रर । निश्चित । उ०—कोई उम्मीद बर नहीं आती । कोई मूरत नजर नहीं आती । मौत का एक दिन मुऐयन है । नींद क्यों रात भर नहीं आती ।—कविता० को०, भा० ४, पृ० ४७२ ।

मुकद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकन्द] १ कुंदरू । २ प्याज । ३ साठी धान ।

मुकदक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुन्दक] प्याज । २ एक प्रकार का साठी धान ।

मुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गोमय की गव [को०] ।

मुकट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुट] दे० 'मुकुट' । उ०—कृडल मडित गढ सुदेश । मनिमय मुकट मु धूर्धर केश ।—नद० प्र०, पृ० २६७ ।

मुकटा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार की रेशमी धोती जो प्रायः पूजन या भोजन आदि के समय पहनी जाती है ।

मुकट्टु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुट] दे० 'मुकुट' । उ०—मुकुट्टय मयूर चद्र सीसय मुलप्य ।—पृ० रा०, २।३२८ ।

मुकत^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुक्ता] दे० 'मुक्ता' । उ०—कचन माल, मुकत की माल । फिनमिलात छवि छती विमान ।—नद० प्र०, पृ० २२२ ।

यौ०—मुकतफल = मुक्ताफल । मोती । उ०—फवै सवापरा मुकत-
फल मैंगल कुभ मकार ।—त्रांकी० ग्र०, भा० १, पृ० २४ ।

मुकतई^④—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुक्ति] मुक्ते । छुटकारा । उ०—तूँ
मति मानै मुकतई किएँ कपट चित कोट । जो गुनही तो
राखिये आंखिनु माँझ अगोटि ।—विहारो (शब्द०) ।

मुकता^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्ता] दे० मुक्ता^१ । उ०—कलंगी सडक
सेत गजगाहँ । मालनि जटित मज्जु मुकता हैं ।—हम्मीर०,
पृ० ३ ।

मुकता^१—वि० [हिं० अ (प्रत्य०) + मुकना (= समाप्त होना)] [वि०
स्त्री० मुक्ती] जो जल्दी समाप्त न हो । बहुत अधिक । यथेष्ट ।
जैसे,—उनके पास मुक्ते कपडे हैं, कहाँ तक पहनेंगे ।

मुकतालि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुक्तावली] मोतियों की लड़ी । मुक्ता-
वलि । उ०—हूँ कपूर मनियय रही मिलि तन दुति मुकतालि ।
छिन छिन खरी विचन्धिनी नखति छाडि तिनु थालि ।—
विहारी (शब्द०) ।

मुकति^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुक्तिका] १ मोती । उ०—अधरत पर
बेसर सरस लुरकत लुरक बिसाल । राखन हेन मराल जनु
मुकति चुगावति बाल ।—स० सतक, पृ० ३८६ ।

मुकति^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुक्ति] छुटकारा । मोक्ष । मुक्ति । उ०—
सु आधीन उपराति मुकति नाहीं ।—पोद्दार अभि० ग्र०,
पृ० ४८० ।

मुकत्तर—वि० [अ० मुकत्तर] १ निथारा या साफ किया हुआ ।
२ बूँद बूँद करके टपकाया हुआ [को०] ।

मुकत्ता—वि० [अ० मुकत्तअ] १ काट छाँटकर दुस्त किया हुआ ।
ठीक तरह से बनाया हुआ । जैसे, मुकत्ता दाढ़ी । २ सम्य ।
शिष्ट । जैसे, मुकत्ता सूरत ।

मुकदमा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुकदमह्] १. दो पक्षों के बीच का घन,
अधिकार आदि से सबघ रखनेवाला कोई भगवा अथवा किसी
अपराध (जुर्म) का मामला जो निबटारे या विचार के लिये
न्यायालय में जाय । व्यवहार या अभियोग । जैसे,—वह वकील
जो मुकदमा हाथ में लेता है, वही जीतता है ।

क्रि० प्र०—ठठाना ।—खड़ा करना ।—चलना । चलाना ।—
जीतना । हारना ।

मुहा० = मुकदमा लडना = मुकदमे में अपने पक्ष में प्रयत्न करना ।
२ घन का अधिकार आदि पाने के लिये अथवा किए हुए अपराध
पर दंड दिलाने के लिये किसी के विरुद्ध न्यायालय में कार्रवाई ।
दावा । नालिश ।

क्रि० प्र०—दायर करना ।

यौ०—मुकदमेबाजी ।

३ किसी पुस्तक को प्रस्तावना । भूमिका । प्राक्कथन (को०) ४
काम । कार्य (को०) ।

मुकदमेबाज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुकदमा + फ्रा० बाज (प्रत्य०)] वह
जो प्रायः मुकदमें लडा करता हो ।

मुकदमेबाजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुकदमा + फ्रा० बाजी] मुकदमा
लडने का काम ।

मुकदम^१—वि० [अ० मुकदम] ? प्राचीन । पुराना । २ सर्वश्रेष्ठ ।
३ जरूरी । आवश्यक ।

क्रि० प्र०—जानना ।—समझना ।

मुकदम^१—सञ्ज्ञा पुं० १ मुखिया । नेता । उ०—राजा एक पचीस
तिलगा, पाँच मुकदम मो पचरगा ।—कवीर० श०, भा० १,
पृ० ३२ । २ रान का ऊपरी भाग जो कूल्हे से जुडा होता है ।
(कमाई) ।

मुकदमा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुकदमह्] दे० 'मुदकमा' ।

मुकदर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुकदर] प्रारम्भ । भाग्य । तकदीर ।

मुहा०—मुकदर आजमाना = भाग्य की परीक्षा करना । मुकदर
चमकना = भाग्योदय होना ।

मुकदस—[अ० मुकदस] पावेन । शुचि । पाक ।

यौ० मुकदम फिताव = ऐसी धर्मपुस्तक जो अपीक्षेय मानी
जानी हो । उ०—मुकदम कुनुय वेद वानी बयान । जो देखे पडे
उनको हो मत्र गयान—कवीर० म०, पृ० ३८६ । मुकदस हस्ती =
पुनीतात्मा । महात्मा । मत पुरुष ।

मुकना^१—सञ्ज्ञा पुं० [म० मनाक, हिं० मुकना] दे० 'मुकुना' ।

मुकना^④—क्रि० अ० [सं० मुकत] १ मुक्त होना । छूटना । २
खतम होना । चुकना ।

मुकफफल—वि० [अ० मुकफफल] यथित । वद किया हुआ । जैसे,
मुकफफल दरवाजा, मुकफफल सडक [को०] ।

मुकम्मल—वि० [अ०] १ पूरा किया हुआ । जिममें कुछ भी
करने को बाकी न हो । मव तरह से तैयार । २ पूर्ण । समग्र ।
पूरा [को०] ।

मुकन्मिल—वि० [अ०] पूर्ण करनेवाला । पूरा करनेवाला । उ०—
मोहिउद्दीन है पीर मुकम्मिल अक्वल ।—दक्खिनी०,
पृ० ११४ ।

मुकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकर ?] कली । मुकुर । मुकुल । उ०—तरियल
ऐनक मुकर लगाई ! मन मोडै पुनि वास उडाई ।—घट०,
पृ० २१८ ।

मुकरना^१—क्रि० अ० [सं० मुकत (= नहीं) + करना] कोई बात कह-
कर उसमें फिर जाना । कही हुई बात से या किए हुए काम
से इनकार करना । नटना । जैसे—उनका तो यही काम है,
सदा कहकर मुकर जाते हैं ।

सथो० क्रि०—जाना । पटना ।

मुकरना^३—सञ्ज्ञा पुं० कहकर मुकर जानेवाला । वह व्यक्ति जो कहे और
फिर मुकर जाय ।

मुकरना^१—क्रि० अ० [सं० मुक्त] मुक्त होना । छूटना ।

मुकरनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुकरना] मुकरी या कह मुकरी नामक
कविता । विशेष दे० 'मुकरी' ।

मुकरवा—व्या पुं [अ० मुकरवा] बहुत बड़ी मगजिद या मुकवरे का वह स्थान जहाँ नमाज में तारीख बदलवाना गज होता है। उ०—मुनि बोल माहि रहो न जाई। देति मुकरवा ग्हा मुवाई। कवीर वी० (गिणु०), पृ० १८२।

मुकराना'—क्रि० म० [हि० मुकरना का सक० रूप] ? दूसरे को मुकरने में प्रवृत्त करना। २ दूसरे को भूठा बनाना। (क)।

मुकराना(०)—क्रि० म० [अ० मुक्क] मुक्क कराना। दुटाना। उ०—पिय जेहि बदि जोगिनि होई धावा। ही बौद नेउं पियहि मुकरावो।—जायगी (जन्द०)।

मुकरी—व्या स्त्री० [हि० मुकरना + ई (प्रत्य०)] एक प्रकार की कविता। कह मुकरी। वह कविता जिसमें प्रारम्भिक चरणों में कही हुई बात में मुकरकर उगके अंत में भिन्न प्रतिप्राय व्यक्त किया जाय। उ०—(क) वा तिन मोको चैन न आवे। वह मेरी तिन शान बुझाये। है पर गज गुन चारह वावो। ऐ मखि साजन ? ना मखि पानी। (ख) अण हिल मी मोहि हिलावे। बाका हिलना मोको भावे। हिल हिन के वह दृषा निमखा। ऐ मखि साजन ? ना मखि पना। (ग) गत नमद मरे पर आवे। मार भए वह घर उठ जाय। यह अनरज हे गज से चारा। ऐ मखि साजन ? ना मखि ताग। (घ) मारि रैन वह मो संग जागा। मोर भई तज जिछुडन लागा। बाके बिछुटत फाटे हिया। ऐ मखि साजन ? ना मखि दिया।

विशेष—यह कविता प्राय चार चरणा की होती है इसके पहले तीन चरण ऐसे होते हैं, जिनका आशय दो जगह घट सकता है। इनसे प्रत्यक्ष रूप में जिस पदार्थ का आशय निकलता है, चौथे चरण में किसी और पदार्थ का नाम लेकर, उसमें इनकार कर दिया जाता है। इस प्रकार मानो वही हुई बात में मुकरने एए कुल्ल और ही अभिप्राय प्राप्त किया जाता है। अरौर मुमरो ने इस प्रकार की बहुत सी मुकरियाँ कही हैं। इसके अंत में प्राय 'मखी' या 'मखिया' भी कहते हैं।

मुकरम—वि० [अ०] पूज्य। प्रतिष्ठित। सम्मानित [की०]।

मुकरर'—क्रि० वि० [अ०] दोबारा। फिर से। दूसरी बार।

मुहा०—मुकरर सिफरर = दूसरी और तीसरी बार फिर। कई बार।

मुकरर'—वि० [अ० मुकरर] जिसका इकगार किया गया हो। जो ठरवा गया हो। तय किया हुआ। निश्चित। जीये,—इस नाम का उनमें भी रखा मुकर हुआ है। २. जो तैनात किया गया हो। नियुक्त। जं,—किनी आइनी थो इस नाम पर मुकरर कर रो।

मुकरर'—क्रि० वि० अवश्य ही। निरादेर।

मुकररा—व्या स्त्री० [अ० मुकरर] १ मुकरर होने की जिहा या धार। निगुक्ति। २ निवत गवहर। मानमुजारी। ३. निवत वान या कुत्त चादि।

मुकररि—वि० [अ०] आपण करनेवाला। अपना [की०]।

मुकल—व्या पुं [अ०] १ आराम। समकाल। २ दुगुण।

मुकलना(०)—क्रि० म० [अ० मुक्क, प्रा० कुक्क] छानना। मुक्क करना। प्रेषित करना। भेजना। उ०—मुकरने गज प्रियगज नख्य। मेरा नु पाइ उपर नू रण्य।—पृ० १०, ११९७।

मुकलई'—व्या स्त्री० [प्रा० मुक्कल] मुक्ति। मुक्तारा। उ०—अप की कर्हि पदगी मुनु ने मन पीरे, जो पदगी मुकई।—धरनी०, पृ० ४।

मुकलाना(०)—क्रि० म० [अ० मुक्क या मुक्कलान] मुक्क लाना। खोजना। खंडना। विनाशना। उ०—अरवर तीर परमिती धाई। सोवा छोरि नेउ मुकई।—जायगी (जन्द०)।

मुक्कलावा—व्या पुं [अ०] गीता। त्रिगणन। उ०—अर दिनय पर गपना मुक्कलावा (गीता) नेने को गज।—तारी, म०, पृ० १०३।

मुक्कवी—वि० [अ० मुक्कवी] तापन उदात्तवाला। वनधर। पुष्टिवाक्य।

मुक्कवला—व्या पुं [अ० मुक्कवला] ? आरामता नामक। २ मुठभेद। ३ बगवरी। नमागण। ४ तुक्का। ५ मित्राण। ६ प्रतियोगिता। प्रतिद्विष्टा (की०)। ७ विशेष। उदाई।

मुहा०—मुक्कवले पर घाना = विगण या प्रति द्विष्टा रण अथवा लठने के लिये नामने घाना।

मुक्कविल'—क्रि० वि० [अ० मुक्कविल] गडुल। आराम नामने। उ०—लठना न मुक्कविल कमी जिनहार गवरगण।—आर। पु०, भा० १, पृ० ४२२।

मुक्कविल'—वि० ? आरामनेवाला। २ गमल। बगवरी ग। परावरी करनेवाला।

मुक्कविल'—व्या पुं ? प्रतिद्विष्टी। २ अतु। दुस्वग।

मुक्काम—व्या पुं [अ० मुक्काम] १ ठरने का स्थान। त्रिगण। पटाण। २ ठरने की क्रिया। ठरना उलटा। त्रिगण।

मुहा०—मुक्काम बोलना = धिक्काना या धमने अर्थात् धर्म-वाग्विवा या मंत्रिवा को ठरने की आज्ञा देना। मुक्काम चैना = किसी क गज पर उमरे पर आरामपुरमी ठरना।

३ रहने का स्थान। पर। ४ अरार। मोत। ५ गजद का बोट करवा (मार्ग)। ६ मुक्की तापना में तापत की गमनवाक या त्रिवाक या त्रिवा। त्रिवाक। गायक की धरमवा-भूमि। उ०—इस मार्ग में कई पटाण २ दो, मुक्काम का भी २ इममें पटाण मुक्काम है 'तोय'।—आववा ३० (४०) पृ० ४४२।

वी०—मुक्कामे अकमुद्द = मज्ज स्थान। उरिष्ट स्थान। उ०—दम फिर मुक्काम मारुद उर विदिया।—आववा ३०, ४० २ पृ० १४२।

मुक्कियल—वि० [अ०] का प्रमाण या मंत्रि इत्यर्थ में गज की या विष्णु की भी कही है।

मुक्कियाना—क्रि० म० [अ० मुक्करी + श्याना (प्रत्य०)] १. श्याना

के शरीर पर मुक्कियों से बार बार आघात करना जिससे उसके अंगों की शिथिलता दूर हो। २ आटा गूँघने के उपरांत उमे नरम करने के लिये मुक्कियों से बार बार दबाना। ३. मुक्का लगाना या मारना। धूसे लगाना।

मुक्ति—वि० [अ० मुक्ति, मुक्ति] १ इकार कर देनेवाला। प्रतिज्ञा करनेवाला। २ किसी दस्तावेज या अरजीदावे आदि का लिखानेवाला, जिनके हस्ताक्षर से वह प्रस्तुत हो। (कच०)।

मुक्तीम—वि० [अ० मुक्तीम] १ कुछ दिनों के लिये कही ठहरा हुआ। २ निवासी। रहनेवाला [को०]।

मुकुटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मुकुटी] प्राचीन काल का एक प्रस्त्र।

मुकुट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुट] १ मुक्ति देनेवाले, विष्णु। २ पुराणानुसार एक प्रकार की निधि। ३ एक प्रकार का तल। ४ कुँदरू। ५ पारा। ६ सफेद कनेर। ७ गभारी नामक वृक्ष। ८ पोई का साग। ९ एक प्रकार का वाद्य। पटह। दुदुभि (को०)। १० साठी धान (को०)। ११ सगीत में ताल का एक प्रकार (को०)।

मुकुटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुटक] १ प्याज। २ साठी धान।

मुकुटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुकुटा] भेरी। दुदुभी (को०)।

मुकुट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुट्ट] १ कुँदरू। २ सफेद कनेर। ३ पारा। ४ गभारी। ५ पोई का साग।

मुकु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुक्ति। मोक्ष। २. छुटकारा। रिहाई।

मुकुट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का प्रसिद्ध शिरोभूषण जो प्रायः राजा आदि धारण किया करते थे।

विशेष—यह प्रायः बीच में ऊँचा और कंगूरेदार होता था और सारे मस्तक के ऊपर एक कान के पास से दूसरे कान के पास तक होता था। यह सोने, चाँदी आदि बहुमूल्य धातुओं का और कभी कभी रत्नजटित भी होता था। यह माथे पर आगे की ओर रखकर पीछे से बाँध लिया जाता था। इसमें कभी कभी किरोट भी खोसा जाता था।

पर्या०—मौलि। कोटीर। शेखर। अवतल। उत्तल।

२ पुराणानुसार एक देश का नाम।

मुकुट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० एक मातृगण।

मुकुटी^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुट्टि] वह जिसने मुकुट धारण किया हो।

मुकुटी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छोटिका। चूटकी (को०)।

मुकुटेकार्षापण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का राजकर जो राजा का मुकुट बनवाने के लिये लिया जाता था।

मुकुटेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक शिवालिंग का नाम। २ एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

मुकुट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जाति का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है।

मुकुत^१—वि० [सं० मुक्त] दे० 'मुक्त'। उ०—(क) मुकुत न भए हते भगवाना। तीनि जनम द्विज वचन प्रमाना।—मानस,

१।१२३। (ख) जाति हीन, अथ जनम महि, मुकुत कीनि असि नारि।—मानस, २।१५६।

मुकुत^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्त] मुक्ता। मोती।

मुकुता^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मुक्ता'। उ०—मनि मानिक मुकुता छवि जैमी। ग्रहि गिरि गज गिर मोह न तैसी।—मानस, १।११।

यौ०—मुकुतामाल=मोतियों की माला। उ०—ग्रहत वाहितो सग मुकुतामाल विनाल कर। केणव (णद०)। मुकुताहल=दे० 'मुक्ताहल'। उ०—मुकुताहल गुनगन चुनइ राम वनह मन तामु।—मानस, २।१०८।

मुकुनि^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुनि] दे० 'मुक्ति'। उ०—जमगन मुह मसि जग जमुना ती। जीवन मुकुति त्तु जनु कामी।—मानस, १।३१।

मुकुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मूत्र देखने का ङींगा।। झाईना। दर्पण। उ०—तव हरगन बोले मुमुकाई। निज मुख मुकुर बिलोकहु जाई।—मानस, १।१३५। २ वकुल का वृक्ष। मौलसिरी। ३ कुम्हार का वह डडा जिमने वह चाक चलाता है। ४ मलिनका। मोतियाँ। ५ कली। मुकुल। ६ वेर का पेड़।

मुकुल^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कली। २ शरीर। ३ आत्मा। ४ प्राचीन काल का एक प्रकार का राजकर्मचारी। ५ एक प्रकार का छद। ६ जमालगोटा। ७ सूमि। पृथ्वी।

मुकुल^३—सञ्ज्ञा पुं० दे० 'गुगुल'।

मुकुलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दती वृक्ष।

मुकुलाग्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का अल जो कली की आकृति का होता था।

मुकुलायित—वि० [सं०] दे० 'मुकुलित'।

मुकुलित—वि० [सं०] १ जिसमें कलियाँ झाई हो। २ कुछ खिली हुई। (कली)। ३ आधा खुला, आधा बंद। कुछ कुछ खुला ४. भाँकता हुआ। (नेत्र)।

मुकुली—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुलिन्] वह जिसमें कलियाँ झाई हो।

मुकुष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोठ।

मुकुष्टरू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोठ।

मुकुलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दती वृक्ष। अड़ी की जाति का एक वृक्ष। विशेष दे० 'दती'।

मुकेस^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकैश] दे० 'मुकैश'। उ०—सतगन नग पर वसन मुकेस राजै, एक सी प्रकासी गति दोनो चितचोर की।—पजनैस०, पृ० १।

मुक्का—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्का] [स्त्री० अक्षय० मुक्की] हाथ का वह रूप जो उँगलियों और अँगूठे को बंद कर लेने पर होता है और जिससे प्रायः आघात किया जाता है। बंधी मुट्टी जो मारने के लिये उठाई जाय।

मुहा०—मुक्का चलाना या मारना=मुक्के से आघात करना। मुक्का सा लगाना=हादिक कष्ट पहुँचाना।

यौ०—मुक्केबाजी।

मुक्काना—क्रि० स० [सं० मुक्क, प्रा० मुक्क] मुक्त करना। भोजना। छोड़ना। उ०—मुक्काए मतिवतिनी, नृप कग्गद दै ह्थ्य। पूजा मिमि वाला सुमर सुभुयान मिलि तथ्य।—पृ० रा०, २५।२६६।

मुक्काम—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुक्काम] दे० 'मुक्काम'। उ०—दस कोस जाय मुक्काम कीत। बिच गाम नगर पुर बूट लीन।—पृ० रा०, १।४३७।

मुक्की—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुक्का + ई (प्रत्य०)] १. मुक्का। घूना। २. वह लडाई जिसमें मुक्की की मार हो। उ०—मुक्की मु किज्जे मार, तहवीर दुट्टहि भार।—पृ० रासो, पृ० १५२। ३. आटा गुँवने के उपरांत उसे मुठियों से बार बार दवाना जिससे आटा नरम हो जाता है।

क्रि० प्र०—देना।—लगाना।

४ हाथ पैर आदि दवाने की क्रिया। मुठियाँ बाँधकर उससे किसी के शरीर पर धीरे धीरे आघात करना, जिससे शरीर की शिथिलता और पीडा दूर होती है।

क्रि० प्र०—मारना।—लगाना।

मुक्कवाजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुक्का + वाजी (प्रत्य०)] मुक्को की लडाई। घूसेवाजी। घूसमघूसा।

मुक्कैश—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुक्कैश] १. चाँदी या सोने का एक विशिष्ट रूप में काटा हुआ तार जिसे बादला कहते हैं। २. मुनहले या रुपहले तारों का बना हुआ कपडा। ताश। तामामी। जरबपत।

मुक्कैशी—वि० [अ० मुक्कैश + ई (प्रत्य०)] १. बादला का बना हुआ। २. जरी या ताश का बना हुआ।

मुक्कैशी गोखरू—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुक्कैशी + गोखरू] एक प्रकार का महीन गोखरू जो तारों को मोड़कर बनाया जाता है।

मुक्ख—वि० [सं० मुख] दे० 'मुख'। उ०—तजी बाल क्रीडा जल त्यागि भग्गी। जही ओर दीरी भयी मुक्ख अग्गी।—ह० रासो, पृ० ३८।

मुक्खली—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुख + ई (प्रत्य०)] गोल कवूतर से मिलता जुलता एक प्रकार का कवूतर जो प्रायः उन्ही के साथ मिलकर उड़ता है और अपनी गरदन जरा कसे रहता है। २. वह कवूतर जिसका सारा शरार तो काला, हरा या लाल हो, पर जिसके सिर और डैनों पर एक या दो सफेद पर हो।

मुक्त्त—वि० [सं०] १. जिसे मोक्ष प्राप्त हो गया हो। जिसे मुक्ति मिल गई हो। जैसे,—काशी में मरने से मनुष्य मुक्त हो जाता है। २. जो बंधन से छूट गया हो। जिसका छुटकारा हो गया हो। जैसे,—वह कारागार से मुक्त हो गया है। ३. जो पकड या दवाव से इस प्रकार अलग हुआ हो कि दूर जा पड़े। चलने के लिये छूटा हुआ। फँका हुआ। क्षिप्त। जैसे, वाण का मुक्त होना। ४. बंधन से रहित। बंधन से छूटा हुआ। छुला हुआ।

मुक्त्त—सञ्ज्ञा पुं० १. पुराणानुसार एक प्राचीन ऋषि का नाम। २. वह जिसने मुक्ति प्राप्त कर ली हो [को०]।

मुक्त्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्त्ता] दे० 'मुक्त्ता'। उ०—हेम हीर हार मुक्त्त चीर चार साजि के।—केशव (शब्द०)।

मुक्त्तकचुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्त्तकचुक] वह साँप जिसने अभी हाल में केंचुली छोड़ी हो।

मुक्त्तकंठ—वि० [सं० मुक्त्तकंठ] १. जो जोर से बोलता हो। चिल्लाकर बोलनेवाला। २. जो बोलने में वेधक हो। जिससे कहने में आगा पीछा न हो। जैसे,—मुक्त्तकंठ होकर कोई बात स्वीकार करना।

मुक्त्तक—सञ्ज्ञा म० [सं०] १. प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र जो फेंककर मारा जाता था। २. एक प्रकार का काव्य जो एक ही खंड या पद्य में पूरा होता है। वह कविता जिसमें कोई एक कथा या प्रसंग कुछ दूर तक न चले। फुटकर कविता। 'प्रबंध' का उलटा जिसे 'उद्गट' भी कहते हैं। उ०—मुक्त्तक या उद्भट में जो रस की रसम अदा की जाती है उसमें ग्रीष्म दशा का समावेश नहीं होता।—रस०, पृ० १८६।

मुक्त्तक ऋण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह ऋण जिसकी लिखा पढी न हुई हो। जवानी बातचीत पर दिया हुआ ऋण।

मुक्त्तकच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वौद्ध का नाम।

मुक्त्तकच्छ—वि० जिसकी लॉग या काछ खुली हो [को०]।

मुक्त्तकुतला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुक्त्तकुतला] बिखरे बालोवाली। जिसके बाल इधर उधर बिखरे हो। उ०—धुले घूसरित, मुक्त्तकुतला किसके चरणों की दासी?—वीणा, पृ० ११।

मुक्त्तकेश—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मुक्त्तकेशी] जिसके बाल बँधे या गुँथे न हो [को०]।

मुक्त्तकेशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] काली देवी का एक नाम।

मुक्त्तचदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्त्तचन्दन] लाल चदन।

मुक्त्तचदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुक्त्तचन्दा] चिचा नामक साग। चट्ट।

मुक्त्तचतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्त्तचतुस्] सिंह। शेर।

मुक्त्तचेता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्त्तचेतप्] वह जिममें मोक्ष प्राप्त करने की बुद्धि आ गई हो।

मुक्त्तछद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्त्त + छन्द] छद् शास्त्र के नियमों के विपरीत छद्। अतुकात छद्। उ०—तब भी मैं इसी तरह समस्त, कवि जीवन में व्यर्थ भी व्यस्त लिखता अबाध गते मुक्त छद्।—अनामिका, पृ० १२२।

मुक्त्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. मुक्त होने का भाव। मुक्ति। मोक्ष। २. छुटकारा।

मुक्त्तत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मुक्त्ता' [को०]।

मुक्त्तद्वार—वि० [सं०] १. जिसका द्वार खुला हो। २. निर्बाध।

मुक्त्तनिर्मोक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह साँप जिसने अभी हाल में केंचुली छोड़ी हो।

मुक्त्तपत्राढ्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तालीश।

मुक्तपुरुष—सज्ञा पुं० [सं०] वह जिसकी आत्मा मुक्त हो। वह जिसका मोक्ष हो गया हो।

मुक्तफला—सज्ञा स्त्री० [देश० ?] माववी। उ०—वासती पुनि पुडका, मुक्तफला अरु नार्क।—नद प्र, पृ० १०६।

मुक्तबधन—वि० [सं० मुक्तबन्धन] प्रतिबंध या बधन से मुक्त [को०]।

मुक्तबधना—सज्ञा स्त्री० [सं० मुक्तबन्धना] १ एक प्रकार का मोतिया। २ वेला।

मुक्तबुद्धि—सज्ञा पुं० [सं०] वह जिसमें मुक्ति प्राप्त करने के योग्य बुद्धि आ गई हो। मुक्तचेता।

मुक्तमाता—सज्ञा स्त्री० [सं०] सीप। शक्ति।

मुक्तमाला—सज्ञा स्त्री० [सं० मुक्ता+माला] मुक्ता की माला। मोतियों की माला। उ०—लिए सु दोग बज्र लाल एक मुक्तमालयं।—ह० रासो, पृ० ५१।

मुक्तरसा—सज्ञा स्त्री० [सं०] रासना।

मुक्तलज्ज—वि० [सं०] १ जिसने लज्जा का परित्याग कर दिया हो। २ निर्लज्ज। बेहया।

मुक्तवर्चा—सज्ञा स्त्री० [सं०] अद्वितमजरी। रुद्रा।

मुक्तवर्षीय—सज्ञा पुं० [सं०] कुप्पा।

मुक्तवसन—सज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिसके शरीर पर कोई वस्त्र न हो। २ वह जिसने वस्त्र पहनकर छोड़ दिया हो। नगा रहनेवाला। ३ जैन यतियों या सन्यासियों का एक भेद।

मुक्तवास—सज्ञा पुं० [सं०] सीप। शक्ति।

मुक्तवेणी^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ द्रौपदी का एक नाम। २ प्रयाग का त्रिवेणी मगम।

मुक्तवेणी^२—वि० स्त्री० जिसकी वेणी बंधी न हो [को०]।

मुक्तव्यापार—सज्ञा पुं० [सं०] वह जिसका ससार के कार्यों या व्यापारों से कोई संबंध न रह गया हो। तसारत्यागी।

मुक्तशेषव—वि० [सं०] युवक। युवा। जो शिशुता की अवस्था को पार कर गया हो [को०]।

मुक्तशृंग—सज्ञा पुं० [सं० मुक्तशृङ्ग] रोहू मछली।

मुक्तसग—सज्ञा पुं० [सं० मुक्तसङ्ग] १ वह जो विषय वासना से रहित हो गया हो। २ परित्राजक।

मुक्तसार—सज्ञा पुं० [सं०] केले का पेड़।

मुक्तहरत—वि० [सं०] [सज्ञा मुक्तहरता] जो खुले हाथों दान करता हो। बहुत बड़ा दानी।

मुक्तहृदय—वि० [सं०] राग द्वेष के बधन से छूटा हुआ। स्थितप्रज्ञ। सत्वस्थ। उ०—जब कभी वह अपनी पृथक् सत्ता की धारणा से छूटकर अपने आपको विलकुल भूलकर विशुद्ध अनुभूति मात्र रह जाता है तब वह मुक्तहृदय हो जाता है।—रस०, पृ० ५।

मुक्ताबर—सज्ञा पुं० [सं० मुक्ताम्बर] दे० 'मुक्तवसन' [को०]।

मुक्ता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मोती। २ रासना। ३ वेश्या (की०)।

मुक्ताकलाप—सज्ञा पुं० [सं०] मोतियों का हार। मुक्ताहार [को०]।

मुक्ताकेशी—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बहुत बढ़िया बंगन।

मुक्तागार—सज्ञा पुं० [सं०] सीप। शक्ति।

मुक्तागुण—सज्ञा पुं० [सं०] मोतियों की लटी या माला।

मुक्तागृह—सज्ञा पुं० [सं०] सीप। शक्ति।

मुक्तात्मा—वि० [सं० मुक्तात्मन्] वह जिसकी आत्मा मुक्त हो। मोक्षप्राप्त। बधनमुक्त। निरासक्त।

मुक्ताना^१—क्रि० सं० [सं० मुक्त+हिं० आना (प्रत्य०)] बधन में छुड़ाना। मुक्त करना। मुक्ति दिलाना। उ०—गुरु है आप करम के माई। चेला को कैसे मुक्ताई।—घट०, पृ० २५२।

मुक्तापात—सज्ञा पुं० [सं० मुक्ता+हिं० पात (=पत्ता)] एक प्रकार की झाड़ी जिसके डठलों से सीतलपाटी नामक चटाई बनाई जाती है।

विशेष—यह झाड़ी पूर्व बगाल, आसाम और बरमा की नीची तर भूमि में अधिकता में होती है और प्रायः इसकी पत्तीरी लगाई जाती है।

मुक्तापुष्प—सज्ञा पुं० [सं०] कुद का पौधा या फूल।

मुक्ताप्रसू—सज्ञा पुं० [सं०] नीप। शक्ति।

मुक्ताप्रालव—सज्ञा पुं० [सं० मुक्ताप्रालम्ब] मोतियों का हार।

मुक्ताफल—सज्ञा पुं० [सं०] १ मोती। २ कपूर। ३ हरफारेवरी। लवनी फल। लवली फल। ४ एक प्रकार का छोटा लिसोडा।

मुक्ताभ—वि० [सं०] मोतियों की तरह चमकदार।

मुक्ताभा—सज्ञा स्त्री० [सं०] त्रिपुरमल्लिका। त्रिपुरमाली।

मुक्तामणि—सज्ञा पुं० [सं०] मोती।

यौ०—मुक्तामणिसर = मोतियों का हार।

मुक्तामय—वि० [सं०] मोतियों से युक्त। मोती का। उ०—तुम्हारा मुक्तामय उपहार, हो रहा अश्रुकणों का हार।—भग्ना, पृ० २२।

मुक्तामाता—सज्ञा स्त्री० [सं० मुक्तामातृ] सीप। शक्ति।

मुक्तामोदक—सज्ञा पुं० [सं०] मोतीचूर का लड्डू।

मुक्तालता—सज्ञा स्त्री० [सं०] मोतियों का कठा।

मुक्तावली—सज्ञा स्त्री० [सं०] मोतियों की लड़ी। मुक्तामाल [को०]।

मुक्तावास—सज्ञा पुं० [सं०] सीप। शक्ति।

मुक्ताशुक्ति—सज्ञा स्त्री० [सं०] वह सीपी या शक्ति जिसमें मुक्ता होती है।

मुक्तासन—वि० [सं०] वह जो अपने आसन से उठ खड़ा हो। २. योग प्रक्रिया का एक आसन।

मुक्तास्फोट—सज्ञा पुं० [सं०] सीप। शक्ति।

मुक्ताहल^१—सज्ञा पुं० [सं० मुक्ताफल] मुक्ताफल। मोती। उ०—सहजार्ह जानहु मेहदी रची। मुक्ताहल लीन्हें जनु धुंधची।—जायसी (शब्द०)।

मुक्ति—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ छुटकारा। २ आजादी। स्वतंत्रता।

३ मोक्ष । ब्रह्मस्वरूप की प्राप्ति । उ०—अन्य रूप की त्यागन
जुक्ति । निज स्वरूप की प्राप्ति मुक्ति ।—नद० ग्र०, २१७ ।

मुक्तिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम जिसमें मुक्ति के
सवध मे मीमासा की गई है ।

मुक्तिक्षेत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वाराणसी । काशी । २ कावेरी
नदी के पास का एक प्राचीन तीर्थ जिसका दूसरा नाम
वकुलारण्य भी था ।

मुक्तितीर्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुक्ति देनेवाले, विष्णु । २ दे०
'मुक्तिधाम' ।

मुक्तिधाम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्तिधामन्] तीर्थ जहाँ मुक्ति प्राप्त
हो । मुक्तिदेनेवाला स्थान ।

मुक्तिपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुक्त करने का आदेश । छुटकारे का
परवाना ।

मुक्तिप्रद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हरा मूंग ।

मुक्तिप्रद—वि० मुक्ति देनेवाला ।

मुक्तिफौज—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुक्ति + फौज] ईसाइयो का एक सेवा
और धर्म प्रचार-कार्य करनेवाला सघटन (मालवेशन आर्मी) ।

मुक्तिमण्डप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विभिन्न देवस्थानो मे स्थित मण्डपाकार
स्थानविशेष ।

मुक्तिमती सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत के अनुसार एक नदी का
नाम ।

मुक्तिमार्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुक्ति पाने का मार्ग या साधन ।

मुक्तिमुक्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिलारस । सिल्हक ।

मुक्तिलाभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुक्ति । छुटकारा मिलना ।

मुक्तिसाधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुक्ति प्राप्त करने की कामना से
ईश्वर और आत्मा के स्वरूप का चिंतन करना ।

मुक्तिस्नान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ग्रहण की समाप्ति, मोक्ष के वाद किया
जानेवाला स्नान ।

मुक्ती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मुक्ति' । उ०—ब्राह्मण पूजे, होय न
मुक्ती ।—कवीर सा०, पृ० ८१६ ।

मुक्तेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक शिवलिंग का नाम ।

मुखड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुख + अडा (प्रत्य०)] झारी आदि टोटी-
दार वरतनो मे किया हुआ वह छेद जिसमें टोटी जड़ी
जाती है ।

मुखपच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखम्पच] भिक्षुक । याचक । फकीर ।

मुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुँह । आनन । २ घर का द्वार ।
दरवाजा । ३ नाटक मे एक प्रकार की सधि । ४ नाटक का
पहला शब्द । ५ किसी पदार्थ का अगला या ऊपरी खुला
भाग । ५ शब्द । ७. नाटक । ८. वेद । ९. पक्षी का चोच ।
१०. जीरा । ११. आदि । आरभ । १२. बड़हर । १३
मुरगावी । १४. किसी वस्तु से पहले पढनेवाली वस्तु । आगे
या पहले आनेवाली वस्तु । जैसे, रजनीमुख = सध्या काल ।

मुख—वि० प्रधान । मुख्य ।

मुहा०—मुख देखकर जीना = (किसी के) सहारे वा भरोसे
जीना । (किसी के) आसरे जीना । उ०—सब दिनों मुख
देख जीवट का जिए । लात अद कायरपने की क्यो सहे ।
—चुभते०, पृ० १३ । मुख पर ताला रहना = मुँह बंद रहना ।
कुछ न बोलना । उ०—चित फाटो देखे चिरत, सुनियो अपजस
मोर । रसिया मुख तालो रहे जाइ वाक्तो जोर ।—बाँकी०,
ग्र०, भा० २, पृ० ११ । मुख सूखना = मुरभा जाना । निराश
हो जाना । उ०—वे भला आप मूख जाते क्या । मुख न सूखा
जवाब सुखा सुन ।—चुभते०, पृ० १३ ।

मुखकमल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कमल के समान मुख [को०] ।

मुखकाति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुखकान्ति] मुख का सौंदर्य । मुख की
शोभा [को०] ।

मुखक्षुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दाँत ।

मुखखुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दात [को०] ।

मुखगधक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखगन्धक] प्याज ।

मुखग्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखाग्र] दे० 'मुखाग्र' । उ०—हजार कोटी
जु होइ रसना एक एक मुखग्र । इडा अरविबन जो वसै रसनानि
मडि समग्र ।—भिखारी० ग्र०, भा० १, पृ० २० ।

मुखग्रहण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुखचुवन [को०] ।

मुखचपल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो बहुत अधिक या बढ बढ-
कर बोलता हो । २. वह जो कट्टु वचन कहता हो ।

मुखचपलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ बहुत अधिक या बढ बढकर
बोलना । २ कट्टु भाषण ।

मुखचपला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] आर्या छंद का एक भेद ।

मुखचपेटिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कान के अदर का एक अणवयव ।
२. चाँटा । भापड [को०] ।

मुखचालि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्रारंभिक या परिचयात्मक नृत्य [को०] ।

मुखचित्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुख + चित्र] किसी पुस्तक के मुखपृष्ठ
पर या आरभ का चित्र ।

मुखचोरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जीभ । जिह्वा । २ फौज ।

मुखचूर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चेहरे पर लगाने का सुगंधित चूर्ण
वा चुकनी । मुँह पर लगाने का पाउडर [को०] ।

मुखज—वि० [सं०] मुँह से उत्पन्न ।

मुखज—सञ्ज्ञा पुं० १ ब्राह्मण (जो भगवान् के मुख से उत्पन्न माने
गए हैं) । २ दाँत [को०] ।

मुखजबाँजी(पुं०)—वि० [सं० मुख + बाँजी] मुँह जवानी ।
उ०—जिण विष मुखजबाँजी भूपत सुते सगली भाँत ।—रघु०
रू०, पृ० ८१ ।

मुखड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुख + हिं० डा (प्रत्य०)] मुख । चेहरा ।
आनन ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग प्राय बहुत ही सुदर मुख के लिये
होता है । जैसे, चाँद सा मुखड़ा ।

मुखतार—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखतार] १ जिसे किमी ने अपना प्रतिनिधि बनाकर कोई काम करने का अधिकार दिया हो।

यौ० मुखतार आम। मुखतार खास।

२ एक प्रकार के कानूनी सलाहकार और काम करनेवाले जो वकील से छोटे होने हैं और प्रायः छोटी अदालतों में फौजदारी या माल के मुकदमों लड़ते हैं।

मुखतारआम—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखतार + आम] वह गुमास्ता या प्रतिनिधि जिसे सब प्रकार के काम करने, विशेषतः मुकदमों आदि लड़ने का अधिकार दिया गया हो।

मुखतारकार—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखतार + कार] वह जो किसी काम की देखरेख के लिये नियुक्त किया गया हो।

मुखतारकारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुखतार + फा० कार + ई (प्रत्यय०)] १ मुखतारकार का काम या पद। २ दे० 'मुखतारी'।

मुखतारखास—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखतार + खास] वह जो किसी विशिष्ट कार्य या मुकदमों के लिये प्रतिनिधि बनाया गया हो।

मुखतारनामा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखतार + फा० नामह्] १ वह अधिकारपत्र जिसके द्वारा कोई व्यक्ति किसी की ओर से अदालतों को कार्यवाही करने के लिये मुखतार बनाया जाय। यह दो प्रकार का होता है—मुखतारनामा खास और मुखतारनामा आम। २ वह अधिकारपत्र जिसके अनुसार कोई पेशेवर मुखतार कोई मुकदमा लड़ने के लिये नियुक्त किया जाय।

मुखतारनामा आम—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखतार + फा० नामह् + अ० आम] वह अधिकारपत्र जिसके द्वारा कोई मुखतार आम नियुक्त किया जाय।

मुखतारनामा खास—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखतार + फा० नामह् + अ० खास] वह अधिकारपत्र जिसके द्वारा कोई मुखतारखास नियुक्त किया जाय।

मुखतारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुखतार + फा० ई (प्रत्यय०)] १ मुखतार होकर दूसरे के मुकदमों लड़ने का काम। २ मुखतार का पेशा। प्रतिनिधित्व।

मुखताल—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुख + ताल] किसी गीत का पहला पद। टेक। ध्रुव।

मुखदूपण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्याज।

मुखदूपिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुँह का एक प्रकार का जुद्ध रोग जिसमें चेहरे पर छोटी छोटी फुसियाँ निकल आती हैं। मुँहासा।

मुखदूपी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखदूपिन्] लहसुन।

मुखदोष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जिह्वा का दोष। लोलुपता [को०]।

मुखधौता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. भारगी। भार्गी। २. ब्राह्मण-यष्टिका।

मुखनिरीक्षक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आलसी आदमी। सुस्त व्यक्ति। काहिल [को०]।

मुखनिवासिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती।

मुखन्नस—वि० [अ० मुखन्नस] १. नपुंसक। पुंस्त्वविहीन। २. व्याकरण में नपुंसक लिंग।

मुखपट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मुँह टकने का वस्त्र। नकाव। २. घूँघट।

मुखपाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग जो मनुष्यों और घोड़ों को होता है और जिसमें उनके मुँह में छोट छोट धावें हो जाते हैं।

मुखपान—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुख + पान] पान के आकार का पीतल या किसी और धातु का कटा हुआ वह टुकड़ा जो मूँह या आलमारी आदि में ताली लगाने के स्थान में मुद्रता के लिये जड़ा जाता है और जिसके बीच में ताली लगाने के लिये छेद होता है।

मुखपिंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखपिण्ड] १. वह पिंड जो मृत व्यक्ति के उद्देश्य से उसकी अत्येष्टि क्रिया से पहले दिया जाता है। २. ग्रास। कवल। भोजन [को०]।

मुखपिंडिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुखपिंडिका] मुँहासा।

मुखपुष्पक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का श्वाभूषण [को०]।

मुखपूरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मुँह में पानी भरकर फेंकना। कुल्ला। २. मुँह में कुल्ली के लिये लिया हुआ पानी।

मुखपृष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] किमी पुस्तक, पत्रपत्रिका का आदि वह पृष्ठ जो सबसे पहले रहता है। आवरण पृष्ठ।

मुखप्रक्षालन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुख का प्रक्षालन करना या बौना। मुँह साफ करना।

मुखप्रसाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुख पर झनकनेवाली प्रसन्नता। प्रसन्न मुद्रा [को०]।

मुखप्रसाधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वे द्रव्य जिनमें मुख का प्रसाधन किया जाय। जैसे, पाउडर तथा अन्य शृंगारप्राप्तन। २. मुख को प्रसाधित या अनदृष्ट करना [को०]।

मुखप्रसेक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भावप्रकाश के अनुसार मुँह का एक रोग जो श्लेष्मा के विकार से होता है।

मुखप्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो खाने में अच्छा लगे। स्वादिष्ट वस्तु। २. नारंगी। ३. ककड़ी।

मुखपफक—वि० [अ० मुखपफक] जो खफीफ या हलका किया गया हो। जो घटाकर कम किया गया हो।

मुखपफक—सञ्ज्ञा पुं० किसी पदार्थ या जव्व यादि का सक्षिप्त रूप। जैसे,—'मीठा' का मुखपफक 'मिठ' या 'घाडा' का मुखपफक 'घुड' होता है।

मुखबद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुख + हिं० बद] धोड़ों का एक रोग जिसमें उनका मुँह बद हो जाता है और जल्दी नहीं खुलता इसमें उसके मुँह से लार भी बहती है।

मुखबध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखबन्ध] किसी ग्रथ की प्रस्तावना या भूमिका।

मुखवन्धन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखवन्धन] १ मुखवध । प्रस्तावना ।
२. आच्छादन । पिधान (को०) ।

मुखविर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखविर] १ खबर देनेवाला । जासूस ।
गोइदा । २. वह अपराधी जो अपराध को स्वीकार कर सबूत
का या सरकारी गवाह बन जाय और जिसे माफी दे दी
जाय ।

मुखविरो—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुखविर + ई (प्रत्य०)] १ खबर देने
का काम । मुखविर का काम । २ मुखविर का पद ।

मुखभग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखभङ्ग] १ मुख पर का आघात या
प्रहार । २ मुख की वक्रता । चेहरा टेढा या तिरछा होना ।
३ खिलना । विकास । प्रस्फुटन (को०) ।

मुखभगा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जो अपने मुख का योनि
जैसा व्यवहार करे । मुख के प्रति योनि जैसा व्यवहार चाहने-
वाली औरत (को०) ।

मुखभूषण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तावूल । पान ।

मुखभेड(पुं)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] ३० 'मुठभेड' ।

मुखभेद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुँह का विकृत या टेढा होना (को०) ।

मुखमडनक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखमण्डनक] १ तिल का पौधा ।
२ तिलक का वृक्ष (को०) । ३. मुख का प्रसाधन या भूषण ।
मुख की शोभा बढ़ानेवाली वस्तु ।

मुखमडल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखमण्डल] चेहरा ।

मुखमडिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुखमण्डिका] १. वैद्यक के अनुसार
एक प्रकार का रोग । २ इस रोग की अधिष्ठात्री देवी ।

मुखमडितिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुखमण्डितिका] बालको का एक
प्रकार का रोग ।

मुखमधु—वि० [सं०] मधु सदृश मीठे अर्थात् सुदर मुँह का । सलोनी
सुरत का । मीठे अवरवाला ।

मुखमसा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखमसा (= विकृष्टता या कठिनता)]
भगडा । झमेला । झूठ । बखेडा ।

क्रि० प्र०—में पटना ।

मुखमाधुर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भावप्रकाश के अनुसार श्लेष्मा के विकार
से होनेवाला एक प्रकार का रोग जिसमें मुँह मीठा सा बना
रहता है ।

मुखमारुत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] साँम । श्वास (को०) ।

मुखमार्जन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मुखप्रक्षालन' ।

मुखमोट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सलई का वृक्ष । शल्लकी । २ काला
सर्हिजन ।

मुखम्मस—वि० [अ० मुखम्मस] जिसमें पाँच कोने या अंग
आदि हो ।

मुखम्मस—सञ्ज्ञा पुं० उर्दू या फारसी की एक प्रकार की कविता
जिमें एक साथ पाँच चरण या पद होते हैं । उदा०—
मुखम्मस को पँचकड़ी समझिए ।—कविता कौ० (भू०), भा० ४,
पृ० २७।

मुखयंत्रण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखयन्त्रण] वल्गा । लगाम (को०) ।

मुखर—वि० [सं०] १ जो अप्रिय बोलता हो । कटुभाषी । २.
बहुत बोलनेवाला । बकवादी । ३ प्रधान । अगगण्य ।

मुखर—सञ्ज्ञा पुं० १. कौआ । २ शख ।

मुखरञ्जु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अश्ववल्गा । लगाम (को०) ।

मुखरता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुखर वा वाचाल होने का भाव ।
वाचालता (को०) ।

मुखरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वातचीत वातलाप (को०) ।

मुखरा(पुं)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुख + रा (प्रत्य०)] दे० 'मुखडा' । उ०—
मुहि चाव सो बारहि वार लख्यो मुख मोरि मनो मुखरा पिय
कौ ।—शकुंतला, पृ० ४६ ।

मुखराग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुख का वर्ण । चेहरे का रंग । २.
चेहरे का आकार प्रकार ।

मुखराना(पुं)†—क्रि० अ० [सं० मुखर से नामिक०] मुखर होना ।
मुख से बोलना । कहना । उ०—एक एक कँ बरनहु, वह मालति
की बात । सुनउ जीउ सरवन दै, हो पडित मुखरात ।—इंद्रा०,
पृ० १०३ ।

मुखरिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लगाम । मुखरी (को०) ।

मुखरित—वि० [सं०] गुजरित । ध्वनित । रवयुक्त । शब्दायमान ।
उ०—अधकार के अट्टहास सी, मुखरित मतत चिरतन
सत्य ।—कामायनी, पृ० १६ ।

मुखरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लगाम । मोहरी । मुँहड़ी (को०) ।

मुखरुचि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुखकाति । उ०—नैनन तें नीर,
धीर छूटघो एक सग छूटघो मुखरुचि मुखरुचि त्योंही विन रग
ही ।—भूषण ग्र०, पृ० १०८ ।

मुखरोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रोठ, मसूडे, दाँत, जीभ, तालु या गले
आदि में होनेवाले रोग ।

विशेष—वैद्यक के अनुसार इस प्रकार के रोग सब मिलाकर ६७
प्रकार के माने गए हैं । इनसे श्रोठों में होनेवाले ८ प्रकार के,
मसूडे में होनेवाले १६ प्रकार के, दाँतों में होनेवाले ८ प्रकार
के जीभ में होनेवाले ५ प्रकार के, तालु में होनेवाले ६ प्रकार
के, कठ में होनेवाले १८ प्रकार के और सारे मुख में होनेवाले
३ प्रकार के हैं ।

मुखलागल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखलाङ्गल] सूअर ।

मुखलिसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुखलिसी] छुटकारा । रिहाई ।

क्रि० प्र०—करना ।—देना ।—पाना ।—मिलना ।—होना ।

मुखलूक—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुखलूक] जगत् । दुनियाँ । मसार ।
खुदाई । उ०—पुरुष ने इसे पहले जानी कहा । व मुखलूक पर
हुवमोरानी कहा ।—कवीर म०, पृ० ३८६ ।

मुखलेप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का मुखरोग । मुँह का
चट चट करना । २ वह लेप जो मुँह पर शोभा या सुगंध या
विशिष्टता के लिये लगाया जाय ।

मुखवल्लभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो खाने में अच्छा लगे । स्वादिष्ट । २ अनार का पेड़ ।

मुखवस्मिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुखावरण । कपड़े का एक टुकड़ा जो मुँह पर रखा जाता है । बुरका ।

मुखवाचिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ब्राह्मणी या पाठा नाम की लता । अरवण्डा ।

मुखवाद्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुँह से वम् वम् शब्द करना । (शिवपूजन में) । २ मुँह से फूँककर वजाया जानेवाला वाजा । जैसे, शख, शहनाई आदि ।

मुखवास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गन्तव्य । २ तरबूज की लता । ३. एला, लौंग आदि मुँह की वायु को मुगधित करनेवाली चीजें । मुखवासन । ४ श्वास । उ०—जिसकी मुदर छवि ऊपा है, मलयानिन मुखवास, जलधिमन, उस स्वरूप को तू भी अपनी मृदुवाही में लिपटा ले रमा अग में प्रेम पराग ।—वीणा, पृ०, १२ ।

मुखवासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अनेक प्रकार की मुगधित औषधियों आदि को मिलाकर बनाया हुआ वह चूर्ण जिममें मुँह की दुर्गन्ध दूर होती है और उसमें सुवास आती है ।

मुखवासिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती ।

मुखविपुला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] आर्या छंद का एक भेद ।

मुखविलुठिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुखविलुठिका] बकरी [को०] ।

मुखविष्ठा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तेलचट या सनकिरवा नाम का कीड़ा ।

मुखवैदल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का कीड़ा जिसके काटने से वायुजन्य पीड़ा होती है ।

मुखवैरस्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुँह की विरसता । मुख की कडवाहट । मुँह में कडवापन या कट्टु स्वाद होना [को०] ।

मुखव्यंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखव्यंग्य] मुँह पर पढ़नेवाले छोटे छोटे दाग ।

विशेष—वैद्यक के अनुसार अधिक क्रोध या परिश्रम करने के कारण वायु और पित्त के मिल जाने से ये दाग होते हैं । इनसे कोई कण्ट तो नहीं होता, पर मुख की शोभा विगड जाती है ।

मुखव्यादान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुँह का वाना । जंभाई । जू भा [को०] ।

मुखशफ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो कट्टु वचन कहता हो । मुखर ।

मुखशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अलिद । ड्योढी । देहली । द्वार-प्रकोष्ठ [को०] ।

मुखशुद्धि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मजन या दातून आदि की सहायता से मुँह साफ करना । २ भोजन के उपरांत पान, सुपारी आदि खाकर मुँह शुद्ध करना । ३ वस्तु जिससे मुखशुद्धि की जाय । मुखशुद्धि के उपयोग में आनेवाला द्रव्य [को०] ।

मुखशृंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखशृङ्ग] गैंडा । खड्ग । गडक [को०] ।

मुखशोष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राहू का एक नाम [को०] ।

मुखशोथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुँह की सूजन ।

मुखशोधन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह पदार्थ जिसके खाने से मुँह शुद्ध होता है । २. दालचीनी । ३ तज ।

मुखशोधन^२—वि० चरपरा ।

मुखशोधी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखशोधिन] १ मुँह को शुद्ध करनेवाला पदार्थ । जँवौरी नीवू ।

मुखशोष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ तृषा । प्यास । २ प्यास व गरमी से मुँह सूखना ।

मुखश्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुख की शोभा । मुखछवि । मुख की काति [को०] ।

मुखसदस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखसन्दस] सँडमी । जँवूरी [को०] ।

मुखसभव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखसम्भव] १ भगवान् के मुख से उत्पन्न, ब्राह्मण । २ पुण्ड्रमूल । पुट्टकरमूल ।

मुखसिञ्चन मन्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखसिञ्चन मन्त्र] एक प्रकार का मन्त्र जिससे जल फूँककर उस आदमी के मुँह पर छीटे दिए जाने हैं जिमके पेट में किसी प्रकार का विष उतर जाता है ।

मुखसुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शब्द के उच्चारण का सौंदर्य । उच्चारण सौंदर्य । उच्चारण की सरलता [को०] ।

मुखसुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ताड़ी । २ अघरामृत [को०] ।

मुखसूची—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अमड़े का वृक्ष । आभ्रतक ।

मुखस्थ वि० [सं०] मुख में स्थित । जो जवानी याद हो । कठस्थ । बरजवान । उ० मुखस्थ याद करते तथा पढते पढाते चले आए ।—कवीर म०, पृ० २२ ।

मुखस्राव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ थूक । लार । २ बालको का एक रोग जिसमें उनके मुँह से बहुत अचिक लार बहती है । कहते हैं, कफ से दूषित स्तन पीने से यह रोग होता है ।

मुखहास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुखशोभा । मुखविकास । प्रसन्न मुखकृति ।

मुखाकृति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुख का आकार । चेहरा [को०] ।

मुखागर(पु)—वि० [सं० मुखाग्र] १ 'मुसाग्र' । उ०—कहेह मुखागर मूढ मन मम सदेस उदार ।—मानस, ५।५२ ।

मुखाग्नि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. जगल की आग । दावानल । २ सस्कृत एव प्रतिष्ठापित अग्नि । यज्ञाग्नि । हवनाग्नि [को०] । ३. ब्राह्मण [को०] । ४ एक प्रकार का वँताल जो मुँह से अग्नि फेकते हैं [को०] । ५ मृत व्यक्ति को चिता पर रखकर पहले उसके मुँह में आग लगाने की क्रिया ।

मुखाग्र^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ थ्रोठ । २. किसी पदार्थ का अग्रला भाग ।

मुखाग्र^२—वि० जो जवानी याद हो । कठस्थ । बरजवान । जैसे,—उसे सारी गीता मुखाग्र है ।

मुखातव—वि० [अ० मुखातव] मुखातिव ।

मुखातिव वि० [फा० मुखातिब] १ जिससे बात की जाय । जिससे कुछ कहा जाय । संबोधित । २ बात करनेवाला । संबोधन करनेवाला ।

मुहा०—(किसी की तरफ) मुखातिब होना = (१) किसी की ओर धूमकर उससे बातें करना । (२) किसी की बात सुनने के लिये उसकी ओर प्रवृत्त होना ।

मुखानिल—सज्ञा पुं० [सं०] साँस । श्वास [को०] ।

मुखापेक्षक—सज्ञा पुं० [सं०] दूसरो का मुँह ताकनेवाला । दूसरो के सहारे रहनेवाला । दूसरो की कृपा पर रहनेवाला ।

मुखापेक्षा—सज्ञा स्त्री० [सं०] दूसरो का मुँह ताकना । दूसरो के आश्रित रहना ।

मुखापेक्षी—सज्ञा पुं० [सं० मुखापेक्षिन] वह जो दूसरो का मुँह ताकता हो । दूसरो के सहारे रहनेवाला । दूसरो की कृपादृष्टि के भरोसे रहनेवाला । आश्रित ।

मुखामय—सज्ञा पुं० [सं०] मुँह में होनेवाला रोग । मुखरोग ।

मुखामुख^(५)—क्रि० वि० [हिं० मुख] आमने सामने । उ०—चव मेछ मुखामुख जोम चढै ।—रा० ६०, पृ० ८० ।

मुखारी^(१)—सज्ञा स्त्री० [सं० मुखाकृति या हिं० मुख + आरी (प्रत्य०)] १ किसी से मिलती जुलती आकृति । २ सादृश्य । अनुरूपता । ३ मुख का कार्य । मुखशोधन । दूतून कुल्ला करने का कार्य । ४ प्रात कुछ खाना । खराई मारना ।

मुखार्जक—सज्ञा पुं० [सं०] वनतुलसी का पौधा । बवरी तुलसी ।

मुखालिफ—वि० [अ० मुखालिफ] १ जो खिलाफ हो । विरुद्ध पक्ष का । विरोधी । २ शत्रु । दुश्मन । ३ प्रतिद्वंद्वी ।

मुखालिफत—वि० [अ० मुखालिफत] १ विरोध । २ शत्रुता । दुश्मनी ।

मुखालु—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बड़ा मोठा कद जिसे स्थूलकद, महाकद या दीर्घकद भी कहते हैं ।

विशेष—वैद्यक में यह मधुर, शीतल, रुचिकारी, वातवर्धक तथा पित्त, शोष, दाह और प्यास को दूर करनेवाला माना गया है ।

मुद्रासव—सज्ञा पुं० [सं०] १ धुक । २ लार ।

मुद्रास्त्र—सज्ञा पुं० [सं०] केकडा ।

मुद्रास्वाद—सज्ञा पुं० [सं०] मुँह का चूवन ।

मुद्रास्रव—सज्ञा पुं० [सं०] मुँह से बहनेवाली धुक या लार ।

मुखिक—सज्ञा पुं० [सं०] मोखा नामक वृक्ष ।

मुखिया—सज्ञा पुं० [सं० मुख्य + हिं० इया (प्रत्य०)] १ नेता । प्रधान । सरदार । जैसे,—वे अपने गाँव के मुखिया हैं । २ वह जो किसी काम में सब से आगे हो । किसी काम को सब से पहले करनेवाला । अगुआ । ३ बल्लभ सप्रदाय के मदिरो का वह कर्मचारी जो भूति का पूजन करता और भोग आदि लगाता है । ऐसा कर्मचारी प्राय पाकविद्या में निपुण हुआ करता है ।

मुखिल—वि० [अ० मुखिल] बाधक । हस्तक्षेप करनेवाला । खलल डालनेवाला [को०] ।

मुखीय—सज्ञा [सं०] १. मुख सवधी । २ मुख्य ।

मुखुडी—सज्ञा पुं० [सं० मुखुडी] एव प्रकार का शस्त्र [को०] ।

मुखुली—सज्ञा स्त्री० [सं०] वीदो की एक देवी का नाम ।

मुखेंदु—सज्ञा पुं० [सं० मुखेन्दु] चंद्रमा की तरह सुंदर मुँह । चाँद सा मुखडा । सुंदर मुँह [को०] ।

मुखोल्का—वि० [सं०] दावाग्नि ।

मुखलिफ—वि० [अ० मुखलिफ] १ भिन्न । अलग । पृथक् । २ अनेक प्रकार का । तरह तरह का ।

मुखतसर—वि० [अ० मुखतसर] १. जो थोड़े में हो । सक्षिप्त । २ छोटा । ३. अल्प । थोडा ।

मुखतार—सज्ञा पुं० [अ० मुखतार] दे० 'मुखतार' ।

विशेष—इसके यौगिक शब्दों के लिये दे० 'मुखतार' के यौगिक ।

मुख्य^(१)—वि० [सं०] १ मुखसवधी । २ सब में बड़ा । ऊपर या आगे रहनेवाला । ३ प्रधान । श्रेष्ठ ।

मुख्य^(२)—सज्ञा पुं० १ यज्ञ का पहला कल्प । २. वेद का अध्ययन और अध्यापन । ३ अमात मास । ४ वह जो मुख्य या प्रधान हो । नेता । अगुआ [को०] ।

मुख्यकर्म—सज्ञा पुं० [सं०] पहला काम । प्रधान कार्य ।

मुख्यचाद्र—सज्ञा पुं० [सं० मुख्यचान्द्र] चाद्र मास के दो विभागों में से एक । शुक्ल प्रतिपदा से लेकर अमावास्या तक का काल जो 'अमात चाद्र मास' भी कहलाता है । विशेष—दे० 'मास' ।

मुख्यत—क्रि० वि० [सं० मुख्यतस्] मुख्य रूप से । खास तौर से । प्रधानतः । उ०—बाकी सब छोटी छोटी बातें और कथानक मुख्यत कवियों की करामात हैं ।—हिंदु० सम्यता, पृ० १५५ ।

मुख्यता—सज्ञा स्त्री० [सं०] मुख्य होने का भाव । प्रधानता । श्रेष्ठता ।

मुख्यनृप—सज्ञा पुं० [सं०] मुख्यनृपति । सर्वसत्तासपन्न राजा [को०] ।

मुख्यमत्री—सज्ञा पुं० [सं० मुख्यमन्त्रिन्] १. प्रधान मंत्री । २ किसी प्रदेश या प्रांत का विधानसभा में वह मंत्री, जो मन्त्रिमंडल का प्रधान होता है ।

विशेष—स्वतंत्र भारत के आधुनिक संविधान द्वारा समग्र राष्ट्र में प्रधान मंत्री एक रखा गया है । विभिन्न प्रदेशों के मन्त्रिमंडल के प्रधान को मुख्य मंत्री कहा जाता है । ये दोनों शब्द क्रमशः अंग्रेजी के प्राइम मिनिस्टर और चीफ मिनिस्टर के अनुवाद हैं । संस्कृत में मुख्य मंत्री का अर्थ मात्रियों में प्रधान अर्थात् प्रधान मंत्री ही है । पृथ्वीराज रासो में यह शब्द इसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है ।

मुख्यसर्ग—सज्ञा पुं० [सं०] स्थावर सृष्टि ।

मुख्यार्थ—सज्ञा पुं० [सं०] शब्द का प्रधान अर्थ । अभिधाजन्य अर्थ [को०] ।

मुगट^(५)—सज्ञा पुं० [सं० मुकुट] दे० 'मुकुट' । उ०—मोरपप जट मुगट सिंगि सग्राम सुधारै । मोह देह सब रहित मरन दिन अत विचारै ।—पृ० रा०, ६१।१८२६ ।

मुगत^(५)—सज्ञा स्त्री० [सं० मुक्ता] मोती । मुक्ता । उ०—वैजंती

बल मुगत विसाला, प्रगट हियँ माला भरपूर।—रघु० रू०, पृ० २५३।

मुगति—सज्ञा स्त्री० [सं० मुक्ति] दे० 'मुक्ति'। उ०—सुक्रम सुमन फुल्लयो मुगति पक्वी द्रव मगति।—पृ० रा०, ११४।

मुगदर—मज्ञा पुं० [सं० मुग्दर] लकड़ी की एक प्रकार की गावडुमी, लबी और भारी मुगरी जिसका प्रायः जोड़ा होता है और जिसका उपयोग व्यायाम के लिये किया जाता है। जोड़ी।

विशेष इसमें ऊपर की ओर पकड़ने के लिये पतली मूठिया होती है और नीचे का भाग बहुत मोटा होता है। दोनों हाथों में एक एक मुगदर लिया जाता है और बारी बारी से हर एक मुगदर पीठ के पीछे से घुमाकर सामने लाते और उलटे बल में ऊपर की ओर खडा करते हैं। इससे बाहुओं में बहुत बल आता है।

क्रि० प्र०—फेरना। हिलाना।

मुगध—सज्ञा स्त्री० [सं० मुग्धा] दे० 'मुग्धा'। उ०—राति दिवस एक सी काम कामना सु बहिय। प्रौढ मुगध वयवृद्ध सबै थरहरि त्रिय गहिय।—पृ० रा०, ११४११।

मुगधारी—वि० [सं० मुग्ध हिं० भी (स्वा० प्रत्य०)] मूढ। मूर्ख। अज्ञानी। उ०—मूरख ते पडित करिवो पडित ते मुगधारी।—कबीर प्र०, पृ० ३२०।

मुगना—सज्ञा पुं० [हिं० मुनगा] सहिजन। मुनगा।

मुगन्नी—सज्ञा पुं० [अ० मुगन्नी] [स्त्री० मुगन्नीया] गर्वैया। कलावत। गायक [को०]।

मुगरा—सज्ञा पुं० [हिं०] १ दे० 'मोगरा'। २ [स्त्री० मुगरी] दे० 'मोगरा' या 'मुंगरा'।

मुगरेला—सज्ञा पुं० [हिं० मुंगरैला] कर्लीजी या मंगरैला नामक दाना, जिसका व्यवहार मसाले में होता है।

मुगल—सज्ञा पुं० [फा० मुगल] [स्त्री० मुगलानी] १ मंगोल देश का निवासी। २ तुर्कों का एक श्रेष्ठ वर्ग जो तातार देश का निवासी था।

विशेष—इस वर्ग के लोगो ने इधर कुछ दिनों तक भारत में आकर अपना साम्राज्य स्थापित करके चलाया था। इस वर्ग का पहला सम्राट् बाबर था जिसने सन् १५२६ ई० में भारत पर विजय प्राप्त की थी। अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब इसी जाति के और बाबर के वंशज थे। इन लोगो के शासन-काल में साम्राज्य बहुत विस्तृत हो गया था परन्तु औरंगजेब की मृत्यु (सन् १७०७ ई०) के उपरांत इस साम्राज्य का पतन होने लगा और सन् १८५७ में उसका अंत हो गया।

३. मुसलमानों के चार वर्गों में से एक वर्ग जो शेखों और सैयदों से छोटा तथा पठानों से बड़ा और श्रेष्ठ समझा जाता है।

मुगलई—वि० [फा० मुगल + ई (प्रत्य०)] मुगलों का सा। मुगलों की तरह का। जैसे, मुगलई पाजामा, मुगलई टोपी, मुगलई कुरता, मुगलई हड्डी।

मुगलपठान—सज्ञा पुं० [फा० मुगल + पठान] एक प्रकार का खेल जो जर्मन पर खाने खीचकर सोलह ककडियों से खेला जाता है। गोटी।

मुगलाई—वि० [फा० मुगलाई] दे० 'मुगलई'।

मुगलाई—सज्ञा स्त्री० [फा० मुगल + आई (प्रत्य०)] मुगल होने का भाव। मुगलपन।

मुगलानी—सज्ञा स्त्री० [फा० मुगल + आनी (प्रत्य०)] १. मुगल जाति की स्त्री। २ कपडा मीनेवाली स्त्री। ३ दामी। मजदूरनी (मुसल०)।

मुगलिया वि० [फा० मुगल हिं० + हिं० इया (प्रत्य०)] मुगलों का। जैसे, मुगलिया खानदान, मुगलिया सल्तनत। उ०—मराठे शिवाजी के नेतृत्व में मगठिन हो मुगलिया राज्य को खुले-आम चुनौती माँ देने लगे।—हिं० का० प्र०, पृ० ७।

मुगली—सज्ञा स्त्री० [फा० मुगल + ई (प्रत्य०)] बच्चों को होनेवाला पसली का रोग जिसमें उनके हाथ पैर एँठ जाते हैं और वे बेहोश हो जाते हैं।

मुगवन—सज्ञा पुं० [सं० वनमुद्गा] वनमूंग। मोठ।

मुगवा—सज्ञा स्त्री० [सं०] अतिस्रवा। मयूरवल्ली।

मुगलता—सज्ञा पुं० [अ० मुगलतइ] घोखा। छल। झंसा। भ्रम।
क्रि० प्र०—खाना।—देना।—में डालना।

मुगुध, मुगुधा—सज्ञा स्त्री० [सं० मुग्धा] दे० 'मुग्धा'।

मुगूह—सज्ञा पुं० [सं०] १ पपीहा। २ एक प्रकार का हिरन।

मुगुल—सज्ञा पुं० [फा० मुगल] दे० 'मुगल'।

मुग्धम—वि० [देश०] (वात) जो बहुत खोलकर या स्पष्ट करके न कही जाय। संकेत रूप में कही हुई (वात)।

मुहा—मुग्धम रहना = (१) चुप रहना। कुछ न बोलना (व्यक्ति के सवध में)। (२) किसी का रहस्य प्रकट न होना। भेद न खुलना। परदा ढका रह जाना।

मुग्धम—सज्ञा पुं० दाँव में वह अवस्था जिसमें न हार हो और न जीत। (जुगारी)।

क्रि० प्र०—रहना।

मुग्ध—वि० [सं०] १. मोह या भ्रम में पडा हुआ। मूढ। २ सुदर। खूबसूरत। ३ नया जीवन। ४ आसक्त। मोहित। लुभाया हुआ। उ०—वाल्मीकि रामायण में यद्यपि बीच बीच में ऐसे विशद वर्णन बहुत कुछ मिलते हैं जिनमें कवि की मुग्ध दृष्टि प्रधानतः मनुष्येतर बाह्य प्रकृति के रूपजाल में फँसी पाई जाती है पर उसका प्रधान विषय लोकचरित्र ही है।—रस०, पृ० ६।

मुग्धकर—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मुग्धकरी] मोहित करनेवाला।

मुग्धता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मुग्ध का भाव। मूढ़ता। २ सुदरता। खूबसूरती। ३ मोहित या आसक्त होने का भाव।

मुग्धत्व—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मुग्धता' [को०]।

मुग्धबुद्धि—वि० [सं०] जिसकी बुद्धि भ्रात हो। बेवकूफ।

सुगंधबोध—सज्ञा पुं० [सं०] वीपदेव कृत संस्कृत का व्याकरण [को०] ।
 सुगंधभाव—सज्ञा पुं० [सं०] १ मूर्धता । बुद्धिहीनता । २ भोगापन ।
 सुगंधा—सज्ञा स्त्री० [सं०] साहित्य में वह नायिका जो यौवन को
 तो प्राप्त हो चुकी हो, पर जिनमें कामचेष्टा न हो ।

विशेष—इसके दो भेद होते हैं—अज्ञातयौवना और ज्ञातयौवना ।
 इसकी क्रियाएँ और चेष्टाएँ बहुत ही मनोहारिणी होती हैं ।
 इसका कोप बहुत ही मृदु होता है और इसे साज सिंगार का
 बहुत चाव रहता है ।

सुचगड—वि० [हिं० मुच्चा + अगड (प्रत्य०)] मोटा और भद्दा ।
 जैसे, सुचगड राट ।

सुचक—सज्ञा पुं० [सं०] लाख । लाह ।

सुचका—सज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मोच' ।

सुचकध—सज्ञा पुं० [सं० मुचकुन्द] मायाता का एक पुत्र ।
 उ०—बंर दोप श्रीराम बंर दोपई दुयोध । बंर दोप नधराह
 बंर दोपह मुचकध ।—पृ० रा०, ७।१७ ।

सुचकुद—सज्ञा पुं० [सं० मुचकुन्द, मुचकुन्द] १ एक बड़ा पेड़
 जिसके फूल और छाल दवा के काम आते हैं । हरिवल्लभ ।
 दीर्घपुष्प ।

विशेष—इसके पत्ते फालसे के पत्तों के आकार के और बड़े बड़े
 होते हैं । पत्तों में महीन महीन रोई होती हैं जिनमें वे छून
 में खुरदरे लगने हैं । फूल में पाँच छह अगुल लवें और एक
 प्रगुल के लगभग चौड़े सफेद दल होते हैं । दला के मध्य से
 सूत के समान कई केसर निकले होते हैं । दला के नीचे का
 कोश भी बहुत लंबा होता है । फूल का सुगंध बहुत ही मीठी
 और मनोहर होती है । ये फूल मिर के दद में बहुत लाभकारी
 होते हैं । इसके फल कटहल के प्रारंभिक फला के समान लवें
 लवें और पत्थर की तरह कड़े होते हैं । इसके फूल और छाल
 औषध के काम में आती हैं । वद्यत्त में यह चरपरा, गरम,
 कटुवा, स्वर को मधुर करनेवाला तथा कफ, खासी, त्वचा
 के विकार, सूजन, सिर का दर्द, त्रिदोष, रक्तपित्त और हृदय
 विकार को दूर करनेवाला माना गया है ।

पर्या०—द्व्यश्रवृत्त । चित्र । प्रतिविष्णुः । दीर्घपुष्प । बहुपत्र ।

सुदल । सुपुष्प । हरिवल्लभ । रक्तप्रसव ।

२ मायाता नरेश का एक पुत्र । दे० 'मुचकुद' ।

यौ०—सुचकुद प्रसादः—श्रीकृष्ण ।

सुचलका—सज्ञा पुं० [सं० सु०] वह प्रतिज्ञापत्र जिसके द्वारा भविष्य
 में कोई काम, विशेषतः अनुचित काम, न करने अथवा किसी
 नियत समय पर अदालत में उपस्थित होने की प्रतिज्ञा की जाती
 है, और कहा जाता है कि यदि मुझमें अमुक अनुचित काम
 हो जायगा, अथवा मैं अमुक समय पर अमुक अदालत में
 उपस्थित न होऊँगा, तो मैं इतना आर्थिक दंड दूँगा ।

क्रि प्र०—लिखना ।—लिखाना ।—लेना ।

सुचाना—क्रि० सं० [सं० मुच] छोड़ना । मुक्त कराना । चलाना ।

गतिशील करना । उ०—जु विपै वर भाइ दुलोचन कोर ।
 मुचावत काम कमान के जोर ।—पृ० रा०, २।७५ ।

सुचिर—सज्ञा पुं० [सं०] १ दाता । दानशील । उदार ।

सुचिर—सज्ञा पुं० १ धर्म । २ वायु । ३. देवता ।

सुचिलिग—सज्ञा पुं० [सं० मुचिलिङ्ग] १ मुचकुद वृक्ष । २ तिलक का
 पीधा । तिलपुष्पी । ३ एक नाग का नाम । ४ एक पर्वत का
 नाम ।

सुचिलिद—सज्ञा पुं० [सं० मुचिलिन्द] १ मुचकुद । २ तिलक ।
 तिलपुष्प ।

सुचुक—सज्ञा पुं० [सं०] मैनफल ।

सुचुका—सज्ञा स्त्री० दे० 'मोच' ।

सुचुकुद—सज्ञा पुं० [सं० मुचुकुन्द] १ मुचकुद वृक्ष । २ भागवत
 के अनुसार मायाता के एक पुत्र का नाम ।

सुचुटी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ उँगली मटकाना । २ मुट्टी ।
 ३ सँढसी ।

सुच्चा—सज्ञा पुं० [सं०] १ माम का बड़ा दुकाड़ा । गोशत का
 तावडा ।

सुच्छ—सज्ञा स्त्री० [हिं० सूँछ] दे० 'सूँछ' । उ०—(क) मुह मुह
 मुच्छ कर कन्ह तुम्र चमर छत्र पट्ट पग लिय ।—पृ० रा०,
 ६।२२७४ । (ख) धरधो परतापनि मुच्छन पाँन ।—पृ० रा०,
 ५।३६ । (ग) धर मुच्छ पर हाथ बहुरि निररै समसेरै ।—
 हन्मीर०, पृ० २२ ।

सुच्छा—सज्ञा स्त्री० [हिं० सूँछ] दे० 'सूँछ' । उ०—सुच्छा
 उर्मठन उमडि ऐठत कठिनकर कुहँचान के ।—हिम्मत०
 पृ ११३ ।

सुच्छा—सज्ञा स्त्री० [सं० सूच्छा] दे० 'सूच्छा' । उ०—सो
 पर्यो धान सुच्छा मृ खाय ।—पृ० रा०, १।२७२ ।

सुच्छदर—सज्ञा पुं० [हिं० सुच्छ + दर (सं० धर)] १ जिसके सूँछे बड़ी
 उड़ी हो । उ०—व मोटे तन व धुदला घुँदला मू व कुच्ची
 आँस । व माटे घाठ सुच्छदर की आदम आदम है ।—भारतेंदु
 ७०, भा० २, पृ० ७८६ । २ कुरूप और मूर्ख । भद्दा और
 बेवकूफ । उ०—दोडे वदर वने सुच्छदर कूदे चडे अगामी ।
 —भारतेंदु० प्र०, भा० १, पृ० ३३३ । ३. चूहा । (व०) ।

सुच्छ—सज्ञा स्त्री० [सं० अशु, हिं० सूँछ] दे० 'सूँछ' । उ०—तिन
 सुच्छ राजत है मुह पान ।—पृ० रा०, ५।३४ ।

सुच्छाड्या—वि० [हिं० सुच्छ + आड्या (प्रत्य०)] दे० 'सुच्छियन' ।

सुच्छयल—वि० [हिं० सूँछ + यल (प्रत्य०)] जिसकी सूँछे बड़ी
 बड़ी हो ।

सुच्छेला—वि० [हिं० सूँछ + ऐल (प्रत्य०)] दे० 'सुच्छियन' ।

सुज—सज्ञा पुं० [सं० मज्ज् पुं० हिं० मुज्ज्, मुज] मज्ज का
 फल और सबंध कारक के प्रलावा विभाक्ते लान के पूर्व या
 रूप । दे० 'मुज्ज' । उ०—मैं रक्त का गनी में घायन पजा घा

तिसपर । जीवन का माता आकार मुज को रंगन गया है । —
कविता कौ० (भू०), भा० ४ पृ० १५ ।

मुज^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुञ्ज (= एक घास) हिं० मूँज] दे०
'मूँज' । उ० मुज को आडवद वजर कोपीन ।—रामानन्द०,
पृ० ४६ ।

मुजक्कर—वि० [अ० मुजक्कर] १ नर । पुरुष । २ (व्याकरण में)
पुलिंग ।

मुजक्का—वि० [अ० मुजक्का] पवित्र । शुद्ध [को०] ।

मुजम्मा सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुजम्मद्] चमड़े या रस्ती का वह फेरा जो
घोड़े को आगे बढ़ने से रोकने के लिये उसकी गामची या दुमची
में पिछाड़ी की रस्ती के साथ लगा रहता है ।

क्रि० प्र० बाँधना ।—लगाना ।

मुहा०—मुजम्मा लगाना = ऐसा काम करना जिसमें कोई बात या
काम रुक जाय । रोक या आट लगाना । मुजम्मा लेना —आड़े
हाथो लेना । खबर लेना । ठोक करना ।

मुजरा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ वह जो जारी किया गया हो । २ वह
रकम जो किसी रकम में से काट ली गई हो । जैसे, - १०)
हमारे निकलते थे, वह हमने उसमें से मुजरा कर लिए ।

क्रि० प्र०—करना ।—देना ।—पाना ।—लेना ।

३ किसी बड़े या धनवान आदि के सामने जाकर उसे सलाम
करना । अभिवादन । ४ वेश्या का वह गाना जो बैठकर हो
और जिसमें उसका नाच न हो ।

क्रि० प्र०—करना ।—मुनना ।—सुनाना ।—झोना ।

मुजराई—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुजरा + ई (प्रत्य०)] १ वह जो मुजरा
या सलाम करता हो । २ वह व्यक्ति जो केवल सलाम करने
के लिये वेतन पाता हो । ३ वह जो मरसिया पढता हो । ४
काटने या घटाने की क्रिया । ५ काटो या मुजरा की हुई
रकम ।

मुजराकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुञ्जर] एक प्रकार का कद मुजात ।

विशेष—यह कद उत्तर भारत में होता है और इसे 'मुजात' भी
कहते हैं । वैद्यक में यह श्रत्यत स्वादिष्ट, वीर्यवर्धक तथा वात
पित्त नाशक माना गया है ।

मुजरागाह—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुजरा गाह] दरवार में वह स्थान जहाँ
खड़े होकर लोग सलाम या मुजरा करें ।

मुजरिम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह जिसपर कोई जुर्म या अपराध लगाया
गया हो । अभियुक्त ।

मुजरत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुजरत] १ नुकसान । हानि । २ कष्ट ।
तकलीफ [को०] ।

मुजरद—वि० [अ० मुजरद] १ जिसके साथ और कोई न हो ।
अकेला । २ जिसका विवाह न हुआ हो । बिन व्याहा । ३
जिसने ससार का त्याग कर दिया हो ।

मुजरव—वि० [अ० मुजरव] तजरुवा किया हुआ । आजमाया हुआ ।
परीक्षित । जैसे, मुजरव दवा, मुजरव नुसखा ।

मुजल्लद—वि० [अ० मुजल्लद] जिसकी जिन्द बँधी हो । जिल्दवार ।

मुजम्सम—वि० [अ० मुजम्सम] १ 'मुजम्सम' ।

मुजरसमा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुजरसमा] प्रतिमा । मूर्ति । रूपवृत्ति
[को०] ।

मुजरिसम—वि० [अ० मुजरिसम] गपरीर । प्रत्यक्ष । जैसे,—नीजिए
आपके मामन मुजरिसम खं हैं ।

मुजादला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुजादला] १ लड़ाई । युद्ध । २
मुजाहमा । वाद विवाद [को०] ।

मुजावर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुजावर] १ पटोनी । प्रतिवशी । २
दे० 'मुजावर' ।

मुजारिया—वि० [अ०] जो जारी किया या कराया गया हो ।
(कच०) ।

मुजावर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुजावर] १ वह मुनलमान जो किसी
पीर आदि की दरगाह या रोजे पर रहकर वहाँ की सेवा का
कार्य करता हो और चढ़ावा आदि लेता हो । उ०—मुजावर
हो या बँम चानीय दिन । किसी रात्र दिन फूँ ना करले नगन ।
—दक्खिनी०, पृ० ८६ ।

मुजाहद—वि० [अ० मुजाहिद] १ कोशिश करनेवाला । प्रयत्नशील ।
२ विघ्नियों में युद्ध करनेवाला । जिहाद करनेवाला ।

मुजाहिम—वि० [अ० मुजाहिम] रोक टोक करनेवाला । हस्तक्षेप
करनेवाला । उ०—पर आश्चर्य यह कि कोई इन धर्म के लुटेरा
में मुजाहिम न हुआ ।—गोदान, पृ० २२६ ।

मुजिर—वि० [अ० मुजिर] नुकसान पहुचानेवाला । हानिकारक ।

मुजे—सर्व० [प्रा० मुज्ज, हिं० मुजे] दे० 'मुजे' । उ०—वम्भन कहे
नामदेव मुजे पूजना भूदेव, इती वात मुजे देव वहा देव गगा
मो ।—दक्खिनी०, पृ० ४५ ।

मुम्भ—सर्व० [प्रा० मुज्ज] मैं का वह रूप जो उस कर्ता और सर्वव
कारक को छोड़कर शेष कारका में, विभक्ति लगने में पहले प्राप्त
होता है । जैसे, मुम्भको, मुम्भने, मुम्भमें ।

मुम्भे—सर्व [सं० मुज्जम्, प्रा० मज्जम्] एक पुरुषवाचक मर्बनाम
जो उत्तम पुरुष, एकवचन और उभयलिंग है तथा वक्ता या
उसके नाम की ओर सक्त करता है । यह 'मैं' का वह रूप
है जो उसे कर्म और नपदान कारक में प्राप्त होता है । इसमें
लगा हुई एकार की मात्रा विभक्ति का चिह्न है, इसलिये
इसके आगे कारक चिह्न नहीं लगता । मुम्भको । जैसे,—(क)
(क) मुम्भे वहा गए कई दिन हो गए । (ख) मुम्भे आज कई पत्र
लिखने हैं ।

मुम्भौसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुँह + भौसना + ई (प्रत्य०)]
दे० 'मुँहभौसी' । उ०—उसकी माँ सुने में समझाती—अरी
मुम्भौसी, लडकपन छोड ।—शारदा, पृ० १२ ।

मुटकना—वि० [हिं० मोटा + कना (प्रत्य०)] आकार में छोटा
या साधारण, पर सुदर । जैसे, मुटकना सा बाग ।

मुटका—सञ्ज्ञा पुं० [देश ?] एक प्रकार का रेशमी वस्त्र जो

अधिकतर प्रंगान में चन्ता है श्रीन घोंती के स्थान में पत्तने के काम में आता है।

मुटकी—अक्ष स्त्री० [अक्ष०] कुलधी नामक अन्न। मुटकी।

मुटमरदी—अक्ष स्त्री० [हि० मोटा + अ० मर्द + टि० टं (प्रत्य०)] हूरामचोरी। आलसीपन। निष्क्रियता। उ०—यह मुटमरदी है कि अधा मागे, और आगोवाले मुनटे पंटे गाएँ।
—रगभूमि, भा० २, पृ० ५६६।

मुटसुरी—अक्ष पुं० [अक्ष०] एक प्रकार का भद्र वान।

मुटरी—अक्ष स्त्री० [हि० मोट (= गठरी)] ० गठरी।

मुटाई—अक्ष स्त्री० [हि० मोटा + इ (प्रत्य०)] १ मोटापन। स्थूलता। २ पुष्टि। ३ अहंकार। घमंड। शेरी। ४ वह वेपरवाही या अभिमान जो भरपूर भोजन मिलने या कुछ धन हो जाने में हो जाय।

मुहा०—मुटाई चढ़ना = बहुत अधिक अभिमान होना। योगी होना। मुटाई ऋटना = अभिमान चूर्ण होना। देखी ढूटना।

मुटाना—क्रि० अ० [हि० मोटा + आना (प्रत्य०)] १ मोटा हो जाना। स्थूलांग हो जाना। उ०—प्रभु में सेवक। नमक हराम। साइ खाद के महा मुटहों करिहा कछून नाम।—भारतेंदु प्र०, भा० २, पृ० ५४२। २, जेरीवाज हो जाना। अहंकारी हो जाना। अहमन्य हो जाना। उ०—हमन आनत रिम करत अस तुम गए मुटाय।—विश्राम (शब्द०)।

मुटासा—वि० [हि० मोटा + आसा (प्रत्य०)] वह जो मान पीने में मजे में हा जान या कुछ धन कमा लेने से बेपरवा आर घमंडी हो गया हो।

मुटिया—अक्ष पुं० [हि० मोट (= गठरी) + श्या (प्रत्य०)] बाक डोनेवाला। मजदूर।

मुट्टु—अक्ष पुं० [हि०] २० 'मुट्टी'। उ०—रतं मुट्टु जमदा गहि पान पैनी।—प० रासा, पृ० १७७।

मुट्टा—अक्ष पुं० [हि० मूठ] १. घान, फूम, तृण या उल्ल का उतना पूला जितना हाय की मुट्टी में आ सके। २. चगुल भर वस्तु। जितनी एक मुट्टी में आ सके उतनी वस्तु। जैसे, एक मुट्टा आटा। ३. समेटा या बधा हुआ समूह जो मुट्टी में आ सके। पुलिया। जैसे, कागज का मुट्टा, तार का मुट्टा। ४. शक या वन आदि का वह अक्ष जो उमक प्रयोग के समय मुट्टा में पकटा जाय। बेंट। दस्ता। ५. धुनिया का चलने का आकार का वह श्रीजार जिससे रुई धुनते समय तात पर आघात किया जाता है। ६. कपड़ का गढ़ा जो प्रायः पटलवान भादर चारा पर मोटाई दिखलाने या सुदरता बढ़ाने के लिये बापा है।

मुट्टागुहेर—अक्ष स्त्री० [अक्ष०] सुवता री। (पहार)।

मुट्टा—अक्ष स्त्री० [अ० मुष्टिका, प्रा० मुष्टिका] १. घान की वह मुट्टा जो उमानधी की मोड़कर हाथी पर दबा लेने के लिये है। बंधी हुई होने की। २. उमान वस्तु जितनी उमानुक्त मुट्टा के समय हल में आना। जैसे, एक मुट्टा आना। ३. उमान की उमानुक्त मुट्टा।

मुट्टा—अक्ष स्त्री० [अ० मुष्टिका] १. मुट्टी। उ०—रावत नी गट भया मुठिता के साथ ता।—तुना (नद०)। २. पुं०। मुक्ता। उ०—मुठिता ए ताहि कवि नी। अथर दमन धरनी दामनी।—तुना (नद०)।

उपयुक्त मुट्टा के समान बड़े हुए पत्र की नोटों का भाग। बंधी हवनी के बराबर या स्थिता। उ०—रगभूमि मुट्टी भूँ ऊँचा होना चाहिए। ५ हाथी व विषी के पया की विनोपत हाय पर का पका पकटकर दमान ती श्रित विनो जरिर की पकापट दर तानी है। चरी।

क्रि० प्र०—भरना।

६ एक प्रकार की छोटी पानी पानी जिनसे पानी मिट्टी कुछ मोटे घोर गोन होते हैं जो छोटे बच्चा की पीना के लिये दी जाती है। इनसे बच्चे प्रायः चूसा करते हैं। मुक्ती। ७ छोटे के गुम और टपने के बीच का भाग। ८ बाना का एक जिलोना। दे० 'मुट्टी'।

मुठभेड़—अक्ष स्त्री० [हि० मूठ + भिठना] १. टपार। भिठल। लडाई। २. भेंट। गामना।

मुठिका—अक्ष स्त्री० [अ० मुष्टिका] १. मुट्टी। उ०—रावत नी गट भया मुठिता के साथ ता।—तुना (नद०)। २. पुं०। मुक्ता। उ०—मुठिता ए ताहि कवि नी। अथर दमन धरनी दामनी।—तुना (नद०)।

मुठिया—अक्ष स्त्री० [अ० मुष्टिका] १. मुट्टी, कपड़ा दाद धोना का वह भाग जो मुट्टी में पकटा जाय। दस्ता। दे० २. गम में रची या ली जानवाकी वस्तु का जो गम का मुट्टे में पकटा जाता है। जैसे, छटा की मुठिया, रंगरत मुट्टा। ३. धुनिया का पर श्रीजार जिसे व धुनाका का तात पर आघात करते हैं।

मुठो—अक्ष पुं० [हि०] २० 'मुट्टी'। उ०—नाम ता बिट्टा परसा सती दला यह उष मीटु मुठो म।—पदावर (नद०)।

मुट्टनी—अक्ष स्त्री० [हि० मूठ] मूठ का जो पया बाना का एक जिलोना जिसे दोन गिया पर गोलनी को हात है घान नी में पकटने की मुठ नीता। ३. मोठिय न पका नर ३३ है जिनके चारखे के नाम के उमान का मुट्टा उ०—१. मुट्टी मुट्टुता मुनये उ० उमान व यारी ३—तुना (नद०)।

मुठक—अक्ष पुं० [हि० मुठका] २० 'मुट्टी'।

मुठकना—अक्ष पुं० [हि० मुठका] २० 'मुट्टी'।

मुठना—अक्ष पुं० [अ० मुष्टिका] २० 'मुट्टी'। २. उमान की उमानुक्त मुट्टा। दे० ३. उमान की उमानुक्त मुट्टा।

शोर फिरना । दबाव या आघात से चलना या भुक जाना । घुमाव लेना ।—जैसे,—(क) छड पर दाव पडी, इमने वह मुड गई । (ख) यह तार तो मुटता ही नहीं है, रमे कंमे लपेटें । २. किमी धारदार किनारे या नोक का इम प्रकार भुक जाना कि वह आगे की शोर न रह जाय । जैसे, डुगी की धार या मुई का नोक मुटना । ३ लगेर की तरह सीधे न जाकर घूमकर किसी शोर भुकना । बक्र होकर भिन्न दिशा मे प्रवृत्त होना । जैसे,—आग चलकर यह नदी (या नक) दोबरन की शोर मुड गई है । ४ चलते चलत सामने न रुकी दूसरी शोर फिर जाना । दाए तरफा बाएँ घम जाना । जैसे,—कुछ दूर जाकर दाहिनी शोर मुड जाना, तो उका घ मिल जायगा । ५ घूमकर फिर से पीछे की शोर चल पटना । लौटना ।

सयो० क्रि०—जाना ।

मुड़ना—क्रि० अ० [हि० मूड़ना] दे० 'मुटना' ।

मुड़ला(पु०)—वि० [सं० मुखड] [वि० स्त्री० मुडली] जिसके सिर पर बाल न हों । बिना बालवाला । मुड़ा । उ०—कच-खुविआ धर काजर कानी नकटी पहरै वेमरि । मुड़नी पटिया पारि नवारी कोढी लावै केसरि ।—सूर (शब्द०) ।

मुड़वरियाँ—सज्ञा स्त्री० [हि० मुड़वार + रिया (प्रत्य०)] दे० 'मुड़वारी' ।

मुड़वाना^१—क्रि० सं० [हि० मूड़ना का प्रे० रूप] १ किसी का मूडने मे प्रवृत्त करना । उस्तरे से बाल या रोएँ दूर कराना । २ मुड़वाना ।

मुड़वाना^२—क्रि० सं० [हि० मूड़ना का प्रे० रूप] मुटने या घूमने मे प्रवृत्त करना ।

मुड़वारी—सज्ञा स्त्री० [सं० मुखड + हि० वारी (प्रत्य०)] १ शरारी की दोवार का सिरा । मुँडैरा । उ०—मुड़वारी रविमखिनि संवारी । अनल कार छटो छविदारी ।—गुमान (शब्द०) । २ लेटे हुए मनुष्य का वह पार्श्व जिधर सिर हो । सिरहाना । ३ वह पार्श्व जिधर किसी पदार्थ का सिरा श्रवण कपरी भाग हो ।

मुड़हरा—सज्ञा पुं० [हि० मूँड़ + हर (प्रत्य०)] १ स्त्रिया की साडी वा चादर का वह भाग जो ठीक सिर पर रहता है । उ०—मुख पखारि मुड़हर भिजे सीस सजल कर छाइ ।—विहारी (शब्द०) । २ सिर का अगला भाग ।

मुड़ाना—क्रि० सं० [सं० मुखडन] सिर के सब बात बनवाना । मुडन कराना । मुँडाना ।

मुड़ियाँ—सज्ञा पुं० [हि० मूड़ना + रिया (प्रत्य०)] वह जिसका सिर मुँडा हुआ हो । (विशेषत कोई सन्यासी, साधु या बंरागी आदि) । उ०—यह निर्गुण लै तिनहि सुनावहु जे मुड़िया बसै काशी ।—सूर (शब्द०) । विशेष दे० 'मुँडिया' ।

मुड़िया^१—सज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की मछली ।

मुड़ैरा—सज्ञा पुं० [हि० मूँड़ + रा (प्रत्य०)] दे० 'मुँडैरा' ।

मुतगाँ—सज्ञा पुं० [अ०] १ सूत की गाँटी बगैर, जिसे माधु नोम पहिन्ते है । मुतगा । उ०—मेहर की बकनी श्री बुनाइ भी मेहर का, मेहर का मुतगा उन रम मे लगाइए ।—मधु० वानी, पृ० ३० । २ नंगोटी । कानी ।

मुतजन—सज्ञा पुं० [प्रा०] गाँठ पुतार, जिसे मछर की पत्नी है ।

मुतश्रुटी—वि० [अ०] १ गोमा वा शक्तिभंग करनेवाला । २ मराम राग ।

मुतश्रुल्लिख^१—वि० [अ० मुतश्रुल्लिख] १ मरव रखनेवाला । तगान रखनेवाला । मरव । २ भिन्न हुआ । भिन्नित ।

मुतश्रुल्लिख^२—वि० वि० मरव से । विषय मे । उ०—उके मुतश्रुल्लिख मुगे गुठ नहीं कर्ना है ।

मुतश्रुल्लिम—सज्ञा पुं० [अ०] मरव भोजनेवाला । उ० (दे०) ।

मुतश्रुसिख वि० [अ०] मरव रखनेवाला । मरव, नाति वा पञ्जात रखनेवाला । मरव । उ०—नाप बूज हा पाक दिल और मुतश्रुसिख मुतश्रुसिख ।—प्रमदन०, भा० २, पृ० ६० ।

मुतका—सज्ञा पुं० [हि० मूँड़ + टक] १ काँडे के छत्र वा चार के ऊपर पाटन के बिना गरी । मुँड पटिया वा नीला दीवार जो गिरने मे रोने के लिए है । २ जमा । ३ नानार । लाट ।

मुतगैयर—वि० [अ० मुतगैयर] परिवर्तित । बदला हुआ । उ०—ह्या बदल मुतगैयर हमारा खबर लेने वा पास पास करताए ।—बंरार म०, पृ० ४६ ।

मुतदायरा—वि० [अ०] (दुःख) का दावर किया गया हो (सूच०) ।

मुतफन्नी—वि० [अ० मुतफन्नी] मुत मरव पूर्व । बाजेबाज । चालाक ।

मुतनफिकर—वि० [अ० मुतनफिकर] दुग्णा करनेवाला । भागने वाला । चलाय रहनेवाला । उ०—बुनाचि मे सुद गीर करता है तो मुके रणधीर मिह का तयित नराय अर रडे से निहायत मुतनफिकर नासुम देती है ।—श्रीनिवान प्र०, पृ० ३२ ।

मुतफरकात—सज्ञा स्त्री० [अ० मुतफरिकात] १ भिन्न भिन्न पदार्थ । फुटकर चीजे । २ फुटकर व्यव ही मय । ३ जमीन के वे अला अला टुकडे जो किसी एक ही गाव के पतारत हो ।

मुतफरिक्—वि० [अ० मुतफरिक्] १ भिन्न भिन्न । अलग अलग । २ विविध । कई प्रकार का ।

मुतवन्ना—सज्ञा पुं० [अ०] गोद लिया हुआ पुत्र । २, दत्तक पुत्र ।

मुतमादी—वि० [अ०] जिसका नियत समय बीत चुका हो (को०) ।

मुतमावल—वि० [अ०] धनवान् । सपत्तिशाली । शमीर । धनी-भिमानी ।

मुतरज्जिम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] जो अनुवाद करे। तरजुमा करनेवाला। अनुवादक।

मुतलक^१—क्रि० वि० [अ० मुतलक] जग भी। तनिक भी। रत्ती भर भी। उ०—जिमका नित नोन सात मुतलक भी ना डरात। अछा वजूद पाय औरत मे हारा है।—मलूक० वानी, पृ० २२।

मुतलक^२—वि० बिलकुल। निरा। निपट।

मुतवज्जह—वि० [अ०] जिमने किसी और तवज्जह की हो। जिमने ध्यान दिया हो। प्रवृत्त।

मुतवपफा—वि० [अ० मुतवपफा] परलोकवासी। मृत। स्वर्गीय। (कच०)।

मुतवल्ली—मञ्ज्ञा पुं० [अ०] किमी नाबालिग और उसकी सपत्ति का रक्षक। किसी बड़ी सपत्ति और उसके अल्पवयस्क अधिकारी का कानूनी सरक्षक। बली।

मुतवरिसत—वि० [अ०] न अधिक न कम। दरमियानी। बीच का। उ०—मुहम्मद मुतवस्मित दरयाव, तीन लोक है उनकी नाव।—दक्खिनी०, पृ० ३०३।

मुतवातिर—क्रि० वि० [अ०] लगातार। निरतर।

मुतसही—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. लेखक। मुंशी। २. पेशकार। दीवान। ३. जिम्मेदार। उत्तरदायी। ४. इतजाम करनेवाला। प्रवचकर्ता। ५. हिसाब रखनेवाला। जमा खर्च लिखनेवाला। ६. मुनीम। गुमाश्ता।

मुतसिरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोती + म० श्री > हि० सिरी] कठ मे पहनने की मोतियों की कठी। उ०—ग्रीव मुतसिरी तोरि क अचंग मो वाँव्यो।—सुर (शब्द०)।

मुतहम्मिल—वि० [अ०] वरदाश्त करनेवाला। सहिष्णु। सहनशील।

मुतहैय्यर—वि० [अ० मुतहैय्यर] हैरत मे पडा हुआ। स्तब्ध। चकित, उ०—ललाइन माहव की आजादी देखते ही साहो जी साहव मुतहैय्यर हो घब्रडाकर यो रेंके।—भारतेंदु प्र०, भा० ३, पृ० ८६३।

मुताचिक^१—क्रि० वि० [अ० मुताचिक] अनुमार। वमूजिव।

मुताचिक^२—वि० अनुकूल।

मुतालवा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुतालवह] उतना धन जितना पाना वाजिव हो। पासव्य धन। वाकी रुपया।

मुताला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुतालअह] १. किसी चीज की पूरी जानकारी के लिये गौर से देखना। समीक्षण। निरीक्षण। २. पाठ की शुरु करने के पूर्व स्वयं पढना ताकि शुद्ध पढा जा सके। पटना। उ०—देखना हर मुवह तुफ रुखमार का। है मुताला मतलए अनवार का।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ३।

मुतासा—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मूतना + आस (प्रत्य०)] मूतने की इच्छा। पेशाब करने की इवाहिण।

मुताह—मञ्ज्ञा पुं० [अ० मुतअ] मुमलमानो मे एक प्रकार का अस्थायी विवाह जो 'निवाह' मे निकृष्ट समझा जाता है। इन प्रकार का विवाह प्रायः गीया लोगो मे होता है।

मुताही—वि० [हि० मुनाह + ई (प्रत्य०)] १. वह जिमके साथ मुताह किया गया हो। २. रमेली। (स्त्री)।

मुति^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मुक्ति] ३० 'मुक्ति'। उ०—जोग मग लभिय न परग मगह मुति पाइव।—पृ० रा०, १२५३।

मुति^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मुक्ति] मौक्तिक। मोती। उ०—मुख भुवि चद्र निलाट अमित वर माल माल मुति।—पृ० रा०, २।४२४।

मुति^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मुक्ति, प्रा० मुक्ति] दे० 'मूति'। उ०—मुदरि कनक केया मुति गोरी। दिने दिने चाँद कला मझो बाढलि जउवन शोभा तोरी।—विद्यापति, पृ० १७।

मुतिया^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोती + या] दे० 'मोती'। उ०—मनु नव नीत कमल दल तँ भल मुतिया भरही।—नद० प्र०, पृ० २०१।

मुतिलाहू^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोती + लड्डू] मोतीचूर का लड्डू। उ०—मुतिलाहू हैं अति मीठे। वँ खात न कवहँ उवीठे।—सुर (शब्द०)।

मुतेहर^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोती + हार] कवण की आकृति का एक प्रकार का आभूषण जो स्त्रियाँ कलाई पर पहनती हैं।

मुत्तफिक—वि० [अ० मुत्तफिक] राय से इत्तफाक करनेवाला। सहमत।

मुत्तला—वि० [अ०] जिमे इत्तिला दी गई हो। मूचित [को०]।

मुत्तसिल^१—वि० [अ०] निकट। नजदीक। नर्माप। पास। लगा हुआ।

मुत्तसिल^२—क्रि० वि० लगातार। निरतर।

मुत्ती^१—सञ्ज्ञा पुं० [स० मौक्तिक, प्रा० मोत्तिय] दे० 'मोती' या 'मौक्तिक'। उ०—मुत्ती माल मुरग घन।—पृ० रा०, १।६७०।

मुत्ती^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मूत्र] मूत्र। पेशाब।

मुत्य—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मौक्तिक। मोती [को०]।

मुथराई^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० भोधराना] वार आदि का भोधरा होना। उ०—पैने बटाछनि ओज मनोज के वानन बीच विधी मुथराई।—घनानंद, पृ० ११०।

मुथशील—सञ्ज्ञा पुं० [स०] ज्योतिष मे इत्यशाल नामक योग [को०]।

मुद्—सञ्ज्ञा पुं० [स०] हर्ष। आनंद। प्रसन्नता। उ०—मुद् मगन मय भत ममाजू।—तुनमी (शब्द०)।

यौ०—मुद्कद = आनंदकद भगवान् विष्णु। उ०—लंगोदर मुद्कद देव दामोदर बंदो।—दीन० प्र०, पृ० १२३।

मुद्गर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुद्गर] १. दे० 'मुद्गर'। २. दे० 'मुद्गर'।

मुदन्विर—वि० [अ०] १. प्र-धनुशन। व्यस्त्या करने मे निपुण। दूरदर्शी। ३. बुद्धिमान्। ४. राजनीतिनिपुण। नीतिज्ञ [को०]।

मुद्रमा (७) —क्रि० वि० [अ० मुद्राम्] दे० 'मुद्राम' । उ०—मतगुर मेरे सिर पर ठाटा मुद्रमा आगँ चेला ।—रामानन्द०, पृ० २८ ।
मुद्रा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का मादक पेय पदार्थ जो अफीम, भाँग, शराब और घूँरे के योग से बनता है और जिसका व्यवहार पश्चिमी पञ्जाब तथा बलोचिस्तान में होता है ।
मुद्ररी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुद्रिका] दे० 'मुद्ररी' । उ०—हे मुद्ररी तेरो सुकल मेरो ही मौ हीन । फल सो जान्यो जात है मैं निरन करि नैन ।—शकुतला, पृ० ११४ ।
मुद्ररिस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] पाठशाला का शिक्षक । अध्यापक ।
मुद्ररिसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ मुद्ररिस का काम । पढाने का काम । अध्यापन । २ मुद्ररिस का पद । जैसे,—बड़ी कठिनता से उन्हें म्युनिसिपल स्कूल में मुद्ररिसी मिली है ।
मुद्रवर—वि० [अ०] दे० 'मुद्रवर' [को०] ।
मुद्रा—अव्य० [अ० मुद्रा (= अभिप्राय)] १ तात्पर्य यह कि । २ मगर । लेकिन ।
मुद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हर्ष । आनन्द । प्रसन्नता ।
मुद्राना—क्रि० स० [हिं० मुद्रना का प्र०रूप] बढ़ करना । मुद्रवाना । उ०—ले अनाज कोठी बहराव । खरच लेइ पुन फेरि मुद्राव ।—कवीर सा०, पृ० २५ ।
मुद्राम—क्रि० वि० [फा०] १ सदा । हमेशा । सदैव । उ०—(क) राम लखन सीता की छवि को सीयराम अभिराम । उभय दृगचल भए अचचल प्रीति पुनीत मुद्राम ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) अहैं हम सत्य धरा सरनाम । करै रन में पर सत्य मुद्राम ।—गोपाल (शब्द०) । २ निरंतर । लगातार । अनवरत । ३ ठीक ठीक । हूबहू । (क०) ।
मुद्रामी—वि० [फ्रा०] जो सदा होता रहे । सार्वकालिक । उ०—दगी मुक्रामी फेरी सलायी । बंधी पचदस जौन मुद्रामी ।—रघुराज (शब्द०) ।
मुद्रावसु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार प्रजापति के एक पुत्र का नाम ।
मुद्रित—वि० [सं०] हर्षित । आनन्दित । प्रसन्न । खुश ।
मुद्रित—सञ्ज्ञा पुं० कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का आलिगन । नायिका का नायक की बाईं और लेटकर उसकी दोनों जाँघों के बीच में अपना बायाँ पैर रखना ।
मुद्रिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ परकीया के अर्तगत एक प्रकार की नायिका जो परपुरुष प्रीति सर्ववी कामना की आकस्मिक प्राप्ति से प्रसन्न होती है । उ०—परस्वि प्रेमवशा परपुरुष हरपि रही मन मैन । तत्र लगि मुक्ति आई घटा अधिक अधेरी रैन ।—पद्माकर (शब्द०) । २ हर्ष । आनन्द । ३ योगशास्त्र में समाधि योग्य सस्कार उत्पन्न करनेवाला एक पारिकर्म जिसका अभिप्राय है—पुण्यात्माओं को देखकर हर्ष उत्पन्न करना ।
विशेष—ये परिकर्म चार कहे गए हैं—मंथ्री, कल्या, मुद्रिता और उपेक्षा ।
मुद्रिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वादल । मेघ । उ०—(क) धाराधर जलधर जलद जग जीवन जीमूत । मुद्रिर बलाहक तद्वितपति परजन जज्ञ सुपूत ।—नददास (शब्द०) । (ख) कहै मतिराम

दीने दीरघ दुरदवृ द मुद्रिर मे मेदुर मुद्रित मतवारे हैं ।—मतिराम (शब्द०) । २ वह जिसे कामवामना बहुत अधिक हो । कामुक । ३ मेढक ।

मुद्रौ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ज्योत्सना । चाँदनी । चन्द्रिका [को०] ।
मुद्रौवर—वि० [अ० मुद्रवर] गोल । गोलाकार । वृत्ताकार । मंडलाकार ।
मुद्रग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मूँग नामक अन्न जिससे दाल बनाई जाती है । विशेष दे० 'मूँग' । २ आवरण । ढक्कन । आच्छादन । (को०) । ३ एक शस्त्र । दे० 'मुद्रगर' (को०) । ४ एक पत्नी । जलवायम । विशेष दे० 'जलकीआ' (को०) ।
मुद्रगगिरि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुगेर और उसके आसपास के प्रांत का प्राचीन नाम ।
मुद्रगदला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुद्रगपर्णी । बनमूँग ।
मुद्रगपर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वनमूँग । मुगवन ।
मुद्रगभक्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुद्रगभुज्] अश्व । घोड़ा [को०] ।
मुद्रगभोजी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुद्रगभोजिन्] घोड़ा ।
मुद्रगर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ काठ का बना हुआ एक प्रकार का गावदुमा दड़ । मुगदर । जोड़ी ।
विशेष—यह मूठ की ओर पतला और आगे की ओर बहुत भारी होता है । इसे हाथ में लेकर हिलाते हुए पहलवान लोग कई तरह की कसरतें करते हैं । इससे कलाइयों और बाँहों में बल आता है । इसे जोड़ी भी कहते हैं क्योंकि इसकी प्रायः जोड़ी होती है जो दोनों हाथों में लेकर बारी बारी से पीठ के पीछे से घुमाते हुए सामने लाकर तानी जाती है ।
क्रि० प्र०—फेरना ।—हिलाना ।
 २ प्राचीन काल का एक अस्त्र जो दंड के आकार का होता था और जिसके सिरे पर बड़ा भारी गोल पत्थर लगा होता था । ३ एक प्रकार की चमेली । मोगरा । ४ एक प्रकार की मछली । ५ कोरक । कली (को०) । ६ हथौड़ा या मुगरा । जैसे, मोहमुद्रगर (को०) ।
मुद्रगरक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुंगरा । हथौड़ा [को०] ।
मुद्रगराक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुद्रगराङ्क] मुद्रगर (मुंगरे) का चिह्न जो घोवियों के वस्त्र पर पहचान के लिये चद्रगुप्त के समय में रहता था ।
विशेष—यदि घोवी इस प्रकार के चिह्न से रहित वस्त्र पहनकर निकलते थे तो उनपर तीन परा जुर्माना होता था ।
मुद्रगल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रोहिण्य नामक तृण । २ एक गोत्रकार मुनि का नाम, जिनकी स्त्री इद्रसेना थी । ३ एक उपनिषद् का नाम ।
मुद्रगष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुगवन । बनमूँग ।
मुद्रा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] अभिप्राय । तात्पर्य । मतलब ।
मुद्रई—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] [स्त्री० मुद्रया] १ दावा करनेवाला । दावादार । वादी । २ (७) दुष्मन । वैरी । शत्रु । उ०—मोहन मीत समीत गो लखि तेरो सनमान । अब सु दगा दै तू चल्यो अरे मुद्रई मान ।—पद्माकर (शब्द०) ।

मुद्रत—सज्ञा स्त्री० [अ०] १. अवधि। जैसे,—इस हुडी की मुद्रत पूरी हो गई है।

मुहा०—मुद्रत काटना = थोड़ा माल का मूत्य अवधि से पहले देने पर अवधि के बाकी दिनों का सूद काटना (कोठीवाल)।

२. बहुत दिन। अरमा। जैसे,—बाद मुद्रत के आज आपकी शकल दिखाई दी है।

यौ०—मुद्रत दराज - बहुत ममय। बहुत दिन। मुद्रतेहयात = जीवनकाल।

मुद्रती—वि० [अ० मुद्रत + ई (प्रत्य०)] वह जिसके साथ कोई मुद्रत लगी हो। वह जिसमें कोई अवधि हो। जैसे, मुद्रती हुडी।

यौ०—मुद्रती हुडी = वह हुडी जिसका रुपया कुछ निश्चित समय पर देना पड़े।

मुद्रा—सज्ञा पुं० [अ० मुद्राया] गरज। अभिप्राय। उद्देश्य। मशा। उ०—पलटू मेरी वन पड़ी मुद्रा हुआ तमाम।—पलटू०, पृ० १३।

मुद्राअलेह—सज्ञा पुं० [अ०] वह जिसके ऊपर कोई दावा किया जाय। वह जिसपर कोई मुकदमा चलाया गया हो। प्रतिवादी।

मुद्रालेह—सज्ञा पुं० [अ० मुद्राअलेह] दे० 'मुद्राअलेह'।

मुद्रा(५)†—वि० [सं० मुग्ध, प्रा० मुञ्ज, मुञ्ज] दे० 'मुग्ध'।

मुद्रा†—सज्ञा पुं० [?] गुल्फ। मोजा। टखना।

मुद्रा—सज्ञा स्त्री० [देश०] रस्सी आदि की खिसकनेवाली गाँठ।

मुद्र—वि० [सं०] आनन्ददायक। प्रसन्न करनेवाला [को०]।

मुद्रक—सज्ञा पुं० [सं०] वह जो किसी छापेखाने में रहकर छापने का काम करता या देखता हो और छपनेवाली चीजों की छपाई का जिम्मेदार हो। छापनेवाला। मुद्रणकर्ता। जैसे,—'चन्द्रोदय' के संपादक और मुद्रक राजविद्रोहात्मक लेख लिखने और छापने के अभियोग पर भारतीय दंडविधान की १२४ 'ए' धारा के अनुसार गिरफ्तार किए गए हैं।

मुद्रकी(५)—सज्ञा स्त्री० [सं० मुद्रिका] दे० 'मुद्रिका'। उ०—इक इक वटुअ मालाति इक। मुद्रकी इक इत पहुँचि किकक।—पृ० रा०, १४।१२५।

मुद्रण—सज्ञा पुं० [सं०] १ किसी चीज पर अक्षर आदि अंकित करना। छपाई। २ ठपे आदि की सहायता से अंकित करके मुद्रा तैयार करना। ३ ठीक तरह से काम चलाने के लिये नियम आदि बनाना और लगाना। ४ बंद करना। मूँदना।

मुद्रणा—सज्ञा स्त्री० [सं०] अंगूठी।

मुद्रणालय—सज्ञा पुं० [सं०] १ वह स्थान जहाँ किसी प्रकार का मुद्रण होता हो। २ छापखाना। प्रेस।

मुद्रण पत्र—सज्ञा पुं० [सं०] किसी छपनेवाली चीज का नमूना। प्रूफ [को०]।

मुद्राक—सज्ञा पुं० [सं० मुद्राक] मुद्रा पर का चिह्न।

मुद्राकन—सज्ञा पुं० [सं० मुद्राकन] [वि० मुद्राकित] १ किसी प्रकार की मुद्रा की सहायता से अंकित करने का काम। २. छापने का काम। छपाई।

मुद्राकित—वि० [सं० मुद्राकित] १. मोहर किया हुआ। जिमपर मुहर लगी हो।

यौ०—मुद्राकित पत्र = मुहर की हुई चोठी।

२ जिसके शरीर पर विष्णु के आयुष के चिह्न गरम लोहे से दागकर बनाए गए हो। (वैष्णव)।

मुद्रा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ किसी के नाम की छाप। मोहर। उ०—मुद्रित समुद्र मात मुद्रा निज मुद्रित कै, आई दिमि दमो जीनि मेना रघुनाथ की।—केशव (शब्द०)। २ रुपया, अक्षरफा आदि। सिद्धा। ३ अंगूठी। छाप। छला। उ०—वनचर कीन देश तें आयो। कहीं वे राम कहा वे ललितमन वयो करि मुद्रा पाया।—सूर (शब्द०)। ४ टाइप के छपे हुए अक्षर। ५ गोरखपथी साधुओं के पहनने का एक कर्णभूषण जो प्रायः काँच या स्फटिक का होता है। यह कान की लो के बीच में एक बड़ा छेद करके पहना जाता है। उ०—(क) शृ गी मुद्रा कनक खपर लै करिहीं जोगिन भेस।—सूर (शब्द०)। (ग) भमम लगाऊँ गात, चदन उतारो तात, बु डल उतारो मुद्रा कान पहिराय छौं।—हनुमान (शब्द०)। ६ हाथ, पाँव, आँख, मुँह, गर्दन आदि की कोई स्थिति। ७ बैठने, लेटने या खड़े होने का कोई ढंग। अंगों की कोई स्थिति। ८ चेहरे का ढंग। मुख की आकृति। मुख की चेष्टा। उ०—मायावती अकेने उम वाग मे टहल रही थी और एक ऐसी मुद्रा बनाए हुए थी, जिमसे मालूम होता था कि यह किसी बड़े गंभीर विचार में मग्न है। वालकृष्ण (शब्द०)। ९. विष्णु के आयुषों के चिह्न जो प्रायः भक्त लोग अपने शरीर पर तिलक आदि के रूप में अंकित करते हैं या गरम लोहे से दागते हैं। जैसे, जन्म, चक्र, गदा आदि के चिह्न। छाप। १०. नाशिली के प्रनुत्तार कोई भूना दृशा अन्न। ११ तत्र मे उंगालेया आदि की अनेक रूपों की स्थिति जो किसी देवता के पूजन में बनाई जाती है। जैसे, धेनुमुद्रा, योनिमुद्रा। १२ हठ योग में विशेष अंग-विन्यास। ये मुद्राएँ पाँच होती हैं। जैसे,—पेचरी, भूचरी, चाचरी, गोचरी और उनमुनी। १३ अगन्त्य ऋषि तीर्त्ति, लोपामुद्रा। १४ वह अलंकार जिममें प्रवृत्त या प्रस्तुत प्रत्यय के अतिरिक्त रचना में कुछ और भी नाभिप्राय नाम निहित हैं। जैसे,—कत लपट्यत मो गरे मोन जुही निनि मंन। नैरि चपकवरनी किए गुन अनार रंग नंन।—विहारी (पद०)। इन पद्य में प्रकृत अर्थ के अतिरिक्त 'मोग रा', 'मोनजुही', 'चपक' इत्यादि शब्दों के नाम भी निकलते हैं। १५ वही जाने का आज्ञापत्र या परवाना। परवाना राहदारी।

मुद्राकर—सज्ञा पुं० [सं०] १ राज्य का वह प्रधान अंगिकारी अंकित अधिकार में राजा की मोहर रहता है। २ वा जो किसी

प्रकार की मुद्रा तैयार करता हो। ३ वह जो किसी प्रकार के मुद्रण का काम करता हो।

मुद्राकान्हड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का राग जिसमें सब कोमल स्वर लगते हैं।

मुद्राकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो मोहर बनाता हो। मुहर बनाने-वाला।

मुद्राचर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह अक्षर जिसका उपयोग किसी प्रकार के मुद्रण के लिये होता हो। २ सीसे के ढले हुए अक्षर जो छापने के काम में आते हैं। टाइप।

मुद्राटोरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की रागिनी जिसके गाने में सब कोमल स्वर लगते हैं।

मुद्रातत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसके अनुसार किसी देश के पुराने सिक्कों आदि की सहायता से उस देश की ऐतिहासिक बातें जानी जाती है।

पर्यां—मुद्राविज्ञान। मुद्राशास्त्र।

मुद्राधिप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुहर रखनेवाला। २ किले का प्रधान अधिकारी [को०]।

मुद्राध्यक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार वह अधिकारी जो कहीं जाने का परवाना देता है। कहीं वा अन्य राज्य में जाने का परवाना देनेवाला अधिकारी।

मुद्रावल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों के अनुसार एक बहुत बड़ी सख्या का नाम।

मुद्रामार्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मस्तक के भीतर का वह स्थान जहाँ प्राणवायु चढ़ती है। ब्रह्मरन्ध्र।

मुद्रायत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] छापने या मुद्रण करने का यत्र। छापे आदि की कल।

मुद्रारक्षक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मुद्राधिप' [को०]।

मुद्राराक्षस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विशाखदत्तरचित सस्कृत का एक प्रसिद्ध नाटक।

मुद्रालिपि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पाँच प्रकार की लिपियों में एक। छापे के अक्षर [को०]।

मुद्रावलि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] योगियों की मुद्रा। उ०—श्रुति ताटक मेलि मुद्रावलि, अर्धप्रवार अघारी।—सूर०, १०।३६६३।

मुद्रासकोच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुद्रा + सङ्कोच [सिक्कों की कमी]। मुद्रा की पूर्ति उसकी वास्तविक माँग से कम होना। उ०—जान ब्रूम्हकर मुद्रासकोच न भी किया जाय तब भी।—अर्थ (वे०), पृ० ३३८।

मुद्रास्थान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अँगुली का वह स्थान जहाँ अँगुली या छल्ला आदि धारण किया जाता है।

मुद्रास्फीति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुद्रा + स्फीति [वास्तविक माँग या जरूरत से अधिक मात्रा में मुद्रा या सिक्का का प्रचलन]। उ०—युद्धकाल में मुद्रास्फीति होती है।—अर्थ० (वे०), पृ० ३७३।

मुद्रिक—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मुद्रिका'। उ०—कर ककण केयूर मनोहर दोत मोद मुद्रिक न्यारी।—तुलसी (शब्द०)।

मुद्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ छोटी मुहर। २ अँगुठी। उ०—ठोर पाइ पौन पुत्र डारि मुद्रिका दर्ई।—केशव (शब्द०)। २ कुश की बनी हुई अँगुठी जो देव पितृ कार्य में अनामिका में पहनी जाती है। पवित्री। पैती। उ०—पहिरि दर्ममुद्रिका मुसूरी। समिध अनेक लीन्ह कर रूरी।—मधुसूदन (शब्द०)। ३ मुद्रा। सिक्का। रुपया। उ०—नरमी पै जव सत सब कहे सकोपित बैन। ठग ठगि लीन्ही मुद्रिका चलयो मारि तेहि लैन।—रघुगज (शब्द०)।

मुद्रित—वि० [सं०] १ मुद्रण किया हुआ। मुहर किया हुआ। २ अंकित किया हुआ। छपा हुआ। २ मुँदा हुआ। वद। उ०—(क) नासिका अग की श्रोर दिए अब मुद्रित लोचन कोर समाधित।—देव (शब्द०)। (ख) राजिव दल इ दीवर सतदल कमल कुसेसै जाति। निशि मुद्रित प्रातहि वे विगसत वे विगसत दिन राति।—सूर (शब्द०)। (ग) नील कज मुद्रित निहार विद्यमान भानु सिधु मकरदहि अर्निद पान करिगो।—(शब्द०)। ३ त्यागा हुआ। छोड़ा हुआ।

मुधरा—वि० [सं०] मुधुर, वर्णव्यं मुधर] दे० 'मधुर'। उ०—नाच गान कर निलजता, रच वप भूषण राम। मार निजारा मोहियो, हजो मुधरे हास।—वाँकी०, प्र० भा० २, पृ० ६।

मुधा—क्रि० वि० [सं०] व्यर्थ। वृथा। वेफायदा। उ०—(क) यह सब जाग्यबल्क कहि राखा। देवि न होई मुवा मुनि भापा।—तुलसी (शब्द०)। (ख) तेहि कहँ पिय पुनि पुनि नर कहहू। मुधा मान ममता पद वहहू।—तुलसी (शब्द०)।

मुधा—वि० व्यर्थ का। निष्प्रयोजन। २ असत्। मिथ्या। झूठ। उ०—मुधा भेद जद्यपि कृत माया।—तुलसी (शब्द०)।

मुधा—सञ्ज्ञा पुं० असत्य। मिथ्या। उ०—भूतल माहि बली शिवराज भो भूपन भापत षात्रु मुधा को।—भूषण (शब्द०)।

मुनका—सञ्ज्ञा पुं० [अ०, मि० सं०] मृद्वीका] एक प्रकार की बड़ी किशमिष या सूखा हुआ अगूर जो रेचक होता और प्रायः दवा के काम में आता है। विशेष दे० 'अगूर'।

मुनगा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मधुगृञ्जन वा देश०] सहिजन।

मुनव्वतकारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] मुनव्वत + फा० कारी] पत्थरो पर उभरे हुए वेलवूटो का काम।

मुनमुना—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ मँदे का बना हुआ एक प्रकार का पकवान जो रस्सी की तरह बटकर छाना जाता है। २ खस-खस की तरह का पर उससे बड़ा एक प्रकार का काला दाना। प्याजी।

विशप—यह दाना गेहूँ के खेत में उत्पन्न होता है और प्रायः उसके दानों के साथ मिला रहता है। इसके मिले रहने के कारण आटे का रंग कुछ काला पड़ जाता है और स्वाद कुछ कड़वा हो जाता है।

मुनमुना^१—वि० बहुत छोटा या थोडा ।

मुनारा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुद्रा] कान में पहनने का एक प्रकार का गहना जो कुमायूँ आदि पहाड़ी जिलों के निवासी पहनते हैं । यह अधिकतर लोहे का बनता है ।

मुनरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुद्रिका] दे० 'मुँदरी' ।

मुनहसर—वि० [अ० मुनहसिर] निर्भर । आश्रित । अवलंबित ।

मुनाजात—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] ईश्वरप्रार्थना । खुदा की इवादात । उ०—कहाँ इतना सुन के हक सूँ मुनाजात ।—दक्खिनी०, पृ० ३१२ ।

मुनाजिर—वि० [अ० मुनाजिर] शास्त्रार्थ करनेवाला [को०] ।

मुनादी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] किसी बात की वह घोषणा जो कोई मनुष्य हुगो या ढोल आदि पीटता हुआ सारे शहर में करता फिरे । ढिंढोरा । हुगो ।

क्रि० प्र०—करना ।—पिटना ।—फिरना ।—फेरना ।—होना ।

मुनाफा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुनाफा, मुनाफअद्] किसी व्यापार आदि में प्राप्त वह धन जो मूल धन के अतिरिक्त होता है । लाभ । नफा । फायदा ।

क्रि० प्र०—उठाना ।—करना ।—निकलना ।—होना ।

मुनारा^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मनारह्] दे० 'मीनार' । उ०—भनै रघुराज नव पल्लवित मल्लिका के अमल अगारा हैं मुनारा है दुमारा हैं ।—रघुराज (शब्द०) ।

मुनाल—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का बहुत सुंदर पहाड़ी पक्षी जिसको हरी गरदन पर सुंदर कठा सा दिखाई देता है और जिसके सिर पर कलंगी होती है । इसके पर बहुत अधिक मूल्य पर विकते हैं ।

मुनासिब—वि० [अ०] उचित । योग्य । वाजिब । ठीक । उ०—बिना बुलाए जाना तो किसी तरह मुनासिब नहीं ।—श्रीनिवास प्र०, पृ० ७६ ।

मुनि^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो मनन करे । ईश्वर, धर्म और सत्यासत्य आदि का सूक्ष्म विचार करनेवाला व्यक्ति । मनन-शील महात्मा । जैसे, अगिरा, पुलस्त्य, भृगु, कर्दम, पंचशिक्ष आदि । २ तपस्वी । त्यागी ।

यो०—मुनिचौर, मुनिपट = वल्कल । मुनिव्रत = तपस्या ।

३ सात की संख्या । उ०—तव प्रभु मुनि शर मारि गिगवा ।—(शब्द०) । ४ जिन या बुद्ध । ५ पियाल या प्यार का वृद्ध । ६ पलास का वृद्ध । ७ आठ वसुओं के अतर्गत आप नामक वसु के पुत्र का नाम । ८ क्रौंच द्वीप के एक देश का नाम । ९, द्युतिमान् के सबसे बड़े पुत्र का नाम । १० कुरु के एक पुत्र का नाम । ११ अगस्त्य ऋषि (को०) । १२ व्यास जी का नाम (को०) । १३ महर्षि पाणिनि (को०) । १४ आम्र वृद्ध (को०) । १५ दौना । दमनक ।

मुनि^२—सञ्ज्ञा स्त्री० दत्त की एक कन्या जो कश्यप की सबसे बड़ी स्त्री थी ।

मुनिकन्यका, मुनिकन्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुनि की पुत्री ।

मुनिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ब्राह्मी का रूप ।

मुनिकुमार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुनि का पुत्र । आल्पावस्था का मुने (को०) ।

मुनिखर्जूरिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की खर्जूरिका (को०) ।

मुनिच्छद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मेथी ।

मुनितरु—सञ्ज्ञा पुं० [म०] बकम । पतंग ।

मुनिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुनिधर्म । मुनिव्रत । उ०—प्रभु को निज चाप दे गए, मुनिता ही मुनि आप ले गए ।—साकेत, पृ० ३५८ ।

मुनित्रय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि (को०) ।

मुनित्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मुनिता' ।

मुनिद्रुम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ श्योनाक वृद्ध । २ बकम । पतंग ।

मुनिधान्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तिन्नी का चावल । तिनी ।

मुनिपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दौना । दमनक ।

मुनिपादप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बकम । पतंग ।

मुनिपित्तल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ताँबा ।

मुनिपुगव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुनिपुङ्गव] मुनियों में श्रेष्ठ (को०) ।

मुनिपुत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दमनक । दौना ।

मुनिपुत्रक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मुनिपुत्र । दौना । २. खजन पक्षी ।

मुनिपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विजयसार का फूल ।

मुनिप्रय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का धान्य जिसे पक्षिराज भी कहते हैं । २. पिह खजूर । ३. विरोजे का पेड़ । ४. पियार ।

मुनिवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुनिवर] मुनिपुगव । श्रेष्ठ मुनि ।

मुनिभक्त—सञ्ज्ञा पुं० [म०] तिन्नी का चावल । तिनी ।

मुनिभेपज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. अगस्त का फूल । २. हड़ । हूरें । ३. लघन । उपवास ।

मुनिभोजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तिन्नी का चावल । तिनी ।

मुनियर^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुनिवर] १ मुनि लोग । २ मुनियों में श्रेष्ठ जन । उ०—तुम्हें बिन राखें कौण विधाता मुनियर साखी आणी रे ।—दाहूँ वानी०, पृ० ६२३ ।

मुनियों^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] लाल नामक पक्षी की मादा । उ०—झुड तें झगटि गहि आनी प्रम पीजरा मे, लाल मुनियों ज्यौ गुण लाल गहि तागी है ।—देव (शब्द०) ।

मुनियों^४—सञ्ज्ञा पुं० [स्थ०] एक प्रकार का धान जो अग्रहण में तैयार होता है ।

मुनिवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. पुडरीक वृद्ध । पुडरिया । २. दौना । ३. मुनियों में श्रेष्ठ ।

मुनिवज^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुनिवर्ज] मुनिश्रेष्ठ । मुनियों में प्रधान या श्रेष्ठ । उ०—रामकथा मुनिवर्ज वखानो । सुनी महेश परम सुखु मानो ।—मानस, १।४८ ।

मुनिवल््लोभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विजयसार । पियासाल ।

मुनिवीर्य—सज्ञा पुं [सं०] स्वर्ग के विश्वेदेवा आदि देवताओं के अतर्गत एक देवता ।

मुनिवृत्त—सज्ञा पुं [सं०] वक्रम् । पतंग ।

मुनिवृत्ति—वि० [सं०] मुनिवत् जीवन व्यतीत करनेवाला [को०] ।

मुनिव्रत—सज्ञा पुं [सं०] तप । तपस्या [को०] ।

मुनिशत्रु—सज्ञा पुं [सं०] मफेद कुश । मफेद दाभ ।

मुनिसत्र—सज्ञा पुं [सं०] एक यज्ञ का नाम ।

मुनिसुत—सज्ञा पुं [सं०] दौना । दमनक ।

मुनिभ्रत—सज्ञा पुं [सं०] जैनियों के एक तीर्थंकर का नाम ।

मुनिहत्त—सज्ञा पुं [सं०] राजा पुष्यमित्र की एक उपाधि ।

मुनीन्द्र—सज्ञा पुं [सं० मुनीन्द्र] १ वह जो मुनियों में इन्द्र हो । महान् वा श्रेष्ठ मुनि । २ शिव का एक नाम [को०] । ३ भरत मुनि [को०] । ४ बुद्धदेव का एक नाम । ५ पुराणानुसार एक दानव का नाम ।

मुनी—सज्ञा पुं [सं० मुनि] दे० 'मुनि' ।

मुनीपुत्र—सज्ञा स्त्री [हिं० मुनियों] रायमुनी । रंमुनिया । लाल पत्नी की माता । उ०—नवल बधू गोकुल की मुनी । परलौ लाल खिलारी मुनी ।—घनानन्द, पृ० २६२ ।

मुनीव—सज्ञा पुं [हिं०] दे० 'मुनीम' ।

मुनीम—सज्ञा पुं [अ० मुनीव (= नायव रखनेवाला)] १ नायव । मददगार । सहायक । २ साहूकारों का हिसाब किताब लिखनेवाला ।

यौ०—मुनीमखाना = वह स्थान जहाँ किसी कोठे के हिसाब किताब लिखनेवाले मुनीम बैठकर काम करें ।

मुनीर—वि० [अ०] दीप्त । प्रकाशमान । चमकदार । उ०—वदर ए मुनीर वेनजीर सीरो खुसरू में ।—नट०, पृ० ७८ ।

मुनीश, मुनीश्वर—सज्ञा पुं [सं०] १ मुनियों में श्रेष्ठ । २ बुद्धदेव का एक नाम । ३। वष्णु ।

मुनुपुत्र—सज्ञा पुं [सं० मनुष्य] मानव । मनुष्य । उ०—मुनुप देह उत्तम करी (सु) हरि बोली हरि बोल ।—सुदर अ०, भा० १, पृ० ३१५ ।

मुनीविर—वि० [अ० मुनव्वर] उज्वल । प्रकाशमान । दीप्त ।

मुन्ना—सज्ञा पुं [अ०] १ छोटे के लिये प्रेमसूचक शब्द । प्रिय । प्यारा । उ०—मुन्ना । मैंने तो यह कहा था कि इस मिट्टी के मोर को देख ।—लक्ष्मणमिह (शब्द०) । २ तारकणों के कारखाने के वे दोनो शूटे जिनमें जता लगा रहता है ।

मुन्नी—सज्ञा पुं [अ०] दे० 'मुन्ना' ।

मुन्यन्त—सज्ञा पुं [सं०] मुनियों के खाने का अन्न । जैसे तिन्नी का चावल आदि ।

मुन्ययन्त—सज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का यज्ञ ।

मुन्यालय—सज्ञा पुं [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

मुफरद—वि० [अ० मुफरद] किसी से विना मिला हुआ । श्रवण । तनहा [को०] ।

मुफलिस—वि० [अ० मुफलिस] अनर्हान । निर्बल । दरिद्र । गरीब ।

मुफलिसी—सज्ञा स्त्री [अ० मुफलिसी] गरीबी । निर्बलता । दरिद्रता । उ०—मुफलिसी श्रीर मिजाज ऐ हातिम । क्या क्या-मत करे जो दीलत हो ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ४४ ।

मुफसिद—सज्ञा पुं [अ० मुफसिद] वह जो फसाद खटा करे । झगडा या फसाद करनेवाला आदमी ।

मुफस्सल^१—वि० [अ० मुफस्सल] वह जिनकी तफसोल का गई हो । व्योरेवार । विस्तृत ।

मुफस्सल^२—सज्ञा पुं किसी केंद्रस्थ नगर के चारों ओर के कुछ दूर के स्थान । जैसे,—मुफस्सल न कई तरह की खबरें आ रही हैं ।

मुफस्सल—वि० [अ० मुफस्सल] मव्याख्या । सविवरण । मुफस्सल । उ०—कहूंगा मैं किस्सा मुनो सब इता । कहूंगा मुफस्सल कहानी जिता ।—दक्खिनां०, पृ० १६८ ।

मुफीद—वि० [अ० मुफीद] फायदेमद । लाभकारी । लाभदायक । उ०—मगर ये बात हमारे वास्ते मुफीद है ।—श्रीनिवास अ०, पृ० १२४ ।

मुफ्त—वि० [अ० मुफ्त] जिसमें कुछ मूल्य न लगे । विना दाम का । सेंट का ।

यौ०—मुफ्तखोर = वह व्यक्ति जो दूसरों के धन पर सुखभोग करे । मुफ्त का माल खानेवाला ।

मुहा०—मुफ्त में = (१) बिना दाम के । बिना मूल्य दिए या लिए । जैसे,—यह घड़ी मुझे मुफ्त में मिली । (२) व्यर्थ । बेफायदा । निष्प्रयोजन । जैसे,—(क) मुफ्त में उसकी जान गई । (ख) मुफ्त में क्यों हैरान होते हो ।

मुफ्तखोरी—सज्ञा स्त्री [अ० मुफ्तखोरी] बिना मेहनत किए, दूसरे की कमाई खाना । दूसरों के सिर रहना ।

मुफ्तरी—वि० [अ० मुफ्तरी] १ धूर्त । मक्कार । शरीर । २ झूठ आरोप करनेवाला । असत्य इल्जाम लगानेवाला [को०] ।

मुफती—सज्ञा स्त्री [अ० मुफती] धर्मशास्त्री । फतवा देनेवाला । धर्माचार्य । मुसलमानों का वह धर्मशास्त्रवेत्ता मौलवी जा धार्मिक समस्याओं का समाधान प्रश्नोत्तर रूप में पूछने पर करता है ।

मुफती^१—वि० [अ० मुफ्त + ई (प्रत्यय)] जो बिना दाम दिए मिला हो । मुफ्त का ।

मुवतिला—वि० [अ० मुवतिला] पकडा हुआ । फसा हुआ । अस्त । गृहीत । उ०—आकबत होवेगा क्या मालुम नहीं । दिल हुआ है मुवतिला दीदार का ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ६ ।

विशेष—इस शब्द का व्यवहार प्रायः रोग, विपत्ति आदि के सबब में ही होता है । जैसे,—(क) वे कई दिनों से बुखार में मुवतिला है । (ख) मैं भी आजकल एक आफत में मुवतिला हो गया हूँ ।

मुबरी—वि० [अ० मुबरी] १ बरी किया हुआ । मुक्त । २ पवित्र । ३. पृथक् । अलग । ४ नि सग । विरक्त [को०] ।

मुबल्लग—वि० [श० मुबल्लग] १ भेजा हुआ। प्रेषित। २ खरा। जो खोटा न हो [को०]।

मुबल्लिग—सञ्ज्ञा पुं० [श०] १ धन की मन्थ्या। रकम। २ मात्रा।

मुबल्लिग—वि० दे० भेजनेवाला। २ दे० 'मुबल्लग'।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग प्रायः रूपए के साथ किया जाता है। जैसे, मुबल्लिग दस रूपए, जिमका अर्थ होता है भेजनेवाला खरे रूपए भेज रहा है।

मुबादिला—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुबादिलह्, मुबादिलह्] बदला। पलटा। एवज। बदल बदल। आदान प्रदान।

मुवारक—वि० [अ०] १ जिमके कारण बरकत हो। २ शुभ। मंगलप्रद। मंगलमय। नक। अच्छा। उ०—आज यह फल्ह का दरवार मुवारक होए।—भारतेंदु प्र०, भा० १, पृ० ५४२। ३ भाग्यशील। खुशकिस्मत (को०)।

मुवारकवाद—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुवारक + फा० वाद्] कोई शुभ बात होत पर कहना कि 'मुवारक हो'। वधाइ।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

मुवारकवादी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुवारक + फा० वादी] १. 'मुवारक' कहने की क्रिया। वधाई। २ वे गीत आदि जो शुभ अवसरो पर वधाई देने के लिये गाए जाय।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

मुवारकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुवारक + ई] दे० 'मुवारकवादी'।

मुवाल्लिगा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुवाल्लिगह्] बहुत बढ़ाकर कही हुई बात। लवी चौड़ी बात। अत्युक्ति।

मुवाशरत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] सहवास। सभोग। रतिक्रीडा [को०]।

मुबाह—वि० [अ०] विहित। जायज [को०]।

मुबाहिसा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुबाहसह्, मुबाहिसह्] किमी विषय के निर्णय के लिये होनेवाला विवाद। बहस।

मुव्तला—वि० [अ० मुव्तलह्] १ अरत। पकडा हुआ। २, फंसा हुआ। ३ मुग्ध। आसक्त [को०]।

मुव्तिला—वि० [अ० मुव्तिलह्] मुसीबत या सकट आदि में फंसा हुआ।

मुव्वी(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० उर्वी] पृथ्वी। धरती। उ०—नध्यह मुव्वी वीर वर, वल वकम घट घाइ।—पृ० रा०, २५।६०७।

मुमकिन—वि० [अ०] जो हो सकता हो। संभव।

मुमतहिन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] इन्तहान लेनेवाला। परीक्षा लेनेवाला। परीक्षक।

मुमानिअत, मुमानियत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] निषेध। प्रतिषेध। मनाही। रोक।

मुमुत्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुक्ति की इच्छा। मोक्ष की अभिलाषा।

मुमुत्तु—वि० [सं०] मुक्ति पाने का इच्छुक। मोक्ष का अभिलाषी। जो मुक्ति की कामना करता हो।

मुमुत्तु—सञ्ज्ञा पुं० सन्यासी।

मुमुत्तुता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुमुत्तु का भाव या धर्म।

मुमुख(७)—वि० [सं० मुमुत्तु] दे० 'मुमुत्तु'। उ०—जैसे आदि पुख वह कोई। मुमुपत भजत मुन्यो हम सोई। नद० प्र० पृ० ३२०।

मुमुत्तान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो मुक्त हो गया हो। वह जिमका मोक्ष हो गया हो। २. मेघ। बादल।

मुमुत्तुपु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूमनेवाला। चोर। तस्कर [को०]।

मुमुत्तुर्षा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मृत्यु की अभिलाषा मरने की इच्छा।

मुमुत्तुर्षु—वि० [सं०] जो मरने के समीप हो। जो मर रहा हो, आसन्नमृत्यु। उ०—आकर काल रूप रावण ने उन मुमुत्तुर्षु के निकट कहा।—साकेत, पृ० ३८८।

मुयस्सर—वि० [अ०] दे० 'मयस्सर'।

मुरगिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुरङ्गिका] मूर्त्ति।

मुरडा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुग्गडा] भारत के पश्चिमोत्तर दिशा को एक नगरी [को०]।

मुरडा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. भूने हुए गरमागरम गेहूँ में गुड़ मिलाकर बनाया हुआ लड्डू। गुडधानी। उ०—पुनि मधाने आए वसधि। दूध दही के मुरडा बाँधे।—जायसी प्र०, पृ० १२४। २. पानी निकालकर पिडाकार बंधा दही या छेना का मीठा और नमकीन खाद्यपदार्थ। उ०—अउर दही के मुरडा बाँधे। श्री संधान बहु भाँतिन साथे।—जायसी (शब्द०)।

मुहा०—मुरडा करना=(१) गठरी सा बना देना। नमेटकर लड्डू सा कर देना। (२) भून डालना। (३) बहुत मारना पीटना। (४) मोह लेना। मुग्ध कर लेना। आशिक बना लेना। मुरडा बाँधना=दही या छेने को पानी निधारने के लिये कपड़े में बाँधकर लटकाना या दबाना।

मुरडा—वि० सूखा हुआ। शुष्क।

मुहा०—मुरडा होना=(१) सूखकर काँटा हो जाना। जैसे,—चार दिन की मेहनत में मुरडा हो गए। (२) मुग्ध होना। मोहित होना।

मुरदला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुरन्दला] नर्मदा नदी का एक नाम।

मुरदा—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] दे० 'मुरडा'।

मुरँदा—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] दे० 'मुरडा'।

मुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वेष्टन। वेठन। २. एक दैत्य जिसे विष्णु ने मारा था और जिसे मारने के कारण उनका नाम 'मुरारि' पडा। उ०—मधु कैटभ मधन, मुर भीम केशी भिदन, कस कुल काल अनुसाल हारो।—सूर (शब्द०)।

मुर—अव्य० फिर। दोबारा।

मुरई—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] दे० 'मूली'।

मुरक—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुरकना] मुरकने की क्रिया या भाव।

मुरकना—क्रि० अ० [हिं० मुड़ना] १. लचककर किमी और झुकना। २. फिरना। घूमना। ३. लौटना। वापस होना। ४. फिर जाना। ५. किसी अंग का भटके आदि के कारण किसी

और तन जाना । किनी अग का किमी और इम प्रकार मुड जाना कि जल्दी सीधा न हो । मोच खाना । जैसे, बाँह मुरकना, कलाई मुरकना । ५ हिचकना । रुकना । उ०—लोचन भरि भरि दोड माता के कनकदन देखत जिय मुरकी ।—सूर (शब्द०) । ६ विनष्ट होना । चौपट होना । उ०—साहि सुव महाबाहु सिवाजी मलाह विन कोन पातसाह को न पातसाही मुरकी ।—भूपण (शब्द०) ।

मुरका—सञ्ज्ञा पु० ['य०'] १ बहुत ऊँचा और बड़े बड़े दाँतोवाला मुँदर हाथी । २ गडरियो का भाज जो वे अपने विरादरी का देते हैं ।

मुरकाना—क्रि० स० [हि० मुरकना का स० रूप] १ फेरना । घुमाया । २ लौटाना । घुमाना । वापस करना । ३ किमी अग में मोच लाना । ४ नष्ट करना । चौपट करना ।

मुरकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुरकना (= घूमना)] कान में पहनने की छोटी वाली । उ०—बदन फेरे हँसि हेरि इत करि ललचाँहँ नन । उर उरकी दुस्की लुरक लुर मुरका कर सँन ।—स० समक, पृ० ३६६ । २ सगीत में आगे पीछे के स्वरों पर होते समय भटके से किसी स्वर पर जाना ।

मुरकुल—सञ्ज्ञा स्त्री० [द्य०] एक प्रकार की लता जो हिमालय में होती है और सिक्किम तक पाई जाती है । इसकी शाखाओं में से एक प्रकार का रेशा निकलता है जिससे रस्मियाँ आदि बनाई जाती हैं । इसे 'वेरी' भी कहते हैं ।

मुरखाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुखै + हि० आई (प्रत्य०)] मूर्खता । बेवकूफी । अज्ञता । उ०—नपु करति हर हित सुने विहँसि वदु कहत मुरखाई महा ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुरगा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मुर्गा] [स्त्री० मुरगा] १ एक प्रसिद्ध पालतू पक्षी । कुक्कुट । उ०—हँ है नही मुरगा जिहि गाँव भद्र तिहि गाँव का भार ना हँ है ।—ठाकुर०, पृ० ३० ।

विशेष—यह पक्षी सफेद, पीले और लाल आदि कई रंगों का और खड़ा होने पर प्राय एक हाथ से कुछ कम ऊँचा होता है । इसके नर के सिर पर एक कलगी होती है । यह अपनी शानदार चाल और प्रभात क समय 'कुकड़ूँ कूँ' बोलने के लिये प्रसिद्ध है । यह प्राय घरा में पाला जाता है । लोग इसे लडाते और इसका मांस भी खाते हैं । इसका बच्चे का बूजा कहते हैं ।

२ पक्षी । चिडिया ।

मुहा०—मुरगा बनाना = एक प्रकार की यंत्रणा । अपराधी को उकड़ूँ बँठाकर घुटनों के बीच से निकले दोनों हाथों से कान पकड़वाना ।

मुरगा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुर्वा] *० 'मूर्वा' ।

मुरगावी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० मुरगावी] मुरगे की जाति का एक पक्षी । जलकुक्कुट । जलमुरगा ।

विशेष—यह जल में तैरता और मछलियाँ पकड़कर खाता है । यह पानी क भीतर बहुत दूर तक गोता मारकर रह सकता

है । इसके पर कोमल होते हैं और नर मादा दोनों प्राय एक से ही होते हैं ।

मुरगाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुरङ्गिका] मूर्वा ।

मुरचग—सञ्ज्ञा पु० [हि० मुँहचग] लोहे का बना हुआ मुँह से वजाने का एक प्रकार का वाजा जिससे ताल देते हैं । मुँहचग ।

मुहा०—मुरचग भादना = आनंद करना । चँन करना । (व्यंग) ।

मुरचा—सञ्ज्ञा पु० [फा० मोरचह्] द० 'मोरचा' । उ०—कहाँ कवीर काया का मुरचा सिकल किए वनि थावै ।—कवीर श०, भा० ३, पृ० २६ ।

मुरची—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पश्चिम दिशा के एक देश का नाम ।

मुरछाना—क्रि० अ० [सं० मुच्छन्] १ शिथिल होना । २ अचेत होना । वेसुध होना । वेहोश होना । उ०—अधर दमनन भरे कठिन कुच उर लरे परे सुख सेज मन मुरछि दोक ।—सूर (शब्द०) ।

मुरछल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोर + छल] दे० 'मोरछल' ।

मुरछा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुच्छा] दे० 'मूर्च्छा' । उ०—सुनत ही हरिदास को मुरछा आह ।—दो सौ वावन०, भा० १, पृ० १८३ ।

मुरछाना—क्रि० अ० [सं० मुच्छा] अचेत होना । मूर्च्छित होना । वेहोश होना । उ०—तान मरन सुनि श्रवण कृपानिधि धरणि परे मुरछाई । मोह मगन लोचन चल धारा विपति हृदय न समाई ।—सूर (शब्द०) ।

मुरछावत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुच्छा + वत् (प्रत्य०)] मूर्च्छित । वेहोश । अचेत । उ०—धरम कुधर श्री रघुराई । मुरछावत भए मुनिराई ।—मधुसूदन (शब्द०) ।

मुरछित—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूर्च्छित] दे० 'मूर्च्छित' । उ०—जोगी अकटक भए पतिगति सुनत रति मुरछित भई ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुरज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मृदग । पखावज । उ०—(क) कोड मजु मुरज अमोल ढोलन तवल अमल अपार हैं ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) रुज मुरज डफ ताल वाँमुरी भालर को भकार ।—सूर (शब्द०) । २ एक प्रकार का चित्रकाव्य जिसमें पद्य के अक्षरों को इस प्रकार रखते हैं कि वे मृदग की आकृति के बन जायँ । पद्य के अनेक वर्णों में से एक का नाम । उ०—खग कमल ककन डमरु चद्र चक्र धनु हार । मुरज, छत्रजुत वध बहु पर्वत वृक्ष कँवार ।—भिखारी० श्रं०, भा० २, पृ० २०३ ।

मुरजफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] फटहल का वृक्ष ।

मुरजित्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुर नामक राज्ञ को जीतनेवाले, श्रीकृष्ण । मुरारि ।

मुरजीवा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मरना + जीना] गोताखोर । दे० 'मरजिया' । उ०—उतने ही मुरजीवा की तरह रत्न और मोती लेकर आवँग । सुदर श्रं०, भा० १, पृ० २०५ ।

मुरमना—क्रि० अ० [सं० मूर्च्छन्] १. मूर्च्छित होना । उ०—गहन सो मिलि ललित गज्जडल मडित छवि । कुडल सो कच

उरुके मुरके जहँ वड्डे कवि ।—नंद० गं०, पृ० ३४।
२ कुम्हला जाना।

मुरभाना—कि० अ० [म० मूर्च्छन] १ फूल या पत्ती आदि का कुम्हलाना। सूखने पर होना। २. सुस्त हो जाना। उदास होना। उ०—(क) गिरि मुरभाइ दया आइ कछु भाय भरे ढरे प्रभु और मति आनंद सो भीनी है।—प्रियादास (शब्द०)। (ख) सखी कुरगिके, यह हिम उपचार तो मुभ कमल का लता को और भो मुरभा देगा।—हरिचंद्र (शब्द०)। (ग) देव मुरभाइ उरमाल कह्यो दीजँ मुरभाइ बात पूछी है छेम की।—देव (शब्द०)।

सयो० क्रि० - जाना।

मुरङ्गा—सञ्ज्ञा पु० [टि०] गर्व। अभिमान। दर्प। अहंकार।

मुरडकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मरोड'।

मुरतगा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] भारत के पूर्वी क्षेत्र में होनवाला एक प्रकार का ऊँचा पेड़।

विशेष— इस पेड़ के हीर की लकड़ी लाल और कड़ी होती है और इसमें सजावट के सामने बनाए जाते हैं। यह पेड़ आसाम, बंगाल और चटगाँव में अधिकता में पाया जाता है।

मुरत^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर्ति] दे० 'मूर्ति'।

मुरतहिन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह जिसके पास कोई वस्तु रहन या गिरो रखी जाय। जिसके पास बंधक रखा जाय। रेहनदार।

मुरता—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का जगली भाँठ जो पूर्वी बंगाल और आसाम में होता है। इससे प्रायः चटाई वा सीतल-पाटी बनाई जाती है।

मुरति^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर्ति] दे० 'मूर्ति'। उ०—नद महर के आंगन मोहन मुरति बिना देखहुँ न परे कल भूलि काम घाम आछो बदन निहार।—नद, गं० पृ० ३५४।

मुरती—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूर्ति] शरीर। रूपाकार। आदमी। मूर्ति। उ०—मुजफ्फरपुर जिला का एक 'मुरती' आया है।—मैला०, पृ० ७२।

मुरदा—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०, म० मृतक] दे० 'मुरदा'।—दाहू०, पृ० ५०७।

मुरदर^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुरारि। श्रीकृष्ण। उ०—जिमि मुरदर तकि अचुर कव वरि धुनकर सरखुर।—गोपाल (शब्द०)।

मुरदा^१—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मुरदह् मुरदह्, मि० सं० मृतक] १ वह जो मर गया हो। मरा हुआ प्राणी। मृतक। २. ताजिया। ३. मजार। कब्र। उ०—पाथर पूजत हिंदु भुलाना। मुरदा पूज भूले तुरकाना।—कबीर सा०, पृ० ८२०।

मुहा०—मुरदा उठना = मर जाना। (गाली)। जैसे,—उसका मुरदा उठे। मुरदा उठाना = मृतक को उठाकर जलाने या गाड़ने आदि के लिये ले जाना। अत्येष्टि क्रिया के लिये ले जाना। मुरदे से शर्त बाँधकर सोना = बहुत अधिक सोना। मुरदे का माल = वह माल जिसका कोई वारिस न हो। मुरदे की नींद सोना = देखकर होकर सोना। खुरटि भरना।

मुरदा^२—वि० १ मरा हुआ। मृत्यु को प्राप्त। मृत। २ जो बहुत ही दुर्बल हो। जिसमें कुछ भी दम न हो। ३ मुरभाया हुआ। कुम्हलाया हुआ। जैसे, मुरदा पान।

यौ०—मुरदाखोर = मुरदा खानेवाला। मुरदादिल = जिमका मन बहुत ही उचाट और नीरस हो। मुरदासग = दे० 'मुरदासख'। मुरदासन। मुरदाभिधी।

मुरदादिली—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० मुरदह्, दिली] मन का खिन्न होना। उचाट की०।

मुरदार^१—वि० [फ्रा०] १ अपनी मौत में मरा हुआ। मृत। २. अपवित्र। ३. वेदम। वेजान। जैसे,—हाथ का चमड़ा मुरदार हो गया है। ४. दुबला, कमजोर।

मुरदार^२—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] वह जानवर जो अपनी मौत से मरा हो और जिसका मांस खाया न जा सकता हो।

मुरदारी—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मुरदार + ई (प्रत्य०)] अपनी मौत से मरे हुए जानवर का चमड़ा।

मुरदासख—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मुरदार सग, मुरदह्, मग] एक प्रकार का शौष जो फूँके हुए सीसे और सिंदूर से बनता है।

मुरदासन^७—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुरदासख] दे० 'मुरदासख'। उ०—मिरिच मोचरस मैदा लकरी। मुरदासन मनुसिल मिसमकरी।—सूदन (शब्द०)।

मुरदासिधी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुरदासख'।

मुरदेश, मुरधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुरुधरा] मारवाड़ देश का प्राचीन नाम। मुरदेश। मुरधरा। मुरभूमि। उ०—(क) मुरधर देश में विलोदा नाम ग्राम एक, तहाँ के निवासी सत दूसरे मुरारिदास।—रघुराज (शब्द०)। (ख) मुरधर खड भूप सब आजाकरी। राम नाम बिस्वास भक्तपद राज व्रतवारी।—प्रियदास (शब्द०)।

मुरना^७—क्रि० अ० [हिं० मुडना] दे० 'मुडना'। इ०—(क) एकते एक रणावीर जोधा प्रवल मुरत नहि नेक अति सबल जी के।—सूर (शब्द०)। (ख) तुरत सुरत कसँ दुरत मुरत नैन छुरि नीठ। डौडी दे गुन रावरे कहै कनौड़ी दीठ।—विहारी (शब्द०)।

मुरपरैना^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० धूँड़ (= मिर) + पारना (रखना)] फेरी करके सौदा बेचनेवालों का बुकचा। सिर पर रखकर बेचने की वस्तुओं का बोझ। उ०—ऊँचो वेगि मधुवन जाहु। हम विरहिनी नारि हरि बिन कौन करै निवाहु। तही दीजँ मुरपरैना नफो तुम रछु खाहु। जो नही ब्रज में विकानो नगर नारी साहु। सूर वै सब सुनत लैहँ जिय कहा पछिताहु।—सूर (शब्द०)।

मुरब्बा^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुरब्बह्] चीनी या मिसरी आदि की चाशनी में रक्षित किया हुआ फलों या मेवों आदि का पाक जो उत्तम खाद्य पदार्थों में माना जाता है।

क्रि० प्र०—डालना।—पढ़ना।—बनाना।

मुरब्बा^२—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुरब्बअ] १. ऐसा चतुष्कोण जिसके चारों

मुज वरावर हो । २ किमी अ क को उमी अ क मे गुणन करने ने प्राप्त फल । वर्ग ।

मुरन्वा—वि० उसी अ क से गुणन द्वारा प्राप्त । वर्गीकृत । जैसे, मुरन्वा गज ।

मुरन्वी—सञ्ज्ञा पु० [अ०] १. पालन करनेवाला । २ रत्नक । आश्रयदाता । ३ सहायक । मददगार ।

मुरमर्दन—सञ्ज्ञा पु० [सं०] विष्णु या श्रीकृष्ण । मुरारि ।

मुरमुरा—सञ्ज्ञा पु० [अनु०] १ भूने मक्के या ज्वार को ठुराँ । एक प्रकार का भुना हुआ चावल जो अदर मे पोला होता है । फरवी । लाई ।

मुरमुराना—क्रि० अ० [मुरमुर से अनु०] १. ँँठन खाकर टूट जाना । चूर चूर हो जाना । चुरमु० हो जाना । २ कडी या खरी चीज का टूटने पर शब्द करना ।

मुररिपु—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मुर नामक दैत्य को मारनेवाले, विष्णु । मुरारि । उ० - मूर मुररिपु रग रगे सखि सहिन गोपाल । - मूर (शब्द०) ।

मुररियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुड़ना, मुरना या मरोडना] दे० 'पुरी' । उ०—प्रिभुवननाथ जो भजन लागे श्याम मुररिया दीना । चाँद सूर्य दुइ गोडा कीन्हो माँक दीप किय तीना ।—कवीर (शब्द०) ।

मुरल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जिसपर चमड़ा मढ़ा होता था । २ एक प्रकार की मछली ।

मुरला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ नर्मदा नदी । २ केरल देश की काली नाम की नदी ।

मुरलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुरली । वशी । वाँमुरी । उ०—(क) अखियनि की सुधि भूनि गई । श्याम अघर मृदु मुनत मुरलिका चढ़त नारि भई । मूर (शब्द०) । (ख) उर पर पदिक कुमुम वनमाला अंग धुकधुकी विराजै । चित्रित बाहु पौंचियाँ पौचै हाथ मुरलिका छाजै ।—मूर (शब्द०) । (ग) वन वन गाय चरावत डोलत काँव कमरिया राजै । लकुटी हाथ गरे गुँजमाला अघर मुरलिका बाजै ।—मूर (शब्द०) ।

मुरलियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुरलिका] मुरली । वशी । उ०—खडी एक पग तप कियो सहि बहु भाँति दवागि । ताही पुन्यन मुरालया रहत श्याम मुख लागि ।—मुकवि (शब्द) ।

विशेष—हिंदी मे शब्द के अंत मे जाडे हुए आ, वा, या आदि अक्षर कुछ विशिष्टता सूचित करते हैं, जैसे, 'हरवा' का अर्थ होगा—'हारविशेष' इसी प्रकार मुरलिया का अर्थ भी 'मुरली-विशेष' हीगा ।

मुरली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वाँमुरी नाम का प्रसिद्ध बाजा जो मुँह से फूँककर बजाया जाता है । वशी ।

विशेष—इस अर्थ मे इस शब्द के साथ 'वाला' या 'उमका' कोई पर्याय लगाने से 'श्रीकृष्ण' का अर्थ निकलता है । २ एक प्रकार का चावल जो ग्रामाम मे होता है ।

मुरलीधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुरली धारण करनेवाले, श्रीकृष्ण । उ०—गिरिधर व्रजवर मुरलीधर धरनीधर पीतावरधर मुकुटधर गोपवर उर्गवर शखधर शारगधर चक्रवर गदाधर रम धरँ अघर मुधाधर ।—मूर (शब्द०) ।

मुरलीमनोहर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण का एक नाम ।

मुरलीवाला—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुरली + हिं० वाला (प्रत्य०)] १ श्रीकृष्ण । २ वह जिसके पाम मुरली हो ।

मुरवा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ एही के ऊपर की हड्डी के चारो ओर का घेरा । पैर का गिट्टा । उ०—(क) एडिन चढि गुलुफन चढो मुरवन वचो दवाइ । सो चित चिकने जघन चढि तितहि परो विखिलाइ ।—रामसहाय (शब्द०) । (ख) लखि प्रभु पावे पाउँ पसारा । परसि वही मुरवन तक धारा ।—विश्राम (शब्द०) । (ग) रह्यो ढोठ डारम गहै समहर गयी न मूर । मुरयो न मन मुरवान चुभि भी चूरन चपि चूर ।—विहारी (शब्द०) । २ एक प्रकार की कपाम जो ३४ वर्ष तक फनती है ।

मुरवाँ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मयूर] दे० 'मोर' ।

मुरवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मौर्वी] धनुष की डोरी । प्रत्यचा । चिह्ना । उ०—वान चढावन का कहा करि मुरवी टकार । हस्त दूर ही ते विघन मनह चाप हुकार ।—शकुतला, पृ० ४१ ।

मुरवैरी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुरवैरिन्] श्रीकृष्ण । मुरारि ।

मुरवत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'मुरीवत' ।

मुरशद—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ गुरु । पथप्रदर्शक । २ पूज्य । ३ धूर्त । चालाक । वचक । उस्ताद । (व्यग्य) ।

मुरपड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुरखण्डन] मुर दानव का खडन करने वाले- विष्णु ।

मुरसिद—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुरशद] दे० 'मुरशद' । उ०—फल में फूल फूल मे फल है, रोसन नबी का नूरा है । पलददास नजर नजराना, पाया मुरसिद पूरा है ।—पलद०, भा० ३, पृ० ८० ।

मुरसुत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुर दैत्य का पुत्र वत्सासुर । उ०—मुरसुत हो प्रमोल सो जाई । गृह वसिष्ठ के देन्या गाई ।—गोपाल (शब्द०) ।

मुरस्सा—वि० [अ० मुरस्सह] जडा हुआ । जडाऊ । जटित । उ०—मुरस्सा के खुश एक पिजरे मे छोड । रह्या ल्या के सूआ के नजदीक जोड ।—दक्खिनी०, पृ० ८० ।

मुरस्साकार—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुरस्सह + फा० कार] गहनों में नग या मणि जडनेवाला । जडिया ।

मुरस्साकारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुरस्सह + फा० कारी] गहनों मे नग आदि जडने का काम ।

मुरस्सानिगार—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुरस्सह + फा० निगार] खुशखत । सुदर अक्षर लिखनेवाला ।

मुरहाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० भूँड + हाँ (प्रत्य०)] मस्तक । सिर ।

मुरहा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुर को मारनेवाले, विष्णु या श्रीकृष्ण ।

मुरहा^२—वि० [सं० मूल (नक्षत्र) + हा (प्रत्यय०)] [वि० स्त्री० मुरही] ? (बालक) जो मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुआ हो, (ऐसा बालक माता पिता के लिये दोषी माना जाता है) ।
२ जिसके माता पिता मर गए हो । अनाथ । यतीम । ३. नखट । उपद्रवी । शरारती ।

मुरहा^३—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुराना] वह जो चलते हुए कोल्हू में गडेरियाँ डालता है ।

मुरहारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुर दैत्य को मारनेवाले विष्णु या श्रीकृष्ण । उ०—थके जगत ममुभाय सब, निपट पुराण पुकारि । मरे मन वे चुभि रहे, मधुमर्दन मुरहारि ।—केशव (शब्द०) ।

मुरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रसिद्ध गघद्रव्य जिसे 'एकागी' या 'मुरामासी' भी कहते हैं । दे० 'एकागी-३' । २ कथा-सरित्सागर के अनुसार उस नाहन का नाम जिसके गर्भ से महानद का पुत्र चद्रगुप्त उत्पन्न हुआ था ।

मुराकधा^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुराकब्ह] समाधि । योग । धारणा ।
उ०—गूमठ में जब जाय लगा मुराकवे नजरि में आवता है ।
—पलट्ट०, पृ० ५१ ।

मुराड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] जलती हुई लकड़ी । लुआठा । उ०—हम घर जारा आपना लिया मुराड़ा हाथ । अब घर जारों तासु का जो चल हमारे साथ ।—कवीर (शब्द०) ।

मुराद—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ अभिलाषा । इच्छा । लालसा । कामना ।
उ०—सब की मिले मुराद गैब की नौवत बाजी । इक दुनियाँ इक दीन दोऊ को राखे राजी ।—पलट्ट०, पृ० ६३ ।

क्रि० प्र०—पूरी करना या होना । —हासिल होना, आदि ।

मुहा०—मुराद आना = अभिलाषा पूरी होना । मुराद पाना = मनोरथ पूरा होना । मुराद बर आना = मुराद पाना । मुराद मोंगना = मनोरथ पूरा होने की प्रार्थना करना । मुराद मानना = मन्त्र मानना । मनोती करना । मुरादा के ढन = युवावस्था । जवानी ।

२ अभिप्राय । आशय । मतलब ।

क्रि० प्र०—रखना ।—लाना ।

यौ —मुराद दावा = नालिश करने का अभिप्राय । दावा करने का मतलब या उद्देश्य ।

मुरादी—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] वह जो कोई कामना रखता हो । अभिलाषी । आकांक्षी ।

मुराना^(१)—क्रि० सं० [अनु० मुरमुर (= चवाने का शब्द)] मुँह में कोई चीज डालकर उसे मुलायम करना । चुमलाना । उ०—सोइ वीरी मुख मेलियो लगे मुरावन सोय । गोइ वीरी को राग मुख प्रगट लख्यो सत्र कोय ।—रघुराज (शब्द०) ।

मुराना^२—क्रि० सं० [हिं० मोडना] दे० 'मोडना' ।

मुराफा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुराफअ] छोटी अदालत में हार जाने पर बड़ी अदालत में फिर से दावा पेश करना । अपील ।

मुरायठा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुरेठा] दे० 'मुरेठा' ।

मुरार^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगाल] कमल की जड़ । कमलनाल ।
उ०—छीनों तार मुरार सी तिहि दीनी समुभाय । चोखी चितवनि यार की कटि न कहू कटि जाय ।—स० सप्तक, पृ० २४४ ।

मुरार^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुरारि] दे० 'मुरारि' ।

मुरारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुर दैत्य के शत्रु, विष्णु या श्रीकृष्ण ।
२ डगरण के तीसरे भेद (ISI) की सञ्ज्ञा । (पिंगल) ।

मुरारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुरारि] दे० 'मुरारि' ।

मुरारे—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुरारि का संबोधन । उ० - बालसखा की विपत विहडन सकट हरन मुरारे ।—सूर (शब्द०) ।

मुरासा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुरसा, मुरका] तरकी । कर्णफून ।
उ० - लसे मुरासा तिय सवन थौ मुकुतनि दुति पाइ । मानो परस कपोल के रहे स्वेद कन छाइ ।—विहारी (शब्द०) ।

मुरासा^२—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'मुँडासा' ।

मुरिभाना^(१)—क्रि० अ० [सं० मूर्च्छना] दे० 'मुरभाना' । उ०—
मन हरि लीनो स्याम, परी रावे मुरिभाई ।—नद० ग्र०, पृ० १६६ ।

मुरिता^(१)—वि० [हिं० मुडना ?] विलासयुक्त । चंचल । उ०—जु चलै मुरि मास्त भुकुरिता । सु मनो मुरवेस मुरी मुरिता ।
—पृ० रा०, २५।६३ ।

मुरीद—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. शिष्य । चेला । २ वह जो किसी का अनुकरण करता या उसके आज्ञानुसार चलता हो । अनुगामी । अनुयायी । उ०—मम्मा मन मुरीद होइ नही आपुवै पीर कहावै ।
—पलट्ट०, पृ० ७६ ।

मुरु^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुर] दे० 'मुर' ।

मुरुआ^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एडी के ऊपर का बेरा । पैर का गट्टा ।
मुरवा । उ०—जो पाँव के मुरुआ में होता है ।—नूतना-मृतसागर (शब्द०) ।

मुरुकुटिया^(१)—वि० [हिं० मरकट + इया (प्रत्यय०)] दे० 'मरकट' ।

मुरुख^(१)—वि० [सं० मूर्ख] दे० 'मूर्ख' । उ०—दिसिटिवत कहै नीअरे अघ मुरुख कहै डूरि ।—जायसी (शब्द०) ।

मुरुखाई^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुरुख + आई (प्रत्यय०)] मूर्खना । मोर्ष्य ।

मुरुछना^(१)—क्रि० अ० [सं० मूर्च्छना] दे० 'मुरछना' । उ०—परेउ मुरुछि महि लागत सायक —मानस, ६।५८ ।

मुरुछना^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर्च्छना] दे० 'मूर्च्छना' ।

मुरुछा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूर्च्छा] दे० 'मूर्च्छा' । उ०—गइ मुरुछा रामहि सुमिरि नृप फिरि करवट लीन्ह । मानस, २।४३ ।

मुरुफना^(१)—क्रि० अ० [सं० मूर्च्छना, हिं० मुरभाना] मूर्च्छित होना । दे० 'मुरभाना' । उ०—साँम भरै उर आते मताप । अरुभे मुरभे करै प्रलाप ।—नद ग्र०, पृ० १५१ ।

मुरेठा सञ्ज्ञा पुं [हि० मूड (= सिर) + एठा (प्रत्य०)] १ पगडी ।
मुरायठ । माफा ।

क्रि० प्र०—घाँघना ।

२ दे० 'मुरैठा' ।

मुरेर—सञ्ज्ञा स्त्री [हि० मुडना] दे० 'मरोड' ।

मुरेरना—क्रि० स० [हि० मरोरना] दे० 'मरोडना' ।

मुरेरा—सञ्ज्ञा पुं [हि०] १ दे० 'मुडेरा' २ दे० 'मरोड' ।

मुरेठा—सञ्ज्ञा पुं [हि० मुरेठा] १ दे० 'मुरेठा' । २ नाव की लवाई में चारो ओर घूमी हुई गोठ जो तीन चार इंच मोटे तख्तों से बनाई जाती है और 'पूठा' के ऊपर रहती है ।

मुरौवत—सञ्ज्ञा स्त्री [अ० मुरुवत, मुरुवत] दे० 'पुरौवत' ।
उ०—वेतरह जो मुँह मुरौवत कामले । दे गिरा जो मेल मुँह के बल हमे ।—चुभते०, पृ० ६६ ।

मुरौवत—सञ्ज्ञा स्त्री [अ० मुरुवत, मुरुवत] १, शील । सकोच ।
लिहाज ।

मुहा०—मुरौवत तोड़ना = रुखाई का व्यवहार करना । शील के विरुद्ध आचरण करना ।

२ भलमनसी । आदमीयत ।

क्रि० प्र०—करना ।—बरतना ।

मुरौवती—वि० [हि० मुरौवत + ई (प्रत्य०)] सकोजी । मुरौवतवाला ।

मुर्ग—सञ्ज्ञा पुं [फा० मुर्ग] दे० 'मुरगा' ।

मुर्गकेश—सञ्ज्ञा पुं [फा० मुर्ग + केश (= चौटी)] मरसे की जाति का एक पौधा जिसमें मुरगे की चौटी के से गहरे लाल रंग के चौंठे चौड़े फूल लगते हैं । इसे 'जटाधारी' भी कहते हैं ।

मुर्गखाना—सञ्ज्ञा पुं [फा० मुर्गखानह] मुरगों के रहने के लिये बनाया हुआ स्थान ।

मुर्गबाज—सञ्ज्ञा पुं [फा० मुर्गबाज] वह जो मुरगे लडाना हो ।
मुरगो का खेलाडी ।

मुर्गबाजी—सञ्ज्ञा स्त्री [फा० मुर्गबाजी] मुरगे लडाने का काम या भाव ।

मुर्गमुसल्लम—सञ्ज्ञा पुं [फा० मुर्ग + अ० मुसल्लम] समूचा पकाया हुआ मुरगा । उ०—मुझे तो आप मुर्गमुसल्लम न खिलाइएगा तो मैं भाग खड़ा होऊँगा ।—शाराबी, पृ० १२ ।

मुर्गावी—सञ्ज्ञा पुं [फा० मुर्ग + आबी] दे० 'मुरगावी' ।

मुर्चा—सञ्ज्ञा पुं [हि०] दे० 'मोरचा' ।

मुर्तक़िब—वि० [अ०] अपराध करनेवाला । अपराधी । कमुरवार ।
मुजरिम ।

मुर्दनी—सञ्ज्ञा स्त्री [फा० मुर्दन (= मरना) + ई (प्रत्य०)] १
श्रावृत्ति का वह विकार जो मरने के समय अथवा मृत्यु के कारण होता है । मुख पर प्रकट होनेवाले मृत्यु के चिह्न ।

मुहा०—चेहरे पर मुर्दनी छाना या फिरना = (१) मुख पर मृत्यु के चिह्न प्रकट होना । (२) बहुत अधिक निराश या उदास होना ।

२. शव के साथ उसकी अत्येष्टि क्रिया के लिये जाना । मुर्दे के साथ उसे गाढ़ने या जलाने के स्थान तक जाना । ३ मृतक की अत्येष्टि क्रिया के लिये जानेवाले का ममूह ।

क्रि० प्र०—में जाना ।

मुर्दा—सञ्ज्ञा पुं [फा० मुर्दह] दे० 'मुरदा' । उ०—माघो ई मुर्दन कै गाँव ।—कबीर श०, भा० २, पृ० ४२ ।

मुर्दावली—सञ्ज्ञा स्त्री [फा० मुर्दन (= मरना)] दे० 'मुर्दनी' ।

मुर्दावली—वि० मृतक के सवव का । मुर्दे का ।

मुर्दासिंगी—सञ्ज्ञा पुं [फा० मुर्दासंग] दे० 'मुरदासख' ।

मुर्दुर—सञ्ज्ञा स्त्री [स०] १ कामदेव । २ सूर्य के रथ के घोड़े ।
३ भूसी की आग । तुपाग्नि । ४ गोमूत्र का गव (को०) ।

मुर्दा—सञ्ज्ञा पुं [हि० मरोड या मुडना] १ मरोडफली नाम की धोपधि । इसकी लता जगलो में होती है । २ पेट में ऐँठन होकर पतला मल निकलना और बार बार दस्त होना ।
मरोड । ३ पेट का दर्द ।

मुर्दा—सञ्ज्ञा स्त्री [हि० मुडना] हिसार और दिल्ली आदि में होनेवाली एक प्रकार की भैंस ।

विशेष—इसके मींग छोटे, जड़ के पास पतले और ऊपर की ओर मुड़े हुए होते हैं । इस जाति की भैंस और भैंसे दोनों बहुत अच्छे समझे जाते हैं ।

मुर्दा—सञ्ज्ञा पुं [अनु०] दे० 'मुरमुरा' ।

मुर्दातिसार—सञ्ज्ञा पुं [हि०] दे० 'मरोड़' ।

मुर्दी—सञ्ज्ञा स्त्री [हि० मुडना या मरोडना] १ दो डोरो के सिरों को आपस में जोड़ने की एक क्रिया जिसमें गाँठ का प्रयोग नहीं होता, केवल दोनों सिरों को मिलाकर मरोड या वट देते हैं ।
२ कपड़े आदि में लपेटकर डाली हुई ऐँठन या बल । जैसे, धोती की मुर्दी ।

मुहा०—मुर्दी देना = (१) कपड़ा फाड़ते समय उसके फटे हुए अंश को बराबर घुमाते या मोड़ते जाना जिसमें कपड़ा बिलकुल सीधा फटे । (वजाज) । (२) धोती को ठहराने के लिये कमर पर कई बल लपेटकर छल्ला सा बनाना ।

३ कपड़े आदि को मरोड़कर बटी हुई बत्ती ।

यौ०—मुर्दी का नैचा ।

४ चिकन या कशीदे की कढ़ाई का एक प्रकार जिसमें बटे हुए सुत का व्यवहार होता है और जिसका काम उभारदार होता है ।
५ एक प्रकार की जगली लकड़ी ।

मुर्दी का नैचा—सञ्ज्ञा पुं [हि० मुर्दी + नैचा] एक प्रकार का नैचा जिसमें कपड़े की मुर्दी या बत्ती बनाकर कमकर लपेटते जाते हैं ।

विशेष—यह देखने में उल्टी चीन ही की तरह जान पड़ती है, परंतु वस्तुतः बत्ती होती है । इस बनावट का नैचा उतना टूट नहीं होता । जहाँ कपड़ा सडता है, वहीं से बत्ती टूटने लगती है और बराबर खुलती ही चली जाती है ।

मुर्दीदार—वि० [हि० मुर्दी + फा० दार (प्रत्य०)] जिसमें मुर्दी पडी हो । ऐँठनदार ।

मुर्दा—सञ्ज्ञा पुं [स०] मरुल या गोरचकरा नाम का जगली पौधा

जिससे प्राचीन काल में प्रत्यचा की रस्सी बनाई जाती थी। विशेष दे० 'गोरचकरा'।

मुर्वा—वि० [सं०] धनुष की प्रत्यचा।

मुशद—सज्ञा पु० [अ० मुशिद] दे० 'मुशिद'। उ०—मुर्जद वगैर कामिल कर खूब रह सूँ शामिल। तब होएगा तूँ शामिल नित हसत रह तूँ मीरँ।—दक्खिनी०, पृ० ११२।

मुशिद—सज्ञा पु० [अ०] १ सुमार्ग वतानेवाला। मार्गदर्शक। गुरु। २ श्रेष्ठ। बडा। ३ उस्ताद। चतुर। चालाक। होशियार। ४ पाजी। नटखट। वृत्त। (व्यग्य)।

मुल^७—सज्ञा पु० [म० मुल] दे० 'मूल'। उ०—लोभे अधिक मूल न मार। ज मुल राखए से वनिजार।—विद्यापति, पृ० २६६।

मुला^३—अव्य० [देश०] १ मगर। लेकिन। पर। (पश्चिम)। २ तात्पर्य यह कि। मतलब यह कि।

मुल^३—सज्ञा पु० [अ० मुलक] दे० 'मुल्क'। उ०—नव नागरि तन मुलक लहि जोवन आमिल जोर। घटे बडे तँ बढि घटे रकम करी और की और।—विहारी (शब्द०)।

मुलकट—सज्ञा स्त्री० [देश०] अंगिया का वह भाग जो स्तनो पर पडता है। अंगिया की कटोरी।

मुलकना^७—क्रि० अ० [सं० पुलकित ? या सं० मुकुलित] मद मद हँसना। पुलकत होना। नेत्रों में हँसी प्रकट करना। मुमकराना। उ०—(क) मुलकत ढोलउ चमकियउ बीजल खिवी क दत।—ढाला०, दू० ५४२। (ख) सकुचि सरकि पिय निकट तँ मुलकि कछुक तन तोरि। कर अँचर की श्रोत करि जमुहानी मुख मोरि।—विहारी (शब्द०)।

यौ०—पुलकना मुलकना। उ०—कवि देव कछू मुलकँ पुलकँ उरकँ उर प्रेम कलोलनि पै।—देव (शब्द०)।

मुलकित^७—वि० [सं० पुलकित ? हि० मुलकना] १ प्रसन्न। पुलकित। प्रफुल्ल। उ०—पर तिय दोष पुरान सुनि हँसि मुरली सुखदानि। कसि करि राखी मिसरहू मुख आई मुसुकानि। मुख आई मुसुकानि मिसरहू कस करि राखी। सर्व दोषहर राम नाम की कीरति भाखी। वातन ही वहराय और की और कथा किय। सुकवि चतुर सब समुभि गय लखि मुलकित पर तिय।—मुकवि (शब्द०)। २ मद मद हँसता हुआ। मुस्कराता हुआ। उ०—ऊँचै चरतै सर्गाहियतु गिरह कवूतर लेतु। मुलकति हग मुलाकत बदनु तनु पुलकित तिहि हेतु।—विहारी (शब्द०)।

मुलकी—वि० [अ० मुल्क] १. दे० 'मुल्की'। २. देशों। विलायती का उलटा। उ०—पाँति मधु मुलकी तुरगन के कुलकी विसाल ऐसी पुलकी सुचाल तँसी दुलको।—गोपाल (शब्द०)।

मुलजिम—वि० [अ० मुलजिम] जिसके ऊपर किसी प्रकार का इलजाम लगाया गया हो। जिसपर कोई अभियोग हो। अभियुक्त।

मुलतवी—वि० [अ० मुलतवी] जो कुछ समय के लिये रोक दिया गया हो। स्थगित। जैसे,—(क) अब आज वहाँ का जाना

मुलतवी रखिए। (ख) जलसा दो दिन के लिये मुलतवी हो गया।

क्रि० प्र०—करना।—रखना।—रहना।—होना।

मुलतान—सज्ञा पु० [सं० मूलस्थान] एक प्रसिद्ध नगर जो पश्चिमी पंजाब में है।

मुलतानी^१—वि० [हि० मुलतान (नगर)] मुलतान का। मुलतान सबधी।

मुलतानी^१—सज्ञा स्त्री० १ एक रागिनी जिममें गाधार और धैवत कोमल, शुद्ध निपाद और तीव्र मध्यम लगता है। इनके अतिरिक्त तीनों स्वर शुद्ध लगते हैं। संगीत शास्त्र में इसे श्रीराग की रागिनी कहा है और हनुमत् के मत से यह दोषक राग की रागिनी है। इसके गाने का समय २१ से २४ दड तक है। २ एक प्रकार की बहुत कोमल और चिकनी मिट्टी जो मुलतान से आती है। विशेष—इसका रंग वादामी होता है और यह प्रायः सिर मलने में साबुन की तरह काम में आती है। इससे सोनार लोग सोना भी साफ करते हैं और छोपी लोग इससे अनेक प्रकार के रंगों में अस्तर देते हैं। साधु आदि इससे कपड़ा रंगते हैं।

मुहा०—मुलतानी करना = छोट छापने के पहले कपड़े को मुलतानी मिट्टी में रंगना।

मुलना^१—सज्ञा पु० [अ० मौलाना] मौलवी। मुल्ला। उ०—वाम्हन ते गदहा भला आन देव ते कुत्ता। मुलना ते मुरगा भला सहर जगावे सुत्ता।—कवीर (शब्द०)।

मुलमची—सज्ञा पु० [हि० मुलम्मा + ची (प्रत्यय)] किसी चीज पर सोने या चाँदी आदि का मुलम्मा करनेवाला। मुलम्मासाज।

मुलमा^७—वि० [अ० मुलम्मा] दे० 'मुलम्मा'। उ०—रतन परखु नीरा रे। मुलमा महीं हीरा रे।—दक्खिनी० पृ० ३७।

मुलम्मा^१—वि० [अ०] १. चमकता हुआ। २. जिसपर सोना या चाँदी चढाई गई हो। सोना या चाँदी चढा हुआ।

मुलम्मा—सज्ञा पु० १ वह सोना या चाँदा जो पत्तर के रूप में, पारे या विजली आदि की सहायता से, अथवा और किसी विशेष प्रक्रिया से किसी धातु पर चढाया जाता है। किसी चीज पर चढाई हुई सोने या चाँदी की पतली तह। गिलट। कलई। झोल।

विशेष—साधारणतः मुलम्मा गरम और ठंडा दो प्रकार का होता है। जो मुलम्मा कुछ विशिष्ट क्रियाओं से आग की सहायता से चढाया जाता है, वह गरम कहलाता है, और जो विजली की बँटरी से अथवा और किसी प्रकार बिना आग की सहायता से चढाया जाता है, वह ठंडा मुलम्मा कहलाता है। ठंडे की अपेक्षा गरम मुलम्मा अधिक स्थायी होता है।

यौ०—मुलम्मागर। मुलम्मासाज।

२ किसी पदार्थ, विशेषतः धातु आदि को चाँदी या सोने का दिया हुआ रूप।

क्रि० प्र०—करना।—चढ़ना।—चढ़ाना।—होना।

३. वह वाहरो भडकीला रूप जिमके अंदर कुछ भी न हो। ऊपरी तडक भडक।

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु
वा... [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु
वा... [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

मुञ्जसनाय— [१० मुञ्जसना - ५० सना] विगी वातु

क्रि० प्र०—करना ।—रचना ।—होना ।
मुलुकु— [१० मुलुकु] 'मुक' । उ०—जिव तात्र
के हेतु मुलुकु फिरते वहनेरा ।—गद०, भा० १, पृ० ३ ।

मुल्लेठा— [१० (मधुयष्टि) मूलयष्टि, प्रा० मूलयष्टी] धुंघची
वा गुजा नाम की गुजा को जट जो औषध के काम में जाती
है । जठर मधु । मुल्लेठी ।

विशेष—वह मानी ही बहुत प्रसिद्ध और अच्छी औषध मानी
जाती है । बंधक में ही मधुर, जीता, बलकारक, भोज के
निये दिनकारी, वीर्यजनक तथा पित्त, वात, सूजन, विष, घमरा,
तृणा, खानि और क्षय रोग का नाशक माना है । इनका मूल
में तैयार किया जाता है जो कारो रोग का होता है और
बाजारा में 'हनुम' के नाम से मिलता है । यह साधारण जट
का अपेक्षा अधिक गुणकारी समझा जाता है ।

पर्या०—यष्टिमधु । क्लीतका । मधुकु । यष्टिका । मधुस्तमा ।
मधुम । मधुवर्णी । मधुवी । मधुररसा । अतिरसा । मधुरमा ।
सापापहा । सौम्या ।

मुल्लक— [१० मुल्लक] १ दण । २ गुना । प्रात । प्रदेश । उ०—
मुल्लक यह तुलसी शहरवार मुल्लक होए ।—भारतेदु २०,
भा० १, पृ० १४२ । ३, तसार । जगत् ।

यो०—मुल्लकरी । मुल्लकरी = शामन । अविता । मुल्लकरी =
राज्यशानन । राज्यप्रथ ।

मुल्लकरी— [१०] दश पर अधिकार प्राप्त करना । मुल्लक
जीतना ।

मुल्लकी— [१० मुल्लकी] १ देव मन्थी । दर्जी । २,
अमनिक । जा रता मन्थी न हा । ३ भासन वा व्यवस्था
मन्थी ।

मुल्लकी— [१०] निवेदन करनेवाला । प्रार्थी ।

मुल्लकी— [१०] जो रोक दिया गया हो । जिनका समय आग
पड़ा दिया गया हो । स्वागत । द० 'मुल्लकी' ।

मुल्लकी— [१०] वह पत्नी जो सावधान जान में इनलिय
छाड दिया जाता है कि उसे देवकर और पत्नी आकर जान म
फैले । मुल्लकी । मुल्लकी ।

मुल्लकी— [१०] बहुत अधिक सीधा पादा । बेमूलक । मूर्त ।

मुल्लकी— [१०] वहुत अधिक सीधा पादा । बेमूलक । मूर्त ।

मुल्लकी— [१०] मुल्लकीना का आचार्य वा पुत्रोदित ।
नौवरी । उ०—'म' मिम्भर अघुन, फाजी मुल्लकी काह । निती
पात ना मिदार्न, अा पदर वाह ।—मयभाशा०, पृ० ७० ।
वि० द० 'मुल्लकी' ।

मुल्लकी— [१०] १, वह जो ताड पान पीत गया है ।
'मया म' । २, वह जो वा जीव्य पर निकुत ही ।

मुल्लकी— [१०] वह जो धान लिये वाम व लिये बर्हि
रताया प्रसिद्धा निमुन । वीरक कावादा । यह भी

किसी को मुकदमा आदि लड़ने के लिये अपना वकील नियुक्त करता हो। वकील करने या रखनेवाला।

मुचना (५)—क्रि० अ० [मं० मृत, प्रा० मुञ्च + हि० ना (प्रत्य०)] मरना। मृत होना। उ०—(क) गइ तजि लहरै पुरइन पाता। मुवउं धूप सिर अहा न छाता।—जायसी (शब्द०)। (ख) जैसे पतंग आगि घँसे लीन्ही। एक मुवँ दूसर जिउ दीन्ही।—जायसी (शब्द०)। (ग) नारि मुई, घर सपति नासी।—तुलसी (शब्द०)।

मुवह्दि—सज्ञा पु० [अ० मुवह्दिद मुवह्दिद] वह जो ईश्वर को एक माने। वह जो एकेश्वरवाद को मानता हो। एकेश्वरवादी। उ०—उनके कवित्त और सवैया और वनावट पूरा यकीन दिलानेवाले उनके मुवह्दि होने के है।—सुदर० प्र० (जी०), भा० १, पृ० ५३।

मुवाँ—वि० [हि० मुञ्चना] मृत। मरा हुआ।

मुवाना (५)।—क्रि० स० [हि० मुचना का स० रूप] हत्या करना प्राण लेना। मार डालना। उ०—इक सखी मिलि हँसति पूछति खैचि कर की और। तजि मुवाइ सुभरत नही निरखि उनकी और।—सूर (शब्द०)।

मुवाफिक—वि० [अ० मुआफिक] दे० 'माफिक'।

मुशब्जर—सज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का छपा हुआ कपडा। बूटेदार कपडा।

मुशब्जर—वि० बूटेदार। बेलबूटेवाला। उ०—क्या बकचे ताश मुशब्जर के क्या तख्ते साल दुसालो के। सब ठाठ पडा रह जाएगा जब लाद चलेगा बजारा।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० ३१०।

मुशटी—सज्ञा स्त्री० [सं०] श्वेत ककुनी। श्वेत कंगु [को०]।

मुशाफिक—वि० [अ० मुशाफिक] १. कृपालु। दयालु। २. मित्र। दोस्त। ३. तरस खानेवाला। दयावान्। रहम दिल।

मुशरव—सज्ञा पुं० [अ०] वह स्थान जहाँ पानी पीया जाय। भरना। २. सप्रदाय। मजहब। ३. ढग। तीर तरीका [को०]।

मुशरिक—सज्ञा पुं० [अ० मुशरिक] ईश्वर का छोड़कर दूसरे की भक्ति करनेवाला। उ०—गैर हक के सिजदा किसको कर न को। काफिर मुशरिक जो हा कर मर न को।—दक्खिनी०, पृ० १५३।

मुशाल—सज्ञा पुं० [सं०] धान आदि कूटने का डडा। मूसल।

मुशाली—सज्ञा पुं० [सं० मुशालिन्] मूसल धारण करनेवाले, श्री-वलदेव।

मुशाली—सज्ञा स्त्री० [सं०] गृहगोधा। छिपकिली [को०]।

मुशायरा—सज्ञा पुं० [अ० मुशाअरह्] १. बहुत से कवियों, गायरो का एक जगह एकत्र होकर परस्पर अपनी कविता सुनाना। कविगोष्ठी। २. उपस्थित जनसमूह के सामने कवियों द्वारा अपनी कविता सुनाना। कविसमेलन।

मुशावरत—सज्ञा स्त्री० [अ०] विचार विनिमय। मन्त्रणा। परामर्श। मशविरा [को०]।

मुशाहदा—सज्ञा पुं० [अ० मुशाहदह्] निरीक्षण। देखना। अवलोकन [को०]।

मुशाहरा—सज्ञा पुं० [अ० मुशाहरह्] दरमाहा। मासिक वेतन [को०]।
मुश्क—सज्ञा पुं० [फा०] १. कस्तूरी। मृगमद। मृगनाभि। २. गंध। वृ।

मुश्क—सज्ञा स्त्री० [देश०] कवे और कोहनी के बीच का भाग। भुजा। बाँह।

मुहा—पुश्कें फसना या बोधना = (अपराधी आदि की) दोनो भुजाओ को पीठ की ओर करके बाँध देना। (इससे आदमी बेवम हो जाता है।)

मुश्कआहू—सज्ञा पुं० [फा०] कस्तूरीमृग [को०]।

मुश्कदाना—सज्ञा पुं० [फा०] शोषधि के काम आनेवाला एक प्रकार की लता का बीज।

विशेष—यह इलायची के दाने के समान कुछ चिपटापन लिए होता है और इसके टूटन पर कस्तूरी की सी मुगध निकलती है। संस्कृत में इसे 'लताकस्तूरी' कहते हैं। वंध्यक में इसे स्वादिष्ट, वार्यजनक, शीतल, कटु, नेत्रो के लिये हितकारी, कफ, तृषा, मुखरोग और दुर्गंध आदि का नाश करनेवाला माना है।

मुश्कनाफा—सज्ञा पुं० [फा० मुश्कनाफह्] कस्तूरी का नाफा जिसके अंदर कस्तूरी रहती है।

मुश्कनाभ—सज्ञा पुं० [फा० मुश्कनाभ] वह मृग जिमकी नाभि में कस्तूरी होती है। कस्तूरीमृग। विशेष दे० 'कस्तूरीमृग'।

मुश्कवार—वि० [फा०] सुगंध वर्षक। बहुत खुशबूदार [को०]।

मुश्क बिलाई—सज्ञा स्त्री० [फा० मुश्क + हि० बिलाई (= बिल्ली)] एक प्रकार का जगली विलाव जिसके अडकाशो का पसीना बहुत सुगंधित होता है। गंध विलाव।

विशेष—अरबी में इसे जुवाद और संस्कृत में गंधमाजिर कहते हैं। इसके कान गोल और छोटे होते हैं और रंग भूरा होता है। दुम काली होती हैं, पर उसपर सफेद छन्ले पडे रहते हैं। लवाई प्रायः ४० इंच होती है। यह जलु राजपूताने और पंजाब के सिवा बाकी सारे हिंदुस्तान में पाया जाता है। यह विलो में रहता है, शिकारी होता है और पाला भी जा सकता है। यह चूहे, गिलहरी आदि खाकर रहता है। इसकी कई जातियाँ होती हैं। जैसे, भोडर, लकाटी इत्यादि।

मुश्कवेद—सज्ञा पुं० [फा०] एक प्रकार का वंत जो बहुत सुगंधित होता है। विशेष दे० 'वदमुश्क'।

मुश्कमेहदी—सज्ञा स्त्री० [फा० मुश्क + मेहदी] एक प्रकार का छोटा पौधा जो बागो में शोभा के लिये लगाया जाता है।

मुश्कल—वि० [अ०] १. कठिन। दुष्कर। दुस्साध्य। २. जटिल। पेचीदा [को०]। ३. वारीक। सूक्ष्म [को०]।

मुश्कल—सज्ञा स्त्री० १. कठिनता। दिक्कत। कठिनाई। २. मुसीबत। विपात्त। सकट।

को जब उहाँ नाश भयो मुष्टिका युद्ध दोऊ प्रचारी ।—सूर (शब्द०) । २ मुठ्ठी ।

मुष्टिदेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धनुष का मध्य भाग जो मुठ्ठी में पकड़ा जाता है [को०] ।

मुष्टियुत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार धूत जिसमें मुठ्ठी के भीतर की वस्तु का नाम वा उमकी सम विषम सख्या पूछी जाती है ।

मुष्टिपात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुक्केवाजी । घूँसेवाजी ।

मुष्टिवध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुष्टिवन्ध] मुट्टी बाँधना या मुठ्ठी में करना [को०] ।

मुष्टिमेय—वि० [सं०] १ मुठ्ठी के बराबर । मुठ्ठी भर । २ थोड़ा ।

मुष्टियुद्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह लड़ाई जिनमें केवल मुक्कों से प्रहार किया जाय । घूँसेवाजी ।

मुष्टियोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हठयोग की कुछ क्रियाएँ जो शरीर की रक्षा करने, बल बढ़ाने और रोग दूर करनेवाली मानी जाती है । २ किसी बात का कोई छोटा और सहज उपाय ।

मुष्टीमुष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] परस्पर मुक्का मुक्की । घूँसेवाजी [को०] ।

मुष्टक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मरसो ।

मुसडाँ—वि० [हिं० मुस्टड या मुस्टडा] घिगरा । ठलुआ । जो बिना काम किए हुए बैठे बैठे खाय । उ०—यह मुटमरदी है कि अघा मंगे, औ आँखोवाले मुसडे बैठे खाएँ ।—रगभूमि, भा० २, पृ० ५६६ ।

मुसवी—सञ्ज्ञा पुं० [पुर्त० मोजाविक] मुसवी या मुसम्मी नामक एक फल । उ०—ये मव मुसवियाँ और सतरे केवल तुम्हारे ही लिये में लाई हैं ।—जिप्सी, पृ० ४४२ ।

विशेष—पुर्तगाल के मोजाविक नामक स्थान से आने के कारण इस फल को, जो एक प्रकार का रसदार मीठा नीबू है, यहाँ उमी के वजन पर मुसवी या मुसम्मी कहा जाने लगा ।

मुसक^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] भुजा । बाँह । मुश्क । उ०—बंदी जराव लिलाट दिए गहि डोरी दोऊ पटिया पहिराई । ब्रह्म भनै रिपु जानि ग्रहयो रवि की मुसकें जनु राहु चढाई ।—अकवरी०, पृ० ३४६ ।

मुसक^१—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मुश्क] दे० 'मुश्क' ।

मुसकना^७—क्रि० अ० [हिं०] दे० 'मुसकाना' । उ०—(क) मुसकत मुसकत स्याम सुहाए ।—नद० ग्र०, पृ० ३०८ । (ख) सुत के करम निरखि नंदरानी । मुसकी जनम सुफलता मानी ।—नद० ग्र०, पृ० २४६ ।

मुसकनि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुस्कराना] मुस्कराहट । उ०—(क) सकन मुगध अग भरि भोरी पिय निरतत मुसकनि मुखमोरी परिरभत रसरारी ।—हरिदास (शब्द०) । (ख) अटकें नैन माधुरी मुसकनि अमृत वचन सवनन को भावत ।—सूर (शब्द०) ।

मुसकनियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकान' । उ०—मन मोहन को तुनरी बोलन मुनि मन हरत सुहँस मुसकनियाँ ।—सूर (शब्द०) ।

मुसकराना—क्रि० प्र० [सं० स्मप + कृ] ऐसी आकृति बनाना जिससे जान पड़े कि हँसना चाहते हैं । ऐसी कम हँसी जिसमें दाँत न निकले, न शब्द हो । बहुत ही मद् रूप से हँसना । होठों में हँसना । मृदु हास । मद् हास ।

मुसकराहट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुसकराना + आहट (प्रत्य०)] मुसकराने की क्रिया या भाव । मधुर या बहुत थोड़ी हँसी । मद् हास ।

मुसका—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] रस्सी की बनी हुई एक प्रकार की छोटी जाली जो पशुओं, विशेषत बँलों के मुँह पर इसलिये बाँध दी जाती है, जिसमें वे खलिहानों या खेतों में काम करते समय कुछ खा न सकें । जाला ।

मुसकान—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकराहट' ।

मुसकाना—क्रि० अ० [हिं०] दे० 'मुसकराना' ।

मुसकानि—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकराहट' । उ०—कवि मतिराम मुख सुवरन रूप रहि, रूपखानि मुसकानि सोभा सरसाइ कै ।—मति० ग्र०, पृ० २६१ ।

मुसकिराना—क्रि० अ० [हिं०] दे० 'मुसकराना' ।

मुसकिराहट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकराहट' ।

मुसकराना—क्रि० अ० [हिं०] दे० 'मुसकराना' । उ०—आँखों पर एक जी लुभानेवाली भलक नाचने लगी, पहले सुडौल गोरा गोरा मुखड़ा देख पढा, फिर घुंघरारे वार, फिर बड़ी बड़ी आँखें, फिर माँठी मुसकिराहट, फिर ऊँचा चौड़ा माथा ।—ठेठ०, पृ० २६ ।

मुसकराहट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकराहट' ।

मुसक्यान—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकराहट' ।

मुसक्याना—क्रि० अ० [हिं०] दे० 'मुसकराना' ।

मुसक्यानि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकराहट' । उ०—ता दिन तै मन ही मन मैं मतिराम पियेँ मुसक्यानि सुधा सी ।—मति० ग्र०, पृ० ३४२ ।

मुसखोरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मूस (= चूहा) + खोरी (= खाना)] खेत में चूहों की अधिकता होना । मुसहरी ।

मुसजर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुशज्जर] एक प्रकार का छया कपड़ा । उ०—बादला दार्याई नौरग साई जरकस काई भिलमिल है । ताफता कलदर वाफतावदर मुसजर सुदर गिलमिल है ।—सूदन (शब्द०) ।

मुसटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मूस (म० मूषिका = चूहा) + टी (प्रत्य०)] चुहिया ।

मुसदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] मिठाई बनाने का साँचा ।

मुसद्दस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ वह क्षेत्र जिसमें छह भुज हो । छह, पहलूवाला । २ एक प्रकार का पद्यवध । उ०—उर्दू में 'हाली' का मुसद्दस बहुत प्रसिद्ध है ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० २८ ।

विशेष—मुसद्दस छह, मिसरो या तीन शेरों का होता है । इसमें पहले के चार मिसरो के तुक एक समान होते हैं और शेष अंतिम दो मिसरो के तुक अलग होते हैं ।

मुसदिका—वि० [अ० मुसदिका] परताल किया हुआ । तसदीक किया हुआ । जाँचा हुआ ।

मुसना^१—क्रि० अ० [सं० मूषण (= चुराना)] लूटा जाना । अपहृत होना । मूसा जाना । चुराया जाना । (धन आदि) ।

मुहा०— घर मुसना = घर में चोरी होना ।

मुसना^२—क्रि० म० चोरी करना । मूसना । उ०—मुगए गेलिहे धन जागल परिजन लगहि कला शोक चोरा ।—विद्यापति पृ० ६८ ।

मुसना^३—सज्ञा पुं० [हि० मुस + ना (प्रत्य०)] मूसा । मूषक । उ०—कार्तिक गनपति दुइ जेगना । एक चढे मोर पर एक मुसना ।—विद्यापति, पृ० ५७७ ।

मुसना^४—वि० [सं० मूषण] चोरी करने या मूसनेवाला ।

मुसन्ना—सज्ञा पुं० [अ०] १ किसी असल कागज की दूसरी नकल जो मिलान आदि के लिये रखी जाती है । २ रसीद आदि का आधा और दूसरा भाग जो रसीद देनेवाले के पास रह जाता है ।

मुसन्निक—सज्ञा पुं० [अ० मुसन्निक] [स्त्री० मुसन्निका] पुस्तक बनानेवाला । ग्रथकर्ता या रचयिता ।

मुसफकी—वि० [अ० मुसफकी] शोधन करनेवाला । शोधक [को०] ।

मुसब्बर—सज्ञा पुं० [अ०] कुछ विविष्ट क्रियाओं से मुराया और जमाया हुआ धीकुर्दार का दूध या रस जिसका व्यवहार शोषण के रूप में होता है । एलुआ ।

विशेष—इसका उपयोग अधिकतर रेषन के लिये या चोट आदि लगने पर मालिश और सैंक आदि करने में होता है । यह प्रायः जजीवार, नेटाल तथा भूमध्यसागर के आसपास के प्रदेशों से आता है । बँधक में इसे चरपरा, शीतल, दस्तावर, पारे को शोधनेवाला तथा शूल, कफ, वात, कृमि और गुन्म को दूर करनेवाला माना है ।

मुसमर—सज्ञा पुं० [हि० मुस (= चूहा) + मारना] एक प्रकार की चिड़िया जो खेत में चूहों को पकड़कर खाती है ।

मुसमरवा^१—सज्ञा पुं० [हि० मूस + मारना] १ मुसमर चिड़िया । २ एक नीच जाति जो चूहे खाती है । मुगहर ।

मुसमुद^१—वि० [अ०] स्वस्त । नष्ट । वरजाद । उ०—पुरदार हकि ठाढी बली सर्व दुग मुसमुद किय ।—सूदन (शब्द०) ।

मुसमुद^२—सज्ञा पुं० नाश । ध्वंस । वरजादी ।

मुसमु^१—सज्ञा पुं० [दश०] ३० 'मुसमुद' । उ —दिस घुघरी चक घु घरी मुसमुघरी सु वसुंघरी ।—सूदन (शब्द०) ।

मुसम्मन—वि० [अ०] १ अठपहल । अष्टभुज । २ मोटाताजा । चर्वीदार । स्थूल [को०] ।

यौ०—मुसम्मन बुर्ज = अठकोन बुर्ज ।

मुसम्मर—वि० [अ०] कील या कटि से जडा हुआ । कीलित [को०] ।

मुसम्मा—वि० [अ०] [स्त्री० मुसम्मात] जिसका नाम रखा गया हो । नामक । नामी । नामधारी ।

मुसम्मात^१—वि० [अ० मुसम्मा का स्त्री० रूप] मुसम्मा शब्द का स्त्रीलिंग रूप । नाम्नी । नामधारिणी ।

मुसम्मात^२—सज्ञा स्त्री० स्त्री । औरत ।

मुसरा^१—नशा पुं० [हि० मूसल] गेट की वह जट जिसे एक ही मोटा पिंड धरती के अरर दूर तक चला जाय और इधर उधर शाखाएँ न हो । जंम, मूनी, गैमल आदि की जट । 'मूगरा' का उलटा ।

मुसरिया^१—नशा स्त्री० [अ०] कंब को चूटियाँ बनाने का मंत्र ।

मुसरिया^२—नशा स्त्री० [हि० मुग] चूहे का मन्त्र । मुमटी ।

मुसरिया^३—नशा स्त्री० [हि० मुसर + दया (प्रत्य०)] दे० 'मुसरा' ।

मुसल—नशा पुं० [सं०] १ दे० 'मूसन' । (पुं०) वह जो मूसन की तरह जट हो । मूर्त । जट । प्रज ।

मुसलधार—क्रि० वि० [सं० मुसल + धार] दे० 'मूसनधार' । उ०—भले नाच नाए माय चले पायप्रदानाय वरणी मुसाधार धार धार धोरि धै ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुसलमान—नशा पुं० [फा०] [स्त्री० मुसलमानी] वह जो मुहम्मद नाह्य के बचाए हुए मरदाय में हो । मुहम्मद नाह्य का पूर्णतः अनुयायी और इस्लाम धर्म का माननेवाला । मुहम्मदी । उ०—हिंदू में क्या धोर है मुसलमान में और । माह्य सत्रवा एक है व्याप रहा मय डोर ।—रानिधि (शब्द०) ।

मुसलमानी^१—वि० [सं०] मुसलमान मन्त्री । मुसलमान का । जैसे, मुसलमानी मजहब ।

मुसलमानी^२—नशा स्त्री० मुसलमानों की एक रस्म जिसमें छोटे बालों की इट्टी पर फा चमटा काट डाला जाता है । बिना यह रस्म हुए वह पाका मुसलमान नहीं मन्मा जाता है । मुत ।

मुसलाधार—क्रि० वि० [हि० मुसलधार] दे० 'मुसलधार' ।

मुसलामुसलो—नशा स्त्री० [सं०] परमेश्वर मूसन का प्रहार । मूसलो की लट्टी [को०] ।

मुसलायुद्ध—सज्ञा पुं० [सं०] जिनका धायुध मूसल है—बनराम [को०] ।

मुसल्लिम—नशा पुं० [फा०] मुसलमान । मुहम्मदी ।

यौ०—मुसल्लिम लोग = मरदायवादी मुसलमानों की एक रस्म । मुसल्लिम कीमी = वह जो मुसल्लिम लोग का अनुयायी हो ।

मुसली^१—सज्ञा पुं० [सं० मुसल्लिन्] दे० १ 'मुसली' । २ शिद का एक नाम [को०] ।

मुसली^२—नशा स्त्री० [सं० मुसली, मुसली] १ हल्दी की जाति का एक पौधा ।

विशेष—इसकी जड़ें शोषण के काम में आती हैं और बहुत पुष्टिकारक मानी जाती हैं । यह पौधा सीड की जमीन में उगता है । बिलासपुर जिले में, विशेषतः अमरकंटक पहाड पर, यह बहुत होता है ।

मुसलीका—नशा स्त्री० [सं०] शृङ्गोष्वा । छिपकिली [को०] ।

मुसलीय—वि० [सं०] दे० 'मुसल्य' ।

मुसल्य—वि० [सं०] मूसल के प्रहार से मारने के योग्य । मूसल द्वारा वध्य [को०] ।

मुसल्लम^१—वि० [फा०] जिसके खड न किए गए हो । सावृत । पूरा । अखड । जैसे,—यह गाँव मुसल्लम उन्हीं का है । २ माना हुआ । निर्विवाद [को०] ।

मुसल्लम^३—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुसल्लिम] दे० 'मुसलमान' । उ०—हिंदू एकादश चौबिस रोजा मुसल्लम तीस बनाएँ।—कबीर (शब्द०) ।

मुसल्लस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह जिनमे तीन कोने वा त्रिकोण हो । २ उर्दू का एक छंद जिसमे तीन मिसरे समान तुक या वजन के होते हैं । तीन पदों का छंद । त्रिपदी । जैसे,—या तो अफसर मेरा ग्राहाना बनाया होता । या मेरा ताज गदायाना बनाया होता । वर्ना ऐसा जो बनाया न बनाया होता ।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० २७ ।

मुसल्लह—वि० [अ०] हथियारधर । सशस्त्र । शस्त्रसज्जित । उ०—हमारे पास भी राइफलो से मुसल्लह गारदें, फौज, तोपखाने और हवाई जहाज हैं ।—फूलो०, पृ० ५० ।

मुसल्ला^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] [स्त्री० अल्पा० मुसल्ला] १ नमाज पढ़ने की डूरी या चटाई । २ ईदगाह । नमाज पढ़ने का स्थान (मैदान) । ३ एक प्रकार का बरतन जो बड़े दिए के आकार का होता है । यह बीच में उभरा हुआ होता है । इसमें मुहर्रम में चढाया चढाया जाता है ।

मुसल्ला^२—सञ्ज्ञा पुं० दे० 'मुसलमान' । उदा०—जिस दरगाह मुसल्ला बैठा डारै चादर काजी ।—चरण० बानी० पृ० १५८ ।

मुसवाना—क्रि० स० [हिं० मूसना का प्रेर० रूप] १. लुटवाना । २ चोरी कराना ।

मुसव्वर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'मुसव्विर' । उ०—किसी हिंदुस्तानी मुसव्वर की बनाई प्रतिष्ठाति है ।—ककाल, पृ० १२४ ।

मुसव्विर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ चित्रकार । तसवीर खींचनेवाला । २ बेलवृष्टे बनानेवाला ।

मुसव्विरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ चित्रकारी । २ नक्काशी । बेलवृष्टे का काम ।

मुसहर—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मूस (= चूड़ा) + हर (प्रत्य०)] एक प्रकार की जगली जाति ।

विशेष—इम जाति का व्यवसाय जगली जडा बूटी आदि बेचना है । कहते हैं, इस जाति के लोग प्राय चूहे तक मारकर खाते हैं, इमी में मुसहर कहलाते हैं । आजकल यह जाति गाँवों और नगरों के आस पास बस गई है और दोने, पत्तल बनाने तथा पालकी आदि उठाने का काम करती है ।

मुसहरिन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुसहर + इन (प्रत्य०)] मुसहर जाति की स्त्री ।

मुसहिल^१—वि० [अ०] (वह दवा) जिमसे दस्त आवे । दस्तावर । रेचक ।

विशेष—ऐसी दवा प्राय जुलाब से एक दिन पहले खाई जाती है ।

मुसहिल^२—सञ्ज्ञा पुं० जुनाब । रेचन ।

मुसाफिर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुसाफिर] यात्री । राहगीर । बटोही । पथिक ।

मुसाफिरखाना—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुसाफिर + फा० खाना] १ यात्रियों के, विशेषत रेल के यात्रियों के ठहरने के लिये बना हुआ स्थान । २. बर्मशाला । सराय ।

मुसाफिरत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुसाफिरत] १ मुसाफिर होने की दशा । २ मुसाफिरी । प्रवास ।

मुसाफिरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुसाफिरी] १ मुसाफिर होने की दशा । २ यात्रा । प्रवास ।

मुसाफिरी^२—वि० मुसाफिर का । मुसाफिर जैसा । उ०—कब पहना मुसाफिरी बाना ? हमने न अभी तक यह जाना ।—अपलक, पृ० ५६ ।

मुसाल^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृप्वसा + आलय ?] १ मौसियाना । मौमी का आलय । २ माँ का आलय । ननिहाल । उ०—बरष अहु प्रथिराज गयउ दिल्ली मुसाल थह । राज करे अनगेस सेव मरुधरा करै सह ।—पृ० रा०, ७।२५ ।

मुसाहब—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुसाहब] वह जो किसी धनवान या राजा आदि के समीप उसका मन बहलाने अथवा इस प्रकार के और कामों के लिये रहता है । पार्श्ववर्ती । सहवासी । उ०—प्रकवर शाह के मुसाहब, फारसी और संस्कृत भाषा के महाकवि थे ।—अकवरी०, पृ० ४६ ।

मुसाहबत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] मुसाहब का पद या काम ।

मुसाहवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुसाहब + ई (प्रत्य०)] मुसाहब का पद या काम ।

मुसाहब—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'मुसाहब' ।

मुसिकाना^१—क्रि० अ० [हिं०] दे० 'मुसकाना' । उ०—इहि सुनि नागरि नवल नवेली मुसिकी नैन दुराह ।—नंद० ग्र०, पृ० ३८६ ।

मुसीका^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] दे० 'मुसका' ।

मुसीवत्त—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ तकलीफ । कष्ट । २. विपत्ति । सकट ।

क्रि० प्र०—उठाना ।—मेलना ।—भोगना ।—सहना ।

मुहा^१—मुसीवत्त का मारा = विपद्ग्रस्त । अभागा । मुसीवत्त के दिन = दुर्दिन । कष्ट का समय ।

मुसुक^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] दे० 'मुष्क' । उ०—नरकी बाँधे मुसुक बाँधते गउ और बछरा ।—पलटू०, भा० १, पृ० ३७ ।

मुसुकाना—क्रि० अ० [हिं०] दे० 'मुसकराना' । उ०—पान खात मुसुकान मुदु को यह केशवदास ।—केशव (शब्द०) ।

मुसुकानि^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकान' । उ०—पियत रहत पिय नैन यह, तेरी मुदु मुसुकानि ।—मति० ग्र०, पृ० ४.४ ।

मुसुकाहट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'मुसकराहट' ।

मुसौवर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुसव्वर] मुसव्विर । चित्रकार । उ०—

- मुसौवर खीच ले तसवीर गर तुफमे रमाई हो ।—श्यामा०, पृ० ७३ ।
- मुस्क^(७)—सञ्ज्ञा पुं [अ० मुष्क] कस्तूरी । दे० 'मुष्क' । उ०—है न जटा, ए वार विराजत नील न ग्रीव में मुस्क लगाए । सीस न चद कला ए 'गुविन्द' मु पुस्पप्रगा विलसे मुखदाए ।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० ४३५ ।
- मुस्किला—वि० [अ० मुष्किल] दे० 'मुष्किल' । उ०—पढना गुनना चातुरी, यह तो वात सहल । काम दहन मन वगि करन, गगन चढल मुस्कल ।—सतवाणी०, पृ० ४६ ।
- मुस्की—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं०] दे० 'मुसकराहट' ।
- मुस्की—वि० [फा० मुस्की] दे० 'मुस्की' ।
- मुस्क्यान^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं०] दे० 'मुसकराहट' ।
- मुस्टडा—वि० [सं० पुष्ट] १ मोटा ताजा । हृष्टपुष्ट । पुष्ट भुजङ्ग-वाला । २ वदमाश । गुडा । लुच्चा । शोहदा ।
- मुस्त—सञ्ज्ञा पुं [सं०] [स्त्री० मुस्ता] नागरमोथा । माथा नाम की घास ।
- मुस्तक—सञ्ज्ञा पुं [सं०] [स्त्री० मुस्तका] नागरमोथा । मोथा । यौ०—मुस्तगधा । मुस्तकगधा = नागरमोथा । उ०—मुस्तक-गधा खुदी मृत्तिका है इधर, वने आर्द्र पदचिह्न, गए शूकर जिधर ।—साकेत, पृ० १३७ ।
- मुस्तकिल—वि० [अ० मुस्तकिल] १ अटल । स्थिर । २ पक्का । मजबूत । दृढ़ । ३ स्थायी रूप से किमी पद वा काम पर नियुक्त (को०) । यौ०—मुस्तकिल मिजाज = स्थिरचित्त । दृढनिश्चयी । मुस्तकिल हकदार = सपत्ति, विशेषतया भूमिपत्ति का स्थायी अधिकारी ।
- मुस्तकीम—वि० [अ० मुस्तकीम] सरल । ऋजु । ठीक । सीधा । उ०—यकीन जप में वई वदा हूँ कदीम । करनहार हूँ काम फिर, मुस्तकीम ।—दक्खिनी०, पृ० ६१ ।
- मुस्तगीस—सञ्ज्ञा पुं [अ० मुस्तगीस] [स्त्री० मुस्तगीसा] १ वह जो किसी प्रकार का इस्तगसा या अभियोग उपस्थित करे । फरियादी । २ मुद्दई । दावेदार ।
- मुस्ततील—सञ्ज्ञा पुं [अ०] आयत समकोण चतुर्भुज (को०) ।
- मुस्तदई—वि० [अ०] आवेदक । प्रार्थी (को०) ।
- मुस्तनद—वि० [अ०] जो सनद के तौर पर माना जाय । विश्वास करने के योग्य । प्रामाणिक ।
- मुस्तफा—वि० [अ० मुस्तफा] १ पवित्र । पुनीत । निर्मल । जिममे मनुष्यों का कोई दुर्गुण न हो । २ चुना हुआ । श्रेष्ठ (को०) ।
- मुस्तफीद—वि० [अ० मुस्तफीद] फायदा उठाने या चाहनेवाला ।
- मुस्तशाना—वि० [अ० मुस्तशाना] १ अलग किया हुआ । छाँटा हुआ । भिन्न । २ जो अपवाद स्वरूप हो । ३ उससे मुक्त किया हुआ, जिसका पालन औरों के लिये आवश्यक हो । बरी किया हुआ ।
- मुस्तहक—वि० [अ० मुस्तहक] १ हकदार । अधिकारी । २ योग्य । पात्र ।
- मुस्तहकिम—वि० [अ० मुस्तहकिम] योग्य । ठीक । वाजिव । उ०—कम्फहम आदमी की राय मुस्तहकिम नहीं होती ।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० ३१ ।
- मुस्ता—सञ्ज्ञा स्त्री [सं०] एक प्रकार की घास । मोथा ।
- मुस्ताद—सञ्ज्ञा पुं [सं०] जगनी मूत्र (जो मोथे की जट खाता है) ।
- मुस्ताभ—सञ्ज्ञा पुं [सं०] नागरमोथा (को०) ।
- मुस्तु—सञ्ज्ञा पुं [सं०] मुसका । घूसा । मुट्टी (को०) ।
- मुस्तैद—वि० [अ० मुस्तैद, मुस्तैद] १ जो किमी कार्य के लिये तत्पर हो । सज्ज । २ चुस्त । चालाक । तेज ।
- मुस्तैदी—सञ्ज्ञा स्त्री [अ० मुस्तैद + ई (प्रत्य०) मुस्तैदी] १ सज्जता । तत्परता । २ फुरती । उत्साह ।
- मुस्तोजिर—सञ्ज्ञा पुं [अ०] ठेके पर काम करनेवाला । ठेकेदार (को०) ।
- मुस्तौफी—सञ्ज्ञा पुं [अ० मुस्तौफी] वह पदाधिकारी जो अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के हितों की जांच पठना करे । आय-व्यय-परीक्षक । उ०—रामिल बाकी स्याहा मुजलिम नव प्रवर्म की बाकी । चिन्तित होने मुस्तौफी शरण गहूँ मैं काकी ।—सूर (शब्द०) ।
- मुस्त—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ मूमन । २ शय्यु । श्रान्त (को०) ।
- मुहगा—वि० [सं० महार्घ, प्रा० महग्व] दे० 'महंगा' । उ०—परि ब्रह्मा ही आभरण, मोल मुहगा लेसि ।—दोला०, पृ० २२५ ।
- मुह—सञ्ज्ञा पुं [सं० मुख] दे० 'मुंह' । उ०—(क) पहिल नेचाला लाई जाय मुह भीतर जबही । खण चूप भं रहइ गारी गाइ दे तबही ।—कीर्ति०, पृ० ४२ । (ख) मुह मे लाँट पेट मे विप ऐने इम पुरुवशी के फद मे फाँकर अव मैं निलज कहलाई सी ठीक है ।—शकुतला, पृ० ६५ ।
- मुहकम—वि० [अ०] दृढ़ । पक्का । उ०—सूर पाप को गढ दृढ कीन्हो मुहकम लाइ किंवारे ।—सूर (शब्द०) ।
- मुहकमा—सञ्ज्ञा पुं [अ०] तरिश्ता । विभाग । सीमा ।
- मुहज्जव—वि० [अ० मुहज्जव] सस्कृत । शिष्ट । नागरिक । शिक्षित । उ०—हिंदुस्तानी जवानों मे सबसे ज्यादा शाइस्ता और मुहज्जव जवान ग्वालियरी है ।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० ८७ ।
- मुहतमिम—सञ्ज्ञा पुं [अ०] बदोबस्त करनेवाला । इतजाम करनेवाला । निगरानी करनेवाला । प्रबंधक । व्यवस्थापक ।
- मुहतरका—सञ्ज्ञा पुं [?] वह कर जो व्यापार, वाणिज्य आदि पर लगाया जाय ।
- मुहतरम—वि० [अ० मुहतरम] मान्य । प्रतिष्ठित । श्रेष्ठ (को०) ।
- मुहताज—वि० [अ० मुहताज] १ जिसे किसी ऐसे पदार्थ की बहुत अधिक आवश्यकता हो जो उसके पास बिलकुल न हो । जैसे, दाने दाने की मुहताज । उ०—कौड़ी कौड़ी को कहूँ, मैं सबको मुहताज ।—भारतेंदु ग०, भा० २, पृ० ४७३ । २ वरिष्ठ । गरीब । कगल । निर्धन ।

यौ०—मुहताजखाना = अनायालय । भ्रमसत्र । गरीबो को भोजन आदि देने की जगह ।

३ निर्भर । आश्रित । ४ चाहनेवाला । आकाक्षी । जैसे,—हम तुम्हारे रूप के मुहताज नहीं ।

मुहताजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुहताज + ई (प्रत्य०)] १ मुहताज होने की क्रिया या भाव । दरिद्रता । गरीबी । ३ परमुखापेक्षी होने का भाव । परवशता ।

मुहद्दिस—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहद्दिस] हदीस (पैगवर का कथन) का ज्ञाता या जाननेवाला [को०] ।

मुह्वनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] एक प्रकार का फल जो नारंगी की तरह का होता है ।

मुह्वत्त—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] प्रीति । प्रेम । प्यार । चाह ।

मुहा०—मुह्वत्त उच्छ्रजना = प्रेम का आवेश होना ।

२ दोस्ती । मित्रता । ३ इश्क । लगन । लौ ।

क्रि० प्र०—करना ।—रखना ।

यौ०—मुह्वत्तनामा = (१) प्रेमपत्र । प्रेमी या प्रेमिका का पत्र । (२) मित्र या प्रियजन का पत्र ।

मुहम^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'मुहिम' । उ०—जाय नवोढा सासरे, आसू नाँख उसास । मावडिया जावै मुहम, इम विन हुवे उदास ।—बाँकी० प्र०, भा० २, पृ० १६ ।

मुहम्मद—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] अरब के एक प्रसिद्ध धर्माचार्य जिन्होंने इस्लाम या मुसलमानी धर्म का प्रवर्तन किया था ।

विशेष—इनका जन्म मक्के में सन् ५७० ई० के लगभग और मृत्यु मदीने में सन् ६३२ ई० में हुई थी । इनके पिता का नाम अब्दुल्ला और माता का नाम अमीना था । इन्होंने अपने जीवन के आरम्भिक काल में ही यहूदियों और ईसाइयों की बहुत सी धार्मिक बातों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था । उसी समय से ये स्वतंत्र रूप से अपना एक धर्म चलाने की चिन्ता में थे और उसी उद्देश्य में लोगों को कुछ उपदेश भी देने लगे थे । प्राय ४० वर्ष की अवस्था में इन्होंने यह प्रसिद्ध किया था कि ईश्वर ने मुझे इस ससार में अपना पैगवर (दूत) बनाकर धर्मप्रचार करने के लिये भेजा है । इसके उपरांत इन्होंने कुरान की रचना की, और उसके सवष में यह प्रसिद्ध किया कि इसकी सब बातें खुदा अपने फरिश्ते जिब्राईल के द्वारा समय समय पर मुझसे कहलाता रहा है । धीरे धीरे कुछ लोग इनके अनुयायी हो गए । पर बहुत से लोग इनके विरोधी भी थे, जिनसे समय समय पर इन्हें युद्ध करना पड़ता था । यह भी प्रसिद्ध है कि ये एक नार सदेह स्वर्ग गए थे और वहाँ ईश्वर से मिले थे । अरबवालों ने कई बार इनके प्राण लेने की चेष्टा की थी, पर ये किसी न किसी प्रकार बचाव बचते ही गए । ये मूर्तिपूजा के कट्टर विरोधी और एकेश्वरवाद के प्रचारक थे । अपने आपको ये पैगवर या ईश्वरीय दूत बतलाते थे । इन्होंने कई विवाह भी किए थे । ये जैसे उदार और कृपालु थे वैसे ही कट्टर और निर्दय भी थे ।

मुहम्मदी—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] मुहम्मद साहब का अनुयायी । मुसलमान । उ०—इम नवीन विरुद्ध धर्म के अनुयायी होकर कुछ दिनों में उसी दल के परगणित हो कट्टर मुहम्मदी हो गए ।—प्रेमधन०, भा० २, पृ० २४० ।

मुहय्या—वि० [अ०] दे० 'मुहैया' ।

मुहर^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मोह] [फा० मोहर] दे० 'मोहर' । उ०—तुम कहँ दीन्ह जवत कौ मारा । तुम्हरी मुहर चलै ससारा ।—कवीर सा०, पृ० १०११ ।

यौ०—मुहरफन = मुहर खोदनेवाला । मुहरबरदार = मुहर रखनेवाला अधिकारी ।

मुहा०—मुहर करना । मुहर लगाना = प्रमाणित कर देना ।

मुहर^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुखर, प्रा० मुहर] वाचाल । मुखर । वक्तावादी । उ०—चोहाना तौवर अर्भंग मुहर सव्व सामत ।—पृ० रा०, ४।१६ ।

मुहर^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मयूर, हिं० मोर] मोर । उ०—कजा सूँ मुहर यक ऊपर आय कर । वहिश्त के कंगूरे ऊपर जाय कर ।—दाबखनी०, पृ० ३२८ ।

मुहर मुहर^४—अव्य० [सं० मुहुर्मुहु] बारवार । बार बार । उ०—निकट निजल घट तर्ज मुहर मुहर पति दरसी ।—पृ० रा०, ६।३७० ।

मुहरा^१—सञ्ज्ञा पुं० हिं० मुँह + रा (प्रत्य०)] १ सामने का भाग । आगा । सिरा । सामना ।

मुहा०—मुहरा खेना = मुकाबिला करना । सामने होकर लड़ना । २ निशाना । ३ मुँह की आकृति ।

यौ०—चेहरा मुहरा ।

४ शतरज की कोई गोटी । उ०—घोडा दै फरजी बदलावा । जेहि मुहरा-रख चहै सो पावा ।—जायसी (शब्द०) । ५ पत्नी घोटने का शीशा । ६ [स्त्री० मुहरी] घोड़े अथवा सवारी के पशुओं का एक साज जो उसके मुँह पर पहनाया जाता है । उ०—(क) अनुपम सुखवि मुहरो लगाम ललाम दुमची जीव की ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) ऊँकर साल्ह उतारियउ मन खोटइ मनुहारि । पगसूँ ही पग कूँटियउ, मुहरी झाली नारि ।—ढोला०, दू० ६२६ । ७ शतरज की गोटियाँ ।

मुहरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मोहरी] १ दे० 'मोरी' । २ दे० 'मोहरी' ।

मुहरम^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] अरबी वर्ष का पहला महीना । इसी महीने में इमाम हुसेन शहीद हुए थे । मुसलमानों में यह महीना शोक का माना जाता है ।

मुहा०—मुहरमी सूरत = रोनी सूरत । मनहूस सूरत । मुहरम की पैदाइश होना = मनहूस होना । सदा दुखी और चिन्तित रहना ।

मुहरमी—वि० [अ० मुहरम + ई (प्रत्य०)] १, मुहरम सबधी । मुहरम का । २ शोकव्यजक । ३ मनहूस । उ०—जिस किसी की प्रकृति में शोक या विपाद श्रोतप्रोत हो जायगा तो वह अनेक व्यक्तियों या वस्तुओं से खिन्नता प्राप्त किया करेगा

और रोना, मनहूस या मुहर्मी कहलाएगा ।—रस०,
पृ० १८३ ।

यौ०—मुहर्मी सूरत = रोनी सूरत । मनहूस मूरत ।

मुहर्रिक—वि० [अ०] १ प्रेपक । चालक । २ प्रस्तावक । ३.
उत्तेजक । उत्तेजना देनेवाला [को०] ।

मुहर्रि—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] लेखक । मुशी । लिपिक क्लर्क । उ०—
पाँच मुहर्रि साथ करि दीने तिनकी बडी विपरीत । जिम्मे
उनके, माँग मोते यह तो बडी शनीत ।—सूर (शब्द०) ।

मुहर्रि—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] मुहर्रि का काम । लिखने का काम ।

मुहलत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मोहलत] 'मोहलत' ।

मुहलय^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] मुहाल । भ्रमर । उ०—कुवचय गज
मुहलय मुदित विदित बली दरवार ।—पृ० रा०, २।४६२ ।

मुहली^(५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुसल का स्त्री०] २० 'नूमल' । उ०—
कबीर चावल कार ने तुख को को मुहली लाइ ।—कबीर ग्र०,
पृ० २५२ ।

मुहलैठी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मधुयट्टि] २० 'मुलेठी' ।

मुहल्ला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहल्लाह] २० 'महल्ला' ।

मुहसिन—वि० [अ०] १ एहसान करनेवाला । अनुग्रह करनेवाला ।
२ सहायक । मददगार ।

यौ०—मुहसिन कुश = एहसान फरामोण । कृतघ्न । मुहसिन-
कुशी = कृतघ्नता ।

मुहसिल^१—वि० [अ० मुहासिल] तहसील वसूल करनेवाला ।
उगाहनेवाला ।

मुहसिल^२—सञ्ज्ञा पुं० प्यादा । फेरीदार । उ०—मैं न दियो, मन उन
लियो, मुहसिल मन पठाय ।—रसनिधि (शब्द०) ।

मुहाफिज—वि० [अ० मुहाफिज] हिफाजत करनेवाला । सरक्षक ।
रखवाला ।

मुहाफिजखाना—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहाफिज + फा० खानह] कचहरी
में वह स्थान जहाँ सब प्रकार की मिसलें आदि रहती हैं ।

मुहाफिज दफ्तर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहाफिज + दफ्तर] कचहरी का
वह अधिकारी जिसके निरीक्षण में मुहाफिजखाना रहता है ।
(अ० रेकर्ड कीपर) ।

मुहाका^१—वि० [सं० मोहक ? या अ०] मोहित करनेवाला । ठग ।
लुटेरा । उ०—अठसठ हाट इसे गढ माही । विचि पच मुहाके
लूट लै जाहीं ।—प्राण०, पृ० ३० ।

मुहाचही^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुह + चाहना] मुखदर्शन । मुख का
देखना । दर्शन । उ०—जान प्यारी सुधि हूँ शपुनपी विसरि
जाय । माधुरी निवान तेरी नैसिक मुहाचही ।—घनानन्द,
पृ० ३७४ ।

मुहामुही^१—क्रि० वि० [हिं० मुह] आमने सामने । परस्पर एक
दूसरे से । उ०—तब विधवा के गर्भ की वार्ता जहाँ जहाँ लोग
मुहामुही करने लगे ।—भक्तमाल (श्री०), पृ० ४७५ ।

मुहारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मुह + आर (प्रत्य०)] १ ऊँट की नरन ।
मुहरी । २ मकान का दरवाना ।

मुहारवा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहारवाह] युद्ध । परस्पर सङ्ग्राम ।
लड़ाई [को०] ।

मुहाल^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] भ्रमर । मधुमक्खी । २० 'मुहनय' । उ०—
महु तजि चलत मुहाल अन्य तर माप लगत काहँ । बद्ध विद
विमाल चलत बगि पवन गगन महँ । पृ० रा०, ७।२३ ।

मुहाल^१—वि० [अ०] १ प्रमथन । नामुमजिन । २ कठिन । टुकर ।
टुनाथ । उ०—है मुहाल उनका दाग म घाना । दिन ह दन
मय युता का जग की तरफ ।—कविता दौ०, भा० ४, पृ० २२ ।

मुहाल^२—सञ्ज्ञा पुं० १ २० 'महाल' । २ २० 'महल्ला' ।

मुहाला—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मुह + आला (प्रत्य०)] पीनल का यह बंद
या चूड़ी जो हाथी के दात में जोभा देने लिये चढ़ाई जाती है ।
वगर । वगड । उ०—गगन बदन मदत विराजहि हाटक बँधे
मुहाले । मनहु दँज अजि श्याम मेघ मधि उभय नोक छवि
माले ।—रघुराज (शब्द०) ।

मुहावरत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] परस्पर वार्ता । आपस में बातचीत
करना [को०] ।

मुहावरा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहावरह] १ नक्षत्रा या व्यजना द्वारा
सिद्ध वाक्य या प्रयोग जो किसी एक ही प्रोती या लिखी
जानवाली भाषा में प्रचलित हो और जिसका अर्थ प्रत्यक्ष
(अभिधय) अर्थ में विलक्षण हो । उट लाक्षणिक प्रयोग । किसी
एक भाषा में दियाई पढ़नेवाली अनाधारग्य शब्दयोजना अथवा
प्रयोग । जैसे,—'लाठी खाना' मुहावरा है, क्योंकि इसमें 'खाना'
शब्द अपने नाधारण अर्थ में नहीं आया है, लाक्षणिक अर्थ में
आया है । लाठी खाने का चीज नहीं है, पर विलक्षण में 'लाठी
खाना' का अर्थ 'लाठी का प्रहार सहता' लिया जाता है । इसी
पकार 'गुल खाना', 'घर करना', 'चमडा खोजना', 'चिकनी
चुपडी वार्ते' आदि मुहावरे के अन्तर्गत हैं । कुछ लोग इसे
'रोजमर्रा' या 'बोलचान' भी कहते हैं । २ अन्याय । आवदत ।
जैसे,—आजकल मेरा लिखने का मुहावरा छूट गया है ।

कि० प्र०—छूटना ।—चालना ।—पडना ।

मुहासवा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहासवह] २० 'मुहासिवा' उ०—दिल को
करहु फरास फकीरा रहू मुहासवे पाक ।—पल्लव०, भा० ३,
पृ० १० ।

मुहासरा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहाररह] २० 'मुहासिरा' [को०] ।

मुहासिव—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ हिसाब जाननेवाला । गणितज्ञ ।
२ पडताल करनेवाला । आँफनेवाला । हिसाब लेनेवाला ।
उ०—सूर आप गुजरान मुहासिव लै जवाब पहुँचावे ।—
सूर (शब्द०) ।

मुहासिवा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ हिसाब । लेखा । उ०—सूरदास
को यह मुहासिवा दस्तक कीजै माफ —सूर (शब्द०) ।
२ पूछताछ ।

मुहासिरा

मुहासिरा—सज्ञा पुं० [अ०] १ युद्ध आदि के समय किले या शत्रुसेना को चारों ओर घेरने का काम । घेरा । २ घेरा । हदवदी ।

मुहासिल—सज्ञा पुं० [अ०] १ आय । ग्रामदनी । २ लाम । मुनाफा । नफा । ३ विक्री आदि से होनेवाली आय ।

मुहि^७—सर्व० [हि० मुक्] दे० 'मोहि' । उ०—तिनमे इक सिसुपाल, ताहि मुहि देत रुकम सठ ।—नद० ग्र०, पृ० २०५ ।

मुहिद्व—सज्ञा पुं० [अ०] प्रेम रखनेवाला । दोस्ती रखनेवाला । दोस्त । मित्र । मोहव्रत रखनेवाला ।

मुहिम—सज्ञा स्त्री० [अ०] १ कोई कठिन या बड़ा काम । भारी, भारके का या जान जोखो का काम । २ लड़ाई । युद्ध । समर । जग । ३ फीज की चढ़ाई । आक्रमण । उ० आए तेरे हगन पै जे मुहिम अखत्यार । कितने मनसूबा गए इन सौं छुरके हार ।—रसनिधि (शब्द०) ।

मुहिर^१—सज्ञा पुं० [स०] कामदेव ।

मुहिर^२—वि० मूर्ख । जडबुद्धि ।

मुहिर^३—सज्ञा पुं० [स० मुडिर, प्रा० मुहर] मेघ । बादल । उ०—मुहिर बलाहक तटित पति, कामुक वूमसपूत ।—नद० ग्र०, पृ० ८८ ।

मुहिम—सज्ञा स्त्री० [अ० मुहिम, मुहिम] 'मुहिम' । उ०—कवीर तोडा मान गढ, मारे पांच गनीम । सीस नवाया घनी को, साजी बडी मुहिम ।—कवीर सा० स०, पृ० २७ ।

मुहु—अव्य० [म० मुहु] वार वार । फिर फिर ।

यौ०—मुहुमुहु ।

मुहु^१—सज्ञा पुं० [हि०] दे० 'मुह' ।

मुहुक—सज्ञा पुं० [स०] एक पल । एक क्षण [को०] ।

मुहुपुची—सज्ञा स्त्री० [देश०] काले रंग का एक प्रकार का छोटा कीटा जो मूँगफली की फसल को नष्ट कर देता है । खुरल ।

विशेष—ये कीड़े रात को अधिक उड़ते हैं । ये पत्तियों पर अड़े देते हैं जिससे पत्तियाँ सूख जाती हैं । ये कीड़े घूप और साफ दिनों में बहुत हानि पहुँचाते हैं । इनसे खेत की फसल काली हो जाती है । पानी बरसने पर ये कीड़े नष्ट हो जाते हैं ।

मुहुभुक्—सज्ञा पुं० [स० मुहुभुक्] घोडा । अश्व [को०] ।

मुहूर्त^७—सज्ञा पुं० [स० मुहूर्त] १ दे० 'मुहूर्त' । उ०—ब्रह्म मुहूर्त कुअर कान्ह निज घर आए तब । गोपनि अपनी गोपी अपने ढिग पाई सब ।—नद० ग्र०, पृ० ३६ । २ सिनेमा की फिल्मों के आरंभ का मुहूर्त ।

मुहूर्त—सज्ञा पुं० [स० मुहूर्त] १ काल का एक नाम । दिन रात का तीसवाँ भाग । २ निर्दिष्ट क्षण या काल । समय । जैसे, शुभ मुहूर्त । ३ १२ क्षण का समय [को०] । ४ दो घंटों का काल ५ ज्योतिषी [को०] । ६ फलित ज्योतिष के अनुसार गणना करके निकाला हुआ कोई समय जिसपर कोई शुभ काम (यात्रा, विवाह) आदि किया जाय ।

क्रि० प्र०—निफलना ।—निफालना ।—देखना ।—द्विखलाना ।

मुहूर्तक—सज्ञा पुं० [स०] १ क्षण । काल । समय । २ ४८ मिनट का काल [को०] ।

मुहैया—वि० [अ०] १. तैयार । तत्पर । प्रस्तुत । २ उपस्थित । मौजूद । ३ उपलब्ध [को०] ।

मुह्यमान—वि० [मं०] मूर्च्छित । जो मोहित हो रहा या हुआ हो । मूर्च्छायुक्त । मोहयुक्त [को०] ।

मूँ^१—सज्ञा पुं० [स० मुख, प्रा० मुँह] दे० 'मुँह' । उ०—वो शारू के मूँ ते मुने यो बँन । नमीहत पर उसकी गजब मे हो ऐन ।—दक्खिनी०, पृ० १० ।

मूँ^२—सर्व० [हि० मुक् का सबध कारक का रूप] मेरा । मेरी । उ०—करहा देस मुहामणउ, जे मूँ सासरिवाडि । आँव मरीखउ आँव गिरि, जालि करीराँ भाडि ।—ढोला०, पृ० ४३२ ।

मूँग—सज्ञा स्त्री०, पुं० [स० मुद्ग] एक अन्न जिसकी दाल बनती है ।

विशेष—मूँग भादों में प्रायः साँवाँ आदि और अन्नो के साथ बोई जाती है और अग्रहन में कटती है । इसके पौधे की टहनियाँ लता के रूप में इधर उधर फैली होती हैं । एक एक सीके में सेम की तरह तीन तान पाँतियाँ होती हैं । फूल नीले या बैंगनी होते हैं । फलियाँ ढाई तीन अंगुल की पतली पतली होती हैं और गुच्छा में लगती हैं । फलियों के भीतर ५-६ लवें गोल दान होते हैं, जिनके मुँह पर की विदी उर्द की तरह स्पष्ट नहीं होती । मूँग के लिये बलुई मिट्टी और थोड़ी वर्षा चाहिए । मूँग कई प्रकार की होती है—हरी, काली, पीली । हरी या पीली मूँग अच्छी समझी जाती है और 'सोना मूँग' कहलाती है । वचक में मूँग लखी, लघु, धारक, कफघ्न, पित्तनाशक, कुछ वायुवधक, नेत्रों के लिये हिंतेकर और ज्वरनाशक कही गई है । वनमूँग के भी प्रायः यही गुण हैं । मूँग का दाल बहुत हलकी और पथ्य समझा जाती है, इसी से रागियों को प्रायः दी जाती है । इससे दही, पापड, लड्डू आदि भा बनते हैं ।

पर्या०—सूपश्रेष्ठ । बर्खाई । रसोत्तम । भुक्तिप्रद । ह्यानन्द । सुफल । वाजिभाजन ।

मुहा०—छाती पर मूँग दलना = द० 'छाती' का मुहा० । मूँग की दाल खानेवाला = पुरुषार्थहान । निबल । डरपोक ।

मूँगफली—सज्ञा स्त्री० [हि० मूँग + फला या म० भूम + हि० फली] १ एक प्रकार का चुप जिसका खेता फला काले प्रायः सारे भारत में की जाती है ।

विशेष—यह चुप तीन चार फुट तक ऊँचा होकर पृथ्वी पर चारों ओर फैल जाता है । इसके ठल रोएँदार होते हैं और सीको पर दो दो जोड़े पत्ते होते हैं जो आकार में चकवँड के पत्तों के समान अड़ाकार, पर कुछ जवाई लिए होते हैं । सूर्योस्त होने पर इसके पत्तों के जोड़े आपस में मिल जाते हैं और सूर्योदय होने पर फिर अलग हो जाते हैं । इसमें अरहर के फूलों के से चमकीले पीले रंग के २-३ फूल एक साथ और एक जगह लगते हैं । इसको जड़ में मिट्टी के अंदर फल लगते हैं जिनके ऊपर कड़ा और खुरदुरा छिलका होता है तथा अंदर गोल, कुछ लंबोतरा और पतले लाल छिलकेवाला फल होता

एक सीधा काड पतली छड के रूप मे ऊपर निकलता है जिमके सिरे पर मजरी या घूए के रूप मे फूल लगते है। सरकडे से इसमे यह भेद होता है कि इसमे गाँठें नहीं होती और छाल बडी चमकीली तथा चिकनी होती है। सीक से यह छाल उतारकर बहुत मुदर मुदर डलियाँ बुनी जाती है। मूँज प्राय ऊँचे ढागुएँ स्थानो पर बगीचे की बाढो या ऊँची मेढो पर लगाई जाती है। मूँज बहुत पवित्र मानी जाती है। ब्राह्मणो के उपनयन सस्कार के समय बटु को मुजमेखला (मूँज को करघनी) पहनाने का विधान है।

पर्या०—मौजीतृण । ब्राह्मण्य । तेजनाह्य । वानीरु । मुजनक । शीरी । दर्भाह्य । दूरमूल । दृष्टमूल । वट्टप्रज । रजन । शत्रुभग ।

मूँजी लाछन(७) — नि० [सं० मौँजीलाछन] मूँज की मेखला से युक्त । उ०—मूँजीलाछन वृष्णाजिन महित मुनि यूँ राज ।—वाँकी० ग्र०, भा० ३, पृ० १५५ ।

मूँभा(७) — वि० [सं० मुग्ध] लीन । मरावोर । तर । उ०—गूभा रस मूँभा दधि न्यारी ।—नद० ग०, पृ० ३० ।

मूँठी(७) — सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुठी] दे० 'मुठी' 'मुष्टि' । उ०—नाहित काह छार एक मूँठी ।—जायसी ग्र०, पृ० २३२ ।

मूँडाँ — सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुग्ध] सिर । कपाल । उ०—(क) तुलसी की बाजी राखी राम ही के नाम, नत भेंट पितरन को न मूँड हू मे वारु है ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुहा०—मूँड चढ़ना = ढिठाई करना । सिर चढ़ना । मूँड चढ़ाना = ढीठ करना । निडर कर देना । सिर चढ़ाना । मूँड मारना = बहुत हैरान होना । बहुत कोशिश करना । उ०—मूँड मारि हिय हारि कै हित हहरि अत्र चरन सरन तकि आयो ।—तुलसी (शब्द०) । मूँड मुढाना = (१) सन्यासी होना । (२) बाना बदलना । अन्य रूप स्वीकारना । नारि मुई गृह सपति नासी मूँड मुडाइ होहि सन्यानी ।—मानस, ७।१०० । विशेष दे० 'निर' ।

मूँडकटा — सञ्ज्ञा पुं० [हि० मूँड + काटना] दूसरे का निर काटने-वाला । दूसरे की हानि करनेवाला । धोखा देकर दूसरे को नुकसान पहुचानेवाला ।

मूँडन — सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुग्धन] गुडन सस्कार जिसमे बालक के बाल पहले पहल मुँडाए जाते ह । चूडाकरण सस्कार ।

यौ०—मूँडन छेदन = कर्णविध और चूडाकरण ।

मूँडना — क्रि० सं० [सं० मुग्धन] १ सिर के बाल बनाना । हजामत करना । २ धोखा देकर माल उडाना । ठाना । जैसे,—उसन १०) तुमसे मूँड लिए । ३ भेडो के शरीर पर से ऊन कतरना । ४ देला बनाना । दीक्षित करना । जैसे, चेला मूँडना । उ०—चुरे सिद्ध साधक ठगिया से बडो जाल फँनायो । मूँडयो जिन्हें मिटायो तिनको जग सो नाम धरायो ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ४४६ ।

मूँडा — सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुग्ध] १ सिर । २ मूँड के शाकार की वस्तु ।

मूँडी — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुग्धिका] १ सिर । मस्तक ।

मुहा०—मूँडी काटे = त्रियो की बोलचाल मे पुण्यो के लिये त्रियो की एक गाली । मुँडी मरोदना = (१) गना दगाकर मार डालना । (२) धोखा देकर हानि पहुँचाना ।

२ किमी वस्तु का शिरोभाग (जो मूँड के आकार का हो) ।

मूँडीवव — सञ्ज्ञा पुं० [हि० मूँडी + वंध] कुण्ठी का एक पेंच जिसमे एक पहलवान दूसरे ने पीठ पर चढकर उमकी बगला के नीचे से अपने हाथ ले जाकर उसकी गर्दन दबाता है ।

मूँटना — क्रि० सं० [सं० मुग्ध] १ ऊपर से कोई वस्तु डाल या फँलाकर किमी वस्तु को छिपाना । गाच्छादित करना । बंद करना । टाँकना । जैसे, आँख मूँटना । उ०—मूँदिप्र आँखि कतहुँ काउ नाही ।—तुलसी (शब्द०) । २ छेद, द्वार, मुँह आदि पर कोई वस्तु फँला या रखकर उमे बंद करना । सुला न रहन देना । जैसे, नाक कान मूँटना, छेद मूँटना, खिडकी मूँटना, घडे का मुँह मूँटना । ३ रोकना । अवरोध करना । धरना । छिपा रखना । उ०—तत्र मर्याजी कहे, जो इनको इक ठोरे क्यो मूँदि राखे हे ।—दो गी वाचन०, भा० १, पृ० १२६ ।

क्रि० प्र.—देना ।—लेना ।—रखना ।

मूँटर(७) — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मुद्रा, मुद्रिका] मुँदरी । अंगूठी ।

मूँधी — वि० [सं० मुग्ध] दे० 'मुग्ध' ।

मूँधना(७) — क्रि० सं० [हि०] १ मूँटना । २ मुग्ध करना । उ०—आए अलि ऊयो प्रेम पय को करन मूँधो हयो निज खास वारा तजो री धरनि को ।—दीन० ग्र० पृ० ७७ ।

मूँधी — वि० [त्यो या सं० मूँधी ?] उलटा । आँधा । मिर के बल । उ०—त्रनियाँ मूँधी हूँ रखी हूँ फेरी हाथ । सुदर ऐनो भ्रम भयो मेरे तो नहि माथ ।—मुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ७७३ ।

मूँनी(७) — वि० [सं० मौन, पु० हि० सबन] दे० 'मौन' । उ०—अगन अगन तन मे छिपाइ, रहै मूँन मनह तन ज्यो तुपाई ।—पृ० रा०, १५।३५ ।

मूँसना — क्रि० ग० [हि०] दे० 'मूसना' । उ०—जो लहि चोर सँघ नहि देखै । राजा केर न मूँसं पेई ।—जायसी ग०, पृ० २६४ ।

मूँ — सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] १ बान । सिर के बाल । केश । २ रोम [क्रो०] ।

मूँ^३ — सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्, प्रा० मुक्] मुक् । चेहरा । उ०—ब मोटा तन व मुँदा मुँदना मूँ न तुच्ची आँख, व मोटे श्रोठ मुँछदर की श्रादम श्रादम हे ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ७८६ ।

मूँआ — सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूँ, पा० मुग्, हि० मरना] मृत । मरा हुआ । विशेष—इसका प्रयोग स्त्रियाँ प्राय गाली के रूप मे करती है ।

मूँक — वि० [सं०] १ जिसके मुँह मे अलग गणुं न निकल सकने हो । गूंगा । अवाक् । उ०—मूँक होइ वाचानु पगु चढै गिरिवर गहन ।—तुलसी (शब्द०) ।

विशेष सुश्रुत ने लिखा है कि गर्भवती को जिम वस्तु के माने को इच्छा हो, उसके न मिलने ने वायु दुषित होना है और गर्भस्व शिशु कुवडा, गूंगा उत्पादि होता है ।

२ दीन । विषय । साचार ।

उ०—दिन बिताएँ चाव मूठी भर चना। पर किपी की भी न मूठी मे रहे।—चुभने०, पृ० १६।

मूड—सज्ञा पुं० [सं० मुण्ड] दे० 'मूँड'। उ०—आपन करे हाम मूड मुडयर्लु का मुक प्रमे वडाइ।—विद्यापति, पृ० ५८४।

मुहा०—मूड हिलाना = भूत या आनेव आने पर सर हिलाने की क्रिया। अभुआना। हवुआना। उ०—जतर टोना मूँड हिलावन ताकूँ साँच न मानो।—चरण० वानी पृ० १११।

मूडना—क्रि० सं० [सं० मुण्डन] दे० 'मूँडना'।

मूड^१—वि० [सं० मूड] १ अज्ञान। मूर्ख। जडबुद्धि। बेवकूफ। अहमक। २ ठक। स्तब्ध। निश्चेष्ट। ३ जिसे आगा पोछा न सूझना हो। ठगमारा।

मूड^२—सज्ञा पुं० [सं०] योग में चित्त की पाँच वृत्तियों या अवस्थाओं में से एक, जिसमें चित्त तमोगुण के कारण तद्रायुक्त या स्तब्ध रहता है। कहा गया है कि यह अवस्था योग के लिये अनुकूल या उपयुक्त नहीं होती। विशेष ० 'चित्तभूमि'।

मूडगर्भ—सज्ञा पुं० [सं० मूडगर्भ] गर्भ का विगडना जिससे गर्भस्राव आदि होता है। विगडा हुआ गर्भ।

विशेष—मुश्रुत में लिखा है कि रास्ता चनने, सवारी पर चढ़ने, गिरने पड़ने, चोट लगने, उलटा लेटने, मल मूत्र का त्रैग रोकने, रुखा, कड़वा या तीखा भोजन करने, वमन विरेचन, हिलने-डोलने आदि से गर्भगधन ढीला हो जाता है और उसकी स्थिति विगड जाती है। इससे पेट, पार्श्व, वस्ति आदि में पीडा होती है तथा और भी अनेक उपद्रव होते हैं। मूडगर्भ चार प्रकार का होता है—कील, प्रतिखुर, बीजक और परिघ। यदि गर्भ कील की तरह आकर योनि मुख बंद कर दे, तो उसे 'कील' कहते हैं। यदि एक हाथ, एक पैर और माथा बाहर निकले और बाकी देह बकी रहे, तो उसे 'प्रतिखुर' कहते हैं। यदि एक हाथ और माथा निकले, तो 'बीजक कहलाता है, और यदि भ्रूण डबे की तरह आकर अड़े, तो वह गर्भ 'परिघ' कहलाता है। इसमें प्रायः शल्यचिकित्सा की जाती है।

मूडग्राह—सज्ञा पुं० [सं० मूडग्राह] खन्त। गलत धारणा [को०]।

मूडग्राहा—वि० [सं० मूडग्राहिन] गलत अर्थ समझकर उसी पर दृढ रहनेवाला। दुराग्रही [को०]।

मूडचेता—वि० [सं० मूडचेतस्] जिसकी बुद्धि या मति मूड हो। अज्ञ [को०]।

मूडता—सज्ञा स्त्री० [सं० मूडता] १ मूर्खता। अज्ञता। बेवकूफी। उ०—ऐसी मूडता या मन की। परिहरि रामभक्ति सुरसरिता आस करत घोस कन की।—तुलसी (शब्द०)। दे० 'मूढत्व'।

मूडत्व—सज्ञा पुं० [सं० मूडत्व] १ उलझन। धवराहट। असमजस। २ अज्ञानता। मूढता। बेवकूफी। ३ मूढवात। शरीरस्थ वायु। ४ बत्तीरी। गिल्टी [को०]।

मूडप्रभु—सज्ञा पुं० [सं० मूडप्रभु] महामूढ। मूर्खराज [को०]।

मूडवात—सज्ञा पुं० [सं० मूडवात] किसी कोश में रुकी वा बँधी हुई वायु।

मूडवाताहत—वि० [सं० मूडवाताहत] कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार तूफान में पडा हुआ (जहाज या नाव)।

मूडसत्व—वि० [सं० मूडसत्व] उन्मत्त [को०]।

मूड^३—सज्ञा पुं० [सं० मूड^३, प्रा० मूड^३] एक प्रकार का ऊँचा आसन। मोटा। उ०—मूडा गादी सामतन को दीने।—पृ० रा०, ५७।१७०।

मूडात्मा—वि० [सं० मूडात्मन्] निर्बोध। मूर्ख। अहमक।

मूडी^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] लाई। चावल की फरवी। उ०—मलेटरी-वाले जमीन पर कवल बिछाकर बैठे हैं। मूडी फाँक रहे हैं।—मैला०, पृ० २।

मून^१—वि० [सं०] निवद्ध। बाँधा हुआ। सयत।

मूत^२—सज्ञा पुं० [सं० मूत्र] १ वह जल जो शरीर के विपैले पदार्थों को लेकर प्राणियों के उपस्थ मार्ग से निकलता है। पेशाब। विशेष—दे० 'मूत्र'।

मुहा०—मून निकल पडना = डर के मारे बुरी दशा हो जाना। जैसे,—उमे देखोगे तो मून निकल पडेगा। मूत से निकलकर गू में पडना = और भा बुरी दशा में जा पडना।

२ पुत्र। सतान। (तिरस्कार)।

मूतना—क्रि० अ० [हिं० मूत + ना (प्रत्यय०)] शरीर के गदे जल को उपस्थ मार्ग से निकालना। पेशाब करना। उ०—तिन की आबु समाधि पर, मूतत स्वान सियार।—भारतेंदु ग्रं०, भा० ३, पृ० ३४०।

संयो० क्रि०—देना।—लैना।

मुहा०—मूत मारना = डर से मूत देना। मूत देना = डर से धवरा जाना।

मूतरी—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का जगली कौवा। महताब। महालत।

मूतिव—सज्ञा पुं० [?] आर्यों से इतर एक जाति विशेष जिसका प्राचीन ग्रंथों में उल्लेख है। उ०—पुडू, मूतिव, पुँलद, और शाबर भी अनार्य थे।—हिंदु० सभ्यता, पृ० ७६।

मूत्र—सज्ञा पुं० [सं०] शरीर के विपैले पदार्थों को लेकर प्राणियों के उपस्थ मार्ग से निकलनेवाला जल। पेशाब। मूत।

विशेष—मूत्र के द्वारा शरीर के अनावश्यक और हानिकारक सार, अम्ल या और विपैली वस्तुएँ निकलती रहती हैं, इससे मूत्र का वेग रोकना बहुत हानिकारक होता है। कई प्रकार के प्रमेहों में मूत्र के मार्ग से विपैली वस्तुओं के अतिरिक्त शर्करा तथा शरीर की कुछ घातुएँ भी गल गलकर गिरने लगती हैं। अतः मूत्रपरीक्षा चिकित्साशास्त्र का एक प्रधान अंग पहले भी था और अब भी है। भारतवर्ष में गोमूत्र पवित्र माना गया है और पचगव्य के अतिरिक्त घातुओं और ओषधियों के शोधन में भी उसका व्यवहार होता है। वैद्यक में गोमूत्र, महिषमूत्र, छागमूत्र, मेघमूत्र, अश्वमूत्र आदि सबके गुणों का धिक्चन किया गया है और विविध रोगों में उनका प्रयोग भी कहा गया है। स्वमूत्र

द्वारा चिह्निता का भी अनेक रोगों में विधान है। मूत्रदोष में प्रथमी, मूत्ररुच्छ आदि अनेक रोग हो जाते हैं।

मूत्ररुच्छ—मूत्र पुं [सं०] एक रोग जिसमें पेशाब बहुत कटने या त्क रक्कर थोड़ा थोड़ा होता है।

विशेष—आयुर्वेद के अनुसार यह रोग अधिक व्यायाम करने, तीव्र शीतल भोजन करने, बहुत तेज घोड़े पर चढ़ने, बहुत खाने अन्न खाने, अधिक मद्य सेवन करने तथा अजीर्ण रहने से होता है। मूत्ररुच्छ आठ प्रकार का कहा गया है—वातज, पित्तज, कफज, साक्षिपातिक, शल्यज पुरीपज, शुक्रज और अश्मरीज। 'वातज' में शिश्न और वन्ति में बहुत पीडा होती है और मूत्र थोड़ा थोड़ा आता है। 'पित्तज' में पीला या लाल पेशाब पीडा और जनन के साथ उतरता है। 'कफज' में वस्ति और शिश्न में सूजन होती है और पेशाब कुछ भाग लिए होता है। 'साक्षिपातिक' में वायु के सब उपद्रव दिखाई देते हैं और यह बहुत कटसाध्य होता है। 'शल्यज' मूत्र की नली में कंठे आदि के द्वारा घाव हो जाने से होता है और इसमें वातज के में लक्षण देवे जाते हैं। 'पुरीपज' में मलरोग होता है और वात की पीडा के साथ पेशाब भी रुक रुककर आता है। 'शुक्रज' पुरुषों में होता है और इसके पेशाब में वीर्य मिला आता है और पीडा भी बहुत होती है। 'अश्मरीज' अश्मरी या पथरी होने से होता है और इसमें मूत्र बहुत कट से उतरता है। सुश्रुत के मत से शर्कराजन्य मूत्ररुच्छ भी कई प्रकार का होता है। शर्करा भी एक प्रकार की अश्मरी ही है।

मूत्रकोश—सज्ञा पुं [सं०] अडकोश।

मूत्रक्षय—सज्ञा पुं [सं०] मूत्राघात रोग का एक भेद। उ०—वस्ति में रहे जो पित्त और वायु ने मूत्र को क्षय करें, और पीडा तथा दाह होता है उनको मूत्रक्षय कहते हैं।—माधव०, पृ० १७६।

मूत्रग्रथि—सज्ञा पुं [सं० मूत्रग्रन्थि] मूत्राघात का एक भेद। उ०—उसमें पथरी के समान पीडा हो इस रोग को मूत्रग्रथि कहते हैं।—माधव०, पृ० १७६।

मूत्रग्रह—सज्ञा पुं [सं०] घोड़ों का मूत्रमग रोग जिसमें भाग लिए थोड़ा पेशाब आता है।

मूत्रजठर—सज्ञा पुं [सं०] मूत्राघात से उत्पन्न एक दोष। उ०—अधोवस्ति का रोग करनेवाले इस रोग को मूत्रजठर कहते हैं।—माधव०, पृ० १७५।

मूत्रद्रव्य—सज्ञा पुं [सं०] हाथी, भेडा, कंठ, गाय, बकरा, घोड़ा, भैसा, गदहा, मनुष्य और स्त्री इन दश के मूत्रों का समूह।

मूत्रदोष—सज्ञा पुं [सं०] पेशाब का रोग। प्रमेह [को०]।

मूत्रनिरोध—सज्ञा पुं [सं०] रोग 'मूत्ररोध'।

मूत्ररतन—सज्ञा पुं [सं०] १ मूत्र गिरना। २ गवमाजरी। गव-विलाव।

मूत्रपथ—सज्ञा पुं [सं०] मूत्रनली [को०]।

मूत्रपरीक्षा—सज्ञा स्त्री [सं०] मूत्र की जाँच। परीक्षा द्वारा मूत्र के दोषों की जानना।

मूत्रपुट—सज्ञा पुं [सं०] नाभि से नीचे का हिस्सा। आम्राशय [को०]।

मूत्रप्रसेक—सज्ञा पुं [सं०] मूत्रनली।

मूत्रफला—सज्ञा स्त्री [सं०] ककड़ी।

मूत्रगोध—सज्ञा पुं [सं०] एकनारगी पेशाब रुक जाने का रोग।

मूत्रला—वि० [सं०] [पि० पुं० मूत्रल] पेशाब फगनेवाली (श्रोत्रवि)।

मूत्रला—सज्ञा स्त्री ककड़ी।

मूत्रवर्ति—सज्ञा पुं [सं०] अडगोध।

मूत्रवर्धक वि० [सं०] 'मूत्रल'।

मूत्रविज्ञान—सज्ञा पुं [सं०] मूत्रपरीक्षा पर आयुर्वेद का एक ग्रंथ।

विशेष—आयुर्वेद का यह ग्रंथ जानुकरा ऋषि का बनाया हुआ कहा जाता है। इसमें मूत्रपरीक्षा करने की अनेक प्रणालियों का विस्तार वर्णन है। नरक मुश्रुत आदि में इस विषय का विशेष विवेचन नहीं है, इससे नहीं कहा जा सकता कि यह ग्रंथ कहाँ तक प्राचीन है।

मूत्रघृष्टि—सज्ञा स्त्री [सं०] अधिक मूत्र उत्पन्न होना [को०]।

मूत्रशुक्र—सज्ञा पुं [सं०] मूत्र के साथ शुक्र निकलना [को०]।

मूत्रशूल—सज्ञा पुं [सं०] मूत्रमार्ग में होनेवाला दर्द [को०]।

मूत्रसग—सज्ञा पुं [सं० मूत्रसद्म] एक प्रकार का मूत्ररोग जिसमें पेशाब थोड़ा थोड़ा और रक्त के साथ होता है। पेशाब निकलते समय इसमें दर्द भी होता है [को०]।

मूत्रसाद—सज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का मूत्ररोग जिसमें कि चूर्ण के समान या कई रंगों का पेशाब हो। उ०—जब वह मूत्र शख का चूर्ण ऐसा वर्ण होय अथवा सर्व वर्ण का होय, इस रोग को मूत्रसाद कहते हैं।—माधव०, पृ० १७७।

मूत्राघात—सज्ञा पुं [सं०] पेशाब बंद होने का रोग। मूत्र का रुक जाना।

विशेष—वैद्यक में यह रोग बारह प्रकार का कहा गया है—

(१) वातकुडली, जिसमें वायु कुपित होकर वस्तिदेश में कुडली के आकार में टिक जाती है, जिससे पेशाब बंद हो जाता है।

(२) वातष्ठीला, जिसमें वायु मूत्र द्वारा या वन्ति देश में गाँठ या गोले के आकार में होकर पेशाब रोकती है। ३) वातवस्ति, जिसमें मूत्र के वेग के साथ ही वस्ति की वायु वस्ति का मुख रोक देती है। (४) मूत्रातीत, जिसमें बार बार पेशाब लगता और थोड़ा थोड़ा होता है। (५) मूत्रजठर, जिसमें मूत्र का प्रवाह रुकने में अधोवायु कुपित होकर नाभि के नीचे पीडा उत्पन्न करती है। (६) मूत्रोत्सय, जिसमें उतरा हुआ पेशाब वायु की अधिवृत्ता से मूत्र नली या वन्ति में एक बार रुक जाता है और फिर बड़े वेग के साथ कभी कभी रक्त लिए हुए निकलता है। (७) मूत्रक्षय, जिसमें खुशकी के कारण वायु पित्त के योग से दाह होता है और मूत्र सूख जाता है। (८) मूत्रग्रथि, जिसमें वस्तिमुख के भीतर पथरी की तरह गाँठ सी हो जाती है और पेशाब करने में बहुत कष्ट होता है। (९) मूत्रशुक्र, जिसमें मूत्र के साथ अथवा श्रोत्र पीडे शुक्र भी निकलता है। (१०) उष्णवात, जिसमें व्यायाम या अधिक परिश्रम करने, और गरमी

या घूप सहने से पित्त कुपित होकर वस्तिदेश मे वायु से आवृत हो जाता है। इसमे दाह होता है और मूत्र हलदी की तग्ह पीला और कभी कभी रक्त मिला आता है। इसे 'कडक' कहते हैं। (११) पित्तज मूत्रौकमाद, जिममे पेशाब कुछ जलन के साथ गाढा गाढा हाकर निकलता है और सूखने पर गोराचन के चूर्ण को तग्ह हो जाता है, और (१२) कफज मूत्रौकमाद, जिसमे सफेद और लुआवदार पशाब फण्ट स निकलता है।

मूत्रातीत—सञ्ज्ञा पुं० [म०] एक प्रकार का मूररोग। उ०—मूतते समय धीरे धीरे मूत्र उतरे इस रोग को मूत्रातीत कहते हैं।
—माधव०, पृ० १७५।

मूत्रातीसार—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मधुमेह। प्रमेह। [को०]।

मूत्राशय—सञ्ज्ञा पुं० [स०] नाभि के नीचे का वह रथान जिसमे मूत्र संचित रहता है। मसाना। फुकना।

मूत्रासाद—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मूत्रौकमाद नामक मूत्रघात रोग।

मूत्रका—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] सल्लकी वृक्ष। सलई का पड।

मूत्रोत्सग—सञ्ज्ञा पुं० [म० सूत्रोत्सग] दे० 'मूत्रमग'। उ०—विगुरा वायु से उत्पन्न हुइ इस व्याधि का मूत्रोत्सग कर्ते ह।—माधव०, पृ० १७६।

मूत्रित—वि० [स०] १. मूत्रसर्पक के कारण अशुचि या गदा। २. मूत्र के रूप मे निकलता हुआ [को०]।

मूदरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० मुद्रीका] दे० 'मुदरी'। उ०—यह ताँप कसी वर्ना अरी मूदरी हाय। उन कोमल अगुरीन ताँज पठी जता म जाय।—झकृतला, पृ० ११६।

मूर्ना—सञ्ज्ञा पुं० [देग०] १. पीतल वा लोहे की अंकुसी जो टेकुए के सिर पर जडा रहती है और जिसमे रस्ती या डारा फसा रहता है। २. एक भाडी जिसके फल वेर के समान सुदर होने हैं।

मूर्ना^३—क्रि० अ० [स० मृत, प्रा० मुञ्ज + हिं० ना (प्रत्य०)] मरना। दे० 'मुयना'।

मूर्निस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] मित्र। सहायक। मददगार। उ०—मुक्को मारा ये मेरे हाल तगगुर न कि है। कुछ गुमां और ही बढक से दिले मूर्निस के।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० ८५।

मूर्नी^७—सञ्ज्ञा पुं० [स० मूर्नी] जुप। मीन। उ०—खरो मे जू खूनी। रहे क्यो न मूर्नी।—ह० रामो, पृ० १३६।

मूर्वाफ—सञ्ज्ञा पुं० [फा मूर्वाफ] चोटा गूथन बावन का डोरा या फीता। उ०—फूटे पट्टे की है मूर्वाफ पटी चोटी मे। देखत ही जिसे आँखा मे तरा आती ह।—भारतेंदु प्र०, भा० २, पृ० ७६०।

मूर^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूल] १. मूल। जड। २. जडी। ३. मूलघन। असल। उ०—(क) दरम मूर देतो नही जी ली मीत चुकाय। बिरह व्याज वाको अरे नितहू वाढत जाय।—रसनिधि (शब्द०)। (ख) कोई चले लाभ सो कोई मूर गँवाय।—जायसी (शब्द०)। (ग) चल्थो बनिक् जिमि मूर गँवाई।—तुलसी (शब्द०)। ४. मूल नामक नक्षत्र। उ०—

काहे चद घटत है काहे सूरज पुर। काहे होई अमावस काहे लागे मूर।—जायसी (शब्द०)। ४. अफ्रीका मे रहनेवाली एक जाति।

मूरख^७—वि० [सं० मूर्ख] दे० 'मूर्ख'। उ०—इतनी जउ जानत मन मूरख मानत या ही घाम।—पूर०, १।७६।

मूरखताई^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूरखता, हिं० मूरखता + ई (प्रत्य०)] मूरखता। अज्ञता। नासमभी। नादानी। उ०—(क) यी पछितात कछू पदमाकर कासो कहाँ निज मूरखताई।—पद्माकर (शब्द०)। (ख) त्यों वे मत्र बेदना पद पीडा दुखदाई। जिन बखसीसति सदा घमडहि मूरखताई।—श्रीधर पाठक (शब्द०)।

मूरचा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मोरचा] दे० 'मोरचा'।

मूरछना^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूरच्छना] दे० 'मूरच्छना'। उ०—(क) पचम नाद निखादहि मे सुर मूरछना गन ग्राम सुभावनि।—देव (शब्द०)। (ख) मूरछना उघटै उत वे इत मो हिय मूरछना सरसाना।—गुमान (शब्द०)।

मूरछना^१—सञ्ज्ञा स्त्री० दे० 'मूरछी'।

मूरछना^३—क्रि० अ० मूरछित होना। बहोष होना।

मूरछा^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूरच्छा] दे० 'मूरछी'। उ०—दिन दिन तनु तनुता गहा लही मूरछा तापु। पिक द्विज ये बोलत न जनु बिरहिनि देत सरापु।—गुमान (शब्द०)।

मूरत^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर्ति] दे० 'मूर्ति'। उ०—निसि दिन व्यावत वा मूरत का आनदधन सो मीत।—घनानंद, पृ० ५८३।

मूरति^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर्ति] दे० 'मूर्ति'। उ०—बार बार मूदु मूरति जाही। लागह तात वयार न मोही।—मानस, २।६७।

मूरतिवत^७—वि० [सं० मूर्ति + वत् (प्रत्य०)] मूर्तिमान्। देहवारी। सशरीर। उ०—रूपन गारे दाख तह कमा। मूरतिवत तपस्या जमी।—तुलसी (शब्द०)।

मूरध^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूरधा] दे० 'मूरधा'। उ०—(क) कान्हे वाहु ऊरव को मूरध के खाल बंश, लेश ना दया का ताको कोराहि को भारा ह।—रघुराज (शब्द०)। (ख) मूरध ऊरवपुइ। अए अघ फुड छीनकर।—गापाल (शब्द०)।

मूरधा^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूरधा] दे० 'मूरधा'।

मूर्धा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूरधा] मूली।

मूरि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूरि] १. मूल। जड। २. जडी। वृटी। वनस्पति। जंगे, जीवनमूर। उ०—मूरदास प्रभु विन क्यो जीवो जात सजीवन मूर।—सूर (शब्द०)।

मूरिस—वि० [अ०] १. पूर्वज। वारिस करनेवाला। २. वंशवर्तक। ३. पैदा करनेवाला। उत्पन्न करनेवाला।

मूर्नी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर, हिं० मूर + ई (प्रत्य०)] दे० 'मूर्नी'।

मूरख, मूरष^७—वि० [सं० मूरख, हिं० मूरख] दे० 'मूरख'। उ०—(क) ता सन आइ कीन छन मूरख अवगुन गेह।—मानस, ३।१। (ख) दीठिवत कह नीयरे, अघ मूरखहि द्वारे।—जायसी

प्र०, पृ० ३। (ग) आपुहि मूख आपुहि ज्ञानी, सप्र महं रह्यो समोई।—जग० श०, भा० २, पृ० ६५।

मूर्ख^१—वि० [सं०] वेवकूफ। अज्ञ। मूढ। नादान। नाममभ। लठ। अपढ। जाहिल।

यौ०—मूर्खरहित = पठित मूर्ख। पढा लिखा मूर्ख। मूर्खआचरु = जिसका भाई मूर्ख हो। मूर्खमडल = मूर्खों को टोला या दल मूर्खशत = सैकड़ों मूर्ख।

मूर्ख^२—सञ्ज्ञा पुं० १ उर्द। २ वनमूंग। ३ वह जो अपढ पौर जाहिल हो।

मूर्खता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अज्ञता। मूढता। नासमझी। वेवकूफी। अज्ञानता।

मूर्खत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नादानी। नासमझी। वेवकूफी। अज्ञता।

मूर्खाधिराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महामूर्ख। मूर्खों का राजा।

मूर्खिनी^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर्ख] मूढा स्त्री। वेममभ औरत। उ०—लै श्रोदन तिय को दिखरायो। कही मूर्खिनी कहँ ते आयो।—रघुराज (शब्द०)।

मूर्खिमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मूर्खता। जडता। वेवकूफी।

मूर्च्छेन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सञ्ज्ञा लोप होना या करना। वेदोष करना। २ मूर्च्छित करने का मंत्र या प्रयोग। उ०—आजु हँ राज काज करि आऊँ। वेगि मँहारी सकल घोप शिशु जो मुख आयसु पाऊँ। तौ मोहन मूर्च्छेन वशीकरन पढि अमित देह बढाऊँ—सूर (शब्द०)। ३ पारे का तीसरा मस्कार जिसमें व्युत्पन्न त्रिफलादि में सात दिन तक भावना दी जाती है। ४ कामदेव का एक वाण।

मूर्च्छेना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सगीत में एक ग्राम से दूसरे ग्राम तक जाने में सातों स्वरों का आरोह अवरोह। उ०—(क) सुर नाद ग्राम नृत्यति सताल। मुख वर्ग विविध आलाप काल। बहु कला जाति मूर्च्छेना मानि। बढ भाग गमक गुन चलत जानि।—केशव (शब्द०)। (ख) सुर मूर्च्छेना ग्राम लै ताला। गावत कृष्णचरित सब ग्वाला।—रघुराज (शब्द०)।

विशेष—ग्राम के सातवें भाग का नाम मूर्च्छेना है। भरत के मत से गाते समय गले को कँपाने से ही मूर्च्छेना होती है, और किसी किसी का मत है कि स्वर के सूक्ष्म विराम का ही मूर्च्छेना कहते हैं। तीन ग्राम होने के कारण २१ मूर्च्छेनाएँ होती हैं जिनका व्योरा इस प्रकार है—

पहज ग्राम की	मध्यम ग्राम की	गाधार ग्राम की
ललिता	पचमा	रौद्री
मध्यमा	मत्सरी	ब्राह्मी
चित्रा	मृदुमध्या	वैष्णवी
रोहिणी	शुद्धा	खेदरी
मतगजा	श्रुता	सुरा
सौवीरी	कलावती	नादावती
षड्मध्या	तीव्रा	विशाला

अन्य मत से मूर्च्छेनाओं के नाम इस प्रकार हैं—

उत्तरमुद्रा सौवीरी

नदा

रजनी	हर्गिगाथा	विशाला
उत्तरायणी	कपोतानना	सोमपी
शुद्धपडजा	शुद्धमध्या	विचित्रा
मत्सरीक्रांता	मार्गी	रोहिणी
श्रवक्राता	पौरवी	सुम्बा
श्रभिन्ता	मंदाकिनी	अलापी

मूर्च्छा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ प्राणी की वह अवस्था जिसमें उसे किसी बात का ज्ञान नहीं रहता, वह निश्चेष्ट पटा रहता है। सञ्ज्ञा का लोप। अचेत होना। बेहोशी। उ०—गद्ग मूर्च्छा तव भूपति जागे। बोलि मुम त कहन अम लागे।—तुम्ही (शब्द०)।

क्रि० प्र०—ग्राना।—साकर गिरना।—होना।

विशप—आयुर्वेद में मूर्च्छा रोग के ये कारण कहे गए हैं—विबुद्ध वस्तु खा जाना, मन्मथ का वेग रोकना, अन्धशत्रु से गिर आदि मर्मस्थानों में चोट लगना अथवा मत्त गुण का स्वभावतः कम होना। इन्हीं सब कारणों में वातादि दोष मनोविठान में प्रविष्ट होकर अथवा जिन नाडियों द्वारा इन्द्रिया और मन का व्यापार चलता है उनमें अविद्यित होकर, तमोगुण की वृद्धि करके मूर्च्छा उत्पन्न करते हैं।

मूर्च्छा प्राण के पहुँचे शीथिल्य होना है, जँभाई आती है और कभी कभी मिर या हृदय में पीडा भी जान पडती है। मूर्च्छा रोग सात प्रकार का कहा गया है—नातज, पित्तज, कफज, मन्निपातज, रक्तज, मद्यज और विपज। 'वातज' मूर्च्छा में रोगी को पहले आकाश नीला या कान्ना दिखाई पडने लगता है और वह बेहोश हो जाता है, पर थोड़ी ही देर में होश आ जाता है। इसके कप और अग में पीडा भी होती है और शरीर भी बहुत दुबल और काला हो जाता है। 'पित्तज' मूर्च्छा में बेहोशी के पहले आकाश लाल, पीला या हरा दिखाई पडता है और मूर्च्छा छूटने समय आँसू लाल हो जाती हैं, शरीर में गरमी मालूम होती है, प्यास लगती है और शरीर पीला पड जाता है। 'श्लेष्मज' मूर्च्छा में रोगी स्वच्छ आकाश को भी बादलों से ढका और अंधरा देखते देखते बेहोश हो जाता है और बहुत देर में हाश में आता है। मूर्च्छा टूटते समय शरीर ढाला और भारी मालूम होता है और पेशाब तथा वमन की इच्छा होता है। 'सन्नपातज' में उपर्युक्त तीनों लक्षण मिले जुले प्रकट होते हैं और मिरगी के रोगी की तरह रोगी जमीन पर अकस्मात् गिर पडता है और बहुत देर में होश में आता है। मिरगी और मूर्च्छा में भेद केवल इतना होता है कि इसमें मुह से फेन नहीं आता और दाँत नहीं बँठते। 'रक्तज' मूर्च्छा में अग ठक और दृष्टि स्थिर सी हो जाती है और साँस साफ चलती नहीं दिखाई देती। 'मद्यज' मूर्च्छा में रोगी हाथ पैर मारता और अनाप शनाप वक्ता हुआ भूमि पर गिर पडता है। 'विपज' मूर्च्छा में कप, प्यास और भपकी मालूम होती है तथा जैसा विप हो, उसके अनुसार और भी लक्षण देखे जाते हैं।

मूर्च्छापगम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बेहोशी दूर होना [को०]।

मूर्द्धाल—वि० [सं०] मूर्च्छित । मूर्च्छायुक्त । सञ्ज्ञहीन [को०] ।
मूर्च्छित, मूर्च्छित—वि० [सं०] जिसे मूर्च्छा आई हो । वेसुध ।
 वेदोष । अचेत । उ०—(क) सुनत गदाधर भट्ट तहाँ ही ।
 मूर्च्छित गिरत भए महि माही ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) यह
 सुन कस मूर्च्छित हो गिरा ।—लत्तूलाल (शब्द०) । २ मारा
 हुआ (पात्रे आदि घातुओं के लिये) । ३ दे० 'उच्छ्रिय' (को०) ।
 ४ मूट (को०) । ५ वृद्ध । ६ व्याप्त ।
मूर्च्छित^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की स्वरलहरी या वायु [को०] ।
मूर्च्छा—वि० [सं०] वद्ध । बँधा या कमा हुआ [को०] ।
मूर्त्त—वि० [सं०] १. जिमका कुछ रूप या आकार हो । साकार ।
 विशेष—नैयायिकों के मत से पृथ्वी, जल, तेज, वायु और मन
 मूर्त्त पदार्थ हैं इनके गुण रूप, रस, गंध, स्पर्श, परन्त्व, अपरत्त्व,
 गुरुत्व, स्नेह और वेग हैं ।
 २ कठिन । ठोम । ३ मूर्च्छित ।
मूर्त्तता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मूर्त्त होने का भाव ।
मूर्त्तत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूर्त्त होने की क्रिया या भाव । मूर्त्तता ।
मूर्त्त प्रत्यक्षीकरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अमूर्त्त को मूर्त्त रूप देना ।
 अगोचर पदार्थ को गोचर रूप देना । रूपाहित भावनाओं और
 विचारा को वस्तुरूप में व्यक्त करना । ठोम रूप देना । उ०—
 तीव्र अतरङ्गिण्टवाले कवि अपने सूक्ष्म विचारों का बड़ा ही
 रमणीय मूर्त्त प्रत्यक्षीकरण करते हैं ।—चितामाण, भा० २,
 पृ० ६६ ।
मूर्त्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. कठिनता । ठोमपन । २ शरीर । देह ।
 ३ आकृति । शकल । स्वरूप । मूर्त्त । जैसे,—उस मनुष्य की
 भयकर मूर्त्ति देखकर वह डर गया । ४. किमी के रूप या
 आकृति क सद्म गढ़ी हुई वस्तु । प्रतिमा । विग्रह । जैसे, वृष्ण
 की मूर्त्ति, देवी की मूर्त्ति ।
मुद्गा—मूर्त्ति के समान = ठक । स्तब्ध । निश्चल ।
 ५ रंग या रेखा द्वारा बनी हुई आकृति । चित्र । तन्वीर । ६ ब्रह्म
 सार्वणि के एक पुत्र का नाम । ७ व्यक्ति । मनुष्य (विशेषत
 साधुमज में प्रयुक्त) । उ०—आजकल दा मूर्त्ति निवाम करते
 ह ।—किन्नर०, पृ० १८ ।
मूर्त्तिकला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मूर्त्ति गढ़ने या निर्माण करने की
 कला । मूर्त्तिविद्या ।
मूर्त्तिकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मूर्त्ति बनानेवाला । २ तसवीर
 बनानेवाला । मुमावर ।
मूर्त्तित—वि० [सं०] मूर्त्त । साकार । उ०—मन से प्राणो मे, प्राणो
 से जीवन मे कर मूर्त्तित । शोभा आकृति मे जन भू का स्वर्ग
 करो नव निर्मित ।—अतिमा, पृ० ७ ।
मूर्त्तिधर—वि० [सं०] मूर्त्ति को धारण करनेवाला । विग्रहवान ।
 उ०—आकाश मे शब्द के अनुरणन स्पद से ही अमूर्त्त मूर्त्ति-
 धर होता है ।—सपूर्णा० अभि० प्र०, पृ० ११४ ।
मूर्त्तिप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुजारी ।

मूर्त्तिपूजक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो मूर्त्ति या प्रतिमा की पूजा
 करता हो । मूर्त्ति पूजनेवाला ।
मूर्त्तिपूजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मूर्त्ति में ईश्वर या देवता की भावना
 करके उसकी पूजा करना ।
मूर्त्तिभजक—वि० [सं० मूर्त्तिभजक] मूर्त्तियों को तोड़नेवाला [को०] ।
मूर्त्तिमान^१—वि० [सं० मूर्त्तिमत्] [वि० स्त्री० मूर्त्तिमती] १ जो
 रूप धारण किए हो । शरीरधारी । २ साक्षात् । गोचर ।
 प्रत्यक्ष । ३ ठोम (को०) ।
मूर्त्तिमान^२—सञ्ज्ञा पुं० शरीर । जिस्म । देह [को०] ।
मूर्त्तिविद्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ प्रतिमा गढ़ने की कला । २
 चित्रकारी ।
मूर्द्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूर्द्धन्] मस्तक । सिर ।
मूर्द्धक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] क्षत्रिय ।
मूर्द्धकर्पारी (पु) —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर्द्धकर्पारी] दे० 'मूर्द्धकर्णी' ।
मूर्द्धकर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छाता या और कोई वस्तु (जैसे
 टोकरा) जा धूर, पानी आदि से बचने के लिये सिर पर रखा
 जाय ।
मूर्द्धकर्परो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छतरी । छाता [को०] ।
मूर्द्धखोल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूर्द्ध + हि० खोल] दे० 'मूर्द्धकर्णी' ।
मूर्द्धज—वि० [सं०] सिर से उत्पन्न होनेवाला ।
मूर्द्धज—सञ्ज्ञा पुं० केश । बाल ।
मूर्द्धज्योति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूर्द्धज्योतिम्] ब्रह्मरश्मि । (योग) ।
मूर्द्धन्य—वि० [सं०] १ मूर्द्धा से सबंध रखनेवाला । मूर्द्धा सबंधी ।
 २ जिमका उच्चारण मूर्द्धा से हो । ३ सिर या मस्तक में
 स्थित । ४ सर्वोच्च । सर्वश्रेष्ठ ।
मूर्द्धन्य वर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वे वर्ण जिनका उच्चारण मूर्द्धा से
 होता है ।
विशप—मूर्द्धन्य वर्ण ये हैं,—ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ङ, ङ, र और प ।
मूर्द्धन्वान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक गधर्व का नाम । २ वामदेव
 ऋषि जो ऋग्वेद के दशम मंडल क अष्टम नूक्त के ब्रह्मा थे ।
मूर्द्धपिंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूर्द्धपर्यङ्क] गजकुंभ । हाथों का मस्तक ।
मूर्द्धपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिरीष पुष्प ।
मूर्द्धेरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भात का फेन ।
मूर्द्धवेष्टन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शरीरवेष्टन । पगडो । साफा [को०] ।
मूर्द्धा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूर्द्धन्] १ मस्तक । सिर । २ मुँह के भातर
 तालु क और कंठ क बीच का उठा हुआ भाग जहा से
 मूर्द्धन्य वर्ण का उच्चारण होता है ।
मूर्द्धाभिषिक्त—वि० [सं०] १. जिसक सिर पर अभिषेक किया गया
 हा । २. सबसे श्रेष्ठ । सर्वमान्य (को०) ।
मूर्द्धाभिषिक्त—सञ्ज्ञा पुं० १. क्षत्रिय । २. राजा । ३ एक मिश्र जाति
 जिसकी उत्पत्ति ब्राह्मण से विवाही क्षत्रिय स्त्री के गर्भ से कही
 गई है । इस जाति की वृत्ते हाथी, घोड़े और रथ की शिक्षा
 तथा शस्त्रधारण है ।

मूर्धाभिषेक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] सिर पर अभिषेक या जलसिचन होना । (जैसा कि राजाओं के गद्दी पर बैठन के समय होता है ।)

मूर्ध, मूर्धा—सञ्ज्ञा पु० [सं० मूर्धन्] दे० 'मूर्ध', 'मूर्धा' । (नमस्कृत व्याकरण के अनुसार 'मूर्ध' और 'मूर्ध' दोनों रूप होते हैं ।)

मूर्धा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मरुडफली नाम की लता जो हिमालय के उत्तराखण्ड को छोड़ भारतवर्ष में और सब जगह होती है ।

विशेष—इसमें सात आठ डठल निकलकर हृदय उबर लता की तरह फैलते हैं । फूल छोटे छोटे, हरापन लिए सफेद रंग के होते हैं । इसके रेशे बहुत मजबूत होते हैं जिससे प्राचीन काल में उन्हें बटकर धनुष की डारी बनाते थे । उपनयन में क्षत्रिय लोग मूर्धा की मेखला धारण करते थे । एक मन पत्तियों से आधा सेर के लगभग सुखा रेशा निकलता है, जिससे कहीं कहीं जाल बुने जाते हैं । त्रिचिनापल्ली में मूर्धा के रेशों से बहुत अच्छा कागज बनता है । ये रेशे रेशन की तरह चमकोले और सफेद होते हैं । मूर्धा की जड़ श्रापव के काम में भी आती है । वैद्य लोग इसे यक्ष्मा और खासी में देते हैं । आयुर्वेद में यह अति तिक्त, कर्षली, उष्ण तथा हृद्रोग, कफ, वात, प्रमेह, कुष्ठ और विषमज्वर को दूर करनेवाला मानी जाती है ।

पर्या०—देवी । मधुरसा । मोरटा । तेजनी । सत्रा । मधुलिष्ठा । धनुश्रेणी । गोकर्णो । पौलुपर्णी । क्षुमा । मूर्धा । मधुश्रेणी । सुवर्णिका । पृथक्वचा । दिव्यलता । गोपवल्ली । ज्वलिनी ।

मूर्धिका, मूर्धा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मूर्धा ।

मूल'—सञ्ज्ञा पु० [सं०] पेड़ों का वह भाग जो पृथ्वी के नीचे रहता है । जड़ । उ०—एह आसा अटकया रहै अलि गुनाव के मूल ।—बिहारा (शब्द०) । २. खान योग्य माटो मीठी जड़ । कद । उ०—सवत नहस मूल फल खाए । साक खाइ सत वर्ष गवाए ।—तुलसी (शब्द०) ।

यो०—कदमूर ।

३ आदि । आरभ । शुरू । उ०—(क) उमा सभु क्षीतारमन जो मा पर अनुकूल । ती वरना सो होइ फुर अत मध्य अरु मूल ।—विश्राम (शब्द०) । (ख) नेतु मूल सिव सोभिज केसव परम प्रकाश ।—केशव (शब्द०) । आदि कारण । उत्पात्त का हेतु । उ०—कर्म को मूल तन, तन मूल जीव जग जीवन को मूल अति आनंद ही बरिबो ।—पद्माकर (शब्द०) । ५ असल जमा या धन जो किसी व्यवहार या व्यवसाय में लगाया जाय । प्रमल । पूंजी । उ०—और वनिज में नाही लाहा, होत मूल में हानि ।—सूर (शब्द०) । ६ किसी वस्तु के आरभ का भाग । शुरू का हिस्सा । जैसे, भुजमूल । ७ नीच । बुनियाद । ८ अर्थकार का निज का वाक्य या लेख जिसपर टीका आदि की जाय । जैसे,—इस सग्रह में रामायण मूल और टीका दोनों हैं । ९ सत्ताइस नक्षत्रों में से उन्नीसवाँ नक्षत्र ।

विशेष—इस नक्षत्र के अधिपति निरृते हैं । इसमें नौ तारे हैं जिनकी आकृति मिलकर सिंह की पूंछ के समान होती है । यह

अयोमुख नक्षत्र है । फलित के अनुसार इन नक्षत्र में जन्म लेनेवाला वृद्धावस्था में दरिद्र, शरीर में पीड़ित, कलानुरागी, मातृपितृहता और आत्मीय लोग का उकार करनेवाला होता है ।

१० निभुज । ११ पास । समीप । १२ मूरन । जिमीकद । १३ पिप्पलीमूल । १४ पुष्करमूल । १५ किमी वस्तु के नीचे का भाग या तल । पादप्रदेश । जैसे, पर्वतमूल गिरिमूल । १६ दुग । गट्ट । १७ किमी देवता का आदिमत्र या बीज ।

मूल'—वि० [सं०] मुख्य । प्रधान । खाम । उ०—लगाउ मूल प्रल बोलि हमारो नोई संन्य हजुरी । पर चर दोर बोलि ल्याए द्रुत संन्य भयकर भूरी ।—धुराज (शब्द०) ।

मूल (पुं०)†—मज्ञा पुं० [सं० मूल्य, प्रा० मुल] दे० 'मूल्य' । उ०—पाज क मए साना क टग, चदन क मूत डवन विका ।—कीर्ति० पृ० ६८ ।

मूलक'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मूर्त्त । उ०—(क) काँचे घट जिमि डारउं फीरं । सकउं मेह मूलक इव तोरी ।—तुर्ना (शब्द०) । (ख) जिनके दमन करालक फूटे । उर लागत मूलक इव दूटे ।—तुलसी (शब्द०) । २ चीतान प्रकार के म्हावर विषा में से एक प्रकार का विष । ३ मूल स्वल्प ।

मूलक—१ उदात्त करनेवाला । जनक । जैसे, अनर्थमूलक, भ्रातिमूलक । २ मूल नक्षत्र में उत्पन्न ।

मूलकपर्णी—मज्ञा स्त्री० [सं०] शोभाजन । तट्टिजन का पेड़ ।

मूलकपोतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मूली [को०] ।

मूलकम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूलकर्मन्] १ शासन, उच्चाटन, स्तम्भन, वर्गीकरण, आदि का वह प्रयोग जो श्रोपणियों के मूल (जड़ी) द्वारा किया जाता है । मूठ । टोना । टोटका ।

विशेष—मनु ने इसे उपपातका में गिना है ।

२ प्रधान कर्म ।

विशेष पूजा आदि में कुछ कर्म प्रधान होते हैं और कुछ अग ।

मूलकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूल ग्रंथकर्ता [को०] ।

मूलकारण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आदिकारण । प्रधान हेतु । उ०—समस्त शब्दा का मूलकारण ध्वनिमय ओकार है ।—गीतिका (भू०), पृ० १ ।

मूलकारिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मूल ग्रंथ के पद्य । २ मूलधन की एक विशेष प्रकार की वृद्धि । ३ चंडी । ४ भट्टी ।

मूलकृच्छ्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मितार्चरा आदि स्मृतियों में वर्णित ग्यारह प्रकार के पर्याकृच्छ्र व्रतों में से एक व्रत जिसमें मूली आदि विशेष जड़ों के क्वाथ या रस को पीकर एक मास व्यतात करना पड़ता था ।

मूलकेशर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नींबू ।

मूलखानक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन बरासकर जाति जो पेड़ों की जड़ खोदकर जीविका निर्वाह करती थी ।

मूलग्रथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] असल ग्रंथ जिसका भाषातर, टीका आदि की गई हो ।

ईश्वर । ५. मुलतान नगर जहाँ भास्कर तीर्थ था । ६. कौटिल्य के अनुसार राजधानी । शासन का मुख्य केंद्र ।

मूलस्थानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गौरी ।

मूलस्थायी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूलस्थायिन्] शिव ।

मूलस्रोत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूलस्रोतस्] झरना, नदी आदि की मुख्य धारा या उद्गम स्थान [को०] ।

मूलहर—वि० [सं०] समूल उन्मूलन करनेवाला । जड़ में उखाड़ देने वाला [को०] ।

मूलहर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुसार वह राजा जो फजूल खर्च करता हो । वह जिसने अपना संपूर्ण धन नष्ट कर दिया हो ।

मूला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. सतावर । २. मूल नक्षत्र । ३. पृथ्वी । (हिं०) ।

मूला—सञ्ज्ञा स्त्री० [दे०] मौला नाम की बेल जो वृक्षों पर चढ़कर उन्हें बहुत हानि पहुँचाती है । विशेष शब्द 'मौला' ।

मूलाधार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योग में माने हुए मानव शरीर के भीतर के छह चक्रों में से एक चक्र जिसका स्थान गुदा शिश्न के मध्य में है । इसका रंग लाल और देवता गणेश माने गए हैं । इसके दलों की संख्या ४ और अक्षर व, घ, ष, य, तथा स हैं ।

मूलाभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूली [को०] ।

मूलाभना—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें वायु के कुपित होने पर हाथ और पैरों में कपन होता है । उ०—जो वायु पैर, जघा, उरु और हाथ के मूल में कपन करे उसको मूलाभना रोग कहते हैं ।—माधव०, पृ० १४६ ।

मूलायतन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूल आयतन । मूल स्थान या गृह ।

मूलावाधक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुसार राष्ट्रशक्ति के केंद्र को घेरनेवाला ।

मूलिक—वि० [सं०] १. मूल सबधी । मूल का । २. मुख्य । प्रधान ।

मूलिक—सञ्ज्ञा पुं० कदमूल खाकर रहनेवाला सन्ध्यासी ।

मूलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] श्लोषधियों की जड़ । जड़ी । उ०—वैदिक विज्ञान अनेक लौकिक आचरत सुनि जानि कं । बलदान पूजा मूलिका मनि साधि राखी आनि कं ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) आयो सदन सहित सोवत ही जो लौ पलक परं न । जिसे कुवेर निसि मिलै मूलिका कीन्ही विनय सुखेन ।—तुलसी (शब्द०) ।

मूलिन—वि० [सं०] मूल से उत्पन्न ।

मूलिन—सञ्ज्ञा पुं० वृद्ध [को०] ।

मूलिनीवर्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार ये मोलह प्रकार के मूल (जड़)—नागदती, श्वेतवचा, प्रयामा, त्रिवृत्, वृद्धदायका, सप्तला, श्वेतापराजिता, मूषकपर्णी, गोडुवा, ज्योतिष्मती, विवी, चणपुष्पी, विपाणिका, अश्वगंधा, द्रवती और क्षीरणी ।

मूली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूलक] १. एक पौधा जो अपनी लंबी मुलायम जड़ के लिये बोया जाता है । यह जड़ खाने में भीठी, चर्परी और तीक्ष्ण होती है ।

विशेष—मूली साल में दो बार बोई जाती है, इमने प्राय सब मिलती हैं । मूली की जड़ नीचे की ओर पतली और ऊपर ओर मोटी होती जाती है । इसकी कई जातियाँ हाँती ह । मरदान मूली एक बालिशत लंबी और दो बार अगुन मोटी होनी पर बड़ी मूली हाथ हाथ भर लंबी और चार पाँच अगुन मोटी होती है । नेपाल देश में उत्पन्न होने के कारण इसे ने या नेवार भी कहते ह । यह खाने में भीठी होती है और कड़ुवापन या चर्पराहट नहीं होती । मूली का रंग सफेद होता है, पर लान रंग की मूली भी प्रचलित हिंदुस्तान में जान लगी है, जिसे धिलायनी मूली कहते ह । इसकी जड़ सरसों के से नवे लवे पत्ते ऊपर की ओर निकलते ह । छोटे और काले होने हैं । इन बीजों में से एक प्रकार का दुग्ध युक्त तेल निकलना है, जिसमें गंधक का बहुत कुछ मग्न रहता है । मूली अधिकतर कच्ची या शाक के रूप में पकाकर खाती है । बीज दवा के काम में प्राते ह । मूली माधारा उत्तेजक, मूदकारक और अश्वरीनाशक होती है । मूलादि रोगों में इसका नेवन हितकर है ।

भातप्रकाश के अनुसार छोटी मूली नदुग्ध, उष्णवीर्य, रक्षिका लघु, पाचक, त्रिदोषनाशक, म्बरप्रनादक तथा ज्वर, श्वासरोग, कठरोग और चक्षुर्भेद को दूर करनेवाली है ।

मूली या नेवाड हल्की, उष्णवीर्य, गुरु और त्रिदोषनाशक है ।
पर्याय—(छोटी मूली) शालाक । कटुक । मिश्र । बाले मरुभय । चाण्डपमूलक । मूलकपोतिका ।

मुहा०—(किमी को) मूली गाजर समझना = अति तुच्छ समझना बीज गिनना ।

२. एक प्रकार का वस । ३. जड़ी बूटी । मूलिका ।

मूली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. ज्येष्ठी । २. मत्स्यपुराण के अनुसार एक नदी का नाम । ३. छोटी छिन्नकली (की०) ।

मूली—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूलिन्] वृक्ष । पेड़ [को०] ।

मूलुवका—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुल्क] दे० 'मुल्क' । उ०—प्रावता तु पाण मुनुका, पत्र भरे पथर चूरीआ ।—कीर्ति०, पृ० ४६ ।

मूलैर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. राजा । नरेश । २. भारतीय लोग जटामासी [को०] ।

मूलोदय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] व्याज का मूलधन के बराबर हो जाना

मूल्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. किसी वस्तु के बदले में मिलनेवाला धन । दाम । कीमत आदि । जैसे,—एक सर चाय का दस रुपए । उ० वास्तव में अर्थ प्राय सर्वदा द्रव्य के ही व्यक्त किया जाता है । और तब उसे मूल्य कहते हैं—अर्थ० (वं०), पृ० १८ । २. चेतन । भृति (की०) । मूल । मूलधन (की०) । ४. लाभ । प्राप्ति । अर्जन । उपयो गता (की०) ।

यो—मूल्यरहित = (१) बिना मूल्य का । जिसका कुछ न हो । निकम्मा (२) व्यर्थ । बेकार । मूल्यवृद्ध = बाजा वस्तुओं का दाम बढ़ जाना । मूल्यहीन = दे० 'मूल्यरहित' ।

मूल्य^१—वि० १ प्रतिष्ठा के योग्य । कदर के लायक । २. रोने या लगने योग्य (पौधा) । ३ मूल में होनेवाला । जो मूल में ही (की०) । ४ जड़ में उखाटने योग्य । (घेत की फसल, जैसे, उर्द, मूंग आदि) ।

मूल्यक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूल्य । धन । दान । कीमती (की०) ।

मूल्यवान्—वि० [सं० मूल्यवत्] जिसका दाम बहुत अधिक हो । बड़े दाम का । कीमती ।

मूल्याङ्कन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूल्याङ्कन] १ किसी वस्तु का मूल्य निर्धारित या निश्चित करना । २ किसी विनिष्ट क्षेत्र में किसी व्यक्ति अथवा कृते की उपयोगिता एवं महत्त्व का आकलन करना । उ०—रहीम हिंदी जगत् के ख्यातिप्रप्त कवि हैं, किंतु अभी तक उनकी काव्यगत विचारधारा का मूल्यांकन नहीं हो पाया था । —अकबरी०, पृ० ८ ।

मूयमेट—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह प्रयत्न या आंदोलन जो किसी उद्देश्य की सिद्धि या अभांग फल की प्राप्ति के लिये एा वा प्राबल व्यक्ति करते हैं । आंदोलन । जंन,—स्वदेशी मूयमेट, नान-कोश्रापरेणन मूयमेट ।

मूय—सञ्ज्ञा पुं० [फा० तुल० सं० मूय (= चूहा)] मूयक । चूहा (की०) ।

यौ०—मूयदान = द० 'बुहादान' ।

मूयली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तालमूली ।

मूय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चूहा । २ गोली मिनटकी । गवाक्ष (की०) । ३. सोना आदि गलान की कुल्हिया (की०) ।

मूयक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चूहा । उ०—मल विनु म्वारध पर श्रपकारी । अहि मूयक इव सुनु उरगारी ।—तुर्गा (गद०) । २ तस्कर । चोर (की०) ।

मूयकरणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मूयाकानी नाम की लता । आसुरणी ।

मूयवाहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गणेश ।

मूयकमारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] श्रुतश्रेणी नाम की लता ।

मूयण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चुराना । मूयना (की०) ।

मूया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ सोना आदि गलाने की परिया । तंजमा-वतिनी । २ देवताउ वक्र । ३ गोशरू या पीला । ४ चुहिया । मूयना (की०) । ५ गवाक्ष । भरोणा ।

मूयाकर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मूयाकानी लता ।

मूयातुर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नीला घोषा । तूनेवा ।

मूयक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चूहा । मूया । २ तिरस का टुकड़ा । शिरोप टुकड़ा (की०) । ३ मूयकवाला । तस्कर । चोर (की०) । ४ महाभारत के अनुसार दक्षणा के एक अनवर का प्राचीन नाम ।

मूयकपर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जल में ह्रावमान एक प्रकार का मूय ।

पर्या०—मूयश्रेणी । मूया । उपचित्रा । उपती । सफरी । मूया । मूयश्री । आसुरणी ।

मूयिरय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] केंचन ।

मूयिकविपाय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चूरे की सींग के दो पल्लोओं या त्रयसुर का (की०) ।

मूयिकसायन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नासायक नामक किसी पदार्थ को जाने से, कटा जाता कि, मनुष्य चूरे की दो पी पल्लोओं पर से रुम पतुम कन कट जाता है ।

मूयिकश्वल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ? कर्मीत । दाबी (की०) ।

मूयिकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूयिकद] गणेश ।

मूयिकचल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूयिकचल] गणेश ।

मूयिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ? प्येडा चूरा । चुपिया । २ चुपियाली लता । ३ तंजमायनी । मूय (की०) । ४ गवाक्ष । सिद्धी (की०) ।

मूयिकाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माजा । सिद्धा (की०) ।

मूयिकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नर चूरा । चूरा (की०) ।

मूयिकारति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ 'मूयकाद' ।

मूयी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ सोना आदि गलान की परिया । २. चूरा चूरा ।

मूयीक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [सं० मूयीका] चूरा चूरा (की०) ।

मूयीकरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धरिया में घातु आदि गलाने की क्रिया ।

मूयीवायण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गुप्त व्यभिचार से उत्पन्न पुत्र । यह जिनसे वाप का पता न हो । शंगना ।

मूस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूस] चूरा । उ०—मूस मारिक के दोखी धारि ।—दस्ती०, पृ० १० ।

मूसधानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मूस + धान (सं० आधान ?)] चूरा पंमाने का पिण्ड । चुराधान ।

मूसना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मूसण] चूरातर उठा ले जाता । उ०—(क) मूसना पांच चार पदि दंगा । रूहा शिर्षी निनि दिर दया ।—अधुनायाम (गद०) । (ग) नीतर नीतर मय रव चूरी, जिन हीम के ता मन धन मूम ।—भास्येनु प्रं०, भा०२, पृ० ८११ । (ग) मूसनाय विदग्ध रव नागरि नीन्ही पद टङ्गा ही । तैर हो प्रेम तपति निनि गो मयो रोहे मूसी ।—तुर्गा (गद०) । (ड) सिवा नदिर निनि मूस उरगा । सिवा नदिर पर मूसी चोरा ।—आरगी (गद०) ।

मय्यो० वि०—ले आजा ।—लेता ।

मूसर—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मूसर] १ धो 'मूसर' । उ०—चूरा गला चुपिया भन्ना वला मूसरम चडा मूसर पी ।—मूसरी (गद०) । २ मूसर । ३ मूसर ।

मूसरचंद—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मूसर + चंद] १ धरिया मूसर । मूसर । २ मूसर चूरा चूरा । ३ मूसर ।

मूसल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूसल] १ चूरा चूरा । २ मूसल । ३ मूसल । ४ मूसल । ५ मूसल । ६ मूसल । ७ मूसल । ८ मूसल । ९ मूसल । १० मूसल ।

रहती है। २ एक अन्न जिसे बलराम धारण करते थे। ३. राम वा कृष्ण के पद का एक चिह्न।

मुहा०—मूसल से या मूसलों ढोल बजाना = अत्यंत आनंद मनाना। अत्यधिक प्रसन्नता दिखाना।

मूसलधार—कि० वि० [हि० मूसल + धार] इतनी मोटी धार से, जितना मोटा मूसल होता है। बहुत अधिक वेग से। धारासार। जैसे, मूसलधार पानी बरसना। उ०—उसने आते ही ब्रजमंडल को घेर लिया और गरज गरज बड़ी बड़ी बूंदों लगा मूसलधार जल बरसाने।—लखू (शब्द०)।

मूसलमान^७—सब्जा पुं० [अ० मुसलमान] दे० 'मुसलमान'। उ०—सेवा मानन भेदियत हिंदू मूसलमान।—पृ० रा०, ६१/४६६।

मूसला—सब्जा पुं० [हि० मूसल] वह जड़ जो मोटी और सीधी कुछ दूर तक जमीन में चली गई हो, जिसमें इधर उधर मूत या शाखाएँ न फूटी हो। भखरा का उलटा।

विशेष—जड़ दो प्रकार की होती है—एक भखरा दूसरी मूसला।

मूसली—सब्जा पुं० [सं० मूशली] ? हल्दी की जाति का एक पौधा।

विशेष—इसकी जड़ औषध के काम में आती है और पुष्टई मानी जाती है। यह पौधा सीधे की जमीन में उगता है और नदियों के कछारों में भी पाया जाता है। विलासपुर जिले में अमरकटक पहाड़ पर नर्मदा के किनारे यह बहुत मिलता है।

२. खल, इमामदस्ता आदि में किसी वस्तु को कूटने की छोटी मुंगरी या डडा।

मूसा^१—सब्जा पुं० [सं० मूपक] चूहा।

मूसा^२—स्त्री० पुं० [इब्रानी] यहूदी लोगों के एक पैगवर जिनको खुदा का नूर दिखाई पड़ा था। किताब या पैगवरी मतों का आदि प्रवर्तक इन्हीं को समझना चाहिए। उ०—युसुफ नबी को अमर न बारा। जेहि घर माँ मूस अवतारा।—हिंदी प्रेमगाथा०, पृ० २६२।

मुहा०—मूसा आग लेने गए थे पैगवरी मिल गई = करने क्या गए और क्या हो गया। मामूली चीज की कामना से जाने पर किसी को बहुत बड़ी वस्तु का मिल जाना। उ०—यजदानी इन्कार तो कर रहे थे, पर छाती फूल जाती थी। मूसा आग लेने गए थे, पैगवरी मिल गई।—मान०, भा० १, पृ० १८७।

मूसाई—सब्जा पुं० [इब० मूसा + ई (प्रत्य०)] मूसा द्वारा प्रवर्तित मत के अनुयायी। यहूदी। उ०—यद्यपि मूसाइयो और उनके अनुगामी ईसाइयो की धर्मपुस्तक में आदम खुदा की प्रतिमूर्ति बताया गया पर नर में नारायण की दिव्य कला का दर्शन भारतीय भक्तिमार्ग में ही दिखाई पड़ा।—रस०, पृ० ५५।

मूसाकानी—सब्जा स्त्री० [सं० मूषकर्णी] औषध में प्रयुक्त होनेवाली एक प्रकार की लता जो प्रायः सारे भारत की गीली भूमि में चौमासे में पाई जाती है। चूहाकानी। आखुकर्णी।

विशेष—इस लता की पत्तियाँ आकार में गोल और प्रायः आधा से डेढ़ इंच तक की होती हैं, जो देखने में चूहे के कान के

समान, बीच में कमानदार और रोएदार होती हैं। इसकी शाखाएँ बहुत घनी होती हैं और इसकी गाँठों में नै जड़ निकलकर जमीन में जम जाती है। इसमें वैगनी या गुलाबी रंग के छोटे छोटे फूल और चने के समान गोल फल लगते हैं जो पहले हरे अथवा वैगनी रंग के और पकने पर सूरे रंग के हो जाते हैं। ये फल चीरने पर दो दलों में विभक्त हो जाते हैं और प्रत्येक दल में से एक रीज निकलता है। इसके प्रायः सभी अंग औषधि के रूप में काम में आते हैं। निदोपतः चूहे के विष को दूर करने के लिये इसे लगाया और इसका काढ़ा पीया जाता है। वैद्यक में यह चर्चरी, कडवी, कर्सली, गीतल, हलकी, दग्तावर, रसायन तथा कफ, पित्त, कृमि, शूल, ज्वर, ग्रथि, मूजाक, प्रमेह, पांडु, भगदर और कोढ़ आदि रोगों को दूर करनेवाली मानी जाती है। मूत्ररोग, उदररोग, हृदयरोग आदि में भी इसका व्यवहार होता है और यह रक्तशोधक भी होती है। यह बड़ी और छोटी दो प्रकार की होती है। इसके अतिरिक्त इसके और भी कई भेद होते हैं, जिनमें से एक भेद के पत्ते गोभी के पत्तों की तरह लंबे और किनारे पर कटावदार होते हैं। एक और भेद क्षुद्र जाति का होता है, जो एक में चार फुट तक ऊँचा होता है। इसका ठठन पीला होता है, जिसमें से बहुत सी शाखाएँ निकलती हैं। इन सबका व्यवहार पथरी के समान होता है। इसे 'बूहाकान' भी कहते हैं।

पर्या०—आखुकर्णी। द्रवती। मूपिकपर्णी। मूपिकाहदा। उदरकर्णी।

मूसीकार—सब्जा पुं० [अ० मूसीकार] सगीत का अच्छा जानकार। सगीतज्ञ [को०]।

मूसीकी—सब्जा स्त्री० [अ० मूसीकी] सगीतकला। गानविद्या [को०]।

मूह^१—सब्जा पुं० [सं० मुख] दे० 'मुह'। उ०—देखतेहि काफिर मूह फिरावे।—कवीर सा०, पृ० १५१०।

मृकंडु—सब्जा पुं० [सं० मृकरडु] एक मुनि, जिनके पुत्र मार्कंडेय ऋषि थे।

मृगक^७—सब्जा पुं० [सं० मृगाक ?] हिरण्यकशिपु दानव। उ०—मृगकस्य ऊर, नप तोरि तूर।—पृ० रा०, २।१०।

मृगमाल^७—सब्जा पुं० [सं० मृगमाला] मृगसमूह। उ०—कहूँ बीन वादित्र वाजत ऐसी। सुने राग मोह मृगमाल वैसी।—ह० रासो०, पृ० ३७।

मृग—सब्जा पुं० [सं०] [स्त्री० मृगी] १ पशुमात्र, विशेषतः वन्य पशु। जंगली जानवर। २ हिरन।

विशेष—मृग नौ प्रकार के कहे गए हैं—मसूरु, रोहित, न्यकु, सवर, वज्रुण, रुद्र, शश, एरा और हरिण। विशेष दे० 'हिरन'।

३ हाथियों की एक जाति जिसकी छाँखें कुछ बड़ी होती हैं और गडस्थल पर सफेद चिह्न होता है। उ०—च्यारि प्रकार पिल्वि वन वारन। भद्र मद मृग जाति सधारन।—पृ० रा०, २७। ४ मार्गशीर्ष। अग्रहन का महीना। ५ मृगशिरा नक्षत्र। ६ एक यज्ञ का नाम। ७. मकर राशि। ८ अन्वेषण।

खोज । ६ कस्तूरी का नाफा । १०. ज्योतिष मे शुक्र की नी वीथियो मे से आठवी वीथी जो अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल मे पडती है । ११. पुरुष के चार भेदो मे से एक ।

विशेष - मृग जाति का पुरुष मधुरभाषा, बडी आँखोवाला, भीरु, चपल, सुदर और तेज चलनेवाला होता है । यह चित्रिणी स्त्री के लिये उपयुक्त कहा गया है ।

१२ वैष्णवो के तिलक का एक भेद । १३ चद्रमा का लाङ्गन । चद्रमा मे मृग का चिह्न (को०) ।

मृगकानन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ उद्यान । उपवन । २ आखेटोप-योगी पशुआ से भरा हुआ वन [को०] ।

मृगकेतन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चद्रमा [को०] ।

मृगगामिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक श्रौपथ । वायविहग [को०] ।

मृगधर्मज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कस्तूरी का नाफा । २ जवादि नामक गघद्रव्य ।

मृगचर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगछाला । हिरन का चमडा ।

विशेष—यह पवित्र माना जाता है । इसका व्यवहार उपनयन सस्कार मे होता है और इसे साधु सन्यासी विच्छाते है ।

मृगचर्या—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृग की तरह का रहन सहन जो एक प्रकार की तपस्या या आत्मनियह है [को०] ।

मृगचारी—वि० [सं० मृगचारिन्] मृगचर्या करनेवाला । हिरण की तरह जीवन बितानेवाला [को०] ।

मृगचेटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गवविलाव । मुष्क विलाव । खट्टास ।

मृगछाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृग + हिं० छाला] मृगचर्म ।

मृगछौना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृग + हिं० छौना] [स्त्री० मृगछौनी] मृगशावक । उ०—प्यारा अक दुरि रही ऐसै, जैसे केहरि क्रदन मुनि मृगछौनी ।—नद० ग्र०, पृ० ३७३ ।

मृगजरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक रसौपथ जिसका व्यवहार रक्तपित्त मे होता है ।

विशेष—शोया हुआ पारा और मृत्तिका लवण (लोनी) वामे के रस मे एक दिन तक घोटने से यह तैयार होता है ।

मृगजल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगतृष्णा । मृगतृष्णा की लहरें । उ०—(क) सुधा समुद्र समीप विहाई । मृगजल निरखि मरहु फत घाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) तृषा जाइ वरु मृगजल पाना । वरु जामहि सस सीस विपाना ।—तुलसी (शब्द०) ।

यौ०—मृगजल स्नान = मृगजल मे नहाना । अनहोनी वात ।

मृगजा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कस्तूरी ।

मृगजालिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हिरनो को फंसाने का जाल ।

मृगजीवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिकारी । श्रहेरी [को०] ।

मृगज्ज भ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगज्जम्भ] खोए या चोरी गए हुए धन की खोज ।

मृगटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगटक्क] चद्रमा ।

मृगणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. अपहृत धन की खोज । २ खोज । अन्वेषण ।

मृगतृषा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगतृषा] दे० 'मृगतृष्णा' ।

मृगतृष्णा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जल वा जल की लहरों की वह मिथ्या प्रतीति जो कभी कभी ऊमर मैदानो मे भी कडी घूप पडने के समय होती है । मृगमरीचिका ।

विशेष—गरमी के दिनों मे जब वायु की तहों का घनत्व उष्णता के कारण असमान होता है, तब पृथ्वी के निकट की वायु अधिक उष्ण होकर ऊपर की उठना चाहती है, परंतु ऊपर की तहें उसे उठने नहीं देती, इससे उस वायु की लहरें पृथ्वी के समानांतर बहने लगती है । यही लहरें दूर से देखने मे जल की धारा सी दिखाई देती हैं । मृग हमसे प्राय. थोखा खाते हैं, इससे इसे मृगतृष्णा, मृगजल आदि कहते हैं ।

मृगतृष्णिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मृगतृष्णा' । उ०—चारो ओर से काट काटकर अपने को अलग करती हुई, और एकाकी बनकर जिधर भागती हुई चली आई हूँ, वहाँ देखती हूँ रेत, रेत, रेत, केवल मृगतृष्णिका ।—सुखदा, पृ० १३ ।

मृगतृष्णा(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगतृष्णा] दे० 'मृगतृष्णा' । उ०—मृगतृष्णा सम जग जिय जानी । तुलसी ताहि मत पहिचानी ।—तुलसी ग्र० ।

मृगदशक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुत्ता ।

मृगदर्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कस्तूरी [को०] ।

मृगदाव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगदाव (=मृगो का वन)] १ वह वन जिममे बहुत मृग हो । २. काशी के पास 'सारनाथ' नामक स्थान का प्राचीन नाम । (कहा जाता है कि वहाँ वन मे मृग स्वच्छद विचरण किया करते थे) ।

मृगद्यु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिकारी ।

मृगद्विप्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शेर । सिंह [को०] ।

मृगदृशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हिरन जैसे आँखोवाली स्त्री ।

मृगदृष्टि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शेर । बाघ [को०] ।

मृगधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चद्रमा ।

मृगधूम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

मृगधूर्त्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शृगाल ।

मृगधूर्त्तेक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मृगधूर्त्त' [को०] ।

मृगनयना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हिरन की आँखोवाली स्त्री ।

मृगनयनि, मृगनयनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मृगनयना' । उ०—चद्रवदनि की सी अलकावलि, लहराती थी लोल शैवलिनि । कोमल चचल धरंणी श्यामल, किसी मृगनयनि की थी दृगकनि ।—मधुज्वाल, पृ० १७ ।

मृगनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंह ।

विशेष—'मृग' शब्द के आगे पति, नाथ, राज आदि शब्द लगने से सिंहवाचक शब्द बनता है ।

मृगनाभि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कस्तूरी ।

मृगनाभिजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कस्तूरी ।

काया कठिन केंमान है, खाँचै विरला कोइ । मारै पची मृगला
दाहू सुरा मोइ ।—दाहू, पृ० ३८० ।

मृगलेखा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चंद्रमा का धव्वा ।

मृगलोचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा [को०] ।

मृगलोचना—वि० स्त्री० [सं०] हरिण के समान नेत्रवाली (स्त्री) ।

मृगलोचनी—वि० स्त्री० दे० मृगलोचना ।

मृगलोमिक—वि० [सं०] ऊन का । ऊर्णनिमित्त । ऊनी ।

मृगव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध शास्त्रों के अनुसार एक बहुत बड़ी
सख्या का नाम ।

मृगवधू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मृगी । हरिणी [को०] ।

मृगवल्लभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुदुरु तृण ।

मृगवारि^(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगतृण का जल । उ०—सूते सपने
ही सहै ससृत सताप रे । बूढो मृगवारि खायो जेवरि के साँप
रे ।—तुलसी (शब्द०) ।

मृगवाहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वायु । पवन । २ स्वाति नाम का
नक्षत्र [को०] ।

मृगवीथिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मृगवीथी' ।

मृगवीथी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ ज्योतिष के अनुसार शुक्र की नौ
वीथियों में से एक जिसमें शुक्र ग्रह अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल
पर आता है । २ चंद्रमा की वह स्थिति जब वह श्रवण,
शतभिषा और पूर्व भाद्रपदा से युक्त होता है [को०] ।

मृगव्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ आखेट । मृगया । २ (धनुर्विद्या) लक्ष्य ।
निशाना [को०] ।

मृगव्याध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिकारी । अहेरी । २ एक नक्षत्र ।
३ शिव [को०] ।

मृगशाव, मृगशावक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगछाना । हिरन का कोमल
वच्चा ।

यौ०—मृगशावकनैनी = मृगछाने का तरह चंचल नेत्रवाली ।

मृगाशिरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगशिरस्] सत्ताइस नक्षत्रों में से पाँचवाँ
नक्षत्र ।

विशेष—इसके अधिपति चंद्रमा है और यह आढा या तिर्यङ्मुख
नक्षत्र है । यह तीन तारों से मिलकर बना हुआ और बिल्ली
के पैर के आकार का है । आकाश में यह नक्षत्र कन्या लग्न के
वाईस पल बीतने पर उदित होता है । मृगशिरा नक्षत्र के
पूर्वार्ध में (अर्थात् ३० ढड के बीच) वृष राशि और अपरार्ध
में मिथुन राशि होती है । इस नक्षत्र में उत्पन्न मनुष्य मृगचक्षु,
अति बलवान्, सुंदर कपोलवाला, कामुक, साहसी, स्थिरप्रकृति,
मित्र पुत्र से युक्त और थोड़ा धनवान् होता है ।

मृगशीर्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगशिरा नक्षत्र । २ अग्रहन का महीना ।
मार्गशीर्ष [को०] ।

मृगश्रच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वाघ [को०] ।

मृगसत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] उन्नीस दिन का एक सत्र ।

मृगहा—सञ्ज्ञा पुं० [मृगहान्] शिकारी [को०] ।

मृगाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगाङ्क] १ चंद्रमा । उ०—दुजराजा शशवर
उदधितनय ससाक मृगाक ।—नद० प्र०, पृ० ११६ । २ एक
रस जो सुवर्ण और रत्नादि में वनता है और क्षय राग में
विशेष उपकारी होता है । विशेष दे० 'मृगाकरम' । उ०—(क)
राम की रजाह ते रसाइनी समीर मनु उतरि पयोधि पार सोवि
के ससाक सो । जातुघान वुट पुट पाक लक जातरूप रतन जतन
जारि किया है मृगाक सां ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) विधा
विराट के सुरारि राजरोग जानि जू । निमित्त तासु वैद ज्यों
जरघो मृगाक ठानि जू ।—रघुनाथदास (शब्द०) ।

मृगाकरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगाङ्करस] एक प्रकार का रसोपव ।

विशेष—पारा एक भाग, सोना एक भाग, मोती दो भाग, गधक
दो भाग और सोहागा एक भाग, इन सब चीजों को काँजी
में पीसकर नमक के भाँडे में रखकर चार पहर पकाते हैं । इस
रस को चार रत्नों की मात्रा में सेवन करने से राजयदमा रोग
नष्ट ही जाता है । राजमृगाक और महामृगाक रस भी होने हैं,
जिजमें द्रव्यों की संख्या अधिक होती है ।

मृगागना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगाङ्गना] मृगी । हरिणी ।

मृगाडजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगाण्डजा] कस्तूरी । मुश्क [को०] ।

मृगातक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगान्तक] चीता [को०] ।

मृगा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृग] हिरन । मृग ।

मृगा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सहदेई का पीया ।

मृगाक्षी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हरिण के से नेत्रवाली स्त्री ।

मृगाजिन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगछाला । मृगचर्म [को०] ।

मृगाजीव—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. वाखणी लता । २. कस्तूरी ।
३. व्याध । शिकारी [को०] ।

मृगाद, मृगादन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंह, चीता, बाघ इत्यादि वनजंतु
जो मृगों को खाते हैं ।

मृगादनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. इद्रवारणी । इद्रायन । २. सहदेई ।
३. ककडी ।

मृगाधिप, मृगाधिराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंह । शेर ।

मृगाराति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ता । २. सिंह [को०] । ३. सिंह
राशि [को०] ।

मृगारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. सिंह । २. कुत्ता । ३. बाघ । चीता ।
४. एक वृक्ष । लाल महिजन । ५. सिंह राशि [को०] ।

मृगाविध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] व्याध । शिकारी [को०] ।

मृगाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंह । उ०—(क) मूपकादि ग्रह में रहे
बहिर मृगाश शक्रुतु । गो अश्वदिक जीव बहु जीवाहि मव
लघु जतु ।—शकर दि० वि० (शब्द०) ।

मृगाशन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंह । मृगाधिप । उ०—दबति द्रीपदी
देखि दुगासन । जिमि वन में लखि मृगी मृगाशन ।—रघुराज
(शब्द०) ।

मृगिन्द्र^(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगेन्द्र] १. दे० 'मृगेन्द्र' । २. सिंह के
समान शूर योद्धा । उ०—गजें न लज कोर्ष मृगिन्द्र । उतकिष्ट
सूर सिर सहिन निद्र ।—पृ० रा०, ६।४६ ।

मृगित—वि० [सं०] १ अन्वेषित । जिसका पीछा किया गया हो ।
२ याचित ।

मृगिनी^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृग] हरिणी । उ०—(क) ज्यों मृगिनी वृक झुड के वासा । त्यो ये अध्युतन के वासा ।—
लख्खुलाल (शब्द०) । (ख) मृग मृगिनी द्रुम वन सारस खग
काहू नहीं बताया री ।—सूर (शब्द०) । (ग) वीसुरी को
शब्द चुनिकै वधिका की मृगिनी भई ।—सूर (शब्द०) ।

मृगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मृग नामक वन्य पशु की मादा । हरिणी ।
हिरनी । उ०—मनहु मृगी मृग देख दियासे ।—तुलसी
(शब्द०) । २ एक वरावृत्त जिसके प्रत्येक चरण मे एक रगण
(sis) हाता है । जैसे,—री प्रिया । मान तू । मान ना । ठान
तू । इस 'प्रिय वृत्त' भी कहते हैं । ३ कश्यप ऋषि की क्रोध-
वशा नाम्नी पत्नी से उत्पन्न दस कन्याओं मे से एक, जिससे
मृगो की उत्पत्ति हुई है और जा पुलह ऋषि की पत्नी थी ।
४ पीले रंग की एक प्रकार की कौड़ा जिसका पेट सफेद होता
ह । ५ अपस्मार नामक रोग । मृगी रोग । ६ कस्तूरी ।

मृगीदृश, मृगलाचन - सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मृगी या हिरनी के समान
नत्रावाला स्त्री [को०] ।

मृगीपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण ।

मृगीवत्^(७)—वि० [सं० मृगी + हिं० वत्] अपस्मार का रोगी ।
मृगी राग स ग्रस्त । उ०—घनसारहिं दिखि मुरझति ऐतै ।
मृगीवत् जल दरसै जैसे ।—नद० ग्र०, पृ० १४४ ।

मृगेन्द्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगेन्द्र] १ सिंह । २ बाघ । चीता (को०) ।
३ सिंह राशि (को०) ।

मृगेन्द्रचटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगेन्द्रचटक] बाज पत्नी ।

मृगेन्द्राशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगेन्द्राशी] अडूमा । वासक ।

मृगेन्द्रासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगेन्द्रासन] पत्थर । प्रस्तर [को०] ।

मृगेन्द्रास्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जिव ।

मृगेन्द्राणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दे० 'मृगीदृश' । २ श्वेत इद्रायन ।
श्वेत इद्रवारुनी [को०] ।

मृगक्षिणी—वि० स्त्री० [सं० मृग + ईक्ष्य] हिरन के से नेत्रवाली ।
उ०—मृगक्षिणी । इनमे खग अज्ञान ।—गुजन, पृ० ४० ।

मृगेल—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की मछली जो सयुक्तप्रात, वगाल
पजाव तथा दाक्षिण की नदियों मे पाई जाती है ।

विशेष—इसकी आँखें सुनहरी होती हैं । यह डेढ हाथ के लगभग
लंबी होती है और तौल मे नौ या दस सेर होती है ।

मृगेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंह ।

मृगेष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की चमेली । मोगरा [को०] ।

मृगेर्वारु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्वेतेंद्रवारुणा । सफेद इद्रायन ।

मृगोत्तम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृगभिरा नक्षत्र ।

मृग्य—वि० [सं०] १ जिसका अन्वेषण या पीछा किया जाय । २
जो निश्चित न हो [को०] ।

मृच्छकटिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ संस्कृत का एक बहुप्रसिद्ध नाटक
जिसके रचयिता शूद्रक कहे जाते हैं । २ मिट्टी का रथ ।

मृज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुरज नाम का बाजा ।

मृजा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मार्जन ।

मृजित—वि० [सं०] मार्जित । जिसका मार्जन किया गया हो [को०] ।

मृज्य—वि० [सं०] मार्जन के योग्य । मार्जनीय ।

मृजाद्^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मर्यादा] इज्जत । मान । उ०—सबही
मृजाद देखी सुनी जदपि वडाई हू महित ।—ग्रज० ग्र०,
पृ० ७१ ।

मृडकण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृडकण] बालक । शिशु [को०] ।

मृड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृड] [स्त्री० मृडानी] शिव । महादेव । उ०—
मदन मथन मृड अतरजामी । त्राता होहु जगत के स्वामी ।
—नद०, ग्र०, पृ० १५४ ।

मृडन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अनुकूलता । अनुग्रह । अनुकपा [को०] ।

मृडा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृडा] दुर्गा । पार्वती । उ०—मृडा चढिका
मृडी अविका भवा भवानी सोय ।—नददास (शब्द०) ।

मृडानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृडानी] दुर्गा । भवानी । पार्वती । उ०—
अदेवी नृदेवीन को होहु रानी । करै सेव बानी मधीनी मृडानी ।
—केशव (शब्द०) ।

मृडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा [को०] ।

मृडीक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हिरन । २ शिव का एक नाम । ३
मछली (को०) ।

मृणाल—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कमल का डठल जिसमे फुल लगा
रहता है । कमलनाल । उ०—(क) तौ शिव बनप मृणाल कि
नाई । तोरहिं राम गणेश गासाई ।—तुलसी (शब्द०) ।
(ख) प्राई छु चलि गोपाल धरै ब्रजवाल विशाल मृणाल सो
वाही ।—पद्माकर (शब्द०) । २ कमल की जड़ । मुरार ।
भसीड । ३ उशीर । खम ।

मृ०—मृणालकठ । मृणालभग = कमलनाल के तटु या रेशे का
टुकड़ा । मृणालसूत्र = कमलनाल का तटु ।

मृणालकठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृणाल + कठ] एक प्रकार का जल-
पत्ती ।

मृणालिका—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कमल की डठी । कमलनाल । उ०—
भौरिन ज्यों भवत रहत वन वीथिकान हसिनि ज्यों मृदुल
मृणालिका चहति है ।—केशव (शब्द०) ।

मृणालिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कमलिनी । २ वह स्थान जहाँ
कमल हो । ३ कमल का समूह ।

मृणाली^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कमल का डठल । कमलनाल । उ०—
(क) धरे एक वेणो मिली मँल सारो । मृणाली मनो पक
सो काङ्कि डारो ।—केशव (शब्द०) । (ख) मँलते सहित मानो
फचन की लता लोनी, पक लपटानी ज्यों मृणाली दरसाई है ।
—धुराज (शब्द०) ।

मृणाली^२—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृणालिन्] कमलपुष्प । कमल [को०] ।
 मृणमय—वि० [सं०] मृत्तिकानिर्मित । दे० 'मृन्मय' [को०] ।
 मृणमूर्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मिट्टी की बनी हुई मूर्ति [को०] ।
 मृत्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मृद' [को०] ।
 मृत्तड—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृत्तण्ड] सूर्य । मृताड [को०] ।
 मृत्तपुर^(५)—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृत्तम् (= मृत्यु) + पुर (= लोक)] मर्त्य लोक । मानवलोक । उ०—चलै थान कैलास परी अचञ्चरी
 मृत्तपुर ।—पृ० रा०, २५।१६३ ।
 मृत्त^१—वि० [सं०] १ मरा हुआ । मुर्दा । २ मृत तुल्य । मृत सा [को०] । ३ मूच्छित । शोधित । जैसे, पारा [को०] । ४. मांगा हुआ । याचित ।
 मृत्त^२—सञ्ज्ञा पुं १ मृत्यु । मरण । २ मांगने से मिला हुआ अन्न वा भिक्षा आदि [को०] ।
 मृत्तकवल—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृत्तकम्बल] वह कपडा जिससे मुर्दे को ढँकते हैं । कफन ।
 मृत्तक—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ मरा हुआ प्राणी । मुर्दा । २. मरण का अशौच । ३ मरण । मृत्यु । मौन [को०] ।
 मृत्तककर्म—सञ्ज्ञा पुं [सं०] मृत्तक पुरुष की शुद्ध गति के लिये किया जानेवाला कृत्य । प्रेतकर्म । जैसे, दाह, पोडशी, दशगात्र इत्यादि । उ०—तत्र सुग्रीर्वाहिं आयसु दीन्हा । मृत्तककर्म विधिवत् सब कीन्हा ।—तुलसी (शब्द०) ।
 मृत्तकधूम—सञ्ज्ञा पुं [सं०] राख । भस्म । उ०—जम्बो गाढ भर मर रुधिर ऊपर घूरि उढाय । जिमि अंगार रासीन्ह पर मृत्तकधूम रह छाय ।—तुलसी (शब्द०) ।
 मृत्तकल्प—वि० [सं०] मृत्तप्राय । मरणासन्न [को०] ।
 मृत्तकातक—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृत्तकान्तक] शृगाल । गीदड़ ।
 मृत्तगर्भा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसका गर्भस्थ शिशु (भ्रूण) मर गया हो ।
 मृत्तगृह—सञ्ज्ञा पुं [सं०] श्मशान । कब्र [को०] ।
 मृत्तचेल—सञ्ज्ञा पुं [सं०] मुर्दे के ऊपर का कपडा । कफन । मृत्तकवल । [को०] ।
 मृत्तजीव—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ मरा हुआ प्राणी । २ तिलक वृक्ष ।
 मृत्तजीवन—सञ्ज्ञा पुं [सं०] मरे हुए को जिलाना ।
 मृत्तजीवनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह विद्या जिससे मुर्दे को जिलाया जाता है । उ०—क्यों न जिवावै असुरगुरु तम असुरै परभात । सध्यावृत मृत्युजीवनी विद्या कही न जात ।—गुमान (शब्द०) । २ दुधिया घास । दुग्धिका ।
 मृत्तदार—सञ्ज्ञा पुं [सं०] वह व्यक्ति जिसकी स्त्री मर गई हो । रडुंभा ।
 मृत्तधर्मा—वि० [सं० मृत्तधर्मन्] नष्ट हो जानेवाला । नश्वर ।
 मृत्तनन्दन—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृत्तनन्दन] वास्तुविद्या में एक प्रकार का बड़ा कक्ष या कमरा जिसमें ५८ खम्भे हैं [को०] ।

मृत्तनिर्यातिक—सञ्ज्ञा पुं [सं०] मुर्दे को श्मशान पहुँचाने का पेशा करनेवाला । मढाफेका (बंगला) ।

मृत्तप—सञ्ज्ञा पुं [सं०] एक निम्न जाति [को०] ।

विशेष—इस जाति के लोग मुर्दे की रखवाली करते हैं, श्मशान तक उन्हें पहुँचाते हैं और मरे हुए प्राणियों के कपडे इकट्ठा करते हैं ।

मृत्तप्रजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसके बच्चे मर गए हो ।

मृत्तभर्तृका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] विधवा । राँड [को०] ।

मृत्तमडल^(५)—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृत्त + मण्डल] मृत्युलोक । उ०—मृत्तमडल कोउ थिर नही आवा सो चलि जाय ।—जग० श०, पृ० १३० ।

मृत्तमंडा^(५)—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृताण्ड = (सूर्य)] मार्तंड । सूर्य । उ०—भुई उडि अतरिक्ख मृत्तमडा । खड खड धरती वरम्हडा ।—जायसी ग्र०, पृ० ५ ।

मृत्तमत्त—सञ्ज्ञा पुं [सं०] शृगाल । गीदड़ [को०] ।

मृत्तमातृक—वि० [सं०] जिसकी माता मर चुकी हो [को०] ।

मृत्तवत्सा—वि० स्त्री० [सं०] (स्त्री०) जिसकी मति मर मर जाती हो । जैसे मृत्तवत्सा स्त्री, मृत्तवत्सा गौ ।

मृत्तसंजीवनरस—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृत्तसञ्जीवन रस] एक रसौषध जिसका व्यवहार ज्वर में होता है ।

मृत्तसंजीवनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृत्तसञ्जीवनी] १. एक वृद्धी जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इसके खिलाने से मुर्दा भी जी उठता है । उ०—मृत्तसंजीवनि औषधी अरु करनी सधान । अरु विशल्य करनी सुखद ल्यावहु द्रुत हनुमान ।—रघुराज (शब्द०) । २ मृत को जीवित करने की विद्या । ३ ज्वर का एक औषध जो मुरा के रूप में प्रस्तुत किया जाता है ।

मृत्तसंजीवनी सुरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृत्तसञ्जीवनी सुरा] एक वाजीकरण औषध ।

मृत्तसस्कार—सञ्ज्ञा पुं [सं०] मृत व्यक्ति का दाह सस्कार । अत्येष्टि [को०] ।

मृत्तसूत—सञ्ज्ञा पुं [सं०] रससिद्धर ।

मृत्तसूतक—सञ्ज्ञा पुं [सं०] [स्त्री० मृत्तसूतिका] १ वह जिसे मृत सतान उत्पन्न हुई हो । २ भस्म किया हुआ पारा ।

मृत्तस्नात—वि० [सं०] १ जिसने किसी सजाति या वधु के मरने पर उसके उद्देश्य से स्नान किया हो । २ वह मुरदा जिसे दाह के पूर्व स्नान कराया गया हो ।

मृत्तस्नान—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ किसी भाई वधु के मरने पर किया जानेवाला स्नान । २ मृत्तक का स्नान ।

मृत्तहार—सञ्ज्ञा पुं [सं०] मुर्दा ढोने या ले जानेवाला । मृत्तनिर्यातिक मृत्तहारी [को०] ।

मृत्तहारी—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृत्तहारिन्] दे० 'मृत्तहार' [को०] ।

मृतांग—सञ्ज्ञा पुं [सं० मृताङ्ग] मृत शरीर । शव । लाश [को०] ।

मृतांड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृताण्ड] मूर्त्यु [को०] ।

मृतांडा—स्त्री० [सं० मृताण्डा] वह स्त्री जिसका बच्चा मर गया हो या मर जाता हो [को०] ।

मृतान् (७) —सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृत] मुर्दा । भूत प्रेत । कन्न । उ०—
काहू बुतान को पूजत है पशु, काहू मृतान को पूजन धायौ ।—
घट०, पृ० ३३६ ।

मृतामद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तुत्य । तृतिया ।

मृतालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अरहर । २. गोपीचदन ।

मृताशन—वि० [सं०] ६० से १०० वर्ष की अवस्था का [को०] ।

मृताशौच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह अशौच (अपवित्रता) जो किसी आत्मीय, नवधा, गुरु, पढासी आदि के मरने पर लगता है और जिसमें शुद्ध होने तक ब्रह्मचर्य के साथ देवकर्म तथा गृहकर्म से अलग रहना पडना है ।

मृत्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मरण । मृत्यु ।

यौ०—मृत्तिरेखा = मृत्युमूचक रेखा ।

मृत्तिका (७) —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृत्तिका] मिट्टी । खाक । उ०—कचन को मृत्तिका करि मानत । कामिनि काष्ठशिला पहिचानत ।—
तुलसी (शब्द०) ।

मृत्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृत्यु] मृत्यु । मौत । उ०—जब आवैं मृत्ता अव, जीव कहैं जाई पराई ।—घरम० श०, पृ० ७८ ।

मृत्कर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुलाल । कुम्हार [को०] ।

मृत्कला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मिट्टी की कला । उ०—आसव पान नवधी एक दृश्य मृत्कला मे आया है ।—सपूर्णा० अभि० ग्र०, पृ० ३०४ ।

मृत्काश्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिट्टी का पात्र या बरतन [को०] ।

मृत्करा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] भूक्रीड । घुर्घुरिया [को०] ।

मृत्ताल, मृत्तालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] द० 'आढकी' [को०] ।

मृत्तिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मिट्टी । खाक । उ०—जथा हट तनु घट मृत्तिका सर्प लग दाह करि कनक कटकागदादी ।—तुलसी (शब्द०) । २ अरहर ।

मृत्तिकावर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिट्टी का लोना या नोना । (पुराने घरो की मिट्टी की दीवारो पर सीड होने से एक प्रकार का नमक लग जाता है ।)

मृत्तिकावती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नर्मदा के किनारे की एक प्राचीन नगरी । (महाभारत) ।

मृत्पच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुम्हार । कुलाल ।

मृत्पट्टक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिट्टी का पट्टा । उ०—मृत्पट्टको मे अनेक ऐसे दृश्य हैं जिनका निश्चित रूप से पहचानना कठिन है ।—सपूर्णा० अभि० ग्र०, पृ० ३०३ ।

मृत्पात्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिट्टी का बरतन ।

मृत्पिण्ड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृत्पिण्ड] मिट्टी का लोदा या डेला ।

यौ०—मृत्पिण्डबुद्धि = मूर्ख ।

मृत्यु (७) —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मृत्यु] दे० 'मृत्यु' । उ०—क्यौ न जाइ जीवत घरह, कहा करौगे मृत्य ।—पृ० रा०, २५।७५६ ।

यौ०—मृत्युलोक = मृत्युलोक । उ०—मृत्युलोक कव भोग तजि स्वर्ग लोक मन लाय ।—प० रामो, पृ० ८१ ।

मृत्यु जय—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृत्युञ्जय] १ वह जिसने मृत्यु को जीत लिया हो । २ शिव का एक रूप । ३ शिव का एक मन्त्र जिसके विधिपूर्वक जपने से अकालमृत्यु टल जाती है ।

मृत्युञ्जयरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृत्युञ्जयरस] ज्वर के लिये उपयोगी एक रसौषध ।

विशेष—पारा एक माशा, गधक दो माशे, सोहागा चार माशे, विप आठ माशे, बतूरे का बीज सोलह माशे तथा सोठ, मिर्च और पीपल दस दम माशे सात सात रत्ती, इन सबको बतूरे की जड के रस में पीसकर माशे माशे भर की गोलियाँ बना लें, और जैमा ज्वर हो, उसके अनुमार अनुमान के साथ सेवन करे ।

मृत्यु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ शरीर से जीवात्मा का वियोग । प्राण छूटना । मरण । मौन । २ यमराज । ३ ग्यारह स्त्री मे से एक । ४ विष्णु । ५ ब्रह्मा । ६ माया । ७ कलि । ८ फलित ज्योतिष के अनुसार जन्मकुडली का आठवाँ स्थान । ९ कामदेव । १० एक सामन्त । ११ बौद्ध देवता पद्मपाणि के एक अनुचर । १२ ससार [को०] ।

मृत्युकर—वि० [सं०] मरणकारक ।

मृत्युकर^२—सञ्ज्ञा पुं० किसी की मृत्यु होने पर उसकी सपत्ति के ऊपर लगनेवाला कर [को०] ।

मृत्युकाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मौत का क्षण [को०] ।

मृत्युतूर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बाजा जो दाहक्रिया या अत्येष्टि क्रिया के समय बजाया जाता है [को०] ।

मृत्युदूत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृत्यु की खबर लानेवाला [को०] ।

मृत्युनाशक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पारा ।

मृत्युपा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

मृत्युपाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृत्यु या यम का फंदा [को०] ।

मृत्युपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ईख । गन्ना । २ केला । ३ वाँस [को०] ।

मृत्युप्राय—वि० [सं०] जो मरना ही चाहता हो । जो मरने ही वाला हो । आसन्न मृत्यु । उ०—एक और पथ के कृष्णकाय, ककाल-शेष नर मृत्युप्राय ।—अपरा, पृ० १४६ ।

मृत्युफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ केला । २ महाकाल नाम की लता ।

मृत्युफला, मृत्युफली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] केला [को०] ।

मृत्युवधु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृत्युवन्धु] यम ।

मृत्युवाज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वाँस ।

मृत्युभीत—वि० [सं०] मौत से डरनेवाला [को०] ।

मृत्युभृत्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोग [को०] ।

मृत्युयोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ग्रह नक्षत्रों का मृत्युकारक योग [को०] ।
मृत्युराज—सं० पुं० [सं०] मृत्यु के देवता—यम [को०] ।
मृत्युरूपी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृत्युरूपिन्] १ यमदूत । २ वर्णमाला का 'श' अक्षर ।

मृत्युलोक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यमलोक । २ मर्त्यलोक ।

मृत्युवचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृत्युवञ्चन] १ शिव का एक नाम ।
२ काला कौश्रा [को०] ।

मृत्युवृत्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राज्य की रक्षा में युद्ध में मरणोपरांत मिलनेवाली सहायता । उ०—चदेल लेख में 'मृत्युवृत्ति' नामक शब्द मिलता है, जिसका तात्पर्य यह था कि मुसलमानों से युद्ध करने में मरे व्यक्ति के परिवार को राजा की ओर से, उसकी बहादुरी के स्मरण में मासिक धन (वृत्ति) मिलता था ।
—पूर्व० म० भ०, पृ० १०५ ।

मृत्युसूति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] केरुके की मादा (जो अड़े देते ही मर जाती है) ।

मृत्स—वि० [सं०] चिपचिपा ।

मृत्सा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स्त्री०] दे० 'मृत्सना' ।

मृत्सन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घूल [को०] ।

मृत्सना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ भूमि । मिट्टी । २ अच्छी भूमि या मिट्टी । ३ एक प्रकार की सुवासित मिट्टी । ४ स्फटिक मिट्टी की पट्टी । ५ छेनी । टाँकी [को०] ।

मृथा(पुं)†—क्रि० वि० १ दे० 'वृथा' । २ दे० 'मृषा' ।

मृद्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मृत्तिका । मिट्टी ।

विशेष—इस शब्द का अधिकतर व्यवहार समस्त पद बनाने में होता है ।

मृदकुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृदकुर] हारीत पक्षी [को०] ।

मृदग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृदङ्ग] १ एक प्रकार का बाजा जो ढोलक से कुछ लवा होता है । तबले की तरह इसके दोनों मुँहों चमड़े से मढ़े जाते हैं । इसका ढाँचा पक्षी मिट्टी का होता है, इससे यह मृदग कहलाता है । उ०—(क) बाजहि ताल मृदग अनूपा । सोइ रव मधुर मुनहु सुरभूपा ।—तुलसी (शब्द०) ।
(ख) काहू बीन गहा कर काहू नाद मृदग । सब दिन अनंद वधावा रहस कूद इक सग ।—जायसी (शब्द०) ।

यौ०—मृदगवेत्तु = धर्मराज युधिष्ठिर । मृदंगफल । मृदगफलिनी ।
मृदगवादक = मृदग बजानेवाला ।

२ वाँस । ३ निनाद । च्वनि [को०] ।

मृदंगफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृदङ्गफल] कटहल । पनस ।

मृदगफलिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृदगफलिनी] तरौई । तोरई ।

मृदगी^१—वि० [सं० मृदङ्ग + ई (प्रत्यय)] मृदग बजानेवाला या बजाने का पेशा करनेवाला । उ०—कहाँ है रबावी मृदगी सितारी । कहाँ है गवँए कहाँ नृत्यकारी ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ७०२ ।

मृदगी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृदङ्गी] तरौई । तोरई ।

मृदव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नाटक की भाषा में गुण के साथ दोष के वैपम्य का प्रदर्शन (नाट्यशास्त्र) ।

मृदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मृत्तिका । मिट्टी ।

मृदाकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ब्रज ।

मृदित—वि० [सं०] मृदित [को०] ।

मृदिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. अच्छी मिट्टी । २. गोपीचंदन ।

मृदु^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मृद्वी] १ जो छूने में कड़ा न हो । कोमल । मुलायम । नरम । २ जो सुनने में कर्कश या अप्रिय न हो । जैसे, मृदु वचन । ३ सुकुमार । नाजुक । ४ जो तीव्र या वेगयुक्त न हो । धीमा । म द । जैसे, मृदु स्वर, मृदु गति ।

मृदु^२—सञ्ज्ञा स्त्री० १. घृतकुमारी । धीकुआँर । २ सफेद जातिपुष्प । जूही नामक फूल का पौधा ।

मृदुकंटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृदुकण्टक] कटसरैया ।

मृदुका(पुं)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृद्वीका] दाख । अमूर । उ०—स्वादी मृदुका मधुरसा काल मेखला होइ । अनेकार्थ०, पृ० ३७ ।

मृदुकृष्णायस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सीसा घातु [को०] ।

मृदुकोष्ठ—वि० [सं०] जिसे हलके जुलाब या विरेचन से दस्त आ जाय [को०] ।

मृदुखुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घोड़ों के खुर का एक रोग ।

मृदुगाण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नक्षत्रों का एक गण जिसमें चित्रा, अनुराधा मृगशिरा और रेवती, ये चार नक्षत्र हैं ।

मृदुगमन—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मृदुगमना] म दगामी । धीमी चालवाला ।

मृदुगमना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हसी । हसिनी [को०] ।

मृदुचर्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृदुचर्मिन्] भोजपत्र ।

मृदुच्छद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भोजपत्र का पेड़ । २ पीलू वृक्ष । ३ लाल लजालू ।

मृदुता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कोमलता । मुलायमियत । २. धीमापन । म दता ।

मृदुतीक्ष्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कृत्तिका और विशाखा नक्षत्र ।

मृदुताल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीताल का वृक्ष [को०] ।

मृदुत्वक्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृदुत्वच्] भोजपत्र ।

मृदुदर्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सफेद कुश ।

मृदुन्नक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ण । सोना [को०] ।

मृदुपचक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैत । नरकुल [को०] ।

मृदुपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिरीष वृक्ष । सिरिस ।

मृदुफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मधु नारिकेल । नारियल । २ विककत का वृक्ष ।

मृदुभाषी—वि० [सं० मृदुभाषिन्] [वि० स्त्री० मृदुभाषिणी] मधुर या मीठा बोलनेवाला ।

मृदुरोमक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खरगोश । शशक [को०] ।
 मृदुरोमा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृदुरोमन्] खरगोश [को०] ।
 मृदुल^१—[सं०] १ कोमल । मुलायम । नरम । उ०—सुमन सेज
 ते लगि रहे सु दरि तेरे गात । सुरभित हू मिडि कै भए मृदुल
 नाल जलजात ।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०) । २ कोमलहृदय ।
 दयामय । कृपालु । उ०—मृदुल चित अजित कृत गरलपान ।
 —तुलसी (शब्द०) । ३ नाशुक । सुकुमार । उ०—मृदुल
 मनोहर सु दर गाता । सहत दुसह बन आतप वाता ।—तुलसी
 (शब्द०) ।
 मृदुल^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जल । पानी । २ अंजीर ।
 मृदुलाई^(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृदुल + हिं० अई (प्रत्य०)] मार्दव ।
 मृदुता । कोमलता ।
 मृदुसूर्य—वि० पुं० [सं०] जिस दिन सूर्य तीक्ष्णता से न चमकता
 हो [को०] ।
 मृदुरपर्श—वि० [सं०] जो छूने में मुलायम हो ।
 मृदुहृदय—वि० [सं०] कोमलहृदय । दयावान ।
 मृदूत्पल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नीलोत्पल । नील पद्म [को०] ।
 मृद्वी^१—वि० स्त्री० [सं०] १ मृदु । कोमल । २ कोमलागी ।
 मृद्वी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० कपिल द्राक्षा । सफेद अगूर ।
 मृद्वीका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कपिल द्राक्षा । सफेद अगूर । २
 अगूर की शराब । द्राक्षासव ।
 मृद्वीकासव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] द्राक्षासव । अगूर की शराब ।
 मृध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] युद्ध । लड़ाई । उ०—प्रायोचन, रन, आजि,
 मृध, आह्वय, सग, समीक ।—नद० ग्रं०, पृ० ६७ ।
 मृनाल^(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृणाल] दे० 'मृणाल' ।
 मृन्मय^(पु)—वि० [सं०] मिट्टी का बना हुआ ।
 मृन्मरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पापाण । प्रस्तर [को०] ।
 मृन्मात्र—वि० [सं०] केवल मिट्टी का । उ०—मर्त्य हम, केवल क्षर
 मृन्मात्र ।—मधुज्वाल, पृ० ३४ ।
 मृन्मान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कूआँ । कूप ।
 मृपा^१—अव्य० [सं०] झूठमूठ । व्यर्थ । उ०—मूढ मृपा का करसि
 बढाई ।—मानस, ५।५६ ।
 मृपा^२—वि० असत्य । झूठ ।
 मृपाज्ञान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] झूठ वा असत्य ज्ञान । अज्ञान [को०] ।
 मृपात्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिथ्यात्व । असत्यता । झूठपन ।
 मृपाध्यायी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृपाध्यायिन्] एक प्रकार का सारस [को०] ।
 मृपाभायी—वि० [सं० मृपाभाविन्] झूठ बोलनेवाला । असत्यवक्ता ।
 मृपार्थक—वि० [सं०] असभव । झूठा । जैसे, मृपार्थक वचन [को०] ।
 मृपालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घाम का पैड़ ।
 विशेष—घाम के वृक्ष में थोड़े ही दिन मजरियों का अलंकार
 रहता है, इसी से इसका यह नाम रखा गया है ।
 मृपावाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ झूठ बोलना । २ झूठी बात ।
 असत्य वचन ।

मृपावादी—वि० [सं० मृपावादिन्] [वि० स्त्री० मृपावादिनी] असत्य-
 वादी । झूठा । मिथ्याभाषी ।
 मृष्ट^१—वि० [सं०] शोधित ।
 मृष्ट^२—सञ्ज्ञा पुं० मिर्च ।
 मृष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] परिशुद्धि । शोधन ।
 मेठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेण्ठ] हस्तिक । हाथी रखनेवाला [को०] ।
 मेंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेण्ड] दे० 'मेठ' ।
 मेढ, मेढक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेण्ड, मेण्डक] मेडा । मेप [को०] ।
 मेंढ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेण्ड] दे० 'मेढ' [को०] ।
 मेंधिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेन्धिका] दे० 'मेहदी' ।
 मेंधा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेन्धी] दे० 'मेहदी' ।
 मेबर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मेम्बर] किसी सभा, समाज या गोष्ठी में
 ममिलित व्यक्ति । सभासद । सदस्य । जैसे, काउंसिल का
 मेबर ।
 मेंवरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मेम्बर + हिं० ई (प्रत्य०)] मेंबर का
 पद । सदस्यता ।
 में^१—अव्य० [सं० मध्ये, प्रा० मज्जे, मज्झि, पुं० हिं० मँहँ, माँह] अर्ध-
 करण कारक का चिह्न जो किसी शब्द के आगे लगकर उसके
 भीतर, उसके बीच या उसके चारों ओर होना सूचित करता
 है । आघार या अवस्थान सूचक शब्द । जैसे,—वह घर में बठा
 है । घडे में पानी है । वह चार दिनों में आवेगा । पंर में मौज
 या जूता पहनना ।
 में^२—सञ्ज्ञा पुं० [अनु०] बकरी के बोलने का शब्द ।
 में^(पु)^३—सर्व० [सं० स्मिन्, प्रा० स्मि, अप० मँहँ] दे० 'मैं' । उ०—
 (क) ती में डोटा नद कौ, (जो) पाँइन परि परि देँ ।—
 नद० ग्रं०, पृ० १६५ । (ख) अपनी माते अनुसार श्री गीता
 पदार्थ बोधिनी वचनिका भाषा में ने करी है ।—पौदार अभि०
 ग्रं०, पृ० ५२० ।
 मेंगनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मीगा ?] ऐसे पशुओं की विष्टा जो छोटी
 छोटी गोलियों के आकार में होती है । लेंडी । जैसे, बकरी की
 मेंगनी, ऊँट की मेंगनी ।
 मेंड—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० डोंड का अनु० या सं० मण्डल] १ ऊँची
 उठी हुई तग जमीन जो दूर तक लकीर के रूप में चली गई
 हो । २ दो खेतों के बीच का कुछ ऊँची उठी हुई संकरी जमीन
 जिसपर लोग आते जाते हैं । डाँड । पगडंडी ।
 यौ०—डाँडमेंड = कूल । किनारा । वार पार । उ०—पवनहुँ ते
 मन चाँड, मन ते आसु उतावला । कतहूँ मेठ न डाँड, मुहमद बहु
 विस्तार सो ।—जायसी (शब्द०) ।
 मेंडकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेडकी] दे० 'मेड़की' । उ०—महातम
 जान नहीं मेड़की गगा बीच । पलटू सबद लग नहीं कतनी रहै
 नगीच ।—पलटू, भा० ३, पृ० १०० ।
 मेंडरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मण्डल] १ घेरकर बनाया हुआ कर्ष
 गोल चक्कर । २. एँड्रा । गेडूरी ।

मैंडराना—क्रि० अ० [सं० मण्डल] दे० 'मैंडराना' । उ०—
राजपखि तेहि पर मेडराही । सहस कोस तिन्ह कै परछाही ।—
जायसी (शब्द०) ।

मैंडराना—क्रि० म० घेरकर गोल चक्र बनाना । मेडरा बनाना ।

मैंडी—सब्जा स्त्री० [दश०] ऊँची जगह । महल । प्रासाद । उ०—ऊँची
मैंडी कीन काज की ब्रज वसिबो भलो छाज की ।
छीत०, पृ० ८० ।

मैंडक—सब्जा पुं० [सं० मण्डक] [स्त्री० मैंडकी] दे० 'मेढक' ।

मैंह—सब्जा पुं० [सं० मेघ, प्रा० मेह] वर्षा । झडी ।

मैंहदो—सब्जा स्त्री० [सं० मेन्धिफा] दे० 'मेहँदी' ।

मेघ—सब्जा पुं० [सं० मेघ, प्रा० मेह] मेघ । बादल । उ०—नन्द भवज
दोळ भेट्टे रे जैसे साँमन को ए मेउ ।—पोद्दार अभि० ग्र०,
पृ० ६३३ ।

मेक—सब्जा पुं० [सं०] अज । छाग । बकरी ।

मेक—सब्जा पुं० [सं० एक, दश०] दे० 'एक' । उ०—मेक सपत
समत मैं, पंतीसँ जसराज । गौ हरिधाम जिहान तज, हिंदुमयान
जिहाज । रा० रू०, पृ० १७ ।

मेकदार—सब्जा पुं० [अ० मिक्कदार] परिमाण । मात्रा । अदाज ।

मेकल—सब्जा पुं० [सं०] विंध्य पर्वत का एक भाग जो रीवा राज्य
के अतर्गत है और जिसमें अमरकटक है । इसी पर्वत से नर्मदा
नदी निकली है ।

विशेष—यह मेखला के आकार का है, इसी से इसे मेखल भी
कहते हैं ।

मेकलकन्यका—सब्जा स्त्री० [सं०] नर्मदा नदी ।

मेकलसुता—सब्जा स्त्री० [सं०] नर्मदा नदी । उ०—मेकल सुता
गोदावरि घन्य ।—मानस, ।

मेकलाद्रि—सब्जा पुं० [सं०] मेकल पर्वत ।

यौ०—मेकलाद्रिजा = नर्मदा नदी ।

मेकला—सब्जा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञपात्र ।

विशेष—यह चम्मच या करछी के आकार का और चार अंगुल
चाँडा तथा आगे की ओर निकला हुआ होता है ।

मेख—सब्जा पुं० [सं० मेघ] दे० 'मप' ।

मेख—सब्जा स्त्री० [प्रा० मेख] जमीन में गाडने के लिये एक और
नुकीली गढा हुई लकडा । खूँटा । खूँटी । उ०—उन्हे यो
हतज्ञान सा देख, ठाकली सी छाती पर मेख ।—साकेत०,
पृ० ४८ । २ कील । कंटिया ।

क्रि० प्र०—डखाडना ।—गाडना ।—ठोकना ।—प्रारना ।

मुहा०—मेख ठोकना = (१) हाथ पंरं मे कील ठोककर कही
। स्थर कर देना । बहुत कठोर दड देना । (इस प्रकार का
दड पहले प्रचलित था) । (२) हराना । दवाना । जेर करना ।
तोप के मुँह में मेख ठोकना = तोप का मुँह बंद करके उसे
निकम्मा कर देना । मेख मारना = (१) कील ठोककर चलना

या हिलना बंद कर देना । (२) कोई ऐसी बात बोल देना
जिससे किसी का होता हुआ काम न हो । भाँजी मारना ।
(३) चलते हुए काम में रुकावट डालना ।

२ कील । काँटा । ३ लकडी की फट्टी जो किसी छेद में वैठाई
हुई वस्तु को ढीली होने से रोकने के लिये इधर उधर पेसी
जाय । पच्चड । ४ घोडे का लंगडापन जो नाल जडते समय
किसी कील के ऊपर टूक जाने से होता है ।

मेखडा—सब्जा स्त्री० [सं० मेखला] बाँम की वह फट्टी जिसे डले या
भावे के मुँह पर गोल घेरा बनाकर बाँध देते हैं ।

मेखल—सब्जा स्त्री० [सं० मेखला] १ करघनी । किंकिणी । उ०—
कटि मेखल वर हारश्रीव दइ रचिर वाहु भूषन पहिराए ।
—तुलसी (शब्द०) । २ वह वस्तु जो किसी दूसरी वस्तु के
मध्य भाग में उसे चारों ओर से घेरे हो । वि० दे० 'मेखला' ।

मेखल—सब्जा पुं० [सं०] दे० 'मेकल' [को०] ।

मेखला—सब्जा स्त्री० [सं०] १ वह वस्तु जो किसी दूसरी वस्तु के
मध्य भाग में उसे चारों ओर से घेरे हुए पडी ही । २ सिकडी
या माला के आकार का एक गहना जो कमर को घेरकर
पहना जाता है । करघनी । तागडी । किंकिणी ।

पर्या०—ससकी । काची । रशना । रसना । कर्षा । कलाप ।

३ कमर में लपेटकर पहनने का सूत या डोरी । करघनी । जैसे,
मुजमेखला । ४ कोई मडलाकार वस्तु । गोल घेरा । मडल ।
मँडरा । ५ पेटी या कमरबंद जिसमें तलवार बाँधी जाती
है । ६ तलवार की मूठ (को०) । ७ डडे मूसल आदि के छोर
पर या औजारों के मूठ पर लगा हुआ लोहे आदि का घेर-
दार बंद । सामी । साम । ७ पर्वत का मध्यभाग । ८ नर्मदा
नदी । ९ पृथ्विपर्या । ११ हौमकुड के ऊपर चारों ओर
बना हुआ मिट्टी का घेरा । १२ यज्ञवेष्टन सूत्र । १३ कपडे
का टुकडा जो साधु लोग गले में डाले रहते हैं । कफनी ।
अलफा । १४ घोडे का तग । जीन कसने का तस्मा (को०) ।

मेखलापद—सब्जा पुं० [सं०] श्रोणि । नितब । चूतड [को०] ।

मेखलाल—सब्जा पुं० [सं०] शिव [को०] ।

मेखलित—सब्जा स्त्री० [सं०] मेखलायुक्त । चारों ओर से मेखला
की तरह घेरनेवाला । उ०—साथ ही इन सबके केंद्रीय मेख
को मेखलित करनेवाला इलावृत्त भी एक स्वतंत्र वर्ष बन गया
है ।—सपूर्णा अभि० ग्र० पृ० १७० ।

मेखली—सब्जा स्त्री० [सं० मेखला या मेखलित] १ एक प्रकार का
पहनावा जिसमें मे डालने से पट और पीठ ढँकी रहती है
और दोनों हाथ खुले रहते हैं । यह देखने में तिकोना होता है
और ऊपर चौडा तथा नुकीला होता है । इसे देवमूर्तियों को
रामलीला, रासलीला आदि में पहनाते हैं । २ करघनी । कटि-
वध । उ०—कवहुँक अपर खिरनही भावत कवहुँ मेखली उदर
समानो ।—सूर (शब्द०) ।

मेखली—सब्जा पुं० [सं० मेखलित्] १. शिव । २. बडु । ब्रह्मचारी ।

मेखली—वि० मेखला धारण करनेवाला [को०] ।

मैखवाँ—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मैख + हिं० वा (प्रत्य०)] मैख । खूँटा ।
विशेष—सवारी लेकर चलते वक्त जब रास्ते में आगे खूँटा मिलता
तब है, उससे वचने के लिये अगला कहार यह शब्द बोलता है ।

मैखी—वि० [फ्रा० मैखी] जिसमें मैख से छेद किया गया हो ।

यौ०—मैखी रुपया = वह रुपया जिसमें छेद करके चाँदी निकाल
ली गई हो और सीसा भर दिया गया हो ।

मेग—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मेग । तुल० सं० मेघ] मेघ । बादल । घटा ।
उ०—होर शोर भी भाँत भाँत का था । बहु भाँत जो मेग
साँत का था ।—दक्खिनी०, पृ० १६६ ।

मेगजीन—सञ्ज्ञा पुं० [म० मेगजीन] १ वह स्थान जहाँ सेना के
लिये बारूद रखी जाती है । बारूदखाना । २ सामयिक पत्र,
विशेषतः मासिकपत्र जिसमें लेख छपते हैं ।

मेगनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] दे० 'मेगनी' ।

मेगराँ—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मेग + राज० रा (प्रत्य०)] घटा । मेघ ।
बादल । उ०—खुशी का मेगराँ वाँ बरसता ।—दक्खिनी०,
पृ० २७३ ।

मेघ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ आकाश में घनीभूत जलवाष्प जिससे वर्षा
होती है । बादल । उ०—कवहुँ प्रबल चल मास्त जहँ तहँ
मेघ उड़ाहि ।—तुलसी (शब्द०) । २ सर्गांत में छहूँ रागो
में से एक ।

विशेष—हनुमत् के मत से यह राग ब्रह्मा के मस्तक से उत्पन्न
है और किसी के मत से आकाश से इसकी उत्पत्ति है । यह
श्रोत्रव जाति का राग है, और इसमें घ नि सा रे ग, ये पाँच
स्वर लगते हैं । हनुमत् के मत से इसका सरगम इस प्रकार
है—घ नि सा रे ग म प ध । वर्षाकाल में रात के पिछले
पहर इसे गाना चाहिए । इसकी स्त्रियाँ या रागिनियाँ हनुमत्
के मत से मल्लारी, सोरठी, सारंगी वा हसिका और मधुमाधवी
हैं । अन्य मत से ये रागिनियाँ हैं—मल्लारी, देशी, सोरठ,
नाटिका, तरुणी और कादबिनी । इसके पुत्र—मल्लार, गीर,
कर्णाट, जलधर, मालाहक, तैलग, कमल, कुसुम, मेघनाट,
सामत, लूम, भूगति, नाट और बगाल हैं ।

३ मुस्तक । मोथा । ४ तडुलीय शाक । ५ राक्षस । ६ आधिक्य ।
बहुलता ।

मेघकफ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शोला । करका । वर्षोपल ।

मेघकर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] स्कंदानुचर मातृभेद ।

मेघकाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वर्षा ऋतु ।

मेघगर्जन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बादल की गरज ।

विशेष—मेघगर्जन के समय वेदाध्ययन निषिद्ध है । उपनयन के
दिन यदि बादल गरजे, तो उपनयन टाल देना चाहिए ।

मेघचिंतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघचिन्तक] चातक [को०] ।

मेघज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. बड़ा मोती । २. मेघजन्य वस्तु [को०] ।

मेघजाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मेघसमूह । घनघटा । २. अन्नक ।
अबरक [को०] ।

मेघजीवक, मेघजीवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चालक ।

मेघज्योति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेघज्योतिस्] वज्राग्नि । विजली ।

मेघडवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघडम्बर] १. मेघगर्जन । २. बड़ा
चढोवा । बड़ा शामियाना । दल बादल । ३. एक प्रकार का
छत्र । उ०—छत्र मेघडवर सिरधारी । सोइ जनु जलद घटा
श्रतिकारी ।—मानम, ६।१३ ।

मेघडवर रस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघडम्बर रस] एक रसोपघ जो श्वास
और हिचकी के रोग में दी जाती है ।

विशेष—बराबर बराबर पारे और गधक की कजली चौलाई के
रस में पाँच दिन खरल करके मजबूत घरिया में रखकर 'वालुका
यत्र' से एक दिन भर की आँच देने से यह बनता है । इसकी
मात्रा ६ रत्ती है ।

मेघदीप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विजली [को०] ।

मेघदुदुभि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघदुदुभि] १. मेघगर्जन । २. एक
राक्षस का नाम ।

मेघदूत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाकवि कालिदामप्रणीत एक खड्काव्य ।

विशेष—इसमें कर्तव्यच्युति के कारण स्वामी के शाप से प्रिय-
वियुक्त एक विरही यक्ष ने मेघ को दूत बनाकर अपनी प्रिया के
पास सदेश भेजा है ।

मेघद्वार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आकाश । अतरिक्त ।

मेघधनु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इन्द्रधनुष ।

मेघनाट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक राग जो मेघ राग का पुत्र माना
जाता है ।

मेघनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इन्द्र ।

मेघनाद—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १. मेघ का गर्जन । विजली की कड़क ।
२. वरुण । ३. रावण का पुत्र इन्द्रजित् जो लक्ष्मण के हाथ से
भारा गया था । ४. पलाश का पेड़ । ५. हरिवंश के अनुसार
एक दानव । ६. मयूर । मोर । ७. बिडाल । विल्ली ।

यौ०—मेघनादजित् = लक्ष्मण जिन्होंने मेघनाद को मारा था ।
मेघनादबन्ध = माइकेल मधुसूदन दत्त द्वारा रचित बंगला भाषा
का प्रसिद्ध महाकाव्य । मेघनादानुलासक, मेघनादानुनासी =
मयूर । मोर ।

मेघनादमूल—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चौलाई की जड़ ।

मेघनाद रस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक रसोपघ जो ज्वर में दी जाती है ।

विशेष—एक एक तोला रूपा, काँसा और ताँबा तितराज की जड़
के काढ़े में डालकर छह बार गजपुट पाक करने से यह बनता
है । इसकी मात्रा पान के साथ दो रत्ती है ।

मेघनामा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघनामन्] एक प्रकार की घास ।
मुस्तक [को०] ।

मेघनिर्घोष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बादलो का गरजना ।

मेघनीलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तालीश वृक्ष ।

मेघपटल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बादल की घटा ।

मेघपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बादलो का राजा या स्वामी, इन्द्र ।

मैघपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ इंद्र का घोडा । २. श्रीकृष्ण के रथ के चार घोडो मे से एक । उ०—शौव्य, वलाहक, मैघपुष्प सुग्रीव वाजीरथ ।—गोपाल (शब्द०) । ३ वर्षा का जल । ४ वकरे का सींग । ५ मोथा मुस्तक ।

मैघपुष्पा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. जल । २ वेंत । ३ श्रोला ।

मैघप्रसर, मैघप्रसव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जल [को०] ।

मैघपृष्ठि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] क्रींच द्वीप के एक रण्ड का नाम ।

मैघफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मैघ के वर्षा द्वारा वर्ष के शुभाशुभ फल का निर्याय । २ विककत वृक्ष ।

मैघभूति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वज्र । विजली ।

मैघमंडल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघमण्डल] १ मैघसमूह । २ आकाश ।

मैघमल्लार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सपूरा जाति का एक राग जो मैघ राग और उसकी पत्नी मल्लारी के योग से बनता है । इसमे सब शुद्ध स्वर लगते हैं ।

मैघमाल—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बादलों की घटा । उ०—माली मैघमाल बनपाल विकराल भट्ट नीके सब काल सींचे सुधासार नीर के ।—तुलसी (शब्द०) ।

मैघमाल—सञ्ज्ञा पुं० १ रभा (रमा ?) के गर्भ से उत्पन्न कल्कि के पुत्र का नाम । (कल्किपुराण) । २ प्लक्ष द्वीप का एक पर्वत । ३ एक राक्षस का नाम ।

मैघमाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ बादलो की घटा । कादविना । २ स्कद की अनुचरी एक मातृका का नाम ।

मैघमाली—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघमालिन्] १ स्कद का एक अनुचर । २ एक असुर ।

मैघमूर्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] विजली ।

मैघमूर्ति—वि० बादलो से घिरा या ढका हुआ ।

मैघमदुर—वि० [सं०] मैघ के कारण चिकना । बादलों मे स्निग्ध ।

मैघमोदिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जामुन का फल या वृक्ष [को०] ।

मैघयोनि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ बूझा । २ कुहरा ।

मैघरव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मैघगर्जन ।

मैघराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुष्करावर्तक आदि मैघो के नायक इन्द्र ।

मैघराव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का जलपत्नी [को०] ।

मैघरेखा, मैघलेखा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बादलो की कतार । मैघ पात्त [को०] ।

मैघवर्ण—वि० [सं०] श्याम वर्ण का । बादल के समान रगवाला ।

मैघवर्णा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नील का पीया ।

मैघवर्त, मैघवर्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्रलय काल के मैघो मे से एक का नाम । उ०—मुनि मैघवर्तक साजि सैन लै आए । जनवर्त वारिवर्त पवनवर्त वज्रवर्त आशिवर्तक जलद संग लाए ।—सूर । (शब्द०) । २ सवर्त ।

मैघवर्त्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघवर्त्मन्] बादलो का पथ । मैघपथ । आकाश ।

मैघवह्नि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मैघज्योति । वज्र की अग्नि । विष्ट [को०] ।

मैघवाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मैघ + वाई (प्रत्य०)] बादल की घटा । उ०—चली सैन्य कछु वरनि न जाई । मनहुं उठो पूरव मैघवाई ।—रघुगज (शब्द०) ।

मैघवान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पश्चिम दिशा का एक पर्वत । (वृहत्सहिता) ।

मैघवाहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ इन्द्र । २ शिव (ज्ञे०) । ३ एक वीर्य राजा का नाम ।

मैघविस्फूर्जित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मैघ गरजन । मैघ का गडगडाना । २ एक छद । ३ 'मैघविस्फूर्जिता' [को०] ।

मैघविस्फूर्जिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक वर्षावृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण मे यगण, मगण, नगण, सगण, टगण, रगण, और एक गुरु होता है ।

मैघवेश्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघवेश्मन्] आकाश [को०] ।

मैघव्रती—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघव्रतिन्] चातक ।

मैघश्याम—वि० [सं०] बादलो का सा काला (राम और श्रीकृष्ण) ।

मैघसघात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघसट्घात] बादला का जमावडा ।

मैघसार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चीन कर्पूर । चीनिया कपूर [को०] ।

मैघसुहृद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मयूर । मोर [को०] ।

मैघस्तनित—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] विजली ।

यौ० - मैघस्तनितोद्भव = विककत वृक्ष ।

मैघस्वन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बादलो का शब्द । मैघो का गर्जन ।

मैघस्वन—वि० बादल की तरह गरजनेवाला ।

मैघस्वनाङ्कुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघस्वनाङ्कुर] बँदूर्य मणि । विल्लीर ।

विशेष—ऐसा प्रवाद है कि बादल के गरजने पर बँदूर्य मणि की उत्पत्ति होती है ।

मैघस्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम ।

मैघात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघान्त] वर्षा का अत । शरदकाल [को०] ।

मैघा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघ (= बादल के अान पर जो दिखाई दे)] मेढक । मडक ।

मैघागम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वर्षाकाल । २. धारा कदव ।

मैघाच्छन्न—वि० [सं०] बादलो से ढका हुआ ।

मैघाच्छादित—वि० [सं०] बादला से ढका हुआ । बादलो से छाया हुआ ।

मैघाटोप—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघ + आटोप] घटाटाप ।

मैघाढवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघ + आढवर] १ मैघगर्जन । बादल की गरज । २ बादल का फोलाव । बादला का घटाटोप । उ०—ना में मैघाढवर भीजो । शीत काल जन में नहिं धीजो ।—सुंदर ग्रं०, भा० १, पृ० ३०५ ।

मैघाढमर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मैघ + ढमर] एक प्रकार का छत्र ।

मेघडवर । उ०—मेघाडंभर सिर छत्र ठयो । देश मालगिर चालियो राई ।—वी० रासो, पृ० १३ ।

मेघानन्द—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघानन्द] १ मोर । मयूर । २ वताका । वगला ।

मेघारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघ + अरि] मेघ का शत्रु, वायु [को०] ।

मेघावरि(पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेघावरि] वादलो का घटा । मघ-पक्ति । उ०—केश मेघावरि सिर ता पाई । चमकहि दमन बीजु कं नाई ।—जायसी (शब्द०) ।

मेघास्थि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घोला ।

मेघोदय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बादल धिरना । घटा का उठना ।

यौ०—मेघोदयकाल = वर्षा ऋतु । वरमात ।

मेघोर्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघवर्ण] मेघवर्ण या रगवाला कपड़ा । दे० 'मेघोर्ता' ।

मेघर्ष—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मञ्च] १ पयक । पलग । २ बँत ती धुनी हुई खाट ।

मेघर्ष—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेघ] दे० 'मेघ' ।

मेघर्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आसाम की एक पहाड़ी जाति ।

मेघक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अघकार । अघिरा । २ नीलाजन । सुरमा । ३ मोर की चाद्रीका । ४ घूम । ५ मेघ । ६ शोभाजन । सहिजन । ७ पीतशाल । पियासाल । ८ काला नमक । ९ विच्छू की एक छोटी जाति ।

मेघक—वि० श्यामल । काला । स्याह । उ०—चोकने मेघक रुचिर, सुकु चज मुचेत केम ।—घानद, पृ० २६६ ।

यौ०—मेघकगल = मोर । मयूर । मेघकपगा = यमुना नदी ।

मेघकता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कालापन । श्यामलता ।

मेघकताई(पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेघकता + ई (प्रत्य०)] दे० 'मेघकता' । उ०—कह प्रभु ससि महु मेघकताई । कहहु काह निज निज मति भाई ।—मानस, ६।१२ ।

मेघकित—वि० [सं०] गहरे नीले रगवाला [को०] ।

मेघटिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खराब तेल की महक या गंध [को०] ।

मेछ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० म्लेच्छ, प्रा० मिच्छ, मेच्छ], अन्तर्यं । म्लेच्छ । विदेशी । उ०—(क) जल थलति थलति करि जल प्रमान । उतरयी मेछ जनु मध्य भान ।—पृ० रा०, १६८४ । (ख) कं भजी मेछान दल, कं रजौ पुरसान ।—पृ० रा०, १२।११६ ।

मेज—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की पहाड़ी घास जो हिमालय पर ५००० फुट की ऊँचाई तक पाई जाती है और जिसे घोड़े और चोपाए वड़े चाव से खाते हैं ।

मेज—सञ्ज्ञा स्त्री० [पुर्त० > फ्रा० मेज़] लंबी चौड़ी धीर ऊँची षोकी जो बँटे हुए आदमी के सामने उसपर रखकर खाना खाने, या लिखने पढ़ने और कोई काम करने के लिये रखी जाती है । २ दावत का सामान । भोजन की सामग्री ।

मेजपोश—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मेज़पोश] चीनी या मेज पर बिछानेवाला कपड़ा ।

मेजवान सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मेज़वान] भोजन कराने या आतिथ्य करनेवाला । मेहमानदार । 'मेहमान' का उगना । उ०—१७ मर्द को रामपुर और अपन मेजवान ने विदाड ले ली ।—किन्नर०, पृ० २८ ।

मेजवानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० मेज़वानी] १. मेजवान का भाव या धर्म । २. वे ग्राह्य पदार्थ जो रात आने पर पहले पहल बना पक्ष से प्रगतिवा ने लिये भेजे जाते हैं । ३. भाज । दावन [को०] ।

मेजर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] फौज का एक अफसर । कप्तान से ऊँचा और लेफ्टिनेंट कर्नल से नीचे का अफसर ।

मेजर जनरल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] फौज का एक अफसर जिसका दर्जा लेफ्टिनेंट जनरल के बाद ही है ।

मेजा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मञ्ज, हिं० मेञ्ज, पू० हिं० मेञ्ज] मेढक । मट्ठक । उ०—केमट टूँने सो मुनत गवेजा । समुद न जानु पुर्जा कर मेजा ।—जायसी (शब्द०) ।

मेजारिटो—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] बहुमरुवा । प्राये मे अधिक पत्र । अधिकारा । जैसे, मेजारिटो रिपोर्ट ।

मेजुक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] मेजा । मेढक ।

मेट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सफेदी किया हुआ मकान जिसमें कई खड वा मरातिव हो [को०] ।

मेट—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. मजदूरी का अफसर या मरदार । टडल । जमादार । २. जहाज का एक कर्मचारी जिसका काम जहाज के अफसर की महावता करना है । ३. सर्गो । साथी । जैसे, क्लाम मेट ।

मेटक(पुं०)—सञ्ज्ञा पुं० [देशी √मिट, मेट, हिं० मेटना + सं० क (प्रत्य०)] नाशक । मिटानेवाला । उ०—देव ज्ञ का न हिय हुलसा तुलमा वन मे कुलसीउ को मेटक ।—देव (शब्द०) ।

मेटनहार, मेटनहारा(पुं०)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मेटना + हार (प्रत्य०)] मिटानेवाला । दूर करनेवाला । हटानेवाला । उ०—बाधे कर लिखा को मेटनहारा ।—तुलसी (शब्द०) ।

मेटना—क्रि० सं० [सं० मृष्ट (= साफ किया हुआ), प्रा० मिष्ट + हिं० ना (प्रत्य०)] अथवा देशी √मिट्ट, मेट + हिं० ना (प्रत्य०)] १ धिसकर साफ करना । मिटाना । २ दूर करना । न रहने देना । ३ नष्ट करना । उ०—तिरु वेला तारण तरण गिर-धारी गोपाल । मिलियो उर भ्रम मेटवा, हिडु ध्रम रखवाल ।—रा० रू०, पृ० ७० । दे० 'मिटाना' ।

मेटनिटी हास्पिटल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] प्रसवशाला । प्रसूति अस्पताल । उ०—मैंने प्रस्ताव रखा कि उस कार पर विठाकर किसी अच्छे मेटनिटी हास्पिटल में पहुँचा दूँ ।—जिप्सी, पृ० ४६० ।

मेटा—वि० [सं० मृष्ट, हिं० मिटाना] मेटक । मिटानेवाला । उ०—घनमद अध नद को बेटा । सो भयी हमरे मल को मेटा ।—नद० अ०, पृ० ३०७ ।

मेटां—सज्ञा पुं [हि०, सं० मृद्भाण्ड] भाँडा । मिट्टी का बना भाँडा या वर्तन ।

मेटियां—सज्ञा स्त्री [सं० मृत्कांस्य, हि० मटका] घड़े से छोटा मिट्टी का वर्तन जिसमें दूध, दही आदि रखते हैं । मटकी ।

मेटीं—सज्ञा स्त्री [हि०] दे० 'मेटिया' ।

मेटीरियलिस्ट—सज्ञा पुं [अ०] भौतिकवादी ।

मेटुकिया(७)ं—सज्ञा स्त्री [हि०] दे० 'मटकी' । उ०—भम मेटुकिया सिर के ऊपर सो मेटुकी पटकी।—कवीर श० भा०, ३, पृ० ७ ।

मेटुकी—सज्ञा स्त्री [हि०] दे० 'मटकी' ।

मेटुला—सज्ञा स्त्री [सं०] ग्रामलकी । ग्रामना ।

मेटुवां—वि० [हि० मेटना] किए हुए उपकार को न माननेवाला । कृतघ्न ।

मेठ'—सज्ञा पुं [सं०] १ हाथवान, फीलवान । २ मेप । मेढा (की०) ।

मेठां—सज्ञा पुं [अ० मेठ] दे० 'मेठ' ।

मेड़—सज्ञा पुं [सं० मण्डल या मिति (= ह्यत्ता, सोमा) या मृद्वन्ध या मृद्वण्ड] १. मिट्टी डालकर बनाया हुआ खेत या जमीन का घेरा । २. दो खेतों के बीच में हृद या सामा के रूप में बना हुआ रास्ता । उ०—धन सर्पति सबसे गेह नसौ नहि प्रग का मंड सो एड टल ।—भारतेंदु श०, भा० १, पृ० २३८ ।

क्रि० प्र०—डालना ।—बाँधना ।

थौं—मेडवदी ।

३ ऊंची लहर या तरंग । (लण०) ।

क्रि० प्र०—पडना ।

मेडक—सज्ञा पुं [सं० मण्डक] दे० 'मेढक' ।

मेडवदी—सज्ञा स्त्री [हि० मेड + प्रा० वद, या हि० दँवना] १ मिट्टी डालकर बनाया हुआ घेरा । २ इस प्रकार घेरा बनाना का क्रिया । हृदवदी ।

मेडरां—सज्ञा पुं [सं० मण्डक] चक्कर । मंडल । घेरा । उ०—एक कहा रजनीपति आही । मेडर प्रवाह न उका ताही ।—इंद्रा०, पृ० १२७ ।

मेडरा—सज्ञा पुं [सं० मण्डल, हि० मडरा] [स्त्री० मण्डरां] १ किसी गोल वस्तु का उभरा हुआ किनारा । २ किसी वस्तु का मडलाकार ढाँचा । जैसे, छाननी या खंजरी का मेडरा ।

मेडराना—क्रि० प्र० [सं० मण्डल] दे० 'मँडराना' ।

मेडरी—सज्ञा स्त्री [हि० मेडरा] १ किसी गोल या मडलाकार वस्तु का उभरा हुआ किनारा । २ मडलाकार वस्तु का ढाँचा । ३ चक्की के चारों ओर का वह स्थान जहाँ आटा पिसकर गिरता है ।

मेडल—सज्ञा पुं [अ०] खाँसी सोने आदि की वह विशेष प्रकार की मुद्रा जो कोई मच्छा या बड़ा काम करने अथवा विशेष निपुणता दिखाने पर किसी को दी जाय और जिसपर देनेवाले का नाम खुदा हो, तथा जिस बात के लिये वह दी गई हो उसका भी उल्लेख हो । तमगा । पदक । उ०—जितना जो बड़ा भेग मित्र

हो उसको उतना बटा मेटल और सितान दो ।—भारतेंदु श०, भा० १, पृ० ४७४ ।

मेडिकल—वि० [अ०] पाश्चत्य औषध और चिकित्सा में नद्वय रखनेवाला । डाक्टरों सन्ध । जैसे, मेडिकल कालेज, मेडिकल डिपार्ट-मेंट ।

मेडिया—सज्ञा स्त्री [सं० मण्डप, हि० मड़ी] मही । मडप । छोटा घर । उ०—कहा चुनार्वं मेडिया, चूना माटी लाय । मीच चुनैगी पापिनी, दौरि कै लंगी लाय ।—कवीर (शब्द०) ।

मेडिसिन—सज्ञा स्त्री [अ०] १ दवा । औषध । जैसे,—डाक्टर ने बहुत तेज मेडिसिन दे दा है । २ चिकित्सा विज्ञान ।

मेडां—सज्ञा स्त्री [सं० मण्डप या मड़ी] प्रागाद वा मरान की ऊपरी मजिल । श्रृंगालिका । दे० 'मेडी' । उ०—ऊन मियउ उत्तर दिसई मेडी ऊपर मेह । ते थिरहिण किम जीवसे, ज्यारा दूर सनेह ।—ढोला०, दू० ४२ ।

मेडक—सज्ञा पुं [सं० म डक] एक जल न्यल-चारी जंतु जो तीन चार श्रृंगुल से लेकर एक वर्लषत तक लम्बा होता है । यह पानी में तैरता है और जमीन पर कूद कूदकर चलता है । इसके चार पैर होते हैं जिनमें जालीदार पंजे होते हैं । यह फेफड़ों से साँस लेता है, मछलियों की तरह गनफड़ों में नहीं ।

पर्या०—मंडक । ददुर ।

विशेष—विकासक्रम में यह जलचारी और स्थलचारी जंतुओं के बीच का माना जाता है । मछलियों में ही क्रमशः विकास परपरानुसार जल-स्थल-चारी जंतुओं की उत्पत्ति हुई है, जिनमें सबसे अधिक ध्यान देने योग्य मेडक है । रीढ़वाले जंतुओं में जो उन्नत कोर्ट के हैं, वे फेफड़ों से साँस लेते हैं । पर जिनका ढाँचा सादा है और जिन्हें जल ही में रहना पडना है, वे गलफड़ों से साँस लेते हैं । मछली के ढाँचे से उन्नति करके मेडक का ढाँचा बना है, इसका आभाम मेडक की वृद्धि को देखने से मिलता है । श्रद्धे के फूटने पर मेडक का डिम्बकोट मछली के रूप में घाता है, जल ही में रहता है, गनफड़ों से साँस लेता है और घामपात खाता है । उसे लगी पूँछ होती है, पैर नहीं होते । कहीं कहीं उसे 'पुछमछली' भी कहते हैं । धीरे धीरे कायाकल्प करता हुआ वह उभयचारी जंतु का रूप प्राप्त करता है और जानीशर पंजों से युक्त पैरवाना, फेफड़े से साँस लेनेवाला और कीड़े पतंग खानेवाला मेडक हो जाता है ।

मेटकी—सज्ञा स्त्री [सं० मण्डकी] मटकी । मेडक को मादा ।

मुह०—मेडकी को लुका म होना = छोटे आदमी में बटा की बराबरी करने का होना ।

मेडा—सज्ञा पुं [सं० मेड मेण्ड, मेण्डक] [स्त्री० मेड] नींगवाना एक चौपाया जो लगभग टेढ़ा हाव ऊँचा और घने रोपा से उका होता है । मेप ।

विशेष—इनका रोपा बहुत गुनायम होता है और इन कटवाना है । इनका मादा और नींग बहुत पक्कूत होते हैं । वे खान में बड़े वेग से लठते हैं, हस्तों बहुत से शोतेन इन्हें खाने के

लिये पालते हैं। मादा भेंड जितनी ही सीधी होती है, उतने ही मेढे क्रोधी होते हैं। मेढे की एक जाति ऐसी होती है जिसकी पूंछ में चरबी का इतना अधिक सचय होता है कि वह चक्री के पाट की तरह फँलकर चौड़ी हो जाती है। ऐसा मेढा 'दुवा' कहलाता है। विशेष दे० 'भेड'।

मेढासिंगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेढश्चङ्गी] श्रौषध के रूप में प्रयुक्त एक झाड़ीदार लता।

विशेष—यह लता मध्यप्रदेश और दक्षिण के जंगलों में तथा बंबई के आसपास बहुत होती है। इसकी जड़ श्रौषध के काम आती है और सर्प का विष दूर करने के लिये प्रसिद्ध है। इसकी पत्तियाँ चवाने से जीम देर तक सुन्न रहती हैं। वैद्यक में यह तिक्त, वातवर्धक, श्वास और कासवर्धक, पाक में रूक्ष, कटु तथा त्रण, श्लेष्मा और आँख के दर्द को दूर करनेवाली मानी जाती है। इसके फल दीपन तथा कास, कृमि, त्रण, विष और कुष्ठ को दूर करनेवाले कहे जाते हैं।

मेढियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मढी] दे० 'मढी'।

मेढी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० वेण्ण] १ तीन लड्डियों में गूथी हुई चोटी।
उ०—लटकन चारु, भृकुटिया टेढी, मेढी सुभग मुदेश सुभाए।
—तुलसी। (शब्द०)। २ घोड़ों के माथे पर की एक भौरी।

मेढ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिष्य। लिंग। २ मेढा।

यौ०—मेढज = शिव का एक नाम। मेढश्च गी = दे० 'मेढासिंगी'।

मेथि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दे० 'जुआठा'। २ दे० 'मेधि' [को०]।

मेथि—सञ्ज्ञा स्त्री० दे० 'मेथी' [को०]।

मेथिका, मेथिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मेथी।

मेथी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मसाले और श्रौषध में काम आनेवाला एक बहुप्रसिद्ध छोटा पौधा और उसका फल।

विशेष—भारतवर्ष में इसका पौधा प्रायः सर्वत्र पाया जाता है। इसकी पत्तियाँ कुछ गोल होती हैं और साग की तरह खाई जाती हैं। इसकी फलियों के दाने मसाले और श्रौषध के काम में आते हैं और देखने में कुछ चौखूटे होते हैं। इसकी फसल जाड़े में तैयार होती है। वैद्यक में इसका गुण कटु, उष्ण, अरुचिनाशक, दीप्तिकारक, वातघ्न तथा रक्तपित्त प्रकोपन माना गया है।

पर्या०—दीपनी। बहुसूत्रिका। गन्धजीवा। ज्योति। गन्धकला। वल्लरी। चन्द्रिका। मथा। मिश्रपुष्पा। कैरवी। बहुपर्णी। पीतबीजा।

मेथौरौ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मेथी + घरी] मेथी का साग मिलाकर बनाई हुई उर्द की पीठी की वरी।

मेद—सञ्ज्ञा पुं० [म० मेदस्, मेद] १ शरीर के अदर की वसा नामक घातु। चरबी।

विशेष—सुश्रुत के अनुसार मेद मास में उत्पन्न घातु है जिससे अस्थि बनती है। भावप्रकाश आदि वैद्यक ग्रंथों में लिखा है कि जब शरीर के अदर की स्वाभाविक अग्नि से मास का परिपाक

होता है, तब मेद बनता है। इसके इकट्ठा होने का स्थान उदर कहा गया है।

२ मोटाई या चरबी बढ़ने का रोग। ३. कस्तूरी। उ०—(क) रचि रचि साजे चदन चौरा। पोते अग्रर मेद औ गौरा।
—जायसी (शब्द०)। (ख) कहि केशव मेद जवादि मा मांजि हते पर अजि में अजन दे।—केशव (शब्द०)। ४ नीलम की एक छाया।—रत्नपरीक्षा (शब्द०)। ५ एक अत्यन्त जाति जिसकी उत्पत्ति मनुस्मृति में वैदेहिक पुरुष और निपाद स्त्री से कही गई है।

मेदज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गुग्गुलु [को०]।

मेदनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेदिनी ?] यात्रियों का वह दान या गोल जो भडा लेकर किसी तीर्थस्थान या देवस्थान को जाता है।

मेदपाट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मेवाड। उ०—शत्रुराजाओं के आयुष्यरूपी पवन का पान करने के लिये चलती हुई कृष्णसर्प जैसी तलवार के अभिवान के कारण मेदपाट (मेवाड) के राजा जयतल (जैत्रसिंह) ने हमारे साथ मेल न किया।—राज० इति०, पृ० ४६०।

मेदपुच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दुवा मेढा।

मेदसारा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अष्टवर्ग की एक श्रौषधि। विशेष दे० 'मेदा'।

मेदस्वी—वि० [सं० मेदस्विन्] १ स्थूल। मोटा। अधिक चरबी-वाला। २ ताकतवर [को०]।

मेदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ज्वर और राजयक्ष्मा में अत्यन्त उपकारी अष्टवर्ग में एक प्रसिद्ध श्रौषधि।

विशेष—कहते हैं, इसकी जड़ अदरक की तरह पर बहुत सफेद होती है और नाखून गडाने से उसमें से मेद के समान दूध निकलता है। वैद्यक में यह मधुर, शीतल तथा पित्त, दाह, खाँसी, ज्वर और राजयक्ष्मा को दूर करनेवाली कही गई है। यह मोरग की ओर पाई जाती है।

मेदा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] पाकाशय। पेट। कोठा। जैसे, मेदे की शिकायत।

मुहा०—मेदा कडा होना = शरीर की क्रिया इस प्रकार की होना कि जल्दी दस्त न हो।

मेदिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पृथ्वी। धरती।

विशेष—पुराणों में मधुकैटभ के भेद से पृथ्वी की उत्पत्ति कही गई है, इसी से पृथिवी का यह नाम पड़ा है।

२ मेदा। ३ स्थान। जगह [को०]। ४ एक संस्कृत कोश का नाम [को०]।

यौ०—मेदिनीज = मंगलग्रह। मेदिनीद्रव = घूल। मेदिनीधर = शैल। पर्वत। मेदिनीपति = राजा।

मेदुर—वि० [सं०] १ चिकना। स्निग्ध। २ मोटा। स्थूल [को०]। ३ भरा हुआ। आच्छन्न [को०]।

मेदोज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हड्डी। अस्थि।

मंदोवरा—सजा स्त्री [सं०] शरीर की तीगरी कना या भिन्नी जिसमे मेद या चरबी रहती है।

मेदोवृद्ध—सजा पुं० [सं०] १ मेदयुक्त गाँठ या गिल्टी जिसमे पीटा हो। २ ओठ का एक रोग।

मेदोवृद्धि—सजा स्त्री [सं०] १ चरबी का बढ़ना। मोटाई। २ अडवृद्धि।

मेद्व—वि० [सं०] १ मोटा। २ निविड। गाढा। ठोस [को०]।

मेय—सजा पुं० [सं०] १ यज्ञ। २ हवि। यज्ञ में बलि दिया जानेवाला पशु। ४ माम का शोरवा या रसा [को०]। ५ रस। गार। नियमि [को०]।

मेधज—सजा पुं० [सं०] विष्णु।

मेधा—सजा स्त्री [सं०] १ अत करण की वह शक्ति जिसने जानी, देखी, सुनी या पढी हुई बातें मन में बराबर बनी रहती हैं, भूलती नहीं। बात को स्मरण रखने की गानमिक शक्ति। धारणावाली बुद्धि। २ दत्त प्रजापति की एक कन्या। ३, पौडण मातृकाओं में से एक, जिमका पूजन नादीमुख आदि में होता है। ४ छप्पय छद का एक भेद। ५ शक्ति। ताकत। बल [को०]। ६ सरस्वती का एक रूप [को०]।

यी०—मेधाकर = बुद्धि बढ़ानेवाला। मेधाजित्। मेधारुद्र।

मेधाजित्—सजा पुं० [सं०] कात्यायन मुनि।

मेधातिथि—सजा पुं० [सं०] एक नाम जो बहुत से लोगो का है। १ काशववश में उत्पन्न एक ऋषि जो ऋग्वेद के प्रथम मंडल के १२-३३ सूक्तो के द्रष्टा थे। २, कशव मुनि के पिता। (महाभारत)। ३ भट्ट वीरस्वामी के पुत्र जो मनुसंहिता के प्रसिद्ध भाष्यकार हैं। ४, प्रियव्रत के पुत्र और शाकद्वीप के अधिपति। (भागवत)। ५ कर्दम प्रजापति के पुत्र।

मेधारुद्र—सजा पुं० [सं०] कालिदास [को०]।

मेधावती—सजा स्त्री [सं०] महाज्योतिष्मती लता।

मेधावान्—वि० [मेधावत्] [वि० स्त्री० मेधावती] जिसकी स्मरणशक्ति तीव्र हो। धारणाशक्तिवाला।

मेधाविनी—सजा स्त्री [सं०] ब्रह्मा की पत्नी का नाम [को०]।

मेधावी^१—वि० [सं० मेधाविन्] [वि० स्त्री० मेधाविनी] १ मेधाशक्तिवाला। जिमकी धारणाशक्ति तीव्र हो। २, बुद्धिमान्। चतुर। ३ पण्डित। विद्वान्।

मेधावी^२—सजा पुं० १ शुक पक्षी। मूया। तोता। २ मय। शराव। ३ कश्यप के एक पुत्र। ४ च्यवन के एक पुत्र। उ०—च्यवन पुत्र मेधावी नामा। करं तपस्या विपिन श्रवणा।—विश्राम (शब्द०)।

मेधि—सजा पुं० [सं०] उस स्थान पर गडा हुआ राभा जहाँ गैत मे लाकर फल फँसाई जाती है। दानवाने बल एगी सभे मे चढे हुए चारों ओर घूमकर परो से उठनी के दाने भाडने हैं।

मेधिर—वि० [सं०] तद्वत् बुद्धिमान्। गेभारी। बुद्धिमन्।

मेधिष्ठ—वि० [सं०] शर्वतं मेधावी [को०]।

मेध्य^१—वि० [सं०] १ बुद्धि बढ़ानेवाला। मेधाजनक। २ पवित्र। शुक्ति। ३ यज्ञ नवधी। यज्ञ के योग्य।

मेध्य^२—सजा पुं० १ गैर। कन्या। २ जी। ३ उकार।

मेध्या—सजा स्त्री [सं०] केतकी, शरपुष्पी, ब्राह्मी, महुकी आदि बुद्धिवर्धक वृष्टियाँ। २ गोरौचन। ३, एक रक्तवाहिनी नसा [को०]।

मेनका—सजा स्त्री [सं०] १ स्वर्ग की एक त्रप्सरा।

विशेष यह त्रप्सरा उग्र जी आजा ने विश्वामित्र का तप भंग करने के लिये गई थी और विश्वामित्र के मद्योग से इसे शकुतला नाम की कन्या उत्पन्न हुई थी।

२ उमा या पार्वती की माता जा हिमवान् की पत्नी थी।

मेनकात्मजा—सजा स्त्री [सं०] १ शकुतला। २ पार्वती। दुर्गा।

मेनकाहित—सजा पुं० [सं०] रामक नामक नाटक का एक भेद।

मेना^१—सजा स्त्री [सं०] १ पितरो की मानसी कन्या मेनका। २ हिमवान् की स्त्री। मेनका। ३, स्त्री। ४ वृषणक्ष की मानसी कन्या (हृद्येद)। ५ वाक्।

मेना^२—वि० सं० [हिं० मोयन] पकवान आदि मे मोयन देना। मोयन डालना। उ०—मुडुई पोइ पोर घिड मेई। पाछे छानि साड रम मेई।—जायसी (शब्द०)।

मेनाद—सजा पुं० [सं०] १ तिल्ली। २ बकरी। ३ मोर।

मेनाधव—सजा पुं० [हिं०] हिमालय।

मेमत^७—वि० [सं० मदमत, हिं० र्गमत] मदमत्त। मतवाला। उ०—मेमति दति घन वज्जि मार।—पु० रा०, ६१।६०३।

मेम—सजा स्त्री [सं० मंडम का गच्छित रूप] १ योरोप या अमेरिका आदि की विवाहिना स्त्री। २ ताण का एक पत्ता जिसे बीबी या रानी कहते हैं। यह पत्ता बादशाह से छोटा और गुनाम से बड़ा माना जाता है।

मेमना—सजा पुं० [अनु० में में] १ भेट का चच्चा। २ घोडे की एक जाति। उ०—गोइ कावुन कंजोइ कोइ कच्छी। बीठ मेमना मुणी लच्छी।—विश्राम (शब्द०)।

मेमो—सजा पुं० [सं०] मेमोरैंडम का मच्छित रूप।

मेमार—सजा पुं० [सं०] गणन निर्माण करनेवाला गिरपी। इमारत बनानेवाला। यंत्र। राजगौर।

मेमोरियल—सजा पुं० [सं०] १ वह प्रार्थनापत्र जो किमी बड़े अधिकारी के पान निवारार्थ भेजा जाय। आवेदनपत्र। उ०—जिम नगर मे श्रीमान् लिफ्टिनेट गवर्नर बहादुर जार्ज वरीं उनको नगर के प्रचारार्थ मेमोरियल दिए जायें।—प्रेमपत्र०, भा० २, पृ० ५७। २ स्मारकचिह्न। मारगार।

मेमोरैंडम—सजा पुं० [सं०] १ वह पत्र जिसमे कोई बात स्मरण दिलान के लिये लिखी गई हो। तारनाम। स्मरणपत्रक। २, तारपत्र। अभिमत।

मेमोरेण्डम आफ ऐशोसिएशन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] किसी ज्वाइंट स्टाक कंपनी या समिलित पूंजी से खुलनेवाली कंपनी की उद्देश्यपत्रिका जिसमें उस कंपनी का नाम और उद्देश्य आदि लिखे होते हैं और अत में हिस्सेदारों के हस्ताक्षर होते हैं। सरकार में इसकी रजिस्ट्री हो जाने पर कंपनी का कानूनी अस्तित्व हो जाता है। उद्देश्यपत्रिका।

मेय—वि० [सं०] १ जिसकी नाप जोख हो सके। जिसका परिमाण या विस्तार ठीक बताया जा सके। २ जो नापा जोखा जान-वाला हो।

मेयना—क्रि० सं० [म० मेदन हि० मेयन (= मीयन)] पकवान आदि में मीयन डालना। मीयन देना।

मेयर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] म्युनिसिपल कारपोरेशन का प्रधान। जैसे, कलकत्ता कारपोरेशन के मेयर।

विशेष—इंग्लैंड में म्युनिसिपलिटियों के प्रधान मेयर कहलाते हैं। ये अपने नगरों की म्युनिसिपलिटियों के प्रधान होने के सिवा वहाँ के प्रधान मैजिस्ट्रेट भी होते हैं। लंडन तथा और कई नगरों की म्युनिसिपलिटियों के प्रधान लार्ड मेयर कहलाते हैं। हिंदुस्तान में कारपोरेशन के प्रधान मेयर कहलाते हैं। इनका केवल म्युनिसिपल प्रबंध से ही संबंध है। ईस्ट इंडिया कंपनी के समय सन् १७२६ ई० में भारत में, कलकत्ता, बंबई और मद्रास में, विचारकार्य के लिये मेयर कोर्ट स्थापित किए गए थे। यह ऐतिहासिक तथ्य है परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतवर्ष के अन्य बड़े नगरों में भी कारपोरेशन या महापालिकाएँ बनाई गई हैं। उन सबके प्रधान को मेयर या अध्यक्ष कहते हैं। इनका निर्वाचन कारपोरेशन के सभासदों द्वारा किया जाता है।

मेयान—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मियान] दे० 'म्यान'। उ०—कहाँ ग्यान का पयान, कहाँ मेयान का मुसकला।—रामानंद०, पृ० ३२।

मेये—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० बैंग०] कन्या। घेटी। पुत्री। उ०—पजावी मेये तो बेश सुदरी।—भस्मावृत, पृ० ७२।

मेर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेल] दे० 'मेल'। उ०—(क) एहि सो कृष्ण बलरान्न जस कीन्ह बहै छर बाँध। मन विचार हम आवही मेरहि दीज न काँध।—जायसी। (शब्द०)। (ख) गएउ हेराइ जो ओहि भा मेरा।—जायसी ग्र०, पृ० ६२। (ग) अपने अपने मेरनि मानो उनि होरी हरख लगाई।—सुर (शब्द०)।

मेर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेरु] दे० 'मेरु'। उ०—सुदर हय हीसि जहाँ गय गार्ज चहुँ फेर। काइर भागै सटक दे सुर अडिग ज्यो मेर।—सुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ७३६।

यौ०—मेरडड=दे० 'मेरुडड'। उ०—थिर मन मेरडड चढ़ तारी।—घट०, पृ० ३१।

मेर—सञ्ज्ञा पुं० [दि०] पर्वतीय जातिविशेष। एक लडाकू पर्वतवासी जाति। उ०—जहँ पन्नय घाटो हुती मीना मेर मवास।—पृ० रा०, ७।७६।

मेरक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक असुर जिसे विष्णु ने मारा था।

मेरठी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मेरठ नगर से] गन्ने की एक जाति जो मेरठ की ओर होती है।

मेरवन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मेरवना] मिलाने की क्रिया या भाव। मिलान।

मेरवना—क्रि० सं० [सं० मेलन] १ दो या कई वस्तुओं को एक में करना। मिश्रित करना। मिलाना। उ०—ते मेरे घरि बूरि सुजोधन जे चलते वह छत्र की छाहो।—तुलसी (शब्द०)। २ दो या कई व्यक्तियों को एक साथ करना। मयोग करना। मिलाप करना। उ०—(क) चतुरवेद हों पंडित हीरामन मोहि नाऊँ। पद्मावत सौ मेरवी सेव करौ तेहि ठाउँ।—जायसी (शब्द०)। (ख) है मोहि आस मिलकै जो मेरव करतार। जायसी (शब्द०)। (ग) श्री विनयी पंडितन मन भजा। दूट सँवारहु, मेरवहु सजा।—जायसी ग्र०, पृ० ६।

मेखनि—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मेखना] दे० 'मेखन'। उ०—सुदर श्यामल अग वसन पीत मुरग कटि निपग परिकर मेरवनि।—तुलसी (शब्द०)।

मेरा—सर्व० [हि० मै + रा (प्रा० केरिओ, हि० केरा)] [स्त्री० मेरी] 'मै' के संबन्धकारक का रूप। मुझमें सबव रखनेवाला। मदीय। मम। जैसे,—यह घोडा मेरा है। उ०—मेरहुँ जेट्ट गरिहु अछ मति विश्रखन भाए।—कीर्ति०, पृ० २०।

मेरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेला] दे० 'मेला'। उ०—यह ससार सुवन जस मेरा। अत न आपन को केहि केरा।—जायसी (शब्द०)।

मेराडा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मेर (= मेल)] दे० 'मेराव'। उ०—धनि ओहि जीव दीन्ह विधि भाऊ। दहुँ का सउँ लेइ करइ मेराऊ।—जायसी (शब्द०)।

मेराज—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मेराज] सीढी। ऊपर चढ़ने का साधन। उ०—रुह करै मेराज कुफर का खोलि कुलाबा। तीसो रोजा रहै अदर मे सात टिकावा।—पलटू०, पृ० ४३।

मेराना—क्रि० सं० [हि०] दे० 'मिलाना'। उ०—(क) सो बसीठ सरजा लेइ आधा। बादमाह कहँ आनि मेरावा।—जायसी (शब्द०)। (ख) कपूर लाइचो मेरया वामे पूजा यही हमारा। जग० बानी, पृ० १।

मेराव—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मेर (= मेल)] मेल। मिलाप। समागम। उ०—पद्ममावति पुनि पूजइ आवा। होइहि ओहि मिसु दिस्ट मेरावा।—जायसी (शब्द०)।

मेरी—सर्व० [हि०] 'मेरा' का स्त्री० रूप।

मेरी—सञ्ज्ञा स्त्री० अहंकार। उ०—मेरी मिठी मुक्ता भया पाया ब्रह्म विस्वास। मेरे दूजा कोउ नही एक तुम्हारी आस।—कवीर (शब्द०)।

मेरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक पुराणोक्त पर्वत जो सोने का कहा गया है। विशेष दे० 'सुमेरु'।

पर्या०—हेमाद्रि। रत्नसानु। सुरालय।

२ जपमाला के बीच का बड़ा दाना जो और सब दानों के ऊपर होता है। इसी से जप का आरंभ और इसी पर उसकी समाप्ति होती है। सुमेरु। (जप करते समय 'मेरु' का उल्लेख नहीं करना चाहिए।) उ०—कविरा माला काठ की बहुत जतन

मेलत तेल फुलेल ।—सूर (शब्द०) । ३ धारण कराना । पहाना । उ०—सिय जयमाल राम उर मेली ।—तुलसी (शब्द०) । ४ रमाना । लगाना । उ०—छाँडा नगर मेलि कै धूरी ।—जायमी ग्र०, पृ० ५६ । ५ भेजना । उ०—नृप मेले आया नगर, दोड बघाईदार । कहीं विगत विघ विघ करे आनंद भरे अपार ।—रघु० रू०, पृ० ६२ ।

मेलना^१—क्रि० अ० इकठ्ठा होना । एकत्र होना । जुटना । उ०—वलसागर लछमन सहित कपिसागर रनधार । जससागर रघुनाथ जू मेले सागर तीर ।—(शब्द०) ।

मेलमल्लार—सज्ञा पु० [सं०] एक रागिनी जिमकी स्वरलिपि इस प्रकार है—स स रे म प घ स स घ प म ग रे स ।

मेलाधु—सज्ञा पुं० [सं० मेलान्धु] दवात ।

मेला^१—सज्ञा पु० [सं० मेलक] १ बहुत से लोगों का जमावडा । भीड भाड । २ देवदर्शन, उत्सव, खेल, तमाशे आदि के लिये बहुत से लोगों का जमावडा । जैसे, माघमेला, हरिहरक्षत्र का मेला ।

यौ०—मेला ठेला । मेला तमाशा ।

मुहा०—मेला भरना = किसी खेल तमाशे या उत्सव मे काफी भीड-भाड एकट्ठी होना । मेला लगना = जमाव होना । भीड लगना ।

मेला^२—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ बहुत से लोगों का जमावडा । २ मिलन । समागम । मिलाप । ३ स्याही । रोशनाई । ४ अंजन । ५ महानीली ।

मेलाठेला—सज्ञा पुं० [हिं० मेला + ठेला (= घका)] भीड भाड और घका । जमावडा । जैसे,—मेले ठेले मे स्त्रियों का जाना ठीक नहीं ।

मेलानदा—सज्ञा स्त्री० [सं० मेलानन्दा] दवात ।

मेलान(७)—सज्ञा पुं० [अ०] मजिल । पडाव । टिकान । डेरा । उ०—सागरतीर मेलान पुनि करिहैं रघुकुल नाह ।—केशव (शब्द०) ।

मेलाना^१—क्रि० सं० [हिं० मेल] १ मेलना का प्रेरणार्थ रूप । रेहन या गिरवी रखी हुई वस्तु को रुपया देकर छुडाना ।

मेलायप सज्ञा पुं० [सं०] १ मिलाने, इकठ्ठा करनेवाला । २ ग्रहों का सयोग । ३ भीड । जमाव ।

मेलापन—सज्ञा पुं० [सं०] मिलना । सयोग । समागम ।

मेली^१—सज्ञा पुं० [हिं० मेल] वह जिससे मेल जोल हो । वह जिससे घनिष्ट परिचय हो । मुलाकाती । सगी । साथी ।

मेली^२—वि० हेल मेल रखनेवाला । जल्दी हिल मिल जानेवाला । जिसकी प्रवृत्ति लोगों को मित्र बनाने की हो । यारवाण । जैसे,—वह बडा मेली आदमी है ।

मेल्टिंग केट्ल—सज्ञा पुं० [अ०] सरेस गलाने की देगची ।

विशेष—यह एक ढकनेदार दोहरा वर्तन होता है । नीचे के वर्तन में पानी भरकर उसके अंदर दूसरा वर्तन रखकर उसमे सरेस भर देते हैं और ढककर आंच पर चडा देते हैं । पानी की भाप से सरेस गल जाता है । गल जाने पर उसे रोलर मोल्ड मे ढाल देते

हैं जिससे वह जम जाता है और म्याही देने का वेलन तैयार होकर निकल आता है । (छापाखाना) ।

मेलहना^१—क्रि० सं० [प्रा० मेल्ल, गुज० मंजु = (छोडना), रखना] १ छोडना । रखना । डालना । उ०—पग फलका की सुधि नहीं मार सवद क्या होद । कर मुख माहें मेलहना, दादू लखे न कोइ ।—दादू० वानी, पृ० ३६० । २ गढा रहना । पडा रहना । उ०—मेलही रही सूम की थाती । सुंदर दी आग कां थाती ।—सुंदर० ग्र०, भा० १, पृ० ३५८ ।

मेलहना^२—सज्ञा स्त्री० [द्य०] एक प्रकार की नाव जिसका सिका खडा रहता है ।

मेलहना^३—क्रि० अ० १ क्पेश या पीडा से बार बार इस करवट मे उम करवट होना । छटपटाना । वैचैन होना । २ कोई काम करने मे आनाकानी करके समय विताना ।

मेव—सज्ञा पुं० [द्य०] राजपूताने की और बसनेवाली एक लुटेरी जाति । मेवाती । उ०—छवि वन मे दौरन लगे जब तें तव ह्य मेव । तव ते कढे सनेहिया मन छन लै कै छेय ।—रसनिधि (शब्द०) ।

विशेष—मेव पहले हिंदू थे और मेवात मे बसते थे । पर मुसलमानी बादशाहत के जमान मे ये मुसलमान हो गए । अब ये लोग लूट-पाट प्राय छोडते जा रहे हैं ।

मेवकां—सज्ञा पुं० [प्रा० मेवहू] मेवा । उ०—भूखों नैन रूप को चाहत मिलनि सकल रस मेवक ।—भीखा श०, पृ० ८६ ।

मेवड़ी—सज्ञा स्त्री० [द्य०] निर्गुंडी । संभालू ।

मेवा—सज्ञा पुं० [प्रा० मेवहू] १ खाने का फल । २ किमिमि, बादाम, अखरोट आदि सुन्वाए हुए बढिया फन । उ०—दिविध मधु मेवा भोग रचाय ।—घनानंद, पृ० ५६१ ।

मेवा^१—सज्ञा पुं० [द्य०] सुरत के गन्ने की एक जाति जिसे 'खजुरिया' भी कहते हैं ।

मेवाटी—सज्ञा स्त्री० [प्रा० मेवा + वाटी] एक पकवान जिसके अंदर मेवे भरे रहते हैं । उ०—फूटि जाय फन फनीराज की समोसा सम फटि जाय कच्छप की पीठ हू मेवाटी सी ।—गोपाल (शब्द०) ।

मेवाड—सज्ञा पुं० [द्य०] १ राजपूताने का एक प्रात जिसकी प्राचीन राजधानी चित्तौर थी और आजकल उदयपुर है । २ एक राग जो मालकोस राग का पुत्र माना जाता है ।

मेवाड़ी^१—सज्ञा पुं० [हिं० मेवाड़ + ई (प्रत्य०)] मेवाड प्रदेश का निवासी ।

मेवाड़ी^२—वि० मेवाड मे होनेवाला । मेवाड से सबध रखनेवाला । मेवाड का ।

मेवात—सज्ञा पुं० [सं०] राजपूताने और सिंध के बीच के प्रदेश का पुराना नाम । यहाँ मेव नाम की जाति का निवास था, जो हिंदू थे । उ०—मेवात घनी आए महेस । मोहिह्न दुनापुर दिए पस ।—पृ० रा०, १। ४२२ ।

मेवाती—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मेवात + ई (प्रत्य०)] मेवात का रहनेवाला ।

मेवादार—वि० [फा० मेवद्दार] फलदार । फलयुक्त ।

मेवाफरोश—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मेवद् + फरोश] फल या भेवे बेचनेवाला ।

मेवासा[Ⓐ]—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मवासा] १ किला । गढ । २ रक्षा का स्थान । ३ घर । उ०—कवीर हरि की गति का मन मे बहुत हुलास । मेवासा भाँजे नहीं होन चहै निज दास । —कवीर (शब्द०) ।

मेवासी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मेवासा] १ घर मे रहनेवाला । घर का मालिक । उ०—मन मेवासी मूडिए केशहि मूड़े काहि । जो कुछ किया सो मन किया केशा किया कछु नाहि ।—कवीर (शब्द०) । २ किले मे रहनेवाला । सराक्षित और प्रबल । उ०—कविरा मन मेवासी भया बस करि सकै न कोय । सन-कादिह रिपि मारखे तिनके गथा विगोय ।—कवीर (शब्द०) ।

मेप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. भेड । २ वारह राशियो मे से एक जिसके अतर्गत अश्विनी, भरणी और कृत्तिका नक्षत्र का प्रथम पाद पढ़ता है ।

विशेष—इस राशि पर सूर्य वैशाख मे रहते हैं । राशियो की गणना मे इसका नाम सबसे पहले पढता है । इसकी आकृति मेप के समान मानी गई है । यह राशि सूर्य का उच्च स्थान है । इसमे जबतक सूर्य रहते हैं, तबतक बहुत प्रबल रहते हैं । उच्चाश काल वैशाख मे प्रथम दस दिन तक रहता है । इसके उपरात सूर्य उच्चाशच्युत होने लगते है ।

३ एक लग्न जो सूर्य के मेप राशि मे रहने पर माना जाता है । जँमे,—यदि किसी का जन्म सूर्य के मेप राशि मे रहने पर होगा, तो कहा जाएगा कि उमका जन्म मेप लग्न मे हुआ ।

मुहा०—मेप काना[Ⓐ] = मीन मेप करना । आगा पीछा करना । सकल्प विकल्प करना । उ०—कियो अक्रूर भोजन दुहून सग लै, नर नारी ब्रज लोग सब देखै । मनो आए सग, देखि ऐसे रग, मनहि मन परस्पर करत मेप ।—सूर (शब्द०) ।

४ एक ओपवि । ५ जीवशाक । मुसना ।

मेपकवल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेपकम्बल] मेप के रोएँ का कवल । ऊनी कवल [को०] ।

मेपकुसुम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चक्रमर्द नाम का पौधा । चक्रमर्द [को०] ।

मेपग—वि० [सं०] मेप राशि मे गया हुआ । उ०—माधव मेपग भानु मैं हे मधुसन्नु मुरारि । प्रात न्हान फल दीजिए नाथ पाप निखारि । —भारतेंदु ग्र०, भा० १, पृ० ६० ।

मेपपाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गडरिया ।

मेपपालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मेपपालक' [को०] ।

मेपपुष्पा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मेढासिंगी ।

मेपमास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैशाख मास [को०] ।

मेपर[Ⓐ]—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेखला] दे० 'मेखला' । उ०—रवत कट्टि मेपर, चकोर साव से सुर ।—पृ० रा०, ६१।७७० ।

मेपलोचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चक्रमर्द । चक्रवर्द ।

मेपवल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मेढासिंगी ।

मेपावषाणिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मेढासिंगी ।

मेपवृषण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इंद्र का एक नाम । उ०—मेपवृषण अस नाम शक्र को हूँहै सब समारा । अवृषण मेव देव पितरन को दैहै तोहि अपारा ।—रघुराज (शब्द०) ।

मेपश्रु ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेपश्रुङ्ग] सिंगिया नामक स्थावर विप ।

मेपश्रु गी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेपश्रुङ्गी] मेढासिंगी ।

मेपसंक्राति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेपसङ्क्रान्ति] मेप राशि पर सूर्य के आने का योग वा काल ।

विशेष—इसी दिन से सौर मास के वैशाख का आरंभ होता है । इस दिन हिंदू लोग सत्तू दान करते हैं, इससे इस 'सत्तुआ संक्राति' भी कहते हैं ।

मेपाड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेपाण्ड] इद्र ।

मेपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गुजराती इलायची । २ चमड़े का एक भेद जो लाल भेड की खाल से बनता है ।

मेपालु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बर्बरी । बनतुलसी । बबुई ।

मेषिका, मेषी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ भेड । स्त्री मेप । २ तिनिया वृक्ष । ३ जटामासी ।

मेपूरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मेसूरण' [को०] ।

मेस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह स्थान जहाँ मूल्य लेकर विद्यार्थियो के लिये भोजन का प्रबंध किया जाय । छात्रावास से सबद्ध भोजनालय जहाँ विद्यार्थी मूल्य देकर भोजन करते हैं । २ फौजी अफसरों, सैनिकों आदि का संयुक्त भोजनालय ।

मेसूरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष मे दशम लग्न जो कर्म-स्थान कहा जाता है ।

मेस्मराइजर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मेस्मराइजर] वह जो किसी को अपने इच्छाशक्ति से अचेत कर देता है । मेस्मारेज्म करनेवाला । समोहित करनेवाला । समोहक ।

मेस्मरिज्म—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मेस्मरिज्म] (मेस्मर नामक जर्मन डाक्टर का निकाला हुआ) वह सिद्धांत जिसमे कि मनुष्य किसी गुप्त शक्ति या केवल इच्छाशक्ति से दूसरे की इच्छाशक्ति को प्रभावित या बर्शीभूत कर सकता है । वह विद्या या शक्ति जिससे कोई मनुष्य अचेत कर वश मे किया और अपने इच्छानुसार परिचालित किया जा सके, अर्थात् उससे जो कुछ कहलाया जाय, वह फहै या जो कुछ पूछा जाय, उसका उत्तर दे । समोहिनी विद्या । समोहन ।

विशेष—जिसपर मेस्मरिज्म किया जाता है, वह अचेत सा हो जाता है, और उस अवस्था मे उससे जो कुछ कहलाना होता है, वह कहता है या जो कुछ पूछा जाता है, उसका उत्तर देता है ।

मेहँदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेन्धी, मेन्धिक] पत्ती झाडनेवाली एक झाडी जो बलोचिस्तान के जगलो मे आपसे आप होती है और सारे हिंदुस्तान मे लगाई जाती है ।

विशेष—इसमें मंजरी के रूप में सफेद फूल लगते हैं जिनमें भीनी भीनी सुगंध होती है। फल गोल मिर्च की तरह के होते हैं और गुच्छों में लगते हैं। इसकी पत्ती को पीसकर चढाने से लाल रंग आता है, इसी में स्त्रियाँ इसे हाथ पैर में लगाती हैं। वगीचे आदि के किनारे पर भी लोग शोभा के लिये एक पत्ति में इसकी टट्टी लगाते हैं।

पर्या०—नखरज। कोकदत्ता। रागगर्भा। मेंधिका। नखरजनी।

मुहा०—क्या पैर में मेहँदी लगी है? = क्या पैर काम में नहीं ला सकते जो उठकर नहीं आते? मेहँदी रचना = मेहँदी का अच्छा रंग आना। जैसे,—उसके पैर में मेहँदी खूब रचती है। मेहँदी बाँधना = मेहँदी की पत्तियाँ पीसकर लगाना। मेहँदी रचना = मेहँदी लगाना। मेहँदी लगाना = मेहँदी की पत्तियाँ पीसकर हथेली या तलुए में लगाना।

मेह^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्रस्राव। मूत्र। २ प्रमेह रोग। ३ मेप। मेठा। ४ अज। छाग। वकरा (को०)।

मेह^२—सञ्ज्ञा पुं० [मेघ, प्रा० मेह] १ मेघ। बादल। २ वर्षा। ऋषी। मेह। उ०—छाई पियराई और विथा हियराई जानै, जके थके वैन नैन निदरत मेह को।—घनानन्द, पृ० ७७।

क्रि० प्र०—आना।—पहना।—बरसना।

मेह^३—वि० [फा० मिह, मेह] बड़ा। बुजुर्ग। सरदार (को०)।

मेहँदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हरिद्रा। हल्दी (को०)।

मेहतर—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मेहतर, तुल० सं० महतर] १ बुजुर्ग। सबसे बड़ा। जैसे, सरदार, शाहजादा, मालिक, हाकिम, भमीर आदि। २ [स्त्री० मेहतरानी] नीच मुसलमान जाति जो झाड़ू देने, गदगी उठाने आदि का काम करती है। मुसलमान भगी। हलालखोर।

मेहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिश्न। लिग। २ मूत्र। मूत। ३ मूतना (को०)। ४. मुष्क वृक्ष। मोरवा (को०)।

मेहनत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] मिहनत। श्रम। प्रयास। कष्ट। तकलीफ।

यौ०—मेहनत मजदूरी, मेहनत मजूरी = शारीरिक श्रम का काम।

मुहा०—मेहनत ठिकाने लगाना = श्रम का सफल होना। परिश्रम सफल होना।

क्रि० प्र०—करना।—पहना।—लेना।—होना।

मेहनतकश—वि० [अ०] मेहनत करनेवाला। परिश्रमी। उ०—है इतनी सी चाह हमारी पूरी कर भेरे ईश्वर। एकाकी हूँ मेहनतकश हूँ, और किराए का है घर।—मिट्टी०, पृ० ८७।

मेहनताना—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मेहनत + फा० आना] किसी काम की मजदूरी। परिश्रम का मूल्य। जैसे, वकील का मेहनताना।

मेहनती—वि० [अ० मेहनत + ई (प्रत्य०)] मेहनत करनेवाला। परिश्रमी।

मेहना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] महिला। स्त्री।

मेहमान—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मेहमँ, मेहमान] अतिथि। पाहुना।

यौ०—मेहमानखाना = अतिथिखाना। मेहमानदार = अतिथ्य

करनेवाला। मेजवान। मेहमाननवाज = (१) मेहमानों की खातिर करनेवाला। (२) खिलाने पिलाने का शौकीन। मेहमाननवाजी = अतिथिसत्कार।

मेहमानदारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] अतिथ्य। अतिथिसत्कार। पहनाई।

मेहमानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० मेहमान + ई (प्रत्य०)] १ अतिथ्य। सत्कार। पहनाई। उ०—मेहमानी करि हरहु लम कहा मुदित रिपिराज।—मानस, २।

मुहा०—मेहमानी करना = खूब गत बनाना। मारना पीटना। दड देना। (व्यग्य)। उ०—नद महरि की कानि करति हौ नतर करति मेहमानी।—सूर (शब्द०)।

‡२ मेहमान बनकर रहने का भाव। जैसे,—तू मेहमानी करने गए हैं।

मेहरा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेहना या दश०] पत्नी। बीवी। स्त्री।

मेहरा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मेह] मेहरवानी। कृपा। अनुग्रह। दया। उ०—नेक नजर मेहर मीरा वदा मैं तेरा। दादू दरवार तेरे, खूब साहिब येरा।—दादू वानी, पृ० ६०४।

मेहरवाँ—वि० [फा० मेहवाँ] ३० 'मेहरवान'। उ०—गिराया है जमी होकर छुटाया आसमाँ होकर। निकाला दुश्मने जाँ, औ बुलाया मेहरवाँ होकर।—वेला, पृ० ६२।

मेहरवान—वि० [फ्रा० मेहर + वान] कृपालु। दयालु। अनुग्रह करनेवाला।

विशेष—बड़ों के मवोधन के लिये अथवा किसी के प्रति आदर दिखलाने के लिये भा इम शब्द का प्रयोग होता है।

मेहरवानगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] दे० 'मेहरवानो'।

मेहरवानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] दया। कृपा। अनुग्रह।

क्रि० प्र०—करना।—दिखलाना।—होना।

मेहरा^३—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मेहरी] १ स्त्रिया की सी चेष्टावाला। स्त्री प्रकृतिवाला। जनखा। २ स्त्रियों में रहनेवाला। ३ जुलाहों की चरखी का घेरा।

मेहरा^४—सञ्ज्ञा पुं० [मेहरचद (मूलपुष्प)] खदियों की एक जाति।

मेहरा(५)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघ, प्रा० मेह + हिं० रा (प्रत्य०)] दे० 'मेह'। उ०—उधारे उधरि अब बरसन लाग्यौ अचरज को यह मेहरा।—घनानन्द, पृ० ३३६।

मेहराव—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] द्वार के ऊपर अघमडलाकार बनाया हुआ भाग। दरवाज के ऊपर का गोल किया हुआ हिस्सा।

विशेष—मेहराव बनाने की रीति प्राचीन हिंदू शिल्प में प्रचलित नहीं। विदेशियों, विशेषतः मुसलमानों के द्वारा ही, इस देश में इसका प्रचार हुआ है।

मेहरावदार—वि० [अ० मेहराव + फ्रा० दार] ऊपर की ओर गोल कटा हुआ (दरवाजा)।

मेहरारूनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० मेहना अथवा महिला + रू] श्रीरत। स्त्री। महिला।

मेहरियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मेहर + इया (प्रत्य०)] दे० 'मेहरी'।

मेहरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मेदना] १ स्त्री। श्रौत। २ पत्नी। जोरू। उ०—मेहरिन्ह मेंदुर मेना, चंदन पेवरा देह।—जायसी (शब्द०)।

मेहल—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] मञ्जोले आकार का एक प्रकार का वृक्ष।

विशेष—यह वृक्ष हिमालय में काश्मीर से भूटान तक ८००० फुट की ऊँचाई तक पाया जाता है। इसकी पत्तियाँ पाँच छह अगुल लंबी होती हैं और पुरानी होने पर काली हो जाती हैं। जाड़े में इसके फल पकते हैं जो खाए जाते हैं। इसकी लकड़ी की छटियाँ और हुक्रे की निगालियाँ बनती हैं और पत्तियाँ पशुओं के लिये चारे के काम में आती हैं।

मेहाउर(५), मेहावर(५)।—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] दे० 'महावर'।

मेही—वि० [हि० महीन, मिहीन > मेही] महीन। वारीक।

यौ०—मेही मेही = महीन महीन। अत्यंत वारीक। उ०—मेही मेही बुकवा पिसावो तो पिय के लगावो हो।—धरम०, पृ० ४८।

मेहु(५)।—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मेघ] दे० 'मेह'।

मेद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० भेन्द] एक दानव का नाम जिसे कृष्ण ने मारा था [को०]।

यौ०—मेदहा = श्रीकृष्ण का एक नाम।

में^१—सर्व० [सं० मया] सर्वनाम उत्तम पुत्र में कर्ता का रूप। स्वयं। खुद।

में^२—अव्य० [सं० मय] दे० 'मै'।

में(५)^१—अव्य० [सं० मध्ये, पुं० हिं० महि] अधिकरण कारक का चिह्न। दे० 'में'। उ०—विहरत वृदा विपिन में गोपिन संग गोपाल। बिक्रम हृद सदा बसो इहि छवि सौं नदलाल।—सं० समक, पृ० ३४३।

मेंडू^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] दे० 'मेंडू'। उ०—नददास प्रभुनिधि न रकति रो वा बारू की मेंडू।—नद० ग्र०, पृ० ३८६।

मेंडूकी^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मण्डूक] दे० 'मेंडूक'। उ०—तुम्हारी मेंडूक की सी टर टर उमके कान तक न पहुँचे इसी में तुम्हारे लिये अच्छा है।—श्रीनिवास ग०, पृ० १०८।

मेंडा(५)।—सर्व० [पञ्जा०] दे० 'मेरा'। उ०—नद महर दा कुँवर कहैया मेंडा जीवन जानी है।—धनानंद, पृ० १७७।

मेंटल—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मैनफल] मैनफल। मदनफल।

मेंहल(५)^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० महल] उ०—भगति करण करो प्रारभ, मेंहल उठै जब धरि होइ थभा।—रामानंद०, पृ० ५३।

में(५)^१—अव्य० [सं० मय] दे० 'मय'। उ०—अम गीकर साविरि देह लसै मनो राशि महातम तारक मैं।—तुलसी (शब्द०)।

में—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा०] मदिरा। शराब। उ०—कर्ज को पीते थे मैं लेकिन ममभो ने कि है। रग लागी हमारी फानामस्ती एक दिन।—कविता को०, भा० ४, पृ० ४७७।

यौ०—मेंफदा = दे० 'मैनाना'। मंश। मंकशी = दे० 'मंपम्ती'। भगवाना। मंपरस्त = शराबखोर। शराबी। मंपरस्ती = शराब-खोरी। मदिरापान की लत।

में^१—अव्य० [अ०] साथ। सहित। जैसे, मैगरोमापान, मैलर्न आदि।

मेंकश—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] शराब पीनेवाला। मद्यप।

मेंखाना—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० भेखानह] शराब पीने का स्थान। मद्य-शाला। उ०—वैं हमन ता सीवा ताफ उम सारी प्ना मैखाना।—भारतेंदु प्र०, भा० १, पृ० ५६३।

मेंका।—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृक] दे० 'मायका'। उ०—(र) नेवते गइलि ननादया मेंके मायु। दुवहिति तारे चरारया धाई आनु।—रहीम (शब्द०)। (ख) तौ मेंके ते हन प्राए। तुम टिा जननी जनक पठाए।—रघुराज (शब्द०)।

मेंगनट—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] चुपक पत्थर।

मेंगनाकार्टा—सञ्ज्ञा पुं० [अंग०] वह राजकीय आज्ञापत्र जिगने राजा की ओर ने प्रजाजनो को कोई स्वत्व वा अधिकार देने की बात हो। शाही फरमान। (अंग्रेजों ने वयंत्तित्त और राजनीतिक स्वाधीनता का यह अधिकारपत्र बाइशाह जान से मर् १२१५ ई० में प्राप्त किया था।)

मेंगल^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मङ्गल] मत्त हाथी। मस्त हाथी। उ०—(क) मायव जू मन सब ही शोध पोच। आत उनमत्त निगवृश मंगल चितारहित असोच।—नूर (शब्द०)। (ख) ऐँति अटति पैठ मध्य मत्त मंगल सी, राय करि हँ बल सी लबति लचक लक।—भुवनेश (शब्द०)। (ग) भक्ति द्वार है साँकरा राई दसवें भाय। मन तो मंगल हूँ रखी कैसे होय ममाय।—करीर (शब्द०)।

मेंगल^२—वि० मत्त। मस्त। (हाथी के लिये)।

मेंच^१—सञ्ज्ञा पुं० [अंग० मीच] १ किमी प्रकार के गेंद के खेल की श्रयवा इसी प्रकार के और किसी खेल की बाजी। २ उपयुक्त जाड़ा।

मेंच^२—सञ्ज्ञा स्त्री० दिवासलाई। माचिस।

यौ०—मेंचगक्स = दिवामनाई की डिविया।

मेंजल(५)^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मजिल] १ उनकी दूरी जितना कोई पुष्प एष दिन भर चलकर त करे। मजिन। २ मकर। यात्रा। उ०—प्रीप्स श्चतु पुनि मंजन भारी। पद भनकर कलका जनु वारी।—विश्राम (शब्द०)।

मेंजिक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह अश्रुत तेज वा ज्वल जो दर्शकों की दृष्टि और बुद्ध को धोसा देकर किया जाय। जादू का खेल।

मेंजिक लालटेन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मोजिक लैटर्न] एक प्रकार की लालटेन जिसके धागे नीचे पर बने हुए चित्र इस प्रकार रंगे जाते हैं कि उनकी परछाईं मानने के कपड़े पर पड़ती है, और ये चित्र दर्शकों को उम परदे पर दिखाई देते हैं।

मेंटर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ शराब पीनेवाला इच्छा करने वाला जो 'फोचो' करने के लिये दिया जाय। यह शब्द तुर्क भाषी जो 'फोचो' करने के लिये दी जाय। जैन,—इहें के फोचो त त्रिय एष बानम वा मेंटर धोर नाहित (रंगोजीटर)। २ शरीर का एक टुकड़ा या अंग जो दूसरे के लिये दिया जाय।

जैसे,—प्रेस पर फर्मा कपते हुए एक पेज का मीटर टूट गया।
(कंपोजीटर)।

मैटिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अं०] अपराह्नकालीन नाट्याभिनय उ०—
एक रोज भाल साहब की साली के साथ मैटिनी (दोपहर)
में सिनेमा भी हो आई।—भस्मावृत०, पृ० ३६।

मैडम—सञ्ज्ञा स्त्री० [अं०] विवाहिता तथा वृद्धा स्त्री के नाम के आगे
लगाया जानेवाला आदरसूचक शब्द। श्रीमती। महाशया।
जैमे, मैडम ब्लैडवैस्की।

मैडो (७) —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मडिका या मराडपिका, प्रा० मडी] मडई।
मडैया। छोटा मकान। मडी। उ०—मैडी महल वावडी
छाजा। छाडि गए सब भूपति राजा।—कबीरग्रं०, पृ०
१२०।

मैत्र^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अनुराधा नक्षत्र। २ सूर्यलोक। ३
मलद्वार। गुदा। ४ ब्राह्मण। ५ सूर्योदय के समय के उपरात
उससे तीसरा मुहूर्त। ६ प्राचीन काल की एक वर्णसंकर जाति
७ मित्र का भाव। मित्रता। दोस्ती। ८ वेद की एक शाखा।
९ दगली ब्राह्मणों का एक अल्ल (को०)।

मैत्र^२—वि० मित्र संबंधी। मित्र का।

मैत्रक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मित्रता। दोस्ती। २ बौद्ध मंदिर का
पुजारी (को०)।

मैत्रभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अनुराधा नक्षत्र।

मैत्राक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का प्रेत।

मैत्राक्ष्योक्तिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनु के अनुसार एक योनि जिसमें
अपने कर्तव्य से अष्ट होनेवाला वैश्य जाता है।

मैत्रायण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गृह्यसूत्र के प्रणेता एक प्राचीन ऋषि।
२ मैत्र नामक वैदिक शाखा।

मैत्रायणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक उपनिषद् का नाम।

मैत्रावरुण, मैत्रावरुणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सोलह ऋत्विजों में
से पाँचवाँ ऋत्विज। २ मित्र और वरुण के पुत्र, अग्रस्त्य।

विशेष—कहते हैं, उर्वशी को देखकर मित्र और वरुण दोनों
देवताओं का वीर्य एक जगह स्खलित हो गया था। उसी वीर्य
से अग्रस्त्य और वशिष्ठ इन दो ऋषियों का जन्म हुआ था।

मैत्रि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक आचार्य जिनके नाम पर मैत्र्युप-
निषद् की रचना हुई है।

मैत्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दो व्यक्तियों के बीच का मित्र भाव। मित्रता।
दोस्ती।

मैत्रीवल्ल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बुद्ध का एक नाम।

विशेष—मैत्री मुदिता आदि योग के चार साधन कर्म हैं, जो बुद्ध
को प्राप्त हो गए थे, इसीलिये उनका यह नाम पड़ा।

मैत्रेय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक बुद्ध का नाम जो अभी होनेवाले हैं।
२ भागवत के अनुसार एक ऋषि का नाम जो पराशर के शिष्य
थे और जिनसे विष्णुपुराण कहा गया था। ३ सूर्य। ४
प्राचीन काल की एक वर्णसंकर जाति जो वैदेह पिता और

अयोगव माता से उत्पन्न कही गई है। इसका काम दिन गत
को घड़ियों को पुकारकर बताना था।

मैत्रेयिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मित्र के साथ युद्ध। मित्रों या दोस्तों
के बीच की लड़ाई (को०)।

मैत्रेयी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ याज्ञवल्क्य की स्त्री का नाम जो बहू
वादिनी और बड़ी पढिता थी। २ अहल्या का नाम।

मैत्र्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मित्रता। दोस्ती।

मैथिल^१—वि० [सं०] १ मिथिला देश का। २ मिथिला सववी।

मैथिल^२—सञ्ज्ञा पुं० १ मिथिला देश का निवासी। २ राजा जनक का
एक नाम।

मैथिललिपि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मिथिला देश या प्रात की लिपि।

विशेष—मिथिला (तिरहुत) देश के ब्राह्मणों की लिपि, जिसमें
संस्कृत ग्रंथ लिखे जाते हैं, 'मैथिल' कहलाती है। यह लिपि
वस्तुतः बंगला का किंचिद् परिवर्तित रूप ही है और इसका
बंगला के साथ वैसा ही संबंध है जैसा कि कर्षी का नागरी से
है।—भा० प्रा० लि०, पृ० १३१।

मैथिली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मिथिला देश के राजा की कन्या,
जानकी। सीता। २ मिथिला की भाषा।

मैथुन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ स्त्री के साथ पुरुष का समागम।
सभोग। रतिक्रीडा। २ विवाह मस्कार (को०)। ३ अग्न्या-
घान (को०)।

यौ०—मैथुनगमन = सभोग। रतिक्रीडा। मैथुनज्वर = कामज्वर।
मैथुनवैराग्य = रति या सभोग से विरत हो जाना। इन्द्रिय-
निग्रह।

मैथुनिक—वि० [सं०] १ मैथुन से संबंध रखनेवाला। २ स्त्री और
पुरुष अथवा दोनों के आपसी व्यवहार या सपर्क से संबंध
रखनेवाला (को०)।

मैथुनिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वैवाहिक संबंध (को०)।

मैथुनीभाव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सभोग। रतिक्रिया।

मैथुन्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गाधर्व विवाह।

मैदा—सञ्ज्ञा पुं० [प्रा० मैदह्] बहुत महीन आटा। उ०—नेह मौन
छवि मधुरता मैदा रूप मिलाय। बेंचत हलवाई मदन हलुआ
सरस बनाय।—रसनिधि (शब्द०)।

मुहा०—मैदे की कोई = अत्यंत कोमल। मुनायम। (उदर)।

मैदान—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ धरती का वह लंबा चौड़ा भाग
जो समतल हो और जिसमें पहाड़ी या घाटी आदि
न हो। दूर तक फैली हुई सपाट भूमि। उ०—जब कड़ी
कोशल नगर तें मैदान माहि वरात। तब भयो देवन भोर
मानहु सिधु द्वितिय देखात।—रघुराज (शब्द०)।

मुहा०—मैदान छोड़ना या फरना = (१) किसी काम के लिये बीच
में कुछ जगह खाली छोड़ना। (२) मैदान जना = शौवादि के
लिये जाना। (विशेषतः बस्ती के बाहर)।

२ वह नवी चौड़ी भूमि जिसमें कोई खेल खेला जाय प्रयत्न इसी

प्रकार का और कोई प्रतियोगिता या प्रतिद्वन्द्विता का काम हो ।
उ०—(क) चहुँ दिसि आव अलोपत भानू । अब यह गोय यही
मैदानू ।—जायसी (शब्द०) । (ख) श्री मनमोहन खेलत
चौगान । द्वारावती कोट कचन मे रच्यो रुचिर मैदान ।—सूर
(शब्द०) ।

मुहा०—मैदान में आना = मुकाबले पर आना । प्रतियोगिता या
प्रतिद्वन्द्विता के लिये सामने आना । उ०—ग्रग आउ मैदान
ज्वान मरदुन मुष जोरहि ।—पृ० रा०, ६४।१४०। मैदान में
उतरना = कुपती के लिये अखाड़े में आना । कार्यक्षेत्र में
आना । मैदान साफ होना = मार्ग में कोई बाधा आदि न
होना । मैदान मारना = प्रतियोगिता में जीतना । खेल, बाजी
आदि में जीतना ।

३ वह स्थान जहाँ लड़ाई हो । युद्धक्षेत्र । रणक्षेत्र ।

मुहा०—मैदान करना = लड़ना । युद्ध करना । उ०—जेहि पर
चडि करि मै मैदाना । जीतहुँ सकल वीर बलवाना ।—विश्राम
(शब्द०) । मैदान छोड़ना = लड़ाई के स्थान से हट जाना ।
मैदान बदना = लड़ने या बलपरीक्षा के लिये दिन, स्थान
नियत करना । मैदान मारना = विजय प्राप्त करना । मैदान
हाथ रखना = लड़ाई में विजयी होना । जीतना । मैदान होना =
युद्ध होना ।

४ किसी पदार्थ का विस्तार । ५ रत्न आदि का विस्तार ।
जवाहिर की लड़ाई चौड़ाई । (जौहरी) ।

मैदानबाजी—सब्बा खी० [फा० मैदान + बाजी] लड़ाई । युद्ध । उ०—
हम दोनों की जिंदगी के आखिरी साल मैदानबाजी में गुजरे
और आज उसका यह अजाम हुआ ।—काया०, पृ० ३३४ ।

मैदानी—वि० [फा०] १ मैदान से संबंधित । मैदान का । उ०—
ज्यो मैदानी रुख अकेला डोलि ए रे ।—कवीर श०, पृ० १२६ ।
२ समतल ।

मैदानेजग—सब्बा पुं० [फा० मैदान + ए + जग] लड़ाई का मैदान ।
युद्धक्षेत्र । रणभूमि । उ०—जानिव औरत को मैदानेजग
छोड ।—कुकुर०, पृ० ४ ।

मैदा लकड़ी—सब्बा खी० [सं० मेदा + हि० लकड़ी] एक प्रकार की
जड़ी जो औषध के काम में आती है ।

विशेष—यह सफेद रंग की और बहुत मुलायम होती है । वैद्यक
में इसे मधुर, शीतल, भारी, घातुबधक, और पित्त, दाह, ज्वर
तथा खाँसी आदि को दूर करनेवाली माना है ।

मैन—सब्बा पुं० [सं० मदन, प्रा० मयण, मइण] १ कामदेव । मदन ।
उ०—(क) जा संग जागे ही निसा जासे लागे नैन । जा पग
गहि मात मैन भैं मैन विवस सो मैन ।—रामसहाय (शब्द०) ।
(ख) मैन फिरगी की मनी छूटन लागी तोप ।—ब्रजनिधि ग्र०,
पृ० १६ । २ मोम । उ०—(क) मैन के दशन कुलिस के
मोदक कहत सुनत वीराई ।—तुलसी (शब्द०) (ख) मैन वलित
नव वसन सुदेश । भिदत नहीं जल ज्यो उपदेश ।—केशव

(शब्द०) । (ग) श्याम रंग रंगे रंगिले नैन । धोए छुटत नहीं यह
कैसेहु मिलै पिधिल ह्वै मैन ।—सूर (शब्द०) । ३ राल में
मिलाया हुआ मोम जिससे पीतल या ताँबे की मूर्ति बनानेवाले
पहले उसका नमूना बनाते हैं और तब उस नमूने पर से उसका
साँचा तैयार करते हैं ।

मैन^२—सब्बा पुं० [अं०] मनुष्य । पुरुष । जैसे, पुलिस मैन । मशीन
मैन ।

मैन आफ वार—सब्बा पुं० [अं०] लडाऊ जहाज । युद्धपोत ।
लडाकू जहाज ।

मैनका—सब्बा खी० [सं० मेनका] दे० 'मेनका' । उ०—मैन कामिनी
के मैनका हू के न रूप रीके, मैं न काहू के सिखाएँ आनो मन
मान री ।—मति० ग्र०, पृ० २६३ ।

मैनकामिनी—सब्बा खी० [सं० मदन, प्रा० मयणनी हिं० मैन +
कामिनी] कामदेव की स्त्री । रति । उ०—मैन कामिनी के
मैनकाहू के न रूप रीके, मैं न काहू के सिखाएँ आनो मन मान
री ।—मतिराम (शब्द०) ।

मैनडेट—सब्बा पुं० [अं०] आदेश । हुकम । जैसे,—कांग्रेस से ऐसा
करने का मैनडेट मिला है ।

मैनडेटरी—वि० [अं०] जिसमें आदेश हो । आदेशात्मक । जैसे—
कांग्रेस का वह प्रस्ताव मैनडेटरी है ।

मैनफर—सब्बा पुं० [सं० मदनफल] दे० 'मैनफल' ।

मैनफल—सब्बा पुं० [सं० मदनफल, प्रा० मयणफल] मम्बोले आकार
का एक प्रकार का भाइदार और कंटीला वृक्ष ।

विशेष—इस वृक्ष की छाल खाकी रंग की, लकड़ी सफेद अथवा
हलके रंग की, पत्ते एक से दो इंच तक लंबे और अंडाकार
तथा देखने में चिड़चिड़े के पत्तों के समान, फूल पीलापन लिए
सफेद रंग के पाँच पखडियोवाले और दो या तीन एक साथ
होते हैं । इसमें अखरोट की तरह के एक प्रकार के फल
लगते हैं जो पकने पर कुछ पीलापन लिए सफेद रंग के होते
हैं । इसकी छाल और फल का व्यवहार औषधि के रूप में
होता है ।

२ इस वृक्ष का फल जिसमें दो दल होते हैं और जिसके बीज
विहीदाने के समान चिपटे होते हैं ।

विशेष—इस फल का गूदा पीलापन लिए लाल रंग का और स्वाद
कड़ुवा होता है । इस फल को प्रायः मछुवे लोग पीसकर
पानी में डाल देते हैं, जिससे सब मछलियाँ एकत्र होकर एक ही
जगह पर आ जाती है और तब वे उन्हें सहज में पकड़ लेते
हैं । यदि ये फल वर्षा ऋतु में अन्न की राशि में रख दिए जायं,
तो उसमें कीड़े नहीं लगते । वमन कराने के लिये मैनफल बहुत
अच्छा समझा जाता है । वैद्यक में इसे मधुर, कडुवा, हलका,
गरम, वमनकारक, रूखा, भेदक, चरपरा, तथा विद्रधि, जुकाम,
घाव, कफ, आनाह, सूजन, त्वचारोग, विपविकार, ववासीर
और ज्वर का नाशक माना है ।

मैनमय^७—वि० [सं० मदन, हि० मैन + मय] कामातुर । कामेच्छा से युक्त । उ०—मैन सुख दैन, मन मैनमय लेखियो ।—केशव (शब्द०) ।

मैनरत्न—सज्ञा पुं० [हि० मैनकर] दे० 'मैनफल' ।

मैनशिल—सज्ञा पुं० [सं० मन शिला] दे० 'मैनसिल' ।

मैनसिल—सज्ञा पुं० [सं० मन शिला] एक प्रकार की धातु जो मिट्टी की तरह पीली होती है और जो नेपाल के पहाड़ों में बहुतायत से होती है ।

विशेष—वैद्यक में इसे शोथकर अनेक प्रकार के रोगों पर काम से लाते हैं और इसे गुह, वर्णकर, सारक, उष्णवीर्य, कटु, तिक्त, स्निग्ध और विष, श्वाम, कुष्ठ, ज्वर, पांडु, कफ तथा रक्तदोषनाशक मानते हैं ।

पर्या०—मनोशा । नागजिह्वा । नैपाली । शिला । कल्याणिका । रोगशिला । गोना । दिव्यौषधी । कुन्तो । मनोगुहा ।

मैनस्त्रिपट—सज्ञा पुं० [अं०] वह पुस्तक या कागज जो हाथ या कलम से लिखा हुआ हो, छपा हुआ न हो । हस्तलिखित प्रति । पांडुलिपि । मूल हस्तलेख । हस्तलेख ।

मैना^१—सज्ञा स्त्री० [सं० मना, प्रा० मयणा] काले रंग का एक प्रसिद्ध पक्षी जिसकी चोंच पीली या नारंगी रंग की होती है और जो सिखाने से मनुष्य की सी बोली बोलने लगती है । यह इसी बोली के लिये प्रसिद्ध है । मदनशलाका । सारिका । सारी ।

मैना^२—सज्ञा स्त्री० [सं० मेनका] पार्वती जी की माता, मेनका ।

मैना^३—सज्ञा पुं० [देश०] १ एक जाति जो राजपूताने में पाई जाती है और 'मीना' कहलाती है । उ०—(क) कुच उतग गिरिवर गह्यो मैना मैन मवास ।—विहारी (शब्द०) । (ख) सुकवि गुलाब कहै अधिक उपाधिकारी मैना मारि मारि करे अखिल अभूत काज ।—गुलाब (शब्द०) ।

मैनाक—सज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणानुसार एक पर्वत का नाम जो हिमालय का पुत्र माना जाता है । कहते हैं, इंद्र से डरकर यह पर्वत समुद्र में जा छिपा था, इस कारण यह अब तक सपन्न है । लफा जाते समय समुद्र की आज्ञा से इसने हनुमान जी को आश्रय देना चाहा था । उ०—सिंघु वचन सुनि कान तुरत उठ्यो मैनाक तव ।—तुलसी (शब्द०) ।

पर्या०—द्विष्यनाभ । सुनाभ । द्विमवत् सुत ।

२ हिमालय की एक ऊँची चोटी का नाम । ३ एक दानव ।

मैनाकस्वरा—सज्ञा स्त्री० [सं० मैनाकस्वर] पार्वती [को०] ।

मैनाल—सज्ञा पुं० [सं०] मधुवा [को०] ।

मैनावली—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक वर्षावृत्त जिसका प्रत्येक चरण चार तगण का होता है ।

मैनिक—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मैनाल [को०] ।

मैनिफेस्टो—सज्ञा पुं० [अं०] किसी व्यक्ति, सत्या या सरकार का किसी सार्वजनिक विषय, नीति अथवा कार्य पर अभिमत वक्तव्य या घोषणा । वक्तव्य । जैसे,—देश के कितने ही प्रमुख नेताओं

ने एक मैनिफेस्टो निकाला है, जिसमें सरकार की वर्तमान दमन नीति की निंदा की गई है, और लोगों से कहा गया है कि वे इसके विरुद्ध जोरों का आंदोलन करें ।

मैनेजर—सज्ञा पुं० [अं०] प्रबंधक । व्यवस्थापक । उ०—मैनेजर और बड़े माहव को सलूट देते हैं ।—फूलो, पृ० २४ ।

मैमत^७—वि० [सं० मदमत] १ मदोन्मत्त । मतवाला । उ०—कु भ लमत दोउ गज मैमत ।—(शब्द०) । २ ग्रहकारी । अभिमानी । उ०—(क) वारि वैस गई प्रीति न जानी । तल्ल भई मैमत भुलानी ।—जायसी (शब्द०) । (ख) अरी वारि मैमत वचन बोलत जो अनैरो ।—सूर (शब्द०) ।

मैमत^१—वि० [सं० मदमत] दे० 'मैमत' ।

मैमत^७—सज्ञा स्त्री० [सं० ममत्व] ममता ।

मैया—सज्ञा स्त्री० [सं० मातृका, प्रा० मातृमा, माइमा] माता । माँ । उ०—कहन लागे मोहन मैया मैया ।—सूर (शब्द०) ।

मैयार^१—सज्ञा पुं० [हि० मटियार] एक प्रकार की मटियार जमीन जो बहुत खराब होती है ।

मैयार^२—सज्ञा पुं० [अं०] पाठ्यक्रम । कोर्स ।

मैर^१—सज्ञा पुं० [देश०] सोनारों की एक जाति ।

मैर^२—सज्ञा स्त्री० [सं० मुदर, प्रा० मिन्नर (= क्षणिक)] साँप के विष की लहर । उ०—तोहिं बजे विष जाइ चढि आइ जात मन मैर । बसी तेरे वर को घर घर सुनियत घेर ।—रसनिधि (शब्द०) । (ख) खेलि कै फागु भली विधि सो तन सो दग देखिए मैर मढी सो ।—(शब्द०) ।

मैरा—सज्ञा पुं० [सं० मयर, प्रा० मयड] खेतों में वह छाया हुआ मचान जिसपर बैठकर किसान लोग अपने खेतों की रक्षा करते हैं ।

मैरीन^१—सज्ञा पुं० [अं०] १ वह सैनिक जो लडाऊ जहाज पर काम करता हो । २ किसी देश या राष्ट्र की समस्त नौसेना । नौसेना । जलसेना । जैसे, रायल मैरीन । ३ किसी देश के समस्त जहाज ।

मैरीन^२—वि० समुद्र मववी । जल संबंधी । नांमेना सबधी । जैसे, मैरीन कोर्ट ।

मैरेय—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मदिरा । शराब । २ गुड़ और धी के फूल की बनी हुई एक प्रकार की प्राचीन काल की मदरा । ३ एक में मिला हुआ आसव और मद्य । जिसमें ऊपर स शब्द भी मिला दिया गया हो ।

मैलद—सज्ञा पुं० [सं० मैलिनद, प्रा० मंलद] अमर । भौरा ।

मैला^१—वि० [सं० मलिन, प्रा० मइल] मलिन । मंला । विशेष दे० 'मंला' ।

मैल^१—सज्ञा पुं० १ गर्द, धूल, किट्टू आदि जिसके पडने या जमने से किसी वस्तु की शोभा या चमक दमक नष्ट हो जाती है । मलिन करनेवाली वस्तु । मल । गदगी । जैसे,—(क) घड़ी के पुरजों

मे बहुत मैल जम गई है। (ख) श्रांख या कान आदि मे मैल न जमने देनी चाहिए।

यौ०—मैलखोरा।

मुहा०—हाथ की मैल = तुच्छ वस्तु, जिसे जब चाहे तब प्राप्त कर लें। जैसे,—रुपया पैसा हाथ की मैल है।

२. दोष। विकार। जैसे—मन मैल मिटे, तन तेज वढे, करे भग श्रम को मोटा। (गीत)।

मुहा०—मन मे मैल रखना = मन में किसी प्रकार का दुमवि या वैमनस्य आदि रखना।

मैल^१—सञ्ज्ञा पुं० [दृश०] फीलवानो का एक सकेत जिसका व्यवहार हाथी को चलाने में होता है।

मैलखोरा^१—वि० [हि० मैल + फा० खोर (= खानेवाला)] (रग आदि) जिसपर जमी हुई मैल जल्दी दिखाई न दे। मैल को छिपा लेनेवाला (रग)। जैसे—काला या खाकी रग मैलखोरा होता है।

मैलखोरा^२—सञ्ज्ञा पुं० १ वह वस्त्र जो शरीर की मैल से शेष कपडो की रक्षा करने के लिये अदर पहना जाय। जैसे गजों, कमीज आदि। २ काठो या जीन के नीचे रखा जानेवाला नमदा। ३ सावुन।

मैला^१—वि० [सं० मलिन, प्रा० महल] १ जिसपर मैल जमी हो। जिसपर गर्द, धूल या कीट आदि हो। जिसकी चमक दमक मारी गई हो। मलिन। अस्वच्छ। साफ का उलटा।

यौ०—मैला कुचैला।

२ विकारयुक्त। सदोष। दूषित। ३ गदा। दुर्गयुक्त।

मैला^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मल] गलीज। गू। विष्टा। २ कूडाकर्कट। ३. दे० मैल'।

मैलाकुचैला—वि० [हि० मैला + सं० कुचेल (= गंदा वस्त्र)] १ जो बहुत मैल कपडे पहन हुए हो। २ बहुत मैला। गदा।

मैलापन—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मैला + पन (प्रत्य०)] मैला होने का भाव। मलिनता। गदापन।

मैलेयक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का हीन वा साधारण रत्न [को०]।

मैवार^१—वि० [दृश० मै + वार] मद वा अहंकार से युक्त। घमंडी। उ०—देवा आहव आगमे, माहव का मैवार।—रा० रू०, पृ० १३७।

मैवास—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मवास] दे० 'मवास'। उ०—गए पर्वत वक मैवास भार।—ह० रामो, पृ० ६८।

मैशिनरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १. किमी यंत्र या कल के पुर्जे। २. यंत्र। कल। मशीन।

मैहमाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० महिमन्] दे० 'महिमा'। उ०—साह क मोटी के नाह मर जान तही की मैहमाँ ओ मन मे रहे जावे।—गोदाव आभे० ग्र०, पृ० ३५६।

मैहरा^१—सञ्ज्ञा पुं० हि० महो (= मट्टा)] वह तलछट जो घो वा

मक्खन को गरम करने पर नीचे बँठ जाती है। घो वा मक्खन तपाने से निकला हुआ मट्टा।

मैहर^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मातृगृह] दे० 'मैहर'।

मैहर^३—सञ्ज्ञा स्त्री० विवाह के अवसर पर किया जानेवाला मातृका-पूजन आदि कृत्य।

मैहर^४—सञ्ज्ञा पुं० मध्यप्रदेश मे रीवाँ राज्यातर्गत एक प्रसिद्ध स्थान।

विशेष—यहाँ भगवती दुर्गा की एक अतिप्राचीन और प्रसिद्ध मूर्ति है। लोग दूर दूर से उसका दर्शन करने आते हैं। चन्दन की यह कुलदेवी भी कही गई हैं। राजा परमाल के प्रमुख सामंत वीर आल्हा और उदल इनके उपासक थे। आज भी यह कहा जाता है कि अमर आल्हा भगवती का रात्रि को पूजन करता है।

मैहल^५, मैहैल^६—सञ्ज्ञा पुं० [अ० महल] महल। आवास। उ०—(क) रिपी मन्न मैहल्ल भोजन कज्जी।—पृ० रा०, २।२४३। (ख) रग मैहल सकेत सुगल करि, टहलन करो गहैनी।—गोदाव आभे० ग्र०, पृ० ३८६।

मौ^१—अव्य० [सं० स्मिन्] दे० 'मै'। उ०—तनपोपक नारि नग सिगरे। परनिदक ते जग मो बगरे।—तुलसी (शब्द०)।

मौ^२—सर्व० [सं० मध्यम्] खडी बोली के 'मुझ' के समान व्रज और अवधी मे 'मै' का वह रूप जो उसे कर्ताकारक के अतिरिक्त और किमी कारक का चिह्न लगने के पहले प्राप्त होता है। जैसे, मयु मोको, मोपै, इत्यादि। उ०—(क) साहित्य की आग्या है मोर्क।—रामानंद०, पृ० २६। (ख) काँपी भौंह पुहुप पर दये। जनु मसि गहन तैस मोहि लेवे।—जायसी ग्र०, पृ० १४३।

मौंगरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुद्गर] [स्त्री० मांगरी] काठ का बना हुआ एक प्रकार का हथौडा जिससे मेल इत्यादि ठोकी जाती है।

मौंगरा^२—सञ्ज्ञा पुं० १ दे० 'मौंगरा'। २ दे० 'मुंगरा'।

मौंगला—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] मध्यम श्रेणी का और साधारणतः बाजार मे मिलनेवाला केसर। वि० दे० 'केसर'।

मौंच^३—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोछ] दे० 'मूँछ'। उ०—देखिए इसको मोच का रेख आ रहा है।—मैना० पृ० १३०।

मौञ्ज^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मञ्जु] दे० 'मूँछ'। उ०—इसके महाने स्वदेन तक श्रीमान् मोछो पर ताव देते चले जा नरते हैं।—बालमुकुन्द गुप्त (शब्द०)।

मौंडीकाटा^५—वि० [हि० मूँडी + काटना] स्त्रियों द्वारा पुण्यों के लिये प्रयुक्त एक गाली। उ०—मुए तलपट की सब गुनकर भलाई, मौंडीकाटे को मे लिखन चुलाई।—दक्खिनी, पृ० २५१।

मौंढा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूँडा, मूँडा (= आचार)] १ घाम, मरकटे या बेंत का बना हुआ एक प्रकार का ऊँचा गोलकार घामन जो प्रायः तरपाई न मिलाया खुलता होता है। २ बाढ़ के जाट के पास का बना हुआ घेरा। कंबा।

यौ०—सीना मौंदा = छाती और कंबा।

मौ^६—सर्व [सं० मम] १ मेरा। उ०—मो नपति यदुगते नदा विपति विदारनहार।—विहारी (शब्द०)। २ अवधी मोर

ब्रजभाषा में 'मैं' का वह रूप जो उसे कर्ताकारक के अतिरिक्त और किसी कारक का चिह्न लगने के पहले प्राप्त होता है। जैसे, मोकों, मोमो, इत्यादि।

मोक्षजिज्ञ—वि० [अ० मुक्षजिज्ञ] प्रतिष्ठित। इज्जतदार। उ०—मोक्षजिज्ञ हुए खाक खाकी हुए।—कवीर म०, पृ० १३०।

मोई^१—सब्बा खी० [हि० मोना] धी में सना हुआ आटा जो छींट की छपाई के लिये काला रंग बनाने में कमीस और धी के फूलों के काढ़े में डाला जाता है।

मोई^२—सब्बा खी० [दश०] एक प्रकार की जड़ी जो मारवाड देश में होती है। कहीं कहीं इसे 'ग्वालिया' भी कहते हैं।

मोक^१—सब्बा पुं० [सं०] केंचुल [को०]।

मोक^२—सब्बा पुं० [सं० मोक्ष, प्रा० मोक्ख] मुक्ति। छूटना। उ०—ताकहँ कहा मोक हम जाना। जो शरीर के रूप भूलाना।—इद्रा०, पृ० १५६।

मोकदमा^१—सब्बा पुं० [अ० मुकदमद्] दे० 'मुकदमा'।

मोकना^१—क्रि० स० [सं० मुक्त, हि० मुकना] १ छोड़ना। परित्याग करना। उ०—कपित स्वास त्रास अति मोकति ज्यो मृग केहरि कोर।—सूर (शब्द०)। २. क्षिप्त करना। फेंकना। उ०—ठढयो तहाँ एक वालँ विलोक्यो। रोवयो नही जोर नाराच मोक्यो।—केशव (शब्द०)।

मोकल—वि० [सं० मुक्त, हि० मुकना] छूटा हुआ। जो बँवा न हो। आजाद। स्वच्छंद। उ०—(क) जीवन जरव महा रूप के गरव गति मदन के मद मदमोकल मतग की।—मतिराम (शब्द०)। (ख) गोकुल में मोकल फिरँ गली गली गज प्रेम। ऊषो ह्याँ ते जाउ लै तुम अपनो सब नेम।—रसनिधि (शब्द०)।

मोकलना^(१)—क्रि० स० [सं० मुक्त, हि० मुकना] छोड़ना। भेजना। उ०—चिहँ दिसि मीता मोकल्या, पड पड रा आविया राई। बी० रासो, पृ० १०।

मोकला^१—वि० [सं० मुक्त, हि० मोकल] १ अधिक चौड़ा। कुशादा। २ खुला हुआ। छुटा हुआ। स्वच्छंद। उ०—कावरा सोई सुरमा जिन पाँचो राखे चूर। जिनके पाँचो मोकले तिनसँ साहेव दूर।—कवीर (शब्द०)।

मोकला^२—सब्बा पुं० अधिकता। बहुतायत। ज्यादाती। जैसे,—वहाँ तो पशुओं के लिये चारे पानी का बडा मोकला है।

मोका^१—सब्बा पुं० [दश०] मदरास, मध्य भारत और कुमायूँ के जंगलों में होनेवाला एक प्रकार का वृक्ष। गेठा।

विशेष—इस वृक्ष के पत्ते प्रतिवर्ष झड़ जाते हैं। इसकी लकड़ी कड़ी और सफेदी लिए भूरे रंग की होती है और आरायशी सामान बनाने के काम आती है। खरादने पर इसकी लकड़ी बहुत चिकनी निकलती है और इसके ऊपर रंग और रोगन अधिक खिलता है। इसकी लकड़ी न तो फटती है, न टेढ़ी होती है। यह वृक्ष वर्षा ऋतु में बीजों से उगता है। इसे गेठा भी कहते हैं।

मोका^२—सब्बा पुं० १ दे० 'मोखा'। २. दे० 'मोका'।

मोकामा^१—सब्बा पुं० [पा० मुकाम] दे० 'मुकाम'। उ०—दरगाह में पीर मोकाम सदा, एक गग रह्यो छोडो दिल दाई।—कवीर० रे०, पृ० ४१।

मोक्ष—सब्बा पुं० [म०] १ किमी प्रकार के वचन में छूट जाना। मोचन। छुटकारा। २ शास्त्रों और पुराणों के अनुसार जीव का जन्म और मरण के वचन से छूट जाना। आवागमन से रहित हो जाना। मुक्ति। नजात।

विशेष—हमारे यहाँ दर्शनों में कहा गया है कि जीव भ्रमण के कारण ही बार बार जन्म लेता और मरता है। इस जन्ममरण के वचन से छूट जाने का ही नाम मोक्ष है। जब मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है, तब फिर उसे इस मसार में आकर जन्म लेने की आवश्यकता नहीं होती। शास्त्रकारों ने जीवन के चार उद्देश्य बतलाए हैं—धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष। इनमें से मोक्ष परम अर्थात् अथवा परम पुण्यार्थ कहा गया है। मोक्ष की प्राप्ति का उपाय आत्मतत्त्व या ब्रह्मतत्त्व का मानना करना बतलाया गया है। न्यायदर्शन के अनुसार दुःख का आत्यंतिक नाश ही मुक्ति या मोक्ष है। साध्य के मत से तीनों प्रकार के तापो का समूल नाश ही मुक्ति या मोक्ष है। वेदांत में पूर्ण आत्मज्ञान द्वारा मायामय सं रहित होकर अपने शुद्ध ब्रह्मस्वरूप का बोध प्राप्त करना मोक्ष है। तात्पर्य यह है कि सब प्रकार के मुख दुःख और मोह आदि का छूट जाना ही मोक्ष है। मोक्ष की कल्पना स्वर्ग नरक आदि की कल्पना से पीछे की और उसकी अपेक्षा विशेष सस्फुट तथा परिभाजित है। स्वर्ग की कल्पना में यह आवश्यक है कि मनुष्य अपने किए हुए पुण्य वा शुभ कर्म का फल भागने के उपरांत फिर इस ससार में आकर जन्म ले, इसमें उसे फिर अनेक प्रकार के कष्ट भोगने पड़ेंगे। पर मोक्ष की कल्पना में यह बात नहीं है। मोक्ष मिल जाने पर जीव सदा के लिये सब प्रकार के बंधनों और कष्टों आदि से छूट जाता है।

३ मृत्यु। मौत। ४. पतन। गिरना। ५. पाँडर का वृक्ष। ६. छोड़ना। फेंकना। जैसे, वाणमोक्ष (को०)। ७. डोला या वधनमुक्त करना। जैसे, वेणीमोक्ष, नीवीमोक्ष (को०)। ८. नीचे गिराना या वहाना। जैसे, वाप्यमोक्ष, अशुमोक्ष (को०)।

मोक्षक—सब्बा पुं० [सं०] १ मोखा नामक वृक्ष। २. मोक्ष करने वाला। वह जो मोक्ष करता हो।

मोक्षण—सब्बा पुं० [सं०] [वि० मोक्षणीय मोक्षित, मोक्ष्य] १. मोक्ष देने की क्रिया। २. छोड़ना। मुक्त करना। ३. क्षेपण (को०)। ४. गिराना (को०)।

मोक्षद—वि० सब्बा पुं० [सं०] मोक्ष देनेवाला। मोक्षदाता।

मोक्षदा^१—सब्बा खी० [सं०] १ अग्रहन सुदी एकादशी तिथि।

मोक्षदा^२—वि० खी० मोक्ष देनेवाली।

मोक्षदात्री—वि० खी० [सं०] मोक्ष देनेवाली।

मोक्तदायिनी—वि० स्त्री० [सं०] दे० 'मोक्तदात्री' [को०] ।
 मोक्तदेव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चीनी यात्री ह्वेनसांग का भारतीय नाम [को०] ।
 मोक्तद्वार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सूर्य । २ काशी तीर्थ ।
 मोक्तधर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत शांतिपर्व का एक अण [को०] ।
 मोक्तपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ताल के मुख्य माठ भेदों में से एक ।
 इसमें १६ गुरु, ३२ लघु, और ६४ द्रुत मात्राएँ होती हैं ।
 मोक्तपुरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] काची पुरी का एक नाम [को०] ।
 मोक्तविद्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वेदात्त शास्त्र ।
 मोक्तशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आध्यात्मविद्या ।
 मोक्तशिला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जैन मतानुसार वह लोक जहाँ जैन धर्मावलम्बी साधु पुरुष मोक्त का सुख भोगते हैं । स्वर्ग । उ०—
 ज्यौ घटनाश भए घट व्योम सुलान भयो पुनि हं नभ माँही ।
 र्थीं मुनि मुक्ति जहाँ वपु छाडत सुदर मोक्त शिला कहूँ काहीं ।—
 सुदर० ग्र०, भा० २, पृ० ६३२ ।
 मोक्तसाधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जिससे मोक्त प्राप्त हो । मोक्त का
 उपाय वा साधन [को०] ।
 मोक्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मोक्तदा' ।
 माक्ती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मोक्तिन्] १ मोक्त पाने का इच्छुक । २.
 मुक्त [को०] ।
 मोक्ष्य—वि० [सं०] जो मोक्त के योग्य हो । माक्त का अधिकारी ।
 मोख(पुं०)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोक्ष, प्रा० मोक्ख] १ दे० 'मोक्त' ।
 मुक्ति । उ०—(क) मोहू दीजै मोख ज्यौं अनेक अधमन दियो ।
 —विहारी (शब्द०) । २ छुटकारा । वधनमुक्ति । उ०—रानी
 धर्म सार पुनि साजा । वदि माख जेहि पावहि राजा ।—जायसी
 (शब्द०) ।
 मोखा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुख] दीवार आदि में बना हुआ छेद जिसके
 द्वारा धूँआँ निकलता है और प्रकाश तथा वायु आती है । छोटी
 खिडकी । झरोखा । उ०—(क) मोखा और झरोखा लखि
 लखि हग दाउ वरसत ।—व्यास (शब्द०) । (ख) जाली
 झरोखो मोखो से धूप की सुगंध आय रही है ।—लख्मणलाल
 (शब्द०) ।
 मोखा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुक्क] एक वृक्ष । दे० 'मुक्क' ।
 मोगरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुद्गर] १ एक प्रकार का बहुत बढिया
 और बड़ा बेला का पुष्प । उ०—मज्जुल मौलसिरी मागरा मधु-
 मालती के गजरा गुहं रापै ।—(शब्द०) । २ दे० 'मागरा' ।
 मोगल—सञ्ज्ञा पुं० [तु० मुगल, फ़्रा० मुगल] दे० 'मुगल' ।
 मोगली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक जगली वृक्ष जो गुजरात में अविकता
 से पाया जाता है और जिसकी छाल चमड़ा सिंभाने के काम
 में आती है ।
 मोगली—वि० [फ़्रा० मुगल] मुगल सवधी । मुगलों का । उ०—काबुल
 गए पिया मोर आए वालें मोगली वानो । आव आव कहत मार
 गइलें, सटिया तर है पानी ।

मोगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजपूताने की एक जाति का नाम । उ०—
 सरदारो को चाहिए कि वे चारो, डकैना, योगियों, वापरियों,
 मोगियों और वागियों को आश्रय न दें ।—राज० इति०, पृ०
 १०६५ ।
 मोघ—वि० [सं०] निष्फल । व्यर्थ । चूकनेवाला । उ०—पै यट
 वेणव धनु की सायक । कजहुं न मोघ होन के लायक ।—रघुराज
 (शब्द०) ।
 मोघ—सञ्ज्ञा पुं० घेरा । बाड । बाटा [को०] ।
 मोघकर्मा—वि० [सं० मोघकर्मन्] निरर्थक काम म लगा हुआ [को०] ।
 मोघपुष्पा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वन्या म्नी [को०] ।
 मोघा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पाटल का फूल । २ मिट्टा [को०] ।
 मोघिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह मोटी, मजबूत और अधिक चौड़ी
 नरिया जो खपरूनी छाजन में बड़े पर मंगरा बाँधने में काम
 आती है ।
 मोघोली—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीर, परकोटा ।
 माध्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विफलता । अकृतकार्यता । नाशमयावी ।
 मोच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सेमल का पेड़ । २ केला । ३ पाडर
 का पेड़ । ४ शोभाजन वृक्ष [को०] ।
 मोच—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शरीर के किसी अंग के जोड़ की नस का
 अपने स्थान से इधर उधर स्थिर रहना । चोट या आघात
 आदि के कारण जोड़ पर की नस का अपने स्थान से हट जाना
 (इसमें वह स्थान सूज जाता है और उममें बहुत पीड़ा होती
 है) जैसे,—उनके पाँव में मोच आ गई है ।
 मोचक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. छुड़ानेवाला । २ सेमल का पेड़ । ३
 केला । ४ मुक्ति । मोक्ष [को०] । ५ विषय वामना से मुक्त
 मन्यारी । ६ एक प्रकार का उपानह [को०] ।
 मोचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वधन आदि से छुड़ाना । छुटकारा
 देना । मुक्त करना । २ रिहा करना । वधन आदि त्यागना ।
 छुड़ाना । ३ दूर करना । हटाना । जँम, मकटनाचन, पाप-
 माचन, पिशाचमोचन । ४ रहित करना । ले लेना । जैसे,
 वस्त्रमोचन ।
 मोचना—क्रि० सं० [सं० मोचन] १ छाडना । २ गिराना ।
 बहाना । उ०—(क) मोच मति करै मति माच अनू विनापण,
 कहै रघुनाथ मातमप भेष रका का ।—रघुनाथ (शब्द०) ।
 (ख) सरसीरट लोचन मोचन नार चित्त रघुनाथक सीध पै है ।
 —तुलसी (शब्द०) । ३ छुड़ाना । मुक्त करना । उ०—अव
 तिनक वधन मोचहिने ।—सूर (शब्द०) ।
 मोचना—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोचन] [सं० मोचना] १. नाहारा
 का वह शौजार जिनमें व लाह के छोटे छोट टुकड़े उजाले हैं ।
 २ हजामों का वह शौजार जिससे वे बान उखाडते हैं ।
 मोचनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कंठकारो । भटकटया [को०] ।
 मोचयिता—वि० [सं० मोचयितृ] मोचन करवावा । छुटकारा
 दिलानेवाला [को०] ।

मोचरस—सज्ञा पुं० [सं०] मेगल वृक्ष का गोद । सेमर का गोद ।
मोचा सज्ञा स्त्री० [सं०] १ केला । २ मेगल वृक्ष (को०) । ३. नीली वा नील का पाँया (को०) । ४. महिजन । मोभाजन (को०) ।
मोचाट—सज्ञा पुं० [सं०] १ तेला । २ केले की पेशी के बीच का कोमल भाग । केले का गाभ । ३ चदन (को०) । ४ गण्डा जीरक । बाला जीरा (को०) ।
मोचिक—सज्ञा पुं० [सं०] वह जो उपाना बनाता हो । मोरी (को०) ।
मोचिनि—सज्ञा स्त्री० [सं०] मोची की स्त्री । उ०—मोचिनि वरन संकोचिनि हीरा गांगन हो ।—तुलसी ग०, पृ० ४ ।
मोचिनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] पाई का पीषा ।
मोची—सज्ञा पुं० [सं० मुञ्चक या फा० माज' (=जूता)+टं (प्रत्य०) (=चमडा) छुटाना] चमड़े का काम बनानेवाला । वह जो जूते आदि बनाने का व्यवसाय करता हो ।
मोची—वि० [सं० मोचिन्] [वि० स्त्री० मोचिनी] १. छुटनेवाला । २. दूर करनेवाला ।
मोची—सज्ञा स्त्री० [सं०] हिलमोचिका शाक (को०) ।
मोच्छ—सज्ञा पुं० [सं० मोक्ष] २० 'मोक्ष' ।
मोछ—सज्ञा स्त्री० [हिं०] २० 'मूछ' ।
मोछ—सज्ञा पुं० [सं० मोक्ष] २० 'मोक्ष' । उ०—नाहि पट भरि सोवही जानहि छठात न मोछ ।—भोगा० ग०, पृ० ६४ ।
मोज—उच्चा स्त्री० [अ० मोज] ३० 'मोज' । उ०—रोगघन्त होन से भ्रत समय मुख से प्रमगवज वा जंमे मोज आर्द्ध, कह डाली ।—मुदर० ग० (जी०), भा० १, पृ० १२५ ।
मोजड़ी—सज्ञा स्त्री० [शप०, देशी] उपानह । जूती । पादशालिका । उ०—(क) चूटइ जीन न मोजी कटया नही केकाण । माजनिर्था सानद नही नालद आही ठाण ।—टोना०, दू० ३७५ । (ख) छुट तिहि बेर मनग गेल देखन तौ धायी, एक मोजरी माडि पनग फन आनि लुवायो ।—पृ० रा०, १५०६ ।
मोजरा—सज्ञा पुं० [अ० मुजरा] २० 'मुजरा' । उ०—लेत मोजरा सवहि को जहँ लौ जीव जहान ।—धरनी० वानी, पृ० ५६ ।
मोजा—सज्ञा पुं० [फा० मोजह] १. पँरो में पहनने का एक प्रकार का बुना हुआ कपड़ा जिसमें पैर के तलवे से लेकर पिंडली या घुटने तक ढक जाते हैं । पायतावा । जुराबि । २. पैर में पिंडली के नीचे का वह भाग जो गिट्टे के आस पास और उसके कुछ ऊपर होता है । ३. कुश्ती का एक पेंच । इसमें जब खिलाड़ी अपने विपक्षी की पीठ पर होता है, तब एक हाथ उसके पेट के नीचे से ले जाकर उसकी बगल में जमाता है और दूसरे हाथ से उसका मोजा या पिंडली के नीचे का भाग पकड़कर उसे उलट देता है ।
मोजा—सज्ञा पुं० [देशी०] उपानह । जूता । उ०—फिरि राय आघ हेवर चढ्यो पहरत मोजे पग डस्यो । भवितव्य वात आघात गति इतनी कहि राजन हस्यो ।—पृ० रा०, १५०६ ।

मोट—सज्ञा स्त्री० [सं० मोट (=गड्ढ) हिं० मोटी] गड्ढी । मोटरी । उ०—(१) जाग मोट गिन बाक आनि तुम वन धी घोष उतारी ।—गूर (ग० २०) । (२) नट त मोग जादिन नर तुटी मुग्धन गी गाट । चुप कणि चागी वरनि गारी पग सगाट ।—तिगरी (ग० २०) । (ग) नाम छोट केा ही निघाट होत गाटे गन, मोट त्रिनु मोट पाव भयो न निगत न ।—तुलसी (ग० २०) ।
मोट—सज्ञा पुं० चमड़ा का भाग जिसे के तारा गिर सीन्ने के लिये गुणों के पानी निकाला जाता है । चरना । घुरा । उ०—मगति प्रोधि कं प्रागगा । उवह मोट नरक की चार ।—कवीर (ग० २०) ।
मोट—वि० [हिं० मोटा] १. जो बारीक न हो । माटा । २. कम मात्रा का । साधारण । उ०—हुँत गदन पट गाट पुराना । दिग शरि ता दान नाना ।—तुलसी (ग० २०) । ३. २० 'माटा' ।
मोट—मोट भर = गड्ढी भर । कष्ट ज्यादा । उ०—नाकं कहां गंधार माट भर बांध गितारी ।—पचह०, पृ० १४ ।
मोटक—सज्ञा पुं० [सं०] विनृतपक्ष म व्यवहार कुरा विवा टुना तुगाह्य जिनके मून घोर अत्रभाग एक धार रहते हैं । यह विनृत न निद्र होता है और विनृतपक्ष में ही प्रसुत है ।
मोटकी—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक रागिनी का नाम ।
मोटन—सज्ञा पुं० [सं०] १. रातु । हवा । २. मसना, मजना या पीमना ।
मोटनक—सज्ञा पुं० [सं०] एक चरितवृत्त जिनके प्रत्येक चरण में एक तगर दो जगण और छत में एक एक लघु गुण गुन मिन-कर ११ अक्षर होते हैं । जैसे, - शाण दजर व वरान मरे । दिग्पाल गयदन दाग लडे । ताप्यो दस दूनट चार वडे । माहि मुन औरन कीन गन ।—वेणर (ग० २०) ।
मोटर—सज्ञा पुं० [अं०] १. एक विशेष प्रकार की कार या यंत्र जिसमें किसी द्रव्य यंत्र आदि का संचालन विद्युत द्वारा होता है । चलानेवाला यंत्र । २. एक प्रकार की प्रविष्ट छोटी गाड़ी जो इस प्रकार के यंत्र की सहायता से चलती है । मोटरकार ।
विशेष—इस गाड़ी में तेल आदि की सहायता से चलनेवाला एक इंजन लगा रहता है जिसका संचालन उसके पहियों से होता है । जब यह इंजन चलाया जाता है तब उसकी सहायता से गाड़ी चलने लगती है । यह गाड़ी पाय सगरी और बोझ होने अथवा खोपने के काम में आती है ।
मोटर—मोटर कार = छोटी मोटर गाड़ी । मोटर । हवागाड़ी । उ० एक मोटर कार द्वार पर आवर रकी ।—गवन, पृ० ११ । मोटर गाड़ी = मोटरकार । मोटर ज़ाइवर = मोटर गाड़ी चलानेवाला । मोटर बोट = मोटर इंजन से चलनेवाली नाव । मोटर साइकिल = मोटर यंत्र में चलनेवाली साइकिल ।
मोटरी—सज्ञा स्त्री० [सं० मोट (बीच), तैलंग मूटा (= गड्ढी)] गड्ढी । उ०—(क) आश्रम वरन कलि विवस, विकल भए,

निज निज मरजाद मोटरी सी डार दी।—तुलसी (शब्द०)।
(ख) अमृत केरी मोटरी सिर से घरी उतारि।—कवीर (शब्द०)।

मोटा^१—वि० [सं० मुष्ट (= मोटा ताजा आदमी) या हि० मोट]
[वि० स्त्री० मोटी] १ जिसके शरीर में आवश्यकता से अधिक मांस हो। जिसका शरीर चरबी आदि के कारण बहुत फूल गया हो। दुबला का उलटा। स्थूल शरीरवाला। जैसे, मोटा आदमी, मोटा बदर। (पुं० २, श्रेष्ठ। वरिष्ठ। उ०—
अयज अनुज सहोदर जोरी, गौर श्याम गूथै मिर चोटा।
नददास बलि बलि इहि मूरति लीला ललित सबहि विधि
मोटा।—नद० ग्रं०, पृ० ३४१।

यो०—मोटा ताजा या मोटा क्लोटा = (१) स्थूल शरीरवाला। (२) जिसकी एक ओर की सतह दूसरी ओर की सतह से अधिक दूरी पर हो। पतला का उलटा। दबीज। दलदार। गाढा। जैसे, मोटा कागज, मोटा कपडा, मोटा तख्ता। ३ जिसका घेरा या मान आदि साधारण से अधिक हो। जैसे, मोटा डडा, मोटा छड, मोटी कलम।

मुहा०—मोटा असामी = जिसके पास अधिक धन हो। अमीर।
मोटा भाग = सौभाग्य। खुशकिस्मती। उ०—सहज संतोषहि पाइए दाहू मोटे भाग।—दाहू (शब्द०)। (ख) सूरदास प्रभु मुदित जसोदा भाग बडे करमन की मोटी।—सूर (शब्द०)।

४ जो खूब चूर्ण न हुआ हो। जिसके कण खूब महीन न हो गए हों। दरदरा। जैसे,—यह आटा मोटा है। ५. बढिया या मूक्षम का उलटा। निम्न कोटि का। घटिया। खराब। जैसे, मोटा अनाज, मोटा कपडा, मोटी अकल। उ०—भूमि सयन पट मोट पुराना।—तुलसी (शब्द०)। (ख) तुम जानति रावा है छोटी। चतुराई अंग अंग भरी है, पूरण ज्ञान न बुद्धि की मोटी।—सूर (शब्द०)।

मुहा० मोटा क्लोटा = घटिया। खराब। मोटी बात = साधारण बात। मामूला बात। मोटे हिसाब से = अदाज से। अटकल से। बिल्कुल ठीक ठीक नहीं। मोटे तौर पर = बहुत सूक्ष्म विचार के अनुसार नहीं। स्थूल रूप से।

६ जो देखने में भला न जान पड़े। भद्दा। बेडोल। उ०—हरि कर राजत माखन रोटी। मनु वारिज ससि वैर जानि कै गह्यौ सुधा समुधौटी। मेली सजि मुख अंबुज भीतर उपजी उपमा मोटी। मनु वराह भूधर सह पुहुमी धरी दमन की कोटी।—सूर०, १०।१६४।

मुहा०—मं टी चुनाई = बिना गढे हुए बेडोल पत्थरो को जोड़ाई।
मोटी भूल = भद्दी या भारी भूल।

७ साधारण से अधिक। भारी या कठिन। जैसे, मोटी मार, मोटी हानि, मोटा खर्च। उ०—(क) बंदी खल मल रूप जे काम भक्त अघ खानि। पर दुख सोई सुख जिन्हें पर मुख मोटी हानि।—विश्राम (शब्द०)। (ख) दुर्वल को न सताइए जाकी मोटी हाय। बिना जीव की स्वांस से लोह भसम हूँ जाय।—कवीर (शब्द०)। (ग) नारि नर आरत पुकारत सुनै न

कोक, काहू देवननि मिलि मोटी मूठ मार दी।—तुलसी (शब्द०)।

मुहा०—मोटा दिखाई देना = आँख की ज्योति में कमी होना। कम दिखाई देना। केवल मोटी चीजें दिखाई देना।

८ घमडी। अहकारी। अभिमानी। उ०—मोटो दसकय मो न दूवरो विभीषण सो बूझ परी रावरे की प्रेम पगवीनता।—तुलसी (शब्द०)।

मोटा^१—सज्ञा पुं० मरवा जमीन। मार।

मोटा^२—सज्ञा पुं० [हि० मोट] वोभ गठुड।

मोटा^३—सज्ञा स्त्री० [म०] बला। वरियारा नाम का लुप। विशेष दे० 'वरियारा' [को०]।

मोटाई—सज्ञा स्त्री० [हि० मोटा + ई (प्रत्य०)] १ मोटे होने का भाव। स्थूलता। पीवरता। २ शरारत। पाजोपन। बदमाशी। उ०—डगर डगर में चलहु कन्हाई समुझि न लागै बहुत मोटाई।—रघुनाथदास (शब्द०)।

मुहा०—मोटाई उतरना = शेखी किरकिरी होना। बुरस्त होना। पाजोपन छूटना। मोटाई चढ़ना = पाजी, बदमाश या घमडी होना। माटाई झाड़ना = (१) शरारत दूर होना। बदमाशी छूटना। (२) घमड न रह जाना। एँठ निकल जाना।

मोटाना^१—क्रि० अ० [हि० मोटा + आना (प्रत्य०)] १. मोटा होना। स्थूलकाय हो जाना। २ अहकारी हो जाना। अभिमानी होना। ३ घनवान् हो जाना।

मोटाना^२—क्रि० स० दूसरे को मोटा करना। दूसरे को मोटे होने में सहायता देना।

मोटोपन—सज्ञा पुं० [हि० मोटा + पन (प्रत्य०)] मोटाई। स्थूलता।

मोटोपा—सज्ञा पुं० [हि० मोटा + पा (प्रत्य०)] मोटे होने का भाव मोटोपन। माटाई।

मोटिया^१—सज्ञा पुं० [हि० मोटा + इया (प्रत्य०)] मोटा और खुरखुरा देशी कपडा। गाढा। गजी। खड्ड। सल्लम। जैसे,—व मोटिया पहनना ही अधिक पसंद करत है।

मोटिया^२—सज्ञा पुं० [हि० मोट (= वोभ) + इया (प्रत्य०)] वोभ ढोनेवाला कुला। मजदूर। उ०—मो टयो को भाडे के कपडे पहनाकर तिलगा बनाते हैं।—शिवप्रसाद (शब्द०)।

मोट्टायित—सज्ञा पुं० [सं०] सा हृत्प में एक हाव जियमें नायिका अपने आतंरिक प्रेम को कटु भाषण आदि द्वारा छिपाने की चेष्टा करने पर भी छिपा नहीं सकती।

विशेष—केशवदास ने लिखा है कि स्तम्भ, रोमाच आदि सात्त्विक भावों को बुद्धिबल से रोकने को 'मोट्टायित' हाव कहते हैं।

मोठ—सज्ञा स्त्री० [म० मठुष्ठ, प्रा० मठट्ट] मूंग की तरह का एक प्रकार का मोटा अन्न, जो वनमूंग भी कहा जाता है। मोट। मुगानी। मोधी। वनमूंग।

विशेष—यह प्रायः सारे भारत में होता है। इसकी बोआई ग्रीष्म

श्रुतु के अंत या वर्षा के आरंभ में और कटाई खरीफ की फसल के साथ जाड़े के आरंभ में होती है। यह बहुत ही साधारण कोटि की भूमि में भी बहुत अच्छी तरह होता है। और प्रायः वाजरे के साथ बोया जाता है। अधिक वर्षा से यह खराब हो जाता है। इसका फलियों में जा दाने निकलने हैं, उनकी दाल बनती है। यह दाल साधारण दालों की भाँति खाई जाती है, और मदाग्नि अथवा ज्वर में पथ्य की भाँति भी दी जाती है। बँद्यक में इसे गरम, कसैली, मधुर, शीतल, मलरोधक, पथ्य, रुचिदायी, हलकी, वादी, कृमिजनक, तथा रक्तपित्त, कफ, वात, गुदबली, वायुमोले, ज्वर, दाह और क्षयरोग की नाशक माना है। इसकी जड़ मादक और विषैली होती है।

मोठस—वि० [म० √मृष > मष्ट (= जाने देना)] मौन। चुप।
उ०—मोठम कँ रघुनाथ रहौ विनु मोठन कोन्हें ते जाँवे तो भँ है।—रघुनाथ (शब्द०)।

मोड़'—सज्ञ स्त्री [हि० मुडना] १ रागने आदि घूग जान का स्थान। एक और फिर जाने का स्थान। वह स्वात जहाँ न किसा और को मुडा जाय। उ०—आज बड़े नाट अमुक मोट पर वेप बदने एक गरीब काले आदमी से बातें कर रहे थे।—वालमुकुद गुप्त (शब्द०)। २ घुमाव या मुडने की क्रिया। ३ घुमाव या मुडने का भाव। ४ कुछ दूर तक गई हुई वस्तु में वह स्थान जहाँ से वह कोना या घुमाव डालनी हुई दूगरी और फिरी हो।

मोड़ ①—सज्ञ पुं [म० मुकुट, प्रा० मउर, हि० मोड] मोर।
उ०—पाई ककण सिर बधीयो मोड़। प्रथम पयाडउं दूग चितोड। रासो, पृ० १२।

मोड़तोड़—सज्ञ पुं [हि० मोड़ + अन्तु० तोड़] मार्ग में पडनेवाला घुमाव फिराव। चक्कर।

मोड़ना—क्रि० सं [हि० मुडना का प्रेर० रूप०] १ फेरना। नोटाना।
सथो० क्रि०—डालना।—देना।

मुडा—मुस मोड़ना, मुहँ मोड़ना = (१) किसी काम के करने में आनाकानी करना। आगा पीछा करना। रुकना। (२) विमुक्त होना। पराड्मुख होना। उ०—खान पान असनान भोग तजि मुस नहि मोडत।—भारतेंदु प्र०, भा० १, पृ० २३३।

२ किसी फैली हुई गतह वा कुछ अश समेटकर एक तह के ऊपर दूसरी तह करना। जैसे,—(क) चादर का कोना मोड़ दो। (ख) कागज किनार पर मोड़ दो। ३ किसी छड की सी सीधी वस्तु का कुछ अश दूगरी और फेरना। ४ दिशा परिवर्तन करना। दिशा बदलना। ५ धार भुवरी करना। कुठिन करना। जैसे, धार मोड़ना।

मोड़ना तोड़ना—क्रि० सं [हि० मोड़ना + तोड़ना] नष्ट अष्ट करना। काम लायक न रहने देना। नष्ट करना। गगलना।
उ०—अव तो मोड़ तोड़ तुम डारा, राम राम कहो झूठ पसारा।—घट०, पृ० २२७।

मोड़ा—सज्ञ पुं [सं० मुण्ड, मि० प० मुडा (= लडका)] [स्त्री० मोड़ी] लडका। बालक।

मोड़ी—सज्ञ स्त्री [हि० मुडना या य०] १ गमोट या नीत्र नियत की लिंग। २ दक्षिण भाग की एक लिंग जिममें प्रायः पसारी भाग लिंगी जाती है।

विशेष—इस लिंग की उत्पत्ति के विषय में कुछ लोगों का कहना है कि हेमाद्रि पर्वत में इसका जन्म हुआ था जो पश्चिम दिशा में प्रचलित किया। विनु जिमाजी के पढ़ने उनके प्रचार का कोई पता नही चलता। जिमाजी दाग राजसीय लिंग के रूप में स्वीकृत नामगी लिंग को तब से माने जाने लगे थे उनमें के विचार में जिमाजी के 'चित्तमि' (मन्त्री, परिषदेदार) यानाजी यनाजी ने इसके प्रचार को मोड (गाठ मगा) कर एक लिंग लिंग बनाकर ली। लिंगे 'मोड़ी' कहते हैं (२० भा० प्रा० वि०, पृ० १३१—१३०)।

मोड़ो ①—क्रि० वि० [य०। सं० मष्टम् ?] देर न। विरत ले।
उ०—डोना, मोटा घावियड, गद राजापण देग।—टोना, दू० ४४३।

मोड़ा—सज्ञ पुं [हि०] १. २० 'मोटा'। मुडेर। गचारा। छत्ता। वागजा। उ०—इसपर भा माडे पर बँडनेवाली और लिंगिया में मागी मारी फिरनेवाली, हम मुडने न लग्या ते मुँड रगती है।—भारतेंदु प्र०, भा० १, पृ० ३७३।

मोण—सज्ञ पुं [सं०] १ नया कन। २ कुनीर। मगर। ३ मयली। ४ बाँग या मीरु का जना हुआ टकरनदार टोकरा। झागा। पिटारा। मोना।

मोत—सज्ञ स्त्री [सं० मृत्यु] १० 'मोत'। उ०—तेगा तीन माथा में गजोरी नी बतारि। जँनो ग्याम पागी फनीपुर कँ मोत पाई।—शिवर०, पृ० ७१।

मोतदिल—वि० [अ० मातदिल] १ जो न बहुत गरम और न बहुत सर्द हो। मौन और उरगतता आदि के विचार से मध्यम अस्थि का।

विशेष—इस शब्द का व्यवहार प्रायः शोधि या जलवायु आदि के लिये होता है।

२ मध्यम। दरमियानो (को०)। ३ जिममें कोई बात अवश्यकता से कम वा अधिक न हो। सतुनित (को०)।

मोतवर—वि० [अ०] १ विश्वास करने योग्य। जिमपर विश्वास दिया जा सके। ३ जिमपर विश्वास किया जाना हो। विश्वासपात्र।

मोतविर—वि० [अ० मोतवर] २० 'मोतवर'। उ०—उन वक्त उनका कोई मोतविर आदमी उसके खयाल बमूजिय पपनी जाग गर्ज बिना उनकी राय से मिलती हुई बात कहे तो उस बात का सुननेवाले के दिल में पूरा अमर होता है।—श्रीनिवास ग०, पृ० ३१।

मोतवरी—सज्ञ स्त्री [अ० मोतवर + ई (प्रत्य०)] विश्वासपात्रता। विश्वासनीयता।

मोतमद—वि० [अ० मोतमद] भरोसे का। विश्वासपात्र।

मोताद—सज्ञ पुं [अ० मोतमद] पूरी मात्रा। पूरी सुराक (को०)।

मोति—सज्ञ पुं [सं० मौत्तिक] २० 'मोती'। उ०—नैन डरहि

मोति और मूंगा ।—जायसी ग्र०, (गुप्त), पृ० २०४ ।

मोतियदाम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौक्तिकदाम, प्रा० मोतियदाम] एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में चार जगण होते हैं । जैसे,—
भजौ रघुनाथ घरे धनु हाथ । विराजत कठ सु मोतियदाम ।

मोतिया^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मोती + इया (प्रत्य०)] १ एक प्रकार का बेला जिसकी कली मोती के समान गोल होती है । २. एक प्रकार का सलमा जिसके दाने गोल होते हैं और जो ज'दोजो के काम में किनारे किनारे टाँका जाता है । ३. रूसा नाम की घास, जब तक वह थोड़ी अवस्था की और नीलापन लिए रहती है । ४. एक चिडिया जिसका रंग मोती का सा होता है ।

मोतिया^२—वि० १ हलका गुलाबी, वा पीले और गुलाबी रंग के मेल का (रंग) । २ छोटे गोल दानो का वा छोटी गोल कडियो का । जैसे, मोतिया निकडी । ३ मोती सवधी । मोती का ।

मोतियाविद्—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मोतिया + सं० बिन्दु] आँख का एक रोग जिसमें उसके एक पन्दे में गोल फिन्ली सी पड जाती है, जिसके कारण आँख से दिखाई नहीं पडता ।

मोती^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौक्तिक, प्रा० मोत्तिञ्ज] १ एक प्रसिद्ध बहुमूल्य रत्न जो छिछले समुद्रों में अथवा रेतीले तटों के पास सीपी में से निकलता है ।

विशेष—समुद्र में अनेक प्रकार के ऐसे छोटे छोटे जीव होते हैं, जो अपने ऊपर एक प्रकार का आवरण बनाकर रहते हैं । इस आवरण को प्रायः सीप और उन जीवों को सीपी कहते हैं । कभी कभी ऐसा होता है कि बालू का कण या कोई बहुत छोटा जीव सीप में प्रवेश कर जाता है, जिसके कारण सीपी के शरीर में एक प्रकार का प्रदाह उत्पन्न होने लगता है । उस प्रदाह को शात करने के लिये सीपी अनेक प्रयत्न करती है पर जब उसे सफलता नहीं होती, तब वह अपने शरीर में से एक प्रकार का सफेद, चिकना और लसीला पदार्थ निकालकर बालू के उस कण अथवा जीव को चारों ओर से ढकने लगती है, जो अतः मोती का रूप धारण कर लेता है । तात्पर्य यह कि मोती की सृष्टि किसी स्वाभाविक प्रक्रिया के अनुसार नहीं होती, बल्कि अस्वाभाविक रूप में होती है, और इसीलिये बहुत दिनों तक लोग यह समझते थे कि मोती की उत्पत्ति सीपी में किसी प्रकार का रोग होने से होती है । हमारे यहाँ प्राचीन काल में यह माना जाता था कि स्वाती की वर्षा के समय सीपी मुँह खोलकर समुद्र के ऊपर आ जाया करती है, और जब स्वाती की वृद्ध उसमें पडती है, तब मोती उत्पन्न होता है ।

साधारण मोती सुडौल और गोल होता है, पर कुछ मोती लवोतरे, टेढ़े मेढ़े या वेडौल होते हैं । मोती का रंग सटमैला, धूमिल, काला या कुछ हरापन अथवा नीलापन लिए हुए होता है, पर साफ करने पर वह खूब सफेद हो जाता है और उसमें एक विशेष प्रकार की 'आव' या चमक आ जाती है । मोती

जितना बड़ा या सुडौल होता है उसका मूल्य भी उतना ही अधिक होता है । यो तो मोती ससार के अनेक भागों में पाए जाते हैं, पर लका, फारस की खाड़ी तथा आस्ट्रेलिया के पश्चिमी तट के मोती बहुत अच्छे समझे जाते हैं । इसके अतिरिक्त पनामा के पीले मोती तथा कैलिफोर्निया की खाड़ी के काले और भूरे मोती भी बहुत अच्छे होते हैं । मोती प्रायः तेल के हिंसाव से विकते हैं, पर अन्यान्य रत्नों की भाँति मोती की दर भी उसके भार की वृद्धि के अनुसार बहुत बढ़ती जाती है । उदाहरणार्थ यदि एक चौ के मोती का दाम ५०) होगा, तो उमी प्रकार के दो चौ के मोती का दाम २००) और पाँच चौ के मोती दाम १२५०) या इससे भी अधिक हो जाएगा । भारतवर्ष में मोती का व्यवहार बहुत प्राचीन काल से चला आता है । धनवान् लोग इसकी प्रायः मालाएँ बनवाते हैं, और इन्हे अंगूठियों तथा दूसरे आभूषणों में जडवाते हैं । इसका व्यवहार वैद्यक में औषध रूप में भी होता है; और प्रायः वैद्य लोग इसका भस्म तैयार करते हैं । वैद्यक में मोती को शांतवीर्य शुक्रवर्धक, आँखा के लिये हितकारी और शरीर को पुष्ट करने-वाला माना है । हमारे यहाँ प्राचीन ग्रंथों में यह भी कहा गया है कि सीपी और शख आद के अतिरिक्त हाथी, साँप, मछली, मेढक, सूअर, बाँस और बादल तक में मोती होते हैं, और इनको प्राप्त करनेवाला बहुत सौभाग्यशाली कहा गया है । इन सब मोतियों के अलग अलग गुण भी बतलाए गए हैं, पर ऐसे मोती कभी किसी के देखने में नहीं आते ।

मुद्दा—मोती गरजना = मोती में बाल पड जाना । मोती चटकना या कडक जाना । मोती ढक्काना = रोना (व्यग्य) । मोती परोना = (१) बहुत ही सुंदर और प्रिय भाषण करना । (२) बहुत ही सुंदर और स्पष्ट अक्षर लिखना । (३) रोना (व्यग्य) । (४) कोई वारीक काम करना । मोती बाँधना = (१) मोती को पारोए जाने के योग्य बनाने के लिये उसके बीच में छेद करना । (२) कुमारी का कौमार्य भंग करना । योनि का क्षत करना । (वाजाह) । मोती रोलना = बिना परिश्रम अथवा थोड़े परिश्रम से बहुत अधिक धन कमाना या प्राप्त करना । मोतियों के मोल पडना = बहुत मंहगा पडना । उ०—किंतु यह फल बकरियों और खच्चरों पर लादकर रेल तक पहुँचाने में मोती के मोल पडेंगे, उन्हें कौन खरीदेगा ।—किन्नर०, पृ० ११ । मोतियों से माँग भरना = माँग में मोती परोना । मोतियों में मुँह भरना = प्रसन्न होकर किसी को बहुत अधिक धन संपत्ति देना ।

पर्या०—मौक्तिक । शौक्तिक । मुक्ता । मुक्ताफल ।

२ कसेरों का एक औजार जिससे वे नकाशी करते समय मोती को सी आकृति बनाते हैं ।

मोती^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मौक्तिकी] वाती जिसमें बड़े बड़े मोती पडे रहते हैं । उ०—छोटी छोटी मोती कान छोटे कटुला त्यों कठ छोटे से विजायठ कटक दुति मोटे हैं ।—रघुराज (शब्द०) ।
मोतीचूर—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मोती + चूर] १. मोती की तरह छोटी बुंदियों का लड्डू ।

यो—मोतीचूर श्राँख = गोल छोटी उभरी हुई चमकदार श्राँख ।
(जैसी कवूनर की होती है) ।

२ एक प्रकार का घान जिसकी फसल अगहन में तैयार होती है ।
३ कुशती का एक पेंच जिसमें प्रतिद्वंद्वी के वाएँ पैर को अपने दाहिने पैर में फँसाकर शरीर हाथ से उमका गला लपेटकर उसे चित्त कर देते हैं ।

मोतीज्वर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोती + स० ज्वर] चेचक निकलने के पहले आनेवाला ज्वर ।

मोतीभर्रां, मोतीभिरा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोती + भिरा (=ज्वर)] छोटी शीतला का रोग । मोतिया माता निकलने का रोग । मथर ज्वर । मोतीमाती ।

मोतीफल—सञ्ज्ञा पुं० [स० मुक्ताफल] दे० 'मुक्ताफल' । उ०—कोऊ मोतीफल कोऊ वास रस पय पान, कोऊ पीन पीवत भरत पेट भार की ।—सुदर० ग्रं०, भा० २, पृ० ४२६ ।

मोतीवेल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोतिया + वेल] वेल का वह भेद जिसे मोतिया कहते हैं । मोतिया बेला । उ०—मोतीवेल कैसे फून मोतिन के भूपन मुचीर गुलचाँदनी भी चपक की डारी भी ।—देव (शब्द०) ।

मोतीभात—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोती + भात] एक विशेष प्रकार का भात । उ०—परस्यो मोदन विविध प्रकारा । मोतीभात मुनाम उचारा । केसरि भात नाम ससिभात । कनकभात पुनि विमल विभात ।—रघुराज (शब्द०) ।

मोतीलाडू—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोती + लडू] मोतीचूर का लडू । उ०—दूनी बहुत पकावन साथे । मोतीलाडू खेरीरा वांटे ।—जायसी (शब्द०) ।

मोतीसिरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोती + सं० श्री] मोतियों की कठी । मोतियों की माला । उ०—तीरि मोतीसिरी गुप्त करि घर्यो कहँ एहि मिस सकुचि रही मुख न बोलै ।—सूर (शब्द०) ।

मोतीहारिं—सञ्ज्ञा पुं० [स० मुक्ताफल, प्रा० मुचाहल > मोताहल] दे० 'मुक्ताफल' । उ०—सउ सहमे एकीतरे सिरि मोतीहरि सुधध । नदी निवामउ उत्तरइ श्राँखू एक श्राँविध । ढोला०, दू० ३३० ।

मोत्याहल—सञ्ज्ञा पुं० [स० मुक्ताफल] मुक्ति रूपी फल । मुक्ति । उ०—अवधू अहँठ परवत मझार, वेलडी माढ्यो विस्तार । वेली फूल, वेला फल वेली अछे मोत्याहल ।—गोरख०, पृ० ११८ ।

मोथर्रां—वि० [हि० मुथरा] जिसकी धार तेज न हो । कुठिन । गोठिल । कुद । उ०—भयो अवहँ नहि मोथरो मोर उदड कुठार । उपज्यो अमरप दून अव करीं सकुल सहार ।—रघुराज (शब्द०) ।

मोथा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुस्तक, प्रा० मुस्थश्च] १ नागरमोथा नामक घास । मुस्ता । उ०—शूकर वृद डहर मे जाई । खोद निडर मोथा जर खाई ।—शकुतला, पृ० ३३ । २ उपर्युक्त नागर-मोथा घास की जड़ जो श्रोत्रघि की भक्ति प्रयुक्त होती

है । उ०—मोथा नीत्र निरायन वागा । पीतपापरा पित फहँ नामा ।—द्वारा०, पृ० १११ ।

त्रिशेष—यह तृण जनाशयो में होता है । इसकी पत्तियाँ युग की पत्तियों की तरह नयी नयी शरीर गहरे हरे रंग की होती हैं । इसकी जड़ें बहुत मोटी होती हैं, जिन्हें मूत्रर गोबर खाते हैं ।

मोद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० मोदी] १. आनंद । हर्ष । प्रमदना । सुनी । २. पांच भगण, एक भगण, एक भगण, श्रीर एक गुरु वर्ग का एक वर्णवृत्त । जैसे, — भे नर मे मिगग गुण अहुँन जाहिर भूपातीदु नजाने । ज्योहि मय्यर मे मटरी दइ वे म मना गां द्रापदी आने । ३. मुग्ध । महा । सुन्दर ।

मोदक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. चूड़ा । (मिठाई) । २. श्रीय आदि का बना हुआ चूड़ा । जैसे,—मदनानंद मोदक । ३. गुट । ४. एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक वर्ण में चार भगण होते हैं । जैसे,—(क) भा नहु पाग डु भी निधि गजन । तो गहु राम परै नित पाया । आय घरै प्रभु लै चरनोदक । भूख तणे न भार्ये मन मोदक ।—छन्दप्रभार (शब्द०) । (ख) काहू कहुँ जर आमर मारिय । आरत जद अकाश पुकारिय । राग के नहु कान परयो जब । छोटि श्वश्वर जात भयो तब ।—केशव (शब्द०) । ५. एक वर्णमकर जाति जिसकी उत्पत्ति क्षत्रिय पिता और शूद्रा माता में मानी जाती है ।

मोदक—[वि० स्त्री० मोदका, मोदकी] मोद या आनंद देनेवाला । आनंददायक ।

मोदककार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हलवाई ।

मोदकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन मुनि का नाम ।

मोदकर—वि० आनंददायक । मोदजनक ।

मोदकवल्लभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोदक जिन्हें प्रिय है, गणेश [को०] ।

मोदकिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मिठाई [को०] ।

मोदकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की गदा । उ०—शिल्ली त्यों मोदकी गदा युग दीपति भरी सदाई ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) श्री लव गीर उदड पुनि गदा मोदकी मारि । वीर विभीषण अमुर कहँ दिया भूमि पँ डारि ।—रघुराज (शब्द०) । २. मूर्त्ति ।

मोदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० मोदनीय, मोदित] १. मुदित करना । प्रमद करना । २. मुग्धि फैलाना । महकाना । ३. मोम [को०] । ४. आनंद । मोद । हर्ष [को०] ।

मोदना—क्रि० प्र० [सं० मोदन] १. प्रमद होगा । खुश होना । आनंदित होना । २. मुग्धि फैलाना । महकाना । उ०—फूल फलित तरु फूल बढ़ावत । मोदत महा मोद उपजावत ।—केशव (शब्द०) ।

मोदना—क्रि० म० प्रमद करना । खुश करना । उ०—तुलसी सरिस अजान मान रिम पूरो हियरा । तऊ गोद लेइ पोछि चूमि मुख मोदत जियरा ।—सुधाकर (शब्द०) ।

मोदमोदिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जामुन । जवूफल [को०] ।

- मोदयतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मोदयन्तिका] एक प्रकार की चमेली की लता और उसका फूल [को०] ।
- मोदयती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मोदयन्ती] दे० 'मोदयतिका' [को०] ।
- मोदवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मोदवती] वनमल्लिका । जगली चमेली ।
- मोदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ अजमोदा । वन अजवाइन । २. मेमल का वृक्ष ।
- मोदाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक वृक्ष का नाम ।
- मोदाकर वि० [सं० मोद + आकर] हर्षजनक । आनन्दपूर्ण । आनन्द मोद की खान । उ०—मादाकर गोदावरी विपिन सुखद सब काल ।—तुलसी प्र०, भा०, २ पृ० ७६ ।
- मोदाकी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोदाकिन्] महाभारत के अनुसार एक पर्वत का नाम ।
- मोदाख्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आम का पेड़ ।
- मादाढया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अजमोदा । वन अजवाइन ।
- मोदाद्रि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भुँगेर के पास के एक पर्वत का पौराणिक नाम ।
- मोदित^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आनन्द । हर्ष । प्रसन्नता [को०] ।
- मोदित^२—वि० हर्षित । आनन्दित । प्रसन्न । उ०—गद्य मद्य मोदित पुर, नदन आनन्द गमन ।—बेला, पृ० ७२ ।
- मोदिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ अजमोदा । २. जूही । ३. कस्तूरी । ४ मदिरा । ५ चमेली ।
- मोदी^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोदक (= लड्डू बनानेवाला) अथवा अ० मद्द (= जिस, रसद)] १. आटा, दाल, चावल आदि बेचनेवाला बनिया । भोजन सामग्री देनेवाला बनिया । परचूनिया । उ०—(क) माया मेरे राम की मोदी सब ससार । जाकी चौंठी ऊतरी सोई खरचनहार ।—कवीर (शब्द०) । (ख) मदन के मोद भरी जोवन प्रमोद भरी मोदी की वहू की दुत देखे दिन दूनी सी । चूनरी सुरग अग ईगुर के रग देव वठी परचूनी की दुकान पर चूनी सी ।—देव (शब्द०) । (ग) है अन्नपूरणा मोदी । दे सर्व अहारै सोदी ।—विश्राम (शब्द०) । २. वह जिसका काम नौकरो को भरती करना हो ।
- मोदी^२—वि० [सं० मोदिन्] [वि० स्त्री० मोदिनी] मोद करनेवाला । आनदी [को०] ।
- मोदीखाना—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० मोदी + फा० खानह्] अन्नादि रखने का घर । भडार । गोदाम ।
- मोधक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोदक (= एक वर्णसफर जाति)] मछली पकड़नेवाला । धीवर । मछुआ । उ०—एक मीन के भक्त कियो तब हरि रखवारी कीन्ही । सोई मत्स्य पकरि मांघुक ने जाय असुर को दीन्ही ।—सूर (शब्द०) ।
- मोघूँ—वि० [सं० मुग्ध, प्रा० मुख् मुग्ध] बेवकूफ । मूर्ख । भोदू । उ०—विदूषक—मिथ्र यो मोघू बनकर बैठने से क्या होगा ? कुछ उपाय करना चाहिए ।—बालमुकुन्द गुप्त (शब्द०) ।
- मोन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोय] दे० 'मोना' । उ०—मानहुँ रतन मोन बुद मूँदे ।—जायसी (शब्द०) ।
- मोन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'मौन' । उ०—चित्र दिपात तु चित्रनी मोन त्रिलगिय वाह ।—पृ० रा०, ५७।२३ ।
- मोनशेनयर—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रें०] फ्राम मे प्रिम, पादरी तथा प्रतिष्ठित लोगो के नाम के आगे लगनेवाला समानमूचक शब्द । श्रीमान् ।
- मोनस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम ।
- मोना^(१)—क्रि० सं० [हिं० मोयन] भिगोना । तर करना । उ०—(क) कही राम तँह भरत सो काके वालक दोइ । मोर चरित गावत मधुर सुर सयुत रस माइ ।—विश्राम (शब्द) । (ख) नेह मोइ रस रेममहि गाँठ दई हित जोर । चाहत है गुरुजन तिन्हें अनख नखन मो छोर ।—रसनिधि (शब्द०) । (ग) तुलमी मुदित मानु सुत गति लखि विथकी है बालि मन मन मोए ।—तुलसी (शब्द०) ।
- मोना^(२)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोण] बाँस, मूँज आदि का ढङ्गनदार ढला । भावा । पिटारा ।
- मोनाल—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] एक प्रकार का महोख पत्तों जो शिमले के आस पाम बहुत पाया जाता है । इसे 'नील मोर' भी कहते हैं ।
- मोनियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मोना + इया (प्रत्य०)] बाँस या मूँज की बनी हुई पिटारी । छोटा मोना ।
- मोनी^(१)—वि० [सं० मौनी] दे० 'मौनी' । उ०—मोनी मन का मारै मानु ।—प्राण०, पृ० ६३ ।
- मोनोग्राम—सञ्ज्ञा पुं० [अंग०] दो या तीन अक्षरों के संयोग से बना हुआ किनी नाम का सन्निहित रूप ।
- मोनोटाइप मशीन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अंग०] कपोज करनेवाली एक प्रकार की मशीन जिसमें एक एक अक्षर ढलता और कपोज होता चलता है ।
- मोनोप्लेन—सञ्ज्ञा पुं० [अंग०] एरोप्लेन या वायुयान का एक भेद । एक पखवाला वायुयान ।
- मोपला—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] मुमलमानो की एक जाति जो मदरास में पाई जाती है ।
- मोम—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मोम] १ वह चिकना और नरम पदार्थ जिससे शहद की मक्खियाँ अपना छत्ता बनाती हैं । मधुमक्खी के छत्ते का उपकरण ।
- विशेष—मोम प्राय पीले रंग का होता है और इसमें से शहद की सी गव आती है । साफ करने पर इसका रंग सफेद हो जाता है । यह बहुत थोड़ी गरमी से गल या पिघल जाता है, और कोमल होने के कारण थोड़े से दबाव द्वारा भी, गीली मिट्टी या आटे आदि की भाँति, अनेक रूपों में परिवर्तित किया जा सकता है । इसकी बत्तियाँ बनाई जाती हैं, जो बहुत ही हलकी और ठढी रोशनी देती हैं । श्रोपधि के रूप में इसका व्यवहार होता है और यह मरहमा आदि में ढाला जाता है । तिनोत और ठपे आदि बनाने में भी इसका व्यवहार होता है ।
- यौं—मोम की नाक = (१) जिसको समति बहुत जल्दी बदल जाती हो । अस्थिरमति । (२) वह जो जरा सी बात में

मिजाज बदले। मोम की मरिचम = बहुत ही कोमल और सुकुमार स्त्री।

मुहा०—मोम करना या मोम बनाना = द्रवीभूत कर लेना। दयार्द्र कर लेना। मोम होना = दयार्द्र हो जाना। पिघल जाना। कठोरता छोड़ देना।

२ रूप, रंग और गुण आदि में इसी से मिलता जुलता वह पदार्थ जो मधुमक्खी की जाति के तथा कुछ और प्रकार के कीड़े पराग आदि से एकत्र करते हैं अथवा जो वृक्षों पर लाख आदि के रूप में पाया जाता है। ३ मिट्टी के तेल में से, एक विशेष रासायनिक क्रिया के द्वारा, निकाला हुआ इसी प्रकार का एक पदार्थ। जमा हुआ मिट्टी का तेल।

विशेष—अतिम दोनों प्रकार के मोमों का व्यवहार भी प्रायः पहले प्रकार के मोम के समान ही होता है।

सोमजामा—सञ्ज्ञा पुं [फा० मोम + जामहू] वह कपड़ा जिसपर मोम का रोगन चढ़ाया गया हो। तिरपाल।

विशेष—ऐसे कपड़े पर पड़ा हुआ पानी झार पार नहीं होता।

सोमदिल—वि० [फा० मोम + दिल] दूसरों के दुःख से शीघ्र द्रवित होनेवाला। बहुत कोमल हृदयवाला।

सोमनां—वि० [हि० मोम + ना (प्रत्य०)] मोम का सा। बहुत ही कोमल।

सोमवत्ती—सञ्ज्ञा स्त्री [फ्रा० मोम + हि० वत्ती] मोम वा ऐसे ही किसी और जलानेवाले पदार्थ की बनी हुई वत्ती।

विशेष—इस प्रकार की वत्ती के बीच में एक मोटा डोरा होता है और उसपर मोम चढ़ा रहता है। जब वह डोरा जलाया जाता है, तब चारों ओर से मोम गल गलकर जलने लगता है। जिससे प्रकाश होता है। प्राचीन काल में फारस आदि देशों में उत्सवों आदि पर इसका बहुत अधिक व्यवहार होता था।

सोमम्भर(पु)—वि० [देश०] वजनदार। भारवाला। प्रतिष्ठावाला। उ०—छिपपत कबहुँ न सोमम्भर तिन। रकति न छिपै विष परखन पिन।—पृ० रा०, ६१।६६।

सोमिन—सञ्ज्ञा पुं [अ०] [स्त्री० सोमिना] १ धर्मनिष्ठ मुसलमान। उ०—सोमिनो नेक य आसार मुबारक होए।—भारतेंदु प्र, भा० १, पृ० ५४२। २ जुलाहों की एक जाति। ३ एक उर्दू कवि का नाम।

सोमिया—सञ्ज्ञा स्त्री [अ० मस्मी, फ्रा० सोमिया ?] मसाला लगाकर सुरक्षित रखी हुई लाश। सड़ने से बचाने के लिये सुगन्धित मसाला के लेप द्वारा सुरक्षित पुरातन शव।

सोमियाई—सञ्ज्ञा स्त्री [फ्रा० सोमियायी] १ कृत्रिम शिलाजतु। पत्थर से बननेवाला शिलाजतु। नकली शिलाजीत। उ०—वहाँ एक किस्म का पत्थर होता है। उसको पानी में उबालकर सोमियाई बनाते हैं।—शिवप्रसाद (शब्द०)।

मुहा०—सोमियाई निकालना = (१) किसी से कठिन परिश्रम लेना। किसी को खूब मारना पीटना।

विशेष—कुछ लोगों का विश्वास है कि सोमियाई मनुष्य के शरीर

को आँच से तपाकर निकाली हुई चिकनाई से तैयार की जाती है, इसी से ये मुहावरे बने हैं।

२ काले रंग की एक चिकनी दवा जो मोम की तरह मुलायम होती है। यह दवा घाव भरने के लिये प्रसिद्ध है।

सोमो—वि० [फ्रा०] १ मोम का बना हुआ। जैसे, सोमो मोनी, सोमो पुतला। २ मोम का सा।

सोमी मोती—सञ्ज्ञा पुं [फ्रा० सोमी + सं० मौक्तिक] मोम में बना मोती। एक प्रकार का नकली मोती। उ०—चमकीले और बड़े बड़े सोमी मोतियों से सजे बाल खूब ही मजा दे रहे थे।—शरावी, पृ० २६।

सोयन—सञ्ज्ञा पुं [हि० सैन (= मोम)] मंडे हुए आटे में घी या चिकना देना जिसमें उससे बनी वस्तु खसखसी और मुलायम हो।

सोयनदार—जैसे, सोयनदार कवीरी।

सोयनाई—सञ्ज्ञा सं० [हि० पुष्पना] दे० 'भरना'। उ०—जिए लग तो जोरू बचे प्यार करते। सोये पर तो मुर्दा क कर जी में डरते।—दक्खिनी०, पृ० २५३।

सोयुम—सञ्ज्ञा पुं [देश०] एक लता जो आसाम, सिक्किम और भूटान में बहुतायत से उत्पन्न होती है।

विशेष—इस लता से अत्यंत चमकीला रंग तैयार किया जाता है, जिससे कपड़े रंगे जाते हैं।

सोरंग—सञ्ज्ञा पुं [देश०] नेपाल देश का पूर्वी भाग जो कोशिकी नदी के पूर्व पड़ता है।

विशेष—संस्कृत ग्रंथों में इसी भाग को 'किरात देश' कहा गया है। इस देश में जंगल और पहाड़ियाँ बहुत हैं। इस देश का कुछ भाग जिला पुरनिया (बगाल) में भी पड़ता है।

सोर'—सञ्ज्ञा पुं [सं० मयूर, प्रा० मोर] [स्त्री० सो'नी] १ एक अत्यंत सुंदर बड़ा पक्षी। मयूर। वहीं। उ०—भादव मास वरिस घनघोर। सब दिस कुहकए दादुल मोर।—विद्यापति, पृ० १३१।

विशेष—यह पक्षी प्रायः चार फुट लंबा होता है और इसकी लंबी गर्दन और छाती का रंग बहुत ही गहरा और चमकीला नीला होता है। नर के सिर पर बहुत ही सुंदर कलगी या चोटी होती है। पंख छोटे तथा पूँछ लंबी और अत्यंत सुंदर होती है। नर जिस समय प्रसन्न होता है, उस समय अपनी पूँछ के पर खड़े करके मडलाकार फैला देता है, जिससे वह बहुत ही सुंदर जान पड़ता है। पूँछ के पंखों पर बहुत सुंदर गोल दाग या चित्तियाँ होती हैं, जिनका रंग नीला होता है और जिनपर सुंदर सुनहरा मडल होता है। इन्हें 'चंद्रिका' कहते हैं। मोर सब पक्षियों से सुंदर पक्षी है। अनेक चटकीले रंगों का जैसा सुंदर मेल इसमें होता है, वैसा और किसी पक्षी में नहीं होता। प्राचीन यूनानी और रोमन इसे बहुत पवित्र मानते थे। राजपूताने में अब तक कोई इसकी हत्या नहीं करता। इसका स्वभाव है कि वादलों की गरज सुनते ही यह कूकता है। संस्कृत में इसका एक नाम भुजगभृक् है। कहते हैं,

यह माँप को खा जाता है। मादा का रंग फीका होता है और वह देखने में वैसे सुंदर नहीं होती।

पर्या०—नीलकण्ठ । केकी । वरही । शिखी । शिखड़ी । कलापी । शिवपुसवाहन । भुजगशुक्र । अहिभन्नी ।

२ नीलम की आभा, जो मौर के पर के समान होती है। उ—मौर, विष्णु, नभ, कमल, अलि, कोकिल, कलरव, मेह । फूल मिरस, अरसी, अवनि ग्यारह छाया एह ।—रत्नपरीक्षा । (शब्द०) ।

मौर(७)†—सर्व० स० मम] [स्त्री० मोरी] दे० 'भेरा' । उ०—(क) मौर हृदय सत् कुलिम समाना ।—मानस, २।१६६ । (ख) खुले सुभाग्य मोरय, लहरी दरस्त तोरय ।—ह० रासो, पृ० १३ ।

मौर^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] सेना की अगली पक्ति ।

मौरक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का लोहा । २ गाय का व्याने के सात दिन बाद का दूध [को०] ।

मौरचग—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँहचग] दे० 'मुरचग' ।

मौरचदा(७)—सञ्ज्ञा पुं० [मयूरचन्द्रक] दे० 'मौरचद्रिका' । उ०—गावत गोपाल लाल नीके राग नट हैं । मौरचदा चारु सिर मञ्जु गुजापुञ्ज घरे, बनि बनघातु तन ओढे पीत पट हैं ।—तुलसी (शब्द०) ।

मौरचद्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मौर + चन्द्रिका] मौर पक्ष के छोरे की वह बूटी जो चद्राकार होती है। उ०—मौरचद्रिका श्याम सिर चढि कत करत गुमान ।—विहारी (शब्द०) ।

मौरचा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मोरचह] १. लोहे की ऊपरी सतह पर चढ आनेवाली लाल या पीली रंग की बुकनी की सी तह । जग ।

विशेष—लोहे पर जमनेवाली यह तह वायु और नमी के योग से रामायनिक विकार होने से उत्पन्न होती है। यह लाल बुकनी वास्तव में विकारप्राप्त लोहा ही है ।

२. दर्पण पर जमी हुई मँल । उ०—(क) जब लग हिय दरपन रहै कपट मोरचा छाइ । तब लग सुंदर मीत मुख कैसे दगन दिखाइ । रसनिधि (शब्द०) । (ख) पहिर न भूपन कनक के कहि आवत एहि हेत । दरपन के से मोरचा देह दिखाई देत ।—बिहारी (शब्द०) ।

विशेष—प्राचीन काल में दर्पण लोहे को माँजते माँजते चमकदार बनाए जाते थे, इसी से दर्पण के साथ 'मौरचा' शब्द का प्रयोग चला आ रहा । 'दर्पण' के लिये फारसी का 'आईना' शब्द वास्तव में 'आहना' का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ 'लोहे का' होता है ।

क्रि० प्र०—जमना ।—जगना ।

मुहा०—मौरचा खाना = मौरचा लगाने से खराब होना ।

मौरचा^१—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मोरचाल] १ वह गड्ढा जो गढ के चारो ओर रक्षा के लिये खोद दिया जाता है । २. वह सेना जो गढ के अंदर रहकर शत्रु से लड़ती है । ३. वह स्थान जहाँ

से सेना, गढ या नगर आदि की रक्षा की जाती है । वह स्थान जहाँ खडे होकर शत्रुसेना से लड़ाई की जाती है ।

मुहा०—मौरचाबदी क'ना गढ के चारो ओर गड्ढा खोदकर या टीले बनाकर यथास्थान सेना नियुक्त करना । मौरचा जीतना = शत्रु के मौरचे पर अधिकार कर लेना । मौरचा बोधना = दे० 'मौरचाबदी करना' । उ०—बढि बढि बाँधे मोरचे, लाग देखि नियराइ ।—हम्मौर०, पृ० २७ । मौरचा मारना = दे० 'मौरचा जीतना' । मौरचा लेना = युद्ध करना ।

मौरछड—सञ्ज्ञा पुं० दे० [हि० मौर + छड] दे० 'मौरछल' ।

मौरछल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मौर + छड] मौर की पूँछ के परो को इकट्ठा बाँधकर बनाया हुआ जवा चँवर जो प्रायः देवताओं और राजाओं आदि के मस्तक के पास डुलाया जाता है । उ०—(क) अगल वगल बहु मनुज मौरछल चँवर डोलावत ।—गोपाल (शब्द०) । (ख) चारु चोर चहुँ ओर चलाई मौरछलान डोलाई ।—रघुराज (शब्द०) ।

मौरछला^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मौलिसिरी] 'मौलिसिरी' । उ०—छड, खिरँटी, आँवले कुट और मौरछली की छाल, इनको जल के साथ महीन पीसकर लेप करो तो बाल बढेंगे ।—प्रतापसिंह (शब्द०) ।

मौरछली^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मौरछल + ई (प्रत्य०)] मौरछल हिलाने-वाला ।

मौरछाँह(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मौरछल] दे० 'मौरछल' । उ०—का वरनउँ अस ऊच तुषारा । दुइ बेरें पहुँचें अमवारा । बाँधे मोर-छाँह मिर मारहि । भाजहि पूँछ चँवर जनु डारहि ।—जायसी (शब्द०) ।

मौरजुटना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मौर + जुटना] एक प्रकार का आभूषण । विशेष—यह आभूषण सोने का बनता और रत्नजडित होता है । इसके बीच का भाग गोल वेदे के समान होता है और दोनों ओर मौर बने रहते हैं । यह वेदे के स्थान पर माँ के पर पहना जाता है ।

मौरट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. ऊल की जड । २. अकोल वा अकाट का फूल । ३. प्रसव से सातवीं रात के बाद का दूध । ४. एक प्रकार की लता जिसे कर्णपुष्प भी कहते हैं ।

विशेष—बँसक में इस मधुर कपाय, वृष्य, बलवर्धक और पित्त, दाह तथा ज्वर के लिये नाशक माना है ।

मौरटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दे० 'मौरटक' । २ सफेद खैर ।

मारटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दुर्वा । दुब । २ मूवा (को०) ।

माठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खट्टा मट्टा [को०] ।

मारता^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० महरत] दे० 'मुहर्त' । उ०—पोडस प्रकार के दान वेदोक्त करवाए । पचास सुष सोच मौरत बतलाए ।—रघु० रू०, पृ० २३६ ।

मौरध्वज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मयूरध्वज] एक पौराणिक राजा का नाम जो बहुत प्रसिद्ध भक्त था ।

विशेष—इसकी परीक्षा के लिये श्रोतृणा और अर्जुन इसके यहाँ गए

थे। श्रीकृष्ण की बात मानकर यह राजा अपना जीवित शरीर शरारे से चिरवाने के लिये तैयार हुआ था।

मोरदार—वि० [हि० मोड + दार (प्रत्य०)] १ भोधरा। २ धुमाव-दार। उ०—उरज बुरज दै मवासी छन रासी मनो, पीय मन चचल वनी के नीके भोरदार।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० १७३।

मोरन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोडना] मोडने की क्रिया या भाव। मोडना।

मोरन—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मोरट] विलोया हुआ दही जिसमें मिठाई और कुछ सुगंधित वस्तुएँ (इलायची, लौंग इत्यादि) डाली गई हो। शिखरन। उ०—पुनि संधान आने बहु साँवी। दूब दही को मोरन बाँधी।—जायसी (शब्द०)।

मोरना—क्रि० सं० [हि० मोडना] दे० 'मोडना'। उ०—(क) फिर फिर सुदर प्रीवा मोरत। देखत रथ पाछे जो घोरत। लक्ष्मणसिंह (शब्द०)। (ख) चारि चारि चित चितवति मुँह मोरि मोरि काहे तैं हंसति हिय हरष बढ़ायो है।—केशव (शब्द०)। (ग) कर आचर को ओट करि जमुहानी मुख मोरि।—विहारो। (शब्द०)। (घ) नासा मोरि नचाय दग करो कका की साँहैं।—विहारा (शब्द०)।

मोरना—क्रि० सं० [हि० मोरन] दही को मथकर मक्खन निकालना। (बुदेलेखड)। उ०—डोठडोर नै मोर दिय छिरक रूपरस तीय। मथि मा घट प्रीतम लियो मन नवनीत विलोय।—रसनिधि (शब्द०)।

मोरनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोर का स्त्री रूप] १ मोर पक्षी की मादा। उ०—चित्त चकोरनी चकोर मोर मोरनी समेत, हस हसिनी समेत सारिका सबै पढे।—केशव (शब्द०)। २ मोर के आकार का अथवा और किसी प्रकार का एक छोटा टिकडा जा नथ में पिरोया जाता है और प्रायः होठों के ऊपर लटकता रहता है।

मोरपख—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोर + पख (= पर)] मोर का पर जो देखने में बहुत सुंदर होता है, और जिसका व्यवहार अनेक श्रवसरो पर प्रायः शोभा या शृंगार के लिये अथवा कभी कभी शोष के रूप में होता है। उ०—मोरपख सिर सोहत नीके। गुच्छा बीच विच कुसुम कली के।—मानस, १।२३३।

मोरपखी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोरपख + ई (प्रत्य०)] १ वह नाव जिसका एक सिरा मोर के पर की तरह बना और रंगा हुआ हो। २ मलखम की एक कसरत जो बहुत फुरती से की जाती है और जिसमें पैरा को पीछे की ओर से ऊपर उठाकर मोर के पख की मी आकृति बनाई जाती है।

मोरपखी—सञ्ज्ञा पुं० एक प्रकार का बहुत सुंदर, गहरा और चमकीला नीला रंग जो मोर के पर से मिलता जुलता होता है।

मोरपखी—वि० मोर के पख के रंग का। गहरा चमकीला नीला।

मोरपखा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोरपख] १ मोर का पर। मोरपख। २. मोरपख की कलगी जो प्रायः श्रीकृष्ण जी मुकुट या चीर

में खोसा करते थे। उ०—(क) वांसुरि कु डल मोरपखा मधुरी मुसकानि भरी मुख है ये।—वेनी (शब्द०)। (ख) पीत पटी लकुटी पदमाकर मोरपखा लै कहीं गति नाखा। पधाकर (शब्द०)। (ग) कयो करि धौं मुरली मनि कुडन मोरपखा वनमान विसारैं। ते धनि जे ब्रजराज लखे गृहकाज करै ब्रह्म लाज सँभारै।—मतिराम (शब्द०)।

मोरपच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मयूरपक्ष] मार का पख।

यौ०—मोरपच्छधर = मोर का पख धारण करनेवाले, कृष्ण। उ०—मोरपच्छधर पच्छ धरि, ब्रजनिधि मैं अनुरागि।—ब्रज० ग्र०, पृ० १०।

मोरपाँव—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोर + पाँव] जगो जहाजो के बावचीलाने की मेज पर खडा जडा हुआ लोहे का छड़ जिसमें माम के बड़े बड़े टुकड़े लटकाए रहते हैं। (लश०)।

मोरमुकुट—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोर + मुकुट] मोर के पखों का बना हुआ मुकुट जो प्रायः श्रीकृष्ण जी पहना करते थे। उ०—मोर मुकुट की चद्रिकन यौं राजत नंदनद। मनु समिसेखर की अकस किय सेखर सत चंद।—विहारी (शब्द०)।

मोरवा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मयूर, हि० मोर + वा (प्रत्य०)] १ दे० 'मोर'। उ०—हूक मोरवान को करेजा हूक हूक करै, लागति है हूक सुनि धुनि घुरवान को।—दीनदयाल (शब्द०)। २ मुक का वृक्ष। मोखा।

मोरवा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] वह रस्मी जो नाव की किलवारों में बाँधी जाती है और जिससे पतवार का काम लेते हैं।

मोरशिखा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मयूर + शिखा] एक जड़ी जिसकी पत्तियाँ ठीक मोर की कलगी के आकार की होती हैं।

विशेष—यह जड़ी बहुधा पुरानी दीवारों पर उगती है। इसकी सूखी पत्तियों पर पानी छिड़क देने से वे पत्तियाँ फिर तुरत हरी हो जाती हैं। वचक में इसे पित्त, कफ, अतिसार और बालग्रह दोषानेवारियों माना गया है।

मोरा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] अकीक नामक रत्न का एक भेद जो प्रायः दक्षिण भारत में हाता है और जिसे 'वावांघाडी' भी कहते हैं।

मोरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मम] [वि० स्त्री० मोरी] दे० 'मेरा'। उ०—हमें हास हेरला थोरा रे। सफल भेल सखि कौतुक मोरा रे।—विद्यापति, पृ० १८२।

यौ०—मोरे लेखे = मेरे हिसाब से। मेरे विचार से। मेरे अनुमान से। उ०—एकहि मंदिर बसि पिया न पुछर हसि, मोरे लेखे समुदक पार।—विद्यापति, पृ० ११८।

मोरादा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुराद] दे० 'मुराद'। उ०—वह नूर नबी तहकीक करै, तब आदि मोराद का पाइए जा।—कवीर० रे०, पृ० ४०।

मोराना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोडना का प्रेरणारूप] १ चारों ओर घुमाना। फिराना। उ०—प्रारति करि पुनि नरियल तवहीं मोराइए। पुरुष को भोग लगाइ सखा मिलि खाइए।—कवीर

(शब्द०) । २ रस पेरने के समय ऊख की अँगारी को कोल्हू में दवाना ।

मोरिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] छोटा दरवाजा । गुप्त या बगल का दरवाजा [को०] ।

मोरियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोरना] कोल्हू में कातर की दूसरी शाखा जो बाँस की होती है ।

मोरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोहरी] १. किसी वस्तु के निकलने का तग द्वार । २. नाली जिसमें से पानी, विशेषत गदा और मैला पानी बहता हो । पनाली । उ०—ऐसी गाढी पीजिए ज्यों मोरी की कीच । घर के जाने मर गए आप नशे के बीच । —भारतेंदु ग्र०, भा० १, पृ० ८३ ।

मुद्दा^०—मोरी छुटना = दस्त आना । पेट चलना । मोरी पर जाना = पेशाब करने जाना । (स्त्रियाँ) । ३ दे० 'मोहरी' ।

मोरी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मयूरी, हि० मोर + ई (प्रत्य०)] मोर पक्षी की मादा । मयूरी । उ०—मोरी सी घन गरज सुनि तू ठाढी अकुलात ।—सीताराम (शब्द०) ।

मोरी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] क्षत्रियो की एक जाति जो 'चौहान' जाति के अंतर्गत है । उ०—जादौ क बघेला मल्हवाम । मोरी बडगूजर आइ पास ।—पृ० २०, १, १४२४ ।

मोर्चा—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० मोरचा] दे० 'मोरचा' ।

मोल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मूल्य, प्रा० मुल्ल] १ वह धन जो किसी वस्तु के बदले में बेचनेवाले को दिया जाय । कीमत । दाम । मूल्य ।

क्रि० प्र०—करना ।—चुकाना ।—ठहरना ।—देना ।—लेना ।

यौ०—अनमोल ।

२ दुकानदार की ओर से वस्तु का मूल्य कुछ बढ़ाकर कहा जाना । जैसे,—मोल मत करो, ठीक ठीक दाम कहा ।

यौ०—मोलचाल = (१) अधिक मूल्य । (२) किसी चीज का दाम घटा बढ़ाकर तै करना ।

मुद्दा^०—मोल करना = (१) किसी पदार्थ का उचित से अधिक मूल्य कहना । (२) मूल्य घटा बढ़ाकर तै करना ।

मोलना^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मौलाना] मौलवी । मुल्ला । उ०—(क) वेद किताब पढ़े वे खुतवा वे मोलना वे पीछे ।—कवीर (शब्द०) । (ख) पंडित वेद पुराण पढ़ें श्री मोलना पढ़ें कोराना ।—कवीर (शब्द०) ।

मोलवी^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मौलवी] वह विद्वान् मुसलमान जो अपने धर्मशास्त्र का अच्छा ज्ञाता हो । मौलवी । उ०—रहे मोलवी साहेब जहाँ के अतिसय सज्जन ।—प्रमथन०, भा० १, पृ० २० ।

मोलसिरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'मोलसिरी' । उ०—तहँ मोलसिरी सोहँ गँभीर ।—ह० रासो, पृ० ६२ ।

मोलाई^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोल + लाई (प्रत्य०)] १ मोल पूछने या तै करने की क्रिया । मूल्य कहना वा ठीक करना ।

मोलाना^१—क्रि० सं० [हि० मोल] मोलभाव करना । कीमत तै करना । उ०—नददास पिय प्यारी की छवि पर त्रिभुवन की शोभा वारौ विनु मोले ।—नद० ग्र०, पृ० ३६६ ।

मोलिया^१—वि० [देश०] मुडने या लचकनेवाला । नाजुक । कोमल । निर्बल । मुलायम । उ०—मावडिया अंग मोलिया, नाजुक अंग निराट ।—बाँकी० ग्र० भा० २, पृ० १३ ।

मोल्ड—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] सँचा ।

मोवना^१—क्रि० सं० [हि० मोयन] दे० 'मोना' ।

मोवना^२—क्रि० सं० [हि० मोहना, मोरना] दे० 'मोरना' । उ०—भृकुटी चाप चचल मुख मोवहि ।—हिंदी प्रेमगाथा०, पृ० १६५ ।

मोशिये—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रें० तुल० मोनशेयर] [सचिस रूप मोन्स, एम०, तुल० अँग० मोशाय] [हि० सँचिस रूप मो०] फ्रांस में नाम के आगे लगाया जानेवाला आदरसूचक शब्द । महाशय । साहब । जैसे, मोशिये ब्रायद ।

मोप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोक्ष] दे० 'मोक्ष' ।

मोप^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चोरी । २ लूटना । लूट । ३ बघ । हत्या । ४ दड देना ।

मोषक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चोर ।

मोषण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लूटना । २ चोरी करना । ३ छोड़ना । ४ बघ करना । ५ वह जो चोरी करता या डाका डालता हो ।

मोषना^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोषण वा मोक्षण] समाप्त करना । लूटना । छत्म करना । सोख लेना । सुखाना । उ०—काल अग्नि तीन भवन प्रवानी । उलटत पवना मोषत पानी ।—गोरख०, पृ० २४६ ।

मोषयिता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोषयितृ] चोरी करनेवाला । लूट करनेवाला [को०] ।

मोषा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चोरी । लूट । डकैती [को०] ।

मोसना^१—क्रि० सं० [सं० मोषण] मारना । नष्ट करना । उ०—मुरगी कौँ मोसता है बकरी को रोसता है ।—सुंदर ग्र०, भा० २, पृ० ४०४ ।

मोसना^२—क्रि० अ० मसूपना । उ०—सखि अस अद्भुत रूप निहारै । मोसति मन कोसति करतारै ।—नद० ग्र०, पृ० १२४ ।

मोसर^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] दे० 'अवसर' । उ०—अवके मोसर ज्ञान बिचारो, राम राम मुख गानी ।—सतवाणी०, भाग २, पृ० ६८ ।

मोसोला^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहासिल, मुहस्सिल] वसूल करनेवाला । दे० 'मुहसिल' । उ०—पाँच मोसोला मिलि लगे घर घर मँहें मारि श्री पीटि के रोज मँगै ।—पल्लव०, भा० २, पृ० ३६ ।

मोह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कुछ का कुछ समझ लेनेवाली बुद्धि । अज्ञान । अम । भ्रांति । उ०—तुलसिदास प्रभु मोह जनित भ्रम भेदबुद्धि कव विसरार्वाहिगे ।—तुलसी (शब्द०) । २ शरीर और सासारिक पदार्थों को अपना या सत्य समझने की बुद्धि जो दुःखदायिनी मानी जाती है । ३ प्रेम । मुहव्रत । प्यार । उ०—(क) सँचिहु उनके मोह न माया । उदासीन घन धाम न जाया ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) काशीराम कहै रघुवांशन की रीति यहै ज सो कीजै मोह तासा लोह कैसे गहिए ।—काशीराम (शब्द०) । (ग) मोह सो तजि मोह ह्य

चले लागि उहि गैल ।—विहारी (शब्द०) । (घ) रघौ मोह मिलनी रघौ यौं कहि गहे मरोर ।—विहारी (शब्द०) ।
४ साहित्य मे ३३ सचारी भावो में से एक भाव । भय, दुख धवराहट, अत्यत चिंता आदि से उत्पन्न चित्त की विकलता । ५ दुख । कष्ट । ६, मूर्छा । वेहोशी । गम ।
उ०—गिरथी हस भू मे भयो मोह भारी ।—रघुराज (शब्द०) ।

मोहक—वि० [सं०] १ मोह उत्पन्न करनेवाला । जिसके कारण मोह हो । २ मन को आकृष्ट करनेवाला । लुभानेवाला ।

मोहकम—वि० [अ० मुहकम] बडा । भारी । उ०—मोहकम मार पडी गुरजन की तव कहू ज्वाव न आया ।—मल्लक०, पृ० २५ ।

मोहकलिल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मोह का दृढ पाश । माया का जाल । २ मादक पेय । मदिरा (को०) ।

मोहकार—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + कैडा या कार (प्रत्य०)] पीतल या तंबू के घड़े का गला ममेत मुहंडा । (ठठेरा) ।

मोहठा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दश अक्षरों का वह वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण मे तीन रगण और एक गुरु होता है । इसे 'वाला' भी कहते हैं । जैसे,—रोरि रगा दिया कौन वाला । मैं न जानौं कहै नदलाला । श्याम की मात बोली रिसाई । गोपि कोई करी है दिठाई ।—छंद०, पृ० १५६ ।

मोहडा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + डा (प्रत्य०)] १ किसी पात्र का मुँह या खुला भाग । २ किसी पदार्थ का अगला या ऊपरी भाग ।

मुहा०—मोहडा लगाना = अन्न से भरे हुए बोरे दुकान पर रखकर उसका मुँह खोल देना । (अन्न के व्यापारी) । मोहडा मारना = किसी काम को सबसे पहले कर डानना ।

३ मुँह । मुख ।

मोहडा—सञ्ज्ञा पुं० दे० 'मोहरा' ।

मोहताज—वि० [अ० मुहताज] १ घनहीन । निर्धन । गरीब । २ जिसे किसी बात की अपेक्षा हो । जैसे,—वह आपकी मदद के मोहताज नहीं है ।

मोहताजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोहताज + ई (प्रत्य०)] मोहताज होने की क्रिया या भाव । गरीबी ।

मोहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मोह लेनेवाला व्यक्ति । जिसे देखकर जी लुभा जाय । उ०—लखि मोहन जो मन रहै तो मन राखी मान ।—विहारी (शब्द०) । २ श्रीकृष्ण । उ०—मोहन तेरे नाम को कढ़ो वा दिना छोर । ब्रजवासिन को मोह कै चलो मधुपुरी शोर ।—रसनिधि (शब्द०) । ३ एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण मे एक सगण और एक जगण होता है । जैसे,—जन राजवत । जग योगवत । तिनको उदोत । केहि भाँति होत ।—केशव (शब्द०) । ४ एक प्रकार का तांत्रिक प्रयोग जिससे किसी को वेहोश या मूर्च्छित करते हैं । उ०—मारन मोहन बसकरन उच्चाटन अस्थभ । आकर्षण सब भाँति के पढे सदा करि दम ।—(शब्द०) । ५ प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र जिससे शत्रु

मूर्च्छित किया जाता था । उ०—वर विद्यावर अस्त्र नाम नदन जो ऐसी । मोहन, स्वापन, ममन, सोम्य, कर्पन पुनि तँसो ।—पद्माकर (शब्द०) । ६, कोन्डू की कोठी अर्थात् वह म्यान जहाँ दवने के लिये ऊख के गठि डाले जाते हैं । इसे 'कुडी' और 'धगरा' भी कहते हैं । ७ कामदेव के पाँच बाणों में एक बाण का नाम । ८ घतूरे का पीघा । ९ शिव का एक नाम (को०) ।

१० विष्णु की नौ शक्तियों मे एक शक्ति (को०) । ११ सभाग । रति । मैथुन (को०) । १२ वाग्द्वय का एक ताल जिसमे मात आघात और पाँच खाली रहते हैं । इसका
+ १ ० २ ०
मृदग का बोल यह है—घा घा ता मे तेरे कता
३ ० ४ ५ ० ६ ० +
कता गदि घेने नागु देव तरे केरे । घा ।

मोहन—वि० [सं०] [वि० स्त्री० मोहिनी] मोह उत्पन्न करनेवाला । उ०—मव भाँति मनोहर मोहन रूप अनूप है भूय के वानक हँ । तुलसी (शब्द०) ।

मोहनक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंद्र मान (को०) ।

मोहनभोग—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोहन + भोग] १ एक प्रकार का हलुआ । २ एक प्रकार का केला (फन) । ३ एक प्रकार का आम ।

मोहनमाल, मोहनमाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सोने की मुरियों या दानों की बनी हुई माला । उ०—(क) मोहनमाल के मोहन को यह पँहति मोहनमाल अकेली ।—देव (शब्द०) । (ख) मोहनमाल विमाल हिए पर सोहत नील सुपीत पिछोरी ।—दीनदयाल गिरि (शब्द०) ।

मोहना—क्रि० अ० [सं० मोहन] १. किसी पर आशिक या अनुरक्त होना । मोहित होना । रीझना । उ०—(क) सुदर वपु अति श्यामल सोहै । देखन सुर नर को मन मोहै ।—केशव (शब्द०) । (ख) देखत रूप सकल मुग मोहै ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) चारयो दल दूल्हा चार बने । मोहै सुर औरन कौन गने ।—केशव (शब्द०) । २. मूर्च्छित होना । वेहोश हो जाना । उ०—अष्टम सर्ग महा ममर कुश लव भरतहि माय । जुग वधुन कर मोहियो भरत नास तिन हाथ ।—शिरमौर (शब्द०) ।

मोहना—क्रि० सं० [सं० मोहन] १. अपने ऊपर अनुरक्त करना । मुग्ध करना । मोहित करना । लुभा लेना । उ०—(क) पंडित अति मिगरी पुरी मनहु गिरा गति गूढ । सिंह नियत अनु चडिका मोहित मूढ अमूढ ।—केशव (शब्द०) । (ख) बैठे जराय जरे पलका पर राममिया सबको मन मोहै ।—केशव (शब्द०) । (ग) अहो भले लतिका तर सोहै । कलिन कोपलन सो मन मोहै ।—प्रतापनारायण मिश्र (शब्द०) । २. अन्न में डाल देना । सदेह पैदा कर देना । धोखा देना । उ०—(क) तुम आदि मध्य अवसान एक । जग मोहत हो वपु धरि अनेक ।—केशव (शब्द०) । (ख) अति प्रचंड रघुपति कै माया । जेहि न मोह अस को जग जाया ।—तुलसी (शब्द०) ।

मोहना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. तृण । २. एक प्रकार की चमेली ।

मोहनि^७—वि० [सं० मोहनी] दे० 'मोहिनी' । उ०—(क) मोहनि मूरति श्याम की यौं घट रही समाय ।—बिहारी (शब्द०) । (ख) जब हरि रगनि भरे मोहनि मूरति साँवरे ।—नद० प्र०, पृ० ३६५ ।

मोहनास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का अस्त्र । कहते हैं, इसके प्रभाव से शत्रु मूर्च्छित हो जाता था ।

मोहनिद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मोह की निद्रा । अज्ञान में पड़ा रहना [को०] ।

मोहनिशा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मोह की निशा । दे० 'मोहरात्रि' ।

मोहनी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वैशाख सुदी एकादशी । २ एक लवा सून सा कीड़ा जो हल्दी के छेतों में पाया जाता है । इसे पाकर तांत्रिक लोग वशीकरण यत्र बनाते हैं । ३ एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में सगण, भगण, तगण, यगण और सगण होते हैं । दे० 'मोहिनी'—६ । ४. भगवान् का वह स्त्री-रूप जो उन्होंने समुद्रमन्थन के उपरांत अमृत बाँटते समय वारण किया था । ५ एक प्रकार की मिठाई । ६ वशीकरण का मंत्र । लुभाने का प्रभाव । उ०—(क) जिन निज रूप मोहनी ढारी । कीन्हे स्वबस सकल नर नारी ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) निरखि लखन राम जाने रितु पति काम मोहै मानो मदन मोहनी मूँड नाई है ।—(शब्द०) ।

मुहा०—मोहनी डालना वा जाना = ऐसा प्रभाव डालना कि कोई एकदम मोहित हो जाय । माया के वश करना । जादू करना । उ०—नागरि मन गई अरुम्हाइ । अति विरह तनु भई व्याकुल घर न नेकु सुहाइ । श्याम सुदर मदनमोहन मोहनी सी लाइ ।—सूर (शब्द०) । मोहनी लगना = जादू लगने के कारण मोहित होना । मोहित होना । लुभाना । उ०—आखु गई हौं नदभवन में कहाँ कहीं ग्रह चैनु री । बोलि लई नव बधु जानि कै खेलत जहाँ कंवाई री । मुख देखत मोहनी सी लागत रूप न बरन्यो जाई री ।—सूर (शब्द०) ।

७ माया । ८ पोई का साग ।

मोहनी^२—वि० स्त्री० [सं०] मोहित करनेवाली । चित्त को लुभानेवाली । अत्यंत मुदरी ।

मोहनीय—वि० [सं०] मोहित करने के योग्य । मोह लेने के योग्य ।

मोहपास—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोहपाश] मोह का जाल । माया का बधन ।

मोहफिल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० महफिल] दे० 'महफिल' ।

मोहव्यत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुहव्यत] दे० 'मुहव्यत' । उ०—हमको अपना आप दे, इश्क मोहव्यत दर्द । सेंज सुहाग सुख प्रेम रस मिलि खेलै ला पर्द ।—दादू (शब्द०) ।

मोहमग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मोहमग] आतिनिवारण । अज्ञान का नाश होना ।

मोहमत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोह में डालनेवाला मंत्र ।

मोहर—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ किसी ऐसी वस्तु पर लिखा हुआ नाम, ८-३४

पता या चिह्न आदि जिसे कागज वा कपड़े पर छाप सकें । अक्षर, चिह्न आदि दबाकर अंकित करने का ठप्पा । उ०—इस मोहर की अंगूठी से आपको विश्वास हो जाएगा । (अंगूठी देता है) ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—करना ।—छापना ।—देना ।—खगाना ।

२ उपर्युक्त वस्तु की छाप जो कागज वा कपड़े आदि पर ली गई हो । स्याही लगे हुए ठप्पे को दवाने से बने हुए चिह्न या अक्षर । उ०—मोहर में अपना नाम वा चिह्न होता है जिसमें पत्र पर लगी हुई मोहर देखते ही उस पत्र के पढ़ने के प्रयत्न परित्याग हो जाता है कि यह पत्र अशुभ का है ।—मुरारिदान (शब्द०) । ३ स्वर्णमुद्रा । अक्षरफो । उ०—(क) करि प्रणाम मोहर बहु दीन्हो । दिशो असीस यतीश न लीन्हो ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) जो कुजाति नहि मानै वाता । गगरा खोदि दिखायो ताता । गाढे बीच अजिर के माही । मोहर भरे नृप मानत नाही ।—रघुनाथदास (शब्द०) ।

मोहरा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + रा (प्रत्यय)] [स्त्री० मोहरी] १ किसी बर्तन का मुँह या खुला भाग । २ किसी पदार्थ का ऊपरी या अगला भाग । ३ एक प्रकार की जाली जो बैल, गाय, भैंस इत्यादि का मुँह कसकर गिर्राँव के साथ बाँधने के लिये होती है । यह मुँह पर बाँधकर कस दी जाती है, जिससे पशु खाने पीने की चीजों पर मुँह नहीं चला सकता । ४, सेना की अगली पक्ति जो आक्रमण करने और शत्रु को हटाने के लिये तैयार हो । ५, फौज की चढाई का रख । सेना की गति । उ०—मही के महीपन को मोरघाँ कैसे मोहरा ।—रघुराज (शब्द०) ।

मुहा०—मोहरा लेना = (१) सेना का मुकाबला करना । (२) भिड़ जाना । प्रतिद्वंद्विता करना ।

६ कोई छेद वा द्वार जिससे कोई वस्तु बाहर निकले । ७, चोली आदि की तनी या बंद । उ०—कचुकी सूही कसे मोहरा अति फौल चली तिगुनी परभासी । मानिक के भुजबद चुरी माठी कंचन ककन ओप प्रकासी ।—गुमान (शब्द०) ।

मोहरा^२—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मोहर] १ शतरंज की कोई गोटी । २ मिट्टी का माँचा जिसमें कड़ा, पछुआ इत्यादि डालते हैं । ३ रेशमी वस्त्र घोटने का घोटना या प्राय विस्लीर का बनता है । ४ सिगिया विष । ५ सोन, चाँदी पर नक्काशी करनेवालो का वह औजार जिससे रगड़कर नक्काशी को चमकाते हैं । दुमाली । ६ जहरमोहरा । उ०—बड़े भाग से सतगुरु मिलिने घोरि पियाए जस मोहरा । कहै कवीर सुनो माइ साधो गया साध नहि बहुरा ।—कवीर श०, भा० ३, पृ० ४८ ।

मोहरात्रि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह प्रलय जो ब्रह्मा के पचास वर्ष वीतने पर होता है । दैनंदिन प्रलय । २ जन्माष्टमी की रात्रि । भाद्रपद कृष्णा अष्टमी ।

मोहराना—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मुहर + आना (प्रत्यय)] वह धन जो

किसी कर्मचारी को मोहर करने के लिये दिया जाय। मोहर करने की उजरत।

मोहरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मोहरा + ई (प्रत्य०)] १ वरतन आदि का छोटा या खुला भाग। २ पाजामे का वह भाग जिममे टाँगें रहती हैं। ३ दे० 'मोरी'।

मोहरिर्—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहरिर्] वह जो किसी के कागज आदि लिखने का काम करता हो। लेखक। मुशी।

मोहलत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुहलत] १ फुरसत। अवकाश। छुट्टी।

क्रि० प्र०—देना।—साँगना।—मिलना।—लेना।

२. किसी काम को पूरा करने के लिये मिला हुआ या निश्चित समय। अवधि। जैसे,—चार दिन की मोहलत और दी जाती है। इस बीच में खपया इकट्ठा करके दे दो।

मोहल्ला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० महल्लह्] दे० 'महल्ला'।

मोहवत् (पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मुहवत्] दे० 'मोहवत्' या 'मोह'। उ०—हसा आन वैठा तीरे। निश दिन चुगै मोहवत हीरे।—रामानन्द०, पृ० १०।

मोहशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोह उत्पन्न करनेवाला शास्त्र या ग्रन्थ [को०]।

मोहार—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुँह + आर (प्रत्य०)] १ द्वार। दरवाजा। उ०—ठाढ़ि मोहारे धन सुसुके, मन पछताइल हो।—धरम०, पृ० ६४। २ मुँहडा। अगला भाग। उ०—रूप को कूप वखानत है कवि कोऊ तलाब सुधा ही के संग को। कोऊ तुफंग मोहार कहै दहला कलपद्रुम भाषत अग को।—शुभ्र (शब्द०)।

मोहार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मधुकर, प्रा० मधुअर] १. मधुमक्खी की एक जाति जो सबसे बड़ी होती है। सारंग। २ मधु का छत्ता। ३. मौंरा। अमर।

मोहारनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० मुँह + नी + स० पारायण्य (प्रत्य०)] पाठ-शाला के बालको का एक साथ खड़े होकर पढ़ाई पढना।

मोहाल—सञ्ज्ञा पुं० [अ० महाल] पूरा गाँव वा उसका एक भाग अथवा कई गाँवों का एक समूह जिसका बंदोबस्त किसी नवरदार के साथ एक बार किया गया हो। व्यवहार में 'मोहाल' पूरा माना जाता है और इसी विचार से उसकी पट्टी वा हिस्सा बनाया जाता है।

मोहाल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोहार] १ मधुमक्खी की एक जाति। मोहार। २ मधुमक्खी का छत्ता।

मोहाल—वि० [अ० मुहाल] मुश्किल। कठिन। दे० 'मुहाल'। उ०—इतनी मान्यताओं के बाद आदमी का जीना मोहाल हो जाता है।—काले०, पृ० ७०।

मोहावरित (पुं०)—वि० [सं० मोहावृत्] मोह से आच्छादित। उ०—जैसी मोहावरित ब्रज मे तामसो रात आई। वैसे ही वे लसित उसमे कीमुदी के समा थी।—प्रिय०, पृ० २६८।

मोहासिव—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहासियह्] हिसाब कित्ताव। पूछ लाछ। उ०—मोहासिव करि अम्पिर मनुवाँ मूल मंत्र अवराधी।—घरनी० घ०, पृ० ४।

मोहि (पुं०) **मोहि** (पुं०)—सर्व० [हि० मोहि] दे० 'मोहि'।

मोहि—सर्व० पुं० [सं० मद्यम्, प्रा० मद्यह्, मज्ज] ब्रजभाषा और अवधी के उत्तम पुष्प 'मै' का वह रूप जो पहले सब कारको में आता था। पर पीछे कर्म और संप्रदान में भी आने लगा। मुफको। मुफे। उ०—(क) मरुँ पर माँगीं नहीं अपने तन के काज। परमारथ के कारन मोहि न आवै लाज।—सूर (शब्द०)। (ख) नंना कष्टी न मानै मेरो। हारि मानि कै रही मौन ह्वै निषट सुनत नहि टेरौ। ऐसे भए मनो नहि मेरे जबहि श्याम मुख हेरो। मैं पछताति जबहि सुधि आवति ज्यों दीन्हो मोहि डेरौ।—सूर (शब्द०)।

मोहिन—वि० [सं०] मोह या भ्रम में पड़ा हुआ। मुग्ध। २ मोहा हुआ। आसक्त।

मोहिनी—वि० स्त्री० [सं०] मोहनेवाली।

मोहिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ त्रिपुरमाली नामक फूल। वटपत्रा। वेला। २. विष्णु के एक अवतार का नाम।

विशेष—भागवत के अनुसार विष्णु ने यह अवतार उस समय लिया था, जब देवताओं और दैत्यों ने मिलकर रत्नों को निकालने के लिये समुद्र मथा था और अमृत के निकलने पर दोनों उसके लिये परस्पर झगड़ रहे थे। उस समय भगवान् ने मोहिनी अवतार धारण किया था और उन्हें देखते ही असुर मोहित होकर बोले थे कि अच्छा आओ, हम दोनों दलों के लोग बैठ जाय और मोहिनी अपने हाथ से हम लोगों को अमृत बाँट दे। दोनों दलों के लोग पक्ति बाँधकर बैठ गए और मोहिनी रूप विष्णु ने अमृत बाँटने के बहाने से देवताओं को अमृत और असुरों को सुरा पिला दी।

३ माया। जादू। टोना। उ०—देवी ने ऐसी मोहिनी डाली थी कि यशोदा को लडकी के होने की भी सुष नहीं थी।—लल्लू (शब्द०)। ४. वैशाख शुक्ल एकादशी का नाम। ५ एक अप्सरा का नाम (को०)। ६ एक अर्घ्यम वृत्त का नाम जिसके पहले और तीसरे चरणों में बारह और दूसरे तथा चौथे चरणों में सात मात्राएँ होती हैं, और प्रत्येक चरण के अंत में एक सगरा अवश्य होता है। उ०—शुभ्र भक्तजनत्राता भवदुःख हरें। मनवाछित फलदाता मुनि हिय धरें।—छंद०, पृ० ७६। ७ पद्म अक्षरों के धारिक छंद का नाम जिसके प्रत्येक चरण में सगरा, भगण, तगण, यगण, और सगरा होते हैं। उ०—शुभ तो ये सखि री आदिहुँ जो चित्त धरी। नर श्री नारि पर्व भारत के एक धरी।—छंद०, पृ० २०८।

मोही—वि० [सं० मोहिन्] [वि० स्त्री० मोहिनी] मोहित करनेवाला।

मोही—वि० [हि० मोह + ई (प्रत्य०)] १ मोह करनेवाला। प्रेम करनेवाला। २ लोभी। लालची। ३. अम या अविद्या में पड़ा हुआ। अज्ञानी।

मोहेला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मेहल] एक प्रकार का चलता गाना।

मोहेली—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की मछली जो हिमालय और सिंध की नदियों में मिलती है।

मौहोपमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक अलंकार का नाम जो केशवदास के अनुसार उपमा का एक भेद है, पर और आचार्य जिसे 'आति' अलंकार कहते हैं। विशेष दे० 'आति'।

मौगी ॐ—वि० स्त्री० [सं० मौन] मौन। चुप। उ०—सुनि खग कहत भंदा मौगी रहि समुक्ति प्रेमपथ न्यारो।—तुलसी (शब्द०)।

मौहौर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मोहर] स्वर्णमुद्रा। अशरफी। मोहर। उ०—यो एक एक मोहौर और एक एक पाग दै उनको विदा करे।—दो सी वादन०, भा० १, पृ० १०६।

मौज—वि० [सं० मौञ्ज] [वि० स्त्री० मौञ्जि] मूँज का बना हुआ।

मौजकायन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौञ्जकायन] मुजक ऋषि के गोत्र में उत्पन्न पुरुष।

मौजवान—वि० [सं० मौञ्जवत्] १ मुंजवान् नामक पर्वत में उत्पन्न। २ मुजवान नामक पर्वत सवधी।

मौजिबधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौञ्जिबधन] यज्ञोपवीत सस्कार। व्रतवध। जनक।

मौजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मौञ्जि] मूँज की बनी हुई मेखला।

यौ०—मौजिबधन।

मौजी—वि० [सं० मौञ्जि] १ जो मूँज की मेखला धारण किए हुए हो। जो मूँज की मेखला पहने हो। २ दे० 'मौजीय'।

मौजीपत्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मौञ्जीपत्रा] वल्यजा।

मौजीय—वि० [सं० मौञ्जीय] मूँज का बना हुआ।

मौड़ी ॐ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माणवक] [स्त्री० मौड़ी] लडका। उ०—(क) मैया बहुत बुरी बलदाऊ। कहन लगे बन बडो तमासो सब मौड़ी मिलि आऊ।—सूर (शब्द०)। (ख) बाट ही गोरस बेव री आज तू मायके भूँड चढ मति मौड़ी।—रसखानि। (शब्द०)।

मौड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मुद्द + डा] दे० 'मोहडा'।

मौआसा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मवास] दे० 'मवास'। उ०—रैयत एक पाँच ठकुराई, दस दिसि है मौआसा। रजो तमो गुन खरे सिपाही करहि भवन मे वासा।—पलटू०, भा० ३, पृ० ६८।

मौका—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मौका] १ वह स्थान जहाँ कोई घटना घटित हो। घटनास्थल। वारदात की जगह। उ०—बार्नस साहब ने मौके पर जाकर, अच्छी तरह तहकीकात की।—द्विवेदी (शब्द०)। २ देश। स्थान। जगह। जैसे,—मकान का मौका अच्छा नहीं है। ३ अवसर। समय। उ०—तब से बबई जाने का हमें मौका ही न आया।—द्विवेदी (शब्द०)।

मुद्दा—मौका देना = अवकाश देना। समय देना। मौका देखना या ताकना = दाँव में रहना। उपयुक्त अवसर की ताक में रहना। मौका पाना = (१) अवकाश पाना। फुसत पाना। (२) उपयुक्त समय या अवसर पाना। मौका पाना, मौका

मिलना, या मौका हाथ लगना = (१) अवकाश मिलना। समय या अवसर मिलना। (२) घात मिलना। दाँव पाना। मौके पर = उपयुक्त अवसर पर। आवश्यकता के समय। मौके से = ठीक समय पर। उचित अवसर पर।

मौकुल, मौकुलि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कौआ।

मौकूफ—वि० [अ० मौकूफ] १. रोका हुआ। बंद किया हुआ। स्थगित किया हुआ। उ०—(क) सरकार ने अब इस मती होने की बुरी रस्म को मौकूफ कर दिया है।—शिवप्रसाद (शब्द०)। (ख) एक भुतगा पास न पावेगा मौकूफ हुआ जब अन्न औ जल—नजीर (शब्द०)। २ काम करने से रोका गया। नौकरी से अलग किया गया। बरखास्त। उ०—सन् १६१० ई० में बादशाह ने मुसलमान मुगलो को, जो नौकर हो गए थे, एक-कलम मौकूफ कर दिया।—शिवप्रसाद (शब्द०)। ३ रद्द किया गया। ४ अधिष्ठित। मुनहसर। अबलवित। आश्रित। निर्भर। उ०—(क) दुख और सुख तवीअत पर मौकूफ है।—शिवप्रसाद (शब्द०)। (ख) भा सस्ता हो या महंगा नहीं मौकूफ गल्ले पर। य सब खरमन उसी के हैं खुदा है जिसके पल्ले पर।—कविता कौ०, भा० ४, पृ० २५।

कि० प्र०—रहना।—होना।

मौकूफी—सञ्ज्ञा [अ० मौकूफ + ई] १. मौकूफ होने की क्रिया या भाव। २. प्रतिवध। रुकावट। ३. काम से अलग किया जाना। बरखास्तगी।

मौक्तिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोती।

मौक्तिक—वि० मुक्ति के लिये प्रयत्नशील।

मौक्तिकतडुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौक्तिकतरडुल] सफेद मक्का। बडी ज्वार।

मौक्तिकदाम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बारह अक्षरों का एक वर्णिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में दूसरा, पाँचवाँ, आठवाँ, और ग्यारहवाँ वर्ण गुरु और शेष लघु होते हैं, अर्थात् जिसके प्रत्येक चरण में चार जगण होते हैं। उ०—दुख्यो हिय केतिक देखत भूप। करयो तब तापर रोष अनूप। वियोगिनि के उर भेदत रोजु। करै तुमको निज बाण मनोजु।—गुमान (शब्द०)। २ मोतियों की लड़ी।

मौक्तिकप्रसवा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुक्ताशुक्ति। सीपी जिससे से मोती निकलती है (को०)।

मौक्तिकमाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ग्यारह अक्षरों की एक वर्णिक वृत्ति का नाम जिसके प्रत्येक चरण का पहला, चौथा, पाँचवाँ, दसवाँ और ग्यारहवाँ अक्षर गुरु और शेष लघु होते हैं तथा पाँचवें और छठे वर्ण पर याति होती है। इसे 'अनुकूला' भी कहते हैं। उ०—भीति न गंगा जग तुव दाय। सेवत तोही मन बच काया। नासह बेगी मम भवशूला। ही तुम माता जग अनुकूला।—छंद०, पृ० १६३।

मौक्तिकावली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मोती की माला।

मौक्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भूकता। मोनता।

मौजू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार के साम गान ।

मौख^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुख से होनेवाला पाप । जैसे, अभक्ष्य-भोजन और अपशब्दों का उच्चारण आदि ।

मौख^२—वि० १ मुखसवधी । २ अलिखित । वाचिक । उक्त [को०] ।

मौख^३—सञ्ज्ञा पुं० [?] एक प्रकार का मसाला । उ०—मौख मुनक्का मृत मुलतानी । मेथी मालवगनी सानी ।—सूदन (शब्द०) ।

मौखर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बहुत अधिक या बढ बढकर बातें करना । मुखरता । मुंहजोरी ।

मौखरी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भारत के एक प्राचीन राजवंश का नाम जिसका शासन काल ईसवी पांचवी शताब्दी के अंत से लगभग आठवी शताब्दी तक था ।

विशेष—इस वंश का राज्य पूर्व में मगध तक, दक्षिण में मध्य प्रात और आंध्र तक, उत्तर में नेपाल तक तथा पश्चिम में थानेश्वर और मालवे तक था । इसकी राजधानी कन्नौज थी, परंतु बीच में उसपर बंस वंशी राजा हर्ष ने अधिकार कर लिया था । इस वंश के लोग अपने आप को भद्रराज अश्वपति के वंशज मानते थे । इस वंश के बहुत प्राचीन होने के कई प्रमाण मिले हैं, पर इनका पुराना इतिहास अभी तक नहीं मिला है । हरिवर्मा, ईश्वरवर्मा, शर्ववर्मा, ग्रहवर्मा, यशोवर्मा, आदि इस वंश के प्रसिद्ध राजा थे ।

मौखर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बहुत अधिक या बढ बढकर बोलना । मुखरता । वाचालता । प्रगल्भता ।

मौखिक—वि० [सं०] १ मुख सवधी । मुख का । २ जवानी । जैसे,—आप कुछ देते तो हैं नहीं, केवल मौखिक बातें करते हैं ।

मौख्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुख्यता । श्रेष्ठता । महत्ता । प्राधान्य [को०] ।

मौगां—वि० [सं० मुग्ध] [वि० स्त्री० मौगी] १ मूर्ख । दुर्बुद्धि । २ जनखा । हिजडा । मेहरा ।

मौगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मौगा, मि० व गव मागी (= स्त्री)] स्त्री । औरत ।

मौग्ध्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुग्धता [को०] ।

मौध्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोघता । व्यर्थता । निरर्थकता [को०] ।

मौच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० तुल० फ्रा० मौज़ (= केला)] केले का फल ।

मौज—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ लहर । तरंग । हिलार ।

क्रि० प्र०—आना ।—उठना ।

मुहा०—मौज मारना = लहराना । बहना । जैसे,—दरिया मौजें मार रहा है । मौज खाना = लहर मारना । हिलोरा लेना । (लश०) । लवी मौज = दूर तक का बहाव । (लश०) ।

२ मन की उमग । उछंग । जोश । उ०—(क) साहब के दरवार में कमी काहु की नाहि । वंदा मौज न पावही चूक चाकरी माहि ।—कवीर । (शब्द०) । (ख) कहा कमी जाके राम घनी । मनसा नाथ मनोरथ पूरण सुख निधान जाकी मौज घनी ।—सूर (शब्द०) ।

मुहा०—किसी को मौज आना या किसी का मौज में आना = उमग में भरना । अचानक किसी काम के लिये उत्तेजना होना । धुन होना । मौज उठना = मन में उमग उठना । किसी की मौज पाना = मरजी जानना । इच्छा से भवगत होना ।

३ धुन । ध सुख । आनंद । मजा । उ०—(क) कचिरा हरि की भक्ति कर तजु विषया रम चोज । वार वार नहि पाइए मानुष जनम की मौज ।—कवीर (शब्द०) । (ख) सोचु परचो मन राधिका कछु कहन न आवै । कछु हरपै कछु दुख कर मन मौज बढ़ावै ।—सूर (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—करना ।—उड़ाना ।—मारना ।—मिलना ।—लेना ।

५ प्रभूति । विभव । विभूति । उ०—रहति न रन जयमाहि मुव लखि लाखन की फौज । जाचि निराखर हू चलै लै लाखन की मौज ।—दिहारी (शब्द०) ।

मौजा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मौज़ा] १, गाँव । ग्राम । २ स्थान । जगह (को०) ।

मौजावारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] एक प्रथा जिसके अनुसार फसल की स्थिति देखकर मालगुजारी निश्चित की जाती थी । उ०—मराठा काल में मौजावारी प्रथा का प्रादुर्भाव हुआ ।—शुक्ल अमि० ग्र०, पृ० ६ ।

मौजिवां—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मौजव] कारण । रहस्य । सवव । उ०—मौजिव कोई न जान कमी जिसका आज तक ।—कवीर म०, पृ० १६५ ।

मौजी—वि० [हिं० मौज + ई (प्रत्य०)] १ मनमाना काम करने वाला । जो जी में आवे, वही करनेवाला । २ सदा प्रसन्न रहनेवाला । आनंदी । ३ मन में कभी कुछ और कभी कुछ विचार करनेवाला ।

मौजू—वि० [अ० मौजू] १ जो किसी स्थान पर ठोक बैठना या मालूम होता है । उपयुक्त । उचित । मुनासिब । २ तुला हुआ । सतुलित । ३ छद्म के नियम गए, मात्रा आदि से शुद्ध (पद्य) ।

मौजूद—वि० [अ०] १ उपस्थित । हाजिर । विद्यमान । रहता हुआ । उ०—जहाँ हम लोग गए थे, वहाँ शातिपुर का हमारा नायब गुमाश्ता मौजूद था ।—सरस्वती (शब्द०) । २ प्रस्तुत । तैयार । कटिवद्ध । जैसे,—आपका काम करने को मैं मौजूद हूँ ।

विशेष—इसका प्रयोग विशेष्य के आदि में इस रूप में नहीं होता, और यदि होता भी है, तो होना क्रिया का रूप चुस रहता है । जैसे,—वहाँ पर मौजूद सिपाही ने उसे बहुत रोका ।

मुहा०—मौजूद रहना = (१) उपस्थित रहना । पास रहना । सामने रहना । (२) ठहरे रहना । जैसे,—मौजूद रहो, अभी उत्तर मिलेगा ।

मौजूदगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सामने रहने का भाव । उपस्थिति । विद्यमानता ।

मौजूदा—वि० [अ० मौजूदह्] वर्तमान काल का । जो इस समय मौजूद हो । प्रस्तुत । उ०—चूँकि उर्दू की एक बेनजीर तारीख (श्रावे हयात) मुल्क मे मौजूद है, लेहाजा किताब का जियादह हिस्सा सस्कृत, हिंदी और मौजूदा हिंदी के जिक्रे खैर से मामूर होगा ।—जमाना (शब्द०) ।

मौजूदात—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० मौजूदा का बहु व०] ससार की सभी चीजें । सृष्टि । चराचर जगत् ।

मौठ (७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मकुष्ठ, प्रा० मठह] दे० 'मोठ' । उ—बहु गोधूम चनक तडुल श्रुति । राहर ज्वार मसूर लेहु रति । मूंग मौठ बटुरा बहु ल्यावहु । राजभाष अरु भाष मंगावहु ।—प० रासो, पृ० १७ ।

मौडा (७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० माणवक] दे० 'मौडा' ।

मौत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १. मरने का भाव । मरण । मृत्यु । विशेष दे० 'मृत्यु' । उ०—अरे कस ! जिसे तू पहुँचाने चला है, तिसका श्राठवाँ लडका तेरा काल उपजेगा । उसके हाथ तेरी मौत है ।—लल्लू (शब्द०) । २. वह देवता जो मनुष्यो या प्राणियों के प्राण निकालता है । मृत्यु । उ०—विरह तेज तन मे तप अग सब अकुलाय । घट सूना जिव पीव मे, मौति दूँढ फिर जाय ।—कवीर (शब्द०) ।

मुहा०—मौत आना=मरने को होना । मौत का पसीना आना=आसन्नमरण होना । मरने के लक्षण दिखाई देना । मौत का सिर पर खेलना=(१) मरने को होना । मरने पर होना । (२) दुर्दिन आने को होना । आपत्ति काल समीप होना । (३) प्राण जाने का भय होना । जान जोखी होना । मौत का तमाचा=मृत्यु का स्मरण दिलानेवाला कार्य या घटना । अपनी मौत मरना=स्वाभाविक ढंग से मरना । प्राकृतिक नियम के अनुसार मरना । मौत बुलाना=ऐसा काम करना जिससे मौत निश्चित हो ।

३ मरने का समय । काल । मौत की धुडी । मृत्युकाल ।

मुहा०—मौत माँगना=कष्ट, कठिनाइयो से उन्नकर मौत मनाना । मौत के दिन पूरे होना=किसी प्रकार आयु विताना । कठिनाता से कालक्षेप करना । ऐसे दुःख मे दिन विताना जिसमे बहुत दिन जीना असभव हो ।

४ अत्यंत कष्ट । आपत्ति । जैसे,—वहाँ जाना तो हमारे लिये मौत है ।

मौताज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० मुहताज] दे० 'मुहताज' । उ०—जभी दाने दाने को मौताज हो ।—गोदान, पृ० १८३ ।

मौताद—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] मात्रा । उ०—चग जो होता वैद की दिए दवा मौताद । क्यो नहि सिर के दरद मे सिर देता फिर-हाद ।—रसनिधि (शब्द०) ।

मौती (७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौक्तिक] दे० 'मौती' । उ०—नासिका को मौती देखि उडगन सकुचाइ ।—नद० अ०, पृ० ३७० ।

मौदक—वि० [सं०] १ मिठाई सबधी । २. (भाव) मिठाई के क्रय विक्रय का ? [को०] ।

मौदकिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हलवाई [को०] ।

मौद्गल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुद्गल ऋषि के गोत्र मे उत्पन्न पुरुष । मौद्गल्य ।

मौद्गलि—सञ्ज्ञा पुं० [म०] काक । कौप्रा [को०] ।

मौद्गल्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुद्गल ऋषि के पुत्र का नाम । ये एक गोत्रकार ऋषि थे । २ मुद्गल ऋषि के गोत्र मे उत्पन्न पुरुष ।

मौद्गल्यायन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गौतम बुद्ध के एक प्रधान शिष्य का नाम ।

मौद्गीन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह खेत जिसमे मूँग उत्पन्न होता हो ।

मौन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. न बोलने की क्रिया या भाव । चुप रहना । चुप्पी । उ०—सपति अरु विपति को मिलि चलै प्रभु तहाँ जहाँ नहि होइ सुमिरन तिहारो । करत दडवत मैं तुमहि करणाकरन कृपा करि और मेरे निहारो । सुनत यह वचन हरि करघो अब मौन करि कृपा तोहि पर वीर धारी । सपति अरु विपति को भय न होइहै तिसै सुनै जो यह कथा चित्त धारी ।—सूर (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—करना ।—रहना ।

मुहा०—मौन गहना या ग्रहण करना=चुप रहना । चुप्पी साधना । न बोलना । उ०—(क) देखत ही जेहि मौन गही अरु मौन तजे कटु बोन उचारे ।—केशव (शब्द०) । (व) मौन गहौं मन मारि रहो निज पीतम की अहो कौन कहानी ।—व्यंग्यार्थ (शब्द०) । मौन खोलना=चुप रहने के उपरांत बोलना । उ०—खिनक मौन बाँध खिन खोला । गहेसि जीभ मुख जाइ न बाला ।—जायसी (शब्द०) । मौन तजना=चुप्पी छोडना । बोलने लगना । उ०—देखत ही जेहि मौन गही अरु मौन तजे कटु बोल उचारे ।—केशव (शब्द०) । मौन धरना या धारण करना=न बोलना । चुप होना । मौन होना । उ०—जँह वैठी वृषभानु नदिनी तँह आए धार मौन । पडे पायँ हरि चरण परसि कर छिन अपराध सलौन ।—सूर (शब्द०) । मौन बाँधना=चुप्पी साधना । चुप हो जाना । उ०—जो बोले सो मानिक मूँग । नाहि तो मौन बाँधु होइ गूँग ।—जायसी (शब्द०) । मौन लेना या साधना=मौन धारण करना । चुप होना । न बोलना । उ०—जिय में न क्रोध कर जाहि अरु केहू ठौर नगर जरावे जिन साध्यो हम मौन हैं ।—हनुमन्नाटक (शब्द०) । मौन संभारना=मौन साधना । चुप होना ।

२. मुनियों का व्रत । मुनिव्रत । ३ फागुन महोने का पहला पक्ष । ४ उदासोन्ता । खिन्नता । अप्रफुल्लता (को०) ।

मौन^२—वि० [सं० मौनी] जो न बोले । चुप । मौनी । उ०—(क) हमहुँ कहव अरु ठकुर सुहाती । नहि त मौन रहव दिन राती ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) इतनी मुनन नन भरि आए प्रेम नद के लालहि । सूरदास प्रभु रहे मौन ह्वै घोष वात जनि चालहि ।—सूर (शब्द०) ।

मौन ④—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौण्य] १. वरतन। पात्र। उ०—
काढो कोरे कोपर हो अरु काढो घी को मौन। जाति पांति
पहिराय कै सब समदि छतीसो पौन।—सूर (शब्द०)। २
डव्वा। उ०—मानहुं रतन मौन दुइ मूदे।—जायसी (शब्द०)।
३ मूँज आदि का बना टोकरा या पिटारा।

मौनता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मौन होने या रहने का भाव। चुप
होना। चुप्पी।

मौनभग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौनमहत्त] मौन तोडना। चुप्पी त्याग कर
बोलना।

मौनमुद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चुप्पी। मौन भाव [को०]।

मौनव्रत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मौन धारण करने का व्रत। चुप रहने
का व्रत।

मौना—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौण्य] [स्त्री० अल्पा० मौनी] १. घी या
तेल आदि रखने का एक विशेष प्रकार का बरतन। २. काँस
और मूँज से बुनकर बनाया हुआ टोकरा जिसमें अन्न आदि
रखा जाता है। ३. सीक या काँस और मूँज का तग मुँह का
ढक्कनदार टोकरा। पिटारी। ४. मधुमक्खी। उ०—जाड़े से
हड्डी बजती, सरकार हुआ बूडा तन। मौना के छत्ते करते
फूटे कानो में भन भन।—अतिमा, पृ० १६।

मौनी—वि० [सं० मौनिन्] चुप रहनेवाला। न बोलनेवाला। मौन
धारण करनेवाला।

मौनी—सञ्ज्ञा पुं० मुनि। वनवासी। तपस्वी।

मौनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मौना] कटोरे के आकार की टोकरी जो
प्रायः काँस और मूँज से बुनकर बनाई जाती है।

मौनी अभावस्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] माघ की अभावस्या।

मौनेय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गधवों और अप्सरारों आदि का एक मातृक
गोत्र।

विशेष—इन जातियों में माता का गोत्र प्रधान होता है, क्योंकि
इनके पिता अनिश्चित होते हैं।

मौर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुट, पा० मउड] [स्त्री० अल्पा० मौरि] १.
एक प्रकार का शिरोभूषण जो ताडपत्र या छुखडी आदि का
बनाया जाता है। विवाह में वर इसे अपने सिर पर पहनता
है। उ०—(क) भवधू वीत तुरावल राता। नाचै बाजन
बाज बराता। मौर के माये दूल्ह दीन्हो, अकथा जोरि कहाता।
मढ्ये के चारन समबो दीन्हो पुत्र विआहल माता।—कबीर
(शब्द०)। (ख) सोहत मौर मनोहर माये। मगलमय मुकुता-
मनि गाये।—तुलसी (शब्द०)। (ग) रामचंद्र सीता सहित
शोभत हैं तेहि ठौर। सुवरणमय मणिमय खचित शुभ सुदर
सिर मौर।—केशव (शब्द०)।

मुहा०—मौर बांधना = विवाह के समय सिर पर मौर पहनना।
उ०—पाँवरि तजहु देहु पग, पँरन बाँक तुखार। बाँध मौर
औ छत्र सिर वेग होहु असवार।—जायसी (शब्द०)।

२. शिरोमणि। प्रधान। संरदार। उ०—(क) जो तुम राजा
भाप कहावत वृदावन की ठौर। छूट छूट दधि सात सबन को

सब चोरन के मौर।—सूर (शब्द०)। (ख) साधू मेरे सब
बड़े अपनी अपनी ठौर। शब्द विवेकी पारखी वह माये का
मौर।—कबीर (शब्द०)।

मौर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुल, प्रा० मउल] छोटे छोटे फूलो या
कलियों से गुथी हुई लकी लकी लटोवाला घोंद। मंजरी।
वीर। जैसे,—आम का मौर। पयार का मौर। अशोक का
मौर। उ०—(क) नद महर घर के पिछवाड़े राधा भाइ
बतानी हो। मनोँ भव दल मौर देखि कै कुहकि कोकिला बानी
हो।—सूर (शब्द०)। (ख) चलत सुन्यो परदेश को हियरो
रह्यो न ठौर। लै मालिन मीतहि दियो नव रसाल को मौर।
—मतिराम (शब्द०)।

मुहा०—मौर बांधना = मौर निकलना। मजरी लगना।

मौर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मौलि (= सिर)] गरदन का पिछला भाग
जो सिर के नीचे पडता है। गरदन। उ०—(क) भाँह उँचें
भाँचरु उलटि मौर मोरि मुँह मोरि।—बिहारी (शब्द०)।
(ख) मोर उँचें घूटेन नै नारि सरोवर न्हाइ।—बिहारी
(शब्द०)।

मौरजिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुरज निर्माण करनेवाला शिल्पी। मुरज
चास बनानेवाला।

मौरना—क्रि० सं० [हिं० मौर + ना (प्रत्य०)] बृद्धो पर मजरी
लगना। आम आदि के पेड़ों पर वीर लगना। उ०—(क) काटे
भाँव न भोरिया फाटे छुरे न कान। गोरख पद परसे बिना कहौ
कोन की सान।—कबीर (शब्द०)। (ख) शिशिर होत पतभार,
भाँव कटाहर एक से। राह बसत निहार, जग जाने मौरत
प्रगट।—हनुमन्नाटक (शब्द०)। (ग) विलोके तहाँ भाँव के
साखि मोरे। चूँघा भ्रमँ हुकरें मौर बीरे। लगे पौन के भोक
डारें भुकावें। बिचारे वियोगीन को ज्यो डरावें।—गुमान
(शब्द०)।

मौरसिरी(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मौसिरी + श्री] दे० 'मौलसिरी'। उ०—
(क) छुही नसत तासो फहँ प्रीति निबारी जाय। मौरसिरी दिन
दिन चढ़ै सदा सुहागि लताहि।—रसनिधि (शब्द०)। (ख)
मौरसिरी ही को पैन्हि कै हार भई सब के सिर मौर सिरी
तू।—देव (शब्द०)।

मौरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० मौर + ई (प्रत्य०)] १ छोटा मौर जो
विवाह में बधू के सिर बाँधा जाता है। उ०—मौर लसै उत
मौरी इतै उपमा हकहू नहि जातु लही है। केसरी बागो बनो
दोच के इत चद्रिका चारु उतै कुलही है।—भारतेंदु प्र०, भा० १,
पृ० ७७७।

मौरूसी—वि० [अ०] बाप दादा के समय से चला आया हुआ।
पैतृक। जैसे,—यह बीमारी तो उनके खानदान में मौरूसी है।

मौ०—मौरूसी काश्तकार = वह काश्तकार जिसकी काश्त पर
उसके उत्तराधिकारी को भी वही हक प्राप्त हो। मौरूसी
जायदाद = पैतृक परंपरा से प्राप्त जमीन। जैसे,—यह मौरूसी
जायदाद है, इसमें सब का हक है।

मौल्य—सहा पुं [सं०] मूर्खता । वेवकूफी ।

मौर्य—सहा पुं [सं०] क्षत्रियों के एक वंश का नाम ।

विशेष—सम्राट् चंद्रगुप्त और अशोक इसी वंश में उत्पन्न हुए थे । पुराणों में मौर्यों को वर्णसंकर लिखा है और मौर्य वंश का मूलपुरुष 'चंद्रगुप्त' माना गया है । पुराणों के अनुसार चंद्रगुप्त का जन्म मुरा नामक शूद्रा से हुआ था और वह चारणक्य की सहायता से नदों का नाश कर पाटलिपुत्र का सम्राट् हुआ था । (विशेष दे० चंद्रगुप्त ।) पर बौद्ध ग्रंथों में 'चंद्रगुप्त' को 'मोरिय' वंश का लिखा है और उसे शुद्ध क्षत्रिय माना है । मौर्य वंश के शुद्ध क्षत्रिय होने की पुष्टि दिव्यावदान में अशोक के मुंह से कहलाए हुए 'देव ग्रह क्षत्रिय कथ पलाहु पारभक्ष्यामि' से भी होता है, जिसमें अशोक कहता है—'देव, मैं क्षत्रिय हूँ, मैं प्याज कंभे खाऊँ ।' 'पुरा' शब्द में 'र्य' प्रत्यय लगाने से मौर्य' शब्द बहुत खीच खाँच से बनता है, पर पालि भाषा में 'मोरिया' शब्द आया है, जिसकी सिद्धि पालि व्याकरण के अनुसार 'मोर' शब्द से, जो 'मयूर' का पालि रूप है, की गई है । यह समझकर जैनियों ने चंद्रगुप्त की माता का नद के मयूर-पालकों के सरदार की कन्या लिखा है । बुद्धघोष के विनयपिटक की आत्मकथा का टीका और महावंश का टीका में चंद्रगुप्त को मोरिय नगर के राजा का रानी का पुत्र लिखा है । यह मोरिय नगर हिंदुकुश और चित्राल के मध्य उज्जानक (सं० उज्जान) देश में था ।

महापरिनिर्वाण सूत्र में लिखा है कि जिस समय महात्मा मोक्ष बुद्ध का कुशीनगर में निर्वाण हुआ था और मल्लराज ने उनकी प्रत्येष्टि के अनंतर उनके भस्म और भस्त्रियों को कुशीनगर में चैत्य बनाकर प्रतिष्ठित करना चाहा था, उस समय कपिलवस्तु, राजगृह आदि के राजाओं ने महात्मा बुद्धदेव के शत्रु को बाँटकर अपने अपने भाग को अपने अपने देश में चैत्य बनाकर रखने के उद्देश्य से कुशीनगर पर चढ़ाई की थी, जिससे महात्मा उपद्रव की सभावना देख महात्मा द्रोण ने महात्मा बुद्धदेव के शत्रु को विमत्त कर प्रत्येक को कुछ कुछ भाग देकर ऋगड़ा भाँट दिया था । उन राजाओं में, जिन्हें महात्मा बुद्धदेव की चिता के भस्म का भाग दिया गया था, पिप्पलीकानन के मोरिया राजा का भी उल्लेख महापरिनिर्वाण सूत्र में है । इससे विदित होता है कि महात्मा बुद्धदेव के परिनिर्वाण काल में पिप्पलीकानन में मोरिय क्षत्रियों का निवास था । इससे मोरिय राजवंश की सत्ता का पता चंद्रगुप्त से बहुत पहले तक चलता है । ये मोरिय लोग शाक्य, लिच्छवि, मल्ल आदि वंश के क्षत्रियों के सबधो थे । जान पड़ता है, ये लोग काबुल के प्रदेशों के रहनेवाले क्षत्रिय थे; और जब पारसी भाषियों ने भारतीय भाषियों पर आक्रमण करना प्रारंभ किया, तब ये लोग भागकर नेपाल की तराई में चले गए और वहाँ के लोगों को अपने अधिकार में करके इन्होंने छोटे छोटे अनेक राज्य स्थापित किए । इनके आचार आदि पर पारसी भाषियों और मध्य एशिया की अन्य जातियों का प्रभाव पड़ा था, इसलिये

मनु जी ने उन्हें ब्राह्म्य क्षत्रिय लिखा है ।—

ऋत्तोमल्लश्च राजन्याद् ब्राह्म्याल्लिच्छिविरेव च ।

नटश्चकरगुणश्चैव खसोद्विड एव च ।

संभव है, बौद्ध हो जाने के कारण ही संस्कार रच्युत होने पर इन जातियों को ब्राह्म्य लिखा गया हो, और इसीलिये पुराणों में चंद्रगुप्त मौर्य के वंश के लिये भी 'वृपल' या वर्णसंकर लिखा गया हो । महावंश के टीकाकार और दिव्यावदान के टीकाकारों का कथन है कि चंद्रगुप्त मोरिय नगर के राजा का पुत्र था । जब मोरिय के राजा का ध्वंस हुआ, तब उसकी गर्भवती रानी अपने भाई के साथ बड़ी कठिनाता से भागकर पुष्पपुर चली आई और वही चंद्रगुप्त का जन्म हुआ । यह चंद्रगुप्त गौएँ चराया करता था । इमें हॉनहार देख चारणक्य-जी अपने आश्रम पर लाए और उपनयन कर अपने साथ तक्षशिला ले गए । जब सिकंदर ने पंजाब पर आक्रमण किया, तब तक्षशिला के ध्वंस होने पर चंद्रगुप्त आचार्य चारणक्य के साथ सिकंदर के शिविर में था । वील साहब का कथन है कि मोरिय नगर उज्जानक प्रदेश में था, जो हिंदुकुश और चित्राल के मध्य में था ।

इन सब बातों को देखते हुए जान पड़ता है, जिस प्रकार निस्विश से लिच्छवि, शक से शाक्य आदि राजवंशों के नाम पड़े, उसी प्रकार मोरिय नगर के प्रथम अधिवासी होने के कारण मौर्य राजवंश का भी नाम रखा गया, और आचार व्यवहार की विभिन्नता से पुराणों में उसे 'वृपल' आदि लिखा गया । पारस की सीमा पर रहने के कारण उनके आचार व्यवहार और रहन सहन पर पारसियों का प्रभाव पड़ा था, और चंद्रगुप्त तथा अशोक के समय के गृहों और राजप्रासादों का भी निर्माण पारस के भवनों के ढंग पर ही किया गया था । चंद्रगुप्त के अनंतर अशोक मौर्य वंश का सबसे प्रसिद्ध सम्राट् हुआ । मौर्य साम्राज्य का ध्वंस शुंगों ने किया । पर विक्रम की आठवीं शताब्दी तक इधर उधर मौर्यों के छोटे छोटे राज्यों का पता लगता है । ऐसा प्रसिद्ध है, और जैन ग्रंथों में भी लिखा है कि चित्तौड़ का गढ़ मौर्य या मोरी राजा चित्राग ने बनवाया था ।

मौर्या—सहा स्त्री [सं०] १ धनुष की प्रत्यचा । कमान की डोरी । ज्या । २ मूर्वा घास की बनी मेखला जिसे क्षत्रियों को धारण करने का विधान है [को०] ।

मौल^१—वि० [सं०] १ मूल से सबध रखनेवाला । २ मौलसी । पंतुक । ३ परपरागत । परपरागत (को०) ।

मौल^२—सहा पुं [सं०] १ प्राचीन काल के एक प्रकार के मंत्री । २ बड़ा जमींदार । तालुकेदार । भूस्वामी ।

विशेष मनु ने लिखा है कि ग्राम के सीमा सबधी विवाद को सामत और यदि सामत न हो तो मौल निपटावे ।

मौलबल—सहा पुं [सं०] बड़े जमींदारों की अथवा उनके द्वारा एकत्र की हुई सेना ।

मौलवी—सहा पुं [सं०] १. अरबी भाषा का पंडित । २. मुसल-

मान धर्म का आचार्य, जो अरबी, फारसी आदि भाषाओं का ज्ञाता हो। ३ धर्मनिष्ठ मुसलमान।

मौलवीगिरी—सज्ञा स्त्री० [अ० मौलवी + गिरी] मौलवी का काम। अव्यापन [को०]।

मौलसिरी—सज्ञा स्त्री० [सं० मौलि + श्री] एक प्रकार का बड़ा सदाबहार पेड़। उ०—पहरित ही गोरे गरे यो दीरी दुति लाल। मनो परसि पुलकित भई मौलसिरी की माल।—विहारी (शब्द०)।

विशेष इसका लकड़ी अदर से लाल और चिकनी होती है जिससे मेज, कुर्मी आदि बनाई जाती है। यह दरवाजे और संगहे बनाने के भी काम आती है। इसके फूल मुकुट के आकार के, तारे की भाँति छोटे छोटे होते हैं और उनमें इत्र बनाया जाता है। इसके फल पकने पर खाने योग्य होते हैं और बीजों से तेल निकलता है। इसकी छाल औषधियों में काम आती है। इसका पेड़ बीजों से उत्पन्न होता है और सब देशों में लगाया जा सकता है। पश्चिमी घाट और कनारा में यह जंगलों में स्वच्छन्द रूप से उगता है। यह पेड़ बहुत दिनों में बढ़ता है। यह बरसात में फूलता और शरद ऋतु में फलता है। इसके फूल सफेद, कटावदार और छोटे छोटे बहुत ही कोमल और मीठी मुगधवाले होते हैं।

पर्याय—बकुल। कैसर। सीधगध। मुकुल। मधुपुष्प। सुरभि। शारदिक। करक। चिरपुष्प।

मौला^१—सज्ञा पुं० [दश०] उत्तरी भारत में होनेवाली एक प्रकार की बेल जिसकी पत्तियाँ एक वालिशत तक लंबी होंती हैं। जाड़े के दिनों में इसमें श्रावण इत्र लगे फूल लगते हैं। इसके तने से एक प्रकार का लाल रंग का गीद निकलता है। यह बेल जिस वृक्ष पर चढ़ती है, उसे बहुत हानि पहुँचाती है। मूला। मल्हा बेल।

मौला^२—सज्ञा पुं० [अ०] १ स्वामी। मालिक। २ ईश्वर। परमेश्वर। ३ दामता से मुक्त दाम [को०]।

मौलाना—सज्ञा पुं० [अ० मोलाना] १ अरबी भाषा का बहुत बड़ा विद्वान्। २ बड़ा मौलवी। २ विद्वान्।

मौलि^१—सज्ञा पुं० [सं०] १ किसी पदार्थ का सबसे ऊँचा भाग। चोटी। सिरा। चूड़ा। २ मस्तक। सिर। ३ किरीट। ४ जूड़ा। जटाजूट। ५ अशोक का पेड़। ६ मुख्य वा प्रधान व्यक्ति। सरदार।

मौलि^२—सज्ञा स्त्री० पृथिवी। भूमि। जमीन।

यौ०—मौलिष्ट = मुकुट। मौलिवध = मुकुट। राजमुकुट। किरीट।

मौलिमणि = मुकुट में जड़ा हुआ रत्न। श्रेष्ठ मणि। शिरोमणि। **मौलिमुकुट** = मुकुट। **मौलिरत्न** = दे० 'मौलिमणि'।

मौलिक—वि० [सं०] १ मूल सवधी। २ मुख्य। प्रधान। ३ जो किसी की छाया, या अनुवाद न हो। ४ छोटा। निम्न [को०]।

मौलिकता—सज्ञा स्त्री० [सं०] मौलिक होने का भाव [को०]।

मौलिमनि—वि० [सं० मौलिमणि] शिरोमणि। प्रधान।

उ०—मो सम कुटिन मौलिमनि नहिं जग, तुम सम हरि न हरन कुटिलाई।—मतवाणी०, भा० २, पृ० ८३।

मौली^१—वि० [सं० मौलिन्] जिमके गिर पर मौलि या मुकुट हो। मुकुटधारी।

मौली^२—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'मौलि'।

मौलूद—सज्ञा पुं० [अ०] १ नवजात शिशु। जन्म प्राप्त शिशु। २ मुहम्मद माह्व के जन्म का उत्सव। उ०—बाशी में व्यास गद्दी में लगाकर मौलूद की कथा की भाँति।—प्रेमधन०, भा० २, पृ० ३६५।

यौ०—मौलूदग्वॉ = मौलूद की कथा कहनेवाला। **मौलूद शरीफ** = () मुहम्मद माह्व की जन्मकथा। (२) वह मजसिस जिममें मुहम्मद माह्व की जन्मकथा कही जाय।

मौलेयक—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रत्न या हीरा (कौटि०)।

मौल्य—सज्ञा सं० [सं०] मूल्य।

मौपल^१—सज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के एक पर्व का नाम।

मौपल^२—वि० [सं०] १ मुपल नववी। २ मूल के आकार का।

मौपिकपुत्र—सज्ञा पुं० [सं०] शतपथ ब्राह्मण के अनुसार एक आचार्य का नाम।

मौष्ट्रा—सज्ञा स्त्री० [सं०] घूँसे की मार। घूँगाघूँसी। मुकामुकी।

मौष्टिक—सज्ञा पुं० [सं०] १ चोरी। ठगी। २ चोर। ठग। बटमार। धूर्त।

मौसम—सज्ञा पुं० [अ० मौसिम] दे० 'मौसिम'।

मौसर—वि० [अ० मुयस्सर (= प्राप्त)] १ जो नुगमता से मिल सके। सुप्राप्य।

मुहा०—मौसर थाना = मिल सकना। उ०—समय की चूक हूक मालति प्रवीनन को मौसर न आवै वनँ औसर जवाब का।—बलवैर (शब्द०)।

२ उपलब्ध। प्राप्त। उ०—(क) औसर के मौसर भए मत दे करतें खोइ। जोवन औसर भावतो वार वार नहिं होइ।—रसनिधि (शब्द०)। (ख) वार वार नहिं होत है औसर मौसर वार। सौ सिर देवँ को अरे जी फिर हूँ त्यार।—रसनिधि (शब्द०)।

क्रि० प्र०—थाना।—फाना।—होना।

मौसल—वि० [सं०] मूसल सवधी। मूसल का।

मौसली—सज्ञा स्त्री० [हि० मौलमिरी] दे० 'मौलमिरी'।

मौसा—सज्ञा पुं० [हि० मौसी का पुं०] [स्त्री० मौसी] माता की बहन का पति। मौसिया या माँसी का पति।

मौसिम—सज्ञा पुं० [अ०] [वि० मौसिमी] १ उपयुक्त समय। अनुकूल काल। २ ऋतु।

मौसिमी—वि० [अ०] १. समयोपयोगी। काल के अनुकूल। २ ऋतु सवधी। ऋतु का। जैसे, मौसिमी फल, मौसिमी मिठाई।

मौसिमी बुखार—सज्ञा पुं० [अ० मौसिमी + फा० बुखार] चंत या भादो कुआर में होनेवाला ज्वर।

मौसिया'—सञ्ज्ञा पुं० [हि० मौसा + इया] दे० 'मौसा' ।
मौसिया'—वि० सबब में मौसी या मौसा के स्थान का । मौसी के द्वारा सबब रखनेवाला । जैसे, मौसिया सास, मौसिया ससुर । दे० 'मौसेरा' । जैसे, चोर चोर मौसिया भाई । (कहावत) ।

मौसियाउत—वि० [हि० मौसी + आउत (प्रत्य०)] मौमेरा ।

मौसियायत'—वि० [हि० मौसी] दे० 'मौसियाउत' ।

मौसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मानृष्वसा, प्रा० माउस्सिमा] [वि० मौसेरा, मौसियाउत] माता की बहिन । मासी । उ०—मातु मौसी बहिन हूँ तैं सासु तैं अघिकाइ । करहि तापस तीय तनया सीय हित चित लाइ ।—तुलसी (शब्द०) ।

मौसूफ—वि० [अ० मौसूफ] [स्त्री० मौसूफा] १ जिसकी प्रशसा की जाय । प्रशसित । २ पूर्वोक्त । जिसका जिक्र चल रहा हो । ३. जिम शब्द के साथ कोई विशेषण हो । विशेष्य [को०] ।

मौसूम—वि० [अ०] [वि० मौसूमह्] नाम रखा हुआ । हुआ । नामवारी ।

मौसूल—वि० [अ०] [वि० स्त्री० मौसूलह्] प्राप्त । लब्ध । हासिल ।

मौसेरा—वि० [हि० मौसी + एरा (प्रत्य०)] मौसी के द्वारा सबब । मौसी के सबब का । जैसे, मौसेरा भाई, मौसेरी बहन, मौसेरा ससुर, मौसेरी सास, इत्यादि । उ०—जब देवसरूप बैठ गए, उनके मौमेरे ससुर नदकुमार अपनी ठौर से उठे और देखकर कहने लगे ।—अघखिला फूल (शब्द०) ।

मौहर'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मधुकर, प्रा० महुअर] दे० 'महुअर' । उ०—जलतरंग मुरली किंकिन मौहर उपग मडल स्वर तितिन ।—कवीर मा०, पृ० २४६ ।

मौहूर'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मुकुट] मुकुट । मोर । उ०—रघवर की निकरीसी कीनी मौहूर राँम पै धँधवामि ।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० ६३६ ।

मौहूर्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुहूर्त बतलानेवाला । ज्योतिषी ।

मौहूर्तिक'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुहूर्त बतलानेवाला । ज्योतिषी । २ दक्ष की मुहूर्ता नामक कन्या से उत्पन्न एक देवगण ।

मौहूर्तिक'—वि० मुहूर्त से उत्पन्न । मुहूर्तोद्भव ।

म्नात—वि० [सं०] जिसे दो बार किया गया हो । १ दुहराया हुआ । २ पढा हुआ । सीखा हुआ [को०] ।

म्यत^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० म्यत] दे० 'मीत' । उ०—काल सहाणों यों खडा, जागि पियारे म्यत । राम सनेही बाहिरा तू क्यू सोवै नच्यत ।—कवीर ग्र०, पृ० ७२ ।

म्याउँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] दे० 'म्याव' ।

मुहा०—म्याऊँ म्याऊँ करना = 'म्यावँ म्यावँ करना' । उ०—विल्ली अपना, हिस्सा या तो म्याउँ म्याउँ करके माँगती है या चोरी से ले जाती है ।—रस०, पृ० ११२ ।

म्याँवँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] विल्ली की बोली ।

मुहा०—म्याँवँ म्याँवँ करना = भयभीत होकर बीभी आवाज में बोलना । डर के मारे बोल बंद हो जाना ।

म्यान—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मियान] १ कोष जिसमें तलवार, कटार आदि के फल रखे जाते हैं । तलवार, कटार आदि का फल रखने का स्थान । उ०—चाखा चाहै प्रेम रम राखा चाहै मान । दोष रग इक म्यान मे देखा सुना न कान ।—कवीर (शब्द०) । (ख) जब माल इकट्ठा करते थे, अब तन का अपने ढेर करो । गढ टूटा लक्ष्मण भाग चुका अब रघुान मे तुम शमसेर करो ।—नजीर (शब्द०) । २ अतमय कोश । शरीर । उ०—(क) कविग सूता क्या करै, उठि न भजै भगवान । जम धरि जब ले जायंगे पडा रहेगा म्यान ।—कवीर (शब्द०) । (ख) चचल मनुवाँ चेत रे सोवै कहा अजान । जम घर जब ले जायगा पडा रहेगा म्यान ।—कवीर (शब्द०) ।

म्याना^७—क्रि० सं० [हि० म्यान] म्यान में डालना । म्यान में रखना । उ०—(क) प्रस कहि अपनी काढि कृपानी । म्यान्यौ ताहि विशेषि चखानी ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) तानु तेजु सहि सक्यो न राना । खड्ग तुरत म्यान महुँ म्याना ।—रघुराज (शब्द०) ।

म्याना^३—सञ्ज्ञा पुं० [फा० मियानह्] दे० 'मियाना' ।

म्याना^३—वि० मध्य का । बीच का । मझोला ।

म्यानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० मियानी] पाजामे की काट में एक टुकड़े का नाम जो दोनों पहलियों को जोड़ते समय रानो के बीच में जोड़ा जाता है ।

म्युजियम—सञ्ज्ञा पुं० [अ० म्युजियम] वह स्थान जहाँ देश तथा विदेश के अनेक प्रकार के अद्भुत और विलक्षण पदार्थ संग्रहीत हो । अद्भुत पदार्थों का संग्रहालय । अजायबघर ।

म्युनिसिपल—वि० [अ०] नगरपालिका या म्युनिसिपैल्टी सबधी । उ०—११० रुपये सालाना आय पर म्युनिसिपल टकम देनेवाले व्यक्ति ।—भारतीय०, पृ० २० ।

म्युनिसिपैलिटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'म्युनिसिपैल्टी' उ०—म्युनिसिपैलिटी के कार्य निर्वाह का बोझ एक आदर्मा के सिर नहीं है उसमें बहुत से मेवर होते हैं ।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० २२० ।

म्युनिसिपैल्टी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] किसी नगर के नागरिकों की वह प्रतिनिधि मभा जिसे उस नगर के स्वास्थ्य, स्वच्छता तथा अन्यान्य आंतरिक प्रबन्धों का स्वतंत्र रूप में नियमानुसार अधिकार हो ।

विशेष—प्राय सभी बड़े नगरों में वहाँ की सफाई, रोजाना, सबको और मकानों आदि की व्यवस्था तथा इसी प्रकार के और अनेक कार्यों के लिये म्युनिसिपैलिटी का मघटन होता है । इसके सदस्यों का चुनाव प्राय प्रति तीसरे वर्ष कुछ विशिष्ट योग्यतावाले नागरिकों के द्वारा हुआ करता है ।

म्यों—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] विह्वी की ब्रौली ।

मुहा०—म्यों म्यों करना = दे० 'म्याँवँ म्याँवँ करना' । उ०—मेरी देह छूटत जम पठए जितक हूते घर मो । लँ लँ सब हथियार आपुने सान धराए त्यो । तिनके दारुन दरस देखि कै पतित करत म्यों म्यों ।—सुर (शब्द०) । दे० 'म्याँव' ।

म्योंडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० निर्गुण्डी] एक तदावहार भाड का नाम । मिदुवार । निर्गुंडी ।

विशेष—इस भाड में केसरिया रंग के छोटे छोटे फूलों की मजरियाँ लगती हैं । इसकी ढालियों में आमने सामने पत्तियाँ होती हैं, जिनके बीच से दूसरी शाखाएँ निकलती हैं । इनकी पत्तियों के बीच एक सीक होती है जिसके सिरे पर एक और दोनो और दो दो पत्तियाँ होती हैं, जो कुल मिलकर पाँच पाँच होती हैं । यह भाड बनो में होता है और वागों के किनारे बाढ़ पर भी लगाया जाता है । बँचक में म्योंडी उष्ण और रुद्ध मानी गई है और इसका स्वाद कटु तथा तिक्त लिप्ता गया है । यह खाँसी, कफ, सुजन और अफरा को दूर करती है । इसका प्रयोग वात रोग में भी होता है और इनकी पत्तियों की भाप बवासीर की पीडा को दूर करती है ।

पर्या०—नीलिका । नील निर्गुंडी । सिहक । सिढवार । निर्गुंडी ।

म्रत्, म्रत्तण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अपने दोषों को छिपाना । मकारी । २ तेल लगाना । ३ मसलना । मीजना ।

म्रगमद०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगमद] कस्तूरी । मृगमद । उ०—कार्लिदी न्हावहि न नयन अजै न म्रगमद । कुचा अग्र परमै न नील दल कवल तीरि सद ।—पृ० रा०, २।३४६ ।

म्रग०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृग] [स्त्री० म्रगी] मृग । हिरन । उ०—म्रगी जान म्रदुँ घरँ बध्ध घाई ।—पृ० रा०, ६१।२२३३ ।

म्रगतिह्य०—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० मृगतृष्णा, प्रा० म्रगतिह्य] दे० 'मृगतृष्णा', 'मृगतृष्णा' । उ०—नव बधू सजत भूपन तँवारि, ससि बढी किरन अति तेज तार । म्रगतिह्य भई उर मुत्तिमाल, मुल्लै चकोर ससि नैन चाल ।—पृ० रा०, २।३४६ ।

म्रगमास०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृगमास] दे० 'मार्गशीर्ष' । उ०—नव उच्छत्र नर नार नवल शृगार वसन्ते । गीता में म्रगमास कह्यो मम रूप किमन्ते ।—रा० ६०, पृ० ३७७ ।

म्रगा०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृग, प्रा० म्रग] [स्त्री० म्रगी] दे० 'मृग' । उ०—तिने देपि असमान म्रगी ठठुक्की । मनो मेनिका नृत्य तँ ताल चुक्की ।—पृ० रा०, १।४३० ।

म्रजाद०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मर्याद] दे० 'मर्यादा' । उ०—पुष्टि म्रजाद, भजन सुख सीमा निजजन पोपन मरन मर्जा ।—नद० ग्र० पृ० ३२५ ।

म्रदिमा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० म्रदिमन्] १ मृदुता । कोमलता । २ नम्रता । आजिजी ।

म्रदिष्ट—वि० [सं०] अति मृदु । अत्यंत कोमल ।

म्रदु०—वि० [सं० मृदु] दे० 'मृदु' । उ०—सु दर माल विमाल, अलक सम माल अनोपम । हित प्रकाश म्रदु हास, अरुण वारिज मुख ओपम ।—रा० ६०, पृ० २ ।

म्रदना०—क्रि० सं० [सं० मर्दन] दे० 'मर्दना' । उ०—परे पंच वीर, म्रद्रे नप्य भीर ।—पृ० रा०, ६१।१६८३ ।

म्रनाल०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृणाल] दे० 'मृणाल' । उ०—मनों चच हँसी म्रनाल ति पग्गी ।—पृ० रा०, ५५।१४८ ।

म्रातन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कँपती मुस्तक । केवटी मोवा ।

म्रितक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृतक] दे० 'मृतक' । उ०—म्रितक होय काल को उसे, उलट वामी गर्प को पाइ ।—गमानद०, पृ० ३४ ।

म्रिया०—क्रि० वि० [सं० मृया] दे० 'मृया' । उ०—यह म्रिया मत नहि होय । सत्र भर्मजात वियोग ।—मत्० दग्गिया, पृ० १० ।

म्रिनाल०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० मृणान] दे० 'मृणान' । उ०—इति अत दतन तीर । म्रिनान मनु कडि नीर ।—पृ० रा०, ६१। १७१३ ।

म्रियमाण—वि० [सं०] मरता हुआ । मग हुआ ना । मृतप्राय । अवमग्न । उ०—गिन उठे पुराय पद्य म्रियमाण, चिरव का हो सदैव कन्याया ।—नागरिका, पृ० ७६ ।

म्लान—वि० [सं०] मुरझाया हुआ । म्लान [वि०] ।

म्लान^१—वि० [सं०] मलिन । कुम्हनाया हुआ । २ दुर्बल । कमजोर । ३ मैला । मलिन ।

म्लान—सञ्ज्ञा स्त्री० दे० 'म्लानि' ।

म्यौ०—म्लानमना = उदान । खिन्न । म्लानब्रीड = निर्लज्ज । वैशर्म । लज्जाहीन ।

म्लानता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ म्लान होने का भाव । मलिनता । २ ग्लानि ।

म्लानि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मलिनता । कातिक्षय । २ छाया । मलिनता । उ०—या कि विधु में ज्यो मही की म्लानि, दूर भी विप्रित हुई शृह म्लानि ।—साकेत, पृ० १६६ । २ ग्लानि । शोक ।

म्लायी—वि० [सं० म्लायिन्] १ म्लान । म्लानियुक्त । २ दुखी ।

म्लिष्ट—वि० [सं०] १ जो साफ न हो । अस्पष्ट । जैसे, म्लिष्ट वाणी । २ अव्यक्त वाणी बोलनेवाला । जो स्पष्ट न बोलता हो ।

म्लेच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मनुष्यों की वे जातियाँ जिनमें वराहधर्म न हो । इस शब्द का अर्थ है—अस्पष्टनापी अथवा ऐसी भाषा बोलनेवाला जिनमें वर्राँ का व्यक्त उच्चारण न होता हो ।

विशेष—प्राचीन ग्रंथों में म्लेच्छ शब्द का प्रयोग उन जातियों के लिये होता था, जिनकी भाषा के उच्चारण की शैली आर्यों की शैली से विलक्षण होती थी । ये जातियाँ प्राय ऐसी थीं जिनका आर्यों के साथ संपर्क था, इसीलिये म्लेच्छ देश भी भारत के अंतर्गत माना गया है और म्लेच्छों को वराहधर्म से रहित यज्ञ करनेवाला लिखा है । महा-भारत के आदिपर्व में म्लेच्छों की उत्पत्ति, विश्वामित्र से छीनकर ले जाते ममय बशिष्ठ की धेनु नदिनी के अग्र प्रत्यग से लिखी गई है और पल्लव, द्रविड, शक, यवन, शबर, पाँड़

किरात, यवन, सिंहल, बर्बर, खस आदि म्लेच्छ माने गए हैं। पुराणों में म्लेच्छों की उत्पत्ति में मतभेद है। विष्णुपुराण में लिखा है कि सगर ने हैहयवशियों को पराजित कर उन्हें धर्मच्युत कर दिया था और वही लोग शक, यवन, कावोज, पारद, और पल्लव नामक म्लेच्छ जाति के हो गए। मत्स्यपुराण में राजा वेणु के शरीरमथन से म्लेच्छ जाति की उत्पत्ति लिखी गई है। वृहत्संहिता में हिमालय और विंध्यगिरि तथा विनशन और प्रयाग के मध्य के पवित्र देश के अतिरिक्त अयन्त्र को म्लेच्छ देश लिखा है। वृहत्पाराशर में चातुर्वर्ण्य और अनराल वर्णों के अतिरिक्त वर्णाचारहीन को म्लेच्छ लिखा है, और प्रायश्चित्तत्व में गोमामभन्नी, विरुद्धभाषी और सर्वाचारविहीन ही म्लेच्छ कहे गए हैं।

२. ताम्र । तर्वा घातु (को०) । ३ अनार्य भाषा वा कथन (को०) । ४ हिंगु । हींग ।

म्लेच्छ^३—वि० १ नीच । २ जो सदा पाप कर्म करता हो । पापरत ।

यौ०—म्लेच्छकद । म्लेच्छजाति = अनार्य या असंस्कृत जाति । म्लेच्छदेश = चातुर्वर्ण्य व्यवस्था से रहित अनार्य देश । म्लेच्छ भाषा = विदेशी भाषा । अनार्य भाषा । म्लेच्छभोजन । म्लेच्छ

मडल = म्लेच्छ देश । म्लेच्छमुख । म्लेच्छवाक् = म्लेच्छभाषा ।

म्लेच्छकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० म्लेच्छकन्द] लहसुन ।

म्लेच्छभोजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यावक । बोरो । २ गेहूँ ।

म्लेच्छमुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तर्वा ।

म्लेच्छाक्रात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० म्लेच्छ + आक्रान्त] म्लेच्छों द्वारा आक्रात । म्लेच्छों द्वारा विजित । उ०—म्लेच्छाक्रात देश छोड़कर राजधानी में चला आया था ।—स्कंद०, पृ० १८ ।

म्लेच्छाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गेहूँ । म्लेच्छभोजन [को०] ।

म्लेच्छित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ म्लेच्छ भाषा । अनार्य भाषा । २ अपभाषा । व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध भाषा [को०] ।

म्हों—सर्व० [सं० अस्मत्, अहम् प्रा० अम्हे, राज० म्हे, म्हा] मुझ । दे० 'म्हा' । उ०—(क) राँगी राजानूँ कहइ, ओ म्हा नातरउ कीष ।—ढोला०, दू० ६ । (ख) म्हों सो थॉके घडों टहलनी भंवर कमलफुल दास लुभावै ।—घनानन्द, पृ० ३३४ ।

म्हा(७)†—सर्व० [हिं०] दे० 'मुझ' । उ०—दास तुलसी सभय वदत मयनदिनी मदमति कत सुनु मत म्हा को ।—तुलसी (शब्द०) ।

म्हारा(७)†—सर्व० [हिं०] दे० 'हमारा' ।

य

य—हिंदी वर्णमाला का २६वाँ अक्षर । इसका उच्चारणस्थान तालु है । यह स्पर्श वर्ण और ऊष्म वर्ण के बीच का वर्ण है, इसलिये इसे अत स्थ वर्ण कहते हैं । इसके उच्चारण में कुछ आभ्यंतर प्रयत्न के अतिरिक्त सवार, नाद और घोष नामक बाह्य प्रयत्न भी होते हैं । यह अल्पप्राण है ।

यत्, यत्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यन्तृ] १. सारथी । (हिं०) । २ महावत । हाथीवान (को०) । ३ निर्देशक । नियन्त्रणकर्ता । शासक (को०) ।

यति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यन्ति] दमन ।

यत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यन्त्र] १ तांत्रिकों के अनुसार कुछ विशिष्ट प्रकार से बन हुए आकार या कोणक आदि, जिनमें कुछ अक्षर या अक्षर आदि लिखे रहते हैं और जिनके अनेक प्रकार के फल माने जाते हैं । तांत्रिक लोग इनमें देवताओं का अधिष्ठान मानते हैं । लोग इन्हें हाथ या गले में पहनते भी हैं । जतर ।

यौ०—यत्रचेष्टित = वाजीगरी । यत्रमत्र । यत्रमत्र = जादू, टोना या टोटका आदि ।

२. विशेष प्रकार से बना हुआ उपकरण, जो किसी विशेष कार्य के लिये प्रस्तुत किया जाय । औजार । जैसे,—(क) वैद्यक में तेल और आसव आदि तैयार करने के अनेक प्रकार के यत्र होते हैं । (ख) प्राचीन काल में भी अनेक ऐसे यत्र बनते थे, जिनसे दूर से ही शत्रुओं पर प्रहार किया जाता था । ३ किसी खास काम के लिये बनाई हुई कल या औजार । जैसे,—आजकल ससार में सैकड़ों प्रकार के यत्र प्रचलित हैं, जिनकी

सहायता से सैकड़ों हजारों आदमियों का काम एक या दो आदमी कर लेते हैं । ४. बटुक । ५. वाजा । वाद्य । ६. वाजों के द्वारा होनेवाला सर्गात । वाद्यसर्गात । ७. वीणा । वीन । ८. ताला । एक प्रकार का बरतन । १०. नियन्त्रण ।

यौ०—यत्रकरडिका । यत्रकर्मकृत् = कलाकार । कारीगर । यत्रकोविद = मिस्त्री । मशीन के काम में दक्ष । यत्रगोल । यत्रतत्त्वा = यत्र बनानेवाला । यत्रतोरण = तारण जो यत्र वा मशीन से धूमता हो । यत्रदृढ = अर्गला वा तान्ना से बढ । यत्रपुत्रक । यत्रप्रवाह = कृत्रिम भरना या सीता । यत्रमार्ग । यत्रमुक्त = एक शब्द । यत्रविधि । यत्रशर = यत्रचालित बाण ।

यत्रक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यन्त्रक] १ सुश्रुत के अनुसार कपड़े का वह बंधन जो घाव आदि पर बाँधा जाता है । पट्टी । २ वह शिल्पकार जो यत्र आदि की सहायता से चार्जे तैयार करता हो । ३ वह जो वशीकरण करता हो । वश में कर लेनेवाला ।

यंत्रकरडिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यन्त्रकरडिका] वाजीगरी की पेटो जिसके द्वारा वे अनेक प्रकार के खेल करते हैं ।

यत्रगोल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यन्त्रगोल] १. एक प्रकार की मटर । २ तोप का गोला [को०] ।

यत्रगृह—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यन्त्रगृह] १ वह स्थान जहाँ यत्र की सहायता से किसी प्रकार का कर्म होता हो अथवा कोई चीज तैयार की जाती हो । २ वेधशाला । ३. वह स्थान जिसमें प्राचीन काल में अपराधियों आदि को रखकर अनेक प्रकार की यत्रणा दी जाती थी ।

यत्रण—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रण] १ रक्षा करना । २ बाँधना । ३. नियम में रखना । नियम के अनुसार चलाना । नियंत्रण ।

यत्रणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० यन्त्रणा] १ बलेश । यातना । तकलीफ । २ दर्द । वदना । पीडा ।

यत्रणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० यन्त्रणी] पत्नी की छोटी बहन । छोटी साली (को०) ।

यत्रवारागृह—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रधारागृह] फुहारे से युक्त घर । स्नानगृह (को०) ।

यत्रनाल—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रनाल] वह नल जिसके द्वारा कुएँ आदि से जल निकाला जाता है ।

यत्रपुत्रक—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रपुत्रक] [स्त्री० यन्त्रपुत्रिका] यत्र से चलने या हिलने डोलनेवाला पुतला । यत्रचालित खिलौना ।

यत्रपेशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० यन्त्रपेशी] चक्की ।

यत्रमत्र—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रमन्त्र] जादू । टोना । टोटका ।

यत्रमातृका—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० यन्त्रमातृका] चौमठ कलाओं में से एक कला, जिसमें अनेक प्रकार के यत्र या कलें आदि बनाना और उससे काम लेना सम्मिलित है ।

यत्रमार्ग—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रमार्ग] नहर । जलप्रणाली (को०) ।

यत्रराज—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रराज] ज्योतिष में एक यत्र जिससे ग्रहों और तारों की गति जानी जाती है ।

यत्रविद्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० यन्त्रविद्या] ऋतु के चलाने और बनाने की विद्या ।

यत्रविधि—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रविधि] शल्य-क्रिया-प्रयुक्त अस्त्रों के निर्माण का विज्ञान । शल्य अस्त्रों का विज्ञान (को०) ।

यत्रशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० यन्त्रशाला] १ वेधशाला । २ वह स्थान जहाँ अनेक प्रकार के यत्रादि हो ।

यत्रसञ्ज्ञा—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रसञ्ज्ञा] तेल की मिल (को०) ।

यत्रसूत्र—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रसूत्र] वह सूत्र जिसकी सहायता से कठपुतली नचाई जाती है ।

यत्रपीड—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रपीड] एक प्रकार का सन्निपात ज्वर जिसके कारण शरीर में बहुत अधिक पीडा होती है और रोगी का लहू पीले रंग का हो जाता है ।

यत्रालय—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रालय] १ वह स्थान जहाँ कल या यत्रादि हो । २ छापाखाना । प्रेस ।

यत्राश—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्राश] एक राग जो हनुमत के मत से हिंडोल राग का पुत्र है ।

यत्रिका^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० यन्त्रिका] स्त्री की छोटी बहन । छोटी साली ।

यत्रिका^२—सञ्ज्ञा स्त्री० छोटा ताला ।

यत्रिणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० यन्त्रिणी] दे० 'यत्रिका', 'यत्रिणी' ।

यत्रित—वि० [स० यन्त्रित] १ जो यत्र आदि की सहायता से बाँधा

या बंद कर दिया हो । रोका या बंद किया हुआ । २ ताला लगा हुआ । ताले में बंद ।

यत्री—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रिन्] १ यत्र मत्र करनेवाला । तांत्रिक । २ बाजा बजानेवाला । उ०—मूरदाम स्वामी के चलिबजा यत्री त्रिनु यत्र मकात।—सूर (शब्द०) । ३ नियंत्रण करने वाला बाँधनेवाला ।

यत्रोपल—सञ्ज्ञा पुं० [स० यन्त्रोपल] चक्की । चक्की का पत्थर (को०) ।

यद्(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [स० इन्द्र] स्वामी । (हिं०) ।

य - सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ यण । २ योग । ३ यान । सवारी । ४ समय । ५ छद शास्त्र में यण का सञ्ज्ञित रूप । दे० 'यण' । ६ यव । जो । ७ यम । ८ त्याग । ९ प्रकाश ।

यक—वि० [फा०] दे० 'एक' ।

यिशेष—इस शब्द से बननेवाले यौगिक शब्दों के लिये देखिए 'एक' शब्द से बने यौगिक शब्द ।

यकअग्नी^१—वि० [हिं० एक + अग्नी] १. एक अग्नवाला । २ एक (पत्नी या पति) के साथ रहनेवाला (या वाली) । उ०—बहुरंगी जित तितहि मुख यकअग्नी कर अत । जिमि गणिका निधरक रहति दहति सती त्रिनु कत ।—विश्राम (शब्द०) । ३ एक ही के आश्रित । एक ही पर रहनेवाला । एकनिष्ठ । ४ दे० 'एकांगी' ।

यकअग्नी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० दे० 'एकांगी' ।

यककलम - क्रि० वि० [फा० यककलम] १ एक ही बार कलम चलाकर । एक ही बार लिखकर । २ एक बारगी । एकाएक । जैसे,—वह यहाँ से यककलम बरखास्त कर दिया गया ।

यकजा—वि० [फा०] सम्मिलित । जुमला । इकट्ठा (को०) ।

यकतरफा—वि० [फा०] एकपक्षीय । एक ओर का । दे० 'एकतरफा' ।

यकता—वि० [फा०] जो अपनी विद्या या विषय में एक ही हो । जिसके मुकाबले का और कोई न हो । अद्वितीय ।

यकताई—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] एकता या अद्वितीय होने का भाव । अद्वितीयता ।

यकतार^(पु)—वि० [हिं० एक + तार] एक सा । एक सा । समरस ।

यकतार^१—वि० [फा०] किंचित् । ईपत् (को०) ।

यकपरा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० एक + पर + आ (प्रत्य०)] एक प्रकार का कवूतर जिसका सारा शरीर सफेद होता है, केवल डैना पर दो एक काली चित्तियाँ होती ह ।

यकफर्दी, यकफसली—वि० [फा०] जिममें एक फसल हो । एक-फर्दा (को०) ।

यकवगगा—वि० [फा०] जो एक ही लगाम को मानता हो । एक तरफ ही चलनेवाला । एकबगा ।

यकवयक—क्रि० वि० [फा०] एकबारगी । यकायक । एक दम से ।

यकवारगी—क्रि० वि० [फा०] यकवयक । अचानक । एकाएक । सहसा । दे० 'एकवारगी' ।

यकरोजा—वि० [फा० यकरोज़ह] एकदिवसीय । एक दिन का (को०) ।

यकलाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १. दे० 'इकलाई' । २ नकाव । ३ चोगा [को०] ।

यकलोही—वि० [फा० यक + हि० लोहा + ई] एक ही लोहे की बनी हुई । बिना जोड़ की (कटाही आदि) ।

यकसाँ—वि० [फा०] एक समान । एक सा । बराबर ।

यकसू—वि० [फा०] १ एक ओर । एक तरफ । २ निश्चित । वेफिक्र । ३ एकाग्रचित्त । ४ फारिग [को०] ।

यकायक—क्रि० वि० [फा०] एकाएक । अचानक । एकवारगी । सहसा ।

यकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] य का वर्ण । य अक्षर ।

यकीन—सञ्ज्ञा पुं० [अ० यकीन] प्रतीति । विश्वास । एतवार ।

यकीनन्—क्रि० वि० [अ० यकीनन्] अवश्य । नि सदेह । वेशक । जरूर ।

यकीनी—वि० [फा० यकीनी] विश्वसनीय । अमदिग्य [को०] ।

यकृत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. पेट में दाहिनी ओर की एक चली जिसमें पाचनरस रहता है और जिमकी क्रिया से भोजन पचता है, अर्थात् उसमें वह विकार उत्पन्न होता है, जिममें शरीर की घातुएँ बनती हैं । जिगर । कालखड । २ वह रोग जिसमें यह अंग दूषित होकर बढ जाता है । वर्म जिगर । ३ पक्वाशय ।

यकोला—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का ममोला पेड जिसके पत्ते प्रतिवर्ष शिशिर ऋतु में झड जाते हैं ।

विशेष—इसकी लकडी अदर से सफेद और बडी मजबूत होती है तथा सडूक, प्रारायणी सामान आदि बनाने के काम आती है । इसे मसूरी भी कहते हैं ।

यक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की देवयोनि । एक प्रकार के देवता जो कुवेर के सेवक और उसकी निधियों के रक्षक माने जाते हैं । उ०—यक्ष प्रबल बाडे भुवमडल तिन मान्यो निज भ्रात । जिनके काज अस हरि प्रगटे ध्रुव जगत विख्यात । —सूर (शब्द०) ।

विशेष—पुराणानुसार यक्ष लोग प्रचेता की ततान माने जाते हैं । कहते हैं, इनकी आकृति विकराल होती है, पेट फूला हुआ और कंधे बहुत भारी होते हैं तथा हाथ पैर धार काले रंग के होते हैं ।

२. कुवेर । यक्षराज ।

यक्षकर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का अगलेप जो कपूर, अमरु, कस्तूरी और ककील मिलाकर बनाया जाता है । कहते हैं, यक्षों को यह अगलेप बहुत प्रिय है । उ०—आञ्जु आदित्य जल पवन पावन प्रबल चद आनदमय ताप जग को हरी । गान किन्नर करह, नृत्य गधर्वजुल, यज्ञ विधि लक्ष्म उर यक्षकर्म धरी ।—केशव (शब्द०) ।

यक्षग्रह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्रकार का कल्पित ग्रह ।

विशेष—कहते हैं, जब इस ग्रह का आक्रमण होता है, तब आदमी पागल हो जाता है ।

यक्षणा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पूजन करना । यजन । २ भक्षण करना । खाना ।

यक्षतरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बट वृक्ष । बट का पेड । यक्षावाम ।

विशेष—कहते हैं, बट का वृक्ष यक्षों को बहुत प्रिय होता है और उसी पर वे रूहा करते हैं ।

यक्षता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यक्ष का भाव या वर्म । यक्षपन ।

यक्षत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यक्ष का भाव या वर्म ।

यक्षधूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ माधारण धूप जो प्राय देवताओं आदि के आगे जलाया जाता है । २ सरल वृक्ष का निर्याम । ताडपीन का तेल ।

यक्षनायक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यक्षा के स्वामी, कुवेर । २ जनों के अनुमार वर्तमान अवसर्पिणी के अर्हत् के चाये अनुचर का नाम ।

यक्षप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यक्षपति । कुवेर ।

यक्षपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यक्षों के स्वामी, कुवेर । उ०—मृत्यु कुवेर यक्षपति काहयत जहं अरु को धाम ।—सूर (शब्द०) ।

यक्षपुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अलकापुरी । उ०—प्रजापती रुहं पूजहि जोई । तिन कर वास यक्षपुर होई ।—विश्राम (शब्द०) ।

यक्षरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] फूला में तैयार की हुई शराब । मध्वामव ।

यक्षराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यक्षों का राजा, कुवेर ।

यक्षरात्रि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिक मास की पूर्णिमा जो यक्षा की रात मानी जाती है ।

यक्षलोक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह लोक जिनमें यक्षों का निवास माना जाता है ।

यक्षचित्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो बहुत धनवान् हो, पर अपने धन में से कुछ भी व्यय न करता हो ।

यक्षस्थल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुण्ड्रानुसार एक तीर्थ का नाम ।

यक्षागी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यक्षाङ्गी] एक प्राचीन नदी का नाम ।

यक्षाधिप, यक्षाधिपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यक्षों के स्वामी, कुवेर ।

यक्षामलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विड खजूर ।

यक्षावास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बट का वृक्ष जिनपर यक्षा का निवास माना जाता है । २ गूलर का वृक्ष ।

यक्षिणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ यक्ष का पत्नी । २ कुवेर की पत्नी । ३ दुर्गा की एक अनुचरी का नाम ।

यक्षी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. यक्षराज कुवेर की स्त्री । २ यक्ष की स्त्री । यक्षिणी ।

यक्षी^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यक्ष + ई (प्रत्यय)] वह जो यक्ष का उपनिना करना हो, अथवा उम माधता हो । उ०—प्रजापती रुहं पूजहि जोई । तिन कर वास यक्षपुर होई । भूता भूतहि यक्षी यक्षन । प्रेतो प्रेतन रक्षो रक्षन ।—गिरधर (शब्द०) ।

यजु—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. वह जो यज्ञ करता हो। २. एक प्राचीन जनपद का वैदिक नाम, जो बन्धु भी कहलाता था और इसी नाम की नदी के आस पास था। आक्सस नदी के आस पास का प्रदेश। वदखर्शा। ३. इस जनपद का निवासी।

यज्ञेन्द्र—सञ्ज्ञा पु० [सं० यक्षेन्द्र] यज्ञो के स्वामी, कुवेर।

यज्ञेश्वर—सञ्ज्ञा पु० [सं०] यज्ञो के स्वामी, कुवेर।

यक्ष्म—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'यक्ष्मा'।

यक्ष्मग्रह—सञ्ज्ञा पु० [सं०] क्षय या यक्ष्मा नामक रोग।

यक्ष्मघ्नी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दाख। अगूर।

यक्ष्मा—सञ्ज्ञा पु० [सं० यक्ष्मन्] क्षयी नामक रोग। तपेदिक। विशेष दे० 'क्षयी'।

यक्ष्मी—सञ्ज्ञा पु० [सं० यक्ष्मिन्] वह जिसे यक्ष्मा रोग हुआ हो यक्ष्मा रोग का रोगी। तपेदिक का बीमार।

यखनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० यखनी] १. तरकारी आदि का रसा। शोरबा। भोल। २. उबले हुए मास का रसा। ३. वह मास जो केवल लहसुन, प्याज, धनिया और नमक डालकर उबाल लिया जाय।

यगण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] छंद शाल्म में आठ गणों में से एक। यह एक लघु और दो गुरु मात्राओं का होता है (ISS)। इसका सञ्चित रूप 'य' है। जैसे, कमाना, चलाना।

विशेष—इसका देवता जल माना गया है और यह सुखदायक कहा गया है।

यगाना—वि० [फा० यगानह] १. जो वेगाना न हो। एक वश का। अपना। आत्मीय। नातेदार। उ०—वेगान हैं मारे यगान पार कहाँ है।—कवीर म०, पृ० ३२३। २. अकेला। फर्द। ३. अनुपम। अद्वितीय। एकता।

यगाना—सञ्ज्ञा पु० १. भाई वद। २. परम मित्र।

यगूर—सञ्ज्ञा पु० [दश०] एक प्रकार का बहुत ऊँचा वृक्ष जिसकी लकड़ी का रंग अदर से काला निकलता है।

विशेष—यह सिलहट की पूर्वी और दक्षिण पूर्वी पहाड़ियों में बहुत होता है। इसकी लकड़ी से कई तरह की सजावट की और बहुमूल्य वस्तुएँ बनाई जाती हैं। इसे आग में जलाने से बहुत उत्तम गंध निकलती है। इसे सेसी भी कहते हैं।

यग्य(५)—सञ्ज्ञा पु० [सं० यज्ञ] दे० 'यज्ञ'।

यच्छ(५)—सञ्ज्ञा पु० [सं० यच्छ] दे० 'यच्छ'।

यच्छिनी(५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यच्छिणी] दे० 'यच्छिणी'।

यजत्—सञ्ज्ञा पु० [सं० यजन्त] यज्ञ करनेवाला। यज्ञकर्ता।

यज—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. यज्ञ। याग। २. अग्नि [को०]।

यजत्^१—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. ऋत्विक्। २. शिव [को०]। ३. चंद्रमा [को०]। ४. एक वैदिक ऋषि का नाम जो ऋग्वेद के एक मंत्र के द्रष्टा थे।

यजत्^२—वि० १. पवित्र। २. पूज्य। पूजनीय [को०]।

यजति—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'यज्ञ'।

यजत्र—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. अग्निहोत्री। २. वह जो यज्ञ करता हो।

यजन—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. वेदविधि के अनुसार होता और ऋत्विक् आदि के द्वारा काम्य और नैमित्तिक कर्मों का विधि पूर्वक अनुष्ठान करना। यज्ञ करना (यह ब्राह्मणों के पट्कर्मों में एक माना गया है)। २. वह स्थान जहाँ यज्ञ होता हो।

यजनकर्ता—सञ्ज्ञा पु० [सं० यजनकर्तृ] यज्ञ या हवन करनेवाला।

यजमान—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. वह जो यज्ञ करता हो। दक्षिणा आदि देकर ब्राह्मणों से यज्ञ, पूजन आदि धार्मिक कृत्य करानेवाला व्रती। यष्टा। २. वह जो ब्राह्मणों को दान देता हो। ३. महादेव की आठ प्रकार की मूर्तियों में से एक प्रकार की मूर्ति। ४. परिवार का प्रधान व्यक्ति वा जात का मुखिया [को०]।

यजमानक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'यजमान'।

यजमानता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यजमान का भाव या धर्म।

यजमानलोक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] वह लोक जिसमें यज्ञ करके मरनेवालों का निवास माना जाता है।

यजमानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यजमान + ई (प्रत्यय०)] १. यजमान का भाव या धर्म। २. यजमान के प्रति पुराहित की वृत्ति। ३. वह स्थान जहाँ किसी विशेष पुरोहित की यजमान रहते हों।

यजाक—वि० [सं०] १. उदार। दानी। २. पूजा करनेवाला। अर्चक। पूजक [को०]।

यजि—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. यज्ञकर्ता। यज्ञ करनेवाला। २. यज्ञ। ३. यज्ञ करने की क्रिया वा भाव [को०]।

यजी—सञ्ज्ञा पु० [सं० यजिन्] १. वह जो यज्ञ करता हो। यज्ञ करनेवाला। २. अचन पूजन करनेवाला।

यजु—सञ्ज्ञा पु० [सं० यजुस्] दे० 'यजुर्वेद'।

यजुरा(५)—सञ्ज्ञा पु० [सं० यजुस्] दे० 'यजुर्वेद'। उ०—रिग, यजुर, साम, अथर्वनिक वेद ध्वनि स्तोत्र पीराण, इतिहास मिलि उच्चरत।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ६०५।

यजुर्विद्—सञ्ज्ञा पु० [सं०] वह जो यजुर्वेद का ज्ञाता हो। यजुर्वेद जाननेवाला।

यजुर्वेद—सञ्ज्ञा पु० [सं०] भारतीय आर्यों के चार प्रसिद्ध वेदों में से एक वेद।

विशेष—इसमें विशेषतः यज्ञकर्म का विस्तृत विवरण है और इसी लिये यह वेदत्रयी में भित्तिस्वरूप माना जाता है। यज्ञों में अश्वर्युं जिन गद्य मंत्रों का पाठ करता था, वे 'यजु' कहलाते थे। इस वेद में उन्ही मंत्रों का संग्रह है, इसलिये इसे यजुर्वेद कहते हैं। इसके दो मुख्य भेद हैं—कृष्ण यजुर्वेद और शुक्ल यजुर्वेद या वाजसनेयी। कृष्ण यजुर्वेद में यज्ञों का जितना पूर्ण और विस्तृत वर्णन है, उतना और संहिताओं में नहीं है। इन दोनों की भी बहुत सी शाखाएँ हैं, जिनमें थोड़ा बहुत पाठभेद है। अब तक यजुर्वेद की जो संहिताएँ मिली हैं, उनके नाम इस

प्रकार हैं—काठक, कपिस्थल-कठ, मंत्रायणी और तीत्तरीय। ये चारो कृष्ण यजुर्वेद की हैं। शुक्ल या वाजसनेयी की काण्व और माव्यदिनी दो शाखाएँ हैं। पतजलि के मत से यजुर्वेद की १०१ शाखाएँ हैं, पर चरणव्यूह में केवल ८६ शाखाएँ दी हैं, और वायुपुराण में २३ शाखाएँ गिनाई गई हैं। इसके सहिता भाग में ब्राह्मण और ब्राह्मण भाग में सहिता भी मिलती है। इस वेद में अनेक ऐसे विधिमन्त्र भी हैं, जिनका अर्थ बहुत थोड़ा या कुछ भी नहीं ज्ञात होता। कुछ प्रार्थनाएँ भी ऐसी हैं, जो बिल्कुल अर्थरहित जान पड़ती हैं। इसके कुछ मन्त्र ऐसे हैं, जिनसे सूचित होता है कि उस समय लोगों में ब्रह्मज्ञान की बहुत कम चर्चा थी। इसमें देवताओं के नामों के साथ बहुत से विशेषण भी मिलते हैं, जिससे जान पड़ता है कि भक्ति की ओर भी लोगों की कुछ कुछ प्रवृत्ति हो चली थी। पुराणानुसार हम वेद के अधिपति शुक्र और वक्ता वैशंपायन माने जाते हैं। विशेष दे० 'वेद'।

यजुर्वेदी—सच्चा पुं० [सं० यजुर्वेदिन्] १ वह जो यजुर्वेद का ज्ञाता हो। २. वह ब्राह्मण जो यजुर्वेद के अनुसार सब कृत्य करता हो।

यजुर्वेदीय—सच्चा पुं० [सं० यजुर्वेदिन्] दे० 'यजुर्वेदी'।

यजुश्रुति—सच्चा पुं० [सं०] यजुर्वेद।

यजुष्पति—सच्चा पुं० [सं०] विष्णु।

यजुष्पात्र—सच्चा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञपान।

यजुष्य—वि० [सं०] यज्ञ सबधी। यज्ञ का।

यजूदर, यजूवर—सच्चा पुं० [सं०] ब्राह्मण।

यज्ञ—सच्चा पुं० [सं०] १ प्राचीन भारतीय आर्यों का एक प्रसिद्ध वैदिक कृत्य जिसमें प्रायः हवन और पूजन हुआ करता था। मख। याग।

विशेष—प्राचीन भारतीय आर्यों में यह प्रथा थी कि जब उनके यहाँ जन्म, विवाह या इसी प्रकार का और कोई ममारभ होता था, अथवा जब वे किसी मृतक की अत्येष्टि क्रिया या पितरों का श्राद्ध आदि करते थे, तब ऋग्वेद के कुछ सूक्तों और अथर्ववेद के मन्त्रों के द्वारा अनेक प्रकार की प्रार्थनाएँ करते थे और शाशीर्वाद आदि देते थे। इसी प्रकार पशुओं का पालन करनेवाले अपने पशुओं की वृद्धि के लिये तथा किसान लोग अपनी उपज बढ़ाने के लिये अनेक प्रकार के समारंभ करके स्तुति आदि करते थे। इन अवसरों पर अनेक प्रकार के हवन आदि भी होते थे, जिन्हें उन दिनों 'गृह्यकर्म' कहते थे। इन्हीं ने आगे चलकर विकसित होकर यज्ञों का रूप प्राप्त किया। पहले इन यज्ञों में घर का मालिक या यज्ञकर्ता, यजमान होने के अतिरिक्त यज्ञपुरोहित भी हुआ करता था, और प्रायः अपनी सहायता के लिये एक आचार्य, जो 'ब्राह्मण' कहलाता था, रख लिया करता था। इन यज्ञों की आहुति पर वे यज्ञकुंड में ही होती थी। इसके अतिरिक्त

कुछ धनवान् या राजा ऐसे भी होते थे, जो बड़े बड़े यज्ञ किया करते थे। जैसे,—युद्ध के देवता इन्द्र को प्रमन्न करने के लिये मोमयाग किया जाता था। धीरे धीरे इन यज्ञों के लिये अनेक प्रकार के नियम आदि बनने लगे, और पीछे में उन्हीं नियमों के अनुसार भिन्न भिन्न यज्ञों के लिये भिन्न भिन्न प्रकार की यज्ञभूमियाँ और उनमें पवित्र अग्नि स्थापित करने के लिये अनेक प्रकार के यज्ञकुंड बनने लगे। ऐसे यज्ञों में प्रायः चार मुख्य ऋत्विज् हुआ करते थे, जिनकी श्रवणता में और भी अनेक ऋत्विज् काग करते थे। आगे चलकर जब यज्ञ करनेवाले यजमान का काम केवल दक्षिणा पाँटना ही रह गया, तब यज्ञ सर्वधी अनेक कृत्य करने के लिये और लोगों की नियुक्ति होने लगी। मुख्य चार ऋत्विज्यों में पहला 'होता' कहलाता था और वह देवताओं की प्रार्थना करने उन्हीं यज्ञ में आने के लिये आह्वान करता था। दूसरा ऋत्विज् 'उद्गाता' यज्ञकुंड में सोम की आहुति देने के समय नामगान करता था। तीसरा ऋत्विज् 'श्रद्धवर्षु' या यज्ञ करनेवाला होता था, और वह स्वयं अपने मुँह में गद्य मन्त्र पढ़ता तथा अपने हाथ से यज्ञ के सब कृत्य करता था। चौथे ऋत्विज् 'ब्रह्मा' अथवा महापुरोहित को सब प्रकार के विघ्नों से यज्ञ की रक्षा करनी पड़ती थी, और इसके लिये उसे यज्ञकुंड की दक्षिण दिशा में स्थान दिया जाता था, क्योंकि वहाँ यम की दिशा मानी जाती थी और उसी ओर से अमुर लोग आया करते थे। इसे इन बात का भी ध्यान रखना पड़ता था कि कोई किसी मन्त्र का अशुद्ध उच्चारण न करे। इसी लिये 'ब्रह्मा' का तीनों वेदों का ज्ञाता होना भी आवश्यक था। जब यज्ञों का प्रचार बहुत बढ़ गया, तब उनके सब धर्म अनेक स्वतंत्र शास्त्र भी बन गए, और वे शास्त्र 'ब्राह्मण' तथा 'श्रौत सूत्र' कहलाए। इसी कारण लोग यज्ञों को 'श्रौतकर्म' भी कहने लगे। इसी के अनुसार यज्ञ अपने मूल गृह्यकर्म से अलग हो गए, जो केवल स्मरण के आधार पर होते थे। फिर इन गृह्यकर्मों के प्रतिपादक ग्रंथों को 'स्मृति' कहने लगे। प्रायः सभी वेदों का अधिकांश इन्हीं यज्ञसबधी बातों से भरा पड़ा है। (दे० 'वेद')। पहले तो सभी लोग यज्ञ किया करते थे, पर जब धीरे धीरे यज्ञों का प्रचार घटने लगा, तब श्रद्धवर्षु और होता ही यज्ञ के सब काम करने लगे। पीछे भिन्न भिन्न ऋषियों के नाम पर भिन्न भिन्न नामावाले यज्ञ प्रचलित हुए, जिससे ब्राह्मणों का महत्त्व भी बढ़ने लगा। इन यज्ञों में अनेक प्रकार के पशुओं की बलि भी होती थी, जिससे कुछ लोग असंतुष्ट होने लगे, और भागवत आदि नए नए प्रदाय स्थापित हुए, जिनके कारण यज्ञों का प्रचार धीरे धीरे बढ़ ही गया। यज्ञ अनेक प्रकार के होने लगे। जैसे,—मोमयाग, श्रद्धमय यज्ञ, राजभूज (राजभूय) यज्ञ, ऋतुयाज, अग्निष्टोम, अतिरात्र, महाश्रवण, दशरात्र, दशसूतामास, पवित्रेष्टि, पुत्रकामेष्टि, चातुमान्य मीनामणि, दक्षमेघ, पुष्पमेघ, आदि, आदि।

आर्यों की ईरानी मान्यता में भी यज्ञ प्रचलित रहे और 'यज्ञ' कहलाते थे। इस 'यज्ञ' में ही कार्त्वी का 'जरा' शब्द बना

है। यह यज्ञ वास्तव मे एक प्रकार के पुण्योत्सव थे। श्रव भी विवाह, यज्ञोपवीत आदि उत्सवो को कही कही यज्ञ करते हैं।

पर्या०—सव। अध्वर। ससत्तु। ऋतु। इष्टि। वितान। मन्थु।
आइव। सवन। हव। अभिषय। होम। हवन। मह।
२ विष्णु। ३ अग्नि का एक नाम (ज्ञो)।

यज्ञक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यज्ञ। २ वह जो यज्ञ करता हो।

यज्ञकर्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ करनेवाला। याजक। यजमान।

यज्ञकर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ का काम।

यज्ञकर्मा—वि० [सं० यज्ञकर्मन्] यज्ञ का काम करनेवाला [को०]।

यज्ञकल्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

यज्ञकाम—वि० [सं०] यज्ञ करने की कामनावाला [को०]।

यज्ञकारो—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञकारिन्] वह जो यज्ञ करता हो।
यज्ञ करनेवाला।

यज्ञकाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यज्ञादि के लिये शास्त्रो द्वारा निर्दिष्ट
समय। २ पौराणिक।

यज्ञकीलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] काठ का वह खूँटा जिसमे यज्ञ के लिये
बलि दिया जानेवाला पशु बाँधा जाता था। यूपकाष्ठ।

यज्ञकुड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञकुण्ड] हवन करने की वेदी या कुड।

यज्ञकृत्^१—वि० [सं०] यज्ञ करनेवाला।

यज्ञकृत्^२—सञ्ज्ञा पुं० १ विष्णु। २ यज्ञ करनेवाला पुरोहित [को०]।

यज्ञकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो यज्ञ की क्रियाओं का जाता हो।
२ एक राक्षस का नाम।

यज्ञकोप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो यज्ञ से द्वेष करता हो। २
रावण के दल का एक राक्षस जिसका उल्लेख वाल्मीकीय
रामायण मे है।

यज्ञकतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

यज्ञक्रिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ यज्ञ का काम। २ कर्मकाण्ड।

यज्ञगम्य—वि० [सं०] (विष्णु) जिनकी प्राप्ति यज्ञ से सम्भव हो।

यज्ञगिरि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

यज्ञगुह्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कृष्ण का एक नाम [को०]।

यज्ञघन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो यज्ञ विध्वंस करता हो। २
राक्षस।

यज्ञज्ञ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो यज्ञो के विधान आदि जानता हो।

यज्ञतत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञतन्त्र] यज्ञ का विस्तार [को०]।

यज्ञतुरग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञतुरङ्ग] यज्ञ का घोडा [को०]।

यज्ञत्राता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञत्रातृ] १ वह जो यज्ञ की रक्षा
करता हो। २ विष्णु।

यज्ञदक्षिणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यज्ञ के लिये ब्राह्मणों को दिया
जानेवाला धन। यज्ञशुल्क [को०]।

यज्ञदत्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह पुत्र जो यज्ञ के प्रसाद स्वरूप प्राप्त
हुआ हो।

यज्ञद्रव्य—सञ्ज्ञा पुं० [वि०] यज्ञ की सामग्री।

यज्ञद्रुह—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञद्रुह] राक्षस।

यज्ञधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

यज्ञधूम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ का धुआँ।

यज्ञनेमि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीवृष्ण का एक नाम।

यज्ञपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ विष्णु। २ वह जो यज्ञ करता हो,
यजमान।

यज्ञपत्नी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ यज्ञ की स्त्री, दक्षिणा। २ पुराण-
नुसार यज्ञ करनेवाले माधुर ब्रह्मणो का वे छियाँ जो अपने
पतिथा क मना करने पर भी श्रावृष्ण के लिये भाजन लेकर
वन म गई थीं।

यज्ञपर्वत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम जो
नर्मदा के उत्तरपश्चिम म है।

यज्ञपशु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह पशु जिनका यज्ञ मे बलिदान
क्रिया जाय। २ घाडा। ३ बकरा।

यज्ञपात्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ मे काम आनेवाले काठ के वन हुए
वरतन।

यज्ञपार्श्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषे का नाम जिनका
उल्लेख पराशर स्मृति मे है।

यज्ञपाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ का सरक्षक। यज्ञ की रक्षा
करनेवाला।

यज्ञपुरूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु। उ०—यज्ञपुरूप प्रसन्न जब
भए। निकसि कुड से दरशन दर।—सूर (शब्द०)।

यज्ञफलद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ का फल देनेवाले, विष्णु।

यज्ञवाहु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अग्नि का एक नाम। २ पुराणानुसार
शाल्मलि द्वीप के एक राजा का नाम।

यज्ञभाड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञभाण्ड] दे० 'यज्ञपात्र'।

यज्ञभाजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञपात्र।

यज्ञभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ यज्ञ होता हो।
यज्ञक्षेत्र।

यज्ञभूषण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुश।

यज्ञभृत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

यज्ञभोक्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञभोक्तृ] विष्णु।

यज्ञमडप—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञमण्डप] यज्ञ करने के लिये बनाया
हुआ मडप।

यज्ञमडल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञमण्डल] वह स्थान जो यज्ञ करने के
लिये घेरा गया हो।

यज्ञमन्दिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञमन्दिर्] यज्ञशाला।

यज्ञमय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु।

यज्ञमहात्सव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महायज्ञ। बडा यज्ञ।

यज्ञमुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ का आरंभ।

यज्ञयूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह खभा जिसमे यज्ञ का बलिपशु बाँधा
जाता था। यूपकाष्ठ।

यज्ञयोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] उदुवर वृक्ष । गूलर का पेड़ ।
 यज्ञयोग्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गूलर का पेड़ ।
 यज्ञरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सोम ।
 यज्ञराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञराज] चंद्रमा ।
 यज्ञरुचि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक दानव का नाम ।
 यज्ञरेतस्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सोम । यज्ञरस ।
 यज्ञलिङ्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञलिङ्ग] श्रीकृष्ण का नाम ।
 यज्ञवराह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
 विशेष—कहते हैं, विष्णु ने वराह का रूप धारण करने के उपरांत जब अर्पणा शरीर छोड़ा, तब भिन्न भिन्न अर्गो से यज्ञ की सामग्री बन गई । इसी से उनका यह नाम पड़ा ।
 यज्ञयद्भन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ का विस्तार करनेवाला ।
 यज्ञवल्क—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि जो प्रसिद्ध यज्ञवल्क्य ऋषि के पिता थे ।
 यज्ञवल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सोमलता ।
 यज्ञवाट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ के निमित्त घेरा हुआ तथा सुरक्षित स्थान (को०) ।
 यज्ञवाराह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यज्ञवराह' ।
 यज्ञबाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यज्ञ करनेवाला । २ कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम ।
 यज्ञवाहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यज्ञ करनेवाला । २ ब्राह्मण । ३ विष्णु । ४ शिव ।
 यज्ञवाही—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञवाहिन्] यज्ञ का सब काम करनेवाला ।
 यज्ञविभ्रश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ में श्रुति वा असफलता (को०) ।
 यज्ञविभ्रष्ट—वि० [सं०] यज्ञ में असफल होनेवाला (को०) ।
 यज्ञवीर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
 यज्ञवृक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बड़ का पेड़ । २ विककत ।
 यज्ञवेदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यज्ञार्थ निर्मित वेदिका ।
 यज्ञव्रत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जिसने यज्ञ रूपी व्रत लिया हो अथवा जो यज्ञ करता हो । यज्ञ करनेवाला ।
 यज्ञशत्रु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राक्षस । २ खर राक्षस का एक सेनापति जिसे रामचंद्र ने मारा था ।
 यज्ञशरणा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यज्ञमहप' ।
 यज्ञशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यज्ञ करने का स्थान । यज्ञमहप ।
 यज्ञशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें यज्ञों और उनके कृत्यों आदि का विवेचन हो । मीमांसा । यज्ञशेष ।
 यज्ञशिष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ का वचा हुआ अण । यज्ञ का अवशेष (को०) ।
 यज्ञशील—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो यज्ञ करता हो । २ ब्राह्मण ।
 यज्ञशकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यज्ञवराह' ।
 यज्ञशेष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यज्ञशिष्ट' ।

यज्ञश्रेष्ठा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सोमलता ।
 यज्ञसंभार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञसंभार] यज्ञ की सामग्री । यज्ञ में काम आनेवाली सामग्री (को०) ।
 यज्ञसंस्तर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान जहाँ यज्ञमहप बनाया जाय । यज्ञभूमि । यज्ञस्थान ।
 यज्ञसदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ करने का स्थान या महप । यज्ञशाला ।
 यज्ञसाधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो यज्ञ की रक्षा करता हो । २ विष्णु ।
 यज्ञसार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गूलर का वृक्ष ।
 यज्ञसिद्धि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यज्ञ की परिणामिता (को०) ।
 यज्ञसूत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञोपवीत । जनेऊ ।
 यज्ञसेन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ विष्णु । २ एक दानव का नाम । ३ द्रुपद नरेश का नाम ।
 यज्ञस्तम्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञस्तम्भ] वह लम्बा जिसमें यज्ञ का पशु बाँधा जाता है । द्रुप ।
 यज्ञस्थल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञमहप ।
 यज्ञस्थानु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यज्ञस्तम्भ' ।
 यज्ञस्थान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञशाला ।
 यज्ञहृदय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
 यज्ञहीता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञहीतृ] १ यज्ञ में देवताओं का आवाहन करनेवाला । २ भागवत के अनुसार उत्तम मनु के एक पुत्र का नाम ।
 यज्ञाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञाङ्ग] १ विष्णु । २ गूलर का पेड़ । ३ खैर का पेड़ । ४ कृष्णसार नामक मृग (को०) ।
 यज्ञागा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यज्ञाङ्गा] सोमलता ।
 यज्ञागार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह स्थान या महप जहाँ यज्ञ होता हो । यज्ञशाला ।
 यज्ञात्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्ञात्मन्] विष्णु ।
 यज्ञाधिपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ के स्वामी, विष्णु । यज्ञपुरुष ।
 यज्ञारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिव । २ राक्षस ।
 यज्ञाशन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] देवता ।
 यज्ञाङ्क—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह पुत्र जो यज्ञ के प्रसाद स्वरूप मिला हो । २ पलाश का पेड़ ।
 यज्ञिय^१—वि० [सं०] १ यज्ञ सवधी । यज्ञोपयुक्त । २ पवित्र ।
 यज्ञिय^२—सञ्ज्ञा पुं० १ ईश्वर । देवता । २ गूलर का वृक्ष । ३ यज्ञ की सामग्री । ४ तीसरा युग । द्वापर (को०) ।
 यज्ञिय^३—वि० [सं०] यज्ञ मवधी । यज्ञ का ।
 यज्ञोय^१—सञ्ज्ञा पुं० गूलर का पेड़ ।
 यज्ञेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
 यज्ञोष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोहिंस नाम की घास । - -

यज्ञोपवीत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जनेऊ । यज्ञसूत्र । २ हिंदुओं मे ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों का एक सस्कार । व्रतवध । उपनयन । जनेऊ ।

विशेष—यह सस्कार प्राचीन काल मे उस समय होता था, जब बालक को विद्या पढाने के लिये गुरु के पास ले जाते थे । इस सस्कार के उपरांत बालक का स्नातक होने तक ब्रह्मचर्यपूर्वक रहना पडता था और भिक्षावृत्ति से अपना तथा अपने गुरु का निर्वाह करना पडता था । अन्यान्य सस्कारों की भांति यह सस्कार भी आजकल नाममात्र के लिये रह गया है । इसमे कुछ विशिष्ट धार्मिक कृत्य करके बालक के गले मे जनेऊ पहना दिया जाता है । ब्राह्मण बालक के लिये आठवें वर्ष, क्षत्रिय बालक के लिये ग्यारहवें वर्ष और वैश्य बालक के लिये बारहवें वर्ष यह सस्कार करने का विधान है ।

यज्य'—वि० [सं०] यजन करने योग्य ।

यज्य'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [सञ्ज्ञा स्त्री० यज्या] १ स्तुति । आराधन । अर्चन । २ यज्ञ [को०] ।

यव्यु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यजुर्वेदी ब्राह्मण । २ यजमान । श्रद्धालु भक्त ।

यज्वा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यज्वन्] यज्ञ करनेवाला ।

यौ०—यज्वापति = (१) विष्णु । (२) चंद्रमा ।

यडर—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का पत्नी ।

यत्—क्रि० वि० [सं० यत्स्] इसलिये कि । चूंकि । क्योंकि [को०] ।

यत्—वि० [सं०] १ नियंत्रित । नियमित । पारबंद । २ दमन किया हुआ । शासित । ३ प्रतिबद्ध । रोका हुआ ।

यत्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० यत्नीय] उद्योग वा उपाय करना । यत्न करना । कोशिश करना ।

यत्नीय—वि० [सं०] यत्न करने के योग्य । कोशिश करने लायक ।

यत्मान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यत्न करता हुआ । कोशिश मे लगा हुआ । २ अनुचित विषयों का त्याग और उचित विषयों मे मद प्रवृत्ति के निमित्त यत्न करनेवाला ।

यत्नव्रत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो बहुत समय से रहता हो ।

यत्तात्मा—वि० [सं० यत्तात्मन्] आत्मनिग्रही । समयी [को०] ।

यत्ताहार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० यत्ताहारी] सगत आहार । अल्पाहार ।

यत्ताहारी—वि० [सं० यत्ताहारिन्] नियत एवं समय आहार करनेवाला । अल्पाहारी ।

यत्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जिसने इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर ली हो और जो ससार से विरक्त होकर मोक्ष प्राप्त करने का उद्योग करता हो । सन्यासी । त्यागी । योगी । २. मागवत के अनुसार ब्रह्मा के एक पुत्र का नाम । ३ महाभारत के अनुसार नहुष के एक पुत्र का नाम । ४. ब्रह्मचारी । ५. विष्णु [को०] । ६. विश्वामित्र के एक पुत्र का नाम [को०] । छप्पय के ६६वें भेद का नाम जिसमे ५ गुरु और १४२ लघु मानाएँ अथवा किसी किसी के मत से ५ गुरु और १३६ लघु मानाएँ होती हैं ।

यत्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ छंदों के चरणों मे वह स्थान जहाँ पढते समय, उनकी लय ठीक रखने के लिये, थोड़ा सा विश्राम होता है । विरति । विश्राम । राविम । २. ३. 'यती' ।

यत्तिचाद्रायण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यत्तिचान्द्रायण] एक प्रकार का चाद्रायण व्रत जिगका विधान यत्तियों के लिये है ।

यत्तित्—वि० [सं०] जिमके लिये चेष्टा की गई हो । चेष्टित [को०] ।

यत्तित्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यत्ति का धर्म, भाव या कर्म ।

यत्तिधर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सन्यास ।

यत्तिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ सन्यासिनी । २ विधवा ।

यत्तिपात्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भिक्षापात्र । खप्पर ।

यत्तिभग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यत्तिभग्न] काव्य का वह दोष जिसमें यत्ति अपने उचित स्थान पर न पडकर कुछ आगे या पीछे पडती है और जिसके कारण पद्यन मे छंद की लय बिगड जाती है ।

यत्तिभ्रष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह छंद जिसमे यत्ति अपने उपयुक्त स्थान पर न पडकर कुछ आगे या पीछे पटी हो । यत्तिभग दोष से युक्त छंद ।

यत्तिमैथुन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ माधु सन्यासी का सा गुप्त मैथुन । २ यजनरति [को०] ।

यत्तिसातपन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यत्तिसान्तपन] एक व्रत जिसमे तीन दिन केवल पचगव्य और कुशजल पीकर रहना पडता है ।

विशेष—शखस्मृति के मत से तो यह व्रत तीन दिन का है, परंतु जावाल के मत मे सात दिन का है । गोमूत्र, गोबर, दूध, दही, घृत, कुश का जल इनमे से एक एक का प्रति दिन एक बार पीकर रात दिन उपवास करना पडता है । इसी का नाम सातपनकृच्छ्र या यत्तिसातपन है ।

यती'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रोक । रुकावट । २ छंदों मे विराम का स्थान । यत्ति । ३. मनोरोग । मनोविकार । ४. विधवा स्त्री । ५. शालक राग का एक भेद । ६. मृदग का एक प्रबध । ७. सवि ।

यती'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यत्तिन्] [स्त्री० यत्तिनी] १ यत्ति । सन्यासी । २ जितेंद्रिय । ३ जैनमतानुसार श्वेतावर जैन साधु ।

यतीम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मातृ-पितृ विहीन । जिसके माता पिता न हो । अनाथ । २ कोई अनुपम और अद्वितीय रत्न । ३ वह बडा मोती, जिसके विषय मे प्रसिद्ध है कि यह सीप में एक ही निकलता है ।

यतीमखाना—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यतीम + फा० खानह्] वह स्थान जहाँ माता-पिता-हीन बालक रखे जाते हैं । अनाथालय ।

यतुका, यतूका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चक्रवर्ध का पौधा । चक्रमर्द ।

यतेंद्रिय—वि० [सं० यतेंद्रिय] इन्द्रियनिग्रही । समयी [को०] ।

यत्—सर्व [सं०] जो ।

यत्किञ्चित्—क्रि० वि० [सं० यत्किञ्चित्] थोड़ा सा । स्वल्प । जरा सा । बहुत कम । कुछ ।

यत्त—वि० [सं०] यत्तित । चेषित्त । यत्न में लगा हुआ । यत्तर्क [को०] ।
 यत्न—सज्ञा पुं० [सं०] १ नैयायिकों के अनुसार रूप आदि २४ गुणों
 के अंतर्गत एक गुण जो तीन प्रकार का होता है—प्रवृत्ति,
 निवृत्ति और जीवनयोनि । २ उद्योग । प्रयत्न । कोशिश ।
 ३ उपाय । तदवीर । उ०—पाठे पृथु को रूप हरि लीन्हो
 नाना रत्न वहि काढे । तापर रचना रची विधाता बहु विधि
 यत्नन वाढे ।—सुर (शब्द०) । ४ रक्षा का आयोजन ।
 हिफाजत । जैसे,—इग वस्तु को बड़े यत्न से रखना । ५
 रागशांति का उपाय । चिकित्सा । उपचार ।

यत्नवान्—वि० [सं० यत्नवत्] [वि० स्त्री० यत्नवती] यत्न में लगा
 हुआ । यत्न करनेवाला ।

यत्न—क्रि० वि० [सं०] जिस जगह । जहाँ ।

यत्न—सज्ञा पुं० [सं० यत्न] सामान्य यत्न ।

यत्नत्रय—क्रि० वि० [सं०] १ जहाँ तथा । इधर उधर । कुछ यहाँ, कुछ
 वहाँ । २ जगह जगह । कई स्थानों में ।

यत्नु—सज्ञा स्त्री० [सं०] छाती के ऊपर और गले के नीचे की मडलाकार
 हड्डी । हसली ।

यथाश—वि० [सं०] अनुपातिक । उचित अनुपात में [को०] ।

यथा—अव्य० [सं०] जिस प्रकार । जैसे । ज्यों ।

यौ०—यथाकथित = जैसा कहा जा चुका हो । यथोक्त । यथा-
 फर्तव्य = जैसा करना उचित है । फर्तव्य के अनुसार ।
 यथाकर्म = कार्यों के अनुसार । भाग्यानुसार । यथाकल्प = नियम
 या विधि के अनुसार । यथाकाम = मनोकाम । इच्छानुसार ।
 यथाकार = मनमाने ढंग का । जगता तैसा । यथाकाल = ठीक या
 उचित समय पर । यथाकृत । यथाक्रम । यथागुण = गुण के
 अनुसार । गुण के अनुरूप । यथाज्ञान = अपने ज्ञान वा गमक
 के अनुसार । यथातथ । यथावृत्ति = तनुष्टि के अनुसार । जो
 भरकर । यथादर्शन = जैसा देखा गया । यथादिक् यथादिश =
 समस्त दिशाओं में । यथापश्य । यथापूर्व । यथाप्राथित =
 प्रार्थना के अनुकूल ।

यथाकामी—सज्ञा पुं० [सं० यथाकामिन्] अपनी इच्छा के अनुसार
 काम करनेवाला । स्वेच्छाचारी ।

यथाकामावध—सज्ञा पुं० [सं०] किसी व्यक्ति को यह घोषित करने
 छोट देना कि उसे जा चाहे, मार डाले ।

विशेष—चंद्रगुप्त के समय में जो राजकर्मचारी चार बार चोरी वा
 ग्राहक करने के अपराध में पकड़े जाने में, जानते यह सब रिखा
 जाता था ।

यथाकारी—सज्ञा पुं० [सं० यथाकारिन्] मनमाना काम करनेवाला ।
 स्वेच्छाचारी ।

यथाकाल—सज्ञा पुं० [सं०] उचित समय । ठीक समय ।

यथाकृत—वि० [सं०] जैसा तै हुमा हो (कार्य) । नियम या
 के अनुसार किया गया [को०] ।

यथाक्रम—क्रि० वि० [सं०] तरतुबवार । क्रम में । क्रम

यथाख्यात—वि० [सं०] जैसा पहले कहा गया हो [को०] ।

यथाख्यात चरित—सज्ञा पुं० [सं०] नव कथाया (काम, क्रोधादि
 पातका) का जिन माधुप्रो ने कथ किया हो, उनका चरित ।
 (जैन) ।

यथागत—वि० [सं०] पूर्ण । लठ [को०] ।

यथाचार—वि० [सं०] १ चलन या रिवाज के अनुसार । २ आच-
 रण के अनुसार [को०] ।

यथाजात—सज्ञा पुं० [सं०] मूल । देवकूप । नीच ।

यथाज्येष्ठ—क्रि० वि० [सं०] पद या वरीयता के क्रमानुसार ।

यथातथ, यथातथ्य—वि० [सं०] जैसे का तैसा । ज्यों का त्यों ।
 हुबहु । जैसा हो, वैसा ही । सचमुच । सत्यतः ।

यथाधिकार—वि० [सं०] अधिकारिक रूप से । अधिकार के अनु-
 रूप [को०] ।

यथाधीत—वि० [सं०] अध्ययन के अनुसार । पाठ के अनुसार [को०] ।

यथानियम—अव्य० [सं०] नियमानुसार । कायदे के मुताबिक ।
 याकायदा ।

यथानिर्दिष्ट—वि० [सं०] पूर्वकथित । पूर्वविवृत । पूर्वनिर्धारित
 (नियमादि) ।

यथानुभूत—वि० [सं०] १ अनुभव के अनुसार । २ पूर्व अनुभव
 द्वारा [को०] ।

यथानुरूप—वि० [सं०] एक दम मिलता हुआ [को०] ।

यथान्याय—अव्य० [सं०] न्याय के अनुसार । जो कुछ न्याय हो,
 वैसा । यथोचित ।

यथापर्य—अव्य० [सं०] बाजार की दर के अनुसार [को०] ।

यथापूर्व—अव्य० [सं०] १ जैसा पहले था, वैसा ही । पहले की
 भाँति । पूर्ववत् । २ ज्यों का त्यों ।

यथाप्रदिष्ट—अव्य० [सं०] उचित । उपयुक्त [को०] ।

यथाप्रयोग—अव्य० [सं०] प्रवा या व्यवहार के अनुसार [को०] ।

यथाप्राण—अव्य० [सं०] शक्ति के अनुसार [को०] ।

यथावल—अव्य० [सं०] १ सामर्थ्य के अनुसार । २ नेता की
 शक्ति वा मर्या के अनुसार [को०] ।

यथाधुद्वि—अव्य० [सं०] ३० 'यथामनि' ।

यथाभाग—अव्य० [सं०] १ भाग के अनुसार जितना चाहिए,
 उतना । हिस्से के मुताबिक । २ यथाप्राप्त ।

यथाभिप्रेत—वि० [सं०] जैसा चाहा वा इच्छा किया गया हो ।
 इच्छानुकूल [को०] ।

यथाभिमत, यथाभिरुचि, यथाभिलषित—वि० [सं०] ३० 'यथामि-
 प्रेत' [को०] ।

यथासूनि—अव्य० [सं०] बुद्धि के अनुसार । गमक के मुताबिक ।

—अव्य० [सं०] जगता चाहिए, वैसा । उपयुक्त । यथोचित ।
 समित्त ।

वि० [सं०] धारण के अनुसार ।

यथार्थ(७)—अव्य० [सं० यथार्थं] दे० 'यथार्थ' ।

यथारुचि—अव्य० [सं०] १ रुचि के अनुसार । पसद के मुताबिक । इच्छानुसार । मरजी के मुताबिक ।

यथार्थ—अव्य० [सं०] १ ठीक । वाजिव । जैसे,—आपका कहना यथार्थ है । २ जैसा ठीक होना चाहिए, वैसा । ज्यो का त्यो । जैसे का तैसा ।

यथार्थत—क्रि० वि० [सं०] १ सचमुच । सत्यत । २ उचित रूप से । सही अर्थ में [को०] ।

यथार्थता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यथार्थ का भाव । सचाई । सत्यता । सच्चापन ।

यथार्ह—वि० [सं०] १ योग्यता या पात्रता के अनुसार । २. उचित । न्याय्य । ३ मनपसद [को०] ।

यथालब्ध—वि० [सं०] जितना प्राप्त हो, उसी के अनुसार । जो कुछ मिले, उसी के मुताबिक ।

यथालब्ध—सञ्ज्ञा स्त्री० जैनियों के अनुसार, जो कुछ मिल जाय उसी से सतुष्ट रहने की वृत्ति ।

यथालाभ—वि० [सं०] जो कुछ मिले, उसी के अनुसार । जा प्राप्त हो, उसी पर निर्भर । उ०—यथालाभ सतोप सदा परगुन नहिं दोष कहौंगी ।—तुलसी (शब्द०) ।

यथावकाश—वि० [सं०] १ अवसर के अनुकूल । २ स्थान के अनुकूल । ३ उचित स्थान पर [को०] ।

यथावत्—अव्य० [सं०] १ ज्यो का त्यो । जैसा था, वैसा ही । जैसे का तैसा । २ जैसा चाहिए, वैसा । पूर्ण रीति में । अच्युती तरह । जैसे, यथावत् सत्कार करना ।

यथावस्थित—अव्य० [सं०] १ जैसा था, वैसा ही । २ सत्य । ठीक । ३ स्थिर । अचल ।

यथाविधि—अव्य० [सं०] विधि के अनुसार । विधिपूर्वक । विधिवत् ।

यथाविहित—अव्य० [सं०] जैसा विधान हो, वैसा ही । विधि के अनुसार ।

यथाशक्ति—अव्य० [सं०] सामर्थ्य के अनुसार । जितना हो सके । भरसक ।

यथाशक्य—अव्य० [सं०] जहाँ तक हो सके । जहाँ तक सभव हो । जहाँ तक मुमकिन हो । सामर्थ्य भर । भरसक ।

यथाशास्त्र—अव्य० [सं०] शास्त्र के अनुसार । शास्त्र के अनुकूल । जैसा शास्त्रों में वर्णित है वैसा ।

यथाश्रम—वि० [सं०] १ आश्रम जीवन के अनुसार । २ परिश्रम के अनुसार ।

यथासभव—अव्य० [सं० यथासम्भव] जहाँ तक हो सके । जितना हो सके । जितना मुमकिन हो ।

यथासमय—अव्य० [सं०] १. ठीक समय पर । ठीक वक्त पर । नियत समय पर । २ समय के अनुसार । जैसा समय हो, वैसा ।

यथासाध्य—अव्य० [सं०] जहाँ तक हो सके । जितना किया जा सके । यथाशक्ति ।

यथास्थान—अव्य० [सं०] ठीक जगह पर । अपने स्थान पर । उचित स्थान पर ।

यथेच्छ—अव्य० [सं०] जितना या जैना जी में आने, उतना वा वैसा । इच्छा के अनुसार । मनमाना ।

यथेच्छाचार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जो जी में आवे वही करना, आंग उचित अनुचिन का ध्यान न करना । स्वैच्छाचार । मनमाना काम करना ।

यथेच्छाचारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यथेच्छाचारिन्] १ मनमाना आचार करनेवाला । यथेच्छाचार करनेवाला । जो कुछ जी में आवे वही करनेवाला । मनमीर्जी ।

यथेच्छित—क्रि० [सं०] इच्छानुसार । मनमाना । मनचाहा ।

यथेष्टित—वि० [सं०] दे० 'यथेष्टित' [को०] ।

यथेष्ट—वि० [सं०] जितना इष्ट हो । जितना चाहिए, उतना । वाफ़ी । पूरा । जैसे—(क) वे वहाँ में यथेष्ट धन ले आए । (ए) इस विषय में यथेष्ट कहा जा चुका है ।

यथेष्टाचरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनमाना काम करना । इच्छानुसार व्यवहार करना । स्वैच्छाचार ।

यथेष्टाचार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यथेष्टाचरण' ।

यथेष्टाचारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यथेष्टाचारिन्] अपने मन के अनुसार व्यवहार करनेवाला । मनमाना काम करनेवाला ।

यथोक्त—अव्य० [सं०] जैना कहा गया हो । कहे हुए अनुसार ।

यथाक्तकारी—वि० [सं० यथाक्तकारिन्] १ शास्त्र में जो कुछ कहा गया हो वही करनेवाला । २ आज्ञाकारी ।

यथोद्गमन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अवरोही । अनुपात में उतार का क्रम [को०] ।

यथोचित—वि० [सं०] जैसा चाहिए वैसा । मुनासिब । ठीक । जैसे—उसे यथोचित दंड मिलना चाहिए ।

यथोत्साह—अव्य० [सं०] दे० 'यथाशक्ति' ।

यथोद्देश—अव्य० [सं०] निर्दिष्ट ढंग से [को०] ।

यथोपदिष्ट—वि० [सं०] जैसा निर्दिष्ट किया गया हो, वैसा [को०] ।

यथोपपत्ति—वि० [सं०] जैसा उचित हो, वैसा [को०] ।

यथोपपन्न—वि० [सं०] समय पर जैसा कुछ घटित हो गया हो । स्वाभाविक [को०] ।

यथोपमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यथा शब्द द्वारा अभिव्यक्त उपमा । (छंद शास्त्र) ।

यथोपयोग—वि० [सं०] उपयोग के अनुसार । आवश्यकतानुसार ।

यदपि(७)—अव्य० [सं० यदि + अपि] दे० 'यद्यपि' । उ०—जाशुत या सौंदर्य यदपि वह साती थी सुकुमारी । रूप चद्रिका में उज्वल थी आज निशा की नारी ।—कामायनी, पृ० १२५ ।

यदा—अव्य० [सं०] जिस समय । १ जिस वक्त । जब । २ जहाँ ।

यदाकदा—अव्य० [सं०] जब तब । कभी कभी ।

यदि—अव्य० [सं०] अग्रर । जो ।

विशेष—इस अव्यय का उपयोग वाक्य के आरंभ में सशय अथवा किसी बात की अपेक्षा सूचित करने के लिये होता है । जैसे,—
(क) यदि वे न आए तो ? (ख) यदि आप कहे तो मैं देहूँ ।

यदिच यदिचेत्—अव्य० [सं०] यद्यपि । अग्ररचे ।

यदीय—वि० [सं०] जिसका [को०] ।

यदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. ययाति राजा का बड़ा पुत्र जो देवयानी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था ।

विशेष—(क) महाभारत में लिखा है कि ययाति के शाप के कारण इनका राज्य नष्ट हो गया था, पर पीछे से इंद्र की कृपा से इन्हें फिर राज्य मिला था । शाप का कारण यह था कि ययाति ने वृद्ध होने पर इनसे कहा था कि तुम मेरा पाप और वृद्धावस्था ले लो, जिससे मैं फिर युवक हो जाऊँ । पर इसे इन्होंने स्वीकृत नहीं किया था । श्रीकृष्णचंद्र इन्हीं के वंश में हुए थे ।

(ख) इस शब्द के साथ पति या राजा आदि का वाचक शब्द लगाने से श्रीकृष्ण का अर्थ होता है । जैसे,—यदुपति, यदुराज ।
२ पुराणानुसार हर्यश्व राजा के पुत्र का नाम ।

यदुकुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ३० 'यदुवश' ।

यदुध्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक ऋषि का नाम ।

यदुनन्दन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यदुनन्दन] यदुकुल की आनन्द देनेवाले, श्रीकृष्णचंद्र । १ कृष्ण चतन्य के एक साथी भक्त ।

यदुनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यदुवश के स्वामी, श्रीकृष्ण ।

यदुपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण ।

यदुभूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण ।

यदुराई^(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यदु + हि० राई (= राजा)] श्रीकृष्ण ।

यदुराज, यदुराट्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यदुकुल के राजा श्रीकृष्ण ।

यदुवश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा यदु का कुल । यदु का खानदान ।

यदुवशमणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्णचंद्र ।

यदुवशी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यदुवशिन] यदुकुल में उत्पन्न । यदुकुल के लोग । यादव ।

यदुवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण ।

यदुवीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण ।

यदूत्तम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण ।

यदृच्छया—क्रि० वि० [सं०] १ अकस्मात् । अचानक । २ इत्तफाक से । देवसयोग से । ३ मनमाने तौर पर । मन की मौज के अनुसार । बिना किसी नियम या कारण के ।

यदृच्छयाभिज्ञ—सञ्ज्ञा [सं०] कृतसाक्षी के पाँच भेदों में एक । वह साक्षी जो घटना के समय आपसे आप या अकस्मात् आ गया हो ।

यदृच्छा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. केवल इच्छा के अनुसार व्यवहार । स्वेच्छाचरण । मनमानापन । २ आकस्मिक । सयोग । इत्तफाक ।

यद्यपि—अव्य० [सं०] अग्ररचे । हरचद । वावजूद कि । उ०—यद्यपि

ईधन जरि गए अरिगण कैशवदांस । तदापि प्रतापानलन को पल पल ब्रहत प्रकास —केशव (शब्द०) ।

यद्वातद्वा—अव्य० [सं०] कभी कभी ।

यभन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मैथुन । गति । समोग [को०] ।

यम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक साथ उत्पन्न वच्चो का जोड़ा । यमज ।

२ भारतीय आर्यों के एक प्रसिद्ध देवता जो दक्षिण दिशा के दिक्पाल कहे जाते हैं और आजकल मृत्यु के देवता माने जाते हैं ।

विशेष—वैदिक काल में यम और यमी दोनों देवता, ऋषि और मन्त्रकर्ता माने जाते थे और 'यम' को लोग 'मृत्यु' से भिन्न मानते थे । पर पीछे से यम ही प्राणियों को मारनेवाले अथवा इस शरीर में से प्राण निकालनेवाले माने जाने लगे । वैदिक काल में यज्ञ में यम की भी पूजा होती थी और उन्हें हवि दिया जाता था । उन दिनों वे मृत पितरों के अधिपति तथा मरनेवाले लोगों को आश्रय देनेवाले माने जाते थे । तब से अब तक इनका एक अलग लोक माना जाता है, जो 'यमलोक' कहलाता है । हिंदुओं का विश्वास है कि मनुष्य मरने पर सब से पहले यमलोक में जाता है और वहाँ यमराज के सामने उपस्थित किया जाता है । वही उसके शुभ और अशुभ कृत्यों का विचार करके उसे स्वर्ग या नरक में भेजते हैं । ये धर्मपूर्वक विचार करते हैं, इमालिये धर्मराज भी कहलाते हैं । यह भी माना जाता है कि मृत्यु के समय यम के दूत ही आत्मा को लेने के लिये आते हैं । स्मृतियों में चौदह यमों के नाम आए हैं, जो इस प्रकार हैं—यम, धर्मराज, मृत्यु, अतक, वैवस्वत, काल, सर्वभूत-क्षय, उदुवर, दन्, नील, परमेष्ठी, वृकोदर, चित्र और चित्रगुप्त । तर्पण में इनमें से प्रत्येक के नाम तीन तीन अजलि जल दिया जाता है । मार्कण्डेयपुराण में लिखा है कि जब विश्वकर्मा की कन्या सञ्ज्ञा ने अपने पति सूर्य को देखकर भय से श्रांति बंद कर ली, तब सूर्य ने क्रुद्ध होकर उसे शाप दिया कि जाओ, तुम्हें जो पुत्र होगा, वह लोगों का सयमन करनेवाला (उनके प्राण लेनेवाला) होगा । जब इसपर सञ्ज्ञा ने उनकी ओर चचल दृष्टि से देखा, तब फिर उन्होंने कहा कि तुम्हें जो कन्या होगी, वह इसी प्रकार चचलतापूर्वक नदी के रूप में बहा करेगी । पुत्र तो यही यम हुए और कन्या यमी हुई, जो बाद में यमुना के नाम से प्रसिद्ध हुई । कहा जाता है कि यमी और यम दोनों यमज थे । यम का वाहन बैसा माना जाता है ।

पर्या०—पितृपति । कृतात् । शमन । काल । दृढधर । आद्देव । धर्म । जीवितेश । महिषध्वज । महिषवाहन । शीर्षपाद । हरि । कर्मकर ।

२. मन, इन्द्रिय आदि को वश या रोक में रखना । निग्रह । ४ चित्त को धर्म में स्थिर रखनेवाले कर्मों का साधन ।

विशेष—मनु के अनुसार शरीरसाधन के साथ साथ इनका पालन नित्य कर्तव्य है । मनु ने अहिंसा, सत्यवचन, ब्रह्मचर्य, अकल्कता और अस्तेय में पाँच यम कहे हैं । पर पारस्कर गृह्यसूत्र में तथा और भी दो एक ग्रंथों में इनकी संख्या दस कही गई है और नाम इस प्रकार दिए गए हैं—ब्रह्मचर्य, दया, क्षाति, ध्यान,

सत्य, श्रकलकता, अहिंसा, अस्तेय, मायुर्व्य और यम । 'यम' योग के आठ अंगों में से पहला अंग है । विशेष दे० 'योग' ।

५ कौम्य । ६ शनि । ७ विष्णु । ८ वायु । ९ यमज । जोड़े ।
१० दो की सख्या । ११ वायु । (जैन) ।

यमक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ एक प्रकार का शब्दावलीकार या अनुप्रास जिसमें एक ही शब्द कई बार आता है, पर हर बार उसके अर्थ भिन्न भिन्न होते हैं । उ०—कनक कनक तें गीगुनी मादकता अधिकाइ । यहाँ एक कनक का अर्थ मोता और दूसरे का धतूरा है । २ एक दूत का नाम, जिसके प्रत्येक चरण में एक नगण और दो लघु मात्राएँ होती हैं । ३ सेना का एक प्रकार का द्यूह या जमाव । ४ वे दो यानक जो एक साथ ही उत्पन्न हुए हों । यमज । जोड़े । ५ नयम ।

यमकात, यमकातर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यम + हि० कातर] १ यम का छुरा या खाटा । २ एक प्रकार का तनवार । उ०—
(क) जनु यमकात करहि सब भवाँ । जित लेइ जनहु स्वर्ग अपमवाँ ।—जायसी (पद०) । (ख) होय हनुमत यमकातर घाऊ । आज स्वामि मकर सिर नाऊ ।—जायसी (शब्द०) ।

यमकालिंदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० यमकालिंटी] मूर्य की पत्नी सञ्ज्ञा जो यम और कालिंदी की माता थी [को०] ।

यमकीट—सञ्ज्ञा पुं० [म०] केचुग ।

यमघट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यमघट्ट] १ एक दृष्ट योग जो रविवार के दिन मघा या पूजाफाल्गुनी, सोमवार के दिन पुष्य या श्लेषा, मंगलवार को ज्येष्ठा, प्रतुराधा, भरणी या अश्विनी, बुधवार को हस्त या अर्द्रा, वृहस्पति को पूजापाड, श्रवती या उत्तरा-भाद्रपद, शुक्र को स्वाति या रोहिणी, शरणि पविवार को शतभिषा या श्रवण नक्षत्र होने पर होता है । २ योग म शुभ कार्य वर्जित है । ३ दीपावली का दूसरा दिन । कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा ।

यमचक्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमराज का अम्न ।

यमज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक गर्भ से एक ही समय में और एक साथ उत्पन्न होनेवाली दो सताने । एक माय जन्म लेनेवाले दो बच्चों का जोड़ा । जीर्ण । २ ऐसा घोड़ा जिसका एक और का अंग हीन और दुर्बल हो और दूसरी और का वही अंग ठीक हो । यह दोष माना जाता है । ३ अश्विनीकुमार ।

यमजयी—वि० [सं०] यम पर विजय पागवाला [को०] ।

यमजात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यमज' ।

यमजातना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यमयातना] दे० 'यमयातना' ।

यमजित्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृत्यु को जीतनेवाले, मृत्युजय ।

यमतर्पण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यम की प्रसन्नता के लिये किया जानेवाला यज्ञ [को०] ।

यमत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यम का भाव या धर्म ।

यमदंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यमदण्ड] यमराज का डंडा । कालदंड ।

यमद्यू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक के अनुसार आश्विन, कार्तिक और अश्विन के लगभग का कुछ विशिष्ट काल, जिसमें रोग और मृत्यु आदि का विशेष भय रहता है और जिसमें अल्प भोजन

तथा विशेष नियम आदि का विधान है । कुछ लोगों के मन में यह समझ कायम है कि प्रति आठ दिना अंग अंगहून के आरंभिक आठ दिना का है, अंग अंगहून के मध्य में आश्विन के अंतिम आठ दिन और अंग अंगहून के अंतिम आठ दिना के अंतर्गत है ।

यमदग्नि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक अग्नि जो अंगहून के अंतर्गत है । विशेष दे० 'जमदग्नि' ।

यमद्वितीया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यमद्वितीया] दे० 'यमद्वितीया' ।

यमदूत, यमदूतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यम के दूत । २ कौम्य ।

यमदूतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यमराज ।

यमदवता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] भरणी नक्षत्र, जिसके देवता यम माने जाते हैं ।

यमद्रुम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सेमर का पेड़ । नामनि वृक्ष ।

विशेष—यका यह नाम आश्विन के दिन इनमें फूल ता रहे दुःख देना पड़ते हैं, परंतु उनमें कोई खाने लायक फल नहीं उत्पन्न होता ।

यमद्वार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यम का दरवाजा । मृत्यु । मृत । २ मृत्यु का तर्पण कर्म ।

यमद्वितीया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिक तुला द्वितीया । माईद्वज ।

विशेष—रहने से, एक दिन यमराज ने अपनी बहन यमुना के यहाँ भोजन किया था । इसीदिने एक दिन बहन के यहाँ भोजन करना और उसे कुछ दान मंगलकारक अंग आशुवर्षक माना जाता है ।

यमदार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ऐसा तलवार या तलवार आदि जिसके दोनों और धार हों । जमदाट ।

यमन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्रतिपक्ष या निषेध करना । निषेध करना । २ बचन । वाचना । ३ निषेध देना । ठहराना । ४ रोचना । बंद करना । ५ यमराज ।

यमन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यमन' ।

यमनकल्याण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यमन + सं० कल्याण] दे० 'यमन' ।

यमनक्षत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] 'रखी नक्षत्र, जिसके देवता यम माने जाते हैं ।

यमनाह(उ)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यमनाह, पा० जमनाह] यमों के स्वामी धर्मराज । उ०—कह नारद हम कीर्ज काहा । जेहि नै मानि जाइ यमनाहा ।—विश्राम (पद०) ।

यमनिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यमनिका] दे० 'यमनिका' ।

यमनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का बहुमूल्य पत्थर (लाल या याकृत) जिसकी गणना रत्नों में होती है । यह पत्थर अरब के यमन प्रदेश से आता है ।

यमनी—वि० १ यमन का निवासी । २ यमन सबधी । ३ यमन का [को०] ।

यमपुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यम के रहने का स्थान, जिसके विषय में यह माना जाता है कि मरने पर यम के दूत प्रेतात्मा को पहले यहा ले जाते हैं और तब उसे धर्मपुर में पहुँचाते हैं । यमलोक ।

मुहा०—यमपुर पहुँचाना = मार डालना । प्राण ले लेना ।

यमपुरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यमलोक । यमपुर ।

यमपुरुष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यमराज । २. यम के दूत ।

यमप्रस्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन नगर जो कुरुक्षेत्र के दक्षिण में था ।

विशेष—कहते हैं, यहाँ के निवासी यम के उपामक थे । शकराचार्य ने वहाँ जाकर वहाँ के निवासियों को शैव बनाया था ।

यमप्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बट वृक्ष । बट का पेड़ ।

यमभगिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यमुना नदी ।

यमयन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

यमया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ज्योतिषशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का नक्षत्रयोग ।

यमयातना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ यम के दूतों द्वारा दी हुई पीडा । २ नरक की पीडा । ३ मृत्यु के समय की पीडा ।

यमरथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भैसा ।

यमराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमों के राजा धर्मराज, जो मरने के पीछे प्राणी के कर्मों का विचार करके उसे दंड या उत्तम फल देते हैं । धर्मराज ।

यमराज्य, यमराष्ट्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमलोक ।

यमल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ युग्म । जोड़ा । २ दो लडके जो एक साथ ही पैदा हुए हों । यमज ।

यमलच्छद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कचनार ।

यमलपत्रक—सञ्ज्ञा सं० [सं०] १. कनेर । २ अशमतक वृक्ष ।

यमलसू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह गौँ जिमके दो बच्चे एक साथ उत्पन्न हुए हों ।

यमला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार का हिक्का या हिचकी का रोग, जिसमें थोड़ी थोड़ी देर पर दो दो हिचकियाँ एक साथ आती हैं और मिर तथा गरदन काँपने लगती है । २ एक प्राचीन नदी का नाम । ३ तान्त्रिकों की एक देवी ।

यमलाजुन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गोकुल के दो अर्जुन वृक्ष जो पुराणा नुमार कुबेर के पुत्र नलकूबर और मणिग्रीव थे ।

विशेष—ये दोनों एक बार मद्य पीकर मत्त हो रहे थे और नगे होकर नदी में स्त्रियों के साथ क्रीडा कर रहे थे । इसी पर नारद ऋषि ने इन्हें शाप दिया, जिससे ये पड हो गए थे । श्रीवृष्ण ने उस समय इनका उद्धार किया था, जब वे यषोदा द्वारा ऊवल में बाँधे गए थे ।

यमली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक में मिली हुई दो चीजें । जोड़ी । २ स्त्रियों का घाघरा और चोली ।

यमलोक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह लोक जहाँ मरने के उपरांत मनुष्य जाते हैं । यमपुरी ।

मुहा०—यमलोक भेजना या पहुँचाना = मार डालना । प्राण लेना ।

२ नरक ।

यमवाहन—सञ्ज्ञा [पुं०] सं० भैसा ।

यमव्रत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा का वर्म जिसके अनुमार उसे यमराज की भाँति निष्पत्त होकर सबकी दंड देना चाहिए । राजा का दंडनियम ।

यमसदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमपुर ।

यमसू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य ।

यमसू—वि० स्त्री० जिमके एक ही गर्भ से एक माथ दो सतानें हो ।

यमसूर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ऐसा घर जिसके पश्चिम उत्तर दिशा में गाला हो ।

यमस्तोम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक दिन में होनेवाला एक प्रकार का यज्ञ ।

यमहता—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चमइन्वृ काल का नाश करनेवाला ।

यमातक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमातक शिव ।

यमातिरात्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ४६ दिनों में होनेवाला एक प्रकार का यज्ञ ।

यमादित्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य का एक रूप ।

यमानिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अजवायन ।

यमानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अजवायन ।

यमानुजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यमराज की छोटी बहन, यमुना ।

यमारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

यमालय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यम का घर, यमपुर ।

यमिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम ।

यमी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यम की बहन, जो पीछे यमुना नदी होकर बही । यमुना नदी ।

यमी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमिन् सयम करनेवाला मनुष्य । सयमी ।

यमुड—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यमुण्ड एक प्राचीन ऋषि का नाम ।

यमुना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दुर्गा । २ यम की बहन यमी, जो सूर्य के वीर्य में सञ्ज्ञा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी और जो सञ्ज्ञा को सूर्य द्वारा मिले हुए शाप के कारण पीछे से नदी हो गई थी । ३ उत्तर भारत की एक प्रसिद्ध बड़ी नदी जो हिमालय के यमुनोत्तरी नामक स्थान से निकलकर प्रयाग में गंगा में मिलती है यह ६६० मील लंबी है और दिल्ली, आगरा, मथुरा आदि नगर इसके किनारे बसे हुए हैं । हिंदू इसे बहुत पवित्र नदी और यम की बहन यमी का स्वरूप मानते हैं ।

यमुनाभिद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कृष्ण के भाई बलराम जिन्होंने अपने हल से यमुना के दो भाग किए थे ।

यमुनोत्तरी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हिमालय में गडवाल के पाम का एक पर्वत जिससे यमुना नदी निकली है ।

यमेरुका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक घडियाल या बड़ी भाँक जो प्राचीन काल में एक घड़ी पूरी होने पर बजाई जाती थी ।

यमेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भरणी नक्षत्र ।

यमेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

ययाति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा नहुष के पुत्र जो चद्रवश के पाँचवें राजा थे और जिनका विवाह शुक्राचार्य की कन्या देवयानी के साथ हुआ था ।

विशेष—इनको देवयानी के गर्भ से यदु और तुर्यमु नाम के दो तथा शर्मिष्ठा के गर्भ से द्रुह्यु, अरगु और पुरु नाम के तीन पुत्र हुए थे । विशेष दे० 'देवयानी' । इनमें से यदु से यादव वंश और पुरु से पौरव वंश का आरंभ हुआ । शर्मिष्ठा इन्हें विवाह के दहेज में मिली थीं । शुक्राचार्य ने इन्हें यह कह दिया था कि शर्मिष्ठा के साथ सभोग न करना । पर जब शर्मिष्ठा ने ऋतु-मती होने पर इनसे ऋतुरक्षा की प्रार्थना की, तब इन्होंने उनके साथ सभोग किया और उसे सतान हुई । इसपर शुक्राचार्य ने इन्हें शाप दिया कि तुम्हें शीघ्र बुढ़ापा आ जायगा । जब इन्होंने शुक्राचार्य को सभोग का कारण बतलाया, तब उन्होंने कहा कि यदि कोई तुम्हारा बुढ़ापा ले लेगा, तो तुम फिर ज्यों के त्यों हो जाओगे । इन्होंने एक एक करके अपने चारों पुत्रों से कहा कि तुम हमारा बुढ़ापा लेकर अपना यौवन हमें दे दो, पर किसी ने स्वीकार नहीं किया । अतः पुरु ने इनका बुढ़ापा आप ले लिया और अपनी जवानी इन्हें दे दी । पुनः यौवन प्राप्त करके इन्होंने एक सहस्र वर्ष तक विषयमुख भोगा । अतः पुरु को अपना राज्य देकर आप वन में जाकर तपस्या करने लगे और अतः स्वर्ग चले गए । स्वर्ग पहुँचने पर भी एक बार यह इंद्र के शाप से वहाँ से च्युत हुए थे, क्योंकि इन्होंने इंद्र से कहा था कि जैसी तपस्या मैंने की है, वैसी और किसी ने नहीं की । जब ये स्वर्ग से च्युत हो रहे थे, तब मार्ग में इन्हें अष्टक ऋषियों ने रोककर फिर से स्वर्ग भेजा था । इसका उल्लेख ऋग्वेद में भी आया है ।

ययातिपत्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक तीर्थ का नाम ।

यथावर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'याथावर' ।

ययि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अश्वमेध यज्ञ के उपयुक्त अश्व । २ मेघ । वादल । दे० 'ययी' [को०] ।

ययी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ययिन्] १ शिव । २ घोड़ा । ३ मार्ग । पथ । रास्ता । दे० 'ययि' ।

ययु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अश्वमेध यज्ञ का घोड़ा । २ घोड़ा ।

यरकान—सञ्ज्ञा पुं० [अ० यरकान] एक रोग जिसमें शरीर, विशेषतः आँखें पीली हो जाती हैं । कमल रोग । पीलिया [को०] ।

यल(७)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० इला] पृथिवी । धरती [को०] ।

यलधीश, यलनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० इला + अधीश] राजा (हिं०) ।

यला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० इला] पृथ्वी । (हिं०) ।

यलाइद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० इला + इन्द्र] राजा । (हिं०) ।

यलापत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० इला + पति] राजा । (हिं०) ।

यव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जी नामक अन्न । विशेष दे० 'जी' । २ एक जी या १२ सरसों की तैल का एक मान । ३. लंबाई की

एक नाप जो एक इंच की एक तिहाई होती है । ४ सामुद्रिक के अनुसार जी के आकार की एक प्रकार की रेखा जो उंगला में होती है और जो बहुत शुभ मानी जाती है । कहते हैं, यदि यह रेखा अंगूठे में हो, तो उसका फल और भी शुभ होता है । इस रेखा का रामचंद्र के दाहिने पैर के अंगूठे में होना माना जाता है । ५ वेग । तेजी । ६ वह वस्तु जो दोनों ओर उन्नतोदर हो ।

यवकटङ्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यवकण्टक] तैलपापडा ।

यवक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जी ।

यवकलश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इद्रजी ।

यवक्य—वि० [सं०] यव वीने के उपयुक्त (वैत) । जिनमें जी बोया हो [को०] ।

यवक्रीत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक ऋषि का नाम जो भरद्वाज के पुत्र थे ।

यवजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] महाभारत के अनुसार एक नदी का नाम ।

यवचार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जी के पीवों को जलाकर निकाला हुआ चार । विशेष दे० 'जवाखार' ।

यवचतुर्थी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वैशाख शुक्ला चतुर्थी ।

यवज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यवचार । २ गेहूँ का पीषा । ३ अजवायन ।

यवतित्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शक्तिनी नाम की लता ।

यवदोष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जी के षकार की एक रेखा, जो रत्नों में पड़ जाती है और जिससे वह रत्न कुछ दूषित हो जाता है ।

यवद्वीप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वर्तमान जावा द्वीप का प्राचीन नाम ।

यवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० यवनी] १ वेग । तेजी । २ तेज घोड़ा । ३ यूनान देश का निवासी । यूनानी ।

विशेष—यूनान देश में 'आयोनिआ' नामक प्रात या द्वीप है, जिनका लगाव पहले पूर्विय देशों में बहुत अधिक था । उसी के आघार पर भारतवासी उस देश के निवासियों को, और तदु-परात भारत में यूनानियों के आने पर उन्हें भी 'यवन' कहते थे । पीछे से इस शब्द का अर्थ और भी विस्तृत हो गया और रोमन, पारसी आदि प्रायः सभी विदेशियों, विशेषतः पश्चिम से आनेवाले विदेशियों को लोग 'यवन' ही कहने लगे, और इस शब्द का प्रयोग प्रायः 'म्लेच्छ' के अर्थ में होने लगा । परंतु महाभारत काल में यवन और म्लेच्छ ये दोनों भिन्न भिन्न जातियाँ मानी जाती थीं । पुराणों के अनुसार अन्याय म्लेच्छ जातियों (पारद, पल्लव आदि) के समान यवनों की उत्पत्ति भी वसिष्ठ और विश्वामित्र के ऋण्डे के समय वसिष्ठ की गाय के शरीर से हुई थी । गाय के 'योनि' देश से यवन उत्पन्न हुए थे ।

४ मुसलमान । ५—भूपण यो यवनी यवनी कहें कोऊ कहें सरजा सो हहारे । तू सबको प्रतिपालनहार चिचारे भतार न मार हमारे ।—भूपण (शब्द०) । ५, कालयवन नामक म्लेच्छ राजा जो कृष्ण से कई बार लड़ा था ।

यवनद्विष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गुगुल । गुगुल [को०] ।

यवनप्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिर्च ।

यवनाचार्य—सज्ञा पुं [सं] यमत्र जाति का एक ज्योतिषाचार्य, जिसका उल्लेख बराहमिहिर आदि ने किया है। विद्वानों का अनुमान है कि यह संभवत 'टालेमी' था।

यवनानी^१—वि० [सं०] यवन देश सव्वी। यूनान का। यूनानी।

यवनानी^२—सज्ञा स्त्री० १ यूनान की भाषा। २ यूनान की लिपि।

विशेष—कात्यायन ने यवनानी लिपि का उल्लेख किया है।

यवनारि—सज्ञा पुं [सं०] श्रीकृष्ण, जिनकी कालयवन से कई लड़ाइयाँ हुई थी।

यवनाल—सज्ञा पुं [सं०] १ जुआर का पौधा। २ इस पौधे से उत्पन्न अन्न के दाने। जुआर। ३ जौ के डल जो सूखने पर चौपायों को खिलाए जाते हैं।

यवनालज—सज्ञा पुं [सं०] यवचार। जवाखार।

यवनाश्व—सज्ञा पुं [सं०] मिथिला देश के एक प्राचीन राजा का नाम जो बहुलाश्व का पिता था।

यवनिका—सज्ञा पुं [सं०] १ कनात। २ जूटक का परदा।

विशेष—प्राचीन काल में नाटक के परदे संभवत यवन देश से आए हुए कपड़े से बनते थे, इसीलिये इनको यवनिका कहते थे।

आधुनिक अनेक पंडितों के शोधानुसार शुद्ध संस्कृत शब्द 'यवनिका' है। 'राजशेखर' की 'कर्पूरमंजरी' में प्रयुक्त 'यवनिकातर' के संस्कृतीकरण की भाँति से 'यवनिका' शब्द बना और चल पड़ा। इसका यवन शब्द से संबंध नहीं मानते।

यवनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] यवन की या यवन जाति की स्त्री।

यवनेष्ट—सज्ञा पुं [सं०] १ सीसा। २ मिर्च। ३. लहसुन। ४ नीम। ५ प्याज। ६ शलजम। ७ गाजर।

यवनेष्टा—सज्ञा स्त्री० [सं०] जगला खजूर।

यवफल—सज्ञा पुं [सं०] १ इद्रजौ। २ कुटज। ३ प्याज। ४ जटामासी। ५ वाँस। ६ प्लवङ्ग वृक्ष। पाकड का पेड़।

यवविंदु—सज्ञा पुं [सं० यवविंदु] वह हीरा जिसमें विंदु सहित यवरेखा हो। कहते हैं ऐसा हीरा पहनने से देश छूट जाता है।

यवमूढ—सज्ञा पुं [सं० यवमूढ] जौ का माँड जो नए ज्वर के रोगी को पथ्य के रूप में दिया जाता है। वैद्यक के अनुसार यह लघु, ग्राहक और शूल तथा त्रिदोष का नाश करनेवाला है।

यवमय—सज्ञा पुं [सं० यवमय] जौ का सत्तू।

यवमता—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक वर्णवृत्त जिसके विषम चरणों में रगण, जगण, जगण होते और सम चरणों में जगण, रगण और एक गुरु होना है। जैसे,—त्यागि दे मवँ जु है, असन्य काम। सुवार जन्म आपनो, न शूल राम।

यवमद्य—सज्ञा पुं [सं०] जौ का बनाया हुआ मद्य। जौ की शराब।

यवमध्य—सज्ञा पुं [सं०] १, एक प्रकार का चाद्रायण व्रत। २ पाँच दिनों में समाप्त होनेवाला एक प्रकार का यज्ञ। ३ एक प्रकार का नगाडा (की०)। ४ एक ताप (की०)।

यवलक—सज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का पक्षी जिसका मांस, सुश्रुत के अनुसार, मधुर, लघु, शात्रल और कम्पना होता है।

यवलास—सज्ञा पुं [सं०] जवाखार।

यववर्णाभ—सज्ञा पुं [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का जहरीला कीड़ा।

यवशाक—सज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का साग जो वैद्यक के अनुसार मधुर, रूखा, शीतवीर्य और मलभेदक माना जाता है।

यवशक्र—सज्ञा पुं [सं०] जवाखार।

यवश्राद्ध—सज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का श्राद्ध जो वैशाम्य के शुक्ल पक्ष में कुछ विशिष्ट दिनों और योगों में और विपुत्र गङ्गाति अथवा तृतीया के दिन होता है और जिसमें केवल जौ के आटे का व्यवहार होता है।

यवस—सज्ञा पुं [सं०] शूपा।

यवसुर—सज्ञा पुं [सं०] जौ की शराब।

यवागू—सज्ञा पुं [सं०] जौ या चावल का वह माँड जो मटाकर कुछ खट्टा कर दिया गया हो, अर्थात् जिसमें कुछ खमोर आ गया हो। माँड की काँजी।

विशेष—इसका व्यवहार वैद्यक में पथ्य के लिये होता है, और यह ग्राहक, बलकारक तथा वातनाशक माना जाता है।

यवाग्र—सज्ञा पुं [सं०] जौ का भूसा।

यवाग्रज—सज्ञा पुं [सं०] १ यवचार। २ अजवायन।

यवान—वि० [सं०] वेगवान्। तेज। क्षिप्र।

यवानिका, यवानी—सज्ञा स्त्री० [सं०] अजवायन।

यवान्न—सज्ञा पुं [सं०] यव, जो पकाया गया हो (की०)।

यवाम्ल—सज्ञा पुं [सं०] जौ की काँजी जो वैद्यक में वात और श्लेष्मानाशक, रक्तवधक, भेदक तथा रक्तदोषनाशक मानी जाती है।

यवाश—सज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का कीड़ा जो जौ की फगल को हानि पहुँचाता है।

यवास, यवासक, यवासा—सज्ञा पुं [सं०] जवासा नामक काटेशर क्षुप। वि० दे० 'यवानी'।

यवाह—सज्ञा पुं [सं०] यवचार। यवनालज (की०)।

यविष्ठ^१—सज्ञा पुं [सं०] १ छोटा भाई। २ अग्नि। ३ ऋग्वेद के एक मंत्र के द्रष्टा ऋषि का नाम जिन्हें अग्निवक्त्र भी कहते हैं।

यविष्ठ—वि० [सं०] सब ने छोटा। कनिष्ठ।

यवानर—सज्ञा पुं [सं०] १ पुराणानुसार अजमोढ के एक पुत्र का नाम। २ भागवत के अनुसार इद्रमाँड के एक पुत्र का नाम।

यवीयान्—वि० [सं०] यवीयम् [वि० स्त्री० यवीयसी] १. मंत्र से छोटा। न्युनतम। कनिष्ठतम। २ हानि। रोग।

यवीयान्—सज्ञा पुं १ छोटा भाई। मवने छोटा भाई। २ शूद्र (की०)।

यवोद्भव—सज्ञा पुं [सं०] यवचार। जवाखार।

यव्य—सज्ञा पुं० [सं०] १. माम । महीना । २. यव का खेत । यवक्य
क्षेत्र [को०] ।

यवप्रावती—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. वैदिक काल की एक नदी । २.
वैदिक काल की एक नगरी ।

यश पट्ट—सज्ञा पुं० [सं०] कीर्ति का घोंसा । यश की दुदुमी [को०] ।

यश शेष—सज्ञा पुं० [सं०] १. मृत्यु । मौत । २. वह जिसका यश
ही बचा हो, मृत व्यक्ति [को०] ।

यश—सज्ञा पुं० [सं० यशस्] १. अच्छा काम करने से होनेवाला
नाम । नेवनामी । कीर्ति । सुख्याति । उ०—(क) यश अपयश
देखत नहीं देखत भयामल गात ।—विहारी (शब्द०) । (ख)
रक्षु मुनि जन यश लीजै ।—केशव (शब्द०) । (ग) हा पुत्र
लक्ष्मण छुडावहु बेगि मोही । मार्त डवश यश की सव लाज
तांही ।—केशव (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—पाना ।—मिलना ।

मुहा०—यश कमाना या लूटना = यश वा कीर्ति प्राप्त करना ।
नाम हासिल करना ।

२. बढाई । प्रशंसा । महिमा ।

मुहा०—यश माना = (१) प्रशंसा करना । (२) कृतज्ञ होना ।
एहसान मानना । यश मानना = कृतज्ञ होना । निहोय मानना ।
एहसान मानना ।

यशद्—सज्ञा पुं० [सं०] एक धातु । जस्ता । दस्ता [को०] ।

यशव, यशम—सज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का पत्थर जो हरा सा
होता है ।

विशेष—यह चीन और लका में बहुत होता है । इस पत्थर की
'नार्दली' बनती है, जिसे लोग छाती पर पहनते हैं । कलेजे, मेदे
और दिमाग की बीमारियों को दूर करने का इस पत्थर में
विलक्षण प्रभाव माना जाता है । यह भी कहा जाता है कि
जिसके पाम यह पत्थर होता है, उसपर विजली का कुछ प्रभाव
नहीं होता । इसे 'सने यशव' भी कहते हैं ।

यशस्कर—वि० [सं०] कीर्ति बढ़ानेवाला ।

यशस्काम—वि० [सं०] १. यश का इच्छुक । २. महत्वाकांक्षी [को०] ।

यशस्य—वि० [सं०] १. यशकारी । यशस्कर । कीर्तिकारी । २.
प्रसिद्ध । श्रेष्ठ [को०] ।

यशस्या—सज्ञा स्त्री० [सं०] जीवती नामक पीषा [को०] ।

यशस्वान्—वि० [सं० यशस्वत्] [वि० स्त्री० यशस्वती] यशस्वी ।
कीर्तिमान ।

यशस्विनी^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. वनकपास । २. महा ज्योतिष्मती ।
३. गंगा नदी ।

यशस्विनी^२—वि० स्त्री० जिसे यश प्राप्त हो । कीर्तिमती ।

यशस्वी—वि० [सं० यशस्विन्] [वि० स्त्री० यशस्विनी] जिसका
रूप यश हो । कीर्तिमान ।

यशी—वि० [सं० यश + ई (प्रत्य०)] यशस्वी । कीर्तिमान् । उ०—

ये जो पाँचो पुत्र तुम्हारे हैं, सो महाबली यशी होंगे ।—तन्नू०
(शब्द०) ।

यशीले^(१)—वि० [सं० यश + ईल (प्रत्य०)] कीर्तिमान् । यशस्वी ।
उ०—अवर चित्र विचित्र विराजत श्रायो सुशील यशील समा
मे ।—रघुराज (शब्द०) ।

यशुमति सज्ञा स्त्री० [सं० यशोवती] दे० 'यशोदा' ।

यशोद्—सज्ञा पुं० [सं०] १. पारा । पारद । २. वह जो कीर्तिप्रद
हो [को०] ।

यशोदा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. नद की स्त्री जिन्होंने श्रीकृष्ण को
पाना था । विशेष ० 'नद' । २. दिलीप की माता का नाम ।
३. एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में एक जगण और दो
गुरु वर्ण होते हैं । जैसे, जपो गुपाला । सुभोर काला । कहै
यशोदा । लहै प्रमोदा ।

यशोधर—सज्ञा पुं० [सं०] १. हविमयी के गर्भ से उत्पन्न कृष्ण के
एक पुत्र का नाम । २. उत्तपिरी के एक अर्हत् का नाम ।
(जैन) । ३. कर्म अथवा सावन मास का पाँचवाँ दिन ।

यशोधरा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. गौतम बुद्ध की पत्नी और राहुल
की माता का नाम । २. कर्म अथवा सावन मास का
चौथी रात ।

यशोधरेय—सज्ञा पुं० [सं०] यशोधरा का पुत्र, राहुल ।

यशोभूत्—वि० [सं०] यशी । प्रसिद्ध । ख्यात [को०] ।

यशोमति, यशोमती—सज्ञा स्त्री० [सं० यशोवती] दे० 'यशोदा' ।

यशोमत्य—सज्ञा पुं० [सं०] मार्कण्डेयपुराण के अनुसार एक जाति
का नाम ।

यशोमाधव—सज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

यशोहर—वि० [सं०] कर्त्त का अघोररूप करनेवाला [को०] ।

यष्टव्य—वि० [सं०] यज्ञ करने योग्य [को०] ।

यष्टा—वि० पुं० [सं० यष्टु] मञ्जकर्ता । यजन करनेवाला [को०] ।

यष्टि—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. लाठी । छड़ी । चकड़ी । २. पताका का
डबा । ध्वज । ३. टहनी । झांझ । डाल । ४. जेठी मनु ।
मुलेठी । ५. ताँत । ६. गले में पहनने का एक प्रकार का
मोतियों का हार । ७. लता । बेल । ८. बाहु । बाँह । ९.
ऊख । इच्छु [को०] ।

यष्टिक—सज्ञा पुं० [सं०] १. तीतर पक्षी । २. डबा । ३. मजीठ ।

यष्टिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. हाथ में रखने की छड़ी । लकड़ी ।
लाठी । २. जेठी मनु । मुलेठी । ३. दावली । चापी । ४. गले
में पहनने का हार । यष्टी ।

यष्टिकाभरण—सज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार जल को ठंडा
करने का उपाय ।

यष्टिग्रह—सज्ञा पुं० [सं०] यष्टिवारी । दह बारण करनेवाला [को०] ।

यष्टिप्राण—वि० [सं०] जिसका यष्टि ही आधार हो । क्षीण करीर ।
अतीव दुर्बल [को०] ।

यष्टिमधु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जेठी मधु । मुलेठी ।

याष्टयंत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यष्टियन्त्र] वह घूपघड़ी जिसमें एक छड़ी सीधी खड़ी गाड़ दी जाती है और उसकी छाया से समय का ज्ञान प्राप्त किया जाता है ।

यष्टी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गले में पट्टने का एक प्रकार का हार । मोतियों की ऐसी माला जिसमें बीच बीच में मणि भी हो ।
२ मुलेठी ।

यस्क—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम ।

यह—सर्व० [सं० य (पुं०) या एप] निकट की वस्तु का निर्देश करने-वाला एक सर्वनाम, जिसका प्रयोग वक्ता और श्रोता को छोड़कर और सब मनुष्यों, जीवों तथा पदार्थों आदि के लिये होता है । जैसे,—(क) यह कई दिनों से बीमार है । (ख) यह ता शमी चला जायगा ।

विशेष—(क) जब हममें विभक्ति लगती है, तब 'यह' का रूप खड़ी बोली में 'इस' (बहुव० इन) और व्रजभाषा में 'या' हो जाता है । जैसे, इसको, (इनको) याको । (ख) पुरुषवाचक और निजवाचक सर्वनामों को छोड़कर शेष सर्वनामों की भाँति इसका प्रयोग प्रायः विशेषण के समान होता है । जब यह श्रकंला रहता है, तब तो सर्वनाम होता है, और जब इसके साथ कोई संज्ञा आती है, तब यह विशेषण हो जाता है । जैसे,—'यह बाहर जायगा' में यह सर्वनाम है, और 'यह लडका पाजी है' में 'यह' विशेषण है ।

यहाँ—क्रि० वि० [सं० इह] इस स्थान में । इस जगह पर ।

यहि—सर्व०, वि० [हिं० यह] १ 'यह' का वह रूप जो पुरानी हिंदी में उसे कोई विभक्ति लगने के पहले प्राप्त होता है । जैसे, यहि को, यहि तैं । २ 'ए' का विभक्तियुक्त रूप, जिसका व्यवहार पीछे कर्म और सप्रदान में ही प्रायः होने लगा । इसको ।

यही—अव्य० [हिं० यह + ही (प्रत्य०)] निश्चित रूप से यह । यह ही । उ०—यही गोप यह खाल इहै मुख, यह लीला कहूँ तजत न साथ ।—सूर (शब्द०) ।

यहूद—सञ्ज्ञा पुं० [इब्रानी] वह देश जहाँ हजरत ईसा पैदा हुए थे और जहाँ के निवासी यहूदी कहलाते हैं । यह देश एशिया की पश्चिमी सीमा पर है ।

यहूदी—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० यहूद] [स्त्री० यहूदिनी] १ यहूद देश का निवासी । २ आर्य जाति से भिन्न शामी जाति के अतर्गत एक जाति ।

यहूयहू—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] कबूतर की एक जाति ।

याचा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० याञ्चा] दे० 'याचना' ।

यांत्रिक—वि० [सं० यान्त्रिक] [वि० स्त्री० यान्त्रिकी] १ यंत्र सबंधी । मशीन वा औजार संबंधी । २ यंत्र द्वारा निर्मित । यंत्र द्वारा उत्पादित । ३ कृत्रिम । बनावटी । नकली ।

यांत्रिकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यान्त्रिकी] यंत्र विद्या । इंजीनियरी ।

याँ—क्रि० वि० [हिं०] 'यहाँ' । उ०—(क) याँ नम्र भाव ही से जाना भेरे मन भाया है ।—प्रतापनारायण मिश्र (शब्द०) । (ख)

फडकता है बयो हाथ दहना । याँ तपोवन में क्या होगा लहना ।—प्रतापनारायण मिश्र (शब्द०) ।

याँचना^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० याञ्चा] दे० 'याचना' ।

याँचना^२—क्रि० सं० दे० 'याचना' ।

याँचा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० याञ्चा] माँगने की क्रिया । प्रार्थनापूर्वक माँगना ।

याँ—अव्य० [फा०] विकल्पसूचक शब्द । अथवा । वा । उ०—आप रहा है सीस नवाय । या प्रवाह ने दिया भुक्ताय ।—प्रतापनारायण मिश्र (शब्द०) ।

याँ—सर्व० वि० [हिं०] 'यह' का वह रूप जो उसे व्रज भाषा में कारक चिह्न लगने के पहले प्राप्त होता है । उ०—(क) या चौदहे प्रकास में हूँ है लका दाह ।—केशव (शब्द०) । (ख) चलो लाल या बाग में लखी शूरव केलि ।—मतिराम (शब्द०) ।

याँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ योनि । २ गति । चाल । ३. रथ । गाड़ी । ४ श्वरोध । रोक । वारण । ५ व्यान । ६ प्राप्ति । लाभ ।

याक'—सञ्ज्ञा पुं० [तिब्बती श्याक, सं० गावक] हिमालय पर होनेवाला जगली बेल जिसकी पूँछ का चँवर बनता है ।

याकाँ^२—वि० [हिं० एक, फा० यक] दे० 'एक' । उ०—(क) तोऊ याकी बात न समुझै चाहै बीसन दाँप कहन ।—प्रतापनारायण मिश्र (शब्द०) । (ख) डाढी नाक याक मा मालिगै, विनु दाँतन मुँह अस पोपलान ।—प्रतापनारायण मिश्र (शब्द०) ।

याकूत—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का लाल रंग का बहुमूल्य पत्थर । लाल ।

याग—सञ्ज्ञा पुं० [म०] यज्ञ । उ०—योग याग व्रत दान जो कीर्ज ।—केशव (शब्द०) ।

यागसतान—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यागमन्तान] इंद्र के पुत्र जयत का एक नाम ।

याचक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जो माँगता हो । माँगनेवाला । उ०—(क) चातक ज्यों कातिक के मेघ तैं निराश होत, याचक त्यो तजत आस कृपण के दान की ।—हृदयराम (शब्द०) । (ख) जनि याँचै व्रजपति उदार अति याचक फिरि न कहावे ।—केशव (शब्द०) । २ भिक्षुमना ।

यौं—याचकवृत्ति ।

याचकता—उच्चा स्त्री० [सं०] भोज माँगने का काम [को०] ।

याचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'याचना' [को०] ।

याचनक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भिक्षुक । २ निवेदक । वह जो त्रिवाह के लिये कन्या की याचना करे [को०] ।

याचना^१—क्रि० म० [सं० याचन] प्राप्त करने के लिये विनती करना । प्रार्थना करना । माँगना ।

याचना^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] माँगने की क्रिया ।

याचिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० √याच्] किसी निर्वाचन या निर्णय के विरुद्ध न्यायालय से की हुई प्रार्थना । (सं० पिटीसन) ।

याचित—वि० [सं०] माँग हुआ । प्रार्थित [को०] ।
याचितक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] किसी से कुछ दिन के लिये माँगी हुई वस्तु । माँगनी की चीज ।
विशेष—चारणक्य ने लिखा है कि माँगे हुए पदार्थ को जो न लौटावे, उसपर १२ परा जुग्माना किया जाय ।
याचित, —सञ्ज्ञा पुं० [सं० याचिन्] १ भिक्षुक । २ आवेदक । निवेदक । ३ पाणिप्रहारथी । विवाहार्थी [को०] ।
याचि० गु—वि० [सं०] १ भीख माँगने का इच्छुक । २ भीख माँगने का अभ्यस्त [को०] ।
याचि० गुता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ भीख माँगने की इच्छा । २ भीख माँगने की प्रवृत्ति [को०] ।
याचिन्ना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] याचना । माँगना ।
याच्य—वि० [सं०] याचना करने के योग्य । माँगने के योग्य ।
याच्यता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्रार्थनीयता [को०] ।
याज्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ करानेवाला । याजक ।
याज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अन्न । अनाज । २ पना हुआ चावल [को०] । ३ यज्ञ करानेवाला [को०] । ४ एक प्राचीन ऋषि का नाम ।
याजक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यज्ञ करानेवाला । २ राजा का हाथी । ३ मस्त हाथी ।
याजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ की क्रिया ।
याजयिता—सं० पुं० [सं० याजयित्] यज्ञार्ता का स्थानापन्न पुरोहित [को०] ।
याजि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ करनेवाला ।
याजी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० याजिन्] यज्ञ करनेवाला ।
याजुष—वि० [सं०] [स्त्री० याजुषी] यजुर्वेद सवधी ।
याजुष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यजुर्वेदानुयायी । २ तीतर नाम का पक्षी [को०] ।
याजुषाअनुष्टुप्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक छन्द जिसमें सब मिलाकर आठ वर्ण होते हैं ।
याजुषीषणिक्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक छन्द जिसमें सात वर्ण होते हैं ।
याजुषीगायत्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक वैदिक छन्द जिसमें छह वर्ण होते हैं ।
याजुषीजगती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक वैदिक छन्द जिसमें बारह वर्ण होते हैं ।
याजुषीजिष्टुप्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वैदिक छन्द जिसमें ग्यारह वर्ण होते हैं ।
याजुषीषक्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं० याजुषी षक्ति] एक वैदिक छन्द जिसमें दस वर्ण होते हैं ।
याजुषीबृहती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक वैदिक छन्द जिसमें नौ वर्ण होते हैं ।

याज्ञ—वि० [सं०] यज्ञ संप्रधी । यज्ञ का ।

याज्ञतृग्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नाम ।

याज्ञदत्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तुषे ।

याज्ञवल्क्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ? एक प्रसिद्ध ऋषि जो वैशंपायन के शिष्य थे ।

विशेष—कहते हैं, एक बार वैशंपायन ने किसी कारण से अप्रसन्न होकर इनमें कहा कि तुम मेरे शिष्य होने के योग्य नहीं हो, अतः जो कुछ तुमने सुकम पडा है, वह सब लौटा दो । इस पर याज्ञवल्क्य ने अपनी माँगी पटी हुई विद्या उगल दी, जिन वैशंपायन के द्वारे गिऱ्या न तीतर अनाज चुग लया । इसलिए उनकी आत्माओं का नाम तृत्तिरीय हुआ । याज्ञवल्क्य ने अपने गुरु का स्थान प्यारकर सूर्य की उगाना की और सूर्य के घर से वह शुकन यजुर्वेद या राजमन्त्री महिष्ता व आचाव हुए । इनका दूसरा नाम वाजसनेय भी था ।

२ एक ऋषि जो राजा जनक के दरबार में रहने थे और जो योगीश्वर याज्ञवल्क्य के नाम से प्रसिद्ध हैं । मगधी और गार्गी इन्हीं की पत्नियाँ थीं । ३ याज्ञवल्क्य याज्ञवल्क्य के वंशधर एक स्मृतिकार । मनुस्मृति के उपरांत इन्हीं की स्मृति का महत्व है, और उसका दायभाग आज तक प्रमाण माना जाता है ।

याज्ञसेन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जिराडा का एक नाम जो द्रोपदी का भाई था [को०] ।

याज्ञसेनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] द्रोपदी का एक नाम ।

याज्ञिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यज्ञ करने या करानेवाला । २ गुजराती शब्द ब्राह्मणों का एक जाति । ३ कुशा [को०] । ४ पीपल, खैर, पलाश आदि अनेक वृक्षा का नाम [को०] । ५ यज्ञमान [को०] ।

याज्ञिय—वि० [सं०] १ यज्ञ सवधी । २ यज्ञ के योग्य ।

याज्य—वि० [सं०] १ यज्ञ कराने योग्य । २ जो यज्ञ में दिया या चढ़ाया जानेवाला हो । ३, (दक्षिणा) जो यज्ञ कराने से प्राप्त हो ।

याज्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गंगा नदी । २ यज्ञसम्बन्धी सुक्त अथवा मन्त्र [को०] ।

यातन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ परिश्रम । बदला । २ पारितोषिक । इनाम ।

यातना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ बहुत अधिक कष्ट । तकलीफ । पीडा । उ०—कोरि कारि यातनानि कोरि कोरि मारिए—केशव (शब्द०) । २ दड की वह पीडा जो यमलोक में भोगनी पडती है ।

यातव्य—वि० [सं०] १ (ऐसा शत्रु) जो पास होने के कारण चढ़ाई के योग्य हो । २ जिसपर चढ़ाई की जानेवाली हो ।

याता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यात्] पति के भाई की स्त्री । जेठानी वा देवरानी । उ०—सास नन्द यातान को आई नीठि सुवाय ।

अब आली धर गवन की सुवि आए सुवि जाय ।—मतिराम (शब्द०) ।

याता^०—सञ्ज्ञा पुं० १ जानेवाला । २ रथ चलानेवाला । सारथी । ३ मार डालनेवाला । हत्या करनेवाला ।

यातायात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गमनागमन । आना जाना । आर्मदरपत ।

यातिक्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यात्रिक । यात्रा करनेवाला [को०] ।

यातु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ आनेवाला । २ रास्ता चलनेवाला । पथिक । ३ रात । ४ काल । ५ वायु । हवा । ६ यातना । कष्ट । ७ हिमा । ८ अन्न ।

यातुघन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गुग्गुल ।

यातुघान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजस । उ०—पक्षराज यक्षराज श्रेतराज यातुघान । देवता अदेवता नृदेवता जिते जहान ।—केशव (शब्द०) ।

यातुनारी—सं० स्त्री० [सं०] भूतनी । पिशाची । राज्ञसी [को०] ।

यान्त्रिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बौद्धों का एक संप्रदाय ।

यात्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने की क्रिया । सफर । २ प्रयाण । प्रस्थान । ३ दर्शनार्थ देवस्थानों को जाना । तीर्थाटन । ४ उत्सव । ५ निर्वाह । व्यवहार । ६ वग देश में प्रचलित एक प्रकार का अभिनय, जिसमें नाचना और गाना भी रहता है । यह प्रायः रासलीला के ढंग का होता है । ७ यात्रा करनेवालों का दल वा समूह [को०] । ८ मार्ग । राह [को०] । ९ समय बिताना । कालक्षप करना [को०] । १ युद्ध यात्रा । चढाई [को०] ।

यात्रावाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यात्रा + हि० चाल (प्रत्य०)] वह ब्राह्मण या पंडा जो तीर्थाटन करनेवालों को देवदर्शन कराता हो ।

यात्रिक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यात्रा का प्रयोजन । कही जाने का अभिप्राय या उद्देश्य । २ वह जो जीवन धारण करने के लिये उपयुक्त हो । ३ यात्री । पथिक । ४ तीर्थों की यात्रा करनेवाला । तीर्थयात्री [को०] । ५ उत्सव । मेला [को०] । ६ यात्रा की सामग्री । सफर का सामान ।

यात्रिक^२—वि० १ यात्रा संबंधी । यात्रा का । २ जो बहुत दिनों से चला आता हो । रीति के अनुसार 'प्रथानुकूल' ।

यात्री—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यात्रिन्] १ एक स्थान से दूसरे स्थान को जानेवाला । यात्रा करनेवाला । मुसाफिर । २ देवदर्शन या तीर्थाटन के लिये जानेवाला ।

याथातथ्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यथातथ्य होने की भाँव । यथार्थता । ठीकपन ।

याथार्थ्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यथार्थ होने का भाव । यथार्थता ।

याद पति—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यादस् (=जल) + पति] १. समुद्र । २. वरुण ।

याद^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. स्मरण शक्ति । स्मृति । जैसे,—आपकी

याद की मैं प्रशंसा करती हूँ । २ स्मरण करने की क्रिया । जैसे—मैं अभी आपकी याद ही कर रहा था ।

क्रि० प्र०—करना ।—दिधानं ।—पढ़ना ।—रखना ।—रहना ।—होना ।

याद^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यादस्] १ मछली, मगर आदि जलजंतु । २ पानी [को०] । ३ नदी [को०] । ४ शुक्र । वीर्य [को०] । ५ मनोरथ [को०] ।

यादगार—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] २ वह पदार्थ जो किसी की स्मृति के रूप में हो । स्मृतिचिह्न । स्मारक । २ मर्तित । सतान । पुत्र । वेदा [को०] ।

यादगारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह पदार्थ जो किसी की स्मृति में हो । स्मृतिचिह्न । २. दे० 'यादगार' ।

याददाश्त—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ स्मरण शक्ति । स्मृति । जैसे,—आपकी याददाश्त बहुत अच्छी है । २ किसी घटना के स्मरणार्थ लिखा हुआ लेख । स्मरण रखने के लिये लिखी हुई कोई बात ।

यादसपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यादासम्पति] वरुण । याद पति ।

यादसांन्याथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यादसाम्नाथ] दे० 'यादसापति' ।

यादव^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० यादवी] १. यदु के वंशज । युदुवशी, युदुवशी क्षत्रिय । ३ अहोर जात का व्याक्त । ४. श्रीकृष्ण ।

यादव^२—वि० यदुसंबंधी ।

यादवकोश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सस्कृत के एक कोश का नाम जिसे वंजयती कोश भी कहते हैं ।

यादवगिरि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम ।

यादवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ यदुकुल की स्त्री । २ दुर्गा । ३ कुती का एक नाम [को०] ।

यादु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जल । पानी । २ कोई तरल पदार्थ ।

यादुक्षी—वि० [सं०] [वि० स्त्री० यादुक्षी] दे० 'यादुक्ष' [को०] ।

यादुक्षिक—वि० [सं०] [वि० यादुक्षिकी] १ अपन इच्छानुकूल करनेवाला । स्वैच्छाचारी । २ अप्रस्थिति । आकात्मक । ३ स्वतंत्र ।

यादुक्षिक आधि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गिरवी रखी हुई वह चीज जो बिना ऋण चुकाए न लौटाई जा सके ।

यादुक्षी—वि० [सं०] [वि० स्त्री० यादुक्षी] जिस प्रकार का । जैसा ।

यादुक्षीनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'यादुक्षिक' [को०] ।

यादुक्षी—वि० [सं०] १ यदुवंशी । २ यदु संबंधी ।

यान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. गाड़ी, रथ आदि सवारी । वाहन । २. विमान । आकाशयान । ३. शत्रु पर चढाई करना, जो राजाशत्रु के छह गुणों में से एक कहा गया है । ४ गति । गमन । ५. पथ । मार्ग । रास्ता [को०] ।

यान—यानकर = यान 'बनानेवाली । बँडईय । यानपान = पान । जहाज । यानपानक, यानपानिका = छोटा यान । छोटा पान । छोटी नौका । यानभंग = प्रवहेण या पान का टूट जाना ।

पोतभंग । यानमुख = पोत का अगला भाग । गेलही ।
यानयात्रा = समुद्र यात्रा (बीड) ।

यानक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यान । वाहन । सवारी (को०) ।

यानो, याने—अव्य० [अ०] तात्पर्य यह कि । मतलब यह कि ।
अर्थात् ।

यापन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० यापित, याप्य] १ चलाना । वर्तन ।
२ व्यतीत करना । विताना । जैसे, कालयापन । ३ निर्गमन ।
निवटाना । ४ परित्याग । छोड़ना । हटाना । ५ मिटाना ।

यापना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ चलाना । हँकना । २ कालक्षेप ।
दिन काटना । ३ वह धन जो किसी को जीविकानिर्वाह के लिये
दिया जाय । ४ व्यवहार । बर्ताव ।

यापनीय—वि० [सं०] यापन करने के योग्य । याप्य ।

यापित—वि० [सं०] १ वित्तया या व्यतीत किया हुआ । जैसे,—
समय, काल । २ हटाया वा दूर किया हुआ (को०) ।

याप्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] षटा ।

याप्य—वि० [सं०] १. निवनीय । निदित । २ यापन करने के
योग्य । यापनीय । क्षेपणीय । ३ छिपाने के योग्य । गोपनीय ।
आवरणीय । ४ रक्षा करने के योग्य । रक्षणीय ।

याप्य^३—सञ्ज्ञा पुं० बीजक के अनुसार वह रोग जो साध्य न हो, पर
चिकित्सा से प्राणाघातक न होने पावे । ऐसा रोग जो प्रच्छा
तो न हो, पर समय द्वारा बीजक रोगी बहुत दिनों तक
चला चले ।

याप्ता—वि० [फा० याप्तह] पाया हुआ । जिसे मिला हो ।
(समासात् मे प्रयुक्त) जैसे, सित्तवायापता, सजायापना ।

याव्—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] वह धोखा जो डील डील में बहुत बड़ा न
हो । टट्टू ।

याभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मैथुन ।

याम^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ तीन घटे का समय । पहर । २ एक
प्रकार के देवगण । इनका जन्म मार्कण्डेय पुराण के अनुसार
स्वायम्भुव मनु के समय यज्ञ शीर दक्षिणा से हुआ था । ये सख्या
में बारह हैं । ३ काल । समय । ४ नियन्त्रण । समय । रोक
(को०) । ५ जाने का साधन, गाड़ी आदि (को०) । ६. गमन ।
जाना । ७ पथ । मार्ग (को०) । ८ प्रगति (को०) ।

याम^२—वि० [वि० स्त्री० यामी] यम सवधी ।

याम^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यामि] रात । चं—दोक राजत श्यामा
श्याम । ब्रज युवती मडली विराजत देखति सुरगन वाम ।
धन्य धन्य वृदावन को मुख सुरपुर कौने काम । धनि वृष-
मानु सुता धनि मोहन धनि गोपिन को काम । इनकी को दासी
सरि हूँ है धन्य शरद को याम । फंसेहु सूर जनम ब्रज पावै यह
सुख नहि तिहुँ धाम ।—सूर (शब्द०) ।

यामक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुनर्वसु नक्षत्र ।

यामकिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कुलवधु । कुल स्त्री । २. लठके की
स्त्री । पुत्रवधु । ३. बहिन । भगिनी ।

यामघोष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ? मुर्गा । २. वट घटा या घड़ियाल
जिसे समय गृचिन करने के लिये उजाने हैं (को०) ।

यामघोषा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह घटा जो बीच बीच में समय के
गचना देने के लिये बजता हो । घड़ियाल ।

यामनादो—उच्चा पुं० [सं० यमनादिन्] मुर्गा । टुटुटु (को०) ।

यामनाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] समय बतानेवाली घड़ी ।

यामनेमि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दूर ।

यामपाल—उच्चा पुं० [सं०] समय निर्देशण करनेवाला ।

यामभद्र—उच्चा पुं० [सं०] एक प्रकार का पटमदप या चेना (को०) ।

यामल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ? वे री नठके जा एक नाम उत्पन्न हुए
हो । यमज नतन । जोटा । २ एक प्रकार का तत्र प्रथ ।

विशेष—इन तत्र प्रथा में सृष्टि, ज्योतिष, ब्राह्मण, नित्यद्वय,
क्रमरूप, दसभिद, जातिभेद और युगधर्म का परान होता है ।
ये ग्रथ गन्या में छः हैं—यादि यामन, द्रव्य यामन, विष्णु
यामन, रद्र यामन, गणेश यामन और धारिय यामन ।

यामवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रात । निजा ।

यामाता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यामातृ] दे० 'जामाता' ।

यामायन—उच्चा पुं० [सं०] वह जो यम के गोत्र में उत्पन्न हुआ हो ।

यामार्द्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पहर वा घाघा भाग ।

यामि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कुलवधु । कुलस्त्री । २. बहिन । भगिनी ।
३. यामिनी । रात । ४. प्रणिपुराण के अनुसार भर्म की एक
पत्नी का नाम । इससे नागवीथी नामक कन्या उत्पन्न हुई
थी । ५. पुत्री । कन्या । ६. पुत्रवधु । ७. दक्षिण दिशा । ८.
यमवातना (को०) । ९. भरती नामक नक्षत्र (को०) ।

यामिका—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ? पहरवार । पहरपा । चौकीदार । २
समय निर्देशक । घड़ियाली (को०) ।

यामिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रात । रात्रि । २ हृदि । हृदी
(को०) ।

यामित्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'जामित्र' ।

यामित्रवेध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'जामित्रवेध' ।

यामिन, यामिनि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यामिनी] दे० 'यामिनी' ।

यामिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रात । २ हृदी । ३ कश्यप की
एक स्त्री का नाम ।

यौं—यामिनीनाथ, यामिनीपति = चद्रमा ।

यामिनीचर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राक्षस । निशाचर । २ गुग्गुल ।
३. उल्लू पक्षी ।

यामीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चद्रमा ।

यामीरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रात ।

यामुंदायनि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यामुंदायनि] यामुद ऋषि के गोत्र में
उत्पन्न प्रपत्य ।

यामुन'—वि० [सं०] [वि० स्त्री० यामुनी] यमुना नदी सवधी । जैसे,
यामुन जल ।

यामुन'—सज्ञा पुं० १ यमुना के किनारे बसनेवाले मनुष्य । २ एक पर्वत का नाम । ३. महाभारत के अनुसार एक तीर्थ का नाम ४ सुरमा । ध्वज । ५ बृहत्संहिता के अनुसार एक जनपद का नाम । यह जनपद वृत्तिका, रोहिणी और मृगशीर्ष के अधिकार में माना जाता है । ६ एक वैद्वेष्य आचार्य का नाम । यामुनाचार्य । यामुन मुनि ।

विशेष—ये दक्षिण के रगक्षेत्र के रहनेवाले थे और रामानुजाचार्य के पूर्व हुए थे । ये सस्कृत के अच्छे निहान् थे । इनके रचे हुए श्रागम प्रामाण्य सिद्धिग्रन्थ, भगवद्गीता की टीका, भगवद्गीता संग्रह और आत्ममन्दिर स्तोत्र आदि गद्य श्रतक मिलते हैं । कुछ लोग इन्हें रामानुजाचार्य का गुरु बतलाते हैं ।

यामुनेष्टक—सज्ञा पुं० [सं०] सीमा ।

यामेय—सज्ञा पुं० [सं०] १ बहन का लडका । भानजा । २ धर्म की पत्नी यामी के पुत्र का नाम ।

याम्य'—सज्ञा पुं० [सं०] १ चदन । २ णिव । ३ विष्णु । ४. मगस्थ्य मुनि । ५ यमदूत । ६ भरणी नक्षत्र (को०) ।

यान्य'—वि० १ यम सर्वधी । यम का । २ दक्षिण का । दक्षिणीय ।

याम्यदिग्भवा—सज्ञा स्त्री० [सं०] तमालपत्री ।

याम्यद्रुम—सज्ञा पुं० [सं०] सेमल का पेड़ । शाल्मलिद्रुम ।

याम्या—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ दक्षिण दिशा । २ भरणी नक्षत्र ।

याम्यायन—सज्ञा पुं० [सं०] दक्षिणायन ।

याम्योत्तर दिग्गंश—सज्ञा पुं० [सं०] सवाण । दिग्घ्न । (भूगोल, जगत्)

याम्योत्तर रेखा—सज्ञा स्त्री० [सं०] वह कल्पित रेखा जो किसी स्थान से प्रारम्भ होकर सुमेरु और कुमेरु से होती हुई भूगोल के चारों ओर भानी गई हो ।

विशेष—पहले भारतीय ज्योतिषी यह रेखा उज्जयिनी या लका से गई हुई मानते थे । पर अब लोग योरप और अमेरिका आदि के भिन्न भिन्न नगरों से गई हुई मानते हैं । प्राञ्चल बहुधा इस रेखा का मॅट्र इग्लैण्ड का ग्रीनिच नगर माना जाता है ।

यायावर'—सज्ञा पुं० [सं०] १ शश्वमेय का घोडा । २ अरत्कार मुनि । ३ मुनियों के एक गण का नाम । अरत्कार जी इती गण में थे । ४ एक स्थान पर न रहनेवाला साधु । मदा एषर उधर घूमता रहनेवाला सन्ध्याती । २. गाचा । मानना । ६ वह प्राहाण जिसके यहाँ गार्हपत्य अग्नि बराबर रहती हो । नाग्नि प्राहाण ।

यायावर'—वि० सदा एधर उधर घूमना । कदा यहाँ वहाँ यात्रा करनेवाला । पुमत् । जितरा वहाँ स्थित स्थान न हो (ने०) ।

यागी—वि० [सं० यागिन्] [स्त्री० यागिनी] जानेवाला । जो जा रहा हो । गमनशील ।

यार—सज्ञा पुं० [प्रा०] १ मित्र । दोस्त । उ०—(क) बाँसा परदा सोनि के सनमुख लें दीदार । दाम ननेही लादवीं आदि घन का यार ।—फरीर (मन्द०) । (ग) गयो स्वयो कयो इ मुचलि आधिक राति पवारि । हरतु ताप नव घोंग को उर लणि यार वयारि ।—त्रिहारी (मन्द०) । २. किसी स्त्री के अनुचिन गंवध रखनेवाला पुण्य । उपपति । जार । ३. सहायक । साथी । दियायती (ज्ञे०) ।

यारकद—सज्ञा पुं० [तु० यार कद (नगर)] एक प्रकार का बेनूटा जो फानीन में बनाया जाता है ।

यारवाश—वि० [फा०] चार दोस्तों में रहकर आनन्दपूर्ण गमय प्रितानेवाला । रमिक ।

याराना—सज्ञा पुं० [फा० यारानाह्] १ यार होने का भाव । मित्रता । मैत्री । २ स्त्री और पुरुष का अनुचिन सम्बन्ध या प्रेम भाव ।

क्रि० प्र०—करना ।—गटना ।—रखना ।—होना ।

याराना—वि० मित्र का सा । मित्रता का । जैसे, याराना बर्ताव ।

यारी—सज्ञा स्त्री० [फा०] १ मैत्री । मित्रता । उ०—यारि पैरि के घाय पै जरति न मोरे मग । रूप रोसनी पै रूप नेरी नैन पतग ।—रसनिधि (मन्द०) । २ स्त्री और पुरुष का अनुचित प्रेम या सम्बन्ध ।

क्रि० प्र०—गँटना ।—जोड़ना ।

यार्कान—सज्ञा पुं० [सं०] यर्क श्चरि के गोत्र में उत्पन्न पुण्य या मपरय ।

याल—सज्ञा स्त्री० [तु०] घोड़े की गर्दन के ऊपर के लंबे घात । थयाल । बाग ।

याब'—सज्ञा पुं० [सं०] १. बी का सत्तू । २ साख । ३. महावर ।

याव'—वि० १ बव से बनाया हुआ । जीवा । २ यव सम्बन्धी । यव का ।

यावफ—सज्ञा पुं० [सं०] १ बी । २ बव का बी का सत्तू । ३ यह फस्तु ओ बी से बनाई गई हो । ४. कुन्नाय । दोरा पान । ५ साठी पान । ६ उदर । माप । ७ साख । ८. महावर ।

यावत्—वि० [सं०] १ जितना ।

विशेष—यह तावत् के साथ धोर लगते पहले जाता है ।

२ अब । गुन ।

यावत्—क्रि० वि० १. अब तक । २. जहाँ तक ।

यावन'—सज्ञा पुं० [सं०] सोषान ।

यावन'—वि० [वि० स्त्री० यावनी] परत सम्बन्धी । यव का । जैसे, यावनी भाषा । यावनी देश ।

यावनफ—सज्ञा पुं० [सं०] ताव यवी ; रत्न एवम् ।

यावनवत्क—सज्ञा पुं० [सं०] सिन्धु ।

यावनालि—सज्ञा पुं० [सं०] दुपार । मरगा ।

यावनाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मक्के से बनाई हुई चीनी। ज्वार की शक्कर।

यावनी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] करकशालि नाम की ईख। रसाल।

यावनी^२—वि० स्त्री० यवन मक्की। जैसे, यावनी भापा।

यावर—वि० [फा०] सहायक। मददगार।

यावरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] यावर का भाव या धर्म। मित्रता। मैत्री।

यावशूक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यवद्वार। जवाखार।

यावस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ घाम, ठण आदि का पूला। जूरा। जौरा। २ भूना। न्यार [को०]।

यावसिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घसियारा। घास काटनेवाला [को०]।

यावा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यावन्] १. अश्वारोही। घुडसवार। २ उपप्लवी। आक्रामक [को०]।

यावा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [तु० यावह्] १ अनर्गल। वेहूदा। २ अप्राप्य [को०]।

यावास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यवास से बनाया हुआ मद्य। जवासे की शराव।

याविक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मक्का नामक अन्न।

याविहोत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ विशेष [को०]।

यावी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ अखिनी। २ यवतित्ता नाम की लता।

याव्टीक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाठी बाँधनेवाला योद्धा। लठवध। लठैत।

यास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल घमासा।

यासमन, यासमीन, यासमून—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] चमेली। नवमल्लिका।

यासा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कौयल। २ मैना।

यासु—सर्व० [सं० यस्य] दे० 'जासु'।

यारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यस्क ऋषि के गोत्र मे उत्पन्न पुरुष। २ वैदिक 'निरुक्त' नाम से प्रसिद्ध वेद सर्वधी निर्वचनपरक ग्रंथ के रचयिता एक प्रसिद्ध ऋषि का नाम। निघट्ट के टीकाकार।

यास्कायनि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यास्क के गोत्र मे उत्पन्न पुरुष।

याहू^१—सर्व० [हिं० या + हिं] इसको। हमे। उ०—जो यह मेरो देरी कहियत ताको नाम पढायो। देहू गिराय याहि पर्वत तें ज्ञान गतजीव करायो।—मुर (शब्द०)।

यियक्षमाण, यियक्षु—वि० [सं०] यज्ञ करने का अभिलाषी [को०]।

यियप्सु—वि० [सं०] भोग का इच्छुक। भोगी [को०]।

यियासा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जाने की इच्छा [को०]।

यीशु—सञ्ज्ञा पुं० [लै० इंसुस, हिं० जेशुशा, जशुश्या, अं० जेसस, तुल० सं० ईश] ईशमसीह।

युजान—सञ्ज्ञा पुं० [सं० युजान] १ मारथी। २ विप्र। ३ दो प्रकार के योगियों मे से वह योगी जो अभ्यास कर रहा हो, पर मुक्त न हुआ हो। कहते हैं कि ऐसा योगी समाधि लगाकर सब बातें जान लेता है।

युजानक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० युजानक] युजान नामक योगी। दे० 'युजान'।

युक्त^१—वि० [सं०] १ एक साथ किया हुआ। जुड़ा हुआ। किसी के साथ मिला हुआ। २ मिलित। समिलित। ३ नियुक्त। मुकरर। ४ आसक्त। ५ सहित। सयुक्त। साथ। ६ समन। पूर्ण। ७ उचित। ठीक। वाजिब। सगत। मुनासिब।

यौ०—युक्तकर्म = किसी कार्य के लिये नियुक्त। यु० चेता = योग म्यासी। योगयुक्त। युक्तचेष्ट = उचित व्यवहार करनेवाला। शिष्ट। युक्तदंड = न्यायपूर्ण या उचित दंड देनेवाला। युक्त मना = दत्तचित। सावधान मन से। युक्तरथ। युक्तरसा। युक्तरूप।

युक्त^२—सञ्ज्ञा पुं० १ वह योगी जिसने योग का अभ्यास कर लिया हो।

विशेष—ऐसे योगी को, जो ज्ञानविज्ञान से परितृप्त, कूटस्थ, जितेंद्रिय हो और जो मिट्टी और सोने को तुल्य जानता हो, युक्त कहा गया है।

२ रैवत मनु के पुत्र का नाम। ३ चार हाथ का एक मान।

युक्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जोड़ा। युग्म [को०]।

युक्तमना—वि० [सं० युक्तमनम्] सावधान। दत्तचित्त।

युक्तरथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक अपिघयोग जिसका प्रयोग वस्तुकरण मे होता है। भावप्रकाश मे रेंड की जड़ के क्वाथ, मधु, तैल, सेंधा नमक, बच और पिप्पली के योग को युक्तरथ कहा है।

युक्तरसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गधरासना। गधनाकुली। नाकुली कद। २ रासा। रासन।

युक्तरूप—वि० [सं०] उचित। उपयुक्त। योग्य [को०]।

युक्तवादो—वि० [सं० युक्तवादिन्] उचितवक्ता। ठीक बात कहनेवाला।

युक्तश्रेयसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गध रासना। नाकुली कद।

युक्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एलापर्णी। २ एक वृत्त का नाम जिनमे द्रो नगण और एक मगण होता है।

युक्ताक्षर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सयुक्ताक्षर। सयुक्त वर्ण।

युक्तायस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक अस्त्र का नाम जो लोहे का होता था।

युक्तार्थ—वि० [सं०] ज्ञानी।

युक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ उपाय। दृग। तरकीब। २ कौशल। चातुरी। ३ चाल। रीति। प्रथा। ४ न्याय। नीति। ५ अनुमान। अदाजा। ६ उपपत्ति। हेतु। कारण। ७ तर्क। ऊहा। ८ उचित विचार। ठीक तर्क। जैसे, युक्तियुक्त वात। ९ योग। मिलन। १० एक प्रलकार का नाम जिसमे अपने मर्म को छिपाने के लिये दूसरे को किसी क्रिया या युक्ति द्वारा वचित करने का वर्णन होता है। जमे,— लिखत रही पिय चित्र तहँ आवत लिखि सखि प्रान। चतुर तिया तेहि कर लिखे फूलन के धनुवान। ११ तेषव के अतुसार उक्ति का एक भेद जिसे स्वभावोक्ति भी कहते हैं।

युक्तिकर—वि० [सं०] जो तर्क के अतुसार ठीक हो। उचित विचारपूर्ण। युक्तिसगत। युक्तियुक्त।

युक्ति — क्रि० वि० [सं०] १ चतुराई के साथ । दक्षता के साथ ।
२. उचित रूप से ।

युक्तिपूर्ण — वि० [सं०] दे० 'युक्तिकर' ।

युक्तिमान् — वि० [सं० युक्तिमत्] १. कुशल । प्रबुद्ध । २. तर्कित ।
विचारित । प्रमाणित । ३. मिलित [को०] ।

युक्तियुक्त — वि० [सं०] उपयुक्त तर्क के अनुकूल । युक्तिसंगत । ठीक ।
बाजिब । जैसे,—आपकी सभी बातें बहुत ही युक्तियुक्त
होती हैं ।

युक्तिसंगत — वि० [सं० युक्ति सङ्गत] दे० 'युक्तियुक्त' ।

युगाधर — सञ्ज्ञा पुं० [सं० युगन्धर] १ कूबर । हरस । २ गाडी का
वम । ३ एक पर्वत का नाम । ४ हरिवंश के अनुसार तृष्णि के
पुत्र और सात्यकि के पौत्र का नाम । ५ अस्त्र के प्रयोग का
एक मन्त्र । योगधर (को०) । ६ वह जो युग या जुआ का
धारण करे (को०) ।

युग^१ — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एकत्र दो वस्तुएँ । जोड़ा । युगम । २. जुआ ।
जुआठा । ३ ऋद्धि और वृद्धि नामक दो ओपधियाँ । ४ पुरुष ।
पुशत । पीढी । ५ पाँसे के खेल की वे गोल गोल गोटियाँ, जो
विमात पर चली जाती हैं । ६ पाँसे के खेल की वे दो गोटियाँ
जो किसी प्रकार एक घर में साथ आ बैठती हैं । ७ पाँच वर्ष
का वह काल जिसमें वृहस्पति एक राशि में स्थित रहता है ।
८ समय । काल । जैसे, पूर्व युग । ९ पुराणानुसार काल का
एक दीर्घ परिमाण । ये सख्या में चार माने गए हैं, जिनके
नाम सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग है । दे० 'सत्ययुग'
आदि । १०. चार की संख्या का वाचक शब्द (कही कही यह
१२ का भी अर्थ देता है) । ११ चार हस्त की एक माप (को०) ।

मुहा०—युग युग = बहुत दिनों तक । अनंत काल तक । जैसे, युग
युग जीओ ।

यौ०—युगकीलक । युगलक्ष्य = युग का अंत या समाप्ति । युगचर्म ।
युगचेतना = युग में होनेवाला जागरण या युगविशेष की
प्रवृत्ति । युगधर्म = समय के अनुसार चाल या व्यवहार । युगपत्र ।
युगपत्रिका । युगपुरुष । युगमानव । युगप्रतीक, आदि ।

युग^२ — वि० जो गिनती में दो हो ।

युगकीलक — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह लकड़ी या खूँटा जो वम और जुए के
मिले छेदों में डाला जाता है । सैल । सैला ।

युगचर्म — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जुआ या जुआठ में लगनेवाला चमड़ा [को०] ।

युगति^३ — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० युक्ति] 'युक्ति' ।

युगनद्ध — वि० [सं०] १ नर और नारी दोनों के रूपों से समन्वित ।
स्त्रीपुरुषमय । २ स्त्री पुरुष के सहवास की मुद्राओंवाला (चित्र या
मूर्ति जो वज्रयानी वीदों में प्रचलित था) । स्त्री पुरुष के आलि-
गनग्द जोड़ेवाला । उ०—शक्तियों सहित देवताओं के युगनद्ध'
स्वरूप की भावना चली और उनकी नग्न मूर्तियाँ सहवास की
अनेक अश्लील मुद्राओं में बनने लगी, जो कहीं कहीं अब भी
मिलती हैं ।—इतिहास, पृ० ११ ।

युगाप — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गधर्व ।

युगपत् — अव्य० [सं०] एक ही समय में । एक ही क्षण में । साथ
साथ । जैसे,—मन की दो क्रियाएँ युगपत् नहीं हो सकती ।

युगपत्र — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कोविदार । कचनार । २ वह वृक्ष
जिसमें दो दो पत्तियाँ आमने सामने निकलती हों । युग्मपर्ण ।
युग्मपत्र । ३ पहाड़ी आमनूस ।

युगपत्रिका — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शीशम का पेड़ ।

युगपुरुष — सञ्ज्ञा पुं० [सं० युग + पुरुष] समाज या राष्ट्र को जीर्ण
करनेवाली मान्यताओं को समाप्त या सस्कृत करके नवीन मान्य-
ताओं को स्थापित करनेवाला महापुरुष । नए युग का निर्माण
करनेवाला पुरुष ।

युगप्रतीक — सञ्ज्ञा पुं० [सं० युग + प्रतीक] युग का प्रतिनिधि । युगपुरुष ।

युगचाहु — वि० [सं०] जिसके हाथ बहुत लंबे हों । दीर्घबाहु ।

युगम^४ — सञ्ज्ञा पुं० [सं० युगम] दे० 'युगम' ।

युगल — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वे जो एक साथ दो हो । युगम । जोड़ा ।
जैसे, युगल छवि ।

युगलक — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह कुलक (पद्य) जिसमें दो श्लोको
या पद्यों का एक साथ मिलकर अन्वय हो । २. युगम ।
जोड़ा (को०) ।

युगलाख्य — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बबूल का पेड़ ।

युगात् — सञ्ज्ञा पुं० [सं० युगान्त] १ प्रलय । २ युग का अन्तिम
समय ।

युगातक — सञ्ज्ञा पुं० [सं० युगान्तक] १ प्रलयकाल । २. प्रलय ।

युगातर — सञ्ज्ञा पुं० [सं० युगान्तर] १ दूसरा युग । २. दूसरा समय
और जमाना ।

मुहा०—युगातर उपस्थित करना = समय पलट देना । किसी
पुरानी प्रथा को हटाकर उसके स्थान पर नई प्रथा (या
उसका समय) लाना ।

युगाशक^१ — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वत्सर । वर्ष ।

युगाशक^२ — वि० युग का विभाजक ।

युगाक्षिगधा — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० युगाक्षिगन्धा] विधारा ।

युगादि^१ — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सृष्टि का प्रारंभ । २. चार युगों में
प्रथम, सत्य युग ।

युगादि^२ — वि० युग के आरंभ का । पुराना ।

युगादि^३ — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'युगाद्या' ।

युगादिकृत् — सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

युगाद्या — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह तिथि जिससे युग का आरंभ हुआ हो ।

विशेष—सबत्सर में ऐसी तिथियाँ चार हैं, जिनमें से प्रत्येक से
एक युग का आरंभ माना जाता है । ये श्रेष्ठ और शुभ मानी
जाती हैं, और इस प्रकार हैं—(१) वैशाख शुक्ल तृतीया,
सत्ययुग के आरंभ की तिथि, (२) कार्तिक शुक्ल नवमी,
त्रेतायुग के आरंभ की तिथि, (३) भाद्रकृष्ण त्रयोदशी द्वापर
के आरंभ की तिथि, और (४) पूस की अमावस्या, कलियुग
के आरंभ की तिथि ।

युगाध्यक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्रजापति का नाम । २ शिव [को०] ।
युगावतार—वि० [सं०] युग का सर्वश्रेष्ठ महापुरुष । अवतारी महा-
पुरुष ।

युगेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बृहस्पति के साठ वर्ष के राशिचक्र में गति
के अनुसार पाँच पाँच वर्ष के युगों के अधिपति ।

विशेष—यह चक्र उस समय से प्रारंभ होता है, जब बृहस्पति
माघ मास में धनिष्ठा नक्षत्र के प्रथमांश में उदय होता है ।
बृहस्पति के साठ वर्ष के काल में पाँच पाँच वर्ष के बारह युग
होते हैं, जिनके अधिपति विष्णु, सुरेज्य, बलभिव, अग्नि,
त्वष्टा, उत्तर प्रोष्ठपद, पितृगण, विश्व, सोम शक्रानिल,
अश्वि और भग है । प्रत्येक युग के पाँच वर्षों के युग क्रमशः
सवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और इद्वत्सर
कहलाते हैं ।

युगोरस्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सेना के सनिवेश का एक भेद ।

युग्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जोड़ा । युग । २ अन्योन्याश्रित दो वस्तुएँ
या बातें । द्वंद्व । ३ मिथुन राशि । ४ कुलक का एक भेद
जिसे युगलक भी कहते हैं । दे० 'युगलक' ।

युग्मकटका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० युग्मकण्टका] बैर ।

युग्मक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ युगलक । २. युग्म । जोड़ा ।

युग्मज्ज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक साव उत्पन्न दो बच्चे । यमल । यमज ।

युग्मधर्मा—वि० [सं० युग्मधर्मन्] १, जो स्वभावतः मिलता हो ।
मिलनशील । २. मिथुनधर्मा ।

युग्मपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कचनार का पेड़ । २. भोजपत्र का पेड़ ।
३ सतिवन । छतिवन । छितवन । छाछी । ४. वह पेड़ जिसकी
शाखा में दो दो पत्ते एक साथ होते हैं । युग्मपर्ण ।

युग्मपर्णा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लाल कचनार । २. सतिवन । छतिवन ।
३. दे० 'युग्मपत्र' ।

युग्मपर्णा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वृश्चिकाली ।

युग्मफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वृश्चिकाली ।

युग्मफलिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुधिया । दुद्धी । गुदनी ।

युग्मविपुला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक वृत्ति का नाम [को०] ।

युग्मशुक्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आँख की पुतली पर पड़े हुए सफेद धब्बे
[को०] ।

युग्माजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० युग्माञ्जन] स्रोताजन और सौवीराजन
इन दोनों का समूह ।

युग्य^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह गाड़ी जिसमें दो घोड़े या बँल जोते
जाते हैं । जोड़ी । २. वे दो पशु जो एक साथ गाड़ी में जोते
जाते हैं । जोड़ी ।

युग्य^२—वि० १. जो जोता जाने योग्य हो । २. जो जोता जानेवाला
हो । ३ खींचा हुआ । बहन किया हुआ (रथ आदि) ।
जैसे, अश्वयुग्य रथ = घोड़े द्वारा खींचा हुआ रथ [को०] ।

युग्यवाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जोड़ी हाँकनेवाला । २ गाड़ीवान ।
सारथी ।

युग्य^३—वि० [सं०] १ मिला हुआ । संयुक्त । २ मिलाने योग्य ।
३ उचित । उपयुक्त । ठीक [को०] ।

युज्य^२—सञ्ज्ञा पुं० १ मयोग । मिलाप । २ एक प्रकार का नाम ।
३ वंघुवाघन । मगोत्र । मिरादर [को०] ।

युत^१—वि० [सं०] १ युक्त । सहित । २ जो अलग न हो । मिला
हुआ । मिलित । ३ अलग किया हुआ [को०] ।

युत^२—सञ्ज्ञा पुं० चार हाथ की एक नाप ।

युतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मशय । सप्तेह । २ युग । जोड़ा । ३
अचल । दामन । ४. प्राचीन काल का एक प्रकार का वस्त्र जो
पहनने के काम में आता था । ५. सूय के दोनों ओर के किनारे
जो ऊपर उठे हुए होते हैं और पीछे के उठे हुए भाग से जोड़कर
बाँधे रहते हैं । ६ मंत्रीकरण । ७ नश्य ।

युतवेध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक योग का नाम ।

विशेष—यह योग उम समय होता है, जब चंद्रमा पापग्रह से सातवें
स्थान में होता है या पापग्रह के साथ होता है । ऐसे योग के
समय विवाहादि शुभ कर्मों का फलित ज्योतिष में निषेध है ।

युति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ योग । मिलन । मिलाप । २ रस्ती,
जिससे घोड़े या बँल गाड़ी में बाँधे जाते हैं । ३ जोती । नाषा,
जिससे जुमाठा और हरिस को एक में बाँधते हैं ।

युद्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लड़ाई । संग्राम । रण ।

विशेष—प्राचीन काल में युद्ध के लिये रथ, हाथी, घोड़े और पदाति
ये चार सेना के प्रधान अंग थे और इसी कारण सेना को
चतुरगिणी कहते थे । इन चारों के सत्याभेद के कारण
पत्ति, गुल्म, गण आदि अनेक भेद और उनके सनिवेशभेद
से शूची, श्येन, मकरादि अनेक व्यूह थे । सैनिकों को शिक्षा
सकेतध्वनियों से दी जाती थी, जिसे सुनकर सैनिकगण समी-
लन, प्रसरण प्रभ्रमण, भाकुचन, यान, प्रयाण, अपयान आदि
अनेक चेष्टाएँ करते थे । संग्राम के दो भेद थे—एक द्वंद्व और
दूसरा निर्द्वंद्व । जिस संग्राम में कृत्रिम या अकृत्रिम युग में
रहकर शत्रु से युद्ध करते थे, उसे 'द्वंद्व युद्ध' कहते थे । पर जब
दुर्ग से बाहर होकर आमने सामने खुले मैदान में लड़ते थे, तब
उसे 'निर्द्वंद्व युद्ध' कहते थे । निर्द्वंद्व युद्ध में समदेश में रथयुद्ध,
विपमदेश में हस्तियुद्ध, मरुभूमि में अश्वयुद्ध, पर्वतादि में
पत्तियुद्ध और जल में नौकायुद्ध किया जाता था । युद्ध के
सामान्य नियम ये थे—(१) युद्ध उस अवस्था में किया जाता
था, जब युद्ध से जीने की आशा और न युद्ध करने में नाश ध्रुव
हो । (२) राजा और युद्धशास्त्र के मर्मज्ञ पहिलों को युद्धक्षेत्र
में नहीं जाने देते थे । उनसे यथासमय युद्धनीति का केवल
परामर्श और मंत्र लिया जाता था । (३) रथहीन, अश्वहीन,
गजहीन और शस्त्रहीन पर प्रहार नहीं होता था । (४) बाल,
वृद्ध, नपुंसक और अव्याहत पर तथा शांति की पताका उठाने-
वाले के ऊपर शस्त्रास्त्र नहीं चलाया जाता था । (५) मयभीत,
शरणप्राप्त, युद्ध से विमुख और विगत पर भी आघात नहीं
किया जाता था । (६) संग्राम में मारनेवाले को ब्रह्महत्यादि
दोष नहीं लगते थे । (७) लड़ाई से भागनेवाला बड़ा पातकी

माना जाता था। ऐसे पातकी की शुद्धि तब तक नहीं होती थी, जबतक कि वह फिर युद्ध में जाकर शूरता न दिखलावे।

क्रि० प्र०—छिड़ना।—छेड़ना।—ठनना।—मचनना।—मचाना।

मुहा०—युद्ध मोड़ना = लड़ाई ठानना। उ०—कुँअर तन श्याम मानो काम है दूसरो, सपन में लिखि ऊखा लुभाई। मित्ररेखा सकल जगत के नृपन की, छिनिक में मुरति तक लिखि देखाई। निरखि यदुवश का रहस मन में भयो, देखि अनिरुद्ध युद्ध माँह्यो। सूर प्रभु ठटी ज्यो भयो चाहै सो त्यो फाँसि करि कुँअर अनिरुद्ध वाँह्यो।—सूर (शब्द०)।

यौ०—युद्धकारी = लडाकू। युद्धकाल = लडाई का समय। युद्धक्षेत्र = लडाई का मैदान। युद्धगाधर्व = युद्ध का गीत। मारू राग। युद्धतत्र = सैन्यविज्ञान। युद्धध्वनि = लडाई का शोर-गुल। युद्धपोत = लडाई के काम आनेवाला जहाज। युद्धभू, युद्धभूमि = लडाई का मैदान। युद्धमार्ग = लडाई की चाल। युद्धविद्या = युद्धशास्त्र। युद्ध का विज्ञान। युद्धशास्त्र = वह शास्त्र जिसमें युद्ध के सिद्धांत हैं।

युद्धक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ युद्ध करनेवाला। योद्धा। २ युद्ध। ३. युद्ध के काम आनेवाला विमान आदि।

युद्धप्राप्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह पुरुष जो सग्नम में पकड़ा गया हो। विशेष—यह दास के वारह भेदों में से एक है और ध्वजाहत भी कहलाता है।

युद्धमय—वि० [सं०] १ युद्धसवधी। २ रणप्रिय। युद्धप्रिय।

युद्धमन्त्री—सञ्ज्ञा पुं० [सं० युद्धमन्त्रिन्] युद्धविभाग या युद्धकार्य का सचालक मन्त्री [को०]।

युद्धमुष्टि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] उग्रसेन के एक पुत्र का नाम।

युद्धरग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० युद्धरङ्ग] १. कार्तिकेय। स्कन्द। २ युद्ध-स्थल। रणभूमि। लडाई का मैदान।

युद्धवीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ याद्धा। २ वीर रस वह आलवन जिसमें युद्ध की वीरता हो। ३ वीर रस का एक भेद।

युद्धशाली—वि० [सं० युद्धशालिन्] अजस्वी। वीर [को०]।

युद्धसार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] षोडा।

युद्धाचार्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो दूसरो को युद्धविद्या की शिक्षा देता हो। युद्ध सिखलानेवाला।

युद्धाजि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अगिरा के गोत्र में उत्पन्न एक ऋषि का नाम।

युद्धावसान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लडाईवदी। युद्धविराम [को०]।

युद्धावहारिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] युद्ध में छीना या लूटा हुआ माल [को०]।

युद्धोन्मत्त—वि० [सं०] १ युद्ध में लीन। लडाका। २. जो युद्ध के लिये उतावला हो रहा हो।

युद्धोन्मत्त—सञ्ज्ञा पुं० रामायण के अनुसार एक राज्ञ का नाम। इसका दूसरा नाम महोदर था। वह रावण का भाई था और इसे नील नामक वानर ने मारा था।

युद्धोपकरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लडाई में काम आनेवाली सामग्री। युध्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] युद्ध। लडाई।

युधाश्रौष्टि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक ऋषि का नाम।

युधाजि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'युद्धाजि'।

युधाजित्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ केकयराज के पुत्र का नाम। यह भरत का मामा था। २. कृष्ण के एक पुत्र का नाम। ३. क्रोण्डु नामक राजा के पुत्र का नाम।

युधान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ क्षत्रिय। २ रिपु। शत्रु। दुश्मन।

युधामन्यु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक राजा का नाम जो महाभारत युद्ध में पांडवों की ओर से लडा था।

युधासार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नद राजा का एक नाम।

युधिक—वि० [सं०] योद्धा।

युधिष्ठिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पाँच पांडवों में सबसे बड़े का नाम जो कुंती से उत्पन्न धर्म के पुत्र थे और पांडु के क्षत्रज पुत्र थे।

विशेष—ये सत्यवादी और धर्मपरायण थे; पर इन्हें जूए की लत थी, जिसके कारण यह अपना राज्य, भाइयों और स्वयं अपने आपको जूए में हार गए थे। महाभारत के सग्नम के अनंतर ये हस्तिनापुर के राजसिंहासन पर बैठे थे। महाभारत के अनुसार अपनी धर्मपरायणता के कारण ये हिमालय होकर सदेह स्वर्ग गए थे। ये आजन्म सत्य का पालन करते रहे। कुरुक्षेत्र के युद्ध में कृष्ण ने इनसे यह असत्य बात कहलानी चाही कि 'अश्वत्थामा मारा गया'। इस कथन से द्रोण की मृत्यु निश्चित थी। इन्होंने बहुत आगा पीछा किया, पर अंत में इन्हें इतना कहना पडा—'अश्वत्थामा मारा गया, न जाने हाथी या मनुष्य'। यह पिछला वाक्य इन्होंने कुछ धीरे से कहा था। इनके जीवन भर में सत्य के अपलाप का केवल यही एक उदाहरण मिलता है।

युध्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सग्नम। युद्ध। २ घनुप। ३ वाण। ४ अश्व शस्त्र। ५ योद्धा। ६ धरम।

युध्य—वि० [सं०] जिसके साथ युद्ध किया जा सके।

युनिवर्सिटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'यूनिवर्सिटी'।

युपित—वि० [सं०] १ हटाया हुआ। अपवारित। निवारित। २ दुःखित। सताया हुआ। ३ नष्ट किया हुआ। उच्छेदित [को०]।

युयु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] षोडा।

युयुक्खुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का छोटा वाघ।

युयुत्तमान—वि० [सं०] मिलन या सयोग चाहनेवाला। २ ईश्वर में लीन होने की कामना रखनेवाला।

युयुत्सा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ युद्ध करने की इच्छा। लड़ने की इच्छा। २. शत्रुता। विरोध।

युयुत्सु—वि० [सं०] लड़ने की इच्छा रखनेवाला। जो लड़ना चाहता हो।

युयुत्सु—सञ्ज्ञा पुं० घृतराष्ट्र के एक पुत्र का नाम।

युयुधान—सज्ञा पुं [सं] १ इद्र । २ क्षत्रिय । ३ योद्धा । ४ सात्यकी का एक नाम, जो कुरुक्षेत्र के युद्ध में पांडवों की ओर ने लड़े थे ।

युरेशियन—सज्ञा [अ० युरोप+एशिया] वह जिसके माता पिता में ने कोई एक युरोप का और दूसरा एशिया का, विशेषतः भारत-वर्ष का निवासी हो ।

युरोप—सज्ञा पुं [अं०] पूर्वी गोलार्ध के तीन महाद्वीपों में से सब से छोटा महाद्वीप ।

विशेष—यह महाद्वीप एशिया के पश्चिम में काकेशस और यूराल पर्वतों के उस पार से आरंभ होता है । इसके उत्तर में आर्कटिक समुद्र, पश्चिम में एटलांटिक महासागर, दक्षिण में भूमध्य सागर और कृष्ण सागर तथा पूर्व में काकेशस और यूराल पर्वत पडता है । यह महाप्रदेश प्रायः २४०० मील चौड़ा और ३४०० मील लंबा है । एक प्रकार से यह एशिया का अंग और बहुत बड़ा प्रायद्वीप ही है । फ्रांस, जर्मनी, रूस, आस्ट्रिया, पुर्तगाल, स्पेन, इटली, यूनान आदि इसके प्रसिद्ध देश हैं ।

युरोपियन—वि० [अं०] युरोप का । युरोप सवधी । जन्मे, युरोपियन सभ्यता, युरोपियन साहित्य ।

युरोपियन—सज्ञा पुं युरोप महाद्वीप के किसी देश का निवासी ।

युवक—सज्ञा पुं [सं०] सोलह वर्ष से लेकर पच्चीस या तीस या पैंतीस वर्ष तक की अवस्थावाला मनुष्य । जवान । युवा ।

युवगंड—सज्ञा पुं [सं० युवगण्ड] मुहाँसा ।

युवति, युवती—वि० स्त्री० [सं०] प्राप्त यौवना । जवान (स्त्री) ।

युवति, युवती—सज्ञा स्त्री० १ जवान स्त्री । २ प्रियगु । ३ सोनखुही । ४ हलदी । ५ कन्या राशि (स्त्री०) ।

युवतीष्टा—सज्ञा स्त्री० [सं०] स्वर्णयुधिका । सोनखुही ।

युवनाश्व—सज्ञा पुं [सं०] १ एक मूर्खवर्णी राजा का नाम जो प्रसेनजित् का पुत्र था । प्रसिद्ध माघाता इसी का पुत्र था । २ रामायण के अनुसार द्युधुमार के पुत्र का नाम ।

युवन्ध—वि० [सं०] जवान ।

युवराई(पु)°—सज्ञा स्त्री० [हिं० युवराज] युवराज का पद ।

युवराई°—सज्ञा पुं दे० 'युवराज' ।

युवराज—सज्ञा पुं [सं०] [स्त्री० युवराज्ञी] १ राजा का वह राजकुमार जो उसके राज्य का उत्तराधिकारी हो । राजा का वह सबसे बड़ा लड़का जिसे आगे चलकर राज्य मिलनेवाला हो । २ एक भावी बुद्ध का नाम (स्त्री०) ।

युवराजत्व—सज्ञा पुं [सं०] युवराज का भाव या धर्म । यौवराज्य ।

युवराजी—सज्ञा स्त्री० [सं० युवराज + ई (प्रत्यय)] युवराज का पद । यौवराज्य । उ०—जिनहि देखि दशरथ नृप राजी । देन विचारत है युवराजी ।—पद्माकर (शब्द०) ।

युवा—वि० [सं० युवद्] [वि० स्त्री० युवती] जिसकी अवस्था मोलह ने लेकर पैतृक वर्ष के अंदर हो । जवान । यौवनावस्था प्राप्त ।

युवान, युवानव—वि० [सं०] जवान । युवक । तरुण (स्त्री०) ।

युवानपिडिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] मुहाँसा ।

यूँ°—अव्य० [सं० एवमेव] दे० 'यो' ।

यू—सज्ञा स्त्री० [सं०] पकी हुई दाल का पानी । जूस ।

यूक—सज्ञा पुं [सं०] जू नामक कीड़े जो बाल या कपड़ों में पड जाते हैं । ढील । चींलर ।

यूका—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार का परिमाण जो एक यव का आठवाँ भाग और एक लिङ्गा का अठगुना होता है । २ जू नाम का कीड़ा जो सिर के वालों में होता है । विशेष दे० 'जू' । ३ खटमल । ४ अजवायन । ५ गूलर ।

यूगधर—सज्ञा पुं [सं०] पजाव के एक प्राचीन नगर का नाम जिसका वर्णन महाभारत में आया है । आजकल इसे 'धुरंधर' कहते हैं ।

यूत—सज्ञा पुं [सं० यूति] मिश्रण । मिलावट । मेल । उ०—विवि विवि प्रीति रहसि रस रीति की राग रागिनी के यूत बाढे ।—स्वा० हरिदास (शब्द०) ।

यूति—सज्ञा स्त्री० [सं०] मिलाने की क्रिया । मिश्रण । मेल ।

यूथ—सज्ञा पुं [सं०] १ एक ही जाति या वर्ग के अनेक जीवों का समूह । झुंड । गरोह । जैसे, गजयूथ । २ दल । सेना । फौज ।

यूथक—सज्ञा पुं [सं०] दे० 'यूथ' (स्त्री०) ।

यूथग—सज्ञा पुं [सं०] चातुप मन्वतर के एक प्रकार के देवता ।

यूथचारी—वि० [सं० यूथचारिन्] झुंड में चलनेवाला । जैसे बदर, मृग आदि ।

यूथनाथ—सज्ञा पुं [सं०] १ यूथ का स्वामी । सरदार । २ सेनापति । सेनाव्यक्त । दलपति ।

यूथप—सज्ञा पुं [सं०] १ सरदार । २ सेनापति । ३ जंगली हाथियों का सरदार ।

यूथपति—सज्ञा पुं [सं०] सेनानायक । सेनापति ।

यूथपाल—सज्ञा पुं [सं०] दे० 'यूथपति' ।

यूथिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] जूही नाम का फूल और उमका पौधा । उ०—सित अरु पीत यूथिका वेनी यूथी विविध वनाय । रच्यो भाल निज तिलक मनोहर अंजन नयन सुहाय ।—सूर (शब्द०) ।

यूथी—सज्ञा स्त्री० [सं०] जूही का पौधा या फूल । यूथिका ।

यूथक—सज्ञा पुं [?] गरी की खली ।

यूनाइटेड—वि० [अ०] मिला हुआ । सयुक्त । जैसे, यूनाइटेड स्टेट्स (अमेरिका), यूनाइटेड प्रोविसेज् (सयुक्तदेश आगरा व अवध) ।

यूनाइटेड किंगडम—सज्ञा पुं [अं०] इंग्लैंड, स्कॉटलैंड और आयरलैंड के सयुक्त राज्य ।

यूनाइटेड स्टेट्स—सज्ञा पुं [अं०] अनेक छोटे छोटे राज्यों का एक बड़ा सयुक्त राज्य । जैसे,—यूनाइटेड स्टेट्स आफ अमेरिका ।

यूनान—सज्ञा पुं [ग्रीक आयोनिथा] एशिया के सब से अधिक पास पडनेवाला युरोप का एक प्रदेश ।

विशेष—प्राचीन काल में यह प्रदेश अपनी सभ्यता, शिल्पकला,

साहित्य, दर्शन इत्यादि के लिये जगत में प्रसिद्ध था। ध्रायोनिया द्वीप इसी देश के अतर्गत था, जिसके निवासियों का आना जाना एशिया के शाम, फारस आदि देशों में बहुत था, इसी से सारे देश को ही यूनान कहने लगे थे। भारतीयों का यवन शब्द यूनान देशवासियों का ही सूचक है। सिकंदर इसी देश का बादशाह था।

यूनानी^१—वि० [फा० यूनान + ई (प्रत्य०)] यूनान देश मवर्षों। यूनान का।

यूनानी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० १. यूनान देश की भाषा। २. यूनान देश का निवासी। ३. यूनान देश की चिकित्साप्रणाली। हर्कोंमी।

विशेष—फारस के प्राचीन बादशाह अपने यहाँ यूनान के चिकित्सक रखते थे, जिससे वहाँ की चिकित्साप्रणाली का प्रचार एशिया के पश्चिमी भाग में हुआ। इस प्रणाली में क्रमशः देशी चिकित्सा भी मिलती गई। आजकल जिसे यूनानी चिकित्सा कहते हैं, वह मिली जुली है। खलीफा लोगो के समय में भारत-वर्ष से भी अनेक वैद्य बगदाद गए थे, जिसमें बहुत स भारतीय प्रयोग भी वहाँ की चिकित्सा में शामिल हुए।

यूनियन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] सघ। सभा। ममाज। मडल। जैसे,—लेबर यूनियन। ट्रेड्स यूनियन।

यूनियन जैक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'यूनियन फ्लैग'।

यूनियन फ्लैग—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड के संयुक्त राज्यों की राष्ट्रीय पताका।

यूनियर्सिटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] वह संस्था जो लोगो को सब प्रकार की उच्च कोटि की शिक्षाएँ देती, उनकी परीक्षाएँ लेती और उन्हें उपाधियाँ आदि प्रदान करती है। विश्वविद्यालय।

विशेष—ऐसी संस्था या तो राजकीय हुआ करती है अथवा राज्य की आज्ञा से स्थापित होती है, और उसकी परीक्षाओं तथा उपाधियों आदि का सब जगह समान रूप से मान होता है।

यूनीफार्म—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक ही प्रकार की पोशाक या पहनावा जो किसी विशेष विभाग के कर्मचारियों या नौकरों के लिये नियत हो। वरदी। जैसे,—पुलिस के पचास जवान जो यूनीफार्म में नहीं थे, वहाँ सवेरे से आ बटे थे।

यूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. यज्ञ में वह खभा जिसमें बलि का पशु बाँधा जाता है। २. वह स्तम्भ जो किसी विजय अथवा कीर्ति आदि की स्मृति में बनाया गया हो।

यूपक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. दे० 'यूप'। २. काण्डविशेष, वसि अथवा खदिर जिससे यूप बनता था।

यूपकटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोहे या लकड़ी का कड़ा या छल्ला जो यूप के सिरे पर अथवा नीचे होता था।

यूपकर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यूप का वह भाग जो घृत से अभिषिक्त किया जाता था।

यूपकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा भूरिश्रवा का एक नाम।

यूपकेशि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यूपकेशिन् [एक राक्षस का नाम [को०]।

यूपहु, यूपहुम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खर का वृद्ध।

यूपद्विप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यूप पर लपेटने का वस्त्र [को०]।

पर्या०—यूपवेष्टन। यूपहस्ति।

यूपध्वज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यज्ञ।

यूपलक्ष्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पत्नी।

यूपाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यूपारू [यूप का कोई अंश वा अंग।

यूपाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यूप [यूप] जूआ। द्यूतकर्म। उ०—यहै मनोरथ जीतव यूप। कर्हू कहेउ यह भेद न भूपा।—सबलसिंह (शब्द०)।

यूपाक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रावण की सेना का एक मुख्य नायक जिसको हनुमान् ने प्रमदावन उजाड़ने के समय मारा था।

यूपाहुति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह कृत्य जो यज्ञ में यूप गाड़ने के समय किया जाता है।

यूपोच्चार्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वे मन्त्र जो यज्ञादि में यूप की प्रतिष्ठा के समय कहे जायें [को०]।

यूप्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पलास।

यूरुप—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] यूरुप दे० 'यूरुप'।

यूराल—सञ्ज्ञा पुं० [?] १. एक बहुत बड़ा पहाड़ जो एशिया और यूरुप के बीच में है। २. इस पर्वत से निकलनेवाली एक नदी का नाम।

यूरैनस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. एक ग्रीक देवता। २. एक ग्रह जिसका हर्षल ने पता लगाया था [को०]।

यूरैनियम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] किरण धातु। राल आदि में प्राप्त होनेवाला एक धवल धातुत्व [को०]।

यूरुप—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'यूरुप'।

यूरुपियन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'यूरुपियन'।

यूरुपीय—वि० [अ०] यूरुप + ईय (प्रत्य०)] यूरुप संबंधी। यूरुप का।

यूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. शहतूत का वृद्ध। २. जूस। दाल आदि का पानी। फोल [को०]।

यूह^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यूथ १. समूह। झुड। २. सैन्य। सेना।

ये^१—सर्व० [हि०] दे० 'यह'।

ये^२—सर्व० [हि०] यह] 'यह' का बहुवचन। यह सब।

येई^१—सर्व० [हि०] यह + ई (प्रत्य०)] यही।

येऊ^१—सर्व० [हि०] ये + ऊ (प्रत्य०)] यह भी।

येतो^१—वि० [हि०] दे० 'एतो'।

येन^१—क्रि० वि० [म०] यत] जिसके द्वारा या जिससे।

यौ०—येन केन प्रकारेण = जिस किसी प्रकार ; जैसे तैसे।

येन^२—सञ्ज्ञा पुं० [जापानी] जापान का सिक्का। जापान का प्रचलित सिक्का।

येमन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खाना। भक्षण [को०]।

येहं—सर्व० [हि०] दे० 'यह'।

येहू^१—अव्य० [हि०] यह + हू] यह भी।

यौं—अव्य० [सं०] एवमेव, प्रा० एमेथ, अ० एमि] इस तरह पर।

इस प्रकार से। इस भाँति। ऐसे। जैसे,—वह यो नहीं मानेगा।

योही—अव्य० [हि० यो + ही (प्रत्य०)] १ इसी प्रकार से। ऐसे ही। इसी तरह से। २ बिना काम। व्यर्थ ही। जैसे,—आप तो योही किताबें उलटा करते है। ३ बिना विशेष प्रयोजन या उद्देश्य के। केवल मन की प्रवृत्ति से। जैसे,—मैं उधर योही चला गया, उससे मिलने नहीं गया था।

यो—सर्व० [हि०] दे० 'यह'।

योक्तव्य—वि० [सं०] १. सयोजित करने के योग्य। जोड़ने के योग्य। २. नियुक्त करने योग्य [को०]।

योक्ता सद्वा पुं० [सं० योक्त्] १ जोड़नेवाला। सयोजित करनेवाला। बाँधनेवाला। २ गाडीवान। सारथी। कोचवान। ३ उत्तेजित करनेवाला। उमाड़नेवाला [को०]।

योक्त्र—सद्वा पुं० [सं०] १ डोरी। रस्सी। लगाम। २ पशु को गाडी में बाँधने या जोतने का रस्सा। ३ हल के जुए में लगी डोरी जिससे बैल जोड़ा जाता है। ४ मथानी की डोरी। नेती [को०]।

योगंधर—सद्वा पुं० [सं० योगन्धर] १. प्राचीन काल का एक मंत्र जो अस्त्र शस्त्र आदि के शोधन के लिये पढ़ा जाता था। २ पीतल।

योग—सद्वा पुं० [सं०] १ दो अथवा अधिक पदार्थों का एक में मिलना। सयोग। मिलान। मेल। २ उपाय। तरकीब। ३. ध्यान। ४. सगति। ५. प्रेम। ६. छल। धोखा। दगावाजी। जैसे, योगविक्रय। ७. प्रयोग। ८. औषध। दवा। ९. धन। दौलत। १०. नैयायिक। ११. लाभ। फायदा। १२. वह जो किसी के साथ विश्वासघात करे। दगावाज। १३. कोई शुभ काल। अच्छा समय या अवसर। १४. चर। दूत। १५. छकड़ा। बँलगाडी। १६. नाम। १७. कौशल। चतुराई। होशियारी। १८. नाव आदि सवारी। १९. परिणाम। नतीजा। २०. नियम। कायदा। २१. उपयुक्तता। २२. साम, दाम, दंड और भेद ये चारो उपाय। २३. वह उपाय जिसके द्वारा किसी को अपने वश में किया जाय। वशीकरण। २४. सूत्र। २५. सबध। २६. सद्भाव। २७. धन और संपत्ति प्राप्त करना तथा बढ़ाना। २८. मेल मिलाप। २९. तप और ध्यान। वैराग्य। ३०. गणित में दो या अधिक राशियों का जोड़। ३१. एक प्रकार का छद्म जिसके प्रत्येक चरण में १२,८ के विश्राम से २० मात्राएँ और अंत में यगण होता। ३२. ठिकाना। सुमीता। जुगाड। तारघात। ३०.—नहिँ लग्यो भोजन योग नहीं कहूँ मिल्यो निवसन ठौर।—रघुराज (शब्द०)। ३३. फलित ज्योतिष में कुछ विशिष्ट काल या अवसर जो सूर्य और चंद्रमा के कुछ विशिष्ट स्थानों में आने के कारण होते हैं और जिनकी सख्या २७ है। इनके नाम इस प्रकार हैं—विष्कभ, प्रीति, आयुष्मान, सौभाग्य, शोभन, अतिगड, सुकर्मा, धृति, शूल, गड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वध, असुक, व्यतीपात, वरीयान्, परिध, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ,

शुक्र, ब्रह्म, इद्र, और वृत्ति। इनमें से कुछ योग ऐसे हैं, जो शुभ कार्यों के लिये वर्जित हैं और कुछ ऐसे हैं जिनमें शुभ कार्य करने का विधान है। ३४. फलित ज्योतिष के अनुसार कुछ विशिष्ट तिथियों, वारों और नक्षत्रों आदि का एक साथ या किसी निश्चित नियम के अनुसार पडना। जैसे, अमृत योग, सिद्धि योग। ३५. वह उपाय जिसके द्वारा जीवात्मा जाकर परमात्मा में मिल जाता है। मुक्ति या मोक्ष का उपाय। ३६. दर्शनकार पतञ्जलि के अनुसार चित्त की वृत्तियों को चंचल होने से रोकना। मन को इधर उधर भटकने न देना, केवल एक ही वस्तु में स्थिर रखना। ३७. शत्रु के लिये की जानेवाली यत्र, मंत्र, पूजा, छल, कपट आदि की युक्ति। ३८. छह दर्शनों में से एक जिसमें चित्त को एकाग्र करके ईश्वर में लीन करने का विधान है।

विशेष—योग दर्शनकार पतञ्जलि ने आत्मा और जगत् के सबध में साख्य दर्शन के सिद्धांतों का ही प्रतिपादन और समर्थन किया है। उन्होंने भी वही पचीस तत्व माने हैं, जो साख्यकार ने माने हैं। इनमें विशेषता यही है कि इन्होंने कपिल की अपेक्षा एक और छत्रसिखा तत्व 'पुरुषविशेष' या ईश्वर भी माना है, जिससे साख्य के अनीश्वरवाद से ये बच गए हैं। पतञ्जलि का योगदर्शन समाधि, साधन विभूति और कैवल्य इन चार पारदों या भागों में विभक्त है। समाधिपाद में यह बतलाया गया है कि योग के उद्देश्य और लक्षण क्या हैं और उसका साधन किस प्रकार होता है। साधनपाद में क्लेश, कर्मविपाक और कर्मफल आदि का विवेचन है। विभूतिपाद में यह बतलाया गया है कि योग के भ्रम क्या हैं, उसका परिणाम क्या होता है और उसके द्वारा अणिमा, महिमा आदि सिद्धियों की किस प्रकार प्राप्ति होती है। कैवल्यपाद में कैवल्य या मोक्ष का विवेचन किया गया है। सत्त्व में योग दर्शन का मत यह है कि मनुष्य को अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश ये पाँच प्रकार के क्लेश होते हैं, और उसे कर्म के फलों के अनुसार जन्म लेकर आयु व्यतीत करनी पडती है तथा भोग भोगना पडता है। पतञ्जलि ने इन सबसे बचने और मोक्ष प्राप्त करने का उपाय योग बतलाया है, और कहा है कि क्रमशः योग के अंगों का साधन करते हुए मनुष्य सिद्ध हो जाता है और अंत में मोक्ष प्राप्त कर लेता है। ईश्वर के संबध में पतञ्जलि का मत है कि वह नित्यमुक्त, एक, अद्वितीय और तीनों कालों से अतीत है और देवताओं तथा ऋषियों आदि को उसी से ज्ञान प्राप्त होता है। योगवाले ससार को दुःखमय और हेय मानते हैं। पुरुष या जीवात्मा के मोक्ष के लिये वे योग को ही एकमात्र उपाय मानते हैं। पतञ्जलि ने चित्त की क्षिप्त, मूढ, विक्षिप्त, निरुद्ध और एकाग्र ये पाँच प्रकार की वृत्तियाँ मानी हैं, जिनका नाम उन्होंने चित्तभूमि रखा है, और कहा है कि आरभ की तीन चित्तभूमियों में योग नहीं हो सकता, केवल अंतिम दो में हो सकता है। इन दो भूमियों में सप्रज्ञात और असप्रज्ञात ये दो प्रकार के योग हो सकते हैं। जिस अवस्था में ध्येय का रूप

प्रत्यक्ष रहता हो, उसे संप्रज्ञात कहते हैं। यह योग पाँच प्रकार के क्लेशों का नाश करनेवाला है। असंप्रज्ञात उस अवस्था को कहते हैं, जिममें किसी प्रकार की वृत्ति का उदय नहीं होता, अर्थात् ज्ञाता और ज्ञेय का भेद नहीं रह जाता, सस्कारमात्र बच रहता है। यही योग की चरम भूमि मानी जाती है और इसकी सिद्धि हो जाने पर मोक्ष प्राप्त होता है। योगसाधन का उपाय यह बतलाया गया है कि पहले किसी स्थूल विषय का आचार लेकर, उसके उपरांत किसी सूक्ष्म वस्तु को लेकर और अंत में सब विषयों का परित्याग करके चलना चाहिए और अपना चित्त स्थिर करना चाहिए। चित्त की वृत्तियों को रोकने के जो उपाय बतलाए गए हैं, वे इस प्रकार हैं—अभ्यास और वैराग्य, ईश्वर का प्रणिधान, प्राणायाम और समाधि, विषयो से विरक्ति आदि। यह भी कहा गया है कि जो लोग योग का अभ्यास करते हैं, उनमें अनेक प्रकार की विलक्षण शक्तियाँ आ जाती हैं जिन्हें विभूति या सिद्धि कहते हैं। विशेष दे० 'सिद्धि'। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये आठो योग के अंग कहे गए हैं, और योगसिद्धि के लिये इन आठो अंगों का साधन आवश्यक और अनिवार्य कहा गया है। इनमें से प्रत्येक के अंतर्गत कई बातें हैं। कहा गया है जो व्यक्ति योग के ये आठो अंग सिद्ध कर लेता है, वह सब प्रकार के क्लेशों से छूट जाता है, अनेक प्रकार की शक्तियाँ प्राप्त कर लेता है और अंत में कैवल्य (मुक्ति) का भागी होता है।

ऊपर कहा जा चुका है कि सृष्टितत्त्व आदि के संबन्ध में योग का भी प्रायः वही मत है जो सांख्य का है, इससे सांख्य को ज्ञान-योग और योग को कर्मयोग भी कहते हैं। पतञ्जलि के सूत्रों पर सबसे प्राचीन भाष्य वेदव्यास जी का है। उसपर वाचस्पति का वार्तिक है। विज्ञानभिक्षु का 'योगसारसंग्रह' भी योग का एक प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। सूत्रों पर भोजराज की भी एक वृत्ति है। पीछे से योगशास्त्र में तत्र का बहुत सा मेल मिला और 'कायव्यूह' का बहुत विस्तार किया गया, जिसके अनुसार शरीर के अंदर अनेक प्रकार के चक्र आदि कल्पित किए गए। क्रियाओं का भी अधिक विस्तार हुआ और हठयोग की एक अलग शाखा निकली, जिसमें नेती, धोती, वस्ती आदि पट्कर्म तथा नाडीशोधन आदि का वर्णन किया गया। शिवसहिता, हठयोगप्रदीपिका, घेरबसहिता आदि हठयोग के ग्रन्थ हैं। हठयोग के बड़े भारी आचार्य मत्स्येंद्रनाथ (मछदरनाथ) और उनके शिष्य गोरखनाथ हुए हैं।

योगकक्षा—सञ्ज्ञा खी० [सं०] दे० 'योगपट्ट' [को०]।

योगकन्या—सञ्ज्ञा खी० [सं०] यशोदा के गर्भ से उत्पन्न कन्या, वसुदेव जिसे ले जाकर देवकी के पास रख आए थे और जिसे कंस ने मार डाला था। योगमाया।

योगकुण्डलिनी—सञ्ज्ञा खी० [सं० योगकुण्डलिनी] एक उपनिषद् का नाम। (यह प्राचीन उपनिषदों में नहीं है।)

योगक्षेम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जो वस्तु अपने पास न हो, उसे प्राप्त करना, और जो मिल चुकी हो, उसकी रक्षा करना। नया पदार्थ प्राप्त करना और मिले हुए पदार्थ की रक्षा करना।

विशेष—भिन्न भिन्न आचार्यों ने इस शब्द से भिन्न भिन्न अभिप्राय लिए हैं। किसी के मत से योग से अभिप्राय शरीर का है और क्षेम में उसकी रक्षा का, और किसी के मत से याग का अर्थ है धन आदि प्राप्त करना और क्षेम से उसकी रक्षा करना।

२ जीवननिर्वाह। गुजारा। ३ कुशल मंगल। खैरियत। उ०—जब तक कोई अपनी पृथक् सत्ता की भावना को ऊपर किए इस क्षेत्र के नाना रूपों और व्यापारों को अपने योगक्षेम, हानि-लाभ, मुखदुःख आदि को सबद्ध करके देखता रहता है तब तक उसका हृदय एक प्रकार से बद्ध रहता है।—रस०, पृ० ५। ४ दूसरे के धन या जायदाद की रक्षा। ५ लाभ। मुनाफा। ६ ऐसी वस्तु जिसका उत्तराधिकारियों में विभाग न हो। ७. राष्ट्र की सुव्यवस्था। मुक्त का अच्छा इतजाम।

योगगति—सञ्ज्ञा खी० [सं०] १ मूल दशा। आरंभिक स्थिति। २. सयोग की अवस्था। पारस्परिक सयोग [को०]।

योगगामी—वि० [सं० योगगामिन्] योगबल से (वायु या आकाश में) गमन करनेवाला [को०]।

योगचक्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगचक्रस्] ब्राह्मण।

योगचर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हनुमान्।

योगचूर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जादू की बुकनी। वह बुकनी जिसमें जादू का प्रभाव हो [को०]।

योगज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ योगसाधन की वह अवस्था जिसमें योगी में अलौकिक वस्तुओं को प्रत्यक्ष कर दिखलाने की शक्ति आ जाती है।

विशेष—युक्त और गुजान दोनों इसी के भेद हैं। यह नैयायिकों के अलौकिक सनिकर्ष के तीन विभागों में से एक है। शेष दो विभाग सामान्य लक्षण और ज्ञान लक्षण हैं।

२ अंगर लकड़ी। अंगर।

योगजफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह अंक या फल जो दो अंकों को जोड़ने से प्राप्त हो। जोड़। योग। (गणित)।

योगतत्त्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक उपनिषद् का नाम, जो प्राचीन दस उपनिषदों में नहीं है।

योगतरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'योगनिद्रा'।

योगतारा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ किसी नक्षत्र में का प्रधान तारा। २ एक दूसरे से मिले हुए तारे।

योगत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योग का भाव।

योगदर्शन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महर्षि पतञ्जलि कृत योगसूत्र। विशेष दे० 'योग'।

योगदान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ किसी काम में साय देना। हाथ बंटाना। २ कपट में किया हुआ दान। ३. योग की दीक्षा।

योगधर्मी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगधर्मिन्] योगी।

योगधारणा—सज्ञा स्त्री० [सं०] योगसाधन में निष्ठता [को०] ।

योगधारा—सज्ञा स्त्री० [सं०] ब्रह्मपुत्र की एक सहायक नदी का नाम ।

योगनद—सज्ञा पुं० [सं०] मगध के राजा नौ नदों में से एक नदी का नाम । विशेष ३० 'नद' ।

योगनाथ—सज्ञा पुं० [सं०] १ शिव । २ दत्तात्रेय (को०) ।

योगनाविक—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली ।

योगनाविका—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'योगनाविक' ।

योगनिद्रा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ जागने और सोने के बीच की स्थिति (को०) । २ युग के अन्त में होनेवाली विष्णु की निद्रा जो, दुर्गा मानी जाती है । ३ प्रलय और उत्पत्ति के बीच ब्रह्मा की चिरनिद्रा । ४ रणभूमि में वीरों की मृत्यु । ५ योग की समाधि । ६ दुर्गा का एक नाम (को०) ।

योगनिद्रालु—सज्ञा पुं० [सं०] विष्णु, जो प्रलय के समय योगनिद्रा लेते हैं ।

योगनिलय—सज्ञा पुं० [सं०] १ महादेव । २ विष्णु ।

योगपट्ट—सज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक पहनावा जो पीठ पर से जाकर कमर में बाँधा जाता था और जिससे घुटनों तक का अंग ढका रहता था । साधुओं का अञ्चला ।

विशेष—शास्त्रों का विधान है कि जिसके बड़े भाई और पिता जीवित हो उसे ऐसा वस्त्र नहीं पहनना चाहिए ।

योगपति—सज्ञा पुं० [सं०] १ विष्णु । २ शिव ।

योगपति—सज्ञा स्त्री० [सं०] योगमाता । पीवरी ।

योगपथ—सज्ञा पुं० [सं०] योग में प्रवृत्ति करानेवाला मार्ग [को०] ।

योगपदक—सज्ञा पुं० [सं०] पूजन आदि के समय पहनने का चार अंगुल चौड़ा एक प्रकार का उत्तरीय वस्त्र ।

विशेष—यह बाघ के चमड़े, हिरन के चमड़े अथवा सूत का बना हुआ होता था और यज्ञसूत्र की भाँति पहना जाता था ।

योगपाद—सज्ञा पुं० [सं०] जैनियों के अनुसार वह कृत्य जिससे अभिमत की प्राप्ति हो ।

योगपारग—सज्ञा पुं० [सं० योगपाङ्ग] १. शिव । २ पूर्ण योगी ।

योगपीठ—सज्ञा पुं० [सं०] देवताओं का योगासन ।

योगपुरुष—सज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य अर्थशास्त्रानुसार वह साधा हुआ व्यक्ति जिससे मतलब सिद्ध किया जा सके । मतलब निकालने के लिये साधा हुआ आदमी ।

योगफल—सज्ञा पुं० [सं०] दो या अधिक सख्याओं को जोड़ने से प्राप्त मख्या ।

योगवल—सज्ञा पुं० [सं०] वह शक्ति जो योग की साधना से प्राप्त हो । तपोबल ।

योगभ्रष्ट—वि० [सं०] जिसकी योग की साधना चित्तविक्षेप आदि के कारण पूरी न हुई हो । जो योगमार्ग से च्युत हो गया हो ।

योगमय—सज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

योगमाता—सज्ञा स्त्री० [सं० योगमातृ] १. दुर्गा । २ पीवरी ।

योगमाया—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ भगवती, जो विष्णु की माया है । २ वह कन्या जो यशोदा के गर्भ से उत्पन्न हुई थी और जिसे कंस ने मार डाला था । कहते हैं, यह स्वयं भगवती थी । विशेष दे० 'कृष्ण' । उ०—देखी परी योगमाया वमुदेव गोद करि लीन्ही हो ।—मूर (शब्द०) ।

योगमूर्तिधर—सज्ञा पुं० [सं०] १ शिव । २ एक प्रकार के पितृ ।

योगयात्रा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ योग के लिये की जानेवाली यात्रा । वह यात्रा जिसमें परमात्मा से मिलन हो [को०] । २ फलित ज्योतिष के अनुसार वह योग जो यात्रा के लिये उपयुक्त हो ।

योगयुक्त—वि० [सं०] योग में स्थित । योगस्य ।

योगयुक्ति—सज्ञा स्त्री० [सं० योग + युक्ति] १ योग में अनुराग । समाधिस्थ होना (को०) । २ योग करने की विधि । उ०—कबीर साहब ने सब योगयुक्ति सिखलाया ।—कबीर मं०, पृ० ७५ ।

योगयोगी—सज्ञा पुं० [सं० योगयोगिन्] वह योगी जो योगासन पर बैठा हो ।

योगरंग—सज्ञा पुं० [सं० योगरङ्ग] नारंगी ।

योगरथ—सज्ञा पुं० [सं०] वह साधन जिससे योग की प्राप्ति हो ।

योगराजगुग्गुल—सज्ञा पुं० [सं०] कई द्रव्यों के योग में बनी हुई एक प्रसिद्ध औषध जिसमें गुग्गुल (गुग्गुल) प्रधान है । यह औषध गठिया, वात रोग और लकवे के लिये अत्यन्त उपकारी है ।

योगरूढि—सज्ञा स्त्री० [सं० योगरूढि] दो शब्दों के योग से बना हुआ वह शब्द जो अपना सामान्य अर्थ छोड़कर कोई विशेष अर्थ बतावे । जैसे, त्रिशूलपाणि, चंद्रमाल, पञ्चशर इत्यादि ।

योगरोचना—सज्ञा स्त्री० [सं०] इद्रजाल करनेवालों का एक प्रकार का लेप ।

विशेष—कहते हैं, शरीर में यह लेप लगा लेने से आदमी अदृश्य हो जाता है ।

योगवाणी—सज्ञा पुं० [सं०] हिमालय के एक तीर्थ का नाम ।

योगवान्—सज्ञा पुं० [सं० योगवत्] [स्त्री० योगवती] योगी । योगसपन्न । योगयुक्त ।

योगवाशिष्ठ—सज्ञा पुं० [सं०] वेदातशास्त्र का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ जो वशिष्ठ जी का बनाया कहा जाता है ।

विशेष—इसमें वशिष्ठ जी ने रामचन्द्र को वेदात का उपदेश किया है । इसमें वैराग्य, मुमुक्षु व्यवहार, उत्पत्ति, स्थिति, उपशय और निर्वाण ये छह प्रकरण हैं । इसे लोग वाल्मीकि रामायण का उत्तरखंड मानते हैं और वशिष्ठ रामायण भी कहते हैं ।

योगवाह—सज्ञा पुं० [सं०] व्याकरण में अनुस्वार, विसर्ग, जिह्वा-मूलीय और उपध्मानीय ।

योगवाही—सज्ञा पुं० [सं० योगवाहिन्] भिन्न गुणों की दो या कई श्रेणियों को एक में मिलाकर योग करनेवाली श्रेणी या द्रव्य । योग का माध्यम ।

- योगवाही**^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पारा । २ मधु । शहद (को०) ।
३ सज्जीखार ।
- योगविक्रिय**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घोखे या वेईमानी के साथ विक्री ।
घालमेल का सोदा ।
- योगविद्**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ योगशास्त्र का ज्ञाता । २ महादेव ।
३ ओषधियों को मिलाकर औषध बनानेवाला । ४ वाजीगर ।
- योगविभाग**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] व्याकरण मे एक दूसरे से सयुक्त शब्दों
का पृथक्करण (विशेषतः सूत्रों के शब्दों का) ।
- योगवृत्ति**—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चित्त की वह शुभ वृत्ति जो योग के
द्वारा प्राप्त होती है ।
- योगशक्ति**—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] योग के द्वारा प्राप्त होनेवाली शक्ति ।
तपोबल ।
- योगशब्द**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह यौगिक शब्द जो योगरूढ़ि न हो,
बल्कि धातु के अर्थ (सामान्य अर्थ) का बोधक हो ।
- योगशरीर**—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगशरीरिन्] योगी ।
- योगशास्त्र**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पतञ्जलि ऋषि का बनाया हुआ योग-
साधन पर एक बड़ा ग्रन्थ जिसमे चित्तवृत्ति को रोकने के उपाय
बतलाए गए हैं । यह छह दर्शनो मे से एक दर्शन है । दे०
'योग' ।
- योगशास्त्री**—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगशास्त्रिन्] योगशास्त्र का ज्ञाता ।
- योगशिक्षा**—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम जिसे योगशिक्षा
भी कहते हैं ।
- योगसत्य**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] किसी का वह नाम जो उसे किसी प्रकार
के योग के कारण प्राप्त हो । जैसे,—दड के योग से प्राप्त
होनेवाला नाम 'दंडी' ।
- योगसमाधि**—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ आत्मा का सूक्ष्म तत्त्व (ब्रह्मतत्त्व)
मे विलयन । २ योग का चरमफल । विशेष दे० 'समाधि' ।
- योगसार**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह उपाय या साधन जिमसे मनुष्य
सदा के लिये रोग से मुक्त हो जाय ।
- योगसाधन**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यौगिक क्रियाओं की साधना । सूक्ष्म का
ध्यान ।
- विशेष**—वैद्यक मे ऋतुचर्या के अतर्गत ऐसे उपायों का वर्णन है ।
भिन्न भिन्न ऋतुओं मे भिन्न भिन्न निषिद्ध पदार्थों का त्याग
और समय आदि इसके अतर्गत हैं ।
- योगसिद्ध**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जिसने योग की सिद्धि प्राप्त कर
ली हो । योगी ।
- योगसिद्धि**—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] योग मे मफलता ।
- यागसूत्र**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महर्षि पतञ्जलि के बनाए हुए योग सबंधी
सूत्रों का संग्रह । विशेष दे० 'योग' ।
- योगसेवा**—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शून्य की उपासना । सूक्ष्म का ध्यान ।
योग की साधना (को०) ।
- योगस्थ**—क्रि० [सं०] योग मे स्थित । योगयुक्त ।
- योगाग**—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगाङ्ग] पतञ्जलि के अनुसार योग के आठ

अंग जो हम प्रकार हैं—यम, नियम, श्रामन, प्राणायाम, प्रत्या-
हार, धारणा, ध्यान और समाधि । इन्हीं के पूर्ण साधन से
मनुष्य योगी होता है ।

योगाजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगाञ्जन] १ आँखों का एक प्रकार का
अजन या प्रलेप जिसके लगाने से आँखों का रोग दूर होता है ।
२ वह अजन जिसे लगाने मे पृथ्वी के अंदर को छिपी हुई
वस्तुएँ भी दिखाई पड़ें । मिट्टाजन ।

योगात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगान्त] मंगल ग्रह की कक्षा के सातवें
भाग का एक अंग । (ज्योतिष) ।

योगातराय—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगान्तराय] योग मे विघ्न डालनेवाली
आलस्य आदि दस बातें ।

योगाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० योगान्ता] मूल, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा
नक्षत्रों से होती हुई बुध की गति जो आठ दिन तक रहती है ।

योगावर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगाम्बर] बौद्धों के एक देवता का नाम ।

योगा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सीता की एक सखी का नाम ।

योगाकर्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह आकर्षण शक्ति जिसके कारण
परमाणु मिले रहते हैं और अलग नहीं होते ।

योगागम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योगशास्त्र ।

योगाचार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ योग का आचरण । २ बौद्धों का
एक संप्रदाय ।

विशेष—इस संप्रदाय का मत है कि पदार्थ (बाह्य) जो दिखाई
पड़ते हैं, वे शून्य हैं । वे केवल अंदर ज्ञान मे भासते हैं, बाहर
कुछ नहीं हैं । जैसे, 'घट' का ज्ञान भीतर आत्मा मे है, तभी बाहर
भासता है, और लोग कहते हैं कि यह घट है । यदि यह ज्ञान
अंदर न हो, तो बाहर किसी वस्तु का बोध न हो । अतः सब
पदार्थ अंदर ज्ञान मे भासते हैं और बाह्य शून्य हैं । इनका यह
भी मत है कि जो कुछ है, वह सब दुःख स्वरूप है, क्योंकि
प्राप्ति मे सतोप नहीं होना, इच्छा बनी रहती है ।

योगात्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगात्मन्] योगी ।

योगानुशासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योगशास्त्र ।

योगापत्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह सत्कार जो प्रचलित प्रथाओं
अथवा आचारव्यवहार आदि के कारण उत्पन्न हो ।

योगाभ्यास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योगशास्त्र के अनुसार योग के आठ
अंगों का अनुष्ठान । योग का साधन । उ०—वदरिकाश्रम रहे
पुनि जाई । योग अभ्यास (योगाभ्यास) समाधि लगाई ।—
सूर (शब्द०) ।

योगाभ्यासी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगाभ्यासिन्] योग की साधना
करनेवाला, योगी ।

योगारग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगारङ्ग] नारगी ।

योगाराधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योग का अभ्यास करना ।
योगसाधन ।

योगारूढ़—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगारूढ] वह योगी जिमने इन्द्रिय बुध

आदि की ओर से अपना चित्त हटा लिया हो। वह जिसने चित्तवृत्तियों का निरोध कर लिया हो। योगी।

योगासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योगसाधन के आसन, अर्थात् बैठने के टग।

योगित—वि० [सं०] १ जो इद्रजाल या मन्त्र आदि की सहायता से अपने श्रवण कर लिया गया हो अथवा पागल बना दिया गया हो। २ जिसपर इद्रजाल या मन्त्र आदि का प्रयोग किया गया हो।

योगिता—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योगी का भाव या धर्म।

योगित्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योगी का भाव या धर्म।

योगिद्वड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगिद्वरड] वें।

योगिनिद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] थोड़ी सी नीद। भूपकी।

योगिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रणपिशाचिनी। २ एक लोक का नाम। ३ आपाद कृष्णा एकादशी। ४. योगयुक्ता नारी। योगाम्यानिनी। तपस्विनी। ५ आवर्ण देवता। ये असख्य हैं जिनमें से चौसठ मुख्य हैं। ६ आठ विशिष्ट देवियाँ जिनके नाम इस प्रकार हैं—(१) शैलपुत्री, (२) चद्रघटा, (३) स्कन्धमाता, (४) कालरात्रि, (५) चण्डिका (६) कृष्णाडी (७) कात्यायनी और (८) महागौरी। ७ ज्योतिष शास्त्रानुसार ये आठ देवियाँ—ब्रह्मरणी, माहेश्वरी, कौमारी, नारायणी, वाराही, इन्द्राणी, चामुंडा, और महालक्ष्मी। ८. तिथिविशेष में दिग्विशेषावस्थित योगिनी। ९ तत्काल योगिनी। १०. काली की एक सहचरी का नाम। ११ देवी। योगमाया।

योगिनीचक्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ तांत्रिकों का वह चक्र जिसमें वे योगिनियों का साधन करते हैं। २ ज्योतिषी का वह चक्र जिससे वह इस बात का पता लगाता है कि योगिनी किस दिशा में हैं।

योगिया—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगी + हि० ह्या (प्रत्य०)] १ सपूर्ण जाति का एक राग जिसमें गायर के अतिरिक्त सब कोमल स्वर लगते हैं।

विशेष—इसके गाने का समय प्रातःकाल १ दह से ५ दह तक है। यह करुण रम का राग है। कुछ लोग इसे भैरव राग की गिनी भी मानते हैं।

२ अस्त्रज्ञानी। दे० 'योगी'।

योगिराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योगियों में श्रेष्ठ। बहुत बड़ा योगी।

योगीन्द्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगीन्द्र] बहुत बड़ा योगी।

योगी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगिन्] १ वह जो भले बुरे और सुख दुःख आदि सबको समान समझता हो। वह जिसमें न तो किसी के प्रति अनुराग हो और न विराग। आत्मज्ञानी। २ वह व्यक्ति जिसने योग सिद्ध कर लिया हो। वह जिसने योगाम्यास करके सिद्धि प्राप्त कर ली हो।

विशेष—योगदर्शन में अवस्था के भेद में योगी चार प्रकार के कहे गए हैं—(१) प्रथमकल्पित, जिन्होंने अभी योगाम्यास का केवल आरंभ किया हो और जिनका ज्ञान अभी तक दृढ़ न हुआ हो, (२) मधुभूमिक, जो भूतो और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त

करना चाहते हो, (३) प्रज्ञाज्योति, जिन्होंने इन्द्रियों को भली-भाँति अपने वश में कर लिया हो और (४) अतिक्रान्तभावनीय जिन्होंने सब सिद्धियाँ प्राप्त कर ली हो और जिनका केवल चित्तलय बाकी रह गया हो।

३. महादेव। शिव। ४ विष्णु (को०)। ५ याज्ञवल्क्य ऋषि (को०)। ६ अर्जुन (को०)। ७ एक मिश्र जाति (को०)।

योगीकुण्ड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगीकुण्ड] हिमालय के एक तीर्थ का नाम।

योगीनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगीनाथ] महादेव। शंकर।

योगीश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ योगियों के स्वामी। २ बहुत बड़ा योगी। ३. याज्ञवल्क्य का एक नाम, जिन्हें योगी याज्ञवल्क्य भी कहते हैं।

योगीश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ योगियों में श्रेष्ठ। २ याज्ञवल्क्य मुनि का एक नाम। ३ महादेव।

योगीश्वरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा।

योगेन्द्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योगेन्द्र] १ बहुत बड़ा योगी। २ वैद्यक में एक प्रकार का रस।

विशेष—यह रससिंदूर से बनाया जाता है और इसमें सोना, काती लोहा, अभ्रक, मोती और बग आदि पड़ते हैं। यह प्रमेह, सूर्क्षा, यक्ष्मा, पक्षाघात, उन्माद और भगदर आदि के लिये बहुत उपयोगी माना जाता है।

योगेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बहुत बड़ा योगी। २ योगी याज्ञवल्क्य का एक नाम।

योगेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ श्रीकृष्ण। परमेश्वर। २ शिव। ३. देवहोत्र के एक पुत्र का नाम। ४ याज्ञवल्क्य ऋषि (को०)। ५ बहुत बड़ा योगी। योगीश्वर। सिद्ध।

विशेष—पुराणों में नौ बहुत बड़े योगी अथवा योगेश्वर माने गए हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—(१) कवि (शुक्राचार्य), (२) हरि (नारायण ऋषि), (३) अतरिद्ध, (४) प्रबुद्ध, (५) पिप्पलायन, (६) आविर्होत्र, (७) द्रुमिल (दुरमिल), (८) चमस और (९) करमाजन।

५ एक तीर्थ का नाम।

योगेश्वरत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योगेश्वर का भाव या धर्म।

योगेश्वरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दुर्गा। २ शाक्तों की एक देवी का नाम जो दुर्गा का एक विशेष रूप है। ३ कर्कोटकी। ककोडा।

योगेष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. सीसा (धातु)। २ टिन (को०)।

योगोपनिषद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक उपनिषद् का नाम। २ कौटिल्य के अनुसार छल, कपट तथा गुप्त रीति से शत्रु को मारने की युक्ति।

योग्य—वि० [सं०] १ किसी काम में लगाए जाने के उपयुक्त। ठीक (पात्र)। कात्रिल। लायक। अधिकारी। जैसे,—वह इस काम के योग्य नहीं है। २ शील, गुण, शक्ति, विद्या आदि से युक्त। श्रेष्ठ। अच्छा। जैसे,—वे बड़े योग्य आदमी हैं। ३. युक्ति भिडानेवाला। उपाय लगानेवाला। सपायी। ४ उचित।

मुनामिव । ठीक । जैसे,—यह बात उनके योग्य ही है । ५ जोतने लायक । ६ जोटने लायक । ७ दर्शनीय । सुदर । ८. आदरणीय । माननीय ।

योग्य^२—सञ्ज्ञा पुं० १. पुण्य नक्षत्र । २. ऋद्धि नामक श्रौषधि । ३. रथ । शकट । गाडी । ४. चदन ।

योग्यता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. क्षमता । लायकी । २. बढाई । ३. बुद्धिमान्ता । लियाकत । विद्वता । ४. सामर्थ्य । ५. अनुकूलता । मुनासिबत । मुताविकत । ६. श्रौकात । ७. गुरा । ८. इञ्जत । ९. उपयुक्तता । १०. स्वाभाविक चुनाव । ११. तात्पर्यबोध के लिये वाक्य के तीन गुराओं में से एक । शब्दों के अर्थसंबन्ध की सगति या सम्बन्धीयता । जैसे,—‘वह पानी में जल गया’ इस वाक्य में यद्यपि अर्थसंबन्ध है, पर वह अर्थ सम्भव नहीं, इसमें यह वाक्य योग्यता के अभाव से ठीक वाक्य न हुआ ।

योग्यत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. योग्य होने का भाव । योग्यता । २. लायक या काबिल होने का भाव । प्रवीणता ।

योग्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. कोई काम करने का अभ्यास । मशक । २. सुश्रुत के अनुसार शास्त्रक्रिया या चीरफाड़ करने का अभ्यास । ३. जवान स्त्री । युवती ।

योजक^१—वि० [सं०] मिलानेवाला । जोड़नेवाला ।

योजक^२—सञ्ज्ञा पुं० पृथ्वी का वह पतला भाग जो दो बड़े विभागों को मिलता हो । भूहमरूमध्य ।

योजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. परमात्मा । २. योग । ३. एक में मिलाने की क्रिया या भाव । सयोग । मिलान । मेल । योग । ४. दूरी की एक नाप जो किसी के मत से दो कोस की, किसी के मत से चार कोस की और किसी के मत से आठ कोस की होती है । (यहाँ एक कोस से अभिप्राय ४,००० हाथ से है । जैनियों के अनुसार एक याजन १०,००० कोस का होता है ।

योजनगधा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० योजनगन्धा] १. कस्तूरी । २. सीता । ३. व्यास की माता और शाततु की भार्या सत्यवती का नाम । विशप दे० ‘व्यास’ ।

योजनगधिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० योजनगन्धिका] दे० ‘योजनगधा’ ।

योजनपर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मजीठ ।

योजनचल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मजीठ ।

योजना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. किसी काम में लगाने की क्रिया या भाव । नियुक्त करने की क्रिया । नियुक्ति । २. प्रयोग । व्यवहार । इस्तमाल । ३. जोड़ । मिलान । मेल । मिलाप । ४. बनावट । रचना । ५. घटना । ६. स्थिति । स्थिरता । ७. व्यवस्था । आयोजन । जैसे,—उन्होंने इसकी सब योजना कर दी है । ८. किसी बड़े काम को करने का विचार या आयोजन । भावा कार्यों के संबन्ध में व्यवस्थित विचार । स्कीन । जैसे,—म्युनिंसिपैलिटी की नगरसुधार की योजना सरकार ने स्वीकृत कर ला ।

योजनीय—वि० [सं०] १. जो मिलाने अथवा योजना करने के योग्य हो । २. जैसे मिलाना या जोड़ना हो ।

योजन्य—वि० [सं०] योजन संबंधी । योजन का ।

योजित—वि० [सं०] १. जिसकी योजना की गई हो । २. जोड़ा हुआ । ३. नियम से बद्ध किया हुआ । नियमित । ४. रचा हुआ । बनाया हुआ । रचित । घटित ।

योज्य^१—वि० [सं०] १. जोड़ने के लायक । मिलाने के योग्य । २. व्यवहार करने के योग्य ।

योज्य^२—सञ्ज्ञा पुं० वे सख्याएँ जो जोटी जाती हैं । जोटी जानेवाली सख्याएँ । (गणित) ।

योत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह बपन जो जूट को बेल की गरदन में जोड़ता है । जोत ।

योद्धव्य—वि० [सं०] जिमसे युद्ध करना हो या जिसके साथ युद्ध किया जा सके ।

योद्धा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योद्धृ] वह जो युद्ध करता हो । भट । लढाका । सिपाही ।

योध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योद्धा । सिपाही । वीर ।

योधक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योद्धा । सिपाही ।

योधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. युद्ध की सामग्री । लड़ाई का सामान जैसे, अस्त्र शस्त्र आदि । २. युद्ध । रण । लड़ाई ।

योधा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योद्धृ] दे० ‘योद्धा’ ।

योधिवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जंगल का नाम ।

योधी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० योधिन्] योद्धा । वीर ।

योधेय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योद्धा । सिपाही ।

योध्य—वि० [सं०] जिसके साथ युद्ध किया जा सके । युद्ध करने के योग्य ।

योनल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यवनाल । ज्वार । मक्का या जोन्हरी ।

योन—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. आरुर । खानि । २. वह जिममें कोई वस्तु उत्पन्न हो । उत्पादक कारण । ३. उत्पात्त स्थान । जहाँ से कोई वस्तु पैदा हो । उद्गम । ४. जल । पानी । ५. कुशद्वीप की एक नक्ष का नाम । ६. स्थिती की जननीद्रव । भग । ७. प्राणियों के विभाग, जानियाँ या वर्ग ।

विशप—पुराणानुसार इनकी सख्या चौरासी लाख है । कुछ लोगों के मत से अडज, स्वेदज, उद्भिज, और जरायुज मय इक्कीस लाख हैं, और कहीं कहीं इनकी मख्या इस प्रकार लिखी है—

जलजतु	.	नी लाख
स्वावर	.	बाग लाख
कुम	.	ग्यारह लाख
पक्षी	.	दस लाख
पशु	.	तीस लाख
मनुष्य	.	चार लाख

कुल चौरासी लाख

यह भी कहा गया है कि जीव को अपने कर्मों का फल भोगने के लिये इन सब यानियों में भ्रमण करना पड़ता है । मनुष्य योनि इन नवमें श्रेष्ठ और दुर्लभ मानी गई है ।

८. देह । शरीर । ९. गर्भ । १०. जन्म । उत्पत्ति । ११. गर्भाशय । १२. भ्रत करण ।

योनिकन्द—सञ्ज्ञा पु० [सं० योनिकन्द] योनि का एक रोग जिसमें उसके अंदर एक प्रकार की गाँठ हो जाती है और उसमें से रक्त या पीव निकलता है ।

योनिज^१—वि० [सं०] जिमकी उत्पत्ति योनि से हुई हो । योनि से उत्पन्न ।

योनिज^२—सञ्ज्ञा पु० वह जीव जिसकी उत्पत्ति योनि से हुई हो ।

विशेष—ऐसे जीव दो प्रकार के होते हैं—जरायुज और अण्डज । जो जीव गर्भ से पूरा शरीर धारण करके योनि के बाहर निकलते हैं, वे जरायुज कहलाते हैं, और जो अण्ड से उत्पन्न होते हैं, वे अण्डज कहलाते हैं ।

योनिदेवता—सञ्ज्ञा पु० [सं०] पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र ।

योनिदोष—सञ्ज्ञा पु० [सं०] उपदश रोग । गरमी । आतशक ।

योनिफूल—सञ्ज्ञा पु० [सं० योनि + हि० फूल] योनि के अंदर की वह गाँठ जिसके ऊपर एक छेद होता है । इसी छेद में से होकर वीर्य गर्भाशय में प्रवेश करता है ।

योनिश्र श—सञ्ज्ञा पु० [सं०] योनि का एक रोग जिसमें गर्भाशय अपने स्थान से हट जाता है ।

योनिमुक्त—सञ्ज्ञा पु० [सं०] वह जो बार बार जन्म लेने से मुक्त हो गया हो । वह जन्मने मोक्ष प्राप्त कर लिया हो ।

योनिमुद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तानिको की एक मुद्रा जिसमें वे पूजन के समय उंगलियों से प्रायः योनि का सा आकार बनाते हैं ।

योनियत्र—सञ्ज्ञा पु० [सं० योनियत्र] कामाक्षा, गया आदि कुछ विशिष्ट तीर्थ स्थानों में बना हुआ एक प्रकार का बहुत ही मकीर्ण मार्ग, जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि जो इस मार्ग से होकर निकल जाता है, उसका मोक्ष हो जाता है ।

योनिरजन—सञ्ज्ञा पु० [सं० योनिरञ्जन] ऋतुस्त्राव । रजोधर्म [को०] ।

योनिवेश—सञ्ज्ञा पु० [सं०] महाभारत के अनुसार एक देश का प्राचीन नाम जिसमें क्षत्रियों का निवास था ।

योनिशूल—सञ्ज्ञा पु० [सं०] योनि का एक रोग जिसमें बहुत पीड़ा होती है ।

योनिशूलघ्नी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शतपुष्पा ।

योनिस्कर—सञ्ज्ञा पु० [सं० योनिस्कर] वह जिसके पिता और माता दोनों भिन्न जातियों के हो । वर्णस्कर ।

योनिस्कोचन—सञ्ज्ञा पु० [सं० योनिस्कोचन] १. योनि को फैलाने और सिकोड़ने की क्रिया । २. योनि के मुख को सिकोड़ने या तंग करने की श्रमिका ।

विशेष—यह क्रिया अथवा इसका उपाय प्रायः सभोगसुख के लिये किया जाता है ।

योनिसम्भव—सञ्ज्ञा पु० [सं० योनिसम्भव] वह जो योनि से उत्पन्न हुआ हो । योनिज ।

योनिस्वरण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] गर्भवती स्त्रियों का एक प्रकार का रोग, जिसमें योनि का मार्ग सिकुड़ जाता है, गर्भाशय का द्वार

रुक जाता है और गर्भ का मुँह बंद हो जाने से संतान रुककर बच्चा मर जाता है । इस रोग में गर्भिणी के भी मर जाने की आशंका रहती है ।

योनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] योनि ।

योन्यर्श—सञ्ज्ञा पु० [सं० योन्यर्शम्] योनि का एक रोग जिसमें उसके अंदर गाँठ सी हो जाती है । योनिकन्द ।

योम—सञ्ज्ञा पु० [अ० यौम] १ दिन । रोज । २ तिथि । तारीख ।

योरोप—सञ्ज्ञा पु० [अ०] दे० 'युरोप' ।

योरोपियन—सञ्ज्ञा पु० [अ०] दे० 'युरोपियन' ।

योपणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह स्त्री जो मती और पतिव्रता न हो । दुश्चरित्रा स्त्री । २ युवा लड़की । नवयुवती ।

योपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] नारी । स्त्री । औरत ।

योपित्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नारी । स्त्री ।

योपत्प्रिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हलदी ।

योषिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] स्त्री । नारी । श्रीगत् [को०] ।

योपिद्ग्राह—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मृत व्यक्ति की स्त्री को रखनेवाला वा, ग्रहण करनेवाला व्यक्ति [को०] ।

यौ०—[सं० एवमेव] दे० 'यो' । उ०—पहिरत ही गोरे गरे यौं दौरी दुति लाल । मनी परसि पुनकित भई मीलमिरी की माल ।—विहारी (शब्द०) ।

यौ०—[हि० यह] यह । उ०—ऐनी एक आप कहि राजा सो यौ बात कही, लँके जावौ बाग स्वामी नेकु देवौ प्रीति को ।—प्रियादास (शब्द०) ।

यौक्ताश्व—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का मार ।

यौक्तिक—वि० [सं०] जो युक्ति के अनुसार ठीक हो । युक्तियुक्त । वाजिब । उचित । ठीक ।

यौक्तिक^२—सञ्ज्ञा पु० विनोद या क्रीडा का साथी । नर्म सखा ।

यौगधर—सञ्ज्ञा पु० [सं० यौगन्धर] अस्त्रों के निष्फल करने का एक प्रकार का अस्त्र ।

यौगधरायण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. वह जो युगधर के गोत्र में उत्पन्न हुआ हो । २. राजा उदयन के एक मंत्री का नाम ।

यौग—सञ्ज्ञा पु० [सं०] वह जो यागदर्शन के मत के अनुसार चलता हो ।

यौगरु—वि० [सं०] योग सबधी । योग का ।

यौगिक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ मिला हुआ । २ प्रकृति और प्रत्यय के योग से बना हुआ शब्द । व्युत्पन्न शब्द । ३. दो शब्दों से मिलकर बना हुआ शब्द । ४. अष्टाहस मात्राओं के छंदों की सञ्ज्ञा ।

यौजनिक—वि० [सं०] जो एक योजन तक जाता हो । एक योजन तक जानेवाला ।

यौतक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'यौतुक' ।

यौतुक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ वह घन आदि जो विवाह के समय वर और कन्या को मिलता हो । दाइजा । जहेज । देहेज ।

विशेष—ऐसे धन पर सदा वधू का ही अधिकार रहता है, घर के और लोगों का उसपर कोई अधिकार नहीं होता। यह स्त्रीधन माना जाता है।

२ अन्नप्राशन आदि सस्कारों के समय जिसका मस्कार होता है उसको मिलनेवाला धन।

यौथिक—वि० [सं०] १ यूथ सबधी। समूह का। २ जो यूथ में रहता हो। भुङ्ग बर्धकर रहनेवाला।

यौथिक—सञ्ज्ञा पुं० साथी। मित्र [को०]।

यौध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योद्धा। सिपाही।

यौधेय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ योद्धा। २ एक प्राचीन देश का नाम। ३ प्राचीन काल की एक योद्धा जाति।

विशेष—यह जाति उत्तरपश्चिम भारत में रहती थी और इमका उल्लेख पाणिनि ने किया है। बौद्ध काल में इस जाति का बहुत जोर और आदर था। इस जाति के राजाओं के अनेक सिक्के भी पाए गए हैं। पुराणानुसार यह जाति युधिष्ठिर के वंशजों से उत्पन्न हुई थी।

४ युधिष्ठिर का पुत्र जो राजा शैब्य का दौहित्र था।

यौन—वि० [सं०] १ योनि सबधी। योनि का। २ वैवाहिक। जैसे, यौन सबध।

यौ०—यौनवृत्ति = काम या कामुकता की वृत्ति।

यौन^३—सञ्ज्ञा पुं० १ योनि (को०)। २ विवाह सबध (को०)। ३ उत्तरापथ की एक प्राचीन जाति का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है। कदाचित् ये लोग यवन जाति के थे।

यौनानुबन्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यौनानुबन्ध] खून का सबध [को०]।

यौवत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ स्त्रियों का समूह। २. लास्य नृत्य का दूसरा भेद। वह नृत्य जिसमें बहुत सी नटियाँ मिलकर नाचती हो।

यौवतेय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] युवती का लडका। युवती का पुत्र [को०]।

यौवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अवस्था का वह मध्य भाग जो

बाल्यावस्था के उपरांत आरंभ होता है और जिसकी समाप्ति पर वृद्धावस्था आती है।

विशेष—इस अवस्था के अच्छी तरह आ चुकने पर प्रायः शारीरिक वाढ रुक जाती है और शरीर बलवान तथा हृष्ट हो जाता है। साधारणतः यह अवस्था १६ वर्ष से लेकर ६० वर्ष तक मानी जाती है।

२ युवा होने का भाव। तारुण्य। जवानी। ३ दे० 'जोवन'। ४ युवतियों का दल।

यौवनकटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यौवनकटक] मुँहासा, जो युवावस्था में होता है।

यौवनक—सं० पुं० [सं०] यौवनि। जवानी।

यौवनपिडका—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यौवनपिडका] मुँहासा।

यौवलक्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लावण्य। नमक। २ स्त्रियों की छाती। स्तन। कुच।

यौवनस्थ—वि० [सं०] १ युवा। तरुण। जवान। २. विवाह के योग्य। ३ स्वस्थ। तेजस्वी।

यौवनदरूढा—वि० [सं० यौवनादरूढा] युवती। जवान (स्त्री)।

यौवनाश्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माघाता राजा का एक नाम। विशेष दे० 'माघाता'।

यौवनिक—वि० [सं०] यौवन सबधी। यौवन का।

यौवनोद्भव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव।

यौवनोद्भेद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामोन्माद। जवानी की उमंग [को०]।

यौवराजिक—वि० [सं०] युवराज सबधी। युवराज का।

यौवराज्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ युवराज होने का भाव। २ युवराज का पद।

यौवराज्याभिषेक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह अभिषेक और उसके संबंध का कृत्य तथा उत्सव आदि जो किसी के युवराज बनाए जाने के समय हो। युवराज के अभिषेक का कृत्य।

यौषिण्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नारीत्व। २. नारी की भावभंगिमा या मुखमुद्रा [को०]।

र

र—हिंदी वर्णमाला का सत्ताईसवाँ व्यंजन वर्ण जिसका उच्चारण जीभ के अग्रले भाग को मूर्धा के साथ कुछ स्पर्श कराने से होता है। यह स्पर्श वर्ण और ऊष्म वर्ण के मध्य का वर्ण है। इसका उच्चारण स्वर और व्यंजन का मध्यवर्ती है, इसलिये इसे अतस्थ वर्ण कहते हैं। इसके उच्चारण में सवार, नाद और घोष नामक प्रयत्न होते हैं।

रक^१—वि० [सं० रक्क] [वि० स्त्री० रंकिणी] १ धनहीन। गरीब। दरिद्र। कंगाल। उ०—(क) बहिरो सुनै मूक पुनि बोलै रक चलै सिर छत्र धराई।—सूर (शब्द०)। (ख) ऊँचे नीचे बीच के धनिक रक राजा राय हठनि बजाय करि डीठि पीठि दई

है।—तुलसी (शब्द०)। २. कृपण। कंजूस। ३. सुस्त। काहिल। आलसी।

रक^२ सञ्ज्ञा पुं० १. कृपण व्यक्ति। २. सुस्त वा काहिल आदमी। ३. निर्धन व्यक्ति।

रकता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्क + हि० ता (प्रत्य०)] निर्धनता। गरीबी। कंगाली। उ०—रकता देख जिसकी रकता लजाती राजसी ठाठ से उसकी अरथी जाती।—सुत०, पृ० ८७।

रंकिनी(पु)—वि० स्त्री० [सं० रंकिणी] निर्धनवती। दरिद्र। जिसके पास कुछ न हो। उ०—होकर भौं बहु चित्र अंकिनी आप रंकिनी आशा है।—साकेत, पृ० ३६६।

रङ्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्ग] एक प्रकार का हिरन जिसकी पीठ पर सफेद चित्तियाँ होती हैं।

रग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्ग, क्रा० रग] १ रागा नामक धातु।
२ नृत्य गीत आदि। नाचना गाना।

यौ०—नाच रग। जैसे,—वहाँ आजकल खूब नाच रग हो रहा है।

३ वह स्थान जहाँ नृत्य या अभिनय होता हो। नाचने गाने, नाटक करने आदि के लिये बनाया हुआ स्थान।

यौ०—रगमच। रगभूमि। रगद्वार। रंगदेवता। रगस्थल आदि।

४ युद्धस्थल। रणक्षेत्र। लड़ाई का मैदान। ५ खदिरसार।
६ किसी दृश्य पदार्थ का वह गुण जो उसके आकार से भिन्न होता है और जिसका अनुभव केवल आँखों से ही होता है। वर्ण।

विशेष—जब किसी पदार्थ पर पहले पहल हमारी दृष्टि जाती है, तब प्रायः हमें दो ही धातों का ज्ञान होता है। एक तो उसके आकर का और दूसरा उसके रग का। वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि रग वास्तव में प्रकाश की किरणों में ही होता है, और वस्तुओं के भिन्न भिन्न रासायनिक गुणों के कारण ही हमारी आँखों को उनका अनुभव वस्तुओं में होता है। जब किसी वस्तु पर प्रकाश पड़ता है, तब उस प्रकाश के तीन भाग होते हैं। पहला भाग तो परावर्तित हो जाता है, दूसरा वर्तित हो जाता है, और तीसरा उस वस्तु के द्वारा सोख लिया जाता है। परन्तु सब वस्तुओं में ये गुण समान रूप में नहीं होते, किसी में कम और किसी में अधिक होते हैं। कुछ पदार्थ ऐसे होते हैं, जिनमें से प्रकाश परावर्तित होता ही नहीं, या तो वर्तित होता है या सोख लिया जाता है, जैसे, शुद्ध जल। ऐसे पदार्थ प्रायः बिना रग के दिखाई देते हैं। जिन पदार्थों पर पड़नेवाला सारा प्रकाश परावर्तित हो जाता है, वे श्वेत दिखाई पड़ते हैं। और जो पदार्थ अपने ऊपर पड़नेवाला समस्त प्रकाश सोख लेते हैं, वे काले होते या दिखाई देते हैं।

प्रकाश का विश्लेषण करने से उसमें अनेक रंगों की किरणें मिलती हैं, जिनमें ये सात रंग मुख्य हैं—वैगनी, नील, श्याम या आसमानी, हरा, पीला, नारंगी और लाल। जब ये सातों रंग मिलकर एक हो जाते हैं, तब हम उसे सफेद कहते हैं, और जब इन सातों में से एक भी रग नहीं रहता, तब हम उसे काला कहते हैं। अब यदि किसी ऐसे पदार्थ पर श्वेत प्रकाश पड़े, जिसमें लाल किरणों को छोड़कर और सब रंगों की किरणों को सोख लेने की शक्ति हो, तो स्वभावतः प्रकाश का केवल लाल ही अंश उसपर बच रहेगा, और उस दशा में हम उस पदार्थ को लाल रग का कहेंगे। अर्थात् प्रत्येक वस्तु हमें उसी रग की देख पड़ती है, जिस रग को वह न तो सोख सकती है और न वर्तित करती है, बल्कि जिसे वह परावर्तित करती है। कुछ रग ऐसे भी होते हैं, जिनके मिलने से सफेद रंग बनता है। ऐसे रंग एक दूसरे के

परिपूरक कहलाते हैं। जैसे—यदि हरितपीत रग के प्रकाश के साथ ही लाल रग का प्रकाश भी पहुँचने लगे, तो उस दशा में हमें सफेद रग दिखाई पड़ेगा। इसलिये लाल और हरितपीत दोनों एक दूसरे के परिपूरक रग हैं। प्रायः दो रंगों के मिलने से एक नया तीसरा रग भी पैदा हो जाता है, जैसे—लाल और पीले के मिलने से नारंगी रग बनता है। परन्तु ये सब बातें केवल प्रकाश की किरणों के संघर्ष में हैं, बाजार में मिन्नेवाली बुकनियों के संघर्ष में नहीं हैं। दो प्रकार की बुकनियों को एक साथ मिलाने से जो परिणाम होगा, वह दो रंगों की प्रकाश किरणों को मिलाने के परिणाम से कभी कभी बिल्कुल भिन्न होगा। इनका कारण यह है कि जब हम दो प्रकार की बुकनियों को एक मिलाते हैं, उस समय हम वास्तव में एक रग में दूसरा रग जोड़ते नहीं हैं, बल्कि एक रग में से दूसरा रग घटाते हैं। जिस रग की किरणों को एक बुकनी परावर्तित करती है, उसे दूसरी बुकनी सोख लेती है। इसी लिये बुकनियों के संघर्ष में जो नियम हैं, वे प्रकाश की किरणों के संघर्ष के नियम से भिन्न हैं।

७. कुछ विशिष्ट रासायनिक क्रियाओं से बनाया हुआ वह पदार्थ जिसका व्यवहार किसी चीज को रंगने या रंगीन बनाने के लिये होता है। वह चीज जिसके द्वारा कोई चीज रंगी जाय या जिससे किसी चीज पर रग चढ़ाया जाय।

विशेष—बाजारों में प्रायः अनेक प्रकार के कार्यों के लिये अनेक रूपों में बने बनाए रग मिलते हैं, जिनका व्यवहार चीजों को रंगने या चित्रित करने के लिये होता है। जैसे, कपड़े रंगने का रग, लकड़ी पर चढ़ाने का रग, तसवीर बनाने का रग आदि।

क्रि० प्र०—करना।—चढ़ना।—चढ़ाना।—पोतना।—होना।

यौ०—रंगविरग, रगविरगा = जिसमें अनेक प्रकार के रग हों। तरह तरह के रगोंवाला। उ०—रगविरग एक पक्षी बना। छाटा चोंच और काटे घना। (पहेली)।

मुहा०—रग आना या चढ़ना = रग अच्छी तरह लग जाना या प्रकट होना। रग उड़ना या उतरना = धूप या जल आदि के ससग से रग का विगड जाना या फीका पड़ जाना। रग खेलना = होला के दिना में पानी में रग घोलकर एक दूसरे पर डालना। रग डालना या फेंकना = (होली में) पानी में रग घालकर किसी पर डालना। रग निखरना = रग का शोख या चटकीला होना।

यौ०—रगदार।

८. शरीर का ऊपरी वर्ण। बदन और चेहरे की रंगत। वर्ण।

मुहा०—(चेहरे व।) रग उड़ना या उतरना = भय या लज्जा से चेहरे की रौनक का जाता रहना। चेहरा पीला पड़ना। कातिहीन होना। रग निकलना = दे० 'रग निखरना'। रग निखरना = चेहरे के रग का साफ होना। चेहरा साफ और चमकदार होना। चेहरे पर रौनक आना। रंग फक होना = दे० 'रग उड़ना'। रग बदलना = (१) लाल पीला होना। सफा

होना । क्रुद्ध होना । नाराज होना । जैसे,—आप तो नाहक हम पर रंग बदल रहे हैं । (२) रूप परिवर्तित करना ।

६ यौवन । जवानी । युवावस्था ।

क्रि० प्र०—आना ।—चढ़ना ।—होना ।

मुहा०—रंग चूना = युवावस्था का पूर्ण विकास होना । यौवन उमडना । रंग टपकना = दे० 'रंग चूना' ।

१० शोभा । सौंदर्य । रौनक । छवि ।

क्रि० प्र०—आना ।—उतरना ।—चढ़ना ।—दिखाना ।—होना ।

मुहा०—रंग पकडना = रौनक या बहार पर आना । रंग पर आना = दे० 'रंग पकडना' । रंग फीका पडना या होना = रौनक कम हो जाना । शोभा का घट जाना । रंग बरसना = अत्यंत शोभा होना । खूब रौनक होना । उ०—सखी, सचमुच आज तो इस कदव के नीचे रंग बरस रहा है ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) । रंग है = शाबाश । वाह वा क्या बात है ।

११. प्रभाव । असर ।

मुहा० रंग चढ़ना = प्रभाव पडना । असर पडना । जैसे,—इस लडके पर भी अब नया रंग चढ रहा है । रंग जमना = प्रभाव पडना । असर पडना ।

१२ दूसरे के हृदय पर पडनेवाली शक्ति, गुण या महत्व का प्रभाव । धाक । रोव ।

मुहा०—रंग जमना = धाक जमना । अनुकूल स्थिति उत्पन्न होना । उ०—दोनों ने समझा कि रंग जैसा चाहिए, वैसा जम गया ।—अयोध्या० (शब्द०) । रंग टखडना = धाक न रहना । स्थिति प्रतिकूल होना । दूसरो पर महत्व आदि का प्रभाव न रह जाना । जैसे,—पहले यहाँ उसे बहुत आमदनी थी, पर अब रंग उखड गया । रंग जमाना = प्रभाव डालना । धाक बाँधना । रंग फीका रहना = पूरा पूरा प्रभाव न पडना । रंग बाँधना = रोव जमना । धाक बाँधना । रंग बाँधना = (१) अपना महत्व दूसरे के हृदय में स्थापित करना । रोव गाँठना । धाक जमाना । उ०—भाई मुझे तो एक दिन के लिये भी कही तख्त मिल जाय, तो रंग बाँध दूँ ।—राधाकृष्णदास (शब्द०) । (२) झूठा आडंबर रचना । ढोंग रचना । रंग बिगडना = रोव जाता रहना । प्रभाव नष्ट या कम हो जाना । रंग बिगाडना = (१) प्रभाव नष्ट करना । महत्व घटाना । (२) शेखी किरकिरी करना । रंग लाना = अपना प्रभाव या गुण दिखलाना ।

१३ क्रीडा । कौतुक । खेल । आनंद । उत्सव । उ०—(क) दिन में सब लोग राग, रंग, नृत्य, दान, भोजन, पान इत्यादि में नियुक्त थे । (ख) वर जग रंग करिवे चह्यौ मनहि सुढग उमंग में ।—गोपाल (शब्द०) ।

यौ०—रंगरलियाँ = आमोद प्रमोद । मीज । चैन ।

क्रि० प्र०—करना ।—मनाना ।

मुहा०—रंग रलना = आमोद प्रमोद करना । क्रीडा या भोग विलास करना । उ०—भाव ही कह्यौ मन भाव दृढ़ राखिवो दे सुख तुमहि सग रंग रलिहैं ।—सूर (शब्द०) । रंग में भग पडना = आमोद प्रमोद के बीच कोई दुःख की बात आ पडना । हँसी और आनंद में विघ्न पडना ।

१४. युद्ध । लडाई । समर ।

मुहा०—रंग मचाना = रण में खूब युद्ध करना । उ०—चडि देहि ममर उत्तर परन उत्तर द्वार मचाय रग ।—गोपाल (शब्द०) ।

१५ मन की उमंग वा तरंग । मन का वेग या स्वच्छंद प्रवृत्ति । मौज । उ०—(क) रत्नजटित किकिणि पग नूपुर अपने रंग बजावहु ।—सूर (शब्द०) । (ख) अपने अपने रंग में सब रंगे हैं, जिसने जो सिद्धांत कर लिया है, वही उसके जी में गड रहा है ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) । (ग) चढे रंग सफजग के हिंदू तुष्क अमान । उमडि उमडे दुहुँ दिसि लगे कौरन लोहौ खान ।—लाल (शब्द०) ।

मुहा०—(किसी के) रंग में डलना = किसी के कहने या विचार के अनुसार कार्य करने लगना । किसी के प्रभाव में आना । उ०—तुरत मन सुख मानि लीन्हो नारि तेहि रंग डरी ।—सूर (शब्द०) ।

१६. आनंद । मजा । उ०—(क) बहुत झुरिया लागे सग । दाम न खरचै लूटै रग ।—देवस्वामी (शब्द०) । (ख) खान पान सनमान राग रग मनहि न भावै ।—गिरिधर (शब्द०) । (ग) मोको व्याकुल छाँडिके आपुन करै जु रग ।—सूर (शब्द०) ।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का और इसके मुहावरों का प्रयोग प्रायः नशे के सबंध में भी होता है ।

मुहा०—रंग आना = मजा मिलना । आनंद मिलना । रंग उखडना = बने हुए आनंद का अचानक घटना या नष्ट हो जाना । रंग जमना = आनंद का पूर्णता पर आना । खूब मजा होना । रंग मचाना = घूम मचाना । उ०—असवारी में रंग मचावै । मन के सग तुरग नचावै ।—लाल (शब्द०) । रंग में भग करना = पूर्ण आनंद के समय उसमें विघ्न उपस्थित करना । बना बनाया मजा विगडना । रंग रचाना = उत्सव करना । जलसा करना । रंग रहना = आनंद रहना । प्रसन्नता रहना । मजा रहना ।

१७ दशा । हालत । उ०—कबहुँ नहि यहि भाँति देख्यो, आज को सो रग ।—सूर (शब्द०) ।

मुहा०—रंग लाना = दशा उपस्थित करना । हालत करना । जैसे—तुम्हारी ही शरारत यह सब रंग लाई है ।

१८ अद्भुत व्यापार । काड । दृश्य । जैसे,—यह सब रंग उन्ही की कृपा का फल है ।

१९. प्रसन्नता । कृपा । दया । मेहरवानी । उ०—हम चाकर कलि-

राज के वृथा करत हौ दोष । ताकी मरजी को तर्क करत रग श्री रोष ।—गुमान (शब्द०) । २० प्रेम । अनुराग । उ०—(क) जब हम रंगी श्याम के रगा । तब लिखि पठवा ज्ञान प्रसगा ।—रघुनाथदास (शब्द०) । (ख) देखु जरनि जड नारि की जरत प्रेम के रग । चिंता न चित फीको भयो रची जु पिय के रग ।—सूर (शब्द०) । (ग) ऐसे भए तो कहा तुलसी जो पै जानकीनाथ के रग न राते ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुहा०—रंग देना = किसी को अपने प्रेमपाश में फँसाने के लिये उसके प्रति प्रेम प्रकट करना । (वाजारू) । रग (में) भीजना = अनुराग में सराबोर होना । उ०—गोरिन के रंग भीजिगो सँवरो सँवरे के रंग भीजी सु गोरी ।—पद्माकर (शब्द०) ।

२१ ढग । ढव । चाल । तर्ज । उ०—(क) राजमवनाम्यतर तो यह उपकरण था श्रीर बाहुर नभमडल का श्रीर ही रग दिखलाई देता था ।—अयोध्यासिंह (शब्द०) । (ख) जो ठुम राजी हो इस रंग । तो खेले फाग हमारे संग ।—लल्लूलाल (शब्द०) । (ग) त्यों पदमाकर यों मग में रग देखत हो कव की रख राखे ।—पद्माकर (शब्द०) ।

यौ०—कुरग = बुरा ढव या ढग । बुरा लक्षण । उ०—सुनु जानकी कुरगनेनी होय न कुरग यह बढोई कुरग है ।—हृदयराम (शब्द०) । रंग ढग = (१) दशा । हालत । (२) चाल ढाल । तौर तरीका । उ०—हमारा प्रघान शाक न विक्रम के रग ढग का है न हार्लें या अकबर के । उसका रग ही निराला है ।—बालमुकुद (शब्द०) । (३) व्यवहार । बरताव । जैसे—भाजकल उसके रग ढग अच्छे नहीं दिखाई देते । ४ ऐसी बात जिससे किसी दूसरी बात का अनुमान हो । लक्षण । जैसे,—आसमान के रग ढग से तो मालूम होता है कि आज पानी बरसेगा ।

मुहा०(५)—रग काछना = चाल चलना । ढग अस्वियार करना । उ०—सूर श्याम जितने रंग काछन युवती जन मन के गोऊ हैं ।—सूर (शब्द०) । (किसी को अपने) रग में रँगना = किसी को अपने ही विचारों का बना लेना । अपना सा कर लेना ।

२२ भाँति । प्रकार । तरह । उ०—दूरि भजत प्रभु पीठि दै गुन विस्तारन काल । प्रगतत निरगुन निकट रहि चग रग भूपाल ।—विहारी (शब्द०) । २३ चौपड की गोटियों के, खेल के काम के लिये किए हुए, दो कृत्रिम विभागों में से एक ।

विशेष—चौपड की कुल गोटियाँ १६ होती हैं, जो चार रंगों में विभक्त होती हैं । इनमें से विशिष्ट दो रंग की आठ गोटियाँ 'रग' और शेष दो रंगों की आठ गोटियाँ 'वदरग' कहलाती हैं ।

मुहा०—रंग जमना = चौपड में रंग की गोटी का किसी अच्छे और उपयुक्त घर में जा बैठना, जिसके कारण खेलाडी की जीत अधिक निश्चित हो जाती है । रंग मारना = वाजी जीतना । विजय पाना । उ०—(क) यह होंठ जो कि पोपले

यारो है हमारे । इन होठों ने वीसों के बड़े रग हैं मारे ।—नजीर (शब्द०) । (ख) इष्कवाजी के लिये हमने विदाई चौसर । पासा गिरते ही गीया रग हमारा मारा ।—(शब्द०) ।

रगई—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रग + ई (प्रत्य०)] घोवियों के श्रतर्गत एक जाति जो केवल छपे हुए कपड़े धोने का काम करती है ।

रगकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गकार] रग आदि का काम करने वाला । रगसाज । रंगरज [को०] ।

रगकाष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गकाष्ठ] पतंग नाम की लकड़ी । वक्कम ।

रगचार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गचार] टकण । मोहागा [को०] ।

रगक्षेत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गक्षेत्र] १ अभिनय करने का स्थान । रगस्थल । नाट्यभूमि । २ किसी उत्सव आदि के लिये सजाया हुआ स्थान ।

रगगृह—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गगृह] १ रगभूमि । नाट्यस्थल । २ क्रीडागृह । ३ केलिमदिर ।

रगचर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गचर] १ नाटक में अभिनय करने वाला । नट । २ असयुद्ध करनेवाला योद्धा । तलवार-बाज [को०] ।

रगज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गज] सिंदूर ।

रगजननी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गजननी] लाक्षा । लाख ।

रगजीवक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गजीवक] १ चित्रकार । मुसव्वर । २ वह जो अभिनय करता हो । नट ।

रगजीविक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गजीविक] दे० 'रगकार' [को०] ।

रगड़ा(५)†—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रग + ढा (प्रत्य०)] दे० 'रग' । उ०—तेरे प्रेम की माती रे, रगई राती रे ।—दाहू, पृ० ५०४ ।

रगण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गण] नर्तन । नाचना । नाच करना [को०] ।

रगत—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रग + त (प्रत्य०)] १ रग का भाव । जैसे,—इसकी रगत कुछ काली पड गई है । २ मजा । आनंद । जैसे,—जब आप वहाँ पहुँचेंगे, तभी रगत आवेगी ।

क्रि० प्र०—खिलाना ।—खुलना ।—जमना ।

मुहा० रगत आना = मजा होना । आनंद होना ।

३ हालत । दशा । अवस्था । जैसे, आजकल उनकी रगत अच्छी नहीं है ।

रगतरा—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] एक प्रकार की बड़ी और मीठी नारंगी सगतरा ।

रगद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गद] १ सोहागा । २ खदिरसार ।

रगदलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गदलिका] नागवल्ली लता । नागवेल ।

रगदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गदा] फिटकिरी ।

रंगदायक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गदायक] ककुष्ठ नाम की पहाड़ी मिट्टी ।

रंगदृढ़ा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गदृढा] फिटकरी, जिससे रंग पक्का होता है ।

रंगदेवता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गदेवता] वह कल्पित देवता जो रंगभूमि के अधिष्ठाता माने जाते हैं ।

रंगद्वार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गद्वार] १ रंगमंच का प्रवेशद्वार । २ नाटक की भूमिका या प्रस्तावना [को०] ।

रंगन—सञ्ज्ञा पुं० [दृश्य०] एक प्रकार का मफोला वृक्ष ।

विशेष— इसके हीर की लकड़ी कड़ी, चिकनी और मजबूत होती है और हमारत के काम आती है । बंगाल, मध्यप्रदेश और मद्रास में यह पेड़ बहुतायत से होता है । इसे 'कोटा गधल' भी कहते हैं ।

रंगना^१—क्रि० सं० [हिं० रंग + ना (प्रत्य०)] १ किसी वस्तु पर रंग चढाना । रंग में ढुबाकर अथवा रंग चढाकर किसी चीज को रंगीन करना । जैसे, कपड़ा रंगना । किवाड़े रंगना ।

सयो० क्रि०—ढालना ।—देना ।

२ किसी को अपने प्रेम में फँसाना । ३. अपने कार्यसाधन के अनुकूल करने के लिये बातचीत का प्रभाव ढालना । अपने अनुकूल करना । अपना सा बनाना ।

रंगना^२—क्रि० अ० किसी के प्रेम में लिप्त होना । किसी पर आसक्त होना । उ०—जनम तामु को सुफल जो रगे राम के रंग । —रघुनाथदाम (शब्द०) ।

सयो० क्रि०—जाना ।

रंगनवास(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'रंगमहल' । उ०—राखी रंगनवास में, तै जगमाल जुआँरा ।—बाँकी० पृ०, भा० १, पृ० ७२ ।

रंगपत्रो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गपत्री] नीली वृक्ष ।

रंगपीठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गपीठ] नृत्यशाला । नाचघर [को०] ।

रंगपुरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रंगपुर (= बंगाल का एक नगर)] एक प्रकार की छोटी नाव जिसके दोनों ओर की गलही एक सी होती है ।

रंगपुष्पी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गपुष्पी] नीली वृक्ष ।

रंगप्रवेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गप्रवेश] अभिनय करने के लिये किसी पात्र का रंगभूमि में आना ।

रंगबदल—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रँग + बदलना] हल्दी । (साधु) ।

रंगबिरग—वि० [हिं० रंग + बिरग (अनु०)] १ कई रंगों का । २ भाँति भाँति के । तरह तरह के । अनेक प्रकार के । जैसे,—(क) उनके पास रंग बिरग कपडे हैं । (ख) माँ टेनी और बाप कुलग । उनके बच्चे रंग बिरग ।

रंगबिरगा—वि० [हिं० रंग बिरंग] १ अनेक रंगों का । कई रंगों का । चित्रित । २. तरह तरह का । अनेक प्रकार का ।

रंगबीज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गबीज] रजत । चाँदा [को०] ।

रंगभरियाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रंग + भरना] १ छत, किवाड़े, दीवार इत्यादि पर रंगों से चित्रकारी करनेवाला । २ रंग करनेवाला । रंगमाज ।

रंगभवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गभवन] आमोद प्रमोद या भोगविलास करने का स्थान । रंगमहल ।

रंगभीनी(७)—वि० [सं० रङ्ग + हिं० भीनना] प्रेममयी । रस में सराबोर । प्रेमासक्त । उ०—साँवरे प्रीतम सग राजत रंगभीनी भामिनी ।—नद० पृ०, पृ० ३६४ ।

रंगभूति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गभूति] आश्विन की पूर्णिमा । कोजागर पूर्णिमा ।

विशेष—कहते हैं, जो लोग इस रात को जागते रहते हैं, उन्हें लक्ष्मी आकर धन देती हैं ।

रंगभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गभूमि] १ वह स्थान जहाँ कोई जलसा हो । उत्सव मनाने का स्थान । उ०—(क) रंगभूमि आए दोउ भाई । अस सुधि सब पुरबासिन पाई । —तुलसी (शब्द) (ख) एहँ रंगभूमि चलि जबही । मल्ल युद्ध करि मारव तवही । —रघुनाथदास (शब्द०) । २. खेल, कूद वा तमाशे आदि का स्थान । क्रीडास्थल । उ०—रंगभूमि रमणीक मधुपुरी बारि चढाइ कही दह कीजो ।—सूर (शब्द०) । ३. नाटक खेलने का स्थान । नाट्यशाला । रंगस्थल । ४. वह स्थान जहाँ कुश्ती होती हो । अखाडा । ५. रंगभूमि । रणक्षेत्र ।

रंगमगल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गमङ्गल] रंगमंच की पूजा या अनुष्ठान [को०] ।

रंगमडप—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गमण्डप] रंगभूमि । रंगस्थल ।

रंगमदिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्ग + मन्दिर] दे० 'रंगमहल' । उ०—उस निस्पद रंगमदिर के व्योम में क्षीण गध निरखलव । —लहर, पृ० ८२ ।

रंगमध्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गमध्य] रंगमंच । रंगस्थल ।

रंगमल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गमल्ली] वीणा । वीन ।

रंगमहल—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रंग + अ० महल] भोगविलास करने का स्थान । आमोद प्रमोद करने का भवन । उ०—बँठी रंगमहल में राजति । प्यारी फेरि अश्रुपण माजति ।—सूर (शब्द०) ।

रंगमाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गमातृ] १ कुटनी कुटनी । २ लाख । लाक्षा ।

रंगमातृका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गमातृका] लाक्षा । लाख ।

रंगमार—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रंग + मारना] ताश का एक खेल ।

विशेष—ताश का यह खेल दो, तीन अथवा चार आदमियों में खेला जाता है । इसमें एक एक करके सब खेलनेवालों को

बराबर बराबर पत्ते बाँट दिए जाने हैं और तब खेल होता है। इसमें जिस रंग का जो पत्ता चला जाता है, उसी रंग के उससे बड़े पत्ते से वह जीता जाता है। यह ताण का सबसे सीधा खेल है।

रंगरत्नी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रंग + रत्नना] दे० 'रंगरत्नी'।

रंगरस—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रंग + रस] आमोद प्रमोद। आनन्द मगल।

रंगरसिया—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रंग + रसिया] भोगविलास करनेवाला व्यक्ति। विलासी पुरुष।

रंगराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गराज] सगीत दामोदर के अनुभार ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक भेद।

रंगरेली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'रंगरत्नी'।

रंगलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गलता] आवर्तकी लता। मरोठफली।

रंगलासिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रंगलासिनी] शेफालिका।

रंगवल्लिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [रङ्गवल्लिका] रंगवल्ली। नागवल्ली।

रंगविद्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गविद्या] नृत्य और अभिनय आदि रंगमंच संबंधी कला वा हुनर [को०]।

रंगविद्याधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गविद्याधर] १. ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक भेद। इसमें दो खाली और दो प्लुत मात्राएँ होती हैं। २. वह जो अभिनय करता हो। रंगविद्या में कुशल। नट। ३. वह जो नाचने में कुशल हो।

रंगवीज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गवीज] चाँदी।

रंगशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रंगशाळा] नाटक खेलने का स्थान। नाट्यशाला। रंगस्थल।

रंगसगर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गसङ्गर] रंगमंच पर होनेवाली प्रतिद्वंद्विता। अभिनय, नृत्य आदि की प्रतिस्पर्धा [को०]।

रंगसाज—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रंगसाज़ (सं० रङ्ग + फा० साज)] १. मेज, कुरसी, किवाड, दीवार इत्यादि पर रंग चढानेवाला। वह जो चीजों पर रंग चढाता हो। २. उपकरणों से रंग तैयार करनेवाला। रंग बनानेवाला।

रंगसाजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० रंगसाज़ी] रंगमाज का काम। रंगने का काम।

रंगारण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गाङ्गण] रंगस्थल। नाट्यशाला।

रंगारा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गाङ्गा] फिटकिरी।

रंगार्ई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रंग + आर्ई (प्रत्य०)] दे० 'रंगार्ई'।

रंगारगण—वि० [हि० रंगा + प्रा० रग] बना ठना। सजा बजा। उ०—केचिद् दीसै रंगा रग। पाट पटवर बोढाहि श्रगा।—सुंदर० प्र०, भा० १, पृ० ६३।

रंगारजीव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गाजीविन्] वह जिसकी जीविका रंगार्ई से चलती हो। रंगसाज या रंगरेज।

रंगाना—क्रि० सं० [हि० रंगाना का प्रेर० रूप] दे० 'रंगाना'।

रंगाररण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गाभरण] ताल के साठ भेदों में से एक भेद।

रंगारगण—वि० [फा०] चित्र विचित्र। रंग प्रिरण। नट नरक का। उ०—यह रंगारग विभाग भांति भांति के वानरों से भरा हुआ है।—सुंदर० प्र० (प्र०), भा० १, पृ० ७७।

रंगार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वेश्यों की एक जाति का नाम। २. राजपूतों की एक जाति। ३. एक जाति के लोग मेवाड़ और मालवे में रहते हैं। ३. मध्य तथा दक्षिण भारत में रहनेवाली एक जाति। इस जाति के लोग अपने आपकी ग्राह्यता के प्रतर्गत बतलाते और चेतौवारी करते हैं।

रंगारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गारि] करवीर। कनेर।

रंगालय—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गालय] वह स्थान जहाँ पर नाटक, कुश्नी या इसी प्रकार का और कोई नैत्र तमाशा हो।—भूमि।

रंगारवट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रंग + रावट (प्रत्य०)] रंगार्ई।

रंगारवतरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गावतरण] रंगमंच पर घाना। २. नट की उक्ति या वचन [को०]।

रंगारवतारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गावतारक] १. रंगरेज। २. अभिनय करनेवाला। नट।

रंगारवतारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गावतारिन्] अभिनय करनेवाला। नट।

रंगारणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गारणी] दे० 'रंगी'।

रंगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रङ्गारणी] १. शतमूली। २. कंवतिका नाम की लता। विशेष दे० 'कंवतिका'।

रंगी—वि० [सं० रङ्गिन्] [वि० स्त्री० रङ्गिणी] १. गानदी। मीठी। विनोदशाल। २. रंगवाला। रंगयुक्त। जैसे, बहुरंगी (को०)। ३. रंगनेवाला (को०)। ४. अभिनेता। रंगमंच पर अभिनय करनेवाला (को०)।

रंगीन—वि० [फा०] १. जिसपर कोई रंग चढा हो। रंगा हुआ। रंगदार। २. विलासप्रिय। आनंदप्रिय। जैसे, रंगीन तवीयत, रंगीन आदमी। ३. जिसमें कुछ अनोखापन हो। चमत्कारपूर्ण। मजेदार। जैसे, रंगीन इशारत, रंगीन बातचीत।

रंगीनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १. रंगीन होने का भाव। २. सजावट। बनाव सजावट। ३. वांछापन। ४. रमिता। रंगीलापन।

रंगीरेटा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का जंगली वृक्ष जो दारजिलिंग में अधिकता से होता है।

विशेष—इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है और इमारत बनाने के काम में आती है। इससे मेज, कुरसी आदि भी बनाई जाती है।

रंगीपजीवी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्गीपजीविन्] वह जो रंगशाला में अभिनय करके अपनी जीविका का निर्वाह करता हो। नट।

रंगण—वि० [सं० न्यञ्च, प्र० रणच] धोडा। अल्प। तनिक। उ०—(क) बचन मेरो कियो मजनी यह रच न प्यारे दया

मन कीन्ही ।—गुं'दर (शब्द०) । (ख) प्रदुमन लरे सप्तदश दो दिन रच हार नहीं माने ।—सूर (शब्द०) । (ग) रच न माघु जुबै मुख की वित राधिक आधिक लाच न डाटे ।—केशव (शब्द०) ।

रचकृ(उ)—वि० [सं० न्यञ्च, प्रा० एच] थोड़ा । अल्प । रच । उ०—(क) सग लिए विधु वौनी वधू रति हूँ जेहि रचक रूप दियो हे ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) हिय अचक रीति रचौ जव रचक नाइ लई उर नाह तही ।—केशव (शब्द०) ।

रंज'—सजा पु० [फा०] [वि० रंजीदा] १ दुख । खेद । २ शोक । ३ पीडा । कष्ट । दर्द (को०) ।

क्रि० प्र०—उठाना ।—करना ।—केलना ।—देना ।—पहुँचना ।—पहुँचाना ।—सहना ।

रंज^३—वि० रंजीदा । नाराज । दुखी ।

रंजक^१—सजा पुं० [सं० रञ्जक] १ रंगसाज । २. रंगरेज । ३. हिगुल । हंगुर । ४ सुश्रुत के अनुसार पेट की एक अग्नि । विशेष—यह पित्त के अतर्गत मानी जाती है । कहते हैं कि यह यकृत और प्लीहा के बीच में रहती है, और भोजन से जो रस उत्पन्न होता है उसे रंजित करती है । ५ भिलावाँ । ६ मेहदी । ७ लाल चदन (को०) ।

रंजक^२—वि० १ रंगनेवाला । जो रंगे । २. आनन्दकारक । प्रसन्न करनेवाला । जैसे, मनोरंजक ।

रंजक^३—सजा स्त्री० [हिं० रंचक (=अल्प), फा० ?] १ वह थोड़ी सी बाखूद जो बत्ती लगाने के वास्ते बट्टक की प्याली पर रखी जाती है । उ०—कैयक हजार एक बार बैरी मारि डारे रंजक दगनि मानो अग्नि रिसाने की ।—भूपण (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—देना ।—भरना ।

मुहा०—रंजक उठाना=(१) बट्टक या तोप की प्याली में बत्ती लगाने के लिये बाखूद रखकर जलाना । (२) पादना । (वाजारू) । रंजक चाट जाना=तोप या बट्टक की प्याली में रखी हुई बाखूद का यों ही जलकर रह जाना और उससे गोला या गोली न छूटना । रंजक पिलाना=तोप या बट्टक की प्याली में रंजक रखना ।

२ गंजि, तमाचू या मुलके का दम । (वाजारू) ।

मुहा०—रंजक देना=गंजि आदि का दम लगाना ।

३. वर बात जो किर्गी को भडकाने या उत्तेजित करने के लिये कही जाय । ४ बोई तीला या चटपटा चूर्ण ।

रंजकदानी—सजा पु० [हिं० रंजक + फा० दानी] रंजक रखनेवाला । बट्टक की नली में बाखूद जलानेवाला । उ०—रंजकदानी, सिगरा, तुल्लि, पलीत दानी ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० १३ ।

रंजन^१—सजा पुं० [सं० रञ्जन] १. रंगने की क्रिया । २. चित्त को प्रसन्न करने की क्रिया । ३ पित्त । सफरा । ४. रक्त चदन । लाल चदन । ५. छप्पय छद के पचासवें भेद का नाम । ६. वे

पदार्थ जिनसे रंग बनते हैं । जैसे, हल्दी, नील, लाल चदन, कुनुम, मजीठ इत्यादि । ७ भूँज । ८ सोना । ९ जायफल । १० कमीला वृक्ष ।

रंजन^२—वि० [वि० स्त्री० रञ्जनी] १ रंगनेवाला । २ आनन्द देनेवाला । रंजक (को०) ।

रंजनक—नशा पुं० [सं० रञ्जनक] कटहल ।

रंजनकेशी—सजा स्त्री० [सं० रञ्जनकेशी] नीली वृक्ष ।

रंजना(उ)—क्रि० सं० [सं० रञ्जन] १. प्रसन्न करना । आनन्दित करना । २ भजना । स्मरण करना । उ०—आदि निरंजन नाम ताहि रंज सब कोऊ ।—सूर (शब्द०) । ३. रंगना । उ०—यो सब के तन ज्ञानन में भलकी अरुणोदय की अरुनाई । अतर ते जनु रंजन को रजपूतन को रज ऊपर आई ।—केशव (शब्द०) ।

रंजनी—सजा स्त्री० [सं० रञ्जनी] १. सगीत में ऋषभ स्वर को तीन श्रुतियों में से दूसरी श्रुति । २. नीली वृक्ष । ३ मजीठी । ४. हल्दी । ५. पर्पटी । ६. नागवल्ली । ७ जतुका या पहाड़ी नाम की लता ।

रंजनीपुष्प—सजा पुं० [सं० रञ्जनीपुष्प] एक प्रकार का करंज या कजा । पूतिकरंज ।

रंजनीय—वि० [सं० रञ्जनीय] १, जो रंगने के योग्य हो । २ जो चित्त प्रमत्त कर सके । आनन्द दे सकनेवाला ।

रंजा^१—सजा स्त्री० [द्य०] एक प्रकार की मछली जिसे उलकी भी कहते हैं ।

रंजित—वि० [सं० रञ्जित] १ जिसपर रंग चढ़ा हो या लगा हो । रंगा हुआ । उ०—रंजित अजन कज विलाचन । आनत भाल तिलक गोरुचन ।—तुलसी (शब्द०) । २. आनन्दित । प्रमत्त । ३. प्रेम में पड़ा हुआ । अनुरक्त ।

रंजिश—सजा स्त्री० [फा०] १ रंज होने का भाव । २. मनमुटाव । अतनवन । ३. दमनस्य । शत्रुता ।

रंजी(उ)—नशा स्त्री० [सं० रंजम् ?] १ रंज । घूल । गर्द । २ दे० 'रंजक' । उ०—रंजी शास्त्र ज्ञान की, अंग रहीं लपटाय । सतगुर एकहि शब्द से दोन्ही तुरत उडाय ।—दरिया० वानी, पृ० १ ।

रंजीदगी—सजा स्त्री० [फा०] १. रंजीदा होने का भाव । २. अनवन । रंजिश ।

रंजीदा—वि० [फा० रंजीदह] १ जिसे रंज हो । दुःखित । २. नाराज । अप्रमत्त । शत्रुता ।

रंजूर—वि० [फा०] रोगी । कष्टनाला । दुःखी । गमगीन । उ०—हाजिर बदिने बदील रंजूर के आग ।—कबीर म०, पृ० ४६६ ।

रंजूरी—नशा पुं० [फा०] १ राग । आमय । व्याधि । २. कष्ट । पीडा । दुःख (को०) ।

रंड़^१—वि० [सं० रण्ड] १. घूर्त । चालाक । २ विकल । चंचल । ३ विच्छिन्नांग (को०) ।

रंड़^२—नशा पुं० १ बिना पुत्र पैदा किए मर जानेवाला व्यक्ति । २. वह वृद्ध जिसमें फल फूल न लगते हों । ३ घूर्त व्यक्ति (को०) ।

रंढक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण्डक] वह पेड़ जिसमें फल न आते हो ।

रंढा^१—वि० [सं० रण्डा] रंढि । विधवा । बेवा ।

रंढा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० १ विधवा महिला । २ एक छद्म या वृत्ति । ३ रंढी । वैश्या । ४ भूपिकपर्णी [को०] ।

रंढापा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रंढ + आपा (प्रत्य०)] विधवा की दशा । वैधव्य । बेवापन ।

रंढाश्रमी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण्डाश्रमिन्] वह जो ४८ वर्ष की अवस्था के उपरांत रंढुआ हुआ हो । जिसकी स्त्री ४८ वर्ष की उम्र के बाद मृत हो ।

रंढी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रण्डा] धन लेकर नाचने, गाने और सभोग करनेवाली स्त्री । वैश्या । कमवी ।

यौ०—रंढीबाज । रंढीबाजी । रंढीमु डी ।

मुहा०—रंढी रखना = किसी रंढी की सभोग आदि के लिये अपने पास रखना ।

रंढीबाज—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रंढी + बाज] वह जो रंढियों से सभोग करता हो । वैश्यागामी ।

रंढीबाजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रंढी + बाजी] रंढी के साथ गमन करना । वैश्यागमन ।

रंढव्य—वि० [सं० रन्तव्य] १ जिसके साथ रति की जा सके । रमण के योग्य । २ क्रीडा योग्य । आनन्द योग्य ।

रंढव्य^२—सञ्ज्ञा पुं० आनन्द । क्रीडा । विलास [को०] ।

रंढा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रन्ता] गी । गाय [को०] ।

रंढा^२—वि० [सं० रन्तु] १ रमण करनेवाला । २ अनुरक्त । लगा हुआ । उ०—मुनि मानस रंढा जगत नियता आदि न अत न जाहि ।—केशव (शब्द०) ।

रंढि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रन्ति] १ केलि । क्रीडा । २ विराम ।

रंढिदेव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रन्तिदेव] १ पुराणानुसार एक बड़े दानी राजा जिन्होंने बहुत अधिक यज्ञ किए थे ।

विशेष—एक बार सब कुछ दे डालने पर इन्हें ४८ दिनों तक पीने को जल भी न मिला । उनकासर्वे दिन ये कुछ खाने पीने का आयोजन कर रहे थे कि क्रम से एक ब्राह्मण, एक शूद्र और कुत्ते के लिये हुए एक अतिथि आ पहुँचे । सब सामान उन्हीं के आतिथ्य में समाप्त हो गया, केवल जल बच रहा । उसे पीने के लिये ज्यों ही इन्होंने हाथ उठाया कि एक प्यासा चाडाल आ गया और पीने के लिये जल माँगने लगा । राजा ने वह जल भी दे दिया । अतः भगवान् ने प्रसन्न होकर इन्हें मोक्ष दिया ।

२ विष्णु । ३ कुत्ता ।

रंढिनदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रन्दिनी] चबल नदी ।

रंढु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रन्तु] १, सडक । २, नदी ।

रंढ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रन्ध्र] १ बड़ी इमारतों की दीवारों के वे छेद जो रोशनी और हवा आने के लिये रखे जाते हैं । रोशनदान । २, किले की दीवारों का वह मोखा जिसमें से बाहर की ओर

बंदूक वा तोप चलाई जाती है । मार । उ०—क्या रंढी रंढक रंढ बडा क्या कोट कंगूरा अनमोला । क्या बुर्ज रंढकना तो किला क्या शीशा दारू और गोला ।—नजीर (शब्द०) ।

रंढना—क्रि० सं० [हिं० रन्दा + ना (प्रत्य०)] रंढे में छीलकर लकड़ी की सतह चिकनी करना । रंढा फेरना या बनाना ।

रंढा सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंढन (= काटना, पीरना)] बड़ई का एक श्रौजाग जिसमें वह लकड़ी की सतह छीलकर बराबर और चिकनी करता है ।

विशेष—इस श्रौजार में एक चौपहल लंबी श्रौग चिकनी मरहवानी लकड़ी के बीच में एक छोटा लंबा छेद होता है, जिसमें एक त्रिज घारवाला फन जडा रहता है । इसे हाथ में लेकर किसी लकड़ी पर बार बार रगड़ने या चलाने से उसके ऊपर से उमरी हुई सतह उतरने लगती है और थोड़ी देर में लकड़ी की सतह चिकनी हो जाती है ।

रंढ(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रन्ध्र] दे० 'रंध्र' । उ०—दमद्वे द्वार रंढ कन वदा । जहाँ काम नित करे अनदा ।—मत्० दरिया, पृ० ३६ ।

रंढक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रन्धक] १ रंढी बनानेवाला । रंढिया । २, नष्ट करनेवाला । नाशक ।

रंढन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रन्धन] १, रंढी बनाने की क्रिया । पाक करना । रंढना । २, नष्ट करना ।

रंढि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रन्धि] दे० 'रंधन' [को०] ।

रंढित—वि० [सं० रन्धित] १, पकाया हुआ । रंढा हुआ । २, नष्ट ।

रंढ्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रन्ध्र] १, छेद । सुराख ।

यौ०—रंढ्रध्र । रंढ्रध्रु = मूपक । चूहा । रंढ्रध्रश = पोला वाम । २ योनि । भग । ३, नौ की सव्या (को०) । ३, दोप । छिद्र ।

यौ०—रंढ्रगुप्ति = दोप या छिद्र छिपाना । कमजोरी छिपाना । रंढ्रमहारी = किसी की कमजोरी पर प्रहार करनेवाला ।

रंढ्रागत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रन्ध्रागत] घोंटों के गले में होनेवाला एक प्रकार का रोग ।

रंढ्रा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रंढ्रा] १, दे० 'रंभा' । २, जुनाहो का लोहे का एक श्रौजार जो लगभग एक गज लंबा होता है ।

विशेष—यह जमीन में गाड़ दिया जाता है और इसमें तानी की रस्सी बाँधी जाती है ।

रंढ्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंढ्र] १, बाँस । २, एक प्रकार का बाण । ३, पुराणानुसार महिषासुर के पिता का नाम ।

विशेष—इसने महादेव से वर पाकर महिषासुर को पुत्र रूप में प्राप्त किया था । यह भी कहा जाता है कि यही हमारे जन्म में रक्तबीज हुआ था ।

४, भारी शब्द । कलकल । हलचल । उ०—माथे रंढ्र समुद जस होई ।—जायसी (शब्द०) । ५, घूर । घूलि (को०) । ६, छड़ी । दड । डडा (को०) । ७, सहारा । आसरा (को०) । ८, एक चानर का नाम (को०) । ९, कदली । केला ।

रंढ्रभन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंढ्रभण] आलिंगन । परिभण ।

रंढ्रा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रंढ्रा] १, केला । २, गीरी । ३, गी का

रंभाना या चिह्नाना । ४ उत्तर दिशा । ५ वेश्या । ६ पुराणानुसार स्वर्ग की एक प्रसिद्ध अप्सरा । ७ चावल की एक किस्म (को०) ।

रंभा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंभा] लोहे का वह मोटा भारी डहा जिसकी सहायता से पेशराज आदि दीवारों में छेद करते या इसी प्रकार के और काम करते हैं ।

रंभा तृतीया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रंभ्या तृतीया] ज्येष्ठ शुक्ला तृतीया । विशेष—पुराणानुसार इस तिथि को व्रत करने का विधान है ।

रंभापति—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंभापति] इन्द्र ।

रंभाफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंभाफल] केला ।

रंभित—वि० [सं० रंभित] १ शब्द किया हुआ । बोलाया हुआ । २ वजाया हुआ ।

रंभिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रंभिनी] एक रागिनी जो भैरव राग की पुत्रवधु मानी जाती है ।

रंभी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंभिन्] १ वह जो हाथ में वेंत या दड लिए हो । २ बुद्धा आदमी । वृद्ध । ३ द्वारपाल । दरवान ।

रंभोर, रंभोरू—वि० [सं० रंभोर, रंभोरू] १ (स्त्री) जिसकी केले के खेभे के समान सुहोल, चिकनी और उतार चढ़ाववाली जर्धें हो । २. सुदर । खूबसूरत ।

रंभू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंभू] १. वेग । गति । तेजी । २ उग्रता । चढता । तीक्ष्णता (को०) । ३ उत्कट लालसा (को०) । ४ शिव का एक नाम (को०) । ५ विष्णु का एक नाम (को०) ।

रंभू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तेजी से जाना । तीव्र गति वा गमन (को०) ।

रंभूति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गति । वेग । चाल । २. रथ का वेग (को०) ।

रंभू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जलप्रवाह । सोता । २ प्रवाह । धारा । ३ पीछा करने की क्रिया । पीछा करना । दौडाना । ४ धीघ्रता । तेजी (को०) ।

रंभू^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंभू, रंभू, रंभू] दे० 'रंभू' । उ०—त्यौ पदमाकर यो मुग मे रंभू देखत हौ कवकी रुख राखे ।—पद्माकर (शब्द०) ।

रंभू^२—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] रंगसाज । चितेरा । चित्रकार । उ०—पुहमीपति दुइ रतन बटोरा । सामुद्रिक औ रंभूधर जोरा ।—चित्रा०, पृ० १८५ ।

रंभूना^१—क्रि० सं०, क्रि० अ० [हिं० रंभू + ना] दे० 'रंभूना' । उ०—(क) लाज गडी मुख खोलै न बोलै कियो रंभूनाथ उपाय दुनी को । कोटि रंभू नहि एक लगै जिमि सुम के आगे सयान गुनी को ।—रंभूनाथ (शब्द०) । (ख) सतन के उपदेश तें रंभू कछुक हरि रंग ।—रंभूराज (शब्द०) ।

रंभूगना^१—क्रि० अ० [सं० रंभू + गना] रंभूना । पगना । रजित होना । रागयुक्त होना । उ०—सोहत श्याम जलद मृदु घोरत घातु रंभूगने सुंगनि ।—रस०, पृ० १३६ ।

रंभूरली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रंभू + रली] आमोद प्रमोद । आनंद । क्रीड़ा । चैन । मौज । उ०—कुड्य कोप तजि रंभूरली

करति जुवति जग जोई । पावम बात न गूढ यह बूढनि हूँ रंभू होई ।—विहारी (शब्द०) ।

रंभू^१—रंभूखियाँ मचाना या धरना ॥ आनंद भगल और आमोद प्रमोद करना । उ०—(क) तुम्हारे यही दिन हंसने बोलने और रंभूखियाँ करने के हैं ।—अयोध्या (शब्द०) । (ख) तमाम शहर में हर सू मर्ची है रंभूखियाँ । गुलाल अवीर से गुल्जार है सभी गलियाँ ।—नजीर (शब्द०) ।

रंभूस^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रंभू + रस] दे० 'रंभूस' । उ०—सुधराई के गरव भरी जानति सब रंभूस ।—व्यास (शब्द०) ।

रंभूसियाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रंभूस + इया (प्रत्य०)] विलासी व्यक्ति । रंभूसिया ।

रंभूराता—वि० [सं० रंभू + राता] [वि० स्त्री० रंभूराती] १ भोग विलास में लगा हुआ । ऐश आराम में मस्त । २ प्रेम-युक्त । अनुगागपूर्ण । उ०—रंभूराती रातें हियँ प्रियतम लिखी बनाइ । पाती काती विरह को छाती रही लगाइ ।—विहारी (शब्द०) ।

रंभूरूट—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रंभूरूट] १. सेना या पुलिस आदि में नया भर्ती होनेवाला सिपाही । २. किसी काम में पहले पहल हाथ डालनेवाला आदमी । वह आदमी जो कोई काम सीखने लगा हो । जिसने कोई नया काम करना शुरू किया हो । वह जिसे कार्य का अनुभव न हो । जैसे,—वह अभी व्याख्यान देना क्या जाने, बिलकुल रंभूरूट है ।

रंभूरेज—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] [स्त्री० रंभूरेजिन] कपड़े रंगनेवाला । वह जो कपड़े रंगने का काम करता हो ।

रंभूरेली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'रंभूरेली' । उ०—भँसन देहु करन रंभूरेली । सोग पखारि कुड विच केली ।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०) ।

रंभूरेनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रंभू + रेनी (= जुगनू)] एक प्रकार की लाल रंग का चुनरी ।

रंभूवा—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] चौपायो का एक रोग ।

रंभूवाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'रंभूवाई' ।

रंभूवाना—क्रि० सं० [हिं० रंभूवाना का प्रेर० रूप] रंभूवाने का काम दूसरे से करना । दूसरे को रंभूवाने में प्रवृत्त करना ।

रंभूवाल^१—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रंभू + हिं० वाल (प्रत्य०)] दे० 'रंभूरेज' । उ०—सीतगर दरजी तवोली रंभूवाल म्नाल । बाढई सगतरास तेली घोवी धुनिआ ।—अर्थ०, पृ० ४ ।

रंभूवाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रंभू + आई (प्रत्य०)] १. रंभूवाने का काम । रंभूवाने की क्रिया । २. रंभूवाने का भाव । जैसे,—हसको रंभूवाई बहुत अच्छी हुई है । ३. रंभूवाने की मजदूरी ।

रंभूवाना—क्रि० सं० [हिं० रंभूवाना का प्रेर० रूप] रंभूवाने का काम दूसरे से कराना । दूसरे को रंभूवाने में प्रवृत्त करना ।

रंभूवावट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रंभू + आवट (प्रत्य०)] रंभूवाने का भाव । रंभूवाई ।

रंगा सियार—सञ्ज्ञा पुं [हिं०] ढोगी व्यक्ति । छद्मवेश में रहनेवाला आदमी ।

विशेष—इस शब्द के पीछे एक कहानी है । घूमते घामते कोई सियार रात को बस्ती में आ निकला । वहाँ वह घोखे से नील की नाँव में गिर पड़ा । सर्वांग उसका नीला हो गया । सियार बहुत चालाक था । उसने अपने बदले हुए रंग का फायदा उठाया । जंगल में जाकर उसने अपने को देवताओं द्वारा नियुक्त सब जानवरों का राजा घोषित कर दिया । कुछ दिनों बाद भेद खुलने पर उसकी बड़ी दुर्गति हुई ।

रंगियाँ—सञ्ज्ञा पुं [हिं० रंग + इया (प्रत्य०)] १ कपड़े रंगनेवाला । रंगरेज । २ रंगसाज ।

रंगिली—वि० स्त्री [हिं० रंगिली] दे० 'रंगीला' । उ०—डारत अतर लगाइ अरगजा रंगिली समधिनि देखि ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ३८० ।

रंगीला—वि० [हिं० रंग + ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री रंगीली] १ आनदी । मौजी । रसिया । रसिक । उ०—श्याम रंग रंगीले नैन ।—सूर (शब्द०) । २ सुदर । खूबसूरत । जैसे,—रंगीला जवान । उ०—कहै पदमाकर एते पै यो रंगीलो रूप देखे बिन देखे कहीं कैसे धीर धारिए ।—पद्माकर (शब्द०) । ३. प्रेमी । अनुरागी ।

रंगीली टोड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं० रंगीली + टोड़ी (एक रागिनी)] सपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं । यह टोड़ी रागिनी का एक भेद है ।

रंगैयाँ—सञ्ज्ञा पुं [हिं० रंग + ऐया (प्रत्य०)] रंगनेवाला ।

रंडपुरा—सञ्ज्ञा पुं [हिं०] दे० 'रंडापा' । उ०—कवहुँ न चढे रंडपुरा जानै सब कोई । अजर अमर अविनाशिया ताको नास न होई ।—मल्लक०, पृ० ३ ।

रंडरोना—सञ्ज्ञा पुं [हिं०] रंड का रोना । (पति न होने से जिसका कोई प्रभाव नहीं होता ।) रंड की तरह रोना । अरख्यरोदन । उ०—अगर उसके वस्त्र के सब रंडरोना है यह हंसी नहीं ।—भारतेंदु ग्र०, भा० १, पृ० ५७० ।

रंडापा—सञ्ज्ञा पुं [हिं० रंड + आपा (प्रत्य०)] रंडापा । वैधव्य । वैवापन ।

मुहा०—रंडापा खेना या बिताना = किसी प्रकार वैधव्य जीवन व्यतीत करना ।

रंडुआ, रंडुआ—सञ्ज्ञा पुं [हिं० रंड + उआ (प्रत्य०)] वह पुरुष जिसकी स्त्री मर गई हो ।

रंडोरा—सञ्ज्ञा पुं [हिं० रंड + ओरा (प्रत्य०)] [स्त्री रंडोरी] वह पुरुष जिसकी स्त्री मर गई हो । रंडुना ।

रंभाना—क्रि० अ० [म० रंभण] गाय का बोलना । गाय का शब्द करना । उ०—वाजत वेणु विपारा सब अपने रंग गावत । मुरली धुनि गी रभि चलत पग धुरि उडावत ।—सूर (शब्द०) ।

रंभाना—क्रि० स० गी से रंभण कराना । गी को शब्द करने में प्रवृत्त करना ।

रंहचटा—सञ्ज्ञा पुं [सं० रहस् अथवा हिं० रहन + चाट] मनोरथ सिद्धि की लालसा । लालच । चस्का । उ०—(क) ज्यो ज्यो आवत निकट निसि त्यो त्यो खरी उताल । भमके भनके टहलै करे लगी रंहचटे वाल ।—विहारी (शब्द०) । (ख) कन दैवी मोंप्यो ससुर बहु थुरहथी जानि । रूप रंहचटे लागि लग्या मोंगन सब जग आनि ।—विहारी (शब्द०) ।

रं—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ पावक । अग्नि । २ कामाग्नि । ३. सितार का एक बोल । ४ जलना । कुलमना । ५ आच । ताप । गरमी । ६ सोना । स्वर्ण (को०) । ७. वर्षा (को०) । ८ चालीस की संख्या (को०) । ९ छद्मशास्त्र में एक गण । रण्य जो मध्यलघु होता है (को०) ।

रं—वि० तीक्ष्ण । प्रखर ।

रअय्यत—सञ्ज्ञा स्त्री [अ० रअय्यत] १. प्रजा । रिघाया । २ काशतकार । ३ सेवक । मुलाजिम । नौकर (को०) ।

रइअत—सञ्ज्ञा स्त्री [अ० रअय्यत] दे० 'रअय्यत' ।

रइकौ—क्रि० वि० [हिं० रची + कौ (प्रत्य०)] या रचकू] जरा भी । तनिक भी । कुछ भी । उ०—ऐसी अनहोन लाज मानति कह्यो न देव होन कहूँ पाप रइकौ सी होन पाउठी ।—देव (शब्द०) ।

रइनि—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० रजनी, प्रा० रयणो] रात । रात्रि निशि । उ०—(क) रइनि रेनु होइ रविहि नामा । मानुन पखि लेहि फारि वासा ।—जायसी (शब्द०) । (ख) जहनाँ जात रइनियाँ तहँवाँ जाहु । जोरि नयन निरलजवा कत मुमुकाहु ।—रहिमन (शब्द०) ।

रइवारी—सञ्ज्ञा पुं [दे० या गुज० रवारी (= पं० सुमकड़ जाति)] एक जाति जो ढोरो को चराने और रखने का काम करता है । उ०—रइवारी ढोलउ कहइ, करहुउ आछउ एक ।—ढोला०, दू० ३०६ ।

रइयत—सञ्ज्ञा स्त्री [अ० रजयत] दे० 'रअय्यत' । उ०—आयो भरथ अरव अरग, मडे पावडा उतमग । रइयत कीष अत उछरग, इम आवास जाय उमग ।—रघु०, पृ० १२२ ।

रई—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० रथ (= हिलाना)] दही मथने की लरुड़ी । मथनी । खैलर । उ०—वासुका नेति अरु मदराचल रई कमठ में आपनी पीठ वार्यो ।—सूर (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—चलना ।—चलाना ।—फेरना ।

रई—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं० रवा] १ गेहूँ का मोटा आटा । दरदरा आटा । २ सूजी । ३ चूर्ण मात्र । उ०—चूरो करिहै रई ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) ।

रई—वि० स्त्री [हिं० रयना, रचना > सं० रञ्जन] १ हवी हुई । पपी हुई । (क) उरहन दैन चली जमुमति को मनमाहन के रूप रई ।—सूर (शब्द०) । (ख) माधा राधा के रंग राचे राधा माधो रग रई ।—सूर (शब्द०) । २. अनुरक्त । उ०—(क)

रहना परस्पर आपुग मे सव कहाँ रही हम काहि रई ।—मूर (शब्द०) । (ख) स्वांग सूधो साधु की, कुचालि कलि तें अधिक, परलोक फीकी, मति लोक रग रई ।—तुलसी (शब्द०) । ३ युक्त । सहित । मयुक्त । उ०—(क) वीर त्रिसे बलवन हुते जो हृती हग केशव रूप रई जू ।—केशव (शब्द०) । (ख) करिए युत मूपण रूप रई । मिथिलेश मुना इक स्पर्श मई ।—केशव (शब्द०) । ४. मिली हुई ।

रईस—सजा पु० [अ०] [वि० रईसाना] १ वह जिनके पारु रियासत या इनाका हो । तअरलुकेदार । भूस्वामी । सरदार । २ प्रतिष्ठित और धनवान पुरुष । बडा आदमी । श्रीर । धनी । जैसे,—उमकी दावत मे शहर के बडे बडे रईस आए थे ।

श्री०—रईसुल पहर = नामेनापति । रईसजादा । रईसजादी ।

रईसी—सजा स्त्री० [अ० रईस + ई] श्रीमरी । धनाढ्यता । ऐश्वर्य-संपन्नता ।

रउताई (उ०) —सजा पु० [हि० रावउ + आई (प्रत्य०)] मालिक होने का भाव । प्रभुत्व । स्वामित्व । उ०—धनि सो खेल खेल सह पेमा । रउताई अउ कूसल खेमा ।—जायसी (शब्द०) ।

रउरी—सर्व० [हि० राव, रावल] मध्यम पुरुष के लिये आदरमूचक शब्द । आप । जनाव । उ०—विप्र सहित परिवार गोसाई । करहि छोह सब रउरिहि नाई ।—तुलसी (शब्द०) ।

रऐयत—सजा स्त्री० [अ०] प्रजा । रिआया ।

रऊछाँ—सजा पु० [हि० रिकच] पत्तो की पकीडी । पतोड । उ०—पान कतरि छोके रऊछ डारि मिर्च श्री आदि । एक खड जो खावै पावै सहस सयादि ।—जायसी (शब्द०) ।

रऊत (उ०) —सजा पु० [स० रक्त] लहू । खून । रधिर ।

रऊत—वि० ताल । सुर्ख ।

रऊतकद—सजा पु० [स० रक्तकन्द] १ मूंगा । प्रवाल । विद्रुम (हि०) । २ राजपलाटु । रक्तालु । रतालु ।

रऊताङ्ग (उ०) —सजा पु० [स० रक्तान्ग] १ विद्रुम । प्रवाल । मूंगा । (हि०) । २ कुकुम । केमर । ३ रक्तचदन । लाल चदन ।

रऊती—वि० [हि० रक्त + ई (प्रत्य०)] सुर्खा लाल । जो खून की तरह लाल हो । उ०—उसे पूरी आशा हो गई, उनकी बडी बडी रऊती गाँसे देखकर कि, प्रव उमकी गरदन बिना नप न बचेगी ।—शरानी, पृ० ६१ ।

रऊती—सजा स्त्री० आँखो मे जमा हुआ खून या उतकी लाली ।

रऊया—सजा पु० [अ० रऊय] वह गुणनफल जो किसी क्षेत्र की लाराई नीर बीडाई की गुणा करने मे प्राप्त हो । क्षेत्रफल ।

रऊयाहा—सजा पु० [दश०] घोडा का एक भेद । उ०—ऊर रऊयाहे गिलनाकी कुही कादिल के, पुरानानो खजरीट खजन खलक के ।—तुलसी (शब्द०) ।

रऊमजनी—सजा स्त्री० [स० रऊम] एक प्रकार का पोया ।

रऊम—सजा पु० [अ० रऊम] १ लिराने की शिवा या भाव । २

छाप । मोहर । ३ रूपया या बीघा बिस्वा आदि निगने के फारसी के विभिन्न श्रक जो साधारण गंव्यानुचक श्रको मे भिन्न होने हैं । ४ नियत मख्या का धन । नपति । दोन । ५ गहना । जेवर । ६ धनवान । मानदार । ७ चलता पुरजा । चालाक । धूर्त । ८ नवयोजना और मुदरी स्त्री । (वाजान्) । ९ नगान की दर । १० प्रकार । तरह । भाँति । ११ एक प्रकार का कमीदा किया कपडा जो धानीदार होता है ।

रऊी—रऊम पताई = माल मत्ता । जमा पूंजी । रऊम सायर, रऊम सिराय = लगान के प्रतिरिक्त मिलनेवाली श्रामदनी ।

रऊमी—सजा पु० [अ० रऊमी] वह किगान जिनके साथ कोई काम रिआयत की जाय ।

रऊमी—वि० १ लिखा हुआ । लिखित । २ रेखाकित चिह्नित । निशान किया हुआ [को०] ।

रऊक—सजा पु० [अ० रऊक] पटपर नरम भूमि । चीरस पीर मुलायम मिट्टीवाली जमीन ।

रऊकान—सजा स्त्री० [हि०] १ तीर तरीका । २, बल्गा । लगाम ।

रऊकव—सजा स्त्री० [फा०] १. घोडो की काठी का पावदान जिनपर पैर रखकर सवार होते हैं और बैठने मे जिनसे महारा लेने हैं । घोडो की जीन का पावदान । (यह लोहे का एक घेरा होता है, जो जीन मे दोनो ओर रस्सी या तस्मे से लटका रहता है ।)

मुहा०—रऊकव पर पैर रखना, रऊकव मे पाँव रहना = जाने के लिये उद्यत होना । चलन के लिये बिलकुल तैयार होना । जैसे,—(क) आप तो पहले से ही रऊकव पर पैर रखे हुए हैं । (ख) आप जब आते हैं, तब रऊकव पर पैर रखे आते हैं ।

२ रऊकवी । तशरी ।

रऊकवत—सजा स्त्री० [अ० रऊकवत] एक नायिका के दो प्रेमियों की परस्पर प्रतिद्विष्टता । एक नायक को चाहनेवाली दो नायिकाओ का परस्पर डाह [को०] ।

रऊकवदार—सजा पु० [फा०] १. मुरव्या, मिठाई आदि बनानेवाला । हनुवाई । २ रऊकवियो मे खाना चुनने और लगानेवाला । बानमार्ग । ३. बादशाहो के साथ खाना लेकर चलनेवाला सेवक । खाना बरदार । ४ रऊकव पकडकर घोडे पर नवार कगनवाला । नौकर । नाईब ।

रऊकवा—सजा सं० [फा०] बडी बानी । परात । तशनरी ।

रऊकवी—सजा स्त्री० [फा०] एक प्रकार की छिजनी छोटी थानी, जिनकी दीवार बहुत कम ऊँची श्रवया घाट की धार मुठी हुई होती है । तशनरी ।

रऊकर—सजा पु० [स०] रऊग का बोधक श्रकर । २ ।

रऊकीक—वि० [अ० रऊकीक] १ पानी की तरह पन्ना । तरल । द्रव । २. कोमल । मुलायम । नरम ।

रऊकीक—वि० [अ०] श्रयम । मुत्त । कमीना [को०] ।

रऊकीव—सजा पु० [अ० रऊकीव] [स० स्त्री० रऊकीव] दर प्रनियों

जो किसी प्रेमिका के सबध में प्रतियोग करता हो। प्रेमिका का दूसरा प्रेमी। सपत्न।

रकेवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [क्रा० रकावी, रिक्कावी] दे० 'रकावी'।

रक्कास—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रक्कास] [स्त्री० रक्कासा] ताडव नृत्य (पुरुष नृत्य) करनेवाला। नर्तक। नाचनेवाला व्यक्ति [क्रो०]।

रक्खना—क्रि० सं० [सं० रक्खण, प्रा० रक्खण, हिं० रक्खना] दे० 'रक्खना'।

रक्त^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह प्रसिद्ध तरल पदार्थ जो प्रायः लाल रंग का होता और शरीर की नसों आदि में से होकर वहाँ जाता है। लहू। रुधिर। खून।

विशेष—साधारणतः रक्त से ही हमारे शरीर का पोषण और रक्षण होता है। यह हृदय द्वारा परिचालित होता और सदा सारे शरीर में चक्कर लगाया करता है। शरीर के अंगों में पोषक द्रव्य रक्त के द्वारा ही पहुँचता है, और जब रक्त कहीं से चलता है, तब उस स्थान के दूषित या परित्यक्त अणुओं को भी अपने साथ ले लेता है। इस प्रकार इससे जो दूषित अणु या विष आ जाता है, वह फुफ्फुस की क्रिया से नष्ट हो जाता है, और फुफ्फुस में आने के उपरांत रक्त फिर शुद्ध हो जाता है। हृदय से जो साफ रक्त चलता है, वह लाल होता है। पर फिर जब शरीर के अंगों से वही रक्त फुफ्फुस की ओर चलता है, तब वह काला हो जाता है। रक्त जल से कुछ भारी होता है, स्वाद में कुछ नमकीन होता है और पारदर्शी नहीं होता। साधारणतः इसका तापमान १००° फहरन हाइट होता है, पर रोगों में यह वात घट या बढ़ जाता है। इसमें दो भाग होते हैं—एक तो तरल जिसे 'रक्तवारि' कह सकते हैं, और दूसरे रक्तकण जो उक्त 'रक्तवारि' में तैरते रहते हैं। ये कण दो प्रकार के होते हैं—श्वेत और लाल। ये कण वास्तव में सजीव अणुपिंड हैं। शरीर से बाहर निकलने पर अथवा मृत्यु के उपरांत शरीर के अंदर रहकर भी रक्त बिलकुल जम जाता है। प्रायः सारे शरीर का ३० वाँ भाग रक्त होता है। पशुओं का रक्त प्रायः चोनी आदि साफ करने और खाद तैयार करने के काम में आता है। हमारे यहाँ के वैद्यक शास्त्र के अनुसार यह शरीर की सान मुख्य धातुओं में से एक है और यह स्निग्ध, गुरु, चलनशील और मधुर रस कहा गया है।

पर्या०—रुधिर। लोहित। अरु। क्षतज। शोणित। रोहित। रगक। फीलाल। अगज। स्वज। शोण। लोह। चर्मज।

मुहा०—के लिये दे० 'खून' के मुहावरे।

२ कुकुम। केसर। ३ ताँबा। ४ पुराना और पका हुआ आँवला। ५ कमल। ६ सिंदूर। ७ हिंगुल। शिगरफ। ईगुर। ८ पतंग की लकड़ी। ९ लाल चदन। कुचदन। १० लाल रंग। ११ कुमुभ। १२ नदीतट पर होनेवाला एक प्रकार का वेत। हिजमल। १३ बधूक। गुलदुपहरिया। १४ एक प्रकार की मधुनी। १५ एक प्रकार का जहरीला मेढक। १६ एक

प्रकार का विच्छू। १७ शिव का एक नाम (क्रो०)। १८ मंगल ग्रह (क्रो०)।

रक्त^२—वि० [सं०] १ चाह या प्रेम में लीन। अनुरक्त। २ रंग हुआ। ३. लाल। सुर्ख। ४ विहारमग्न। ऐयाश। विलासी। ५. साफ किया हुआ। शोधित। शुद्ध।

रक्त आमातिसार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें लहू के दस्त आते हैं।

रक्तकगु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तकगु] साल का वृक्ष जिससे राल निकलती है।

रक्तकटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तकटा] विककत वृक्ष।

रक्तकठ^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तकठ] १ कोयल। २ भौटा। भटा। बैंगन। ३—रक्तकठ ताँबूल निवार। पदाम्यग वसवाहन द्वार।—विश्राम (शब्द०)।

रक्तकठ^२—वि० १ जिसका कठ लाल रंग का हो। २ जिसकी आवाज मीठी हो (क्रो०)।

रक्तकठी—वि०, सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तकठिन्] दे० 'रक्तकठ' [क्रो०]।

रक्तकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तकद] १ विद्रुम। मूंगा। २ प्याज। ३ रतावू।

रक्तकदल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तकदला] मूंगा। विद्रुम।

रक्तकमल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तकमल] नीलोफर। कूँई।

रक्तक^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गुलदुपहरिया का पौधा या फूल। बधूक। २ लाल सहिजन का वृक्ष। ३ लाल अडों का वृक्ष। लाल रेंड। ४ लाल कपडा। ५ खून। रुधिर। रक्त (क्रो०)। ६ लाल रंग का घोड़ा। ७ केसर। कुकुम।

रक्तक^४—वि० १ लाल रंग का। २ प्रेम करनेवाला। अनुरागी। ३ विनोदी। मसखरा।

रक्तकदम्ब—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तकदम्ब] एक प्रकार का कदम का वृक्ष जिसके फूल बहुत लाल रंग के होते हैं।

रक्तकदली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चपा केला।

रक्तकमल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल रंग का कमल।

विशेष—वैद्यक में यह कटु, तिक्त, मधुर, शीतल, रक्तदोषनाशक, बलकारक और पित्त, कफ तथा वात को शमन करनेवाला माना गया है।

रक्तकरवीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल रंग का कनेर।

विशेष—वैद्यक में यह कटु, तीक्ष्ण, विशोवन और व्रण, कटु, कुष्ठ तथा विष का नाशक माना गया है।

रक्तकाचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तकाचन] कचनार का वृक्ष। कचनाल। पर्या०—विदल। चमरिक। काचनाल। ताम्रपुष्प। कुंदार।

रक्तकाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तकान्ता] लाल रंग की पुनर्नवा। लाल गदहपूरना।

रक्तका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पानी आँवला।

रक्तदला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नलिका नाम का गंधद्रव्य ।
 रक्तदिग्ध—वि० [सं० रक्त + दिग्ध] रक्तसिक्त । खून से भीगा हुआ ।
 रक्तमय । उ०—रक्तदिग्ध धरणी मे रूप की विजय मे ।—
 लहर, पृ० ८४ ।
 रक्तद्रूपण—वि० [सं०] जिससे रक्त दूषित हो । खून को खराब करने-
 वाला ।
 रक्तदृग—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तदृक्] १ कोयल । कोकिल । २ एक
 प्रकार का कपोत ।
 रक्तदृग—वि० लाल आँखोवाला । जिसकी आँखें लाल हों ।
 रक्तद्रुम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल बीजासन वृक्ष ।
 रक्तधरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक के अनुसार मास के भीतर की दूसरी
 कला या भिन्नी जो रक्त को धारण किए रहती है ।
 रक्तधातु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गेरू । २ तौँवा ।
 रक्तनयन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कवूतर । २ चकोर ।
 रक्तनाडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तनाडी] दाँतो की जड़ मे हेनेवाला एक
 प्रकार का रोग ।
 रक्तनाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जीवशाक । सुसना ।
 रक्तनासिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] उल्लू ।
 रक्तनिर्यास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल रंग का बीजासन वृक्ष ।
 रक्तनील—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का बहुत
 जहरीला विच्छू ।
 रक्तनेत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सारस पक्षी । २ कवूतर । ३. चकोर ।
 रक्तनेत्र—वि० जिसकी आँखें लाल हो ।
 रक्तप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजस ।
 रक्तप—वि० रक्त पीनेवाला ।
 रक्तपक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गरुड़ ।
 रक्तपट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल रंग के कपड़े पहननेवाला, श्रमण ।
 रक्तपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पिंडालू ।
 रक्तपात्रा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लाल गदहपूरना । २ नाकुली ।
 रक्तपदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लजालू । लज्जावती ।
 रक्तपद्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल कमल । रक्तोत्पल [को०] ।
 रक्तपर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल गदहपूरना ।
 रक्तपल्लव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शशोक का वृक्ष ।
 रक्तपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जोक । २ डाकिनী ।
 रक्तपाका—सञ्ज्ञा स्त्री० [स्त्री०] वृहती नाम की लता ।
 रक्तपाणि—वि० [सं० रक्त + पाणि] खूनी या खून मे सने हुए हाथ-
 वाला । जिसके हाथ रक्त वहाने या हिंसा करने के श्रम्यस्त हो ।
 उ०—वहाँ विद्याव्यसनियो की नही रक्तपाणि राजसी का
 बोलवाला है ।—किन्नर०, पृ० ६० ।
 रक्तगत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. लहू का गिरना या बहना ।

रक्तमाव । २ ऐसा लडाई भगटा जिसमें लोग जग्मी हों ।
 खून खराबी । ३ ऐसा प्रहार जिससे किसी का रक्त बहे ।

रक्तपाता—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जोक ।
 रक्तपाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वग्गद । २ तीता । ३ युद्ध का
 रथ । नगाई का रथ (को०) । ४ हाथी (ने०) ।
 रक्तपायी—वि० [सं० रक्तपायिन्] [वि० स्त्री० रक्तपायिनी]
 रक्तपान करनेवाला । खून पीनेवाला ।
 रक्तपायी—सञ्ज्ञा पुं० मत्कुण । खटमल ।
 रक्तपारद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हिंगुल । शिगरफ । ईंगुर ।
 रक्तपापाण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लाल पत्थर । २ गेरू ।
 रक्तपिड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तपिड] १ जवा का फून । २ लाल
 रंग की पुडिया (को०) । ३ नाक से खून बहना ।
 नकमीर (को०) ।
 रक्तपिडक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तपिडक] १ रतालू । २ जवा का
 फून । प्रटहल ।
 रक्तपिंडालु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तपिंडालु] रतालू ।
 रक्तपित्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रकार का रोग जिसमें मुँह,
 नाक, गुदा, योनि आदि इंद्रियो ने रक्त गिरता है ।
 विशेष—यह रोग घूप मे अधिक रहने, बहुत व्यायाम करने, तीक्ष्ण
 पदार्थ खाने और बहुत अधिक मंथन करने के कारण होता है ।
 यह रोग स्त्रियों के रजोघर्म ठीक न होने के कारण भी हो जाता
 है । यह रोग पित्त के कुपित होने से होता है ।
 २ नाक से लहू बहना । नकसीर ।
 रक्तपित्तहा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रतनी नाम की दूध ।
 रक्तपित्ती—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तपित्तिन्] वह जिसे रक्तपित्त रोग हो ।
 रक्तपुच्छक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रेंगनेवाला कीड़ा ।
 रक्तपुनर्नवा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लाल रंग की पुनर्नवा या गदहपूर्ना ।
 वैद्यक में इसे तिक्त, सारक और रक्तप्रदर, पांडु तथा पित्त
 आदि का नाशक माना है ।
 पर्या०—ऋरा । मडलपथिका । रक्तकाता । वर्षकेतु । लोहिता ।
 रक्तपथिका । वैशाखी । पुष्पिका । विषची । सारिणी ।
 वर्षाभव । भौम । पुनर्भव । नव । नव्य ।
 रक्तपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ करवीर । कनेर । २ अनार का पेड़ ।
 २. वधूक का पेड़ । गुलदुपहरिया । ४ पुन्नाग । ५ अडहल ।
 जवा का फूल (को०) ।
 रक्तपुष्पक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पलास का पेड़ । २ सेमल का पेड़ ।
 शाल्मलि ।
 रक्तपुष्पा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. शाल्मली वृक्ष । सेमल । २ पुनर्नवा ।
 ३ सिद्धरी । ४ चाा केला । ५ नागदीन ।
 रक्तपुष्पिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ लाल पुनर्नवा । २ लजालू ।
 लाजवंती ।
 रक्तपुष्पी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जवा । अडहल । २ नागदीन ।
 ३ घी । ४. श्रावर्तकी नाम की लता । ५ पाँडर ।

रक्तपूतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लाल रंग की पूतिका । लाल पोई ।
 विशय—वैद्यक में यह स्निग्ध और मूत्रवर्धक मानी गई है । वच्चो
 क कई रोगों में और सूजाक में इसका साग गुणकारी माना
 गया है । शास्त्र में इसका साग खाने का निषेध है ।
 रक्तपूय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक नरक का नाम ।
 रक्तपूरक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हमली ।
 रक्तपूर्ण—वि० [सं० रक्त + पूर्ण] रक्त से भरा हुआ । रक्ताक्त ।
 रक्तप्रतिश्याय—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तप्रतिश्याय] प्रतिश्याय या जुकाम
 का एक भेद । बिगड़ा हुआ जुकाम ।
 विशेष—इसमें नाक से खून जाता है, आंखें लाल हो जाती हैं,
 छाती में पीडा होती है और मुँह तथा साँस से बहुत दुर्गंध
 आती है ।
 रक्तप्रदर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्रदर रोग का वह भेद जिसमें स्त्रियों की
 योनि से रक्त बहता है । विशेष दे० 'प्रदर' ।
 रक्तप्रमेह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुरुषों का एक रोग जिसमें दुर्गन्धियुक्त
 गरम, खारा और खून के रंग का पेशाब होता है ।
 रक्तप्रवृत्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह रोग जो पित्त के प्रकोप से
 उत्पन्न हो ।
 रक्तप्रसव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लाल कनेर । २ मुचकुद वृक्ष ।
 रक्तफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शालमलि । मेमल । २. वट का वृक्ष ।
 वट का पेड़ ।
 रक्तफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कुंदरू । तुण्टी । विवी । २.
 स्वर्णवल्ली ।
 रक्तफूल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रक्त + हि० फूल] १. जवा पुष्प ।
 शब्दहूल का फूल । २ पलास का वृक्ष ।
 रक्तफेनज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] फुफ्फुम । फेफडा ।
 रक्तभव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मास । गोशत ।
 रक्तभाव—वि० [सं०] १ लाल रंग का । २ अनुरक्त भाववाला ।
 प्रणयी । प्रेम करनेवाला [को०] ।
 रक्तमजर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तमञ्जर] १ बेंत की लता । २ नीम
 का पेड़ ।
 रक्तमजरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तमञ्जरी] लाल कनेर ।
 रक्तमडल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तमण्डल] १ सुश्रुत के अनुसार एक
 प्रकार का साँप । २ लाल कमल । ३ एक प्रकार का
 जहरीला पशु ।
 रक्तमडलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तमण्डलिका] लाल लज्जावती
 या लजाबू ।
 रक्तमत्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो रक्त पीकर तृप्त हो । जैसे,
 खटमल, जोक आदि । २ राक्षस । रक्तस [को०] ।
 रक्तमत्स्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की लाल रंग की मछली ।
 विशेष—यह बहुत बड़ी नहीं होती । वैद्यक में इसका मांस

शीतल, रुचिकारक, पुष्टिकारक, अग्निदीपक और त्रिदोष का
 नाशक माना गया है ।

रक्तमस्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल रंग के सिरवाला सारस पक्षी ।
 रक्तमातृका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वैद्यक के अनुसार वह रस
 नामक धातु जिसकी उत्पत्ति पेट में पचे हुए भोजन से होती
 है और जिससे रक्त बनता है । २ तत्र के अनुसार एक प्रकार
 का रोग ।
 रक्तमुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रोहू । मछली । २ यष्टिक धान्य ।
 रक्तमूर्द्धा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तमूर्द्धन्] सारस ।
 रक्तमूलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] देवमर्षप नाम की मरसो का पेड़ ।
 रक्तमूला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लजाबू ।
 रक्तमेह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रक्तप्रमेह' ।
 रक्तमोक्ष, रक्तमोक्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार, शरीर
 का खून खराब हो जाने पर उसे बाहर निकालने की क्रिया ।
 फसद ।
 रक्तमोचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शरीर का खून निकलना । शीर ।
 फसद ।
 रक्तयष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मजीठ ।
 रक्तर गा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तरङ्गा] मेहंदी ।
 रक्तरज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तरजस्] सिंदूर ।
 रक्तरस - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विजंसार । रक्तासन ।
 रक्तरसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रास्ता ।
 रक्तराजि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ सुश्रुत के अनुसार एक प्रकार
 का कीड़ा जिसे सर्पिका भी कहते हैं । २. आँख का एक
 रोग [को०] ।
 रक्त्रेणु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंदूर । २ पुलाग । ३ क्रुद्ध व्यक्ति ।
 [को०] । ४ पलाश की कली [को०] ।
 रक्तरैवतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का खजूर का पेड़ ।
 रक्त्रोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह रोग जो रक्त के दूषित होने से
 होता है । जैसे, कुष्ठ आदि ।
 रक्तला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ काकतुडी । कौवाठोठी । २ गुजा
 करजनी । घुँघची । रत्ती ।
 रक्तलोचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कवूतर ।
 रक्तवटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मसूरिका या चेचक का रोग । शीतला ।
 रक्तवरटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शीतला रोग । चेचक ।
 रक्तवर्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अनार, ढाक, लाख, हलदी, दारु-
 हलदी, कुसुम के फूल, मजीठ और दुपहरिया के फूल, इन
 सबका समूह (ये सब रंगने के काम में आते हैं) ।
 रक्तवर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वीरवहूटी नामक कीड़ा । २ लह-
 सुनिया नग । गोमेद । ३ मूंगा । ४. कपिल्लक । कमीला ।
 ५. लाल रंग [को०] । ६ सोना । स्वर्ण [को०] ।
 रक्तवर्ण^२—वि० लाल रंगवाला [को०] ।

रक्तवर्त्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल वटेर ।

रक्तवर्त्तिका—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तवर्त्तिका] मुरगा ।

रक्तवर्द्धन^१—वि० [सं०] रक्त बढ़ानेवाला । रक्तवर्द्धक ।

रक्तवर्द्धन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बैंगन ।

रक्तवर्षाभू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लाल पुनर्नवा ।

रक्तवल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मजीठ । २ दड़ोत्पल नाम का पौधा । ३ नलिका । पगारी । ४ एक प्रकार की लता जिसे पित्ती कहते हैं ।

रक्तवसन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सन्यासी । २ वह ब्राह्मण जो सन्यास-आश्रमी हो गया हो (को०) ।

रक्तवात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का वात रोग जिसे वातरक्त भी कहते हैं । विशेष दे० 'वातरक्त' ।

रक्तवालुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [सञ्ज्ञा स्त्री० रक्तवालुका] सिंदूर ।

रक्तवासा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तव सस्] दे० 'रक्तवसन' (को०) ।

रक्तविंदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तविन्दु] १ रुधिर की बूँद । २ रक्त अपामार्ग । लाल चिचडा । ३ रत्नों में दिखाई पड़नेवाला लाल दाग या घव्वा जो एक दोष माना जाता है । जैसे, यदि होरे में यह दोष हो, तो कहते हैं कि उसे पहननेवाले की स्त्री मर जाती है ।

रक्तविकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खून की खराबी । रक्तदोष ।

रक्तविद्रधि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रक्त के प्रकोप से होनेवाली एक प्रकार की विद्रधि या फोड़ा जिसमें किसी अंग में सूजन होती है, और काले रंग की फु सियाँ हो जाती हैं ।

रक्तविस्फोटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का राग जिसमें शरीर में गुजा के समान लाल लाल फफोले पड जाते हैं ।

रक्तबीज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लाल बीजोवाला दाडिम । अनार । बीदाना । २ रीठा । ३ एक राक्षस का नाम जो शुभ और निशुभ का सेनापति था ।

विशेष—देवी भागवत में लिखा है कि युद्ध के समय इसके शरीर से रक्त की जितनी बूँदें गिरती थी, उतने ही नए राक्षस उत्पन्न हो जाते थे । इसलिये चडिका ने इसका रक्त पीकर इसे मार डाला था । यह भी कहा गया है कि महिषासुर का पिता रंग दानव ही मरकर फिर रक्तबीज के रूप में उत्पन्न हुआ था ।

रक्तबीजका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तरदी नाम का एक कंटीला पेड़ ।

रक्तबीजा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंदूरपुष्पी । सिंदूरिया ।

रक्तवृत्तक—सञ्ज्ञा पुं० [रक्तवृत्तक] पुनर्नवा । गदहपूरना ।

रक्तवृत्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तवृत्ता] शेफालिका । निर्गुंडी ।

रक्तवृष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] आकाश से रक्त या लाल रंग के पानी की वृष्टि होना ।

विशेष—यह अशुभसूचक है । कहते हैं, ऐसी वृष्टि होने से देश में युद्ध, महामारी आदि अनेक अनिष्ट होते हैं ।

रक्तव्रण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यह फोड़ा जिममें ने मवाद न निकलकर केवल रक्त ही बहता हो ।

रक्तशमन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कमीना ।

रक्तशालि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का लाल रंग का चावल या शाति जिसे दाऊदजानी कहते हैं ।

रक्तशालुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल कमल की जड़ । ममीठ ।

रक्तशाल्मलि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल फूलवाला संमल ।

रक्तशासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंदूर ।

रक्तशिग्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नाल महिजन ।

रक्तशीर्षक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गवा विरोजा । २ सारम ।

रक्तशृंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तशृङ्ग] हिमालय की एक चाटी का नाम ।

रक्तशृंगिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तशृङ्गिका] विप । जहर ।

रक्तशेखर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुन्नाग ।

रक्तश्वेत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुश्रुत के अनुसार एक प्रकार का वृद्ध जहरीला विन्डू ।

रक्तष्ठीवि, रक्तष्ठीवी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बहुत ही घातक सन्निपात ।

विशेष—यह रोग अमाध्य माना जाता है । इस सन्निपात में रोगी के मुँह से लहू जाता है, माँस और पेट फूलता है, जीभ में चकते पड जाते हैं और उनमें से लहू निकलता है ।

रक्तसकोच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तसङ्काच] कुमुम का फूल ।

रक्तसहक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुकुम । केनर ।

रक्तसदशिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तसन्दशिका] जलौका । जोक [को०] ।

रक्तसदशिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्तसन्दशिका] जोक ।

रक्तसध्यक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तसन्ध्यक] लाल कमल [को०] ।

रक्तसवध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तसन्ध] कुल का सवध । रक्तजनित ऐक्य सवध ।

रक्तसवरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नुरमा ।

रक्तसर्पप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल सरसों ।

रक्तसार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लाल चदन । २ पतंग । ३ अमल-वेत । ४ खैर । ५ वाराही कद । ६ रक्तबीजासन ।

रक्तस्तम्भन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तस्तम्भन] बहते हुए रक्त को रोकने की क्रिया ।

रक्तस्राव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शरीर के किसी अंग से रक्त का बहना या निकलना । खून जाना या गिनना । २ घोड़ों का एक रोग जिसमें उनकी श्वाँखों में से रक्त या लाल रंग का पानी बहता है ।

रक्तहसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की रागिनी (सगोत) ।

रक्तहर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भिलावाँ ।

रक्ताक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्ताङ्क] भूंगा ।

रक्तांग^१—वि० [सं० रक्ताङ्ग] लाल अंगवाला । जिसके शरीर का वर्ण लाल हो । लाल रंग का ।

रक्ताग्न—सज्ञा पुं० [सं० रक्ताङ्ग] १ मंगल ग्रह । २ कमीला ।
३ मूंगा । ४ खटमल । ५ केमर । ६ लाल चदन ।

रक्ताग्नी—सज्ञा स्त्री० [सं० रक्ताङ्गी] १ मजीठ । २ जीरती ।
३ कुटकी ।

रक्ताङ्ग—सज्ञा पुं० [सं० रक्ताङ्ग] घोटों के श्रद्धोप में होनेवाला
एक प्रकार का रोग ।

रक्ताम्बर—सज्ञा सं० [सं० रक्ताम्बर] १ सन्यासी, जो गेरुआ वस्त्र
पहनता है । २ लाल रंग का कम्बु, विशेषत रेशमी कम्बु ।

रक्ता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मगीत में पचम म्बर की चार श्रुतिया
में से दूसरी श्रुति का नाम । २ गुजा । घुंघची । ३ लाव ।
४ मजीठा । ५, ऊँकटरा । ६, एक प्रकार का सेम । ७
लक्षणा नामक कद । ८, वच्च । ९ एक प्रकार की मकड़ी ।
१०, कान के पान की एक शिरा या नग का नाम । ११
जनों के अनुमार ऐरावत खड को एक नदी का नाम । १२,
शनि की मात जिह्वाओं में से एक का नाम (जो) । १३
वह स्त्री जो किर्मा पर अनुरक्त हो । अनुरक्ता स्त्री ।

रक्ताकार—सज्ञा पुं० [सं०] मूंगा ।

रक्ताक्त—सज्ञा पुं० [सं०] लाल चदन ।

रक्ताक्त—वि० १ रक्त लगा हुआ । २, लाल रंग में रंगा हुआ ।

रक्ताक्ष—सज्ञा पुं० [सं०] १, चकोर । २, सारस । ३, कवूतर ।
४, भैंसा । ५, साठ भवत्सरो में से श्रद्धावनवें सवत्सर का
नाम ।

रक्ताक्ष—वि० १ लाल आँखोवाला । २, डरावना । भयानक (जो) ।

रक्ताक्षार—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का अक्षार जिसमें
लहू के दस्त आते हैं ।

विशेष—इसमें रोगी को प्यास, दाह और मूर्च्छा होती है और
गुदा पकी हुई जान पड़ती है ।

रक्ताधरा—सज्ञा स्त्री० [सं०] किन्नरी ।

रक्ताधार—सज्ञा पुं० [सं०] चमटा । त्वक् ।

रक्ताधिमन्थ—सज्ञा पुं० [सं० रक्ताधिमन्थ] एक प्रकार का अधिमन्थ
रोग जो रक्त विकार से होता है ।

रक्तापह—सज्ञा पुं० [सं०] बोल नामक गद्यखण्ड ।

रक्ताभ—सज्ञा पुं० [सं०] वीरवट्टी ।

रक्ताभ—वि० [सं०] लाल आभावाला । लाल रंग का । लानिमा-
युक्त । उ०—हो गया माव्य नभ का रक्ताभ दिगंत फनक ।
—अपरा, पृ० ६५ ।

रक्ताभा—सज्ञा स्त्री० [सं०] लाल जमा ।

रक्ताभिष्यन्द—सज्ञा पुं० [सं० रक्ताभिष्यन्द] नावप्रकाश के अनुसार
आँवा का एक रोग ।

विशेष—इस रोग में आँसू बहुत अधिक लान हो जाते हैं,
उनमें से लाल रंग का पानी निकलता है और आँसू के आने
लान देखाएँ दिखाई देती हैं ।

रक्ताभ्र—सज्ञा पुं० [सं०] लाल अम्र ।

रक्ताम्नान—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पीसा जिन्में लाल
रंग के फूल लगते हैं ।

विशेष—बैद्यक में इसे कटु, उष्ण और वात, ज्वर, तूत्र, तान
तथा आम आदि का नाशक माना है ।

रक्ताग्नि—सज्ञा पुं० [सं०] महाग्नी नाम का द्रव्य ।

रक्ताक्षुब्ध—सज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का रोग जिसमें शरीर
में पक्के और उहनेवाली गाँठें निकल आती हैं । इनमें शरीर
का रंग पीला पड़ जाता है । २ शुद्धीय के आगम उपद्रव
होनेवाला एक रोग जिसमें निग पर कान काटे और उठने
तक लाल फुगियाँ निकल आती हैं ।

रक्तार्म—सज्ञा पुं० [सं० रक्तार्मन्] एक प्रकार का रोग जिसमें
आँसू लगे काटी पर मान इकट्ठा होकर लाल रंग के रंग
का कोमल मंडल आ जाता है ।

रक्तार्श—सज्ञा पुं० [सं० रक्तार्शम्] बवासा रोग का एक भेद
जिसमें उनके मगों में से रक्त भी निकलता है । प्राचीन बवासा रोग
विशेष से 'बवासार' ।

रक्तालता—सज्ञा स्त्री० [सं०] मजीठ ।

रक्तालु—सज्ञा पुं० [सं०] रतालू नामक कद ।

रक्तावरोधक—वि० [सं०] बहुत टण्डू लून को रोकनेवाला ।

रक्तावसेचन—सज्ञा पुं० [सं०] शरीर का रक्त निरन्वयना । कर्द ।

रक्ताशय—सज्ञा पुं० [सं०] शरीर में लाल आशयों में से लाल आशय,
जिसमें रक्त का रहना माना जाता है । यथा किन्हीं रक्त
रहता है । जैन, केक-ल, हृदय, यट्ट आदि ।

रक्ताशोक—सज्ञा पुं० [सं०] लाल श्याम का रक्त ।

रक्ताश्वारि—सज्ञा पुं० [सं०] लाल कनर ।

रक्ति—सज्ञा स्त्री० [सं०] १, अनुदाग । प्रेम । २ एक पाश्चात्य जा
आठ सरना क बरारर होता है ।

रक्तिना—सज्ञा स्त्री० [सं०] १, घुघची । रक्ती । २ आठ सरना क
बराबर एक पारमाण । रक्ता ।

रक्तिम—वि० [सं०] लला । लाल । सुर्मा मानव ।

रक्तिमा—सज्ञा स्त्री० [सं०] लला । लाली । सुर्मा ।

रक्तेक्ष—सज्ञा पुं० [सं०] लाल रंग का लज ।

रक्तेत्पल—सज्ञा पुं० [सं०] १, लाल रमल । २ आन्वयित । नेमल ।

रक्तेदर—सज्ञा पुं० [सं०] १, लाल मज्जा । २ शुद्ध रक्त के प्रसारण
एक प्रकार का द्रव्य जहाँसे रक्त निकलता है ।

रक्तापदश—सज्ञा पुं० [सं०] लाल के पिता से उत्पन्न रक्तों का
आतंजक का रंग ।

रक्तापल—सज्ञा पुं० [सं०] १, रक्त नामक लाल मिट्टी । २ लाल
नामक रक्त ।

रक्त—सज्ञा पुं० [सं० रक्त] १, रक्त । रक्त । उ०—लाल
रक्त रह गहरी ।—उपनि (नख०) । २, रक्त । रक्ताङ्ग ।
रक्तान्ता । ३, लाल । साह । ४, रक्त का लाल रंग का

नाम जिसमें ११ गुरु और १३० लघु मात्राएँ प्रथवा ११ गुरु और १२६ लघु मात्राएँ होती हैं।

रक्ष^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षम्] राक्षस । उ०—रक्ष यक्ष दानव देवन सो, अमय होहि सब जागा । —रघुराज (शब्द०) ।

रक्षक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ रक्षा करनेवाला । बचानेवाला । हिफाजत करनेवाला । २. पहरेदार । ३. पालन करनेवाला ।

यौ०—रक्षक दल = रक्षा करनेवालो का दल । सिपाहियों का जत्था । रक्षक पोत = जल की यात्रा में सकट से रक्षा करनेवाला जहाज ।

रक्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रक्षा करना । हिफाजत करना । रखवाली । २. पालने की क्रिया । पालन पोषण । ३ रक्षक । रखवाला ।

४. विष्णु का एक नाम (को०) ।

रक्षणकर्ता—सञ्ज्ञा पुं० [न० रक्षणकर्तृ] रक्षा करनेवाला । रक्षक ।

रक्षणारक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूत्रकृच्छ्र रोग ।

रक्षणि, रक्षणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गायमाणा लता ।

रक्षणीय—वि० [सं०] जिसकी रक्षा करना उचित हो । रक्षा करने योग्य ।

रक्षन^(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षण] दे० 'रक्षण' ।

रक्षना^(७)—क्रि० सं० [सं० रक्ष्य] रक्षा करना । हिफाजत रखना । संभालना । बचाना ।

रक्षपाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो रक्षा करता हो । रक्षक ।

रक्षमाण—वि० [सं० रक्ष्यमाण] दे० 'रक्ष्यमाण' ।

रक्षस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षस्] असुर । दैत्य । निशाचर ।

रक्षा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ आपत्ति, कष्ट या नाश आदि से बचाना । अनिष्ट से बचाने की क्रिया । रक्षण । बचाव ।

यौ०—रक्षावधन । रक्षासमिति ।

२ वह यत्र या सूत्र आदि जो प्रायः बालको को भूत प्रेत, रोग या नजर आदि से बचाने के लिये बाँधा जाता है । ३ गोद । ४ भस्म । राख । ५ लाक्षा । लाख (को०) ।

रक्षाइद^(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रक्ष + आइद (प्रत्य०)] राक्षसपन ।

रक्षागृह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह स्थान जहाँ प्रभूता प्रसव करे । सूतिकागृह । जन्माखाना । २ युद्ध के समय वमवारी से राह चलतो को बचने के लिये निर्मित भूगर्भस्थ आश्रयस्थान । ३. विश्रामस्थान या कक्ष (को०) ।

रक्षातिक्रम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नियम भंग करना । कायदा कानून तोडना । (को०) ।

रक्षादल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नागरिकों का वह सघटन, जो पुलिस के सहायक रूप में रक्षा का कार्य करता है । होमगार्ड ।

रक्षाधिकृत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का किसी नगर का वह अधिकारी जिसका काम उस नगर की रक्षा तथा शासन करना होता था ।

रक्षापत्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का वह कर्मचारी जिसका काम नगरनिवासियों की रक्षा करना होता था ।

रक्षापत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भोजपत्र । २. सफेद सरसो ।

रक्षापाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्रहरी । सतरी (को०) ।

रक्षापुरुष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पहरेदार । सतरी ।

रक्षापेक्षक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. पहरेदार । सतरी । २ अत पुर में पहरा देनेवाला सतरी । ३ अभिनय करनेवाला । नट ।

रक्षाप्रदीप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तत्र के अनुसार वह दीपक जो भूत प्रेत आदि की बाधा से रक्षा करने के लिये जलाया जाता है ।

रक्षावधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षा + वधन] हिंदुओं का एक त्योहार जो श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को होता है । सलोनी ।

विशेष—इस दिन वहनें अपने भाइयों के और ब्राह्मण अपने यजमानों के दाहिने हाथ की कलाई पर अनेक प्रकार के गड़े, जिन्हें राखी कहते हैं, बाँधते हैं ।

रक्षाभूषण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह भूषण या जतर जिसमें किसी प्रकार का कवच आदि हो और जो भूतप्रेत या रोग आदि की बाधा से रक्षित रहने के लिये पहना जाय ।

रक्षामगल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षामङ्गल] वह अनुष्ठान या धार्मिक क्रिया आदि जो भूतप्रेत आदि की बाधा से रक्षित रहने के लिये की जाय ।

रक्षामणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह मणि या रत्न आदि जो किसी ग्रह के प्रकोप से रक्षित रहने के लिये पहना जाय ।

रक्षारत्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रक्षामणि' ।

रक्षि, रक्षिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बचानेवाला । रक्षक । २ पहरेदार । सतरी ।

रक्षिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रक्षा । हिफाजत । २ वह स्त्री जो रक्षा के लिये नियुक्त हो । अभिभाविका ।

रक्षित—वि० [सं०] [वि० स्त्री० रक्षिता] १ जिसकी रक्षा की गई हो । रक्षा किया हुआ । हिफाजत किया हुआ । जैसे,—मैं आपकी पुस्तक बहुत ही रक्षित रखूँगा । २, प्रतिपालन । पाला पोसा । ३. रखा हुआ ।

रक्षिता^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रक्षा । हिफाजत । २. एक अप्सरा का नाम ।

रक्षिता^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षितृ] १. रक्षा करनेवाला । २ प्रहरी । पहरेदार ।

रक्षिता^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्षित] बिना विवाह किए पत्नी की तरह रखी हुई स्त्री । रखेली । सुरतिन ।

रक्षी^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षस् + ई (प्रत्य०)] राक्षसों के उपासक । राक्षस पूजनेवाले । उ०—भूती भूतन यक्षी यक्षन । प्रेती प्रेतन रक्षी रक्षन ।—गिरधर (शब्द०) ।

रक्षी^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षिन्] १ रक्षा करनेवाला । रक्षक । २ पहरेदार । चौकीदार ।

रक्षोघ्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हींग । २ भिलावें का पेड़ । ३ सफेद सरसो । ४ रखकर खट्टा किया हुआ चावल का पानी या माँड़ ।

रक्षोघ्नी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बचा । बच ।

रक्ष्य—वि० [सं०] रक्षा करने के योग्य । रक्षणीय ।

रक्ष्यमाण—वि० [सं०] १ जिसकी रक्षा की जा सके । २. जिसकी रक्षा की जा रही हो ।

रक्स—सज्ञा पुं० [श्र० रक्स] १ उद्धत नृत्य । मर्द का नाच । ताडव ।

२ लास्य । स्त्री का नाच । ३ नृत्य । नर्तन [को०] ।

रक्सों—वि० [फ्रा० रक्सों] नृत्यरत । नाचता हुआ [को०] ।

रक्सै ताऊस—सज्ञा पुं० [फ्रा० रक्सै ताऊस] १ एक प्रकार का नाच, जिसमें पेशवाज के दो कोने दोनों हाथों से पकड़कर कमर तक उठा लिए जाते हैं, जिससे नाचनेवाले की आकृति मोर की मी बन जाती है । २ एक प्रकार का नाच जिसमें घुटनों के बल होकर इतनी तेजी से घूमते हैं कि काछनी वा पेशवाज का घेरा फूलकर चक्कर खाने लगता है ।

रखा^१—सज्ञा स्त्री० [हि० रखना] १ चरी की भूमि । चरौना । चरागाह । २ रक्षित जगल । दे० 'रखा' ।

रख^२—सज्ञा पुं० [स० रक्ष, प्रा० रक्ख] रक्षा । बचाव । जैसे, रखपाल = रक्षपाल ।

रखटी—सज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की ईख जिसके रस में गुठ बनाया जाता है । लखडा ।

रखडा—सज्ञा पुं० [देश०] दे० 'रखटी' ।

रखडी—सज्ञा स्त्री० [हि० रख (= राखी) + डी (प्रत्य०)] राखी । रक्षावधन । उ०—भाई कहते थे, रखडी (राखी) के बाद जाना ।—अभिषत, पृ० ६६ ।

रखत^३—सज्ञा पुं० [फ्रा० रखत] असबाब । सामान । उपकरण ।

यौ०—रखत बखत = रस्तवस्त । रखत बजत ।

रखना—क्रि० स० [स० रक्षय, प्रा० रक्खण] १ किसी वस्तु पर या किसी वस्तु के अंदर दूसरी वस्तु स्थित करना । ठहराना । टिकाना । धरना । जैसे, टेबुल पर किताब रखना; थानी में मिठाई रखना; हाथ पर रुपए रखना; बरतन में अनाज रखना; दीब पर रुपया रखना; गाड़ी पर असबाब रखना ।

सयो० क्रि०—देना ।—लेना ।

२ रक्षा करना । हिफाजत करना । बचाना । जैसे,—तुम आप तो अपनी चीज रखते नहीं, दूसरो को चोर बनाते हो । उ०—जाको राखे साइयाँ, मारि सकै नहि कोय । बाल न बाँका करि सकै, जो जग बैरी होय ।—कवीर (शब्द०) ।

यौ०—रख रखाव = किसी वस्तु की देखरेख और रक्षा । हिफाजत करने की क्रिया ।

३ निर्वाह या पालन करना । विगठने न देना । बृथा या नष्ट न होने देना । जैसे,—किसी की इज्जत रखना, किसी को वात रखना ।

संयो० क्रि०—लेना ।

४ एकत्र करना । सग्रह करना । जोड़ना । सचित करना । जैसे, कमा कमाकर रुपए रखना, हँद हँदकर तमवोरें रखना ।

मयो० क्रि०—चलना ।—जाना ।—देना ।—लेना ।

५. चुपुर्द करना । सीपना । ६. रेहन करना । बंधक में देना । जैसे,—घर के जेवर रखकर उन्हें कर्ज दिया था । ७. अपने अधिकार में लेना । अपने हाथ में करना । जैसे,—अभी यह रुपया हम रखते हैं । जब तुम्हें जरूरत हो, तब ले लेना ।

संयो० क्रि०—लेना ।

मुहा०—रख लेना = किसी की चीज उमें वापस न देना । दवा लेना । जैसे,—आपने मेरे निये जो चीजें उनके पास भेजी थीं, वे मग उन्होंने रख ली ।

८. पालन पोषण, मनोविनोद या व्यवहार आदि के लिये अपने अधिकार में करना । अपनी अवीनता में लेना । जैसे,—गौ रखना, घोडा रखना, रडी रखना, पहलवान रखना । ९. निवृत्त करना । तैनात करना । मुकर्रर करना । जैसे,—आपके काम के लिये मैंने अपने चार गादमी वहाँ रख दिए हैं । १०. सकुशल जाने न देना । पकड या गोक लेना । जैसे,—दो डाकुओं को तो गाँववालो ने रखा । ११. आघात करना । चोट पहुँचाना । जडना । जैसे,—मुक्ता रखना, थपपड रखना । १२. स्थगित करना । मुलतगी करना । हमरे समय के लिये थालना । जैसे,—यह बातचीत कल पर रखो । १३. उपस्थित न करना । सामने न लाना । जैसे,—यह सब भगडा अलग रखो । १४. व्यवहार करना । धारण करना । जैसे,—आप मदा बढिया उगी रखते हैं । १५. किनी पर आरोप करना । जिम्मे लगाना । मडना । जैसे,—तुम मदा सत्र कसूर मुझपर ही रखते हा ।

मुहा०—हाथ रखना = ऐसी बात कहना जिसमें कोई दवे, चिडे या एहसान माने । (किसी पर) रखकर कहना = किनी का सुनाने या चिढाने के उद्देश्य से किनी हमरे पर आरोपित करके कोई बात कहना । लक्ष्य जनाकर कहना ।

१६. श्रुणी होना । कर्जदार होना । जैसे,—(क) हम क्या उनका कुछ रखते हैं, जो उनने दवें । (ख) वे कभी किमी का एक पैसा नहीं रखते । १७. मन में अनुभव या धारण करना । जैसे, आशा रखना, विश्वास रखना । १८. निवाग कराना । डेरा कराना । ठहराना । जैसे,—हमने उन लोगो को धर्मशाला में रख दिया है । १९. स्त्री (या पुरप) से संबध करना । उपपत्नी (या उपपति) बनाना । जैसे,—उमने एक प्रौरत रख ली है । २०. नभोग करना । प्रमग करना । (बाजार) । २१. गर्भ धारण कराना । जैसे, पंड रखना । २२. पक्षियो आदि का अडे देना । जैसे,—आपकी मुर्गी माल में पितने अडे रखनी है ? २३. अपने पाम पडा रहने देना । बचाना । जैसे,—या पीकर महीने में क्या रखने हा ?

सयो० क्रि०—छोड़ना ।

मुहा०—रखकर फटना = तितो बात का मुद्द अग बचाकर या छिपाकर मेष अक्ष कटना ।

विशेष—पयुक्त क्रिया के रूप में इन जड वा व्यवहार जिस क्रिया के आगे होता है, उससे मुचन हाठा है कि वह क्रिया किनी दूसरी क्रिया के पहले पूरा हो गई है या हो जानी चाहिए । जैसे,—'मैंने उनने पढ़ने हो कह रखा था कि तुम्हारे आने पर रुपया दे दे ।' मुहारे के रूप में भी यह क्रिया दूसरी क्रियाओं के साथ जयनी है ।

रखनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना + ई (प्रत्य०)] वह स्त्री जिसमें विवाह भवध न हुआ हो और जो यो ही घर में रख ली गई हो। रखी हुई स्त्री। उपपत्नी रखेली। सुरतिन।

क्रि० प्र०—रखना।

रखपाल(७)—सञ्ज्ञा पुं० [म० रक्षपाल] दे० 'रक्षपाल'। उ०—पहिरी माना मंत्र की पाई बुन श्रीमान। थापाँ गोन विहोलिया वीहोला रखपाल।—अर्थ०, पृ० २।

रखया(७)¹—वि० स्त्री० [सं० रक्षा] रक्षा करनेवाली।

रखया(७)²—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रिवता] रिक्ता निधि। दे० 'रिक्ता'। उ०—तीज अष्टमी तेरिस जया। चौब चतुर्दसि नोगी रखया। जायमी (शब्द०)।

रखला—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'रहकला'।

रखवाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रखना या रखाना] १ तेनो की रखवाली। चौकीदारी। २ रखवाली की मजदूरी। चौकीदारी की मजदूरी। ३ चौकीदार का टिकम। ४ रखवाली करने की क्रिया या भाव। ५ रखने की क्रिया या ढग। ६ रखने की मजदूरी।

रखवाना—क्रि० म० [हि० रखना या रोगे म्प] १ रखने की क्रिया दूसरे से कराना। दूसरे को रखने में प्रवृत्त करना। २ दे० 'रखाना'।

रखवार—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रखना + वार (प्रत्य०)] १ रक्षा करनेवाला। रखवार। २ चौकीदार। पहरेदार।

रखवारी(७)¹—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रखवार] दे० 'रखवार'। उ०—केत कएल रखवारे लुटल ठाकुर मेवा मोर।—विद्यापति, पृ० ६१४।

रखवारी(७)²—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना + वारी (प्रत्य०)] दे० 'रखवाली'।

रखवाल—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'रखवाला'। उ०—नुम ही दूए रखवाल तो उमका कौन न होगा ?—अर्चना, पृ० ४६।

रखवाला—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रखना + वाला (प्रत्य०)] १ रक्षा करनेवाला। रत्नक। २ चौकीदार। पहरेदार।

रखवाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना + वाली (प्रत्य०)] १ रक्षा करने की क्रिया। हिफाजत। २ रक्षा करने का भाव।

रखशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार का मद्य जिसे नेपाली आदि पहाड़ी पीते हैं।

रखा¹—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना] १ पशुओं के चरने के लिये बचाई हुई भूमि। चरी। चरीना। २ सर्वसाधारण के उपयोग के लिये दजित जंगल या चरागाह जहाँ से लकड़ी, घास आदि काटने की मनाही हो।

रखा²—वि० [म० रक्षक, प्रा० रक्षत्र] रक्षा या हिफाजत करनेवाला। चौकीदार। पहरेदार। जैसे, बनरखा = बन का रक्षक।

रखाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना + आई (प्रत्य०)] १ रक्षा करने की क्रिया। हिफाजत। रखवानी। २ रक्षा करने का भाव। ३, वह धन जो रक्षा करने के बदले में दिया जाय।

रखाना—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना] बचाई की भूमि। चरी।

रखाना¹—क्रि० म० [हि० रखना का प्रेर० रूप] रखने की क्रिया दूसरे से कराना। दूसरे को रखने में प्रवृत्त करना। रखवाना।

रखाना²—क्रि० अ० रखाना की परना। रक्षा करना। दृष्ट हान में उचाला।

रखाना(७)¹—सञ्ज्ञा पुं० [प्रा० रखनइ] छिद्र। छेद। गुहा। उ०—(क) अममान के बीच रखाना है दूक, उत दूने में बंदी। पन्दूक, भा० ३, पृ० ६२। (ख) नन्दे मन्दे मिलाई बाराँ पुनिया गगन रखाना।—पन्दूक, भा० ३, पृ० ६६।

रखार[]—सञ्ज्ञा पुं० [म०] एक प्रकार का पात्र जिसमें अक्वार् वरुँ प्रान में बुना हुआ गैत उगार करने के लिये होता है।

रखिया(७)¹—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रखना + रिया (प्रत्य०)] १ रत्नक। २ रखवाला। उ०—रीकँ र्खियारि लुटवनी उसा मुर ख जो माँ डार टाने रग र्खियारि में।—देव (शब्द०)।

रखिया(७)²—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राखी (= रक्षा)] माँव के गर्भाशय का वह पेट जो पूजनार्थ रक्षित रहता है।

रखियाना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राखी + शाना (प्रत्य०)] १ राख में प्ररतना आदि का मंडपना। २ पहाए हुए उँर (बन्धे) को लपडे में लोटाकर राख के अंदर इस अभिप्राय में रखना कि उनका पानी नून जाय और बसाव निकल जाय (गंबोल)।

रखी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षि, पुं० हि० रक्षि] ऋषि। मुनि। (डि०)।

रखीराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षिराज] नारद ऋषि। (डि०)।

रखीसर(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्षीश्वर] श्रेष्ठ ऋषि, नारद आदि।

रखेडिया—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राख + एडिया (प्रत्य०)] वह जो गरीब में केवल राख पोतकर माधु बना फिरे। टोपी माधु।

रखेल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना + एल (प्रत्य०)] दे० 'रखेली'।

रखेली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना + एली (प्रत्य०)] जिना विवाह किए ही घर में रखी हुई स्त्री। राखी। सुरतिन। उपपत्नी।

रखेया—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रखना + येया (प्रत्य०)] १ रखनेवाला। २ रक्षा करनेवाला।

रखेल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रखना + ऐल (प्रत्य०)] दे० 'रखेल', 'रखेली'।

रखौडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राखी (= रक्षा) + औडी (स्वा० प्रत्य०)] रक्षामूत्र। राखी। विशेष दे० 'राख'।

रखौत, रखौना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रखना] पशुओं के चरने के लिये छोटी हुई जमीन। चरा।

रखौनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राखी] दे० 'राखा'।

रख्त—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रख्त] १ अमवाय। सामान। २ पोशाक। बस्त्र। लिबास। उ०—कोइ ताज तरौदे हंस हँकर कोई रखत लडा बनवाता।—राम० धर्म०, पृ० ६१।

खौ—रखत वरत = साज सामान।

रखश—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रख्त] १ घोटा। अरब। २ प्रमा। चउर। काति। किरण [को०]।

रखशाँ—वि० [फा० रखशाँ] प्रदीप्त। चमकता हुआ [को०]।

रगंड—सञ्ज्ञा पुं० [डि०] हाथी का कपोल ।

रग—सञ्ज्ञा स्त्री० [क्रा०] १ शरीर में की नस या नाडी । उ०—जीए
रूह रूहन् में, जीए रूह रगन्न । जीए जो रउ सूरमाँ, ठठउ
चद्र वमन्न ।—दादू (शब्द०) ।

मुहा०—रग उतरना=(१) क्रोध उतरना । (२) हठ दूर होना ।
(३) प्रांत उतरना । रग खड़ी होना=शरीर की किसी रग
का फूल जाना । रग चढ़ना=(१) क्रोध आना । गुस्सा आना ।
(२) हठ के वश होना । रग दबना=दबाव मानना । किसी के
प्रभाव या अधिकार में होना । जैसे, - तुम्हारी रग उन्ही से
दबती है । रग पहिचानना या पाना=रहस्य जानना । असल
वात जान लेना । रग फडकना=किसी आनेवाली आपत्ति की
पहले से ही आशका होना । माथा ठनकना । रग रग फडकना=
शरीर में बहुत अधिक उत्साह या आवेश के लक्षण प्रकट
होना । रग रग में=सारे शरीर में । जैसे,—पाजीपन तो
तुम्हारी रग रग में भरा है ।

यौ०—रग पट्टा । रग रेशा ।
२ पत्तों में दिखाई पड़नेवाली नसें ।

रगड़—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रगडना] १ रगडने की क्रिया या भाव ।
घर्षण । २ वह हलका चिह्न जो माधारण घर्षण से उत्पन्न
हो जाय ।

क्रि० प्र०—खाना ।—लगना ।

३ (कहारो की परिभाषा में) घक्का । ४ हुज्जत । भगडा ।
तकरार । ५ भारी श्रम । गहरी मेहनत ।

मुहा०—रगड डालना = अधिक मेहनत लेना । भारी श्रम करना ।
रगड पड़ना = अधिक परिश्रम उठाना या पड़ना । जैसे,—उसे
बहुत रगड पड़ी, इससे थक गया ।

रगडना—क्रि० स० [स० घर्षण या अनु०] १ किसी पदार्थ को दूसरे
पदार्थ पर रखकर दबाते हुए बार बार इधर उधर चलाना ।
घर्षण करना । घिसना । जैसे,—चरन रगडना ।

विशेष—यह क्रिया प्रायः किसी पदार्थ का कुछ अंश घिसने, उसे
पीसने अथवा उमका तल बराबर करने के लिये होती है ।

२ पीसना । जैसे, मसाला रगडना, भाँग रगडना । ३ अभ्यास
आदि के लिये बार बार कोई काम करना । ४ किसी काम
को जल्दी जल्दी और बहुत परिश्रमपूर्वक करना । जैसे—इस
काम को तो हम चार दिन में रगड डालेंगे । ५ तग करना ।
दिक करना । परेशान करना । ६ स्त्री के साथ सभोग करना ।
(वाजारू) ।

सयो० क्रि०—डालना ।—देना ।

रगडना^२—क्रि० अ० बहुत मेहनत करना । अत्यंत श्रम करना । जैसे,—
अभी यही पडे रगड रहे हैं ।

रगड़वाना—क्रि० स० [हि० रगडना का प्रे० रूप] रगडने का काम
दूसरे से कराना । दूसरे को रगडने में प्रवृत्त करना ।

रगडा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रगडना] १. रगडने की क्रिया या भाव ।
घर्षण । रगड । २ निरंतर अथवा अत्यंत परिश्रम । बहुत
अधिक उद्योग । ३ वह भगडा जो बराबर होता रहे और
जिसका जन्दी अत न हो । जैसे यह भगडा नहीं, रगडा है ।

क्रि० प्र०—खाना ।—देना ।

यौ० रगडा भगडा = लडाईं भगडा । बखेडा ।

रगडान—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रगडना + आन (प्रत्य०)] रगडने की क्रिया
या भाव । रगडा ।

मुहा०—रगडान देना = रगडना । घिसना ।

रगड़ी^१—वि० [हि० रगडा + ई (प्रत्य०)] रगडा करनेवाला । लडाईं
भगडा करनेवाला । भगडालू । जैसे,—मोरी एक न माने,
कान्हा बडो रगडी । (गीत) ।

रगण—सञ्ज्ञा पुं० [स०] छद शास्त्र में एक गण या तीन वर्णों का
समूह जिसका पहला वर्ण गुरु, दूसरा लघु और तीसरा फिर
गुरु होता है (SIS) । यह साधारणतः 'र' से सूचित किया
जाता है । इसके देवता अग्नि माने गए हैं । जैसे, कामना ।
मामला । राम को ।

रगत^१—सञ्ज्ञा पुं० [स० रक्त] । रुधिर । लहू । (डि०) ।

रगत^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्त] दे० 'रक्त' । उ०—मालुले विदल
कदल ससन्न । रंग सेल खगे न मिटै रगत ।—रा० रू०,
पृ० ७३ ।

रगद^१—स० पुं० [सं० रक्त] रक्त । रुधिर ।

रगदना—क्रि० स० [हि० रगेदना] दे० 'रगेदना' ।

रगदल^१—वि० [डि०] कुबडा ।

रगपट्टा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रग + पट्टा] १ शरीर के भीतरी भिन्न भिन्न
अंग ।

मुहा० रग पट्टे से परिचित या वाकफ होना = स्वभाव और
व्यवहार आदि से परिचित होना । अच्छी तरह जानना ।
खूब पहचानना ।

२ किसी विषय की भीतरी और सूक्ष्म बातें ।

रगवत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रगवत] १ चाह । इच्छा । २ प्रवृत्ति । रुचि ।

मुहा०—रगवत आना = चाह होना । मन चलना । रगवत
दिलाना = प्रवृत्त होने के लिये प्रेरित करना । बढ़ावा देना ।
रगवत को आँखों से देखना = पसंद करना ।

रगमगना^१—क्रि० अ० [हि०] १ भिनना । घुलना । २ अनु-
रजित होना । उ०—तीर्थ सब देखे गुने, कोऊ नहिं या तूल ।
अजभवनी रगमगि रही, कृष्ण चरन अनुकूल ।—त्रज० प्र०,
पृ० १४२ ।

रगर^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रगड] १ दे० 'रगड' । २ हठ । जिद ।
अड । टेक । उ०—जनम कोटि लागि रगर हमारी । वरी मधु
न तु रहुँ कुमारी ।—मानस, १।८१ ।

रगरा—सज्ञा पुं० [हि० रगडा] दे० 'रगडा' ।

रगरेशा—सज्ञा पुं० [फा० रग+रेशा] १ पत्तियो की नलें । २ शरीर के अदर का प्रत्येक अंग ।

मुहा०—रग रेगे में = सारे शरीर में । अंग गंग में । रग रेशों में परिचित या वाकिक होना = स्वभाव और व्यवहार आदि में परिचित होना । अच्छी तरह जानना । खूब पहचानना ।

३ किमी विषय की भीतरी श्रौं सूक्ष्म गतें ।

रगवाना(पु)—क्रि० स० [हि० रगना का प्रेर० रूप] चुप कराना । शांत कराना । उ०—कुँवर कहीं रोदन अति करही नहीं—गा रगवावै ।—रघुराज (पद०) ।

रगा—सज्ञा पुं० [देश०] मोर ।

रगाना—क्रि० अ० [रग] चुप होना । शांत होना ।

रगाना—क्रि० स० चुप कराना । शांत करना ।

रगी—सज्ञा स्त्री० [देश०] १ एक प्रकार का मोटा अन्न जो मैसूर में होता है । २ दे० 'रग्गी' ।

रगी—सज्ञा पुं० [हि० रग+ई (प्रत्य०)] दे० 'रगीला' ।

रगीला—सज्ञा पुं० [हि० रग (=जिद)+ला (प्रत्य०)] [स्त्री० रगीली] १ हठी । जिही । दुराग्रही । २ पार्सी । कुट ।

रगद—सज्ञा स्त्री० [हि० रगेदना] १ दौडाने या भगाने की क्रिया । २ पक्षियों आदि की सर्भोग की प्रवृत्ति या अवसर । जोंज खाने का मौका ।

रगेदना—वि० [सं० खेट, हि० खेदना] भगाना । खदेडना । निकालना । दौडाना ।

सयो० क्रि०—देना ।

रगा—सज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का मोटा अन्न जो दक्षिण के पहाडों में होता है । रगी ।

रगा—सज्ञा स्त्री० अधिक वर्षा के उपरांत होनेवाली धूप, जो पेतों के लिये लाभदायक होती है ।

रग्गी—सज्ञा स्त्री० [देश०] दे० 'रग्गा' ।

रघु—सज्ञा पुं० [सं०] १ सूर्यवशी राजा दिलीप के पुत्र का नाम जो उनकी पत्नी सुदक्षिणा के गर्भ से उत्पन्न हुए थे ।

विशेष—ये अयोध्या के बहुत प्रतापी राजा श्री रामचंद्र के परदादा थे । जब ये छोटे थे, तभी इनके पिता ने अश्वमेध यज्ञ किया था और यज्ञ के घोड़े की रक्षा का भार इन्हें मँगा था । जब उस घोड़े को इन्द्र ने पकड़ा, तब इन्होंने इन्द्र को युद्ध में पराजित करके वह घोड़ा छुड़ाया था । सिंहासन पर बैठने के उपरांत इन्होंने विश्वजित् नामक यज्ञ किया था और उसमें समग्र कोप दान कर दिया था । महाराज प्रज इन्हीं के पुत्र थे । प्रसिद्ध रघुवश के मूल पुष्प यहीं थे ।

२ रघु के वंश में उत्पन्न कोई व्यक्ति ।

रघु—वि० १ शीघ्रगति । द्रुतगति । शीघ्रगामी । २ चपल । ३ चंचल । लोल । ४ उत्सुक । आतुर । व्यग्र । अवीर [को०] ।

रघुकुल—सज्ञा पुं० [सं०] राजा रघु का वंश ।

विशेष—इस शब्द में चंद्र, मणि, नाथ, पनि, वर, वीर, आदि और उनके वाचक शब्द लगने से श्रीरामचंद्र का बोध होता

है । जैसे,—रघुकुलचंद्र, रघुकुलमणि, रघुनाथ, रघुपति, रघुवर, रघुवीर इत्यादि ।

रघुनन्द—सज्ञा पुं० [सं० रघुनन्द] श्रीरामचंद्र ।

रघुनन्दन—सज्ञा पुं० [सं० रघुनन्दन] श्रीरामचंद्र ।

रघुनाथ—सज्ञा पुं० [सं०] श्रीरामचंद्र ।

रघुनाथक—सज्ञा पुं० [सं०] रघुकुलक्षामी, श्रीरामचंद्र ।

रघुपति—सज्ञा पुं० [सं०] रघुनाथ के स्वामी, श्रीरामचंद्र ।

रघुगर्ह—सज्ञा पुं० [सं० रघुनाथ, प्रा० रघुनाथ] श्रीरामचंद्र ।

रघुराज—सज्ञा पुं० [सं०] रघुनाथ का राजा, श्रीरामचंद्र ।

रघुगया(पु)—सज्ञा पुं० [सं० रघुनाथ] रघुनाथ का राजा । श्रीरामचंद्र ।

रघुगया(पु)—सज्ञा पुं० [सं० रघुनाथ] दे० 'रघुगया' ।

रघुनाथ—सज्ञा पुं० [सं०] १ महागज रघुनाथ या सातदान विषम रामचंद्र की उपाधि । उ०—रघुनाथ प्रथम नवन नहे नारा ।

२ महाविनाशक का राजा दुर्गा एक प्रसिद्ध महाकाव्य जिसमें महाराज दिलीप के समय में नैहर प्रसिद्ध राजा का विवरण दिया हुआ है ।

३ रघुनाथ रामचंद्र-वन्त-भानु = रघुनाथ की समस्त वंश के पूर्वज, श्री रामचंद्र । उ०—जब रघुनाथ-वन्त-भानु—नाथ ।

रघुवशकुमार—सज्ञा पुं० [सं०] श्रीरामचंद्र ।

रघुवशी—सज्ञा पुं० [सं० रघुवशी] १ वह जो रघु के वंश में उत्पन्न हुआ हो । २ क्षत्रिय के अंतर्गत एक जाति ।

विशेष—रघु जाति के लोग महाराज रघु और रामचंद्र के वंश में उत्पन्न माने जाते हैं ।

रघुवर—सज्ञा पुं० [सं०] रघुकुलश्रेष्ठ, श्रीरामचंद्र ।

रघुवीर—सज्ञा पुं० [सं०] रघुकुल में वीर, रामचंद्र जी ।

रघुनाथ—सज्ञा पुं० [सं०] रघुकुल में श्रेष्ठ वा उत्तम, श्रीरामचंद्र ।

रघुवृद्ध—सज्ञा पुं० [सं०] रघुवंशियों में श्रेष्ठ, श्रीरामचंद्र ।

रघुतो—सज्ञा पुं० [सं०] सताप । तप ।

रचक—सज्ञा पुं० [सं०] रचना करनेवाला । रचयिता । उ०—पालक महारक रचक भक्त रत्न अरार । सत्र ही सबको होत र को जानै के नार ।—केशव (शब्द०) ।

रचक—वि० [सं० रचक] दे० 'रचक' ।

रचना—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ रचने या बनाने की क्रिया या भाव । रचनावट । निर्माण । उ०—(क) गडरचना बन्नी मलक चितवन भौह कमान । -विहारी (शब्द०) । (ख) चलो, रग-भूमि की रचना देख आवे ।—लल्लूनाल (शब्द०) । २ बनाने का ढंग या कौशल । ३ बनाई हुई वस्तु । रची हुई चीज ।

सृजन पदार्थ । निर्भिन वस्तु । उ० (क) अद्भुत रचना विधि रची यामे नही विवाद । विना जेभ के सेत दृग रूप सलोनी स्वाद ।—रमनिधि (शब्द०) । (ख) तब श्रीकृष्ण चंद्र जी ने सबका मोहित कर जो बैकुण्ठ का रचना रची थी, सो उठा ली ।—लल्लूनाल (शब्द०) । ४ फूलों से माला या गुच्छे आदि बनाना । ५ बाल गुंथना । केश विन्यास । ६ स्थापित करना ।

७ उद्यम । कार्य । ८. वह गद्य या पद्य जिसमें कोई विशेष चमत्कार हो । उ०—रचनानि की रचनानि सो जो साधं निज काज ।—पद्याकर (शब्द०) । ९. पुराणानुसार विश्वकर्मा की स्त्री का नाम ।

रचना^१—क्रि० स० [स० रचन] १ हाथों से बनाकर तैयार करना । बनाना । सिरजना । निमाण करना । उ०—(क) तपवल रचइ प्रपच विधाता । तप बल विष्णु सकल जग वाता ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) इहाँ हिमालय रचेउ बिताना । अति विचित्र नहि जाइ वखाना ।—तुलसी (शब्द०) । २ विधान करना । निश्चित करना । उ०—अम विचारि मोचइ मात माता । सो न टरै जो रचइ विधाता ।—तुलसी (शब्द०) । ३. ग्रथ आदि लिखना । उ०—गुनी और रिक्कार ये दाउ प्रामेद्व हूँ जात । एक ग्रथ के रचन सो दोगुन जस सरमात ।—(शब्द०) । ४. उत्पन्न करना । पैदा करना । ५. अनुष्ठान करना । ठानना । उ०—(क) रति विपरीत रचा दपात गुपुत अति मेरे जान मनि भय मनमय नजे तै ।—पद्याकर (शब्द०) । (ख) तव एक-विशांत बार में बिन क्षत्र की पृथ्वी रचा ।—केशव (शब्द०) । (ग) मात्र पान खवावत ही कोह कारन कोप पिया पर नारि रच्यो ।—केशव (शब्द०) । ६ आडवर रचना । युक्ति या तद्वीर लगाना । आयोजन करना । जैसे, आडवर रचना, उपाय रचना, जाल रचना । उ०—(क) रचि प्रपच भूपहि अचनाई । राम तिलक हित लगन बनाई ।—तुलसी (शब्द०) । ७. कल्पनाक सृष्टि करना । कल्पना करना । उ०—कवहुँ वनु राच पसर चरावै । कवहुँ भूरा वनि नीति सिरावै ।—रघुनाथ (शब्द०) । ८. शृंगार करना । संवारना । मजाना । कारीगरी करना । उ०—भूपण बसन आदि सब रचि रचि माता लाड लडाई ।—मूर (शब्द०) । ९. तरतीब या क्रम से रचना । उ०—चहुँधा वेदों के विधिवत रचा है अर्गनि ये । विधी दर्भा नेरे अरु प्रजुल माह समाव लै ।—लक्ष्मणमिह (शब्द०) ।

मुहा०—(क) रचि पाचि = परिश्रमपूर्वक । दक्षतापूर्ण ढंग से । उ०—(क) रचिपाचि काटिक कुटलपन कन्हसि कपट प्रबोध ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) राच पाचि कीयो ऐ मिंगार, पाटी ती पारी चाखे माम का ।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० ६३२ । रचि राच(क) = बहुत हाथियारी और कारीगरी के साथ (जाई काम करना) । बहुत कौशलपूर्वक ।

रचना^१—क्रि० स० [स० रञ्जन] रँगना । रजत करना । उ०—(क) मार्ग को भ्रगोषे तक लाख के रग मे रच दिया ।—लक्ष्मणमिह (शब्द०) । (ख) राचन रारी रची मेहदी नृप समु कह मुफता सम पोत हे ।—शभु (शब्द०) ।

रचना^२—क्रि० अ० [स० रञ्जन] १ अनुरक्त होना । उ०—(क) पर नारि से रचे हैं पिय ।—पद्याकर (शब्द०) । (ख) जो अपने पिय रूप रची कवि राम तिन्हें रचि की छवि थोरी ।—हृदयराम (शब्द०) । (ग) मोहि तोहि मेहंदी कहूँ कैसे वने बनाइ । जिन चरनन सो में रचा तहाँ रची तू जाइ ।—रसनिधि (शब्द०) । (घ) चिता न चित फाकी भयो रची जू

पिय के रग ।—मूर (शब्द०) । २. रंग चढना । रंगा जाना । रजित होना । जैसे,—(क) तुम्हारे मुह मे पान खूब रचता है । (ख) उसके हाथ मे मेहदी खूब रचती है । उ०—(क) गान सरस श्रलि करत परस मद मोद रग रचि ।—गुमान (शब्द०) । (ख) जावक रचित अंगुरियन मृदुल मुठारी हो ।—तुलसी (शब्द०) ।

रचनात्मक—वि० [स० रचना + आत्मक] वह कार्य जो निर्माण मे सहायक हो । जैसे—रचनात्मक साहित्य, रचनात्मक शिक्षा आदि ।

रचयिता—सञ्ज्ञा पुं० [स० रचयित्] रचनेवाला । बनानेवाला । जैसे,—आपही इस ग्रथ के रचयिता ह ।

रचवाना—क्रि० स० [हिं० रचना का प्रेर० रूप] १ रचना के काम मे दूसरे को प्रवृत्त कराना । रचना कराना । तैयार कराना । बनवाना । २ मेहंदी या महावर लगवाना ।

रचाना(क)—क्रि० स० [स० रचन] १ आयोजन करना । अनुष्ठान करना या कराना । बनाना जैसे,—व्याह रचाना । उ०—इत पाडव मिलि यज्ञ रचायो ।—लखूलाल (शब्द०) । २ दे० 'रचवाना' ।

रचाना^२—क्रि० अ० [स० रञ्जन] मेहंदी, महावर आदि से हाथ पर रंगाना ।

रचित—वि० [स०] १ बनाया हुआ । रचा हुआ । २ सुधटित (को०) । ३ विभूषित । सज्जित (को०) । ४ ग्रथित (को०) ।

रची—वि० [हिं० रच] थोडा । अल्प ।

रच्छ(क)—सञ्ज्ञा पुं० [स० रक्ष] दे० 'रक्ष' ।

रच्छक(क)—सञ्ज्ञा पुं० [म० रक्षक] दे० 'रक्षक' ।

रच्छन(क)—सञ्ज्ञा पुं० [म० रक्षण] दे० 'रक्षण' ।

रच्छदार(क)—वि० [स० रक्षपाल] रक्षा और पालन करनेवाला । रक्षक । पालक । उ०—गिरि के धरमहार, गँवर के रच्छ पार गऊ न लाइए ।—गग० ग्र०, पृ० ६ ।

रच्छस(क)—सञ्ज्ञा पुं० [स० राक्षस] दे० 'राक्षस' ।

रच्छा(क)—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० रक्षा] दे० 'रक्षा' ।

रच्छाकर(क)—वि० [स० रक्षा + हिं० करना] रक्षा करनेवाला । रक्षक । उ०—सुरजन सुत नृप भोज भूमि मुर जन रच्छाकर ।—मात० ग्र०, पृ० ४१४ ।

रच्छित—वि० [स० रक्षित] दे० 'रक्षित' ।

रक्षपाल(क)—वि० [स० रक्षपाल] रक्षा और पालन करनेवाला । रक्षपाल । उ०—अविनासा दुलहा कव मिलही, भक्तन के रक्षपाल ।—कवीर श०, पृ० ६१ ।

रक्षस(क)—सञ्ज्ञा पुं० [स० रक्षस = राक्षस] दे० 'राक्षस' । उ०—जब्रदूत मेले समुझावो रक्षस अजू समजे तो रावण ।—रघु० क०, पृ० १७८ ।

रजपुत(क)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राजपूत] दे० 'राजपूत' । उ०—रजपुत पचास भुभके अमोर । वज्र जीत कै नद् नीसान धार ।—पृ० रा०, २०, ६६ ।

रज—सञ्ज्ञा पुं० [स० रजन्] १. वह रक्त जो स्त्रियो और स्तनपायी जाति के मादा प्राणियो क योनिमार्ग से प्रतिमास निकलता

है और प्राय तीन या चार दिनों तक बराबर निकलता रहता है। आर्तव । कुमुम । ऋतु ।

विशप—रज युवावस्था का सूचक होता है और गरम देशों में स्त्रियों के वारहवें या तरहवें वष तथा ठंढे देशों में सोलहवें या अठारहवें वष निकलने लगता है और प्राय पचान या पचपन वष की अवस्था तक निकलता रहता है। जब स्त्री गर्भ धारण कर लेती है, तब यह रज निकलना बंद हो जाता है, और प्रसव के उपरांत फिर निकलने लगता है। हमारे यहां शास्त्रों में कहा है कि जयतक स्त्री रजस्वला न होने लग, तबतक उसे कोई धार्मिक कृत्य करने का अधिकार नहीं होता, और जिन दिनों स्त्री को रजस्वाव होता हो, उन दिनों वह अपवित्र या अशुचि समझी जाती है। रजस्वाव हो चुकने पर जब स्त्री स्नान करती है, तब वह गर्भधारण के लिये विशेष उपयुक्त हो जाती है।

२ साख्य के अनुसार प्रवृत्ति के तीन गुणा में से दूसरा गुण।

विशप—यह चंचल, प्रवृत्त करनेवाला, दुःखजनक और काम, क्रोध, लोभ आदि को उत्पन्न करनेवाला माना गया है। नस्व तथा तम दोनों गुणों को यहीं मंचालित करता है और इसी के द्वारा मनुष्य में सब प्रकार की उत्तेजना या प्रेरणा उत्पन्न होती है। विशेष दे० 'गुण'।

३ आकाश । ४ पाप । ५ जल । पानी । उ०—रज राजस, आकाश रज, रज युवती में होय । रज धूली, रज पाप, कहि रज जल निर्मल होय ।—नददास (शब्द०) । ६ प्राचीन समय का एक प्रकार का वाजा, जिसपर चमड़ा मढा जाता था । ७ जोता हुआ खेत । ८ वादल । ९ भाप । १० फूलों का पराग । उ०—हेमकमल रज मिलि पियराए ।—लक्ष्मणसिंह (शब्द०) । ११ आठ परमाणुओं का एक मान या तौल । १२ भुवन । लोक । १३ पुराणानुसार एक ऋषि का नाम जो वशिष्ठ के पुत्र माने जाते हैं । ४ खेत पापडा । १५ स्कन्द की एक सेना का नाम ।

रज^२—सखा स्त्री १ धूल । गर्द । उ०—(क) गमन चढे रज पवन प्रसगा ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) अति शुभ वीथी रज परिहरे ।—केशव (शब्द०) । (ग) रज राजस न छुत्राइए नेह चीकने चित्त ।—विहारी (शब्द०) । २ रात । ३ ज्योति । प्रकाश ।

रज^३—सखा पुं० [सं० रजत] चाँदी । उ०—(क) पुनि ताम्र के हैं कोटि घर श्रुति कोटि रज के स्वच्छ है । तहें पाँच कोटि परवान के गृह दार के नव लच्छ है ।—विश्राम (शब्द०) । (ख) भाजन मणि हाटक रज केरे । अति विचित्र बहु भाति घनेरे ।—विश्राम (शब्द०) ।

रज^४—सखा पुं० [सं० रजक] रजक । धोवी । उ०—(क) शिवनिन्दक मतिमद प्रजा रज निज नय नगर वसाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) मारग मे एक रज सहारथी सबहि वसन हरि लीन्हे ।—सूर (शब्द०) ।

रज^५—सखा पुं० [फा० रज़] अगूर [को०] ।

रज^६—वि० [फा० रज़] रंगनेवाला [को०] ।

रज^७—सखा स्त्री० [सं० रजम्] शूरता । वीरता । रज्जुता । उ०—राजे भाणे राज छोडि राजपून, गीती छोडि राज रनाई छोडि राना जू ।—भग प्र०, पृ० ६३ ।

रज^८—सखा स्त्री० [हि० राजा + ई (प्रत्य०)] राजस्व । राजपन । उ०—राजा है रजई दिग्गवत । ग्यान वाव दुदुभी वजावत ।—नद० प्र०, पृ० २८७ ।

रज^९—सखा पुं० [सं०] [स्त्री० रजकी] ? कपडा घोंनेवाला । बोझ । २ मुग्गा । शुक (को०) ।

रज^{१०}—सखा पुं० [प्राग्विक] १ अन्न । भोजन । २ गेहूँ । जीविका । उ०—देखनज दुग दूर है पाय रजक तुप पूर ।—वांकी० प्र०, भा० ३, पृ० ११ ।

रज^{११}—सखा पुं० [सं० रज + ऋण, धूलिकण ।

रज^{१२}—सखा स्त्री० [सं०] १ रजक गी ली । धात्रि । २ रजोवर्म के समय तीसरे दिन स्त्री की मजा [को०] ।

रज^{१३}—सखा पुं० [सं०] फकरा । कूट । गोह । ३० कूट ।

रज^{१४}—सखा पुं० [सं० रजागुण] प्रवृत्त का वह गुण जिसमें काम वा भोग विलास की इच्छा पैदा होती है । रजोगुण । विशेष दे० 'रज' । उ०—ब्रह्मर विमल आयन रचित उपमा नहि कहि जात है । रनहित लपेट तम गुनहि तनु मनु रजगुन सरसात है ।—गोपाल (शब्द०) ।

रज^{१५}—सखा स्त्री० [सं० राजतत्त्व] शूरता । वीरता । उ०—शिव सरजा सा जग छुरि चदावत रजवत । राव अमर गो अमरपुर ममर रही रजतत ।—भूपण (शब्द०) ।

रज^{१६}—सखा स्त्री० [सं०] १. चाँदी । रूपा । उ०—रजत सौप मह भाम जिमि जया भानु कर वारि ।—तुलसी (शब्द०) । २ सोना । ३ हाथी दात । ४ हार । ५ रत्न । लहू । ६ पुराणानुसार शाकडीप के अस्ताचल पर्वत का नाम ।

रज^{१७}—वि० १ मफेद । शुनल । २ लाला नुल । ३, चाँदी के रंग का । चाँदी का बना हुआ (को०) ।

यौ०—रजतकृम = चाँदी का घडा । रजतपात्र, रजतभाजन = चाँदी का बरतन ।

रज^{१८}—सखा पुं० [सं०] मलय पर्वत की एक चाटी का नाम ।

रज^{१९}—सखा स्त्री० [सं० रजत + जयन्ती] किसी संस्था के जीवनकाल के २५वें वर्ष मनाया जानेवाला उत्सव ।

रज^{२०}—सखा पुं० [सं०] हनुमान ।

रज^{२१}—वि० रजत के समान दीप्त वा चमकीला ।

रज^{२२}—सखा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक यज्ञ का नाम ।

रज^{२३}—सखा पुं० [सं०] कुवेर के एक वंशधर का नाम ।

रज^{२४}—सखा पुं० [सं० रजत + पट] वह सफेद पर्दा जिसपर चलचित्र प्रदर्शित किए जाते हैं ।

रज^{२५}—सखा पुं० [सं०] कंलास पत्त ।

रज^{२६}—सखा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम ।

रज^{२७}—सखा स्त्री० [हि० रजत + आई (प्रत्य०)] सफेदी ।

श्वेतता । उ०—तेज सौ ताके ललाई भरे रज में मिली आसु सर्व रजताई ।—गिरधर (शब्द०) ।

रजताकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चाँदी की खान [को०] ।

रजताचल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चाँदी का बनाया हुआ वह कृत्रिम पर्वत जिसका दान करना पुराणानुसार बहुत पुण्य का कार्य समझा जाता है । यह नर्षा महादान है । २ कैलास पर्वत ।

रजताद्रि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कैलास पर्वत ।

रजतोपम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रूपामाखी ।

रजधानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजधानी] १ राजधानी । उ०—राजा रामु अथवा रजधानी । गावत गुन सुर मुनि वर बानी ।—मानस, १।२५ । २ राज्य । उ०—रामचन्द्र दसरथ मुत्ताकी जनकसुता पटरानी । कह तात के, पचवटी वन छाँडि चले रजधानी ।—सूर०, १०।१६६ ।

रजन^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रेजिन] एक प्रकार का गोद । राल । विशेष दे० 'राल' ।

रजन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. किरण । २. रंगने की क्रिया । ३. कुमुभ । महारजन [को०] ।

रजना^१—क्रि० अ० [सं० रञ्जन] रंगा जाना । रग में डुवाया जाना । उ०—(क) प्रेम भरी पुर भूप सुता गुणा रूप रजी रजपूतिनि राजै ।—देव (शब्द०) । (ख) मानत नहीं लोक मरजादा हरि के रग मजी । सूर श्याम को मिलि चूनो हरदी जौ रग रजी ।—सूर (शब्द०) ।

रजना^२—क्रि० सं० रंग में डुवाना । रंगना ।

रजना^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रञ्जन] संगीत की एक मूर्च्छना जिमका स्वरप्राम इस प्रकार है—नि, स, रे, ग, म, प व । नि, स, रे, ग, म, प, ध, नि । स, रे, ग, म, प, ध, नि ।

रजनि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रजनी' [को०] ।

रजनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. रात । रात्रि । निशा । उ०—(क) मगल ही जु करो रजनी विधि याही ते मगली नाम धर्यो है ।—केशव (शब्द०) । (ख) है रजनी रज मे रुचि केती, कहा रुचि रोचक रक रसाल मे ।—द्विजदेव (शब्द०) । ३. जतुका लता । पहाड़ी । ४. नीली । नील । ५. दाहलदी । ६. पुराणानुसार शात्मली द्वीप की एक नदी का नाम । ७. लाख । लाह । ८. दुर्गा का एक नाम [को०] ।

रजनीकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. चंद्रमा । उ०—सतत दुखद रुखो रजनीकर । स्वारथ रत तव अथहुँ एक रस मोको कवहुँ न भयो तापहर ।—तुलसी (शब्द०) । २. कर्पूर । कपूर [को०] ।

रजनीचर^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. राक्षस । २. चंद्रमा । ३. चोर [को०] । ४. रात का पहरेदार [को०] ।

रजनीचर^२—वि० जो रात के समय चलता या घूमता फिरता हो ।

रजनीजल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. शोस । २. पाला [को०] ।

रजनीनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा [को०] ।

रजनीपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा ।

रजनीमुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] संख्या । सार्यकाल । शाम का वक्त । उ०—(क) बहुरि भोग धरि रजनीमुख मे । मैनारती करै भरि सुख मे ।—गिरधर (शब्द०) । (ख) प्रविष्यो पवन ननय रजन मुख लक निशक अकेला ।—रघुराज (शब्द०) । (ग) दिन उठि जात धेनु वन चारन गोप सखन के सग । वासर गत रजनीमुख धावत करत नैन गति पग ।—सूर (शब्द०) । (घ) रजनीमुख धावत गुन गावत नारद तुभुर माउं ।—सूर (शब्द०) ।

रजनीरमण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा [को०] ।

रजनीश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा । रजनीपति । उ०—कुटिन हरि-नख हिए हरि के हरप निरखति नारि । ईश जनु रजनीश राख्यो भालहुँ ते उतारि ।—सूर (शब्द०) ।

रजनीस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रजनीश] चंद्रमा । उ०—तुलमी महीस देखे दिन रजनीस जैसे सून परे सून से मनो मिटाए आक के ।—तुलसी (शब्द०) ।

रजनीहसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शोफाली । हरमिगार [को०] ।

रजपूत^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजपुत्र] [स्त्री० रजपूतिन] १. दे० 'राजपूत' । उ०—धूत कही अथधूत कही रजपूत कही जोलहा कही कोक ।—तुलमी (शब्द०) । २. वीर पुरुष । योद्धा । उ०—अतर ते जनु रजन को रजपूतन को रज ऊपर आई ।—केशव (शब्द०) ।

रजपूती^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राजपूत + ई^२ (प्रत्य०)] १. क्षत्रिय होने का भाव । क्षत्रियत्व । उ०—राखी रजपूती राजधानी राखी राजन की, धरा में धरम राख्यो राख्यो गुन गुनी में ।—भूषण ग्र० पृ० ६७ । २. वीरता । शूरता । बहादुरी ।

रजवल^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राजा अथवा राज्य + बल] राज्य का बल । सुख संपत्ति । राज्यत्व । उ०—जब हम हिरदे प्रीत विचारो । रजवल छाँडी के भए भिखारो ।—दक्खिनी०, पृ० २३ ।

रजवलो—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज + बली] राजा । (हिं०) ।

रजवहा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज, राजा (= बडा) + हिं० बहना] किसी बड़ी नदी या नहर से निकाला हुआ बडा नाला जिससे और भी छोटे छोटे अनेक नाले निकलत है ।

रजलवाह—सञ्ज्ञा पुं० [जलवाह] मध । वादल । (हिं०) ।

रजवती—वि० [सं० रजोवती] वह स्त्री जिसका रजस्राव हो रहा हो । रजस्वला ।

रजवट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राज + वट (प्रत्य०)] १. क्षत्रियत्व । २. वीरता । शूरता । (हिं०) ।

रजवती—वि० [सं० रजोवती] दे० 'रजवती' ।

रजवाड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राज्य + थाड़ा] १. राज्य । देशी रियासत । जैसे,—वे कई रजवाडों में माल बेचने जाते हैं । २. राजा । जैसे,—आजकल यहाँ कई रजवाडे आए हुए हैं ।

रजवार^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजद्वार] १. राजा का दरवार । २. राजद्वार । उ०—पुनि दाँवे रजवार तुरगा । का

वरनञं जसं उनके रगा ।—जायसी (शब्द०) ।

रजस्—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] दे० 'रज' ।

रजसातु—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ मेघ । बादल । २ चित्त । मन । हृदय [को०] ।

रजस्वत्—सञ्ज्ञा पुं० [स०] वह जो रज वा रजोगुण में भरा हो । २ महिष । भैंसा [को०] ।

रजस्वला—वि० [स०] १ जिसका रज प्रवाहित होता हो । रजवती । श्रुतुमती । उ०—रजस्वला तिय गर्भयुत होई । तासी रमण करै जो कोई ।—रघुनाथ (शब्द०) । २ विवाह के योग्य (लडकी) ।

रजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रजा] १ मरजी । इच्छा । उ०—(क) नेह पथ में भाव ते धरिए पाइ संभार । मावित होइ मन आपने मीत रजा अख्यार ।—रमनिधि (शब्द०) । (ख) राजी हैं हम उसी में जिसमें तेरी रजा है ।—नजीर (शब्द०) । २ रखसत । छुट्टी । ३ अनुमति । आज्ञा । हुकम । उ०—अौर कीजै वही आपकी जो रजा ।—सुदन (शब्द०) । ४ स्वीकृति ।

क्रि० प्र०—देना ।—पाना ।—मिलना ।—लेना ।

रजाइ(उ)—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रजा] १ आज्ञा । हुकम । उ०—(क) पूतना पिमाच जातुधानी जातुवान वाम रामदूत की रजाइ माये माने लेत हैं ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) राजा की रजाइ पाइ सचिव महेली बाइ सतानद ल्याये सिय सिविका चढ़ाइ कै ।—तुलसी (शब्द०) । २ दे० 'रजा' ।

रजाइस(उ)—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रजा + हि० आइस (प्रत्य०)] आज्ञा । हुकम ।

रजाई^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० रजक (= कपडा ? या देशा)] एक प्रकार का जाड़े का शोढना जिसका कपडा दोहरा होता है और जिसमें ऊई भरी होती है । लिहाफ ।

रजाई^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राजा + आई (प्रत्य०)] राजा होने का भाव । राजापन ।

रजाई^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रजा] आज्ञा । हुकम । उ०—चले सीस बरि राम रजाई ।—तुलसी (शब्द०) ।

रजाकार—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रजा + कार] १ स्वयंसेवक । २ स्वतन्त्रतापूर्व भारत में स्थापित एक राष्ट्रविरोधी मुस्लिम राजनीतिक दल ।

रजाना क्रि० स० [म० राज्य] १ राज्यसुख का भोग करना । उ०—रूठ रही मन सो कहीं भूपति आनंद आज न याहि रठारुं । मांगु कछौ वनवास दे रामहिं हौ अपने सुत राज रजारुं ।—हृदयराम (शब्द०) । २ बहुत अधिक सुख देना । बहुत अच्छी तरह से रखना । जैसे,—वे अपने सभी सबधियों को राज रजा रहे हैं ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग 'राज' या 'राज्य' शब्द के साथ ही होता है, अलग नहीं ।

रजामद—वि० [फ्रा० रजामद] जो किसी बात पर राजी हो गया हो । सहमत । जैसे,—अगर आप इस बात में रजामद हो, तो यही सही ।

रजामदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० रजामदी] राजी या सहमत होने का भाव । सहमति । स्वीकृति । जैसे,—जो काम होगा, वह आपकी रजामदी से होगा ।

रजाय(उ)—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रजा] १ आज्ञा । हुकम । उ०—(क) चोरन उर करि शुद्ध अति जाहु सु दियो रजाय ।—धुराज (शब्द०) । (ख) कोपि दसकध तव प्रलय पयोद वोल्थो, रावन रजाय वाय आए यूथ जोरि कै ।—तुलसी (शब्द०) । २ मरजी । इच्छा ।

रजायस(उ)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राजा अथवा अ० रजा + आयस] आज्ञा । हुकम । उ०—भयो रजायस मारहु सुआ । मूर न आउ चाँद जहँ ऊप्रा ।—जायसी (शब्द०) ।

रजायसु(उ)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राजा वा अ० रजा + हि० आयस] दे० 'रजायस' । उ०—अब तो मूर शरण ताकि आया, सोइ रजायसु दाजै । जेहि तें रहै शत्रु प्रण मेरो वही मतो कछु कोजै ।—सूर (शब्द०) । (ग) जब जमराज रजायसु ते ताहि लै चलिह भट वधि गटैया ।—तुलसी (शब्द०) ।

रजिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [दे०] १ अनाज नापने की एक माप जो प्राय डेढ सेर का होता है । २ काठ का वह वरतन जो इस मान का होता है ।

रजिया^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रजीअह] १ दूध शरीक बहन । दूध बहन । २ रजिया बेगम, जो गुलामवश के दूसरे बादशाह अलतमश की लडकी थी ।

रजियाउर(उ)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राजपुर वा राजा + गृह] राजधानी । उ०—वार मोर रजियाउर रता । सो लै चला सुवा परवता । जायसी प्र० (गुप्त), पृ० १३३ ।

रजिष्टार—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'रजिस्ट्रार' ।

रजिस्टर—सञ्ज्ञा [अ०] अंगरेजी ढंग की वही या कित्ताव आदि जिसमें किसी मद का आय व्यय अथवा किसी विषय का विस्तृत विवरण, सिलसिलेवार या खानेवार, लिखा जाता हो ।

रजिस्टरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ किसी लिखित प्रतिज्ञापत्र को कानून के अनुसार सरकारी रजिस्टरो में दर्ज कराने का काम ।

विशेष—प्राय सभी देशों में यह नियम है कि वनाम, दस्तावेज तथा इसी प्रकार के और सब कागज पत्र लिखे जाने के उपरांत सरकारी रजिस्टरो में दर्ज करा लिए जाते हैं । इससे लाभ यह होता है कि उस कागज में लिखी हुई सब बातें विलकुल पक्की हो जाती हैं, और यदि कोई पत्र उन बातों के विपरीत काहू काम करता है, तो वह न्यायालय से दफ का भागी होता है । यदि मूल कागज किसी प्रकार खो जाय, तो उसके बदले में आवश्यकता पडने पर रजिस्टरी-वाली नकल से भी काम चल जाता है ।

२ चिट्ठी, पारसल आदि डाक से भेजने के समय डाकखाने के रजिस्टर में उसे दर्ज कराने का काम, जिसके लिये कुछ अलग फीस या दाम देना पडता है ।

विशेष—इस प्रकार की रजिस्टरी से यह लाभ होता है कि

रजिस्टरी कराई हुई चीज खोने नहीं पाती, और यदि खो जाय, तो डाकघराना उसके लिये जिम्मेदार होता है। यदि पानेवाला किसी समय उस चिट्ठी या पारसल आदि के पाने से इन्कार करे, तो उसके विरुद्ध डाकघराने से रजिस्टरी का प्रमाण भी दिया जा सकता है।

३ ऊपर कही विधि से भेजा हुआ पत्र आदि।

यौ०—रजिस्टरी शुद्धा = रजिस्टर्ड। पजीकृत। पजीबद्ध।

रजिस्टर्ड—वि० [अ०] जिसकी लिखा पढ़ी पक्की हो। रजिस्टर में लिखा हुआ। जिसकी रजिस्ट्री कराई गई हो।

रजिस्ट्रार—सञ्ज्ञा पु० [अ०] १ वह अफसर जिसका काम लोगों के लिखित प्रतिज्ञापत्रों या दस्तावेजों की कानून के मुताबिक रजिस्ट्री करना अर्थात् उन्हें सरकारी रजिस्टर में दर्ज करना हो। २ वह उच्च कर्मचारी या अफसर जो किसी विश्व-विद्यालय में मंत्री का काम करता हो। जैसे—हिंदू विश्व-विद्यालय के रजिस्ट्रार।

रजिस्ट्रेशन—सञ्ज्ञा पु० [अ०] रजिस्टर में दर्ज होना।

रजीडेंट—सञ्ज्ञा पु० [अ० रेजिडेंट] दे० 'रेजिडेंट'।

रजील—वि० [अ० रजील] १. छोटी जाति का। नीच। जैसे, रजील कोम। २. पाजी। कमीना। शोहदा।

रजु(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रज्जु] दे० 'रज्जु'। उ०—(क) सोभा रजु मदर सिगाह।—मानस, १।२४७। (ख) जसुमति रिस करि करि रजु करपै।—सूर०, १०।३४२।

रजोकुल(पु)—सञ्ज्ञा पु० [सं० राजकुल] राजवंश। राजघराना। उ०—राजनि राज रजोकुल में अति भाग सुहागिनी राज-दुलारी।—(शब्द०)।

रजोगुण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] प्रकृति का वह स्वभाव जिससे जीवधारियों में भोग विलास तथा दिखावे की रुचि उत्पन्न होती है। रजगुण। राजस।

विशेष—यह साध्य के अनुसार प्रकृति के तीन गुणों में से एक है जो चंचल और भोग विलास आदि में प्रवृत्त करानेवाला कहा गया है। विशेष ३० 'गुण'।

रजोगोत्र—सञ्ज्ञा पु० [सं०] पुराणानुसार वशिष्ठ के एक पुत्र का नाम।

रजोदर्शन—सञ्ज्ञा पु० [सं०] स्त्रियों का मासिक धर्म। ऋतुस्राव। रजस्वला होना।

रजोधर्म—सञ्ज्ञा पु० [सं०] स्त्रियों का मासिक धर्म।

रजोवत्—सञ्ज्ञा पु० [सं०] अधकार। अवेरा [को०]।

रजोभङ्ग—सञ्ज्ञा पु० [सं०] बुरी बात से रोकनेवाला। निषिद्ध कर्म करने पर सावधान करनेवाला (स्मृति)।

रजोमूर्ति—सञ्ज्ञा पु० [सं०] ब्रह्मा [को०]।

रजोरस—सञ्ज्ञा पु० [सं०] अधकार। अवेरा।

रजोहर—सञ्ज्ञा पु० [सं०] रजक। घोषी [को०]।

रज्जाक(पु)—सञ्ज्ञा पु० [अ० रज्जाक] रिजक या रोजी देनेवाला।

ईश्वर। उ०—यह सब आलम तेरा तू रज्जाक ममो केरा।
—दक्खिनी०, पृ० ५२।

रज्जु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. रस्सी। जेवरी। २. घोड़े की लगाम की डोरी। वागडोर। ३ स्त्रियों के सिर की चोटी। वेणी। ४ जैनियों के अनुसार समस्त विश्व की ऊँचाई का ६४ वाँ भाग। राजू।

रज्जुकुठ—सञ्ज्ञा पु० [सं० रज्जुकुठ] एक प्राचीन आचार्य का नाम।

रज्जुदालक—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक प्रकार का जलचर पक्षी जिसका मांस खाने का शास्त्रकारों ने निषेध किया है।

रज्जुवाल—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मनु के अनुसार एक प्रकार का पक्षी। रज्जुदालक।

रज्जु—सञ्ज्ञा पु० [अ० रज्जु] सग्राम। रण। जग। युद्ध [को०]।

रम्हना—सञ्ज्ञा पु० [सं० रन्धन या रञ्जन] रँगरेजों का वह पात्र जिसमें वे रँगें हुए कपड़े में का रंग निचोड़ते हैं।

रटंत—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रटना + अंत (प्रत्य०)] रटने की क्रिया का भाव। रटाई।

रटती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रटन्ती] माघ मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी जो एक पुण्य तिथि सम्झी जाती है।

विशेष—इस दिन सूर्योदय के समय स्नान एवं तर्पण करने का बहुत माहात्म्य कहा गया है। बृहन्नीलतंत्र और कालिका-पुराण आदि के अनुसार इस दिन तांत्रिक लोग भगवती तारा और मुडमालिनी कालिका का पूजन करते हैं।

रट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रटना] किसी शब्द का बार बार उच्चारण करने की क्रिया। जैसे, - तुमने तो 'लाओ', 'लाओ' की रट लगा दी है। उ०—(क) राम राम रट विकल भुआलू।—तुलसी (शब्द०)। (ख) केशव वे तुहि तोहि रटै रट तोहि इतै उनही की लगी है।—केशव (शब्द०)। (ग) जैमी रट तोहि लागी माधव की राधे ऐनी, राधे राधे राधे रट माधव लगी रहे।—पद्माकर (शब्द०)।

क्रि० प्र०—मचाना। लगना।—लगाना।

रटन^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रटना] रटने की क्रिया या भाव। रट।

रटन(पु)^२—सञ्ज्ञा पु० [सं०] कहना। बोलना।

रटनि(पु)^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रटना] रटने की क्रिया। रट। रटन। उ०—चातकु रटनि घटें घटि जाई।—मानस, २।२०४। (ख) तव कटु रटनि करौ नहि काना।—मानस, ६।२४।

रटना—क्रि० सं० [अनु०] १. किसी शब्द को बार बार कहना। उ०—(क) जानि यह केशोदास अनुदिन राम राम रटत रहत न डरत पुनरुक्ति को।—केशव (शब्द०)। (ख) अमगुन होहि नगर पसारा। रटहि कुमाँति कुखेत करारा।—तुलसी (शब्द०)। २. जवानों याद करने के लिये बार बार उच्चारण करना। जैसे,—इन शब्दों का अर्थ रट डालो।

सयो० क्रि०—डालना।—खेना।

३. बार बार शब्द करना। बजना। उ०—कटि तट रटति चार
किंकिनि रव अनुपम वरनि न जाई।—तुलसी (गव्द०)।

रठार्थ—वि० [?] रूखा। शुष्क। उ०—मेरी कहीं मान लीजे आबु
मान मंगे बीजे चित हित कीर्ज तत तीर्जे रोस रठु है।—
रघुनाथ (शब्द०)।

रठकठ(उ)—वि० [दिश० रठ (=शुष्क) + हि० काठ] उकठे काठ की
तरह। जड़। शुष्क। उ०—सो सठ रठकठ मति का हीना।
साधु संगति नहि चीन्हे विहीना।—सत० दरिया, पृ० ३८।

रठ्डना(उ)†—क्रि० अ० [सं० रटन, हिं० ररना] चिल्लाना। चीरना।
उ०—दोउ और उमगै समर सु रठ्डै वडि वडि तडै नख
खडै।—ह० रासो, पृ० १३४।

रठ्ठना(उ)—क्रि० सं० [हिं० रट] १ दे० 'रटना'। उ०—जब पाहन भे
बनवाहन से उतरे बनरा जै राम रठ्ठै।—तुलसी (शब्द०)।
२ वहकाना। फुलाना। उ—पुनि पीवत ही कच टकटोरत
भूठहि जननि रठ्ठै। सूर निरखि मुख हँमति जमोदा सो सुख उर
न कडै।—सूर०, १०।१७४।

रठ्ठिया†—सञ्ज्ञा स्त्री० [त्य० या राठ (देश) ?] एक प्रकार की देशी
कपास जो साधारण कोटि की होती है।

रण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लडाईं। युद्ध। जग।

यौ०—रणकर्म = युद्ध। लडाईं। सग्राम। रणकामी = युद्धेषु। युद्ध
का इच्छुक। रणकारी = युद्ध करनेवाला। रणक्षिति, रणक्षेत्री =
दे० 'रणक्षेत्र'। रणक्षेत्र। रणधीर। रणभूमि। रणस्थल।

२ रमण। ३ शब्द। ४ गति। ५ दुवा नामक भेडा जिसकी
डुम मोटी और भारी होती है।

रणक्षेत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह भूमि जहाँ युद्ध हो। लडाईं का मैदान।

रणखेत(उ)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रणक्षेत्र] दे० 'रणक्षेत्र'।

रणगोचर—वि० [सं०] युद्धमलग्न। सग्राम में लगा हुआ [को०]।

रणश्रीङ्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण + हिं० छोड़ना] श्री कृष्ण का एक
नाम।

विशेष—जरासन्ध की चडाई के समय श्रीकृष्ण रणभूमि त्याग कर
द्वारका की ओर चले गए थे, इसी से उनका यह नाम पडा है।

रणतूर्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लडाईं का वाजा। मारू वाजा [को०]।

रणत्कार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भनभनाहट। २ शूँत्र [को०]।

रणदुहुभी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण + दुन्दुभि] दे० 'रणतूर्य'।

रणान—क्रि० अ० [सं०] शब्द करना। बजना।

रणपडित—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रणापडित] १ योद्धा। वीर। २ युद्ध में
कुशल व्यक्ति [को०]।

रणप्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ विष्णु। २ बाजपत्नी। ३ खस।

रणभू, रणभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ युद्ध हो। लडाईं
का मैदान।

रणमडा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रण + मण्डन] पृथ्वी। (हिं०)।

रणमद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] युद्ध का नशा। रणोन्माद।

रणमत्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हाथी। २ वह जो युद्ध में मत्त हो।

रणमार्ग कोविद—वि० [सं०] युद्ध की कला में प्रवीण [को०]।

रणमुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लडाईं का अग्रगता मोरना। २ सेना
का अग्रभाग [को०]।

रणमुष्टि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुचिला।

रणरक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रणाटक] हाथी के प्राहरी दोनों दाँतों के
बीच का भाग।

रणरग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रणरङ्ग] १ लडाईं का उत्साह। उ०—
कु भकरा दुर्मद रणरगा।—तुलसी (शब्द०)। २ युद्ध।
लडाईं। ३ युद्धक्षेत्र।

रणरता(उ)—वि० [सं० रण + रत] युद्ध में अनुरक्त। युद्ध में लगा
हुआ। उ०—मुनिगण प्रतिपालक रिपुकुल घालक बालक ते
रणरता।—केशव (शब्द०)।

रणरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. व्यग्रता। घवराहट। व्याकुलता। २
खेद। पछतावा। रज। ३ मच्छड। मशक [को०]।

रणरणक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. कामदेव का एक नाम। २ प्रवल
कामना। उत्कठा। ३ व्यग्रता। घवराहट। ४ प्रेम।
प्रीति [को०]।

रणरसिक—वि० [सं०] युद्धप्रेमी [को०]।

रणलक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] युद्ध की देवी जो विजय करानेवाली
मानी जाती है। विजयलक्ष्मी।

रणवाद्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लडाईं का वाजा। रणतूर्य।

रणवास(उ)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रनिवास] दे० 'रनिवास'। उ०—
निठुर वचन मुख तैं जु कहि। तनि रणवाम रिमाय।—ह०
रासो, पृ० १२०।

रणवृत्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सैनिक। योद्धा।

रणशिक्षा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] युद्ध करने की शिक्षा [को०]।

रणशूर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] युद्धवीर। योद्धा [को०]।

रणशौङ्ग—वि० [सं० रणशौङ्ग] युद्धकुशल। नग्राम करने में
दक्ष [को०]।

रणसकुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रणसकुल] घमासान लडाईं। घनघोर
सग्राम। भयकर युद्ध [को०]।

रणसज्जा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रण + हिं० सज्जा] युद्ध की तैयारी [को०]।

रणसहाय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लडाईं में मददगार, मित्र [को०]।

रणसिंघा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण + हिं० सिंघा] तुरही। नरसिंघा।

रणसिंहा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'रणसिंघा'। उ०—रणसिंहों का
जो शब्द होता था, सो अति ही सुझावना लगता था।—
लल्लूलाल (शब्द०)।

रणस्तंभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रणस्तम्भ] वह स्तंभ जो किसी रण में
विजय प्राप्त करने के स्मारक में बनवाया जाता है। विजय
का स्मारक।

रगस्थल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लडाईं का मैदान । रगभूमि ।
 रगस्वामी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रगस्वामिन्] १. शिव । महादेव । २. युद्ध का प्रचलन सचालक या सेनापति ।
 रगहंस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वर्ण वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में सगण, जगण, भगण और रगण होते हैं । इसको 'मनहंस', 'मानहंस' और 'मानसहंस' भी कहते हैं ।
 रगाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रगाङ्ग] हथियार । शस्त्रास्त्र [को०] ।
 रगागण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रगाङ्गण] लडाईं का मैदान । युद्धक्षेत्र ।
 रगांतकृत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रगान्तकृत्] विष्णु [को०] ।
 रगाम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सेनामुख । लडाईं का अग्रिम मोरचा ।
 रगाजिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] युद्धक्षेत्र । लडाईं का मैदान ।
 रगिणु—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रैन] रात्रि । रात । (डि०) ।
 रगित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भनभनाहट । रगत्कार [को०] ।
 रगोचर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
 रगेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. शिव । २. विष्णु ।
 रगोस्वच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुक्कट । मुर्गा [को०] ।
 रगोत्कट^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम । २. एक दैत्य का नाम ।
 रगोत्कट^२—वि० जो रग में समिलित होने या रग ठानने के लिये उन्मत्त हो रहा हो ।
 रगोत्साह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] युद्ध मवधी उत्साह । युद्धोत्साह [को०] ।
 रत^१—सञ्ज्ञा पुं० [पुं०] १. मैथुन । प्रसंग । उ०—प्रिया का है विवाधर मृदुल ज्यो पल्लव नयो । लियो धीरे धीरे रहसि रस मैंने रत सम ।—लक्ष्मण (शब्द०) । २. योनि । ३. लिंग । ४. प्रेम । प्रीति ।
 रत^२—वि० १. प्रेम में पडा हुआ । अनुरक्त । आसक्त । २. (कार्य आदि में) लगा हुआ । लित । लीन । तत्पर ।
 रत^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्त, प्रा० रत्त] रक्त । खून । लहू । (डि०) ।
 रत^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० ऋतु] दे० 'ऋतु' । उ०—आवी सब रत आमली त्रिया करइ सिणगार ।—ढोला०, दू० ३०३ ।
 रतकील—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ता । २. पुरुष की जननेंद्रिय । लिंग [को०] ।
 रतकूजित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सभोग के समय की जानेवाली अस्फुट ध्वनि । कामुकतापूर्ण कुथन । सभोग या प्रसंगकालीन सीत्कार । [को०] ।
 रतगिरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रत्ती] गुजा । घुंघची ।
 रतगुरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पति । स्वसम । शीहर ।
 रतगृह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रतिगृह' [को०] ।
 रतजगा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रात + जागना] १. किसी उत्सव या विहार आदि के लिये सारी रात जागकर बिता देना । २.

वह आनदोत्सव जो रात भर होता रहे । ३. एक त्योहार जो पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार आदि में भाद्रपद कृष्ण द्वितीया की रात को होता है । इसमें प्रायः स्त्रियाँ रात भर कजली आदि गाया करती हैं ।

रतज्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कौआ । काक [को०] ।
 रतताली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कुटनी ।
 रतताली^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रततालिन्] विषयी । कामाचारी । लपट [को०] ।
 रतन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्न] दे० 'रत्न' ।
 रतनजोत—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रत्न + ज्योति] १. एक प्रकार की मणि । २. एक प्रकार का बहुत छोटा चूप जो कश्मीर और कुमाऊँ में अधिकता से होता है ।

विशेष—इसके डठल प्रायः डेढ़ बालिशत तक लवे होते हैं, जिनमें काहू के पत्तों के से, प्रायः चार अंगुल तक लवे और कुछ अनीदार पत्तों और छोटे छोटे फूलों तथा फलों के गुच्छे लगते हैं । इसकी जड़ लाल रंग की होती है, जिसे लाल रंग निकाला जाता है और तेल आदि रंगे जाते हैं । वैद्यक में यह गरम, रुक्ष, पित्तज, त्रिदोषनाशक तथा जीर्णज्वर, प्लीहा, शोथ आदि को दूर करनेवाली कही गई है । इसके कई भेद होते हैं, जिनमें से एक के डठल और पत्तों अपेक्षाकृत बड़े होते हैं, और एक छत्तों के आकार की होती है जिसकी पत्तियाँ बहुत छोटी होती हैं । वैद्यक के अनुसार इन सबके गुण भी भिन्न भिन्न होते हैं, और इनका व्यवहार औषध रूप में होता है ।

३. वृहद्ती । बड़ी दती । वि० दे० 'दती' ।

रतनपटोरा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रतन + पटोरा] रत्न जड़े हुए वस्त्र । जडाऊ वस्त्र । उ०—रतन पटोरा डारि पाँवडा सन्मुख जाऊँ हो ।—धरम०, पृ० ५४ ।

रतनपुरुष—सञ्ज्ञा पुं० [?] एक प्रकार की छोटी भाडी जो दिल्ली, आगरा, बुंदेलखंड और बंगाल में पाई जाती है । इसकी जड़ और पत्तियाँ औषधि के रूप में काम में आती हैं ।

रतनाकर^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नाकर] १. दे० 'रत्नाकर' । २. दे० 'रतनजोत' ।

रतनागर^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नाकर] समुद्र । उ०—जनमि जगत जमु प्रगटिहु मातु पिताकर । तीयरतन तुम उपजिहु भव रतनागर ।—तुलसी (शब्द०) ।

रतनगरभ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रत्नगर्भा] पृथ्वी । भूमि । (डि०) ।

रतनार—वि० [हिं०] दे० 'रतनारा' ।

रतनारा—वि० [सं० रक्त, प्रा० रत्त, रत्त + नाल (= पोला मुरमा) अथवा सं० रत्न (= मानिक) + हिं० आर (प्रत्य०)] कुछ लाल । सुर्खी लिए हुए । उ०—दुलरी कठ नयन रतनारे मो मन चित्त हरीरी ।—सूर (शब्द०) ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग अधिकतर आँखों के लिये ही होता है ।

रत्नाराच—सञ्ज्ञा पुं० [मं०] दे० 'रत्नारीच' [को०] ।

रत्नारी^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रत्नार + ई (प्रत्य०)] १ एक प्रकार का धान । उ०—फूपूर काट कजरी रत्नारी । मधुकर डेला जीरा सारी ।—जायसी (शब्द०) ।

रत्नारी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रक्त (= रत् + नार)] लाली । लालिमा । मुखों ।

रत्नारी^३—वि० दे० 'रत्नारा' ।

रत्नारीच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । मदन । २ कुत्ता । श्वान । ३ आवारा । लपट । बदचलन । ४ रत्नकूजित । सभोगानदजन्य सीत्कार (को०) ।

रत्नालिया(पुं०)†—वि० [हिं० रत्नारा + इया (प्रत्य०)] दे० 'रत्नारा' । उ०—आँखडिया रत्नालिया चेला करै प्रताल । मैं तोहिं वृक्षाँ माछली तूँ क्यौं बघी जाल ।—कवीर (शब्द०) ।

रत्नावली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रत्नावली] दे० 'रत्नावली' ।

रत्निधि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खजन पत्नी । ममोला ।

रत्नवध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नवध] दे० 'रत्नवध' ।

रत्नमानस—वि० [सं०] खुशदिल । प्रसन्नचित्त [को०] ।

रत्नमुहँ(पुं०)†—वि० [हिं० रत्न (= चाल) + मुहँ] [वि० स्त्री० रत्नमुही] लाल मुहँवाला । उ०—रायमुनी तुम्ह श्री रत्नमुही । अलिमुख लाग भई फुल जुही ।—जायसी (शब्द०) ।

रत्नमुहँ^१—सञ्ज्ञा पुं० बदर ।

रत्नवॉसँ†—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रात्न + वॉसँ (प्रत्य०)] हाथियों और घोड़ों का वह चारा जो उन्हें रात के समय दिया जाता है ।

रत्नवा—सञ्ज्ञा पुं० [दे०] खर नाम की घास जो घोड़ों के लिये बहुत अच्छी समझी जाती है ।

रत्नवाई†—सञ्ज्ञा स्त्री० [दे०] पहले दिन कोल्हू चलने पर उसका रस लोगो में बाँटने की प्रथा ।

रत्नवाह(पुं०)†—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रात्न + वाह ?] रात की लड़ाई । रात्रि को होनेवाला युद्ध ।

रत्नव्रण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुत्ता ।

रत्नशायी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नशायिन्] कुत्ता ।

रत्नहिडक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नहिडक] १ वह जो स्त्रियों को चुराता हो । २ लपट । आवारा । बदचलन ।

रत्नजली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रत्नजली] रक्तचदन । लाल चदन ।

रत्नादुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नानुक] कुत्ता ।

रत्ना†—सञ्ज्ञा स्त्री० [दे०] मुकड़ी, जो अनेक वस्तुओं पर प्रायः बरसात के दिनों में या सीढ़ की जगह में लग जाती है ।

रत्नाना(पुं०)†—क्रि० अ० [सं० रत्न + हिं० आना (प्रत्य०)] रत्न होना । उ०—कीर्षी श्याम हटकि हैं राख्यो कीर्षी आपु रत्नान्यो ।—सूर (शब्द०) ।

रत्नाना(पुं०)†^२—क्रि० सं० किसी को अपनी ओर रत्न करना ।

रत्तामट^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुत्ता [को०] ।

रत्तायनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वेण्या । रडी ।

रत्तार्थी—वि० [सं० रत्तार्थिन्] [वि० स्त्री० रत्तार्थिनी] मंभोग चाहनेवाला । कामुक [को०] ।

रत्तालू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्तलू] १ पिटालू नामक कद जिमका व्यवहार तरकारी बनाने में होता है । २ वाराहीकद । गेंठी ।

रत्ति^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कामदेव की पत्नी जो दत्त प्रजापति की कन्या मानी जाती है । विशेष दे० 'कामदेव' । उ०—रावा हरि केरी प्रीति सब तैं अविक्त जानि रति रतिनाथ हूँ देखो रति थोरी सी ।—केशव (शब्द०) ।

विशेष—कहते हैं, दत्त ने अपने शरीर के पगीने में इमे उत्पन्न करके कामदेव को अर्पित किया था । यह सत्तार की सबसे अधिक रूपवती, सौंदर्य की आजात मूर्ति मानी जाती है । इमे देखकर सभी देवताओं के मन में अनुराग उत्पन्न हुआ था, इसलिये इनका नाम रति पडा था । जिम समय शिव जी ने कामदेव को अपने तीसरे नेत्र से भस्म कर दिया था, उस समय इमने बहुत अधिक विनाप करके शिव जी से यह वरदान प्राप्त किया था कि शिव से कामदेव बिना शरीर के या अनग होकर सदा बना रहेगा । यह भी माना जाता है कि यह सदा कामदेव के साथ रहती है ।

२ कामक्रीडा । सभोग । मंथुन । उ०—(क) रति जय लिखिबे की लेखनी सुरेख किर्षी मानरथ सारथी के नोदन नवीने हैं ।—केशव (शब्द०) । (ख) लाज गरव आरस उमग भरे नैन मुसकात । राति रमी रति देत कहि आरे प्रभा प्रभात ।—बिहारी (शब्द०) । ३. प्रीति । प्रम । अनुराग । मुहब्बत ।

क्रि० प्र०—करना ।—जोडना ।—लगाना ।—होना ।

४ शोभा । छवि । उ०—चोटी में लपेटो एक मणि ही सुकाडि दीन्ही दीजो गम हाथ जो बढैया तेरी रति को ।—हृदयराम (शब्द०) । ५ सौभाग्य । खुशकिम्मती । ६ साहित्य में श्रु गार रस का स्थायी भाव । नायक नायिका की परस्पर प्रीति या प्रेम । ७ वह कर्म जिसका उदय होने से किसी रमणीक वस्तु से मन प्रसन्न होता है । (जैन) । ८ गुप्त भेद । रहस्य । ९ चद्रमा की छठी कला (को०) ।

रत्ति(पुं०)^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'रत्ती' ।

रत्ति^३—क्रि० वि० दे० 'रती' । उ०—कत सकुचत निघरक फिरौ रतियो खोरि तुम्है न । कहा करौ जो जाहि ये लगै लगौ हैं नैन ।—बिहारी (शब्द०) ।

रत्ति(पुं०)^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रात्न] रात्न । रात्रि । रत्न । उ०—सही रंगीले रति जने जगी पगी मुख चैन । अलमौहैं सौहैं किए कहैं हंसौहैं नैन ।—बिहारी (शब्द०) ।

विशेष—केवल समस्त पदों में ही इस शब्द का इस रूप में व्यवहार होता है । जैसे, रत्तिवाह ।

रत्तिकत(पुं०)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्तिकान्त] दे० 'रत्तिकत' । उ०—नव

रसाल के पौन लगी डोलत डारत मोर । जनु वसत रतिकत पर भुकि भुकि डारत चौर ।—स० सप्तक, पृ० ३६५ ।

रतिक^०—क्रि० वि० [हि० रची + क (प्रत्य०)] रची भर । बहुत थोड़ा । जरा सा । उ०—नेरे चलि आय छलि मेरे मुख पकज को परसै निसक नहि सक करै रतिको ।—दीनदयाल (शब्द०) ।

रतिकर^१—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १. कामी । २. एक प्रकार की ममाधि ।

रतिकर^२—त्रे० १ जिससे आनन्द को वृद्धि हो । २ जिससे प्रेम की वृद्धि हो ।

रतिकर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रतिकर्मन्] सभोग । मंथुन [को०] ।

रतिकलह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मैथुन । सभोग । विलास । २. रतिकालीन मान मनोवन ।

रतिक्रात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रतिक्रान्त] कामदेव ।

रतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ऋषभ स्वर की तीन श्रुतियों में से अंतिम श्रुति । (संगीत) ।

रतिकुहर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] योनि । भग ।

रतिकेलि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] भोगविलास । सभोग । रतिक्रीडा ।

रतिक्रिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मैथुन । सभोग ।

रतिक्रीडा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रतिक्रीडा] दे० 'रतिकेलि' ।

रतिखेद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सभोगजनित अवसाद या क्लान्ति [को०] ।

रतिगरां—क्रि० वि० [हि० रात + गर ?] प्रातःकाल । बड़े तडके । सवेरे ।

रतिगृह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. योनि । भग । २. वेश्यालय । चकला-खाना [को०] । ३. रतिभवन । केलिगृह [को०] ।

रतिज्ञ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो रतिक्रिया में चतुर हो । २. वह जो किसी स्त्री के मन में अपने प्रति प्रेम उत्पन्न करने में निपुण हो ।

रतिसंकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो स्त्रियों को अपने साथ व्यभिचार करने में प्रवृत्त करता हो ।

रतिताल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] संगीत में ताल के साथ मुख्य भेदों में से एक भेद ।

रतिदान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सभोग । मैथुन । उ०—रघुनाथ ऐसे भेस धरे प्रानप्यारी आयो प्रातः कहु वसि राति दी-हे रतिदान का ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

रतिदेव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. विष्णु । २. एक चद्रवशीय राजा का नाम जो साकृति के पुत्र थे । ३. कुत्ता । श्वान ।

रतिधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह अस्त्र जिससे दूसरे अस्त्रों का नाश होता हो ।

रतिनाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामशास्त्र के अनुसार सोलह प्रकार के रतिबंधों में से एक प्रकार का रतिबंध ।

रतिनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।

रतिनायक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव । उ०—(क) न डगें न भगं जिध जानि सिलीमुख पच धरे रातनायक है ।—जुलसी (शब्द०) ।

(ख) काहे दुरावति है सजनी रतिनायक सायक एही कहे हैं ।—मन्नालाल (शब्द०) ।

रतिनाह^०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रतिनाथ] कामदेव ।

रतिपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।

रतिपद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में दो नगण और एक सगण (III, III, IIS) होता है । जैसे,— न निसि घर तजि धरी । कवहुँ जग कुल नारी । धरति पद पर धरा । सुमतियुत सतिवरा ।

रतिपाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रतिपाशक' ।

रतिपाशक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का रतिबंध जिसे रातनाग भी कहते हैं ।

रतिप्रिय^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।

रतिप्रिय^२—वि० जिसे मैथुन बहुत प्रिय हो ।

रतिप्रिया^१—वि० [सं०] (स्त्री) जिसे मैथुन बहुत प्रिय हो ।

रतिप्रिया^२—सञ्ज्ञा स्त्री० १. तांत्रिकों के अनुसार शक्ति की एक मूर्ति का नाम । २. दाक्षायिणी का एक नाम ।

रतिप्रीता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह नायिका जिसका रति में प्रेम हो । मैथुन से प्रसन्न होनेवाली स्त्री । कामिनी ।

रतिफल—वि० [सं०] जिससे रति में आनन्द मिले । जिससे रति की जा सक । कामोत्तेजक । (औषधि आदि) ।

रतिबंध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रतिबंध] मैथुन या सभोग करने का ढंग या प्रकार, जिसे आसन भी कहते हैं ।

रतिबाह^०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रि + बाह] रात की लड़ाई रात्रियुद्ध । उ०—वर वीरह रघुवस राम रतिबाह उचारिय ।—पृ० रा०, ६६।४८३ ।

रतिबधु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रतिबन्धु] १. प्रेमी । २. पति [को०] ।

रतिभवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. योनि । भग । २. वह स्थान जहाँ प्रेमी और प्रामका मिलकर रतिक्रीडा करते हैं । ३. वेश्यागार [को०] ।

रतिभाव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. नायक नायिका का परस्पर प्रेम । दास्य भाव । (यह शृंगार रस का स्थायी भाव है) । २. प्रीति । प्रेम । मुहव्वत । स्नेह ।

रातभौन^०—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रातभवन] १. रतिक्रीडा करने का स्थान । उ०—सपनेहू न लख्या नास मे रातभौन ते गीन कहुँ निज पी को ।—पद्माकर (शब्द०) । २. दे० 'रातभवन' ।

रतिमंदिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रातमन्दिर] १. योनि । भग । २. मैथुन गृह । वेश्यालय [को०] । ३. दे० 'रातभवन' । उ०—रातमंदिर क मान पु जान मैं प्रतिववाने आपन हेरो करै ।—मन्नालाल (शब्द०) ।

रतिमदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अप्सरा ।

रातामत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का रतिबंध या आसन ।

रतियाना^०—क्रि० अ० [हि० रति (=प्रीति) + याना (प्रत्य०)] प्रीति करना । रत होना । प्रेम करना । अनुरक्त होना ।

- उ०—राम नाम अनुराग ही जो रतियातो । स्वारथ परमारथ पथी तोहि मव पतियातो ।—तुलसी (शब्द०) ।
- रतिरमण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । २ मँथुन । उ०—करँ और ना रतिरमण इक धन ही के हेत । गणिका ताहि ब्रखानिहि जे कवि मुमात निकेत ।—पद्माकर (शब्द०) ।
- रतिरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सभोगजन्य आनन्द । मँथुन का आनन्द विषय तद । [को०] ।
- रतिराई—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रतिराज, प्रा० रति + राइ] कामदेव ।
- रतिराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।
- रतिलपट—वि० [सं० रतिलम्पट] कामुक । कामी [को०] ।
- रतिलक्ष्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मँथुन । प्रमग [को०] ।
- रतिलाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सगीत में ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक ।
- रतिलोल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक राज्ञ का नाम ।
- रतिवत्—वि० [सं० रति + हि० वत् (प्रत्य०)] सुन्दर । खूबसूरत । उ०—कोदण्डग्राही सुभट को, को कुमार रतिवत् । को कहिए शशि ते दुखी कोमल मन को सत ।—केशव (शब्द०) ।
- रतिवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । २. वह भेंट जो किसी स्त्री को उससे रति करने के अभिप्राय से दी जाय ।
- रतिवर्द्धन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जिससे कामशक्ति बढ़ती हो । २ वैद्यक में एक प्रकार का मोदक जो गोखरू, अशगव, शतमूली, तालमूली और जेठो मधु आदि के योग से बनता है और पुष्टिकारक माना जाता है ।
- रतिवल्ली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्रेम । प्रीति । मुहंभवत ।
- रतिवाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रि, हिं० रात + वाह] रात्रियुद्ध । रात की लड़ाई । रात्रिसंग्राम । उ०—म्हे गामी गुज्जर गल्हियाँ हमाई हसाइयाँ । रतिवाह देहु सुरतान दल रखि राजन लगी पाइया ।—पृ० रा०, ६६।४८७।
- रतिवाही—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रतिवाहिन्] एक प्रकार का राग जिसका गान नमय रात को १६ दंड से २० दंड तक है । यह सपूर्ण जाति का राग है और इसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं ।
- रतिशक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कामशक्ति । सभोग की क्षमता [को०] ।
- रतिशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें रति की क्रियाओं का विवेचन हो । कोकशास्त्र । कामशास्त्र ।
- रतिशूर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सभोगक्षम व्यक्ति । सभोग में अत्यधिक समर्थ व्यक्ति [को०] ।
- रतिस योग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सभोग । प्रसंग [को०] ।
- रतिस हित—वि० [सं०] प्रणययुक्त । प्रीति युक्त । प्रणय की अधिकता से युक्त [को०] ।
- रतिसत्वर—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] स्पृका । असवरग ।
- रतिसमर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सभोग । मँथुन ।
- रतिसवस्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रतिजन्य उत्कृष्टतम आनन्द ।

- रतिसाधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुरुष की मूर्त्रेन्द्रिय । लिंग । शिष्यन ।
- रतिसु दर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रतिमुन्दर] कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का रतिवध ।
- रती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रति] १ कामदेव की पत्नी । रति । उ०—वात की वानी माँह भाव सो भवानी माँह केशोदास रति में रती की ज्योति जानवी ।—केशव (शब्द०) । २ सौंदर्य । शोभा । उ०—कहै पदमाकर पताका प्रेम पूरण की प्रगट पतिव्रत की सोगुनी रती भई ।—पद्माकर (शब्द०) । ३ मँथुन । सभोग । उ०—दर्भ धरे तनया कर साथ विदम पती । अर्पन तू करिहै जबही तव होय रती ।—गापाल । ४ दे० 'रति' । ५ तेज । काति । उ०—वेद लोक सब साखी काहू की रती न राखी रावन की वादे लागे अमर मरन ।—तुलसी (शब्द०) ।
- रती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रती] १ घुँघची । गुजा । २ ढाई जो या आठ चावल का भान । वि० दे० 'रती' ।
- रती—वि० याडा । कम । अल्प ।
- रती—क्रि० वि० जरा सा । रती भर । किंचित् । उ०—नाम प्रताप हय पर छाजै । हमहि भार रती नहि लागै ।—कवीर (शब्द०) ।
- रतीक—क्रि० वि० [हिं० रतिक] जरा सा भी । रती भर भी । तिल भर भी ।
- रतीश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रति के देवता । कामदेव [को०] ।
- रतुआ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की घास जो बरसात के दिनों या ठढों जगहों में अधिकता से होती है ।
- रतू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ द्युलोक की नदी । दिव्य नदी । २ सत्य कथन । तथ्यपूर्ण उक्ति [को०] ।
- रतू—वि० [सं०] सत्यवक्ता । श्रुतवक्ता [को०] ।
- रतूना—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पेड़ों की ईख या गन्ना, जो एक बार काट लेने पर फिर उसी जड़ से निकलता है ।
- रतोपल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तोत्पल] लाल कमल । उ०—कहि ककण नेक भए दृग शीतल सपत देख रतोपल को ।—हृदयराम (शब्द०) ।
- रतोपल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्तोपल] १. लाल सुरमा । २. लाल खडिया । ३. गेरू । गैरिक ।
- रतौधी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रात्र्यन्धता ? वा हिं० रात + औधी (= अंधता)] एक प्रकार का रोग जिसमें रोगी को सध्या होने के उपरात, अर्थात् रात के समय, बिलकुल दिखाई नहीं देता । उ०—पौरिए रतौधी आवै सखी सर्व सोय रही जागत न कोऊ परदेस मेरो वर है ।—प्रतापनारायण (शब्द०) ।
- रतौही—वि० [हिं० रत्त + औही (प्रत्य०)] रक्तिम । लालिमायुक्त । रागयुक्त । जैसे, रतौही नैन ।
- रत्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रक्त, प्रा० रत्त] दे० 'रक्त' ।

रत्नक—सब्रा पुं० [सं० रत्नक, प्रा० रत्त] ग्वालियर में होनेवाला एक प्रकार का पत्थर जो कुछ लाल रंग का होता है।

रत्ती^१—सब्रा स्त्री० [सं० रत्तिष्ठा, प्रा० रत्तीष्ठा] १ एक प्रकार का बहुत छोटा मान, जिमका व्यवहार सोने या शोधिययो आदि के तोलने में होता है। यह आठ चावल या ढाई जौ के बराबर होता है और प्रायः धुंधली के दाने से तौला जाता है। यह एक माशे का आठवाँ भाग होता है। २ वह वाट जो तौल में इतने मान का हो। ३ धुंधली का दाना। गुजा।

रत्ती^२—वि० बहुत थोड़ा। किंचित्।

मुद्गा०—रत्तीभर = बहुत थोड़ा सा। जरा सा।

रत्ती^३—सब्रा स्त्री० [सं० रत्ति] शोभा। छवि। उ०—वत्ती बटि कमी पाग कत्ती सिर टेढो लस बढी मुख रत्ती जैसे पत्ती जडुपति के।—गोपाल (शब्द०)।

रत्थी—सब्रा स्त्री० [सं० रथ] लकड़ी या बाँस का वह ढाँचा या सडूक आदि जिममें शव को रखकर अन्तिम सस्कार के लिये ले जाते हैं। टिकठी। विमान। अरथी।

रत्न—सब्रा पुं० [सं०] १. कुछ विशिष्ट छोटे, चमकीले, बहुमूल्य पदार्थ, विशेषतः खनिज पदार्थ या पत्थर, जिनका व्यवहार आभूषणों आदि में जड़ने के लिये होता है। मणि। जवाहिर। नगीना। जैसे,—हीरा, लाल, पन्ना, मानिक, मोती आदि।

विशेष—हमारे यहाँ हीरा, पन्ना, पुखराज, मानिक, नीलम, गोमेद, लहसुनियाँ, मोती, और मूंगा ये नौरत्न माने गए हैं। कहीं इनकी संख्या पाँच और कहीं चौदह भी कही गई है। जैसे, पंचरत्न, नवरत्न, समुद्रमयनोद्भूत चतुर्दश रत्न। इसके अतिरिक्त पुराणों आदि में भी अनेक रत्न गिनाए गए हैं, जिनमें से कुछ वास्तविक और कुछ कल्पित हैं। जैसे,—गणेशस्य, सूर्यकांत, चंद्रकांत, स्फाटिक, ज्योतिरस, राजपट्ट, शख, सीसा, भुजग, उत्पल आदि। रत्न धारण करना हमारे यहाँ बहुत पुण्यजनक कहा गया है। ग्रहों आदि का उत्पात होने पर रत्न पहनने और दान करने का विधान है। वैद्यक में इन रत्नों से भी भस्म बनाई जाती है, और अलग अलग रत्नों की भस्म का अलग अलग गुण माना जाता है।

२. माणिक्य। मानिक। लाल।

विशेष—कविता में कभी कभी रत्न शब्द से मानिक का ही ग्रहण होता है।

३ वह जो अपने वर्ग या जाति में सबसे उत्तम हो। सर्वश्रेष्ठ। जैसे, नररत्न, ग्रथरत्न आदि। ४ जँनों के अनुसार सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र। ५. पानी। जल (को०)। ६. अयस्कांत चुबक (को०)।

रत्नकदल—सब्रा पुं० [सं० रत्नकन्दल] प्रवाल। मूंगा।

रत्नकर—सब्रा पुं० [सं०] कुवेर का एक नाम।

रत्नकशिपु—सब्रा स्त्री० [सं०] प्राचीन काल का कान में पहनने का एक प्रकार का जडाऊ गहना।

रत्नकार—सब्रा पुं० [सं० रत्न] जौहरी। रत्नों का पारखी।

रत्नकीर्ति—सब्रा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम।

रत्नकुम्भ—सब्रा पुं० [सं० रत्नकुम्भ] रत्नों से निर्मित घड़ा (को०)।

रत्नकूट—सब्रा पुं० [सं०] १ एक पर्वत का नाम। २ एक बोधिसत्व का नाम।

रत्नकेतु—सब्रा पुं० [सं०] १ एक बुद्ध का नाम। २ एक बोधिसत्व का नाम।

रत्नखचित—वि० [सं०] जो रत्ननिर्मित हो। रत्नजटित। जिममें रत्न जड़े हो (को०)।

रत्नगर्भ—सब्रा पुं० [सं०] १ कुवेर का एक नाम। २ समुद्र। ३ एक बुद्ध का नाम।

रत्नगर्भा—सब्रा स्त्री० [सं०] पृथ्वी। भूमि। वसुधरा।

रत्नगिरि—सब्रा पुं० [सं०] १. बिहार के एक पहाड़ का प्राचीन नाम, जिस पर मगध देश की पुरानी राजधानी राजगृह बसी हुई थी। २ वैद्यक में एक प्रकार का रस जो अभ्रक, सोने, ताँबे, गंधक और लोहे आदि से तैयार किया जाता है और जो ज्वर के लिये बहुत उपकारी माना गया है।

रत्नगृह—सब्रा पुं० [सं०] बौद्ध स्तूप की वह बीच की कोठरी जिसमें धातु आदि रक्षित रहती थी।

रत्नचद्र—सब्रा पुं० [सं० रत्नचद्र] १. एक देवता जो रत्नों के अधिष्ठाता माने जाते हैं। २ एक बोधिसत्व का नाम।

रत्नचूड़—सब्रा पुं० [सं० रत्नचूड़] एक बोधिसत्व।

रत्नच्छाया—सब्रा स्त्री० [सं०] रत्नों की चमक दमक (को०)।

रत्नतल्प—सब्रा पुं० [सं०] रत्नखचित शय्या। वह पलंग जिसमें रत्न जड़े हो (को०)।

रत्नत्रय—सब्रा सं० [सं०] १ जँनों के अनुसार सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र, इन तीनों का समूह जो मनुष्य को उत्कृष्ट बनाने का साधन समझा जाता है। २ बौद्धों के अनुसार बुद्ध, धर्म तथा सध, (को०)।

रत्नदर्पण—सब्रा पुं० [सं०] जडाऊ आईना (को०)।

रत्नदामा—सब्रा स्त्री० [सं०] १ रत्नों की माला। २ गर्गमहिता के अनुसार साता की माता और राजा जनक की स्त्री का नाम।

रत्नदीप—सब्रा पुं० [सं०] १. एक कल्पित रत्न का नाम। कहते हैं, पाताल में इसी के प्रकाश से उजाला रहता है। २ रत्न का दीपक।

रत्नद्रुम—सब्रा पुं० [सं०] मूंगा।

रत्नद्राप—सब्रा पुं० [सं०] १ पुराणानुसार एक द्वीप का नाम। २ रत्नों का द्वीप। प्रवाल द्वीप।

रत्नधर—सब्रा पुं० [सं०] धनवान्। अमीर।

रत्नधार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम ।
 रत्नधारा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम ।
 रत्नधेनु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार रत्नों की बनाई हुई वह गाय जो दान की जाती है ।

विशेष—इस दान की गणना महादानो में की जाती है और इस प्रकार का दान करनेवाला गोलोक का अधिकारी समझा जाता है ।

रत्नध्वज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम ।
 रत्ननख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह कृपाण या छुरी या कटार जिसकी मूठ में रत्न जड़े हों [को०] ।
 रत्ननाभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
 रत्ननायक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ खजन पत्नी । ममोला । २ समुद्र । ३ मेरु पर्वत । ४ विष्णु ।

रत्ननिधि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माणिक्य । लाल [को०] ।
 रत्नपञ्चक—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रत्नपञ्चक] पाँच प्रकार के रत्नों का समुच्चय जिसमें सोना, चाँदी, मोती, राजावर्त और भूंगा आते हैं ।

रत्नपरीक्षक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो रत्नों को परखना जानता हो । जौहरी ।

रत्नपर्वत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुमेरु पर्वत का एक नाम ।
 रत्नपाणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम ।
 रत्नपारखी(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रत्न + पारखी] रत्नों को पहचाननेवाला । जौहरी ।

रत्नपारायण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रत्नों से परिपूरित स्थान । रत्नों की खान [को०] ।

रत्नपीठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तान्त्रिकों के अनुसार एक तीर्थ का नाम ।
 रत्नप्रदीप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ऐसा रत्न जो दीपक के समान प्रकाशमान हो ।

रत्नप्रभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का देवता ।
 रत्नप्रभा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पृथ्वी । २. जँनों के अनुसार एक नरक का नाम ।

रत्नबाहु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
 रत्नमाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ राजा बलि की कन्या ।

विशेष—वामन भगवान् का देखकर इसके मन में यह कामना हुई थी कि ऐसे बालक को मैं दूब पिलाऊँ । इसीलिये यह कृष्णावतार में पूतना हुई थी ।

२ मणियों की माला या हार ।

रत्नमाली—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नमालिन्] पुराणानुसार एक प्रकार के देवता ।

रत्नमुकट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम ।
 रत्नमुख्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वज्र । हीरा [को०] ।

रत्नराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माणिक्य [को०] ।
 रत्नराशि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ हीरा जवाहराती का ढेर । २ सागर । समुद्र [को०] ।

रत्नवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पृथ्वी । भूमि । २ राजा वीरकेतु की कन्या का नाम ।

रत्नवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ण । सोना [को०] ।
 रत्नवर्षुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुष्पक विमान [को०] ।
 रत्नशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रत्नों के रखने का स्थान । २ जडाऊ महल, जिसकी दीवारों में रत्न जड़े हों ।

रत्नपण्ठी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ग्रीष्म ऋतु की एक छः जिम दिन ऋतु रहते हैं [को०] ।
 रत्नसंभव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नसंभव] १ एक ध्यानी बुद्ध का नाम । २ एक बोधिसत्व का नाम ।

रत्नसागर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] समुद्र का वह भाग जहाँ से प्रायः रत्न निकलते हैं ।

रत्नसानु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुमेरु पर्वत का एक नाम ।
 रत्नसू, रत्नसूति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी ।
 रत्ना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम ।

रत्नाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नाक] विष्णु [को०] ।
 रत्नाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रत्नकदल । प्रवाल [को०] ।

रत्नाकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ समुद्र । २ मणियों के निकलने का स्थान । खान । ३ रत्नों का समूह । उ०—रत्नाकर के हैं दोऊ केशव प्रकाशकर श्रवर विलास कुवलय हित मानिए ।—केशव (शब्द०) । ४ वाल्मीकि मुनि का पहले का नाम । ५ भगवान् बुद्ध का एक नाम । ६. एक बोधिसत्व का नाम ।

रत्नागिरि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्नगिरि] दे० 'रत्नगिरि' ।
 रत्नाचल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार रत्नों का वह ढेर जो पहाड़ के रूप में लगाकर दान किया जाता है और जिसका दान करने से दाता स्वर्ण का अधिकारी समझा जाता है ।

रत्नाद्रि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक पर्वत का नाम ।
 रत्नाधिपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुवेर ।

रत्नाभूषण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह आभूषण या गहना जिसमें रत्न जड़े हों । जडाऊ गहना ।

रत्नावली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. मणियों की श्रेणी या माला । २ एक रागिनी जा शास्त्रों में दीपक राग की पुत्रवधु कही गई है । ३ एक अथोलकार जिसमें प्रस्तुत अर्थ निकलने के आतारक्त ठाक क्रम से कुछ और वस्तुसमूह के नाम भी निकलते हैं । जैसे,—आदित सोम कही कबहूँ, कबहूँ कही मंगल श्री बुध होते । ४. एक प्रकार का हार । मोतियों का हार । ५ आह्वय रचित एक नाटिका ।

रत्नोत्तमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तान्त्रिका का एक देवी का नाम ।
 रत्नाङ्का—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तान्त्रिका के अनुसार एक देवी का नाम ।

- रत्यंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रत्यङ्ग] योनि । भग [को०] ।
- रथकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथङ्कर] १ एक कल्प का नाम । २. एक प्रकार का भाम । ३ एक प्रकार की अग्नि ।
- रथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्राचीन काल की एक प्रकार की सवारी जिममे चार या दो पहिए हुआ करते थे और जिमका व्यवहार युद्ध, यात्रा, विहार आदि के लिये हुआ करता था । शतांग । स्पदन । गाडी । बहल । २ शरीर, जो आत्मा की सवारी माना जाता है । ३. चरण । पैर । ४ तिनिस का पेड । ५. विहार करने का स्थान । क्रीडास्थल । ६. शतरज का वह मोहरा जिमे आजकल ऊँट कहते हैं । उ०—राजा वील देइ शह मांगा । शह देइ चाह भरे रथ खांगा ।—जायसी (शब्द०) ।
- विशेष—जब चतुरंग का पुराना खेल भारत से फारस और अरब गया, तब वहाँ रथ के स्थान पर ऊँट हो गया ।
- ७ वेत । वेतस् (को०) । ८ आनद (को०) । ९ हिस्सा । भाग । अग (को०) । १० वीर । रथी (को०) ।
- रथकृत्या, रथवड्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रथो का जमादार [को०] ।
- रथकल्पक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्राचीन काल का वह अधिकारी जिसकी अधीनता मे राजाश्रो के रथ आदि रहते थे । २ प्राचीन काल के धनवानो का वह प्रधान अधिकारी जो उनके घर आदि सजाता है और उनके पहनने के वस्त्र आदि रखता है ।
- रथकार, रथकारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ बनानेवाला । खाती । बढई । २ एक जाति जिसकी उत्पत्ति माहिष्य (क्षत्री से वैश्य से उत्पन्न) पिता और करिगी (वैश्य से शूद्रा मे उत्पन्न) माता से मानी गई है । इसमे जनक आदि सत्कार होते हैं ।
- रथकुट्टव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथकुट्टम्ब] दे० 'रथकुट्ट विक' ।
- रथकुट्टविक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथकुट्टम्बिक] वह जो रथ चलाता हो । रथवान । सारथी ।
- रथकुट्टवी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथकुट्टम्बिन्] दे० 'रथकुट्ट विक' ।
- रथक्रात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथक्रान्त] सर्गीत मे एक प्रकार का ताल ।
- रथक्राता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रथक्रान्ता] एक प्राचीन जनपद का नाम ।
- रथगर्भक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ के आकार की वह सवारी जिसे मनुष्य कधे पर उठाकर ले चलते हो । जैसे, पालकी, नालकी आदि ।
- रथगुप्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रथ के किनारे लगा हुआ लकडी या लोहे का वह ढाँचा जो शस्त्र आदि से रक्षा के लिये होता था ।
- रथचरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चक्रवाक । चक्रवा । २ रथ का चक्का (को०) । ३ विष्णु का चक्र । सुदर्शन चक्र (को०) । ४ लाल कलहस (को०) । ६ रथ द्वारा यात्रा करना ।
- रथचर्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रथ से यात्रा करना । रथ से यात्रा करने का अभ्यास करना [को०] ।

- रथचर्यासंचार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथचर्यासञ्चार] रथो के चलने की पक्की सडक ।
- विशेष—यह खजूर की लकडी या पत्थर की बनाई जाती थी । चद्रगुप्त के समय मे इसका विशेष रूप से प्रचार था ।
- रथचित्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम ।
- रथञ्ज्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कौया । काक [को०] ।
- रथदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. तिनिस का पेड । २ बेंत ।
- रथनीड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथनीड] रथ के भीतर बैठने की जगह [को०] ।
- रथपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ का नायक । रथी ।
- रथपर्याय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. तिनिस का पेड । २. बेंत ।
- रथपाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रथचरण' ।
- रथपुंगव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथपुङ्गव] उत्कृष्ट योद्धा [को०] ।
- रथरसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन नदी का नाम ।
- रथबध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथबन्ध] १ रथ के उपकरण । घोडे का साज सामान । २ वीरो का मघटन [को०] ।
- रथमहोत्सव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथयात्रा नामक उत्सव । विशेष दे० 'रथयात्रा' ।
- रथमुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ का अग्रभाग वा अगला हिस्सा [को०] ।
- रथयात्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हिंदुओं का एक पर्व या उत्सव जो श्रापाढ शुक्ल द्वितीया को होता है ।
- विशेष—इसमे लोग प्राय जगन्नाथ, बलराम और सुभद्राजी की मूर्तियाँ रथ पर चढाकर निकालते हैं । यह उत्सव बहुत प्राचीन काल से होता है, और पुरी मे बहुत धूमधाम से होता है । बौद्ध और जैन लोगो मे भी रथयात्रा का उत्सव होता है, जिसमे जिन या बुद्ध की सवारी निकाली जाती है ।
- रथयुद्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ पर सवार होकर किया जानेवाला संग्राम ।
- रथयोजक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ जोतने या मज्जित करनेवाला व्यक्ति । सारथि [को०] ।
- रथवर्त्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथवर्त्मन्] राजपथ । मुख्य सडक । राजमार्ग [को०] ।
- रथवान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ हाँकनेवाला । सारथी ।
- रथवाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथवाह] १. रथ चलानेवाला । सारथी । २. घोडा । उ०—राज तुरगम वरनी काहा । आने छोरि इद्र रथवाहा ।—जायसी (शब्द०) ।
- रथवाहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ मे का वह चौकोर ऊपरी ढाँचा जो पहियो के ऊपर जडा होता है ।
- रथवीथि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रथवर्त्म' ।
- रथशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ रथ रखे जाते हो । गाडीखाना । अस्तवल
- रथशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ हाँकने की कला [को०] ।
- रथशिक्षा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रथशास्त्र' ।

रथसप्तमी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] माघ शुक्ला सप्तमी ।

विशेष—कहते हैं, सूर्य इसी दिन रथ पर सवार होते हैं, इसी लिये इसका यह नाम पड़ा है ।

रथसूत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथ हाँकनेवाला । सारथी ।

रथांग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथाङ्ग] १ रथ का पहिया । उ०—पारथ की कानि गनि भीषम भहारथ की, मानि जव विरथ रथांग धरि घाए हैं ।—रत्नाकर, भाग १, पृ० । २. चक्र नामक अस्त्र । ३. चक्रवाक पक्षी । चकवा । उ०—पिक रथांग सुक सारिका सारस हस चकोर ।—मानस, २।८३ ।

रथागधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथाङ्गधर] १ श्रीकृष्ण । २ विष्णु ।

रथागपाणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथाङ्गपाणि] विष्णु ।

रथागवर्ती—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथाङ्गवर्तिन्] चक्रवर्ती सम्राट् ।

रथागी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रथाङ्गी] ऋद्धि नामक ओषधि ।

रथाक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रथ का पहिया या घुरा । २. प्राचीन काल का एक परिमाण जो एक सौ चार अंगुल का होता था । ३. कार्तिकेय के एक अनुचर का नाम ।

रथाभ्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो बहुत बड़ा योद्धा हो ।

रथाभ्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बैत ।

रथावर्त्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक तीर्थ का नाम ।

रथिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो रथ पर सवार हो । रथी । २. तिनिका का पेड़ ।

रथी^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथिन्] १ वह जो रथ पर चढ़कर चलता हो । २. रथ पर चढ़कर लड़नेवाला । रथवाला योद्धा ।

यौ०—महारथी । अतिरथी ।

३. एक हजार योद्धाओं से अकेला युद्ध करनेवाला योद्धा । उ०—पूरण प्रवृत्ति सात धीर हैं विख्यात रथी महारथी अतिरथी रणसाजि के ।—रघुराज (शब्द०) । ४. क्षत्रिय जाति का मनुष्य (को०) । ५. सारथी (को०) ।

रथी^२—वि० रथ पर सवार । रथ पर चढ़ा हुआ । उ०—रावन रथी विरथ रघुवीरा । देखि विभीषण भयउ अघीरा ।—तुलसी (शब्द०) ।

रथी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रथ] वह ढाँचा जिसपर मुरदों को रखकर अत्येष्टि क्रिया के लिये ले जाते हैं । अरथी । टिकठी । तावूत ।

रथोत्सव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रथयात्रा नामक उत्सव ।

रथोद्धता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ग्यारह अक्षरों का एक वर्णवृत्त जिसका पहला, तीसरा, सातवाँ, नवाँ और ग्यारहवाँ वर्ण गुरु और बाकी वर्ण लघु होते हैं । अर्थात् इसके प्रत्येक चरण में र, न, र, ल, ग (१, ३, ५, ७, ९) होता है । उ०—रानि । रीं लगत राम को पता । ह्याय ना कहाँहि नाहि धारता । घन्य जो लहत भाग शुद्धता । धूरि हू अति शुची रथोद्धता ।—छंद-प्रभाकर (शब्द०) ।

रथोरग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन जाति का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है ।

रथोष्मा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार एक नदी का नाम ।

रथ्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह घोड़ा जो रथ में जोता जाता हो । २. वह जो रथ चलाता हो । ३. चक्र । चाक्रा । पहिया ।

रथ्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [स्त्री०] १ रथो का मजूह । २. रथ का मार्ग या लकीर । ३. रास्ता । मडक । ४. चौक । आँगन । ५. नाली । नावदान । उ०—कहाँ देवमरि कनुप त्रिनामी । कहु रथ्या जल अति मल रासी ।—द्विज (शब्द०) । ६. सड़को का एक भेद जिसकी चौड़ाई २० या २१ हाथ होती थी ।

रद^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दंत । दाँत । उ०—अघर अरुन रद सुदर नासा ।—मानस, १।१७७ ।

रद^२—वि० [अ०] १ नष्ट । खराब । रद्दी । २. तुच्छ या निरर्थक । ३. फोका । मात । उ०—मोहत धोती सेत में कनक वसन तन बाल । मारद वारद वीजुनी भा रद कीजत लाल ।—विहारी (शब्द०) ।

रदच्छद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ओठ । ओष्ठ ।

रदच्छद^(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [रदच्छद] ओठ । ओष्ठ । उ०—लोचन लोल कपोल ललित अति नासिक को मुक्ता रदच्छद पर ।—सूर (शब्द०) ।

रदच्छद^(पु)^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रदक्षत] गति आदि के समय दाँतों के लगने का चिह्न । उ०—पट की ढिग कत ढाँपियत सोमित मुभग सुवेख । हृद रदच्छद छवि देखियत सद रदच्छद की रेख ।—विहारी (शब्द०) ।

रददान—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रद + दान] (रति के समय) दाँतों से ऐसा दबाव कि चिह्न पड़ जाय ।

विशेष—यह सात प्रकार की बाह्य रतियों में से एक है । उ०—आलिगन चुवन परस मर्दन नख रददान । अघरपान सो जानिए बहिरति सात मुजान ।—केशव (शब्द०) ।

रदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दशन । दाँत । दंत ।

रदनच्छद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ओष्ठ । अघर । होठ ।

रदनी—वि० [सं० रदनिन्] दाँतवाला । उ०—चिबुक मध्य मेचक रुचि राजत बिंदु कुद रदनी ।—तुलसी (शब्द०) ।

रदनी^२—सञ्ज्ञा पुं० हाथी ।

रदपट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ओष्ठ । ओठ । अघर । उ०—माखे लखन कुटिल भईं भौईं । रदपट फरकत नयन रिसीहैं ।—तुलसी (शब्द०) ।

रदबदल—क्रि० वि० [क्रा० रद + बदल] परिवर्तन । उलट पलट । हेर फेर । बदल बदल ।

रद्दी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रदिन्] हाथी । गज ।

रदीफ—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रदीफ] १ वह व्यक्ति जो घोड़े पर सवार के पीछे बैठाता है । २. वह शब्द जो गजलो आदि में प्रत्येक काफिए या अर्थानुप्रास के बाद बार बार आता है । जैसे,—‘भुम्हको गले लगा के यह उनका सवाल था । क्यो जी इसी के वास्ते इतना मलाल था । इसमें सवाल तो काफिया है, और गजल भर में इसी का अनुप्रास मिलाया जायगा, पर ‘या’

रदीफ है और यह प्रत्येक युग्म पद अथवा शेर के अंत में रहेगा। ३ पीछे की ओर रहनेवाली सेना।

रदीफवार—क्रि० वि० [अ० रदीफ + फ्रा० वार] वर्णमाला के क्रम से। अक्षरक्रम से।

रद^१—वि० [अ०] १ जो काट या छाँट दिया गया हो। २ जो तोड़ या बदल दिया गया हो।

यौ०—रद्वदल = परिवर्तन। फेरफार।

३ जो खराब या निकम्मा हो गया हो।

रह^१—सञ्ज्ञा स्त्री० कौं। वसन।

रहा^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १. दीवार की पूरी लवाई में एक बार रखी हुई एक ईंट की जोड़ाई। ईंटों की बेड़े बल की एक पक्ति जो दीवार पर चुनी जाती है। २. मिट्टी की दीवार उठाने में उतना अन्न, जितना चारों ओर एक बार में उठाया जाता है और जो कुछ समय तक सूखने के लिये छोड़ दिया जाता है। इसकी ऊँचाई प्रायः एक हाथ हुआ करती है।

क्रि० प्र०—उठाना। - रखना।—होना।

३ थाली में मिठाइयों का चुनाव, जो स्तरो के रूप में नीचे ऊपर होता है। ४ नीचे ऊपर रखी हुई वस्तुओं की एक तह या खड।

क्रि० प्र०—चुनना।

५ कुश्ती में अपने प्रतिपक्षी को नीचे लाकर उसकी गरदन पर कुहनी और कलाई के बीच की हड्डी से रगड़ते हुए आघात करना। (पहलवान)।

क्रि० प्र०—जमाना। देना। लगाना।

६ चमड़े की मोहरी जो भालुओं के मुँह पर बाँधी जाती है। (कलदर)।

रद्दी^१—वि० [फ्रा० रद] जो बिलकुल खराब हो गया हो। काम में न आने योग्य। निकम्मा। निष्प्रयोजन। बेकार।

रद्दी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० वे कागज आदि जो काम के न होने के कारण फेंक दिए गए हो। जैसे,—यह किताब मैं रद्दी के ढेर में से निकाल लाया हूँ।

रहोखाना—सञ्ज्ञा [हि० रद्दी + फ्रा० खानह] वह स्थान जहाँ खराब और निकम्मी चीजें रखी वा फेंकी जायँ।

रधारण—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] ओढ़ने का दोहरा वस्त्र। दोहर।

रधेरा जाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रन्ध्र (=छेद) + हि० एरा (प्रत्य०) + जाल] मछली फँसाने के लिये छोटे छेदों का जाल।

रन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण] युद्ध। लड़ाई। सग्राम। उ०—रन चडि करिअ कपट चतुराई।—मानस, ३।१३।

रन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० अरण्य, प्रा० रन्न] जंगल। वन। उ०—वसति वान अस ओपहँ वेवे रन वन ढाँख।—जायसी (शब्द०)।

रन^३—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. झील। ताल। २. समुद्र का छोटा खड। जैसे, कच्छ का रन। ३. क्रिकेट के बल्लेबाज का एक विकेट से दूसरे विकेट तक की दौड़। दौड़ान।

रनरना^१—क्रि० अ० [देश०, या म० ररान (=शब्द करना)] घुँघरू आदि का मद मद शब्द होना।

रनखोर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रन + छोड़ना] दे० 'रणखोट'।

रनजीता^१—वि० [म० रणजित] रण जीतनेवाला। विजय प्राप्त करनेवाला। उ०—नवो अग के माघते उपजै प्रेम अनूप। रनजीता यो जानिए मव वर्मन का भूप।—चरण० वानी।

रनधीर^१—वि० [सं० रणधीर] रणक्षेत्र में धैर्य वाहरण करनेवाला। धीर योद्धा। उ०—महावीर रनधीर तिहि, जानत सकल जहान।—हम्मीर०, पृ० १।

रनना^१—क्रि० अ० [सं० ररान (=शब्द करना)] बजना। शब्द करना। शब्द होना। भनकार होना। उ०—नयन दहावत् रनत समद तन लखत अपर जम।—गोपाल (शब्द०)।

रनबका^१—वि० [सं० रण + हि० बाँका] शूरवीर। बहादुर।

रनवरिया^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की भेड़ जो नेपाल के जंगलों में पाई जाती है।

रनबाँकुरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण + हि० बकट, बक, बाँका] शूरवीर। योद्धा। उ०—(क) जीति को मक नयाम, दसरथ के रन-बाँकुरे।—तुलसी (शब्द०)। (ख) रनबाँकुरा बालिमुत बका।—मानस, ६।१८।

रनलपिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] गाय। गौ।

रनवादी^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण + वादी] शूर। लडाका। योद्धा। उ०—मात न जानसि बालक आदी। ही वादला मिह रनवादी।—जायसी (शब्द०)।

रनवास—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रानी + वास] १. रानियों के रहने का महल। अतपुर। २. जनानखाना।

रनवासन—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की फली।

रनसेर^१—सं० पुं० [हि० रन + सीर] युद्धभूमि। लडाई का मैदान। उ०—खँचि समसेर तव पैठु रनसर मे।—पलटू० पृ० १४।

रनित^१—वि० [सं० रणित] वजता हुआ। भनकार करता हुआ। उ०—रनित भृग घटावनी भरित दान मधु नीर। मद मंद आचत चलयो कुजर कुज समीर।—विहारी र०, दो० ३८८।

रनिवास—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'रनवाम'। उ०—गव रनिवाम विथकि लखि रहेऊ। तव धरि धीर मुगिया कहूँ।—मानस, २।२८३।

रनी^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण + ई (प्रत्य०)] वीर। योद्धा। रण करनेवाला। उ०—कलुप कलक कलेम कोम भयो जो पटु पाय रावन रनी। सोइ पटु पाय विभोपन भो भवभूपन दलि हूपन अनी।—तुलसी (शब्द०)।

रनेत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रण + हि० एत (प्रत्य०)] भाला। (हि०)।

रपट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रत्त] घन्याण। आदत। टेव।

क्रि० प्र०—करना।—डालना।—पडना।—होना।

रपट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रपटना] १ रपटने की क्रिया या भाव । फिमलाहट । २ दौड । ३ उतार, जिगपर से उतरते समय पैर न जम सकता हो । डाल ।

रपट^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रिपोर्ट] सूचना । इत्ला । उ०—आप केवल इतनी ही रूपा करै कि मेरे घडी जाने की रपट कोतनागी मे लिखाते जायें ।—परीक्षागुरु (शब्द०) ।

रपटना^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] फिसलन । विद्यन ।

रपटना^२—क्रि० अ० [स० रफन (=सरकना), मि० फ्रा० रफतत्] १ नीचे या आगे की ओर फिमलना । जम न मरने के कारण किसी ओर सरकना । जैसे,—गीली मिट्टी में पैर रपटना । उ०—(क) बाहीं जारी निकसे कुज ते रीक रीकि कहैं बात । कु डल भलमलात भलकत विवि गात, चकानौव गी लागति मेरे इत नननि आली रपटत पग नहिं ठहरात । राधा-मोहन बने घन चपला ज्यो चमकि मेरो पूतगन में नमात । सूरदास प्रभु के वैं वचन सुनहु मधुर मधु अब मोहिं भूची पांच श्री सात ।—सूर (शब्द०) । (ख) दै पिचकी भजी भोजी तहां पर पीछे गुपाल गुलाल उलीचैं । एक ही सग यहाँ रपटे सजि ये भए ऊपर वे भई नीचे ।—पद्याकर (शब्द०) । (ग) हौं अलि आछु गई तरके वैं महेश जू कालिंदी नीर के कारन । ज्यो पग एक बढायो वहाँ रपट्यो पग दूसरो लागी पुकारन ।—महेश (शब्द०) । २ शीघ्रता से ओर बिना ठहरे हुए चलना । बहुत जल्दी जल्दी चलना । भ्रपटना । उ०—(क) प्रबल पावक बड़पौ जहाँ काड़पौ तहाँ ढाड़पौ रपटि सपट भरे भवन —भंडारहीं । तुलसी (शब्द०) । (ख) रपटत भुगन सरन मारे । हरित बसन सुदर तनु धारे ।—रघुराज (शब्द०) । (ग) अनेक अग बाहरीं कितेक मार छाहरीं । किते परे कराहरीं हंकार सौं रपट्टरीं ।—सूदन (शब्द०) ।

रपटना^३—क्रि० स० १ किसी काम को शीघ्रता से करना । कोई काम चटपट पूरा करना । जैसे,—बोड़ा सा काम धीर रह गया है, दो दिन में रपट डालेगे ।

सयो क्रि०—डाखना ।—देना ।

२. मँधुन करना । प्रसंग करना । (वाजाल) ।

रपटाना—क्रि० स० [हि० रपटना] १ फिमलाना । सरकाना । २. चटपट पूरा करना । ३ रपटने का काम दूसरे से कराना ।

रपटीला—वि० [हि० रपट + ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० रपटीली] फिमलनवाली । पैर न टिक सकनेवाली । उ०—ऊँची गैल राह रपटीली, पाँव नहीं ठहराय ।—सतवाणी०, भा० २, पृ० ११ ।

रपट्टा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रपटना] १ फिमलने की क्रिया । फिमलाव । मुहा०—रपट्टा मारना = फिसलना ।

२ दौड धूप । भ्रपट्टा ।

मुहा०—रपट्टा लगाना या मारना = दौडना । भ्रपटना । लपकना ।

३ भ्रपट्टा । चपेट । उ०—अरे जो मैं एक सग प्राण छोड कैं न

भाजगी, तो उनके रपट्टा में कप जो गाय जाती ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) ।

रपाती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० √रफ् (=उप करना या चोट पहुँचाना)] तलवार । (हि०) ।

रपुत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० हरिषु] स्वर्ग । (हि०) ।

रपोट—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रिपोर्ट] *० 'रपट' । उ०—ऊन्होंने कहा, रफी जनी नी रफी तो पाउरें होती । रपोट बग्नेवाना गौन है ? हाँ की गौन तो मना की ?—गाले०, पृ० ४० ।

रफ—वि० [उ०] १ जो नाक प्राँट ठीक न हुआ हो, उल्लि गिया जाने तो हो । नमूने के नीर पर रफा हुआ । २ जो चिन्ता न हो । गुरदुरा ।

रफनपु—सञ्ज्ञा स्त्री० [पा० रफतद्] गति । मुक्ति । उ०—कह गुनाल हिनताम रफन तव पाइया ।—गुनाल०, पृ० ६० ।

रफते रफने—क्रि० वि० [पा० रफतद्] २० 'रफना रफता' ।

रफल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० राफल] विनायकी टग की एक प्रकार की बूट ।

विशेष—यह दा तरह की होती है । एक तो टोपीदार जिसमें दाद उसके मुँह तो ओर में भरी जाती है, और टोपी चटावर घोंटे से दागी जाती है । दूसरी रिजलोटन कहलाती है और इसमें बीच में से राखतून भरा जाता है ।

रफल^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रँपर] जाड़े में श्रोङ्गे की मोटी चादर जो प्राय ऊनी होती है । गरम चादर ।

रफा—वि० [अ० रफअ] १ दूर किया हुआ । मिटाया हुआ । समाप्त या पूरा किया हुआ । उ०—पर इस जरूरत को रफा करने के लिये कनी कनी ऐसे पुल्प भी भ्रपनी वभर कम बँठे हैं, जो इस काम के सर्वथा श्रयोय्य हैं ।—द्विवेदी (शब्द०) । २ निवृत्त । शांत । निवारित । दबाया हुआ । जैसे,—भाडा रफा करना । उ०—एक धोरिड है नका हम मफा कीन विचार । रफा सगहि होय सय महिपाल को रन प्यार ।—गोपाल (शब्द०) ।

शौ०—रफा दफा ।

रफा दफा—वि० [अ० रफअ] १ मिटाया हुआ । दूर किया हुआ । २ शांत । निवृत्त । जैसे,—मामला रफा दफा करना, भ्रगडा रफा दफा करना ।

रफीअ—वि० [अ० रफीअ] उत्तुंग । ऊँचा । बुलद । उच्च [स्त्री०] ।

रफीक—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रफीक] [स्त्री० रफीका] मित्र । सया । सहचर [स्त्री०] ।

रफीदा—सञ्ज्ञा पुं० [पा० रफीदह] १ वह गद्दी जिसके ऊपर जीन कसा जाता है । २ वह गद्दी जिसे लगाकर नानवाई तदूर में रोटी चिपकाते हैं । काबुक । ३ कथरी या गद्दीनुमा सिले पुराने वस्त्र । ४ गोत पगडी ।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग विशेषत श्रवज्ञा या श्रनादर प्रकट करने के लिये ही होता है ।

रफू—सजा पुं० [अ० रफू] फटे हुए कपड़े के छेद में तागे भरकर उने बराबर करना ।

क्रि० प्र०—फरना ।—पनाना ।—होना ।

मुहा०—रफू फरना = कही हुई दो अपरुद्ध या विपरीत बातों में सामंजस्य स्थापित करना । बात बनाना ।

रफूगर - सजा पुं० [फा० रफूगर] रफू करने का व्यवसाय करनेवाला । रफू बनानेवाला ।

रफूगरी—सजा स्त्री० [फा० रफूगरी] रफू करने का काम । रफूगरी का काम ।

रफूचक्कर—वि० [अ० रफू + हि० चक्कर] चपत । गायब ।

मुहा०—रफूचक्कर बनना या होना = भाग जाना । चलता बनना । गायब हो जाना । जैसे,—रह देखते देखते रफूचक्कर हो गया ।

रफ्त—सजा स्त्री० [फा० रफ्तहू का समासगत रूप] प्रस्थान । जाना । गमन । रवानगी [को०] ।

रफ्तनी—सजा स्त्री० [फा० रफ्तनी] १ जाने का क्रिया या भाव । २ माल का बाहर भेजा जाना । माल का निकामा ।

रफ्तार—सजा स्त्री० [फा० रफ्तार] चलने का ढंग या भाव । चाल । गति ।

रफ्ता रफ्ता—क्रि० वि० [फा० रफ्तहू रफ्तहू] धीरे धीरे । क्रम क्रम से । उ०—अवल मुझे बहगुजरै ताखत करना जानि । रफते रगते और भी रहै मुवालिक् मान ।—सूदन (शब्द०) ।

रव—सजा पुं० [अ०] ईश्वर । परमेश्वर । उ०—(क) पीरा पंगवर दिगवरा देखाई देत, मिट्ट की सिधाई गई रहै वात रव की ।—भूषण (शब्द०) । (ख) अरुन अन्वारे जे भरे अति ही मदन मजेज । देखे तुव हंग वार वे रव सुकराना भेज ।—रसनिधि (शब्द०) ।

रवकना(७)—क्रि० अ० [फा० रौ ?] उत्साहित होना । उमंग में होना । जोश में आना । उ०—(क) रवकि कै रचक बदन पसाग्धी । पकारि कै चञ्चु फारि ही डारची ।—नद० अ०, पृ० २५० । (ख) रवयकि चलो भभकत भई, सबतन आगि दिपाइ ।—त्रज० अ० पृ० ७७ ।

रवड़^१—सजा पुं० [अ० रवर] १ एक प्रसिद्ध लचीला पदार्थ जिसका व्यवहार गेंद, फोता, पट्टी, बेलन आदि दृढ़त में पदार्थ बनाने में होता है ।

विशेष—यह एक प्रकार के वृक्ष के ऐसे दूध से बनना है जो पेड़ से निकलने पर जम जाता है । यह चिमडा और लचीला होता है । इसमें रासायनिक अणु कार्बन और हाइड्रोजन के होते हैं । यह २४° की आंच पाकर पिघल जाता है और ६००° की आंच में भाप के रूप में उड़न लगता है । आग पाने से यह भक से जलने लगता है । इसकी लौ चमकीली होती है और इसमें से धूआँ अधिक निकलता है । जब इसमें गंधक का फून (वारीक धूल) या उड़ाई हुई गंधक मिलाकर इसे धीमी आंच में पिघलाकर २५०° से लेकर ३००° की भाप में सिद्ध करते हैं, तब इससे अनेक प्रकार की चीजें जैसे,—

खिलीने, बटन, कंधी आदि बनाई जाती हैं, जो देखने में सींग या हड्डी की जान पड़ती है । इसपर सब प्रकार के रंग भी चढ़ाए जाते हैं । रबड़ अफ्रीका, अमेरिका और एशिया के प्रदेशों में भिन्न भिन्न विशेष पेड़ों के दूध से बनाया जाता है और वहाँ इससे अनेक प्रकार के उपयोग पदार्थ बनाए जाते हैं । अब इसे रासायनिक ढंग से कृत्रिम भी बनाया जाता है ।

२ एक वृक्ष का नाम जो बट वर्ग के अंतर्गत है ।

विशेष—यह भारतवर्ष में आसाम, लखीमपुर आदि हिमालय के आस पास के प्रदेशों तथा बरमा आदि में होता है । इसकी पत्तियाँ चौड़ी और बड़ी बड़ी होती हैं तथा इसका पेड़ ऊँचा और दीर्घाकार होता है । इसकी लकड़ी मजबूत और भूरे रंग की होती है । इसी के दूध से उपर्युक्त लचीला पदार्थ बनता है ।

रवड़^३—सजा स्त्री० [हि० रगडा] १ व्यर्थ का श्रम । फजूल हैरानी । २ गहरा श्रम । रगड ।

क्रि० प्र०—खाना ।—पडना ।

३ तं करने के लिये अधिक दूरी । घुमाव । चक्कर । फेर । जैसे,—उपर से जाने में बड़ी रवड़ पड़ेगी ।

रवड़ना^१—क्रि० स० [हि० रपटना या सं० वत्तन, प्रा० वट्टन] १ घुमाना । चलाना । २ किसी तरल पदार्थ में कोई वस्तु (करछी आदि) डालकर चारों ओर फेरना । फेंटना ।

रवड़ना^२—क्रि० अ० घूमना । फिरना ।

रवड़ी—सजा स्त्री० [हि० रवटना] शीटाकर गाढा और लच्छेदार किया हुआ दूध जिसमें चीनी भी मिलाई जाती है । बत्ताही ।

रवदा—सजा पुं० [हि० रवडना] १ वह श्रम जो कहीं वार वार गमनागमन या पदचालन से होता है । २ कोचड । कदम ।

मुहा०—रवदा पडना = खूब पानी बरसना । वृष्टि होना । उ०—जेहि चलते रवदे पडा घरती हाइ निहार । तो नावज धर्म जरै पाडत करी विचार ।—कबीर (शब्द०) ।

रवर—सजा पुं० [अ०] दे० 'रवड़' ।

रवरी—सजा स्त्री० [हि० रवडी] दे० 'रवटी' ।

रवाना—सजा पुं० [अ०] एक प्रकार का छोटा डक जिसमें मंजीरे भी लगे होते हैं और जिसे प्रायः कहार आदि बजाते हैं ।

रवानी—वि० [अ० रवाना + ई] रवाना नामक डक बजानेवाला । उ०—कहा ह रवानी मृदगा मितारो । कहा ह गवध तहाँ नृप-वारी ।—भारतेंदु अ०, भा० २, पृ० ७०२ ।

रवाव—सजा पुं० [अ०] सारंगो का तरह का एक प्रकार का तन-वाद्य जिसमें बजाने के लिये तार लगे होते हैं । उ०—(क) नव रग तात रवाव तन बरह बजावै नत्त । धोर न वाइ गुनि सने के साई के चित्त ।—कबीर (शब्द०) । (ग) बाजन वान रवाव कनरी अमृत कुल्लो यत्र । नुरनर मटल जन तरंग मिलि करत मोहन मय ।—सूर (शब्द०) । (घ) बने बजावत कौन ढिग छिन्न रवाव के तार । सुरो जात है आइ के बिरहिन को दरवार ।—रसनिधि (शब्द०) ।

रवाचिया—सज्ञा पुं [हिं० रवाच+इया (प्रत्य०)] वह जो रवाच बजाता हो। रवाच बजानेवाला।

रवाची(५)—नाम स्त्री० [अ० रवाच] दे० 'रवाच'। उ०—फील रवाची बलदु पखावज कौआ ताल बजावै।—कवीर ग्र०, पृ० ३०७।

रवी—सज्ञा स्त्री० [अ० रवीश्र] १ वसत ऋतु। २ वह फमल जो वसत ऋतु में काटी जाती है। जैसे,—गेहूँ, चना, मटर आदि। उ०—जहाँ जायँ कदम शरीफ। न रहे रवी, न रहे खरीफ। (कहावत)।

रवील - नशा स्त्री० [देश०] एक प्रकार का पत्ती जो पद्रह सोलह अंगुल लंबा होता है।

विशेष—इसके डैने भूरे, सिर और छाती सफेद, चोच काली और पैर खाकी रंग के होते हैं। यह हिमालय के किनारे गढ़वाल से आसाम तक पाया जाता है। यह भाड़ियों में घोमला बनाता और अप्रैल से जून तक दो से पाँच तक अडे देता है।

रव्त—सज्ञा पुं [अ०] १ अम्यास। मरक। मुहावरा। रपट।

क्रि० प्र०—पडना।—होना।

२ सवध। मेल।

यौ०—रव्त जव्त = मेल जोल। घनिष्ठता। जैसे,—उनसे कुछ रव्त जव्त पैदा करो, तो तुम्हारा काम हो जायगा।

रव्य—वि० [सं०] [वि० स्त्री० रव्या] आरव्य। आरभ किया हुआ। शुरू किया हुआ।

रव्य—सज्ञा पुं [अ०] दे० 'रव'।

रव्याँ—सज्ञा पुं [फा० अरावा] १ वह गाड़ी जिसपर तोप लादी जाती है। तोपखाने की गाड़ी। २ वह गाड़ी या रथ जिसे बँल खींचते हैं।

रवाव—सज्ञा पुं [अ० रवाव] दे० 'रवाव'।

रभ(५)—सज्ञा पुं [सं० रभस्] दे० 'रभस'। उ०—सह्याँ, सत्वर रभ, तुरा, तुरभ वेग के साज।—नद० ग्र०, पृ० १०७।

रभस'—सज्ञा पुं [सं०] १ वेग। २ हर्ष। ३ प्रोत्साहन। ४ उत्सुकता। श्रौत्सुक्य। ५ पूर्वापर या कारण कार्य का विचार। ६ मन्त्रम। ७ पछतावा। रज। ८ वाल्मीकि रामायण के अनुसार अश्वो का एक सहार, अर्थात् शशु के चलाए हुए अश्व निष्फल करने की विधि जो विश्वामित्र ने रामचंद्र को निखलाई थी। ९ रामायण के अनुसार एक राक्षस का नाम। १० विप। जहर (फो०)। २१. कोप। क्रोध (को०)।

रभस'—वि० १. वेगवाला। २ प्रवल। तीव्र। मजबूत। दृढ़। ३ प्रसन्न। आनंदपूर्ण (फो०)।

रभू—सज्ञा पुं [सं०] दूत। चर (फो०)।

रभेणक—सज्ञा पुं [सं०] महाभारत के अनुसार एक राक्षस का नाम।

विशेष—कहते हैं, यह राक्षस साँप के रूप में रहता था।

रम'—सज्ञा पुं [सं०] १ कामदेव। २ लाल अशोक। ३. प्रेमी। ४ पति। ५ आनंद। हर्ष (को०)।

रम'—वि० १ प्रिय। २ सुंदर। ३ आनंददायक। हर्षोत्पादक। ४ जिससे मन प्रसन्न हो।

रम'—सज्ञा पुं [अ०] एक प्रकार की विलायती शराब जो जो से बनाई जाती है।

रमक'—सज्ञा पुं [सं०] १ प्रेमपात्र। प्रिय। कात। प्रेमी। २ उपपति। जार।

रमक'—वि० विनोदशील। आनंदवाला (को०)।

रमक'—सज्ञा स्त्री० [हिं० रमना] १ झुन्ने की पेंग। २ तरंग। झकोरा। उ०—खेलत फाग भरी अनुराग सुहाग सनी सुख की रमकें।—(शब्द०)।

रमक'—सज्ञा स्त्री० [अ० रमक] १ थोड़ी सी साँस जो मरते समय निकलने को शेष रह गई हो। अंतिम श्वास। २ हलका प्रभाव। ३ स्वल्प भाग। बहुत थोड़ा अंश। ४ नशे का थोड़ा अंश जैसे,—जरा सी रमक मालूम हो रही है।

रमक —वि० जरा सा। बहुत थोड़ा।

रमकजरा—सज्ञा पुं [हिं० राम+काजल] एक प्रकार का घान।

विशेष—यह भादों में पकता है। पकने पर काले रंग का होता है और मोटा घान माना जाता है। नेपाल की तराई में यह अधिकता से होता है। बगरी या बक्री से इसके चावल कुछ लंबे होते हैं और कूटने पर सफेद रंग के निकलते हैं।

रमकना—क्रि० अ० [हिं० रमना] १ हिंडोले पर झूलना। हिंडोले पर पेंग मारना। उ०—कबहुँक निकट देखि वर्षा ऋतु झूलत सुरंग हिंडोरे। रमकत भ्रमकत जनकमुता सग हाव भाव चित चोरे।—सुर (शब्द०)। २ झूमते हुए चलना। इतराते हुए चलना।

रमकना(५)—क्रि० अ० [हिं० रमकना] झूमते हुए या मस्ती में चलना। उत्साह वा जोश में भरकर आगे बढ़ना। उ०—नय खग रमकिय प्रेत दिस।—पृ० रा०, १।५३०।

रमककराँ—सज्ञा पुं [हिं० राम+कर] वेसन की मोटी रोटी।

रमचार्—सज्ञा पुं [हिं० चमचा] छोटी करछी। चमचा।

रमजान—सज्ञा पुं [अ० रमजान] एक अरबी महीने का नाम। इस महीने में मुसलमान रोजा रहते हैं।

रमजानी—वि० [अ० रमजान+हिं० ई (प्रत्य०)] रमजान मास का। रमजान के महीने से संबद्ध (फो०)।

रमभोलाँ—सज्ञा पुं [हिं०] दे० 'रमभोला'।

रमभोला—सज्ञा पुं [हिं०] पैर में पहनने के घुँघुल। नूपुर।

रमठ—सज्ञा पुं [सं०] १ हींग। २ एक प्राचीन देश का नाम। ३. इस देश का निवासी।

रमठध्वनि—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] हींग । हिंयु [को०] ।

रमण'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रानदोत्पादक क्रिया । विलास । क्रीडा । केलि । २. मैथुन । ३. गमन । घूमना । विचरना । ४. पति । ५. कामदेव । ६. जघन । ७. गधा । ८. श्रद्धकोश । ९. सूर्य का श्रद्धा नामक सारथी । १०. एक वन का नाम । ११. एक वर्णिक छद्म का नाम । इसके प्रत्येक चरण में तीन श्रृंखर होते हैं, जिनमें दो लघु और एक गुरु होता है । जैसे,—दुख बयो । टरि है । हरि जू । हरि है । १२. परवल की जट [को०] ।

रमण'—वि० [स्त्री० रमणी] १. मनोहर । सुंदर । २. जिसके मिलने से श्रानद उत्पन्न हो । प्रिय । ३. रमनेवाला ।

रमणक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जव्वदीप के शर्तगत एक वर्ष या खड का नाम । इसे रम्यक भी कहते हैं । विशेष दे० 'रम्यक' । २. वीत-होत्र के पुत्र का नाम ।

रमणगमना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] साहित्य में एक प्रकार की नायिका जो यह समझकर दुःखी होती है कि सकेत स्थान पर नायक आया होगा, और मैं वहाँ उपस्थित नहीं । जैसे,—छरी सपल्लव लालकर लखि तमाल की हाल । कुंभिलानी उर साल धरि फूल माल ज्यो बाल ।—विहारी (शब्द०) ।

रमणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक शक्ति का नाम जो रामनीर्थ में है । २. पत्नी [को०] । ३. सुदरी स्त्री [को०] ।

रमणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. नारी । स्त्री । २. सुंदर स्त्री । ३. बाला या मुगधवाला नामक गधद्रव्य । ४. पत्नी [को०] ।

रमणीक—वि० [सं० रमणीय] सुंदर । मनोहर । उ०—अति रमणीक कदव छाँह रुचि परम सुहाई । राजत मोहन मव्य श्रवलि बालक की पाई ।—सूर (शब्द०) ।

रमणीय—वि० [सं०] सुंदर । रुचिर । मनोहर । रम्य ।

रमणीयता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. सुंदरता । २. साहित्यदर्पण के अनुसार वह माधुर्य जो सब श्रवस्थाओं में बना रहे या क्षण क्षण में नवीन रूप धारण किया करे ।

रमण्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नारी । स्त्री । औरत [को०] ।

रमता—वि० [हिं० रमना (= घूमना फिरना)] एक जगह जमकर न रहनेवाला । घूमता फिरता । जैसे,—रमता जोगी बहता पानी इनका कही ठिकाना नाहि ।

रमति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. नायक । २. स्वर्ग । ३. कौवा । ४. काल । ५. कामदेव ।

रमद—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] आँख की एक बीमारी । आँखों का लाल हो जाना और उससे पानी गिरने का रोग [को०] ।

रमदी—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + सं० आद्य] एक प्रकार का जड़हन धान जो अगहन के महीने में पकता है । इसका चावन सासो तक रह सकता है ।

रमन^७—सञ्ज्ञा पुं० वि० [सं० रमण] दे० 'रमण'

रमनक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रमणाक] दे० 'रमणाक' ।

रमनता^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० रमण + ता (प्रत्य०)] दे० 'रमणीयता' । उ०—दुति लावव्य रूप मधुराई । काति रमनता सु दरताई ।—नद० ग्र०, पृ० १२४ ।

रमनसोरा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार की मछली जिसे कंजसोरा भी कहते हैं ।

रमता'—क्रि० श्र० [सं० रमण] १. भोग विलास या नुनप्राप्ति के लिये कही रहना या ठहरना । मन लगने के कारण कही रहना । उ०—(क) रमि रैन सवै अनतै त्रितई सो कियो इत गावन भोर ही को ।—केशव (शब्द०) । २. भोग विलास वा रति-क्रीडा करना । उ०—(क) श्रधिवरणा श्रध प्रग घटि श्रत्यज जनि की नारि । तजि विधवा श्रध पूजिता रमियहु रसिक विचारि ।—केशव (शब्द०) । (ख) राति कहै रमि आबो घरै उर मानै नही अपराध किए को ।—पद्माकर (शब्द०) । ३. श्रानद करना । चैन करना । मजा उडाना । उ०—चहु माग वाग तडाग । श्रव देखिए वड भाग । फल फूल सो नयुक्त । अलि यो रमै जनु मुक्त ।—केशव (शब्द०) । ४. चारो आर भरपूर होकर रहना । व्याप्त होना । भानना । उ०—(क) आध्यात्मिक होइ आत्मा रमत या सो यह बलराम पुनि ।—गोपाल (शब्द०) । (ख) पाइ पूरण रूप को राम भूम केशव-दास ।—केशव (शब्द०) । (ग) मैं मिरजा मैं मारहूँ मैं जारो मैं खाउँ । जलथल मैं ही रमि रह्यो मोर निरजन नाउँ ।—कबीर (शब्द०) । ५. अनुरक्त होना । लग जाना । उ०—महादेव श्रवणुन भवन विष्णु सकल गुणधाम । जेहि कर मन रम जाहि सन तेहि तेही सन काम ।—तुलसी (शब्द०) । ६. किमों क आस पास फिरना । घूमना । उ०—(क) काई पर भँवर जल माँही । फिरत रमहि कोइ देइ न बाहा ।—जायसी (शब्द०) । (ख) लसत केतकि के कुल फून मो । रमत भौर भर रसमूल सो ।—गुमान (शब्द०) । ७. चलता हाना । चल दना । गायब हो जाना । उ०—भाल उठो भालो जलो खररा फूटम फूट । जोगी था सो रम गया, आसन रही मभूत ।—कबीर (शब्द०) ।

सयो० क्रि०—देना ।—जाना ।

८. श्रानदपूर्वक इधर उधर फिरना । बिहार करना । मनमाना घूमना । विचरना । उ०—(क) ज पद पद्य रमत वृद्धवन आह सिर बरि अगनित रिषु मार ।—सूर (शब्द०) । (ख) गापन संग निसि सरद की रमत रसिक रम रागि । लहाये अति गतिन की सवन लखे सब पाम ।—विहारी (शब्द०) ।

रमना'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० आराम या रमण] १. वह हरा नरा त्वान जहाँ पशु चरने के लिये छोड़ दिए जाते हैं । चरागाह । उ०—इत जमना रमना उतै बीच जहानावाइ । ताम बसन का करी करी न बाद विवाद ।—रसनिधि (शब्द०) । २. वह मुदच्छेद स्थान या घेरा, जहाँ पशु शिकार के लिये या पालन के लिये छोड़ दिए जाते हैं और जहाँ वे स्वच्छदानूर्तक रहते हैं । ३. घेरा । हाता । ४. वाग । ५. काई मुदर और रमणाक स्थान ।

—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रमणी] दे० 'रमणा' । उ०—नव रमनी म राज ।—तु० रा०, ६१।२५।२२ ।

रमनीक (७)—वि० [सं० रमणीय, हिं० रमणीक] दे० 'रमणीक' ।
उ०—रमनीक ठाम वाचिष्ठ राज, तह बसहि देवदेवह विराज ।
—पृ० रा०, १।१८१ ।

रमनीय (७)—वि० [सं० रमणीय] दे० 'रमणीय' । उ०—महा कमनीय
रमनीय रमनीय हू रमावै नर मन हूँ कै रूप रज रेई कै ।—देव
(शब्द०) ।

रमरमी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रम राम] दे० 'राम राम' । उ०—
भाई मेरे, सगु भयन कूँ रमरमी, भैया कू सात सलाम ।—
पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० ६७३ ।

रमल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का फलित ज्योतिष जिसमें पासे
फेंककर उमके विदुषों के अनुसार शुभाशुभ फल का अनुमान
किया जाता है ।

विशेष—यह शास्त्र पहले अरबी भाषा में था और मुसलमानों के
नाथ साथ भारतवर्ष में आया था । सस्कृत में भी पढ़ितो ने
रमल विषयक अनेक ग्रंथ रचे हैं ।

रमसरा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का पौधा जो ईख के खेत में
अपने आप उत्पन्न होता है । इसे रजता भी कहते हैं ।

रमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ लक्ष्मी । २ पत्नी । स्त्री (को०) । ३
सौभाग्य (को०) । ४ सपत्ति । घन दौलत (को०) । ५ श्री ।
शोभा (को०) । ६. कार्तिक कृष्ण एकादशी (को०) ।

विशेष—इस शब्द में कात, पति, रमण आदि अथवा इनके वाची
शब्द लगाने से विष्णु का अर्थ होता है । जैसे,—रमाकात,
रमापति, रमारमण ।

रमाकात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रमाकात्] विष्णु ।

रमाधव—सञ्ज्ञा पुं० [म०] विष्णु ।

रमानरेश (७)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रमा + नरेश (= पति)] विष्णु ।
उ०—जय जय करत सकल सुर नर मुनि जल में कियो प्रवेश ।
जाय पताल बाट गहि लीन्ही धरणी रमानरेश ।—सूर
(शब्द०) ।

रमाना—क्रि० सं० [हिं० रमना का सक० रूप] १ अनुरजित करना ।
अनुरक्त बनाना । मोहित करना । लुभाना । उ०—(क) अति
पतिहि रमावै चित्त प्रभावै सीतल प्रेम बढ़ावै ।—केशव
(शब्द०) । (ख) गोरम मथत नाद इक उपजत किंकिन धुनि मुनि
श्रवण रमावति । मूर श्याम अंचरा धरि ठाढ़े काम कसौटी करि
देखरावति ।—सूर (शब्द०) । २ अपने मनोनुकूल बनाना ।
उ०—जैसे माया मन रमै तैसे राम रमाय । तारा मडल छाडि
कै जहँ केशव तहँ जाय ।—कवीर (शब्द०) । ३ ठहराना ।
रोक रखना । ४ सयुक्त करना । लगाना । जोड़ना ।

मुहा०—रास रमाना = रास जोड़ना । रास रचाना । उ०—
जाकी महिमा कहत न आवै । सो गोपिन संग रास रमावै ।—
सूर (शब्द०) । विभूति वा अभूत रमाना = शरीर में अभूत
लगाना । अभूत पोतना । उ०—प्रसुप्त को सेनी गल में लगत
सुहाई । तन धूर जमो साइ अग भूत रमाई ।—

हरिश्चंद्र (शब्द०) । मन रमाना = दुखी या चिंतित मन को
किसी प्रकार प्रसन्न करना । मन बहलाना ।

रमानिवास—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रमा + निवास] लक्ष्मीपति, विष्णु ।
उ०—सो राम रमानिवास संतत दास बस त्रिभुवन धनी ।
मम उर बसउ सो समन ससृति जासु कीरति पावनी ।—तुलसी
(शब्द०) ।

रमारमण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रमापति । लक्ष्मीपति । विष्णु ।

रमारमन (७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रमारमण] दे० 'रमारमण' । उ०—
रमारमन पद बदि बहोरी ।—मानस, २।२७२ ।

रमाली—सञ्ज्ञा सञ्ज्ञा पुं० [फा० रमाली] एक प्रकार का बारीक और
स्वादिल चावल जो करनाल में होता है ।

रमावीज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक तांत्रिक मंत्र जिसे लक्ष्मीवीज भी
कहते हैं । श्री ।

रमावेष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीवास चदन जिससे ताडपीन नामक तेल
निकलता है ।

रमास—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'रवास' ।

रमित (७)—वि० [हिं० रमना] लुभाया हुआ । मुग्ध । उ०—भावै
सुरतिय करि शृंगारा । रमित रहै नृप करै विहारा ।—सबल
(शब्द०) ।

रमी—सञ्ज्ञा स्त्री० [मलाय०] एक प्रकार की घास जो सुमात्रा आदि
द्वीपों में होती है ।

विशेष—यह रीहा के समान कागज और रस्सी आदि बनाने
के काम में आती है । सुमात्रा वाले इसे 'कलुई' कहते हैं ।
पहले इसे कुछ लोग भ्रमवश रीहा ही समझते थे ।

रमूज—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रमूज का बहुव० रमूज] १ कटाक्ष । २
सैन । इशारा । ३ पहेली । गूढार्थ वाक्य । ४ श्लेष । ५
गुप्त बात । रहस्य । उ०—यो कहि मौन भए अज नदन
कंकय राज रमूज सी पाई ।—हनुमान (शब्द०) ।

रमेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

रमेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

रमैती—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] १ किसानों की एक रीति जिसमें एक
कृषक आवश्यकता पड़ने पर दूसरे कृषक के खेत में काम
करता है और उसके बदले में वह भी उसके खेत में काम
कर देता है ।

विशेष—इसमें मजदूरी बच जाती है और काम के बदले में
दूसरों के खेतों में काम कर देना होता है । इसे पूर्व में 'पैठ'
और अब के उत्तरीय भागों में 'हूँड' कहते हैं ।

२ वह नफरी या काम का दिन जो इस प्रकार कार्य करने में
लगे ।

क्रि० प्र०—करना ।—देना ।—लगाना ।

रमैती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रामायण] कवीरदास के वीजक का एक
भाग जिसमें दोहे और चौपाइयाँ हैं ।

रमैया (७)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + ऐया (प्रत्य०)] १. राम ।

- उ०—वहाँ सब सकट दुर्घट सोच तहाँ मेरो साहेब राखै रमैया ।—तुलसी (शब्द०) । २ ईश्वर । उ०—रमैया की दुलहिन लूटी बजार ।
- रम्भाल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] रमल फेंकनेवाला । पासा फेंककर फलित कहनेवाला ।
- रम्य^१—वि० [सं०] [स्त्री० रम्या] १ मनोहर । सुंदर । २. मनोरम । रमणीय । उ०—परम रम्य उत्तम यह घरनी । —मानस, ६।२ ।
- रम्य^२—सञ्ज्ञा पुं० १ क्षपा का पेड़ । २ बक का पेड़ । अगस्त । ३ परवल की जड़ । ४ वीर्य । ५ अग्निघ्न के एक पुत्र का नाम । ६ वायु के सात भेदों में एक जो घटे में चार से सात कोस तक चलती है ।
- रम्यक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जवू द्वीप के नौ खड्डो या वर्षों में से एक । यह मेरु के दक्षिण और श्वेत पर्वत के उत्तर वायव्य कोण में माना गया है ।
- विशेष—कहते हैं, यहाँ बट की जाति का एक वृक्ष होता है, जिसे खाकर यहाँ के लोग कई दिन तक रह सकते हैं । इसे रोहित भी कहते हैं ।
२. महानिंब । बकायन । ३. परवल की जड़ (को०) ।
- रम्यकक्षीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महानिंब । बकायन ।
- रम्यग्राम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक गाँव का नाम ।
- रम्यपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सेमल का पेड़ ।
- रम्यफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुचिला ।
- रम्यश्री—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।
- रम्यसानु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पहाड़ के शिखर पर की समतल भूमि । प्रस्थ ।
- रम्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. रात । २ गंगा नदी । ३. स्थल पश्चिमी । ४ महेन्द्रवारणी । इद्रायन । ५. लक्ष्मणा कद । ६ मेरु की कन्या का नाम जो रम्य से ब्याही थी । ७ धँवत स्वर की तीन श्रुतियों में से अंतिम श्रुति का नाम । ८ एक रागिनी का नाम ।
- रम्याक्षि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक ऋषि का नाम ।
- रम्यामली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुई झाँवला ।
- रस सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पिशाच वर्ण । कपिल वर्ण । २ सौंदर्य । शोभा [को०] ।
- रम्हाना—क्रि० अ० [सं० रम्हण] गाय का बोलना । रंभाना । उ०—(क) ती लगि गाय रम्हाय उठी कवि देव बधूनि मथ्यो दधि को घट ।—देव (शब्द०) (ख) धौरिहुँ कोरिये आइ गई सु रम्हाइ के घाइ के लागी चुखावन ।—देव (शब्द०) ।
- रय^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रज] रज । धूल । गर्द । उ०—ठाकुर विराजैं जहाँ खेलैं सुत औरन के डारें ईंट खोवा रयो प्रभु पर खीजियो ।—प्रियादास (शब्द०) ।

- रय^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वेग । तेजी । उ०—यहु जानत है के मव गुण रथ के यासो रहत चुपाइ ।—गुमान (शब्द०) । २. प्रवाह । नदी की धारा । ३. ऐल के छह पुत्रों में से चौथे पुत्र का नाम । ४ उरसाह (को०) ।
- रयणपत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रजनीपति] चंद्रमा । (हिं०) ।
- रयन^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रजनी] दे० 'रयनि' ।
- रयना^१—क्रि० अ० [सं० रज्ज] १. रग से भिगोना । तरावोर करना । उ०—भरहि शवीर अरगजा छिरकहि सकल लोक एक रग रये ।—तुलसी (शब्द०) । २ किसी के प्रेम में मग्न होना । अनुरक्त होना । ३. सयुक्त होना । मिलना । उ०—(क) करिए युत भूषण रूप रयी । मिथिलेश मुता इक स्वर्णमयी ।—केशव (शब्द०) । (ख) श्रोठ रचि रेख सतिशेष शुभ श्री रये ।—केशव (शब्द०) ।
- रयना^२—क्रि० अ० [सं० रज] उच्चारित करना । रज करना । बोलना । उ०—आकाश विमान अमान छये । हा हा सब ही यह शब्द रये ।—केशव (शब्द०) ।
- रयनि^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रजनी, प्रा० रयणी] रात्रि । निशा । रात ।
- रयासत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रियामत] दे० 'रियामत' ।
- रयि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जल । पानी । २ वैभव । संपत्ति । ३ भोजन । भोजन के पदार्थ [को०] ।
- रयिष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कुवेर का एक नाम । २ अग्नि । ३ एक प्रकार का साग । ४ ब्राह्मण (को०) ।
- रय्यत, रय्यति^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रय्यत्] प्रजा । रिआया । रयत । उ०—सुनि शत्रु मित्र की नृप चरित्र की रय्यति रावत वात ।—केशव (शब्द०) ।
- ररकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रकार] रकार की ध्वनि । उ०—रग रग बोलै राम जी रोम रोम ररकार ।—कवीर (शब्द०) ।
- रर^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० ररना] रटना । रट । उ०—(क) धन सारस होइ रर मुई आप सु मेठहि पख ।—जायसी (शब्द०) । (ख) भरिया सार तिहि पर अपार मुख मार मार रर ।—नूदन (शब्द०) ।
- ररा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] वह दीवार जो एक पर एक घोंही बड़े बड़े पत्थर रखकर उठाई गई हो और जिसके पत्थर चूने, गारे आदि से न जोड़े गए हो । (बु देल०) ।
- ररका^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] ररकने का भाव । कमक । साल । टीस ।
- ररकना^१—क्रि० अ० [अनु०] कमकना । किरकिराना । सालना । पीडा देना । टीसना । उ०—सपने कि सौति करघी सोवत कि जागत ही जानी न परति रोम रोम ररकन है ।—देव (शब्द०) ।
- ररना^१—क्रि० अ० [हिं० ररना वा सं० ललन] दे० 'रलना' । उ०—जीवन अवार प्यारे आँखिन में आय छाव हाय हाय अग अग सग ररे हौ ।—धनानंद, पृ० १३७ ।
- ररना^२—क्रि० अ० [सं० रदन, प्रा० रडन] लगातार एक ही बात कहना । बार बार कहना । रटना । उ०—(क) पिय पिय

चातक जो ररी मरै सेवात पियास ।—जायसी (शब्द०) । (ख) हरि हरि हौं हा हा ररी हरे हरे हरि रारि ।—केशव (शब्द०) । (ग) वदन उवारत ही मदन सुयोधन ही द्रौपदी ज्यो नाउं मुख तेरोई ररति है ।—केशव (शब्द०) ।

रराट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [खी० रराटी] ललाट [को०] ।

ररिहा (०)†—सञ्ज्ञा पुं० [हि० ररना + हा (प्रत्य०)] १ ररनेवाला । २ रदुवा या रुद्रप्रा नामक पक्षी जो उल्लू की जाति का है । ३ बार बार गिडगिडाकर मांगनेवाला । मांगने की धुन लगानेवाला । भारी मगन । उ०—झारे हौं भोर ही को आबु । ररत ररिहा आरि और न कौरही तें काबु ।—तुलसी (शब्द०) ।

ररी†—वि० [हि० रार (= ऋगडा)] रार करनेवाला । ऋगडालू ।

ररी†—वि० [हि० ररना] १ बहुत गिडगिडाकर मांगनेवाला । भारी मगन । २ अधम । नीच । उ०—काम पढ़ने पर अपने एक भाई को कह डालें कि तुम नीच हो, जाति मे हेठे हो, ररी हो, षटकुल मे नहीं हो ।—बालकृष्ण भट्ट (शब्द०) ।

ररक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन देश का नाम ।

ररना (०)†—क्रि० प्र० [सं० ललन (= लुब्ध होना)] एक मे मिलना । सम्मिलित होना । उ०—(क) माल लसै धवली गर मैं कर दीन दयाल रली मुरली है ।—दीनदयाल (शब्द०) । (ख) चली पीठ दै दृष्टि फिरावति अंग आनंद रली ।—सूर (शब्द०) । (ग) कुज ते कुज रली रस पुज मैं गुंजति डोलति भौरी भई है ।—सुदर (शब्द०) ।

रौ०—ररना मिलना = धुलना मिलना । मिलना जुलना । एक हो जाना ।

रराना (०)†—क्रि० सं० [हि० ररना का सक० रूप] एक मे मिलाना । समिलित करना ।

रली†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० ललन (= केलि, क्रीडा)] १ विहार । क्रीडा । उ०—खरी पातरी कान की कौन वहाऊं वानि । आक कली न रली करै अली प्रली जिय जानि ।—विहारी (शब्द०) । २ आनंद । प्रसन्नता । उ०—विविधि कियो व्याह विधि वसुदेव मन उपजी रली ।—सूर (शब्द०) ।

रौ०—रगरली । रगरलियाँ ।

रली†—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] चेना नामक अन्न ।

रल्ल (०)†—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रेला] रेला । हल्ला । उ०—(क) दल दक्खिनी करि रल्ल । मिलि गए लै भुज भल्ल ।—सूदन (शब्द०) । (ख) धरि वणि आयुध हृथ्य गथ्य के गथ्य उछल्लिय । दै दै दिग्धनिमान करत आपुस मैं रल्लिय ।—सूदन (शब्द०) ।

रल्लरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का मृग । २ ऊनी कवल । ऊर्णवृक्ष (को०) । ३ बरोनी । पक्षम (को०) ।

रव†—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गुजार । ध्वनि । नाद । उ०—(क) कूजत कल रव हस गन गुंजत मजुल भृग ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) कलहम पिक सुक सरक रव करि गान नाचहि अपसरा ।—तुलसी (शब्द०) । २ आवाज । शब्द । ३ शोर । गुल ।

रव (०)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रवि] सूर्य । उ०—पावते मरम ती न

आवते जनक धाम जानहीं रूप देख वरहे रव के ।—हृदयराम (शब्द०) ।

रव†—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] जहाज की चाल या गति । रूम । (लश०) ।

रवक†—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] रेंड नामक वृक्ष ।

रवक†—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वे मोती जो एक वरणा (परिमाण) में ३० चढ़ते हों । २ तीस मोतियों का लच्छा जो तीन मे वत्तीस रत्ती का हो ।

रवकना—क्रि० प्र० [हि० रमना (= चलना)] १ जल्दी से आगे बढ़ना । दौडना । लपकना । उ०—(क) सेमर खजूर जाय पूर रही शूर मग ताही के तुरग तहाँ देव रवकत ह ।—हृदयराम (शब्द०) । (ख) नैन मीन मरवर आनन में चचन करत विहार । मानो कर्णफूल चारा की रवकत बारवार ।—सूर (शब्द०) । (ग) लीने वमन देखि ऊंचे द्रुम रवकि चढनि बलवीर की ।—सूर (शब्द०) । (घ) परम सनेह बढावत मातनि रवकि रवकि हरि वँछन गोद ।—सूर (शब्द०) । २ उमगना । उछलना । उ०—यह अति प्रबल म्याम अति कोमल रवकि रवकि उर परते ।—सूर (शब्द०) ।

रवण†—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ काँया नामक घातु । २ रव । शब्द । ३ कोयल । ४ उँट । ५ विदूषक या भौंड ।

रवण†—वि० १. शब्द करता हुआ । २ गरम । तप्त । ३ अस्थिर । चंचल ।

रवण—वि० [सञ्ज्ञा पुं० (सं० रमण)] दे० 'रमन' ।

रवणरेती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रमण + रेती] गोकुल के मर्माप यमुना किनारे की रेतीली भूमि, जहाँ श्रीकृष्ण ग्वालों के साथ खेला करते थे ।

रवताई (०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रावत + आई (प्रत्य०)] १ राजा या रावत होने का भाव । २ प्रभुत्व । स्वामित्व । उ०—धन सा खेल खेल सह पेमा । रवताई श्री कूसल खेमा ।—जायसी (शब्द०) ।

रवथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कोयल ।

रवन (०)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रमण] पति । स्वामी । उ०—पिय नितुर वचन कहे कारन कवन । जानत हौं सबके मन की गते भुंहु चित परम कृपाल रवन ।—तुलसी (शब्द०) ।

रवन†—वि० रमण करनेवाला । क्रीडा करनेवाला । उ०—(क) राग रवन भाजन भवन शोभन श्रवण पवित्र ।—केशव (शब्द०) । (ख) मन मन मनहुं मिलिद, रहत पास तव चरन के । करहु कृपा गोविंद, राधारवन कृपायतन ।—गोपाल (शब्द०) ।

रवना†—क्रि० प्र० [सं० रमण] क्रीडा करना । रमण करना । उ०—जैसी रवै जयश्री करवालहि । ज्यो अलिनी जलजात रसालहि ।—केशव (शब्द०) ।

रवना†—क्रि० प्र० [हि० रव (= शब्द०)] शब्द करना । बोलना ।

रवना†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रावण] दे० रावण । उ०—बहुतहि अमगढ कीन्हेस जोवना । अंत भई लकापति रवना ।—जायसी (शब्द०) ।

रवनि, रवनी

रवनि, रवनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० रमणी] १ स्त्री। भार्या। पत्नी। उ०—(क) राज रवनि गावत हरि को यश। खन करत सुत को समुभावति राखति श्रवणनि प्याइ सुधारस।—सूर (शब्द०)। (ख) गर्भस्रवहि श्रवनी रवनि मुनि कुठार गति घोर। परसु अछत देखउं जियत वैरी भूप किशोर।—तुलसी (शब्द०)। २ रमणी। सुदरी।

रवन्ना—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रवाना] १ वह नौकर जो स्त्रियों के काम काज करने वा सीदा मुलफ लाने को ब्योढी पर रहता है। (मुमल-)। २ वह कागज जिसपर रवाना किए हुए माल का व्योरा होता है। ३ चूगी आदि की वह रसीद या इसी प्रकार का कोई प्रमाणपत्र जो किसी जानेवाली चीज के साथ रहता है। राहदारी का परवाना।

रवन्ना—वि० [फा० रवानह] दे० 'रवाना'।

रवाँ—वि० [फा०] बहता हुआ। प्रवाहित। २ जारी। चलता हुआ। ३ मश्क किया हुआ। छोटा हुआ। श्रम्यस्त। ४ पैना। तेज। चोखा। (शस्त्र आदि)। ५ दे० 'रवाना'।

रवाँस—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का ब्रोडा या लोविया जिसकी तरकारी बनती है।

रवा—सञ्ज्ञा पुं० [स० रज, प्रा० रञ्ज (= घूल)] १ किसी चीज का बहुत छोटा टुकड़ा। कण। दाना। रेजा। जैसे,—चाँदी का रवा, मिर्ची का रवा।

मुहा०—रवा भर = बहुत थोडा। जरा सा।

२ सूजी। ३ वारुद का दाना। ४ घुघरुपो मे शब्द करने के लिये डालने के छरें।

रवा—वि० [फा०] १ उचित। ठीक। वाजिब। २ प्रचलित। चलनमार।

रवाज—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] वह बात या कार्य जो किसी वंश, समाज या नगर आदि मे बहुत दिनों से बराबर होता चला आया हो। परिपाटी। चाल। प्रथा। रस्म। चलन। रीति।

फि० प्र०—चलना।—पाना।—होगा।

मुहा०—रवाज देना = प्रचलित करना। जारी करना। रवाना पकड़ना = धीरे धीरे प्रचार पा जाना। प्रचलित होना। जारी होना।

रवाइक—सञ्ज्ञा पुं० [स०] वह मनुष्य जिमने गिरवी रखे हुए धन को हजम कर लिया हो।

रवादार—वि० [फा० रवा + दार प्रत्य०] १. सबव रखनेवाला। लगाव रखनेवाला। २ शुभचितक। हितैषी।

रवादार—वि० [हि० रवा + फा० दार] जिसमे कण या दाने हो। दानेदार। रवेवाला।

रवानगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] रवाना होने की क्रिया या भाव। प्रस्थान। चाल।

रवाना—वि० [फा० रवानह] १ जिसने कही से प्रस्थान किया हो।

जो कही से चल पडा हो। जो विदा या खसमत हुआ हो। प्रस्थित। २ भेजा हुआ।

रवानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ रवाँ होने का भाव। बहाव। प्रवाह। २ तीक्ष्णता। धार। तेजी (की०)। ३ विदाई। खसती। (क०)।

रवाव—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रवाम] दे० 'रवाव'।

रवाविया—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] लाल वलुग्रा पत्थर।

रवाविया—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रवाविया] दे० 'रवाविया'।

रवायत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ कहानी। किस्सा। २ कहावत।

रवारबी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० रवा + अ० रबी] १ जल्दी। शीघ्रता। २ भागाभाग। दौडादौड।

रवासन—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष जिसके बीज और पत्ते श्रोपधि के रूप मे काम मे आते हैं।

रवि—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ सूर्य। २ मदार का पेड। आक। ३ अग्नि। उ०—बोले रवि नृप हवि यह लीजै। यथायोग्य निज रानिन दीजै।—विश्राम (शब्द०)। ४ नायक सरदार। ५ लाल अशोक का वृक्ष। ६. पुराणानुसार एक आदित्य का नाम। ७ एक पर्वत का नाम। ८. महाभारत के अनुसार घृतगङ्गा के पुत्र का नाम। ९ बारह की सख्या (की०)।

रविकर—सञ्ज्ञा पुं० [स०] सूर्य की किरण।

रविकातमणि—सञ्ज्ञा पुं० [स० रविकान्तमणि] सूर्यकात नामक मणि। विशेष दे० 'सूर्यकात'।

रविकुल—सञ्ज्ञा पुं० [स०] सूर्यवंश।

विशेष—इम शब्द के अत मे रवि, मणि आदि शब्द लगने से उसका अर्थ 'रामचंद्र' होता है। जैसे,—रविकुल रवि, रविकुल मणि।

रविग्रह, रविग्रहण—सञ्ज्ञा पुं० [स०] सूर्यग्रहण [की०]।

रविग्रावा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविग्रावन्] सूर्यकात मणि [की०]।

रविचचल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविचचल] लोलार्क नामक तीर्थस्थल जो काशी मे है। उ०—रविचचल अरु ब्रह्मद्रव बीच सुवास विचारि तुलसीदास आसन करे श्रवनिमुता उर धारि।—मुधाकर (शब्द०)।

रविचक्र—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ सूर्य का मडल। २ सूर्य के रथ का पहिया। ३ फलित ज्योतिष मे एक प्रकार का चक्र जो मनुष्य के शरीर के आकार का होता है और जिसमे यथास्थान नक्षत्र आदि रखकर बालक के जीवन की शुभ और अशुभ बातें जानी जाती है।

रविज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शनैश्चर, जिनकी उत्पत्ति रवि या सूर्य से मानी जाती है। दे० 'रवितनय'।

रविजकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार के केतु या पुच्छल तारे जिनकी उत्पत्ति सूर्य से मानी गई है।

विशेष—कहते हैं, इनका आकार प्रायः हार के समान और वर्ण सोने के समान होता है और ये पूर्व या पश्चिम दिशा में दिखाई देते हैं ।

रविजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यमुना । कालिदी ।

रविजात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य की किरण ।

रविजेन्द्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविजेन्द्र] जैनो के एक आचार्य का नाम ।

रवितनय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ यमराज । २ सावर्णि मनु । ३ वैवस्वत मनु । ४ शनैश्चर । ५ सुग्रीव । ६ कर्ण । ७ अश्विनीकुमार । ८ वाली का एक नाम (को०) ।

रवितनया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सूर्य की कन्या, यमुना । उ०—(क) गए श्याम रवितनया के तट श्रग लसति चदन की खोरी ।—सूर (शब्द०) । (ख) जमुना जल विहरत नंदनदन सग मिली सुकुमारि । सूर धन्य धरनी वृदावन रवितनया मुखकारि ।—सूर (शब्द०) ।

रवितनुजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यमुना ।

रवितीर्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।

रविदिन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रविवार । एतवार ।

रविध्वज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दिन । दिवस (को०) ।

रविन्द, विन्दन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविन्द, रविन्दन] १ कर्ण । उ०—गुरुहि नाह सिर भेंटि पुनि अति हित द्रोण कुमार । मग महँ मिलि रविन्दर्नाहि जात भए आगार ।—सवल (शब्द०) । २ सुग्रीव । उ०—रविन्दन जब मिले राम को अरु भेंटें हनुमान । अपनी बात कही उन हरि सौं बालि बढो बलवान ।—सूर (शब्द०) । ३. सावर्णि मनु । ४ वैवस्वत मनु । ५ शनि । ६ यम । उ०—काहे को सोच करे रसखानि कहा करिहै रविन्द विचारो । ७. अश्विनीकुमार ।

रविन्दिनि(५), रविन्दिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [रविन्दिनी] यमुना । उ०—विधि निषेधमय कलिमल हरनी । कर्मकथा रविन्दिनि वरनी ।—तुलसी (शब्द०) ।

रविनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पद्म । कमल । २ दुपहरिया का फूल । बहुजीव । बंधूक (को०) ।

रविनेत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विष्णु (को०) ।

रविपुत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रविन्दन' ।

रविपूत(५)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रवि + हि० पूत] दे० 'रविन्दन' ।

रविप्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. लाल कमल । २ ताँबा । ३ लाल कनेर । ४ मदार । आक । ५ लकुच या लकुट नामक फल या उसका वृक्ष ।

रविप्रिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार देवी की एक मूर्ति ।

रविबिम्ब—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविबिम्ब] १ सूर्य का मंडल । २ भाणिक्य । मानिक ।

रविमंडल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविमण्डल] वह लाल मंडल या गोला जो सूर्य के चारों ओर दिखाई देता है । रविबिंब । उ०—(क) जयति वात सजात जयति रविमंडल प्रासक ।—विश्राम

(शब्द०) । (ख) रविमंडल जनु जाल काटि विधि धरे नखत गन ।—गिरधर (शब्द०) ।

रविमणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्यकांत मणि ।

रविरत्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्यकांत नामक मणि ।

रविरत्नक—[सं०] भाणिक्य । मानिक ।

रविलोचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ विष्णु । २ शिव (को०) ।

रविलौह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ताँबा ।

रविश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्यकुल ।

रविशशी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविशशिन] सूर्यकुल में उत्पन्न । सूर्यवशी ।

रविवाण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह वाण जिसके चलाने से सूर्य का मा प्रकाश उत्पन्न हो । उ०—स्वग शायक पिप्पील प्रमाणा । अथकार औरहु रविवाणा ।—सवल (शब्द०) ।

रविवार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सप्ताह के सात दिनों या वारों में से एक जो सूर्य का वार माना जाता है और जो शनिवार के बाद तथा सोमवार के पहले पड़ता है । आदित्यवार । एतवार । उ०—फागुन वदि चौदस शुभ दिन श्री रविवार मुहायो ।—सूर (शब्द०) ।

रविवासर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रविवार । एतवार ।

रविश—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १. गति । चाल । २ तीर । तरीका । ढग । ३ क्यारियो के बीच में चलने के लिये बना हुआ छोटा मार्ग ।

क्रि० प्र०—फटना ।—काटना ।

रविसक्राति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रविसङ्क्रान्ति] सूर्य का एक राशि में से दूसरी राशि में जाना । सूर्यसंक्रमण । विशेष दे० 'सक्राति' ।

रविसङ्क्राक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ताँत्रा ।

रविसारथि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य के सारथि । अरुण । २ अरुणोदय । उप काल (को०) ।

रविसुदर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविसुन्दर] वैद्यक में एक प्रकार का रस जो भगदर के लिये बहुत उपकारी माना जाता है ।

रविसुअन(५)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रविसुअन] १ सूर्य के पुत्र, अश्विनी-कुमार । उ०—किधौ रविसुअन मदन ऋतुपति किधौ हरिहर वेप बनाए ।—तुलसी (शब्द०) । २ दे० 'रविन्दन' ।

रविसुत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रविन्दन' ।

रविसूनु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रविन्दन' ।

रवीपु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।

रवेया—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रविश या रवी + येया (प्रत्य०)] १ चलन । चाल चलन । २ तीर तरीका । ढग ।

यौ०—रग रवेया = रग ढग । तीर तरीका ।

रशना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जीभ । २ रस्सी । ३ करघनी । तागडी । ४ लगाम । बल्गा (को०) ।

रशनाकलाप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धागे आदि की बनी हुई एक प्रकार की करघनी जो प्राचीन काल में स्त्रियाँ कमर में पहनती थीं ।

रशनागुण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रशनाकलाप' ।

रशनोपमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रसनोपमा नामक अलंकार । विशेष दे० 'रसनोपमा' ।

रश्क—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ किसी दूसरे को अच्छी दशा में देखकर होनेवाली जलन या कुडन । ईर्ष्या । डाह । २ लज्जा । शरम । (क्व०) ।

रश्मि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ किरण । २ पलक के रोएँ । बरौनी । ३ घोड़े की लगाम । बाग । ४ रज्जु । रस्सी (की०) । ५. चावुक । अंकुश (की०) । ६ नापने की रस्सी (की०) ।

रश्मिकलाप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मोतियों का वह हार जिसमें ६४ या ५४ लड़ियाँ हो ।

रश्मिकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक राक्षस का नाम । २ वह केतु या पुच्छल तारा जो कृत्तिका नक्षत्र में स्थित होकर उदित हो । कहते हैं, इसकी चोटी में धूम्राँ रहता है और इसका फल सातवें केतु के समान होता है ।

रश्मिक्रीड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रश्मिक्रीड] रामायण के अनुसार एक राक्षस का नाम ।

रश्मिग्राह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सारथी (की०) ।

रश्मिपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक क्षुप । आदित्यपत्र (की०) ।

रश्मिप्रभास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बुद्ध का नाम ।

रश्मिमाली—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रश्मिमालिन्] सूर्य (की०) ।

रश्मिमुच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रश्मिमुच्] सूर्य (की०) ।

रस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वह अनुभव जो मुँह में डाले हुए पदार्थों का रसना या जीभ के द्वारा होता है । खाने की चीज का स्वाद । रसनेन्द्रिय का संवेदन या ज्ञान ।

विशेष—हमारे यहाँ वैद्यक में मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय ये छह रस माने गए हैं और इनकी उत्पत्ति भूमि, आकाश, वायु और अग्नि आदि के संयोग से जल में मानी गई है । जैसे—पृथ्वी और जल के गुण की अधिकता से मधुर रस, पृथ्वी और अग्नि के गुण की अधिकता से अम्ल रस, जल और अग्नि के गुण की अधिकता से तिक्त रस और पृथ्वी तथा वायु की अधिकता से कषाय रस उत्पन्न होता है । इन छहों रसों के मिश्रण से और छत्तीस प्रकार के रस उत्पन्न होते हैं । जैसे,—मधुराम्ल, मधुरतिक्त, अम्ललवण, अम्लकटु, लवणकटु, लवणतिक्त, कटुतिक्त, तिक्तकषाय आदि । भिन्न भिन्न रसों के भिन्न भिन्न गुण कहे गए हैं । जैसे,—मधुर रस के सेवन से रक्त, मांस, मेद, अस्थि और शुक्र आदि की वृद्धि होती है, अम्ल रस जारक और पाचक माना गया है; लवण रस पाचक और सशोधक माना गया है, कटु रस पाचक, रेचक, अग्निदीपक और सशोधक माना गया है; तिक्त रस रुचिकर और दीप्तिवर्धक माना गया है; और कषाय रस सप्राहक और मल, मूत्र तथा श्लेष्मा आदि को रोकनेवाला माना गया है । न्याय दर्शन के अनुसार रस नित्य और अनित्य दो प्रकार का

होता है । परमाणु रूप रस नित्य और रसना द्वारा गृहीत होनेवाला रस अनित्य कहा गया है ।

२ छह की संख्या । ३ वैद्यक के अनुसार शरीर के अंदर की सात धातुओं में से पहली धातु ।

विशेष—युश्रुत के अनुसार मनुष्य जो पदार्थ खाता है, उससे पहले द्रव स्वरूप एक सूक्ष्म सार बनता है, जो रस कहलाता है । इसका स्थान हृदय कहा गया है, जहाँ से यह घमनियों द्वारा सारे शरीर में फैलता है । यही रस तेज के साथ मिलकर पहले रक्त का रूप धारण करता है और तब उससे मांस, मेद, अस्थि, शुक्र आदि शेष धातुएँ बनती हैं । यदि यह रस किसी प्रकार अम्ल या कटु हो जाता है, तो शरीर में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करता है । इसके दूषित होने से अरुचि, ज्वर, शरीर का भारीपन, कृशता, शिथिलता, दृष्टिहीनता आदि अनेक विकार उत्पन्न होते हैं ।

पर्या०—रसिका । स्वेदमाता । चर्मन्त । चर्मसार । रक्तसार ।

४ किसी पदार्थ का सार । तत्त्व । ५ साहित्य में वह आनन्दमत्तक चित्तवृत्ति या अनुभव जो विभाव, अनुभाव और संचारी से युक्त किसी स्थायी भाव के व्यजित होने से उत्पन्न होता है । मन में उत्पन्न होनेवाला वह भाव या आनन्द जो काव्य पढ़ने अथवा अभिनय देखने से उत्पन्न होता है ।

विशेष—हमारे यहाँ आचार्यों में इस विषय में बहुत मतभेद है कि रस किसमें तथा कैसे अभिव्यक्त होता है । कुछ लोगों का मत है कि स्थायी भावों की वास्तविक अभिव्यक्ति मुख्य रूप से उन लोगों में होती है, जिनके कार्यों का अभिनय किया जाता है (जैसे,—राम, कृष्ण, हरिश्चंद्र आदि), और गीण रूप से अभिनय करनेवाले नटों में होती है । अतः इन्हीं में ये लोग रस की स्थिति मानते हैं । ऐसे आचार्यों का मत है कि अभिनय देखनेवालो या काव्य पढ़नेवालो के साथ रस का कोई संबंध नहीं है । इसके विपरीत अधिक लोगो का यह मत है कि अभिनय देखनेवालो तथा काव्य पढ़नेवालो में ही रस की अभिव्यक्ति होती है । ऐसे लोगो का कथन है कि मनुष्य के अंतःकरण में भाव पहले से ही विद्यमान रहते हैं, और काव्य पढ़ने अथवा नाटक देखने के समय वही भाव उदीत होकर रस का रूप धारण कर लेते हैं । और यही मत ठीक माना जाता है । तात्पर्य यह कि पाठको या दर्शको को काव्यो अथवा अभिनयो से जो अनिर्वचनीय और लोकोत्तर आनन्द प्राप्त होता है, साहित्य शास्त्र के अनुसार वही रस कहलाता है ।

हमारे यहाँ रति, हास, शोक, उत्साह, भय, जुगुप्सा, आश्चर्य और निर्वेद इन नौ स्थायी भावों के अनुसार नौ रस माने गए हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं—शृ गार, हास्य, कर्षण, रोद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शांत । दृश्य काव्य के आचार्य शांत को रस नहीं मानते । वे कहते हैं कि यह तो मन की स्वाभाविक भावशून्य अवस्था है । निर्वेद मन का कोई विकार नहीं है । अतः वे रसों की संख्या आठ ही मानते हैं । और

कुछ लोग इन नौ रसों के सिवा एक और दसवाँ रस 'वात्सल्य' भी मानते हैं।

६ नौ की सख्या। ७ सुख का अनुभव। आनन्द। मजा। उ०—
(क) यह जानिए वर दीन। पितु ब्रह्म के रसलीन।—केशव
(शब्द०)। (ख) जेहि किए जीव निराम बस रस हीन दिन
दिन अति नई।—तुलसी (शब्द०)। (ग) ओठ खड़ेए कौ
अर्यो मुख सुवास रम मत्त। स्याम रूप नंदलाल अलि नहि
अलि अलि उन्मत्त।—मतिराम (शब्द०)।

मुहा०—रम भोजना या भोजन = (१) किसी पदार्थ का ऐसा
समय आना जब उसके द्वारा आनन्द उत्पन्न हो। मजे का
वक्त आना। (२) तरुणाई प्रकट होना। यौवन का आरंभ या
संचार होना। उ०—ह्याँ इनके रस भोजत त्यो दृग ह्याँ उनके
मसि भोजत आवै।—पद्माकर (शब्द०)।

= प्रेम। प्रीति। मुह्वत।

यो०—रस रग = (१) प्रेम के द्वारा उत्पन्न होनेवाला आनन्द।
मुह्वत का मजा। (२) प्रेमक्रीडा। केलि। रस रीति = प्रेम के
व्यवहार। मुह्वत का बरताव। उ०—(क) प्रीति को अधिक
रसरति को अधिक नीति निपुन विवेक है निदिम देसकाल
को।—तुलसी (शब्द०)। (ख) हृष्ट मिलै और मन मिलै मिलै
सकल रस रीति।—कवीर (शब्द०)। रस की रीति =
रसरति। उ०—और को जानै रस की रीति। कहां ही दीन
कहां त्रिभुवनपति मिले पुरातन प्रीति। चतुरानन तन निमिप
न चितवत इती राज की नीति।—सुर (शब्द०)।

६ कामक्रीडा। केलि। विहार। उ०—दलित कपोल रद दलित
अधर रुचि रसना रसनि रस रस मे रिसाति है।—केशव
(शब्द०)। १० उमग। जोश। वेग। उ०—(क) प्राजान-
वाहु परकाज रत स्वामिभक्त रस रग नय।—गुमान (शब्द०)
(ख) जय कारन प्रन किए करत रस रत ललकारन। श्याम
अनुज बल धाम बने सँग सुभट हजारन।—गोपाल (शब्द०)।
११ गुण। सिकत। उ०—(क) सम रस समर सकोच बस
विवस न ठिकु ठहराय। फिरि फिरि उभक्ति फिरि दुरति
दुरि दुरि उभक्ति जाय।—विहारी (शब्द०)। (ख) तिहुँ
देवन की द्युति सी दरमै गति सोपै त्रिदोषन के रस की।
—केशव (शब्द०)। १२ किसी विषय का आनन्द। उ०—
जो जो जेहि जेहि रस मगन, तहँ सो मुदित मन मानि।
—तुलसी (शब्द०)। १३ कोई तरल या द्रव पदार्थ। १४
जल। पानी। १५ वनस्पतियो या फलो आदि मे का वह
जलीय अंश जो उन्हें कूटने, दवाने या निचोडने आदि से
निकलता है। जैसे,—ऊख का रस, आम का रस, तुलसी
का रस, अदरक का रस। १६ शोरवा। जूस। रसा। १७
वह पानी जिसमे मीठा या चीनी घुली हुई हो। शरबत।
१८ वृद्ध का निर्यास। जैसे,—गोध, दूध, मद आदि। १९
लास। लुआव। २० धोडो और हाथियो का एक रोग
जिसमे उनके पैरो मे से जहरीला पानी बहता है। २१ वीर्य।

२२ राग। २३ विष। जहर। २४ पारा। २७ हिगुल।
शिगरफ। २८ वैद्यक मे घातुओ को फूँककर तैयार किया
दृशा भम्म, जिसका व्यवहार औषध के रूप में होता है।
जैसे,—रमसिदूर। २९ पहले खिवाव का शोरा जो बहुत
तेज और अच्छा होता है। ३० आनन्दस्वरूप ब्रह्म। (उपनिषद्)।
३१ केशव के अनुगार रगण और सगण। उ०—मगन नगन
को मित्र गनि ऽगन भगन को दास। उदामीन जत जानिए
रस रिपु केशव दास।—केशव (शब्द०)। ३२ बोल नामक
गंधद्रव्य। ३३ एक प्रकार की भेड़ जा गिलगित्त (गिलगिट)
मे उत्तर और पामीर मे पाई जाती है। ३४ भाँति। तरह।
प्रकार। रूप। उ०—एक ही रस दुनी न हरप मोक साँसति
नहति।—तुलसी (शब्द०)। ३५ मन की तरंग। मौज।
हृच्छा। उ०—तिनका बयारि के बस। ज्यौं भावै तयो
उठाइ तै जाइ अपन रस।—स्वामी हरिदान (शब्द०)।
३६ सोना (को०)। ३७ दूध। जैसे—गोरम (को०)।

रसक—सजा पु० [सं०] १ फटाकिरी। २ खपरिया। मगे बमरी।
३ मास का रसा। शोरवा (को०)।

रसककार वेल्लक—सजा पु० [सं०] पतला खपरिया। मगे बमरी।

रसक दूर्तुर—सजा पु० [सं०] दलदार मोटा खपरिया या सगे
बसरी।

रसकपूर—सजा पु० [सं० रसकपूर] सफेद रग की एक प्रकार की
प्रसिद्ध उपघातु जिमका व्यवहार औषध मे होता है।

विशेष—यह प्राय ईशुर के समान होता है, इनीलिमे इसे कुछ
लोग सफेद शिगरफ भी कहते है। एक और प्रकार का
रसकपूर होता है, जो वास्तव में पारे की सफेद भस्म
होती है। इसका व्यवहार प्राय यूनानी चिकित्सा मे होता
है और यह खुजली, उपदश आदि मे उपयोगी माना जाता है।

रसकर्म—सजा पु० [सं० रसकर्मन्] पारे की सहायता से रस आदि
तैयार करने की क्रिया। (वैद्यक)।

रसका—सजा खी० [सं०] एक प्रकार का चुद्र कुष्ठ रोग।

रसकुल्या—सजा खी० [सं०] पुराणानुसार कुशद्वीप की एक नदी
का नाम।

रसकेलि—सजा खी० [सं०] १ विहार। क्रीडा। २ हँसी। ठट्टा।
दिल्लीगी। मजाक।

रसकेसर—सजा पु० [सं०] कपूर।

रसकेसरी—सजा पु० [सं० रसकेशरिन्] एक प्रकार की रसोषध जो
पारे, गंधक और लौंग आदि के मेल से तैयार की जाती है,
और अरुचि, अग्निमाद्य, ग्रामवात, विमूचिका, आदि रोगो मे
उपयोगी मानी जाती है (वैद्यक)।

रसकोरा—सजा पु० [हि० रस + कौर] रसगुल्ला नाम की मिठाई।
उ०—हरिवल्लभ अरु रसा विलासे। रसकोरे बोरे रस
खासे।—रघुराज (शब्द०)।

रसखर्पर—सजा पु० [सं०] खपरिया। सगबसरी।

रसखान^१—वि० [हि०] रसयुक्त । रसवाना । प्रेमी । उ०—भ्या
व्याळं क्या नही आए सजन रसखान ? रे कवि लिख विरह के
गान ।—कवासि, पृ० ५ ।

रसखान^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रस + खान] एक भक्त कवि जो गोस्वामी
विठ्ठलनाथ जो क जिष्य और उनके २५२ मुख्य शिष्यो मे थे ।
इनका समय सन्वत् १६४० से १६८५ मान्य है ।

रसखोर—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रस + खोर] चानी के शर्वत अथवा
ऊख के रस मे पकाए हुए चावल । मीठा भात ।

रसगध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसगन्ध] दे० 'रसगन्ध' ।

रसगन्धक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसगन्धक] १ गन्धक । २ बोल नामक गन्ध
द्रव्य । ३. रसोत । रसाजन । ४ हिंगुल । शिगरफ । ईगुर ।

रसगत ड्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बँधक के अनुमार शरीर की रसधातु
मे ममाया हुआ ज्वर ।

विशेष—कहते है कि ज्वर अधिक दिनों का हो जाने से शरीर
के रस तक मे पहुँच जाता है और उससे म्लानि, वमन और
अरुचि आदि होती है ।

रसगर्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. रसोत । रसाजन । २. शिगरफ ।
हिंगुल । ईगुर ।

रसगुनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रस + गुणी] काव्य या संगीत शास्त्र
का ज्ञाता । उ०—श्री हरिदास के स्वामी स्यामाँ को मेरु सरस
भयी और रसगुनी परे फीके—हरिदास (शब्द०) ।

रसगुल्ला—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रस + गुला] एक प्रकार की छेने की
मिठाई जा गुलाब जामुन के समान गोल होती है और शीरे मे
पगी हुई होती है ।

रसग्रह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जीम ।

रसघन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आनदघन, श्रीकृष्ण चद्र ।

रसघन^२—वि० जो बहुत अधिक स्वादिष्ट हो ।

रसघन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुहागा ।

रसछन्ना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रस + छन्ना (= छानने की चीज)]
[स्त्री० श्रवण० रसछन्नी] ऊख का रस छानने
की चलनी ।

रसज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गुड । २ रसोत । रसाजन । ३ शराव
की तलछट । मुरावीज ।

रसजात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रसोत । रसाजन ।

रसज्ञ—वि० [सं०] [वि० स्त्री० रसज्ञा] १ वह जो रस का ज्ञाता
हो । रस जाननेवाला । २ काव्यमर्मज्ञ । नाहित्य के मर्म का
जानकार । ३ रसायनी । ४. निपुण । कुशल । जानकार ।

रसज्ञान—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रसज्ञ होने का भाव ।

रसज्ञा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. गगा । २. जीम ।

रसज्ञा—वि० स्त्री० [सं०] दे० 'रसज्ञ' ।

रसज्येष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मधुर या मीठा रस । २ श्रुगार
रस जो नाहित्य मे नो रसो मे प्रधान है ।

रसडली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रस + डली] एक प्रकार का गन्ना
जिमका रंग पीलावन लिर हरा होता है और जो प्रायः
बीजापुर और उसके आस पास प्रकृत होता है । रसवली ।

रसडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रसरी] दे० 'रसरी' । उ०—प्रेम राखा
वाँधी गले । खँच चले उधर चले ।—दक्खिनी०, पृ० १०० ।

रसणा(उ)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रसना] दे० 'रसना' । उ०—दान
मदा वितसार देवे, नित रसणा लेवे हरिनाम ।—रघु० ८०,
पृ० २४ ।

रसतन्मात्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पाँच तन्मात्राओं या महत्तत्त्वों मे
से चौथे तत्व जल की तन्मात्रा । (माव्य) । विनाप दे०
'तन्मात्र' ।

रसता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रस का भाव या धर्म । रसत्व ।

रसतालेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वद्यक मे एक प्रकार का रस ।

विशेष—इसका व्यवहार कुष्ठ रोग मे होता है । यह शय,
करज, हलदी, भिलावा, धाक्रुआर, गदहूरना, गन्धक, पारे
और विडग आदि के याग से बनाया जाता है ।

रसतेज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसतेजम्] रक्त । लहू । सूत ।

रसत्याग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दूध, दही, घी, तेल, मीठा पक्वान
आदि स्वादिष्ट पदार्थों का त्याग करना, जो एक प्रकार का
नियम या आचार माना जाता है । (जंन) ।

रसत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रस का भाव या धर्म । रसता ।

रसद^१—वि० [सं०] १ आनददायक । नुस्वद । उ०—(क) रसद
विहारी वदे वल्लभा राविका निस देन रग रंगी ।—स्वा०
हार्दाम (शब्द०) । (ख) रसद श्री हरिदाम विहारी भग भग
मिलत अतन उदात करत नुरात आरभटी ।—हरिदाम (शब्द०)
२. स्वादिष्ट । मजदार । जायनदार ।

रसद^२—सञ्ज्ञा पुं० चिकित्सा करनेवाला । र्नाज करनेवाला व्यक्ति ।

रसद^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह जो बँटने पर हिस्से के अनुमार
मिले । वाट । बखरा ।

मुहा०—हिस्सा रसद = बँटने पर अपने अपने हिस्से के अनुमार
लाभ ।

२ कच्चा अनाज जो पकाया न गया हो । भोजन बनाने के लिये
अन्न आदि । गल्ला । ३ नना का वह खाद्य पदार्थ जो उसके
माथ रहता है ।

रसदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सफेद निर्गुदी । संभासू । निघुआर ।

रसदार—वि० [हि० रस + दार (प्रत्य०)] १ जिममे किसी प्रकार
का रस हो । रसवाला । जैम,—रसदार आम, रसदार
नींबू । २ स्वादिष्ट । मजदार । ३ भालदार । गोखेदार ।
रसवाला ।

रसदालिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बीज । गन्ना ।

रसद्रावी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसद्रावित्] मीठा जैरीरी । नींबू ।

रसधातु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पारा । २ शरीर की भात धातुओं
मे से रस नामक धातु । विशेष दे० 'रस' ।

रसधेनु—सखा स्त्री० [सं०] पुराणानुसार गुड आदि की बनाई हुई वह गौ जो दान की जाती है ।

रसन^१—सखा पुं० [सं०] १ स्वाद लेना । चखना । २ ध्वनि । ३ जीभ । जवान । ४ कफ का एक नाम ।

रसन^२—वि० पसीना लानेवाला (श्लेष आदि) ।

रसन^३—सखा पुं० [सं० रशना या अ० लासन] रस्ता । (लश०) ।

रसना^१—सखा स्त्री० [सं०] १. जिह्वा । जीभ । जवान ।

यौ०—रसनामूल = जीभ की मूल । रसनामूल = जीभ का मूल भाग । रसनारद = दे० 'रसनारव' । रसनाखिह = भवान । कुत्ता ।

मुहा०—रसना खोलना = बोलना आरंभ करना । उ०—हीरामन रसना रस खोला । दै असीस करि अस्तुति बोला ।—जायसी (शब्द०) । रसना तालू (तारू) से लगाना = बोलना बंद करना । चुप होना । उ०—रसना तारू सो नहिं लावत पीवै पीव पुकारत ।—सूर (शब्द०) ।

२ न्याय के अनुसार रस या स्वाद, जिसका अनुभव रसना या जीभ से किया जाता है । ३ रास्ता या नागदोती नाम की श्लेष । ४ गवभद्रा नाम की लता । ५ करघनी । मेखला । ६ रस्ती । रज्जु । ७ लगाम । ८ चद्रहार ।

रसना^२—क्रि० अ० [हि० रस + ना (प्रत्य०)] १ धीरे धीरे बहना या टपकना । जैसे,—छत मे से पानी रसना । २ गीला होकर या पानी से भरकर धीरे धीरे जल या और कोई द्रव पदार्थ छोड़ना या टपकाना । जैसे,—चद्रकात मणि चद्रमा को देखकर रसने लगती है ।

मुहा०—रस रस या रसे रसे = धीरे धीरे । आहिस्ते आहिस्ते । शनैः शनैः । उ०—(क) रस रस सूख सरित सर पानी । ममता ज्ञान करहि जिमि ज्ञानी ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) चंचलता अपनी तजिकै रस ही रस सो रस सु दर पीजियो ।—परताप (शब्द०) ।

३ रस मे मग्न होना । रस से पूर्ण होना । प्रफुल्लित होना । उ०—सूर प्रभु नागरी हँसति मन मन रसति बसत मन श्याम बडे भागे ।—सूर (शब्द०) । ४ तन्मय होना । परिपूर्ण होना । उ०—(क) चपकनी दल हूँ ते भली पद अंगुलि बाल की रूप रसे हूँ ।—केशव (शब्द०) । (ख) बाँक विभूषण प्रेम ते जहाँ होहि विपरीत । दर्शन रस तन मन रसत गनि विभ्रम के गीत ।—केशव (शब्द०) । ५ रसपान करना । रस लेना । उ०—शिवपूजन हित कनक के कुसुम रसत अलिजाल । मयन नृपति जग जीत की वजी मनी करनाल ।—गुमान (शब्द०) । ६. प्रेम मे अनुरक्त होना । मुह्वत में पडना । उ०—(क) किन संग रसलू किन संग बसलू किन संग रखलू धमार ।—कबीर (शब्द०) । (ख) तव गोपी रस रसी राम किरपा द्विज-राजो ।—सुधाकर (शब्द०) ।

रसनाथ—सखा पुं० [सं०] पारा ।

रसनापद—सखा पुं० [सं०] नितंब । चूतड ।

रसनाभ—सखा पुं० [सं०] रसाजन । रसीत ।

रसनाथक—सखा पुं० [सं०] १ शिव का एक नाम । २ पारद । पारा ।

रसनारव—सखा पुं० [सं०] पक्षी, जिन्हे बोलने के लिये केवल जीभ ही होती है, दाँत नहीं होते ।

रसनि(पु)—सखा स्त्री० [सं० रसन] स्वाद । चाट । उ०—जवनि रसनि लागी तुमही काँ तौनिउ रसनि मिटावहु ।—जग० बानी, पृ० २३ ।

रसनिर्वास—सखा पुं० [सं०] शाल का वृक्ष ।

रसनीय—वि० [सं०] १. स्वाद लेने योग्य । चखने लायक । २ स्वादिष्ट । मजेदार ।

रसनेन्द्रिय—सखा स्त्री० [सं० रसनेन्द्रिय] रसना, जिससे स्वाद या रस लिया जाता है । जीभ ।

रसनेत्रिका—सखा स्त्री० [सं०] मैनसिल ।

रसनेष्ट—सखा पुं० [सं०] ऊल । गन्ता ।

रसनोपमा—सखा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की उपमा जिसमे उपमाओं की एक श्रृंखला बँधी होती है और पहले कहा हुआ उपमेय आगे चलकर उपमान होता जाता है । यह 'उपमा' और 'एकावली' को मिलाकर बनाया गया है । इसे गमनोपमा भी कहते हैं । जैसे,—बस सम बखत, बखत सम ऊँचो मन, मन सम कर, कर सम करो दान के ।

रसपति—सखा पुं० [सं०] १ चद्रमा । उ०—राजपति रामापति रमापति राधापति रसपति रासपति रसापति रामपति ।—केशव (शब्द०) । २ पृथ्वीपति । राजा । ३ पारा । ४ रसरज । शृगार रस । ५ धरती । पृथ्वी ।

रस परित्याग—सखा पुं० [सं०] जंतो के अनुसार दूध, दही, चीनी नमक या इसी प्रकार का और कोई पदार्थ विल्कुल छोड़ देना और कभी ग्रहण न करना ।

रसपर्पटी—सखा स्त्री० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का रस जो पारे को शोषकर बनाया जाता है और जिसका व्यवहार सग्रहणी, बवासीर, ज्वर, गुल्म, जलोदर आदि मे होता है ।

रसपाकज—सखा पुं० [सं०] १ गुड । २ चीनी ।

रसपाचक—सखा पुं० [सं०] भोजन बनानेवाला । रसोद्भया ।

रसपुष्प—सखा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार की दवा जो गधक, पारे और नमक से बनाई जाती ।

रसपूर्तिका—सखा स्त्री० [सं०] १ मालकंगनी । २ शतावर ।

रसप्रबंध—सखा पुं० [सं० रसप्रबन्ध] १ नाटक । २ वह कविता या काव्य जिसमे एक ही विषय बहुत से परस्पर संबद्ध पद्यों में कहा गया हो । प्रबन्ध काव्य ।

रसकल—सखा पुं० [सं०] १ नारियल का वृक्ष । २ आँवला ।

रसबंधकर—सखा पुं० [सं० रसबन्धकर] सोम लता ।

रसबंधन—सज्ञा पुं० [स० रसबन्धन] शरीर के अतर्गत नाडी के एक अंश का नाम । (वैद्यक) ।

रसवत्ती—सज्ञा स्त्री० [सं० रस + हिं० वत्ती] एक प्रकार का पलीता जिसका व्यवहार पुराने ढंग की तोपें और बटूकें चलाने में होता था ।

रसवरी—सज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'रसभरी' ।

रसवेद^(१)—सज्ञा पुं० [स० रस + वेद] कामशास्त्र । उ०—मदनाकुम रसवेद मत, पट शृंगुल परिमान । इह परकीरति जो पुरुष, सीई ससा वखान ।—चित्रा०, पृ० २१३ ।

रसभरी—सज्ञा स्त्री० [अ० रसभरी] एक प्रकार का स्वादिष्ट फल ।

विशेष—पकने पर इसका रंग पीलापन लिए लाल हो जाता है । यह जाड़े के अंत में प्रायः बाजारों में मिलता है ।

रसभव—सज्ञा पुं० [स०] रक्त । खून । लहू ।

रसभस्म—सज्ञा पुं० [स०] भस्म किया हुआ पारा । पारे का भस्म ।

रसभीना—वि० [हिं० रस + भीनना] [वि० स्त्री० रसभीनी] १ आनंद में मग्न । २ आर्द्र । तर । गीला । उ०—शोभा सर लीन कुवलय रसभीन नलिन नवीन किधौ नैन वह रंग हैं ।—केशव (शब्द०) । ३. मादकता से पूर्ण । मस्ती देनेवाला । मस्त करनेवाला । रस से सराबोर करनेवाला ।

रसभेद—सज्ञा पुं० [स०] १ वैद्यक में एक प्रकार की औषध जो पारे से तैयार की जाती है । २ साहित्य शास्त्र में रसों का भेदोपभेद । उ०—भावभेद रसभेद अपारा । कवित दोष गुण विविध प्रकारा ।—मानस, १।६ ।

रसभेदी—सज्ञा पुं० [स० रसभेदिन्] वह पका हुआ फल जो रस आदि की अधिकता से फट जाय और जिसमें से रस बहने लगे ।

रसमंडूर—सज्ञा पुं० [सं० रसमण्डूर] वैद्यक में एक प्रकार की रसौषध जो हृद के योग से गवक और मंडूर से बनाई जाती है और जिसका व्यवहार शूल रोग में होता है ।

रसम—सज्ञा स्त्री० [अ० रस्म] दे० 'रस्म' ।

यौ०—रसमरिवाज ।

रसमर्दन—सज्ञा पुं० [स०] वैद्यक में पारे को भस्म करने या मारने की क्रिया ।

रसमल—सज्ञा पुं० [सं०] शरीर से निकलनेवाला किसी प्रकार का मल । जैसे—विण्ठा, मूत्र, पसीना, थूक आदि ।

रसमसा^(१)—वि० [हिं० रस + मस (अनु०)] [वि० स्त्री० रसमसी] १. रंग से मस्त । आनंदमग्न । अनुरक्त । उ०—खेलत अति रसमसे लाल रंग भीने ही । अतिरस केलि विशाल लाल रंगभीने हो ।—सूर (शब्द०) । २. तर । गीला । उ०—दलदल जो ही रही है हरेक जा पै रसमसी । सर मर मिटा है मर्द तो औरत कही फर्नी ।—नजीर (शब्द०) । ३. पसीने से भरा । श्रात ।

रसमसाना^(१)—क्रि० अ० [हिं० रसमस] रंग वा आनंद में मग्न होना । रस बरसना ।

रसमाणिक्य—सज्ञा पुं० [स०] वैद्यक में एक प्रकार की औषध जो हस्ताल से बनाई जाती है और जो कुष्ठ आदि रोगों में उपकारी मानी जाती है ।

रसमाता^(१)—सज्ञा स्त्री० [म० रसमातृका] जीभ । रसना । जवान । (हिं०) ।

रसमाता^२—वि० [स० रसमत] आनंद वा मद के कारण मत्त ।

रसमातृका—सज्ञा स्त्री० [स०] जीभ । जवान ।

रसमारण—सज्ञा पुं० [स०] वैद्यक में वह क्रिया जिसमें पारा मारा या शुद्ध किया जाता है ।

रसमाला—सज्ञा स्त्री० [सं०] शिलागस नामक सुगंधित द्रव्य ।

रसमि—सज्ञा स्त्री० [स० रसिम] १ किरण । उ०—तो जू मान तजहुगी भामिनि रवि की रसमि काम फल फीको । कीजे कहा समय विनु सुदरि भोजन पीछे अंचवन घी को ।—सूर (शब्द०) । २. आभा । प्रकाश । चमक । उ०—वमन सपेद स्वच्छ पेन्हे आभूषण सब हीरन को मोतिन को रसमि अछेन को ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

रसमुडी—सज्ञा स्त्री० [हिं० रस + मुड़ी ?] एक प्रकार की बंगला मिठाई ।

रसमैत्री—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ दो ऐसे रसों का मिलना जिनके मिलने से स्वाद में वृद्धि हो । दो रसों का उपयुक्त मेल । जैसे,—कडुआ और तीता, तीता और नमकीन, नमकीन और खट्टा आदि । २ साहित्य में रसों का उपयुक्त मेल ।

रसयोग—सज्ञा पुं० [स०] वैद्यक में एक प्रकार का औषध ।

रसरस—क्रि० वि० [हिं० रसना] धीरे धीरे । शनैः शनैः । उ०—रस रस सुख सरित सर पानी । ममता त्याग करहि जिमि ज्ञानी ।—मानस, ४।१६ ।

रसरारा—सज्ञा पुं० [हिं०] [स्त्री०, अल्पा० रसररी] दे० 'रस्मा' ।

रसराज—सज्ञा पुं० [सं०] १ पारद । पारा । उ०—रावन सी रसराज सुमट रस रहित लक खल दलतो ।—तुलसी (शब्द०) । २ रसों का राजा, शृंगार रस । उ०—जनु विद्युमुख छवि अमिय को रद्यक रहयो रसरज ।—तुलसी (शब्द०) । ३. वैद्यक में एक प्रकार की औषधि जो तंदि के भस्म, गवक और पारे को मिलाकर बनाई जाती है और जिसका व्यवहार तिल्ली और बरवट आदि में होता है । ४ रसाजन । रसोत ।

रसराय^(१)—सज्ञा पुं० [सं० रसराज] शृंगार रस । दे० 'रसराज' ।

रसरी—सज्ञा स्त्री० [सं० रसना, प्रा० रसणा] रस्मी । डोरी ।

रसल—वि० [सं० रस + ल (प्रत्य०)] जिसमें रस हो । रसवाला । उ०—विमल रमल रसखानि मिलि भई मकल रमखानि । सोई नव रमखानि को चित चातक रमखानि ।—रमखान । (शब्द०) ।

रसलह—सज्ञा पुं० [सं०] पारा ।

रसवत्^१—सज्ञा पुं० [सं० रसवत्] रनिया । प्रेमी । रमण । उ०—(क) रसवत् कावत्तन को रस र्प्या अरारान के ऊपर हैं

मूलकै ।—मन्नालाल (शब्द०) । (ख) सुजा के दिवान भगवत रसवत भए वृ दावनवासिनि की सेवा ऐसी करी है ।
—नामादास (शब्द०) ।

रसवत्^३—वि० जिसमे रस हो । रसभरा । रसीला ।

रसवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रसवती] रसीत । रसाजन । उ०—
रूमी रतनजोति रसवती । रारे रंगमाटी रदवती —सूदन
(शब्द०) ।

रसवट—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रसना (= पानी आना)] वह मसाला जो नाव के छेदों में इसलिये भरा जाता है कि उनमें से पानी अदर न आवे । रसवर ।

रसवत्^४—वि० [सं०] [वि० स्त्री० रसवती] १ जिसमें रस हो । रसवाला । २ स्वादिष्ट (को०) । ३ विलस (को०) । ४ आकर्षक । मोहक । (को०) । ५ प्रेमभाव पूर्ण । प्रेमपूर्ण (को०) । ६ रसिक । परिहासक (को०) ।

रसवत्^५—सञ्ज्ञा पुं० वह काव्यालंकार जिसमें एक रस किसी दूसरे रस अथवा भाव का अंग होकर आवे । जैसे,—युद्ध में पड़े हुए धीर पति के लिये इस विलाप में—‘हाँ, यह वही हाथ है जो प्रेम से आलिंगन करता था ।’ यहाँ शृंगार केवल करण रस का अंग है ।

रसवत्—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] १ दे० ‘रसीत’ । २ दे० ‘दाहहल्दी’ ।

रसवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ सपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें मव शुद्ध स्वर लगते हैं । २ रसोद्घर । ३ अशन । आहार (को०) ।

रसवती^६—वि० रसीली । रसपूर्ण । रसभरी ।

रसवत्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रमयुक्त होने का भाव या धर्म । रसीलापन । २ मिठास । माधुर्य । ३ सुदरता । खूबसूरती ।

रसवरा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रसना (= चूना, टपकना)] दे० ‘रसवट’ ।

रसवर्णक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार अनार का फूल, ढाक का फूल, कुसुम का फूल, लाख, हलदी, मजीठ आदि कुछ विशिष्ट द्रव्य जिनसे रंग निकलता है ।

रसवली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रस + वली] एक प्रकार का गन्ना, जिसे रसडली भी कहते हैं । दे० ‘रसडली’ ।

रसवाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रस + वाई (प्रत्य०)] पहले पहल ऊँच पेरने के समय होनेवाली कुछ विशिष्ट रीतियाँ या व्यवहार ।

रसवाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रस की वात । प्रेम या आनन्द की वातचीत । रसिकता की वातचीत । उ०—(क) करति ही परिहास हमसो तजौ यह रसवाद ।—सूर (शब्द०) । (ख) केशव औरनि सार सरासरि सो रसवाद सबै हमसो ।—केशव (शब्द०) । २ मनोरजन के लिये कहासुनी । छेदछाड । भगडा । उ०—तुमही मिलि रसवाद बढ़ायो । उरहन दँ दँ मूँड पिरायो ।—सूर (शब्द०) । ३ वकवाद । उ०—सोवन

दीजै न दीजै हमें दुख योही कहा रसवाद बढ़ायो ।—मतिराम (शब्द०) ।

रसवान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह पदार्थ जिसमें ऐसा गुण या शक्ति हो कि जब उस पदार्थ के कण रसना से सयुक्त हों, उस समय किसी प्रतिवचक हेतु के न रहने से विशेष प्रकार का अनुभव हो ।

रसवास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ढगण के पहले भेद (15) की मञ्जा ।

रसवाहिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वैद्यक के अनुसार खाए हुए भोजन से बने सार पदार्थ का फैलानेवाली नाडी ।

रसविक्रयी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसविक्रयिन्] वह जो मदिरा बेचता हो । शराब बेचनेवाला ।

रसविरोध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. सुश्रुत के अनुसार कुछ रसों का ठीक मेल न होना । जैसे,—तीने और मीठे में, नमकीन और मीठे में, कडुए और मीठे में रसविरोध है । २ साहित्य में एक ही पद्य में दो प्रतिकूल रसों की स्थिति । जैसे,—शृंगार और रौद्र की, हास्य और मयानक की, शृंगार और वीभत्स की ।

रसवेधक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सोना ।

रसशार्दूल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का रस ।

विशेष—यह अन्नक, तवि, लोहे, मंसिल, पारे, गधक, सोहागे, जवाखार, हड, और वहेडे आदि के योग से बनता है और उपदश आदि रोगों के लिये उपकारी माना जाता है ।

रसशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रसायन शास्त्र । २ साहित्य में शृंगार, वीर आदि नव रसों पर विवेचनात्मक ग्रन्थ ।

रसशेखर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रस जो पारे और अफीम के योग से बनता है और जो उपदश आदि रोगों के लिये उपकारी माना जाता है ।

रसशोधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पारे को शुद्ध करने की क्रिया । २ सुहागा ।

रससंभव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रससम्भव] रक्त । लहू । खून ।

रससरक्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पारे को शुद्ध करना, मूर्च्छित करना, बाँधना और भस्म करना ये चारों क्रियाएँ ।

रससस्कार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पारे के मूर्च्छन, बधन, मारण आदि अठारह प्रकार के सस्कार । (वैद्यक) ।

रससागर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार सात समुद्रों में से एक ।

विशेष—कहते हैं कि यह प्लक्ष द्वीप में है और ऊँच के रस से भरा है ।

रससाम्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में रोगी की चिकित्सा करने के पहले यह देखना कि शरीर में कौन सा रस अधिक और कौन सा कम है ।

रससार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मधु । शहद । २ जहर । (हि०) ।

रससिद्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रससिद्ध] वैद्यक में एक प्रकार का रस जो पारे और गधक के योग से बनता है । इसे ‘हरगौरी रस’ भी कहते हैं ।

रससिद्ध - वि० [म०] १. रसाभिव्यक्ति करने में कुशल या निष्णात । रसात्मकता — मञ्जा स्त्री० [म० रसात्मक + ता (प्रत्य०)] रसमयता ।

२ रस सिद्ध करने में कुशल [को०] ।

रसस्थान—सञ्ज्ञा पु० [स०] शिगरफ । हिंगुल । हिंगुर ।

रसस्त्राव—सञ्ज्ञा पु० [सं०] अम्लवेत । अमलवेद ।

रसागक - सञ्ज्ञा पु० [स० रसाङ्गक] धूप । सरल का वृक्ष । श्रीवेश्ठ ।

रसाजन—मञ्जा पु० [म० रसाञ्जन] रसौत । रसवत ।

रसाँ—वि० [फा०] पहुँचानेवाला । देनेवाला । जैसे, रोजीरसाँ, चिट्ठी-रसाँ [को०] ।

रसाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १ पृथ्वी । जमीन । २ रासना । ३ पाठा । पाढा । ४ शल्लकी । सलई । ५ कर्गनी नाम का मोटा अन्न । ६ दाख । द्राक्षा । अंगूर । ७ मेदा । ८ शिलारस । लोहवान । ९ आम । १० काकोली । ११. नदी । १२ रसातल । १३ जीभ । रसना । जवान ।

रसाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रस] तरकारी आदि का भोल । शोरवा ।

यौ०—रसेदार = जिसमें रसा या शोरवा हो । शोरवेदार ।

रसाँ—वि० [फा०] पहुँचानेवाला । जिमकी किसी जगह पहुँच हो [को०] ।

रसाइन—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'रसायन' ।

रसाइनीपु—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रसायन + ई (प्रत्य०)] १ रसायन विद्या का जाननेवाला । २ रसायन बनानेवाला । कीमियागर ।

रसाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] पहुँचाने की क्रिया या भाव । पहुँच । जैसे,—आपकी रसाई बहुत दूर दूर तक है ।

रसाखन—सञ्ज्ञा पुं० [स०] मुरगा ।

रसाग्रज—सञ्ज्ञा पुं० [स०] रसांजन । रसौत ।

रसाग्रथ—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १. पारा । २ रसांजन । रसौत ।

रसाहान—सञ्ज्ञा पुं० [स०] भोजन करने पर भी उसके रस का अनुभव न करना । जैसे,—खट्टा या मीठा पदार्थ खाकर भी उमकी खटास या मिठास का अनुभव न करना । (बंदक) ।

रसाह्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अमडा । आभ्रातक ।

रसाह्य—वि० रसपूर्ण । रसाई ।

रसाह्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रास्ता ।

रसातल—सञ्ज्ञा पुं० [स०] पुराणानुसार पृथ्वी के नीचे के सात लोको में से छठा लोक ।

विशेष—सञ्ज्ञा पुं० [स०] कहते हैं, इसकी भूमि पथरीली है और इसमें दैत्य, दानव तथा परिण या परिण नाम के अमुर, इद्र के डर से, निवास करते हैं । विशेष दे० 'पाताल' ।

मुहा०—रसातल में पहुँचाना = मटियामेट कर देना । मिट्टी में मिला देना । बरवाद कर देना ।

रसात्मक - वि० [सं०] १ सरस । रसयुक्त । २ सुंदर । खूबसूरत । ३ सुस्वादु । जायकेदार । ४ तरल । पानीदार । जलवाला । ५ अमृततुल्य । अमृतमय [को०] ।

रसादार—वि० [हिं० रसा + फा० दार (प्रत्य०)] जिममें भोल या शोरवा हो । शोरवेदार । (प्राय तरकारी आदि के मवध में बोलते हैं ।)

रसाधार—सञ्ज्ञा पुं० [म०] सूर्य ।

रसाधिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुहागा ।

रसाधिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] किशमिश ।

रसाध्यक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [म०] प्राचीन काल का एक राजकर्मचारी जो मादक द्रव्यों को जाँच पड़ताल और उनकी बिक्री आदि की व्यवस्था करता था ।

रसाना^१—क्रि० अ० [म० रस] आनंदयुक्त होना । आनंद प्राप्त करना । रसयुक्त वा अनुकूल होना । उ०—भूले अघाने रिमाने रसाने हितू अहितूनि सो स्वच्छ मने हैं ।—भिखारी० ग्र०, भा० २, पृ० ३५ ।

रसाना^२—क्रि० स० आनंद देना । आनंदित करना ।

रसाना^३—क्रि० अ० [हिं० रसना] स्रवित होना । चूना ।

रसाना^४—क्रि० स० दूर करना । टपकाना । बहाना । उ०—रिस रसाइ सरसाइ रस बतिया कहत बनाइ ।—भिखारी ग्र०, भा० १, पृ० २६ ।

रसापति—सञ्ज्ञा पुं० [स०] पृथ्वीपति । राजा ।

रसापायी—सञ्ज्ञा पुं० [स० रसापायिन्] १ वह जो जीभ से पानी पीता हो । २ कुत्ता । श्वान ।

रसापुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [स०] अमर । अलि [को०] ।

रसाभास—मञ्जा पुं० [म०] १ माहित्य में किसी रस की ऐसे स्थान में अवतारणा करना जो उचित या उपयुक्त न हो । किसी रस का अनुचित विषय में अथवा अनुपयुक्त स्थान पर वर्णन । जैसे,—गुरु पर किए हुए क्रोध या गुरुवत्नी से किए हुए प्रेम को लेकर यदि रोद्र या शृ गार रस का वर्णन हो, तो वह विभाव, अनुभाव आदि सामग्रियों से पूर्ण होने पर भी अनौचित्य के कारण रसाभास ही होगा । २ एक प्रकार का अलंकार जिममें उक्त दंग का वर्णन होता है ।

रसामग्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बोल नामक गंधद्रव्य ।

रसामृत—सञ्ज्ञा पुं० [स०] वैद्यक में एक प्रकार का रस ।

विशेष—यह पारे गंधक, शिलाजीत, चदन, गुडुच, धनिया, इंद्रजौ, मुलेठी आदि के प्रयोग में बनाया जाता है और रक्तपित्त तथा ज्वर आदि में उपकारी माना जाता है ।

रसाम्ल—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ अम्लवेतम् । अमलवेद । २ चुक या चुक नाम की खटाई । ३ विपाविल । वृद्धाम्ल ।

रसाम्लक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] एक प्रकार की घाम ।

रसाम्ना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पलाशी नाम की लता ।

रसायक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की घास ।

रसायन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ तक्र। मठा। २ कटि। कमर। ३ विप। जहर। ४ वैद्यक के अनुसार वह औषध जो जरा और व्याधि का नाश करनेवाली हो। वह दवा जिसके खाने से आदमी बुद्धा या बीमार न हो।

विशेष—ऐसी औषधों से शरीर का बल, आँखों की ज्योति और वीर्य आदि बढ़ता है। इनके खाने का विधान युवावस्था के आरम्भ और अंत में है। कुछ प्रसिद्ध रसायनों के नाम इस प्रकार हैं—विडग रसायन, ज्ञाही रसायन, हरीतकी रसायन, नागवला रसायन, आमलक रसायन आदि। प्रत्येक रसायन में कोई एक मुख्य औषधि होती है, और उसके साथ दूसरी अनेक औषधियाँ मिली हुई होती हैं।

५. शब्द। ६. वायुविडग। ७. विडग पदार्थों के तत्वों का ज्ञान। विशेष दे० 'रसायन शास्त्र'। ८. वह कल्पित योग जिसके द्वारा ताँबे से सोना बनना माना जाता है। ९. घातु विद्या, जिसमें घातुओं को भस्म करने या एक घातु को दूसरी घातु में बदल देने आदि की क्रिया का वर्णन रहता है।

रसायनज्ञ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रसायन क्रिया का जाननेवाला। वह जो रसायन विद्या जानता हो।

रसायनफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हरे। हड। हरीतकी।

रसायनवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लहसुन।

रसायनवरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कगनी। २. काकजघा।

रसायनविज्ञान—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसायन + विज्ञान] दे० 'रसायन'।

रसायनशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह शास्त्र जिसमें इस बात का विवेचन हो कि पदार्थों में कौन कौन से तत्व होते हैं और उन तत्वों के परमाणुओं में परिवर्तन होने पर पदार्थों में किस प्रकार का परिवर्तन होता है।

विशेष—इस शास्त्र का मुख्य सिद्धांत यह है कि ससार के सब पदार्थ कुछ मूल द्रव्यों के परमाणुओं से बने हैं। वैज्ञानिकों ने ६४ मूल द्रव्य या मूलभूत माने हैं, जिनमें से धातुएँ (जैसे, सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, सीसा, राँगा, पारा आदि) हैं, कुछ दूसरे खनिज (जैसे—गवक, सखिया, सुरमा आदि) हैं और कुछ वायव्य द्रव्य (जैसे,—आक्सिजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन आदि) हैं। इस शास्त्र के अनुसार यही ६४ मूल द्रव्य सब पदार्थों के मूल उपादान हैं, जिनके परमाणुओं के योग से ससार के सब पदार्थ बने हैं। प्रत्येक मूल द्रव्य में एक ही प्रकार के परमाणु होते हैं, और जब किसी एक प्रकार के परमाणुओं के साथ किसी दूसरे प्रकार के परमाणु मिल जाते हैं, तब उनसे एक नया और तीसरा ही द्रव्य तैयार हो जाता है। जो शास्त्र हमें यह बतलाता है कि कौन चीज किन तत्वों से बनी है और उन तत्वों में परिवर्तन होने का क्या परिणाम होता है, वही रसायन शास्त्र कहलाता है।

रसायनश्रेष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पारा।

रसायनिक—वि० [सं० रसायनिक] दे० 'रसायनिक'।

रसायनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह औषध जो बुढ़ापे को रोकती या दूर करती हो। २ गुडुच। ३. मकोय। काकमाचा। ४ महाकरज। ५. अमृत सर्जनी। गोरखदुद्धी। ६. मास-रोहिणी। ७. मजीठ। ८. कनफोडा नाम की लता। ९. कौंछ। १०. मफेद निमोय। ११. शक्पुष्पी। शखाहुती। १२. कद गिलोय। १३. नाडी।

रसायनी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसायन] रसाइनी। रसायन शास्त्र का जाननेवाला। उ०—राम की रजाय तँ रसायनी समीर-सूनु, उतरि पयोधिपार सोधि सरवाक सो।—तुलसी ग्र०, पृ० १४६।

रसार(उ)—सञ्ज्ञा पुं०, वि० [सं० रसाल] दे० 'रसाल'।

रसाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ आम। २. ऊख। गन्ना। ३. कटहल। ४. कुदुर तृण। ५. गोधूम। गेहूँ। ६. अम्रवेण। ७. शिलारस। लोवान। ८. बोल नामक गन्धद्रव्य। ९. एक प्रकार का मूसा (को०)।

रसाल—वि० [वि० स्त्री० रसाला] १. मधुर। मीठा। २. रसीला। ३. मुदर। मनोहर। ४. म्वादिष्ठ। ५. मार्जित। शुद्ध। ६. रसिया। रसिक। उ०—तासो मुदिता कहत हैं, कवि मतिराम रसाल।—मतिराम (शब्द०)।

रसाल—सञ्ज्ञा पुं० [अ० इरसाल] कर। राजस्व। खिराज। उ०—श्रीनगर नेपाल जुमिला के छिन्तिपाल भेजत रसाल चौर गढ कुही बाज की।—भूपण (शब्द०)। दे० 'रिसाल'।

रसालय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ आम का पेड़। २. वह स्थान जहाँ आमोद प्रमोद किया जाय। ३. वह स्थान जहाँ अनेक प्रकार के रस आदि बन्दते हो। रसशाला।

रसालशर्करा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गन्ने या ऊख के रस से बनाई हुई चीनी।

रसालस—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रसाल] कौतुक। उ०—समुर्कहि सुमति रसाल रसालस रमा रमन के। हरि प्रेरित वह आप आप नाचत बन बन के।—तुलसी मुधाकर (शब्द०)।

रसालसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पीठा। गन्ना। २. गेहूँ। ३. कुदुर नाम की घास। ४. शिरा। चमनी (को०)।

रसाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दही का बना हुआ शरबत। सिखरन। श्रीखड। २. दही मिला हुआ सत्तू। ३. प्राचीन काल की एक प्रकार की चटनी, जो दही, घी, मिर्च, शहद आदि को मिलाकर बनाई जाती थी। ४. दूब। ५. विदारीकंद। ६. दाख। ७. पीठा। ८. जीम।

रसाला—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रिसालह] दे० 'रिसाला'।

रसाला—वि० [सं० रसाल] रसपूर्ण। मधुर। उ०—लगे कहत हरि कथा रसाला।—मानस, १।६०।

रसालाम्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बढिया कलमी आम।

रसालिनी—वि० स्त्री० [सं० रसालिक] १. मधुर। मृदु। २. सरस। उ०—उर लसी सुनुलमी मालिका। हुनसी सुमति रसालिका।—गिरधर (शब्द०)।

रसालिका^१—सञ्ज्ञा स्त्री० १ छोटा आम । अंबिया । २ सतला । सातला ।

रसालियाँ—वि० [हि० रसाल + ह्या] १ रसिक । रसमर्मी । रसभरा । २ दे० 'चूतिया' (लाञ्छ०) ।

रसालिहा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पिठवन ।

रसाली^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसालिन्] १ पौंढा । गन्ना । २ चना ।

रसाली^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पौंढा । गन्ना ।

रसालेजु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पौंढा । गन्ना ।

रसावर रसावल—सञ्ज्ञा सं० [हि० रसियावर] दे० 'रसौर' ।

उ०—जीवन सुरति वटोरि प्रभु नाम रसावर । निरगत कर
'द्विजराज जीवनहि एहि तनु डावर ।—तुलसी मुवाकर (शब्द०) ।

रसाव—सञ्ज्ञा सं० [हि० रसना] १. खेत को जोनकर और पाटे से बराबर करके कई दिनों तक यो ही छोड़ देना । २ रसन की क्रिया या भाव ।

रसावला—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] एक मानिक छद जिसमें दो रगण होता है और दम मात्राएँ (SASSIS) होती हैं । जैसे—(फ) रोस राज भरी । चित्र कोटे मुरी । हृथ्य बथ्य जुरी । जुट्टे सोहै पुरी ।—पृ० रा०, २४।७७ । (ख) रार काहे करो । धीर राध धरो । देवि मोहा तजौ । कंज देहा मजौ ।—छन्द०, पृ० १३४ ।

विशेष—इसे जोहा, विजोहा, विजोहा, विमाहा आदि भी कहते हैं ।

रसावा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रस + आवा (प्रत्य०)] ऊख का कच्चा रस रखने का मिट्टी का बर्तन ।

रसावेष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गधाविरोज ।

रसाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मद्य पीने की क्रिया । शराव पीना ।

रसाशी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसाशिन] वह जो मद्य पीता हो । शराबी ।

रसाश्वासा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पलाशी नाम की लता ।

रसाष्टक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पारा, ईशुर, कातिसार लोहा, सोनामक्खी, रूपामक्खी, वैक्रात मणि और शय इन आठ महारसा का समूह ।

रसास्वादी^१—वि० [सं० रसास्वादिन्] [वि० स्त्री० रसास्वादिनी] १ रस चखनेवाला । स्वाद लेनेवाला । २ आनन्द या मजा लेनेवाला ।

रसास्वादी^२—सञ्ज्ञा पुं० भौरा । अमर ।

रसाह्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गधाविरोज ।

रसाह्वा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. सतावर । २ रास्ना ।

रसआउर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रस + आउर (= चावल)] १ ऊख के रस या गुड़ के शर्बत में पका हुआ चावल । २ एक प्रकार का गीत जो विवाह की एक रीति में गाया जाता है । जब नई बहू व्याह कर आती है, तब वह ऊख के रस या गुड़ के शर्बत में चावल पकाकर अपने पति तथा ससुराल के लोगों को परोसकर खिलाती है । उस समय छियाँ जा गीत गाती हैं, उसे भी

'रसिआउर' कहते हैं । उ०—गवर्हि रसिआउर मब नारी । वज मृदग वीर । तमहारी ।—रघुराज (शब्द०) ।

रसिआवर, रसिआवल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रसिआउर] दे० 'रसिआउर' ।

रसिक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० रसिका, हि० स्त्री० रसिकिनी] १ वह जो रस या स्वाद लेता हो । रस लेनेवाला । २ वह जिसे रस मवधी बातों में विशेष आनन्द आता हो । काव्यमर्मज्ञ । सहृदय । ३ क्रीडा आदि का प्रेमी । आनदी । रसिया । उ०—सुरदास प्रभु रसिक सिरोमनि तुमरी लीला को कहै गाइ ।—सूर०, १०।२६८ । ४ वह जो किसी विषय का अच्छा ज्ञाता हो । मर्मज्ञ । ५ प्रेमी । भक्त । भावुक । सहृदय । ६. सारस पक्षी । ७ घोड़ा । ८ हार्थी । ९ एक प्रकार का छद ।

रसिक^२—वि० १ रस लेनेवाला । सहृदय । २ आनदी । ३ प्रेमी । ४ मर्मज्ञ [को०] ।

रसिकई^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रसिक + हि० ई (प्रत्य०)] दे० 'रसिकता' । उ० - रसिक रसिकई जानि परी । नैननि तै अब न्यारै हूजै तवही तै अति रिसनि भरी ।—सूर०, १०।२५४१ ।

रसिकता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रसिक होने का भाव या धर्म । २ परिहास । हँसी । ठट्टा ।

रसिकत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रसिक होने का भाव या धर्म । रसिकई । रसिकता [को०] ।

रसिकविहारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण का एक नाम ।

रसिकसिरोमनि^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसिक + शिरोमणि] रसिकों में सिरमौर, श्रीकृष्ण ।

रसिका^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दही का शरबत । सिखरन । २ ईख का रस । ३ जीभ । जबान । ४ शरीर में की धातु । रस । ५ रचना पक्षी । ६ करवनी । तागडी (को०) ।

रसिका^२—वि० स्त्री० [सं०] दे० 'रसिक' ।

रसिकाई^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'रसिकता' ।

रसिकाना^(१)—क्रि० अ० [सं० रसिक + आना (प्रत्य०)] आनन्द वा मस्तो से भरा होना । रसिया होना । रसीला होना । उ०—होरी में का बरजोरी करोगे क्यो इतने इतराए । रूप गरव फागुन मदमाते ताहूँ पै अति रसिकाए ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ३७८ ।

रसिकिनी^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रसिक + हि० इनी] रसिक का स्त्री-लिंग । रसिका । दे० 'रसिक—३' । उ०—सुरदास रास रसिक विनु रास रसिकिनी बिरह विकल करि भई है मगन ।—सूर (शब्द०) ।

रसिकेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण का एक नाम ।

रसित^१—वि० [सं०] १ ध्वनि करता हुआ । बोलता हुआ । बजता हुआ । २ बहता हुआ । रसता हुआ । थोड़ा थाड़ा टपकता हुआ । ३ रसयुक्त । ४ जिसके ऊपर मुलम्मा चढ़ा हो ।

रसित^२—सञ्ज्ञा पुं० १, ध्वनि । शब्द । उ०—जपि नव नील पयोद

रसित सुनि हचिर मोर जोरी जनु नाचति ।—तुलसी (जगद०) ।
२ अमूर की शरावो द्राक्षामव ।

रसिया—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसिक, या रस + इया (हिं० प्रत्य०)] १ रस लेनेवाला । रसिक । २ एक प्रकार का गाना जो प्रायः प्रसन्न मन में ब्रज और बुदेलगुप्त आदि में गाया जाता है ।

रसियाव—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रस + इयाव (प्रत्य०)] रसिवावर । गन्ने के रस में पका हुआ चावल । बरीर ।

रसि रसि०—क्रि० वि० [हिं० रस रस] २० 'रस रस' । उ०—
रसि रसि सचे ब्रह्म नियारी ।—पाण्ड०, पृ० ४ ।

रसी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] एक प्रकार की मज्जी जा मिर्हार थी सयुक्त प्रात में बनती है ।

रसी०^२—सञ्ज्ञा [हिं० रस + ई (प्रत्य०)] २० 'रसिक' ।

रसी०^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रस्ता] २० 'रसी' । उ०—गिरा—
पाम भागीरथी गोभा देत जाकी वार तारै थागु का रसना
है ।—भारतेंदु प्र०, भा० १, पृ० २८१ ।

रसी^४—वि० [सं० रसित्] [वि० रसी] १ रसयुक्त । रसवान् ।
२. रागान्वित । अनुरक्त । सहृदय । ३. तन्मय । आदि ।
हचिकर (को०) ।

रसीद—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ़ा० । अ० रसीद] १ किसी चीज के पतन या प्राप्ति होने की क्रिया । प्राप्ति । पहुँच । जैसे,—पारसन मेजा है, उसकी रसीद की इत्तला दीजिएगा ।

मुहा०—रसीद करना = (१) लगाना (धण्ड, मुन्ना आदि) ।
जडना । मारना । जैसे,—यण्ड रसीद कांगा, तीया हो
जाएगा । २. प्रविष्ट करना । घुमेउना । (जाजान्) ।

२ वह जिसपर व्योरेवार यह लिखा ही कि अमुक वस्तु या द्रव्य अमुक व्यक्ति से अमुक कार्य के लिये प्रयुक्त समय पर आया । किसी चीज के पहुँचने या मिलने के प्रमाण रूप में लिखा हुआ पत्र । प्राप्ति का प्रमाणपत्र ।

विशेष—प्रायः जब किसी का कोई चीज या धन श्रेण के रूप में, श्रेण चुकाने के लिये अथवा और किसी मामले के समय में दिया जाता है, तब पानेवाला एक प्रमाणपत्र लिखकर देनेवाले को देता है, जिसमें यदि पानेवाला वहाँ उग चीज या धन की प्राप्ति से इनकार करे, तो उसके विरुद्ध प्रमाण के रूप में वही रसीद उपस्थित की जाय ।

मुहा०—रसीद काटना = किसी की रसीद लिखकर देना ।

क्रि० प्र०—देना ।—पाना ।—लिखना ।—लिखाना, आदि ।

३ पता । खबर । (व०) । जैसे,—तुम तो किसी बात की रसीद ही नहीं देते ।

रसीदा—वि० [फ़ा० रसीदह] पहुँचा हुआ ।

रसीला—वि० [हिं० रसीला] दे० 'रसीला' । उ०—मन रसील के
मुधा स्वल्पा । आमय पीन हीन रस भूषा ।—रघुराज
(शब्द०) ।

रसीला—वि० [हिं० रस + ईला (प्रत्य०)] [वि० रसीला] १ रस में भरा हुआ । रसयुक्त । २ रसिष्ट । मन्दार । ३ रस लेनेवाला । आनन्द लोभात् । ४ गान विलास का प्रकीर्ण । शरणा । ५ गान । शरीला । मुर ।

रसीलापन—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रसीला + पन (प्रत्य०)] रसीला श्रावण नाम का म ।

रसुन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसोन] तटुता । तटुता ।

रसुन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसुन] १ प्रवण । पतन । रसाई । २ रसाई । रसाई । ३ प्रेताशय । रसाई । उ०—
रसाई, रसाई मारा रसाई धपन जना जी का जन
रसुन का ।—गणित, पृ० २०२ ।

रसूम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ रस का मयम । २ नियम । कानून । ३ वरम जाति के राजा के प्रकीर्ण पद्या के अनुसार दिवा जाता है । रसा । रसा । ४ रस वन जो रस के लोह वान रसा रसने में रसनीय दिवा के अनुसार दिवा जाता है ।
या०—रस न प्रसन्नत ।

५ रस वन जो रसनीय लोहा वाना की रसा में नजराने या रस आदि रस में रस जाता है ।

रसूमप्रदालत—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] रस वन की अदालत में कोई मुद्दमा आदि दापर करने के समय कानून के अनुसार रसनीय ध्य के रूप में दिया जाता है । रसनीय । रसा ।

विशेष—भित्त गिनवाता या मुद्दमा की मातृवत के लिये वन का रस वानन के द्वारा निर्वाचित होता है, और मुद्दमा दापर के लिये वानन का उग वान का मरुकार का काम या रसा रसीदना पटा है तथा उग वान पर अपना दादा दापर करना होता है । वानना या रसनीय आदि दिवने के लिये नी रसा प्रकार रसूम प्रदालत लगता है ।

रसूल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] रस जो श्रावण श्रावण ईश्वर का दूत कहता हो और सन्नाधारण में गाया जाता हो । पंगवर । जैसे,—
मुहम्मद तादय मुदा के रसुन थे ।

रसूली—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रसूल + ई (प्रत्य०)] १, एक प्रकार का गूर । २ एक प्रकार का जी । ३ एक प्रकार का काती मिट्टी ।

रसूलो—वि० रसूल लवधी । रसुन का ।

रसेद्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसेन्द्र] १ पारद । पारा । २ राजमाय । लोभिया । ३ एक प्रकार की रसीवध जो जीरा, धनिया, पीपल, गहद, त्रिकुट और रसमिद्र के योग से बनती है । ४ चित्तमणि । रसमणि । पारस पत्थर जिसके स्पर्श से लोहा गोले में परिवर्तित हो जाता है ।

यौ०—रसेद्रवेधक, रसेद्रसजाव = दे० 'रसेद्रवेधक' ।

रसेद्रवेधक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रसेन्द्रवेधक] सोना ।

रसेरवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पारा । २ एक दर्शन का नाम जो छह दर्शनों में नहीं है ।

विशेष—इस दर्शन में पारे को शिव का वीर्य और गधक को पार्वती का रज माना है । इनके १८ सस्कार लिखे हैं और इनके

उपयोग से व्यायाम, जीवनदान और खेचरत्वादि माना है। इनके दर्शन और स्पर्श से महापुरुष बतलाया है और कहा गया है कि शरीर का प्रारोग्य होना परमावश्यक है, क्योंकि शरीर के बिना पुरुषार्थ नहीं हो सकता, और पुरुषार्थ के बिना मोक्ष की प्राप्ति असंभव है।

३ एक रसोपध जो पारे, गन्धक, हरताल और सोने आदि के योग से तैयार होती है।

रसेस (उ०) — सज्ञा पु० [स० रसेश] १. रसिक शिरोमणि, श्रीकृष्ण। २. नमक। लवण। उ०—रुचिर रूप जल मा रसेस है मिल न फिरन की बात चलाई।—तुलसी (शब्द०)।

रसस (उ०) — सज्ञा पु० [स० रसेश्वर, रसेश] पारा।

रसोइया—सज्ञा पु० [हि० रसोई + इया (प्रत्ये)] रसोई बनाने-वाला। भोजन बनानेवाला। रसोईदार। सूपकार।

रसोई, **रसोइ**—सज्ञा स्त्री० [हि० रस + ओई (प्रत्ये)] १. पका हुआ खाद्य पदार्थ। बना हुआ भोजन।

घौं—कच्ची रसोई = दाल, भात, रोटी आदि भोजन जो घी या दूध में नहीं पकते और जो हिंदू लोग चौके के बाहर या किसी दूधरे के हाथ की बनी हुई नहीं खाते। सखरी। **पक्की रसोई** = पूरी, पकवान, खीर आदि घी या दूध में पकी चीजें जो चौके के बाहर और अन्य द्विजा के हाथ की भी खाई जा सकती हैं। निखरी।

मुहा०—**रसोई चढ़ना** = भोजन पकना। खाना बनना। **रसोई तपना** = भोजन पकाना। खाना बनाना। उ०—(क) जो पुरुषार्थ से कहीं संपत्ति मिलति रहीम। पेट लागि बैराट घर तपत रसोई भीम।—रहीम (शब्द०)। उ०—कह गिरवर कवराय आपकी तप रसोई।—गिरधर (शब्द०)।

क्रि० प्र०—करना। जीमना।—पढ़ना।—बनाना, आदि।

२. वह स्थान जहाँ भोजन बनता हो। चौका। पाकशाला।

उ०—जसुमाते चली रसोई भीतर तबहि ग्वाल इक छीकी।

—सूर (शब्द०)।

रसोईखाना—सज्ञा पु० [हि० रसोई + फा० खानह] 'रसोईघर'।

रसोईघर—सज्ञा पु० [हि० रसोई + घर] वह स्थान जहाँ भोजन पकाया जाता हो। खाना बनाने की जगह। पाकशाला। चौका।

रसोईदार—सज्ञा पु० [हि० रसोई + फा० दार (प्रत्ये)] [स्त्री० रसोईदारिन] वह जो रसोई बनाने के काम पर नियुक्त हो। भोजन बनानेवाला। रसोइया।

रसोईदारी—सज्ञा स्त्री० [हि० रसोईदार + ई (प्रत्ये)] १. रसोई करने का काम। भोजन बनाने का काम। २. रसोईदार का पद।

रसोईवरदार—सज्ञा पु० [हि० रसोई + फा० वरदार] भोजन ले जानवाला। भोजनवाहक।

रसोत (उ०) — सज्ञा स्त्री० [म० रसवता] रसनयता। रस उक्तता।

रसोत — सज्ञा स्त्री० [हि०] द० 'रसोत'।

रसोत्तम—सज्ञा पु० [स०] १. दूध। २. दुग्ध। ३. पारा। पारद। ३. मुद्ग। मूग [म०]।

रसादर—सज्ञा पु० [म०] टिगुल। शिगरफ।

रसोद्भव—सज्ञा पु० [स०] १. शिगरफ। ईगुर। एक श्रौपय। २. रसोत। ३. मुक्ता। मातो (श्लो०)।

रसोद्भूत—सज्ञा पु० [स०] रसोत।

रसोन—सज्ञा पु० [स०] लत्सुन।

रसोपल—सज्ञा पु० [स०] मातो।

रसाया—सज्ञा स्त्री० [हि० रसाई] रसोई। भोजन। उ०—भा श्रायसु त्रम राज घर वेगहि करा रसाय।—जायसी (शब्द०)।

रसोत—सज्ञा स्त्री० [हि० रसोत] दे० 'रसोत'।

रसोत—सज्ञा स्त्री० [स० रसाद्भूत] एक प्रकार का प्रसिद्ध श्रौपय।

विशेष—यह दाहहल्दी का जड़ और लकड़ी का पानी में धीटाकर, और उसमें स निकले हुए रस का गाढ़ा करके तैयार की जाती है। इसके लिये पहले दाहहल्दी का काढ़ा तैयार करते हैं तब उसमें उसके जरावर हो गी या बररो का दूध डालकर दोनों का पकाकर बहुत गाढ़ा श्रवलेह तैयार करते हैं। यही श्रवलेह जमकर बाजार में रसोत का नाम से विक्रता है। रसोत कालापन लिए भूरे रंग की हाती है और पानी में सहज में घुल जाती है। इसका स्वाद कड़वा होता है और इसमें से एक विलक्षण गंध निकलता है, जो शरीर की गंध से कुछ मिलती जुलती हाती है। इसका व्यवहार प्रायः आखा पर लगाने और घावों का दिकार दूर करने में होता है। बंधक से यह चरपरी, गरम, रसाया, कज्जा, शातल, तीक्ष्ण, शुक्रजनक, नश्वर के लिये अत्यंत हितकारी तथा कफ, विष, रक्तापत वमन, हिचका, खास और मुत्रराग का दूर करने-वाली मानी गई।

पर्या०—रसगर्भ। ताक्ष्यशल। रसोद्भूत। रसाभज। कृतक। बानभैषज्य। रसरज। अग्निसार। रसनाभि।

रसोती—सज्ञा पु० [स० रसोती] दे० 'रसोती'।

रसोती—सज्ञा स्त्री० [स०] धान की वह बोआई जिममें तेज जोतकर वर्षा होने से पहले ही बीज डाल दिया जाता है।

रसौर—सज्ञा पु० [हि० रस + और < घ्राचर (प्रत्ये)] रमिश्राउर। ऊख के रस में पके हुए चावल।

रसौल—सज्ञा स्त्री० [स०] एक प्रकार की बहुत कठौली लता। एला।

विशेष—यह खीरी और बहराइच के जंगलों में बहुत अधिकता से हाती है और दक्षिण भारत, बंगाल, तथा बरमा में भी पाई जाती है। यह गरमों के दिना में फूलती और जाड़े में फलती है इनकी पत्तियाँ और फलियाँ श्रापधि रूप में भी काम आती हैं और उनसे चमड़ा भी सिंकाया जाता है। इसकी पत्तियाँ खट्टी हाती हैं, इसलिये उनको चटनी भी बनाई जाती है।

रसौली—सञ्ज्ञा स्त्री० [द्वि०] एक प्रकार का रोग जिसमें आँख के ऊपर भ्रंशों के पास बड़ी गिलटी निकल आती है।

रसौहाँ (७)†—वि० [रस + आँहाँ (प्रत्य०)] रसौली। रसयुक्त। रसपूर्या। उ०—भ्राँहि करि मूधी विहसँहै कँ कपोल नैक सौँहै करि लोचन रसौहै नदरताल माँ।—मार्त० ग्र०, पृ० ३५२।

रस्तगार—वि० [फ्रा०] बधनमुक्त। रिहा। उ०—आग्रो अगर जमी पे यहाँ भी वही वहार। दुख सुख मे वद सारे नहीं कोई रस्तगार।—कवीर म०, पृ० २२३।

रस्तगारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा०] मुक्ति। छुटकारा। रिहाई। उ०—रस्तगारी की राह न पाया था।—कवीर म०, पृ० ३७४।

रस्ता—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रास्तह्] दे० 'रास्ता'।

रस्तोगी—सञ्ज्ञा पुं० [द्वि०] वंशयो की एक जाति।

रस्त—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ अश्व। २ द्रव्य। वस्तु। पदार्थ [को०]।

रस्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०, या सं० रस्तना,] जिह्वा। जीम [को०]।

रस्म—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ मेलजाल। वरताव।

यौ०—राह रस्म = मेलजाल। व्यवहार। धनिष्ठा।

२ रिवाज। पारपाटी। चाल। प्रथा। ३ सस्कार [को०]।

रस्मि (७)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रश्मि] दे० 'रश्मि'।

रस्मी—वि० [अ० रस्म + ई] रस्म रिवाज सवधी। रीति वा चलन के अनुसार।

रस्य'—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १. रक्त। खून। लहू। २ शरीर में का मास। ३ एक प्रकार का नमकीन खाद्य [को०]।

रस्य'—वि० रसपूर्या। सुस्वादु। मधुर।

रस्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] १ रास्ता। २ पाठा। पाठी।

रस्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रश्मि प्रा० रस्सी, हिं० रस्सी से पुं० रूप रस्ता] [स्त्री०, अल्पा० रस्ती] १ बहुत मोटी रस्सी जो कई मोटे तारों को एक में बटकर बनाई जाती है।

विशेष—आजकल प्रायः जहाजों आदि के लिये तथा और बड़े बड़े कामों के लिये लोहे के तारों के भी रस्से बनने लगे हैं।

२. जमीन की एक नाप जो ७५ हाथ लंबी और ७५ हाथ चौड़ी होती है। इसी को बीघा कहते हैं। ३. घोड़ों के पैर की एक बीमारी।

रस्सी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रस्ता] १ रुई सन या इसी प्रकार के और रेशों के सूतों या डोरों का एक में बटकर बनाया हुआ लंबा खंड जिसका व्यवहार चीजों को बाँधने, कूर्एँ से पानी खींचने आदि में होता है। डोरी। गुण। रज्जु। २ एक प्रकार की सज्जी।

रस्सीवाट—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रस्सी + वाट] रस्सी बटनेवाला। डोरी बनानेवाला।

रहँकला—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रथ + कला] १. एक प्रकार की हलकी गाड़ी। २. तोप लादने की गाड़ी। उ०—वान रहँकला तोप जंजालें। सहसनि सुतरनाल हथनालें।—लाल (शब्द०)। ३. रहँकले पर लदी हुई छोटी तोप। तिमि घरनाल और करनालें सुतरनाल जजालें। गुरगुराव रहँकले भले तहँ लागे विपुल बपालें।—रघु राज (शब्द०)।

रहँचटा (७)†—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रस + चाट वा रहँचटा] प्रीति की चाह। मनोरथसिद्धि की अभिलाषा। चसका। लिप्सा। दे० 'रहँचटा'। उ०—बनक मढे कोठे चढे छैल छत्रीले स्याम। खरी चौहटे में अरी चढी रहँचटे वाम।—रामसहाय (शब्द०)।

रहँट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० अरघट्ट, प्रा० अरघट्ट] कूर्एँ से पानी निकालने का एक प्रकार का यंत्र। उ०—विरह विपम विप वेलि बढो उर तेइ सुख मकल सुभाय दहे री। सोइ सीचिवे लगी मनसिज के रहँट नैन नित रहत नहे री।—तुलसी (शब्द०)।

विशेष—इसमें कूर्एँ के ऊपर एक ढाँचा रहता है। जिसमें बीचो बीच पहिए के आकार का एक गोल चरखा लगा होता है, जो कूर्एँ के ठीक बीच में रहता है। इस चरखे पर बड़ो आदि की एक बहुत लंबी माला, जिसे 'माल' कहते हैं, टंगी रहती है। यह माला नीचे कूर्एँ के पानी तक लटकती रहती है और इसमें बहुत सी हाँडियाँ या बाल्टियाँ बाँधी रहती हैं। जब बँलों के चक्कर देने से चरखा घूमता है, तब जल से भरी हुई हाँडियाँ या बाल्टियाँ ऊपर आकर उलटती हैं, जिससे उनका पानी एक नाली के द्वारा खेतों में चला जाता है, और खाली हाँडियाँ या बाल्टियाँ नीचे कूर्एँ के पानी में चली जाती और फिर भरकर ऊपर आती हैं। इस प्रकार थोड़े परिश्रम से अधिक पानी निकलता है। पश्चिम में इसकी बहुत चाल है।

रहँटा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रहँठ] सूत कातने का चर्खा। उ०—कहै कवीर सूत भल काता। रहँटा न होय, मुक्ति को दाता।—कवीर (शब्द०)।

रहँटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रहँटा] १ कपास ओटने की चरखी। २ रुपया उधार देने का एक ढग, जिसमें प्रति मास कुछ रुपया बसूल किया जाता है। इसे सयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश) में हुडी कहते हैं।

रहँट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० अरघट्ट, प्रा० अरघट्ट] दे० 'रहँट'। उ०—लागी घरी रहँट्ट की सीचहि अमृत वेलि।—(शब्द०)।

रह'—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० राह] मार्ग। रास्ता। राह। राह का लघु रूप। जैसे,—रहजनी, रहनुमा आदि।

रह (७)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रथ, प्रा० रह] दे० 'रथ'।

रहकला (७)†—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रहँकला] दे० 'रहँकला'। उ०—गुरज सपीलन तोप धरि और रहकला वान। सहर कोट के रद कद, लघु सुत कीन्ह पयान।—प० रासो, पृ० १३७।

रहचटा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रहचटा] दे० 'रहँचटा'।

रहचह (७)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] चिड़ियों का बोलना। चहचहाहट। उ०—सारी सुधा सी रहचह करही। कुरहि परेवा श्री करवरही।—जायसी (शब्द०)।

रहजन—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रहजन] डाकू। बटमार [को०]।

रहजनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० रहजनी] डाकू का कार्य। डकैती। बटमारी [को०]।

रहठा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रहर + ठाठ] अरहर के पौधे के सूखे ढठल। कडिया।

रहठानि(७)—सज्ञा पु० [देय० या हि० रह (= रहन, रहना) + म० स्थान, प्रा० ठाण] रहने का स्थान । उ०—होनि सो मठघी पं अनहोनि जाके बीच भरी, जामे चलि जाइये बनाई रहठानि है ।—धनानन्द, पृ० १२७ ।

रहन—सज्ञा स्त्री० [हि० रहना] १ रहने की क्रिया या भाव ।

यौ०—रहन गहन = २० 'रहन महन' । उ०—रहन गहन उनहूँ नहि पाई । अरथ सुनै सब जग अरुभाई ।—कवीर म०, पृ० ४७० । रहन सहन = चाल ढाल । तीर तरीका ।

२ रहने का ढग । व्यवहार । आचार । उ०—जाकी रहनि कहनि अनमिल, सखि, कहत समुक्ति अति थोरे ।—सूर (शब्द०) ।

रहन सहन—सज्ञा स्त्री० [हि० रहना + सहना] जीवन निर्वाह का ढग । गुजर बसर का तरीका । तीर । चाल ढाल ।

रहना—क्रि० अ० [सं० राज (= विराजना, सुशोभित होना), पु० हि० राजना] १. स्थित होना । अवस्थान करना । ठहरना । जैसे,—अगर कोई यहाँ रहे, तो मैं वहाँ से हो आऊँ । २ स्थान न छोड़ना । प्रस्थान न करना । न जाना । रुकना । धमना ।

मुहा०—रह चकना या जाना = प्रस्थान करने का विचार छोड़ देना । रुक जाना । ठहर जाना । उ०—रहि चलिए सु दर रघुनायक । जो सुत तात बचन पालन रत जननिउ तात मानिवे लायक ।—तुलसी (शब्द०) ।

३ बिना किसी परिवर्तन या गति के एक ही स्थिति में अवस्थान करना । उ०—नीके है छीके छुए ऐमे ही रह नारि ।—विहारी (शब्द०) ।

मुहा०—रहने देना = (१) जिस अवस्था में हो, उसी में छोड़ देना । हस्तक्षेप न करना । (२) जान देना । कुछ ध्यान न देना । रहना जाना = शक्ति या स्थिरतापूर्वक अवस्थान करने में समर्थ होना । सतुष्ट होना । उ०—(क) वृषभ उदर व्रत रहा न जाई ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) अब तो चपला से न रहा गया, वह केतकी का भोटा पकड़ने को दौड़ी ।—देवकीन्दन (शब्द०) । (ग) पिता को आते देख राजकुमार से न रहा गया । वे तुरत आगे बढ़े और निकट पहुँचकर सादर प्रणाम किया ।—देवकीन्दन (शब्द०) ।

विशेष—इस अर्थ में अधिकतर प्रयोग 'नहीं' के साथ होता है ।

४ निवास करना । बसना । जैसे,—आप कई पाँदियो में कलकत्ते में रहते हैं । ५ कुछ दिनों के लिये ठहरना या टिकना । अस्थायी रूप से निवास करना । उ०—एहि नहर रहना दिन चारो ।—जायसी (शब्द०) । ६ किसी काम में ठहरना । कोई काम करना बंद करना । धमना । उ०—रहो रहो, मेरे लिये क्यों परिश्रम करती हो ।—लक्ष्मण (शब्द०) । ७ चलना बंद करना । रुकना । उ०—हाँ, डर ही से तो सिमट समट चलता है रह रहकर ।—प्रतापनारायण (शब्द०) । ८ विद्यमान होना । उपस्थित होना । जैसे,—हमारे रहते कोई ऐसा नहीं कर सकता ।

मुहा०—किमी के रहते = किमी की विद्यमानता में । मौजूदगी में ।

६ चुपचाप समय दिताना । कुछ न करना । उ०—(क) स्याही वारन तें गई मन तें भई न दूर । समुक्ति चतुर चित वात यह रहत बिसुर विमर ।—रत्ननिधि (शब्द०) । (ख) घरम विचारि समुक्ति कुल रहई । सो निकिट निय द्युति मम कइई ।—तुलसी (शब्द०) ।

मुहा०—रह जाना = (१) कुछ कार्रवाई न करना । जैसे,—तुम्हारे खाल में हम रह गए, नहीं तो एक चपत देते । (२) मफल न होना । लाभ न उठा नरना । जैसे,—सब पा गए, तुम रह गए ।

१० नीकरी करना । काम काज करना । उ०—उसने जवाब दिया—मैं मालिन हूँ, यह नहीं कह सकती कि जिसके यहाँ रहती हूँ और ये फूल के गहने किसके वास्ते लिए जाते हैं ।—देवकीन्दन (शब्द०) । ११ स्थित होना । स्थापित होना । जैसे,—दूसरे ही महीने उसे पेट रहा । १२ ममागम करना । मंथन करना । १३ जीवित रहना । जीना । उ०—रहने कौन अचार दुसह दुर्ग पिय विरह भी । कर न राखत न्यार व्यान जखीरा नैन जो ।—रत्ननिधि (शब्द०) । १४, रखेली के रूप में रहना । किमी की रखेली होकर दिन बिताना । १५. वचना । छूट जाना । अवशिष्ट होना । उ०—(क) कीन्हेसि जियन सदा सब चहा । कीन्हेसि मीचु न कोई रहा ।—जायसी (शब्द०) । (ख) और जो बात भगमानी से कहने को रह गई थी, उनको भी उसी भाँति धीरे धीरे उसने उसमें फटा ।—अयोध्या (शब्द०) ।

यौ०—रहा सहा = वचा वचाया । अवशिष्ट । थोड़ा जो बाकी था । जैसे,—तुम्हारे चले जाने से उनका रहा सहा उस्ताह भी जाता रहा ।

मुहा०—(अग आदि का) रह जाना = धक जाना । शिथिल हो जाना । जैसे,—(क) लिखते लिखते हाथ रह गया । (ख) चलते चलते पैर रह गए । रह जाना = (१) पीछे छूट जाना । जैसे,—मेरी छड़ी वहीं रह गई है । (२) अवशिष्ट होना । वच या व्यवहार में वचना । जैसे—मेरे पास यही पुस्तक रह गई है ।

विशेष—अवस्थानसूचक इस क्रिया का प्रयोग बहुत व्यापक है । प्रधान क्रिया के अतिरिक्त यह और क्रियाओं के साथ संयुक्त होकर भी आती है । जैसे,—आ रहा है, जा रहते हैं ।

रहना—सज्ञा पु० घेर, वाघ आदि के रहने का स्थान । वन का वह विभाग जहाँ शेर, चीते आदि के रहने की माँदें हों । इन 'रमना' भी कहते हैं ।

रहनि(७)—सज्ञा स्त्री० [हि० रहना] १ आचरण । चाल डग । रहन । उ०—सोइ विवेक सोइ रहनि प्रभु हमहि उपा करि देहु ।—तुलसी (शब्द०) । २. प्रेम । प्रीति । नगन । उ०—जो पै रहनि राग में नारी । तो नर नर कूतर कूतर मम जाय जियत जग माही ।—तुलसी (शब्द०) ।

रहनी^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रहनि] दे० 'रहनि' ।

यौ०—रहनी गहनी = दे० 'रहन के माथ यों मे' । उ०—रहनी गहना विधि सहित जाके प्राठो आंग ।—अष्टांग०, पृ० ५७ ।

रहनुमा—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] १ पथप्रदर्शक । मार्गदर्शक । २ नेता । अगुवा ।

रहनुमाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा०] राह दिखाने का काम । पथप्रदर्शन ।

रहपटा—सञ्ज्ञा पुं० [?] भापट । धप्पट । उ०—ब्राम पच्छ नव कचन मई । रहपट एक जु ताकी दई ।—नद० ग्र०, पृ० २८३ ।

रहवर—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] मार्ग दिखानेवाला व्यक्ति । पथप्रदर्शक । उ०—रहवर मिलै तो पहुँचै जाई । जिन्हि देखा सो देहि देखाई ।—पत० दरिया, पृ० ३१ ।

रहवरो—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा०] पथप्रदर्शक का कार्य । मार्गदर्शन ।

रहम^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ करुणा । दया । २ अनुकम्पा । अनुग्रह ।

यौ०—रहम दिल = दयालु । कृपालु ।

रहम—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रहम] गर्भाशय ।

रहमत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] दया । मेहरबानी ।

रहमान^१—कि० [अ०] बड़ा दयालु ।

रहमान^२—सञ्ज्ञा पुं० परमात्मा का एक नाम । (मुसल०) ।

रहर, रहरि, रहरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० अरहर] दे० 'अरहर' ।

रहर्ना—सञ्ज्ञा स्त्री० [प० हिं० रिदना (= घसितना)] छोटी देहाती गाड़ी, जिसमें किसान लोग पौम या खाद ढाते हैं ।

रहखुदभाव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रहखुदभाव] १ ससार के फगडो को छोड़कर एकांत स्थान में निवास करना । २ वह जो इस प्रकार ससार को छोड़कर एकांत में निवास करना हो ।

रहरेठा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० अरहर] अरहर के मूखे डठन । कडिया । रहठा ।

रहल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] एक विशेष प्रकार की छोटी चौकी जिसपर पढ़ने के समय पुस्तक रखी जाती है । उ०—रघुनाथ भावते को पानदान भरि घरयो, धरी पोयी आय ल्याय कोक को रहल में ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

विशेष—इसमें दो छोटी छोटी पटरियाँ बीच में डूमरी को काटती हुई लगी रहती हैं और इच्छानुसार खोली या बंद की जा सकती हैं । खुलने पर इनका आकार X हो जाता है ।

रहलू^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रहलू] दे० 'रहलू' ।

रहवाल^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० रहवार] धोड़े की एक चाल ।

रहवाल^२—वि० [हिं० रहना + वाल (प्रत्य०)] रहनेवाला । निवास करनेवाला ।

रहस्य^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गुप्त भेद । छिपी बात । २ आनन्दमय लीला । क्रीडा । खेल । ३ आनन्द । सुख । ४ योग, तंत्र या और किसी संप्रदाय की गुप्त बात । गूढ तरव । मर्म । ५ एकांतता । एकांत स्थान । ६ सत्य (को०) । ७ शोघ्रता । द्रुतता (को०) ।

रहस्य^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रहस्य (= क्रीडा)] आनन्द । आनन्द प्रमोद । उ०—(क) मिले रहस्य भा चाट्य दूना । कित रोइस जा मिले चिहूना ।—जायसी (शब्द०) । (ख) जुवति जूय रनिवास रहस्य बस यहि विधि । देखि देसि सिधराम सकल मन विधि ।—तुलसी (शब्द०) ।

रहस्य^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मयुद्ध । २ स्वर्ग ।

रहसना—कि० अ० [हिं० रहस्य + ना (प्रत्य०)] आनन्दित होना । प्रमत्त होना । उ०—(क) एहि अवतार मगनु परम सुनि रहसेउ रनिवास ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) एहि त्रिवि रहमत दपति हेतु हिए नहि यारे ।—नूर (शब्द०) । (ग) रहसत आय पपीहा मिला ।—जायसी (शब्द०) ।

रहसवधाव—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रहस + यधाई] विवाह की एक रीति जिसमें नवविवाहिता बधू को वर अपने साथ जनवासे में लाता है । वहाँ सब गुरुजन उम नमय बधू का मुख देखते हैं और उसे वस्त्र, भूषणादि उपहार देते हैं ।

रहसाना—कि० अ० [हिं० रहस्य + ना (प्रत्य०)] आनन्दित होना । रहसना । उ०—भोग करत विहर्म रहसाई ।—जायसी (शब्द०) ।

रहसि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रहस्य] गुप्त स्थान । एकांत स्थान । उ०—सुनि बल मोहन बैठ रहसि में कीन्ही कछू विचार ।—सूर (शब्द०) ।

रहसू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] व्यभिचारिणी । पुश्चली । बदचलन औरत ।

रहस्य^४—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह बात जो सबको बतलाई न जा सकती हो । गुप्त भेद । गोप्य विषय । २ भीतर की छिपी हुई बात । मर्म या भेद की बात । ३ वह जिमया तत्व सहज में या सब की समझ में न आ सके । उ०—प्रह रहस्य काहू नहि जाना । दिनमनि चले करत गुन गाना ।—तुलसी (शब्द०) ।

कि० प्र०—सुताना ।

४ एकांत में घटित वृत्त, घटना या वार्ता । ५ हँसी ठट्टा । मजाक । ६ एक उपनिषद् (को०) ।

रहस्य^५—वि० १ सत्रको न बताने योग्य । गायत्रीय । २ जो एकांत में हुआ हो । जो छिपाकर हुआ हो ।

रहस्यत्रय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रामानुज संप्रदाय की तीन क्रीटियाँ जिन्हें ईश्वर, चित् और अचित् कहते हैं ।

रहस्यवाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अव्यक्त के प्रति आत्मनिवेदन का वाद या सिद्धान्त ।

रहस्यवादी—वि० [रहस्यवादिन्] १ रहस्यवाद को माननेवाला । २ रहस्यवाद से संबन्धित या युक्त ।

रहस्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ महाभारत के अनुसार एक प्राचीन नदी का नाम । २ रास्ता । ३ पाठ । पाठ्य ।

रहाइश—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रहना] १ दे० 'रहाई' । २ गुजाइश । समाई ।

रहाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रहना] १. रहने की क्रिया या भाव । २. कल । चैन । आराम । उ०—सीस ते पूँछि लौं गात गर्यो पै इसे विन ताहि परै न रहाई,—(शब्द०) ।

रहाऊँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] गीत का पहला पद । टेक । स्थायी । विशेष—यह शब्द अधिकतर पंजाब में बोला जाता है ।

रहाट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वह जो किसी प्रकार की सलाह देता हो । २. मंत्री । अमात्य । ३. प्रेतात्मा ।

रहाना^७—क्रि० अ० [हि० रहना] १. होना । उ०—(क) भोजन मोर कपोत रहायो । ताको तँ बयो गोद छिपायो ।—विश्राम (शब्द०) । (ख) मंदिर तिनकर जहाँ रहावा । तेहि द्रुम तरे बधिक जब आवा ।—विश्राम (शब्द०) । २. रहना । उ०—नीम कश्वापन ना तजै जल मे सदा रहाय ।—कवीर (शब्द०) ।

रहावनाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रहना + आवन (प्रत्य०)] वह स्थान जहाँ गाँव भर के सब पशु एकत्र होकर खड़े हो । रहुनिया । उ०—कान्ह कुँवर सब सखन सग माल ठाढे जुरे रहावन । देखी तो लौं कुँवरि लाडिली अरु सखियन की आवन ।—हसराज (शब्द०) ।

रहासहा—वि० [हि० रहना + अनु० सहा] [वि० स्त्री० रहीसही] बचा-खुचा । बचा बचाया । जो थोड़ा सा बच रहा हो । उ०—(क) हिंदुओं का दिल रहासहा और भी टूट गया ।—शिव-प्रसाद (शब्द०) । (ख) उसी प्रतापी ब्रिटिश राज्य के अधीन रहकर भारत रहीसही हैसियत भी खो दे ।—बालमुकुंद गुप्त (शब्द०) ।

रहित—वि० [सं०] बिना । बगैर । हीन । जैसे,—(क) आपकी बातें प्रायः अर्थरहित हुआ करती हैं । (ख) वे इन सब दोषों से रहित हैं । (ग) पुरुषार्थ रहित होकर जीवन नहीं बिताना चाहिए ।

रहिला—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] चना । उ०—रहिमन रहिला की भली जो परसै मन लाय । परसत मन मँला करै ऊँ मँदा वहि जाय ।—रहिमन (शब्द०) ।

रहीम^१—वि० [अ०] रहम करनेवाला । कृपालु । दयालु ।

रहीम^२—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. अब्दुल रहीम खाँ खानखानाँ का उपनाम जो वे अपनी कविता में रखते थे । २. ईश्वर का एक नाम । (मुसलमान) ।

रहुनियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रहना + इया (प्रत्य०)] दे० 'रहावन' ।

रहुवाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रहना] किसी दूसरे के यहाँ केवल रोटियों पर रहनेवाला मनुष्य । टुकड़हा । रोटीतोड़ । उ०—कह गिरधर कविराय कहत साहेव स रहुवा । तुम नीचे फल वेले वृक्ष हम ऊँचे महुवा ।—गिरधर (शब्द०) ।

रहुगाण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. अगिरस् गोत्र के अंतर्गत एक शाखा या गण । गीतम ऋषि इसी वंश के थे । २. इस वंश का मनुष्य ।

राकव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राङ्क्व] १. मृगों के रोएँ से बना हुआ कपड़ा आदि । २. पशु । नरम ऊन ।

राडीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राणडीर] राँड की श्रीलाद । एक गाली [को०] ।

राँक—वि० [सं० रङ्क] दे० 'रक' । उ०—राँकनि नाकपरीं करै तुलसी जग जो जुँरै जाँचक जोरो ।—तुलसी (शब्द०) ।

राँकणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रक] एक प्रकार की भूमि जिसमें बहुत कम अन्न पैदा होता है । ऐसी भूमि बहुधा कंकरीली और ऊँची नीची हुआ करती है ।

राँग^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्ग हि० राँगा] दे० 'राँगा' ।

राँगा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रंग] किसी फूल पत्ती आदि को पीसकर निकाला हुआ रस । स्वरस । जैसे—पेम का राँग । तुलसी का राँग ।

राँगाड़ी—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का चावल जो पंजाब में पैदा होता है ।

राँगा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रङ्ग] एक प्रसिद्ध धातु । त्रपु ।

विशेष—यह बहुत नरम और रंग में सफेद होती है । यह पीटकर पत्तर के रूप में को जा सकती है । यह प्रायः कई दूसरे पदार्थों के साथ पहाड़ों की दरारों तथा नदियों के किनारे पाई जाती है । यह भारत में केवल वरमा में मिलती है, और मलाया प्रायद्वीप तथा आस्ट्रेलिया आदि में बहुत मिलती है । यह बहुत साधारण आँच पाकर भी गल जाती है, इसीलिये इसका व्यवहार प्रायः फूल और भरत आदि मिश्रित धातुओं बनाने में होता है । ताँबे के बरतनों पर इसी धातु से कलई की जाती है जिससे इसे कलई भी कहते हैं । वैद्यक में इसे कटु, तिक्त, शीतल, कषाय, लवण रस और मेह, कृमि, पांडु तथा दाह आदि का नाशक, कातिवर्धक और रसायन माना है । इसे शोषकर और भस्म बनाकर अनेक प्रकार के रोगों में देते हैं ।

पर्या०—रग । वग । त्रपु । नाग । त्रपुप । मधुर । हिम । पूतिगध । कुहप्य । स्वर्णज । बुरुपत्री । तमर । नागजीवन । चक्र । स्ववेत ।

राँच^७—अव्य० [हि० रच] दे० 'रच' । उ०—झूठ बोल थिर रहै न राँचा । पढित सोई वेद मत साँचा ।—जायसी (शब्द०) ।

राँचना^७—क्रि० अ० [सं० रञ्जन] १. अनुरक्त होना । प्रेम करना । चाहना । उ०—(क) मन काँचि नाँचि वृथा साँचि राँचे राम ।—विहारी (शब्द०) । (ख) मन जाहि राँचो मिलहि सो वर सहज सुदर साँवरो ।—तुलसी (शब्द०) । २. रंग पकड़ना ।

राँचना^७—क्रि० सं० [सं० रञ्जन] रंग चढ़ाना । रंगना । उ०—जो मजीठ आँटें बहु आँचा । सो रंग जनम न डोलै राँचा ।—जायसी (शब्द०) ।

- रौजना^१—क्रि० अ० [सं० रज्जन] (आँख में) काजल लगाना ।
 रजना^१—क्रि० स० रजित करना । रंगना ।
 रौजना^३—क्रि० स० [हि० रौगा] फूटे हुए वस्त्रन को रंगि से जोड़ना । रंगि से टाँका लगाना ।
 रौटा^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] टिटिहरी चिड़िया । टिटिभ । उ०—भिकली ते रसीली जीली रंटे हू की रट लीली, स्यार तें सवाई भूत-भावनी ते आगरी ।—केशव (शब्द०) ।
 रौटा^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रहँटा] दे० 'रहँटा' ।
 रौटा^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] चोरो की साकेतिक भाषा ।
 रौड़—वि० स्त्री० [सं० रग्डा] १ जिसका पति मर गया हो और पुनर्विवाह न हुआ हो । विधवा । बेवा । २ रडी । वेश्या । कसवी । (क०) ।
 क्रि० प्र०—करना ।—रखना ।
 रौड़—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का चावल जो बगाल में अधिकता से होता है ।
 रौड़ना^१—क्रि० स० [सं० रुदन] विलाप करना । रोना । उ०—कोई आँगुन मन बसा चित्त तें धरा उतार । दाहू पति बिन सुदरी रौड़ि घर घर बार ।—दाहू (शब्द०) ।
 रौध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० परान्त (= दूसरी ओर)] १ निकट । पास । समीप । उ०—(क) अनु रानी हौं रहतेउ रांधा । कैमे रहउ बचा कर बांधा ।—जायसी (शब्द०) । (ख) एहि डर रांध न बैठो मकु साँवरि होइ जाउ ।—जायसी (शब्द०) । २ पडोस । पार्श्व । बगल ।
 यौ०—रौधपडोस, रौधपडोसी ।
 रौधना—क्रि० स० [सं० रन्धन] (भोजन आदि) पकाना । पाक करना । जैसे,—दाल रौधना, चावल रौधना । उ०—दिविध मृगन कर आमिप रांधा ।—तुलसी (शब्द०) ।
 रौधपडोस^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रौध (= पास) + पडोस] पासपास । पडोस । पार्श्व का स्थान । प्रतिवेश ।
 रौपी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] पतली खुरपी के आकार का मोचियों का एक औजार जिससे वे चमड़ा तराशते, काटते और साफ करते हैं । रापी ।
 रौभना—क्रि० अ० [सं० रम्भण] (गाय का) बोलना या चिल्लाना । बँबाना । उ०—(क) तव पृथ्वी दुख पाय धवराय गाय रूप बनाय रौभती रौभती देवलोक मे गई ।—लल्लू (शब्द०) । (ख) तमचुर खगरोर सुनहु बोलत बनराई । रौभति गाँवरिकन मे बछरा हित घाई ।—सूर (शब्द०) ।
 राञ्जा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजा, प्रा० राञ्जा] दे० 'राजा' ।
 राइ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजा, प्रा० राया] छोटा राजा । राय । सरदार । उ०—(क) पउरिहि पउरि सिह गडि फ.डे । डरपाँह राइ देखि तिन्ह ठाडे ।—जायसी (शब्द०) ।
 राइता—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रायता] दे० 'रायता' ।

- राइफल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] घोड़ेदार बंदूक । बटी बंदूक ।
 राइरगा^१—सञ्ज्ञा पुं० ['रा'] दे० 'गामदाना' ।
 राई^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजिका, प्रा० राईआ] १ एक प्रकार की बहुत छोटी मर्गो । २ गृह योडी माथा या पिंगाण ।
 मुहा०—राई भर = बहुत याता । राई भरी बरके = छोटी से छोटी रकम या तौत के हिसाब न । राई नोन उतारना = गजर को हुए बरके पर उतारा करके राई प्रांग नमक को आग में जलना, जिससे नजर के प्रभाव का दूर होना माना जाता है । राई ते पर्वत करना = घोड़ी वात को बहुत बटा देना । उ०—अविगति गति जानी न परै । राई ते पर्वत करि डारै राई मेर तरै ।—सूर (शब्द०) । राई काई रगना = टुकड़े टुकड़े कर डालना । राई राई होना = टुकड़े टुकड़े होना । उ०—प्रजुन ने ऐने पवन वाण मारे कि वादन राई फाई ता यो उठ गए, जसे रूई के पहन पवन के भौंक ते ।—लल्लू (शब्द०) । तेरी आँग मे राई नोन = ईश्वर करे, तेरी धुरी टाठ मुक न लगे । राई से पर्वत करना = छोटी वात को बहुत बटा देना । राई लोन उतारना = "राई नोन उतारना" । उ०—(क) हिन्दुयान्न अरु हिन्दुयान्निपु नठ आदिन जेद नहारयो । गाहि प्रेत वाधा वारन हित राई नोन उतारयो ।—रघुगज (शब्द०) । (ख) कबहू अंग भूषण वनवानति राई लोन उतारि ।—सूर (शब्द०) । (ग) यज्ञमति माय धाय उर लीन्हो राई लोन उतारो ।—सूर (शब्द०) ।
 राई^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राई] राजा होने का भाव । राजापन । राजसी ।
 राई^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजा] १ राजा । २ वह जो सबसे श्रेष्ठ हो । उ०—सुनु मुनि राई, जग मुखदाई । कहि अब सोई, जेहि यश होई ।—केशव (शब्द०) ।
 राउड—वि० [अ०] गोल । बर्तुल । चक्राकार ।
 राउड—सञ्ज्ञा पुं० १ बर्तुलाकर वस्तु । वृत्त । बलय । घेरा । २ चक्र । चक्कर । दौर । फेग । बारी (को०) ।
 राउड टेबुल कान्फरेस—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] वह सभा या सम्मेलन जिसमें एक गोल मेज के चारों ओर राजपक्ष तथा देश के भिन्न भिन्न मतों और दलों के लोग बिना किसी भेदभाव के एक साथ बैठकर किसी महत्व के विषय पर विचार करें । गोनमेज कान्फरेंस ।
 राउ^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजा, प्रा० राय, राव] राजा । नरेश । उ०—राउ तृपित नहिं भो पहिचाना । देखि नुवेप महामुनि जाना ।—तुलसी (शब्द०) ।
 राउता^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज + पुत्र प्रा० राश्रवत] १ राजवंश का कोई व्यक्ति । २ क्षत्रिय । ३ वीर पुरुष । वहादुर । उ०—राउक राउत होत फिरि कं जूके ।—तुलसी (शब्द०) ।
 राउर^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज + पुर प्रा० राय राश्र + उर] राजाश्री के महल का शत पुर । रनवाम । जनानखाना ।

उ०—(क) जब राउर में रघुनाथ गए। वहुधा श्रवलाकत शोभ भए।—केशव (शब्द०)। (ख) भयो तुलाहल श्रवध अति गुनि नृप राउर सोर।—तुलसी (शब्द०)। (ग) गे सुमत तव राउर माही।—तुलसी (शब्द०)।

राउर^१—वि० [हि०] श्रीमान का। आपका। उ०—(क) जो राउर आयसु में पाउं।—तुलसी (शब्द०)। (ख) सब कर हित रख राउर राधे।—तुलसी (शब्द०)।

राउल^७—सज्ञा पुं० [सं० राजकुल] १ राजकुल में उत्पन्न पुरुष।
२ राजा।

राकस^७—सज्ञा पुं० [सं० राक्षस] [स्त्री० राकसिन, राकसिनि] राक्षस। उ०—राकस बस हमे हतने मव। काज कहा तिनसी हमसे श्रव।—केशव (शब्द०)। (ख) राजै कहा रे राकम जानि बूझि बीरासि।—जायसी (शब्द०)।

राकसगद्दा—सज्ञा पुं० [हि० राकस + गद्दा] कदम नाम की बेल और उसकी जड़ जो पजाब, सिंध, गुजरात और लका में पाई जाती है।

विशेष—इसकी जड़ श्रोपधि के काम में आती है। इसके खाने से दस्त और कं होती है। गर्मी के रोगी को इसका रस पिलाया जाता है और गठिया के रोगी की गांठ पर इसका लेप चढ़ाया जाता है।

राकसताल—सज्ञा पुं० [हि० राकस + ताल] तिब्बत में कैलाश के उत्तर और की एक झील का नाम, जिसे रावणहृद और मान-तलाई भी कहते हैं।

राकसपत्ता—सज्ञा पुं० [हि० राकस (= राक्षस) + हि० पत्ता] जंगली कुंवार जिसे कांटल और बबूर भी कहते हैं।

राकसिन, राकसिनि^७—सज्ञा स्त्री० [हि० राकस + इन, इनि (प्रत्य०)] राक्षसी। निशाचरी। उ०—खायो हुतो तुलमी कुरोग रई राकसिनि, केमरीकिसोर राधे वीर बरियाई है।—तुलसी (शब्द०)।

राका—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ पूर्णिमा की रात। २ पूर्णमासी। ३ जुजली का रोग। २ वह स्त्री जिसको पहले पहल रजो-दर्शन हुआ हो। ५ चंद्रमा। (डि०)। ६ खर और मूर्खाखा की माता का नाम। ७ एक नदी (को०)।

राकाचंद्र—सज्ञा पुं० [सं० राकाचंद्र] दे० 'राकापति' (को०)।

राकापति—सज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा। उ०—राकापति पौडम उग्रहि तारा गन समुदाइ।—मानस, ७।७८।

राकीरमण—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'राकापति' (को०)।

राकेश—सज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा।

राक्षस—सज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० राक्षसी] १ निशाचर। दंत्य। असुर। २ कुवेर के धनकाश के रक्षक। ३ कोई दुष्ट प्राणी। ४ साठ सबत्सरो में से उनचासवा नवत। ५ बँचक में एक रस जो पारे और गधक के योग से बनता है।

विशेष—यह रस पेट की वादी दूर करता और भूख बढ़ाता है।

६. एक प्रकार का विवाह जिनमें कन्या के लिये युद्ध करना पड़ता है।

रौ०—राक्षम विवाह = विवाह का एक प्रकार जिमने युद्ध में कन्या का हरण करके विवाह करने है। जैमि,—राण्य रुक्मिणी और पृथ्वीराज सयोगिता का विवाह।

७ ज्योतिष में एक योग का नाम (को०)। ८ तीसवां सुहर्त (को०)। ९ राजा नद का एक अमात्य ब्राह्मण जो कूटनीति का बहत बडा ज्ञाता था।

राक्षसधन—सज्ञा पुं० [सं०] श्रीरामचंद्र का नाम।

राक्षसपति—सज्ञा पुं० [सं० राक्षस + पति] रावण। उ०—मिगरे नरनायक, असुर विनायक राक्षसपति हिय हारि गए।—केशव (शब्द०)।

राक्षसेंद्र—सज्ञा पुं० [सं० राक्षसेन्द्र] रावण (को०)।

राक्षा—सज्ञा स्त्री० [सं०] लान्ना। (अव्युत्पन्न प्रयोग)।

राख—सज्ञा स्त्री० [सं० रक्षा ? या सं० चार > चार (वर्णव्यत्यय से) > राख] किसी विलकुल जले हुए पदार्थ का श्रवणोप। भस्म। खाक। जैसे, कोयले की राख।

राखडी—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का आभूषण (को०)।

राखना^७—क्रि० सं० [सं० रक्षण] १ रक्षा करना। पचाना। उ०—जाको राखे माइयाँ मारि न सकिहै कोइ।—कबीर (शब्द०)। २ मानना। पालन करना। पानना। उ०—जाँ हठ राखे घरम की तेहि राखे करतार।—(शब्द०)। ३ पेड़ या फसल को जानवरों या चिड़ियों के खाने या चाना के लेने से बचाना। रखवाली करना। उ०—चेत खरी राखे खरी खरे उरोजन बाल —बिहारी (शब्द०)। ४ त्रिपाना। कपट करना। उ०—कजु तेहि ते पुनि में नहि राखा। समुझइ खग खग ही की भाखा।—तुलसी (शब्द०)। ५ रोक रखना। जान न देना। ठहराना। उ०—जागवनि का मुनि परम विवेकी। भरडाज राखे पद टेकी।—तुलसी (शब्द०)। ६ आरोग्य करना। बताना। उ०—तहाँ वेद अस कारन राखा। भजन प्रभाव भात बहु भोखा।—तुलसी (शब्द०)। ७ दे० 'रखना'।

राखी—सज्ञा स्त्री० [सं० रक्षा] वह मंगलपुत्र जो बुद्ध विक्रित श्रवणरो पर, विशेषत आदर्शा पूर्णिमा के दिन ब्राह्मण या और लोग अपने यजमानों श्रयवा यात्मीयों के दाहिन हाथ का कलाई पर बाँधते हैं। रक्षावधन का उपा। रक्षा।

राखी—सज्ञा स्त्री० [हि० राख + ई (प्रत्य०)] २० रात।

राग—सज्ञा पुं० [सं०] १. लता इष्ट बन्धु या पुत्र आदि को प्राप्त करने की इच्छा। प्रिय या प्रानत बन्धु का प्राप्त करने की आगलापा। प्रिय या नृपद बन्धु की और प्राप्तय या प्रवृत्ति। नासारिक मुक्तों का चार।

विशेष—पतञ्जल ने इन पांच प्रकार के मोक्षा में से एक प्रकार का क्लेश माना है। उनके मत में जो व्यक्ति मुक्त नंगता है, उसको प्रवृत्ति और अधिक सुख प्राप्त करने की और होती है,

श्रीर इमी प्रवृत्ति का नाम उन्होंने राग रखा है। इसका मूल आवेद्या और परिणाम क्लेश है।

२ क्लेश । कष्ट । पीडा । तकलीफ । ३. मत्सर । ईर्ष्या । द्वेष । ४ अनुराग । प्रेम । प्रीति । उ०—मो जन जगत जहाज है, जाके राग न द्वेष ।- तुलसी (शब्द०) । ५ चदन, कपूर, कस्तूरी आदि से बना हुआ अंग में लगाने का सुगन्धित लेप । अमराग । उ०—कौन करे होरी कोई गोरी नमुभावे कहा, नागरी को राग लाग्यो विप सो विराग सो । कहर सी केवर कपूर लाग्यो काल सम गाज सो गुलाब लाग्यो अरगजा आग सा । —पद्माकर (शब्द०) । ६ एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में १३ अक्षर (र, ज, र, ज और ग) होते हैं । ७. रग, विशेषत लाल रग । जैसे,—लाख आदि का । ८ मन प्रसन्न करने की क्रिया । रजन । ९ राजा । १० सूर्य । ११ चद्रमा । १२ परम लगाने का अलता । १३ संगीत में पडज आदि स्वरो, उनके वर्णों और अंगों से युक्त वह ध्वनि जो किसी विशिष्ट ताल में बँठाई हुई हो और जो मनोरजन के लिये गाई जाती हो । किमी खास धुन में बँठाए हुए स्वर जिनके उच्चारण से गान होता हा ।

विशेष—संगीत शास्त्र के भारतीय आचार्यों ने छह राग माने हैं, परंतु इन रागों के नामों के सबब में बहुत मतभेद है। भरत और हनुमत के मत से ये छह राग इस प्रकार हैं—भैरव, कौशिक (मालकोस), हिंडोल, दीपक, श्री और मेघ । सोमेश्वर और ब्रह्मा के मत से इन छह रागों के नाम इस प्रकार हैं—श्री, वसत, पचम, भैरव, मेघ और नटनागयण । नारद-सहिता का मत है कि मालव, मल्लार, श्री, वसत, हिंडोल और कर्णाट ये छह राग हैं। परंतु आजकल पाय ब्रह्मा और सोमेश्वर का मत ही अधिक प्रचलित है। स्वरभेद से राग तीन प्रकार के कहे गए हैं—(१) सपूर्ण, जिनमें सातों स्वर लगते हैं, (२) पाडव, जिसमें केवल छह स्वर लगते हैं और कोई एक स्वर वजित हो, और (३) ओडव, जिसमें केवल पाँच स्वर लगते हैं और दो स्वर वजित हो। मतग के मत से रागों के ये तीन भेद हैं—(१) शुद्ध, जो शास्त्रीय नियम तथा विधान के अनुसार हैं और जिसमें किसी दूसरे राग की छाया न हो, (२) सालक या छायालग, जिसमें किसी दूसरे राग की छाया भी दिवाई देती हो, अथवा जो दो रागों के योग से बना हो, और (३) सकीर्ण, जो कई रागों के योग से बना हो। सकीर्ण को 'सकर राग' भी कहते हैं। ऊपर जिन छह रागों के नाम बतलाए गए हैं, उनमें से प्रत्येक राग का एक निश्चित सरगम या स्वरक्रम है, उसका एक विशिष्ट स्वरूप माना गया है, उसके लिये एक विशिष्ट ऋतु, समय और पहर आदि निश्चित हैं, उसके लिये कुछ रस नियत हैं, तथा अनेक ऐसी बातें भी कही गई हैं, जिनमें से अधिकांश केवल कल्पित ही हैं। जैसे, माना गया है कि अशुक राग का अशुक दीप या वर्ष पर अधिकार है, उसका अधिपति अशुक ग्रह है, आदि। इसके अतिरिक्त भरत और हनुमत के मत से प्रत्येक राग की पाँच पाँच

रागिनियाँ और सोमेश्वर आदि के मत में छह छह रागिनियाँ हैं। इस अंतिम मत के अनुसार प्रत्येक राग के आठ आठ पुत्र तथा आठ आठ पुत्रधर्मा भी हैं (विशेष दे० 'रागिनी'-४)। यदि वास्तविक दृष्टि से देखा जाय तो राग और रागिनी में कोई अंतर नहीं है। जो कुछ अंतर है, वह केवल कल्पित है। हाँ, रागों में रागिनियों की अपेक्षा कुछ विभेदता और प्रधानता अवश्य होती है और रागिनियाँ उनकी छाया से युक्त जान पड़ती हैं। अतः हम रागिनियों या रागों के अन्वय भेद बह स्वीकृत हैं। इसके सिवा और भी बहुत से राग हैं, जो कई रागों की छाया पर अथवा मेल से बनते हैं और 'सकर राग' कहा जात है। शुद्ध रागों की उत्पत्ति के सबब में लोगों का विश्वास है कि जिन प्रकार श्रीगणेश की वंशों के नात छेदों में से सत स्वर निकले हैं, उन्हीं प्रकार श्रीगणेश जी की १६०८ गोपिकाओं के गाने में १६०८ प्रकार के राग उत्पन्न हुए थे, और उन्हीं में से वचते वचते अंत में केवल छह राग और उनकी ३० या ३६ रागिनियाँ रह गईं। कुछ लोगों का यह भी मत है कि महादेव जी के पांच मुखा में पांच राग (श्री, वसत, भैरव, पचम और मेघ) निकले हैं और पार्वती के मुँह से छठा नटनागयण राग निकला है।

मुहां—अपना राग प्रलापना = अपनी ही बात कहना । अपना ही विचार प्रकट करना, दूसरे की बातों पर ध्यान न देना ।

रागखाडव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रागखाडव] दे० 'रागपाडव' ।

रागखाडव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का खाद्यपदार्थ । दे० 'रागपाडव' ।

रागचूर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । २ खर का पेड़ । ३ लाल । लाह (को०) । ४ अवीर । गुनाल (को०) ।

रागच्छन्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । २ रामचंद्र ।

रागटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] स्फटिक । सित मणि (को०) ।

रागदालि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मसूर (को०) ।

रागद्रव्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रंगन का सामान । रंग (को०) ।

रागदृश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माणिक्य । लाल (को०) ।

रागना (७) । '—क्रि० अ० [सं० राग + हि० ना (प्रत्य०)] १ अनुराग करना । अतुरक्त होना । २ रंग जाना । राजत होना । ३ निमग्न हो जाना । उ०—सोमक स्याम करन रस रागि । —गोपाल (शब्द०) ।

रागना (१) —क्रि० सं० [सं० राग] गाना । अलापना । उ०—(क) या अनुराग की फाग लखो जहँ रागती राग किशोर किशारी ।—पद्माकर (शब्द०) । (ख) पँधी ललित सतलरी पुही प्रेम रंग ताग । मनी विपची काम की रागति पचम राग ।—गुमान (शब्द०) । (ग) गहि कर वीन प्रवीन तिय राग्यो राग मलार ।—विहारी (शब्द०) ।

रागपट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बहुमूल्य पत्थर (को०) ।

रागपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बहुजीव नामक पुष्प या उसका पौधा । गुलदुपहरिया ।

रागपुष्पी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जवा ।

रागप्रसव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रागपुष्प' (को०) ।

रामभजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक विद्याधर का नाम ।
 रामयुज्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानिक । मण्डिपय [को०] ।
 रागरञ्जु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।
 रागलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कामदेव की स्त्री, रति ।
 रागलेखा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लाल रेखा । रग की लकीर ।
 रागविवाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गाली गलौज ।
 रागषाडव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रागषाडव] १, प्राचीन काल का एक प्रकार का खाद्य पदार्थ जो श्रनार पार दाख से बनता था ।
 २ श्रम का सुरञ्चा ।

रागसारा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मैनमिल ।
 रागागा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रागागा] मजाठ ।
 रागा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मडुघा या मकरा नाम का कदन्न [को०] ।
 रागात्मक—वि० [सं०] प्रेम उत्पन्न करने या बढ़ानेवाला [को०] ।
 रागान्वित—वि० [सं०] १ रागयुक्त । जिसे राग या प्रेम हो ।
 २ जिसे क्राध हो ।
 रागारु—सं० [सं०] जो किमी का कुछ देने की आशा बंधाकर भी न दे ।

रागाशानि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वृद्धदेव ।
 रागिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १, विदग्धा स्त्री । २ मैना की बड़ी कन्या का नाम । ३ जयश्री नाम की लक्ष्मी । ४, सगोत म किसी राग की पत्नी या स्त्री । ५ 'राग' ।

विशेष—हनुमत और भरत के मत से प्रत्येक राग की पांच पांच रागिनियाँ और भोमेश्वर मादि के मत से छह छह रागिनियाँ हैं । परन्तु नाधारणत लोके में छह रागो की छत्तीस रागिनियाँ ही मानी जाती हैं । इत अतिम मत के अनुसार प्रत्येक राग की रागिनियाँ इस प्रकार हैं ।

श्रीराग की भाषाएँ या रागिनियाँ—मालव्री, त्रिपुरणी, गौरी, केदारी, मधुमाधवी और पहाड़ी । वमत राग की रागिनियाँ—देशी, देवगिरि, वराटी, टौरिका, ललिता और हिंडाल । पचम राग की रागिनियाँ—विभास, भूपाली, कणाटी, पठहमिना, मालवी, और पटमजरी । भैरव राग की रागिनियाँ—भैरवी, बंगाली, सैधवी, रामकेला, गुर्जरी और गुणकली । मेघ राग की रागिनियाँ—मल्लारी, नैरटी, मावेरी, शौशिकी, गानारी और हृन्मोरी । नटनारायण राग की रागिनियाँ—कामादी, कल्याणी, आभीरी, नाटिका, नारगा और हन्मोरी । अन्य मत से रागो की रागिनियाँ इस प्रकार हैं । भैरव—मधुमादि (मधुमाधवी), भरवी, बंगाली, वराटी और सैधवी । मालवाम—टोली, स्वावती, गौरी, गुणकरी और तनुमा । हिंडाल—विलावती, रामकली, देसाज, पटमजरी और लालत । दीपक—केदारी, करणाटी, देरी टोली, कामासी और नट । आ—वसत, मालवी, मालवी, धनावरी और धनाभी । मेघ—गौडमल्लारी, देसकार, भूपाली, गुर्जरी और श्रीरक । बुध लोगा क मत से रागिनियो के उक्त नामो से मतभेद भी है । इन छत्तीस रागि-

नियों के अतिरिक्त और भी मंडो रागिनियाँ हैं, जो प्राय नई रागो और रागिनिया के मेन से बनती हैं और जिन्हें नवर रागिनी कहन ह ।

रागी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रागी] [सं० रागिन्] १ अनुरागी । प्रेमा । २ मन्त्र या मकरा नामक पदम । ३, छह मात्रा-दाने छश का नाम । ४ अनाक वृक्ष ।
 रागी—वि० १, रंग हुआ । २ नाल । मुर्दा । उ०—मुघर्दा जहाँ वापस वरु रागी ।—देशम (शब्द०) । ३ विषय मानना से फँसा हुआ । विषयानक्त । विराना का उलटा । उ०—पयपावान धन भूमि मति नील, मुघमन पीठि । रागिहि गोठि विसेप धनु, विषय वरगहि माठि ।—तुर्ग (शब्द०) । ४ रंजन करनेवाला । रगनाना ।

रागी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रागी] राजा की पत्नी । रानी । उ०—ती लग मग विभीषण क पर राज इहाँ गढ़ तू पद रागी ।—राम (शब्द०) ।

राघव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रघु के बग में उत्पन्न व्यक्ति । २ श्री रामचंद्र । ३, दशरथ । ४ अज । ५ समुद्र में रहनेवाली एक प्रकार की बहुत बड़ी मछली ।

राचना^१—क्रि० म० [हिं० रचना] रचना । बनाना । उ०—(क) वे चूने जग राचिया माई नूर निनार । तप आखिर के बखत मे किमका कर दिदार ।—बरीर (शब्द०) । (ख) कोटि इद्र छिन ही मे राचि छिन मे कर विनाग । मूर रच्यो उनही को मुरपात मे भूना तेहि श्राम ।—पूर (शब्द०) । (ग) धनि धनि मूरदाभ के स्वामी कदभुत राच्या राम ।—मूर (शब्द०) । (घ) विजद विहगत की वाणी राग राचती सी नाचती तरग एत धानंद बधाई मी ।—पद्याकर (शब्द०) ।

राचना^२—क्रि० अ० रचा जाना । बनना ।

राचना^३—क्रि० अ० [सं० रचन] १, रंगा जाना । रंग पकाना । रजित होना । उ०—प्रेम मानि कहु मुधि न रही अंग रहे स्वाम रंग राची ।—मूर (शब्द०) । (ग) ता रा राच्यो धान वम, कल्या बुटन मलि कूर । जाभ निवोगी क्या लगी, दोगी चागि खबूर ।—विहारी (शब्द०) । (घ) राचा श्रीम हृत्ति हरिच नृण जानन मो विच ज्ञान त्या पुशान सो उर्या । देव स्वामी—(शब्द०) । २, प्रयुक्त राग । प्रेम करना । उ०—(क) पर नारी के राचन तथा नरत जाव । मत ताका छति नही कोटिन कर उपाग ।—बरीर (शब्द०) । (ख) विरचि मन बहार राच्यो आद । ह्यो पुर मुन जतवान पार तक रोप नहि जाद ।—मूर (शब्द०) । (ग) रतिक बरान धारनी का राचत मति भूल । धन मधु नपुरन क हिय गटे न मुहूर फूल ।—विहारी (शब्द०) । ३, लौन रोना । मग होना । होना । उ०—(क) जग जगदा मे राचया भूड हुन की लाज । तन छीने कुन चिन, गढ़ रटे न राम दराज ।—बरीर (शब्द०) । (घ) मधु गुल धन न लपटै वारु रूप

सकल जग राच्यो । विनु देखे विनु ही सुने ठगत न कोऊ वाच्यो ।—मूर (शब्द०) । ४ प्रसन्न होना । उ०—(क) जय जय तिहुँ पुर जयनाल गम उर बरपै सुमन सुर खरे रूप राचही ।—जुनमो (शब्द०) । (ख) प्रमान मान नाचही । अमान मान राचही । समान मान पावही । विमान मान धावही ।—केशव (शब्द०) । ५ शांता देना । भला जान पडना । उ०—आच न चद्रकला विच राचत साँच न चारिन के चरसा मे ।—मंतराम (शब्द०) । ६ प्रभावान्वित होना । सोच मे या चिन्ता मे पटना । उ०—शात उण्या सुख दुख नहिँ मानै हानि भए कहु मोच न राचै । जाइ समाइ मूर वा निवि म बहुरि न उलाट जगत मे नाचै ।—मूर (शब्द०) ।

राष्ट्र—सञ्ज्ञा पु० [सं० रक्ष] १. कारीगरों का श्रौजार । उ०—क्या गुरु कोई घर का राष्ट्र है कि भला मिलो चाहे बुरा, परतु प्राणी को अवश्य बना ही छाडना चाहिए ।—शुद्धाराम (शब्द०) । २ लकड़ी के अदर का पक्का प्रश्न । हीर । ३. जुलाहों के करवे मे एक श्रौजार जिससे ताने का तागा ऊपर नीचे उठता धार गिरता है । कषो ।

विशेष—यह दो नरसलों का होता है जिसके बीच मे ऊपर नीचे तागे बंध होते हैं और जिनके बीच से ताने के तागे एक एक करके निकाल जाते हैं ।

४ बरात । जलूस ।

क्रि० प्र०—निकालना ।—फिराना ।

मुहा०—राष्ट्र धुमाना = विवाह मे वर को पालकी पर चढ़ाकर किसी जलाशय या कूर्ए की परिक्रमा कराना ।

५ चक्की के बीच का छूँटा जिसके चारो ओर ऊपर का पाट फिरता है । ६ लाहार का बडा हथौडा ।

राष्ट्रक्ष—सञ्ज्ञा पु० [सं० राष्ट्रस, हिं० राष्ट्रस] दे० 'राक्षस' ।

राष्ट्रबंधिया—सञ्ज्ञा पु० [हिं० राष्ट्र+बाधना] वह खुलाहा या आदमी जो राष्ट्र बाधने का काम करता हो ।

राष्ट्रस—सञ्ज्ञा पु० [सं० राष्ट्रस] दे० 'राक्षस' ।

राज—सञ्ज्ञा पु० [सं० राज्य] १ देश का अधिकार या प्रबन्ध । प्रजापालन की व्यवस्था । हुकूमत । राज्य । शासन । उ०—(क) सुख सोवें जो राज याके सब । दुख पैहँ सो सकल प्रजा अब ।—सूर (शब्द०) । (ख) खान बलि अली अकबर अद्भुत राज, रावरो है अचल मुपश भीजियतु है ।—गुमान (शब्द०) ।

मुहा०—राज करना = हुकूमत करना । प्रजापालन की व्यवस्था करना । उ०—मोहि चलो वन सग लिए । पुन तुम्हे हम देखि जिए । अबवपुरी मह गाज परै । कै अब राज भरतथ करै ।—केशव (शब्द०) । राज काज = राज्य का प्रबन्ध । राज्य का काम । उ०—(क) राज काज कुपथ कुमाज भोग रोग को है वेद बुधि विद्या वाय विवस बलकही ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) राज काज कछु मन नहिँ घरै । चक्र सुदर्शन रक्षा करै ।—सूर (शब्द०) । राज देना = किसी को किसी देश के शासन का

भार देना । किसी को कही का शासक बनाना । राज गिहासन पर बैठाना । राज्य का अधिकार देना । उ०—दीन्हे मारि असुर हरि ने तब देवन दीन्हो राज । एकन को फगुआ इ द्रासन इक पताल को साज ।—सूर (शब्द०) । राज पर बैठना = राज सिंहासन पर बैठना । राज्याधिकार पाना । उ०—जब से बैठ राज, राजा दशरथ भूमि मे । सुख सोयो सुरराज, ता दिन त सुरलोक मे ।—केशव (शब्द०) । राज भूजना = राज्य का भोग करना । शासन करना । बहुत मुख भोगना । उ०—राजु कि भूजव भगत गुर नृप कि जिईहँ विनु राम ।—मानस, २।४६ । राज रजना = (१) राज्य करना । (२) राजाओं का सा मुख भोगना । बहुत सुख मे रहना । राज रजाना = बहुत सुख देना ।

यौ० = राजपाट = (१) राजसिंहासन । (२) शासन । उ०—सिर पर वरि न चलोगे काऊ अनक जतन करि भाया जारी । राजपाट सिंहासन बैठे नील पदम है सो कहै थोरी ।—(शब्द०) ।

२ उतना भूमिमान जितना एक राजा द्वारा शासित हाता हा । एक राजा द्वारा शासित देश । जनपद । राज्य । उ०—ऋषि राज तज्यो धन धान्य तज्यो सब । नारि तज्यो सुत सोच तज्यो तव ।—केशव (शब्द०) । ३ पूरा अधिकार । खूब चलती । जैसे,—ग्राजकल वाजर भर मे आपका राज है । ४ अधिकार काल । समय । जैसे,—पिताजी के राज मे सारा सुख भोग लिया । ५ देश । जनपद । उ०—एक राज मह प्रगट जहँ है प्रभु केशवदास । तहाँ वमत है रैन दिन मूरतवत विनाश ।—केशव (शब्द०) ।

राज—सञ्ज्ञा पु० [सं० राज्वा राज] १. राजा । २ कोई श्रेष्ठ वस्तु । किसी वर्ग की सर्वश्रेष्ठ वस्तु । ३ वह कारीगर जो ईंटों से दीवार आदि चुनता और मकान बनाता है । थवई । राजगीर ।

राज—वि० श्रेष्ठ । सर्वाच्च । जैसे, मणिराज, ग्रहराज आदि ।

राज—सञ्ज्ञा पु० [प्रा० राज्] रहस्य । भेद । गुप्त बात ।

राजक—वि० [सं०] दीप्तिकारक । चमकनवाला ।

राजक—सञ्ज्ञा पु० १ राजा । २. काला अंगर ।

राजकथा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] इतिहास । तवारीख ।

राजकद्व—सञ्ज्ञा पु० [सं० राजकदम्ब] एक प्रकार का कदव जिमके फल बडे और स्वादिष्ट होते ह ।

राजकन्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ राजा की पुत्री । २. केवड़े का फूल ।

राजकर—सञ्ज्ञा पु० [सं०] वह कर जो प्रजा मे राजा लेता है । राजा को मिलनेवाला महसूल । खिराज ।

राजकरण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. न्यायालय । अदालत । २ राजनीति । जैसे,—राजकरण की बहुत सी महत्वपूर्ण बातें परदे के अदर हुआ करती हैं, और जब तक वे कार्य मे परिणत नहीं होती, तब तक वे बडे यत्न से दबा रखी जाती हैं ।—श्रीकृष्ण सदेश (शब्द०) ।

राजकर्कटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की ककरो ।

राजकर्ण—सञ्ज्ञा पु० [सं०] हाथी की सूँड ।

राजकर्ता—संज्ञा पुं० [म० राज + कर्तृ] जो पुण्य दूमरे को राजमिहामन पर बैठाता है। किसी को राजगद्दी पर यथेच्छ बैठाने और उतारने की शक्ति रखनेवाला पुण्य।

राजकला—संज्ञा स्त्री० [न०] चंद्रमा श्री मोलह कलाश्री में से एक कला का नाम।

राजकलि—संज्ञा पुं० [सं०] दुष्ट राजा। ब्रूर नामक [को०]।

राजकल्प—वि० [सं०] १० 'राजदेगीय'।

राजकेशुक—संज्ञा पुं० [सं०] भद्रमोषा। नागरमोगा।

राजकीय—वि० [न०] राजा या राज्य से संबंध रखनेवाला। राज्य संबंधी। जैसे,—राजकीय घोषणा।

राजकुंभार—संज्ञा पुं० [न० राजकुमार] [स्त्री० राजकुंभारि, राजकुंभारी] राजकुमार। उ०—लख्यो मुनद्रा यह सन्ध्यासी। राजकुंभार कियो भेन उदासी।—मूर (शब्द०)।

राजकुमार—संज्ञा पुं० [न०] [स्त्री० राजकुमारी] राजा का पुत्र।

राजकुल—संज्ञा पुं० [सं०] १ राजाश्री का स्थानदान। राजवश। उ०—गृगराज राजकुल कलम कहैं बानक वृद्ध न जानिए।—केशव (शब्द०)। २ राजसभा। राजदरवार। ३ न्यायसभा। न्यायालय (को०)। ४ राजमहल। प्रामाद। मौष। राजमदन (को०)। ५ राजा का सेवक। शाही नौकर (को०)। ६ स्वामी। मालिक (को०)।

राजकुलक—देश० पुं० [सं०] परवल की लता।

राजकुण्ड—संज्ञा पुं० [म० राजकुण्ड] वैगन।

राजकोल—संज्ञा पुं० [सं०] बड़ा वेर।

राजकोलाहल—संज्ञा पुं० [सं०] सगीत में ताल के साठ मुख्य भेदों में से एक।

राजकोपातक—संज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० राजकोपातकी] एक प्रकार का तनुआ जो बहुत बड़ा होता है। घीया। तराई।

राजक्रोशक—संज्ञा पुं० [सं०] राजा को गाली देने या कोमनेवाला। राजा की अनुचित शब्दों में शालोचना करनेवाला।

विशेष—कौटिल्य ने इसके लिये जीभ उखाड़ने का दण्ड लिखा है।

राजक्षवक—संज्ञा पुं० [सं०] राई।

राजसज्जरी—संज्ञा स्त्री० [सं०] पिउ खजूर।

राजगद्दी—संज्ञा [हि० राज + गद्दी] १ राजमिहामन। राजा के बैठने का प्रासन। २ राज्याभिषेक। राज्यारोहण। ३ राज्याधिकार। उ०—गजा कर्माति पसन हो बोला कि तरे कुल मे राजगद्दी रहेगी।—लखू (पार०)।

राजगवी—संज्ञा स्त्री० [सं०] गाय की जाति का एक पशु।

राजगिरि—संज्ञा पुं० [सं०] १ मगध देश के एक पर्वत का नाम। २ शृंगार। ३ १० 'राजगृह'।

राजगी—संज्ञा स्त्री० [हि० राजा + गी (प्रत्यय०)] राजा का पद।

राजगीर—संज्ञा पुं० [सं० राज + गी] उद्यान बनायेका कागीर। गान। घण्टी।

राजगीरी—संज्ञा स्त्री० [हि० राजगीर + ई (प्रत्य०)] राजगीर का कार्य का पद।

राजगृह—संज्ञा पुं० [सं०] १ राजमहल। राजा का महल। २. एक प्राचीन स्थान का नाम जो शिला के पत्थर के बने हैं।

विशेष—इसे प्राचीन राज में लिखित करते थे। महाभारत के अनुसार यहाँ मगध के राजा भी थे, जिन्होंने राजा के पुत्र राजा पाण और गजा के मगध का पालन पोषण के लिये बनाया था। महाभारत के समय में राजा पाण ही राजा थे। महाभारत में उन पाल पर्वत का नाम वैश्या, वराह, रूपम, श्रुपगिरि और चैत्यक लिखा है। वायुपुराण में इसी पर्वत का नाम वैशा, गिरिद्वज, रत्नकूट, रत्नकूट और शिपुन लिखा है। पौष्पिक के विजुगिर के उत्तर, जो महाभारत में महा चैत्यक कहते थे, अस्त्यती नामक एक पर्वत का पर्वत के पूर्व में नदीन राजगृह बनाया था। राजा की प्रथम राजगीर रहते हैं। यह प्राचीन महाभारत तीर्थकर १० साल के बाद और उनका प्रयाग भवत था। महाभारत युद्ध के समय में वही विजय की राजधानी थी। इन पर्वत पर अपने प्रयाग समय में महाभारत और गौतम बुद्ध ने निवास और उपदेश दिया। राजा बोद्धा का प्रथम मगध वही पर स्थित राजा का, राजा की पर महाभारत में विपिटा का प्रथम महाभारत का। महाभारत और जैनियों के अनेक मंदिर, स्तूप और चैत्यादि हैं। प्राचीन नगर के भग्नावशेष इसमें सब तक देखे जाते हैं। यहाँ अनेक प्राचीन अभिलेख भी मिले हैं। यह स्थान प्रौढा, जैती और शिबुआ का प्रधान तीर्थस्थान है।

राजगोपालाचारी—संज्ञा पुं० [सं०] प्रथम भारतीय गवर्नर जनरल (तन् १९४८-५०)।

राजग्रीव—संज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की मछली।

राजघ—वि० [सं०] राजा की मान्यमाना। राजा की रक्षा करनेवाला।

राजघ—वि० [सं०] तेज।

राजघपक—संज्ञा पुं० [सं० राजघपक] पुनाग का फल। सुन्तला चमड़ा।

राजचित्त—संज्ञा पुं० [सं०] १ मन, चरित्र, भाव। राजा के चित्त। २ राजमंत्र। राजचिह्न।

राजचिह्नक—संज्ञा पुं० [सं०] शिला। डगन।

राजचूडामणि—संज्ञा पुं० [सं० राजचूडामणि] राजा के सिर के लिये से एक। (राजगी)।

राजज्यू—संज्ञा पुं० [सं० राजज्यू] १ राजा का ज्यू। २ पिउ खजूर।

राजजम्ना—संज्ञा पुं० [सं० राजजम्ना] राजधानी का नाम। दिल्ली १० 'स्य' (को०)।

राजजासुन—संज्ञा पुं० [सं० राजा + सुन] राजा की शक्ति का एक प्रमाण या राजकीय प्रमाण का प्रमाण। राजा का और राजसुन के प्रमाण का प्रमाण है। विद्यापति। इति।

विशेष—इसकी छाल पीलापन लिए भूरे रंग की और खुरदुरी होती है। यह गरमी में फूलता और बरसात में फलता है। इसकी पत्तियों का व्यवहार औषध में होता है और फल खाए जाते हैं। इसकी लकड़ी भारत के सामान और पत्ती के प्रचार बनाने के काम में आती है।

राजजीरक—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का जीरा।

राजत^१—वि० [सं०] रजत का बना हुआ। चाँदी का।

राजत^२—सज्ञा पुं० रजत। चाँदी।

राजतरंगिणी—सज्ञा स्त्री० [सं० राजतरङ्गिणी] कल्हण उक्त काश्मीर का एक प्रसिद्ध इतिहास का ग्रन्थ जो मगध में है और जिनमें पीछे कई पद्यों ने वृत्तान्त बढ़ाए। इसकी रचना ग्रन्थ तक होती जाती है।

राजतरु—सज्ञा पुं० [सं०] कश्मिर का वृक्ष। ननियारी। २. आरम्बध। अमलतास।

राजतरुणी—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का बुज्जक या सफेद गुलाब जिसका फूल सेवती से बड़ा होता है। बड़ा सेवती।

विशेष—इसकी लता टट्टियों पर चढ़ाई जाती है। फूलों की गंध मध और मीठी होती है। वैद्यक में इसका कफनाशक, हृद्य और चाक्षुष्य माना है और इसका स्वाद कर्षण लिखा गया है।

पर्याय—महासदा। वर्णपुष्प। श्रमन्तान। श्रमलातक। मुवर्ण पुष्प।

राजता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ राजा होने का भाव। २ राजा का पद।

राजताल—सज्ञा पुं० [सं०] सुपारी का पेड़।

राजतिमिश—सज्ञा पुं० [सं०] तरबूज।

राजतिलक—सज्ञा पुं० [हिं० राज + तिलक] १, राजतिहासन पर किमी नए राजा के बैठने की रीति। राज्याभिषेक। २—नृपति युधिष्ठिर राजतिलक दे मारि द्रुष्ट की भीर। द्रोण वर्ण श्रु शल्य मुक्त करि मेटी जग की पीर।—मूर (शब्द०)। २ नए राजा के गद्दी पर बैठने का उत्सव।

राजतेमिष—सज्ञा पुं० [सं०] राजतिमिश। तरबूज।

राजत्व—सज्ञा पुं० [सं०] १ राजा का भाव वा कर्म। २ राजा का पद।

राजदण्ड—सज्ञा पुं० [सं० राजदण्ड] १ राजशासन। २ वह दण्ड जिसका विधान राजा के शासन के अनुसार हो। वह दण्ड जो राजा की आज्ञा के अनुसार दिया जाय।

राजदत्त—सज्ञा पुं० [सं० राजदन्त] दाँतों की पक्ति के बीच का वह दाँत जो और दाँतों से बड़ा और चौड़ा होता है। चौका।

विशेष—ऐसे दाँत ऊपर और नीचे की पक्तियों के बीच में होते हैं। कोई कोई ऊपर की पक्ति में सामने के दो बड़े दाँतों को भी राजदन्त मानते हैं, पर अन्य लोग दोनों पक्तियों में बीच के दो दो दाँतों को राजदन्त कहते हैं।

राजदूत—सज्ञा पुं० [सं०] वह पुरुष जो एक राज्य की ओर से किसी अन्य राज्य में भाव वा मित्र संबंधी अथवा अन्य ऐतिस्यिक कार्य समाप्त करने के लिए या किसी प्रकार का पैसा उधार लेना जाता है।

विशेष—पाण्डुपुत्र या पांडवों, पांडु, भीम, परशुमह, युधिष्ठिर तथा राजकुमार युवराज राजदूत नियत करना चाहिए। प्राचीन राज में आरम्भिक पद्यों पर ही राजदूत एक राज्य में दूसरे राज्य में भेजे जाते थे, पर परिणामी राजा में यह प्रथा है कि जिस राज्या में राजदूत परस्पर परस्पर के राजदूत रहते हैं और उन्हीं के द्वारा गारा धारा नगरीयों होता है। दो राज्यों के बीच युद्ध छिड़ने पर दाना एवं इन्हीं राजदूतों के अन्तर्गत राजदूत युद्ध होते हैं।

राजदूर्वा—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की चार निम्नो पत्तियों, फाट आदि स्तूल प्राण में होती है।

राजद्वपद्—सज्ञा स्त्री० [सं०] जौता। चारी।

राजदेशेय—सज्ञा पुं० [सं०] राजा में गुण ही राज। राजा के वृत्त। राजद्वय।

राजद्रुम—सज्ञा पुं० [सं०] शासक। समन्तान।

राजद्रोह—सज्ञा पुं० [सं०] राजा या राज्य के प्रति किया हुआ द्राह। वह द्रव्य जिसमें राजा या राज्य के राजा या अन्वित की संभावना हो। नगावन। जैन,—प्रजा या नरा को राजा या राज्य में लाने के लिये उद्योग।

राजद्रोही—वि० [सं० राजद्रोहिन्] राजद्रोह करनेवाला। वागी।

राजद्वार—सज्ञा पुं० [सं०] १ राजा का द्वार। राजा की हजारी। २ विचारालय। यायालय।

राजद्वारिक—सज्ञा पुं० [सं०] राजा का शरणाग। प्रतिहार। गै०।

राजधर्म^(१)—सज्ञा पुं० [सं० राजधर्म] राजा का कर्तव्य वा धर्म। राजधर्म। २—राजधर्म सर्वत्र एतन्मोर्षे। जिमि मन माह मनोरथ मोर्षे।—मानस, २।३।५।

राजधर्तुरक—सज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का धतूरा जिसके फूल लई आकृति के होते हैं। २ दन्त धतूरा।

राजधर्म—सज्ञा पुं० [सं०] १ राजा का कर्तव्य वा धर्म। जैसे,—प्रजा का पालन, शत्रु से देश की रक्षा, लूटपाट या उपद्रव आदि का निवारण। २ महाभारत के पातिपर्व के एक अध्याय का नाम जिसमें राजा के कर्तव्य का वर्णन है।

राजधर्मा—सज्ञा पुं० [सं० राजधन्मन्] महाभारत के अनुसार काश्यप के एक पुत्र का नाम जो सारमों का राजा था।

राजधानी—सज्ञा स्त्री० [सं०] वह प्रधान नगर जहाँ किसी देश का राजा या शासक रहता हो। किसी प्रदेश का वह नगर जहाँ उस देश के शासन का केंद्र हो। जैसे,—भारत की राजधानी दिल्ली, रूस की राजधानी मास्को, इंग्लैंड की राजधानी लंदन।

पर्याय—राजधान। राजधानक। राजधानिका, आदि।

राजधान्य—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का धान जिसे श्यामा धान भी कहते हैं। साँवा धान।

राजधुर, राजधुरा—सज्ञा स्त्री० [सं०] राज्य का भार। शासन की जिम्मेदारी [को०]।

राजधुस्तूरक—सज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का घतूरा जिसके फूल बड़े और कई आवरण के होते हैं।

पर्या०—राजधूर्त। महाशठ। निस्त्रेण पुष्पक। भ्रात। राजस्वर्ण।
२ कनक घतूरा। पीला घतूरा जो सोने की तरह दिपता है।

राजनय—सज्ञा पुं० [सं०] राजनीति।

राजना(५)—क्रि० अ० [सं० राजन (= शोभित होना)] १, विराजना। उपस्थित होना। रहना। उ०—(क) कीन्हीं केलि बहुत बल मोहन भुव को भार उतारेउ। प्रगट ब्रह्म राजत द्वारावति वेद पुरान उचारेउ।—सूर (शब्द०)। (ख) मंदिर महँ सब राजहि रानी। सोमा शील तेज की खानी।—तुलसी (शब्द०)। (ग) पुरुजित अरु पुरुमित्र महीप। राज्यो रन रथ जोरि समीप।—गोपाल (शब्द०)। २ शोभित होना। मोहना। उ०—(क) आय जगदीश्वर ह्वँ जग मे विराजमान, हौँ हू तो कवीश्वर ह्वँ राजर्त रहत हौँ।—पद्माकर (शब्द०)। (ख) बहु राजत है गजराज बड़े। नभ आडत बिद्ध मना उमडे।—गुमान (शब्द०)। (ग) वा दिन भाजे मुखन की, तुम नासी मुसुकाइ। ते राजे यह सुनि उठी, सुमना सी बिकसाइ।—शृ० सं० (शब्द०)।

राजनामा—सज्ञा पुं० [सं० राजनामन्] पटोल। परवल।

राजनीति—सज्ञा स्त्री० [सं०] वह नीति जिसका अवलंबन कर राजा अपने राज्य की रक्षा और शासन दृढ़ करता है।

विशेष—इसके प्रधान दो भेद हैं—एक तत्र और दूसरा आवाय। वह नीति जिसके द्वारा अपने राज्य में सुप्रबध और शांति स्थापित की जाय, तत्र नीति कहलाती है, और जिसके द्वारा परराष्ट्रो से सबब दृढ़ किया जाय, वह आवाय कहलाती है। स्वराज्य में प्रजा का समाचार और उनकी गति का पता देने के लिये राजा को चर से काम लेना पडना है, और परराष्ट्रो में स्वराष्ट्र के स्वस्व, वाणिज्य व्यापारादि की रक्षा तथा उनकी गतियों का पता देने के लिये दूत रहते हैं। इन दूतों और चरो से राजा स्वराष्ट्र और परराष्ट्र की गति, चेष्टा आदि का पता लगाकर अपनी शक्ति और स्वत्व की समुचित रक्षा करता है। प्राचीन ग्रंथों में आवाय के छह मुख्य भेद किए गए हैं, जिनको पङ्गुण भी कहते हैं। उनके नाम ये हैं—सधि, विग्रह, यान, आसन, द्वेषीकरण और सश्रय। ये षड्नीति के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। राजनीति के चार और अंग कहे गए हैं—साम, दान, दंड और भेद।

राजनीतिक—वि० [सं०] राजनीति संबंधी। जैसे,—राजनीतिक आदालत, राजनीतिक समा १

राजनील—सज्ञा पुं० [सं०] मरकत मणि। पन्ना।

राजन्य—सज्ञा पुं० [सं०] १ क्षत्रिय। २. अग्नि। ३. खिरनी का पेड़। ४ राजा।

राजन्यबंधु—सज्ञा पुं० [राजन्यबन्धु] क्षत्रिय।

राजन्या—सज्ञा स्त्री० [सं०] राजकुल की महिला [को०]।

राजपखी(५)—सज्ञा पुं० [सं० राज + हिं० पखी] राजहंस। उ०—पाँचवँ नग सो तहाँ लागना। राजपखि पेखा गरजना।—जायसी (शब्द०)।

राजपथ(५)—सज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'राजपथ'। उ०—सुनु ऊधो! निर्गुन कटक तँ राजपथ क्यों लूँघो?—सूर (शब्द०)।

राजपटोल—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पटोल या परवल।

विशेष—इसके फल बड़े होते हैं। फागुन चैत के महीनों में इसकी डालियाँ काटकर खेतों में दो दो हाथ की दूरी पर पत्तियों में नाली खोदकर लगाई जाती हैं और उनमें पानी दिया जाता है। यह बँसाख जेठ से फूलने लगता है और इसकी फसल वर्षा ऋतु के मध्य तक रहती है। फल देखने में लंबे, बड़े और खाने में कुछ कम स्वादिष्ट होते हैं। इसे प्रति वर्ष खेतों में लगाने की आवश्यकता होती है। विहार प्रांत में इसकी खेती अधिक होती है। इसे पूरबी या पटने का (पटनहिया) परवल भी कहते हैं।

राजपट्ट—सज्ञा पुं० [सं०] १. चुबक पत्थर। २ एक साधारण रत्न [को०]।

राजपट्टिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] चातक पत्तों।

राजपति—सज्ञा पुं० [सं०] राजाओं का राजा। सम्राट्।

राजपत्नी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ राजा की स्त्री। रानी। २ पीतल नाम की एक प्रसिद्ध धातु।

राजपथ—सज्ञा पुं० [सं०] वह चौड़ा मार्ग जिसपर हाथी, घोड़े, रथ आदि सुगमता से चल सकते हो। राजमार्ग। बड़ी सड़क।

राजपद्धति—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. राजपथ। २ राजनीति।

राजपर्णा—सज्ञा स्त्री० [सं०] प्रसारिणी नाम की लता।

राजपलाडु—सज्ञा पुं० [सं० राजपलाहडु] लाल प्याज। विशेष दे० 'प्याज'।

राजपाल—सज्ञा पुं० [सं०] १. वह जिससे राजा या राज्य की रक्षा हो। जैसे,—सेना आदि। २ दे० 'राज्यपाल'। गवर्नर।

राजपिंड—सज्ञा पुं० [सं० राजपिण्ड] राज्य द्वारा प्राप्त होनेवाला गुजारा [को०]।

राजपीलु—सज्ञा पुं० [सं०] महापीलु नाम का वृक्ष।

राजपुत्र—सज्ञा पुं० [सं०] १ राजा का पुत्र। राजकुमार। २ एक वर्णसंकर जाति का नाम। पुराणों में इस जाति को उत्पत्ति क्षत्रिय पिता और कर्ण माता से लिखी है। ३ बड़े ग्राम का एक भेद। ४ बुध ग्रह। ५ राजपूत क्षत्रिय [को०]। ६ राज्य की ओर से मिला हुआ एक पद या उपाधि। सरदार। नायक।

विशेष—गुप्तों के समय में यह पद घुमवारों के नायक को दिया जाता था। हिंदी का 'रावत' या 'राजत' शब्द इसी से बना है।

राजपुत्रक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० राजपुत्रिका] १ राजकुमार। २ दे० 'राजपुत्र'।

राजपुत्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह (स्त्री) जिसका पुत्र राजा हो। राजा की माता। राजमाता।

राजपुत्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. राजकन्या। २ सफेद छुट्टी। ३ शरारि नामक पक्षी। ४ पीतल।

राजपुत्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कडवा कदू। कटुतुवी। २ रेणुका। ३ जाती। जूही का फूल। ४ छद्मदर। ५ मानती। ६ राजकन्या। ७ एक घातु। पीतल (को०)।

राजपुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजधानी (को०)।

राजपुरूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राज्य का कोई अफसर या कार्यकर्ता। राजकर्मचारी।

राजपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नागकेसर का पेड़। २, कनकचपा।

राजपुष्पी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वनमल्लिका। २ जाती पुष्प। ३, कछरी का फूल जो कोकण में होता है।

राजपूरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पूग वा सुपारी का वृक्ष (को०)।

राजपूजित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वे श्रेष्ठ ब्राह्मण जिनका सत्कार राज्य की ओर से होता है और जो जीविका आदि के लिये प्रजावर्ग के आश्रित न हों। २ वह जो राजा द्वारा समाहृत हो (को०)।

राजपूज्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सोना।

राजपूत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजपुत्र] १ दे० 'राजपुत्र'। २ राजपूताने में रहनेवाले क्षत्रियों के कुछ विशिष्ट वंश जो सब मिलाकर एक बड़ी जाति के रूप में माने जाते हैं।

विशेष—'राजपूत' शब्द वास्तव में 'राजपुत्र' शब्द का अपभ्रंश है और इस देश में मुसलमानों के आने के पश्चात् प्रचलित हुआ है। प्राचीन काल में राजकुमार अथवा राजवंश के लोग 'राजपुत्र' कहलाते थे, इसीलिये क्षत्रिय वर्ग के सब लोगों को मुसलमान लोग राजपूत कहने लगे थे। अब यह शब्द राजपूताने में रहनेवाले क्षत्रियों की एक जाति का ही सूचक हो गया है। पहले कुछ पाश्चात्य विद्वान् कहा करते थे कि 'राजपूत' लोग शक आदि विदेशी जातियों की सतान हैं और वे क्षत्रिय तथा आर्य नहीं हैं। परंतु अब यह बात प्रमाणित हो गई है कि राजपूत लोग क्षत्रिय तथा आर्य हैं। यह ठीक है कि कुछ जंगली जातियों के समान हूण आदि कुछ विदेशी जातियाँ भी राजपूतों में मिल गई हैं। 'ही शक' की बात, सो वे भी आर्य ही थे, यद्यपि भारत के बाहर बसने थे। उनका मेल ईरानी आर्यों के साथ अधिक था। चौहान, सोलंकी, प्रतिहार, परमार, सिसोदिया आदि राजपूतों के प्रसिद्ध कुल हैं। ये लोग प्राचीन काल से बहुत ही वीर, योद्धा, देशभक्त तथा स्वामिभक्त होते आए हैं।

राजपूताना—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राजपूत] राजस्थान नामक प्रदेश जो भारत के पश्चिम में और पंजाब के दक्षिणी भाग में है। जयपुर, जोधपुर, बीकानेर आदि राज्य इसी के अंतर्गत हैं।

राजप्रवृत्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजपुरुष। राजा का अमान्य।

राजप्रमुख—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज + प्रमुख] राज्यमघ का प्रधान।

राजपासाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा का महल। राजमहल।

राजप्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजपलाडु। २ कछरी का फूल जो कोकण में उत्पन्न होता है।

राजप्रिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दे० 'राजप्रिय'। २ एक प्रकार का घान जो लाल रंग का होता है और जिसका चावल सफेद तथा स्वादिष्ट होता है। तिलवासिनी।

राजप्रेष्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा या राज्य का नौकर। राजकर्मचारी।

राजफट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज + फट्ट] शासन का भार। राज्य का मुख। राज्य का बंधन। राज्यभार। उ०—देखो कलि मंद में भरथरी श्री गोपीचंद छांडि राजफट्ट बनि जोगी बन जात मे।—दीन० ग०, पृ० १७२।

राजफणिकक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की नारंगी।

राजफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पटोल। परवल। २ बड़ा आम। ३ खिरनी।

राजफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजजवू। जामुन।

राजफल्यु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] काकोदु बर। कडूमर। कठगूलर।

राजवदी—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] राजनीतिक वदी। वह वदी जो राजद्रोह आदि के अपराध में पकड़ा गया हो।

राजवदर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पैवदी या पेउदी वर। २ रक्तामलक। लाल आंवला। ३ लवण। नमक।

राजवरन^(पु)—वि० [हिं० राज + वर्ण] राजा के समान तेजस्वी। राजा की कातिवाला। उ०—राजवरन श्री लवी दहा।—कवीर मा०, पृ० १६०६।

राजवला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्रसारिणी लता।

राजवाडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजवाटिका] १ राजा की वाटिका वा उद्यान। २ राजभवन। राजमहल।

राजवाहा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राज + वहना] प्रधान या बड़ी नहर जिससे अनेक छोटी छोटी नहरें खेतों के लिये निकाली जाती हैं।

राजवीजी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजवीजीन्] दे० राजवीजी'।

राजभटार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजभण्डार] राज्य या राजा का खजाना। राजकोश।

राजभक्त—वि० [सं०] जिसमें राजा या राज्य के प्रति भक्ति हो। राजा का भक्त।

राजभक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजा या राज्य के प्रति भक्ति या प्रेम।

राजभट्टिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का जलपक्षी । गोभटीर । पकरीट । हायुत्री ।

राजभद्रक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ फरहद का पेड़ । पारिद्रक । २ नीम । निव । ३ कुडा । कुष्ठ । ४ कुदर । ५ मफेद आक ।

राजभवन सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजप्रासाद । राजा का महल । २ राजधानी में राज्य का वह भवन जहाँ राज्यपाल या उप-राज्यपाल रहते हैं ।

राजभाषा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राज + भाषा] वह भाषा जो सरकारी काम काज तथा न्यायालय के लिये स्वीकृत हो । राष्ट्रभाषा ।

राजभूय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजत्व । राज्य ।

राजभृत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा का सैनिक वा वेतनभोगी भृत्य ।

राजभृत्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजसेवक या राजमन्त्री । २ सरकारी अथवा जनता का प्रशासक [को०] ।

राजभोग - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का महीन वान जो अग्रहन में होता है । २—राजभोग और रानी काजर । भाति भाति के सीके चावर ।—जायमी (शब्द०) । २ राजा का भोजन । राजकीय भोजन (को०) । ३ एक प्रकार का आम ।

राजभोग्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जावत्री । २ पयार । चिरांजी । ३ एक प्रकार का धान । राजभोग ।

राजमडल सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजमण्डल] ऐसे राजाओं का राज्य जो किसी राज्य के आस पास हो । किसी राज्य के आस पास या चारों ओर के राज्य ।

विशेष—तीतिशास्त्र में बारह प्रकार के राजमडल माने गए हैं—अरि, मित्र, उदासीन, विजिगीषु, पार्ष्णिग्राह, आक्रद, विजिगीषु का पुर मर और पश्चाद्वर्ती, पार्ष्णिग्रहसार, आक्रदसार, अरिसम, मित्रसम और मध्यम ।

राजमडूक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजमडूक] एक प्रकार का मेढक जो बहुत बड़ा होता है ।

पर्या—महामडूक । पीताम्ब । वर्षाघोष । महोद्व ।

राजमन्त्रधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजमन्त्रधर] दे० 'राजमन्त्री' [को०] ।

राजमन्त्री—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज मन्त्रन्] राजा का मन्त्री । अमात्य । सचिव [को०] ।

राजमंदिर(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजमन्दिर] राजमहल । प्रसाद । उ०—तेहि पर ससि जो कचपचिन्ह भरा । राजमंदिर सोनें नग जरा ।—जायसी ग्रं० (गुप्त), पृ० २ ६ ।

राजमराल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजहम ।

राजमहल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राजा + महल] १ राजा का महल । राजप्रासाद । २ एक पर्वत का नाम जो बंगाल में सधाल परगने के पास है ।

विशेष—यह पर्वतमाला समुद्र से दो हजार फुट ऊँची है । यहाँ मुगल साम्राज्य काल के वन अनेक प्रासाद, मसजिदें, नवन आदि विद्यमान हैं ।

राजमहिषी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पटरानी । प्रधान रानी [को०] ।

राजमाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजमातृ] वह स्त्री जिसका पुत्र राजा हो । राजा की माता । उ०—मझनी माँ ने क्या समझा था कि मैं राजमाता हूँगी ।—पंचवटी, पृ० ७ ।

राजमात्र—वि० [सं०] जो नाम मात्र का राजा हो ।

राजमान—वि० [सं०] दीप्त । चमकता हुआ । गोभित [को०] ।

राजमार्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजपथ । चौड़ी सड़क ।

राजमाप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बड़ा उरद जो नीले या काले रंग का होता है ।

विशेष वैद्यक में इसे रुचिकर, रुच, लघु, वातकारक और बल तथा शुक्र बढ़ानेवाला लिखा है । विशेष दे० 'उरद' ।

पर्या—नीलमाप । नृपमाप ।

राजमाष्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह खेत जिसमें माप बोया जाता हो । मसार ।

राजमुद्गा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का भूंग । यह मुनहले रंग का होता है और खाने में अधिक स्वादिष्ट होता है ।

राजमुद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. राजा की मुहर । सरकारी मुहर । २ राजा के नाम से अंकित वह अंगूठी जिसे राजा धारण करता हो ।

राजमुनि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजवि ।

राजमृगाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजमृगाक] एक मिश्र रस का नाम जो यक्ष्मा रोग में दिया जाता है ।

विशेष—इसके बनाने की विधि यह है—सोने को उतनी ही चाँदी, और उससे दूने मँनशिल, गवक, हरताल तथा तिगुने रसमिदूर के साथ मिलाकर एक कौडी में भर देते हैं । फिर चकरी के दूब में मुहागा पीसकर उससे कौडी का मुँह बंद कर देने हैं । फिर उसे गिट्टी के बरतन में भरकर गजपुट से फूँक देते हैं । ठंडा होने पर उसे निकालकर पीस डालते हैं । कुछ लोग चाँदी की जगह नाँवा और रसमिदूर की जगह चाँगुना पारा डालकर भी यह रस बनाते हैं । यह रस चार रत्ती की मात्रा में खाया जाता है । इसका अनुपान घा, मधु या पीपल और मिर्च है ।

राजयक्ष्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजयक्ष्मन्] क्षयी । यक्ष्मा । क्षय रोग । तपेदिक । विशेष दे० 'क्षय' ।

राजयक्ष्मा—वि० [सं० राजयक्ष्मन्] जिसे राजयक्ष्मा रोग हुआ हो । क्षय रोग से पीड़ित ।

राजयान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पालकी । २ वह नवारी जो राजा के लिये हो । ३ राजा की तवारी का निकलना । राजा का जलूस ।

राजयोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह प्राचीन योग जिसका उपदेश पतञ्जल ने योगशास्त्र में किया है ।

विशेष—इसमें यम, नियम, ध्यान, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि नामक अष्टांग का यथाक्रम अनुशासन दिया जाता है । इस अष्टांग योग में कहते हैं । विशेष दे० 'योग' ।

२ फलित ज्योतिष के अनुसार ग्रहों का ऐसा योग जिसके जन्म-कुंडली में पढ़ने से मनुष्य राजा या राजा के तुल्य होता है।

विशेष—यवनाचार्य के मत से पापग्रहों का जन्मसमय स्वस्थान-भागी होकर सूच्य होना राजयोग है। पर जीवणर्मा का मत है कि मंगल, शनि, सूर्य और बृहस्पति में से किसी तीन ग्रहों का अपने स्थान में सूच्य पढ़ना राजयोग है।

राजयोग्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चदन।

राजयोग्य—वि० राजा के योग्य वा उपयुक्त।

राजरग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजरङ्ग] चाँदी। रजत।

राजरथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा का रथ।

राजराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजाओं का राजा। अधिराज। २ कुबेर। ३ चद्रमा।

राजराजेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० राजराजेश्वरी] १ राजाओं का राजा। अधिराज। २ एक स्तोत्र का नाम जिसका प्रयोग दाद, कुष्ठ आदि रोगों में होता है।

विशेष—पारे, गंधक और हस्ताल के साथ तंबू को मिलाकर भंगर्या के रस में एक दिन खरन करके उसमें त्रिफला, गुडुच, वकुची सम भाग मिलाकर दो दो रत्ती की गोतियाँ बनाई जाती हैं और दो तोले मधु या घी के साथ खाई जाती हैं।

राजराजेश्वरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दस महाविद्याओं में से एक का नाम। भुवनेश्वरी। २ राजराजेश्वर की पत्नी। गहाराज्ञी।

राजरीति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] काँसा। कमकुट।

राजरोग—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राज + रोग] १ वह रोग जो प्रसाध्य है। जैसे,—यक्ष्मा, श्वास इत्यादि। २ राजयदमा। क्षय रोग।

राजर्षि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह ऋषि जो राजवश या क्षत्रिय कुल का हो। क्षत्रिय ऋषि। जैसे,—राजर्षि विष्णामित्र।

विशेष—ऋषि सात प्रकार के कहे गए हैं—देवर्षि, ब्रह्मर्षि, महर्षि, परमर्षि, राजर्षि, कांडर्षि और श्रुतर्षि। इनमें से अंतिम दो वेद के द्रष्टा हैं।

राजल—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राजा + ल (प्रत्य०)] एक प्रकार का धान जो अग्रहन में पककर काटने योग्य होता है।

राजलक्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सामुद्रिक के अनुसार वे चिह्न या लक्षण जिनके होने से मनुष्य राजा होता है।

राजलक्ष्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजलक्ष्मन्] १ राजाओं के चिह्न। राज-चिह्न। २ युधिष्ठिर। ३ वह मनुष्य जिसमें सामुद्रिक के अनुसार राजाओं के लक्षण हैं। राजलक्षण से युक्त पुरुष।

राजलक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ राजश्री। राजवैभव। २ राजा की शक्ति वा शोभा।

राजवत्—वि० [सं० राज + वत् (प्रत्य०)] राजकर्म से संयुक्त। उ०—जन राजवत्, जग योगवत्। तिनको उदोत, केहि भाँति होत।—केशव (शब्द०)।

राजवश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा का कुल। राजकुल।

राजवश्य—वि० [सं०] राजा के वश में उत्पन्न। जो राजकुल में उत्पन्न हुआ हो।

राजवर्चस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजवर्चस्] १ राजशक्ति। २ राजपद। राजवर्त्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अनेक रंग का कपड़ा। वह वस्त्र जिसमें कई रंग हों।

राजवर्त्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का प्रसिद्ध वीमर्ती पत्थर। राजवर्त्तमा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजवर्त्तम्] पट्टी और चौड़ी मढ़क। राजमार्ग। राजपथ।

राजवल्गु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गवप्रमारिणी। गवप्रमार। प्रसारिणी।

राजवल्लभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मित्रनी। २ बड़ा आम। ३. बड़ा वेर। पेड़-दी वेर। ४ पियार। चिराजी (स्त्री)। ५ एक मिश्र रसोप्य जो शून, गुन्म, ग्रहणी, अतिसार आदि में दी जाती है।

राजवल्ला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रत्ने का पेंड।

राजवसति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजा का महल। राजमवन।

राजवाग(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज + वाग] राजद्वार। उ—मागत राजसार चरि आई। भीतर बैरिहू वात जनार्ड।—जायसी (शब्द०)।

राजवाग्नी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का मद्य।

विशेष—यकप्रकाश के अनुसार यह सोठ, पीपल, पिपलामूलक, अजवायन और वाली मिच का उनकी तीन में तिगुने अन्न-वर्ग और चौगुने मधुजातीय और इन्द्रजातीय रसों में मिलाकर पीचा जाता है।

राजवाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] घोडा।

राजवाण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा की मन्तरी का हाथी। हस्ती।

राजवि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नीलकण्ठ।

राजवजय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] संपूर्ण जाति का एक राग।

राजविद्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजनीति।

पर्या०—राजचय, नृपनय, राजशास्त्र, आदि।

राजविद्रोह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बगावत। राजविप्लव। विशेष दे० 'राजद्रोह'।

राजविद्रोही—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजविद्रोहिन्] वह जो राजा या राज्य के प्रति विद्रोह करे। वागी।

राजविनोद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक ताल का नाम। (मगीत)।

राजवी(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजवीजी] दे० 'राजवीजी'। उ०—नत राजा आदर दिवत, जउ राजवियाँ लोग।—ढोला०, पृ० ३।

राजवीजी—वि० [सं०] राजवशी।

राजवीथी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजमार्ग। राजपथ। चौड़ी सड़क।

राजवृत्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ आरग्वध का वृत्त। उरगा का पेड़। अमलतास। २ पयार का पेड़। ३. लसा का भद्रचूड नामक वृत्त। ४. श्योलाक वृत्त। सोनापाड़ा।

राजवैद्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजा का चिकित्सक। राज्य का प्रधान चिकित्सक। २ वह वैद्य जो चिकित्सा में कुशल हो।

राजशक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'राजसत्ता'।

राजशाण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पटसन।

राजशफर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हिलसा मछली।

राजशब्दोपजीवी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजशब्दोपजीवी] वह जो राजा के अधिकार और कर्तव्यों से रहित होते हुए भी राजा कहा जाता हो।

राजशब्दोपजीवीगण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का गण या प्रजातंत्र।

विशेष—कौटिल्य ने लिखा है कि लिच्छिवि, वज्जिक, मद्रक, कुरुपांचाल आदि गण राजशब्दोपजीवी हैं।

राजशाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वास्तुक शाक। वथुआ।

राजशाकनिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजणाक। वास्तुक। वथुआ।

राजशालि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का जड़हन धान जिसे राजभोग्य या रायभाग भी कहते हैं। इसका चावल बहुत महीन और मुगाधेन हाता है।

राजशिबी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजशिम्वी] एक प्रकार की सेम।

विशेष—यह चौड़ी और गुदेदार होती है तथा खाने में स्वादिष्ट होती है। इसे धीया सेम भी कहते हैं। इसकी दो जातियाँ होती हैं—एक काली और दूसरी सफेद। इसमें और सामान्य सेम में यह भेद है कि यह उससे अधिक चौड़ी होती है और लवाई में बहुत नहीं बढती।

राजशुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का तोता जो लाल रंग का होता है। इसे नूरी कहते हैं।

पर्या०—प्राज्ञ। शतपत्र। नृप्रिय।

राजशुकज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का धान।

राजशृंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजशृंग] राजकीय छत्र। राजछत्र। २ मद्गुर मत्स्य। मांगुर मछली [को०]।

राजश्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ राजलक्ष्मी। राजवैभव। राजा का ऐश्वर्य। राजा की शोभा।

राजसद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजसभा। २ वह घर्माधिकरण जिसमें राजा स्वयं उपस्थित हो। स्वयं राजा का दरवार।

राजस^१—वि० [सं०] [स्त्री० राजसो] रजोगुण से उत्पन्न। रजोगुणोद्भव। रजोगुणी। जैसे,—राजस यज्ञ, राजस दान, राजस बुद्धि आदि। विशेष दे० 'गुण'।

राजस—सञ्ज्ञा पुं० १. आवेश। क्रोध। उ०—जो चाहै चटक न घटे मैली होइ न मित्त। रज राजसु न छुवाइये नेक चीकनी चित्त।—विहारी २०, दो० ३९६। २ मद्। घमड। गर्व।

राजसत्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. राजशक्ति। २ वह सत्ता जो किसी देश या जाति के भरण पोषण, वर्धन और रक्षण के लिये स्थापित की जाती है।

राजसफर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हिलसा मछली।

राजसभा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ राजा की सभा। दरवार। २ वह सभा जिसमें अनेक राजा बैठे हो। राजाओं की सभा ३ राज्यसभा। राज्यपरिषद्। (अ० कौंसिल आफ् स्टेट्स)।

राजसमाज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. राजाओं का दरवार या समाज। राजमंडली। २ राजा लोग। उ०—राजसमाज कुसाज कोटि कटु कलपत कलुप कुचाल नई है।—तुलसी (शब्द०)।

राजसर्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बड़ा साँप। पर्या०—भुजगभोजी।

राजसर्षप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राई।

राजसाक्षी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजसाक्षिन्] वह अपराधी जो इकवानी गवाह बन गया हो। (अ० एप्रवर)।

राजसायुज्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजत्व।

राजसारस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मयूर। मोर।

राजसिंह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह नरेश जो राजाओं में श्रेष्ठ हो। श्रेष्ठ राजा [को०]।

राजसिंहासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा के बैठने का सिंहासन। राजगद्दी।

राजसिक—वि० [सं०] रजोगुण से उत्पन्न। राजस।

राजसिरी^(५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजश्री] राजश्री। राजलक्ष्मी। उ०—केशव ये मिथिलाधिप हैं जग में जिन कीरति बेलि बई है। दान कृपान विधानन सो सिंगरी वसुधा जिन हाय लई है। अंग छ सातक आठक सो भव तीनहुँ लोक में सिद्ध भई है। वेद त्रयी अरु राजसिरी परिपूरणता शुभ योग भई है।—केशव (शब्द०)। (ख) लाल मणोन रची मुडवारी। राजसिरी जावक अनुहारी। फूल रही किरणें अति तासू। केशरि फूल रही सविलासू।—गुमान (शब्द०)।

राजसी^१—वि० [हिं० राजा] राजा के योग्य, बहुमूल्य या भडकीला। राजाओं की सी शानवाला। जैसे,—उनका ठाट वाट सदा राजसी रहता है।

राजसी^२—वि० स्त्री० [सं०] जिसमें रजोगुण की प्रधानता हो। रजोगुणमयी। जैसे, राजसी प्रकृति।

राजसी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० दुर्गा।

राजसूय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक यज्ञ का नाम।

विशेष—इस यज्ञ के करने का अधिकार केवल ऐसे राजा को होता है, जिसने वाजपेय यज्ञ न किया हो। यह यज्ञ करने से राजा सम्राट् पद का अधिकारी होता है। यह यज्ञ बहुत दिनों तक होता है और इसे अनेक यज्ञों और कृत्यों की समाष्टि कहना ठीक है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार इष्टि, पशु, सोम और दार्वा होम इसके प्रधान अंग हैं। इसका प्रारंभ पवित्र नामक सोमयाग से होता है और सोमयागों से इसकी समाप्ति होती है। इसके बीच में दस ससृप, अभिषेचनीय, मरुत्वती, दिग्विजय, वृहस्पति-सवन, वृहविधान, धृत क्रौडा आदि अनेक कृत्य होते हैं। इसमें

ऋत्विज् लोग एक ऊँचे मच पर व्याघ्रचर्म बिछाकर श्रीर उमपर सिंहासन रखकर राजा को अभिषेक कराकर बैठते हैं और चारों ओर से उमे घेरकर प्रशस्ति सुनाते हैं। फिर राजा उन्हें दक्षिणा देकर दिग्विजय के लिये प्रस्थान करता है, और उसके लौटने पर फिर उसे मच पर बैठकर प्रशस्तिगान होता है। तदनंतर सभा में छूनझोड़ा हाती है, और अंत को मोचमणी याग के बाद कृत्य समाप्त होता है। प्राचीन काल में केवल बड़े बड़े राजा ही यह यज्ञ करते थे।

२ एक प्रकार का कमल (को०)। ३. एक पहाड़ (को०)।

राजसूयिक—वि० [स०] राजसूय यज्ञ सर्वथो।

राजसूयी—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजसूयिन्] राजसूय यज्ञ करनेवाला। पुराहित।

राजसूयेष्टिक—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] राजसूय यज्ञ।

राजस्कंध—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजस्कंध] घोड़ा।

राजस्त्व—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजस्त्व, [वि० राजस्त्वयन, राजस्त्व] एक ऋषि का नाम।

राजस्थलक—सञ्ज्ञा पुं० [स०] एक प्राचीन स्था का नाम।

राजस्थली—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] एक प्राचीन जनपद का नाम।

राजस्थान—सञ्ज्ञा पुं० [स०] राजपूताना। विशेष २० 'राजपूताना'।

राजस्थानिक—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ एक उच्च राजकीय पद। २, उस पद पर प्रतिष्ठित व्यक्ति। बाइमराय। हाकिम।

विशेष—पुस्तो के समय में इस शब्द का विशेष प्रचार था। यह पद बहुत ही उच्च होता था। इसका न्यान राजा के बाद और प्रधान अमात्य के ऊपर था। प्रायः इस पद पर युवराज या राजवंश के लोग ही नियुक्त होते थे।

राजस्थानीय—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजस्थानिक] २० 'राजस्थानिक'।

राजस्व—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ भूमि आदि का वह कर जो राजा को दिया जाय। राजधन। २ किसी राजा या राज्य को वार्षिक आय जो मालगुजारी, आवकारी, इनकम टैक्स, कस्टम्स ड्यूटी आदि करों से होती हो। आभवेमुक्त। मालगुजारी।

यौ०—राजस्वमन्त्री = भूमि आदि के करों से सञ्चय रखनेवाले विभाग का मन्त्री।

राजस्वर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [स०] राजघुस्तूरक। राजधतूरा।

राजस्वामी—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजस्वामिन्] विष्णु।

राजहस—सञ्ज्ञा पुं० [स०] [स्त्री० राजहस्ती] १ एक प्रकार का हस जिसे सोना पक्षी भी कहते हैं।

विशेष—यह प्रायः भुड़ पाँवकर उड़ता है और भीलों के किनारे रहता है। इसके अनेक भेद हैं। इसके रंग श्वेत तथा पीर और चोच लाल रंग की होती है। यह अग्रहन पूस में उत्तरीय भारत में उत्तर के ठंडे प्रदेशों से आता है।

२ एक सकर राग का नाम जो मालव, श्रीराग और मनीहर राग के मेल से बनता है।

राजहर्म्य—सञ्ज्ञा पुं० [स०] राजप्रासाद।

राजहस्ती—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजहस्तिन्] १ राजा की मर्यादा का हाथी। २ मुद्रा और श्रेष्ठ हाथी (को०)।

राजहार—सञ्ज्ञा पुं० [स०] यह पुत्र जो राजा में मोमराज जाता है।

राजहासक—सञ्ज्ञा पुं० [स०] २० 'राजहासक' (को०)।

राजहासक—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजहासक] एक प्रकार की मद्यनी जिसे कतया कहते हैं।

राजागण—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजागण] १ राजकीय न्यायालय। २, राजप्रासाद का प्रांगण (को०)।

राजा—सञ्ज्ञा पुं० [स० राजन्] [स्त्री० राज्ञी, [पुं० राजी] १. किसी देश, जाति या जन्ये का प्रधान शासक या राजा, जाति या जन्ये को नियम से चलाता, उनसे शांति रक्षा तथा उनकी और उनके स्वत्वा की, दूसरों के आक्रमण से, रक्षा करता है। वाशनाह। शक्तिगज। प्रभु।

विशेष—महाभारत में पता चलता है कि पहले मनुष्या में न तो कोई शासक या और न राजा। पर तब धर्मपूर्वक निज कुलरक्षार्थे ये और आपस में एक दूसरे की रक्षा करते थे। २। प्रायः उन्हें न तो किसी प्रांगण की आवश्यकता होती थी और न शासक की। पर यह मनुष्यान्वा बहुत दिनों तक न रह सकी। लोगों के चित्त में विचार उत्पन्न हो गया, जिनसे वधर्तव्यमान में पिपित हो गए। उनमें महानुभूति न रही और लोभ, मोह आदि गुणानाम्रा ने उन्हें घेर लिया। मनुष्य जाति विषय वास्तव में प्रसन्न हो गए और वैदिक कर्मवाद का लोप हो गया। इससे स्वर्ग में देवता पत्राए और दीर्घ हुए प्रह्ला आदि के पास पहुँचे। तब जाते उन्हें आश्वामनि दिया और मनुष्या की जातिव्यवस्था के लिये एक लाख अघ्याया का एक वृहद्गर बनाया। देवता लोग उन श्रव को लेकर विष्णु के पास पहुँचे और उनसे प्रार्थना की कि आप किसी ऐसे पुत्र को भाल्य दीजिए, जो मनुष्यों को इस शास्त्रानुसार चलावे। विष्णु भगवान् ने उस शास्त्र के अनुसार ज्ञान करने के लिये राजा की सृष्टि की। किसी किसी पुराण के अनुसार वैवस्वत मनु और किसी के अनुसार कर्दम-जी के पुत्र शग मनुष्यों के पहले राजा हुए। पूर्व काल में मनुष्यों की इतनी अधिकता न थी और न उाकी इतनी धनी वस्तिवा थी। एक कुल में उत्पन्न लोगों की सत्या बढते बढते बहुत से जन्मे बन गए, जो अपने कुल के सबसे श्रेष्ठ या बुद्ध के शासन में रहते थे। वह शासक प्रजापति कहलाता था और शेष लोग प्रजा अर्थात् पुत्र। देवा में भरत, जमदग्नि, कुशिक आदि जातियाँ के नाम आए हैं, जिनके पृथक् पृथक् प्रजापति थे। इनमें न अनेक जातियाँ पञ्चात्र आदि प्रातों में बस गईं और कृषि कर्म करने लगी। पहले तो उनमें पृथक् पृथक् प्रजापति थे, पर धीरे धीरे जनमरवा बढती गई और अनेक देश उनसे भर गए। ऐसे श्राव्यों को शालीन कहा है। फिर उनमें प्रजापतियों से काम न चला और भिन्न भिन्न देशों में शांति स्थापित करने और दूसरे देशों के आक्रमण से अपनी रक्षा करने के लिये प्रजापति से अधिक शक्तिमाव

एक शासक की नियुक्ति को आवश्यकता पड़ी। पहले पहल यह प्रथा भरत जाति में चली थी, इसीलिये राजसूय यज्ञ में 'भो भारता अयं व सर्वेषां राजा'। कहकर राजा को राजसिंहासन पर बैठाया जाता था। पहले यह राजा प्रजाओं के द्वारा प्रतिष्ठित होता था, और प्रजा का अहित करने पर लोग उसे पदच्युत भी कर देते थे। वेणु आदि राजाओं का पदच्युत होना इसका उदाहरण है। जत्र उन शालीनों में वराहव्यवस्था स्थापित हो गई, तब राजा का पद पंतुक हो गया और उसकी शक्ति सर्वोपरि मानी गई। मनु ने राजा को अग्नि, वायु, सूर्य, चंद्र, यम, कुबेर, वरुण और महेन्द्र या इंद्र की मात्रा या अंश से उत्पन्न लिखा है और उसे चार वर्णों का शासक कहा है। ज्यो ज्यो प्रजाओं की शक्ति धीमी पड़ने लगी, त्यो त्यो राजा का अधिकार सर्वोपरि होता गया और अंत में वह देश या राज्य का एकाधिपति स्वामी हो गया। दूसरे वर्ग के आर्यों में, जो इधर उधर जत्ये या गए बाँधकर चलते फिरते रहते थे और जिन्हें ब्राह्मण या यायानर कहते थे, प्रजापति की प्रथा बनी रही और यही प्रजापति गणनाथ बन गया। ऐसे आर्यों में न तो वर्णों की ही व्यवस्था थी और न उनमें राजा का एकाधिपत्य ही हुआ। उनमें प्रजापति राजा तो कहलाने लगा, पर वह सारा काम गए की समिति से करता था। ऐसे ब्राह्मण आर्य कोशल, मिथिला, और विहार आदि प्रांतों से आकर वसे थे और उपनिषद् या ब्रह्मविद्या के अभ्यासी थे। मिथिला के राजा जनक इन्हीं यायावर आर्यों में थे और वहाँ के व्याघ्र भी ब्रह्मज्ञान के उपदेष्टा थे। इनसे लिच्छवि लोगों में गए की प्रथा महात्मा बुद्धदेव के काल तक प्रचलित थी, इसका पता त्रिपिटक से चलता है।

पर्या०—नृरति। पार्थिव। भूप। महीक्षित्। भूभृत। पार्थ। नाभि। नाराज। सहींद्र। नरेंद्र। दंडधर। स्फुध। भूभुज्। प्रभु। अर्थपति।

विशेष—बहुत से शब्दों के साथ समस्त होकर यह शब्द आकार की बढाई या श्रेष्ठता सूचित करता है। जैसे, राजदत्त, राजमाप, राजशुक, राजशालि, इत्यादि।

२ अधिपति। स्वामी। मालिक। ३ एक उपाधि जिसे अंग्रेजी सरकार बड़े रईसों, जमींदारों या अपने कृपापात्रों को प्रदान करती थी। जैसे,—राजा राममोहन राय, राजा शिवप्रसाद। ४ धनवान् वा समृद्धिशाली पुरुष। ५ प्रेमपात्र। प्रिय व्यक्ति। (वाजारू)।

राजाग्नि—सज्ञा स्त्री० [सं०] राजा का कोप।

राजाज्ञा—सज्ञा स्त्री० [सं०] राजा की आज्ञा।

राजातन—सज्ञा पुं० [सं०] चिरौजी का पेड़। पयार।

राजात्यवर्त्तक—सज्ञा पुं० [सं०] लाजवर्द पत्थर। राजावर्त।

राजादन—सज्ञा पुं० [सं०] १. क्षीरिका। खिरनी। २ पयार। चिरौजी। ३ टैम्।

राजादनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] क्षीरिणी। खिरनी।

राजाद्रि—सज्ञा पुं० [सं०] १ एक पर्वत का नाम। २ एक प्रकार का अदरक। बड़ा अदरक। ववादा।

राजाधिकारी—सज्ञा पुं० [सं० राजाधिकारिण] १ वह जो न्यायालय में बैठकर न्याय करता हो। विचारपति। २ सरकारी अधिकारी।

राजाविकृत—सज्ञा पुं० [सं०] १ 'राजाधिकारी' [को०]।

राजाधिदेय—सज्ञा पुं० [सं०] सविधानानुसार राजा या शासक को व्यक्तिगत खर्च के लिये सरकारी खजाने से दी जानेवाली निश्चित रकम। (अं० 'प्रिवी पर्स')।

राजाधिदेव—सज्ञा पुं० [सं०] सूर जाति का एक क्षत्रिय वीर।

राजाधिदेवी—सज्ञा स्त्री० [सं०] शूरमेन की एक कन्या का नाम।

राजाधिराज—सज्ञा पुं० [सं०] राजाओं का राजा। शाहशाह। बड़ा बादशाह।

राजाधिष्ठान—सज्ञा पुं० [सं०] १ राजधानी। २ वह नगर जहाँ राजा का प्रासाद हो।

राजाध्वा—सज्ञा पुं० [सं० राजाध्वन्] राजपथ। राजमार्ग। चौड़ी सड़क।

राजानक—सज्ञा पुं० [सं०] १ छोटा राजा। समत राजा। २ एक समानित उपाधि जो प्राय उच्च कोटि के अध्येताओं और कवियों को दी जाती थी। जैसे, राजानक ख्यक (को०)।

राजान्न—सज्ञा पुं० [सं०] १ राजा का अन्न। २ एक प्रकार का शालि धान जो आंध्र देश में उत्पन्न होता है।

पर्या०—राजाई। नृपान्न। दीर्घशूकर। राजधान्य। राजेष्ठ। दीर्घकुरक।

राजाभियोग—सज्ञा पुं० [सं०] राजा का अपनी प्रजा पर दवाव डालकर उसकी इच्छा न रहने पर भी उसे कोई काम करने के लिये बाध्य करना। राजा का प्रजा से जबरदस्ती कोई काम कराना।

राजाभिपेक—सज्ञा पुं० [सं०] १ 'राज्याभिपेक' [को०]।

राजाम्र—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का आम जो सामान्य आमों से बड़ा होता है और जिसमें गूदा अधिक और गुठली छोटी होती है।

विशेष—इसके पेड़ों से कलम उतारी जाती है, जो छोटी होने पर भी अच्छे और बड़े फल देती है। इसके फल पकने पर मीठे होते हैं और सामान्य आमों की अपेक्षा उनमें रेशा कम होता है। बवई, लंगडा, मालदह, सफेदा आदि इसी जाति के आम हैं। बंधक में इसे पित्तवर्धक और पकने पर बलवीर्यप्रद माना है।

पर्या०—राजफल। स्मराम्र। षोफिलोत्सव। कालेष्ट। नृपवल्लभ।

राजाम्ल—सज्ञा पुं० [सं०] अम्लवेतम्। अमलवेद।

राजार्क—सज्ञा पुं० [सं०] श्वेत मदार। सफेद फूल का शक।

राजाई—सज्ञा पुं० [सं०] १. अंगर। अंगर। २ वपूर। वपूर।

३ जवू वृक्ष । जामुन का पेड़ । ४ एक प्रकार का चावल ।
दे० 'राजान्न' (को०) ।

राजहिं^३—वि० राजा के योग्य ।

राजहिंण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सभ्रमसूचक उपहार । भारी उपहार ।
२ राजा का दान ।

राजालावु, राजालावू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का लौघ्रा या
कद्दू जो आकार में बड़ा और खाने में मीठा होता है ।

राजालुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूली ।

राजावर्त्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाजवर्द नामक रत्न ।

वशेष—यह उपरत्न माना गया है । बंधक में इसे मधुर, स्निग्ध
और पित्तनाशक कहा है ।

राजाश्रय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा का आश्रय ।

राजाश्रित—वि० [सं०] राजाश्रय में रहनेवाला । जैसे, राजाश्रित कवि ।

राजासदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजासन्दी] काठ की चौकी या पीढ़ा
जिसपर यज्ञों में सोम रखा जाता था ।

राजासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजाओं के बैठने का आसन । सिंहासन ।
वस्त ।

राजाहि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दोमुँहा साँप ।

राजिदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजेन्द्र] दे० 'राजेंद्र' । उ०—भीमराज
राजिद राइ राइन उन्वारन । अति अचभ वलरूप द्रुगपति
सेव सधारन ।—पृ० रा०, १२।८।

राजि^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पक्ति । अवली । कतार । २ रेखा ।
लकीर । ३ राई । ४ अलिजिह्वा । शु डिका (को०) । ५
क्षेत्र । भूमि । स्थान । विषय (को०) ।

राजि^२—सञ्ज्ञा पुं० ऐल के पौत्र और आयु के एक पुत्र का नाम ।

राजिकु—वि० [अ० राजिकु] अन्नदाता । पालन पोषण करने-
वाला । उ०—दादू राजिक रजक लिए खडा, देव हाथो
हाथ ।—दादू०, पृ० ३४० ।

राजिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ केदार । बयारी । २ राई । ३
राजि । पक्ति । ४ रेखा । लकीर । ५ लाल सरसो । ६
मडुआ । ७ वृष्णोद्वर । कठगूलर । कठूमर । ८ एक
पारमाण । ९ एक प्रकार का छुद्र रोग जिसमें सरमा के
बराबर छोटी छोटी फुसियाँ निकलती हैं । यह रोग अधिक
ब्रूष लगने और गर्मी के कारण हो जाता है ।

राजिकाचित्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साँप जिसके ऊपर
सरसो की तरह छोटी छोटी बुँदकियाँ होती हैं ।

राजित—वि० [सं०] १ जो शोभा दे रहा हो । फवता हुआ ।
शोभित । २ विराजा हुआ । मौजूद । उपस्थित ।

राजिफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चीना ककड़ी ।

राजिमान्—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजिम्त] एक प्रकार का साँप ।

राजिल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साँप जिसके ऊपर मीठी
रेखाएँ होती हैं । (सभवतः डुडुभ, डेढहा) ।

राजिलफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का खरबूजा या ककड़ी ।

राजिव^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजीव] कमल । उ०—राजिवनपन
धरे धनु सायक । भगत विपति भजन मुसदायक ।—तुलसी
(शब्द०) ।

राजी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पक्ति । श्रेणी । २ राई । ३ लाल
सरसो । दे० 'राजि' ।

राजी^२—वि० [अ० राजी] १ कोई उर्ही हुई बात मानने को तैयार ।
अनुकूल । मगत । उ०—था शतगजी मत करै, मुझ नित
राजी राख । जत्र रम ज्यो चाहै लियो नुरंग हिये अभिनाख ।
—रसनिधि (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—करना ।—रगना ।—होना ।

२ नीरोग । चगा । ३ खुश । प्रपन्न । उ०—ताजी ताजी गतिन
ये तत्र तैं मोये लन । गारु मन राजी करै वाजी तेरे नन ।
—रसनिधि (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—रखना ।

४ मुसी । मुन्धयुक्त ।

यौ० - राजी खुशी = मही तलामती । बुझल आनद ।

राजी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० राजामदी । अकूलता । उ०—हम सब प्रजा चर्तहि
नृप राजी । यथा मृत प्रेन्ति रय बाजी, —गोपान (शब्द०) ।

राजीनामा—सञ्ज्ञा पुं० [प्रा० राजीनामद्] १ वह लेख जिसके द्वारा
अभियोगी और अभियुक्त, या वादी और प्रतिवादी परस्पर
एकमत या अनुकूल होकर अभियोग या वाद को न्यायालय से
उठा लें अथवा एक मत हो जायँ और तदनुसार ही न्यायालय
को व्यवस्था देने के लिये उससे प्रार्थना करें । २ स्वीकारपत्र ।

राजीफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] परवन । पटोल ।

राजीव^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. रंया मछली । २ एक प्रकार का मृग
जिसकी पाठ पर बारिया होती है । ३ हाथी । ४ सारस पक्षी
की एक जाति । ५. नीलपक्ष । तीनकमल । ६ कमल ।
जैसे,—राजीव लोचा ।

राजीव^२—वि० जिसपर बारिया हो । भारीदार ।

राजीवगण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का मात्रिक छंद जिसके
प्रत्येक चरण में प्रथम मानाएँ होती हैं और नौ नौ मात्राओं
पर विराम पड़ता है (नौ नौ राजीवगण बल धारण ।—
छंद०, पृ० ४७) । इनमें तुकात में गुरु लघु का कोई विशेष
नियम नहीं है । इसे माली भी कहते हैं ।

राजीविनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार का कमल । कमलिनी ।
२ राजीविनी का समूह (को०) ।

राजुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मौर्य काल का एक राजकर्मचारी, जो एक
प्रात का प्रबंध करता था ।

राजुदल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का वृक्ष ।

राजू^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रज्जु] दे० 'रज्जु' ।

राजू^८—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राजा] प्रेमपान वा प्रिय व्यक्ति ।

राजेंद्र^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजेन्द्र] १ राजाओं का राजा । वादशाह ।
२ राजगिरि नामक पर्वत । राजाद्रि ।

राजेंद्र^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजेन्द्र + प्रसाद] स्वतंत्र गणतंत्र भारतवर्ष के प्रथम राष्ट्रपति । (ई० १९५०-१९६२) ।

राजैय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पटोल । परवल ।

राजेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० राजेश्वरी] राजाओं का राजा । राजेंद्र । महाराज ।

राजेश्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजान्न नामक घान । २. राजभोग्य । ३ लाल प्याज ।

राजेश्ठा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ केला । २ पिंढखजूर ।

राजेशुरा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजेश्वर] दे० 'राजेश्वर' । उ०—इंद्रराज राजेशुर महा । सौहैं रिसि किछु जाइन कहा ।—जायसी प्र० (गुप्त), पृ० ३०४ ।

राजोपकरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजाओं के लक्षण या उनके साथ रहनेवाला सामान । राजचिह्न । जैसे,—झंडा, निशान, नौबत आदि ।

राजोपजीवी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजोपजीविन्] १ राजकर्मचारी । राज्य का नौकर । २ वह पुरुष जिसकी जीविका राजा की सेवा करने से चलती हो ।

राजोपसेवी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजोपसेविन्] राजा का सेवक ।

राक्षी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रानी । राजमहिषी । २ मत्स्यपुराण के अनुसार सूर्य की पत्नी का नाम । सञ्ज्ञा । ३ काँसा । ४ नील का वृक्ष । नीली ।

राज्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. राजा का काम । शासन ।

क्रि० प्र०—करना ।—देना ।—पाना ।—होना ।

विशेष—शास्त्रों में राजा, अमात्य, दुर्ग, राष्ट्र, कोप, दंड या बल और सुहृत् ये सातों राज्य की प्रकृतियाँ मानी गई हैं ।

२ वह देश जिसमें एक राजा का अधिकार और शासन हो । बादशाहत । जैसे,—नेपाल का राज्य । काबुल का राज्य ।

विशेष—कही कही एक लाख गाँवों के समूह को भी राज्य कहा है ।

पयो०—मडल । जनपद । देश । विषय । राष्ट्र ।

राज्यकर्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज्यकर्त्] १. शासक । राज्याधिकारी । २ नृपति । राजा [कौ०] ।

राज्यक्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रायता ।

राज्यच्युत—वि० [सं०] जो राजसिंहासन से उतार या हटा दिया गया हो । राज्यभ्रष्ट ।

राज्यच्युति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राजा का राजसिंहासन से उतार दिया जाना ।

राज्यतंत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज्यतन्त्र] राज्य की शासनप्रणाली ।

राज्ययद्रव्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह उपकरण जिसकी आवश्यकता राज्याभिषेक में पड़ती है । राजतिलक की सामग्री ।

राज्यधर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राज्यपालन । शासन ।

राज्यधुरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राज्यशासन ।

राज्यपरिपद्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्रदेशों वा राज्यों से चुने हुए प्रतिनिधियों की वह उच्च परिपद् जो निम्न सदन (लोकसभा) के निर्णायो पर पुन विचार करती है ।

राज्यपाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज्य + पाल] राज्य का शासक । गवर्नर ।

राज्यप्रद—वि० [सं०] राज्य देनेवाला । जिससे राज्य मिलता हो ।

राज्यभंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज्यभङ्ग] राज्य का नाश । राज्य का ध्वस ।

राज्यभाषा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'राजभाषा', 'राष्ट्रभाषा' ।

राज्यलक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. राजश्री । २ विजयगौरव । विजयकीर्ति ।

राज्यलोभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बहुत बड़ा लोभ । उच्च आशा । उच्चाकाक्षा ।

राज्यव्यवस्था—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह नियम या व्यवस्था जिसके अनुसार प्रजा के शासन का विधान किया जाता हो । राज्य-नियम । नीति । कानून ।

राज्यस्थायी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज्यस्थायिन्] राजा । शासक ।

राज्याग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज्याङ्ग] राज्य के साधक अंग जिन्हे प्रकृति भी कहते हैं । शास्त्रों में प्रधान प्रकृतियाँ सात मानी गई हैं । यथा—राजा, अमात्य, राष्ट्र, दुर्ग, कोप, बल और सुहृत् ।

राज्याभिषिक्त—वि० [सं०] जिसका राज्याभिषेक हुआ हो ।

राज्याभिषेक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. राजसिंहासन पर बैठने के समय या राजसूय यज्ञ में राजा का अभिषेक, जो वेद के मन्त्रों द्वारा पवित्र तीर्था के जल और अर्पणियों से कराया जाता है । २ किसी नए राजा का राजसिंहासन पर बैठना या बैठाय जाना । राजगद्दी पर बैठने की रीति । राज्यारोहण ।

राज्यारोहण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज्य + आरोहण] दे० 'राज्याभिषेक' । उ०—फिर राज्यारोहण करो, राम, हृदयासन में हो जन मगन ।—युगपय, पृ० १३० ।

राज्योपकरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजचिह्न ।

राट्, राट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राट् राज्] १ राजा । बादशाह । २ श्रेष्ठ व्यक्ति । सरदार । ३ किसी बात में सबसे बड़ा पुरुष । जैसे धूर्तराट् ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग प्रायः यौगिक शब्दों के अंत में होता है ।

राट—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राट्] दे० 'राट्' । उ०—सोहे भटराट विराट प्रभु परन विमुख रन मुख करत ।—गोपाल (शब्द०) ।

राटपाट(पुं०)—वि० [सं० राट् > राट् + हिं० (अनु०) पाट] बरवाद । नष्ट भ्रष्ट । उ०—पड भाट थाट छल राट पाट दिल्लीय जले दल बले दाट ।—रा० रू०, पृ० ७४ ।

राटि^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लडाई । युद्ध [कौ०] ।

- राटि^१—सजा स्त्री० एक प्रकार का पत्नी । श्राद्धी । रेवनी चिरई ।
- राटुल—सजा पुं० [अ० रतल (= एक तौल)] वह बड़ा तराजू जो लट्टा गाढकर लटकाया जाता है श्रीर जिसमें लोहा, लकड़ी इत्यादि मनो की तौल से तौली जाती है ।
- राठ^७—सजा पुं० [स० राट्ट] १ राज्य । २ राजा ।
- राठवर—सजा पुं० [हि० राठौर] दे० 'राठौर' ।
- राठौर—सजा पुं० [सं० राष्ट्रकूट] १ दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध राजवंश । २ राजपूतों की एक उपजाति ।
- राड—वि० [सं० राटि, प्रा० राडि] १ दुष्ट । जड । उ०—(क) लखि गयद लै चलत भजि स्वान सुखानो हाड । गज गुन, मोल, अहार, बल महिमा जान की राड ।—तुलसी ग्र०, पृ० १३४ । २ नीच । निकम्मा । उ० (क) कागा करक ढँढोरिया भूठिक रहिया हाड । जिस पिजर विरहा बरमँ मान कहा रे राड ।—कवीर (शब्द०) । (ग) विद्या का चौका दिया हाँडी सीमै हाड, छूति बचावै चाम की तिनहूँ का गुरु राड ।—कवीर (शब्द०) । (घ) रावन राड के हाड गढँग ।—तुलसी (शब्द०) । २ कायर । भगोडा ।
- रौ०—राड रोर ।
- राड़ा—सजा पुं० [देश०] सरसो । सर्पय ।
- राढ^१—वि० [हि० राड] दे० 'राड' । उ०—तुलसी तेरी भलाई अजहूँ बूझै । राडउ राडत होत फिरि कै जूझै ।—तुलसी ग्र०, पृ० ५४६ ।
- रौ०—राड रोर । उ०—ऐसेउ साहव की सेवा सो होत चोर रे । आपनी ना बूझि ना कहे को राड रोर रे ।—तुलसी ग्र०, पृ० ४६६ ।
- राढ़^१—सजा स्त्री० [सं० राटि (= लडाई)] राट । भगडा । उ०—उन्हीं के किए सब धंघा गदा हुआ । वह देतीं तो यह राढ़ क्यो बढ़ती ।—दुर्गाप्रसाद मिश्र (शब्द०) ।
- राढ़ा^१—सजा पुं० [सं० राडि] वग देश के उत्तर भाग का पुराना नाम ।
- राढा^१—सजा स्त्री० एक प्रकार की कपास ।
- राढा^१—सजा स्त्री० [सं० राढा] १ काति । दीप्ति । २ शोभा । छवि ।
- राढ़ा^१—वि० [सं० राटि] १ भगडालू । जिद्दी । २ नासमझ । मूर्ख ।
- राडि—सजा पुं० [सं० राडि] वग देश के उत्तरी भाग का नाम । उ०—खेलत जीत्यो जिन राडि देश ।—कर्पूरमजरी (शब्द०) ।
- रादी—सजा स्त्री० [देश०] १ एक प्रकार की मोटी घाम । २ एक प्रकार का श्राम ।
- राण—सजा पुं० [सं०] १ पत्ता । दल । २ मोरपख । मोर की पूँछ [को०] ।
- राणा—सजा पुं० [सं० राट्ट या राजान, प्रा० राणाण्यो, हिं० राणा या राज्ञी = 'राणी' का पुर्विलगिकृत राणा] [स्त्री० राणा] राजा ।

विशेष— इस शब्द का प्रयोग राजपूताने की उदयपुर आदि कुछ विशेष रियासतों के राजाओं के लिये होता है । नेपाल के सरदार भी राणा कहलाते हैं ।

- राणिका—सजा स्त्री० [सं०] लगाम । बल्गा [को०] ।
- रातग—सजा पुं० [डि०] गीघ । गिद्ध ।
- रातती—सजा स्त्री० [सं० रातन्ती] पीप श्वल चतुर्दशी की होनेवाला एक त्यौहार [को०] ।
- रात^१—सजा स्त्री० [सं० रात्रि] समय का वह भाग जिसमें सूर्य का प्रकाश हम तक नहीं पहुँचता । सध्या से प्रात काल तक का समय । दिन का उलटा ।
- पर्या०—रजनी । निशा । शर्वरी । निशि । विभावरी ।
- मुहा०—रात दिन = सर्वदा । सदा । हमेशा ।
- यौ०—रातराजा = उल्लू । रातरानी = एक पीवा और उसका फूल जो रात में फूलता है । रजनीगधा ।
- रात^१—वि० [सं०] प्रदत्त । दिया हुआ [को०] ।
- रात^७—वि० [सं० रक्त] लाल । रक्त वर्ण का । उ०—कँवल चरन अति रात विसेखे । रहहि पाट पर पुहुमि न देखे ।—जायमी ग्र० (गुप्त०), पृ० १६६ ।
- रातडी, रातरी—सजा स्त्री० [सं० रात्रि] रात । उ०—राम सनेही कारने रोय रोय रातडियाँ ।—कवीर (शब्द०) ।
- रातना^७—क्रि० अ० [सं० रक्त, प्रा० रक्त + हिं० ना (प्रत्य०)] १ लाल रंग से रँग जाना । लाल हो जाना । २ रँग जाना । रगीन होना । उ०—रँग राते बहु चीर अमोला ।—जायसी (शब्द०) । ३ अनुरक्त होना । आशिक होना । उ०—(क) जाहि जो भजै सो ताहि रातै । कोउ कछु कहे सब निरस बातै ।—सुर (शब्द०) । (ख) रँग राती राते हिये प्रीतम लिखी बनाय । पाती काती बिरह की छाती रही लगाय ।—विहारी (शब्द०) । (ग) जिन कर मन इन सन नहि राता । तिन जग बचित किए विवाता । तुलसी (शब्द०) ।
- राता^७—[सं० रक्त, प्रा० रक्त] [वि० स्त्री० राती] १ लाल । सुर्ख । उ०—(क) बन वाटनि पिक बटपरा तक बिरहिन मन मैं ।—कुहौ कुहौ कहि कहि उठै करि करि राते नैन ।—विहारी (शब्द०) । (ख) भृकुटी कूटिल नैन रिस राते ।—तुलसी (शब्द०) । २ रँग हुआ ।
- राति^७—सजा स्त्री० [हिं० रात] दे० 'रात' । उ०—रातिहि घाट घाट की तरनी । आई अगनेत जाहि न बरनी ।—मानस, २।२२० ।
- राति^३—वि० [सं०] १ उदार । २ सनद्ध । तैयार [को०] ।
- राति^१—सजा पुं० १ मित्र । अराति का विलोम । २ उपहार । उपायन । ३ धन । सपत्ति [को०] ।
- रातिचर^७—सजा पुं० [हिं० राति + सं० चर] निगिचर । राक्षस । उ०—मारे रन रातिचर रावन सकुन दल अनुकूल देव मुनि फूल वरपतु हैं ।—तुलसी ग्र०, पृ० १६७ ।
- रातिव—सजा पुं० [अ०] १ पशुओं का दैनिक भोजन । २, हाँविया आदि का खाना ।

रातुल'

क्रि० प्र०—खाना ।—देना ।—पाना ।—मिलना ।

रातुल'—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रतल] दे० 'राटुल' ।

रातुल'—वि० [सं० रत्तालु, प्रा० रत्तालु] सुख रंग का । लाल ।
उ०—उर मोतिन की माला री पहिरे रातुल चौर, वारे
कन्हैया ।—सूर (शब्द०) ।

रातैल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राता + ऐल (प्रत्य०)] लाल रंग का एक
छोटा कीड़ा जो जुआर को हानि पहुँचाता है ।

रात्र सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ज्ञान । ज्ञानोपदेश । २ रात । रात्रि [को०] ।

रात्रक'—वि० [सं०] १ रात्रि सवधी । २ रात भर का [को०] ।

रात्रक'—सञ्ज्ञा पुं० १ वह व्यक्ति जो किसी वेश्या के घर में एक वर्ष
बिताए । २ पाँच रात्रि का समय । पचरात्र [को०] ।

रात्रिचर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रिञ्चर] [स्त्री० रात्रिचरी] १ दे०
'रात्रिचर' ।

रात्रिदिव, रात्रिदिवी—क्रि० वि० [सं० रात्रिन्दिव, रात्रिन्दिवी] रात
दिन । अनवरत । लगातार [को०] ।

रात्रिमन्य—वि० [सं० रात्रिमन्य] (दिन) जो बादलो के घिरने वा
अधकार से रात सा प्रतीत हो [को०] ।

रात्रि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ उतना समय जितने समय तक सूर्य का
प्रकाश न देख पड़े । सध्या से लेकर प्रातःकाल तक का समय ।
सूर्यास्त से सूर्योदय तक का समय । रात । निशा ।

यौ०—रात्रिदिव, रात्रिदिवी = (१) रातदिन । सदा ।

२. हलदी । ३. पुराणानुसार क्राँच द्वीप की एक नदी का नाम ।

रात्रिक'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का विच्छू ।

रात्रिक'—वि० रात का । रात्रि का । जैसे, पचरात्रिक उत्सव (समा-
सात में) ।

रात्रिकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. चद्रमा । २. कपूर ।

रात्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रात । रजनी [को०] ।

रात्रिचर'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राक्षस । निश्चर । २. चोर । तस्कर ।
लुटेरा [को०] । ३. प्रहरी । रात्रि को पहरा देनेवाला । रक्षक
[को०] । ४. उल्लू । उल्लूक [को०] ।

रात्रिचर'—वि० रात के समय विचरनेवाला ।

रात्रिचारी—सञ्ज्ञा पुं० वि० [सं० रात्रिचारिन्] दे० 'रात्रिचर' ।

रात्रिज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नक्षत्र, तारे आदि ।

रात्रिजल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रोस [को०] ।

रात्रिजागर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. कुत्ता । २. रात्रि में जागरण या पहरा
देना [को०] ।

रात्रिजागरद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मन्थड [को०] ।

रात्रितिथि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शुक्ल पक्ष की रात ।

रात्रिदोष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रात्रि में होनेवाला अपराध । जैसे,—चोरी
(कौटि०) ।

रात्रिद्विप—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रिद्विप्] सूर्य ।

रात्रिनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चद्रमा [को०] ।

रात्रिनाशन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य ।

रात्रिपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कमल । २ रात में खिलनेवाला पुष्प ।
कुमुद । कुई (को०) ।

रात्रिचल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राक्षस ।

रात्रिभुक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जैनो के अनुसार छठी प्रतिमा जो रात्रि
के समय किसी प्रकार का भोजन आदि नहीं ग्रहण करती ।

रात्रिमुजग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रिभुजङ्ग] चद्रमा [को०] ।

रात्रिमट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. राक्षस । २ रात को लूटने या चोरी
करनेवाला चोर ।

रात्रिमणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चद्रमा । २ कपूर (को०)

रात्रियोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सायकाल । सध्या ।

रात्रिराग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अधकार । अंधेरा ।

रात्रिवास—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रिवासस्] १ अधकार । अंधेरा । २.
रात के समय पहनने का वस्त्र ।

रात्रिविगम्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्रभात । तडका ।

रात्रिविश्लेषगामी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रिविश्लेषगामिन्] चक्रवाक ।
चक्रवा पक्षी ।

रात्रिवेद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुक्कुट । सुरगा ।

रात्रिवेदी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रिवेदिन्] दे० 'रात्रिवेद' [को०] ।

रात्रिसाम—सञ्ज्ञा पुं० [रात्रिसामन्] एक प्रकार का साम ।

रात्रिसूक्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. ऋग्वेद के एक सूक्त का नाम । २.
दुर्गा सप्तशती का एक सूक्त ।

रात्रिहास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुमुद । कुई ।

रात्रिहिंडक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्रिहिण्डक] १ राजाओ के अत पुर
का पहरेदार । २ रात्रि में घूम घूमकर पहरा देनेवाला (को०) ।

रात्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. रात । २. हलदी ।

रात्र्यध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रात्र्यन्ध] १ जिसे रात को न दिखाई देता
हो । जिसे रतौंधी का रोग हो । २ वे पक्षी और पशु
जिन्हें रात को न दिखाई पड़ता हो । जैसे,—कौआ, बंदर ।

रात्र्यट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चोर । २ निशाचर [को०] ।

राथकार्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो रथकार ऋषि के गोत्र में
उत्पन्न हो ।

राद्—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] बिजली की कड़क [को०] ।

राद्ध—वि० [सं०] १ पका हुआ । रँवा हुआ । २ सिद्ध । ठीक
किया हुआ । ३. पूरा किया हुआ ।

राद्धात—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राद्धान्त] सिद्धात । उसूल ।

राद्धि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सिद्ध होने का भाव । सफलता । सिद्धि ।

राध'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वंशाख मास । २. धन । सपत्ति । ३
अनुग्रह (को०) । ४ अम्युदय (को०) ।

राध'—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] पीव । मवाद ।

राधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. साधने की क्रिया । साधना । २.

मिलना । प्राप्ति । ३ सतोष । तुष्टि । ४ वह वस्तु जिससे कोई कार्य किया जाय । साधन ।

राधना(७)†—क्रि० म० [सं० आराधना] १ आराधना करना । पूजा करना । उ०—साधो कहा करि साधन ते जौ पै राधो नही पति पारवती को ।—तुलसी (शब्द०) । २ मिट्ट करना । पूरा करना । ३ काम निकालना । साधना ।

राधना^१—सज्ञा स्त्री० [सं०] गिरा । वारणी [को०] ।

राधनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] पूजा । उपासना । आराधना [को०] ।

राधरक—सज्ञा पुं० [सं० राधरङ्ग] १ हल । २ हलकी वर्षा । ३ श्रोला । बनोरी [को०] ।

राधा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ वैशाख की पूर्णिमा । २ प्रीति । अनु-राग । प्रेम । ३ घृतराष्ट्र के सारथी अधिरथ की पत्नी का नाम ।

विशेष—इमने वर्ण को पुत्रवत् पाला था । इमी कारण मे कण का एक नाम 'राधेय' भी था ।

४ वृषभानु गोप की कन्या और श्रीकृष्ण की प्रियसी ।

विशेष—श्रीमद्भागवत मे राधा का कोई उल्लेख नहीं है । पर ब्रह्मवैवर्त, देवीभागवत, आदि मे राधा का वर्णन मिलता है । इन पुराणों मे राधा के जन्म और जीवन के सर्वंघ मे भिन्न भिन्न कथाएँ दी गई हैं । कही लिखा है कि ये श्रीकृष्ण के बाएँ अंग से उत्पन्न हुई थी और कही गोलोकवाम के रासमण्डल मे इनका जन्म लिखा है । यह भी कहा जाता है कि ये जन्म लेते ही पूर्ण वयस्का हो गई थी । श्रीकृष्ण के साथ इनका विवाह नहीं हुआ था यद्यपि गर्गसहिता आदि कुछ इधर के ग्रंथों में विवाह की कथा भी रख दी गई है । सब जगह श्रीकृष्ण के साथ इनकी मूर्ति और नाम रहता है । इनके नाम के साथ ईश या स्वामीवाचक शब्द लगने से श्रीकृष्ण का बोध होता है ।

५ एक वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण मे रगण, तगण, मगण यगण और एक गुरु सब मिलकर १३ अक्षर होते हैं । जैसे,—कृष्ण राधा कृष्ण राधा राधा गा । ६ विशाखा नक्षत्र । ७ द्विजली । ८ अर्वात्ता । ९ विष्णुक्राता लता ।

राधाकांति—सज्ञा पुं० [सं० राधाकान्त] श्रीकृष्ण ।

राधाकुण्ड—सज्ञा पुं० [सं० राधाकुण्ड] गोवर्धन के निकट का एक प्रख्यात सरोवर ।

राधातत्र—सज्ञा पुं० [सं० राधातन्त्र] एक तत्र का नाम जिसमे मन्त्रो आदि के अतिरिक्त राधा की उत्पत्ति का भी रहस्यपूर्ण वर्णन है ।

राधापति—सज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण [को०] ।

राधाभेदी—सज्ञा पुं० [सं० राधाभेदिन्] अर्जुन का एक नाम [को०] ।

राधारमण—सज्ञा पुं० [सं०] राधा से रमण करनेवाले, श्रीकृष्ण ।

राधारमन(७)—सज्ञा पुं० [सं० राधारमण] श्रीकृष्ण । उ०—लीला राधारमन की, मुदर जम अमिराम ।—मतिराम (शब्द०) ।

राधावल्लभ—सज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण ।

राधावल्लभ—सज्ञा पुं० [सं०] वैष्णवों का एक प्रसिद्ध संप्रदाय । विशेष दे० 'वैष्णव' ।

राधावेधी—सज्ञा पुं० [सं० राधावेधिन्] अर्जुन [को०] ।

राधासुत—सज्ञा पुं० [सं०] कर्ण का एक नाम [को०] ।

राधास्वामी—सज्ञा पुं० [हिं०] एक मतप्रवर्तक आचार्य और उनका संप्रदाय ।

राधाष्टमी—सज्ञा स्त्री० [सं०] भादो सुदी अष्टमी ।

राधिका—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ वृषभानु गोप की कन्या राधा । विशेष दे० 'राधा—४' । उ०—प्रभु माया फेरी प्रवल सब लागे ग्रिह दद । पल न सुहाई राधिका विन वृदावनचद ।—पृ० रा०, २।५५८ । २ एक मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण मे १३ और ९ के विश्राम से २२ मात्राएँ होती हैं । जैसे,—सब सुधि बुधि गइ क्यो भूल, गई मति मारी । माया को चरो भयो, भूलि अमुरारी । कटि जँहै भव के फद, पाप नसि जाई । रे सदा भजौ श्री कृष्ण, राधिका माई ।—छंद०, पृ० ५१ ।

विशेष—लावनी इसी छंद मे होती है । यह छंद प्रस्तार की रीति से नया रचा गया है ।

राधी—सज्ञा स्त्री० [सं०] वैशाख मास की पूर्णिमा [को०] ।

राधेय—सज्ञा पुं० [सं०] (घृतराष्ट्र के सारथी अधिरथ की पत्नी राधा द्वारा पालत) कर्ण ।

राध्य—वि० [सं०] आराधना करने के योग्य । आराध्य ।

रान—सज्ञा स्त्री० [फा०] जघा । जाँघ । उ०—साइ सेर बीसक की रानें । घकावकी हाथिन सो ठानें ।—लाल (शब्द०) ।

रानतुरई—सज्ञा स्त्री० [हिं० रानी + तुरई] कहुई तरौई ।

राना^१—सज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'राणा' ।

राना(७)^१—क्रि० अ० [हिं० राचना] अनुरक्त होना । उ०—कौन कली जो भीर न राई । डार न दूट पुहुप गरुआई ।—जायसी (शब्द०) ।

राना—वि० [फा० राना] १ मुंदर । हसीन । २ अच्छे डीलडौल का [को०] ।

रानाई—सज्ञा स्त्री० [फा० रानाई] सुदरता । सौंदर्य [को०] ।

रानापति—सज्ञा पुं० [हिं० राणा + पति] सूर्य ।

विशेष—चित्तीर के राना सूर्यवक्ष के माने जाते हैं ।

रानी—सज्ञा स्त्री० [सं० राज्ञी, प्रा० राणी] १ राजा की स्त्री । राजा की पत्नी । २ स्वामिनी । मालकिन । जैसे,—मधुमक्खियों की रानी । ३ स्त्रियों के लिये आदरसूचक शब्द ।

रानीकाजर—सज्ञा पुं० [हिं० रानी + फाजल] एक प्रकार का घान । उ०—राजभोग श्री रानीकाजर । भाँति भाँति के सीके चावर ।—जायसी (शब्द०) ।

रापडॉ—सज्ञा पुं० [?] वजर । ऊमर ।

रापती—सज्ञा स्त्री० [दिश०] एक छोटी नदी जो नेपाल के पहाड़ों से निकलकर गोरखपुर के निकट सरयू मे गिरती है ।

रापरंगाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नृत्य । उ०—शूल वध्वक पादेन सहैवानुपतेद्यदे । द्वितीयोऽपि तदा रापरंगाल तद्विदो विदु ।—केशव (शब्द०) ।

रापी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राँपी] चमारो का राँपी नाम का औजार जिससे वे चण्डा साफ करते और काटते हैं । उ०—अस कहि रापी ताहि की तामे दियो हुवाइ । तुरतै कचन की भई तेहि गुण दियो दिखाइ ।—रघुराज (शब्द०) ।

राव^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [पुं० द्रावळ (= मोम)] आँच पर झोटाकर खूब गाढा किया हुआ गन्ने का रस जो गुड से पतला और शीरे से गाढा होता है । इसी को साफ करके खाँड बनाई जाती है ।

राव^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] नाव में वह बड़ी लकड़ी जो उसकी पेंदी में लवाई के बल एक सिरे से दूसरे सिरे तक होती है । पहले यही लकड़ी लगाकर तब उसपर से अहार चढाते हैं ।

रावडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राव + डी (प्रत्य०)] झोटाकर गाढा किया हुआ दूध । बसोधी । रवडी । † २ राजपूताने की ओर का एक विशिष्ट खाद्य ।

रावना—क्रि० म० [सं०] खेत में खाद देने की एक विशेष प्रणाली ।

विशेष—इसमें पहले खेत में खाद, सूखी पत्तियाँ और टहनियाँ आदि रखकर जला देते हैं, फिर उनकी राख समेत जमीन को एक बार जोत देते हैं । वही राख खेत में खाद का काम देती है ।

राम^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सूर्यवंशी महाराज दशरथ के पुत्र जो दस अवतारों में से एक माने जाते हैं । विशेष दे० 'रामचंद्र' । २ परशुराम जो विष्णु के अष्टावतार माने जाते हैं । विशेष दे० 'परशुराम' । ३ कृष्ण के बड़े भाई बलराम या बलदेव । विशेष दे० 'बलराम' ।

मुहा०—राम शरणा होना = (१) साधु होना । विरक्त होना । (२) मर जाना । परलोकवासी होना । उ०—राम राम कहि राम सिय राम शरण भए राउ ।—नुलसी (शब्द०) । राम जाने = (१) भुके नहीं मालूम । ईश्वर जाने । (२) यदि मैं भूठ कहता होऊँ तो उसके साक्षी भगवान हैं (एक शपथ) । राम राम करना = (१) अभिवादन करना । प्रणाम करना । (२) भगवान् का नाम जपना । राम नाम सत्य है = एक वाक्य जिसका प्रयोग कुछ हिंदू जातियों में मृतक को श्मशान ले जाने के समय होता है और जिससे ससार की असारता और मिथ्यात्व तथा ईश्वर की सत्यता का बोध होता है । राम राम करके = बड़ी कठिनता से । किसी प्रकार । उ०—राम राम करके वाममती से पीछा छूटा है, फिर यह विपत्त कहीं से आई ।—अयोध्या (शब्द०) । राम राम होना = भेंट होना । मुलाकात होना । उ०—कैसे हूँ है दर्ई मेरे आनंद की जई राम, भई राम राम आज नई राम राम सो ।—रामकवि (शब्द०) । राम राम हो जाना = मर जाना । गत हो जाना । उ०—ती ली रहे प्राण दशरथ जू के नीके, पाछे राम नाम लेत राजा राम राम हूँ गयो ।—रामकवि (शब्द०) ।

४ तीन की सख्या । ५ ईश्वर । भगवान् । ६ एक मात्रिक छंद जिसमें ६ और ८ के विराम में प्रत्येक चरण में १७ मात्राएँ होनी हैं और अंत में यगण होता है । जैसे,—सुनिए हमारी, धिनय मुरारी । दीजै हमारी, विपत्ति टारी । ७ वरुण । ८. घोडा । ९ अशोक वृक्ष । १० रति । ११ वधुआ । एक साग । १२ तेजपत्ता । १३ प्रेम करनेवाला । प्रेमी (को०) । १४. अरुण का एक नाम (को०) । १५ रात्रि का अवकार । १६ कुष्ठ । १७ तमालपत्र (को०) ।

राम^२—वि० १ मनोज्ञ । सुंदर । २ आनंददायक । ३ सुफेद । श्वेत । ४ काला । असित (को०) ।

रामअजीर—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राम + फा० अजीर] पाकर वृक्ष । पकरिया ।

रामक^१—वि० [सं०] आनंदयुक्त । आनंददायक ।

रामक^२—सञ्ज्ञा पुं० मंदिर का एक आकार प्रकार (को०) ।

रामकजरा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का धान जो अगहन में तैयार होता है ।

रामकपास—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राम + कपास] देवकपास । नरमा । विशेष दे० 'नरमा' ।

रामकरी, रामकली—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] एक रागिनी ।

विशेष—यह भैरव राग की स्त्री मानी जाती है । इसके गाने का समय प्रातः काल १ दंड से ५ दंड तक है । यह संपूर्ण जाति की रागिनी है और इसमें ऋष्यम तथा निपाद कोमल लगते हैं ।

रामकाड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रामकाण्ड] एक प्रकार का बेंत (को०) ।

रामकौटा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + कौटा] एक प्रकार का बवूल ।

रामकिरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रामकली' ।

रामकृत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक राग का नाम (को०) ।

रामकेला—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + केला] १ एक प्रकार का बड़िया केला ।

विशेष—इसके पेड़ का तना, फूल आदि गहरे लाल रंग के होते हैं । इसका फल पतला और प्रायः एक बालिशत लंबा होता है । यह बबई प्रातः की ओर अधिकता से होता है और बगाल के केलो से आकार प्रकार में बिलकुल भिन्न होता है ।

२. एक प्रकार का बड़िया आम जो बगाल और मिथिला में होता है ।

रामक्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक राग । दे० 'रामकरी' (को०) ।

रामक्षेत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार दक्षिण देश का प्राचीन तीर्थ ।

रामखंड—सञ्ज्ञा पुं० [म० रामखण्ड] पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थ ।

रामगंगा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रामगङ्गा] एक छोटी नदी जो पीलीभीत के निकट से निकलकर कन्नौज के आगे गंगा में मिलती है ।

रामगिरि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नागपुर जिले की एक पहाड़ी जिसका वर्णन कालिदास ने अपने मेघदूत में किया है । आजकल इसे रामटेक कहते हैं ।

विशेष—कुछ लोग चित्रकूट को रामगिरि मानते हैं। पर मेघदूत में जो स्थिति दी हुई है, उससे वह नागपुर ही के पाम होना चाहिए।

रामगिरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'रामकली'।

रामगोती—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में ३६ मात्राएँ होंगी हैं। जैसे,—यहि भाँति बरखे सुभट गरा कहँ जीत लव रणवीर।

रामचर्गी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] एक तरह की तोप। उ०—चलै रामचर्गी घरा में घमकै। सुने तँ अवाजँ बली वीरि सर्फै।—पद्माकर प्र०, पृ० १०।

रामचंद्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रामचन्द्र] अयोध्या के राजा इक्ष्वाकुवंशी महाराजा दशरथ के बड़े पुत्र जो ईश्वर वा विष्णु भगवान् के मुख्य अवतारों में माने जाते हैं और जिनकी कथा रामायण में वर्णित है।

विशेष—इनका जन्म कौशल्या के गर्भ से हुआ था और इन्होंने वशिष्ठ मुनि से शिक्षा पाई थी। जब ये बालक थे, तभी विश्वामित्र मुनि इन्हें अपने यज्ञ की रक्षा के लिये अपने साथ वन में ले गए थे, जहाँ इन्होंने अनेक राक्षसों का वध किया था। जब यज्ञ समाप्त हो गया, तब ये अपने छोटे भाई लक्ष्मण और गुरु विश्वामित्र के साथ राजा जनक के यहाँ सीता के स्वयंवर में गए। वहाँ इन्होंने शिवजी का घनुप तोड़कर सीता का पाणिग्रहण किया। जब ये लौटकर अयोध्या आए, तब राजा दशरथ इनका अभिषेक करके इन्हें राजगद्दी देना चाहते थे, पर रानी कौशल्या के कहन से उन्होंने इन्हें चौदह वर्षों तक वन में रहने के लिये भेज दिया। जब ये वन जाने लगे, तब इनकी स्त्री सीता और इनके छोटे भाई लक्ष्मण भी इनके साथ ही गए। इनके वन जाने पर पीछे इनके दुखी पिता दशरथ की मृत्यु हो गई। कँकैया अपने पुत्र भरत को सिंहासन पर बैठाना चाहती थी, पर भरत ने स्पष्ट कह दिया कि यह राज्य मेरे बड़े भाई रामचंद्र का है, और मैं इसे ग्रहण नहीं कर सकता। पीछे भरत रामचंद्र को समझाकर लाने के लिये वन में भी गए, पर रामचंद्र ने कह दिया कि मैं पिता की आज्ञा से चौदह वर्षों के लिये वन में आया हूँ। और जब तक यह अवधि पूरी न हो जायगी, तब तक मैं लौटकर अयोध्या नहीं चल सकता। हमपर भरत इनके खडाऊँ ले जाकर और उसे सिंहासन पर स्थापित करके, इनकी आर से, इनकी अनुपस्थिति में शासन करने लगे। वनवास काल में रामचंद्र अनेक वनों और पर्वतों पर और ऋषियों आदि के आश्रमों पर धूमा करते थे। दंडकारण्य में एक बार लका का राजा रावण आकर छल से सीता को हर ले गया। इसपर इन्होंने बहुत से वानरों आदि को साथ लेकर लका पर चढ़ाई की और युद्ध में रावण तथा उसके साथी राक्षसों को मारकर और उसका राज्य उसके छोटे भाई विभीषण को देकर अपनी स्त्री सीता को अपने साथ ले आए। वनवास की अवधि पूरी हो गई थी, इसलिये ये सीधे अयोध्या चले आए और वहाँ आकर सुख से राज्य करने लगे। इनका शासन प्रजा

के लिये इतना अधिक सुख था कि अब तक लोग इनके राज्य को आदर्श ममझते हैं, और अजय राज्य की उपमा 'रामराज्य' से देते हैं।

रामचक्रा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + चक्र] १ वरा नामक पकवान जो उड़द की पीठी का बनता है। २ बड़ा और मोटा रोटी जो किसान लोग खाते हैं। लिट्टी। वाटो।

रामचना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राम + चना] खटुआ बेल। अत्यम्लपर्णी।

रामचिड़िया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राम + चिड़िया] एक प्रकार का जलपक्षी जो मछलियाँ पकड़कर खाता है। मछरगा।

रामजननी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रामचंद्र की माता, कौशल्या। २. बलराम की माता, रोहिणी। ३ परशुराम की माता, रेणुका।

रामजना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राम + जना (= उत्पन्न)] १ एक सकर जाति जिसकी कन्याएँ वैश्यावृत्ति करती हैं।

विशेष—रुई वातों में यह जाति गधर्व जाति में मिलती जुलती होती है, पर साधारणतः उससे नीची समझी जाती है। इस जाति के लोग प्रायः राजपूताने, उत्तर प्रदेश तथा बिहार में पाए जाते हैं।

२ वह जिसके माता पिता का पता न हो। वर्यांसकर।

रामजनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राम + जना (= उत्पन्न)] १ रामजना जाति की स्त्री। २ वैश्या। रडी। ३ वह स्त्री जिसके पिता का पता न हो। उ०—रामजनी सन्ध्यामिनी पटु पटवा की बाल। केशव नायक नायिका सखी करहि सब काल।—केशव (शब्द०)।

रामजमानी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + जमानी (अजवायन)] एक प्रकार का बहुत बारीक चावल।

रामजयती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रामजयन्ती] देवी की एक मूर्ति का नाम।

रामजामुन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + जामुन] मफोले आकार का एक प्रकार का जामुन का वृक्ष, जो प्रायः सारे उत्तरी और पूर्वी भारत तथा बरमा और लका में होता है।

विशेष—इसके फल बहुत बड़े बड़े और स्वादिष्ट होते हैं। इसकी लकड़ी यद्यपि साधारण जामुन की लकड़ी के समान उत्तम नहीं होती, तो भी इसारत तथा खेती के औजार बनाने के काम में आती है। यह छोटी नदियों के किनारे अधिकतर होता है।

रामजौ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + हि० जौ] एक प्रकार की जई जिसके दाने साधारण जौ से कुछ बड़े होते हैं।

रामफोल—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राम + हि० फूलना] पाजेव। पायल।

रामटेक—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राम + टेक (= टेकड़ी, पहाड़ी)] नागपुर जिले की एक पहाड़ी जहाँ रामचंद्र का एक मंदिर है। यह एक तीर्थस्थान माना जाता है। विशेष दे० 'रामगिरि'।

रामटोडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक मकर रागिनी जिसमें गाधार कोमल और शेष सब स्वर शुद्ध लगते हैं ।

रामठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बृहत्संहिता के अनुसार एक देश जो पश्चिम में है । २ इस देश का निवासी । ३ हींग । ४ अखरोट का वृक्ष । ५ मैनफल । ६ चिचडा ।

रामठी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हींग ।

रामण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रावण] दे० 'रावण' । उ०—रामण नह मोनो दियो, लहि सोना री लक ।—वी० रामो, पृ० ५४ ।

रामणीयक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रमणीयत्व । मनोहरता ।

रामणीयक^२—वि० रमणीय । मनोहर ।

रामत—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रामति] दे० 'रामति' । उदा०—फिर रामत की भाशा लीन्ही ।—चरण० वानी, पृ० २०१ ।

रामतरुणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ सेवती । २ सीता जी ।

रामतरोई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राम + तरोई या तुरई] भिंडी नामक फली जिसकी तरकारी बनती है ।

रामता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राम का गुण । रामपन । रामत्व । उ०—आजु राम रामता निहारौं । नेकु शकु मन महीं नहि धारौं ।—रघुराज (शब्द०) ।

रामतापनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम जो प्राचीन उपनिषदों में नहीं है, बल्कि एक सांप्रदायिक पुस्तक है ।

रामतारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राम जी का मंत्र जो रामोपासक लोग जपते हैं ।

विशेष—कहते हैं, काशी में जो लोग मरते हैं, उन्हें शिव जी इसी मंत्र का उपदेश करते हैं, जिसके प्रभाव से उनकी मुक्ति हो जाती है । यह मंत्र इस प्रकार है 'रा रामाय नम' ।

रामति—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रमन (= धूमना फिरना)] भिन्ना के लिये इधर उधर धूमना । भिन्नो की फेरी ।

रामतिल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + तिल] एक प्रकार का तिल ।

रामतीर्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रामगिरि नामक स्थान । रामटेक । २ बगाल के एक प्रसिद्ध संत ।

रामतुलसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'रामा तुलसी' ।

रामतेजपात—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राम + तेजपात] तेजपात की जाति का एक प्रकार का वृक्ष जो पूर्वी बगाल, बरमा, और अरुमन टापू में अधिकता से होता है ।

विशेष—इसके पत्तों का व्यवहार तेजपत्तों के समान होता है और लकड़ी संदूक तथा तख्ते आदि बनाने के काम में आती है ।

रामत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राम का भाव । रामता । रामपन ।

रामदल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रामचंद्र जी की बदरवाली सेना, जिसके नीचे लिखे १८ मुख्य यूथप थे—(१) लक्ष्मण, (२) सुग्रीव, (३) नील, (४) नल, (५) मुद्गेन, (६) जामवत, (७) हनुमान, (८) अगद, (९) केशरी, (१०) गवय, (११) गवाक्ष, (१२) गज, (१३) विशीपण, (१४) द्विविद, (१५) तार, (१६) कुमुद, (१७) शरभ और (१८) दधिमुख ।

२ कोई बड़ी और प्रबल सेना जिम्का मुकाबला करना कठिन हो ।

रामदोना—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + हि० दाना] १ मरते या चौराई की जाति का एक पौधा जिम्में मफेद रंग के एक प्रकार के बहुत छोटे छोटे दाने लगते हैं ।

विशेष—ये दाने कई प्रकार में खाए जाते हैं और इनकी गिनती 'फलाहार' में होती है । पहाड़ों में यह वर्षसाख जठ में बोया और कुआर में तैयार हो जाता है, पर उत्तरी, पश्चिमी तथा मध्य भारत में यह जाड़े के दिनों में भी होता है । कहीं कहीं बागों में भी शोभा के लिये इसके पौधे लगाए जाते हैं ।

२ एक प्रकार का धान ।

रामदास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हनुमान । २, एक प्रकार का धान । ३ दक्षिण भारत के एक प्रसिद्ध महान्मा जो छत्रपति महाराज शिवाजी के गुरु थे और जिन्हें लोग स्वामी रामदास या समर्थ रामदास भी कहते हैं ।

विशेष—स्वामी रामदास का जन्म शक सं० १५३० की रामनवमी के दिन गोदावरी के तट पर जवू नामक स्थान में एक ब्राह्मण के घर हुआ था । पहले इनका नाम नागयण था । ये बाल्यावस्था में ही बहुत रामभक्त थे । कहते हैं कि जब ये ८ वर्ष के थे, तब एक बार रामचंद्र जी ने इन्हें दर्शन देकर कहा था कि तुम म्लेच्छों का नाश करके धर्म की दुर्दशा से बचाओ और उसे पुनः स्थापित करो । तभी से इनके मन में वैराग्य उत्पन्न हुआ जिसे दूर करने के लिये माता पिता ने इनका विवाह करना चाहा । पर ये विवाहमंडप से उठकर भाग गए और नासिक के पास की एक गुफा में जाकर तपस्या करने लगे । फिर बहुत दिनों तक इधर उधर तीर्थयात्रा करते रहे । उस समय तक दक्षिण भारत में इनकी साधुता की बहुत प्रसिद्धि हो चुकी थी जिम्को सुनकर शिवाजी इनके दर्शन के लिये आए और तब से इनके परम भक्त हो गए । महाराज शिवाजी प्रायः सब कामों में इनमें परामर्श और आज्ञा ले लिया करते थे । कहते हैं, इन्होंने अपने जीवन में अनेक विलक्षण चमत्कार दिखाए थे । इनकी मृत्यु शक सं० १६०३ के माघ मास में हुई थी । इनके उपदेशों और मंत्रों का दक्षिण भारत के अरबों में अब तक बहुत अधिक प्रचार है ।

रामदूत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हनुमान जी ।

रामदूती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार की तुंगरी ।

पर्या०—पर्वपुष्पी । विशक्या । सूक्ष्मपत्नी । भवान्याह्वा ।

२. नागदती । नागदौन । ३. नागपुष्पी ।

रामदेव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रामचंद्र । २ एक संप्रदाय जो राजपूताने में प्रचलित है और जिसके अधिकांश अनुयायी चमार्ण आदि अस्पृश्य जातियों के लोग हैं ।

रामधनुष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रघुधनुष ।

रामधाम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानेते लोक जहाँ भगवान् विष्णु राम रूप में विराजमान माने जाते हैं ।

रामननुआ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + ननुआ] १ घीया। २ कद्दू। लौकी। लौवा।

रामनवमी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चंद्र सुदी नवमी जिस दिन रामचंद्र जी का जन्म हुआ था। इस दिन हिंदू रामजन्म का उत्सव मनाते और व्रत रखते हैं।

रामना—क्रि० अ० [सं० रमण] घूमना। फिरना। विचरना। उ०—
(क) एक समय वहुँ रामत माही। पर्यो अकेल रहेउ कोउ नाही।—रघुराज (शब्द०)। (ख) एक समय रामन हितै कीन्ह्यो कहूँ पयान।—रघुराज (शब्द०)।

रामनामी—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + नाम + ई (प्रत्य०)] १ वह चादर, दुपट्टा या धोती आदि जिसपर 'राम राम' छपा रहता है और जिसका व्यवहार राम के भक्त लोग इसलिये करते हैं जिसमें राम का नाम हरदम आँखों के सामने रहे।

विशेष—इसी प्रकार कुछ कपड़ों पर कृष्ण या शिव का नाम भी छपा रहता है।

२ गले में पहनने का एक प्रकार का हार जो प्रायः सोने का होता है।

विशेष—इसमें छोटे छोटे कई टिकड़े या पान आदि होते हैं, जो आपस में एक दूसरे के साथ जजीर के कई छोटे छोटे टुकड़ों या लड्डों से जड़े होते हैं। इसके बीच में प्रायः एक पान होता है, जिसमें 'राम' शब्द, किसी देवता की मूर्ति अथवा चरणचिह्न अंकित होता है और जो पहनने पर छाती पर लटकता रहता है। इसी के कारण इसे रामनामी कहते हैं।

रामनौमी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रामनवमी] दे० 'रामनवमी'।

रामपात—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + पात्र] नील की जाति की एक प्रकार की भाड़ी जो आसाम देश में होती है और जिसकी पत्तियों तथा छाल से वहाँ के लोग रंग बनाते हैं।

रामपुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ स्वर्ग। वैकुण्ठ। २ अयोध्या।

रामफटाका—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + फटाका ?] तीन खड़ी लकीरी-वाला तिलक जिसे रामानंदीय साधु लगाते हैं। इसे ऊर्ध्वपुंड्र भी कहते हैं।

रामफल—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + फल] शरीफा। सीताफल।

रामबंटाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राम + बाँटना] वह विभाग जिसमें आधा एक व्यक्ति और आधा दूसरे व्यक्ति को मिले। आधे आधे की बाँटाई।

विशेष—यह न्याययुक्त होती है, इसी में इसे रामबंटाई कहते हैं।

रामबबूल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + बबूल] एक प्रकार का बबूल या कीकर जो गुजरात, भग और भेलम में अधिकता से होता है।

विशेष—इसकी डालियाँ सरो की डालियों की तरह तने से सटी रहती हैं। इसकी लकड़ी कम मजबूत होती है। इसे कावुली कीकर भी कहते हैं।

रामबाँस—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + बाँस] १, एक प्रकार का मोटा

बाँस जो प्रायः नालकी के डंडे बनाने के काम में आता है। २ केतकी या केवडे की जाति का एक पौधा जिसके पत्ते नोले और खाँडि की तरह दो ढाई हाथ लंबे होते हैं।

विशेष—यह सारे भारत में या तो आपसे आप होता है या कहीं कहीं बोया भी जाता है। इसकी पत्तियाँ कूटकर एक प्रकार का रेशा निकाला जाता है, जो रस्से और रस्सियाँ आदि बनाने के काम में आता है। इन पत्तियों में एक प्रकार का तेजाबी रस होता है जिसके हाथ में लगने से छाले पड़ जाते हैं, इसलिये पत्तियाँ कूटने के समय कहीं कहीं हाथों में एक प्रकार के दस्ताने पहन लेते हैं। इसकी जड़ और पत्तियों का शोषधि के रूप में भी व्यवहार होता है। रैन की सबकी के किनारे यह अक्सर लगाया जाता है।

रामवान—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + वान] १ एक प्रकार का नरसल। रामशर। विशेष दे० 'रामशर'। ३ दे० 'रामवाण'।

रामविलास—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + विलास] एक प्रकार का धान।

रामवोला—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + वोला] वह जो राम राम बोलता हो। गास्वामी तुलसीदास का एक नाम। उ०—
राम को गुलाम नाम रामवोला राख्यो राम, काम यहै नाम दै हा कवहुँ कहत हौ।—तुलसी प्र०, पृ० ४९९।

रामभक्त—वि० [सं०] रामचंद्र का उपासक।

रामभक्त—सञ्ज्ञा पुं० हनुमान्।

रामभद्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रामचंद्र।

रामभोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राम + भोग] १ एक प्रकार का चावल। २. एक प्रकार का आम।

राममंत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राममन्त्र] 'रामतारक'

रामरक्षा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राम जी का एक स्तोत्र जिसके कर्ता विश्वामित्र जी माने जाते हैं।

विशेष—कहते हैं कि इस स्तोत्र के मंत्रों में अभिमंत्रित किया हुआ व्यक्ति विशेष रूप से मुग्ध रहता है।

रामरज—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की पीली मिट्टी जिसका वैष्णव लोग तिलक लगाते हैं। यह मध्य प्रदेश में नदियों (जैसे, चित्रकूट की मदाकिनी) के किनारे बहुत मिलती है।

रामरत्न—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + रत्न] चंद्रमा। (हिं०)।

रामरस—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राम + रस] १ नमक। २ पीसी या बनी हुई भग। (मदरास)।

रामरसडाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राम + रस + डाली] एक प्रकार की ऊँख जो कनारा में पैदा होती है।

रामराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रामराज्य] दे० 'रामराज्य'।

रामराज्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रामचंद्र जी का शासन जो प्रजा के लिये अत्यंत सुखदायक था। २ वह शासन जिसमें रामचंद्र के शासनकाल का सा सुख हो। अत्यंत सुखदायक शासन। ३ मैसूर देश।

राम राम—नया पुं [हिं राम] प्रमाण । नव-वार । अर्थ—
नये द्वारा राम राम कह देता ।

विशेष—एक वा का प्रयोग हिन्दुओं में परम्पर गणितारत से
दिने जाता है ।

रत्न राम—रत्न श्री भेट । सुलाहात । भाषण । अर्थ—रत्न से
रामही उवाची राम राम होगी ।

रामल—विं [मं] मल नवधी । रामन वा ।

रामलयम्—नया पुं [मं] गीतर नमक ।

रामलीला—नया पुं [मं] १ राम जी के जीवन्मात के विना
कृत्य का नाटक । राम के चरित्र का गणित । २ एक
भाषिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में ३४ मात्राएं होती हैं और
अंत में 'जयम' का होता आचरणक होता है । उ०—प्रणव
ध्रुव धरात जय जय वरित श्री गुरुतय । अस्त तुं अरु मिद
अवज अवन मुनि मुनि गाय । कय वा अरु नम जात
गिना मम पर नारि । गिला न मुनि परम मुदर करव मेक
गिरादि ।—केशव (अ २०) ।

रामदलभो—सजा पुं [मं] नैतयवा का एक अप्रदाय जिसके
धनुषायी बंधन के कुछ जिनों में पाए जाते हैं ।

रामवाक्—सजा पुं [मं] वैद्यक में एक प्रकार का राम जो पात्र,
पथक, मीनिका आदि के योग में बनता है और जो अजीर्ण
के दिने बहुत उपयोगी माना जाता है ।

रामघाण्ट—विं वा तुल उपवर्षी गिरा ही । तुलत प्रभाद शिवादे
भावा (भाषण) ।

रामघीणा—सजा श्रीं [मं] एक प्रकार की तीष्णा ।

रामहर—नया पुं [मं] एक प्रकार का चरमन वा चरमन की
दवायक मन्त्रों में घाय हो भाषण उवाच से और चरम ही के
भाषण प्रकार श्री राम राम का होता है । चरम केवन उवाच
में होता है कि हममें कुछ भी राम नहीं जाता । उ०—तुलसी
राम ही कदा से मयाही मुदा हार । भाँक जयती रामर
राम वात गि हीत ।—गुण (अ २०) ।

रामाशिका—सजा श्रीं [मं] नया ही एक प्रकार की विशेष
भाषण है ।

रामादी—सजा पुं [मं] एक प्रकार का भाषण जिसे राम ही
ही और राम का पदनाम है ।

रामात्म—सजा पुं [मं रामतर] एक प्रकार की भाषण जिसमें राम ही
का राम वमाते हैं । अर्थ ।

रामात्म—सजा पुं [मं] एक प्रकार का भाषण जिसमें राम ही
का राम वमाते हैं । अर्थ ।

रामात्मही—सजा पुं [हिं राम ही श्रीं] भाषण जिसमें राम ही
का राम वमाते हैं । अर्थ ।

विशेष—एक वा का प्रयोग हिन्दुओं में परम्पर गणितारत से
दिने जाता है ।

भा । राम राम नव-वार । अर्थ—नये द्वारा राम राम कह देता ।

रामरत्नी—विं राम से मल नवधी । रामन वा ।

रामलीला—नया पुं [मं] राम जी के जीवन्मात के विना
कृत्य का नाटक । राम के चरित्र का गणित । २ एक
भाषिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में ३४ मात्राएं होती हैं और
अंत में 'जयम' का होता आचरणक होता है । उ०—प्रणव
ध्रुव धरात जय जय वरित श्री गुरुतय । अस्त तुं अरु मिद
अवज अवन मुनि मुनि गाय । कय वा अरु नम जात
गिना मम पर नारि । गिला न मुनि परम मुदर करव मेक
गिरादि ।—केशव (अ २०) ।

रामल—विं [मं] मल नवधी । रामन वा ।

रामलयम्—नया पुं [मं] गीतर नमक ।

रामसेतु—नया पुं [मं] दक्षिण भाग की दक्षिण भाग का
विशेष भाग । या एक प्रकार का मन्त्र जिसमें राम ही का पदनाम
है । अर्थ ।

रामसेतु—नया पुं [मं] दक्षिण भाग की दक्षिण भाग का
विशेष भाग । या एक प्रकार का मन्त्र जिसमें राम ही का पदनाम
है । अर्थ ।

रामा—सजा श्रीं [मं] एक प्रकार की तीष्णा ।

रामा—सजा श्रीं [मं] एक प्रकार की तीष्णा ।

रामाशिका—सजा श्रीं [मं] नया ही एक प्रकार की विशेष
भाषण है ।

रामादी—सजा पुं [मं] एक प्रकार का भाषण जिसे राम ही
ही और राम का पदनाम है ।

रामात्म—सजा पुं [मं रामतर] एक प्रकार की भाषण जिसमें राम ही
का राम वमाते हैं । अर्थ ।

रामात्मही—सजा पुं [हिं राम ही श्रीं] भाषण जिसमें राम ही
का राम वमाते हैं । अर्थ ।

ये एक स्मार्त अध्यापक से पढ़ने लगे। एक दिन रामानुज की शिष्यपरंपरा के राघवानंद से इनकी भेंट हुई, जिन्होंने इन्हें देखकर कहा कि तुम्हारी आयु बहुत थोड़ी है और तुम अभी तक हृदि की शरण में नहीं आए हो। इसपर ये राघवानंद से मंत्र लेकर उनके शिष्य हो गए और उनमें योग सीखने लगे। उसी समय इनका नाम रामानंद रखा गया। इनके समय में प्रायः सारे भारत में मुसलमानों के अनेक प्रकार के अत्याचार हुए थे, जिन्हें देखकर इन्होंने जाति पंक्ति का बंधन कुछ ढीला करना चाहा, और सबको राम नाम के महामंत्र का उपदेश देकर अपने 'रामावत' संप्रदाय में समिलित करना आरंभ किया। रामानुज के श्रीवैष्णव संप्रदाय की सकुचित सीमा तोड़कर इन्होंने उसे अधिक विस्तृत तथा उदार बनाया था। इनका भारीरात सं० १४६७ में हुआ था। इनके मुख्य शिष्यों में पीपा, कवीर, सेना, घना, रंदास आदि हैं।

रामानंदी—वि० [हि० रामानंद + ई (प्रत्य०)] १ रामानंद सवधी।
२ रामानंद के संप्रदाय का अनुयायी।

रामानुज—सज्ञा पुं० [सं०] १ रामचंद्र के छोटे भाई लक्ष्मण।
उ०—(क) रामानुज लघु देख लखाईं।—मानस, ६।३५। (ख) रामानुज आगे करि आए जहँ रघुनाथ।—मानस, ५।२०। वैष्णव मत के एक प्रसिद्ध आचार्य और श्रीवैष्णव संप्रदाय के प्रवर्तक।

विशेष—कहते हैं, रामानुज का जन्म सं० १०७३ में हुआ था। बाल्यावस्था में ये कांचीपुर (काजीवरम्) में रहते थे। पहले ये वैष्णव यामुन मुनि के अनुयायी हुए और फिर उनकी गद्दी भी इन्हीं को मिली और ये श्रीरगम् में रहने लगे। पर वहाँ के राजा शकराचार्य के अद्वैत मत के अनुयायी थे। अतः उनसे अन्वयन हो जाने के कारण ये मंसूर चले गए। वहाँ के जैन राजा विष्णुवर्धन को इन्होंने वैष्णव बना लिया था। उसी राज्य में सं० ११६४ में १२१ वर्ष की अवस्था में इनका देहांत हुआ था। इन्होंने वेदातसार, वेदातदीप तथा वेदार्थसंग्रह ये तीन ग्रंथ बनाए थे और ब्रह्मसूत्र तथा भगवद्गीता पर भाष्य किए थे। इनके दार्शनिक सिद्धांतों के आचार उपनिषद् हैं। वेदात में इनका सिद्धांत विशिष्टाद्वैत के नाम से प्रसिद्ध है।

रामाप्रिय—सज्ञा पुं० [सं०] दार चीनी।

रामायण—सज्ञा पुं० [सं०] वह ग्रंथ जिसमें रामचरित वर्णित हो। रामचंद्र के चरित्र में मगध रखनेवाला ग्रंथ।

विशेष—मस्कृत में रामायण नाम के बहुत से ग्रंथ हैं, जिनमें से वाल्मीकि कृत रामायण सबसे प्राचीन और अधिक प्रसिद्ध है। यह आदिकाव्य है और इसके रचयिता वाल्मीकि आदिकवि हैं। वाल्मीकि ऋषि रामचंद्र के समकालीन थे, अतः उनका ग्रंथ रामायण सबसे अधिक प्रामाणिक माना जाता है। इसमें मात कांड है जिनमें से प्रत्येक कांड अनेक सर्गों में विभक्त है। साधारणतः भारत में तीन प्रकार के वाल्मीकीय रामायण पाए जाते हैं—श्रीदीक्ष्य, दाक्षिणात्य और गौडीय। इन तीनों रामायणों के सर्गों की संख्या और पाठ आदि में बहुत कुछ अंतर है।

इतने प्राचीन काव्य की भिन्न भिन्न प्रतियों में इतना अधिक अंतर होना स्वाभाविक भी है। बहुत कुछ इसी रामायण के आचार पर और स्थान स्थान पर अन्धान्वय रामायणों की सहायता लेकर गोम्बामी तुनसीदाम जी ने 'रामचरितमानस' नामक जो प्रसिद्ध भाषाकाव्य लिखा है उनका बोध भी इस 'रामायण' शब्द से होता है। वाल्मीकि कृत रामायण के अतिरिक्त अथर्वाम रामायण आदि जो कई रामायण हैं, वे सांप्रदायिक हैं।

रामायणी^१—वि० [सं० रामायणीय] रामायण सवधी। रामायण का।

रामायणी^२—सज्ञा पुं० [सं० रामायण + ई (प्रत्य०)] १ वह जो रामायण का विशेष रूप में जानकार और पंडित हो। २ वह जो रामायण की कथा कहता हो। ३ वह जो रामलीला में रामायण गाता या पाठ करता हो।

रामायन—सज्ञा पुं० [सं० रामायण] ३० 'रामायण'।

रामायुध—सज्ञा पुं० [सं०] धनुष।

रामायत—सज्ञा पुं० [सं०] वैष्णव आचार्य रामानंद का चनाया हुआ एक प्रसिद्ध संप्रदाय।

विशेष—इस संप्रदाय के अनुसार मनुष्य ईश्वर की भक्ति करके सासारिक सकटों तथा आवागमन से बच सकता है। यह भक्ति राम की उपासना से प्राप्त हो सकती है और इस उपासना के अधिकारी मनुष्य मात्र हैं। जाति पंक्ति का भेद इसमें किसी प्रकार का अवरोध उपस्थित नहीं कर सकता।

रामिल—सज्ञा पुं० [सं०] १ रमण। २ कामदेव। ३ स्वामी। पति। ४ वह जिससे प्रेम किया जाय। प्रेमपात्र।

रामी—सज्ञा स्त्री० [सं० रामा] कास नामक घास।

रामेश्वर—सज्ञा पुं० [सं०] दक्षिण भारत में समुद्र के तट पर स्थापित एक प्रसिद्ध शिवलिंग।

विशेष—इसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इसे रामचंद्र जी ने लक्षा का पूल बाँधने के समय स्थापित किया था। यह भारत के चार मुख्य और सबसे बड़े तीर्थों में से एक तीर्थ है।

रामेपु—सज्ञा पुं० [सं०] १ रामशर। २ एक प्रकार की ईख।

रामाद्—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन ऋषि का नाम।

रामोपनिषद्—सज्ञा स्त्री० [सं०] अथर्ववेद के अतर्गत एक उपनिषद् का नाम।

राम्या—सज्ञा स्त्री० [सं०] रात्रि; रात।

राय^१—सज्ञा पुं० [सं० राजन्, राज, प्रा० राय (संस्कृत में भी प्रयुक्त)] १ राजा। २ छोटा राजा या सरदार। सामंत।
उ०—सब राजा रायन के वारी। बरन बरन पहिरे सब सारी।—जायसी (शब्द०)। ३ ममान की एक उपाधि।

यौ०—रायवहादुर। राय साहब।

विशेष—किसी किसी शब्द के पहले लगकर यह श्रेष्ठता या बड़ाई भी सूचित करता है, जैसे,—रायकरोंदा, रायमुनिया।

४ भाट। वर्दीजन। ५ गधवों की उपाधि। ६, ३० 'रायवेल'।

उ०—पीपल रुना फूल बिन फल बिन रुनी राय । एकाएकी मानुपा टप्पा दीया प्राय ।—कवीर (शब्द०) ।

राय^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] समति । अनुमति । मत । सलाह ।

क्रि० प्र०—देना ।—लेना ।—उहराना ।

मुहा०—राय कायम करना = किसी विषय में मत निश्चित करना । समति स्थिर करना । निर्णय करना ।

रायकरौंदा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राय (= बड़ा) + करौंदा] बड़ा करौंदा जिसके फल छोटे वेर के बराबर, सफेद और गुलाबी रंग मिले बहुत सुंदर होते हैं ।

रायकवाल—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] वैश्यो की एक जाति ।

रायज वि० [अ०] जिसका रवाज हो । जो व्यवहार में आ रहा हो । प्रचलित । चलनसार ।

रायजादा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राज, प्रा० राय + फा० जादह,] १ राय का पुत्र । २ एक जाति ।

रायजादी^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राज, प्रा० राय, राय + फा० जादी] राजकुमारी । राजपुत्री । उ०—रायजादी घर अगगाइ छुटे पटे छछाल ।—ढोना०, हू० ५४० ।

रायण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पीडा । दर्द । २ आवाज करना । ध्वनि होना [को०] ।

रायता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजिकाक्त] दही या मठ में उजाला हुआ साग, कुम्हडा, लीमा या बुंदिया आदि जिनमें नमक, मिर्च, जीरा, राई आदि मसाले पड़े रहते हैं । उ०—पानीरा रायता पकौरी । डमकौरी मुंगछी सुठि नीरी ।—मूर (शब्द०) ।

राय बहादुर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राय + फा० = बहादुर] एक प्रकार की उपाधि जो पहले भारत की अंगरेजी सरकार की ओर से रईसों, जमींदारों तथा सरकारी कर्मचारियों आदि को दी जाती थी ।

रायवेल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राय + वेल्] एक प्रकार की लता जिनमें बहुत ही सुंदर और सुगंधित दोहरे फूल लगते हैं ।

रायवेलि^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'रायवेल' । उ०—रायवेलि महकति सखी अति सुगंध रस केलि । क्यो न रमत तू श्याम सो कठ भुजा दोड मेलि ।—भारतेंदु प्र०, भा० २, पृ० ७८६ ।

रायभाटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नदी की धारा । नदी का प्रवाह [को०] ।

रायभोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजभोग] १ एक प्रकार का धान । राजभोग । उ०—रायभोग श्री काजर रानी । भिनवा रुद श्री दा उदखानी ।—जायपी (शब्द०) ।

रायमुनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० राय + मुनिया] लाल नामक पत्तों की मादा । सदिया । रायमुनिया । उ०—जनु रायमुनी तमाल पर बैठी विपुल सुख आपने ।—मानस, ६।१०२ ।

रायरगाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रायरगाल] एक प्रकार का नृत्य जिसे केशव ने रापरगाल लिखा है । दे० 'रापरगाल' ।

रायरगाल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राय + राय + फा० आन (प्रत्य०)] १ राजाओं के राजा । राजाधिराज । २. मुगल के समय का एक

उपाधि जो प्राय रईसों, जमींदारों और राजकर्मचारियों आदि को दी जाती थी ।

रायरासि^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजराशि] राजा का कोष । शाही खजाना । उ०—भई मुदित सब ग्राम वधुटी । रंकह रायरासि जनु लूटी ।—तुलसी (शब्द०) ।

रायल—वि० [अ०] १ राजकीय । शाही । २ छापने की कलो तथा कागज की एक नाप जो २० इंच चौड़ी और २६ इंच लंबी होती है ।

रायसा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रहस्य या राजसूय ?] १. वह काव्य जिसमें किसी राजा का जीवनचरित्र वर्णित हो । रासो । जैसे—पृथ्वीराज रायसा । २ युद्ध । लड़ाई । संग्राम । उ०—भयो रायसौ दुहुनि कौ, जेहि बिधि सो निरधारि । हम्मौर०, पृ० २ ।

राय साहब—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राय + फा० साहब] एक प्रकार की पदवी जो पहले भारत की अंगरेजी सरकार का ओर से रईसों और राजकर्मचारियों आदि को दी जाती थी ।

रार^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रारि, प्रा० राडि (= लड़ाई)] झगडा । टटा । हुजत । तकरार । उ०—खजन जुग माना करत लराई की बुझावत रार ।—सुर (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—करना ।—ठानना ।—मचाना ।

रार^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रार] दे० 'राल' ।

रार^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रारट (= झू)] नेत्र । आँख । उ०—(क) यो मुख झूठी आखनै पूगी साह दवार । अरज हुवता अमपतो कीचो रती रार ।—रा० ह०, पृ० १०२ । (ख) नवहृत्थो मत्थो बडो रोस भटक्कै रार ।—बाँकी० प्र०, भा० १, पृ० ११ ।

रारि^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रार] लड़ाई । झगडा । रार । उ०—राम रावनहि परसपर होति रारि रन घोर ।—तुलसी प्र०, पृ० ८६ ।

राल^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ एक प्रकार का बहुत बड़ा सदावहार पेड़ जो दक्षिण भारत के जंगलों में होता है ।

विशेष—इसकी लकड़ी किसी काम की नहीं होती, पर इसका निर्याम बहुत काम का होता है, जो 'राल' के नाम से बाजारों में मिलता है । यह निर्याम दो प्रकार का होता है—सफेद और काला । जब वृक्ष प्राय दो वर्ष का होता है, तब उसके तने में जगह जगह काट देते हैं, जहाँ से चैत से अगहन तक निर्याम निकला करता है । यह निर्याम प्राय दस वर्ष तक निकलता रहता है । इसका व्यवहार प्राय वानिज आदि के काम में होता है, और कुछ औषधों में भी इसका प्रयोग होता है ।

२ इस वृक्ष का निर्याम । घुना । घुव ।

यौ०—रालकार्य—राल, वृक्ष ।

राल^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का कबल ।

रील^१—सद्वा स्त्री० [सं० लाला] १ वह पतला लसदार थूक जो प्राय वच्चो और कभी कभी बुढ़ो के मुँह से आपसे आप बहा करता है। दाँतो की पीडा आदि मे कोई कोई दवा लगाने पर भी यह मुँह मे निकलकर गिरने लगती है। लार।

मुहा० रान गिरना, चूना या टपकना = किसी पदार्थ को देखकर उमे पाने की बहुत इच्छा होना। मुँह मे पानी भर आना। जैसे,—जहाँ कोई अच्छी चीज दिखाई दी कि तुम्हारे मुँह से राल टपकी।

२ चौपायो का एक रोग जिसमे उन्हे खामी आती है और उनके मुँह से पतला लसदार पानी गिरता है।

रालना (उ०) ^१—क्रि० सं० [हि० रलना] १ डालना। फेंकना। उ०—(क) माँड पीवइ कण रालजे लाल विहृणी वाजै है षट।—वी० रासो, पृ० ७६। (ख) वरगा राल वरमाल मुरा वरै, त्रिपत पखाल दिल खुले ताला।—रघु० ६०, पृ० २०। २ डालना। बहाना। उ०—रोग सुत किम नीर राल, दलै, भावी कौण, टालै, हुवो होवण हार।—रघु० ६०, पृ० ११६।

रालना (उ०) ^१—क्रि० अ० [सं० लल (= चाहना), प्रा० लल] पसद करना। चाहना। इच्छा करना। उ०—कत कहै मुनि सर्व सोहागिनि तेरा बोल न रालीं। अत्र कं क्योही छुटन पाऊं वहरि न तोहि संभाली।—सुंदर० ग्र०, भा० २, पृ० ८२७।

राली—सद्वा स्त्री० [देश०] एक प्रकार का वाजरा जिसके दाने बहुत छोटे होते हैं।

विशेष—यह प्राय सयुक्त प्रात और बुंदेलखंड मे होता है। यह फागुन चैत मे बोया जाता है और बैसाख मे तैयार होता है।

राव^१—सद्वा पुं० [सं० राजा, प्रा० राय] १ राजा। २ सरदार। दरबारी। ३ भाट। बदीजन। ४ कच्छ और राजपूताने के कुछ राजाओं की एक पदवी। ५ श्रीमंत। अमीर। घनाढ्य।

राव^२—सद्वा पुं० [सं०] १ ध्वनि। शब्द। गुजार। २ चिल्लाहट। रभण (को०)।

राव^३—सद्वा पुं० [देश०] छोटे आकार का एक पेठ जिसकी लकडी कुछ ललाई लिए, चिकनी और मजबूत होती है।

विशेष—यह हिमालय की तराई मे हजारे और शिमले से भूटान तथा शिकम तक होता है। इसकी लकडी की प्राय छडियाँ बनाई जाती हैं।

रावचाव—सद्वा पुं० [हि० राव (= राजा) + चाव] १ नृत्य गीत आदि का उत्सव। राग रग। २ प्यार। लाड। दुलार।

रावट^१—सद्वा पुं० [हि० रावल] महल। राजभवन।

रावट (उ०) ^१—सद्वा पुं० [सं० राजवर्तक] दे० 'लाजवर्द'। उ०—रावन लका मैं डही ओई हंम डहन आइ। कर्न पहार होत है रावट को राखै गहि पाइ।—पदमावत, पृ० १६६।

रावटी—सद्वा स्त्री० [हि० रावट] १ कपडे का बना हुआ एक प्रकार का छोटा घर या डेरा जिसके बीच में एक बँडेर होती है और जिसके दोनों ओर दो ढालुएँ परदे होते हैं। यह बडे खेमो के साथ प्राय नौकरो आदि के ठहरने के लिये रखी जाती है।

छोलदारी। २ किमी चाँज का बना हुआ छोटा घर। उ०—जिहि निदान दुपहर रहै भई माह की राति। तिहि उत्तार को रावटी खरी आवटी जाति।—विहारो (जबद०)। ३ बारह दरी। ४ दे० 'लाजवर्द'।

रावण^१—पि० [सं०] जो दमरो को रलाता हो। रुनानेवाला।

रावण^२—सद्वा पुं० १ लका का प्रविद्ध राजा जो राक्षसों का नायक था और जिसे युद्ध मे भगवान् रामचंद्र ने मारा था।

विशेष—एक वार लका मे राक्षसों के साथ विष्णु का घोर युद्ध हुआ था जिसमे राक्षस लोग परास्त होकर पाताल चले गए थे। उन्ही राक्षसों मे मुम ली नामक एक राक्षस था, जिसकी कंकरी नाम की कन्या बहुत मुदरी थी। मुमाली ने मोचा कि इसी कन्या के गर्भ से पुत्र उत्पन्न करा के विष्णु से बदला लेना चाहिए, इसी लिये उमने अपनी कन्या को पुलस्त्य के लडके विश्रवा के पाम मतान उत्पन्न कराने को भेजा। विश्रवा के गर्भ से कंकरी के गर्भ मे पहला पुत्र यही रावण हुआ जिसके दश सिर थे। इसका रूप बहुत ही विकराल और स्वभाव बहुत ही क्रूर था। इसके उपरांत कंकरी के गर्भ मे कुभकर्ण और विभीषण नाम के दो और पुत्र तथा शूर्पणखा नाम की एक कन्या हुई। एक दिन अपने वैमानिक कुबेर को देखकर रावण ने प्रतिज्ञा की कि मैं भी इसी के समान सपन्न और तेजवान् बनूँगा। तदनुसार वह अपने माइयो को साथ लेकर घोर तपस्या करने लगा। दस हजार वर्ष तक तपस्या करने के उपरांत भी मनोरथ सिद्ध होता न देखकर इसने अपने दसो मिर काटकर अग्नि मे डाल दिया। तब ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर इसे वर दिया कि दैत्य, दानव, यक्ष आदि मे से कोई तुम्हे मार न सकेगा। तब मुमाली ने रावण से कहा कि अब तुम लका पर अधिकार करो। उस समय लका पर कुबेर का अधिकार था। रावण का बहुत जोर देखकर विश्रवा की आज्ञा से कुबेर तो लका छोडकर कलाश चले गए और रावण ने लका पर अधिकार कर लिया तथा मय दानव की कन्या मदीदरी से विवाह कर लिया। इसी मदीदरी के गर्भ से मेघनाद का जन्म हुआ। ब्रह्मा के वर के प्रभाव से रावण ने तीनों लोक जीत लिए और इद्र, कुबेर, यम आदि को परास्त कर दिया। अब इसका अत्याचार बहुत बढ गया। यह सबको बहुत सताने लगा और लोगों की कन्याओं तथा पत्नियों का हरण करने लगा। एक वार सहस्राब्जुन ने इसे युद्ध मे परास्त करके कंद कर लिया था, पर पुलस्त्य के कहने पर छोड दिया। वाली से भी यह एक वार बुरी तरह परास्त हुआ था। जिस समय भगवान् रामचंद्र अपने साथ लक्ष्मण और सीता को लेकर दहकारण्य मे वनवास का समय बिता रहे थे, उस समय यह सीता को एकांत मे पाकर छल से उठा लाया था। तब रामचंद्र ने समुद्र पर सेतु बांधकर लका पर चढ़ाई की और इसके साथ घोर युद्ध करके अंत मे इसे मार डाला और इसके अत्याचार से पृथ्वी की रक्षा की।

पर्या०—पौलस्त्य । दशकधर । दशानन । राक्षसेन्द्र ।

२ चिल्लाना । आक्रन्दन (क्रो०) । ३ एक मुहूर्त का नाम (क्रो०) ।

रावणगंगा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० रावणगङ्गा] पुराणानुसार सिंहल द्वीप की एक नदी का नाम ।

रावणारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रावण को मारनेवाले, रामचन्द्र ।

रावणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रावण का पुत्र । २ मेघनाद ।

रावत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजपुत्र, प्रा० राय + उत्त] १ छोटा राजा । २ शूर । वीर । बहादुर । सेनापति । बडा योद्धा । ४. मामत । नरदार । उ०—हो रावत मडली कोरि मच्छर मन मडहु । सो तुरग तन पिस्यौ सग बाहिर गहि कहुहु । —पृ० रा०, ६४।३६ ।

रावन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रावण] दे० 'रावण' ।

रावन^३—वि० [सं० रमण] रमण करनेवाला । उ०—हौं रामा तू रावन गरु ।—जायसी ग्र०, पृ० १३६ ।

रावनगढ़(५)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रावण + गढ़] लका ।

रावना(५)—क्रि० सं० [सं० रावण (रुजाना)] दूसरे को रोने में प्रवृत्त करना । रुलाना । उ०—इहाँ भँवर मुख बात हिलावसि । उहाँ सुरज कहँ हँसि हँसि रावसि ।—जायसी (शब्द०) ।

रावणहादुर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राज + प्रा० बहादुर] एक प्रकार की उपाधि जो पहले भारत की अंगरेजी सरकार प्राय दक्षिण भारत के रईसों आदि को देती थी ।

रावर(५)^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजपुर + प्रा० राय + उर] रनिवास । राजमहल । अत पुर । उ०—(क) रावर मे नृप बोलि लिए गुनि । ठाढ किए परदा तट लै मुनि ।—केशव (शब्द०) । (ख) रावण जैहँ गूढ थल, रावर लुटँ विशाल । मदोदरी कढोरिवो, अरु रावण को काल ।—केशव (शब्द०) ।

रावर^२—वि० [हि० राठ + कर (विभक्ति)] [वि० स्त्री० राठरी, राठरी] आपका । भवदीय । उ०—दूट्यो तो न जुरैगो मरासन महेस जू को रावरी पिनाक में सरीकता कहा रही ।—तुलसी (शब्द०) ।

रावरखा—सञ्ज्ञा पुं० [द्वि०] एक प्रकार का बहुत बडा और ऊँचा पेड़ । बुरल ।

विशेष—यह वृक्ष हिमालय मे १३,००० फुट की ऊँचाई तक होता है । इसकी छाल बहुत सफेद और चमकीली होती है । इसकी लकड़ियों से पहाड़ी मकानों की छतें और छाल से भोपड़ियाँ छाई जाती हैं । इसकी पत्तियाँ प्राय चारे के काम मे आती हैं ।

रावरा—सर्व० [हि०] दे० 'रावर' ।

रावराजा—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] संमानसूचक एक उपाधि ।

रावल^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजपुर, हि० रावर] अत पुर । राजमहल । रनिवास । उ०—भए विनु भोर वधू शोर करि रोइ उठी भोइ गई रावल मे सुनी साधु भापिए ।—प्रियादास (शब्द०) ।

रावल^२—सञ्ज्ञा पुं० [प्रा० राञ्जल] [स्त्री० रावलि, रावली] १ राजा । उ०—चेतन रावल पावन खडा सहजहि मूल बधि ।

ध्यान धनुष धरि ज्ञानवान वन योग सार सर साधै ।—कवीर (शब्द०) । २ राजपूताने के कुछ राजाओं की उपाधि । ३ प्रधान । सरदार । ४ एक प्रकार का आदरसूचक संबोधन । उ०—(क) रावल जी इयोडी के भीतर न जाना ।—हरिश्चन्द्र (शब्द०) । (ख) 'रावलि कहाँ है' ? किन कहत हौ कातें ? 'अरी रोप तरज' 'रोष कै कियो मी का अचाहे की ?—यथाकर (शब्द०) । ५ श्रीवदरीनारायण के प्रधान पढे की उपाधि । ६ मथुरा के पास के एक गाँव का नाम । कहते हैं, यही राधिका का जन्म हुआ था ।

रावसाहब—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राव + प्रा० साहब] एक प्रकार की उपाधि जो पहले भारत की अंगरेजी सरकार की ओर से दक्षिण भारत के रईसों आदि को दी जाती थी ।

रावी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० एरावती] पंजाब की पाँच नदियों मे स एक नदी जो हिमालय से निकलकर प्रायः दो सौ कोस बहती हुई मुलतान स बीस कोस ऊपर चनाब मे मिलता है ।

राशन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. रोजमर्रा की निश्चित खुराक । २. नियंत्रित तथा निश्चित मात्रा मे वस्तुआ का वितरण । जैसे, चीनी का राशन, तेल का राशन ।

राशनिंग—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] खाद्य पदार्थों या अन्य वस्तुओं की समान अनुपात मे वितरण का व्यवस्था ।

राशि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक ही तरह की बहुत सी चीजों का समूह । ढेर । पुज । जैसे,—प्रश्न की राशि ।

क्रि० प्र०—लगना ।—लगाना ।

मुहा०—राशि बँठना = गोद बैठना । दत्तक पुत्र होना ।

३ क्रातिवृत्त मे पडनेवाले विशिष्ट तारासमूह जिनकी संख्या बारह है और जिनके नाम इस प्रकार हैं—मेघ, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ और मीन ।

विशेष—प्राकाश मे पृथ्वी जिस मार्ग से होकर सूर्य की परिक्रमा करती है, वह क्रातिवृत्त कहलाता है । परंतु पृथ्वी पर से देखने पर साधारणतः यही जान पडता है कि सूर्य ही उस क्रातिवृत्त पर होकर चलता और पृथ्वी की परिक्रमा करता है । इस क्रातिवृत्त पर दोनो ओर प्राय ८० अंश तक अनेक तारासमूह फैले हुए हैं । इनमे से प्रत्येक तारासमूह मे से होकर गुजरने मे सूर्य को प्राय एक मास लगता है, इसी विचार मे समस्त क्रातिवृत्त बराबर बराबर बारह भागों मे बाँट दिया गया है जिन्हे राशि कहते हैं । प्रत्येक तारासमूह की आकृति के अनुसार ही उनका नाम भी रख लिया गया है और उसमे के तारे भी गिन लिए गए ह । जैसे,—मेघ कहलानेवाली राशि का आकार भी मेघ या भेड़े के समान है और उसमे ६६ तारे हैं । इसी प्रकार १४१ तारों के एक समूह का आकार वृष या बैल के समान है, और इसी लिये उसे वृष कहते हैं । फलित ज्योतिष मे भिन्न भिन्न राशियों के भिन्न भिन्न स्वरूप, वर्ण, स्वभाव, गुण, कार्य, अविपति, देवता आदि दिए गए

हैं और उनमें से प्रत्येक में जन्म लेने का अलग अलग फल कहा गया है। विद्वानों का अनुमान है कि राशिविभाग भारतीय आर्यों के प्राचीन ज्योतिष में नहीं था, केवल नक्षत्रविभाग था। राशिविभाग बाबुलवालो से लिया गया है। वैदिक साहित्य में राशियों के नाम नहीं हैं, केवल नक्षत्रों के नाम हैं। विशेष दे० 'नक्षत्र'।

मुहूर्त—राशि आना = अनुकूल होना। मुआफिक होना। राशि मिलाता = (१) दो व्यक्तियों का एक ही राशि में जन्म होना। (२) मेल मिलना। पटरी बैठना।

राशिचक्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भेष, वृष, मिथुन आदि राशियों का चक्र या मडल। ग्रहों के चलने का मार्ग या वृत्त। भचक्र। विशेष दे० 'राशि'।

राशिनाम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राशिनामन्] फलित ज्योतिष के अनुसार किसी व्यक्ति का वह नाम जो उसके जन्म समय की राशि के अनुसार होता है।

विशेष—यह नाम व्यक्ति के उस नाम से भिन्न होता है, जिसमें वह लोक में प्रसिद्ध होना है। लोग प्रायः अपना राशिनाम नहीं लेते। इस नाम का व्यवहार धर्मकार्यों और ज्योतिष सबंधी गणनाओं में ही होता है।

राशिप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] किसी राशि का स्वामी या अधिपति देवता।

राशिभाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] किसी राशि का भाग या अंश। भग्नांश। (ज्योतिष)।

राशिभोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ किसी ग्रह का किसी राशि में कुछ समय तक रहना। २ उतना समय जितना किसी ग्रह को किसी राशि में रहने में लगता है। विशेष दे० 'राशि'।

राशिवर्धन—वि० [सं०] १ सख्यापूरक। २ (लाक्ष०) मात्र सख्या बढ़ानेवाला। व्यर्थ का। बेकार [को०]।

राशी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राशि] दे० 'राशि'।

राशी^२—वि० [अ०] रिश्वत खानेवाला। घूसखोर।

राष्ट—सञ्ज्ञा [?] फारसी मगीत में १२ मुकामों में से एक।

राष्ट्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राज्य। २ देश। मुल्क। ३ प्रजा। ४ पुराणानुसार पुरुवरा के वंशज काशी के पुत्र का नाम। ५ वह बाबा जो संपूर्ण देश में उपस्थित हो। ईति। ६ वह लोकसमुदाय जो एक ही देश में बसता हो या जो एक ही राज्य या शासन में रहता हुआ एकताबद्ध हो। एक या समभाषा भाषी जनसमूह। नेशन। जैसे, भारतीय राष्ट्र।

राष्ट्रक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. राज्य। २. देश।

राष्ट्रक^२—वि० राष्ट्र संबंधी। राष्ट्र का।

राष्ट्रकर्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा या शासक का प्रजा पर अत्याचार करना।

राष्ट्रकूट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध क्षत्रिय राजवंश जो आजकल राठौर नाम से प्रसिद्ध है। विशेष दे० 'राठौर'।

राष्ट्रगीप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजा। २ राजा का प्रतिनिधि कोई बड़ा शासक।

राष्ट्रगोप^२—वि० राज्य की रक्षा करनेवाला।

राष्ट्रतंत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राष्ट्रतन्त्र] राज्य का शासन करने की प्रणाली।

राष्ट्रपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ किसी राष्ट्र का स्वामी। २ आधुनिक प्रजातंत्र शासनप्रणाली में वह सर्वप्रधान शासक जो प्रथमतः से, राजा के समान शासन का मध्य नाम करने के लिये, चुना जाता है। ३ किसी मंडल का शासक। हाकिम।

विशेष—गुप्तों के समय में एक प्रदेश। जैसे,—कुरु पांचाल के शासक राष्ट्रपति कहलाते थे।

राष्ट्रपाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजा। २ कम के आठ भाइयों में एक भाई का नाम।

राष्ट्रभाषा—सञ्ज्ञा स्त्री० [राष्ट्रभाषा] १ वह भाषा जिसमें राष्ट्र के काम किए जायें। राष्ट्र के कामकाज या सरकारी कामकाज के लिये स्वीकृत भाषा। २ वह भाषा जिसे राष्ट्र के समग्र नागरिक अन्य भाषा भाषी होने हुए भी जानते समझते हो और समझकर व्यवहार करते हो। राष्ट्र द्वारा मान्यताप्राप्त भाषा।

राष्ट्रभृत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राजा। २ शासक। ३ राजा भरत के एक पुत्र का नाम। ४ प्रजा। रिश्राया।

राष्ट्रभृत्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो राज्य की रक्षा या शासन करता हो। २ प्रजा।

राष्ट्रभेद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्राचीन राजनीति के अनुसार वह उपाय जिसके द्वारा किसी शत्रु राजा के राज्य में उपद्रव या विद्रोह खड़ा किया जाता है। २. किसी राष्ट्र के शासनाधिकारियों में फुटमत या एका न होना। ३ राज्य का विभाजन।

राष्ट्रवर्धन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राजा दशरथ और रामचंद्र के एक मंत्री का नाम।

राष्ट्रवादी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राष्ट्रवादिन्] वह व्यक्ति, सन्ध्या, दल आदि जो राष्ट्र की एकता, सपन्नता आदि हितों को सर्वोपरि माने और उसी को प्रमुखता दे। संपूर्ण राष्ट्र के हित को सर्वोपरि माननेवाला। (अं० नेशनलिस्ट)।

राष्ट्रवासी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राष्ट्रवासिन्] [स्त्री० राष्ट्रवासिनी] १ राष्ट्र में रहनेवाला। २ परदेशी। विदेशी।

राष्ट्रविप्लव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] राज्य में होनेवाला विप्लव। विद्रोह। बलवा।

राष्ट्रांतपालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राष्ट्रान्तपालक] राज्य का सीमा की रखवाली करनेवाला।

राष्ट्रिक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. राजा। २. प्रजा।

राष्ट्रिक^२—वि० राष्ट्र संबंधी। राष्ट्र का।

राष्ट्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कंठकारि। भटकटैया।

राष्ट्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ राष्ट्र का स्वामी, राजा। २ प्राचीन संस्कृत नाटकों की भाषा में राजा का साला।

राष्ट्री^१—सज्ञा पुं० [सं० राष्ट्रीन्] १. राज्य का अधिकारी, राजा । २ प्रधान शासक ।

राष्ट्री^२—सज्ञा स्त्री० [सं०] रानी । राजपत्नी ।

राष्ट्रीय^१—सज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन नाटको की भाषा में राजा का साला ।

राष्ट्रीय^२—वि० राष्ट्र सवधी । राष्ट्र का । विशेषतः अपने राष्ट्र या देश से सवध रखनेवाला । जैसे,—(क) यह ग्रंथ राष्ट्रीय भावों से पूर्ण है । (ख) आपको अपनी राष्ट्रीय वेश धारण करना चाहिए ।

राष्ट्रीयकरण—सज्ञा पुं० [सं० राष्ट्रीय + करण] १ भूमि, संपत्ति, व्यवसाय, रेलवे आदि को राष्ट्रीय व्यवस्था के अंतर्गत कर लेना । २ राष्ट्रीय बनाना ।

राष्ट्रीयता—सज्ञा स्त्री० [सं० राष्ट्रीय + ता] १ अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम । देशभक्ति । २ किसी राष्ट्र का नागरिक होने का भाव ।

रास^१—सज्ञा पुं० [सं०] १. कोलाहल । शोरगुल । हल्ला । २. गोपों की प्राचीन काल की एक क्रीडा जिसमें वे सब घेरा बंधकर नाचते थे ।

विशेष—कहते हैं, इस क्रीडा का आरंभ भगवान् श्रीकृष्ण ने एक बार कार्तिकी पूर्णिमा को आधी रात के समय किया था । तब से गोप लोग यह क्रीडा करने लगे थे । पीछे से इस क्रीडा के साथ कई प्रकार के पूजन आदि मिल गए और यह मोक्षप्रद मानी जाने लगी । इस अर्थ में यह शब्द प्रायः स्त्रीलिंग बोला जाता है ।

यौ०—रासमंडल ।

३ एक प्रकार का नाटक जिसमें श्रीकृष्ण की इस क्रीडा तथा दूसरी क्रीडाओं या लीलाओं का अभिनय होता है ।

यौ०—रासधारी ।

४ एक प्रकार का चलता गाना । ५ शृंगला । जजीर । ६ विलास । ७ लास्य नामक नृत्य । ८. नाचनेवालों का समाज ।

रास^२—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ घोड़े की लगाम । बागडोर ।

मुहा०—रास कड़ी फरना = घोड़े की लगाम अपनी और खींचे रहना । रास में लाना = अधिकार में लाना । वशीभूत करना । २. सिर (को०) । ३ पशुओं के लिये सख्यावाचक शब्द ।

रास^३—सज्ञा स्त्री० [सं० राशि] १. ढेर । समूह । २ ज्योतिष की राशि । विशेष दे० 'राशि' । ३ एक छद्म का नाम जिसके प्रत्येक चरण में ८ + ८ + ६ के विराम में २२ मात्राएँ और अंत में सगरा होता है । प्रस्तार की रीति से यह छद्म नया रचा गया है । जैसे,—ईस भजी जगदीश भजी यह वान धरो । सीख हमारी अति हितकारी कान धरो ।—छंद०, पृ० ५१ । ४ जोड़ । ५ चौपायों का झुंड । ६ एक प्रकार का धान जो अग्रहन में तैयार होता है । इसका चावल सैंकड़ों वर्षों तक रखा जा सकता है । ७. गोद । दत्तक ।

मुहा०—रास बँठाना या लेना = गोद बँठाना । दत्तक लेना ।

८. सुद । व्याज ।

रास^४—वि० [फा० रास्त (= दाहिना)] अनुकूल । ठीक । मुभाफिक । उ० काँचे वारह परा जो पाँसा । पाके पैन परी तनु रासा ।—जायसी (शब्द०) ।

रासक—सज्ञा पुं० [सं०] नाटक का एक भेद ।

विशेष—यह केवल एक अंक का होता है और इसमें केवल पाँच नट या अभिनय करनेवाले होते हैं । यह हास्यरस का होता है, और इसमें सूत्रधार नहीं होता । इसमें नायिका चतुर तथा नायक मूर्ख होता है ।

रासचक्र—सज्ञा पुं० [सं० राशिचक्र] दे० 'राशिचक्र' ।

रासताल—सज्ञा पुं० [सं०] १३ मात्राओं का एक ताल जिसमें ८ आघात और ५ खाली होते हैं । इसके मृदंग के बोल यह है—
+ ० १ २ ० ३ ४ ५ ० ६
कता कता केट तागू वा केटे खन् गदि घेने नामे
० ७ ० +
देत तेरे केटे कडान् । वा ।

रासधारी—सज्ञा पुं० [सं० रासधारिन्] वह व्यक्ति या समाज जो श्रीकृष्ण की रासक्रीडा अथवा अन्य लीलाओं का अभिनय करता है ।

विशेष—ये लोग एक प्रकार के व्यवसायी होते हैं जो घूम घूमकर इस प्रकार के अभिनय करते हैं । इनके नाटक में गीत, वाद्य, नृत्य और अभिनय आदि सभी होते हैं ।

रासन^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० रासनी] १ स्वादिष्ट । जायकेदार । २ रसना सवधी । जीभ सवधी (को०) ।

रासन^२—सज्ञा पुं० १ स्वाद लेना । चखना । २, ध्वनि करना । शब्द करना ।

रासनशीन—वि० [सं० राशि + फा० नशीन] गोद बँठाया हुआ । दत्तक । सुतवन्ना ।

रासना—सज्ञा पुं० [सं०] रासना नाम की लता जिसका व्यवहार श्रोत्रवि के रूप में होता है । विशेष दे० 'रासना' ।

रासनृत्य—सज्ञा पुं० [सं०] गीत के अनुसार नृत्य का एक भेद ।

रासपूर्णिमा—सज्ञा स्त्री० [सं०] मागशीर्ष की पूर्णिमा जिस दिन श्रीकृष्ण ने रासक्रीडा आरंभ की थी ।

रासभ—सज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० रासभी] १ गर्दभ । गधा । गदहा । खर । उ०—(क) विपति मोर को प्रभुहि सुनावा । पुरोडास चह रासभ खावा ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) गँवर भेटि चढावत रासभ प्रभुता में ट करत हिनती ।—सूर (शब्द०) । २ अश्वतर । खच्चर । ३ एक दंत्य जिसे ब्रज के ताल वन में बलदेव जी ने मारा था । यह गर्दभ के रूप में ही रखा करता था ।

रासभूमि—सज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ रासक्रीडा होती हो । रास करने का स्थान ।

रासमंडल—सज्ञा पुं० [सं० रासमण्डल] १. श्रीकृष्ण के रासक्रीडा करने का स्थान । २. रासक्रीडा करनेवालों का समूह या मंडली ।

रास करनेवालो का वृत्ताकार समूह। उ०—रासमंडल बने श्याम श्यामा। नारि दुहुँ पास गिरिवर बने दुहुनि विच सहम शशि वीस द्वादश उपमा।—सूर (शब्द०)। ३ रासधारियो का अभिनय। ४ रासधारियो का ममाज।

रासमंडली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रासमण्डली] रासधारियो का समाज या टोली।

रासयात्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पुराणानुसार एक प्रकार का उत्सव जो शरत्पूर्णिमा को होता है। २ शाक्तो का एक उत्सव जो शक्ति के उद्देश्य से चैत्र की पूर्णिमा को होता है।

रासलीला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह क्रीडा या नृत्य जो श्रीकृष्ण ने गोपियों को साथ लेकर शरत्पूर्णिमा को आधी रात के समय किया था। २ रासधारियो का कृष्णलीला सबंधी अभिनय।

रासविलास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रासक्रीडा।

रासविहारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्णचंद्र।

रासायन—वि० [सं०] रसायन सबंधी। रसायन का।

रासायनिक—वि० [सं०] १ रसायन शास्त्र सबंधी। २ रसायन शास्त्र का ज्ञाता।

रासायनिकशास्त्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्थान जहाँ रसायन शास्त्र संबन्धी परीक्षाएँ या प्रयोग होते हो।

रासि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राशि] दे० 'राशि'।

रासी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [दे०] १ तीसरी बार खींची हुई शराब जो सबसे निवृष्ट समझी जाती है। २ सज्जी।

रासी^२—वि० नकली या खराब। जैसे,—रासी तार।

रासी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राशि] दे० 'राशि'।

रासु^(७)—वि० [फ्रा० रास्त] १ साधा। सरल। २ ठीक। उ०—भूले तैं कर तार के रासु न आवैं रासु। यहै समुझ कै राख तूँ मन करतारैं पासु।—रसनिधि (शब्द०)।

रासेरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गोष्ठी। रासक्रीडा। ३ शृंगार। ४ उत्सव। ५ हँसी मजाक। ठट्टा। चुट्टन।

रासेश्वरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रावा।

रासो—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रासक या रासक रहस्य था राजयश, हिं० रायसा] किसी राजा का पद्यमय जीवनचरित्र, विशेषत वह जीवन चरित्र जिसमें उसके युद्धों और वीरता आदि का वर्णन हो। जैसे—पृथ्वीराज रासो, खुमान रासो, हम्मीर रासो।

रास्त—वि० [फ्रा०] १ सीधा। सरल। नेक। २ सही। दुस्त। ठीक। ३ ऊचित। वाजिब। ४ अनुकूल। मुताबिक।

रास्तगो—वि० [फ्रा०] सच बोलनेवाला। सत्यवक्ता।

रास्तबाज—वि० [फ्रा० रास्तबाज] सच्चा। निष्कपट। ईमानदार।

रास्तबाजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० रास्तबाजी] सचाई। सत्यता। ईमानदारी।

रास्ता—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रास्तह] १ मार्ग। राह। मग। पथ। मुहा०—रास्ता काटना = किसी के चलने के समय उसके सामने

से होकर निराला जाना। जैसे—विल्ली रास्ता काट गई। रास्ता देखना = प्रतीक्षा करना। आसरा देखना। रास्ता पकडना = (१) मार्ग का अनुसरण करना। राह से चलना। (२) चल देना। चले जाना। रास्ता बत ना = (१) चनता करना। टालना। हटाना। (२) सिखाना। तरकीब बताना। जैसे—उह तुम्हारे जसो को रास्ता बतलाना है। रास्ते पर लाना = सुमार्ग पर चलाना। ठीक करना। दुस्त करना।

२ प्रथा। रीति। चाल। जैसे—श्रव तो आपने यह रास्ता चला ही दिया है। ३ उपाय। तरकीब। जैसे—इम विपत्ति से निकलने का भी कोई रास्ता निकालो।

रासना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गवनाहुली नामक कद। घोडरासन।

विशेष—यह आसाम, लका, जावा आदि में अधिकता से होती है। वैद्यक में यह गुण, तिक्त, उष्ण और विष, वात, खाँसी, शोथ, कफ, कफ आदि की नाशक और पाचक मानी गई है। वैद्यक में इममें रासना गुग्गुल, रासनादशमूल, रासनादिकवाथ, रासनादिलीह, रासनापचक, रासनामपनक आदि अनेक औषध बनते हैं।

२ एलापर्णी नाम की औषधि। ३ छत्र की प्रधान पत्नी का नाम। ४ रस्मी। रज्जु (को०)। ५ करधनी। मेखला (को०)।

रासिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रासना।

रास्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक पात्र जिसमें यज्ञ के समय धी रखकर दान किया जाता था।

रास्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण।

राह^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राहु] दे० 'राहु'। उ०—आव चाँद पुनि राह गिरामा। वह दिन राह नदा परकासा।—जायसी (शब्द०)।

राह^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा०] १ मार्ग। पथ। रास्ता।

मुहा०—राह देखना या ताकना = प्रतीक्षा करना। आसरा देखना। डाका पडना। लूट पडना। बाट पडना। उ०—कह पदमाकर त्यो रोगन की राह परी दुखन मे गाह अति गाज का।—पद्मकर (शब्द०)। (२) रास्ते से आना। रास्ते पर जाना। राह लगना = (१) रास्ते में जाना। (२) अपना काम देखना। अपने काम से काम रखना। (अन्य मुहा० के लिये दे० 'रास्ता' के मुहा०)।

२ प्रथा। रीति। चान। ३ नियम। कायदा। ४ कोन्हू की नाली।

यौ०—राहखर्च। राहगीर। रहजन। राहदार = चौकीदार। राहनुमा = रहनुमा। रहनुमाई। राहनुमाई। राहगर = रहवर। राहबरी = रहवरी। राहरस्म = राहरीति आदि।

राह^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रोहू] दे० 'रोहू'। उ०—पाहन ऊपर हेरै नाही। हना राह अचुन परछाही।—जायसी (शब्द०)।

राह—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ हर्ष। खुशी। २ मंदिर। शराव (को०)।

राहखर्च—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० राह + खर्च] कहीं जाने आने के समय रास्ते में होनेवाला खर्च। मार्गव्यय।

राहगीर—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] मार्ग चलनेवाला । मुसाफिर । पथिक ।
राहचत्रैनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राह + चत्रैनी] वैशाख में अक्षय्य तृतीया
के दिन किया जानेवाला दान जिसमें भूजे चने, वेसन के लड्डू,
आदि रहते हैं । गित्तरो के तृप्पर्य भी इसका विधान है । सरग
चत्रैनी ।

राहचलता—सञ्ज्ञा पुं० [फा० राह + हिं० चलता] १ रास्ता
चलनेवाला । पथिक । राहगीर । बटोही । २ कोई साधारण
या तीसरा मनुष्य जिसका प्रस्तुत विषय से कोई सबब न हो ।
अजनबी । गैर । जैसे,—यो राहचलते को कोई ऐसा काम
सुपुर्द करता है ।

राहचौरगीर्—सञ्ज्ञा पुं० [फा० राह + हिं० चौरगी] चौमुहानी ।
चौरस्ता । उ०—सो किमि छानो जाय राहचौरगी सोहै ।
—बुधाकर द्विवेदी (शब्द०) ।

राहजन—सञ्ज्ञा पुं० [फा० राहजन] डाकू । लुटेरा ।

राहजनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० राहजनी] डकैती । लूट ।

राहड़ा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की संगीतरचना [को०] ।

राहड़ी^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का घटिया कबल ।

राहत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] आराम । सख । चैन ।

क्रि० प्र०—देना ।—पाना ।—मिलना ।

राहदारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १. राह पर चलने का महसूल ।
सडक का कर ।

यौ०—परवाना राहदारी=वह आज्ञापत्र जिसके अनुसार किसी
मार्ग से होकर आने या माल ले जाने का अधिकार प्राप्त हो ।

२ चुराई । महसूल ।

राहना^१—क्रि० म० [हिं० राह ? (= राह बनाना) या देश०] १
चक्की के पाटो को खुरदुरा करके पीसने योग्य बनाना । जाँता
कूटना । २ रेतों आदि को खुरदुरा करके रेतने के योग्य
बनाना ।

राहना^२—क्रि० अ० [हिं० रहना] दे० 'रहना' । उ०—हम सो
तोसो चैर कहा, अलि, श्याम अजान ज्यो राहत ।—सूर०
(शब्द०) ।

राहर^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० अरहर] अरहर नामक अन्न जिसकी
दाल होती है । उ०—वह गोधूम चनक तदुन अति । राहर
ज्वार मसूर लेहु रति ।—प० रासो, पृ० १७ ।

राहरीति—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राह + सं० रीति] १ राह रस्म ।
लेग देन । व्यवहार । २ जान पहचान । परिचय ।

राहा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० राह] मिट्टी का वह चबूतरा जिसपर चक्की
के नीचे का पाट जमाया रहता है ।

राहित्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विहीनता । अभाव । (किमी वस्तु का)
न होना । उ०—नदपि निश्चित रहो तुम नित्य यहाँ राहित्य
नहीं, साहित्य ।—माकेत, पृ० ४० ।

राहिन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] रेहन रखनेवाला । चक्क रखनेवाला ।

राहिम—वि० [अ०] जो रहम कर । दया करनेवाला [को०] ।

राहिम^२—वि० [अ० राहिम] दे० 'राहिम' । उ०—अबदुल्ल
रोम राहिम मीर ।—पृ० रा०, ६१।५४४।

राही—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] राहगीर । मुसाफिर । पथिक । यात्री ।

मुहो०—राही करना = चलता करना । धता बताना । हटाना ।
राही होना = चल देना । हट जाना ।

राहु^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पुराणातुमार नी ग्रहो में से एक जो
विप्रचिन्ति के वीर्य में सिंहिका के गर्भ से उत्पन्न हुआ था ।
उ०—(क) राहु शशि सूर्य के बीच में बँधि कौ मीहनी सो अमृत
मांगि लीनो ।—सूर (शब्द०) । (ख) उधरहि अत न होइ
निवाह । कालनेमि जिमि रावन राहु ।—तुलसी (शब्द०) (ग)
हरिहर जस राकेस राहु ने । पर अकाज भट महम बाहु से ।—
तुलसी (शब्द०) ।

विशेष—यह बहुत बलवान था । कहने हैं, समुद्रमंथन के समय
देवताओं के साथ बैठकर इमने चोरी से अमृत पी लिया था ।
सूर्य और चंद्र ने इसे यह चोरी करते हुए देख लिया था और
विष्णु से यह कह दिया था । विष्णु ने सुदर्शन चक्र से इसकी
गर्दन काट दी । पर यह अमृत पी चुका था इसमें इमका मस्तक
अमर हो गया था । उमी मस्तक में यह मूर्ध और चंद्र को
असने लगा था । और तब से अब तक समय समय पर बराबर
असता आता है जिससे दोनों का ग्रहण लगता है । यही मस्तक
राहु और कवच केतु कहलाता है ।

२ ग्रहण (को०) । ३ उपमर्जन । परित्याग (को०) । ४. उपसर्जक ।
५ दक्षिणपश्चिम कोण का ।

राहु^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राघव] राहु मछली । उ०—(क) राहु वेधि
भूति करी नहि समर्थ जग कोय ।—मवल (शब्द०) । (ग)
राहु वेधि अर्जुन होइ जीत दुरपदी व्याह ।—जायसी (शब्द०) ।

राहुअसन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य या चंद्रमा को राहु का असन ।
ग्रहण । उपराग ।

राहुआह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ग्रहण । उपराग ।

राहुच्छत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अदरक । आदी ।

राहुदर्शन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ग्रहण । उपराग ।

राहुपाडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ग्रहण । उपराग ।

राहुभेदी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राहुभेदिन्] विष्णु ।

राहुमाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राहु की माता, सिंहिका ।

राहुअसन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गोमेद मणि जो राहु के दोष का असन
करनेवाली मानी जाती है ।

राहुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गीतम बुद्ध के पुत्र का नाम ।

राहुशत्रु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंद्रमा ।

राहुसूतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गदग । उपराग ।

राहुस्पर्श—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ग्रहण । उपराग ।

राहुच्छिष्ट, राहुतन्ष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लहसुन ।

राहेल—सञ्ज्ञा पुं० [यहू०] यहूदियों की एक उपजाति ।

रिखण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रिङ्खण] १ फिसलना । लडखडाना । २ विचलित होना । डिगना । ३ दे० 'रिगण' (को०) ।

रिंग—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ अँगूठी । छल्ला । २ किसी प्रकार की गोल बड़ी चूड़ी । ३ घेरा । मडल ।

ची०—रिंग मास्टर = सरकस का वह खिलाड़ी जो घिरी हुई भूमि में विभिन्न जानवरों के कर्तव्य दिखलाता है ।

रिंगण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रिङ्खण] १ रेंगना । २ फिसलना । सरकना । ३ विचलित होना । डिगना ।

रिंगण(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० रिङ्खण] घुटनों के बल चलना । रेंगना । उ०—पुनि हरि आय यशोदा के गृह रिंगण लीला करिहैं ।—सूर (शब्द०) ।

रिंगनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की ज्वार जो मध्य प्रदेश में होती है ।

रिंगल—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का पहाड़ी बाँस जो दारजिलिंग में होता है ।

रिंगनी(उ०)—क्रि० सं० [सं० रिंगण] रेंगने की क्रिया कराना । रेंगना । उ०—सुनतहि बचन माथ तब नाई । तब भीतर कई दीन्ह रिगाई ।—कबीर सा०, पृ० २५६ । २ धीरे धीरे चलाना । ३ घुमाना । फिराना । दौड़ाना । चलाना । (बच्चों के लिये) । उ०—मैं पठवति अपने लरिका को आवइ मन बहराइ । सूर श्याम मेरो अति बालक भारत ताहि रिगाइ ।—सूर (शब्द०) ।

सयो० क्रि०—देना ।

रिंगिन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रिंगिग] वह रस्ती जिससे जहाज के मस्तूल आदि बाँधे जाते हैं । (लश०) ।

रिङ्ख(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रीङ्ख] दे० 'रीङ्ख' । उ०—आपेटनि पुनि लपि जीव घात । गज सिध रिङ्ख कुपि कोल घात ।—पृ० रा०, ६।८ ।

रिद^१—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ वह व्यक्ति जो धर्म के विषय में बहुत स्वच्छन्द और उदार विचार रखता हो । धार्मिक बंधनों को न माननेवाला पुरुष । उ०—रिदो में अगर्ज जावै तो मुश्किल है फिर झाना ।—नजीर (शब्द०) । २ मनमौजी आदमी । स्वच्छन्द पुरुष । ३ मद्यप । शराबी (को०) ।

रिद^२—वि० १ मतवाला । मस्त । बेफिक्र । उ०—(क) जिंद सरिस रन रिद चलत हल चल फनिद ध्रुव ।—गिरधर (शब्द०) । (ख) विध्याचल पर वसहिं पुलिदे । तह के नृप ते भगारहिं रिदे ।—गिरधर (शब्द०) । २ रसिया । रंगीना (को०) ।

रिदगी—वि० [फा० रिद + गी (प्रत्य०)] बुराई । पाप । मैलापन । उ०—सुदर मन कँ रिदगी होइ जात सँतान ।—सुदर० प्र०, भा० २, पृ० ७१६ ।

रिदां—वि० [फा० रिद] निरकुश । उद्द ।

रिश्नां—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का कीकर । रीझां ।

रिश्नायत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ वह अनुग्रहपूर्ण व्यवहार जो साधारण नियमों का ध्यान छोड़कर किया जाय । कोमल और दयापूर्ण व्यवहार । नरमी । जैसे—गरीबों के साथ रिश्नायत होनी चाहिए । २ न्यूनता । कमी । छूट । जैसे,—दाम में कुछ रिश्नायत कीजिए । (ख) श्रव बीमारी में कुछ रिश्नायत है । ३ खयाल । ध्यान । विचार । जैसे,—इस दवा में बुलार को भी रिश्नायत रखी है ।

क्रि० प्र०—करना ।—रखना ।—होना ।

रिश्नायती—वि० [अ० रिश्नायत + ई (प्रत्य०)] रिश्नायत किया हुआ । जिसमें रिश्नायत की गई हो ।

रिश्नाया—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] प्रजा ।

रिक्वैछ—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक भोज्य पदार्थ जो उर्द की पीठी और अरुई के पत्तों में बनता है ।

विशेष—अरुई की पत्तियों को बारीक काटकर उर्द की पीठी के साथ मिला देने हैं और फिर उसी के गुलगुले को घी या तेल में छान लेते हैं ।

रिक्शा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रिक्शा] एक प्रकार की छोटी गाड़ी जिसे आदमी खींचते हैं और जिसमें एक या दो आदमी बैठते हैं ।

विशेष—आजकल साइकिल रिक्शा और मोटर साइकिल रिक्शा का भी व्यवहार होने लगा है ।

रिक्सां—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रिक्षा] लीख ।

रिक्वाव—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रक्वाव] दे० 'रकाव' ।

रिक्वावी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] दे० 'रकावी' ।

रिक्त^१—वि० [सं०] १ खाली । शून्य । जैसे,—रिक्त घट, रिक्त स्थान । २ निर्धन । गरीब ।

रिक्त^२—सञ्ज्ञा पुं० व्रत । जगल ।

रिक्तकुम्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रिक्तकुम्भ] ऐसी भाषा जो समझ में न आवे । गडबड़ बोली ।

रिक्तता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रिक्त या खाली होने का भाव । २ किसी पद, नौकरी या ध्यान का खाली होना (वैकेंसी) (को०) ।

रिक्तहस्त—वि० [सं० रिक्त + हस्त] १ खाली हाथ । अर्धशून्य । जिसके हाथ में कुछ न हो । उ०—त्रोना में हूँ रिक्तहस्त, इस समय विवेचन में समस्त ।—प्रतापिका, पृ० १३१ ।

रिक्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी की तिथियाँ । रिक्तार्क—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह रिक्ता तिथि जो रविवार को पड़े । रविवार को होनेवाली चतुर्थी, नवमी या चतुदशी ।

रिक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह पद या स्थान जिसपर अभी किसी की नियुक्ति न हुई हो (को०) ।

रिक्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ उधाराधिकार या वरासत में मिला हुआ धन या संपत्ति । २ कारवार में लगी हुई वह पूंजी जो संपत्ति, सामान आदि के रूप में हो (को०) ।

यौ०—रिक्थयाह, रिक्थभागी, रिक्थहर = (१) उतराधिकारी । दायाद । (२) पुत्र ।

रिक्थहारी—सज्ञा पुं० [सं० रिक्थहारिन्] [स्त्री० रिक्थहारिणी]
१ वह जिसे उतराधिकार में धन मपात्त मिले । २. मामा ।
३. न्यग्रोध बीज या उदु वर का बीज (को०) ।

रिक्थो—सज्ञा पुं० [सं० रिक्थिन्] [स्त्री० रिक्थिनी] १ वह जिसे उत्तराधिकार में धन या मपत्ता मिले । दायाद । उतराधिकारी । २ वह जो मृत्युलेख लिखता हो । मृत्युलेख लिखनेवाला व्यक्ति (को०) । ३. धनी व्यक्ति । धनवान् (को०) ।

रिक्थु—सज्ञा पुं० [सं० ऋक्ष] दे० 'ऋक्ष' ।

रिक्थपति—सज्ञा पुं० [सं० ऋक्षपति] दे० 'ऋक्षपति' ।

रिक्थ—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ लीजा । लीस । जूँ का अरु । २ त्रिमरेणु । त्रसरेणु ।

रिक्थवा—सज्ञा पुं० [सं० रिक्थन्] तस्कर । चोर (को०) ।

रिक्थभ—सज्ञा पुं० [सं० ऋक्षभ] दे० 'ऋक्षभ' ।

रिक्थि—सज्ञा पुं० [सं० ऋषि] ऋषि । मुनि ।

रिग्—सज्ञा पुं० [सं० ऋक्] दे० 'ऋक्' ।

रिचा—सज्ञा स्त्री० [सं० ऋचा] दे० 'ऋचा' ।

रिचीक—सज्ञा पुं० [सं० ऋचीक] दे० 'ऋचीक' ।

रिचिक—सज्ञा पुं० [सं० ऋचीक] दे० 'ऋचीक' । उ०—ब्रह्मा कै सुत भृगु भए, भार्गव भृगु कै गेह । ऋषि रिचिक ताक भए, तेज पुज तव देह । - ह० रासो, पृ० ७ ।

रिच्छु—सज्ञा पुं० [सं० ऋष] भालू ।

रिच्छु—सज्ञा पुं० [सं० रक्षक] रक्षा करनेवाला । रक्षक । उ०—नमो परम परमेश सकल कूँ चूण चुगाए । चौरामी मे रिच्छक सकल कूँ चूण चुगाए ।—राम वर्म०, पृ० २२३ ।

रिच्छु—सज्ञा पुं० [सं० ऋष] भालू । रीछ । उ०—दूत कपि रिच्छु उत रछुधमन ही की चमू, डका देत बका गढ़ लका ते कढ़े लगी ।—पद्माकर प०, पृ० २०३ ।

रिज—वि० [सं० ऋजु] दे० 'ऋजु' । उ०—मन्वउं केरा रिज नग्रन तरणी हेरहि बक ।—वीरति०, पृ० ३२ ।

रिज—सज्ञा पुं० [सं० रिज्ज] रोजी । जीविका । जीवनवृत्ति ।

क्रि० प्र०—देना । पाना ।—मिलना ।

मुहा०—रिज कर मारना = किमी को जीविका में बाधा डालना । रोजी में सलल डालना ।

रिजर्व—वि० [सं० रिजर्व] किसी विशेष पार्व के लिये निश्चित या रक्षित किया हुआ । जैसे,—रिजर्व कुरसी, रिजर्व गाड़ी, रिजर्व मेना ।

रिजर्विस्ट—सज्ञा पुं० [सं०] वे सैनिक जो आपत्काल के लिये रक्षित रखे जाते हैं । रक्षित सैनिक ।

विशेष—रिजर्विस्ट सैनिक कम से कम तीन वर्ष तक तड़ाई पर

रह चुकने पर छुट्टी पा जाते हैं । जिस पट्टन में वे भर्ती होते हैं, रिजर्विस्टा या रक्षित सैनिकों में नाम रहने पर भी वे उस पट्टन के ही बने रहते हैं । केवल दो दो वर्ष पर इन्हें दो दो महान के लिये सैनिक शिक्षा प्राप्त करने के वास्ते अपनी पट्टन में जाना पड़ता है । २५ वर्ष की सैनिक सेवा के बाद इन्हें पेंशन मिल जाती है ।

रिजल्ट—सज्ञा पुं० [सं०] परीक्षाफल । इस्तहान का नतीजा । जैसे,—इस बार एम० ए० का रिजल्ट बहुत अच्छा हुआ है ।

क्रि० प्र०—निकलना ।—होना ।

मुहा०—रिजल्ट आउट होना = परीक्षाफल का प्रकाशित होना । इस्तहान का नतीजा निकलना ।

रिजाली—सज्ञा स्त्री० [सं० रिजाल (= नीच)] रिजालपन । निर्जन्तता । बेहयाई । उ०—काउ ग्याला को प्रीत मम्हानी, स्याम ग्याली । मुकवि रिजाली दई वहाली नद नभ लानी ।—याम (शब्द०) ।

रिजु—वि० [सं० ऋजु] २ 'ऋजु' ।

रिभकवार—सज्ञा पुं० [हि० रीभना + वार (प्रत्य०)] किसी के गुण पर प्रसन्न होनेवाला । रीभनेवाला । उ०—रिभकवार ह्य देखि कै मनमोहन की ओर । भाहन मारत रीभ जनु भारत ह न निहार ।—रमानाथ (शब्द०) ।

रिभवना—क्रि० सं० [हि० रिभाना] प्रसन्न करना । रिभाना । उ०—सो कमला राज चचलता फिर कोटि कला रिभने मुर मोरहि ।—सुलगी प्र०, पृ० २०४ ।

रिभवार—सज्ञा पुं० [हि० रीभना + वार (प्रत्य०)] [स्त्री० रिभवारि] १ किसी बात पर प्रसन्न होनेवाला । २ रूप पर मोहित होनेवाला । उ०—(क) कपटो जव लो कपट नहि नाच विगुरदा धार । तव लो कैसे मिलंगो प्रभु साचा रिभवार ।—रमनिधि (शब्द०) । (ख) मोहि भरोमी रीभिहो उभकि भाकि इक बार । रूप रिभावनहार वह ये नैना रिभवार ।—विहारी (शब्द०) । (ग) नदनदन के रूप पर रीभ रही रिभवारि ।—मति० प्र०, पृ० ३३२ । ३ अनुराग करनेवाला । प्रेमी । ४. गुण पर प्रसन्न होनेवाला । कदरदान । गुणग्राहक ।

रिभवैया—सज्ञा पुं० [हि० रीभना + वैया (प्रत्य०)] २ 'रिभवार' ।

रिभाना—क्रि० म० [सं० रिभान] १ किसी को अपने ऊपर प्रसन्न कर लेना । किसी को अपने ऊपर पुन करना । उ०—जुदास प्रभु विविध भाति करि मन रिभयो हरि पी को ।—दूर (शब्द०) । २ अपना प्रेमी बनाना । अनुक्त करना । माहित करना । लुभाना ।

रिभायल—वि० [हि० रीभना + आयल (प्रत्य०)] किसी के ऊपर प्रसन्न होनेवाला । रिभनेवाला । उ०—तयि नाथ सई उर नाथ पिना रति रग तरग रिभावन की ।—नाथ (शब्द०) ।

रिभाव—सज्ञा पुं० [हि० रिभाना + भाव (प्रत्य०)] किसी के ऊपर प्रसन्न होना या रीभने का भाव ।

रिभावना—सज्ञा पुं० [हि० रिभाना] २ 'रिभाना' । उ०—

ललिता ललित वजाय रिभावाति मधुर वीन कर लीन्हे ।—सूर (शब्द०) ।

रिभौना (७)—वि० [हि० रीभा + भौना (प्रत्य०)] जिमपर रीभा जाय । अपने पर रिभौनेवाला । उ०—रूप रिभौने मुमकि चलति जव काम अहेरी के टटावक टोने ।—नद०, प्र०, पृ० ३४५ ।

रिटनिंग अफ नर—सज्ञा पुं० [अ०] वह अफसर जो निर्वाचन के समय बोटो या मतों को गिनता है और कौन अधिक वोट मिलने से नियमानुसार निर्वाचित हुआ, इसकी घोषणा करता है ।

रिटायर—वि० [अ० रिटायर्ड] जिसने काम में अवसर ग्रहण कर लिया हो । जिमने पेन्शन ली हो । अवसरप्राप्त ।

रिटि—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ ज्योति फूटना । लपट निकलना । २ काला नमक । ३ एक वाद्ययंत्र । ४ शिव के एक पार्षद का नाम [को०] ।

रिणवासि—सज्ञा पुं० [हि०] रनिवास । अत पुर ।

रित (७)—सज्ञा स्त्री० [सं० ऋतु] दे० 'ऋतु' ।

रितना (७)—क्रि० अ० [हि० रीता + ना (प्रत्य०)] खाली होना । उ०—दीर्घ दादि देखि ना तो वलि मही मोद मगल रितई है ।—तुलसी प्र०, पृ० ५२८ ।

रितवती (७)—सज्ञा स्त्री० [सं० ऋतुमती] दे० 'रितुवती' ।

रितवना (७)—क्रि० सं० [हि० रीता + ना (प्रत्य०)] खाली करना । रिक्त करना । उ०—(क) मजु मनोरथ कलस भरहि अरु रितवहि ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) चलिवे को घर न करै मन नेकु घरं फिर फेर भरै रितवै ।—देव (शब्द०) ।

रिताना (७)—क्रि० सं० [सं० रिक्त + करण] खाली करना । रिक्त करना । उ०—अपने को सोच विचार से तो रिताया ही है ।—सुनीता, पृ० २२८ ।

रितु (७)—सज्ञा स्त्री० [सं० ऋतु] दे० 'ऋतु' ।

रितुराज—सज्ञा पुं० [सं० ऋतुराज] वसत । उ०—सोह मदन मुनि वेप जनु रति रितुराज समेत ।—मानस, २।१३३ ।

रितुवती—सज्ञा स्त्री० [सं० ऋतुमती] रजस्वला स्त्री ।

रिद्धि—सज्ञा स्त्री० [सं० ऋद्धि] दे० 'ऋद्धि' ।

रिद्धि सिद्धि—सज्ञा स्त्री० [सं० ऋद्धि सिद्धि] दे० 'ऋद्धि सिद्धि' ।

रिधम—सज्ञा पुं० [सं०] १ कामदेव । २ वसत ।

रिधि (७)—सज्ञा स्त्री० [सं० ऋद्धि] दे० 'ऋद्धि' ।

यौ०—रि धिसिधि = ऋद्धि सिद्धि ।

रिन—सज्ञा पुं० [सं० ऋण] दे० 'ऋण' ।

रिनिवधी—सज्ञा पुं० [सं० ऋण + बन्ध] कर्जदार । ऋणी ।

रिनिर्झा—वि० [सं० ऋणिन्] जिसने ऋण लिया हो । ऋणी । कर्जदार । उ०—दँवे को न कछू रिनिर्झा हौं धनिक तू पत्र लिखाउ ।—तुलसी (शब्द०) ।

रिनियाँ—वि० [सं० ऋणिन्] दे० 'रिनिर्झा' ।

रिनी—वि० [सं० ऋणिन्] जिसने ऋण लिया हो । ऋणी । कर्जदार ।

रिप—सज्ञा पुं० [सं०] १ पृथ्वी । २ शत्रु । ३ हिंसा ।

रिपटना—क्रि० अ० [?] रपटना । फिसलना । विछनाना ।

रिपु—सज्ञा पुं० [सं०] १ शत्रु । दुश्मन । वैरी । २ जन्मकृडली में नम मे छठा स्थान । ३ पुत्राणानुमार द्रव के पीने और श्लिष्टि के पुत्र का नाम । ४ विरुद्ध ग्रह (ज्योतिष) ।

रिपुघाती—सज्ञा पुं० [सं० रिपुघातिन्] दे० 'रिपु' ।

रिपुघ्न—वि० [सं०] शत्रुघ्नो का नाण करनेवाला ।

रिपुना—सज्ञा स्त्री० [सं०] वैर । शत्रुता । दुश्मनी । उ०—जो रिपुता करि हमको मार्यो । ताको हमहि मपदि महारग्यो । रघुराज (शब्द०) ।

रिपुद्वन—सज्ञा पुं० [सं० रिपु + दमन] शत्रुघ्न । उ —द्वन मुवन रिपुद्वन भरत ताल लखन दीन की ।—तुलसी प्र०, पृ० ५७५ ।

रिपुमूदन—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रिपुद्वन' । उ०—रिपुमूदन पद-कमल नमामी ।—मानस ।

रिपुहन—सज्ञा पुं० [सं० रिपु + हन] शत्रुघ्न । उ० सुनि रिपुहन लखि नख मिख खोटी ।—मानस, २।१६३ ।

रिपोट—सज्ञा स्त्री० [अ०] १ किसी घटना का वह सविस्तार वर्णन जो किसी को सूचना देने के लिये किया जाय । २ किसी मस्या आदि के कार्या का विस्तृत विवरण । ३ किसी वस्तु या व्यक्ति के सबब की जानने योग्य बातों का व्योरा ।

रिपोर्टर—सज्ञा पुं० [अ०] १ किसी समाचारपत्र के सपादकीय विभाग का वह कार्यकर्ता जिसका काम सब प्रकार के स्थानीय समाचारों और घटनाओं का सग्रह कर उन्हें लिखकर सपादक को देना और अपने पत्र के लिये सार्वजनिक सभा, समिति, उत्सव, मेले आदि का विवरण लिखकर लाना, स्थानांतर में होनेवाली सभा, ममेलन, उत्सव, मेले आदि के अवसर पर जाकर वहाँ का व्योरा लिखकर भेजना और प्रसिद्ध प्रसिद्ध व्यक्तियों से मिलकर महत्व के सार्वजनिक प्रश्नों पर उनका मत जानना होता है । २ वह जो किसी सभा या समिति का विवरण और व्याख्यान लिखता हो । जैसे, काप्रेस रिपोर्टर । ३ वह जो सरकार की ओर से अदालत या किसी सभा समिति या कौंसिल की काररवाई और व्याख्यान लिखता हो । जैसे,—कौंसिल रिपोर्टर, सी० आई० डी० रिपोर्टर ।

रिप्र—सज्ञा पुं० [म०] १ पातक । २ घुल । गदगी (को०) ।

रिप्र—वि० बुरा । निम्न । नीच (को०) ।

रिप्रवाह—सज्ञा पुं० [सं०] वह जिसमें पाप या पातक का नाश होता हो ।

रिफार्म—सज्ञा पुं० [अ० रिफार्म] दोषों या श्रुटियों का दूर किया जाना । किसी सस्था या विभाग में परिवर्तन किया जाना । सुधार । सस्कार । परिवर्तन ।

रिफार्मर—सज्ञा पुं० [अ० रिफार्मर] वह जो धार्मिक, सामाजिक या राजनीतिक सुधार या उन्नति के लिये प्रयत्न या आंदोलन करता हो । सुधारक । सस्कारक ।

रिफार्मेटरी—सज्ञा पुं० [अ० रिफार्मेटरी] वह सस्था या स्थान जहाँ अपना कौदी वालक रखे जाते हैं और उन्हें औद्योगिक शिक्षा दी जाती है जिममें वे लोग वहाँ से बाहर निकलकर जीविकानिर्वाह कर सकें और भलेमानस बनकर रहें । चरित्रशोधनालय ।

रिफार्मेंटरी स्कूल

रिफार्मेंटरी स्कूल—सज्ञा पुं० [प्र० रिफार्मेंटरी स्कूल] दे० 'रिफार्मेंटरी'।
 रिचन—सज्ञा पुं० [प्र०] १ सिल्क, माटन या सूती कपड़े आदि की पतली लची पट्टी जिससे कोई वस्तु बांधने का काम लेते हैं। फीता। २ टाइप राइटिंग में लगाया जानेवाला स्याही का कंता। ३ स्त्रियो, कन्याओं की चाँदी में लगाया जानेवाला रेशम, गूत आदि का कुछ चौड़ा फीता। उ०—नाउडर, रिचन आदि श्रुंगार प्रसाधन की प्रायः सभी आवश्यक वस्तुएँ खरीदकर में होटल को लौट चला।—जर्मी, पृ० ७१।

रिभु—सज्ञा पुं० [सं० ऋभु] दे० 'ऋभु'।

रिभ्रा—सज्ञा पुं० [सं० रिभ्रन्] चोर। तस्कर (को०)।

रिम'—सज्ञा पुं० [सं० अरिम् या ऋपु] शत्रु। (डि०)।

रिम—सज्ञा स्त्री० [प्र० रीम] दे० 'रीम'।

रिमभिम्—सज्ञा स्त्री० [अनु०] छोटी छोटी वृंदों का लगातार गिरना। हलकी फुहार पड़ना।

रिमभिम्—क्रि० वि० वर्षा की छोटी छोटी वृंदों में। उ०—गदल घिरे हुए हैं, बिजली चमक रही है, रिमभिम् भड़की लगी हुई है।—बालमुकुद (शब्द०)।

रिमहर—सज्ञा पुं० [सं० अरिम् + हर] शत्रु। (डि०)।

रिमाइडर—सज्ञा पुं० [अ०] अनुस्मारक। याददाश्त।

रिमाईक—सज्ञा पुं० [अ०] मत। राय।

रिमिका—सज्ञा [हिं०] काली मिर्च की लता। (अनेकार्थ)।

रिम्मना—क्रि० अ० [हिं० रमना] रमण करना। रमना। उ०—नारि सो धिकु जोह पुरुष न रिम्मे, पुरुष सो धियु जीवन अफकारी। बचन सो धिकु जो बोलि पलट्टिय दानि सो धिकु जो करकस भारी।—प्रकवरी०, पृ० ३२२।

रिया—सज्ञा स्त्री० [अ०] दिखावा। मक्कारी (को०)।

यौ०—रियाकार = मक्कार। रियाकारी = फरेब। मक्कार।

रियाज—सज्ञा पुं० [अ० रियाज, शेज़दू का बहुव०] १ बाग। उपवन। उद्यान। २ मिहनत। श्रम। ३ अन्त्याम। ४ दे० 'रियाजत'।

मुहा०—रियाज मारना = (१) कमरत करना। (२) परिश्रम करना।

रियाजत—सज्ञा स्त्री० [अ० रियाजत] १ कमरत। व्यायाम। २ श्रावत। जपतन। ३ दे० 'रियाज' (को०)।

रियाजी—वि० [अ० रियाजी] १ मेहनती। २ कमरती।

रियाजी—सज्ञा स्त्री० [अ० रियाजी] गणित विद्या (को०)।

रियायत—सज्ञा स्त्री० [अ० रियायत] दे० 'रियायत'।

रियासत—सज्ञा स्त्री० [अ०] १ राज्य। समलदारी। २. रईम होने का भाव। समोरी। वैभव। ऐश्वर्य। स्वामित्व। सरदारी।

रियासती—स्त्री० [अ० रियासत + टि० टि (प्रत्य०)] रियासत से सम्बंधित।

रियाइ—सज्ञा स्त्री० [अ०] १. वायु। २. अमान वायु (को०)।

रिरसा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ मंभोग की इच्छा। २ आनंद लेने की इच्छा (को०)।

रिरणी—सज्ञा स्त्री० [हिं० गर] ठूठ। जिद। उ०—रन में रितान्घो अनरम की पिनाम्घो देर पीछ पहिनाम्घो मो बरोरत रिरण्यों।—दव (शब्द०)।

रिरकना—क्रि० अ० [सं० √रु] १ मरकना। गिरना। उ०—प्यो लखि मुदरि मुदरि सज तें या रिररी धिरती बटगनी। वान के लागे नही ठहरात हं ज्या जवजान के पात पं पानी।—आचार्य श०, पृ० १६६। २ गिरगिटाना। गिरियाना।

रिरना—क्रि० अ० [अनु०] बहुत दीनता प्रकट करना। गिटगिटाना।

रिरियाना—क्रि० अ० [हिं० रिरना] दे० 'रिरना'।

रिरिहा—सज्ञा पुं० [हिं० रिरना (= गिटगिटाना)] बह जा गिटगिटकर आर रट लगाकर कुछ मांगता हो। उ०—द्वार हूं भार हो का आज। रटत रिरिहा आरि और न कीर ही ते काज —नुलसा (शब्द०)।

रिरी—सज्ञा स्त्री० [सं०] पीनल। (धानु)।

रिरी—वि० [हिं० रिर + ई (प्रत्य०)] जिद्दा। हठी।

रिलना—क्रि० अ० [हिं० रलना। तुल० प० रलना (= मिलना)] प्रवेश करना। पैठना। घुसना। उ०—वीरंग भरि मामिनी दिलावत मो रंग हिय रिलि।—मुकवि (शब्द०)। २ हिन मिलकर एक हो जाना। मिल जाना। उ०—बसर मानिक तखि न परत यो रंग रल्यो रिलि।—मुकवि (शब्द०)।

रिलीफ—सज्ञा पुं० [अ० रिलीफ] बुर सहायता जो आर्त पीड़ित या दोन दुखों जना का दा जाय। नटायता। माहाय्य। मदद। जैसे,—मारवाजी रिलीफ मोमाइटी। रिलीफ बक।

रिवाज—सज्ञा पुं० [अ०] प्रथा। रम्ग। रीति। चलन।

क्रि० प्र०—उठना।—चलना।—निरुद्धना।—पटना।—होना।

रिवालय—सज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का तमबा जितने ए० नाय रुई गोलिया भरन का चक्र होता है जो घूमता है। गोलियाँ लगातार एक के बाद दूसरी छोटो जा सकती हैं।

रिच्यू—सज्ञा स्त्री० [अ०] १ किसी नर्मान प्रसिद्ध पुस्तक परीक्षा कर उसके गुण दायका प्रकट करना। आलाचना समालोचना। जैसे,—प्रापन माने पत्र न प्रमी मरी पुस्तक की रिच्यू नही की।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

२ वह लेख या लेखन जिसमें इस प्रकार विषय पुस्तक आलाचना या मर्दा हो। समालोचना। जैसे,—'मदन' 'समाज' की जो रिच्यू निकली है वह नदरमाइत बुरा है जा सकती है। ३ व मातापुत्र परस्पर एक-दूसरे का जौति सामाजिक, धार्मिक, वृत्तिक आदि विषय पर आलाचना लेखों या मधुर चर्च के माध्यम से नवीन प्रकाशित पुस्तक

की भी आलोचना रहती हो। जैसे—मार्डन रिब्यू, सैंटरडे रिब्यू। ४ किसी निराय या फैसले का पुनर्विचार। नजरसानी। जैमे, —नीचे को अदालत का फसला रिब्यू के लिये हाईकोर्ट भेजा गया है।

रिश—सञ्ज्ञा पुं० [न०] शत्रु। अरि [को०]।

रिशा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] उतरा भाद्रपद नक्षत्र [को०]।

रिश्ता—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रिश्तह्] १ नाता। सबब। २ डोरा। तागा (को०)। ३ नहाहू वा नाहू रोग (को०)।

रिश्तेदार—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रिश्तह्दार] सवधी। नातेदार। स्वजन।

रिश्तेदारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० रिश्तह्दारी] रिश्ता हाने का भाव। सवब। नाता।

रिश्तेमद्—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रिश्तह्मद्] सवधी। नातेदार।

रिश्य—सञ्ज्ञा पुं० [न०] मृग।

रिश्वत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] वह धन जो किसी को उसके कर्तव्य से विमुक्त करके अपना लाभ करने के लिये अनुचित रूप से दिया जाय। धूम। लांच। उत्कोच। जैसे,—उसने दो सौ रूपए रिश्वत देकर उस मुकदमे से अपनी जान बचाई।

क्रि० प्र०—खाना।—देना। जैसे,—रूपया दो रूपया रिश्वत देकर अपना काम निकाल लो।—पाना।—मिलना।—लेना।

रिश्वतखोर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रिश्वन + फा० खोर] वह जो रिश्वत लेता हो। धूम खानेवाला।

रिश्वतखोरो—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रिश्वन + फा० खोरो] रिश्वत खाने का काम। धूम लेने का काम।

रिपभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ऋषभ] दे० 'ऋषभ'।

रिषिपु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'ऋषि'।

रिषीक'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव।

रिषीक'—वि० हानि पहुँचानेवाला।

रिष्ट'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कन्याएँ। मगल। सौभाग्य। २ अभाग्य। अमगल। दुर्भाग्य। ३ अभाव। न होना। ४ नाश। ५ पाप। ६ खड्ग। ७ रीठा का वृद्ध (को०)।

रिष्ट'—वि० नष्ट। बरवाद।

रिष्ट'—वि० [सं० हृष्ट] १ प्रसन्न। २ मोटा ताजा।

यौ०—रिष्टपुष्ट = हृष्टपुष्ट। उ०—रिष्ट पुष्ट कोउ अति तन खीना।—मानस, १।६३।

रिष्टक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रक्तशिशु। रीठा [को०]।

रिष्टि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ खड्ग। २ अमगल।

रिष्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रिश्य। मृग [को०]।

रिष्यमूक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ऋष्यमूक] दक्षिण का एक पर्वत जहाँ राम जी से सुग्रीव की मित्रता हुई थी। उ०—आगे चले बहुरि रघुराया। रिष्यमूक पर्वत नियराया।—मानस, ४।१।

रिष्व—वि० [सं०] घातक। बधक। हत्ता [को०]।

रिस—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रूप] क्राध। गुस्ता। काप। नाराजगी। उ०—(क) मुनि मुदान राजें रिम मानी।—जायसी (शब्द०)। (ख) महाप्रभु कृपाकरन रघुनदन रिम न गई पल आधु।—सूर (शब्द०)। (ग) जात पुकारत आरन वानी। देखि दुशामन अति रिस मानी।—मवल (शब्द०)।

मुहा०—रिस माना = क्रोध को रोकना। उ०—(क) धर्मज वदन निहारि, विगल सबन रिम मारि लन। दीन गदा महि डारि, भीम चिकल पारय अतिहि।—नवन (शब्द०)। (ख) राम राम पुकार हनुमान अगद बह्यो। तब रावण रिम मारि रामचंद्र मन मे बरे।—हृदयराम (शब्द०)।

रिसनां—क्रि० सं० [हिं० रसना] बहुत ही छोटे छोटे छिद्रों द्वारा छन छनकर बाहर निकल जाना। रसना। उ०—बूढ़ा की मिट्टी ऐसी दरदरी थी कि जो दीया बनाते तो जनाने के समय सारी चरबी पिघलकर उनके भीतर स रिम जाती।—शिवप्रपाद (शब्द०)।

रिसवानां—क्रि० सं० [हिं० रिसाना] दे० 'रिसाना'। उ०—ताही समय नंद घर आए। मुनि जमुमति को बहु रिमवाए।—विश्राम (शब्द०)।

रिसहा।—वि० [हिं० रिस + हा (प्रत्य०)] १ बात बात पर क्रोध करनेवाला। गुस्सेवर। क्रोधी। उ०—सूधे न काहू बतयो कछू मन याही ते मेरो भयो रिसहा है।—मन्नालाल (शब्द०)।

रिसहायां—वि० [हिं० रिसाया] [वि० स्त्री० रिसहाई] क्रुद्ध। कुपित। नाराज। उ०—(क) लखि लीनी तब चतुर नागरी ये मो पर सब है रिसहाई।—सूर (शब्द०)। (ख) जननी अतिहि भई रिसहाई। बार बार कह कुँवरे राधिका री मोतोसरि कहाँ गमाई।—सूर (शब्द०)।

रिसान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ताने के सूतों को फँसकर उनको साफ करने का काम। (खुलाह)।

रिसानां—क्रि० अ० [हिं० रिस + आना (प्रत्य०)] क्रुद्ध होना। खफा होना। गुस्ता होना। उ०—(क) और की ओर तकै जब प्यो तब तयोरी चढ़ाइ चढ़ाइ रिमाति है। (ख) सखी मदन लाई जहाँ रानी। मातु ताहि लखे बहुत रिसानो।—विश्राम (शब्द०)।

सयो क्रि०—जाना।—उठना।

रिसानां—क्रि० सं० किसी पर क्रुद्ध होना। विगडना। उ०—इनको बात न जानति मया भोका बारबार रिसाति।—सूर (शब्द०)।

रिसानि, रिसानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रिस + आनि (प्रत्य०)] क्रोध। गुस्ता। नाराजगी। उ०—घोर धार भृगुनाथ रिसानी।—मानस, १।४१।

रिसालां—सञ्ज्ञा पुं० [अ० हरमाल] राज्यकर जो मुफत्सल से राजधानी को भेजा जाता है। उ०—मानो हय हाथी उमराव करि साथी अवरग डरि सिवा जी पै भेजत रिसाल है।—भूषण (शब्द०)।

रिसालदार—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] बुद्धसवार सेना का अफसर। २.

रिसाल या राजकर ले जानेवालो का प्रधान सचालक।
चढनदार।

रिसाला—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रिसालह्] १ घोडसवारो की सेना।
अश्वारोही सेना। २ किमी विषय पर छोटी पुस्तक (को०)।
३ नियत ममय पर मासिक, पाक्षिक, त्रैमासिक आदि रूपो में
प्रक शित होनेवाला पत्र (को०)।

रिसि(पु)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रिस] दे० 'रिस'।

रिसिञ्चाना, रिसियाना†—क्रि० अ० [हि० रिस + आना (प्रत्य०)]
क्रुद्ध होना। कुपित होना। उ०—(क) कवहूँ रिसियाई कहेँ
हठि कै पुनि लेत साई जेहि लागि अरै।—तुलसी (शब्द०)।
(ख) शाप दीन सुनि अति रिसियाने। कीन्हे कपट अकाज
अजाने।—विश्राम (शब्द०)।

रिसिञ्चाना, रिसियाना†—क्रि० स० किसी पर क्रुद्ध होना। विगडना।

रिसिक(पु)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रिपोक] तलवार। उ०—रिमिक कुसेह
कृपान असि विशसनपा करवाल।—नदवास (शब्द०)।

रिसौहँ—वि० [हि० रिस + औहँ (प्रत्य०)] १ क्रुद्ध सा। कुछ कोप-
युक्त। थोडा नाराज। उ०—(क) सी करति ओठनि बसी
करति आंगिन रिसौंही सी हँमी करति, भौंहनि हँसी करति।—
देव (शब्द०)। (ख) करी रिसौही जाहिगी सहज हँसौही
भौह।—बिहारी (शब्द०)। २. क्रोध से भरा। कोपसूचक।
उ०—माखे लखन कुटिल भई भौहँ। रदपुट फरकत नयन
रिसौहँ।—तुलसी (शब्द०)।

रिस्क—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] भोका। जवाबदेही। भार। बोझ। जैसे—
रेलवे रिस्क। जैसे,—यदि तुम गाँठ न उठाओगे तो वे तुम्हारी
रिस्क पर बैच दी जायेंगी।

क्रि० प्र०—उठाना।—लेना।

रिस्टवाच—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] कलाई पर बाँधने की घडी।

रिहन—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रहन] दे० 'रेहन'।

रिहननामा—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] वह लेख जिममे किसी पदार्थ के रेहन
रखे जाने और उसके सबध की शर्तों का उल्लेख हो।

रिहर्सल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ नाटक के अभिनय का अभ्यास। २
वह अभ्याग जो किसी कार्य की ठीक समय पर करने के पहले
किया जाय।

रिहल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] काठ की बनी हुई कैचीनुमा चौकी जिसपर
रखकर लोग पुस्तक पढते हैं और जिसका आकार इस प्रकार
का × होता है।

रिहा—वि० [फा०] १ (वधन आदि से) मुक्त। छूटा हुआ। २
(किसी बाधा या सफ्ट से) छुटा हुआ।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

रिहाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] छुटकारा। मुक्ति। छुट्टी।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

रीधना—क्रि० स० [सं० र्धन] तैयार करने के लिये खाद्य पदार्थ को
तलना, उबालना या पकाना। राँधना। उ०—(क) जगन्नाथ

दरसन कहेँ आए। भोजन रीधा भात पकाए।—जायसी
(शब्द०)। (ख) रसाई के घर मे ब्रह्मानन्द की भतीजी रोहिएी
रीध रही थी।—अयोध्या (शब्द०)।

री†—अव्य० [सं० रे] सखियों के लिये संबोधन। अरी। एरी। उ०—
नेकु सुमुखि चित लाइ चितौ री। नख भिख मुदरता अवलोकन
कह्यौ न परत सुख होत जितौ री। सावर रूप सुवा भरिवे
कहेँ नयन कमल कल कलम रिती री।—तुलसी (शब्द०)।

री†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गति। २. वध। हत्या। ३ शब्द। रव।
४ क्षरण। चूना।

रीगन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का वान जो भादो या कुआर में
तैयार होता है।

रीगना—क्रि० अ० [अ०] चिढना।

रीछ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रूच्छ] [स्त्री० रीछनी] भालू।

रौ०—रीछपति = जामवत। उ०—रुह रीछपति सुनु हनुमाना।—
मानस,—४।३०। रीछराज।

रीछिराज(पु)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रूछिराज] जामवत। उ०—रीछिराज
कपिराज नील नल बोलि वालि नदन लए।—तुलसी प्र०,
पृ० ३८६।

रीजेंट—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह जो किसी राजा की नाबालिगी, अनु-
पस्थिति या अयोग्यता की अवस्था में राज्य का प्रबध या शासन
करता हो। राज्यप्रतिनिधि। प्रस्थायी शासक। बली। जैसे,—
स्वर्गीय महाराज सरदारसिंह जी की नाबालिगी में ईडर के
महाराज सर प्रतापसिंह कई वर्ष तक जोधपुर के रीजेंट रहे।

रीजेंसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] रीजेंट का शासन या अधिकार। जैसे,—
जोधपुर में कई वर्ष तक रीजेंसी रही।

रीज्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ घृणा। नफरत। २ भला बुरा कहना।
लानत मलामत। कुत्सा। निंदा। भर्त्सना।

रोम्क—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रञ्जन] १ किमी के ऊपर रीम्कने की क्रिया
या भाव। किसी की किमी बात पर प्रसन्नता। २ किमी के
रूप, गुण आदि पर मोहत होना। मुग्ध होने का भाव।

रोम्कना—क्रि० अ० [सं० रञ्जन] १ किमी की किमी बात पर
प्रसन्न होना। उ०—हेतिकाँ कोऊ डकै रघुनाथ में माँवरे के
रंग रीम्कि रजाँगी। देह तजाँगी सदेह तजाँगी वै देह तजाँगी न
नेह तजाँगी।—रघुनाथ (शब्द०)। २ मोहित होना। मुग्ध होना।
उ०—(क) रीम्कि राज कुँवरि छवि देखी। इनाँह वरँ हरि जानि
विशेषी।—तुलसी (शब्द०)। (ख) रहत नटत रीम्कन खिम्कन
हिलत मिलत लजियात। भरे भीन मे करत है नैनन ही सो
बात।—बिहारी (शब्द०)।

सयो० क्रि०—जाना। उ०—रूप निकाई भीत की ह्याँ तक लो
अधिकारत। जा तन हेरी निमिप कँ रीम्कहु रीम्की जात।
—रसनिधि (शब्द०)।

रीम्कि(पु)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रीम्कना] प्रसन्नता आनन्द। उ०—
तेरी खोम्किने की हख रीम्कि मनमोहन को याते वहे माज
सजि सजि नित आवते।—भिन्नारी० प्र०, पृ० १३५।

रीठ^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रिष्ट] १. तलवार । २. युद्ध । (डि०) ।

रीठ^२—वि० अशुभ । खराब ।

रीठा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रिष्ट, प्रा० रिष्ट या सं० रीठा (= तरज भेद)] १. एक घटा जगली वृक्ष जो प्रायः बंगाल, मध्य प्रदेश, राजपुताने तथा दक्षिण भारत में पाया जाता है । यह देसन में बहुत मुदर होता है । २. इस वृक्ष का फल जो बेर के बराबर होता है ।

विशेष—इसको लोग सुखाकर रखते हैं । इसे पानी में भिगोकर मलने से फेन निकलता है जिसे कपड़े धोने के लिये काशीर में शाल आदि प्रायः इसी से साफ किए जाते हैं । यह रेशम तथा जवाहिरात धोने के काम में भी आना है । इसे फेनिल भी कहते हैं ।

रीठा^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० भट्टा] वह भट्टा जिसमें चूना पनाने के लिये ककर फूँके जाते हैं । (बुदेलखंड) ।

रीठाकरज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ३० 'रीठा' ।

रीठी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रीठा] ३० 'रीठा' ।

रीडर^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १. वह जो पढ़े । पढ़नेवाला । पाठक । २. कालेज या विश्वविद्यालय का अध्यापक जो लेक्चरर (अध्यापक) से ऊँचा होता है । व्याख्याता । ३. वह जो लेख या पुस्तकों के प्रूफ पढ़ता या मसौदा करता है । मसौदाकर्ता ।

रीडर^२—सञ्ज्ञा स्त्री० पाठ्य पुस्तक । जैसे,—पहली रीडर । वैयक्तिक रीडर । किंग रीडर ।

रीडिंग रूम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] अध्ययनस्थल । ३० 'वाचनालय' ।

रीडक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] देखो 'रीढ़' [को०] ।

रीढ़—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रीढक] पीठ के बीचोबीच की वह पट्टी हड्डी जो गर्दन से कमर तक जाता है और जिसमें पसलियाँ मिली हुई रहती हैं । मेरुदंड ।

विशेष—यह वारतव में एक ही हड्डी नहीं होती, बल्कि बहुत सी हड्डियों की गुरियों की एक शृंखला होती है । इसे शरीर का आधार समझना चाहिए । इसका मोटा लगाव मस्तिष्क से होता है और बहुत से सवदनमूत्र इसमें से दोनों ओर निकलकर फैले रहते हैं ।

रीठा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अनादर । अवज्ञा । उपेक्षा [को०] ।

रीण—वि० [सं०] १. तिरोभूत । तिरोहित । अतर्धान । २. स्पष्टित । प्रकृतित । क्षरित [को०] ।

रीत—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रीति] ३० 'रीति' । उ०—पखान सो मीन सोहाग की रीतहि ।—देव (शब्द०) ।

रीतना^१—क्रि० अ० [सं० रिक्त, प्रा० रिक्त + हि० ना (प्रत्यय०)] खाली होना । रिक्त होना । उ०—हमहूँ समुक्ति परी नीके करि यह आषा तनु रीत्यो ।—सूर (शब्द०) ।

रीतना^२—क्रि० सं० खाली करना । रिक्त करना ।

रीता—वि० [सं० रिक्त, प्रा० रिक्त] [वि० स्त्री० रीती] जिसके अंदर कुछ न हो । खाली । रिक्त । शून्य । उ०—(क) साँची कहि

जाउ तम गेहो भी रीत पर ।—तमसा (शब्द०) । (घ) तम तम तमि धन धाम मँवारि प्रातः कने उठि रीत ।—तुनी (शब्द०) । (ग) तने पट परि रोतांगर देनि नान को टारि ।—रामनिधि (पाद) ।

रीति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. नाट्य काय करने का ढंग । प्रकार । तरंग । टम । उ—गति मुनि विदुष्य प्रीति जात मफरी की रीति ।—विहारी (शब्द०) । २. रस । विचार । परिपाटी । उ०—(र) ततत्र मनत्र प्याय ता तत्र मन दं तत्र प्रीति । तुनी गनेति भुग वई प्रेम पय की रीति ।—रामनिधि (शब्द०) । (न) रघुकुल रात तदा चरि गारि । प्राण जाटि प्रद चवन न जाटि ।—तुनी (शब्द०) । ३. भाषा । विषय । ४. गार्हस्थ्य में कृता विषय का प्रणय करने में विद्विष्ट पदचरना व्यवृत्तियों को वह गजना जिनमें अज, प्रसाद या माधुर्य आता है । ५. पानन । ६. नाह का मल । मूर । ७. जने हुए सोत की मूल । ८. नौगा । ९. गति । १०. स्त्रिया । ११. स्तुति । प्रशंसा ।

या.—रीतिकाल = हिंदी गार्हस्थ्य के रीतिकाल का बटू काल जब रात में ही रचना थकी जाती होती थी । रातिप्रथ, रीतिश, रा = वे तत्तमप्रथ जिनमें नायिकाभेद, नस्तुति, अलकार आदि का लक्षण एवं नौदाहरण विवेचन किया गया है ।

रीतिकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पीतल का भस्म । पुष्पाजन [को०] ।

रीतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. जन्म का नस्म । २. पीतल । कुमुपाजन ।

रीम^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] गान्धारी वटू गद्दी जिसमें बीस दन्ते (गर्वात् ५०० पंटे) होते हैं ।

रीम^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] मवाद । पीस ।

रीर—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रीढ़] २० 'रीढ़' ।

रीर^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव ।

रीरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पीतल ।

रीशमाल—सञ्ज्ञा स्त्री० [प्रा०] यह धातु जो अपनी स्त्री के व्यवहार की कमाई खाता हो [को०] ।

रीपमूरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ऋचमूरु] ३० 'ऋचमूरु' ।

रीस^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] १. ३० 'रोमि' । उ०—बुद्ध जो मीन हुआव मीम धुनहि तेहि रीम ।—जायसी (शब्द०) ।

रीस^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रीस] १. जाह । उ०—वरनी गौड कुनु कै रीसी ।—जायसी (शब्द०) । २. नर्या । बराबरी । उ०—(क) नेमल त्रिना मुगध तू करत मालती रीस ।—दीनदयाल (शब्द०) । (ख) कही हियालय शिव प्रभु ईस । हमका उनसो कैसी रीस ।—सूर (शब्द०) ।

रीसना^१—क्रि० अ० [हि० रीस + ना (प्रत्यय०)] रूद्ध होना । रूपा होना । उ०—मुख फिराह मन अपने रीसा । चलत न तिरिया कर मुख दीसा ।—जायसी (शब्द०) ।

रीसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] एक प्रकार की भांडी जिसकी छाल के रेशों

ने रस्सियाँ बनती हैं। यह भाड़ी हिमाचल और खासिया पहाड़ी पर होती है। इसे बनकठकीरा या बनरीहा भी कहते हैं।

रीहा—सञ्ज्ञा स्त्री [हि०] एक भाड़ी। दे० 'रीमा'।

रुंज—सञ्ज्ञा पुं [देश०] एक प्रकार का वाजा। उ०—(क) रुंज मुरज डफ भाँक भाँकरी यत्र पखावज तार।—मूर (शब्द०)। (ख) रुंज मुरज डफ ताल वाँसुरी भालर को भकार।—मूर (शब्द०)।

रुद्ध—सञ्ज्ञा पुं [सं० रुद्ध] १. बिना सिर का घड़। कपड़। २. बिना हाथ पैर का शरीर। वह शरीर जिमके हाथ पैर कटे हो। उ०—(क) जीव पाछे नहि पाछे घग्ही। रुद्धमु ड गय मोदिनि करही।—तुलसी (शब्द०)। (ख) रुद्धि के भुड भूमि भूमि भुकरिसे नाचें ममर मुमार सूर भारे रघुवीर के।—तुलसी (शब्द०)।

रुद्धिका—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० रुद्धिका] १ युद्धभूमि। ममरचेन। २ विभूति। ३ दरवाजे की चौखट (को०)।

रुधनी—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० अरुधनी] वशिष्ठ मुनि की स्त्री। उ०—रतनालिका सी रुधनी सी रोहिणी सी रुचि रति सी रमा सी लसी अगन मे आइकै।—रघुराज (शब्द०)।

रुंधना—क्रि० अ० [सं० रुंध, हिं०] 'रुंधना'। उ०—मिर तुहँ रुंध्यो गयद कठ्यो कट्टारी।—पृ० रा०, ६१।२२६७।

रुंधाना—क्रि० स० [हिं० रुंधना का प्रेर०] पैरो से कुचलवाना। रुंधवाना। उ०—अब नहि राखी उठाइ वरी नहि नान्ही। मारी गज तें रुंधाइ मनहि यह अनुमान्हो।—मूर (शब्द०)।

रुंधना—क्रि० अ० [सं० रुद्ध + ना (प्रत्य०)] १ मार्ग न मिलने के कारण अटकना। रुकना। २ उलभना। फँस जाना। उ०—रंधे रति सप्राम नीके। एक ते एक रगगीर जोधा प्रबल मुरत नहि नेक अति सबल जी कं।—मूर (शब्द०)। ३ किसी काम में लगना। ४ रोक या रुद्धा के लिये काँटेदार भाँडो आदि से घिरना या छाना। बेग जाना। जैसे—रास्ता रुंधना, पेत रुंधना।

रुं (१) —अव्य० [हिं० अरु का सच्चिद्रूप] और। उ०—(क) हम हारी कँ कँ हहा पायन पर्यो प्योऽर। तेह कटा अजहँ किए तेह तरेरे ल्योऽर।—विहारी (शब्द०)। (ख) सबत् भुज श्रु त निधि मही मधुमाम रु मित पच्छ। जनिवासर शुभ पचमी तिन्हो प्रथ प्रतच्छ।—मन्नालाल (शब्द०)।

रुं—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ शब्द। २ वय। ३ गति। ४ काटना। अलग करना (को०)। ५ भय। खतरा (को०)।

रुआली—सञ्ज्ञा स्त्री [रुई + आलि] रुई की बनी हुई एक प्रकार की पोली बत्ती या पूनी जो स्त्रियाँ चरगे पर सूत कातने के लिये एक मिरकी पर लपेट कर बसाती हैं। पूना। पीनी।

रुसा (१) —सञ्ज्ञा पुं [सं० रोम] शरीर पर के छोटे छोटे बाल। रोम। रोसा।

रुआ—सञ्ज्ञा पुं [सं०] आरक का चातुर्थादि। एक पल या पैना। रुआ घास—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं० रुसा] १. एक प्रकार की बहुत मुगधित घास जो तेल आदि वागन के काम आती है। इस घास में बामा हुआ तेल।

रुआना (१) —क्रि० ग० [हिं० रुआना] दे० 'रुआना'।

रुआवा—सञ्ज्ञा पुं [अ० रोश्रय] १. घाट। उदवा। गेय। २. भय। डर। खोफ। आतफ।

क्रि० प्र०—ठोंटना।—झाना।—बैठना।—बैठाना।—मानना।

रुआली—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं० रुई + आलि] दे० 'रुआली'।

रुई—सञ्ज्ञा स्त्री [देश०] एक प्रकार का छोटा पेड़।

विशेष—यह पेड़ हिमाचल की तराई में काश्मीर ने पूर्व दिशा में हाता है। इसकी छाल और पत्तियाँ रंगई के काम में आती हैं।

रुई—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं०] दे० 'रुई'।

रुईदस्त—सञ्ज्ञा पुं [फा० रु ? + दस्त (= हाथ)] कुशती में छाती या बगल के पास से हाथ अघाकर निकालना।

रुईदार—वि० [हिं० रुईदार] दे० 'रुईदार'।

रुक—वि० [सं०] उदार। बहुत देनवाना (को०)।

रुकना—क्रि० अ० [हिं० रोक] १. मार्ग आदि न मिलने के कारण ठहर जाना। आगे न बढ़ सकना। अवरुद्ध होना। अटपटना। जैसे,—(क) यहाँ पानी रुकता है। (ख) रास्ता न मिलने की वजह से मय लोग रुके हैं। २. अपनी इच्छा से ठहर जाना। आगे न बढ़ना। जैसे,—(क) हम रास्ते में एक जगह रुकना चाहते हैं। (ख) यह गाड़ी हर स्टेशन पर रुकती है।

सयो० क्रि०—जाना।—बढ़ना।

३. किसी कार्य में आगे न चचना। किसी काम में मोच विचार या आगा पीछा करना। जैसे,—मैं कुछ निश्चय नहीं कर सकता, इसी में रुका हूँ, नहीं तो काम का दावा कर चुका होता। ४. किसी कार्य का बीच में ही बंद हो जाना। काम आगे न होना। जैसे,—(क) रुपए के बिना सर काम रुकता है। (ख) इस साल विवाह की मय तैयारी हो चुकी थी, पर लडकी मर जाने से विवाह न्य गया। ५. किसी चलते क्रम का बंद होना। मिलमिला आगे न चलना। जैसे—वाट रुकना।

सयो० क्रि०—जाना।

६. वीरवान न होने देना। मजलिन न हाना (बाजार)।

रुकमंगद—सञ्ज्ञा पुं [सं० रुकना + द] दे० 'रुकमंगद'।

रुकमजनी—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० रुकना + मजनी] १. एक प्रकार का पीया या चांगो ने उजावट के लिये जगाया जाता है। २. इस पीया का पूत।

रुकमिनी—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० रुकमिनी] श्रीहृषिकेश की पत्नी। बिसेय दे० 'रुकमिनी'।

रुकरा—सञ्ज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार की इमर का मय।

रुकवाना—क्रि० स० [हि० रुकना वा प्रेर०] दूसरे को रोकने में प्रवृत्त करना । रोकना । रोकने का काम दूसरे से कराना ।

रुकाव - सञ्ज्ञा पुं० [हि० रुकना] १ रुकने का भाव । रुकावट । श्रटकाव । श्रवरोव । रोक । २ मलावरोध । कब्ज । ३ स्तम्भ ।

रुकुम(पु) —सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुकम] दे० 'रुकम' ।

रुकुमी(पु) —सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुकमी] दे० 'रुकमी' ।

रुक् - सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुक्] १ शोभा । द्युति । काति । २ आकाक्षा । इच्छा । ३ तेज । ४, प्रानद । ५ शुक सारिका की बोली या कूजन [को०] ।

रुक् - सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुक्] रोग । व्याधि [को०] ।

रु० —रुकप्रतिक्रिया = रोग का प्रतिकार । चिकित्सा ।

रुकका —सञ्ज्ञा पुं० [अ० रुकअ] १ छोटा पत्र या चिट्ठी । पुरजा । परचा । २ वह लेख जो हुडी या कर्ज लेनेवाल रुक्या लेते समय लिखकर महाजन को देते हैं ।

रुकख(पु) - सञ्ज्ञा पुं० [सं० वृक्ष, प्रा० रुख] रुख । पेड़ । वृक्ष ।

रुकम - सञ्ज्ञा पुं० [न०] १ स्वर्ण । सोना । उ०—चल्यो रुकमनी वधु रुकम रथ चढि भट रुकमी ।—गोपाल (शब्द०) । २ स्वर्ण-भूषण । स्वर्णभरण (का०) । ३ घस्तूर । घस्तूरा । ४ लोहा । ५ नागकेशर । ६ रुक्मिणी के एक भाई का नाम । उ०—कुदनपुर को भीषम राई । विष्णु भक्ति को तन मन चाई । रुकम आदि ताके सुत पांच । रुक्मिणी पुत्री हरि रंग रांच ।—सूर (शब्द०) ।

रुकम - वि० १ चमकीला । २ सुनहरा [को०] ।

रु० —रुकमकेशी = सुनहले वालोवाला । स्वर्णकेश । जिसके केश स्वर्णमि हो ।

रुकमकारक —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुनार ।

रुकमकेश —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विदर्भ के राजा भीष्मक के छोटे पुत्र का नाम ।

रुकमपात्र —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० रुकमपात्री = स्वर्णथाली] सोने का वर्तन [को०] ।

रुकमपारा —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूत का बना हुआ वह फदा या लड जिसकी सहायता से गहने आदि पहने जाते हो ।

रुकमपुर —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक नगर का नाम जहाँ गरुड निवास करते हैं ।

रुकमपृष्ठक —वि० [सं०] जिसपर सोने का पानी चढ़ाया गया हो ।

रुकममाली —सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुकममालिन्] पुराणानुसार भीष्मक के एक पुत्र का नाम ।

रुकममाहु —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार भीष्मक के एक पुत्र का नाम ।

रुकमरथ —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शल्य के एक पुत्र का नाम । २ भीष्मक के एक पुत्र का नाम । ३ द्रोणाचार्य ।

रुकमवती —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक वृत्त का नाम, जिसके प्रत्येक

चरण में 'म म म ग' (5 II, 555, 15, 5) होते हैं । इसके श्रौर नाम 'रूपवती' तथा 'चक्रमाला' भी हैं ।

रुकमवाहन —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] द्रोणाचार्य ।

रुकमसेन —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रुक्मिणी का छोटा भाई । उ०—तब छोटा बालक नृप केरा । रुकमसेन बोला यहि बेरा ।—विश्राम (शब्द०) ।

रुकमागद —सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुक्मागद] एक राजा का नाम । उ०—रुकमागद महिपाल, भयो एक भगवान प्रिय । ताकी कथा रमाल, मैं वर्यो सत्तेप ते ।—रघुगज (शब्द०) ।

रुकमाभ —वि० [सं०] सोने की तरह चमकीला । सुनहरा [को०] ।

रुकिम —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जैना के अनुमार पाँचवें वर्ष का नाम जो रम्यक श्रौर हैरखवत् वर्ष के मध्य में स्थित है ।

रुकिमण —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुक्मिणी] दे० 'रुकमिणी' ।

रुकिमणी —सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] श्रीकृष्ण की पटरानियो में से बड़ी श्रौर पहली जो विदर्भ देश के राजा भीष्मक की कन्या थी । उ०—(क) यह सुनि हरि रुक्मिणी सो कह्यो । ज्यो तुम मोको चित पर चह्यो । नूर (शब्द०) । (ख) लखि रुक्मिणी कह्यो मुनि नारद यह कमला अवतार ।—सूर (शब्द०) ।

विशेष—हृदय में लिखा है कि रुक्मिणी के सौंदर्य की प्रशंसा सुनकर श्रीकृष्ण उसपर आसक्त हो गए थे । उधर श्रीकृष्ण के रूपगुण की प्रशंसा सुनकर रुक्मिणी भी उनपर अनुरक्त हो गई थी । पर श्रीकृष्ण ने कम की हत्या की थी, इसलिये रुक्मी उनसे बहुत द्वेष रखता था । जरासंध ने भीष्मक से कहा था कि तुम अपनी कन्या रुक्मिणी का विवाह शिशुपाल के साथ कर दो । भीष्मक भी इस प्रस्ताव से सहमत हो गए । जब विवाह का समय आया, तब श्रीकृष्ण और बलराम भी वहाँ पहुँच गए । विवाह से एक दिन पहले रुक्मिणी रथ पर चढ़कर इद्राणी की पूजा करने गई थी । जब वह पूजन करके मंदिर से बाहर निकली, तब श्रीकृष्ण उने अपने रथ पर बैठाकर ले चले । समाचार पाकर शिशुपाल आदि अनेक राजा वहाँ आ पहुँचे श्रौर श्रीकृष्ण के माथ उन लोगों का युद्ध होने लगा । श्रीकृष्ण उन सबको परास्त करके रुक्मिणी को वहाँ से हर ले गए । पीछे से रुक्मी ने श्री कृष्ण पर आक्रमण किया श्रौर नर्मदा के तट पर श्रीकृष्ण से उसका भीषण युद्ध हुआ । उस युद्ध में रुक्मी को मूर्च्छित श्रौर परास्त करके श्रीकृष्ण द्वाराका पहुँचे । वही रुक्मिणी के गर्भ से श्रीकृष्ण को दस पुत्र श्रौर एक कन्या हुई थी । पुराणों में रुक्मिणी को लक्ष्मी का अवतार कहा है ।

रुकिमदप, रुक्मिदारण —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बलदेव ।

रुकिमदार —सञ्ज्ञा पुं० [रुक्मिदारिन्] बलदेव ।

रुकमिभिद् —सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बलराम । बलदेव ।

रुकमी —सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुक्मिन्] विदर्भ देश के राजा भीष्मक का बड़ा पुत्र श्रौर रुक्मिणी का भाई ।

विशेष—जिस समय श्रीकृष्ण इसकी बहन रुक्मिणी को हर ले चले थे, उस समय इसके माथ उनका घोर युद्ध हुआ था ।

रुक्मी ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक मैं श्रीकृष्ण को मार न डालूँगा, तब तक घर न लौटूँगा। पर युद्ध में यह श्री कृष्ण से परास्त हो गया था, अतः लौटकर कुडिननगर नहीं गया और विदर्भ में ही भोजकर नामक एक दूमरा नगर बसाकर रहने लगा था। उ०—चल्यो रुक्मिणी वधु रुक्म रथ चढि भट रुक्मी।—गिरधर (शब्द०)।

रुक्मी^२—वि० १ सोने के आभूषणों में युक्त। २. जिमपर सोने का पानी चढ़ा हुआ हो। (को०)।

रुक्^१—वि० [सं० रुक्, रुक्] १ जिसमें चिकनाहट न हो। जो स्निग्ध न हो। रुक्खा। २ जिसका तल चिकना न हो। ऊबड़ खावड़। खुदबुदा। ३ बिना रस का। नीरस। ४ सूखा। शुष्क।

रुक्^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० वृक्ष] १ वृक्ष। पेड़। २. नरकट नाम की घास।

रुक्ता सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुक्ता] रुखाई। रुखापन।

रुक्^३—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रुक्] १ कपोल। गाल। २ मुख। मुह। चेहरा। ३ चेहरे का भाव। आकृति। चेष्टा। उ०—(क) रुक् रुखे भीहे सतर नहिं सीहे ठहरात। मान हितू हारे वात तैं धूमजात लौ जात।—स० सप्तक पृ० २६७। (ख) पुनि मुनिवर शकर रुक्प चीन्हो। चरण गुहा ते बाहर कीन्हो।—स्वामी रामकृष्ण (शब्द०)। (ग) सकर रुख अवलोकि भवानी। प्रभु मोहिं तजेउ हृदय अकुलानी।—तुलसी (शब्द०)।

मुहा०—रुख मिलाना = मुँह सामने करना।

४ मन की इच्छा जो मुख का आकृति से प्रकट हो। चेष्टा से प्रकट इच्छा या मरजी। उ०—राम रुख निरपि हरषी हिये हनुमान मानो खेलवार खोली सीस ताज बाज की।—तुलसी (शब्द०)।

मुहा०—रुख देना = प्रवृत्त होना। ध्यान देना। रुख फेरना या बदलना = (१) ध्यान किसी दूसरी ओर कर लेना। प्रवृत्त न होना। (२) अवकृपा करना। नाराज होना।

५ कृपादृष्टि। महरवानों का नजर। ६ सामने या आगे का भाग। जैसे,—(क) वह मकान दक्खन रुख का है। (ख) कुरसी का रुख इधर कर दा। ७ शतरज का एक मोहरा जो ठाक सामने, पीछे, दाहिने या बाएँ चलता है, तिरछा नहीं चलता। इसे रथ, किशती और हाथी भा कहते हैं।

रुक्^४—क्रि० वि० १ तरफ। ओर। पार्श्व। उ०—मनहुँ मघा जल उमगि उदधि रुख चले नदी नद नार।—तुलसी (शब्द०)। २. सामने। उ०—निज निज रुख रामहिं सब दखा। काउ न जान कछु मरम विशेषा।—तुलसी (शब्द०)।

रुक्^५—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुक्] १ दे० 'रुख'। २. एक प्रकार का घास जिसे बरक तृण कहते हैं।

रुक्^६—वि० [हिं० रुखा] दे० 'रुखा'।

रुखचढ़वा^१—सञ्ज्ञा पुं० हिं० रुख + चढ़ना] १. बदर। २. पेड़ पर रहनेवाला, भूत।

रुखड़ा—वि० [हिं० रुखा + डा (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० रुखड़ी] दे० खुरदुरा। 'रुखा'। उ०—रैयाम स रुखड़ा चीज न कोई सटती है।—दिल्ली, पृ० १६।

रुखदार—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रुख + दार (प्रत्य०)] (बाजार का भाव) जो घट रहा हो।

रुखसत^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रुखसत] १ आज्ञा। परवानगी। (क्व०)। २. रवानगी। कूच। विदाई। प्रस्थान। ३. काम से छुट्टी। अवकाश। जैसे,—बड़ी मुश्किल से चार दिन की रुखसत मिली है। ४. मुहलत। अवकाश। फुर्सत (को०)।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।—होना।

रुखसत^२—वि० जो कही से चल पड़ा हो। जिसने प्रस्थान किया हो।

रुखसताना—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रुखसतानहू] वह इनाम जो किसी की रुखसत होने के समय राजा या रईस आदि के यहाँ से सत्कारार्थ दिया जाता है। विदा होने के समय दिया जानेवाला धन। विदाई।

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

रुखसती^१—वि० [अ० रुखसत + ई (प्रत्य०)] जिसे छुट्टी मिली हो।

रुखसती^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रुखसती] १ विदाई, विशेषतः दुल्हिन की विदाई। विदाई के समय दिया जानेवाला धन। विदाई।

रुखसदी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रुखसती] दे० 'रुखसती'। उ०—- मुखिया को काफा चिरीरी करना पडो थो तब कही काता के समुराल वाले रुखसदी के लिये राजी हुए ये।—नई०, पृ० १३६।

रुखसार—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रुखसार] कपोल। गाल।

रुखाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रुखा + आई (प्रत्य०)] १ रुखे होने की क्रिया या भाव। रुखापन। रुखावट। २. शुष्कता। खुश्की। ३. व्यवहार की कठोरता। शील का त्याग। बेपुरीवती।

क्रि० प्र०—करना।—दिखलाना।

रुखाना^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रुखानी] दे० 'रुखानी'। उ०—सुजन सुतर वन ऊख सम खल टकिका रुखान।—तुलसी प्र०, पृ० १३१।

रुखानक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोपानक] क्रोवाग्नि। (हिं०)।

रुखाना^२—क्रि० अ० [हिं० रुखा + आना (प्रत्य०)] १ रुखा होना। चिकना न रह जाना। २. नीरस होना। सूखना। ३. किमी से रुक् या रुष्ट होना।

रुखानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रोक (= छेद) + खनित्र (= खोदने की चीज)] १ बढद्यों का लोहे का एक औजार जो प्रायः एक वालिशत लवा होता है।

विशेष—इसका अगला सिरा धारदार होता है, और पीछे की ओर लकड़ी का दस्ता होता है जिसपर हथौड़ी या बसूले आदि से चोट लगाकर लकड़ा छाला या काटा जाता है, अथवा उसमें बड़ा छेद किया जाता है।

२. सगतराशों की वह टांकी जिसका व्यवहार प्रायः मोटे कामों में होता है। ३. लोहे का प्रायः एक वालिशत लवा एक औजार जिसमें काठ का दस्ता लगा होता है और जिमकी सहायता से तेली अपनी धानी चलाते हैं।

रुखावट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रूखा + आवट (प्रत्य०)] दे० 'रुखाई' ।
रुखावट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रूखा + आवट (प्रत्य०)] रुखापन ।
रुखाई ।

रुखिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुपिता] वह नायिका जो रोव या क्रोध कर रही हो । मानवती नायिका । उ०—कनहत्तरिता काइ विप्रलधा कोइ रुखिता ।—विधाम (शब्द०) ।

रुखियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रूखा + इया (प्रत्य०)] पेठा ने छाई हुई भूमि ।

रुखुरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रुखा] भूना हुआ चना आदि । चरना ।

रुखुरी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रुख] बहुत छोटा पौधा ।

रुखौहोँ—वि० [हि० रुखा + औहा (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० रुपाँही] रुखाई लिए हुए । रुखा सा । उ०—रख रुपये मिन रोष मुख कहति रुखौह वैन । रुखे कमें होत ये नेह चीरन वैन । —विहारी (शब्द०) ।

रुगटना^१—क्रि० प्र० [हि० रोग] वेदगानो करना । हार के कारण खोफकर मुकर जाना । उ०—गीरी हनी मिनाय क देत रुगट करि दाव । गहि ठोडी प्यारां रुहै भूटे भूटे भाव । —त्रज० प्र०, पृ० ६६ ।

रुगदैया^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [रोग + देया (= देया देया कर रोते हुए वेईमानी) ?] वेईमानी । अन्याय । रोगदैया । रोगदई ।

रुगना^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रोग] पशुओं का टपका नामक रोग ।

रुगियाँ—वि० [हि० रोगी] दे० 'रोगी' ।

रुगौना^१—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] घनुआ । घाल ।

रुगू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुज] दे० 'रुज' ।

रुगू—रुग्दाह (मन्निपात ज्वर) । रुग्भय = रोग का डर ।
रुग्भेषज = रोग की चिकित्सा ।

रुग्ण—वि० [सं०] १ घायल । चोट लामा हुआ । २ दे० 'रुग' [को०] ।

रुग्दाहसन्निपात ज्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का ज्वर ।

विशेष—यह ज्वर बीस दिनों तक रहता है । इसमें रोगी व्याकुल होता और बकता है, उसके शरीर में जलन होती है, पेट में दर्द होता है, और उसे विशेष प्यास लगती है । यह बहुत कष्टसाध्य माना जाता है ।

रुग्ण—वि० [सं० रुग्ण] १ जिसे कोई रोग हुआ हो । रोगग्रस्त । रोगी । बीमार । २ (रोगादि से) भुका हुआ । नमिन । टेढ़ा । ३ टूटा हुआ । ४ विगडा हुआ । ५ दे० 'रुग्ण' ।

रुग्णता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० वरुग्णता] रोगी होने का भाव । बीमारी ।

रुग्मी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जैन हरिवंश के अनुसार जवू द्वीप के एक पर्वत का नाम ।

रुच^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रुचि] दे० 'रुचि' ।

रुचौ—रुचदान ।

रुचक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वास्तुविद्या के अनुसार ऐसा घर

जिम्हें चारों ओर वे त्रिलिङ्ग (चतुर्नरा या परिक्रमा) में से पूर्व और पश्चिम का सर्वथा नष्ट हो गया हो और दक्षिण का समूचा ज्यों का त्यों हो । दृग्मा उत्तर का द्वार छत्रुभ और ज्येष्ठ द्वार श्रुभ माने गए हैं । २ वह पत्थर जो गान न हो, चल्कि चौकोर हो । ३ मञ्जीखार । ४ घोंटो का गहना या गाज । ५ मात्रा । ६ ताला नमक । ७ मागव्य द्रव्य । ८ राचना । ९ रावत्रिण । १० नमक । ११ ब्राह्मण । मित्रोरा नावू । १२ प्राचीन वात का मन्त्र का निष्क नामक गिम्हा । १३ रात । १४ कपूर । १५ पुराणानुसार मुम्भ पर्वत के पाम के एक पर्वत का नाम । १६ जैन हरिवंश के अनुसार हरिवर्ग के एक पर्वत का नाम । १७, दक्षिण दिगा ।

रुचक^२—वि० स्वादिष्ट । जायकेदार । २ रचनेवाला । रचकार (को०) ।

रुचदान—वि० [सं० रुचि + दान] भला लगन बाध । जो अच्छा लग भरे । रुचनेवाला ।

रुचना—क्रि० प्र० [सं० रच + हि० ना (प्रत्य०)] रुचि के अनुकूल होना । अच्छा जान पड़ना । भला लगना । प्रिय लगना । पगद घाना ।

मुदा०—रच रच = रहत रुचि में । अच्छी तरह मन लगाकर ।
उ०—सबरी के बर मुदामा के तटन रुचि रुचि भोग लगाए ।—भजन (शब्द०) ।

रुचा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दीप्ति । प्रकाश । २ शोभा । ३, रुच्छा स्वाहित । ४ मना, मुनमुन, तीत आदि पक्षियों का वीनना ।

रुचि^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रजापति जो रीच्य मनु के पिता थे ।

रुचि^२—सञ्ज्ञा स्त्री० १. प्रवृत्ति । तरीयत । जने,—जिन काम में आपकी रुचि हो, वही कोजिए । २ अनुराग । प्रेम । चाह । ३ किरण । ४ छवि । शोभा । मुदरता । उ०—रवो पचाकर आनन म रुचि कानन भीहें कमान लगी हैं ।—पचाकर (शब्द०) । ५ खाने की इच्छा । भूख । ६ स्वाद । जायका । उ०—तव तव कहि नचरो के फनन की रुचि माधुरी न पाई । —तुलसी (शब्द०) । ७ गोरवन । ८ कामशास्त्र के अनुसार एक प्रकार का भालिगन जिसमें नायिका नायक के सामने उसके घुटन पर बैठकर उसे गले से लगाती है । ९ एक अम्बरा का नाम । उ०—देखो न जाति विसेखी बयू किथी हेम बरेखी रमा रुचि रभो । —मन्नालाल (शब्द०) ।

रुचि^३—वि० शोभा के अनुकूल । फरता हुआ । योग्य । मुनासिर । उ०—भीषी सादी कचुकी कुच रुचि दीसी आज । जनु विधि सीसी मेत में केसरि पोंसों राज ।—स० सतक, पृ० २३५ ।

रुचिकर^१—वि० [सं०] रुचि उत्पन्न करनेवाला । अच्छा लगनेवाला । दिलपसद । जैसे,—इसके सेवन से तुम्हें भोजन रुचिकर लगेगा ।

रुचि^२—सञ्ज्ञा पुं० केशव के एक पुत्र का नाम ।

रुचिकारक—वि० [सं०] १. रुचि उत्पन्न करनेवाला । रुचिकारक । २. अच्छे स्वादवाला । बढ़िया स्वादवाला । स्वादिष्ट । ३. अच्छा लगनेवाला । मनोहर ।

रुचिकारी—वि० [सं० रुचिकारिन्] १ रुचि उत्पन्न करनेवाला ।
रुचिकारक । २ अच्छा स्वादवाला । स्वादिष्ट । ३ अच्छा
लगनेवाला । मनोहर ।

रुचित—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ मोठो वस्तु । २ इच्छा । प्रभिलाषा ।

रुचित^३—वि० जिसे जा चाहता हो । अभिलषित ।

रुचिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रुचि का भाव । रोचकता । २
अनुराग । ३ सुदरता । खूबसूरती । ४ अतिजगती वृत्त का
एक भेद ।

रुचिधाम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुचिधामन्] सूर्य ।

रुचिधाम^३—वि० १ प्रकाशपूर्ण । द्युतिमान् । २ खूबसूरत । सुदर ।

रुचिप्रभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक दैत्य
का नाम ।

रुचिफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नासपाती ।

रुचिभर्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुचिभर्तृ] १ रवि सूर्य । २ स्वामी ।
मालिक । भर्ता ।

रुचिभर्ता—वि० जिसके द्वारा आनन्द की वृद्धि होती हो । सुखकर ।

रुचिमती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] उग्रसेन की रानी और देवकी की माता
जो श्रीकृष्णचन्द्र की नानी थी ।

रुचिमान—वि० [सं० रुचिमत] कात्तिमान । दीप्तिगुण । प्रकाशपूर्ण ।
उ०—रजत तार सी शुचि रुचिमान ।—पल्लव, पृ० ८६ ।

रुचिर—वि० [सं०] १. सुदर । अच्छा । भला । २. मीठा । ३.
चमकीला (को०) । ४. भूख बढ़ानेवाला (को०) । ५. प्रसन्न
(को०) ।

रुचिर^३—सञ्ज्ञा पुं० १ मूलक । मूली । कुकुम । केसर । ३ लौंग ।
४ मेनजित् के एक पुत्र का नाम ।

रुचिरकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम ।

रुचिरवृत्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अन्न का एक प्रकार का सहार ।
उ०—रुचिरवृत्ति मतपितृ सौमनस धनधानहु धृत माली ।—
रघुराज (शब्द०) ।

रुचिरश्रीगर्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक बोधिसत्व का नाम ।

रुचिरागद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुचिराङ्गद] विष्णु (को०) ।

रुचिराजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुचिराञ्जन] शाभाजन । सहिजन ।

रुचिरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. एक प्रकार का छद जिसके
पहले और तीसरे पदों में १६ तथा दूसरे और चौथे
पदों में १४ मात्राएँ तथा अत में दो गुरु होते हैं । २ एक
वृत्त का नाम जिसके प्रत्येक चरण में ज, भ, स, ज, ग
(151, 511, 155, 515) होते हैं । ३ एक प्राचीन नदी का नाम
जिसका उल्लेख रामायण में है । ४ केसर । ५ लौंग । ६.
मूलिका । मूला ।

रुचिराई—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुचिर+हिं० आई (प्रत्य०)]
सुदरता । मनोहरता । खूबसूरती । उ०— - चिकुका
सुंदर क्यों कहीं दसनन को रुचिराई () ।

रुचिरचि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का साम ।

रुचिवर्द्धक—वि० [सं०] १ रुचि उत्पन्न करनेवाला । २ भूख
बढ़ानेवाला ।

रुचिष्य^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ खाने का मीठा पदार्थ । २ श्वेत
नमक (को०) ।

रुचिष्य^३—वि० १ जिसपर रुचि हो । जिसे प्राप्त करने को जी चाहे ।
अभिप्रेत । ३ मधुर । मीठा (को०) । ३ पौष्टिक (को०) ।
क्षुधावधक (को०) ।

रुची—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रुचि' ।

रुच्छ(पुं)—वि० [सं० रुच्छ] १. रूखा । उ—अच्छहि निरच्छ
कपि रुच्छ ह्वै उचारौ इमि तोण तिच्छ तुच्छन को कछुवै न
गत हौ ।—व्याकर (शब्द०) २ व्यवहार में कठोर । ३
नाराज । क्रुद्ध ।

रुच्छ^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुच्छ] दे० 'रूख' ।

रुच्य^३—वि० [सं०] १. रुचिकर । २. सुदर । खूबसूरत । ३.
कात्तिमत् । चमकीला (को०) ।

रुच्य^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सेंवा नमक । २. शालि घान्य । जडहन ।
३. पति । स्वामी । ४. तुष्टिकारक वस्तु (अपवि) । ५.
कतक का वृक्ष ।

रुच्यकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुच्यकन्द] सूरन । श्रोल ।

रुज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भग । भाग । २. वेदना । कष्ट । ३. क्षत ।
घाव । ४ प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जिसपर
चमड़ा मढ़ा होता था । ५. रोग । व्याधि (को०) ।

रुजगार^३—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रोजगार] दे० 'रोजगार' ।

रुजग्रस्त—वि० [सं० रुज् (= रोग) + ग्रस्त] जिसे कोई रोग हो ।
रोगग्रस्त । बीमार ।

रुजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. रोग । बीमारी । २ भग । भाग ।
३ पीडा । ४ क्लान्त । थकावट । थकान (को०) । ५ भेडी ।
६ कुष्ठ । कोढ ।

रुजाकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जिससे कोई रोग उत्पन्न हो ।
बीमारी पैदा करनेवाला । २ रोग । बीमारी । ३. कमरख
नामक फल ।

रुजापह—वि० [सं०] रोग को दूर करनेवाला । व्याधिनाशक (को०) ।

रुजात^३—वि० [सं०] व्याधि से पीडित । रोग से आर्त वा दुखी (को०) ।

रुजाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोगो या कष्टो का समूह । उ०—
हिम करि केहार करमालो । दहन दोष दुख दहन रुजाली ।
—तुलसी (शब्द०) ।

रुजासह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धन्वन वृक्ष । धामिन का पेड़ (को०) ।

रुजी—वि० [सं० रुज् (= रोग) + हिं० ई (प्रत्य०)] जिसे कोई
रोग हो । अस्वस्थ । बीमार । उ०—व्रहत रोज आए मए
अहै रुजी यह देश । याते अब निज पुरो को कोन्दे गमन
नरेश ।—रघुराज (शब्द०) ।

रू—वि० [सं० रुज् (= प्रवृत्त)] १. जिसको तबोयत किसी

भोर भुकीं थां लगी ही। प्रवृत्त। उ०—(क) प्रेम नगर की रीत कछु वनन कहत वन न। रज्जू रहत चित चार सो नहिन के मन नैन।—रत्नानाथ (शब्द०)। (ख) अमरैया बूगत फिर काइल सब जताइ। अमल भयो ऋतुराज को रज्जू छोड़ु सब थाइ।—स० सप्तक, पृ० २३०। २ जा ध्यान दिए हा।

रुक्मिणी—क्रि० अ० [म० रुक्मिणी, प्रा० रुक्मिणी] घाव आदि का भरना या पूजना। उ०—मर्मवेवा वात का नामूर रुक्मिणी तरह नहीं रुक्मिणी।—श्रीनवामदाम (शब्द०)।

रुक्मिणी—क्रि० अ० [हि०] '०' 'अरुक्मिणी' या 'उत्तररुक्मिणी'।

रुक्मिणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [रू०] एक प्रकार की छाटी चि.टया जिमकी पीठ काली, छाता सफेद और चाच लंबी होती है।

रुक्मिणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रुक्मिणी] आकषण। भुसाव। २ पक्षपात। एकतरफा हान का भाव।

रुद्ध, रुद्ध—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुद्ध] रोप [को०]।

रुद्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुद्ध, प्रा० रुद्ध] क्रोध। अमर्ष। गुम्मा। उ०—कामानुज आमर्ष रूठ क्रोध मनु क्रुष होय। क्षाभ भरा तिय को निराख गिडकी सहचार मोय।—नददास (शब्द०)।

रुठना—क्रि० अ० [हि० रुठना] दे० 'रुठना'।

रुठाना—क्रि० सं० [हि० रुठाना का प्रेर० रूप] किसी का रुठने में प्रवृत्त करना। नाराज करना। उ०—मनु न मनावन का करे देत रठाइ रुठाइ। कोतुक लाग्यो प्यो प्रिया खिभूह रिभवति आय।—बिहारी (शब्द०)।

रुठाना—क्रि० अ० [सं० रुठाना] वजना। ध्वनित होना। उ०—रिणतूर नफेरय भेर रई। गहरँ स्वर ताम दमांम गुहँ।—रा० रू०, पृ० ३३।

रुठाना—क्रि० अ० [हि० रुठाना] १ फल, तरकारी आदि का कड़ा पड़ जाना। २ जवान होना।

रुणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सरस्वती नदी की एक शाखा जिसका उल्लेख महाभारत में है।

रुणित—वि० [सं०] शब्द करता हुआ। भनकारता हुआ। वजता हुआ। उ०—चरण रुणित नूपुर ध्वनि माना सर विहरत हैं बाल मराल।—सूर (शब्द०)।

रुत—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुतु] दे० 'रुतु'।

रुत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पक्षियों का शब्द। कलख। उ०—(क) सुनि धार अधीरन के रुत की। चकि के हग फेर किए उतकी।—गुमान (शब्द०)। (ख) पल्लव अधर मधु मधुपनि पीवत ही सूचित शिचर पिक रुत सुख लागरो।—कशव (शब्द०)। २ शब्द। ध्वनि।

रुतवा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रुतवहू] १ दरजा। मर्तवा। शोहदा। पद। २ इज्जत। प्रतिष्ठा। बड़ाई। ३ बुजुर्गी। श्रेष्ठता (को०)।

रुतवा—घटाना।—पाना।—बढ़ाना।—विलाना।

रुतु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुतु] दे० 'रुतु'। उ०—अंगना बुहारत

मीक जो हूटी, गति नामन की।—पीदाग ग्रन्थिं ३० पृ० ६४३।

रुदति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुदति] दे० 'रुदति'।

रुदती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुदती] एक प्रकार का जटा मुप जिसे मजीमनी या मजामानी कहते हैं। जि.प. १० 'रुदती'।

रुदती—वि० स्त्री० राननाको। रोता हुई। विनाप करती हुई। उ०—उम रुदती जिमिगी क-इन रम क लेप म, श्री- पावर ताप उमक प्रिय प्रिरह विद्वानो।—गाकत, पृ० २५०।

रुदु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रुदन करती। २ रुदना। पीटा। ३ बीमारी। ४ रुदनि। शर। शाराज (को०)।

रुदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुदु] दे० 'रुदु'। उ०—निदि अहू काय रुदु श्रु। वनिष वरुहु ताव निररुं।—द्वारा, पृ० ३४।

रुदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पुना। डाटा मरा। ३ नुर्मा (ने०)।

रुदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुदु, रोदु] रान की क्रिया। प्रदा। रोना। विलाप करना। उ०—(१) हरि विन को पुरवें मरा स्वारय। मुदहि धुनत जीश धर मारन रुदत कगत नृन पागय।—नूर (शब्द०)। (२) तकल नुदती धूय दिन प्रत रुदति पुर दिश घाई।—नूर (शब्द०)। (३) आवा निकट हनहि प्रभु भाजत रुदन कराहि। जाउं समीप गहे पद फिर फिर चितह परारि।—तुनी (शब्द०)।

रुदराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुद्रराज] दे० 'रुद्रराज'।

रुदित—वि० [सं०] जो रो रहा हो। रोता हुआ। उ०—(क) रुदित रुत को नार गिरत नुदु वज मुंदा के वन।—गालमुकुद गुप्त (शब्द०)। (ख) रुदित रुदित गाहि रुदित गुप्त छाव कहत वयि मनु पाग की।—तुनी (शब्द०)।

रुदित—सञ्ज्ञा पुं० रान क्रिया। रोना। रुदना [को०]।

रुदुवा—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का धान जो जगहन का महीने में तैयार होता है और जिसका चावल साजा नरु रह मरुता है।

रुदु—वि० [सं०] १ जा किसी में डेरकर राका गया हो। घेरा हुआ। राका हुआ। २ वादत। आवृत्त। उ०—(क) ताम साह यमुना की वारा। गग प्रवाह रुदु परिचारा।—स्वामी रामरुप्य (शब्द०)। (ख) रुदु सर्प ने रुदु हिय मागव विदु करि।—गिरधर (शब्द०)। ३ जिसमें कोई चीज अठ या फँस गई हो। मुंदा हुआ। बंद। ४ जिमकी गति रोक ली गई हो।

रुदु—रुदुकठ = जिमका गला रुंद गया हो। जो प्रेम आदि मनोवेगों के कारण बोलने में असमर्थ हो। रुदुभूत। रुदुवचन = ढके हुए मुखवाला। जिसने मुँह तोप रखा हो।

रुदुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नमक।

रुदुमूत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूत्ररुच्छु नामक रोग।

रुदु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का गणदेवता।

विशेष—इसकी उत्पत्ति सृष्टि के आरंभ में ब्रह्मा की भीड़ों से हुई थी। ये क्रोध रूप माने जाते हैं और भूत, प्रेत, पिशाच

आदि इन्हीं के उत्पन्न कहे जाते हैं। ये कुल मिलाकर ग्यारह हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—अज, एकपाद, अहिब्रह्म, पिनाकी, अपराजित, अयवक, महेश्वर, वृषाकपि, शम्भु, हरण और ईश्वर। गरुड पुराण में इनके नाम इस प्रकार हैं—प्रजक पाद अहिब्रह्म, त्वष्टा, विश्वरूपहर, बहुरूप, अयवक, उपराजित, वृषाकपि, शम्भु, कपर्दी और रवत। कूर्म पुराण में लिखा है कि जत्र आरभ मे बहुत कुछ तपस्या करने पर भी ब्रह्मा सृष्टि न उत्पन्न कर सके, तब उन्हे बहुत क्रोध हुआ और उनकी आंखा से आंसू निकलने लगे, उन्हीं आंसुओं से भूतो और प्रेतों आदि की सृष्टि हुई, और तब उनके मुख से ग्यारह रुद्र उत्पन्न हुए। ये उत्पन्न होते ही जार जोर से रोने लगे थे, इसलिये इनका नाम रुद्र पडा था। इसी प्रकार और भी अनेक पुराणों में इसी प्रकार की कथाएँ हैं। वैदिक साहित्य में अग्नि को ही रुद्र कहा गया है और यह माना गया है कि यज्ञ का अनुष्ठान करने के लिये रुद्र ही यज्ञ में प्रवेश करते हैं। वहाँ रुद्र को अनिरूपी वृष्टि करनेवाला, गरजनेवाला देवता कहा गया है, जिससे वज्र का भी अभिप्राय निकलता है। इसके अतिरिक्त कहीं कहीं 'रुद्र' शब्द से इन्द्र, मित्र, वरुण, पूषण और सोम आदि अनेक देवताओं का भी बोध होता है। एक जगह रुद्र को मरुद्गण का पिता और दूसरी जगह अश्विना का भाई भी कहा गया है। इनके तीन नेत्र बतलाए गए हैं और ये सब लोको का नियन्त्रण करनेवाले तथा सर्पों का ध्वंस करनेवाले कहे गए हैं।

२ ग्यारह की सख्या। उ०—नेहि मधि कुश करि विटप सुहावा। रुद्र सहस्र योजन कर गावा।—विश्राम (शब्द०)। ३ शिव का एक रूप। उ०—(क) रुद्रहि देखि मदन भय माना। दुरार्यर्ष दुर्गम भगवाना।—तुलसी (शब्द०)। (ख) केशव वरणहुँ युद्ध मे योगिनि गण युत रुद्र।—केशव (शब्द०)। (ग) रुद्र के चित्त समुद्र वसै नित ब्रह्महुँ पै वरणी जो न जाई। केशव (शब्द०)। (घ) दशरथ मुत द्वेषी रुद्र ब्रह्मा न भासै। निशिचर वपुरा भू क्यों नस्यो मूल नासै।—केशव (शब्द०)।

विशेष—कहा गया है कि इसी रूप में इन्होंने कामदेव को भस्म किया था, उमा और गंगा आदि के साथ विवाह किया था, आदि।

४ विश्वकर्मा के एक पुत्र का नाम। ५ प्राचीन काल का एक प्रकार का वाजा। ६ मदार का पेड़। आक। ७ रौद्र रस। उ०—प्रथम शृ गार सुहास्य रस करुणा रुद्र सुवीर। भय वीभत्स वखानिए अद्भुत शात सुवीर।—केशव (शब्द०)।

रुद्र^३—वि० भयकर। डरावना। भयावना। भयानक। उ०—हम वृढत हैं विपदा समुद्र। इन राखि लियो सगाम रुद्र।—केशव (शब्द०)। २ क्रदन करनेवाला।

रुद्रकाँ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुद्राक्ष] रुद्राक्ष। उ०—मेखल ब्रह्म कपालनि की यह नूपुर रुद्रक माल रचे जू।—केशव (शब्द०)।

रुद्रकमल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुद्र + कमल] रुद्राक्ष।

रुद्रकलस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का कलश जिसका उपयोग ग्रहों आदि की शांति के समय होता है।

रुद्रकवल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुद्र + कमल] रुद्राक्ष। उ०—पहुँची रुद्रकवल कै गटा। ससि माथे श्री सुरसरि जटा।—जायसी (शब्द०)।

रुद्रकाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शक्ति या दुर्गा की एक मूर्ति का नाम।

रुद्रकुड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुद्रकुण्ड] व्रज के एक तीर्थ का नाम।

रुद्रकोटि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम।

रुद्रगण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार शिव के पारिपद् जिनकी १,००,००,००० और किसी किसी के मत से ३६,००,००,००० है।

विशेष—कहते हैं, ये सब जटा धारण किए रहते हैं, इनके मस्तक पर अर्ध चंद्र रहता है, ये बहुत बलवान होते हैं, और योगियों के योगसाधन में पडनेवाले विघ्न दूर करते हैं।

रुद्रगर्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अग्नि। प्राग।

रुद्रज - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पारा।

रुद्रजटा - सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ इमरूल। ईमरमूल। २ सौंफ। ३ तीन चार हाथ ऊँचा एक प्रकार का क्षुप जिसके पत्ते मयूरशिखा के पत्तों के समान होते हैं।

विशेष—इसके पत्त पहले तो बड़े होते हैं, पर ज्यो ज्यो क्षुप बढ़ता है, त्यो त्यो वे छोटे होते जाते हैं। इसमें लाल रंग के बहुत सुंदर फल लगते हैं, जिनका आकार प्रायः जटा के समान हुआ करता है। इसके बीज मरसा के बीजों के समान काले और चमकीले होते हैं। वैद्यक में रुद्रजटा कटु और श्वास, कास, हृदयरोग तथा भूत प्रेत की वाधा दूर करनेवाली मानी गई है।

पर्या०—रौद्री। जटा। रुद्रा। सोम्या। सुगंधा। घना। ईश्वरी। रुद्रलता। सुपना। सुगंधपत्रा। सुरभि। शिवाह्वा। पत्रवल्की। जटावल्की। रुद्राणी। नेत्रपुष्करा। महाजटा। जटरुद्रा।

रुद्रट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] साहित्य के एक प्रसिद्ध आचार्य जिनका बनाया हुआ 'काव्यालकार' ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है। ये रुद्रभट्ट और शतानंद भी कहलाते थे। इनके पिता का नाम भट्ट वासुक था।

रुद्रतनय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जैन हरिवंश के अनुसार तीसरे श्रीकृष्ण का एक नाम।

रुद्रता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुद्र + ता (प्रत्य०)] दे० 'रुद्रत्व'।

रुद्रताल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मृदंग का एक ताल जो सोलह मात्राओं का होता है। इसमें ११ आघात और ५ खाली होते हैं।

इसका बोल इस प्रकार है— $\begin{matrix} \text{घा} & \text{विन} & \text{धा} & \text{दित} & \text{धेत्ता} & \text{देक्षा} \\ \circ & १ & २ & ३ & \circ & १ & \circ & १ \\ \text{खूनखून} & \text{घा} & \text{घा} & \text{केटे} & \text{ताग्} & \text{देन्ता} & \text{कडान्} & \text{धाम्या} & \text{ता} & \text{देत} & \text{ताग्} \\ २ & ३ & ४ & \circ & + \\ \text{देत} & \text{ताक} & \text{कडान्} & \text{तेरे} & \text{केटे} & \text{ताग्} & \text{खून} & \text{घा} & \end{matrix}$

रुद्रतेज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुद्रतेजम्] स्वामि कार्तिक। कार्तिकेय। उ०—अग्नि के फँके हुए रुद्रतेज को गंगाजी ने, लोकपालों के बड़े प्रतापो से भरे हुए गर्भ को रानी ने राजा के कुल की प्रतिष्ठा के निमित्त धारण किया।—लक्ष्मण (शब्द०)।

- रुद्रत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रुद्र का भाव या धर्म । रुद्रता ।
- रुद्रपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव । महादेव । उ०—रुद्रपति छुद्रपति लोकपति वोकपति घरनिपति गगनपति भ्रमम बानी ।—पूर (शब्द०) ।
- रुद्रपत्नी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दुर्गा का एक नाम । २ अतमी । अलमी ।
- रुद्रपीठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तात्रिकों के अनुसार एक पीठ या तीर्थ का नाम ।
- रुद्रपुरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बारहवें मनु रुद्रमावर्णि का एक नाम ।
- रुद्रप्रसोक्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार वह स्वान जहाँ में शिव जी ने त्रिपुरामुर पर बाण चलाया था ।
- रुद्रप्रयाग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हिमालय के एक तीर्थ का नाम जो गढ़वाल जिले में है ।
- रुद्रप्रिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ पार्वती । २ हर्षे ।
- रुद्रभद्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक नद का नाम ।
- रुद्रभू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्मशान । मरघट ।
- रुद्रभूमि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ ज्योतिष में एक प्रकार की भूमि । २ श्मशान । मरघट ।
- रुद्रभैरवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा की एक मूर्ति का नाम ।
- रुद्रयज्ञ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का यज्ञ जो रुद्र के उद्देश्य से किया जाता है ।
- रुद्रयामल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तात्रिकों का एक प्रसिद्ध ग्रथ जिसमें भैरव और भैरवी का मवाद है ।
- रुद्ररोदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ण । मोना ।
- रुद्ररोमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कान्तिकेय की एक मानुषा का नाम ।
- रुद्रलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रुद्रजटा नाम का लुप ।
- रुद्रलोक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बड़ स्वान या जोरु जिपमे शिव और रुद्रों का निवास माना जाता है ।
- रुद्रवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रुद्रवती । एक प्रसिद्ध वनोपधि जिसकी गणना दिव्योपधि वर्ग में होती है ।
- विशेष—यह प्रायः मात्र भारत में और विशेषतः उत्पल प्रदेशों की बलुई जमीन में जनाशरी के पास और मगुद तट पर अधिकता से होती है । इसके लुप प्रायः हाथ भर ऊँचे होते हैं और देखने में चने के पौधों के में जान पड़ते हैं । इसके पत्ते भा चने के समान ही होते हैं, शरद ऋतु में जिनमें से पानी को दूँदें टाका करती हैं । काले, पीले, लाल और सफेद फूलों के भेद में यह चार प्रकार की होती है । बँधक के अनुसार यह चरपरी, कड़वी, गरम, रसायन, अग्निजनक, वीर्यवधक और श्वास, कृमि, रक्तपित्त, कफ तथा प्रमेह का दूर करनेवाली होती है ।
- पर्याय—स्रवतोया । मञ्जीवनी । अमृतस्रवा । गोमाधिका । महाभासा । चणकपत्री । मुषालवा । मधुस्रवा ।

- रुद्रवट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है ।
- रुद्रवत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] 'रुद्रवत्' ।
- रुद्रवदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के पाँच मुष ।
- रुद्रवन्—सि० पाठ का मन्त्र ।
- रुद्रवान्—सि० [सं० रुद्रवत्] रुद्रगणा में पुं० ।
- रुद्रवन्—सञ्ज्ञा पुं० १ सोम । २ अग्नि । ३ रुद्र ।
- रुद्रविशति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्रभव आदि पाठ परल्लगे या पत्तों में से अतिम वीज पदा का समूह, जिसे 'रुद्रवीज' भी कहते हैं ।
- रुद्रवीणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्राचीन वाद्य का एक प्रकार की वीणा ।
- रुद्रग्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।
- रुद्रसावर्णि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार बारहवें मनु का नाम ।
- रुद्रसुदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रुद्रसुदी । देवी का एक मूर्ति का नाम ।
- रुद्रसू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह स्त्री जिसमें स्यात् पुत्र उत्पन्न किए हो ।
- रुद्रस्वर्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रुद्रस्वर्ग । दे० 'रुद्रास्वर्ग' ।
- रुद्रहिमालय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हिमालय पर्वत का एक चोटी का नाम ।
- विशेष—यह चाटी चान का घोर पत्तों पीसा पर है और नदी बरफ में ढकी रहती है ।
- रुद्रहृदय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक उपनिषद् का नाम जो प्राचीन दस उपनिषदों में नहीं है ।
- रुद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. रुद्रजटा नामक लुप । २. नन्दिनी नाम का गधदन्ध । विद्रुम लता । ३. मदिमदरी । मुत्तुर्वा ।
- रुद्राक्षिड—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रुद्राक्षिड । श्मशान । मरघट ।
- रुद्राल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. एक प्रसिद्ध उद्यान जो नाल, बगाल, पापाम और दक्षिण भारत में अधिकता में होता है ।
- विशेष—इसके पत्ते माठ आठ अंगुल लंबे दो तीन अंगुल चौड़े और किनारे पर कटाकर होन हैं । नए निकले हुए पत्तों पर एक प्रकार की मुलायम रोई होती है, जो पकड़े कट जाती है । जाड़े के दिनों में यह फूलना और बसत ऋतु में फलता है । इसके फल के अक्षर पाँच माने होते हैं और प्रत्येक मान में एक एक छोटा रुद्र बीज रहता है ।
२. इस वृक्ष का बीज जो गांज और प्रायः छोटी मिच से लेकर आंगले तक के बराबर होता है । रुद्राक्ष ।
- विशेष—इस बीज पर छोटे घाट दान उभरते होते हैं । प्रायः सब लोग इनमें देह करके माला बनाते और गले या हाथ में पहनते हैं । इसकी माला पहनने और उनसे जप करने का बहुत अधिक माहान्म्य माना जाता है । कहते हैं, इन बीजों की काला मिच के साथ पीसकर पीने में शीतला का भय नहीं रहता । बँधक में इसे शीतल, बलकारी, श्लेष्मप्रद, टामनाशक और खामी तथा प्रसूति आदि में हितकारी माना है ।

- पर्या०—शिमाक्ष । भूतनाशन । शिवप्रिय । पुष्पचामर ।
- रुद्रास्रां—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुद्राक्ष] दे० 'रुद्राक्ष' । उ०—मेखल विगी चक्र घंगारी । जोगाटा रुद्राख अचारी ।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० १२६ ।
- रुद्राणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रुद्र की पत्नी, पार्वती । शिवा । भवानी । २ रुद्रजटा नाम की लता जिसकी पत्तियो आदि का व्यवहार श्रोत्रिय के रूप में होना है । ३ एक प्रकार की रागिनी जो कुछ लोगों के मत से मेघ राग की पुत्रवधु है, पर कुछ लोग इसे जंती, ललित, पंचम और लीलावती के मेल से बनी हुईं सकर रागिनी भी मानते हैं ।
- रुद्रारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कामदेव ।
- रुद्रावर्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महाभारत के अनुसार एक प्राचीन तीर्थ का नाम ।
- रुद्रावास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] काशी क्षेत्र, जिनमें रुद्र या शिव का निवास माना जाता है ।
- रुद्रिय—वि० [सं०] १ रुद्र सबधी । रुद्र का । २ आनददायक । प्रमत्तता उत्पन्न करनेवाला । ३ भयानक । खौफनाक ।
- रुद्रिय—सञ्ज्ञा पुं० आनंद । प्रसन्नता । मोद [को०] ।
- रुद्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की वीणा जिसे रुद्रवीणा भी कहते हैं ।
- रुद्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुद्र + ई (प्रत्य०)] १ वेद के रुद्रानुवाक या अथमर्षण सूक्त की ग्यारह आवृत्तियाँ । २ यजुर्वेद के रुद्र तथा विष्णुपरक कतिपय मंत्रों का आठ अध्यायो में किया गया सकलन । रुद्राष्टाध्यायी ।
- रुद्रैकादशिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रुद्रानुवाको (रुद्रों) की या अथमर्षण सूक्त की ग्यारह आवृत्तिना । रुद्री ।
- रुद्रोपनेपद्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक उपनिषद् का नाम ।
- रुद्रोप्रस्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक पर्वत का नाम ।
- रुधि(पुं)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुधिर] दे० 'रुधिर' । उ०—गर्ह सग मूर लीनी हर्षकि जे जै मुर आकास कहि । रुध धार छुट्टि समुह चली मनो मेर सरसात्त वहि ।—पृ० २०, १।६५३ ।
- रुधिर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शरीर में का रक्त । शोणित । लहू । खून । (मुहा० के लिये दे० 'खून' के मुहा०) । २ रक्तवर्ण । लाल रंग (को०) । ३ कुकुम । तेमर । ४ मंगल ग्रह । ५ एक प्रकार का रत्न । विशेष दे० 'रुधिराख्य' ।
- रुधिर—वि० लाल । लाल रंग का । रक्तवर्ण का [को०] ।
- रुधिरगुल्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] स्त्रियों का एक प्रकार का रोग । विशेष—इससे पेट में शूल और दाह होता है और एक गोला सा धूमता है । इसमें पित्तगुल्म के सब चिह्न मिलते हैं और कभी कभी इससे गर्भ रहने का भी संका होता है । कहते हैं, गर्भपात होने पर अनुचित आहार विहार करने के कारण ऋतुकाल में वायु कुपित होती है, जिससे, होकर गोला सा बन जाता है ।

- रुधिरपायी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुधिरपायिन्] [वि० स्त्री० रुधिरपायिनी] १ वह जो रक्त पीता हो । लहू पीनेवाला । २ राज्ञम ।
- रुधिरपित्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रक्तपित्त । नकमीर ।
- रुधिरप्लीहा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्लीहा रोग का एक भेद । विशेष—वैद्यक के अनुसार इसमें इद्रियाँ शिथिल हो जाती हैं, शरीर का रंग बदल जाता है, भ्रम भारी और पेट लाल हो जाता है और भ्रम, दाह तथा मोह होता है ।
- रुधिरवृद्धिदाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक के अनुसार एक प्रकार का रोग जिसमें रक्त की अधिकता से सारे शरीर में धूसरा सा निकलता है और शरीर तथा आँखों का रंग ताँबे का सा हो जाता है और मुँह से लहू की गंध आती है ।
- रुधिराध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुधिरान्ध] पुराणानुसार एक नरक का नाम ।
- रुधिराक्ष—वि० [सं०] १ लहू में तर या भोगा हुआ । खून से भरा हुआ । २ लहू का सा लाल ।
- रुधिराख्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का रत्न या मणि । विशेष—इसकी गणना कुछ लोग उपरत्नों में और कुछ लोग स्वल्प मणियों में करते हैं । इसका रंग बीच में विलकुल सफेद और अगल बगल इद्रनील या नीलम के समान होता है । कहते हैं, यही रत्न पककर हीरा हो जाता है । यह भी माना जाता है कि जो इस धारण करता है, उसे बहुत सुख और ऐश्वर्य प्राप्त होता है ।
- रुधिरानन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष में मंगल ग्रह की एक वक्र गति । विशेष—जब मंगल किसी नक्षत्र पर अस्त होकर उसमें पड़हवें या सोलहवें नक्षत्र पर बन्नी होता है, तब वह रुधिरानन कहलाता है ।
- रुधिरासय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रक्तपित्त नामक एक रोग । २. ववासीर (को०) ।
- रुधिराशन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ खर राजम का एक सेनापति जिसे श्रीरामचंद्र जी ने मारा था । २ राज्ञम ।
- रुधिराशन—वि० रक्त ही जिसका आहार हो । रक्तगान करके जीनेवाला ।
- रुधिराशी—वि० [सं० रुधिर शिन्] रक्त पान करनेवाला । लहू पीनेवाला ।
- रुधिरासी(पुं)—वि० [सं० रुधिराशिव—रुधिराशी] लहू पीनेवाला । रुधिराशी । उ०—राज्ञम नगाहे नहम अठामा । मूरि भयकर भट रुधिरामी ।—रघुराज (मृचद०) ।
- रुधिरोद्गारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुधिरोद्गारिन्] वृहस्पति के माठ भवत्सरो में से सत्तावनवाँ भवत्सर ।
- रुधिरोद्गारी—वि० रक्त का वमन करनेवाला । खून की कं करनेवाला [को०] ।
- सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुधिर] दे० 'रुधिर' । उ०—पीया हूय रध ह्य आया । मुई गाय तत्र दोष लगाया ।—कवीर ग्र०, पृ० २४५ ।

रुनकमुनक^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] दे० 'रुनकमुनक' । उ०—त्रिकुटी मध्य इक राजा बाजै रुनकमुनक भनकार करे ।—कजीर ० श०, भा० १, पृ० ५५ ।

रुनकना^७—क्रि० अ० [अनु०] वजना । षट्ठित होना । उ०—तुलाकोट मजीर पुनि नूपुर रुनका पाय ।—अनेकार्थ०, पृ० ७० ।

रुनकाना^७—क्रि० स० [अनु०] वजाना । ध्वनि करना । रणित करना । उ०—सेज परी नूपुर रुनकावै । कर के तल गहन कुनहावै ।—नद० ग०, पृ० १७६ ।

रुनकुन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] नूपुर, मजीर, किंकिणी आदि का शब्द । कलरव । भनकार । उ०—(रु) कटि किंकिणी रुनकुन गुन तन की हम करत किलकारी ।—सूर (शब्द०) । (रु) रचि नूपुर किंकिनी मनु हरति रुनकुन करनि ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) श्रीरुन के गान उन्हें कान न मुह्यत मुनै तेरे नूपुरन ती मनुष्य रुनकुन है ।—देव (शब्द०) ।

रुनाई^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० अक्षर्य + हि० आर्द्र (प्रत्य०)] अश्लिषा । लालिमा । ललाई ।

रुनित^७—वि० [स० रुणित] शब्द करता हुआ । वजना हुआ । भनकार करता हुआ । उ०—(रु) चरण रुनित नूपुर कटि किंकिणी कल कूजै ।—सूर (शब्द०) । (ख) रुनित भृग घटावली भरन दान मद नीर । मद मद आवतु चल्थो कुजर कुज समीर ।—विहारी (शब्द०) ।

रुनित भुनित^७—वि० [अनु०] रुनकुन करता हुआ । वजता हुआ । उ०—नूपुर रुनित भुनित फकन कर हार छुरी मिलि बाजै ।—भारतेंद्र श०, भा० २, पृ० ४४६ ।

रुनी—सञ्ज्ञा पुं० [दे०] घोड़े की एक जाति । उ०—गारुनी मदनी स्याह कर्नेता रुनी । नुकुपा और दुवाज वोरता है ध्रुवि दूनी ।—सूदन (शब्द०) ।

रुनुक मुनुक—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] नूपुर आदि वा रुनकुन शब्द । भनकुनाहट । भनकार । उ०—रुनुक मुनुक नूपुर वाजत पग यह अति है मनहरनी ।—सूर० (शब्द०) ।

रुनुकुनु—सञ्ज्ञा पुं० [अनु०] नूपुर या किंकिणी आदि का शब्द । भनकार । उ०—रुनुकुनु रुनुकुनु नूपुर कुनुके रुनकन के प्रभु पायन मे ।—देवस्वामी (शब्द०) ।

रुनुल—सञ्ज्ञा पुं० [दे०] शिकम और हिमालय में होनेवाला एक प्रकार का वेल जो भांड के रूप में होता है ।

रुनुनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [दे०] अमरुद । (नेपाल तराई) विशेष २० 'अमरुद' ।

रुपइया^७—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रुपया] दे० 'रुपया' । उ०—कोइ आवे तो दीलत मणि भेट रुपइया लीजै जो ।—कजीर श०, भा० १, पृ० १०३ ।

रुपना—क्रि० अ० [हि० रोपना का अकर्मक] १ रोपा जाना । जमीन में गाड़ा या लगाया जाना । जमना । जैसे,—धान रुपना । २ उटना । अडना । उ०—(क) जो रन में रुपि रुद्र रिभायी । दागी की सिर काटि चढ़ायो ।—लाल (शब्द०) । (ख) परयो जोर

रिपरीत तति रगी गुन रुनपीर । गरति सोलाइल विकिनी गयो मीन मजीर ।—जिहारी (शब्द०) ।

रुपया—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुपयः] १ भारत में प्रचलित चाँदी का मन्ने का पिता जो मोहर चाँदी (नीकर पय) का होता था । यह तीन में दस भागों का होता है । स्वतंत्र भाग में अब जग में चाँदी का भाग मात्र २० भाग है । चाँदी एकका मूल्य १०० रुपया के बराबर होता है ।

मुद्रा०—रुपया उठाना = रुपया खर्च करना । रुपया ठीकरा करना = रुपया का प्रचलन करना ।

२ धन । गणित ।

मुद्रा०—रुपया उठाना =—गुन धन खरचना । रुपया खा खाना = (१) रुक नरन न उठाना । रुक रुक का जाना । (२) खरन करना । रुपया खाना = धन खर्च करना । रुपया खाना में खरना = खर्च करना । खरना खरना ।

थो०—रुपया धना = धन गणित । रुपयाखाना = मान्यता । खमीर । खी ।

रुपवत^७—वि० [सं० रुपवत् का बहु व०] रुपयान् । रुपयत । उ०—(रु) पुनि रुवत रुपयाना काहा । जावत जगन मरै मुन चाहा ।—नागमी (शब्द०) । (ग) इति रुप नइ बन्धा जेहि रुप नहि काइ । धनि मुदेक रुपवता जहाँ जनम प्रम होइ ।—जायसी (शब्द०) ।

रुपहरा—वि० [हि० रुपहला] दे० 'रुपहला' । उ०—नामने गुरु की ध्रुवि भनमन, परती परी गी जल मे तल, रुपहरे कर्वा म हो श्रीरुन ।—गुजा, पृ० २५ ।

रुपहला—वि० [हि० रूपा (= चाँदी) + हला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० रुपहली] चाँदी के रंग का । चाँदी का मा । जैसे,—रुपहला गोटा, रुपहला वाम ।

रुपहला रग—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रुपहला + रग] भद्रनाथ के काँचों से बने हुए वस्त्र । (रुपहर) ।

रुपा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रुपया] १ दे० 'रुपया' । २ दे० 'रुपा' ।

रुपिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ताक । मसूर ।

रुपिया—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रुपया] दे० 'रुपया' ।

रुपोला—वि० [हि० रुपहला] दे० 'रुपहला' ।

रुप्पा^७—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रुपया] दे० 'रुपया' । उ०—माया माय न चालई जर रुपया धन मान ।—प्राण०, पृ० २५५ ।

रुवाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [श०] १ उर्दू या फारसी की एक प्रकार की कविता जिसमें चार भिन्न होते हैं । २ एक प्रकार का रगिन या चलता गाना ।

रुवाई एमन सञ्ज्ञा पुं० [हि० रुवाई + एमन] एक शालक राग जिसके साथ रौमाली या ठेला बजाया जाता है ।

रुमच^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोमान्च] दे० 'रोमांच' ।

रुमकुमाना—क्रि० अ० [अनु०] चल खाना । खरना । भुनका । भुनका । उ०—जहर, जो गेनुओ की पर्व में सी पेंच खाता हो ।

कहर उस वक्त कोई रुमकुमार और ढाता हो।—ठडा०,
पृ० २३।

रुमण—सज्ञा पुं० [सं०] रामायण के अनुसार एक वानर जो सौ
करोड़ वानरों का यूपपति था।

रुमन्वान्—सज्ञा पुं० [सं० रुमन्वत्] १ महाभारत के अनुमार एक
प्राचीन ऋषि का नाम। २ पुराणानुसार एक पर्वत का नाम।

रुमाचित(५)—वि० [सं० रोमाञ्चित] दे० 'रोमाचित'।

रुमा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ वाल्मीकि के अनुमार सुग्रीव की पत्नी
का नाम। २ नमक की खान या झील (को०)।

रुमाल—सज्ञा पुं० [फा० रुमाल] दे० 'रूमाल'।

रुमाली—सज्ञा स्त्री० [फा० रुमाल] १ एक प्रकार का लंगोटा जिसमें
कपड़े के एक छूटे तिकोने टुकड़े के दोनो ओर दो लंबे वद और
तीसरे कोने पर, जो नीचे की ओर होता है, एक लंबी पतली
पट्टी टँकी होती है।

विशेष—इसके दोनो वद कमर से लपेटकर बाँध लिए जाते हैं और
नीचे की पट्टी से आगे की ओर इन्द्रिय ढककर उसे फिर पीछे की
ओर उलटकर खोस लेते हैं। प्रायः कुश्तीबाज लोग कसरत करने
या कुश्ती लड़ने के समय इसे पहनते हैं।

२ छोटा रूमाल। गमछा। ३ मुगदर हिलाने का एक हाथ या
प्रकार।

विशेष—इसका हाथ सिर के ऊपर मे मुगदर को ताने हुए और
फिर पीठ के ऊपर के आधे ही भाग तक होता है। इसमें अधिक
बल की आवश्यकता होती है।

रुमावली(५)—सज्ञा स्त्री० [सं० रोमावली] दे० 'रोमावली'।

रुम्र—सज्ञा पुं० [सं०] सूर्य का सारथी, अरुण (को०)।

रुम्र—वि० पिग वर्ण का। भूरे रंग का। २ चमकीला। ३ सुदर (को०)।

रुरना(५)—क्रि० अ० [सं० लुलन] १ लुडकना। पडना। गिरना।
उ०—मधि बाजार चलि रुधर नदि रुरत तुड धन मुँड।—
पृ० रा० ५।८६। २ हिलना डुलना। कपित होना। उ०—
सहज हसौं ही छवि फवति रंगीले मुख दसननि जोति जाल
मोती माल सो रुँ।—रसखान० पृ० ८६।

रुराई(५)—सज्ञा स्त्री० [हि० रुरा + ई (प्रत्य०)] सुदरता। लुनाई।
उ०—मैं सब लिखि सोभा जो बनाई। सजल जलद तन वसन
कनक रुचि उर बहु दाम रुराई।—सूर (शब्द०)।

रुरु—सज्ञा पुं० [सं०] १ काला हिरन। कस्तूरी मृग। २ एक दैत्य
का नाम। जैसे दुर्गा ने मारा था। ३ पुराणानुसार एक प्रकार
का बहुत ही क्रूर जंतु जिसे भारशृंग भी कहते हैं।

विशेष—ऐसा प्रसिद्ध है, इस लोक में जो लोग हिंसा करते हैं,
उन्हें हिंसित प्राणी, रुरु होकर, रौरव नरक में काटते हैं।
४ एक प्रसिद्ध ऋषि जो प्रमत्ति के पुत्र और ज्वन के पौत्र थे।

विशेष—कहते हैं, जब इनकी स्त्री प्रमदरा का देहात हो गया,
तब इन्होंने उसे अपनी आधी आयु देकर जिलाया था।

५. विश्वेदेवा के अतर्गत देवताओं का एक गण। ६. सार्वणि मनु

के सप्तपियो में एक का नाम। ७ एक भँरव का नाम।
८ एक फलदार वृक्ष का नाम। ९ श्वान। कुत्ता (को०)।

रुरुआ—सज्ञा पुं० [हि० ररना, ररुआ] बड़ी जाति का उल्लू
जिसकी बोली बड़ी भयावनी होती है। उ०—रुरुआ चहुँ दिसि
ररत, ढरत सुनिकं नर नारी।—हरिश्चंद्र (शब्द०)।

विशेष—प्रवाद है, यह कभी कभी किसी का नाम सुनकर रटने
लगता है और वह आदमी मर जाता है। इसका बालना लोग
बहुत अशुभ मानते हैं।

रुरुनु—वि० [म०] चिकना का उलटा। रुखा। रुद्ध। उ०—काल
जिघृक्षु रुनु कृपा का स्वपानन स्वच्छ स्वपत्त प्रियाही।—
रघुराज (शब्द०)।

रुरुत्सा—सज्ञा स्त्री० [सं०] रोव करने की अभिलाषा। रोकने की
चेष्टा। ३ रोक। रुकावट (को०)।

रुरुभेरव—सज्ञा पुं० [म०] तान्त्रिकों के अनुसार एक प्रकार के
भँरव जिनका पूजन दुर्गा के पूजन के समय किया जाता है।

रुरुमुड—सज्ञा पुं० [सं० रुमुण्ड] एक पर्वत का नाम।

रुलना—क्रि० अ० [सं० लुलन (=इधर उधर डोलना)] इधर
उधर मारा मारा फिरना। आकारा फिरना। उ०—सुदर
रोऊँ राम जी जाऊँ पतिव्रत होइ। रुलत फिरँ ठिक बाहरो
ठौर न पावँ कोइ।—सुदर प्र०, भा० २, पृ० ६६१। २.
खराब होना। दबा रह जाना। हिल डुलकर जहाँ का तहाँ
रह जाना।

रुलाई—सज्ञा स्त्री० [हि० रोना + आई (प्रत्य०)] १ रोने की क्रिया
या भाव। २ रोने की प्रवृत्ति।

क्रि० प्र०—आना। छटना।

रुलाना—क्रि० स० [हि० रोना का प्रेर० रूप] दूसरे को रोने में
प्रवृत्त करना। उ०—उस कहने में सबको रुला दिया।—
सुधाकर (शब्द०)।

रुलाना—क्रि० म० [हि० रुलाना का सक० रूप] १ इधर उधर
फिराना। २ नष्ट करना। मिट्टी खराब करना।

रुल्ल, रुल्लार—सज्ञा स्त्री० [देश०] वह भूमि जिसकी उपजाऊ शक्ति
कम हो गई हो और जिसे परती छोड़ने की आवश्यकता हो।

रुल्ली—सज्ञा स्त्री० [देश०] रोहिणी की तरह की एक प्रकार की
वनस्पति जो उससे कुछ छोटी होती है।

रुवथ—सज्ञा पुं० [सं०] श्वान। कुत्ता (को०)।

रुपा—सज्ञा पुं० [हि० रोचो] सेमल के फूल के अदर से निकला
हुआ घृषा। भूषा। उ०—का सेमर के साख बढाए फूल अनूपम
वानी। केतिक चात्रिक लागि रहे हैं चाखत रुवा उडानी।—
कवीर (शब्द०)।

रुवाई—सज्ञा स्त्री० [हि० रुलाई] दे० 'रुलाई'।

रुवाव—सज्ञा पुं० [अ० रुवव] दे० 'रोव'।

रुवु, रुवुक, रुवुक—सज्ञा पुं० [सं०] एरड वृक्ष। रेंड का पेड़ (को०)।

रशगु—सज्ञा पु० [सं० रशङ्ग] एक प्राचीन ऋषि वा नाम जो नृपगु भी कहे जाते थे ।

रशद्गु—सज्ञा पु० [सं०] दे० 'रशगु' ।

रशना—सज्ञा स्त्री० [सं०] भागवत के अनुसार रुद्र की एक पत्नी का नाम ।

रुप—सज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रुपा' [को०] ।

रुप—सज्ञा पुं० [सं०] क्रोध । गुस्मा । उ०—दस्य होहु ऋषि मरुप दखाना ।—गिरधर (शब्द०) ।

रुप(पु) —सज्ञा पु [हिं० रुख] दे० 'रुख' ।

रुपा—सज्ञा स्त्री० [सं०] क्रोध । कोप । गुस्सा ।

रुपान्वित वि० [सं०] क्रुद्ध । क्रोधयुक्त ।

रुपित—वि० [सं०] १ क्रुद्ध । नाराज । २ रजीदा । दुखी ।

रुपेसर(पु)—सज्ञा पु० [सं० ऋषीश्वर] ऋषिश्रेष्ठ । ऋषीश्वर । उ०—पालकाव्य लघु वेम रहत एक तहाँ रुपेसर ।—पृ० रा०, २६।६ ।

रुक्कर—सज्ञा पु० [सं०] १ मिलावाँ । २ कस्तूरी वृत्ति । नेपरी ।

रुष्ट—वि० [सं०] जिसे रोप हुआ हो । क्रुद्ध । अग्रमन्न । नाराज । कुपित । रुपित ।

रुष्टता—सज्ञा स्त्री० [सं०, रुष्ट होने का भाव । नाराजगी । अग्रसन्नता ।

रुष्ट पुष्ट(पु)†—वि० [सं० हृष्टपुष्ट] दे० 'हृष्टपुष्ट' ।

रुष्टि—सज्ञा स्त्री० [सं०] कोप । क्रोध । गुस्मा ।

रुसना(पु)†—क्रि० अ० [हिं० रुसना] दे० 'रुसना' ।

रुसना(पु) —क्रि० सं० रुसना । रुष्ट करना । नाराज करना । उ०—नददास प्रभु ऐसी काहे का रुसए बलि जाके मुख देखे ते मिटत दुख दवा ।—नद० ग०, पृ० ३६६ ।

रुसना†—वि० [सं० रुसनी] रुसनेवाला । रुष्ट होनेवाला । जैसे,—रुसना स्वभाव ।

रुसनाई(पु)—सज्ञा स्त्री० [हिं० रोशनाई] १ चमक । प्रकाश । आभा । उ०—कचन रुसना नगन परा मव जोवन सग लिए रुसनाई ।—अकवरी०, पृ० ३३१ । २ कांति । यश । उ०—जे जन ऐसी करी कपवाई । तिनकी फौली जग रुसनाई ।—कवीर सा० सं०, पृ० ६० ।

रुसवा वि० [सं०] जिसकी बहुत बदनामी हो । निन्दित । जलील । लाञ्छित ।

रुसवाई—सज्ञा स्त्री० [सं०] रुसवा होने का भाव । अपमान और दुर्गति । कुत्सा और निंदा । जिल्लत ।

रुसा—सज्ञा स्त्री० [सं० रोहिष] दे० 'रुसा' ।

रुसा—सज्ञा पुं० [सं० रूपक] दे० 'अडूसा' ।

रुसित(पु)—वि० [सं० रुपित] रुष्ट । अग्रसन्न । नाराज । उ०—गरुडासन पै करत रुमित हासन भरि गौसन । ज्वलित हुतासन सरिस भरत परकासन आसन ।—गोपाल (शब्द०) ।

रुसख—सज्ञा पुं० [सं० रुसख] १ प्रवेश । पहुँच । पैठ । रसाई ।

दक्षता । जानकारी । महारत । ३ पैम । २ व्यवहार । मेल-जोल [को०] ।

रुसम—सज्ञा पुं० [अ० रुसम] दे० 'रुसम' ।

रुसट पु—वि० [सं० रुसट] दे० 'रुसट' ।

रुसतगी—सज्ञा स्त्री० [सं०] उराज । उगाव [को०] ।

रुसतनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ षाक । तरकारी । म-जी । २ भूमि, बीज आदि जो उगने या उगने के काबिल हो [को०] ।

रुसतम—सज्ञा पुं० [अ०] १ फारस का एक प्रसिद्ध प्राचीन पहनवान ।

विशेष इसकी गणना नगर के बहुत बड़े बड़े पहनवानों में होती है । सोहराव और रुसतम की लड़ाई को कृतानी मशहूर है । फारसी में रुसतम का उल्लेख अपने शाहनामा में किया है । इनका समय ईसा स लगभग तीसरी सदी पहले माना जाता है ।

मुहा०—रुसतम का माला = बहुत बड़ा वीर । बहुत बहादुर । (व्यंग्य) ।

२ वह जो बहुत बड़ा वीर हो ।

मुहा०—छिपा रुसतम = वह जो देखने में सीधा नादा पर वास्तव में किसी काम में बहुत वीर हो ।

रुह, रुह—वि० [सं०] जात । उत्पन्न ।

विशेष—यह शब्द प्रायः र्थांगिक शब्दों में अतः आता है । जैसे—महीरुह, पकरुह ।

रुहरु—सज्ञा पुं० [सं०] द्वेद । मुरारु ।

रुहठि पु†—सज्ञा स्त्री० [हिं० रोहट (= रोना)] रुठने की क्रिया या भाव । उ०—रुहठि करे तातो को खेल रहे पीठि जहँ तहँ सब गैयाँ ।—सूर (शब्द०) ।

रुहा—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ दूध । २ कर्कही । अतिवला । ३ मामरोहिणी नाम की लता । ४ लज्जावती ।

रुहिर(पु)—सज्ञा पुं० [सं० रुधिर, प्रा० रुहिर] लहू । रक्त । खून । उ०—रुहिर चुजइ जो जा रुह वाता । भोजन बिन भोजन मुख राता ।—जायसी (शब्द०) ।

रुहीर पु—सज्ञा पुं० [प्रा० रुधिर] दे० 'रुहिर' । उ०—चलै घर पूर रुहीर प्रवाह ।—पृ० रा०, ६१।१४७९ ।

रुह लखड—सज्ञा पुं० [हिं० रुहेल + सं० खरड] अरब के उत्तर-पश्चिम पड़नेवाला प्रदेश जहाँ रुहेले पठान बसे थे ।

रुहला—सज्ञा पुं० [हिं० रुहेलखड] पठानों की एक जाति जो प्रायः रुहेलखड में बसी हुई है ।

रुख—सज्ञा पुं० [हिं० रुख] दे० 'रुख' ।

रुखड़—सज्ञा पुं० [हिं० रुखा] एक प्रकार के भिन्नक जो दरियाई नारियल का खपर लेकर 'अलख' कहकर भोजन मांगते हैं और कमर में एक बड़ा सा घुंघरू बांधे रहते हैं ।

विशेष—इनका एक और भेद होता है जो गूदड़ कहलाता है । ये कहीं अटककर भिन्ना नहीं मांगते, केवल तीन बार 'अलख' कहकर ही आगे बढ़ जाते हैं ।

- रूखड^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रूख + ड (प्रत्यय)] दे० 'रूख' ।
- रूखटा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रोगटा] दे० 'रोगटा' ।
- रूखटाली^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रूखटा + वाली (=शाली)] भेंड । गाडर ।
- रूखगा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रूक (=उदारता)] धेलुआ । घाल । रूगा ।
- रूखना—क्रि० सं० [हिं० रूखना] दे० 'रूखना' । उ०—माटी कहै कुम्हार को तूँ क्या रूखै मोहि । इक दिन ऐसा होइगा मैं रूखूँगी तोहि ।—कविता की०, भा० १, पृ० ३२ ।
- रूखना—क्रि० सं० [हिं० रूखना] दे० 'रूखना' । उ०—जैसे कमल बन को रूखकर मतवाला हाथी आता हो तैसे रणधीर सिंह इस समय रणधूम से इस तरफ चले आते हैं ।—श्रीनिवास प्र०, पृ० १२८ ।
- रूख^१—वि० [सं० रूख] रूका हुआ । अवरूढ । उ०—बाढत तो उर भर भर तरुनई विकास । बोझनि सौतेनि के लिए आघतु रूख उसस ।—विहारी (शब्द०) ।
- रूखना—क्रि० सं० [सं० रूखन] १ किसी स्थान या वस्तु को बाहर-वाली के आक्रमण से बचाने के लिये उसके चारों ओर कंटीले काड आदि लगाना । कंटीले भाड आदि से घेरना । बाढ़ लगाना । उ०—जर तुम्हार चह सवति उखारी । रूखहु करि उपाउ बर बारी ।—तुलसी (शब्द०) । २ किसी पदार्थ को चारों ओर से इस प्रकार घेरना कि वह बाहर न जा सके । रोकना । छेकना । जैसे,—गाय रूखना । ३ गमनागमन का मार्ग बंद करना । जैसे,—राह रूखना, द्वार रूखना आदि । उ०—बबुर वहेरे को बवाइ बांग लाइयत रूखिवे को सोऊ सुरतर काटियतु है ।—तुलसी (शब्द०) ।
- रूखी^०—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रूखी का जी० रोई] रोम । लोम । रोश्री । उ०—वै ब्रह्मा विष्णु महेश प्रलै मैं । जसदी पुसै न रूखी ।—सुदर० प्र०, भा० १, पृ० २७६ ।
- रू—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १. मुँह । चेहरा । २. द्वार । सबब । ३. आशा । उम्मेद । ४. ऊपरी भाग । सिरा । ५. आगा । सामना ।
- रू^०—रूपुश्त = बाहर भीतर । आगे पीछे । दोनों ओर ।
- रू रिआयत = (१) पक्षपात । (२) मुरौवत । शील सकोच ।
- रूहा^०—रू से = अनुमार । जैसे,—ईमान को रू से तुम्हीं बतलाओ कि क्या बात है ।
- रूई^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रोम, प्रा० रोच, हिं० रोवा, रोई] १ कपास के डोरे या कोशक अदर का धुआ । उ०—हार हार कहत पाप पुनि जाई । पवन लागि ज्या रूई उडाई ।—मूर (शब्द०) ।
- विशेष—यह डोडा पककर चिटकने पर ऊन के लच्छे की तरह बाहर निकलता है । इसके रेशे कोमल और घुंघराले होते हैं, जो बीज के ऊपर चारों ओर लगे होते हैं, और जिनके अंदर बीज लिपटे रहते हैं । मोटी और बारीक के भेद से रूई अनेक प्रकार की हाती है । कितनी रूईयाँ तो रेशम की भाँति कोमल

और चिकनी होती हैं । डेढ या डोडे से फूटकर बाहर निकलने पर रूई इकट्टी की जाती है । इसके बाद सुख जाने पर लोग इसे थोटीनी में थोटकर बीजो से अलग कर लेते हैं । थोटी हुई रूई धुनी जाती है जिससे उसमें जो बचे खुचे बीज रहते हैं, अलग हो जाते हैं और उसके रेशे फूटकर खुल जाते हैं । इस रूई से पेंडरी या पूनी बनाई जाती है, जिससे सूत काता जाता है । धुनी हुई रूई गर्द आदि में भरा जाती है, और उससे सूत कातकर कपड़े बुनते हैं । इसका प्रयोग रासायनिक रीति से बारूद बनाने में भी होता है । रूई को शोरे के तेजाव में गलाते हैं, जिससे यह अत्यंत विस्फाटक हो जाता है । इसे 'गन काटन' कहते हैं और उत्तम बारूद में इसका प्रयोग होता है । इस 'गन काटन' को ईथर या ईथर मिले हुए अलकोहल में मिलाने से एक प्रकार का लेस बनता है । इस लेस को 'कलाडीन' कहते हैं । यह धाव पर तुरत लगाए जाने पर भिखली की तरह सूखकर उसे जोड़ देता है । कलोडीन में थोड़ी सी मात्रा त्रोमाइड और आयोडाइड को मिलाकर शीशे पर लगाकर फोटो के लिये गीला 'प्लेट' बनाया जाता है । हिंदुस्तान में रूई के कपड़े का प्रचार वैदिक काल से चला आता है । ब्राह्मण और गृह्य सूत्रों में तो इसके यज्ञोपवीत और वस्त्र का विधान वर्णभेद से स्पष्ट देखा जाता है, पर युरोप में इसके कपड़े का प्रचार कुछ ही शताब्दियों से हुआ है । मूल के लिये उत्तम रूई वहीं समझी जाती है, जिनके रेशे लंबे और दृढ होने पर भी पतले और चमकीले होते हैं ।

क्रि० प्र०—रूमना ।—धुनना ।—धुनकना ।

पर्या०—तूल । पिचु ।

मुहा०—रूई का गाला = रूई के गाले की तरह कोमल या सफेद । रूई की तरह तूम डालना = (१) अच्छी तरह नोचना । (२) बहुत मारना पीटना । (३) गालियाँ देना, बखानना । (४) अच्छी तरह छान बोन करना । रूई का तरह धुनना = खूब मारना । अच्छा तरह पीटना । रूई ला = रूई की भाँति नरम । कोमल । जैसे,—रूई से हाथ पाँव । अपनी रूई सूत में उलझना या लिपटना = अपने काम काज में फसना ।

२ इसा प्रकार का कोई राश्री । विशेषतः बीजो के ऊपर का रोश्री ।

रूईदार—वि० [हिं० रूई + फा० दार (प्रत्यय)] जिसमें रूई भरी गई हो । जैसे,—रूईदार अगा, रूईदार बडा ।

रूक^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रूका] तलवार । (डि०) ।

रूक^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रूक (= उदार)] भूगा । धलुआ । घाल ।

रूक^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० वृक्ष, प्रा० रूख हिं० रूख] एक प्रकार का पेड़ जिसका पातर्था आपाधक रूप में काम आती है और पचपानडी क साथ मिलकर बिकता है ।

रूक^४—वि० [सं०] [वि० स्त्री० रूका] जो चिकना या कामल न हो । रूखा । स्निग्ध का उलटा । दे० 'रूक' ।

रूक^५—रूखगध, रूखगधक = (१) गुग्गुलु । (२) गुग्गुलु का वृक्ष ।

रूक्षपत्र = शाखीट या शाखीटक वृक्ष। रूक्षभाव = रूपापन।
वेरुखा। रूक्षवर्ण = गहरे रंग का। जैसे बादल। रूक्षवातु =
छोटी मधुमक्खियों का मधु। रूक्षस्वर = (१) जिसकी आवाज
रूखी हो। (२) गदहा। रामभ।

रूक्ष^१—सञ्ज्ञा पुं० १ वृक्ष। पेड़। २ वरक नाम का एक वृण। ३
पारुष्य। कठोरपन। ४ शब्दों किस्म या लोहा। ५ काली
मिर्चा [को०]।

रूक्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आयुर्वेद के अनुगार शरीर की चर्मी काम
करना [को०]।

रूक्षता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रूक्षा' [को०]।

रूक्षा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दतीवृक्ष। २ मधु शर्करा [को०]।

रूख^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रूक्ष या वृक्ष, प्रा० रूख] पड़। वृक्ष।
उ०—(क) ऊपर ताल चढ़ दिग्य अमृत फल सब रूख। दधि
रूप सरवर वं गा पियास आ नून।—जायसी (शब्द०)।
(ख) रूख कलपतरु सागर पारा। ताह पठए वन राजकुमारा।—
तुलसी (शब्द०)। (ग) वन डगर दूँढन फिरी घर मारग तजि
गाउँ। वृक्षो द्रुम प्राणि रस ए, कोउ कहै न पिय को नाउँ।—
सूर (शब्द०)।

रूख^२—वि० [सं० रूक्ष, हि० रूखा] दे० 'रूपा'।

रूखड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रूख + डा] पेड़। वृक्ष। उ०—कविरा
माया रूखडा दो फल की दातार। चावत मरचत मुक्ति गए
सचत नरक दुवार।—कबीर (शब्द०)।

रूखना^(१)—क्रि० श्र० [सं० रूप्] रूखना। रूठना।

रूखरा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'रूखटा'।

रूखरा^२—वि० [हि०] दे० 'रूखा'।

रूखा^१—वि० [सं० रूक्ष, रूक्ष, प्रा० रूख] १ जो चिकना न हो।
जिसमें चिकनाहट का अभाव हो। चिकना का उलटा। अस्निग्ध।
जैसे,—रूखा बाल, रूखा शरीर। २ जिसमें घा, तेल आदि
चिकने पदार्थ न पड़े हो। जैसे—रूखा राटी, रूखी दाल। ३
जो चटपटा न हो। जो छान में रूचकर और स्वादिष्ट न हो।
सीठा। उ०—(क) कम सहव सिनहिं खिन भूखा। कंस खाव
कुरकुटा रूखा।—जायसी (शब्द०)। (ख) माच भूठ करि माया
जोगी आपुन रूखो खातो। सूरदास कछु बिर नहिं रहिई जो
आयो सो जातो।—सूर (शब्द०)।

मुहा०—रूखा सूखा = जिसमें चिकना और चरपरा पदार्थ न हो।
बिना घी और चटपटे पदार्थों के। जैसे,—रूखा सूखा जा मिला,
वही खाकर पड रहा।

४ जिसमें रस न हो। सूखा। शुष्क। नीरस। ५ जिसका तल सम
न हो। खुरदरा। जैसे,—यह कागज कुछ रूखा दिमाई
पडता है।

यौ०—रूखा माल = नक्काशी किया हुआ वरतन (कसेरा)।

६ जिसमें प्रेम न हो। स्नेहरहित। नीरस। फीका। उदासीन।
उ०—(क) रूखे सूखे जे रहत नेह वास नहिं सेत। उनतें वे

अगियों नही तेह परगि जिय रा।—रामनिधि (शब्द०)। (ख)
सतर नाह मधु दूध करी राजि गन नाठि। तद्वा कग हूँ
जाति हरि होर लगीती दोठ।—विद्या (शब्द०)। (ग) वे
ही नैन मग स गत प्रार योग्य को मट नीर लागत नह भरे
नाह फे।—मतिराम (शब्द०)। ७ पाप। तक्षर। उ०—(क)
मुख मगो राते कहे तिर न था पी सुन। धीर धर्मीन जानिए
जैम गीठी ठग।—केदार (शब्द०)। (ख) उतर न दर दुहा
रि न मगो। मृगि न विरत जग बाधिन सुनी।—तुलसी
(शब्द०)।

मुहा०—रूखा पटना या रूखा = (१) उतनीनी रूखा। जिन
महोच या व्याम रूखा। (२) रूख पात। कागज रूखा। रीत
प्रकट करना। रीत शरणा। उ०—पेटे रूखा मगो पावि मग
मग रूखी मनेह। मामांटा छदि पा कटी कट पठवानी देह।—
विद्या (शब्द०)। (ख) नाजत पट नए न रूखे। यह मुनि
हंग वे रूख।—सूर (शब्द०)।

८ उदासीन। विरक्त। उ०—(क) नाहिं गन राज के भूँज। धरन
धुगा विषय न।—तुलसी (शब्द०)। (ख) सजन नयन
कछु मुख वार रूखा। बिन्द मातु नागी अति भूखा।—तुलसी
(शब्द०)। (ग) नह पात ते वरत निरुन वरत रिताह। नह
लगाए भावता क्या रूखा हाइ जाइ।—तुलसी (शब्द०)।

रूखा^२—सञ्ज्ञा पुं० एक प्रकार की धनी।

रूखापन—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रूखा + पन (प्रत्यय०)] १. रूखे होने का
भाव। चर्करा। २. मुदता। नागता। ३. कठोरता (व्यवहार
की)। ४. उदासीनता। ५. स्वाधीनता।

रूखा^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रूक्ष (= उदारता)] किमी नोद वा वह खोज
भाग जो उदासीनता या धनवाना अथवा अधिक दे दिया
करता है। धान। धनुष। हूगा।

रूचना^(१)—क्रि० म० [हि० रूचना] दे० 'रूचना'। उ०—चले निपाद
जोहाइ जाहारा। नर सकल रस रूचद रागी।—तुलसी (शब्द०)।

रूज—सञ्ज्ञा पुं० [श्र०] एक प्रकार की बुकना जिसे ननक मोना,
चांदी आदि धातुआ की चीजों पर जिना किया जाता है।

विशेष—यह तूतिए या हीराकनी से बनाया जाता है। पहले
तूतिए या कभीम को प्राग पर तपाते हैं, और जब वह जल
जाता है, तब उसे तारीक पीत डालन है। कभी कभी तूतिए को
पानी में गलाकर और निवार तथा धोकर फूँकने से भी रूज
बनता है। यह जीहरिया के काम आता है। रूज में खडिया
भी मिलाई जाती है। खडिया और पारा मिलाकर रूज से
वरतन पर जिला या कर्कर की जाती है।

२ एक पाउडर या चूर्ण जिससे कपोलों पर जालिमा लाई जाती है।
शृंगार का एक प्रसाधन।

रूभना^(१)—क्रि० श्र० [सं० रूभ्] दे० 'अरूभना' या 'उलभना'।
उ०—निज अश्वगुन गुन राम रावरे, लखि सुनि मति मन
रूभे।—तुलसी (शब्द०)।

रूठ^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुष्टि, प्रा० रुट्ठि] १ रूठने की क्रिया या भाव । २ क्रोध । कोप ।

रूठडा^१ वि० [हिं० रूठ + डा (प्रत्य०)] रूठ । नाराज । अप्रसन्न ।
उ०—कवीर हरि का भावता, दूरै थै दीसत । तन णीखाँ मन उनमनाँ जग रूठडाँ फिरत ।—कवीर प्र०, पृ० ५१ ।

रूठन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रूठना] रूठने की क्रिया या भाव । नाराजगी ।

रूठना—क्रि० अ० [सं० रुष्ट, प्रा० रुट्ठ + हिं० ना (प्रत्य०)] किसी से अप्रसन्न होकर कुछ समय के लिये सबध छोड़ना । नाराज होना । रसना । उ०—(क) कवीर ते नर अथ हैं गुरु को कहते और । हरि के रुठे ठौर है गुरु रुठे नहि ठौर ।—कवीर (शब्द०) । (ख) उनटि दृष्टि माया मो रूठी । पलट न फेरि जान कैं झूठी ।—जायसी (शब्द०) । (ग) जेहि कृत कपट कनक मृग भूठा । अजहुँ सो दैव मोहिँ पर रूठा ।—तुलसी (शब्द०) । (घ) वठिबे को तूठिबे को मृदु मुसुकाइ कैं बिलोकिबे को भेद कछू कछो न परतु है ।—केशव (शब्द०) ।

संयो० क्रि०—जाना ।—पठना ।—वैठना ।

रूठनि^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'रूठन' । उ०—भजनि, मिलनि, रूठनि, तूठनि, किलकनि अवलोकनि, बोलनि वरनि न जाई ।—तुलसी (शब्द०) ।

रूठ—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] लवाई या विस्तार नापने का एक मान जो ५ गज का होता है ।

रूढ़, रूढ़ी—वि० [हिं० रूरा, (डि०)] [वि० स्त्री० रूधी] श्रेष्ठ । उत्तम । उ०—भाइरे तेन्ही रूढी थाए । जे गुरु मुख मारगि जाए ।—दादू (शब्द०) ।

रूढ़—वि० [सं० रूढ] [वि० स्त्री० रूढ़ा] १ चढा हुआ । आरूढ़ । २ उत्पन्न । जात । ३ प्रसिद्ध । ख्यात । प्रचलित । जैसे—इसका रूढ़ अर्थ यही है । ५ गवार । उजड़ह । उ०—और गूढ कहा कहीं मूढ ही जू जान जाहु प्रीढ रूढ केशवदास नीके करि जाने हो ।—केशव (शब्द०) । ५ कठोर । कठिन । उ०—चाकी चली गोपाल की सब जग पीसा भाारि । रूढा शब्द कवीर का डारा चाक उखारि ।—कवीर (शब्द०) । ६ अकेला । अविभाज्य । जैसे,—रूढ़ सरया । ७ फल, तरकारी आदि का कडा हो जाना ।

रूढ़^१—सञ्ज्ञा पुं० अथनुसार शब्द का वह भेद जो दो शब्दों या शब्द और प्रत्यय के योग से बना हो तथा जिसके खंड सार्थ न हों । यह यौगिक का उलटा है । रूढि । जैसे,—कुब्जा, घोडा इत्यादि ।

रूढ़ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रूढ़ता या रूढ + ता (प्रत्य०)] कठोरता । उ० सोचने लगा, ऐसी स्थिति मे क्या किया जाय ? इन्कार करने से रूढ़ता सिद्ध होगी, यह भी जानता था । इसके पहले यथेष्ट अशिष्टता हो चुकी थी ।—सन्यासी, पृ० ११ ।

रूढ़यौवना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रूढ़यौवना] दे० 'आरूढ़यौवना' ।

रूढ़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रूढा] एक प्रकार की लक्षणा । वह लक्षणा

जो प्रचलित चली आती हो और जिसका व्यवहार प्रसिद्ध से भिन्न अभिप्रायव्यजना के लिये न हो । प्रयोजनवती लक्षणा का उलटा ।

रूढि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रूढि] १. चढाई । चढाव । २ वृद्धि । बढ़ती । ३ उभार । उठान । ४ उत्पत्ति । जन्म । प्रादुर्भाव । ५ ख्याति । प्रसिद्धि । ६ प्रथा । चाल । रीति । ७ विचार । निश्चय । उ०—प्रीढ रूढि कै सो मूढ गूढ गेह मे गयो । सूक्त मत्र सोधि सोधि होम को जही भयो ।—केशव (शब्द०) । ८ रूढ शब्द की शक्ति जिससे वह यौगिक न होने पर भी अपने अर्थ का बोध कराता है ।

रूढिवादी—वि० [सं० रूढि + वादिन्] पुराने रीति रिवाज या परंपरा आदि को ज्यों का त्यों स्वीकार करनेवाला ।

रूत्त^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रूत्तु] दे० 'रूत्तु' । उ०—विना नीर जहँ कमल है विन वरषा वरसाल । विना भास विन रूत्त है मात पिता विन बाल ।—राम० धर्म०, पृ० ६१ ।

रूदना^१—क्रि० सं० [हिं० रूदना] रौद देना या तहस नहस करना । ध्वस्त करना । उ०—सुदन समथ्य अरि रूदन कौं पथ्य सम कीरति अकथ्य रस्ताकर लौ भू जाकी ।—सुजान० पृ० २४ ।

रूदाद—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० रूपद्राद] १ समाचार । वृत्तांत । हाल । २ दशा । अवस्था । हालत । ३ विवरण । कैफियत । ४ व्यवस्था । ५ अदालत की काररवाई । कार्यक्रम । ६ मुकदमे का रग ढग । जैसे,—इस मुकदमे की रूदाद अच्छी नहीं जान पडती ।

रूप^१—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ किसी पदार्थ का वह गुण जिसका बोध द्रष्टा को चक्षुरिन्द्रिय द्वारा होता है । पदार्थ के वर्याँ और आकृति का योग जिसका ज्ञान आँखों को होता है । शकल । सूरत । आकार ।

विशेष—पदार्थों में एक शक्ति रहती है, जिससे उनका तेज इस प्रकार विकृत होता है कि जब वह आँखों पर लगता है, तब द्रष्टा को उस पदार्थ की आकृति, वर्याँदि का ज्ञान होता है । इस शक्ति को भी रूप ही कहते हैं । दर्शन शास्त्रों में रूप को चक्षुरिन्द्रिय का विषय माना है । वैशेषिक दर्शन में यह गुण माना गया है । सांख्य ने इमे पचतन्मात्राओं में एक तन्मात्रा माना है । बौद्ध दर्शन में इमे पाँच स्कंधों में पहला स्कंध कहा है । महाभारत में सोनह प्रकार के गुण (ह्रस्व, दीर्घ, स्थूल, चतुरस्र, वृत्त, शुक्ल, कृष्ण, नीलाभ्रण, रक्त, पीत, कठिन, चिकण, श्लक्ष्ण, पिच्छल, मृदु और दारुण) रूप के भेद या प्रकार माने गए हैं । वेदांत दर्शन ने इसको एक प्रकार की उपाधि माना है और अविद्याजनित लिखा है ।

यौ०—रूपरेखा = आकार । शकल ।

२ स्वभाव । प्रकृति । ३ सौंदर्य । सुंदरता । उ०—मुनि मन हरप रूप अति भोरे । मोहि तजि आनहि बरहि न भोरे ।—तुलसी (शब्द०) ।

रूपकार—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रूपकर्ता' ।

रूपकृत्—सज्ञा पुं० [सं०] १ देवताओं के स्थपति । त्वष्टा । विश्व-
कर्मा । २ मूर्तिकार । शिल्पी (को०) ।

रूपक्राता—सज्ञा स्त्री० [सं० रूपक्राता] सत्रह अक्षरों की एक वर्ण
वृत्ति का नाम जिसके प्रत्येक चरण में जगण, रगण, जगण,
रगण, जगण और अत में एक गुरु और एक लघु मात्रा होती
है । उ०—अशेष पुण्य पाप के कलाप आपने बहाइ । विदेह राज
ज्यो सदेह भक्त राम के कहाइ । लहै सुभुक्ति लोक लोक अत
मुक्ति होहि ताहि । कहै सुनै पढै गुनै जो रामचंद्र चद्रि-
काहि ।—केशव (शब्द०) ।

रूपगर्विता(पु)—सज्ञा स्त्री० [सं० रूपगर्विता] दे० 'रूपगर्विता' ।
उ०—जाके अपने रूप को, अतिही होय गुमान । रूपगर्विता
कहत हैं, तासौं परम मुजान ।—मति० ग०, पृ० २६३ ।

रूपगर्विता—सज्ञा स्त्री० [सं०] गर्विता नायिका का एक भेद । वह
नायिका जिसे अपने रूप या सुंदरता का अभिमान हो । उ०—य
श्रग दीपित पुज भरे निनकी उपमा छनजोह सो दीजत । आरसी
की छवि त्यो द्विजदेव सुगोल कपोल समान कहीजत । चतुर
स्याम कहाय कहो, उर अतर लाज कछुक तौ लीजत । रागमयी
अधराधर की सगता कसे कै प्रवाल सो कीजत ।—द्विजदेव
(शब्द०) ।

रूपग्रह—सज्ञा पुं० [सं०] चन्द्र । नेत्र (को०) ।

रूपग्राही—सज्ञा पुं० [सं० रूपग्राहिन्] आँख । नेत्र ।

रूपगनाक्षरी—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार का दडक छद ।

विशेष— इसके प्रत्येक चरण में बत्तीस वर्ण होते हैं । इसके अत में
लघु तथा आठ आठ वर्णों पर विश्राम होना आवश्यक है ।

रूपघात—सज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुसार मूर्त विगाडना ।
कुरूप करने का अपराध ।

रूपचतुर्दशी—सज्ञा स्त्री० [सं०] कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी ।

विशेष— यह दीपमालिका के एक दिन पहले होती है । इसे नरक
चतुर्दशी भी कहते हैं । इस दिन लोग शरीर में उबटन आदि
लगाते हैं ।

रूपजीविनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] वेश्या । रडो ।

रूपजीवी—सज्ञा पुं० [सं० रूपजीविन्] नट । वटुरूपिया ।

रूपण—सज्ञा पुं० [सं०] १ आरोपण । आरोप करना । २ प्रमाण ।
३ पराक्षा ।

रूपता—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ रूप का भाव या धर्म । २ सौंदर्य ।
खूबसूरती ।

रूपदर्शक—सज्ञा पुं० [सं०] १ प्राचीन काल का सिक्को का निरी-
क्षण करनेवाला राज कर्मचारी । २ सराफ । (को०) ।

रूपधर—वि० [सं०] सुंदर । खूबसूरत ।

रूपधर^३—सज्ञा पुं० किसी का रूप धारण करनेवाला । अभिनेता (को०) ।

रूपधारि—वि०, सज्ञा पुं० [सं० रूपधारिन्] दे० 'रूपधर' (को०) ।

रूपनाशक रूपनाशन—सज्ञा पुं० [सं०] उल्लू ।

रूपपति—सज्ञा पुं० [सं०] त्वष्टा । विश्वकर्मा ।

रूपपरिकल्पना—सज्ञा स्त्री० [सं०] किसी रूप का अनुकरण करना ।
वेश बदलना । कोई अन्य रूप धारण करना (को०) ।

रूपमजरी—सज्ञा स्त्री० [सं० रूपमञ्जरी] १ एक प्रकार का फूल ।
उ०—सोनजरद बहु फुनी सेवतो । रूपमजरी और मालती ।—
जायसी (शब्द०) । २. एक प्रकार का धान । उ०—राजहंस
और हसी भोगे । रूपमजरी श्री गुनगौरी ।—जायसी
(शब्द०) ।

रूपमनी(पु)—वि० [हिं० रूपमान] रूपवती । उ०—तेहि गोहन
सिंहल पद्मिनी । इक सो एक चाहि रूपमनी ।—जायसी
(शब्द०) ।

रूपमय—वि० [हिं० रूप+मय] [वि० स्त्री० रूपमयी] अति सुंदर ।
बहुत खूबसूरत । उ०—(क) नील निचाल छाल भइ फनि मनि
भूपन रोम रोम पट उदित रूपमय ।—पूर (शब्द०) । (ख) मो
मन मोहन को सबही मिलिकै मुसकानि दिखाय दई । वह मोहनी
मूरति रूपमयी सबही चितई तब ही चितई । उनतो अपन अपने
धर की रसखानि भली विधि राह लई । कछु माहि को पाप
पर्यो पल मे पग पावत पौ रे पहार भई ।—रसखानि (शब्द०) ।

रूपमान(पु)—वि० [सं० रूपवान्] [स्त्री० रूपमनी] सुंदर । मनोहर ।

रूपमाला—सज्ञा स्त्री० [हिं० रूप+माला] एक मात्रिक छद का नाम
। इसके प्रत्येक चरण में १४ और १० के विश्राम से २४ मात्राएं
और एक गुरु एक लघु हाता है । इसको मदन भी कहते हैं ।
उ०—रावर मुख के बलोकत ही भए दुख दूरि । सुप्रलाप नहो
रहे उर मध्य आनंद पूरि । देह पावन हो गयो पदपद्म को पय
पाइ । पूजत भयो वश पूजित आशु हा मनुराइ ।—केशव
(शब्द०) ।

रूपमाली—सज्ञा स्त्री० [सं०] एक छद का नाम जिसके प्रत्येक चरण
में तीन मगण या नौ दीघ वर्ण होते हैं । उ०—अग वगा
कालिगा काशा । गगा सिधु सगामा वासी ।—(शब्द०) ।

रूपया—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रूपया' ।

रूपरूपक—सज्ञा पुं० [सं० रूप+रूपक] रूपक अलंकार का एक
भेद । केशव के अनुसार रूपकालंकार के 'सावयव रूपक' भेद
का एक नाम ।

रूपवत—वि० [सं० रूपवत् या रूपवान् का बहु व०] [वि० स्त्री०
रूपवती] जिसमें सौंदर्य हो । खूबसूरत । रूपवान । सुंदर ।
उ०—(क) तापसी को वेष किए राम रूपवत किधौं मुक्ति फल
दोऊ दूटे पुण्य फल डारि ते ।—हनुमन्नाटक (शब्द०) । (ख)
साइ सुधा विचित्र अति बानी वदत विचित्र । रूपवत गुण
आगरे राम नाम सो चित्र ।—गिरधर (शब्द०) ।

रूपवती—सज्ञा स्त्री० [सं०] १. केशव के अनुसार एक छद का नाम ।
इमें छदप्रभाकर में गौरी लिखा है । उ०—कीजै न विडवन
सतत सीते । भावी न मिटै मुकहू जग गीते । तू पति देवनि की

गुरु वेटी । तेरी जग मृत्यु कहावति चेटी ।—केशव (शब्द०) ।

२ चपकमाला वृत्ति का एक नाम । रूपवती ।

रूपवती^३—वि० स्त्री० मुदरी । खूबसूरत । (स्त्री) ।

रूपवान्—वि० [सं० रूपवत्] [वि० स्त्री० रूपवती] । सुदर । रूपवाला । खूबसूरत ।

रूपवान्—वि० [सं० रूपवत्] दे० 'रूपवान्' ।

रूपशाली—वि० [सं० रूपशालिन्] [वि० स्त्री० रूपशालिनी] रूपवान् । सुदर । खूबसूरत ।

रूपश्री—मन्त्रा स्त्री० [सं०] संपूर्ण जाति की एक सकर रागिनी जिसमें ऋषभ कोमल और शेष सब स्वर शुद्ध लगते हैं ।

रूपसपद्, रूपसपत्ति—सन्त्रा स्त्री० [सं० रूपसम्पद्, रूपसम्पत्ति] सौंदर्य । उत्तम रूप । सुदरता ।

रूपसी^१—सन्त्रा स्त्री० [सं० रूपस्विनी] रूपवती स्त्री । सुदरी स्त्री । उ०—उपा उन्हें एक रूपसी की भाँति दिखाई पडती है जो अवर पनघट पर तारो के घट को डुवो रही है —हिं० का० प्र०, पृ० १५६ ।

रूपसी^२—वि० स्त्री० सौंदर्ययुक्त । रूप से भरी हुई । रूपवाली । उ०—बोलति क्यों न सुधा सी धारा । बोलति क्यों न रूपसी डारा । —नद० ग्र०, पृ० १४८ ।

रूपसेन—सन्त्रा दे० [सं०] एक विद्याधर का नाम ।

रूपस्वी—वि० [सं० रूपस्विन्] रूपवान् । सुदर ।

रूपहरा—वि० [हिं० रूपहला] दे० 'रूपहला' ।

रूपाकक—सन्त्रा पुं० [सं० रूपाङ्कक] वह व्यक्ति जो किसी निर्माणाधीन वस्तु की रूपरेखा, बनावट आदि का रूप, आकार निश्चित करता हो । डिजाइनर ।

रूपातर—सन्त्रा पुं० [सं० रूप + अन्तर] १ परिवर्तन । नए रूप से स्थापन । उ०—विश्व सभ्यता का होना था नख शिख नव रूपातर ।—ग्राम्या, पृ० ५२ । २ अनुवाद । एक भाषा से दूसरी भाषा में किया गया परिवर्तित रूप ।

यौ०—रूपातरकर्ता, रूपातरकार = अनुवादक ।

रूपातरण—सन्त्रा पुं० [रूपातरण] दे० रूपातर ।

रूपातरित—वि० [सं० रूपान्तरित] १ परिवर्तित । अन्य रूप युक्त । २ अनूदित । अनुवाद किया हुआ ।

रूपी—सन्त्रा पुं० [सं० रूप्य] १ चाँदी । उ०—(क) हरिजन मथिवे को मानो मनमथ्य लिखे रूपे के रुचिर अक पट्टिका कनक का ।—केशव (शब्द०) । (ख) २ह सुन नद जी ने कचन के शृंग, रूपे के सुर, ताँवे की पीठ समेत दो लाख गऊ पाटवर उढाय सधन्य की ।—लल्लू (शब्द०) । २ घटिया चाँदी, जिसमें कुछ मिलावट हो । ३ वह बेल जो बिलकुल सफेद रंग का हो । इस रंग के बेल मजबूत और सहिष्णु माने जाते हैं । ४ स्वच्छ सफेद रंग का घोड़ा । नुकरा ।

रूपाजीवना, रूपाजीवा—सन्त्रा स्त्री० [सं०] वेश्या । रडी ।

रूपातीत—वि० [सं० रूप + अतीत] रूप से परे । जिसका कोई रूप

स्थिर न किया जा सके । कल्पना में परे । उ०—त्रितय ध्यान स्तस्थ पुनि चतुर्थ रूपातीत ।—मुदर० ग्र०, भा० १, पृ० ५३ ।

रूपात्मक—वि० [सं० रूप + आत्मक] आकाशवाला । रूपमय । शकल सूरत का । उ०—हमें अपने मन का श्रीर अपनी सत्ता का बोध रूपात्मक ही होता है ।—रस०, पृ० ३० ।

रूपात्रिवोध—सन्त्रा पुं० [सं०] दृश्य वस्तु का वह ज्ञान जो इन्द्रियो द्वारा होता है ।

रूपाध्यक्ष—सन्त्रा पुं० [सं०] दे० 'रूप्याध्यक्ष' ।

रूपायन—सन्त्रा पुं० [सं० रूप + अयन] बनाना । आवृत्ति देना । रूप देना । उ०—साहित्य में इसी रूपायन का महत्व है ।—इति०, पृ० २० ।

रूपायित—वि० [सं० रूप] रूपयुक्त । रूप और आकार से युक्त । आवृत्तिवाला । उ०—मानव मात्र के अचेतन मानसिक जीवन को रूपायित करनेवाला प्राणी स्वीकार किया है ।—हिंदी०, भा०, पृ० ५ ।

रूपावचर—सन्त्रा पुं० [सं०] १ बौद्ध मत के अनुसार एक प्रकार के देवता । २ चित्त का एक भेद जिससे रूपलोक का ज्ञान प्राप्त होता है । चित्त की इस वृत्ति के कुशल, विपाक् क्रियादि भेद से अनेक प्रकार माने जाते हैं । ३ योग में ध्यान की एक भूमि का नाम, जिसके प्रथमा आदि चार भेद हैं ।

रूपाश्रय—सन्त्रा पुं० [सं०] सुदर पुरुष । खूबसूरत आदमी ।

रूपीन्द्र—सन्त्रा पुं० [सं०] कामदेव ।

रूपिक—सन्त्रा पुं० [सं०] सिक्का । रुपया [को०] ।

रूपिका—सन्त्रा स्त्री० [सं०] सफेद फूल का आक का पेड़ । श्वेत मदार । श्वेतार्क ।

रूपित—सन्त्रा पुं० [सं०] एक प्रकार का उपन्यास, जिसमें ज्ञान, वैराग्यादि पात्र बनाए जाते हैं ।

रूपी—वि० [सं० रूपिन्] [वि० स्त्री० रूपिणी] १ रूप । विशिष्ट रूपवाला । रूपधारी । उ०—पढ़ पढ़ फिर जन्म लेते हैं, सो भी विद्या रूपी सागर की थाह नहीं पाते ।—लल्लू (शब्द०) । २ तुल्य । सदृश । जैसे—कमल रूपी च रा । उ०—गारस रूपी जीव हैं लोह रूप ससार । पारस ते पारस भया परख भया टकसार ।—कवीर (शब्द०) । ३ सुदर । खूबसूरत ।

रूपेन्द्रिय—सन्त्रा स्त्री० [सं० रूपेन्द्रिय] चक्षु । आँख ।

रूपेश्वर—सन्त्रा पुं० [सं०] [स्त्री० रूपेश्वरी] एक शिवलिंग का नाम ।

रूपेश्वरी—सन्त्रा स्त्री० [सं०] एक देवी का नाम ।

रूपोपजीविनी—सन्त्रा स्त्री० [सं०] वेश्या । रडी ।

रूपोपजीवी—सन्त्रा पुं० [सं० रूपोपजीवन्] [स्त्री० रूपोपजीविनी] बहुवेषिया ।

रूपोशा—वि० [फा०] [सन्त्रा रूपोशी] १ छिपा हुआ । गुप्त । २ जो दड आदि से बचने के लिये भाग गया हो । फरार ।

रूपोशी—सन्त्रा स्त्री० [फा०] मुँह छिपाने की क्रिया । गुप्ति । छिपना ।

रूप्य^१—वि० [सं०] १ सुदर । खूबसूरत । २ उपमेय ।

रूप्य^१—सज्ञा पु० १ रूपा। चाँदी। २ सोने या चाँदी का मुड़र लगा सिक्का। जैसे—रुपया, गिन्नी आदि (को०)। ३ अजन। सुरमा (को०)। ४ परिष्कृत स्वर्ण। तपाया हुआ सोना (को०)।

यौ०—रूप्यद = चाँदी देनेवाला। रूप्यधौत = रजत। चाँदी। रूप्यशतमान = साठे तीन पल की एक तौल।

रूप्यरु—सज्ञा पु० [सं० रूप्य] रुपया।

रूप्यकूला—सज्ञा स्त्री० [सं०] जैनों के अनुमार हेमवत वर्ष की एक नदी का नाम।

रूप्याचल—सज्ञा पु० [सं०] कैलाश पर्वत (को०)।

रूप्याध्यक्ष—सज्ञा पु० [सं०] टकसाल का प्रचान अधिकारी। नैष्ठिक।

रूपकार—सज्ञा पु० [फ्रा०] १. सामने उपस्थित करने का भाव। पेशी। २. वह तजवीज या फौमला जो किसी काररवाई में हाकिम अदालत के सामने लिखा जाय। अदालत का हुकम। ३. कुछ विशिष्ट अवस्थाओं में किन्हीं को अदालत आदि में उपस्थित होने के लिये लिखा हुआ आज्ञापत्र। ४. आज्ञापत्र। हुकुमनामा।

रूपकारी—सज्ञा स्त्री० [फ्रा०] १. मुकदमे की पेशी। २. मुकदमे की काररवाई।

रूपरू—क्रि० वि० [फ्रा०] नमुख। सामने। समक्ष। उ०—(क) हमारे रूपरू आने की जहरत नहीं।—राधाकृष्ण (शब्द०)। (ख) महाराज की आज्ञा पावो तो रूपरू ले आवो।—लल्लू (शब्द०)।

क्रि० प्र०—आना।—करना।—जाना।—लाना।—होना।

रूपल—सज्ञा पु० [रूसी] रूम का चाँदी का सिक्का जो प्रायः दो शिलिंग डेढ़ पेनी के बराबर मूल्य का होता है। एक शिलिंग = प्रायः बारह आने = ७५ पैसे (नए)। एक पेनी = प्रायः तीन पैसे = पाँच नए पैसे।

रूपुरु—सज्ञा पु० [सं०] एरड वृक्ष। रेंड का पेड़।

रूम^१—सज्ञा पु० [फ्रा०] टर्की या तुर्की देश का एक नाम। उ०—चारि दिसा महि दड रचो है रूम साम विच दिल्ली। ता ऊर कुछ अजब तमाशा मारे है यम किल्ली।—कवीर (शब्द०)।

विशेष—ईसा के जन्म से पहले पाँचवीं शताब्दी में रोमक जातियों की शक्ति बढ़ने लगी थी और यूनान का पतन होने पर वह एक प्रभावशाली जाति हो गई थी। इस जाति की राजधानी रोम नगर थी। यह जाति इतनी शक्तिशाली हो गई थी कि स्पेन से लेकर अरब, मिस्र आदि तक के देशों पर इसका अधिकार हो गया था। तीसरी शताब्दी के अंत में यह वृहत् साम्राज्य शासकों में विभक्त होने लगा और सन् ३३० में कैसर कानिस्तताइन ने कुस्तुतुनिया नगर में अपनी राजधानी बनाई। ३६५ में रोम राज्य, पूर्वीय और पश्चिमीय राज्य, जिसकी राजधानी रोम थी, धीरे धीरे निर्बल होता गया और उसे गाथ, फ्रेंच आदि जातियों ने ध्वंस कर दिया, और पूर्वीय राज्य ही सन् ४७६ से रोम राज्य

कहलाने लगा। यूरोप के दक्षिणपूर्व का भाग, एशिया का पश्चिमी भाग तथा उत्तरी अफ्रीका और अनेक टापू इस साम्राज्य के अंतर्भूत थे। तब से तुर्की को, जिसका प्रधान नगर कुस्तुतुनिया है, रूम कहने लगे, और अब तक उसे रूम ही कहते हैं।

रूम पु^३—सज्ञा पु० [सं० रोम] दे० 'रोम'। उ०—रूम रूम में ठाकुर रम रहए कोइ बरले जन चिना।—रामानंद०, पृ० १६।

रूमना^५—क्रि० सं० [हि० रूमना का अनु०] भूमना। भूलना। उ०—कहि आपनो तू भेद न तु चित्त उपगत खेद। कहि वेग वानर पाप। न तु तोहि देहीं शाप। तब वृक्ष शाखा रूमि। कपि उतरि आयो भूमि।—केशव (शब्द०)।

रूमपाट^(५)—सज्ञा पु० [सं० रोमपाट] ऊनी वस्त्र। दे० 'रोमपाट'। उ०—रूमपाट पाटवर अवर जरी वपत का वाना। तेरे काज गजी गज चारिक भरा रहै तोसाखाना।—सतवाणी०, भा० २, पृ० ७।

रूमानी—वि० [अ० रोमास] प्रणयकथा युक्त। शारीरिक प्रेमव्यापार से युक्त। मन जिससे सरस हो उठे।

रूमारी^५—सज्ञा स्त्री० [सं० रोमावली] दे० 'रोमावली'। उ०—वै सै माठ करी हडवारी। अनील असल करी रूमारी।—प्राण०, पृ० २०।

रूमाल—सज्ञा पु० [फ्रा०] १. कपड़े का वह चौकोर टुकड़ा जो हाथ, मुँह पोछने के काम में आता है। उ०—पोछि रूमालन सो श्रम भीकर भीर की भीर निवारत ही रहे।—हरिश्चंद्र (शब्द०)।

मुहा०—रूमाल पर रूमाल भिगोना = बहुत रोना। आँसुओं की धारा बहाना।

२. चौकोना शाल या चिकन का टुकड़ा जिसके चारों ओर बेल और नीच में काम बना रहता है और जो तिकोना दोहर कर ओढ़ने के काम में लाया जाता है। मुसलमानी समय में इसे कमर में भी बाँधते थे। ३. पायजामे की काट में वह चौकोर कपड़ा जो दोनों मोहरियों की संधि में लगाया जाता है। मियानी। ४. ठगों का रूमाल जिसके एक कोन में चाँदी का एक टुकड़ा बंधा रहना है।

विशेष—ठग आदि इसे आदमियों के गले में लपेटकर चाँदी के टुकड़े को उसके गले पर घाँटी के पास अँगूठे से इस प्रकार दबाते थे कि वह मर जाता था।

क्रि० प्र०—लगाना।

रूमाली—सज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'रूमाली'।

रूमो—वि० [फ्रा०] १. रूम देश संबंधी। रूम का। २. रूम देश में उत्पन्न होनेवाला। जैसे,—रूमो मस्तगा। ३. रूम देश में रहनेवाला। रूप देश का निवासी। उ०—हवशा रूमो और फिरगो। बड बड गुनी और तेहि सगो।—जायसी (शब्द०)।

रूर—वि० [सं०] १. जो गरम हो गया हो। उत्तप्त। २. जला हुआ। दग्ध।

रूरना^५—क्रि० अ० [सं० रोरव्य (= चिल्लाना)] चिल्लाना।

जोग ने शत्रु करना । उ०—(क) एक मुई रर सुई सो दजी । रहा न जाय आयु अथ पूजी ।—जायसी (शब्द०) । (ख) हमरे श्याम चवन कहत हैं दूरि । मधुवन बसत आस हुती मजनी अथ मरिहो जु विमूरि । कौन कहाँ कौन सुनि आई केहि अथ ग्य की धूरि । सर्गहि सर्व चनो माधव के ना तो मरिहा हरि । दक्षिण दिशि यह नगर द्वारिका सिधु रघौ जन पूर । मून्दा म प्रभु त्रिनु क्यो जीवो जात मजीवन मूरि ।—मूर (शब्द०) ।

रूग—वि० [सं० रूढ (= प्रशस्त)] [वि० खी० रूरी] १ प्रशस्त । श्रेष्ठ । उत्तम । अच्छा । उ० (क) जिन्हके धवण समुद्र ममाना । क्या तुम्हारे मुभग सरि नाना । भरहि निरतर होहि न पूरे । तिन्ह के हिय तुम कहँ गृह रूरे ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) लटकति ललित ललाट लक्ष्मी । दमकति दूव दतुरिया रूगी ।—मूर०, १०।११७। २ बहुत बडा । उ०—चित्र की सी पुनिका कै रूरे वगहरे माँहि शवर छडाय लई कामिनी कै काम की ।—केशव (शब्द०) । ३ मुदर । मनाहर । उ०—मेघ मदाकिनी, चारु सौदामिनी, रूप रूरे लमै देह धारी मनो ।—केशव (शब्द०) ।

रूल—सञ्ज्ञा पुं० [ग्र०] १ नियम । कायदा । २ लकीर खीचने का डंडा । रूलर । ३ लकीर जो लिखावट सीधी रखने के लिये कागज पर खींची जाती है ।

क्रि० प्र०—खींचना ।

यौ०—रूलदार = (कागज) जिसपर लकीरें खींची हुई हों ।

रूलना ७—क्रि० म० [श्य०] दवाना । हूलना ।

रूलर—सञ्ज्ञा पुं० [श्र०] १ लकीर खीचने का डंडा । शनाका । २ लकीर खीचने की पटरी । पैमाना । ३ शामक ।

रूप पुं०—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रूख] दे० 'रूख' ।

रूप—वि० [सं०] १ निर्दय । कठोर । २ अम्ल । खट्टा [को०] ।

रूपक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रूसा । अहसा । वामक ।

रूपक—वि० १ मजानेवाला । २ लीपनेवाला [को०] ।

रूपण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भूपित करना । अलकरण । २ अनुलेपन । ३ आच्छादन ।

रूपा ७—वि० [हि० रूखा] दे० 'रूखा' ।

रूपित—वि० [सं०] १ दूटा हुआ । खडित । भग्न । २ सज्जित । भूपित [को०] । ३ लिप्त [को०] । ४ मलिन । दूषित [को०] । ५ मुगधित । नुवामित [को०] । ६ जडा हुआ । जटित [को०] ।

रूस—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] एक देश का नाम जो यूरोप और एशिया दोनों महाद्वीपों के उत्तरी भाग में फैला हुआ है ।

विशेष—इसके उत्तर में उत्तरीय हिममागर, पूर्व में प्रशान महा-मागर, दक्षिण में चीन, तुर्किस्तान, फारस, कश्यप सागर, काकेशम या काफ पहाड, काला सागर और र्मानिया, तथा पश्चिम में हंगरी, जर्मनी, वाल्टिक की खाड़ी, स्वीडन और नारवे हैं । इस देश में बडी बडी नदियाँ और बडे बडे मैदान

तथा जगल हैं । आवादी हम देग में घनी नहीं है । यह देग ८६,६०,२८२ वर्ग मील है । इसकी राजधानी पहले लेनिनग्राद थी और अब (मास्को) है ।

रूस—सञ्ज्ञा खी० [फ्रा० रविश] चाल । (लण०) ।

रूसना—क्रि० प्र० [हि० रोष] १ रोष करना । नाराज होना । रुठना । उ० (क) खोला आगे आनि मजूना । मिल निकसी बहु दिन कर रूसा ।—जायसी (शब्द०) । २ मान करना । रुठना । उ०—(क) वारहि बार को रूसिबो वारो वहाउ जु बुद्धि वियोग बसाई ।—केशव (शब्द०) । (ख) जगत जुगफा ह्वै जियत तज्यो तजे निज भान । रूसि रहे तुम पूस में यह धौ कौन समान ।—पद्माकर (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—जन ।—बैठना —रहना ।

रूसा ७—वि० [सं० रूप (= रोष)] [वि० खी० रूपी] रुठा हुआ । रुष्ट । उ०—श्याम अचानक आर री । पात्रे ते लीचन दोउ मूँदे मो को हृदय लगाए री । लहनी ताको जाके आँवें मैं बड-भगिनि पाए री । यह उपकार तुम्हारी सजनी रूसे कान्ह मिलाए री ।—सूर (शब्द०) ।

रूसा—सञ्ज्ञा पुं० [म० रूपक] अहसा । अहसा । विशेष दे० 'अहसा' ।

रूसा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोहिप] एक मुगधित घाम का नाम । भूतृण । रोहिप ।

विशेष—यह घास नेपाल, शिमला, अलमोडा, काश्मीर, पंजाब, राजमहल, मध्यप्रदेश के पहाडी प्रदेशों, बंबई और मद्रास के पर्वतों में होती है । इस घास से गुलाब की सी मुगव आती है और इसका तेल निकाला जाता है । इसकी प्रवान दो जातियाँ होती हैं । एक का फूल सफेद और दूसरी का फूल नीले रंग का होता है । जत्र यह घास नरम रहती है, तब इसकी पत्तियों का रंग नीलापन लिए जाता है, पर पकने पर उनका रंग लाल हो जाता है । जब इसकी पत्तियाँ नरम होती हैं, तब इमें 'भोतिया' कहते हैं, और जब पककर लाल हो जाती है, तब उन्हें 'सौंफया' कहते हैं । सावन भादा में यह फूलने लगती है और कातिक अग्रहन तक फूलती है । इसी समय इसकी पत्तियाँ तेल निकालने के योग्य हो जाती हैं । जब घाम फूलने लगती है, तब काट ली जाती है और इसकी छोटी छोटी पूलियाँ बाध ली जाती हैं । तेल निकालत समय देग में पानी भरकर ढाई तीन सौ पूलियाँ उममें छोड दी जाती हैं । फिर देग पर सरपोश लगा देते हैं, जिसमें दा नलिया, जो तीन चार अगुल मोटी और चार हाथ लंबी होती है, लगी रहती है । यह देग आग पर रख दिया जाता है और नलियों का मिरा तावे के दा घडों के मुँह से रूगा दिया जाता है, जो पाना में हूवे रहते हैं । इस प्रकार घाम का आसव खींचा जाता है । जब आसव निकल आता है, तब उसे एक चीड़े मुँह के बरतन में उडेल लेते हैं । इस बरतन में रूसे का अर्क थोडी देर तक रहता है और तेल छोटे चम्मच से धीरे धीरे ऊपर से काछ लिया जाता है । यह तेल गुलाब के अतर में मिलाया जाता है और इसमें ताडीन

या मिट्टी का तेल मिलाकर मुगधित द्रव्य तैयार किया जाता है। मध्यप्रदेश के जगलो से रूसा का तेल बहुत अधिक मात्रा में बाहर जाता है। यूरोप और अमेरिका में इस तेल का बहुत व्यवहार तथा व्यापार होता है।

पर्या०—रोहिष । रघवेना । भूतृण । कतृण । गधतृण ।

रूसियाह—वि० [फा०] जिसका मुँह काला हो । कदाचारी । पापात्मा । बदचलन । गुनहगार । पापी । बदनाम । उ०—रुश दस पाँच साल पहले तुम मुझे मिल जाते तो तैमूर तवारीख में इतना रूसियाह न होता ।—मान०, भा० १, पृ० १६४ ।

रूसियाह^१—सञ्ज्ञा पु० [फा०] १ सूर्य । २ आसमान [को०] ।

रूसियाही सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] बदचलनी । पाप । गुनाह [को०] ।

रूसी^१—वि० [हिं० रूस] १ रूस देश का रहनेवाला । रूस देश का निवासी । २ रूस देश में उत्पन्न । ३ रूस देश का ।

रूसी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० रूस देश की भाषा ।

रूसी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] सिर के चमड़े पर जमा हुआ भूषी के समान छिलका जो सिर न मलने में जम जाता है ।

क्रि० प्र०—जमना ।—निकलना ।

रूस्त—सञ्ज्ञा पुं० [म०] कपड़े का किनारा । दामन । अचल [को०] ।

रूह—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ आत्मा । जीवात्मा । उ०—चाम चम के नजर न आवै देखु रूह के नैना । चून चिगून वजूद नमाबु तैं सुभा नमूना ऐना ।—कवीर (शब्द०) । २ सत् । सार । जैसे,—रूह गुलाब, रूह केवडा, रूह पानडी (यह इत्र का एक भेद होता है) ।

यौ०—रूह अफजा = प्राणवर्धक ।

मुहा०—रूह बज्ज हो जाना, रूह फना होना = भय से स्तब्ध हो जाना ।

रूहड़—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रूई] पुरानी रूई जो पहले किसी ओढने या विछाने आदि के कपडों में भरी रही हो ।

रूहना^(१)—क्रि० अ० [म० रोहण] चढना । उमडना । छा जाना । उ०—चहुँ दिसि दिष्टि परी गज जूहा । श्यामल घटा मेघ जस रूहा ।—जायसी (शब्द०) ।

रूहना^२—क्रि० सं० [हिं० रूँधना] आवेष्टित करना । घेरना । उ०—इमि वमु पोटश वत्तिस जूहा । मधि मोहन शशि के सम रूहा ।—गोपाल (शब्द०) ।

रूहानियत—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] अध्यात्मवाद । आत्मवाद ।

रूहानो—वि० [अ०] आध्यात्मिक । आत्मिक ।

रूही—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष । अर्कमूल । चीरी । ईसर मूल ।

विशेष—रूही का वृक्ष हिमालय पर्वत के नीचे रावी नदी के पूर्व में तथा मध्यभारत और मद्रास प्रांत में पाया जाता है । इसे चीरी और मामरी भी कहते हैं । इसकी छाल देशी श्रोपधियो में काम आती है और जब साँप काटने की श्रोपधि मानी जाती है । इसकी लकड़ी तेल में प्रति घनफुट २७ सेर तक होती है ।

यह बहुत मजबूत और चिकनी होती है । रंग देने और वार्निश करने से इसपर बहुत अच्छी चमक आती है । इसमें मेज, कुरसी, शालमागी और तसवीर के चौखटे बनाए जाते हैं । यह वृक्ष बीज से बरसात में उगता है । इसको संस्कृत में 'अहिगवा' कहते हैं । इसकी पत्तियाँ जत्तेजक और कटु होती हैं । इसकी छाल पेट को पीडा और अंतरिया ज्वर में दी जाती है । इसकी मात्रा ३ मासे से ६ मासे तक है । यह मधु क साथ कुछ रोग में और काली मिर्च के साथ पीसकर विशूचिका तथा आतसार में दी जाती है । इसमें वैद्य लोग ईसरमूल, अर्कमूल और रूहीमूल कहते हैं ।

रूहीमूल—सञ्ज्ञा पु० [हिं० रूही + मूल] रूही नामक वृक्ष की छाल और जड़ । ईसरमूल । अर्कमूल । अतिगवा । विशेष द० 'रूही' ।

रेंट—सञ्ज्ञा पुं० [अंग० रेन्ट] घर, मकान या जमोन का किराया ।

रेंकना—क्रि० अ० [अनु० या सं० रिङ्कण] १ गदहे का बोलना । उ०—तिसका शब्द सुनकर घेनुक खर रेंकता आया ।—लखू (शब्द०) । २ बुरे ढंग से गाना । उ०—पर हमारे राम भी जब रेंकते ह, तो तीसो रागिनी हुडदगा नाचने लगती हैं ।—प्रतापनारायण (शब्द०) ।

रेंगटा—सञ्ज्ञा पुं० [अनु० रेंकना] गदहे का बच्चा ।

रेंगना—क्रि० अ० [सं० रिङ्गण] १ कीडो और सरीसृपो का गमन । च्यूटी आदि कीडो का चलना । उ०—रक्त के आँसु परें भुईं टूटी । रेंग चली जनु वीर बहूटी ।—जायसी (शब्द०) २ धारे धीरे चलना । उ०—(क) कोउ पहुँचे कोउ रेंगत मग में कोउ घर में ते निकसे नाहि ।—सूर (शब्द०) । (ख) गऊ सिध रेंगाहे एक बाटा ।—जायसी (शब्द०) ।

रेंगनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रेंगना] भटकटैया ।

रेंट—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] श्लेष्मा मिश्रित मल जो नाक से (विशेषतः जुकाम होने पर) निकलता है । नाक का मल ।

क्रि० प्र०—निकलना ।—बहना ।

रेंटा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] लिसोडे का फल ।

रेंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० एरगड] १ एक पीया । एरड । रेंडा । उ०—नाम जाको कामतर देत फल चारि ताहि तुलसी विहाइ कै बवूर रेंड गोडिए ।—तुलसी (शब्द०) ।

विशेष—यह ६-७ हाथ ऊँचा होता है और इसकी पेडी और टहनी पोली तथा मुलायम होती है । इसके चारो ओर बड़ी बड़ी शाखाएँ नहीं निकलती, सिरे पर छोटी छोटी टहनियाँ होती हैं, जिनमें पत्तों की पोली डालियाँ लगी रहती हैं । इन डालियों के छोर पर वालिशत डेढ वालिशत के बड़े बड़े गोल कटावदार पत्ते लगे रहते हैं । कटाव बहुत लंबे होते हैं और पत्तों तथा टहनियों के रंग में कुछ नीली भाई भी रहती है । फूल सफेद होते हैं और फल गाल गोल तथा कंटोले होते हैं । फलों के अंदर कई बड़े बड़े बीज होते हैं जिनमें से बहुत तेल निकलता है । यह तेल जलाने और श्रोपध के काम में आता है । यह दस्तावर हाता है । यद्यपि इसके बीज बहुत काम के होते

हैं, तथापि खाने योग्य फल या छाया न होने के कारण लोग इसे निकृष्ट पेड़ों में गिनते हैं।

२ एक प्रकार की ईख जिसे रेंडा भी कहते हैं।

रेंडखरबूजा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रेंड + खरबूजा] पपीता।

रेंडना—क्रि० अ० [हि० रेंड] १ फसल के पौधे का बढ़ना।
२ पौधे (विशेषतः धान, गेहूँ, जौ आदि का) गर्भित होना।
पौध का उस अवस्था को प्राप्त होना जिसके कुछ समय बाद उसमें से बालें निकलती हैं।

रेंडमेवा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रेंड + मेवा] अडकाकुनी। रेंडखरबूजा।
पपीता।

रेंडा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रेंड] १ एक प्रकार का धान जिसकी फसल कुआर कातक में तैयार हो जाती है। २, धान, गेहूँ, जौ आदि का गर्भ।

क्रि० प्र०—लेना। आना।

रेंडा—सञ्ज्ञा स्त्री० एक प्रकार की ईख।

रेंडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रेंड] अरडी या रेंड के बीज जिनसे तेल निकलता है और जो रेंचक होने के कारण दवा के काम में आते हैं।

रेंदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [त्य०] खरबूजे का छोटा फल। ककडी या खरबूजे की बतिया।

रेंन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रेंन] दे० 'रैन'। उ०—कितने दिन गए रेंन सुख सोएँ।—पोद्दार अभि० ग्र०, पृ० २३८।

रें रें—अ० [अनु०] अनमने लडकों के रोने का शब्द।

मुहा०—रें रें करना = बच्चों का धीरे धीरे और कभी कभी देर तक रोना। जैसे,—यह लडका जब देखो, तब रें रें करता रहता है।

रेंवम्भा—सञ्ज्ञा पुं० [द्य०] बबून से मिलता जुलता एक पेड़।

रें—अव्य० [सं०] १ सर्वोधन शब्द। उ०—क्यों मन मूढ़ छत्रीली के अगनि जाय पर्यो रे समा जिमि भीर मे।—मन्नालाल (शब्द०)।

विशेष—इस सर्वोधन से आदर का भाव सूचित होता है और इसका प्रयोग उसी के प्रति होता है, जिसके प्रति 'तू' सर्वनाम का व्यवहार होता है।

२ तुच्छता वा अनमानसूचक सर्वोधन।

रें—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ऋषभ का आदि र] संगीत में ऋषभ स्वर।
जैसे—स, रे, ग, म, प, ध, नी।

रेंछना—क्रि० अ० [द्य०] किसी वस्तु या व्यक्ति के आस पास चक्कर मारना।

रेंछा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रेंछा] दे० 'रेंछा'।

रेंछा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रेंछा] दे० 'रेंछा'।

रेंछी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रेंछी] दे० 'रेंछी'।

रेंचरा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रेंचरा] दे० 'रेंचरा'।

रेंचरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रेंचरी] दे० 'रेंचरी'।

रेंक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. दस्त लाना। विरेचन। २. भ्रम। नीच।

३ सदेह। शक। शंका। ४ मेढक। मजूक (को०)। ५ एक प्रकार की मछली (को०)।

रेकण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेकणस्] स्वर्ण। मोता (को०)।

रेकान—सञ्ज्ञा पुं० [त्य०] वह जमीन जो नदी के पानी को पहुँच के बाहर हो।

रेकार्ड—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ किसी सरकारी या सार्वजनिक सन्धा के कागजपत्र। २ अदालत की मिसिल। ३ कुछ विशिष्ट ममालों से बना तबके के आकार का गाल टुकड़ा जिसमें वैज्ञानिक क्रिया से किसी का गाना बजाना या कही हुई बातें भरी रहती हैं। फोनोग्राफ के सट्टक के बीच में निकली हुई कोल पर इन्में लगाकर कुर्जी देने पर यह घूमने लगता है और इसमें से शब्द निकलने लगते हैं। चूडा। विशेष दे० 'फोनोग्राफ'।

रेक्टर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] किसी सन्धा का विशेषकर शिक्षा सन्धा का प्रधान। जैसे,—यूनिवर्सिटी का रेक्टर।

रेख—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रेखा] १ रेखा। लकीर। उ०—डुई नैन बॉच में काजर रेख विराजत रूप अनूप जग्यो।—(को०)।

मुहा०—रेख खींचना या खींचना, खचाना = (१) लकीर बनाना। रेखा आकृत करना। (२) फलाफल का विचार करने के लिये चक्र आदि बनाना। (३) बहने में जोर देना। दृढ़ता प्रकट करना। निश्चय उत्पन्न करना। प्रतिज्ञा करना। कोई बात जोर देकर निश्चित रूप से कहना। उ०—(क) पृथ्वा गुनिन्ह, रेख तिन खाँची। भरत भुवाल होहि, यह साँची।—तुलसी (शब्द०)। (ख) रेख खँचाइ कहीं बल भाखी। भामिनि भइउ दूय के माखी।—तुलसी (शब्द०)। रेख काटना = दे० 'रेख खींचना'—१। उ०—नृन तोरघो गुन जात जिते गुन काढति रेख मही।—सुर (शब्द०)।

२ चिह्न। निशान। उ०—विना रूप, विनु रेख के जगत नचावँ सोइ।—(शब्द०)।

यौ०—रूप रेख = आकार। स्वरूप। मूरत। उ०—ना ओहि ठावँ न ओहि विनु ठाऊ। रूपरेख विन निरमल नाऊँ।—जायसी (शब्द०)।

३ गिनती। गणना। शुमार। हिसाब। उ०—तिन महँ प्रथम रेख जग मोरी।—मानस, १। ४ नई नई निकलती हुई मूर्छे। मूर्छों का आभास। उ०—देखँ छैल छत्रीले रेख उठान।—देव (शब्द०)।

क्रि० प्र०—निकलना।

मुहा०—रेख आना, भींजना या भींजना = निकलती हुई मूर्छों का दिखाई पडना।

५ हीरे के पाँच दोषों में से एक जिसमें हीरे में महीन महीन लकीरें सी पड़ी दिखाई पडती हैं।

रेखता—सञ्ज्ञा पुं० [प्रा० रेखतद्] एक प्रकार का गाना या गजल जिसका प्रचार अरबी फारसी मिली हिंदी में पहले पहल मुसलमानों द्वारा हुआ था। इसी से उर्दू को बहुत दिनों तक लोग

रेग्लेशन—सब्बा पुं [अं०] १ वे नियम या कायदे जो राजपुरुष अपने अधीन देश के सुशासन के लिये बनाते हैं। विधि। विधान। कानून। जैसे, - बंगाल के तीसरे रेग्लेशन के अनुसार कितने ही युवक निर्वाचित किए गए। २ वे नियम या कायदे जो किसी विभाग या सस्था के संचालन और नियंत्रण के लिये बनाए जाते हैं। नियम। कायदे।

रेग्यूलैटर—सब्बा पुं [अ०] किसी मशीन या कल का वह हिस्सा या पुर्जा जो उसकी गति का नियंत्रण करता है। यंत्रनियामक।

रेघना (७) —क्रि० अ० [सं० रिङ्गण, हिं० रेंगना] धीरे धीरे चलना या गमन करना। उ०—प्रेम पहार स्वर्ग ते ऊंचा। विनु रेघे कोउ तहँ न पहुँचा।—चित्रा०, पृ० ४०।

रेघना (१) —क्रि० अ० [हिं० रेंकना] १ देर तक एक ही बात को फटते रहना। २ एक ही सुर में रोना। मिमियाना। (बच्चों का)। ३ चिन्तना। पुकारना।

रेचक (१) —वि० [सं०] [वि० ली० रेचका] १ जिसके खाने से दस्त आवे, कोष्ठशुद्धि करनेवाला। दस्तावर।

रेचक (२) —सब्बा पुं १ पिचकारी। २ जवाखार। ३ जमालगोटा। ४ प्राणायाम की तीसरी क्रिया, जिसमें खोचे हुए राँस को विधिपूर्वक बाहर निकालना होता है। उ०—(क) पूरक कुभक रेचक करई। उलटि ध्यान त्रिकुटी को घरई।—विश्राम (शब्द०)। (ख) सब आसन रेचक अरु पूरक कुभक सीखे पाइ। बिन गुरु निकट सदेसन कैसे यह अवगाह्यो जाइ।—सूर (शब्द०)।

रेचन—सब्बा पुं [सं०] १ दस्त लाना। कोष्ठशुद्धि करना। पेट से मल निकालना। २ वह औषध जो मल निकालकर कोठा साफ करे। जुल्लाव।

विशेष—सुश्रुत ने छह प्रकार के रेचन द्रव्य कहे हैं—फल, मूल, छाल, तेल, रस और पेड़ों के दूध।

रेचनक—सब्बा पुं [सं०] कपिल्लक। कमीला।

रेचना (७) —क्रि० सं० [सं० रेचन] वायु या मल को बाहर निकालना। उ०—प्रथम सूरज भेदिनी पूरै पिगल वात। रेच वावें रोक कछु हरै वायु रुज गति।—विश्राम (शब्द०)।

रेचना (१) —सब्बा ली० [सं०] वापल्ल वृक्ष। कर्मला।

रेचनी—सब्बा ली० [सं०] १ कमीला। दती। ३ कालाजली। ४ वटपत्री।

रेचित (१) —सब्बा पुं [सं०] १ घोड़ों की एक चाल। २ नाचने में हाथ हिलाने का एक ढंग।

रेचित (२) —वि० साफ किया हुआ। जिससे मल आदि बाहर किया गया हो [को०]।

रेच्य—सब्बा पुं [सं०] प्राणायाम में बाहर छोड़ी हुई वायु। २ भेदक। जुल्लाव।

रेज (७) —सब्बा पुं [हिं० रिस, रेस अथवा सं० रेज (= चमकना; हिलना, काँपना)] लाग ढाट। प्रतिस्पर्धा। उ०—महल महमही महक मग मनघर मँन मजेज। सोति सुहागहि रेज करि साजी सु दर मेज।—स० सप्तक, पृ० ३६६।

मुहा०—रेज करना = (१) नवरा करना। दतराना। (२) अकडना। (३) घोड़े का एक ही स्थान पर उद्यतना, कूटना।

रेज (१) —सब्बा पुं [सं० रेज] अग्नि।

रेजगारी—सब्बा ली० [फा०] रूपए का फुटकर अंश। रेजगी। खरीज। छुट्टा [को०]।

रेजगी—सब्बा ली० [फा०] दे० 'रेजगारी'।

रेजस—सब्बा पुं [फा० रेजिस] घोड़ों का जुकाम।

रेजसङ्ग्रामा—सब्बा पुं [फा० रेजिस] दे० 'रेजम'।

रेजा—सब्बा पुं [फा० रेजह] १. किसी वस्तु का बहुत छोटा टुकड़ा। सूदम रज। उ०—(क) रेजा रेजा करि तीपे नैन की कोरन सो काकरेजा वारी मो करेजा काढ़ि नै गई।—रघुनाथ (शब्द०)। (ख) परिघ, परणु नेजे मेघनाद के जे भेजे, तिन्है कँ कँ रेजे रोजे महावीर भायो है।—रघुराज (शब्द०)। २ गजदूर लडका जो बड़े राजगीरों के साथ काम करता है। ३ अंगिया। मीनवद। (बुदेलखडी)। ४ सुनारों का एक औजार जिसमें गला हुआ मोना या चाँदी डालकर पॉमि के आकार का बना लेते हैं। यह लोहे की बनी नाली के आकार का होता है। इसे 'परघनी' भी कहते हैं। ५ नग। थान। अदद। ६ महान कपडा। महीन काम किया हुआ रेशमी वस्त्र आदि। उ०—ज्यो कोरी रेजा बुनै, निथरा आवै छार।—कवीर सा०, पृ० ७७।

रेजिस—सब्बा ली० [फा० रेजिस] जुकाम।

रेजीडेंट—सब्बा पुं [अ० रेजिडेंट] वह अंग्रेजी राजकर्मचारी जो किसी देशों राज्य में प्रतिनिधि के रूप में रहता है।

रेजीमेंट—सब्बा ली० [अ०] सेना का एक भाग। रिज्मिंट।

रेजू—सब्बा पुं [फा०] एक प्रकार का रेशा जो ब्रश (स्पूडा, आदि साफ करने की कूँची) बनाने के लिये कलकत्ते में बिलायत में आता है।

रेज्योल्यूशन—सब्बा पुं [अ०] १ वह निश्चित वाक्यांश प्रस्ताव जो किसी व्यवस्थापिका सभा या अथ किसी सभा सस्था के अधिवेशन में विचार और स्वीकृति के लिये उपस्थित किया जाय। प्रस्ताव। तजवीज। जैसे, वे परिषद के आगामी अधिवेशन में राजनीतिक केंद्रियों को छोड़ देने के सवध में एक रेज्योल्यूशन उपस्थित करनेवाले हैं। २ किसी व्यवस्थापिका सभा या अन्य किसी सभा सस्था का किसी विषय पर निश्चय जो एकमत या बहुमत से हुआ है। निराय। मतन्य। जैसे,— इस सवध में कांग्रेस और मुसलिम लीग के रेज्योल्यूशनों में विरोध नहीं है। (ख) पुलस की शासन रिपोर्ट पर जो सरकारी रेज्योल्यूशन निकला है उसमें पुलिम की प्रशंसा की गई है और कहा गया है कि गत वर्ष जो राजनीतिक अपराध नहीं हुए उमका कारण पुलिम की तत्परता और सावधानता है।

रेट—सब्बा पुं [अ०] १ भाव। निख। २ चाल। गति।

रेट पेयर्स—सब्बा पुं [अ०] वह जो किसी म्युनिसिपलिटि को टैक्स या कर देता हो। करदाता। जैसे,—रेट पेयर्स एसोसिएशन।

रेडियम—सञ्ज्ञा पुं० [अं०] एक मूलद्रव्य धातु जिसका पता वैज्ञानिकों को हाल में ही लगा है।

विशेष—यह धातु अत्यंत विलक्षण और अतीव बहुमूल्य है। इसे शक्ति का संचित रूप ही समझना चाहिए। यह उज्वल प्रकाशमय होती है। इसके मिनने से परमाणु मंत्रवी सिद्धांत में बहुत परिवर्तन हुआ है। पहले वैज्ञानिक परमाणु को अयोगिक मूलद्रव्य मानते थे। पर अब यह पता लगा है कि परमाणु भी अत्यंत सूक्ष्म विद्युत्कणों की समष्टि हैं। यह 'कैंसर' जैसे दुःसाध्य रोग तथा धातु रोग की चिकित्सा के काम में भी आती है।

रेडियो—सञ्ज्ञा पुं० [अं०] ध्वनियों को सुनने और भेजने का वेतार का एक यंत्र।

रेणु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. धूल। २. बालू। ३. पृथ्वी। (डि०)। ४. सभालू के बीज। ५. विडम्ब। ६. अत्यंत लघु परिमाण। कणिका। ७. फूल की धूल। पराग (को०)।

रेणुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शस्त्रचालन में प्रयुक्त एक यंत्र (को०)।

रेणुका—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] १. बालू। रेत। २. रज। धूल। ३. पृथ्वी। (डि०)। ४. सभालू के बीज। ५. सहायिणी पर्वत का एक तीर्थ। ६. परशुराम की माता का नाम।

विशेष—रेणुका विदर्भराज की कन्या और जमदग्नि की पत्नी थी। एक वार ये गंगास्नान करने गईं। वहा राजा चित्ररथ को स्त्रियों के साथ जलक्रीडा करते हुए देख रेणुका के मन में कुछ विचार पैदा हुआ। पर वह तुरंत घर लौट आईं। जमदग्नि को उनके मनोविकार का पता लग गया, इससे वे बहुत क्रुद्ध हुए और अपने पुत्रों से उनका वध करने को कहा। और कोई पुत्र तो मातृहत्या करने को राजी न हुआ, परशुराम ने पिता की आज्ञा से माता का वध किया। जमदग्नि ने परशुराम पर अत्यंत प्रसन्न होकर वर माँगने को कहा। परशुराम ने पहला वर यही माँगा कि माता फिर से जीवित हो जायें।

रेणुकासुत—सञ्ज्ञा पुं० [म०] रेणुका के तनय, परशुराम (को०)।

रेणुरुपित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गदहा।

रेणुवास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भ्रमर। भौरा।

रेणुसार, रेणुसारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कपूर।

रेत-कुल्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक नरक का नाम।

रेत मार्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रेतोमार्ग। वह प्रणाली जिससे होकर वीर्य बाहर निकलता हो।

रेत-सेक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मैथुन। सभोग (को०)।

रेत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेतस्] १. वीर्य। शुक्र। २. पारा। पारद। ३. जल। ४. प्रवाह। वहाव। धारा (को०)। ५. पाप (को०)।

रेत^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रेतजा] १. बालू। २. बलुआ मैदान। मरुभूमि। उ०—जँ जँ जानकीस जँ जँ लपन कपीस कहि कूदैं कपि ३। नुकी नचत रेत रेत हैं।—तुलसी (शब्द०)।

रेत^३—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रेतना] लोहार का वह औजार जिससे वह लाहे को रेतता है। रेती।

रेतकुंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेतकुण्ड] १. रेत कुल्या नाम का नरक। २. कुमाऊं में हिमालय पहाड़ पर एक तीर्थस्थान।

रेतज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सतान। श्रीलाद (को०)।

रेतजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बालू (को०)।

रेनन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शुक्र। वीर्य।

रेतना—क्रि० सं० [हिं० रेत] १. रेती के द्वारा किसी वस्तु को रगड़कर उसमें से छोटे छोटे कण गिराना जिससे वह चिकनी या आकार में कम हो जाय।

क्रि० प्र०—ढालना।—देना।

२. किसी वस्तु को काटने के लिये औजार की धार रगड़ना। जैसे,—आरी से रेतना। ३. औजार से रगड़कर काटना। धीरे धीरे काटना। जैसे,—गला रेतना। उ०—(क) भूला सो भूला बहुरि कै चेतु। शब्द छुरी सशय को रेतु।—कबीर (शब्द०)। (ख) लियो छुडाइ चले कर मीजत पीसत दाँत गए रिस रेतें।—तुलसी (शब्द०)। (ग) जाको नाम रेत सो रेतन के वन को।—देवस्वामी (शब्द०)।

रेतल—सञ्ज्ञा पुं० [दिश०] एक पत्नी जिसका रंग भूरा और लवाई छह इंच होती है।

विशेष—यह युक्तप्रात (वर्तमान उत्तरप्रदेश) और नेपाल में नदियों के किनारे रहता है। यह किसी झाड़ी या पत्थर के नीचे घास से प्याले के आकार का घोंसला बनाता है और मूरे रंग के २, ३ अड़े देता है।

रेतला—वि० [हिं० रेतीला] दे० 'रेतीला'।

रेतवा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रेतना] १. वह वस्तु जिससे कोई चीज रेती जाय। २. रेतनेवाला व्यक्ति। वह जो किसी वस्तु को रेतता हो।

रेतस्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वीर्य। शुक्र। २. पारा। ३. जल। ४. दे० 'रेतस्'।

रेता—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रेत] १. बालू। २. मिट्टी। धूल। ३. बालू का मैदान।

रेतिया^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रेत + इया (प्रत्य०)] दे० 'रेता', 'रेती'।

रेतिया^२—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रेतना] रेतनेवाला। रेतवा।

रेती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रेतना] रेतने का औजार।

विशेष—यह लोहे का एक मोटा फल होता है जिमपर खुरदरे दाने से उभरे रहते हैं और जिसे किसी वस्तु पर रगड़ने से उसके महीन कण छूटकर गिरते हैं। इससे सतह चिकनी और बराबर करते हैं।

रेती^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रेत + ई (प्रत्य०)] १. नदी या समुद्र के किनारे पड़ी हुई बलुई जमीन। बालू का मैदान जो नदी या समुद्र के किनारे हो। बलुआ किनारा। उ०—खेलत रही सहेली सँती। पाट जाइ लागा तेहि रेती।—जायसी (शब्द०)। २. नदी की धारा के बीचोबीच टापू की तरह की बलुई जमीन जो पानी घटने पर निकल आती है। नदी का द्वीप। जैसे—गंगा

जी मे इम साल रेती पड जाने से दो धाराएँ हो गई हैं ।

क्रि० प्र०—पडना ।

रेतीला—वि० [हि० रेत + ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० रेतीली] बालु-
वाला । बालुकामय । बलुआ । जैसे,—रेतीला किनारा या
मैदान ।

रेत्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पीतन ।

रेत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रेतस् । शुक्र । २ पीयूष । अमृत । ३
सुगन्धित वृकनी । पटवाम । ४ पारद । पाग (को०) ।

रेना^१—क्रि० सं० [देश०] किसी वस्तु मे डालकर या टिकाकर
लटकाना ।

रेनी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रञ्जनी] वह वस्तु जिससे रंग निकलना हो ।

रेती^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रेना (= लटकाना)] वह अलगनी जिसपर
रंगरेज लोग कपटा रंगकर सूखने को डालते हैं ।

रेनु^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेणु] दे० 'रेणु' ।

रेनुका^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रेणुका] दे० 'रेणुका' ।

रेप—वि० [सं०] १ तिवित्त । २ क्रूर । ३ कृपण ।

रेप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेपस्] बलक । घन्ना । दोप । खराबी ।
उ०—मेरी यही अर्ज है हुजूर कि मेरी पेंशन पर रेप न
आए ।—काया०, पृ० १६६ ।

मुहा०—रेप लगाना = कलक लगाना ।

२ अपराध । पाप (को०) ।

रेफ^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रकार का वह रूप जो अन्य अक्षर के
पहले जाने पर उसके मस्तक पर रहता है । जैसे, सर्प, दर्प,
हर्ष, आदि मे । २ रकार र अक्षर । ३ राग । ४ शब्द ।

रेफ^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेफम्] कलक । दोप । ऐव । रेप ।

मुहा०—रेफ लगाना = दे० 'रेप लगाना' ।

रेफ^३—वि० [सं०] कुत्सित । अधम ।

रेफरी—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह जिससे कोई भगडा निपटाने को कहा
जाय । पच । जैसे,—इस बार फुटबाल मैच मे कप्तान स्वीडन
रेफरी थे ।

रेभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक वैदिक ऋषि जिन्हें असुरो ने एक कुँए
मे डाल दिया था । दम रातें और नौ दिन बीतने पर अश्विनी-
कुमारो ने इन्हें निकाला था । (ऋग्वेद) । २ कश्यपवंशीय एक
दूमर ऋषि ।

रेपयूज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रेपयूज] वह सस्था जिसमे अनाया और
निराश्रयो को अस्थायी रूप से आश्रय मिलता है । जैसे,—
इंडियन रेपयूज ।

रेपयूजी—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] जिसका सब कुछ छीन लिया गया हो ।
घर दार, सपति आदि लूटकर जिन्हें मगा दिया गया हो ।
अनाथ व्यक्ति । निराश्रित वा शरणाधीन ।

रेरिहान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शिर । २ असुर । ३ चोर ।

रेरुआ, रेरुवा—सञ्ज्ञा पुं० [अनु०] बडा उल्लू पक्षी । रुरुआ ।
घुग्घू ।

रेल सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ मटक की वह लोहे की पटरी जिमपर
रेलगाडी के पहिए चलते हैं । २ भाप के जोर से चलनेवाली
गाडी । रेलगाडी ।

विशेष—भाप के इजन मे चलनेवाली गाडी का आविष्कार
पहले पहल सन् १८०२ ई० मे इंग्रैड मे हुआ । तब से इसका
प्रचार बहुत बढ़ता गया, यहाँ तक कि अब पृथ्वी पर बहुत
कम ठेमे मन्त्र देश है जिनमे रेलगाडी न हो ।

यौ० रेल रजिन=रेलगाडी चलाने का यत्र या मशीन ।
रेलगाडी = दे० 'रेल' । रेलमन्त्री = रेल महकमा का सर्वोच्च
मन्त्री । रेलवे ।

रेल^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रेलना] १ बहाव । धारा । उ०—भूपण
भनत जाके एक एक शिखर ने केते धौ नदी नद की रेल उतरति
है ।—भूपण (शब्द०) । २ आधिक्य । भरमार । उ०—सधन
कुज मे प्रमित केलि लखि तनु सुगव की रेल ।—सूर (शब्द०) ।

यौ०—रेन ठेल । रेल पेल ।

रेल ठल—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] ३० 'रेलपेल' । उ०—कहै पदमाकर
हमेना दिव्य वीथिन मो वानन की रेलठेल ठेनन ठिलति है ।—
पदमाकर (शब्द०) ।

रेलना^१—क्रि० सं० [देश०] १ आगे की ओर झोकना । ढकेलना ।
धक्का देना । उ०—(क) एक द्विज छुधित घुस्यो तँह पेली ।
दियो सिपाही ता कहँ रेली ।—रघुराज (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—देना ।

२ अधिक भोजन करना । डूम डूसकर खाना । उ०—फूले बर
वसत वन वन से कहँ मालती नवेली । तापे मदमाते से मधुकर
गूँजत मधुरम रेली ।—हरिश्चन्द्र (शब्द०) ।

रेलना^२—क्रि० अ० ठसाठस भरा होना । अधिक होना । उ०—
फूली माधवी मालती रेलि । फूले ही मधुप करत है केलि ।—
सूर (शब्द०) ।

रेल पेल - सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रेलना + पेलना] १ भीड जिसमे लाग
एक दूसरे को धक्का देते हैं । २ भरमार । अधिकता । ज्यादाती ।

रेलवे—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रेल (= लाइन की पटरी) + वे (रास्ता)]
१ रेलगाडी की सडक । २ रेल का महकमा । जैसे,—वह
रेलवे मे काम करता है ।

रेला—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ तबले पर महीन और सुदर बोलो को
वजाने की रीति । २ जल का प्रवाह । बहाव । तोड । ३
समूह मे चढाई । धावा । दौड । ४ चक्कमचक्का । ५ अधिकता ।
बहुतायत । ६ पाँके । समूह ।

रेलिंग—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] वरामदे आदि पर रोक के लिये लगाया
जानेवाला एक प्रकार का घेरा जो लोहा, काते मिट्टी वा ईट
पत्थरो से बनाया जाता है ।

रेवँछा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक द्विदल अन्न जिसकी दाल खाई जाती है ।
विशेष—इसकी फलियाँ गोल, पतली और लगभग एक वालिशत
लंबी हती हैं । इसके दाने लवोतरे, गोल, उर्द से कुछ बडे और
रंग मे वादामी होते हैं । इसकी लोग दाल खाते हैं ।

रेवत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य के पुत्र जो गुह्यको के अधिपति हैं और जिनकी उत्पत्ति सूर्य की बडवा रूपधारणी सञ्ज्ञा नाम की पत्नी से हुई थी।

रेवद—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] एक पहाड़ी पेड़ जो हिमालय पर ग्यारह बारह हजार फुट की ऊँचाई पर होता है।

विशेष—काश्मीर, नेपाल, भूटान और सिक्किम के पहाडो में यह जगली पेड़ पाया जाता है। इसकी उत्तम जाति तिब्बत के दक्षिणपूर्व भागों और चीन के उत्तरपश्चिम भागों में होती है और रेवद चीनी कहलाती है। हिंदुस्तानी रेवद वैसे अच्छी नहीं होती। उसमें महक भी वैसे नहीं होती जैसी कि चीनी की होती है। बाजारों में इसकी सूखी जड़ और लकड़ी रेवद चीनी के नाम से विकती है और थोपछि के काम में आती है। इसमें क्राइमोफानिक एसिड होता है, जिससे इसका रंग पीला होता है। क्राइमोफानिक एसिड दाद की बहुत अच्छी दवा है। रेवद चीनी रेचक होती है और पेट के दर्द को दूर करती है। यह पौष्टिक भी मानी जाती है।

रेवट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. शूकर। मुअर। २. वेणु। वाँस। ३. विषवैद्य। ४. दक्षिणावर्त शख। ५. बबडर। वायु का आवर्त (को०)।

रेवड़—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] भेड़ बकरी का मुड़। लेहड़ा। गल्ला।

रेवड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] पगी हुई चीनी या गुड़ के लबे लबे टुकड़े जिनपर सफेद तिल चिपकाया रहता है।

रेवड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] पगी हुई चीनी या गुड़ की छोटी टिकिया जिसपर सफेद तिल चिपकाया रहता है।

रेवत^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. जवीरी नीवू। २. आरम्भव वृद्ध। अमल-तास। ३. एक राजा जिसकी कन्या रेवती बलराम जी की व्याही थी।

विशेष—देवी भागवत के अनुसार यह आनर्त का पुत्र और शर्याति का पौत्र था। ब्रह्मा के कहने से इसने अपनी कन्या रेवती बलराम को व्याही थी।

रेवत^२—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रथ + वत (प्रत्य०)] दे० 'रेवता'। उ०—आयाँ भ्रवघेसर सुणो सहोदर, भडा परसपर अक भरे। रेवत गज राजा सुभट समाजा, कर रथ माजा त्यार करे।—रघु० रू०, पृ० २३४।

रेवतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. पारावत। परेवा। २. एक प्रकार का खजूर। पारेवत वृद्ध (को०)।

रेवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. सत्ताईसवाँ नक्षत्र जो ३२ तारों से मिलकर बना है और जिसका आकार मृदग का सा कहा गया है। इस नक्षत्र के अतगत मीन राशि पडती है। २. एक मातृका का नाम। ३. गाय। ४. दुर्गा। ५. एक बालग्रह जो बच्चों को कष्ट देता है। ६. रेवत मनु की माता। ७. बलराम की पत्नी जो राजा रेवत की कन्या थी।

रेवतीभव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शाने।

रेवतीरमण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. बलराम। २. विष्णु।

रेवना—क्रि० सं० [हिं० रेना] दे० 'रेना'।

रेवरा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रेवडा] दे० 'रेवडा'।

रेवरा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की ईख।

रेवरेड—सञ्ज्ञा पुं० [अंग०] पादारियों को सम्मानसूचक उपाधि। जैसे,—रेवरेंड कोलमन।

रेवा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. नर्मदा नदी। २. काम की पत्नी रति। ३. नील का पौवा। ४. दुर्गा। ५. एक प्रकार का साम। ६. एक प्रकार की मछली जो नदियों में पाई जाती है। ७. दीपक राग को एक रागिनी। ८. भारत का वह देशखंड जहाँ नर्मदा नदी बहती है। रोवा राज्य। बवेलखंड।

रेवाउतन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेवा + उत्पन्न] हाथी। (डि०)।

विशेष—पुराने समय में नर्मदा के किनारे हाथी बहुत पाए जाते थे।

रेवेन्यू—सञ्ज्ञा पुं० [अंग०] किसी राजा या राज्य की वार्षिक आय जो मालगुजारी, आबकारी इनकमटैक्स, कस्टम ड्यूटो आदि करो से होती है। आमदे मुल्क। मालगुजारी।

रेवेन्यू बोर्ड—सञ्ज्ञा पुं० [अंग०] कई बड़े बड़े अफसरों का वह बोर्ड या समिति जिसके अधीन किसी प्रदेश के राजस्व का प्रबंध और नियंत्रण हो।

रेवोल्यूशन—सञ्ज्ञा पुं० [अंग०] समाज में ऐसा उलट फेर या परिवर्तन जिससे पुराने सस्कार, आचार, विचार, राजनीति, हठियों आदि का अस्तित्व न रहे। आमूल परिवर्तन। फेरफार। उलट-फेर। क्रांति। विप्लव। २. देश या राज्य की शासनप्रणाली या सरकार में आकस्मिक और भीषण परिवर्तन। प्रचलित शासनप्रणाली या सरकार को उलट देना। राज्यक्रांति। राज्यविप्लव।

रेवोल्यूशनरी—वि० [अंग०] १. राज्य क्रांतिकारो। विप्लवपथी। जैसे,—रेवोल्यूशनरी लीग। २. रेवोल्यूशन सबधी। जैसे,—रेवोल्यूशनरी साहित्य।

रेशम—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १. एक प्रकार का महीन चमकीला और दृढ तंतु या रेशा जिससे कपड़े बुने जाते हैं। यह तंतु कोश में रहनेवाले एक प्रकार के कीड़े तैयार करते हैं।

विशेष—रेशम के कीड़े पिल्लू कहलाते हैं और बहुत तरह के होने हैं, जैसे,—विलायती, मदरासी या कनारी, चीनी, अराकानी, आसामी, इत्यादि। चीनी, ब्रूलू और बड़े पिल्लू का रेशम सबसे अच्छा होता है। ये कीड़े तितली की जाति के हैं। इनके कई कायाकल्प होते हैं। अंडा फूटने पर ये बड़े पिल्लू के आकार में होते हैं और रेंगते हैं। इस अवस्था में ये पत्तियाँ बहुत खाते हैं। शहतूत की पत्ती इनका सबसे अच्छा भाजन है। ये पिल्लू बढ़कर एक प्रकार का कोश बनाकर उसके भीतर हो जाते हैं। उस समय इन्हें कोया कहते हैं। काश के भीतर ही यह कीड़ा वह तंतु निकालता है, जिसे रेशम कहते हैं। कोश के भीतर रहने की अवधि जब पूरी हो जाती है, तब कीड़ा रेशम को काटता हुआ निकलकर उड़ जाता है। इससे कीड़े

पालनेवाले निकलने के पहले ही कोयो को गरम पानी में डालकर कीड़ों को मार डालते हैं और तब ऊपर का रेशम निकालते हैं।

पर्या०—कौशेय । पाट कोशा ।

२ रेशम का सूत रेशा वा बुना हुआ वस्त्र ।

यौ०—रेशम की या रेशमी गांठ = वह ग्रथि, उल्लभन वा समस्या जो जल्दी मुलभन न सके । कोई कठिन काम । रेशमी लच्छा = एक मिश्रण ।

रेशमी—वि० [फा०] १ रेशम का बना हुआ । २ रेशम के समान । रेशम सा ।

रेशा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रेशह्] १ ततु या महीन सूत जो पौधों की छालों अर्थात् से निकलता है या कुछ फलों के भीतर पाया जाता है ।

यौ०—रेशेदार ।

रेप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ क्षति । हानि । २ हिसा ।

रेप^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रेख] दे० 'रेख' ।

रेपण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ घोड़ों का हिनहिनाना । २ बाघ का गरजना, या गुराँना ।

रेपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ घोड़े की हिनहिनाहट । २ बाघ की गुराँहट या दहाड ।

रेस—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ बाजी बदकर दौडना । दौड में प्रतियोगिता करना । २ घुडदौड ।

यौ०—रेसकोर्स । रेस ग्राउण्ड ।

रेसकोर्स—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दौड या घुडदौड का रास्ता या मैदान ।

रेसग्राउण्ड—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दौड या घुडदौड का मैदान ।

रेसम—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रेशम] दे० 'रेशम' । उ०—मुखमडल पै फल कुतल को, कहि रेसम के सम हूमत हैं ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० २१० ।

रेसमान—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रीसमान (= रस्सी)] सुतरी । डोरी । रस्ती । (लशकरी) ।

रेसमी^१—वि० [फा० रेशमी] दे० 'रेशमी' । उ०—रेसमी रेसना रीति भल्ली । सिरि सीस सिदूर सोभा सु मिल्ली ।—पृ० रा०, ६१।१३७५ ।

रेस्टोरेंट—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रेस्तोरां] दे० 'रेस्तरां' ।

रेस्तरां—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रेस्तेरां] जलपानगृह । भोजनालय ।

रेह^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रेचक (= एक प्रकार की मिट्टी या भूमि)] खार मिली हुई वह मिट्टी जो ऊमर मैदानों में पाई जाती है । उ०—(क) जावत खेह रेह दुनियाई । मेघ बूँद अरि भगन तराई ।—जायसी (शब्द०) । (ख) जँह जँह भूमि जरी भइ रेह । बिरह के वाह भई जनु खेह ।—जायसी (शब्द०) ।

रेह^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रेख, प्रा० रेह] दे० 'रेखा' । उ०—नव जल-घर तर चमकए रे जनि दीखुरि रेह ।—विद्यापति, पृ० ५ ।

रेहकला^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रेहकला] दे० 'रेहकला' । उ०—क्या बुर्ज रेहकला तोप किला क्या शीशा दारु और गोला ।—राम० धर्म०, पृ० ६१ ।

रेहन—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रहन्] रुपया देनेवाले के पास कुछ माल जायदाद इस शर्त पर रहना कि जब वह रुपया पा जाय, तब माल या जायदाद वापस कर दे । बचक । गिरवी ।

क्रि० प्र०—करना ।—रखना ।—होना ।

यौ०—रेहनदार । रेहननामा ।

रेहनदार—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] वह जिनके कोई जायदाद रेहन रखी हो ।

रेहननामा—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] वह कागज जिसपर रेहन की शर्तें लिखी हों ।

रेहल—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रिह्ल] पुस्तक रखने की पेंचदार तख्ती । विशेष दे० 'रिहल' ।

रेहा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रेखा, प्रा० रेहा] दे० 'रेखा' । उ०—सिरिहि मिलिल देहा, न कुचे चान रेहा । धामे न पिउल सुगवा ।—विद्यापति, पृ० ६४ ।

रेहुआ—वि० [हिं० रेह] जिसमें रेह बहुत हो ।

रेहू—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रोहू] दे० 'रोहू' ।

रैगना^१—क्रि० अ० [हिं० रैगना] दे० 'रैगना' । उ०—जानु पानि डोलनि जगमगे । मनिमय अंगन रैगन लगे ।—नद० अ०, पृ० २४५ ।

रैगलर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] इंग्लैंड में प्रचलित सर्वोच्च गणित परीक्षा में उत्तीर्ण व्यक्ति ।

रैनी^१—वि० [सं० रमणी या रञ्जित (= रँगी हुई = पगी हुई)] १ दे० 'रमणी' । आशुत । सराबोर । रँगी या पगी हुई । उ०—अति प्रगल्भ बैनी रस रैनी । सो प्रौढा प्रीतम सुख दैनी ।—नद० अ०, पृ० १४७ ।

रै—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ घन दौलत । सपत्ति । २ सोना । स्वर्ण । ३ आवाज । शब्द । ध्वनि [को०] ।

रैअति^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रैअत] दे० 'रैअत' ।

रैक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] लकड़ों या लोहे का खुना हुआ ढाँचा जिसमें पुस्तकें आदि रखने के लिये दर या खाने बने रहते हैं ।

विशेष—यह आलमारी के ढग का होता है, पर भेद इतना ही होता है कि आलमारी के चारों ओर तख्ते जड़े होते हैं और यह कम से कम आगे से खुला रहता है ।

रैकेट—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] टेनिस क खेल में गेंद मारने का डहा जिसका अग्र भाग प्रायः वर्तुलाकार और तान से बना हुआ होता है ।

रैट^१—क्रि० वि० [अ० 'राइट' का आभ्य रूप] ठीक । दुरुस्त । तैयार । उ०—पात दिनों में ही मव काम रैट हो जायगा ।—मैला०, पृ० १३ ।

रैति^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रैअति] दे० 'रैअत' । उ०—और काहू रैति के स्वरूप होइ सोभनीक ताहू कौं ती देपि करि निकट बुलाइए ।—सुदर० अ०, भा० २, पृ० ४६७ ।

रैतिक—वि० [सं०] पीतल संबंधी । पीतल का ।

रैतुवा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रायता] दे० 'रायता' । उ०—रचिर स्वाद वह रैतुवा घृत के विविध विधान ।—रघुराज (शब्द०) ।

रैत्य—सञ्ज्ञा पु० [सं०] पीतल का बना वर्तन ।

रैत्य—वि० दे० 'रैतिक' [को०] ।

रैदाप—सञ्ज्ञा पु० [हि० रवि दाम] १ प्रसिद्ध भक्त जो जाति का चमार था यह रामानन्द का शिष्य और कवीर, पीपा आदि का समकालीन था । २ चमार ।

रैदासी—सञ्ज्ञा पु० [हि० रैदास + ई (प्रत्य०)] १ एक प्रकार मोटा जड़हन धान । २ रैदास भक्त के सप्रदाय का ।

रैन, रैन(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रजनी] रात्रि । उ०—ओही छाँह रैन होइ आवै ।—जायसी (शब्द०) ।

रौं—रैनपति = चंद्रमा । रैनमसि = अषकार । रैनचर ।

रैनचर(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रैन + चर] निशाचर । राक्षस । उ०—हेम मृग होहिं नाह रैनचर जानिया ।—केशव (शब्द०) ।

रैनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रेना] चाँदी या सोने की वह गुत्ली जो तार खींचने के लिये बनाई जाती है ।

रैमय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सोना । मुवर्ण [को०] ।

रैमुनिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० राजमुद्ग (= मोठ)] १ एक प्रकार की अरहर ।

विशेष—यह काले छिलके की और अपेक्षाकृत छोटी होती है । यह जल्द पकती है और खाने में स्वादिष्ट होती है ।

रैमुनिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रायमुनी] १. लाल पत्ती की मादा । रायमुनी ।

रैयत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] प्रजा । रियाया ।

रैया(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० राजा] नरेश । राजा । जैमे, जदुरैया ।

रैयाराव(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० राजा + राव] १ छोटा राजा । २, एक पदवी जो प्राचीन समय में राजा लोग अपने सरदारों को देते थे । उ०—रैयाराव चपति को चढ़ो छत्रसाल सिंह, भूपन भगत गजराज जोम जमके ।—भूपण ३०, पृ० १०५ ।

रैवता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रय् (= गमन करना) + हि० वत (प्रत्य०)] षोडा (हि०) ।

रैवत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक साम मंत्र । २ गुजरात का एक पर्वत जिसपर से अर्जुन ने सुभद्रा का हरण किया था । ३ शंकर । शिव । ४ एक दैत्य जो बालग्रहों में से है । ५ अनर्त देश का एक राजा । वर्तमान कल्प के पाँचवें मनु जो रैवती के गर्भ से उत्पन्न कहे गए हैं । ७ मेघ । बादल ।

रैवत—वि० १. धनी । सपत्तिशाली । २ परिपूर्ण । पर्याप्त । प्रचुर । ३ श्रेष्ठ । भव्य । सुंदर [को०] ।

रैवतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गुजरात का एक पर्वत ।

विशेष—यह आधुनिक जूनागढ़ के पास है और गिरनार कहलाता है । इसी पर्वत पर अर्जुन ने सुभद्रा का हरण किया था ।

रैवतक—वि० सामयिक । समयानुसार मगत [को०] ।

रैवत्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का साम । २. धन । सपत्ति ।

रैसा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेप् (= हिंसा) तुल० हि० रायसा, रासा] भगड़ा । कलह । युद्ध ।

रैहर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रेप (= हिंसा)] भगडा । लडाई ।

रैहाँ—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ एक प्रकार की वनस्पति ।

रौं—गुलेरैहाँ । तुख्मरैहाँ ।

२ सतति । श्रीलाद (को०) । ३ वनीका । गुजारा (को०) । ४. कृपा । मेहरवानी । दया (को०) ।

रौंग—सञ्ज्ञा पुं० [म० रोमक, प्रा० रोश्चक] शरीर पर का बाल । लोम ।

रौंगटा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोमक, प्रा० रोश्चक, + हि० रोगा + टा (प्रत्य०)] मनुष्य के मिर को छोड़कर और सारे शरीर के बाल ।

मुहा०—रौंगटे खडा होना = किसी भयानक या क्रूर कांड को देखकर शरीर में क्षोभ उत्पन्न होना । जी दहलना । रोमाच होना ।

रौंगटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रोन् + टी (प्रत्य०)] खेल में बुरा मानना या बेईमानी करना । उ०—रौंगटि करत तुम खेलत ही में परी कहा यह बानि ।—सूर (शब्द०) ।

रौंगटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [?] धूल । मिट्टी । रज कण ।

रौंठा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] कच्चे आम की सुखाई हुई फाँक । आमकली । अमहर ।

रौंटा(७)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रावत + ई] ठकुराई । रावपन । रौंताई ।

रौंवा(७)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोम] शरीर के बाल । रौंवाँ । लोम । उ०—(क) जानि पछारि जो भा वनवासी । रोव रोव परे फद नगवासी ।—जायसी (शब्द०) । (ख) रोव रोव मानुस तन ठाढ़े । सूतहि सुन वेध अस गाढ़े ।—जायसी (शब्द०) ।

रौंसा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] लोविया की फली । बोडे की फली ।

रौंसा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रौंसा] दे० 'रौंसा' ।

रौंसाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रुजाई] दे० 'रुजाई' ।

रौंसाबा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रोश्चव] रोश्चदाव । प्रभाव । आतक ।

रौंसा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] रूसा घास जिसको जड़ से सुगंधित तेल निकलता है । विशेष दे० 'रूसा' ।

रौंसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रौंसा] रोम । लोम ।

रौंसा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] जमीन में गढा हुआ काठ का कुदा जिसपर रखकर गन्ने के टुकड़े काटते हैं ।

रौंसा(७)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रौंसा] दे० 'रौंसा' ।

रौंसा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रोश्चक] १ ऐसी स्थिति जिससे चल या बढ़ न सकें । गति में बाधा । अटकाव । ट्रेक । अवरौव । जैसे,—इसी बगिचे से होकर गाएँ जाती हैं, उनकी रोक के लिये दीवार उठानी चाहिए । २. मनाही । निषेध । मुमानियत ।

रौंसा—रौंसा टोक ।

३ किसी कार्य में प्रतिबंध । काम में बाधा । ४ वह वस्तु जिससे आगे बढ़ना या चलना रुक जाय । रोकनेवाली कोई वस्तु । जैसे,—ऐसी कोई रोक खड़ी करो जिससे वे इधर न आन पावें । ५. दहेज । तिलक । उ०—एक ठौर व्याह ठोक भी हुआ है, चौ

वह पाँच सौ रोक माँगते हैं। इसी से कुछ श्रटक है।—
ठेठ०, पु० ८।

रोक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोक (= नरुद)] १ नरुद रूपया। रोकए।
उ०—वावन तथा पठावहु दोह जाय दम रोक।—जायनी
(शब्द०)। २ नरुद व्यवहार या भाँसा। ३ दी। ४ धिद्र।
५ नाका। ६ कप। कपकपी (को०)।

रोकमोँक—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] द० 'राकटक'।

रोकटोक—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रोकना + टाकना] १ बाधा। प्रतिप्रध।
२ मनाही। निषय। जन,—इधर न चल जाओ, कोई रोक
टोक करनेवाला नहीं है।

रोकड—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रोक (= नाद)] १ नरुद रूपया पैसा
आदि, विशेषतः वह रकम जिममे सँ ध्राय व्यय होना है। नरुद
रूपया। २ जमा। धन। पूँजी।

मुहा०—रोकड मिलाना = ध्राय व्यय का जोड़ लगाकर यह दखना
कि रकम बढ़ती या घटती तो नहीं है।

यौ०—रोकड बढ़ी। रोकड बक्री।

रोकडवही—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रोकड + वही] वह वही या किताब
जिममे नरुद रूपए का लेन देन लिखा रहता है।

रोकडबित्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रोकड + बिक्री] नरुददान पर की
हुई बिक्री।

रोकडिया—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रोकड + इया (प्रत्य०)] रोकड रखने-
वाला। नरुद रूपया रखनवाला। लजाची। मुनीम।

रोकथाम—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रोकना + थामना] द० 'राकटोक'।

रोकना—क्रि० म० [हिं० रोक + ना (प्रत्य०)] १ गति का गवरोध
करना। चलते हुए को धामना। चलन या बढन न देना।
जैसे,—गाड़ी रोकना, पानी की धार रोकना।

सयो० क्रि०—देना। - लेना।

२ जाने न देना। कही जाने से मना करना। ३ किमी क्रिया
या व्यापार को स्थगित करना। किमी चली जाती हुई जात
को बंद करना। जारी न रखना। ४ मार्ग मे इस प्रकार
पडना कि कोई वस्तु दूसरी ओर न जा सके। छेकना।
जैसे,—रास्ता रोकना, प्रकाश रोकना। ५ श्रुचन डालना।
बाधा डालना। ६ बाज रखना। वर्जन करना। मना
करना। ७ ऊपर लेना। श्रोडना। जैसे,—तलवार को लाठी
पर रोकना। ८ वक्ष मे रखना। प्रतिवध मे रखना। फाँव
मे रखना। सयत रखना। जैसे,—मन को रोकना, इच्छा
को रोकना। ९ बढ़ती हुई मैना या दल का धामना करना।

रोक्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रक्त। लहू। गून (को०)।

रोख(पुं०)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोष] दे० 'रोष'।

रोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० रोगी, रोगन] १ वह श्रवस्था जिससे
शरीर अरुच्यी तरह न चले और जिसके बढ़ने पर जीवत मे
सदेह हो। शरीर अंग करनेवाली दशा। बीमारी। व्याधि।
मर्ज।

पर्या०—गद। णामय। रज। उपनाप। श्रपाटव। श्रम।
माय। श्राफल्य।

रोगकारक—वि० [सं०] रोगी पैदा करनेवाला। व्याधितनक।

रोगकाष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोगम की लक्ष्मी।

रोगग्रस्त—वि० [सं०] रोग से पीडित। रोगी के पटा हुआ।

रोगघ्न—वि० [सं०] रोग को नष्ट करनेवाला (को०)।

रोगघ्न—सञ्ज्ञा पुं० १ दवाई। २ प्रायुर्वेद (को०)।

रोगघ्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] निद्रि रोग। वेद्य। हकीम (को०)।

रोगदर्ई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रोग + ई] १ अन्वय। वेडना।

रोगद्वया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रोगद्वय] १ 'रोगद्वय'। उ०—गेलन
सात परापर उत्पत्ति होत का रोगद्वय।—नुनमी
(शब्द०)।

रोगन—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रोगन] १ तैल। नितागई। २ पतला
तेल जिमे किमी रंगु पर पॉतने से चमक, चिक्कनाई और
रंग धावे। पालिश। बारनिश। ३ नाय आदि मे बना
दुआ मन्त्राला जिमे मिट्टी के वर्तनों प्रादि पर चटाने है। ४
चमके या मुतामक काने के जिमे तुमुम या बरें के तैल से
बनाया दुआ मन्त्राल।

यौ०—रोगनजोडा = एक तरह का साबुन। रोगनदाग = छीकने
वा चमक। रोगनदार। रोगनफरोग = तैलविक्रेता। तैली।

रोगनदार—वि० [फ्रा०] जिगप रोगन किया गया हो। पालिशदार।
चमकीला।

रोगनाशक—वि० [सं०] रोगी वा दूर करनेवाला।

रोगनिदान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोग के लक्षण और उत्पत्ति के कारण
आदि की पहचान। तापीय।

रोगनी—वि० [फा०] रोगन किया हुआ। रोगन लगाया हुआ।
रोगनदार। जैसे,—रोगनी वर्तनी।

रोगपरीसह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] उग्र रोग होने पर कुछ ध्यान न
करके उमका सहन। (जंन)।

रोगप्रेष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बुधवार। ज्वर (को०)।

रोगभू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शरीर। देह (को०)।

रोगधुरारि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ज्वर की एक रसोपय।

विशेष—पारा, गधक, चिप, लोहा, चिपुट और ताबा सम भाग
और शीशा अथ नाग लहर पीस डाले और दो दो रत्तों की
गोलिया बना ले।

रागराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ज्वर। २ क्षय रोग। तपोदक।

रोगशातक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोगशातक] वद्य। हकीम (को०)।

रोगशिला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मन शिला। मँनसिल।

रोगशिल्पी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सानाबू का पेड।

रोगह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दवा। औषध (को०)।

रोगहर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो रोगी का हरण करे। २.
दवा। औषध (को०)।

रोगहा'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोगहन्] वैद्य । चिकित्सक । हकीम [को०] ।
 रोगहा'—वि० [हिं० रोग + हा (प्रत्य०)] रोगयुक्त । रुग्ण । रोगी ।
 रोगहारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोगहारिन्] १ वह जो रोग का हरण
 करे । व्याधि दूर करनेवाला । २ वैद्य । चिकित्सक [को०] ।
 रोगाक्रान्त वि० [सं० रोगाक्रान्त] रोग ने घिरा हुआ । व्याधि मे
 पीड़ित ।
 रोगातुर—वि० [सं०] रोग से घबराया हुआ । व्याधि से पीड़ित ।
 रोगार्त्त—वि० [सं०] रोग से दुखी ।
 रोगाह्वय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कुंउंपय । कुट ।
 रोगिणी—वि० स्त्री० [सं०] ३० 'रोगी' ।
 रोगित्त—वि० [सं०] पीड़ित । रोगयुक्त ।
 रोगित्त—सञ्ज्ञा पुं० कुत्ते का पागलपन ।
 रोगित्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अज्ञोक्त वृद्ध ।
 रोगिया—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रोग + या (प्रत्य०)] रोगी । बीमार ।
 उ०—रोगिया की तो चारै वैदहि जहाँ उपास ।—जायगी
 (शब्द०) ।
 रोगिवल्लभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आँपय । दवा । चिकित्सा [को०] ।
 रोगी—वि० [सं० रोगिन्] [वि० स्त्री० रोगिणी, रोगिनी] जो स्वस्थ
 न हो । जिमकी तबुस्तो ठीक न हो । रोगयुक्त । व्याधिग्रस्त ।
 बीमार । माँदा ।
 रोच(उ)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रुचि] दे० 'रुचि' । उ०—ना काहू से
 दुष्टता, ना काहू से रोच ।—पलटू०, पृ० १५ ।
 रोचक—वि० [सं०] १ रुचिकारक । रुचनेवाला । अच्छा लगनेवाला ।
 प्रिय । २ जिममे मन लगे । मनोरञ्जक । दिलचस्प । जैसे,—
 रोचक वृत्तात ।
 रोचक—सञ्ज्ञा पुं० १ झुधा । भूल । २ कदली । केला । ३ राज
 पलाहु । ४ एक प्रकार की ग्र विपणों जिसे नपाल मे 'भडेउर'
 कहते हैं । ५ काँच की कुपी या शीशी बनानेवाला ।
 रोचकता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोचक होने का भाव । मनोहरता ।
 मनोरञ्जकता । दिलचस्पी ।
 रोचकद्वय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विट लवण और मैधव लवण । (वैद्यक) ।
 रोचन—वि० [सं०] १ अच्छा लगनेवाला । रुचनेवाला । रोचक ।
 २ दीप्तिमान् । शोभा देनेवाला । ३ प्रिय लगनेवाला । ४
 लाल । उ०—वारि भरित भए वारिद रोचन ।—केशव
 (शब्द०) ।
 रोचन—सञ्ज्ञा पुं० १ कूट शात्मनि । काला सेमर । २ कापिल्ल ।
 कमीला । ३ श्वेत शिगु । मफेद सहिजन । ४ पलाहु । प्याज ।
 ५ आरखव । अमनतास । ६ करज । करजुवा । कजा । ७
 अकोट । देरा । ८ दाडिम । अनार । ९ हरिवण पुराण के
 अनुमार रागो के अघिष्ठता एक प्रकार के देवता । १०.
 स्वाराचिप् मन्वतर के इद्र । ११ मार्कंडेय पुराण मे वर्णित
 एक पर्वत का नाम । १२ कामदेव के पाँच वाणा मे से एक ।
 १३. रोनी । रोचना । १४. गीरोचन ।

रोचनक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जवीरी नीवू । २ वशलोचन ।
 रोचनफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विजोग नीवू ।
 रोचना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रक्त कमल । २ गीरोचन ३ श्रृंछ
 स्त्री । ४ यमुदेव की स्त्री । ५ दीप्त आभाश । ६ काला सेमर ।
 ७ वशलोचन । ८ हरिद्रा ।
 रोचनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गामलकी । आँवला । २ गीरोचन ।
 ३ मन शिला । मनमिल । ४ श्वेत त्रिवृता । सफेद निसोथ ।
 ५ कमीटा । ६. स्त्री । ७ तारका । तारा ।
 रोचमान—वि० [सं०] चमकना हुआ । शोभित होता हुआ ।
 रोचमान—सञ्ज्ञा पुं० १ घडे की गर्दन पर की एक भँवरी । २ स्कंद
 के एक अनुचर का नाम ।
 रोचि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रोचिस्] १ प्रभा । दीप्ति । २ प्रकट होती
 हुई शोभा । उ०—साहम के उर मव्य धर्यो कर, जागति,
 रोम की रोचि जनाई ।—केशव (शब्द०) । ३ किरण । रश्मि ।
 रोचित—वि० [सं० रोचिन्] शोभित । उ०—तन रोचित रोचन लहै,
 रचन कचन गातु ।—केशव (शब्द०) ।
 रोचिष्णु—वि० [सं०] १ चमकदार । २ आभूषणों आदि से जग-
 मगाता हुआ । ३ रुचि उत्पन्न करनेवाला । बुभुक्षा (भूख)
 बढ़ानेवाला ।
 रोचिस्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दीप्ति । प्रभा । चमक ।
 रोची—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हिलमोचिका ।
 रोज(उ)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोजन] १ रोना धोना । रुदन । २. रोना
 पीटना । विलाप । स्यापा । उ०—(क) रोज सरोजनि के परै
 हँमी ससी की होय ।—विहारी (शब्द०) । (ख) जहाँ गरव
 तहँ पीग, जहाँ हँमी तहँ रोज ।—जायसी । (शब्द०) ।
 रोज—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रोज] दिन । दिवस । जैसे,—उस गए चार
 रोज हों गए ।
 रोज—अव्य० प्रतिदिन । नित्य । जैसे,—वह हमारे यहाँ रोज आता है ।
 रोजगार—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रोजगार] १ जीविका या वनसचय
 करने के लिये हाथ मे लिया हुआ काम जिसमे कोई बराबर
 लगा रहे । व्यवसाय । धंधा । उद्योग । उद्यम । पेशा । कारदार ।
 मुहा०—रोजगार चमकना = व्यवसाय मे खूब लाभ होना । रोज-
 गार छूटना = जीविका न रहना । रोजगार चञ्चना = कारदार
 मे लाभ होना । व्यवसाय जारी रहना । रोजगार लगना =
 जीविका का प्रबंध होना । गुजर के लिये काम मिलना । रोजगार
 लगना = जीविका का प्रबंध करना । कोई काम देना । निर्वाह
 के लिये कोई मार्ग बताना । रोजगार से होना = निर्वाह के
 लिये किसी काम मे लगना ।
 २ क्रय विक्रय आदि का आयोजन । व्यापार । तिजारत । जैसे,—
 वहाँ गल्ले का रोजगार खूब है ।
 रोजगारी—सञ्ज्ञा पुं० [फा० रोजगारी] रोजगार करनेवाला ।
 व्यापारी । सौदागर । वणिक् ।

रोजनामचा—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रोजनामचद्] १ वह किताब या वही जिसपर रोज का किया हुआ काम लिखा जाता है। दिनचर्या की पुस्तक। २ प्रति दिन का जमा खर्च लिखने की वही। कच्चा चिट्ठा। खाता। ३ दैनिक विवरण लिखने की पुस्तिका। डायरी। दैनिकी। जैसे,—सौर रोजनामचा।

रोजमरा—अव्य० [फ्रा०] प्रतिदिन। हर रोज। नित्य।

रोजमरा—सञ्ज्ञा पुं० नित्य के व्यवहार में आनेवाली भाषा। बोलचाल। चलती बोली।

रोजा—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रोज़द्] १ व्रत। उपवास। २ वह व्रत जो मुसलमान रमजान के महीने से ३० दिन तक रहते हैं और जिसका व्रत होने पर ईद होती है।

क्रि० प्र०—रखना।

मुहा०—रोजा टूटना = व्रत खंडित होना। व्रत का निर्वाह न हो पाना। रोजा तोड़ना = व्रत खंडित करना। व्रत पूरा न करना। रोजा खोलना = दिन भर भूखे रहकर शाम को पहले पहले कुछ खाना।

रोजाना—क्रि० वि० [फ्रा० रोज़ानद्] प्रति दिन। हर रोज। नित्य।

रोजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० रोज़ी] १ रोज का खाना। नित्य का भोजन।

क्रि० प्र०—देना।—मिलना।

यौ०—रोजी रोजगार।

मुहा०—रोजी चलना = भोजन वस्त्र मिलता जाना। रोजी चलाना = भोजन वस्त्र आदि का ठिकाना करना।

२ वह जिसके सहारे किसी को भोजन वस्त्र प्राप्त हो। काम घवा जिससे गुजर हो। जीवननिर्वाह का अवलंब। जीविका। रोजगार। जैसे,—किसी की रोजी लेना अच्छी बात नहीं। ३ एक प्रकार का पुराना कर या महसूल जिसके अनुसार व्यापारियों के चौमासों को एक एक दिन राज्य का काम करना पड़ता था।

रोजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [द्य०] गुजरात में होनेवाली एक प्रकार की कपास जिसके फूल पीले होते हैं।

रोजीदार—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रोजीदार] वह जिसको रोजाना खर्च के लिये कुछ मिलता हो।

रोजीना—क्रि० वि० [फ्रा० रोजीनद्] रोज का। नित्य का।

रोजीना—सञ्ज्ञा पुं० १ प्रतिदिन की मजदूरी। वेतन या वृत्ति आदि। जैसे,—उसको २) रोजीना मिलता है। २ पेंशन। गुजारा (की)। ३ रोज मिलनेवाली खुराक।

रोजीविगाड़—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रोजी + हि० विगाडना] लगी हुई रोजी को विगाडनेवाला। जमकर कोई काम घवान करनेवाला। निखट्ट। निकम्मा।

रोजु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रुजते, प्रा० रुजद्, रोजद्] रोना। रोदन। रुदन। उ०—वरजा पित्तं हँसी और रोजु।—जायसी ग्र०, पृ० १०६।

रोम्—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश० अथवा सं० ऋषय, प्रा०, रोज्म्, रोह] नील गाय। गवय। उ०—

रोट—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रोटी] १. गेहूँ के आटे की बहुत मोटी रोटी। लिट।

विशेष—ऐसी रोटी गरीब लोग खाते हैं या हाथियों को रात में दी जाती है।

२ मोठी मोटी रोटी या पूजा जो हनुमान आदि देवताओं को चढाया जाता है।

रोटफा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] वाजरा।

रोटा(उ)—वि० [हि० रोटी] पिसी हुई। पिसा हुआ। चूर किया हुआ। उ०—औं जाँ छुट्टाई वज्र कर गोटा। विसरहि भुगुति होइ मत्र रोटा।—जायसी (शब्द०)।

रोटिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छोटी रोटी। फुलकी।

रोटिहा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० रोटी + हा (प्रत्य०)] रोटियों पर रहने वाला नौकर। केवल भोजन पर रहनेवाला चाकर। उ०—कहिहौं बलि रोटिहा रावरो बिनु मोलहि विकारंगो।—(शब्द०)।

रोटिहाना—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोटिक + स्थान, हि० रोटी + हान] चूल्हे के पास का वह मिट्टी का छोटा चबूतरा जिसपर रोटियाँ पकाकर रखी जाती हैं।

रोटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ गुंघे हुए आटे की आँच पर सेंकी हुई लोई या टिकिया जो नित्य के खाने के काम में आती है। चपाती। फुलका।

क्रि० प्र०—पकाना।—बनाना।—सँकना।

मुहा०—रोटी पोना = (१) रोटी पकाना। (२) चकले पर बेलकर गुंघे हुए आटे की पतली टिकिया बनाना।

२. भोजन। रसोई। खाना। जैम,—नुम्हारे यहाँ कत्र रोटी तैयार होती है।

यौ०—रोटी दाल।

मुहा०—रोटी कपड़ा = भोजन वस्त्र। खाना कपड़ा। जीवन-निर्वाह की सामग्री। जैसे,—उस औरत ने रोटी कपड़े का दावा किया है। रोटी कमाना = जीविका उपार्जन करना। रोटी को रोना = भूखो मरना। अन्नकण्ट भोगना। किसी बात का रोटी खाना = किसी बात से जीविका कमाना। जैसे,—वह इमी की तो रोटी खाता है। रोटियों का मारा = भूखा। अन्न बिना दुखी। किसी के यहाँ रोटियाँ तोडना = किसी के घर पडा रहकर पेट पालना। बँठे बँठे किसी का दिया खाना। किसी को रोटियाँ लगाना = किसी को खाना पूरा मिलने से मोटाई सूफना। भरपेट भोजन पाने से मोटाई सूफना। भरपेट भोजन पाने से इतराना। दाल रोटी से खुरा = जिसे खाने पाने का अच्छा सुनोता हो। रोटी दाल चलना = जीवन निर्वाह होना। रोटा का पेट = रोटी का वह पार्श्व या तल जो पहले गरम तावे पर ढाला जाता है। रोटी की पंठ = रोटी का वह पार्श्व जो उलटने पर सँका जाता है।

रोटीफल—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रोटी + फल] १ एक फल जो खाने में बहुत अच्छा होता है । २ इस फल का पेड़ ।
विशेष—इसका पेड़ मझोले आकार का होता है और दक्षिण में मद्रास की ओर होता है । इसके पत्ते बड़े बड़े होते हैं ।
रोठा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] बाजरे की एक जाति ।
रोड़^१—वि० [उ०] तुष्ट । प्रीत । कृतार्थ । तोपित [को०] ।
रोड़^२—सञ्ज्ञा पुं० पेपरण । चूर्णोत्तरण [को०] ।
रोड़^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] सडक । रास्ता । राजपथ । जैसे,—हेरिसन रोड़ ।
रोड़वे, रोड़वेज—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ मोटर गाड़ियों के आवागमन की सरकारी व्यवस्था वा तंत्र । २ शासन की ओर से यात्रियों को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जानेवाली मोटर बस गाड़ी ।
रोड़ा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोष्ट, प्रा० लोह] १ ईंट या पत्थर का बड़ा डेला । बड़ा ककड़ । जैसे,—कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा । भानमती ने कुनवा जोड़ा । २ (लाक्ष०) बाधा । विघ्न । रोक । ३. एक प्रकार का पजाबी घान जो बिना सीचे उत्पन्न होता है ।
मुहा०—रोड़ा अटकाना या डालना = विघ्न या बाधा डालना ।
रोड़ा^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० आरट्ट ?] पंजाब की अरोडा नामक जाति ।
रोड़^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रौद्र (= भयकर)] १ मुसलमान । (हिं०) । २. घूप । घाम ।
रोदन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ विलाप करना । क्रदन करना । रोना । उ०—माता ताको रोदन देखि । दुख पायो मन माहि विसेखि ।—सूर (शब्द०) ।
क्रि० प्र०—करना ।—ठानना ।—होना । २ अश्रु । आँसू [को०] ।
रोदनिका, रोदनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जवासा । घमामा [को०] ।
रोदसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ छात्राभूमि । २ स्वर्ग । ३ भूमि । उ०—पूरित है शूरि शूरि रोदसिहि आस पास दिसि दिसि वरपा ज्यो बल निबलति है ।—केशव (शब्द०) ।
रोदा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोघ (= किनारा)] १ कमान की डोरी । धनुष की पतचिका । चिल्ला । उ०—मानो अरविद पै चद्र को चढाय दीनी मानो कमनैत विनु रोदा की कमानै द्वै ।—पद्माकर (शब्द०) । २. मितार के परदे र्वांधने की बारीक तार ।
रोदित—वि० [हिं० रोदन या सं० रुदित] [वि० स्त्री० रोदिता] रोती हुई । उ०—रुव सोई यह दृष्टि रोदित ।—माकेत, पृ० ३४८ ।
रोध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रोक । रूकावट । २ किनारा । तट । ३ बारी । बाधा । घेरा । ४ पर्वत का निम्न भाग या अवसर्पिणी भूमि । गिरिनितय [को०] । ५ स्त्री की कटि । श्रोणि [को०] ।
रोधक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोकनेवाला ।
रोधकत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दृढसहिता के अनुसार माठ सवत्सरो में से पतालीसवाँ सवत्सर ।

रोवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. रोक । रूकावट । अवरोध । २ दमन । उ०—अति क्रोधन रन सोवन सदा अरिबल रोवन पन किए — गोपाल (शब्द०) । ३ बुध ग्रह [को०] ।
रोधना^१—क्रि० सं० [सं० रोधन] रोधना । बाधा डालना ।
रोधवक्रा, रोधवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ तटिनी । न्योतस्विना । नदी । २ तेज बारवाली नदी ।
रोधवप्र—सञ्ज्ञा पुं० [न०] दे० 'रोधवती' [को०] ।
रोध्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अपराध । दोष । पाप । पातक । २ लोभ । लोभ का वृत्त ।
रोध्र पुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मधूक वृत्त । महुआ का पेड़ । २. एक जाति का साँप [को०] ।
रोध्रपुष्पक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का अग्रहनी घान जिसे पुष्पशूक भी कहते हैं [को०] ।
रोध्र पुष्पिणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] घातकी नाम का वृत्त [को०] ।
रोना^१—क्रि० अ० [सं० रोदन, प्रा० रोधन] १ पीडा । दुःख या शोक से व्याकुल होकर मुँह से विशेष प्रकार का स्वर निकालना और नेत्रों से जल छोड़ना । चिल्लाना और आँसू बहाना । रदन करना ।

संयो० क्रि०—उठना ।—देना ।—पढ़ना ।—लेना ।

मुहा०—रोना कलपना या रोना धोना = विलाप करना । रोना पीटना = छाती या सिर पर हाथ मारकर विलाप करना । बहुत विलाप करना । रो बँटना = (किमी व्यक्ति या वस्तु के लिये) शोक कर चुकना । निराश होकर रह जाना । रो रोकर = (१) ज्यो त्यों करके । कठिनता से । दुःख और कष्ट के साथ । प्रसन्नतापूर्वक नहीं । जैसे,—उमने रो रोकर काम किया है । (२) बहुत बीरे बीरे । बहुत रफ रककर । जैसे,—जब रपया देना ही है, तब रो रोकर न्यो देते हो । रो रोकर घर भरना = बहुत विलाप करना । किसी वस्तु को रोना = किमी वस्तु के लिये पछताना या शोक करना । किमी वस्तु का दुःख मानना । जैसे,—किस्मत को रोना । नाम को रोना । रपए को रोना । रोना गाना = बिनती करना । दुःखपूर्वक निवेदन करना । गिडगिडाना । जैसे,—उसने रो गाकर जुमाना माफ कर लिया ।

२ बुरा मानना । रज मानना । चिढ़ना । जैसे,—तुम तो हँसी में रोने लगते हो । ३ दुःख करना । पछताना । जैसे,—रपया दूब गया, अब रो रहे हैं । ४ शिकायत करना । दुःख बयान करना । दुखना रोना ।

रोना^२—सञ्ज्ञा पुं० दुःख । रंज । घेरा । शोक । जैसे—इंधी का तो रोना है ।

मुहा०—रोना आना = दुःख होना । तरस खाना । जैसे,—तुम्हारी शकल पर रोना आता है । रोना पड़ना या रोना पीटना पड़ना = विलाप होना । शोक छाना । जैसे,—घर घर रोना पीटना पट गया ।

रोना^१—वि० [वि०खी० रानी] १ थोड़ी सी बात पर भी दुःख माननेवाला । रोनेवाला । जैसे,—वह रोना आदमी है, उससे मत बोली । २ बात बात में बुरा माननेवाला । चिड़चिड़ा । ३ रोनेवाले का सा । मुहूर्मी । रोवाँसा । जैसे,—रोनी सूरत ।

रोनीघोनी^१—वि० स्त्री० [हिं० रोना घोना] रोने घोनेवाली । शोक या दुःख की चेष्टा बनाए रखनेवाली । मुहूर्मी ।

रोनीघोनी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० रोने घोने की वृत्ति । शोक या दुःख की चेष्टा । मनहूसी । जैसे,—रोनीघोनी पीछे जा, हँसनी खेलनी आगे आ । (स्त्रियाँ) ।

विशेष—स्त्रियाँ बच्चों को नहलाते समय उनका अंग पोछनी हुई उक्त वाक्य कहा करती है ।

रोप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ठहराव । रुकावट । २ मोहन । बुद्धि फेरना । ३ छेद । सुराख । ४ रोपना । पीरे आदि लगाने की क्रिया । रोपण (को०) । ५ वाण । तीर ।

यौ०—रोपशिखी = वाणानि । वाण से उत्पन्न अग्नि ।

रोप^२—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] हल की एक लकड़ी जो हरिस के छोर पर जधे के पार लगी रहती है ।

रोपक—वि० [सं०] १ स्थापित करनेवाला । उठानेवाला । २ स्थित करनेवाला । ३ जमानेवाला । लगानेवाला । ४ सोने चाँदी की एक तौल या मान जो सुवर्ण का ७०वाँ भाग होता है ।

रोपण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० रोपित, रोप्य] १ ऊपर रखना या स्थापित करना । २ लगाना । जमाना । वैठाना (बीज या पौधा) । ३ स्थापित करना । खड़ा करना । उठाना (दीवार आदि) । ४ मोहित करना । मोहन । ५ विचारों में गडबडी डालना । बुद्धि फेरना । ६ घाव का सूखना या उसपर पपड़ी बँधना । ७ घाव पर किसी प्रकार का लेप लगाना । ८ तीर । वाण (को०) ।

रोपना^१—क्रि० सं० [सं० रोपण] १ जमाना । लगाना । वैठाना । २ पौधे को एक स्थान से उखाड़कर दूसरे स्थान पर जमाना । पौधा जमीन में गाडना । ३ अडाना । ठहराना । स्थापित करना । दृढता के साथ रखना । उ०—बीच समा अंगद पद रोप्यो, टरघो न, निसिचर हारे ।—सूर (शब्द०) । ४ बीज रखना । बोना । जैसे,—बीज रोपना । ५ कोई वस्तु लेने के लिये हथेली या कोई बरतन सामने करना ।

मुहा०—हाथ रोपना = माँगने के लिये हाथ फैलाना ।

मयो० क्रि०—देना ।—जेना ।

रोपना^२—क्रि० सं० [हिं० रोक] दे० 'रोकना' । उ०—राजहिं तहाँ गएउ लेइ कालू । होइ सामृहँ रोपा देवपालू ।—जायमी (शब्द०) ।

रोपनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रोपना] रोपने का काम । घान आदि के पौधे को गाडने का काम । रोपाई । जैसे,—आजकल रोपनी हो रही है ।

रोपित—वि० [सं०] १ लगाया हुआ । जमाया हुआ । २ स्थापित । रखा हुआ । ३, मोहित । आत । ४, उठाया हुआ । खड़ा

किया हुआ । ५ लक्ष्य या निशाने पर साधा हुआ । जैसे, वाण (को०) ।

रोव—सञ्ज्ञा पुं० [प्र० रथव] [वि० रोमीला] बडप्पन की धाक । आतक । प्रभाव । दबदबा । तेज । प्रताप ।

यौ०—रोवदार । रोवदार ।

मुहा०—रोव जमाना = बडप्पन की धाक पैदा करना । आतक उत्पन्न करना । रोव मिट्टी में मिलना = बडप्पन की धाक न रह जाना । प्रभाव नष्ट होना । रोव टिखलाना = बडप्पन का प्रभाव डालना । आतक उत्पन्न करनेवाली चेष्टा प्रकट करना । रोव में आना = (१) आतक के कारण कोई ऐसी बात कर डालना जो यो न की जाती हो । दबदबे में पड जाना । बडप्पन की चेष्टा देख प्रभावित होना । (२) भय मानना ।

रोवगव—सञ्ज्ञा पुं० [प्र०] आतक । दबदबा । प्रभाव ।

रोवदार—वि० [अ०] जिगजी चेष्टा से तेज और प्रताप प्रकट हो । रोव दाववाला । भडकीला । प्रभावगामी । तेजस्वी ।

रोमथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोमथ] १ मीगवाले चौपाये का निगले हुए चारे को फिर से मुँह में लाकर धीरे धीरे चराना । जुगाली । पागुर । २ लगातार दोहराना । अनवरत आवृत्ति (को०) ।

रोमथन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोमथन] दे० 'रोमथ' । उ०—स्वर्णाचला अहा खेतों में उतरी मँव्या श्याम परी । रोमथन करती गाएँ आ रहीं रौंदती पास हरी ।—रेणुका, पृ० ।

रोम^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोमन्] १. देह के बाल । रोयाँ । लोम ।

यौ०—रोमराज । रोमावली । रोमलता ।

मुहा०—रोम रोम में = शरीर भर में । रोम रोम में रमना = भीतर बाहर सर्वत्र व्याप्त होना । उ०—कवीर प्याला प्रेम का अतर लिया लगाय । रोम रोम में रमि रहा, और अमल क्या खाय ।—कवीर सा० सं०, पृ० ५० । रोम रोम से = तन मन से । पूर्ण हृदय से । जैसे,—रोम रोम से आशीर्वाद देना ।

२ ऊन । ऊर्ण । उ०—दामी दास वामि दास रोम पाट को कियो । दायजी विदेह राज भाँति भाँति को कियो ।—केशव (शब्द०) । ३ चिड़ियों का पर । पल (को०) ।

४ मच्छलियों का बल्क या शल्क (को०) । ५ एक जतपद का नाम । दे० 'रोमक' ।

रोम^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ छेद । छिद्र । सुराख । २ जल । पानी ।

यौ०—रोमनिलय = चमडा जिसके छेद में रोएँ निकलते हैं ।

रोमकद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोमकन्द] वह कद जिममें रोएँ हो । पिठालू (को०) ।

रोमक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ साँभर फील का नमक । साकभरी लवण । पाशू लवण । २ एक प्रकार का चुबक (को०) ।

रोमक^२—सञ्ज्ञा पुं० १ रोम नगर का वासी । रोम देश का मनुष्य । रोमन । २ रोम नगर या देश । ३ ज्योतिष सिद्धांत का एक भेद ।

रोमकणक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खरगोश । खरहा ।

रोमकूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शरीर के वे छिद्र जिनमें से रोएँ निकले हुए होते हैं । लोमछिद्र ।

रोमकेशर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंवर । चामर ।

रोमगत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रोमकूप' [को०] ।

रोमगुच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चंवर । चामर ।

रोमद्वार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रोमकूप' ।

रोमन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] रोम देश का निवासी ।

रोमन कैथलिक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] ईसाइयों का प्राचीन संप्रदाय ।

विशेष—इस संप्रदाय में ईसा की माता मरियम की, तथा अनेक सत महात्माओं की उपासना चलती है और गिरजी में मूर्तियाँ भी रखी जाती हैं ।

रोमपाट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ऊनी कपड़ा । दुशाला आदि । उ०—चामर चरम बसन बहु भाँती । रामपाट पट अगानेत जाता ।—तुलसी (शब्द०) ।

रोमपाद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अग देश के एक प्राचीन राजा जिनका उल्लेख वाल्मीकीय रामायण के बालकांड, सर्ग ६ में है ।

विशेष—यह राजा बड़ा अन्यायी और अत्याचारी था । इसके पापों से एक बार भयंकर अनावृष्टि हुई । राजा ने शास्त्रज्ञ ब्राह्मणों को बुलाकर उपाय पूछा । सबने ऋष्यशृंग मुनि को बुलाकर उनके साथ राजकन्या शाता का विवाह कर देने को राय दी । वैश्याओं के प्रयत्न से ऋष्यशृंग मुनि लाए गए और खूब वृष्टि हुई । तब राजा ने अपनी कन्या शाता उन्हें व्याह दी ।

रोमपुलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोमाच । रोओ का खडा होना [को०] ।

रोमवद्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह वस्त्र जो रोयों से बँधा या बुना हो ।

रोमवद्ध^२—वि० जो रोयों से बँधा या बुना हो ।

रोमभूमि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चमड़ा । त्वक् । रामनिभय ।

रोमरध्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोमरुद्र] दे० 'रोमकूप' [को०] ।

रोमराजि, रोमराजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रोमावलि । रायों की वह पक्ति जो पेट के बीचो बीच नाभ से ऊपर की ओर जाती है ।

रोमराजीव(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोमराजी] दे० 'रोमराजी' । उ०—उर बीच रोमराजीव रेख । गुह राह मेर मधि चल्थो भेष ।—पृ० रा०, २।२७४ ।

रोमलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोमावलि । रोमराजी । उ०—कृति अति सूक्ष्म उदर द्युति चलदल दल उपमान । रोमलता तन धूम अति चारु चिरीन समान ।—केशव (शब्द०) ।

रोमविकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रोमहर्ष' [को०] ।

रोमविक्रिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'रोमहर्ष' [को०] ।

रोमशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] काष्ठमार्जार । वृक्षशायिका । चमर-पुच्छ [को०] ।

रोमश^१—वि० [सं०] १ रोएँदार । २. ऊनी । ३ क्रिया के सदोप उच्चारण से युक्त ।

रोमश^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भेंड । मेप । २ शूकर । सुअर । ३ पिंडानु । कुभी । ४ योनि । भग [को०] ।

रोमशा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दग्वा नाम का वृक्ष । २ वृहस्पति की कन्या लोमशा ।

रोमशातन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. रोओ का उखाडना । २. जँनियों का एक तप । केशलुचन [को०] ।

रोमसूची—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बालों को व्यवस्थित रखने के लिये लगाया जानेवाला काँटा ।

रोमहर्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोगटे खडे होना । रोमाच । पुलक ।

रोमहर्षण^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रोयों का खडा होना जो आनंद के सहसा अनुभव से अथवा भय से होता है । २ वेदव्यास का शिष्य, सूत पौराणिक ।

रोमहर्षण^२—वि० जिससे रोगटे खडे हो । भयंकर । भीषण । जैसे,—रोमहर्षण घटना ।

रोमाकुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोमाकुर] दे० 'रोमाच' ।

रोमाच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोमाञ्च] १ आनंद से रोया का उभर आना । पुलक । २ भय से रोगटे खडे होना ।

रोमाचक—वि० [सं०] रोमाञ्च + क (प्रत्य०)] रोमाचकारी । भयानक । रोमाच पैदा करनेवाला । उ०—सदियों के अत्याचारी की सूची यह रोमाचक ।—गाम्था, पृ० १४ ।

रोमाचिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोमाञ्चिका] रदती नाम की लता [को०] ।

रोमाचित—वि० [सं०] रोमाञ्चित] १ पुलकित । हृष्टरोमा । २ भय से जिसके रोगटे खडे हो गए हो ।

रोमाटिक—वि० [अ०] रोमैटिक] जिसमें रोमास हो । उ०—तुलसी निपेव के कवि नहीं हैं, वह सहज अपावन नारि के सौंदर्य-वर्णन में हर रोमाटिक कवि को परास्त करने के लिये तत्पर हैं ।—प्र० सा०, पृ० ३३ ।

रोमातिका मसूरिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोमान्तिका मसूरिका] चंचक की तरह का एक रोग जिसमें रोमकून के समान महीन महीन दाने शरीर भर में निकलते हैं और कई दिनों तक रहते हैं । खाँसी, ज्वर और श्रद्धा भी रहती है । इस रोग को छोटी माता भी कहते हैं ।

रोमास—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ प्रणयकथा । प्रेमकहानी । २ साहित्यिक कथा । ३ वह कथा या घटना जिसमें अद्भुत साहस, प्रेम-प्रसंगों आदि का रोमाचक वर्णन हो । ४ प्रणयव्यापार ।

रोमाप्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोएँ की नोक ।

रामानी—वि० [अ०] रोमास] दे० 'रुमानी' ।

रोमाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोया की पक्ति । रोमावली । रोमराजी ।

रोमालु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पिंडालु [को०] ।

यौ०—रोमालु'विटपी = कु भी वृक्ष ।

रोमावलि, रोमावली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोया की पक्ति जो पेट

के बीचोबीच नाभि से ऊपर की श्रोर गई होती है। रोमाली। रोमराजी। उ०—नाभि हृद रोमावली अलि चार सहज सुभाव। - मूर (शब्द०)।

रोमिल—वि० [म० रोम + इल (प्रत्य०)] रोएँदार। रोमवाला। उ०—वहाँ गिलहरी दौडा करती तह जाली पर, चचल लहरी सी मृदु रोमिल पूँछ उठाकर।—ग्राम्या, पृ० ७५।

रोमोद्गम—सञ्ज्ञा पु० [सं०] रोयो का हर्ष या भय से खडा होना।

रोमोद्भेद—सञ्ज्ञा पु० [सं०] रोमहर्ष।

रोयाँ—सञ्ज्ञा पु० [सं० रोमन्] वाल जो सब दूब पिलानेवाले प्राणियों के शरीर पर थोटे या बहुत उगते हैं। लोम। रोम।

क्रि० प्र०—उखडना।—निकलना।—जमना।

मुहा०—रुफ रोयाँ न उखडना = कुछ भी हानि न होना। रोया खडा होना = हर्ष या भय से रोमकूपो का उभरना। रोयाँ दुखित होना = अत्यत माननिक वेदना होना। रोयाँ पसीजना = हृदय में दया उत्पन्न होना। करुणा होना। तरस होना। तरस आना। उ०—ईगुर भा पहार जो भोजा। पै तुम्हार नहि रोयाँ पसीजा जायसी।—(शब्द०)।

रोर^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० रवण] १ बहुत से लोगों के मुँह से निकलकर उठी हुई समिलित ध्वनि। कलकल। हल्ला। कोलाहल। रौला। शोरगुल। चिल्लाहट। उ०—(क) परी भोर ही रोर लक गढ़, दई हाँक हनुमान।—तुलसी (शब्द०)। (ख) जिनके जात बहुत दुख पायो, रोर परी एहि खेरे।—सूर (शब्द०)।

क्रि० प्र०—उठना।—करना।—पडना।—मचना।

२ बहुत से लोगों के राने चिल्लाने का शब्द। उ०—घरी एक सुठि भएउ भँदोरा। पुनि पाछे बीता होइ रोरा।—जायसी (शब्द०)। ३ घूम। धमासान। उपद्रव। हलचल। आदालन।

रोर^२—वि० १ प्रचंड। तेज। दुर्दमनीय। उ०—(क) देव बदीछोर, रन रोर केसरीकिसोर, जुग जुग तेरे वर विन्द विराजे है।—तुलसी (शब्द०)। (ख) ते रन रोर कयीस किसोर बडे बरजोर परे फंग पाए।—तुलसी (शब्द०)। २. उपद्रवी। उद्वत। दुष्ट। अत्याचारी। उ०—(क) आपनी न बूझ, न कहे को राड रोर रे।—तुलसी (शब्द०)। (ख) तालाने को बाँधवो, बध रोर को, नाय के साथ चिता खरिए जू।—केशव (शब्द०)।

रोरा^१—सञ्ज्ञा पु० [हि० रोड़े] चूर गाँजा।

रारा^१—सञ्ज्ञा पु० [हि० रोर] ३० 'रोर'।

रोरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रोचनी] हलदी चूने से बनी हुई लाल रंग की बुकनी जिसका तिलक लगाते हैं। रोली। उ०—मुख मखित रोरी रंग सँदुर माँग छुही।—सूर (शब्द०)।

क्रि० प्र०—लगाना।

रोरी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० रोर] चहल पहल। घूम। उ०—सकल सुदग भ्रग भरी भोरी। पिय निरत मुमकनि मुख मोरी, परि-रभन रस रोरी।—हरिदास (शब्द०)।

रोरी^३—वि० [हि० रुरा] सुदर। शँकर। उ०—स्याम तनु राजत

पीत पिछोरी। उर वनमाल काछनी काछे, कटि किंकिनि छवे रोरी।—सूर (शब्द०)।

रोरी^४—सञ्ज्ञा पु० [हि० रोली] लहमुनिया नग। एक प्रकार का रत्न।

रोर दा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अत्यत रुदन श्रौर विलाप।

रोलव^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० रोलम्ब] १ भ्रमर। भीरा। भँवर। २ सुखी जमीन।

रोलव^२—वि० विश्वास न करनेवाला। अविश्वासी।

रोल^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रवण, हि० रोर] १ रोर। हल्ला। कोलाहल। २ शब्द। ध्वनि। उ०—घाजु भोर तमचुर की रोल। गोकुल में आनद होत है, मगल धुनि महगने ढोल।—सूर (शब्द०)।

रोल^४—सञ्ज्ञा पु० पानी का तोड़। रेला। बहाव।

रोल^५—सञ्ज्ञा सं० [देश०] रुखानी की तरह का एक औजार जिमने वर्तन की नक्काशी की जमीन साफ की जाती है।

रोल^६—सञ्ज्ञा पु० [सं०] हरा अदरक।

रोल^७—सञ्ज्ञा पु० [अ०] १ नामो की तालिका या फेहरिस्त। २ नाटक या चलचित्र में अभिनेता को भूमिका। उ०—पतजी ने एक नए मसीहा का रोल भी अख्तियार किया।—प्र० सा०, पृ० ४६। २ जीवन में किए जानेवाले विशिष्टताव्यजक कार्य। जैसे,—पुत्र के चरित्रनिर्माण में माता का रोल महत्वपूर्ण होता है।

रोलनवर—सञ्ज्ञा पु० [अ०] नामो की तालिका या सूचो का क्रम। क्रमसख्या।

रोलर—सञ्ज्ञा पु० [अ०] १ दुलकनेवाली वस्तु। बेलन। वेनना। २ छापेखान में स्याही देने का बेलन।

विशेष—यह सरस और गुड मिलाकर बनता है। इसी पर स्याही लगाकर टाइपो पर फेरा जाती है।

रोलर फ्रेम—सञ्ज्ञा पु० [अ०] बेलन को कमानो।

विशेष—इसमें रोलर लगाकर स्याही तथा टाइपो पर फेरते हैं। यह लोह का एक हलका सा घेरा हाता है जिसमें एक पंचदार छड लगी होती है। ऊपर काठ को दा मुठ्या होती है जिन्हे पकडकर सिल पर स्याही पीसते हैं और हरफा पर फेरते हैं।

रोलर मोल्ड—सञ्ज्ञा पु० [अ०] सरस का बेलन ढालने का साँचा।

विशेष—यह दो प्रकार का होता है—(१) चोगा, जिसमें से बेलन ढेलकर निकाला जाता है। बेलन ढालते समय इसमें पीसी खडिया तथा रेडी का तेल लगा दिया जाता है जिसमें मोल्ड में सरस न पकड ले। (२) दोफाका, जिसके पल्ले अलग अलग होते हैं। इन्हे खोल देन से रोलर सहज में निकल आता है।

रोला^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० रावण] १ रोर। शोरगुल। कोलाहल। हल्ला। २ धमासान युद्ध।

रोला^२—सञ्ज्ञा पु० [हि०] एक छद जिसके प्रत्येक चरण में ११ + १३ के विश्राम से २४ मात्राएँ होती हैं। किसी किसी का मत है, इसके अत में दो गुरु अवश्य आने चाहिए, पर यह सर्वसमत नहीं है।

रोला^१—सञ्ज्ञा पुं [दश०] जूठे वरतन मँजने का काम । चौका वरतन करने का काम ।

रोली—मञ्ज खी० [सं० रोचनी] १. चूने हलदी से बनी हुई लाल बुकनी जिसका तिलक लगाते हैं । श्री ।

विशेष—लोहे की कडाही में चूने का पानी भरकर उममें हल्दी खटाई श्री सोना गलाने का सुहागा डालकर अग्नि पर पकाते हैं । पीने सुखाकर छान लेते हैं ।

२ एक नग । लहसुनिया ।

रोवेँ—सञ्ज्ञा पुं [हिं० रोम] रोम । रोवाँ । लोम । उ०—उहि समुद महँ राजा परा । चहै जरै पँ रोवेँ न जरा ।—जायसी ग्रं०, पृ० २२४ ।

रोवनहार, रोवनहारा(पु)—सञ्ज्ञा पुं [हिं० रोवना + हार = हारा (प्रत्य०)] १ रोनेवाला । २ किसी के मर जाने पर उसका शोक करनेवाला कुटुंबी । उ०—राम विमुख अस हाल तुम्हारा रहा न कुल कोउ रोवनहारा ।—तुलसी (शब्द०) ।

रोवना^१—क्रि० अ० [प्रा० रोवण] दे० 'सोना' ।

रोवना—वि० [वि० खी० रोवनी] १ बहुत जल्दी रोनेवाला । बहुत जल्दी बुरा माननेवाला । २. हँसी या खेल में भी बुरा मान जानवाला । चिढ़नेवाला । उ०—तहौ न पायो मुयस आजु रोवना सब बोलै ।—विश्राम (शब्द०) ।

रोवनिहारा(पु)—वि० [हिं०] दे० 'रोवनहारा' । उ०—राम विमुख अस हाल तुम्हारा । रहा न कोउ कुल रोवनिहारा ।—मानस, ६।१०३ ।

रोवनी धोवनी^१—सञ्ज्ञा खी० [हिं० रोवना धोना] रोनी धोनी । रोने धोने की बुरा । दुख या शोक की चेष्टा । मनहूसी । दे० 'रोनी धोनी' । उ०—सुख नीद कहति आली आइही । रोवनि धोवनि, अनखानि, अनरसनि डीठि मूठि निठुर नसाइही । हंसनि खेलनि, किलकनि आनंदनि भूपति भवन बसाइही ।—तुलसी (शब्द०) ।

रोवाँ^१—सञ्ज्ञा पुं [हिं० रोवाँ] दे० 'रोवाँ' ।

रोवासा—वि० [हिं० रोवना] [वि० खी० रोवासी] जो रोने पर तैयार हो । जो रो देना चाहता हो ।

रोशन—वि० [फा०] १ जलता हुआ । प्रदीप्त । प्रकाशित । जैसे,—चिराग रोशन करना । २. प्रकाशमान । चमकदार । ३. प्रसिद्ध । मशहूर । जैसे, नाम रोशन होना ।

कि० प्र०—करना ।—होना ।

४ प्रकट । जाहिर । जैसे,—जो बात है, वह आप पर रोशन है ।

मुहा०—किसी पर रोशन होना = किसी पर जाहिर होना । प्रकट होना । मालूम होना ।

रोशन चौकी—सञ्ज्ञा खी० [फा०] डूँक कर बजाने का एक वाजा । शहनाई का वाजा । नफीरी ।

विशेष—इसे प्रायः पाँच आदमी मिलकर बजाते हैं । एक केवल स्वर भरता है, दो उसने द्वारा राग रागिनी का गान करते हैं, एक नगाड़ा या दुक्कड़ बजाता है और एक भीरु के द्वारा

तान देता है । यह वाजा प्रायः देवस्थानों या राजा वाजुओं के द्वा० पर पहर पहर पर बजाया जाता है । इसी से चौकी कहलाता है ।

रोशन जमीर—वि० [फा० रोशन + जमीर] उज्वल मनवाला । जिनका हृदय स्वच्छ हो । साफदिल । उ०—नव मलूक रोशन जमीर होय पाँच पमारै सोवै ।—मल्लू०, पृ० ४ ।

रोशनदान—सञ्ज्ञा पुं [फा०] प्रकाश आने का छिद्र । गवाक्ष । मोला ।

रोशनार्ह—सञ्ज्ञा खी० [फा०] १ अक्षर लिखने की स्याही । काली । ममि । स्याही । २ प्रकाश । रोशनी । उजाला । उ०—घाट घाट वाट वाट हाट हाट दीप टाठ जागी रोशनार्ह जगती के ग्राम ग्राम में ।—रघुराज (शब्द०) ।

रोशनी—सञ्ज्ञा खी० [फा०] १ उजाला । प्रकाश । २. दीपक । चिराग । जैसे,—रोशनी लाओ तो नूझ । ३ दीपमाला का प्रकाश । दीपका की पाले का उजाला । जँच,—इस खुशी में जहूर भर राशनी हुई । ४ ज्ञान का प्रकाश । शिक्षा का प्रकाश । जैसे—नई रोशनी के युवक ।

रोप—सञ्ज्ञा पुं [सं०] [वि० रुष्ट] १ क्रोध । कोप । गुस्सा । २. चिढ़ । कुहन । ३. वैर । विरोध । द्वेष । उ०—भूलि गयो सब सो रस रोप मिटै भव क मम रँनि बतौ ।—केशव (शब्द०) । ४ लडाई की उमग । जोश । उ०—विगन जलद नभ नील खडग यह रोप उठावत ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) ।

रोपण^१—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ पारा । २ कर्गटो । ३ ऊसर जमीन ।

रापण^१—वि० [वि० खी० रापणी] क्रोध करनेवाला । क्रुद्ध ।

रोपणता—सञ्ज्ञा खी० [सं०] क्रोध । कोप । रोपयुक्त हाना [को०] ।

रोपान्वित—वि० [सं०] क्रुद्ध ।

रोपित—वि० [सं०] क्रुद्ध । नाराज । रूठ ।

रोपी—वि० [सं० रोपिन्] रापयुक्त । क्रोध । गुस्मावर । उ०—तापस नृपहि वदत पशितोपी । चला महाकपटी अति रापी ।—तुलसी (शब्द०) ।

रोस^१—सञ्ज्ञा पुं [सं० रोप] दे० 'रोप' ।

रोस^१—सञ्ज्ञा खी० [हिं० रोस] दे० 'रोस' ।

रोसना(पु)—क्रि० म० [हिं० रोस + ना (प्रत्य०)] क्रुद्ध होना । उ०—मुरगी की मामता ह, बभरी का रामता है ।—पुं० ग्रं०, भा० २, पृ० ४०४ ।

रोसनाई—मञ्ज खी० [हिं० रोसनाई] दे० 'रोसनाई' ।

रोसनी—सञ्ज्ञा खी० [हिं० रोसनी] दे० 'रोसनी' ।

रोसा—सञ्ज्ञा पुं [सं० रोसिन्] रसा नामक गुणयुक्त पान ।

रोसारी—वि० [सं० रोसाल] प्रकटि स क्रोधो । रोपयुक्त ।

रोसारो(पु)—वि० [हिं० रोसार + रो (प्रत्य०)] रोप करनेवाला । उ०—धूँहट सब तनत छदधाने । रोसपान प्रतर्ष राजसे ।—रा० २, पृ० १३ ।

हुया पक्का रंग जो चीजो पर चमक आदि लाने के लिये चढाया जाता है ।

रौगनी—वि० [अ० रौगनी] १ तेल का । २ रोगन फेरा हुआ । जिसपर लाख आदि का पक्का रंग चढाया गया हो । जैसे,— रौगनी बरतन ।

रौचनिक^१—वि० [सं०] १ गोरोचन या रोली सबधी । २ गोरोचन या रोली स रंगा हुआ । ३ गोरोचन के रंग का ।

रौचनिक^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दाँतो पर जमी हुई मल ।

रौच्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बित्वद्वय धारण करनेवाला सन्यासी । २ एक मनु । तेरहवें मनु का नाम (को०) । ३ बेल के पेड़ का पचाग अर्थात् जड़, डाली, पत्ती, फूल, फल (को०) ।

रौजन—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० रौज़न] १ छिद्र । तिल । मुरास । २ दरार । दरज । ३ गवाक्ष । मोखा । रोषनदान ।

रौजा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० रौजह्] १ वाग ; बगीचा । २ बड़े पीर, वादशाह या सरदार आदि की कन्न के ऊपर बनी हुई इमारत । बड़े लोगो की कन्न । समाधि । जंमे,—ताज प्रीती का रौजा ।

रौता—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रावत] ससुर । श्वसुर ।

रौताइन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० राव, रावत] १ राव या रावत की स्त्री । ऊँचे पद की स्त्री । ठकुराइन । २. स्त्रियो के लिये आदर-सूचक संबोधन । ३ † कहार की स्त्री । कहारिन ।

रौताई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रावत + आई (प्रत्य०)] १ राव या रावत होने का भाव । २ राव या रावत का पद । ठकुराई । सरदारी । उ०—(क) दानि कहाउव श्री कृपनाई । होइ कि खेम कुसल रौताई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) मीठो अरु कठवति भरो, रौताई श्री पेमा ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) रौताई श्री कूमल पेमा ।—जायसी (शब्द०) ।

रौदा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रोदा] दे० 'रोदा' ।

रौद्र^१—वि० [सं०] १ रुद्र सबधी । २ अत्यंत उग्र श्रीर प्रचंड । भयकर । डरावना । ३ क्रोधपूर्ण या क्रोधसूचक । गजप्रनाक ।

रौद्र^२—सञ्ज्ञा पुं० १ क्रोध । गुस्सा । रोष । २ काव्य के नौ रसो मे से एक जिसमे क्रोधसूचक शब्दो और चेष्टाओ का वर्णन होता है । ३ घूप । घाम । ४ यमराज । ५ ग्यारह मात्राओ के छंदो की सञ्ज्ञा जो सब मिलाकर १४४ हो सकते हैं । ६ साठ सवत्सरो मे से ५४वाँ सवत्सर । ७ एक प्रकार का अस्त्र । ८ एक केतु जिसकी चोटी नोकीला और ताम्रवर्ण कही गई है ।

रौद्रकेतु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वृहत्संहिता के अनुसार आकाश के पूर्व दक्षिण मार्ग मे शूल के अग्रभाग के समान कपिश (कपासी), रूद्र (रूखा), ताम्रवर्ण किण्वो से युक्त और आकाश के तीन भाग तक मे गमन करनेवाला एक केतु ।

रौद्रता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ डरावनापन । भयकरता । भीषणता । २ प्रचंडता । प्रखरता । उग्रता ।

रौद्रदर्शन—वि० [सं०] देखने मे डरावना । भयकर रूप का । भीषण आकृति और चेष्टावाला ।

रौद्रार्क—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] '३ मात्राओ के छंदो की सञ्ज्ञा जो मय मिनाक ४६, ३६८ प्रकार के हो मन्ने हैं ।

रौद्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ रुद्र की पत्नी, गार्गी । देवी । २ गावार म्वर की दो श्रुतियो मे से पहली श्रुति ।

रौन(ु)—पक्ष पुं० [सं० रमण] दे० 'रमण' ।

रौनक—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० रौनक] १ वर्ग श्रीर आकृति । रूप । २ चमक दमक । तेज । दीप्ति । शक्ति । जंमे—चेहरे पर रौनक होना । ३ प्रफुल्लता । विकास । जंमे—मुनते ही चेहरे को रौनक उठ गई । ४ घोभा । छटा । चहल पहल । मुहावनापन । जंमे—व्यापार गिर जाने मे शहर की रौनक जानी गही ।

रौनक—रौनक अफरोज = रौनक बटानेवाला । घोभावृद्धि करने वाला । उ०—दरवार मे रौनक अफरोज हुए ।—प्रेमधन०, भा० २, पृ० १७ । रौनकदार । रौनके महफिल = मजाज या महफिल की घोमा बढानेवाला ।

रौनकदार—वि० [अ० रौनक + फा० दार (प्रत्य०)] रौनकवाला । घोभायुक्त (को०) ।

रौना^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रमण] द्विरागमन । गीना । मुकलावा ।

रौना^२—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रोना] दे० 'रोना' । उ०—ढीना श्रंघि वम करन फौ करे हेत इन जाइ । श्रव उनटे रौना परधो गरै हगन के आइ ।—रसनिधि (शब्द०) ।

रौनी(ु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रमणी, प्रा० रवनी] दे० 'रमणी' ।

रौप्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चाँदी । रूपा ।

रौप्य^२—वि० चाँदी का बना हुआ । चाँदी का । रूपे का ।

रौप्यता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रौप्य + ता] रूपहलापन । मफेदी । उ०—रात की इम चाँदी की रौप्यता कुछ गी गई है ।—नपलक, पृ० ८६ ।

रौमक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सौभर तमक ।

रौमलवण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सौभर तमक ।

रौर(ु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० रौर] दे० 'रौर' । उ० बालक धुने मुनि परी जु रौर । उठे पहरुमा ठौरहि ठौर ।—नद० प्र०, पृ० २३१ ।

रौरव^१—वि० [सं०] १ भयकर । डरावना । घोर । २ बेह्मना, घृत । कपटी । ३ वात पर दृट न रहनेवाला । चबल । ४ रुद्र मृग सबधी ।

रौरव^२—सञ्ज्ञा पुं० एक भीषण नरक का नाम जो २१ नरको मे से पाँचवाँ कहा गया है ।

रौरा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० रौरा] दे० 'रौरा' ।

रौरा^२—सर्व० [हिं० रावरा] [स्त्री० रौरौ] आपका ।

रौराना—क्रि० सं० [हिं० रौर, रौरा] प्रलाप करना । व्यर्थ बोलना या हल्ला करना । बहकना । उ०—अब यह और सुष्टि विरहित की बकत बाइ रौरानी ।—सूर (शब्द०) ।

रौरौ—सर्व० [हिं० राव, रावल, रावर] आप (दादर वा संबोधन) उ०—अलउ बहूत दुख रौरैहि लागा ।—तुलसी (शब्द०) ।

- रौली—सज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'रौलि' ।
 रौली—सज्ञा पुं० [सं० रवण] १ हल्ला । गुल । शोर । हुल्लड। घूम ।
 २ ऊचम । हलचल ।
 क्रि० प्र०—करना ।—मचना ।—मचाना ।—होना ।
 रौली—सज्ञा स्त्री० [दश०] धौल । चपत । भापट । तमाचा । उ०—
 बाँका गढ बाँका मता बाँकी गढ की पौलि । काछि कवीरा
 नीकसा जम सिर घाली रौलि ।—कवीर (शब्द०) ।
 रौलेबाजी—सज्ञा स्त्री० [हि० रौला] चिल्लपो । हुल्लडबाजी । ऊचम ।
 रौशन—वि० [फा० रोशन] दे० 'रोशन' ।
 रौशनदान—सज्ञा पुं० [फा० रोशनदान] दे० 'रोशनदान' ।
 रौशनी—सज्ञा स्त्री० [फा० रोशनी] दे० 'रोशनी' ।
 रौस—सज्ञा स्त्री० [फा० रविश] १ गति । चाल । २ रग ढग ।
 तौर तरीका । चाल ढाल । ३ बाग की पटरी । बाग की
 ब्यारियो के बीच का मार्ग । उ०—रौस होज बहु कटी
 कियारी । चौक चारु चहुँ कित चित हारी ।—रघुराज (शब्द०) ।
 रौसली—सज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की चिकनी उपजाऊ
 मिट्टी । डाँकर ।
 रौसा—सज्ञा पुं० [हि० रौसा] दे० 'रौसा' ।

- रौहाल—सज्ञा स्त्री० [दश०] १ घोडे की एक चाल । २ घोडे की एक
 जाति । उ०—यदपि तेज रौहाल बर लगी न पलकी वार । तउ
 ग्वँडों घर की भयी पैँडौ कोस हजार । विहारी (शब्द०) ।
 रौहिण—वि० [सं०] [वि० स्त्री० रौहिणी] रोहिणी नक्षत्र मे
 उत्पन्न [को०] ।
 रौहिण—सज्ञा पुं० [सं०] १. चदन वृक्ष । २ श्रीब्रह्म, जो रोहिणी
 नक्षत्र में जनमे थे । ३ गूलर का वृक्ष (को०) । ४ अग्नि का
 नाम (को०) ।
 रौहिणिक - सज्ञा पुं० [सं०] रत्न । मणि आदि ।
 रौहिण्य—सज्ञा पुं० [सं०] १ रोहिणी के पुत्र, बलराम । २ बुध ग्रह ।
 ३. पन्ना । मरकत । ४ गाय का बछड़ा । ५ अग्नि ग्रह का
 नाम (को०) ।
 र्यासदा—सज्ञा स्त्री० [हि० रियासत] दे० 'रियासत' । उ०—
 दुर्जन दुरासद वर समासद विश्व र्यासद शाह है ।—रघुराज
 (शब्द०) ।
 र्योरी, र्यौरी—सज्ञा स्त्री० [हि० रेवड़ी] दे० 'रेवड़ी' ।
 र्वाबा—सज्ञा पुं० [फा० र्वाब] र्वाब । रोब ।

ल

- ल व्यंजन वर्ण का अट्ठाईसवाँ वर्ण जिसका उच्चारण स्थान दंत है ।
 इसके उच्चारण में सवार, नाद और धोप प्रयत्न होते हैं । यह
 अल्पप्राण है ।
 लक—सज्ञा स्त्री० [सं० लङ्क] कमर । कटि । उ०—अति ही सुकु-
 वारि उरोजनि भार भटै मधुरी डग लक लकै ।—घनानंद,
 पृ० २०६ ।
 लक—सज्ञा स्त्री० [सं० लङ्कन] लका नामक द्वीप । उ०—कुसगुन
 लक अघ अति सोकू । हरष विपाद विवस सुरलोकू ।—
 मानस, २।८१ ।
 विशेष—इस रूप में इसका प्रयोग प्रायः यौगिक शब्दों में होता
 है । जैसे,—लकनाथ, लकपति ।
 लकटकटा—सज्ञा स्त्री० [सं० लङ्कटकटा] १ सुकेश राक्षस की माता
 और विद्युत्केश की कन्या का नाम । २ संध्या की कन्या
 का नाम ।
 लकनाथ—सज्ञा पुं० [हि० लक + सं० नाथ] १ रावण । २
 विभीषण । उ०—तव लकनाथ रिसाय कैं । भो चलत लव पहं
 धाय कैं ।—लवकुशचरित्र (शब्द०) ।
 लकनाथक—सज्ञा पुं० [हि० लक सं० नाथक] दे० 'लकनाथ' ।
 उ० जाति वानर लकनाथक दूत अगद नाम है ।—केशव
 (शब्द०) ।
 लकलाट—सज्ञा पुं० [अ० लोमकलाथ] एक प्रकार का मोटा
 बटिया कपड़ा जो प्रायः घुला हुआ होता है । उ०—नीचे लक-

लाट का चूडीदार पैजामा और ऊपर कत्यई रंग की बनिआइन
 पहने थे ।—जिप्सी (अनुक्रमणिका), पृ० १ ।

- लका—सज्ञा स्त्री० [सं० लङ्का] १ भारत के दक्षिण का एक टापू
 जहाँ रावण का राज्य था । लोगो का विश्वास है कि रावण
 के समय यह टापू सोने का था । २ शिवी धान्य । द्विदल अन्न ।
 ३ असन्नरग । स्पृक्का । ४ काला चना । ५ शाखा । डाली ।
 ६ असती नारी । वेश्या । पुश्चली (को०) ।
 लंकादाही—सज्ञा पुं० [सं० लङ्कादाहिन्] हनुमान ।
 लकाधिप—सज्ञा पुं० [सं० लङ्काधिप] दे० 'लकाधिपति' [को०] ।
 लकाधिपति—सज्ञा पुं० [सं० लङ्काधिपति] १ रावण । २. विभीषण ।
 लकानाथ—सज्ञा पुं० [सं० लङ्कानाथ] दे० 'लकापति' ।
 लकापति—सज्ञा पुं० [सं० लङ्कापति] १ रावण । २. विभीषण ।
 उ०—भेटचौ हरि भरि अक भरत ज्यौँ लकापति मनु भायो ।—
 तुलसी (शब्द०) ।
 लंकापिका—सज्ञा स्त्री० [सं० लङ्कापिका] दे० 'लकायिका' [को०] ।
 लकायिका—सज्ञा स्त्री० [सं० लङ्कायिका] असन्नरग । स्पृक्का ।
 लंकारि—सज्ञा पुं० [सं० लङ्कारि] रामचंद्र ।
 लंकारिका—सज्ञा स्त्री० [सं० लङ्कारिका] दे० 'लकायिका' [को०] ।
 लकाल(पुं०)—सज्ञा पुं० [सं० लङ्क + हि० आल ?] १ मिह । शेर ।
 २ चीर । योद्धा । उ०—जूटा भाटी जग में, कमधौ छन
 लकाल ।—रा० रू०, पृ० २८४ ।

लंकिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लङ्किनी] रामायण के अनुसार एक राक्षसी जिसे हनुमान जी ने लंका में प्रवेश करते समय धूम्रों में मार डाला था। उ०—नाम लंकिनी एक निसिचरी। सो कह चले से मोहि निंदरी।—मानस, ६।७।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लक्ष्] कटि। कमर। लक्ष्। उ०—अल्प केन कुच मूल धूलदती उच्चारन। थूल उदर लक्ष्मी थूल किसल गघ वारन।—पृ० रा०, २५।१२६।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] लक्ष्मी।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] १ रावण। २ विभीषण।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] १ रावण। २ विभीषण।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] विभीषण। उ०—सुनु लक्ष्मी सकल गुण तोरे। ताते तुम्ह अतिसय प्रिय मोरे।—मानस, ६।७६।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० नागकेसर ? या देश०] एक प्रकार के फूल का पौधा। उ०—उसमे लक्ष्मी, तारा, मधुरी और गेंदा के पाँधे लगाए।—नई०, पृ० ८०।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] रावण। उ०—मन नहचै लक्ष्मी मारण।—रघु० सू०, पृ० १७८।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] दे० 'लक्ष्मी'।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] दे० 'लक्ष्मी' [को०]।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] असुरगण। स्पृशका।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] लगाम का वह भाग जो घोड़े के मुँह में रहता है [को०]।

लंगर'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लंगर] दे० 'लंगर'। उ०—लोगन की लग ज्यों लुगाइन की लाग री।—देव (शब्द०)।

लंगर'—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा०] १ लंगडापन।

क्रि० प्र०—करना।—खाना।

२. वह जो पगु हो। लंगडा व्यक्ति वा प्राणी (को०)। लिंग। शिश्न (को०)।

लंगर'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लङ्ग] १ स्त्री का यार। उपपत्ति। २. मेल। मिलन (को०)। ३. खजता। पगुता। लंगडापन (को०)।

लंगर'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लङ्ग] स्त्री का यार। उपपत्ति।

लंगर'—वि० [सं० लङ्ग + हि० ड (प्रत्य०)] दे० 'लंगडा'।

लंगर'—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा० लंगर] दे० 'लंगर'।

लंगर'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लङ्ग] लंगर। लंगर पार करना [को०]।

लंगर'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लङ्ग] वह डोरी या डडा जिसपर कपडे टाँगे जाते हैं। अलंगर [को०]।

लंगर'—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा०। मि० अ० एन्कर] १ बड़ी बड़ी नावों या जहाजों को रोक रखने के लिये लोहे का बना हुआ एक प्रकार का बहुत बड़ा बाँटा।

विशेष—इस कटि या लंगर के बीच में एक मोटा लंबा छट होता है, और एक सिरे पर दो, तीन या चार टेढ़ी मुकी हुई नुकीली

शाखाएँ और दूसरे सिरे पर एक मजबूत कडा लगा हुआ होता है। इसका व्यवहार बड़ी बड़ी नावों या जहाजों को जल में किसी एक ही स्थान पर ठहराए रखने के लिये होता है। इसके ऊपर कडे में मोटा रस्सा या जजीर आदि बाँधकर इसे नीचे पानी में छाट देते हैं। जब यह तल में पहुँच जाता है, तब इसका टेढ़े अकुड़े जमीन के ककड परत्यों में अड जाते हैं, जिससे कारण नाव या जहाज उन्नी स्थान पर रुक जाता है, और जबतक यह फिर खींचकर ऊपर नहीं उठा लिया जाता, तबतक नाव या जहाज आगे नहीं बढ़ सकता।

क्रि० प्र०—उठाना।—ऊरना।—धोड़ना।—डालना।—फेंकना।—धोना।

यौ०—लंगरगाह।

२. लक्ष्मी का वह कुशा जो किसी हरहाई गाय के गले में रस्सी द्वारा बांध दिया जाता है। इसके बाँधन से गाय इधर उधर भाग नहीं सकती। ठेंगुर। ३. रस्सी या तार आदि से बंधी और लटकता हुई कोई भारी चीज, जमका व्यवहार कई प्रकार की कलों में और विशेषतः बड़ी घड़ियों आदि में होता है।

क्रि० प्र०—चलना।—चलाना।—हिलाना।

विशेष—इन प्रकार का लंगर प्रायः निरंतर एक ओर से दूसरी ओर आता जाता रहता है। कुछ कलों में इसका व्यवहार ऐसे पुरजों का भार ठीक रखने में होता है, जो एक ओर बहुत भारी होने हैं और प्रायः इधर उधर हटते बढ़ते रहते हैं, बड़ी घड़ियों में जो लंगर होता है, वह सामी दी हुई कमानी के जोर से एक सीधी रेखा में इधर से उधर चलता रहता है और घड़ी की गति ठीक रखता है।

४. जहाजों में का मोटा बड़ा रस्सा। ५. लोहे की मोटी और भारी जंजीर। उ०—हाथी ते उररि हाड़ा जूमो लोह लंगर दे एती लाज का में जेती लाज छत्रसाल मे।—भूषण (शब्द०)।

क्रि० प्र०—डालना।—देना।

६. चाँदी का बना हुआ तोडा जो पैर में पहना जाता है। इसकी बनावट जजीर की सी होती है। ७. किसी पदार्थ के नीचे का वह अंश जो मोटा और भारी हो। ८. कमर के नीचे का भाग। ९. अडकोश। (वाजाह)। १०. पहलवानों का लंगोट।

मुहा०—लंगर बाँधना = (१) पहलवानी करना। (२) ब्रह्म चर्य धारण करना। लंगर लंगोट कसना या बाँधना = लडने को तैयार होना। लंगर लंगोट (किसी को) देना या आगे रखना = पहलवानी सीखने के लिये किसी पहलवान का शिष्य बनना।

११. वह (स्थान या व्यक्ति आदि) जिसके द्वारा किसी को किसी प्रकार का आश्रय या सहारा मिलता हो। (को०)। १२. कपडे में के वे टाँके जो दूर दूर पर इसलिये डाले जाते हैं जिसमें मोटा हुआ कपडा अथवा एक साथ सीए जानेवाले दो कपडे अपने स्थान से हट न जायें।

विशेष—इस प्रकार के टाँके पंजी सिलाई करने से पहले डाले जाते हैं, और इसीलिये इसे कच्ची सिलाई भी कहते हैं।

क्रि० प्र०—करना ।—ढालना ।—तोड़ना ।—भरना ।

१३ वह उभरी हुई रेखा जो अउकोण के नीचे के भाग में आरम्भ होकर गुदा तक जाती है। सीयन । गीवन । १४ वह पक्का हुआ भोजन जो प्रायः निरत्य किसी निश्चित समय पर दीना और दरिद्रों आदि को बाँटा जाता है ।

क्रि० प्र०—देना ।—बाँटना ।—लगाना ।
यो०—लगरखाना ।

१५ वह स्थान जहाँ दीनों और दरिद्रों आदि को बाँटने के लिये भोजन पकाया जाता हो । १६ वह स्थान जहाँ बहुत से लोगों का भोजन एक साथ पकता हो ।

लंगर^१—वि० १ जिसमें अधिक बोझ हो । भारी । वजन । २ शरीर । नटखट । दाँठ । उ०—(क) लरिका लवे के मसल लगर मो ढिग आय । गयो अचानक आंगुरी छाती छल छुआय ।—विहारी (शब्द०) । (ख) सूर प्रथम दिन दिन लगर भयो हार करी लंगरया ।—सूर (शब्द०) ।

मुहा०—लगर करना = शरारत या ढिठाई करना । उ०—गोलि लियो बलरामहि यशुमति । आवहु लाल सुनहु हारे के गुण कालिहि ते लंगरयो करत अति ।—सूर (शब्द०) ।

लगर^२—वि० [हि० लँगडा] दे० 'लंगडा' ।

लगरखाना—सञ्ज्ञा पुं० [फा० लगरखानह] वह स्थान जहाँ में दरिद्रों को बना बनाया भोजन बाँटा जाता हो ।

लंगरगाह—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] किनारे पर का वह स्थान जहाँ नगर डालकर जहाज ठहराए जाते हैं ।

लगल—सञ्ज्ञा पुं० [म० लङ्गल] हल [को०] ।

लगा^१—वि० [सं० लग्न] १ नगा । बस्त्ररहित । नग्न । उ०—पय पीवहि फल करहि अहारा । लगा फिर तन रहे उधारा ।—मत० दरिया, पृ० ५६ । २ युद्ध क लिये बना सन्नद्ध । जिसका स्वभाव लड़ाई करने का हो ।

लगिमा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लङ्गिमन्] १ सौंदर्य । शोभा । सुदरता । २ मेल । सगम । समागम [को०] ।

लगुरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लङ्गुरा] एक प्रकार का अन्न । प्रियतु [को०] ।

लगूर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गूली] १. बदर । २. पुंज । दुम । (बदर की) । ३. एक विशेष प्रकार का बदर ।

विशेष—लंगूर नाधारण बदर से बड़ा होता है और इसकी पूंज बहुत अधिक लची होती है । इसके सारे शरीर पर सफेद रंग के रोएं होते हैं और मुँह, हाथ की हथेलियों तथा पैर के तलवों और उंगलियों आदि काली होती है ।

लगूरफल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लगूर + सं० फल] नारियल । उ०—वानरमुख लगूरफल नारिकेलि सुभ काम । ये तरनी के नान्धिर ता कहै करत प्रनाम ।—नंददास (शब्द०) ।

लगूरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लगूर + ई (प्रत्य०)] १ घोड़े की एक चाल जिसमें वह उछल उछलकर चलता है, २ यह इनाम जो घोरो को उस समय दिया जाता है, जब वे चारों गप हुए मवेणियों का पता लगा दें हैं ।

लगूल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लट्गूल] लाल । पूछ । दुम ।

लगेतगे^१—क्रि० वि० [फा० नगतग] नाथनही पिये न । जैसे तैमे करके । येन केन प्रकारण । उ०—लगे तये पाव उ महेने कट जायंग ।—गोदान, पृ० १०७ ।

लघक—वि० [सं० लघुक] १ लापनवाला । अतिक्रमण करनेवाला । २ नियम का भंग करनेवाला । कायदा तोड़नेवाला ।

लघन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुन] १. उपनाम । अनाहान । फारा । कुछ न खाना । उ० (क) जिन नंनन को है मही मोहन उप अहार । तिनरो वंद बतावडी लघन को उपचार ।—रानिधि (शब्द०) । (ख) घाम घाम मांग भील लघा मुनाई है ।—रघुराज (शब्द०) । २ लापन की क्रिया । डाँटना । ३ अतिक्रमण । ४ घोड़े की एक चाल जिसमें वह बहुत तेज चलता है । ५ वह उपाय जिसमें किसी काम में लघव या मुर्गीता हो । ६ सभाग । मप्रयोग [को०] ।

लघनक—सञ्ज्ञा पुं० [म० लघुनक] १ वह जिसके द्वारा लाघा जाय । मेतु । पुल ।

लघना^(१)—क्रि० म० [म० उल्लङ्घन या लङ्घन=लाघने की क्रिया] किसी वस्तु के ऊपर म हाकर इन और में उस आर जाना । लाघना । नाघना । डारना ।

लघना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लघुना] १, अत्रमानना । उपेक्षा । लापरवाही । (२) लघन । उपवास । रुडाका ।

लघना^(२)—वि० जो लघन या उपवास लिए हुए हो । दुभृन्तित । भूखा । उ०—पतिवरता पति का भर्जा, श्रीर न आन गुटाय । मिष वचा जो लघना, ती भी घाम न खाय ।—बनार मा० सं०, पृ० ३० ।

लघनीय—वि० [म० लघुनीय] लाघने के योग्य । २ उपघन करने के योग्य ।

लघ्य—वि० [सं० लघ्य] दे० 'लघनीय' [को०] ।

लघित—वि० [सं० लघित] १ उँका हुआ । लाघा हुआ । ६ उल्लघन । ३ तिरस्त्रत । उमञ्जत । ४ याक्रमित [को०] ।

लच—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दापटर का नाशता । अनाहार [को०] ।

लचा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लङ्गा] धूप । उत्पीड । रिचरत [को०] ।

लङ्गण^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गण] कनक । दास । २ 'लाङ्गण' । उ०—साह पुवर, गूउउ बहद, नातवशी मुन जोर ।—ढाना०, दू० ५०२ ।

लङ्गण^(२)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गण, प्रा० लङ्गण] लङ्गण । निरानी । नाथन । उ०—ररभात पत वरररर दुात ननु । अत ननु धार-हारय ।—पृ० रा०, ७१२०३ ।

लज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लज्ज] १. ईर । राज । २. काद । ३. पूछ । ४. नम । ५. नात । नाज ।

लज^१—सञ्ज्ञा स्त्री० लज्जा ।

लजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लजा] १. चारा । प्रना । २. पुञ्जनी पुनटा । ३. चयना । ४. निरा [को०] ।

लाजका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाजका] चरना । ररा ।

लठ—वि० [हि० लठ्ठ] मूर्ख । उजड़ ।

लड^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० लड्ड] पुरीप । विष्टा । गू ।

लड^२—सञ्ज्ञा पु० [सं० लड्ड, तुल० फा० लग = शिशु] पुरुष को मूर्खद्वय ।

लतरानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] व्यर्थ की बड़ी बड़ी बातें । शली ।

क्रि० प्र०—करना ।—हाँकना ।

लदराज—सञ्ज्ञा पु० [अ० लांग क्लाथ] वस्त्र जो आकार में लंबा चौड़ा और माटा हो । एक प्रकार की मोटी चादर ।

लप—सञ्ज्ञा पु० [अ० लम्प] दीपक । चिराग ।

लपक—सञ्ज्ञा पु० [पु० लम्पक] जैनियों का एक संप्रदाय ।

लपट^१—वि० [सं० लम्पट] व्यभिचारी । विपयी । कामा । कामुक । स्वेच्छाचारी । स्वैरी । उ०—लोभी लपट लोलुप चारा । जो ताकहि पर धन पर दारा ।—तुलसी (शब्द०) ।

लपट^२—सञ्ज्ञा सं० स्त्री का उपपति । यार ।

लपटता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लम्पटता] १ लपट होने का भाव । डुराचार । कुकर्म । २ लोभ । लालच [को०] ।

लपाक—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्पाक] १ लपट । डुराचारी । २ पुराणा-नुसार एक देश का नाम जिसे मुरड भी कहते थे । यह देश भारत के उत्तरपश्चिम में था ।

लपारह—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्पापटह] पटह वाद्य । नगाडा [को०] ।

लफ—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्फ] उछाल । कूद । फलांग [को०] ।

लफन—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्फन] उछलकूद [को०] ।

लव^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्ब] १ वह रेखा जो किसी दूरी रेखा पर इन भाँति गिरे कि उसके साथ समकाण बनावे ।

क्रि० प्र०—गिराना ।—डालना ।

२ एक राक्षस जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था । इसी को प्रलवासुर भी कहते हैं । ३ शुद्ध राग का एक भेद । ४ वह जो नाचता हो । नाचनेवाला । ५ अंग । ६ पति । ७ एक दैत्य का नाम । ८ एक मुनि का नाम । ९ ज्योतिष में एक प्रकार की रेखा जो विषुव रेखा के समानांतर होनी है । १० ज्योतिष में ग्रहों की एक प्रकार की गति । ११ उत्कोच । भेंट । रिश्वत [को०] ।

लव^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] दे० 'विलव' ।

लव^३—वि० [सं०] १ लंबा । उ०—(क) युक्त अवलंब लव भुज चारी ।—रघुनाथ (शब्द०) । (ख) अस कहि लव फरस विघ्न-वायो ।—रघुराज (शब्द०) । २ बढ़ा [को०] । ३ लटकता हुआ । अवलंबित । सलग्न । लगा हुआ [को०] । ४ विस्तृत । फलावदार । प्रशस्त [को०] ।

लवक—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्बक] १ किसी पुस्तक का एक अध्याय । २ लवरेखा [को०] । ३ एक प्रकार का विशिष्ट उपकरण या पात्र [को०] । ४ मुख का एक रोग । ५ ज्योतिष में एक प्रकार के योग जो सख्या में पढ़े होते हैं ।

लवकर्ण—सञ्ज्ञा सं० [सं० लम्बकर्ण] १ वक्रा । २ हाथी । ३ अर्कोट वृक्ष । ४ राक्षस । ५ वाज पत्नी । ६ गदहा । खर । ७ खरगोश ।

लवकर्ण^२—वि० जिमके कान लंबे हो ।

लवकेश^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्बकेश] कुश का आसन । कुश का विष्टर जा विवाह में वर के बैठने के लिये दिया जाता है ।

लवकेश^२—वि० लंबे बालोंवाला [को०] ।

लवश्रीव—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्बश्रीव] ऊँट ।

लवजठर—वि० [सं० लम्बजठर] तुदिन । तोदवाला ।

लवतडग—वि० [सं० लम्ब + हि० ताड + अग] ताड के समान लंबा । बहुत लंबा ।

लवटता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लम्बटता] सिहन देश की पिप्पली ।

लवन—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्बन] १ गले का वह हार जो नाभि तक लटकता हो । २ झूलने की क्रिया । ३ अवलंब । आश्रय । महारा । ४ कफ । ५ शिव का नाम [को०] ।

लवपयोधरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लम्बपयोधरा] १ कार्तिकेय का एक मातृका का नाम । २ लपस्तनी स्त्री ।

लववीजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लम्बवीजा] दे० 'लवदना' [को०] ।

लवमान—वि० [सं० लम्बमान] लटकता हुआ । दूर तक गया हुआ । फैला हुआ । लंबावमान [को०] ।

लवर^१—सञ्ज्ञा पु० [अ० लम्बर] दे० 'नवर' ।

लवर^२—सञ्ज्ञा पु० [सं० लम्बर] एक प्रकार का ढोल या पटह [को०] ।

लवरदार—सञ्ज्ञा पु० [अ० लवर + फा० दार (प्रत्य०)] दे० 'नवरदार' ।

लवरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लम्बरा] कौटिल्य अर्थशास्त्र में निर्दिष्ट एक प्रकार का कवल । ऊर्णयु [को०] ।

लवस्तनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लम्बस्तनी] लंबे स्तनोंवाली नारी [को०] ।

लवा^१—वि० [सं० लम्ब] [वि० लंबा] १ जिसके दोनों छोर एक दूसरे से बहुत अधिक दूरी पर हो । जिसका विस्तार, आयतन की अपेक्षा, बहुत अधिक हो । जो किसी एक ही दिशा में बहुत दूर तक चला गया हो । 'चौड़ा' का उलटा । जैसे,—लंबा बाल, लंबा बाँस, लंबा सफर ।

मुहा०—लंबा करना = (१) (आदमी को) रवाना करना । चलता करना । (२) जमीन पर पटक या लेटा देना । चित करना । उ०—खर नास्यो इन समर अनल खर नासै जैसे । कियो भूमि पर लंब नासि परलबहि तैसे ।—गि० दाम (शब्द०) । लंबा बनना या होना = चल देना । रवाना होना । प्रस्थान करना । घटा होना । (ज्यम्य और परिहास में) । उ०—थाने-दार साहब तहकीकत करके लंबे हुए ।—फमाना०, भा० ३, पृ० ३७२ ।

यौ०—लंबा चौड़ा = जिसका आयतन और विस्तार दोनों बहुत अधिक हो । जैसे,—लंबा चौड़ा मंदान ।

२, जिसकी ऊँचाई अधिक हो । ऊपर की ओर दूर तक उठा हुआ ।

जैसे, लंबा आदमी । ३ (ममय) जिनका विस्तार अधिक हो ।
जैसे,—(क) गरमी में दिन बहुत लंबा होता है । (ख) तुम तो
सदा लंबी मुद्दत का वादा करते हो । ४ विशाल । दीर्घ । बड़ा ।
जैसे,—इतना लंबा खच्च करना ठीक नहीं ।

लंबा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [पुं० लम्बा] १ दुर्गा । २ लक्ष्मी । ३ उपहार ।
घूस । रिपवत । ४ रिक्त तुनी । कटु तुनी । तितलौकी [को०] ।

लंबाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लंबा] लंबा होने का भाव । लंबापन ।
जैसे,—(क) इस जमीन की लंबाई पचाम गज है । (ख) यह
कपड़ा लंबाई में कुछ कम है ।

यौं०—लंबाई चौड़ाई = लंबान और चौडान ।

लंबान—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लंबा] लंबाई ।

लंबाना—क्रि० स० [हिं० लंबा] लंबा करना । फैलाना । बढाना ।

लंबायमान वि० [म० लम्बायमान] १ जो लंबा हो । २ 'लव-
मान' । २ लेटा हुआ ।

लंबिक—सञ्ज्ञा पुं० [म० लम्बिक] कोकिल [को०] ।

लंबिको—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० लम्बिका] गले के अंदर की घटी । उ०—
नासिका तालका त्रिकुटी ध्यानी । लंबिका उर्ध्व पीवं गगन
पानी ।—प्राण०, पृ० ७३ ।

लंबित—वि० [स० लम्बित] १ लंबा । २ लटकता हुआ [को०] ।
३ अवलंबित । आभारित [को०] । ४ हुआ हुआ । घंसा
हुआ [को०] । ५ कार्यच्युत । पदच्युत [को०] । ६ शब्दित ।
ध्वनित [को०] ।

लंबी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० लम्बी] १ ग्रीहि से निमित्त एक खाद्य
पदार्थ । २ पुष्पित शाखा । फूल से भरी डाली [को०] ।

लंबी^२—वि० [स० लंबिन्] अवलंबित । लटकनेवाला [को०] ।

लंबी^३—वि० स्त्री० [हिं० लंबा] लंबा का स्त्री लिंग रूप ।

मुहा०—लंबी तानना—लेकर सो जाना । उ०—इस समय मेरे
अतिरिक्त सब लंबी ताने सोते होंगे ।—हारश्रीव (शब्द०) ।
लंबी सांस लेना = अत्यंत दुःख या खेद से सांस लेना । ठही
सांस लेना ।

लंबिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० लम्बिनी] स्कंद की एक मातृका का
नाम [को०] ।

लंबुक—सञ्ज्ञा पुं० [स० लम्बुक] १. एक नाग का नाम । २ ज्योतिष
में एक प्रकार के योग जिनकी संख्या पंद्रह है । लंबक ।

लंबुपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० लम्बुपा] सतलखा हार [को०] ।

लंबू—वि० [हिं० लंबा] लंबा । (आदमी के लिये, व्यंग) ।

लंबोतरा—वि० [हिं० लंबा + ओतरा (प्रत्य०)] जो आकार में कुछ लंबा
हो । लंबापन लिए हुए । जैसे—आम के फल लंबोतरे होने हैं ।

लंबोदर—सञ्ज्ञा पुं० [स० लम्बोदर] १ गणेश । २ वह जो बहुत
अधिक खाता हो । पेद्र ।

यौं०—लंबोदरजननी = गणेश की माता, पार्वती ।

लंबोष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [स० लम्बोष्ठ, लम्बीष्ठ] १. वह जिसके होठ लंबे

हो । लंबे शाठवाला । २ ऊँट । २ एक प्रकार का क्षेत्र-
पाल देवता ।

लभ—सञ्ज्ञा पुं० [स० लम्भ] प्राप्ति । पाना । लाभ । मिलना । अध-
गम [को०] ।

लभक—वि० [स० लम्भक] प्राप्त करनेवाला । पानेवाला [को०] ।

लभन—सञ्ज्ञा पुं० [स० लम्भन] १ ध्वनि । २ वादना । कलक ।
३ प्राप्ति । आधगम [को०] ।

लभनाय—वि० [स० लम्भनाय] प्राप्त करने योग्य । प्राप्य [को०] ।

लभ्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० लम्भा] प्राचीर, आवेष्टन अवशेष, आदि का
एक प्रकार । वाटशृङ्खला [को०] ।

लभ्युक्त—वि० [स० लम्बुक] निरंतर आधगम या प्राप्त करनेवाला ।
जिसे बराबर प्राप्ति या लाभ होता रहे [को०] ।

लंगटा^१—वि० [म० नग्न, हिं० नगा + टा (प्रत्य०)] [वि० स्त्री०
लंगटी] १ निर्वस्त्र । नगा । नग्न । २ शरारती । नटखट ।

लंगटी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] १ लंगटी । २ पैर से पिपत्ती के पैरों
में मारना जिससे वह गिर पड़े । झडाना ।

लंगड़ा^१—वि० [फा० लग + हिं० डा (प्रत्य०)] १ व्यक्ति या पशु
आदि जिसका एक पैर बेकाम या टूटा हुआ हो । २ जिसका
एक पाया टूटा हो । जैसे—कुत्ता, पाट आदि ।

लंगड़ा^२—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] एक प्रकार का बहुत बढिया कलमी आम
जा प्राय वाराणसी में हाता है ।

लंगड़ाना—क्रि० अ० [हिं० लंगडा] चलने में दोनों या चारों पैरों
का ठोक ठाक और बराबर न बैठना, बल्कि किसी एक पैर का
कुछ रुक या दबकर पटना । लग करत हुए चलना । लंगड़े
होकर चलना ।

लंगड़ी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लंगडा] एक प्रकार का छद । उ०—साज
आल अंबज म, तोह प्रकाश चहु आर । सब तबि निशि में
आतियि सी राकी कर्या अजार ।—गुमान (शब्द०) ।

लंगड़ी^२—वि० [हिं०] बनी । बलवान् । जागरत ।

लंगड़ी^३—वि० स्त्री० [फा० लग] लंगडा का स्त्री रूप ।

लंगड़ा^४—सञ्ज्ञा स्त्री० लंगटी । अडानी ।

लंगर(पुं)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लगर] ढोठ । नटखट । शरारती ।

लंगरई(पुं)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लगर] ढिडाई । शरारत । नटखट-
पन । उ०—बांधी आखु कौन तोह छारं । बहुत लंगरई कौन्ही
मोमा भुज गहि रबु ऊजल सा जोरं ।—सूर (शब्द०) ।

लंगरई(पुं)^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लगर + आई (प्रत्य०)] ढिडाई ।
शरारत । उ०—अजहूँ छाओगे लंगरई दाउ कर जोरि जननि
पं आए ।—सूर (शब्द०) ।

लंगराना—क्रि० अ० [हिं० लंगड] द० 'लंगडाना' ।

लंगरी(पुं)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लगर] दे० 'लंगरई' ।

लंगरिया(पुं)^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लगर] ढाढपन । शरारत । घृष्टता ।
उ०—सूर त्याम दिन दिन लगर नया डूरि करी लंगरिया ।—
सूर (शब्द०) ।

लँगोचा—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] जानवर की श्रांत जो मसालेदार कीमे से भगकर और तलकर खाई जाती है। कुलमा। गुलमा।

लँगोट, लँगोटा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्ग + ओट] [स्त्री० लँगोटी] कमर पर बाँधने का एक प्रकार का बना हुआ वस्त्र जिससे केवन उपस्थ ढका जाता है।

विशप—यह प्रायः लत्री पट्टी के आकार का शयवा तिकोना होता है, जिसमें दोनों ओर कमर पर लपटने के लिये बंद लगे रहते हैं। प्रायः पहलवान लोग कुश्ती लड़ने या कमरत करने के समय इस पहना करते हैं। रुमाली।

यो०—लँगोट का कच्चा या ढीला = विपयो। कार्मी। लँगोट-बंद = ब्रह्मचारी। स्त्रीरथागो।

मुहा०—लँगोट कसना या बाँधना = लड़ने को तैयार होना। लँगोट रखना = (१) 'लगर लँगोट रखना'। (२) पहलवानी छोड़ देना।

लँगोटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लँगोट + ई (प्रत्य०)] कोरीन। कछनी। भगई। उ०—रोटी गद्दे हाथ में, सुचाँटी गुद्दे माथ में, लँगोटी कछे नाथ साथ बालक विलासी है।—(शब्द०)।

मुहा०—लँगोटिया यार = बचपन का मित्र। उस समय का मित्र, जब कि दोनों लँगोटो बाँधकर फिरने हों। लँगोटी पर फाग खेलना = थोड़ा हा साधन होने पर भी विलासी होना। कम सामर्थ्य होने पर भी बहुत अधिक व्यय करना। लँगोटी बाँधवाना = बहुत दरिद्र कर देना। इतना धनहीन कर देना कि पास में लँगोटो के सिवा और कुछ न रह जाय। लँगोटो बिकवाना = इतना दरिद्र कर देना कि पहनने के वस्त्र तक न रह जाय।

लँगूरा—वि० [दश० या सं० लाङ्गूरा] विना पूँछ का। जिसकी सब पूँछ कट गई हो (पक्षी)। २ आकार। नगा। लुच्चा।

ल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ इद्र। २ पृथ्वी। ३ छंद शास्त्र में लघु मात्रा के लिये प्रयुक्त सञ्ज्ञित रूप (को०)। ४ पाणिनि व्याकरण में क्रिया के काल एवं अवस्था के लिये प्रयुक्त विशेष सञ्ज्ञा। ४ पचास की संख्या (को०)।

लउपु—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० ली] लाग। लगन। ली।

लउआ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लावुक] दे० 'धिया'।

लउकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लावुक] दे० 'धिया'।

लउटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लउड] लकुटी। लकुडी। उ०—वाटे खेल तरुन वह सोवा। लउटी वूढ़ लेइ पुनि रोवा।—जायसी (शब्द०)।

लक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ललाट। २ जंगली वान की बाल (को०)।

लक^२—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] किस्मत। भाग्य।

लकच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक फल। दे० 'लकुच' (को०)।

लकड़तोड़—वि० [हिं० लकड़ी + तोड़] लकड़ी की तरह कड़ा। बहुत कड़ा (व्यंग्य)। उ०—इनका लकड़तोड़ जूता पहनकर पेशकार साहब बड़े साहब के इजलास पर गए।—फिसाना, ० भा० ३, पृ० ४६।

लकड़दादो—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दादाघो का भी दादा। श्रुति प्राचीन पुरखा। (व्यंग्य)। उ०—एक शान। दाँत पीसकर, हाथ उठाकर, शिखा खोलते हुए चाणनय का लकड़दादा बन जाऊंगा।—स्कंद०, पृ० १०६।

लकड़वगघा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लकड़ी + बाघ] एक मामाहारी जंगली जंतु जो भेटिए म कुत्र बड़ा होता है। यह कुत्तों का माम बहुत पसंद करता है। लभड।

लकड़हारा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लकड़ी + हार] जंगल से लकड़ी तोड़कर बेचनेवाला।

लकडा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लकड़ी] १ लकड़ी का मोटा कुदा। लकड। २ बाजरे, अरहर आदि का मूला उठन।

लकड़ानी—क्रि० अ० [हिं० लकड़ा + ना (प्रत्य०)] १ किसी वस्तु का सुचकर नकली की तरह कटा हो जाना। २ दुबला होना। शरीर सुचकर नकली की तरह हो जाना।

लकड़ियाँ—क्रि० अ० [हिं० लकड़ी] दे० 'लकडा'।

लकड़ो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लकुड] १ पेड़ का कोई स्थूल अंग (जल, तना आदि) जो कटकर उससे अलग हो गया हो। काष्ठ। काठ।

विशेष—इनका व्यवहार प्रायः मेज, फुरपी, किवाड़े आदि सामान बनाने में होता है।

२ ईधन। जलावन।

मुहा०—लकड़ा देना = मुरदे को जलाना।

३ गतका। ४ छड़ी। लाठी।

मुहा०—लकड़ा सा = बहुत दुबला पतला। लकड़ी चलना = लाठी से मार पीट होना। लकड़ा होना = (१) सुचकर काँटा हाना। बहुत दुबला पतला हाना। (२) सुचकर बहुत कड़ा हो जाना। जैसे,—राटा सुचकर लकड़ी हो गई।

लक दूक—वि० [अ० लक दूक] १ (मदान) जिसमें वृद्ध या वनस्पति आदि कुछ भाग न हो। बजर या चाटयल (मदान)। २ साफ। चिकना। स्वच्छ।

लकव—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लकव] उपाधि। सिताव। पदवी।

क्रि० प्र०—दना।—पाना।—मलना।

लकरिया(पु)।—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लकड़ी, लकरा + रिया (प्रत्य०)] दे० 'लकडा'। उ०—उठत लकरिया टाक तातामर आखन में आयी।—ब्रज० अ०, पृ० १०८।

लकरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लकुटा] २० 'लकडा'।

लकलक—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लकलक] १ लबा गरदन का एक पदो। ढँक। २ जाभ। जह्वा (को०)।

लकलक—वि० १ बहुत दुबला पतला। २ लंबे पैरोवाला। जिसकी टाँगें लंबी हो।

लकलका—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लकलक] लकलक पदों की तीखी आवाज। रटन। उ०—बहुआफत हदोस यान लकलका उधे

बोलते हैं के हमेशा जवान हरकत में श्रेष्ठ।—दक्खिनी०,
पृ० ३६५।

लकवा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लक्वह्] एक वातरोग जिसमें प्रायः चेहरा
टेढ़ा हो जाता है।

विशेष—यह रोग चेहरे के अतिरिक्त शरीर अंगों में भी होता
है, और निम्न अंग में होता है, उसे विलकुन बराम कर
देता है। इसमें शरीर के ज्ञानतन्तुओं में एक प्रकार का विकार
आ जाता है, जिससे कोई कोई अंग हिलने डोलने या अपना
ठीक ठीक काम करने के योग्य नहीं रह जाता। इसे फालिज भी
कहते हैं। पक्षाघात।

क्रि० प्र०—गिरना।

मुहा०—लकवा मारना या मार जाना = शरीर के किसी अंग में
लकवे का रोग हो जाना।

लकसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लकडी + अंकुमी] फल आदि तोड़ने की
लगी जिसके ऊपरी सिरे पर लहै का चद्राकार फल या एक
तिरछी छोटी लकड़ी बंधी रहती है।

विशेष—इसी लगी को हाथ में लेकर ऊपरी सिरे में बंधी हुई छोटी
लकड़ी या फल की सहायता से ऊँचे वृक्षों के फल आदि
तोड़ते हैं।

लका'—सञ्ज्ञा पुं० [प्रा० लक्का] दे० 'लक्का'।

लका^२—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लका] सहवास। मंथुन [को०]।

लका^३—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लका, लिका] चेहरा। मुख। उ०—ये
हृदया ले जा वादशाह वास्ते, वो रोशन लका मेहरोमा
वास्ते।—दक्खिनी०, पृ० २१५।

लकाटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की विल्ली जिनके नर जाति
के अश्वकोशों में से एक प्रकार का मुषक निकलता है।

लकालक—वि० [अ० लकलक] नाफ। स्वच्छ।

लकीर—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रेखा, हि० लीक] १ कलम आदि के द्वारा
अथवा शरीर किसी प्रकार बनी हुई वह मीठी आकृति जो बहुत
दूर तक एक ही मीठ में चली गई हो। रेखा। खत।

मुहा०—लकीर का फकीर = वह जो बिना समझे वृक्षों किसी प्राचीन
प्रथा पर चला चलता हो। अर्थात् बंद करके पुराने ढंग पर
चलनेवाला। लकीर पीटना = बिना समझे वृक्षों पुरानी प्रथा पर
चले चलना। लकीर पर चलना = दे० 'लकीर पीटना'।

क्रि० प्र०—करना।—सीचना।—बनाना।

२ वह चिह्न जो दूर तक रेखा के समान बना हो। ३ धारी।
४ पक्ति। सतर। ५ क्रम (की०)।

क्रि० प्र०—करना।—सीचना।—बनाना।

लकुच'—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बडहर का पृष्ठ और फल।

लकुच^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लकुट'।

लकुट'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लकुट (= लकुड)] लार्छी। छड़ी। उ०—छोटी
सी लकुट हाथ, छोटे छोटे बच्चा साथ, छोटे से कान्ह देखति
गोपी आई धरन की।—नद० प्र०, पृ० ३३८।

लकुट^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लकुच] १. मध्यम प्रकार का एक प्रकार का

वृक्ष जो प्रायः मारे भारत में शीघ्र विरोधित बंगाल में अधिकता
से पाया जाता है।

विशेष—इसकी डालियाँ टेढ़ी भेड़ी और छाल पतली और गांधी
रंग की होती है। इसकी वृक्षियों के निरे पर गुच्छों में पत्ते
रगते हैं जो अनीदार और बंगूरान् होत हैं। माथ में गफेर रंग
के छोटे छोटे फूलों के भी गुच्छ रगते हैं।

२ इस वृक्ष का फल जो प्रायः गुलाब जामुन के समान होता और
बमत श्रुत में पकता है। यह फल मीठा होता है और खाया
जाता है। लुकाठ। लखोट।

लकुटियाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लकुड + हि० इया] २० 'लकुटी'।

लकुटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लकुड] लार्छी। छड़ी। उ०—या लकुटी
श्रु कामरिया पर राज तिहँ पुर को तजि डारि।—रमखान०,
पृ० १३।

लकुलीश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक शैव संप्रदाय और उसके प्रवर्तक
आचार्य का नाम।

विशेष—लकुलीश वा नकुलीग संप्रदाय के प्रवर्तक लकुलीग माने
जाते हैं। लिगपुराण (२५।१३१) में उनके मुख्य चार गिण्यों
के नाम कुणिक, गर्ग, मित्र और कौरुण्य मिलते हैं। प्राचीन-
काल में इसके अनुयायी बहुत थे, जिनमें मुख्य साधु (कनफटे,
नाथ) होते थे। इस संप्रदाय का विशेष ध्यान शिलालेखों तथा
विष्णुपुराण, लिगपुराण आदि में मिलता है। इसके अनुयायी
लकुलीग को शिव का अवतार मानते और उनका उत्पत्ति-
स्थान कायावरोहण (कायागेहण, कारवान्, बटौडा राज्य में)
बतलाते थे। (विस्तृत विवरण के लिये देखें उदयपुर राज्य का
इतिहास, पृ० ४१५)।

लकुटा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का पहाड़ी बकरा जिनके
वालों से शाल, दुधाले आदि बनाए जाते हैं।

लक्कड—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लकड़ी] काठ का बड़ा कुदा।

लक्का—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लक्का] एक प्रकार का कबूतर जो बूढ़ छाती
उभाड़कर चलता है और जिनका पूछ पग भी होती है।

लक्का कचर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लक्का + कचर] १ नाच की एक
गत जिसमें नाचनेवाला कमर के त्रय इनना झुकना है कि मिर
प्रायः भूमि के निकट तक पहुँच जाता है। यह झुगाव बगन की
धोर होता है। २ दे० 'लक्का'।

लक्ख—वि० [सं० लक्ख, प्रा० लक्ख] २० 'लक्ख'।

लक्खन'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्खण, प्रा० लक्खण, लक्खण] ० 'लक्खण'।
उ०—कुंवर बतीमा लक्खन राता। दनए लक्खन कहै एक
वाता।—जयमी प्र०, पृ० २५१।

लक्खन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्खण] लक्ष्मण जी। उ०—लक्खन की
गए लक्खन है तरिका पणियों निम पौर परीक ही ठाठ।
—गुननी प्र०, पृ० २५१।

लक्खना^३—वि० [सं० लक्खण] लक्ष्मणवादी। लक्ष्मण से युक्त।
उ०—कुंवर बतीमा लक्खन सहन करा जग मान।—जयमी
प्र० (गुप्त), पृ० ३०६।

लक्ष्मी^१ - वि० [हि० लाख] लाख के रग का । लक्ष्मी ।

लक्ष्मी^२—सञ्ज्ञा पुं० घोड़े की एक जाति ।

लक्ष्मी^३—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लाख (सख्या)] वह जिसके पाम लाखों रूपए हो । लखरता ।

लक्ष्मी^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० लक्ष्मी, प्रा०, वंग० लक्ष्मी] लक्ष्मी ।
उ०—बंगाली के लक्ष्मी कहने को लक्ष्मी न मानें तो कभी ठीक न होगा ।—प्रमथन, भा० २, पृ० ७ ।

लक्त—वि० [सं०] लाल । सुर्ख ।

लक्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अलता, जो स्त्रियाँ पैरो में लगाती है । अलक्तक । २ बहुत फटा हुआ पुराना कपड़ा । चीथड़ा । लता ।

लक्तकर्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्तकर्मन्] लाल लोच ।

लक्तिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छिपकली [को०] ।

लक्ष^१—वि० [सं०] एक लाख । सौ हजार ।

लक्ष^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह अक्ष जिससे एक लाख की सख्या का ज्ञान हो । जैसे,—१,००,००० । २ पैर । ३ चिह्न । निशान । ४ दे० 'लक्ष्य' । ५ अक्ष का एक प्रकार का सहार । उ०—
लक्ष अलक्ष युगल दृढनाभ मुनाभ दशाक्ष शतानन ।—रघुगज (शब्द०) । ६ व्याज । दिखावा । बहाना (को०) । ७ मुक्ता । मोती (को०) ।

लक्षक^१—वि० [सं०] १ (वह) जो लक्ष करा दे । जता देनेवाला । २ (वह शब्द) जो सबध या प्रयोजन से अपना अर्थ सूचित करे ।

लक्षक^२—सञ्ज्ञा पुं० एक लाख की सख्या [को०] ।

लक्षण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ किसी पदार्थ का वह विशेषता जिसके द्वारा वह पहचाना जाय । वे गुण आदि जो किसी पदार्थ में विशिष्ट रूप से हो और जिनके द्वारा महज में उसका ज्ञान हो सके । चिह्न । निशान । आसार । जैसे,—आकाश के लक्षण से जान पड़ता है कि आज पानी बरसेगा । २ नाम । ३ परिभाषा । ४ शरीर में दिखाई पड़नेवाले वे चिह्न आदि जो किसी रोग के सूचक हों । जैसे,—इस रोगी में क्षय के सभी लक्षण दिखाई देते हैं । ५ दर्शन । ६ सारम पत्नी । ७ सामुद्रिक के अनुसार शरीर के अंगों में होनेवाले कुछ विशेष चिह्न । जो शुभ या अशुभ माने जाते हैं । जैसे,—चक्रवर्ती और बुद्ध के लक्षण एक से होते हैं । ८ शरीर में होनेवाला एक विशेष प्रकार का धाला दाग जो बालक के गर्भ में रहने के समय सूर्य या चन्द्रग्रहण लगने के कारण पड़ जाता है । लच्छन । ९ चाल-ढाल । तौर तरीका । रग ढग । जैसे,—आजकन तुम्हारे लक्षण अच्छे नहीं जान पड़ते । १० दे० 'लक्षणा' । ११ पुरुषेन्द्रिय । शिश्न [को०] । १२ योनि । मग (को०) । १३ अघ्याय । परिच्छेद । स्कंध (को०) । १४ व्याज । छल छद्म (को०) । १५ लक्ष्य । उद्देश्य (को०) । १६ बँधी हुई सीमा । दर (को०) । १७ प्रस्तुत प्रसंग । उपस्थित विषय (को०) । १८ कारण (को०) । १९ नतीजा । परिणाम । अमर (को०) ।

लक्षणक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] चिह्न । निशान । लच्छन [को०] ।

लक्षणकर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्षणकर्मन्] परिभाषा [को०] ।

लक्षण ग्रंथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्षण + ग्रंथ] काव्य या साहित्य के लक्षणा वा विवेचन करनेवाला ग्रंथ । नाट्यविक्रम समीक्षा की पुस्तक । ममालोचना शास्त्र । उ०—पहली बात तो ध्यान देन की यह है कि लक्षण ग्रंथों के बनने के बहुत पहले में कविता होती आ रही थी ।—चितामणि, भा० २, पृ० ६२ ।

लक्षणज्ञ—वि० [सं०] लक्षणा की जाननेवाला । शुभ अशुभ चिह्न का ज्ञाता [को०] ।

लक्षणभ्रष्ट—वि० [सं०] जो शुभ लक्षणों में हीन या रहित हो । अभाग्य । भाग्यहीन [को०] ।

लक्षण लक्षणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की लक्षणा जिसे जहल्लक्षणा भी कहते हैं ।

लक्षणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ लक्षण शब्द की वह शक्ति जिससे उसका अर्थ लक्षित हो जाता है । शब्द की वह शक्ति जिससे उसका अभिप्राय सूचित होता है ।

विशेष—कभी कभी ऐसा होता है कि शब्द के माधारण अर्थ से उसका वास्तविक अभिप्राय नहीं प्रकट होता । वास्तविक अभिप्राय उसके माधारण अर्थ से कुछ भिन्न होता है । शब्द की जिस शक्ति से उसका वह माधारण से भिन्न और दूसरा वास्तविक अर्थ प्रकट होता है, उसे लक्षणा कहते हैं । साहित्य में यह शक्ति दो प्रकार की मानी गई है—निरुद्ध और प्रयोजनवती (विशेष दे० ये दोनों शब्द) ।

२. मादा हस । हसी । ३ मादा सारम । मारसी । ४ छोटी भटकटियाँ । ५ एक अप्सरा का नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है । ६ दुर्योधन की पुत्री का नाम जिसका विवाह कृष्ण के पुत्र साव ने हुआ था । लक्षणा ।

लक्षणान्वित—वि० [सं०] शुभ चिह्नवाला [को०] ।

लक्षणी—वि० [सं० लक्षणम्] १ जन्म कोई लक्षण या चिह्न हो । २ लक्षण जाननेवाला ।

लक्षण्य^१—वि० [सं०] १ चिह्न या निशान का काम देनेवाला । २ शुभचिह्न से युक्त ।

लक्षण्य^२—सञ्ज्ञा पुं० दैवज । भविष्यवक्ता [को०] ।

लक्ष्ना पु—क्रि० सं० [सं० लक्ष् + हि० ना (प्रत्य०)] लखना । देखना । उ०—पक्ष हू सवि सख्या सधी हैं मनांत लक्ष्ण स्वच्छ प्रत्यक्ष ही देखिए ।—केशव (शब्द०) ।

लक्ष्ण पु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्षण] दे० 'लक्षणा'-१ । उ०—बाण की वायु उदाय के लक्ष्ण लक्ष्ण करी अरिहा समर्थहि ।—केशव (शब्द०) ।

लक्ष्णा पु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्षणा] शब्दों की एक शक्ति । विशेष दे० 'लक्षणा' ।

लक्ष्णश—क्रि० वि० [सं० लक्ष्णश्] लाखों की सख्या में । २ अत्यधिक । अगणनीय । बहुत अधिक [को०] ।

लक्षा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक लाख की सख्या ।

लक्षि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] दे० 'लक्ष्मी' । उ०—सुनहि सुमुखि तो को त्यागती लक्षि दासी —केशव (शब्द०) ।

लक्षि^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्य] दे० 'लक्ष्य' । उ०—बाण की वायु

उदाय कं लक्ष्मि लक्ष्मि करी अरिहा ममरत्थहि ।—केशव (शब्द०) ।

लक्ष्मि—वि० [सं०] १ वतलाया हुआ । निर्दिष्ट । २ देखा हुआ । ३ अनुमान ने ममभा या जाना हुआ । ४ जिसपर कोई लक्षण या चिह्न बना हो ।

लक्ष्मि—सञ्ज्ञा पु० वह अर्थ जो शब्द की लक्षणा शक्ति के द्वारा ज्ञात होता है ।

लक्ष्मि लक्षणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की लक्षणा ।

लक्ष्मि—वि० [सं०] १ परिभाषा या व्याख्या करने योग्य । २ चिह्नित करने योग्य (को०) ।

लक्ष्मि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह परकीया नायिका जिसका गुप्त प्रेम उनकी सखियों को मालूम हो जाय । वह स्त्री जिसका पर-पुरुष-प्रेम दूसरों को ज्ञात हो ।

लक्ष्मि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अर्थ जो शब्द की अभिधा शक्ति द्वारा प्राप्त न हो । लक्षणा शक्ति द्वारा प्राप्त अर्थ (को०) ।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में आठ रगण होते हैं । इसे गगोदक, गगाधर और खजन भी कहते हैं । उ०—कोटि वाघा कटै पाप सारै घटै शम्भु शम्भू रटै नाथ जो मान कै ।—जगन्नाथप्रसाद (शब्द०) ।

लक्ष्मी—वि० [सं० लक्ष्मि] [वि० स्त्री० लक्ष्मिणी] शुभ लक्षणवाला । शुभ चिह्न से युक्त ।

लक्ष्मि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मि] १ चिह्न । निशान । २. घन्टा । दाग । लाञ्छन । ३ प्रवान । मुख्य । ४ परिभाषा । ५. मुक्ता । मोती (को०) ।

लक्ष्मि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रघुवशी राजा दशरथ के चार पुत्रों में से दूसरे पुत्र, जो सुमित्रा के गर्भ से उत्पन्न हुए थे ।

विशेष जब मिथिला में रामचंद्र जी ने वन्युप लोहा था, तब परशुराम के विगडने पर इन्होंने उनसे वादविवाद किया था । उमा अवसर पर उमिला के साथ इनका विवाह हुआ था । यद्यपि इनका स्वभाव बहुत ही उग्र और तीव्र था, तथापि ये अपने बड़े भाई रामचंद्र के बहुत बड़े भक्त थे, और सदा उनके अनुगामी रहते थे । जब रामचंद्र जी वन को जाने लगे थे, तब ये भी अयोध्या का सारा मुख छोड़कर केवल भक्ति और प्रेम-वश उनके साथ हो लिए थे । वन में ये सदा सब प्रकार से उनकी सेवा किया करते थे । रावण की बहन शूर्पणखा की नाक इन्हीं ने काटी थी । जिस समय मारीच सोने के मृग का रूप धरकर आया था और रामचंद्र उसे मारने निकले थे, उस समय सीता की रक्षा के लिये यही कुटी में थे । पर पाछे से सीता के बहुत आग्रह करने पर ये रामचंद्र का पता लगाने के लिये जगन में गए । राम-रावण-युद्ध के समय ये बहुत वीरता-पूर्वक लड़े थे और मेघनाद का वध इन्होंने किया था । उम युद्ध में ये एक बार शक्ति वाण लगने के कारण मूर्च्छित हो गए थे,

जिसपर रामचंद्र जी ने बहुत अधिक विलाप किया था । पर हनुमान द्वारा ओपवि लाए जाने पर उमके सेवन में शीघ्र ही इनकी मूर्च्छा दूर हो गई थी और ये फिर उठकर लड़ने लगे थे । जिस समय सीता जी अपने सतीत्व का प्रमाण देने के लिये अग्निप्रवेश करने को प्रस्तुत हुई थी, उस समय रामचंद्र की आज्ञा से इन्हीं ने सीता के लिये चिता तैयार की थी । रामचंद्र के वनवास के कारण ये अपने पिता राजा दशरथ और भाई भरत से बहुत अपसन्न हो गए थे, पर पीछे में भरत की ओर से इनका मन साफ हो गया था और इन्होंने समझ लिया था कि इसमें भरत का कोई दोष नहीं है । ये बहुत ही तेजस्वी, वीर और शुद्ध चरित्र के थे । उमिला से इन्हें अगद और चंद्रकेतु नाम के दो पुत्र थे । पुराणानुसार ये शेषनाग के अवतार माने जाते हैं ।

२ दुर्घोषन के पुत्र का नाम । ३ चिह्न । लक्षण । ४ नाग । ५. आख्या । नाम (को०) । ६ सारस ।

लक्ष्मि—वि० १. चिह्न वा लक्षणों से युक्त । २ जो श्री से युक्त हो । भाग्यशाली । जिसमें शोभा और कांति हो ।

लक्ष्मि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. मद्र देश के राजा बृहत्सेन की कन्या जो श्रीकृष्ण जी को व्याही थी और उनकी आठ पटरानियों में से एक थी । २ दुर्घोषन की बेटे का नाम । यह कृष्ण के पुत्र साव की स्त्री थी । ३. एक जड़ी ।

विशेष—यह पुत्रदा मानी जाती है । यह जड़ी पर्वतों पर मिलती है । इसके पत्ते चौड़े होते हैं और उनपर लाल चदन की सी बूँदें होती हैं । इसका बंद सफेद होता है और वही ओपवि के काम में आता है ।

पर्या०—पुत्रकदा । पुत्रका । नागपत्नी । जननी । नागिनी । नागाह्व । मज्जिका । तुलिनी । ४ श्वेत कटकारी । सफेद भटकटैया (को०) । ५ सारस की मादा वा हसी ।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मि] १ ३० 'लक्ष्मि' । २. हस या सारस पत्नी । ३ लक्ष्मि (को०) ।

लक्ष्मी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ हिंदुओं की एक प्रसिद्ध देवी जो विष्णु की पत्नी और धन की अधिष्ठात्री मानी जाती हैं ।

विशेष—भिन्न भिन्न पुराणों में इनके संबंध में अनेक कथाएँ मिलती हैं । इनकी उत्पत्ति के संबंध में प्रसिद्ध है कि देवताओं और दानवों के समुद्रमथने में जो चौदह रत्न निकले थे, उन्हीं में से एक यह भी थी । इनका वर्ण श्वेत च पक या कवन के समान, कमर बहुत पतली, नितंब बहुत विशाल और चार भुजाएँ मानी जाती हैं । यह भी कहा गया है कि ये अत्यंत सुंदरी हैं । और मदा युवती रहती हैं । ये महालक्ष्मी भी कही जाती हैं और इनकी पूजा अनेक अवसरों पर, विशेषतः वननेरस और दोवाली की रात को होनी है । मूर्तियों में ये या तो अकेली बँठी हुई और या क्षीरमागर में साते हुए विष्णु भगवान् के चरण दवाती हुई दिखलाई जाती हैं ।

पर्या०—पद्मालया । पद्मा । कमला । श्री । हरिप्रिया । इक्षिरा ।
लोकमाता । माँ । श्रीराधितनया । रमा । जनधिजा ।
भार्गवी । हरेवल्लभा ।

२ धन सपत्ति । दीलत ।

यौ०—लक्ष्मीवान् । लक्ष्मीपति = धनवान् ।

३ शोभा । सौंदर्य । छवि । उ०—जय अरि जय हित चतुरी
वदन लक्ष्मी वर ढगी ।—गिरिधर (शब्द०) । ४ दुर्गा का
एक नाम । ५ एक वर्षावृत्त जिसके प्रत्येक चरण में दो
रगण, एक गुरु और एक लघु अक्षर होता है । जैसे,—जाहि
पावै नही सत । खेल सो लक्ष्मी कत । ६ आर्या छंद के २६
भेदों में से पहला भेद जिसके प्रत्येक चरण में २७ गुरु और
३ लघु वर्ण होते हैं । ७ सीता जी का एक नाम । ८ ऋद्धि
नाम की श्लोपधि । ९ वृद्धि नाम की श्लोपधि । १० वीर
स्त्री । ११ घर की मालकिन । गृहस्वामिनी । १२ हल्दी ।
१३ शमी वृक्ष । १४ मोती । १५ मोक्ष की प्राप्ति । १६
वह वृक्ष जो फलता हो अथवा जिसमें फल लगे हो । १७
पद्म । कमल । १८ सफेद तुलसी । १९ मेढ़ासिंगी । २०
अभ्युदय । सौभाग्य (को०) । २१ प्रभुशक्ति । राज्यशक्ति
(को०) । २२ चंद्रमा की ग्यारहवीं कला (को०) । २३ कन्या ।
पुत्री ।

लक्ष्मीक सद्भा पुं० [सं०] १ धनवान् । अमीर । २ भाग्यवान् ।

लक्ष्मीकात—सद्भा पुं० [सं० लक्ष्मीकान्त] १ नारायण । विष्णु ।
२ राजा । नरेश (को०) ।

लक्ष्मीगृह—सद्भा पुं० [सं०] लाल कमल ।

लक्ष्मीजनार्दन—सद्भा पुं० [सं०] एक प्रकार के शालग्राम जो बहुत
काले रंग के होते हैं और जिनपर एक और चार चक्र
रहते हैं ।

लक्ष्मी टोडी—सद्भा स्त्री० [सं० लक्ष्मी + हि० टोडी] एक प्रकार
की सकर रागिनी जिसमें सब कोमल स्वर लगते हैं ।

लक्ष्मीताल—सद्भा पुं० [सं०] १ मगीत में १८ मात्राओं का एक
ताल जिसमें १५ आघात और ३ खाली होते हैं । इसके मृदंग
+ १ २ ० ३ ४ ५ ०
के बोल इस प्रकार है—घा केटे घा घा केटे ताग घा केटे
६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ ० +
तागे नेना आन खून प्रौदे न तावेम गे तेटे गदि घेन । घा ।
२ श्रीताल नामक वृत्त ।

लक्ष्मीधर - सद्भा पुं० [सं०] स्रग्धरी छंद का दूसरा नाम । २
विष्णु ।

लक्ष्मीनाथ—सद्भा पुं० [सं०] १ विष्णु । २ धनी । ३ राजा ।

लक्ष्मीनारायण—सद्भा पुं० [सं०] एक प्रकार के शालग्राम जो बहुत
काले रंग के होते हैं और जिनपर एक और चार चक्र बने
होते हैं । लक्ष्मीजनार्दन ।

लक्ष्मीनिकेतन—सद्भा पुं० [सं०] आमलक चूर्ण में कि । हथ्रा
स्नान (को०) ।

लक्ष्मीनिधि—सद्भा पुं० [सं०] १ राजा जनक के पुत्र का नाम ।
२ वी व्यक्ति ।

लक्ष्मीनृसिंह—सद्भा पुं० [सं०] एक प्रकार के शालग्राम जिनपर
दा चक्र और एक वनमाला बनी होती है । ऐसे शालग्राम
गृहस्थों के लिये उद्भूत गृह माने जाते हैं ।

लक्ष्मीपति—सद्भा पुं० [सं०] १ विष्णु । नारायण । २ कृष्ण ।
३ राजा । ४ लींग का वृत्त । ५ सुधारी का वृत्त ।

लक्ष्मीपुत्र—सद्भा पुं० [सं०] १ कामदेव । २ घोडा । ३ सीता
के पुत्र लज और कुण ।

लक्ष्मीपुत्र—सद्भा धनवान् । अमीर ।

लक्ष्मीपुष्प—सद्भा पुं० [सं०] १ माणिक । लाल । २ पद्म । कमल ।
३ लींग का फूल ।

लक्ष्मीपूजा—सद्भा स्त्री० [सं०] वह पर्व जिसमें लक्ष्मी का पूजन
करते हैं । दीपावली ।

लक्ष्मीफल—सद्भा पुं० [सं०] देल । श्रीफल ।

लक्ष्मीरमण—सद्भा पुं० [सं०] नारायण ।

लक्ष्मीवत् - सद्भा पुं० [सं०] १ विष्णु । २ कटहल का वृक्ष । ३
अश्रुतय का वृत्त ।

लक्ष्मीवत् - वि० धनवान् । अमीर ।

लक्ष्मीवल्लभ—सद्भा पुं० [सं०] विष्णु ।

लक्ष्मीवसति—सद्भा स्त्री० [सं०] लाल कमल जो लक्ष्मी का निवास
माना जाता है । लक्ष्मीगृह (को०) ।

लक्ष्मीवार—सद्भा पुं० [सं०] गुरुवार ।

लक्ष्मीघेष्ट—सद्भा पुं० [सं०] ताडपीन ।

लक्ष्मीश'—सद्भा पुं० [सं०] विष्णु । २ आम का वृक्ष ।

लक्ष्मीश'—वि० धनवान् । अमीर ।

लक्ष्मीसमाह्वया—सद्भा स्त्री० [सं०] सीता जी का एक नाम (को०) ।

लक्ष्मीसहज, लक्ष्मीसहोदर—सद्भा पुं० [सं०] १ चंद्रमा । २ कपूर
(को०) ३ इद्र का घोडा । उच्च श्रवा (को०) । ४ शख (को०) ।

लक्ष्य'—सद्भा पुं० [सं०] १ वह वस्तु जिसपर किसी प्रकार का
निशाना लगाया जाय । निशाना । २ वह जिसपर किसी प्रकार
का आक्षेप किया जाय । ३ अभिलषित पदार्थ । उद्देश्य । ४
अस्त्रों का एक प्रकार का सहार । ५ वह जिसका अनुमान किया
जाय । अनुमेय । ६ वह अर्थ जो किसी शब्द की लक्षणा शक्ति
के द्वारा निकलता हो । ७ व्याज । व्यपदेश । वहाना (को०) ।
८ एक लाख की मर्यादा (को०) ।

लक्ष्य'—वि० १ देखने योग्य । दर्शनीय । २ जिसका लक्षण या परि-
भाषा की जाय (को०) ।

लक्ष्यक्रम—वि० [सं०] जिसका क्रम लक्षित हो । जैसे, लक्ष्यक्रम
ध्वनि ।

लक्ष्यग्रह—सद्भा पुं० [सं०] लक्ष्य भावना । निशाना लेना (को०) ।

लक्ष्यज्ञ - वि० [सं०] लक्ष्य का जानकार । लक्ष्य को जाननेवाला ।

लखुआं'—सञ्ज्ञा पुं [सं० लान्ना (= लान्) + हि० उआ (प्रत्य०)]
१ लाखा या ल'ही नामक रोग जो गेहूँ के पौधों में लगता है ।
२ लाल मुँहवाला वदर ।

लखुआं—सञ्ज्ञा पुं [हि० लखना + उआ (प्रत्य०)] दे० 'लखिया' ।
लखुवां—सञ्ज्ञा पुं (सं० लान्ना + हि० उवा (प्रत्य०)) दे० 'लखुवा' ।
लखेदना^①—क्रि० सं० (सं० लक्ष्य = प्रा० लक्ख, हि० लख +
ऐदना < सं० भेदन अथवा हि० खेदना या खेदना) खदडना ।
भगाना । खेदना । स्थानच्युत करना वा हटा देना ।

लखेरा--सञ्ज्ञा पुं [हि० लाख + एरा (प्रत्य०)] १, वह जो लाख की
चूड़ी आदि बनाता हो । २ हिंदुओं में एक जाति जो लाख की
चूड़ियाँ आदि बनाती है ।

लखोट, लखाट—सञ्ज्ञा पुं [हि० लकुट] दे० 'लकट' (फल) ।
लखोट'—सञ्ज्ञा स्त्री [हि० लाख + श्रोट (प्रत्य०)] लाख की चूड़ी
आदि जो छियाँ हाथों में पहनती है । उ०—हाथन लखोट पाइ
चूरा पचमरागी गरे, गोरी की जुगुल जानु कोरी मनो केरा की ।
—देव (शब्द०) ।

लखौटा'—सञ्ज्ञा पुं [हि० लाख + श्रौटा (प्रत्य०)] १ चदन, केसर
आदि से बना हुआ अगाराग वा अघर राग । उ०—दरशन तो
भुख को भयो सुमुखो मोहि रसाल । बिना लखौटा हू लगे अघर
श्रौठ अति लाल ।—लक्ष्मण (शब्द०) । २ एक प्रकार का
छोटा डिब्बा जो प्रायः पीतल का बनता है और जिसमें स्त्रियाँ
प्रायः सिद्धर आदि सौभाग्य के द्रव्य रखती हैं । इसके ढकने में
प्रायः शीशा भी लगा होता है ।

लखौटा'—सञ्ज्ञा पुं [हि० लेख + श्रौटा (प्रत्य०)] लिखावट ।
लखौटा^①—सञ्ज्ञा स्त्री [हि० लाख + श्रौटा (प्रत्य०)] लाख की
चूड़ी । लखौट ।

लखौटा'—वि० [हि० लखना (= देखना) + श्रौटा (प्रत्य०)] परि-
चायक । रखानेवाला । सूचित करनेवाला । उ०—जैसे समुद्र में
नाव पर सबके आगे मार्ग दिखलानेवाला माँझी रहता है, वैसे
ही तेरे हाथ में यह लखौटा है ।—भारतेंदु प्र०, भा० १,
पृ० २०१ ।

लखौरी'—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० लान्ना, हि० लाखा + श्रौरी (प्रत्य०)]
(तु० आवृत्ति)] १ एक प्रकार की अमरी का घर जो वह
मिट्टी से घरो के कोनों में बनाती है । भृगी का घर । २ भारत
की एक प्रकार की छोटी पतली ईंट जो प्रायः पुराने मकानों में
पाई जाती है और जिसका व्यवहार अब कम होता जा रहा
है । नातेरही ईंट । कर्कैया ईंट । लखौरिया ईंट ।

लखौरी'—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० लक्ष्, हि० लाख (सख्या)] किसी देवता
को उसके प्रिय वृक्ष की एक लाख पत्तियाँ या फल आदि
चढ़ाना । जैसे,—शिव जी को बेलपत्र की या लक्ष्मीनारायण को
तुलसी की लखौरी चढ़ाना ।

क्रि० प्र०—चढ़ाना ।—जलाना या बालना = लाख वस्तियों की
आरती करना ।

लख्त—सञ्ज्ञा पुं [फा० लख्त] टुकड़ा । खट । अश । उ०—कि चश्मे

खूँ चर्का में लखते दिल पहम निकलते हैं ।—भारतेंदु प्र०, भा०
२, पृ० ८४८ ।

यौ०—लखते जिगर = हृदय का टुकड़ा । पुत्र वा अत्यंत प्रिय व्यक्ति ।

लगत—सञ्ज्ञा स्त्री [हि० लगना + अत (प्रत्य०)] १ लगन हाने की
क्रिया या भाव । उ०—आलम में जब बहार की आकर खिलत
है । दिल की नई लगन को मजे की लगत है ।—नजोर (शब्द०) ।
२ लगन या स्त्रीप्रसंग करने की क्रिया या भाव ।

लग'—क्रि० वि० [हि० ला] १ तक । पर्यंत । ताई । उ०—एक
मुहूरत लग कर जोरा । नयन मूँदे श्रीपतिहि निहोरी ।—रघु-
राज (शब्द०) । २ निकट । समीप । नजदीक । पाम । उ०—
यहि भाति दिगोश चले मग में । इम सार सुन्या प्रति ही लग
में ।—गुमान (शब्द०) ।

लग'—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० लिग्] लगन । लाग । प्रेम । उ०—भाँकति है
का भरोखा लगी लग लागिबे की इहाँ मेल नहीं फिर ।
—पद्माकर (शब्द०) ।

लग'—अव्य० १ वास्ते । लिये । उ०—भृगुपति जीति परसु तुम पायो ।
ता लग ही लकेश पठायो ।—हृदयराम (शब्द०) । २ साथ ।
मग । उ०—नगलगा वातनि अलग लग लगी आवै लोगनि की
लग ज्यो लुगाइन की लाग री ।—देव (शब्द०) ।

लगड—वि० [सं०] खूबसूरत । पुदर [को] ।

लगढग—क्रि० वि० [हि०] दे० 'लगभग' ।

लगण—सञ्ज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का रोग जिसमें पलक पर एक
छोटी, चिकनी, कड़ी गाँठ हो जाती है । इस गाँठ में न तो
पीडा होती है और न यह पकती है ।

लगदी—सञ्ज्ञा स्त्री [श्रेय०] वह विछीना जिसे बच्चेवाली स्त्रियाँ बच्चों
के नीचे इसलिये विछाकर उन्हें अपने पास सुलाती हैं कि जिसमें
उनके मलमूत्र से और विछीने खराब न होने पावें । कयरी ।
पोतडा ।

लगन'—सञ्ज्ञा स्त्री [हि० लगना] १ किसी और ध्यान लगने की
क्रिया । प्रवृत्ति का किसी एक और लगना । लौ । जैसे,—आज
कल तो आपको बस कलकत्ते जाने की लगन लगी है ।

क्रि० प्र०—लगना ।—लगाना ।

२ प्रेम । स्नेह । मुद्रवत । प्यार ।

क्रि० प्र० लगना ।—लगाना ।

३ लगने की क्रिया या भाव । लगाव । सबध ।

लगन'—सञ्ज्ञा पुं [सं० लगन] १ विवाह के लिये स्थिर किया हुआ
कोई शुभ मुहूर्त । व्याह का मुहूर्त या साइत । २ वे दिन जिनमें
विवाह आदि होते हो । सहालग । ३ दे० 'लगन' ।

मुहा०—लगन धरना = विवाह की तिथि निश्चित करना ।

लगन'—सञ्ज्ञा पुं [फा०] १ ताँवे, पीतल आदि की थाली जिसमें
रखकर गोमवत्ती जलाई जाती है । २ कोई बड़ी थाली जिसमें
आटा सूँघते या मिठाई आदि रखते हैं । ३ मुसलमानों की
एक रीति जिसमें विवाह से पहले थालियों में मिठाइयाँ आदि
भरकर वर के लिये भेजी जाती हैं ।

लगन(७) — सञ्ज्ञा पुं० [?] एक प्रकार का मृग । दे० 'लगना' ।

लगनपत्री — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लगनपत्रिका] विवाहसमय के निर्णय की चिट्ठी जो कन्या का पिता वर के पिता को भेजता है ।

लगनवट(७) — सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लगन + वट (प्रत्य०)] १ लगन । प्रेम । मुग्धव्रत । उ०—प्राचीं खेता लगनवट ऋतु कुन्याज मग खेत । वर वडे सो आपन किए पाच दुख हेत ।—तुलसी (शब्द०) ।

लगनवट(१) — सञ्ज्ञा पुं० दे० 'लगनवट' ।

लगनवट(२) — सञ्ज्ञा पुं० [हि० लगन + वट (प्रत्य०)] लगन का समय । वह समय जब विवाह शादियाँ होती हैं । लगनवट ।

लगना(१) — क्रि० अ० [सं० लगन] १ दो पदार्थों का तल आपस में मिलना । एक चीज की सतह पर दूसरी चीज की सतह का होना । सटना । जैसे,—टेबुल पर कपडा लगना, तमबीर पर शीशा लगना, दीवार पर इश्तहार लगना । उ०—मिट्टी में सनी हुई बदनवास एक पत्थर से लगी टूट थी ।—देवकीनदन (शब्द०) । २ एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में सलन होना । मिलना । जुटना । जैसे,—तसवीर में चौखटा लगना, अलमारी में शीशा लगना, किमी के गले लगना । उ०—लागत ह जाय कठ नाग दिगपालन के मेरे जान सोई वृत कीरति तिहारी है ।—केशव (शब्द०) । ३ किसी पदार्थ के तल पर पडना । जैसे,—पैर में कीचड लगना, कपडे में मिट्टी लगना, कागज में दाग लगना । ४ एक चीज का दूसरी चीज पर भीना, जडा, टाँका या चिपकाया जाना । जैसे,—चादर में बेल लगना, धोती में फीता लगना, कोट में बटन लगना । उ०—(क) जटित जराय की जंजीर बीच नीलमर्या लागि रहे लोगनि के नेन मानो मन्हर ।—केशव (शब्द०) । (ख) सिर पर फोलादी टोपी जिममें एक हुमा के पर की लाँवा कलगी लगी हुई थी ।—देवकीनदन (शब्द०) । ५ समिलित होना । शामिल होना । मिलना । जैसे,—पुस्तक में परिशिष्ट लगना, रजिस्टर में पन्ने लगना । ६ उत्पन्न होना । जमना । उगना । जैसे,—(क) यह गुलाब इन जमीन में न लगेगा । (ख) इस पेड में खूब आम लग ह । ७ छोर या प्रात आदि पर पहुँचकर टिकना या रुकना । ठिकाने पर पहुँचन । जैसे,—किनारे पर नाव लगना, दरवाजे पर गाडी या बरात लगना । ८ क्रम से रखा या सजाया जाना । सिलसिले से रखा जाना । जैसे,—अलमारी में किताबें लगना, दूकान पर माल लगना, बरात लगना, हाट लगना, नुमाइश लगना । ९ व्यय होना । खर्च होना । जैसे,—(क) व्याह में दस हजार रुपए लगे । (ख) उसे दौहन दो, तुम्हारा क्या लगता है । १० जान पडना । मालूम होना । अनुभव होना । जैसे,—डर लगना, मोह लगना, पेशाब लगना, अचछा लगना, बुरा लगना, जाडा लगना, गरमा लगना । उ०—चद्रकाता के विरह में मोरी की आवाज तीर सी लगती है ।—देवकीनदन (शब्द०) । ११ स्थापित होना । कायम होना । जैसे,—मकान में कल लगना, छत के नीचे खमा लगना । १२ सबध या रिश्ते में कुछ होना । जैसे,—वह हमारा भाई लगता है ।

उ०—दशरथ आपके कौन लगते हैं और आप दशरथ के कौन लगते हैं ।—वाल्मीकीय रामायण (शब्द०) । १३ आघात पडना । चोट पहुँचना । जैसे,—लाठी लगना, थपपड लगना, तलवार लगना । उ०—धौल का लगना था कि वह पत्थर का आदमी उठ बैठा ।—देवकीनदन (शब्द०) । १४ टक्कर खाना । टकराना । जैसे,—जरा सा ढकेलते ही उसका मिर दीवार से जा लगा । १५ किसी चीज के ऊपर लेप किया जाना । पोता जाना । मला जाना । जैसे,—लकड़ी पर वार्निश लगना, फोडे पर दवा लगना, पान पर कत्या लगना, मिर में तेल लगना । १६ किसी पदार्थ का किसी प्रकार की जलन या चुनचुनाहट आदि उत्पन्न करना । जैसे,—(क) यह सूरन बहुत लगता है । (ख) यह दवा पहले तो कुछ लगेगी, पर फिर ठडक डाल देगी । १७ खाद्य पदार्थ का (पकने के समय जल आदि के अभाव या आँच की अधिकता के कारण) बरतन के तल में जम जाना । जैसे,—खचडी में पानी छोडो, नहीं तो लग जायगी । १८ किसी प्रकार की प्रवृत्ति आदि का आरंभ होना । जैसे,—चाट लगना, चसका लगना । १९ आरंभ होना । शुरू होना । जैसे,—(क) अब तो ग्रहण लग गया है । (ख) कल से चँत लगेगा । (ग) उनकी नौकरी लग गई है । २० उपयोग में आना । काम में आना । जैसे,—(क) जितना मसाला आया था, वह सब एक ही मकान में लग गया । (ख) तुम्हारी चारों साडियाँ लग गई । २१ काम के लिये आवश्यक होना । जरूरी होना । जैसे,—(क) इस महीने में हमें चार गाडी भूसा लगेगा । (ख) अब तो उन्हें भी चश्मा लगता है । (ग) रजिस्टरी में दो आने का टिकट लगता है । (घ) तुम्हें जो जो चीजें लगे, सब मुझसे माँग लेना । २२ जारी होना । चलना । जैसे,—(क) आजकल दोनों में खूब लडाईं लगी है । (ख) अब तो तुम्हारा ही काम लगा है, दो चार दिन में पूरा हो जायगा । (ग) दो चार दिन में काम लगेगा । २३ एक चीज का दूसरी चीज के साथ रगड खाना । जैसे,—चलने में घोडे के पैर लगना, गाडी का पहिया लगना । २४ सडना । गलना । जैसे,—(क) यह आम लग गया है । (ख) इस बेल का कवा लग गया है । २५ किसी ऐसे कार्य का आरंभ होना जिममें बहुत स लोगो के एकत्र होने की आवश्यकता हो । जैसे,—महाफल लगना, मेला लगना । २६ प्रभाव पडना । असर होना । जैसे,—(क) परदेस में हमें पानी बहुत जल्दी लगता है । (ख) कडाही में आँच लग रही है । (ग) तुम्हें डाक्टरों दवा नहीं लगती । (घ) तुम्हें उसी का शाप लगा है । (च) मुरती बहुत तेज थी, लग गई है ।

मुहा०—लगती बात कहना = ऐसी पते की बात कहना कि सुनने-वाला मन मसोसकर रह जाय । मर्मभेदी बात कहना । चुटकी लेना ।

२७ दातव्य नियत होना । देना । निश्चित होना । जैसे,—टैक्स लगना, व्याज लगना, किराया लगना । २८ आरोप होना । जैसे,—दफा लगना, हत्या लगना, पाप लगना । २९ प्रज्वलित होना । जलना । जैसे,—

श्राग लगना, दीया लगना । उ०—श्रीचक्र ही कर माँझ साँझ ही अग्नि लगी बडो अनुरागी रहि गई सोऊ वारिए।—प्रियादास (शब्द०) । ३० काम मे श्राने योग्य होना । ठीक बँठना । उपयुक्त होना । जैसे,—यह ताली इस ताले मे लग जाती है । ३१ हिसाब होना । गणित होना । जैसे,—पुरजा लगना, जोड़ लगना । ३२ पीछे पीछे चलना । साथ होना । शामिल होना । जैसे,—(क) बाजार म पहुँचते ही दलाल लगते हैं । (ख) तुम्हारे साथ भी सदा एक न एक आदमी लगा रहता है । उ०—लगे वाके पाये काछे काछ की न सुधि कछू गई घर अछि रहे द्वार तनु छोजिए ।—प्रियादास (शब्द०) ।

मुहा०—लग चलना = किसी के साथ या पीछे हो लेना । जैसे—जहाँ तुमने कोई मालदार अमामी दखा, वहाँ तुम उसके पीछे लग चले ।

३३ सबद्ध होना । चिमटना । जैसे,—रोग लगना । ३४ किसा कार्य मे प्रवृत्त या तत्पर होना । जैसे,—(क) तुम्हे इन सब भगवो से क्या मतलब, तुम अपने काम मे लगे । (ख) वह सबेरे से लिखने मे लगा है । ३५ स्पर्श करना । छूना । उ०—कृपा करी निज वाम पठायो अपना रूप दिखाय । वाके आश्रम जोऊ बसत हे माया लगत न ताय ।—सूर (शब्द०) । ३६ गौ, भैम, बकरी आदि दूध देनेवाले पशुओं का दूहा जाना । जैसे,—यह भैस दिन मे तीन बार लगती है । ३७ गहना । चुमना । धसना । उ०—इह कंठे मा पाय लगी लोन्ही मरति जिवाय । प्रीति जनावते भीति सो मीत जु काढ्या त्राय ।—विहारी (शब्द०) । ३८ बदले मे जाना । मुजरा होना । जैसे,—उनके दोना मकान कर्ज मे लग गए । ३९ समीप पहुँचना । पास जाना । छूना । जैसे,—पैरो लगना । उ०—(क) उठहिं तुरग लेहिं नहिं वागा । जाना उलट गगन कहँ लागा ।—जायसा (शब्द०) । (ख) ।वतचोरन चित्तचार मैं व्योरो इतनो अइ । इह पाय कँ मारिए, उनके लागयँ पाय ।—(शब्द०) । ४० छेड़वानी करना । छेड़छाड़ करना । जम,—ऐसे आदामयो से मत लगा करो । उ०—श्रीरन सो कार रहे अचगरा मोसो लगत कःहाई ।—सूर (शब्द०) । ४१ वद हाना । मुँदना । जैसे,—कवाड लगना । उ०—प्रजुन के मादर पगु धारा । देखे लगे कपाट दुआरा ।—सवल (शब्द०) । ४२. जूए का बाजी पर रखा जाना । दाँव पर रखा जाना । वदना । जैसे,—(क) पाँच रुपए इस दाँव पर लगे ह । (ख) अच्छा, इसी बात पर शर्त लगी । ४३ अंकित होना । चिह्नित होना । जैसे,—तिलक लगना, निशान लगना, मोहर लगना, ठप्पा लगना । ४४. बारदार चीज की बार का तेज किया जाना । जैसे,—उस्तरा लगना, कैची लगना । ४५ घात मे रहना । ताक मे रहना । जैसे,—(क) उस रास्ते मे सध्या के बाद डाकू लगते हैं । (ख) इस जगल मे शेर लगते हैं । ४६. किसा स्थान पर एकत्र होना । जैसे,—(क) इस घाट पर मछलियाँ लगती ह । (ख) वाग मे मच्छड़ लगते

हैं । ४७ दाम प्राँज जाना । जैसे,—बाजार मे घड़ी का दाम २०) लगा है । ४८ किसी चीज का, विशेषत ज्ञाने की चीज का, अन्यस्त होना । परचना । सधना । जैसे,—लडका रोटी पर लग गया है । ४९ अपन निजत स्थान या कार्य आदि पर पहुँचना । जैसे,—पारमल लगना, रजिन्टरी लगना । ५० फैलना । बिजना । जैसे,—प्रिँना लगना, जाल लगना । ५१ सभोग करना । मथुन करना । स्त्रीप्रसंग करना । (वाजाह) । ५२ होना । जैसे,—(क) अभी हमे यहाँ दर लगेगी । (ख) वहाँ मे हट जाओ, नहीं तो तुम्हारा ही नाम लगेगा । (ग) यह गाव वहा से चार काम लगता है । (घ) श्रवकी अमावस की ग्रहण लगेगा । (च) यहाँ तो किनावो का डेर लगा है । ५३ जहाज का छिड़ने पानी मे श्रववा किनारे की जर्मन पर चड जाना । (लश०) । ५४ एक जहाज का दूसरे जहाज के सामने या बराबर आना । (लश०) । ५५ पान का लीचकर चढाया जाना (लश०) ।

विशेष—(क) भिन्न भिन्न शब्दों के साथ यह क्रिया लगकर भिन्न भिन्न अर्थ देती है । जैसे,—नींद लगना, दाँत लगना, बात लगना, समाधि लगना, नैवेद्य लगना, आदि । इस प्रकार के बहुत मे अर्थों मे से अधिकारा की गयाना मुहावरों मे होनी चाहिए । (ख) इस क्रिया के अलग अलग अर्थों मे जाना, पढना आदि अलग अलग सयाजक क्रियाएँ लगती हैं ।

लगना^१ सञ्ज्ञ पुं० [लृ०] एक प्रकार का जगली मृग । उ०—हरिन रोमू लगना वन वसे । चोतर गोइत भास्य श्री ससे ।—जायसी (शब्द०) ।

लगनि^२—सञ्ज्ञ स्त्री० [लृ० लगन, हिं० लगन] दे० 'लगन' । उ०—नैन लगे तिहिं लानि सा डुटे न छूटै प्रान । काम न श्रावत एकहू तेरे मो कि सयान ।—विहारी (शब्द०) ।

लगनियाँ^३—सञ्ज्ञ पुं० [सं० लगन, हिं० लगन + इया (प्रत्य०)] १. एक प्रकार का गात । लगन या विवाह के प्रवमर पर गाया जानेवाला गीत । उ०—दाम रुबार यह गवल लगनियाँ हो । कवीर० श०, भा० ४, पृ० १६ । २ विवाह का लगन लेकर जानेवाला व्यक्ति ।

लगनी—सञ्ज्ञ स्त्री० [फा० लगन (=थाली)] १ छोटी थाली । रिकामी । २ पानदान मे की वह तश्तरी जिममे पान रखे जाते हैं । ३ परात ।

लगनीय—वि० [म०] लगने योग्य । जो सलगन या सयोजित हो सके [को०] ।

लगभग^४—क्रि० वि० [हिं० लग (=पास) + अनु० भग] प्राय करीब करीब । जैसे,—(क) वहाँ लगभग सी आदमी उपस्थित थे । (ख) इस काम मे लगभग एक महीना लगेगा ।

लगमात—सञ्ज्ञ स्त्री० [हिं० लगना + सं० मात्रा] स्वरो के वे चिह्न जो उच्चारण के लिये व्यंजनो मे जोड़े जाते हैं । स्वरो के चिह्न । जैसे,—ए का े, ओ का ो । उ०—ना लगमात न

न माये त्रिदी अरुणा पीत नहि काला । ऐंडा वेंडा टेढा नाही
ना वह श्रात जंजाता ।—चरण० वानी, पृ० ३८४ ।

लगर ①—सञ्ज्ञा पुं० [दिश०] चील की तरह का एक शिकारी पक्षी ।
लगड । उ०—(क) नैन लगर धूँधुट खुलाहि पवन खोल जब
लेत । नेही मन किरपान कन रूपट सतूना देत ।—रसनिधि
(शब्द०) । (ख) जुर्ना वाज वामे कुही बहरी लगर बोने
टोने जरकटी त्यो सचान सानघारे हैं ।—(शब्द०) ।

लगलगा—वि० [अ० लफाफ] बहुत दुबला पतला । प्रति मुकुमार ।
उ०—श्रीखियाँ अघर चूमि, हाहा छाँडो कहे भूमि, छतियाँ सो
लगी लगलगी सी हलकि कै ।—दव (शब्द०)

लगव ①—वि० [अ० लगो] १ भूठ । मिथ्या । अमत्य । २.
व्यर्थ । बेकार । निष्प्रयोजन ।

लगवाना—क्रि० स० [हि० लगाना का प्रेर० रूप] लगाने का
काम दूसरे से कराना । दूसरे को लगाने में प्रवृत्त करना ।
उ०—प्रथम सत्रगि लगवाइ कै क्वर दीन्ह सुचारि ।—विश्राम
(शब्द०) ।

लगवावना ①—क्रि० स० [हि० लगाना] दे० 'लगवाना' । उ०—
तहाँ एक दिन नद कन्हाई । गए खरि क लगवावन गाई ।
—विश्राम (शब्द०) ।

लगवार ①—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लगना (= प्रसंग करना) + वार (प्रत्य०)]
स्त्री का उपपत्ति । वार । आशना । उ०—साँझ सकार दिया
लै वारे । खसम छोडि सुमिरै लगवारै ।—कवीर (शब्द०) ।

लगवियत—सञ्ज्ञा स्त्री [अ० लगवियत] १ बदमाशी । वेहूदगी ।
लुच्ची । २. व्यर्थता । निरर्थकता (की०) ।

लगहर ①—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लाग + हर (प्रत्य०)] वह काँटा या तराजू
जिसमें पासंग हो ।

लगहर ②—वि० [हि० लगना + हर (प्रत्य०)] वि० लगनेवाली । दूध
आदि देनेवाली । २ सडा गला हुआ फल या सब्जी ।

लगाई—सञ्ज्ञा स्त्री [हि० लगाना] १. सबब । लगाव । सगाई । २
बुगली । आरोप ।

यौ०—लगाई बभाई = (१) झूठी सच्ची लगाना । इधर की बात
उधर करना । (२) किसी से लगने या अर्बध सबध करने-
वाली स्त्री ।

लगाऊ ①—वि० [हि० लगाना + ल (प्रत्य०)] इधर की बात उधर
करनेवाला । बुगलखोर ।

लगातार—क्रि० वि० [हि० लगाना + तार (= तिलसिला)] एक के
बाद एक । मिलसिलेवार । बराबर । निरंतर । सतत । जैसे,—
(क) आज चार दिन से लगातार पानी बरस रहा है । (ख)
वह लगातार दो घंटे तक व्याख्यान देता रहा ।

लगान—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लगना या लगाना] १. लगने या लगाने की
क्रिया या भाव । २ किसी मकान के ऊपरी भाग में मिला हुआ
कोई ऐसा स्थान जहाँ से कोई वहाँ भा जा सकता हो । ताग ।
जैसे,—इस मकान में दोनों तरफ से लगान है । ३ वह स्थान
जहाँ पर मजदूर आदि सुरताने के लिये अपने मिर या बोझ
उतारकर रखते हैं । ४. वह स्थान जहाँ पर नावें आकर

ठहरा करती हैं । ५ वह स्थान जहाँ जंगल में रात को पशु
आते हैं । शिकारी लोगों के छिपकर बैठने का वह स्थान जहाँ
से शिकार किया जाता है । ६ भूमि पर लगनेवाला वह कर
जो खेतिहरो की ओर से जमींदार या सरकार को मिलता है ।
राजस्व । भूकर । जमावदी । पोत ।

यौ०—लगान मुकररी = यत भूवर । लगान वाकई = वास्तविक
भूकर ।

लगाना—क्रि० स० [हि० लगना का सक० रूप] १ एक पदार्थ के
तल के साथ दूसरे पदार्थ का तल मिलाना । मतलब पर सतह
रखना । मटाना । जैसे,—दीवार पर कागज लगाना, दफती
पर तमबीर लगाना, कपड़े में अस्तर लगाना, लिफाफे पर टिकट
लगाना । २ दो पदार्थों को परस्पर मलग्न करना । मिलाना ।
जोड़ना । जैसे,—दराज में मुठिया लगाना, चाकू में दस्ता
लगाना । ३ किसी पदार्थ के तल पर कोई चीज डालना, फेंकना,
रगड़ना, चिपकाना या गिराना । जैसे,—चेहरे पर गुलाल
लगाना, सिर में तेल लगाना । उ०—दीन्ह लगाय चून निज
पानी । तेहि फल भई अवध की रानी ।—विश्राम (शब्द०) ।
४ एक चीज पर दूसरी चीज सीना, टाँकना, चिपकाना या
जोड़ना । जैसे,—टोपी में कलगी लगाना, ढोटे में बटन लगाना ।
५ समिलित करना । शामिल करना । साथ में मिलाना ।
जैसे,—किताब में जिल्द लगाना, मिसिल में चिट्ठी लगाना, शब्द
में प्रत्यय लगाना । ६ वृद्ध आदि आरोपित करना । जमाना ।
उगाना । जैसे,—वाग में पेड़ लगाना । ७. एक श्रोत या किसी
उपयुक्त स्थान पर पहुँचाना । जैसे,—बदरगाह में जहाज
लगाना । ८ क्रम में रखना या मजाना । कायदे या मिलसिले में
रखना । मजाना । चुनाना । जैसे,—दस्तरखान लगाना, कमरे में
तसवीरें लगाना, गुच्छा लगाना, बाजार लगाना । ९ रच
करना । व्यय करना । जैसे,—उन्होंने हजारी रूपए लगाए, तब
जाकर मकान मिला । उ०—घन निज रघुपति हेतु लगावै ।
राम भक्ति हिय में उपजावै ।—रघुगज (शब्द०) । १ अनुभव
कराना । मालूम कराना । जैसे,—यह दवा तुम्हें बहुत भूल
लगावेगी । ११ स्थापित करना । कायम करना । जैसे,—
उन्होंने अपने यहाँ विजनी का इजन लगा रखा है । १२ आघात
करना । चोट पहुँचाना । जैसे,—थप्पड़ लगाना, मुक्का लगाना ।
१३ लेप करना । पोतना । मलना । जैसे,—जूने पर न्याही
लगाना । १४ किसी में कोई नई प्रवृत्ति आदि उत्पन्न करना ।
जैसे,—आपने ही तो उन्हें मिणेट का चमका लगाया है । १५.
उपयोग में लाना । काज में लाना । जैसे,—भगड लगाना,
नीमरी लगाना । १६ मडाना । गलाना । जैसे,—(क) तुमने
लापरवाही न सब पान लगा दिए । (ख) यानी जीन कमन
बनने तुमने घोड़े की पीठ लगा दी । १७ ऐसा कार्य
करना जिनमें बहुत से लोग एकत्र या समिलित हों । जैसे,—
तुम तो जहाँ जाते हो, मेरा जग देन हो । १८ दातव्य
निश्चित करना । यत् करेना कि रचना अनर्थक दिया जाय ।
जैसे,—कर लगाना । १९ आरोपित करना । अभियोग
लगाना । जैसे,—जुर्म लगाना ।

मुहा०—किमी को लगाकर कुछ कहना या गाली देना = बीच में किसी का सबव स्थापित करके किमी प्रकार का आरोप करना ।
 २० प्रज्वलित करना । जलाना । जैसे,—कड़ाही के नीचे आँच लगा दो । उ०—मेरा प्रभु करौ नेक रहौँ पाँच घरौ जाइ कहौ तुम वठा कही आग सी लगाई है ।—प्रियादास (शब्द०) । २१ ठाक स्थान पर बँठाना । जडना । जैसे,—घड़ी में सूई लगा, चौखटे में शीशा लगाना । २२ गणित करना । हिसाब करना । जैसे,—व्याज लगाना, जोड़ लगाना । २३ किसी के पीछे या साथ नियुक्त करना । शामिल करना । जैसे,—तुम भी उनके पीछे अपना दूत लगा दो । २४ किसी प्रकार साथ में मबद्ध करना । जैसे,—तुमने यह अच्छी बला मेरे पीछे लगा दी । २५ किसी के मन में दूसरे के प्रति दुर्भाव उत्पन्न करना । कान भरना । चुगली खाना । जैसे,—(क) किसी ने उन्हें मेरी तरफ से कुछ लगा दिया है । (ख) तुम तो यों ही इधर की उधर लगाया करते हो ।

यौ०—लगाना वृम्भाना = लडाईं भगडा कराना । दो आदमियों में वैमनस्य उत्पन्न करना ।

२६ अपने साथ या पीछे ले चलना । जैसे,—वह बहुतो को अपने साथ लगाए फिरता है । २७ किसी कार्य में प्रवृत्त या तत्पर करना । नियुक्त करना । जैसे,—(क) लडके को किसी रोजगार में लगा दो । (ख) जो काम किया करो, वह मन लगाकर किया करो । उ०—जिनको चारिहु द्वारन प्रथम लगायो राम ।—रघुराज (शब्द०) । २८ गौ, भैस, बकरी आदि दूध देनेवाले पशुओं को दूहना । जैसे,—वह गौ लगाने गया है । २९ गाडना । धंसाना । ठोकना । जडना । जैसे,—दीवार में फील लगाना । ३० समीप पहुँचाना । पास ले जाना । सटाना । जैसे—वह दरवाजे के पास कान लगाकर सुनने लगा । ३१ स्पर्श कराना । छुआना । जैसे,—उसने तुरत गिलास उठाकर मुँह में लगाया । ३२ बंद करना । जैसे,—दरवाजा लगाना, कुरते की घुडी लगाना, ताना लगाना । ३३ जूए की वाजी पर रखना । दाँव पर रखना । जैसे,—(क) उसने अपने पास के सब रुपए दाँव पर लगा दिए । (ख) मैं तुमसे वाजी नहीं लगाता । उ०—देश कोश नृप सकल लगाई । जीति लेत्र सब रहि नहिं जाई ।—सबल (शब्द०) । ३४ किसी विषय में अपने आपको बहुत दत्त या श्रेष्ठ समझना । किमी बात का अभिमान करना । जैसे,—वह गाने में अपने आपको बहुत लगाता है । ३५ अग पर पहनना, ओढना या रखना । धारण करना । जैसे,—चश्मा लगाना, छाता लगाना । ३६ बदले में लेना । मुजरा करना । जैसे,—यह थँगूठी तो हमने अपने लहने में लगा ली । ३७ अंकित करना । चिह्नित करना । जैसे,—तिलक लगाना, निशान लगाना, मोहर लगाना । ३८ धारदार चीज की धार तेज करना । सान पर चढ़ाना । जैसे,—खुरपा लगाना, कैंची लगाना । ३९ खरीदने के समय चीज का मूल्य कहना । दाम आँकना । जैसे,—मैंने उनके मकान का दाम ५,०००) लगा दिया है । ४० किसी चीज का, विशेषतः खाने

की चीज का श्रम्यस्त करना । परचाना, मावना । जैसे,—लडके को दाल रोटी पर लगा लो, दूध कहाँ तक दिया करोगे । ४१ नियत स्थान या कार्य पर पहुँचाना । जैसे, पारमल लगाना, मनीआर्डर लगाना । ४२ फँलाना । विछाना । जैसे,—विछीना लगाना, जान लगाना । ४३ सभोग करना । मंथन करना । प्रसग करना । (वाजाह) । ४४ करना । जैसे,—(क) आपने वहाँ बहुत दिन लगा दिए । (ख) यहाँ कपडो का ढर मत लगाना । उ०—अब जनि देर लगावहु स्वामी । देखि प्रीति बोले ऋषि ज्ञानी ।—विश्राम (शब्द०) । ४५ जहाज को छिछलाया या किनारे की जमीन पर चडाना । (लश) । ४६ एक जहाज को दूसरे जहाज के सामने या बराबर ले जाना । (लश०) । ४७ पाल खींचकर चढ़ाना । (लश०) ।

विशेष—(क) भिन्न भिन्न शब्दों के साथ इम क्रिया के भिन्न भिन्न अर्थ होने हैं । जैसे,—दाँव लगाना, समाधि लगाना, कान लगाना, दम लगाना आदि । इस प्रकार के बहुत से अर्थों में से अधिकश की गणना मुहावरों में होनी चाहिए । (ख) इस क्रिया के अलग अलग अर्थों में छोडना, डालना, देना, रखना आदि अलग अलग संयोजक क्रियाएँ लगती हैं ।

लगाम—सब्बा स्त्री० [फा०] १ लोहे का वह काटेदार ढाँचा जो घोडे के मुँह के अंदर रखा जाता है और जिसके दोनों ओर रस्सा या चमडे का तस्मा आदि बंधा रहता है । दत्तालिका । कविका ।

क्रि० प्र०—उतारना ।—चढाना ।—लगाना ।

मुहा०—लगाम चढाना या देना = (१) किसी को कोई कार्य करने से, विशेषतः बोलने से रोकना । (२) लंगोट कसना । (वाजाह) ।

२. इस ढाँचे के दोनों ओर बंधा हुआ रस्सा या चमडे का तस्मा जो सवार या हाँकनेवाले के हाथ में रहता है । सवार या हाँकनेवाला इसी रस्से या तस्मे की सहायता से घोडे का चलाता, रोकता, इधर उधर मोडता और अपने वश में रखता है । रास । बाग ।

मुहा०—लगाम लिए फिरना = किसी को पकडने, बाँधने या वश में करने के लिये उसका पीछा करना । बराबर दूढते फिरना ।

लगामी(५)—सब्बा स्त्री० [फा० लगाम] लगाम । रास । उ०—हाथि लगामी ताजगी, पारकई सेवई राजहुवार —श्री० रासो, पृ० ६६ ।

लगाय(५)—सब्बा स्त्री० [हि० लगाव] प्रेम सत्रय । लगन ।

लगायत—प्रव्य० [अ० लगायत] १ लेकर । शुरू कर । २ अत तक ।

लगार(५)।—सब्बा स्त्री० [हि० लगना + आर (प्रत्य०)] १ नियमित रूप से कोई काम करने या क ई चीज देन की क्रिया या भाव ।

बधी । बोज । २ लगने की क्रिया या भाव । लगाव । सबध ।

उ०—वार वार फन घात कै विप ज्वाला की भाार । सहसौ फन फन फूँकरै नैक न तनहिं लगार ।—सूर (शब्द०) । ३

तार । क्रम । सिलसिला । उ०—सात दिवस नहिं मिटी लगार ।

वरण्यो सलिल अखाडेत धार ।—सूर० (शब्द०) । ४ लगन ।

प्रीति । लगावट । मुहव्वत । उ०—चकोर नरोसे चद के ताता

गिले अंगार। कहे कवीर छोटे नही ऐसी वस्तु नगर।—
(शब्द०)। ५. वह जो किमी की ओर में भेद लेने के लिये भेजा
गया हो। वह जो किसी के मन को बात जानने के लिये किमी
की ओर से गया हो। उ०—प्रौर सखी एक श्याम पठाई।
हरि को बिरह देखि भइ व्याकुल मान मनावन आई। वैठो
आइ चतुरई काछे वह कछु नही नगर। देखति हौ कछु और
दसा तुम वृकते वारवार।—सूर० (शब्द०)। ६. वह जिसे
घनिष्टता का व्यवहार हो। मेची। सवधी। ७. रास्ते के बीच
का वह स्थान जहाँ में जुआरी लोग जूआ खेलने के स्थान तक
पहुँचाए जाते हैं। टिकान।

विशेष—प्राय जूआ किमी गुप्त स्थान पर होता है, जिसके वही
पास ही सकेत का एक और स्थान नियत होता है। जब कोई
जुआरी वहाँ पहुँचता है, तब या तो उसे जुए के स्थान का
पता बतला दिया जाता है और या उसे वहाँ पहुँचाने के लिये
कोई आदमी उसके साथ कर दिया जाता है। इसी सकेत स्थान
को, जहाँ से जुआरी जूआ खेलने के स्थान पर भेजे जाते हैं,
जुआरी लोग 'लगार' कहते हैं।

८. वह जो पास या निकट हो। समीप की वस्तु। लगी या मटी हुई
चीज। उ०—दरिया सब जग आँवरा, भूँ नही लगार।—
दरिया० बानी, पृ० ३७।

लगालगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लगना (लंग का द्वित्वीकृत रूप)] १. लाग।
लगन। प्रेम। स्नेह। प्रीति। उ०—(क) क्यों वमिएँ क्यों
निबहिएँ नीति नेहपुर नाहि। लगालगी लोचन करै नाहक मन
बंध जाहि।—बिहारी (शब्द०)। (ख) लगालगी लोधी गली
लगे लागलै लाल। गैल गोम गोपी लगे पालागो गोपाल।—
केशव (शब्द०)। २. सत्रघ। मेलजोत। ३. उलझाव। फँसाव।
उलझन (को०)।

लगाव—सञ्ज्ञा पुं० [लगना + आन (प्रत्य०)] लगे होने का भाव।
सवध। वास्ता। जैसे,—(क) न दोनो मकानो मे कोई लगाव
नही है। (ख) मैं ऐसे लोग से कोई लगाव नही रखता।

लगावट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लगना + आवट (प्रत्य०)] १. नवध।
वास्ता। लगाव। २. प्रेम। प्रीति। लगन। मुहवत। जैसे,—
लगावट की बातें।

लगावन(पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लगाव] लगाव। सवध। वास्ता।
उ०—हम है अफसर तुम हौ बावन। हमरी तुमरी कहीं लगा-
वन।—रामवृष्ण (शब्द०)। २. वह जके सहारे कुछ कुछ
वाया जाय। जैसे,—दाल, ताक, चटनी, आचार, नमक, मिर्च
आदि। ३. जलान की लकड़ी, उपला आदि ईंधन।

लगावना—क्रि० स्० [हि० लगाव + ना (प्रत्य०)] दे० 'लगाना'।
उ०—केती लाए फौज और क्या आवनी। सौ सब लेउ बुलाइ
न देर लगावनी।—मदन (शब्द०)।

लगी(पुं०)—अव्य० [हि०] दे० 'लग'।

लगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लगनी] दे० 'लगनी'। उ०—(क) लहलहाति
तन तरुई लचि लगी ली लपि जाइ। लग लीक लोयन भरी

लोयन लेति लगाइ।—बिहारी (शब्द०)। (ख) नाम लगी
व्याय लामा ललिन वचन कहि व्याव ज्यों विषय चिहंनि
वक्कावा।—तुनमी (शब्द०)।

लगीत—वि० [सं०] १. सलग्न। मयुक्त। नवधिन। २. प्राप्त।
आलम्ब। उपलब्ध। ३. प्रविष्ट। घुना हूआ (को०)।

लगीं—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लगुड] दे० 'लगनी'। उ०—एहि विपनारइ
सत्र बुधि ठगी। अठ भा काल हाथ लेइ लगीं।—जायसी
(शब्द०)।

लगीं—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लगनी] १. प्रेम। मुहवत। आशनाई।
उ०—हजूर यह लगीं बुरी होती है।—फिमाना०, भा० ३,
पृ० ३३२। २. हवाहिश। इच्छा। ५. भूख।

मुहा०—लगीं बुझना = मन की भूख मिटना। इच्छा पूरी होना।
लगीं लिपटी कहना = पक्षपातपूर्ण बात कहना। लल्लो चप्पो
कहना। उ०—जो लगाए कहे लगीं लिपटी। वे कभी वन मके
नही मचवे।—चुभते०, पृ० १७।

लगु(पुं०)—अव्य० [हि०] दे० 'लग'।

लगुड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लगुड] १. डड। डडा। लाठी। २. प्राय,
दो हाथ लंबा लोहे का एक विशेष प्रकार का डडा जिसका
व्यवहार प्राचीन काल में पैदल सैनिक अस्त्रों के समान करते थे।
३. लाल कनेर।

चौ०—लगुडवशिका = छोटी जाति का और पतला एक प्रकार का
वाँस। लगुडहस्त = छड़ी वरदार।

लगुडी—वि० [सं० लगुडिन्] हाथ में लगुड लिए हुए। लगुडहस्त।
दहवारा।

लगुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लगुड' (को०)।

लगुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गूल ?] जिह्वन। (डि०)।

लगुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लगुड' (को०)।

लगुवां—वि० [हि० लगना + उवा (प्रत्य०)] १. पीछे लगनेवाला।
पीछे पीछे चलनेवाला। पिछलगू। २. प्रेम करनेवाला। प्रेमी।
लगनेवाला। उ०—पतनार माहन हारी को। लडुवा भयी फित्त
दिन रजनी लगुवा गोगे भोरी को।—घनानंद, पृ० ५१६।

लगूर(पुं०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गूल] पूँछ। डुम। उ०—जरा लगूर
मु राता उहाँ। निकसि जो भाग भएउ कर्ममुहाँ।—जायसी
(शब्द०)।

लगूल पु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गूल] पूँछ। डुम। उ०—हनुमान
हाँक सुनि वरपि फून। मुर बार बार वरनाहि नगून।—तुनमी
(शब्द०)।

लगीं—अव्य० [हि०] दे० 'लग'।

लगे लगे—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लगाना] वदर।

रों के घाने पर छियाँ और वच्चे 'लगे लगे'
हैं, और वदर का नाम लेना लोग ठीक नहीं
प्राय 'वदर' के अर्थ में इस नाम

लगो—वि० [अ० लगे] निरर्थक । अर्थहीन । वेकार । असगत ।
वेतुका [को०] ।

लगौहीं—वि० [हि० लगना + औहीं (प्रत्य०)] जिसे लगन लगाने
की कामना हो । लगने का आकांक्षी । रिक्तवार । उ०—
(क) लगौहीं चितवनि श्रीरहि होति । डुरति न लाख दुराओ
कोऊ प्रेम भनक की जोति ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) । (ख) त्त
सकुचत निघरक फिरो रतियो खोरि तुम्हें न । कहा करी जो
जाहिं ये लगें लगौहीं नैन ।—विहारी (शब्द०) ।

लगगत—सञ्ज्ञा स्त्री० दे० 'लागत' ।

लगगा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लगुड] १ लवा बाँस । २. वृक्षो से फल
आदि तोड़ने का वह लंबा बाँस जिसके आगे एक अकुसी लगे
रहती है । लकसी । ३ वह लवा बाँस जिसके सहारे से छिछले
पानी में नाव चलाते हैं । लग्गी । ४ घास या कीचट आदि
हटाने का एक प्रकार का फरसा जिसमें दस्ते की जगह एक
भवा बाँस लगा रहता है ।

लगगा^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लगना] १ कार्य आरंभ करना । काम में
हाथ लगाना । २ मुख्य खिलाड़ियों की रजामंदी पर अन्य
दर्शकों द्वारा जूए का दाँव लगाना जिनकी हार जीत मुख्य
खिलाड़ी की हार जीत पर निर्भर करती है ।

क्रि० प्र०—लगाना ।

विशेष—इस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग केवल 'लगना' और
'लगाना' क्रियाओं के साथ ही होता है ।

लग्गी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लगुड] लंबा बाँस । उ० 'लगगा' ।

क्रि० प्र०—मारना ।—लगाना ।

लग्गू—वि० [हि० लगना (=सभोग करना)] १ सभोग करने-
वाला । २ उपपति । जार । यार । (वाजार) ।

यौ०—लग्गुबभङ्गू = जो लगा बभङ्गा हो । पिछलग्गू ।

लग्गड़—सञ्ज्ञा पुं० [दे०] १ (बड़ा) बाज । सचान । २ एक प्रकार
का चीता जो सामान्य चीते से बड़ा होता है ।

विशेष—इसे शिकार करना सिखाया जाता है । यह प्रायः छह
फुट लंबा होता है । इसकी आँखों पर एक जजोर से पट्टियाँ
बँधी रहती हैं । इसी को 'लकडबग्गा' भी कहते हैं ।

लग्गा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लगगा] दे० 'लगगा' ।

लग्गो—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लग्गी] दे० 'लग्गी' ।

लग्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ज्योतिष में दिन का उतना अंश, जितने
में किसी एक राशि का उदय रहता है ।

विशेष—पृथ्वी दिन रात में एक बार अपनी धुरी पर घूमती है,
और इस बीच में वह एक बार भेष आदि बारह राशियों को
पार करती है । जितने समय तक वह एक राशि में रहती
है, उतने समय तक उस राशि का लग्न कहलाता है ।
किसी राशि में उसे कुछ कम समय लगता है और किसी
में अधिक । जैसे,—मीन राशि में प्रायः पीने चार दंड, वन्या
में प्रायः साढ़े पाँच दंड, और वृश्चिक में प्रायः पीने छह, दंड ।

लग्न का विचार प्रायः बालक की जन्मपत्री बनाने, किसी
प्रकार का मुहूर्त निकालने अथवा प्रश्न का उत्तर देने में
होता है ।

२ ज्योतिष के अनुसार कोई शुभ कार्य करने का मुहूर्त । ३
विवाह का समय । उ०—एकदि लग्न गवहि कर पक्केउ,
एक मुहूर्त दियाहे ।—मूर (गद०) । ४ विवाह । शादी ।
५ त्रिमास के दिन । महानग । ६ वह जो राजाओं की
गुति करता हो । बंदोजन । गूत । ७ मत्त द्विप । मत्त
हाथी (को०) । ८ वाग्द्वी की मन्था क्योंकि लग्न वाग्द्वी हात
हैं । ९ त्रिप । शुभ । भद्र (को०) ।

लग्न^२—वि० १ लगा हुआ । मिला हुआ । २ लज्जित । शर्मिदा ।
३ आमन्त्र ।

लग्न^३—सञ्ज्ञा पुं० [पञ्ज० लग्न] दे० 'लग्न' ।

लग्न^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लगना] दे० 'लग्न' ।

लग्नककण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लग्नककण] वह ककण या मंगलपून
जो विवाह के पूर्व घर और कन्या के हाथ में बाँधा जाता है ।

लग्नक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह जो जमानत करे । प्रतिभू । जामिन ।
२ एक राग जो तुमम् के मत से मेघ राग का पुत्र माना
जाता है ।

लग्नकाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शुभ समय । शुभ घड़ी । कोई शुभ
कार्य, विवाह, यज्ञ आदि करने के लिये निर्धारित शुभ
समय ।

लग्नकुटली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लग्नकुटली] फलित ज्योतिष में
वह चक्र या कुंडली जिसमें यह पता चलता है कि किसी
के जन्म के समय कौन कौन से ग्रह किस किस राशि में थे ।
जन्मकुटली ।

लग्नग्रह—वि० [सं०] किसी घात पर दृष्टतापूर्वक भड़नेवाला ।
आग्रही (को०) ।

लग्नदंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लग्नदंड] गाने या बजाने के समय स्वर
के मुख्य अंशा या श्रुतियों को आपस में एक दूसरे से अलग न
होने देना और सुंदरता से उनका सयोग करना । लाग डंड ।
(मगीत) ।

लग्नदिन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ विवाह के लिये निश्चित दिन । २
किसी शुभ कार्य के करने के लिये चुना गया दिन ।

लग्नदिवस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लग्नदिन' (को०) ।

लग्नपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह पत्रिका जिसमें विवाह और उसके
संबंध रखनेवाले दूसरे कृत्यों का लग्न स्थिर करके व्योरेवार
लिखा जाता है ।

लग्नपत्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लग्नपत्र' ।

लग्नमुहूर्त, लग्नवासर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लग्नदिन । लग्नकाल । शुभ
समय (को०) ।

लग्नवेला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लग्नकाल' (को०) ।

लग्नसमय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लग्नकाल' (को०) ।

लग्नार्थ—सञ्ज्ञा पु० [स०] ज्योतिषी । ज्योतिर्विद् ।
 लग्नयु—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] फलित ज्योतिष में वह आयु जो लग्न के अनुसार स्थिर की जाती है ।
 लग्नाह—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'लग्नद्वय' [को०] ।
 लग्निका—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] लग्निका का असाधु रूप] १ नगी औरत । बेहया स्त्री (को०) । २ कन्या जो अरजस्का हो । कम अवस्थावाली लड़की ।
 लग्नेश—सञ्ज्ञा पु० [स०] फलित ज्योतिष में वह ग्रह जो लग्न का स्वामी हो ।
 लग्नोदय—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १ किमी लग्न के उदय होने का समय । २ लग्न के उदय होने का कार्य ।
 लग्नगो—वि० [अ० लग्न + फा० गो] १ मिथ्यावादी । २ वाचाल । वातूनी [को०] ।
 लग्नगोई—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लग्न + फा० गोई] १ झूठ बोलना । मिथ्याकथन । उ०—थोड़ी जिदगी के वास्ते कौन लग्नगोई करके दोख में जाने का काम करे ।—श्रीनिवास ग्र०, पृ० ६७ । २. बकवास । वाचालता ।
 लघट्, लघटि—सञ्ज्ञा पु० [स०] वायु [को०] ।
 लघडबग्गा—सञ्ज्ञा पु० [देश०] एक प्रकार का चीता । लघड ।
 लघमीपुष्प—सञ्ज्ञा पु० [स०] लक्ष्मीपुष्प] पसरग मणि । लाल । मारिष्य । मानिक (हिं०) ।
 लघाट—सञ्ज्ञा पु० [स०] दे० 'वायु' [को०] ।
 लघिना—सञ्ज्ञा पु० [स०] प्राचीन काल का एक प्रकार का धारदार अस्त्र जिसमें दस्ता लगा होता था और जिससे भैसे आदि काटे जाते थे ।
 लघिमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] लघिमन्] १ आठ सिद्धियों में से चौथी सिद्धि (कहते हैं, इसे प्राप्त कर लेने पर मनुष्य बहुत छोटा या हलका बन सकता है) । २. लघु या ह्रस्व होने का भाव । लघुत्व ।
 लघु—वि० [स०] १ शीघ्र । जल्दी । २. जो बढान हो । कनिष्ठ । छोटा । जैसे,—लघु स्वर, लघु मात्रा । ३ सुन्दर । बढिया । आनन्ददायक । इष्ट । अभिप्रेत । ४ जिसमें किसी प्रकार का सार या तत्व न हो । निःसार । महत्त्वहीन । अनावश्यक । ५ स्वल्प । थोडा । कम । ६ हलका । सरल । आसान । ७ नीच । क्षुद्र । नगण्य । ८ दुर्बल । दुबला । ९ अमिश्रित । शुद्ध । निमल (को०) । १० फुत्ताला (को०) ।
 लघु—सञ्ज्ञा पु० १. काला अग्र । २ उशीर । खस । ३ हस्त, अश्विनी और पुष्य ये तीनों नक्षत्र जो ज्योतिष में छोटे माने गए हैं और जिनका गण 'लघुगण' कहा गया है । ४. समय का एक परिमाण जो पंद्रह क्षणों का होता है । ५ तीन प्रकार के प्राणायामों में से वह प्राणायाम जो बारह मात्राओं का होता है (शेष दो प्राणायाम मध्यम और उत्तम कहलाते हैं) । ६ व्याकरण में वह स्वर जो एक ही मात्रा का होता है । जैसे,—

अ, इ, उ, ओ, ए आदि । ७ वह जिसमें एक ही मात्रा हो । एकमात्रिक । इसका चिह्न (।) है ।

विशेष—इस अर्थ में इसका प्रयोग संगीत में ताल के सबध में और छंद शास्त्र में वर्णों के सबध में होता है ।

८ वशी का छोटा होना, जो उसके छह, दोषों में से एक माना जाता है । ९ चाँदी । १० पृक्का । असवरग । ११ वह जिसका रोग छूट गया हो (रोग छूटने पर शरीर कुछ हलका जान पड़ता है) ।

लघुकंकोल—सञ्ज्ञा पु० [सं० लघुकङ्कौल] एक प्रकार का कंकाल जो साधारण कंकाल से छोटा होता है ।

लघुकटकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० लघुकटकी] लजसू ।

लघुक—वि० [सं०] १. लघु । हल्का । २. महत्त्वहीन । तुच्छ [को०] ।

लघुकटाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लघुकटकारी] दे० 'कटकारी' ।

लघुकण—सञ्ज्ञा पु० [स०] सफेद जीरा ।

लघुकर्कधु—सञ्ज्ञा पु० [सं० लघुकर्कधु] भुँईं वेर ।

लघुकणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] मूवा ।

लघुकाम—सञ्ज्ञा पु० [सं०] बकरी ।

लघुकाय—सञ्ज्ञा पु० [सं०] छाग । अज । बकरा [को०] ।

लघुकाय—वि० हलके शरीरवाला [को०] ।

लघुकाश्मर्य—सञ्ज्ञा स० [स०] कटहल का वृक्ष ।

लघुकिन्नरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का वाजा जिसमें बजाने के लिये तार लगे होते थे ।

लघुकोष्ठ—वि० [सं०] १ जिसका पेट हलका हो । २ खाली पेटवाला [को०] ।

लघुकौमुदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बरदराज कृत सिद्धांतकौमुदी के सक्षिप्त रूप का नाम ।

लघुकर्म—सञ्ज्ञा पु० [सं०] जल्दी जल्दी चलने की क्रिया । तेज चाल ।

लघुकर्म—वि० [सं०] द्रुतगामी । तेज कदम बढानेवाला [को०] ।

लघुखटिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मचिया । छोटी खाट । खटोला [को०] ।

लघुग—सञ्ज्ञा पु० [स०] वायु । पवन [को०] ।

लघुगण—सञ्ज्ञा पु० [स०] ज्योतिष में अश्विनी, पुष्य और हस्त इन तीनों नक्षत्रों का समूह ।

लघुगति—वि० [स०] तेज चलनेवाला [को०] ।

लघुगण—सञ्ज्ञा पु० [स०] १ खैरा नाम की मछली । २. टेंगरा या त्रिकटक नाम की मछली ।

लघुगोधूम—सञ्ज्ञा पु० [सं०] एक छोटी किस्म का गेहूँ [को०] ।

लघुचचरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लघुचञ्चरी] संगीत में एक ताल [को०] ।

लघुचदन—सञ्ज्ञा पु० [सं० लघुचन्दन] अग्र नामक सुगंधित लकड़ी ।

लघुचित्त—सञ्ज्ञा पु० [सं०] वह जिसका मन बहुत दुर्बल या चंचल हो ।

लघुचित्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मन के बहुत ही दुर्बल या चंचल होने का भाव ।

लघुचिर्भिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] राफेद इद्रायण । एषो इद्र-
वारुणी [को०] ।

लघुचेता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुचेतस्] वह जिगके विचार उन्नत ही बुद्धि
श्रीर बुद्धि हो नीच ।

लघुच्छदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] महा शतावरी । पत्नी ज्ञापर ।

लघुजगल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुजङ्गल] दे० 'लघुजागल' [को०] ।

लघुजल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लवा नामक पत्नी ।

लघुजागल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुजाङ्गल] लवा नामक पत्नी ।

लघुतम—वि० [सं०] मर्ममे छोटा ।

यौ०—लघुतम ममापवर्त्य = दे० 'लघुत्तमापवर्त्य' ।

लघुता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ लघु होने का भाव । छोटापन । नापन ।
२ हलकापन । तुच्छता ।

लघुताल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सगीत में एक तान [को०] ।

लघुतिक्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गुरदा मग ।

लघुतुपक—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लघु + हि० तुपक] तमना । पिम्पान ।

लघुत्तम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुत्तम] गणित की एक श्रिगा । लघुत्तमा-
पवर्त्य ।

लघुत्तमापवर्त्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह सबसे छोटी नन्या जो रा
या अधिक सख्याओं में से प्रत्येक को पूरा पूरा भाग दे सके ।

लघुत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लघु होने का भाव । लघुता । २ हलका-
पन । छोटापन । तुच्छता ।

लघुदत्ती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लघुदन्ती] छोटी दत्ती । विशेष दे० 'दत्ती' ।

लघुदुडुभी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लघुदुडुभी] एक प्रकार की छोटी
दुडुभी । दुग्गी ।

लघुद्राक्षा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] किशमिण ।

लघुद्रात्री—वि० [सं०] मरलता में द्रवण होने या गतोवाला [को०] ।

लघुनामकर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जनियो के अनुसार वह कर्म जिसस
जीव का शरीर न तो बहुत भारी होता है और न बहुत हलका
होता है, बल्कि साधारण सम विभक्त होता है ।

लघुनामा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुनामन्] अगल नामक मुगधित लकड़ी ।

लघुनालिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तुपक । छोटी बहक [को०] ।

लघुपचक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुपञ्चक] शालिपर्णी, पिठवन, कटाई
(छोटी), कटेहरी (बड़ी) और गोलरु इन पांचा की जड़ों का
समूह जो बंधक के अनुसार पाचक, बलकारक, माहक और ज्वर,
शवास तथा अशमरी आदि को दूर करनेवाला माना जाता है ।

लघुपचमूल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुपञ्चमूल] दे० 'लघुपचक' ।

लघुपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कमीला ।

लघुपत्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोचना नामक वृक्ष [को०] ।

लघुपत्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अश्वत्थ वृक्ष ।

लघुपर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. मूर्धा । मरोडफली । २ शतमूली ।
सतावर ।

लघुपाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह पाक पदार्थ जो गरम में पक जाय ।

लघुपाकी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुपाकी] रोना नामक पदार्थ ।

लघुपत्ती—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुपत्ति] शीत ।

लघुपर्णिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लघुपर्णिक [को०] ।

लघुपुत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुत्र पदन ।

लघुपुत्र्या—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लघुपुत्र्या । लघुपुत्र्या ।

लघुभयन्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] यार्गी ।

लघुफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गृध्र ।

लघुवदर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [स्त्री० लघुवदरी] प्याज के । लघुवदी
[को०] ।

लघुमासो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जन्म, रचना । मूत्रपत्रा । लघुमासो [को०] ।

लघुभद—वि० [सं०] नीच पन या लज्जा काटि में जन्म लाने का ।

लघुभुम्—वि० [सं० लघुभुम्] लघुभुम् । लघुभुम् [को०] ।

लघुभोजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लघुभोजन । लघुभोजन ।

लघुमय—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुमय] छोटी गीतगारी ।

लघुमति—वि० [सं०] छोटा समनमान । कमममक । मूर्ख ।

लघुमांस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तीतर नामक पक्षी ।

लघुमासो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्याज की जड़नामी ।

लघुमान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नायिका का वह मान या अन्ना रोप जो
नायक को किमी दूरी स्त्री में बातचीत करते देखकर उद्वेग
होता है ।

लघुमूल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गणित में समीकरण की न्यूनतर संख्या
या पद [को०] ।

लघुमूलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मूर्धा [को०] ।

लघुमेरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सगीत में एक तान [को०] ।

लघुलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ करले की वेन । २ अनतमूल ।

लघुलय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ उजोर । मग । २ पीना वाला या
लामज (लामजक) नाम की घाम ।

लघुलोणिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लोणी का भाग ।

लघुवासा—वि० [सं० लघुवासा] हल्का अथवा निशुद्ध वस्त्र धारण
करनेवाला [को०] ।

लघुविक्रम—वि० [सं०] द्रुतगामी । जल्दी चलनेवाला [को०] ।

लघुवृत्ति—वि० [सं०] १ दुर्बल । बलतमोज । २ हलका । छिद्रना ।
३ अव्यवस्थित । वेदमेपन से गपन [को०] ।

लघुवेदी—वि० [सं० लघुवेदी] ठीक, शीघ्र और लक्ष्य भेद करनेवाला ।
चतुर निधानेवाज [को०] ।

लघुशका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लघुशका] मूर्धोत्तार । पेशाव करता ।

लघुशख—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लघुशख] घाघा ।

लघुशिखर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सगीत में एक प्रकार का ताल ।
इसे 'लघुशेखर' भी कहते हैं ।

लघुशोत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लिखोडा ।

- लघुसत्य—वि० [सं०] बुर्बल या चंचल चित्तवाला ।
- लघुसदाफला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छोटी गूलर । कडूमर [को०] ।
- लघुसमुत्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कौटिल्य के अनुभार वह राजा या राज्य जो लडाई के लिये जल्दी तैयार किया जा सके ।
- विशेष—गुरु ममुत्थ और लघु समुत्थ इन दो प्रकार के मित्रों में कौटिल्य ने दूमरे को ही अच्छा कहा है, क्योंकि उमकी शक्ति बहुत नहीं होती, पर वह समय पर खड़ा तो हो सकता है । पर प्राचीन आचार्य गुरु समुत्थ को ही अच्छा मानते थे, क्योंकि यद्यपि वह जल्दी उठ नहीं सकता, पर जब उठता है, तब कार्य पूरा करके ही छोड़ता है ।
- लघुसमुत्थान—वि० [सं०] १ शीघ्र उठनेवाला । २ तेज चलनेवाला [को०] ।
- लघुसार—वि० [सं०] निस्सार । उपेक्षणीय [को०] ।
- लघुहस्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो बहुत जल्दी जल्दी वाण चला सकता हो । शीघ्रवेधी ।
- लघुहमदुग्धा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कठगुलर [को०] ।
- लघुक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सक्षेप में अभिव्यजना का ढंग [को०] ।
- लघुत्थान—वि० [सं०] दे० 'लघुसमुत्थान' [को०] ।
- लघ्वाशी—वि० [सं० लघ्वाशिन्] अल्पाहारी । थोड़ा खानेवाला [को०] ।
- लघ्वाहार—वि० [सं०] दे० 'लघ्वाशी' [को०] ।
- लघ्वी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ बेर नामक फल । २. असवरग । स्पृक्का । ३ छटाटा स्पदन । एक प्रकार का रथ [को०] । ४ दुबली पतली कोमलागिनी । तन्वगी स्त्री [को०] ।
- लघ—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लचना] लचकने की क्रिया । लचक ।
- लचक—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लचकना] १ लचकने की क्रिया या भाव । लचन । भुकाव ।
- कि० प्र —खाना —जाना ।
- २ वह गुण जिसके रहने से कोई वस्तु दबती या भुकती हो ।
- यौ०—लचकदार = दे० 'लचाकेदार' ।
- लचक—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की नाव जा ६०-७० हाथ लंबी होती है ।
- विशेष—यह मकसूदावाद की तरफ बनती है और इसे बहुत से लोग मिलकर चेतते हैं ।
- लचकना—क्रि० अ० [हि० लच (अनु०)] १. किसी लचे पदार्थ का बाक पडन या दबन आदि क कारण बीच से भुकना । लचना । जैसे,—यह छड़ी बहुत कमजोर है जरा सा बाक दन से ही लचक जाती है ।
- सयो० क्रि०—जाना ।
२. स्रयो की कमर का कोमलता या नवर आदि के कारण भुकना । जैसे,—जब चलता है, तब उसकी कमर लचकती है ।
३. स्रया का कोमलता या नखरे आदि के कारण चलने क समय रह रहकर भुकना । जैसे,—यह जब चलता है, तब लचकती चलती है ।

- लचकानि(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लचकना] १. लचीलापन । २. लचक । भुकाव ।
- लचका—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लचकना] एक प्रकार का गोटा ।
- लचकाना—क्रि० सं० [हि० लचकना] किसी पदार्थ को लचने में प्रवृत्त करना । भुकावा । लचाना ।
- लचकीला—वि० [हि० लचक + ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० लचकीली] १ जो मट्ट म लच या दब जाय । लचकने योग्य । २ लचकदार ।
- लचकौहाँ(पु)†—वि० [हि० लचकना] दे० 'लचकीला' ।
- लचन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लचक] दे० 'लचक' ।
- लचना—क्रि० अ० [हि० लच + ना (प्रत्य०)] दे० 'लचकना' ।
- लचनि(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लच] दे० 'लचक' ।
- लचर—वि० [?] १ लचने या भुकनेवाली । कमजोर । तथ्यहीन । २ जो किसी स्तर पर टिक न सके । लचनेवाला । जैसे—लचर दलील, लचर तर्क ।
- लचलचा—वि० [हि० लचना] जो लचक जाय । लचीला । लचकनेवाला ।
- लचलचापन—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लचना] लचीला होने का भाव । लचीलापन ।
- लचाकेदार—वि० [हि० लचक + फा० दार (प्रत्य०)] मजेदार । बढ़िया । (वाजाह) ।
- लचाना—क्रि० सं० [हि० लचना का मक० रूप] लचकाना । भुकावा ।
- लचार(पु)†—वि० [फा० लाचार] दे० 'लाचार' ।
- लचारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० लाचारी] दे० 'लाचारी' ।
- लचारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [द्रव्य०] १ वह कर जो कोई व्यक्ति अरन से बडे को देता है । भेंट । नजर । उ०—विमल मुक्तमाल लमत उच्च कुचन पर मदन मटादेव मना दह ह लचारा ।—सुर (शब्द०) । २. एक प्रकार का गीत । नचारा ।
- लचारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० अचार] एक प्रकार का ग्राम का अचार जो खाला नमक से बनता है और जगम तल नहीं पटता । अचारी ।
- लचुर्ही—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मंदे की बना हुई पनखी और मुनायम पूरी । लुचुचो । लुचुड ।
- लच्छ(पु)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लच्छ] १. व्याज । बहाना । मस । २. वह वस्तु या स्थान जहाँ पर सब चलाना हो । मजाना । ताक । उ०—जोम कमान बचन तर नाना । मनु माहव मृदु लच्छ समाना ।—मानन, २।४१ ।
- लच्छ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लच्छ] गी हजर का नख । लस ।
- लच्छ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लच्छी, प्रा० लच्छी, लच्छी] दे० 'लच्छी' । उ०—(क) चह लच्छ बचर बच नाने । गेह लच्छ लच्छ कित हाइ ।—जायस (प-२०) । (२) नरकवचन नाउ । मुन मजारम लच्छ जाह ।—जुलता ३०, पृ० २२५ ।

लच्छण'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्षणा] स्वभाव । (चि०) ।

लच्छण(५)†—सञ्ज्ञा पुं० दे० 'लक्षण' ।

लच्छन(५)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्षणा] दे० 'लक्षण' । उ०—(क) नहिं दारद कोउ दुखी न दीना । नहिं कोउ अघुष न लच्छन हीना ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) विनु छल विश्वनाथ पद नेहू । राम भक्त कर लच्छन एहू ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) कछु देखै कौ लच्छन छोटो बढो सम वात चलै कहि आवतु है ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

लच्छन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्षणा] दे० 'लक्षणा' ।

लच्छना^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्षणा] दे० 'लक्षणा' ।

लच्छना(५)†—क्रि० सं० [सं० लक्ष्य, हिं० लच्छ + ना (प्रत्य०)] भली-माति देखना । उ०—तिनके लच्छन लच्छ अव, आछे कहे वखानि ।—मतिराम (शब्द०) ।

लच्छमण'—वि० [सं० लक्ष्मीवान्] धनवान् । अमीर । (डि०) ।

लच्छमण(५)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्षमण] दे० 'लक्षमण' ।

लच्छमी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] दे० 'लक्ष्मी' ।

लच्छा—सञ्ज्ञा पुं० [अनु०] १ कुछ विशेष प्रकार से लगाए हुए बहुत से तारों या डोरों आदि का समूह । गुच्छे या मुपे आदि के रूप में लगाए हुए तार । जैसे,—रेशम का लच्छा, सूत का लच्छा ।

यौ०—लच्छे की साडी = बनारसी काम की वह साडी जिनके किनारे आदि के तार ताने के साथ ही तने गए हो ।

२ किसी चीज के सूत की तरह लवे और पतले कटे हुए टुकड़े । जैसे,—प्याज का लच्छा, आदो का लच्छा । ३ इस आकार की किसी तरह बनाई हुई कोई चीज । जैसे,—खडी का लच्छा । ४ मैदे की एक प्रकार की मिठाई जो प्रायः पतले लवे सूत की तरह और देखने में उलभी हुई डोर के समान होती है । ५ एक प्रकार का गहना जो तारों की जजोरो का बना होता है । यह हाथों में पहनने का भी होता है और पैरों में पहनने का भी । ६ एक प्रकार का घंटिया केसर जो नीत्रल या निकुष्ट श्रेणी के केसर में थोड़ा सा बढ़िया केसर मिलाकर बनाया जाता है ।

लच्छा साख—सञ्ज्ञा स्त्री० [दे०] एक प्रकार की मकर रागिनी ।

लच्छि(५)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी, प्रा० लच्छमी] लक्ष्मी । उ०—(क) एहि बिघ उपजइ लच्छि जव सुदरता सुख मूल ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) वसइ नगर जेहि लच्छि करि कपट नारि वर वेप ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) माया ब्रह्म जीव जगदीसा । लच्छि अलाच्छ रक भवनीसा ।—तुलसी (शब्द०) ।

लच्छि^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्] लाख की सख्या ।

लच्छित(५)†—वि० [सं० लक्षित] १ आलोचित । देखा हुआ । २ ।नशान किया हुआ । अंकित । चिह्नित । ३ लक्षणयुक्त । लक्षणवाला । उ०—शुभ लच्छन लच्छित हय सोई । तुरंग साल देखिय जो होई ।—मधुपूदन (शब्द०) ।

लच्छिन(५)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्षणा, हिं० लच्छन] दे० 'लक्षण' ।

उ०—एक वृष्ट, इक मठ, एक दच्छिन । इक अनुकून सुनहि अत्र लच्छिन ।—नद० ग्र०, पृ० १५६ ।

लच्छिनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मीनाथ] लक्ष्मीपति, विष्णु । (डि०) ।

लच्छिनिवास(५)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मीनिवास] विष्णु । नारायण । उ०—दुलहिनि लेरंग लच्छिनिवासा । नृप ममाज मत्र भयउ निरासा ।—तुलसी (शब्द०) ।

लच्छी^१—वि० [दे०] एक प्रकार का घोडा । उ०—कोइ कबुली अंजीज कोइ कच्छी । वीत भेमना मुजी लच्छी ।—विश्राम (शब्द०) ।

लच्छी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी, हिं० लच्छमी, लच्छि, लच्छी] दे० 'लक्ष्मी' ।

लच्छी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लच्छा] मूत, रेशम, ऊन, कलावत्तू इत्यादि की लपेटो हुई गुच्छी । अट्टी ।

लच्छेदार—वि० [हिं० लच्छा + दार (प्रत्य०)] १ (खाद्य पदार्थ) जिममें लच्छे पड़े हों । लच्छावाला । २ (वातचीत या इयारत) जिसका सिलसिला जल्दी न टूटे और जिमके सुनने में मन लगता हो । मजेदार या श्रुतिमधुर (वात) । उ०—बंसी लच्छेदार इयारत काई निबी नही सकता ।—प्रेमधन०, भा० २, पृ० ४०६ ।

लच्छ(५)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्य] दे० 'लक्ष्य' । उ०—कोउ कहै ये परम धर्म इच्छीजित पूरे । लच्छ लावव मधान धरे आयुष के सरे ।—नद० ग्र०, पृ० १८१ ।

लछन(५)†—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मण] राम के छोटे भाई, लक्ष्मण । उ०—दसरथ नो ष्टपि आनि कह्यो । असुरन सो यज्ञ होन न पावत राम लछन तव सग दयो ।—सूर (शब्द०) ।

लछन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्ण] दे० 'लक्षण' ।

लछना^१—क्रि० अ० [सं० लच्छ, प्रा० लख लच्छ] दे० 'लखना' ।

लछमन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मण] दे० 'लक्ष्मण' ।

लछमन^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मणा] दे० 'लक्ष्मणा'—४ ।

लछमन मूला—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लछमन + मूला] १ बदरीनारायण के मार्ग में एक स्थान ।

विशेष—यहाँ पहले पुरानी चाल का रस्सो का एक लटकावाँ पुल था, जिसे मूला कहते थे ।

२ रस्सो या तारों आदि से बना हुआ वह पुल जो बीच में झूले की तरह नीचे लटकता हो । ३ एक प्रकार की लता या बेल ।

लछमना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लछमना] दे० 'लक्ष्मणा' । उ०—बहुरि लछमना मुमिरन कीन्हो । ताहि स्वयंवर मे हरि लीन्हो ।—सूर (शब्द०) ।

लछमी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] दे० 'लक्ष्मी' ।

लछारा(५)†—वि० [अनु० लच्छा + रा (प्रत्य०)] लच्छा । शृङ्खला । गुच्छा । उ०—कैसे छबिदार काकपच्छ से संवारे कहिए जैसे यह राजत सुगंध के लछारे हैं ।—पजनेस०, पृ० ४१ ।

लछिमी(५)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी] दे० 'लक्ष्मी' ।

लज(५)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लजा] धर्म । हया । लाज । उ०—सुषर

गोति वम पिय गुनन दुनहिनि हुगुन हुलाम । लखी सखी तन दीठि करि सगरप सगज स हाग ।—विहारी (शब्द०) ।

विशेष—'लज्जा' शब्द का 'ज' रूप समस्त पदों में ही पाया जाता है । जैसे,—लजवती नारी ।

लजना—क्रि० श्र० [सं० लज्ज] लजाना । परमाना । लजित होना ।

लजनी(०)।—सज्ञा स्त्री० [हि० लजना] १ लजालू का पीवा । २ शरमानेवाली स्त्री । लजानेवाली या शरमाली स्त्री । उ०—मन लजि मान मेरी वारी धि निहारी नकु, पीतम बुलावै मग लीजिए अवाग वी । लजनी दनी है अजौ रजनी रही न आधी, सजनी प्रकास गयो रजनी प्रकास की ।—नट०, पृ० ८६ ।

लजवाना—क्रि० सं० [हि० लजाना] दूसरे को लजित करना ।

लजाधुरा^१—वि० [सं० लजाधर] जो बहुत लजा करे । लजावान् । शर्माला ।

लजाधुर^२—सज्ञा पुं० लजालू नाम का पीवा । (लजावती) ।

लजाना^१—क्रि० श्र० [सं० लजा] अपने किसी बुरे या भद्दे व्यवहार का ध्यान करके वृत्तियों के सकोच का अनुभव होना । शर्म में पड़ना । उ०—कप किसोरी दरस ते खरे लजाने लाल ।—विहारी (शब्द०) ।

संयो० क्रि०—जाना ।

लजाना^२—क्रि० म० लजित करना । लजवाना ।

लजासू^१—सज्ञा पुं० [सं० लजासू] लजाधुर । लजालू पीवा । उ०—जनक वचन छुए विरवा लजासू के से, वीर रहे सकल सकुचि सिर नाइ कै ।—तुलसी (शब्द०) ।

लजालू—सज्ञा पुं० [सं० लजासू] हाथ डेढ हाथ ऊँचा एक काँटेदार छोटा पीवा जिसकी पत्तियाँ खूने से सुकड़कर बदन हो जाती हैं, और फिर थोड़ी देर में धीरे धीरे फैलती हैं ।

विशेष—इसके उठल का रंग लाल होना है और महीन महीन पत्तियाँ शमी या बबूल की पत्तियों के समान एक सीके के दोनों ओर पक्ति में होती हैं । हाथ लगते ही दोनों ओर की पत्तियाँ सफुच्चित होकर परस्पर मिल जाती हैं, इसी से इस पीवे का नाम लजालू पड़ा । इसके फूल गुलाबी रंग की गोल गोल घुड़ियों की तरह के होते हैं, जिनके भट जाने पर छोटे छोटे चिपटे बीज पड़ते हैं । भारत के गरम भाग में यह सबस्य होता है, जैसे, बगात के दक्षिण भाग में कहीं कहीं बहुत दूर तक रास्ते के दोनों ओर यह लगा मिलता है ।

बंधक में यह बटु, शीतल, कपाय तथा रक्तपित्त, प्रतिहार, दाह, श्रम, श्वास, श्लेष्म, कुष्ठ कफ तथा योनिरोग को दूर करनेवाला माना जाता है । कहीं कहीं पथरी को पीसा श्रात करने के लिये तथा भगदर श्रच्छा करने के लिये इसकी जड़ और लठन का काढ़ा और पत्तियों का चूर्ण सेवन करते हैं । रामायणिक परीक्षा से पता चला है कि इस पीवे में सी में दवा नाग कपाय धातु (टैनीन) होती है । इसमें लठन के चूर्ण का हीरा कनीस के साथ मिलाने से बड़ी अच्छी रकारी बनती है ।

पर्या०—लज्जावती नारा । पाराहत्या । रक्तपासी । शमीपत्रा । मृदका । रदिरपथिका । लजावनी । पमनी । नमस्कारी । पमारिणी । ममपत्ता । उदरी । गजमालिका । लज्जा । लज्जनी । स्पर्शाज्जा । अस्तरावनी । रक्तमूत्रा । ताम्रमूत्रा । स्वगुत्रा । महाभीता । रश्मिनी । नदीपाव ।

लजावनी—क्रि० सं० [सं० लजावनी] * 'लजावनी' या 'लजाना' ।

विशेष—समस्त पद में किसी शब्द के आने आने या इनका अर्थ होता है 'लजित करनेवाला' । जैसे,—मोगा कोंट मनाज लजावन ।

लजावनहार—सज्ञा पुं० [हि० लजाना या लजावन + हार (प्रत्य०)] लजित करनेवाला । शमिदा करनेवाला । उ०—काँट मनाज लजावनहारे ।—तुलसी (शब्द०) ।

लजावनी(०)।—क्रि० सं० [हि० लजवाना] * 'लजवाना' ।

लजियानां(०)।—क्रि० श्र० [हि० लजाना] * 'लजाना' ।

लजियाना^१—क्रि० सं० * 'लजवाना' ।

लजीज—वि० [श्र० लजीज] १ लज्जतदार । न्यादिष्ट । मुन्वाद्यु । (साध पदार्थ) । २ प्यारा । प्रिय ।

लजीला—वि० [हि० लाज + ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० लजीली] जिसमें लजा हो । लजायुक्त । लजाशील । जैसे,—लजीला मनुष्य, लजीली आँखें ।

लजुरी^१—सज्ञा स्त्री० [सं० लज्जु, माग० लज्जु] कुएँ से पानी भरने की डोरी । रस्मी ।

लजौर(०)।—वि० [हि० लाज + आवर (प्रत्य०)] लजाशील । जो बहुत जल्दी लजित हो । उ०—विदित न सनमुख हूँ मर्क श्रैखिया बडी लजो ।—रसनिधि (शब्द०) ।

लजोहा^१—वि० [सं० लजावह] [वि० स्त्री० लजोही] जिसमें लजा हो, या जिससे लजा सूचित होती हो । लजीना । शर्माला । उ०—कुज भवन गथा मनमोहन । रति मिलाम करि गगन भए शति निरसन नैन लजोहन ।—सुर (शब्द०) ।

लजोना पुं०।—वि० [सं० लजावत्] १ लजावान् । शर्माला । उ०—लोहन नीने लजित लजोन चलि चलि हंगत हूँ काननि कौन ।—नद० प्र०, पृ० १२६ । २ आगे पीछे में पटा हुआ । हिचकिचाहटनावा ।

लजोहा^२—वि० [सं० लजावह] [वि० स्त्री० लजोही] जिसमें लजा हो या जिसमें लजा सूचित होती हो । लजाशील । लजीना । शर्माला । जैसे,—लजोही स्त्री, लजोही आँखें । उ०—मैं लजोही मुख फेरि के लजोह, लजोही चारु चरनि चितै न मी चनी गई ।—मति० प्र०, पृ० ३२६ ।

लज(०)।—सज्ञा स्त्री० [सं० लजा, तुल० लजा] लजा लजना भूषण है, प्रिया । प्रियतमा । उ०—(क) नह कनी पृथिवाज रिन लज लपटिय पद ।—पृ० १०, २५।३० । (ग) लज परपत हूँ रही बिन तजै नृप पाव ।—पृ० २१०, २५।३३ ।

लजनी—सज्ञा स्त्री० [सं०] लजनावा ।

लज्जत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लज्जत] स्वाद । जायका । मजा । (खाने पीने की वस्तुओं के लिये) ।

लज्जतदार—वि० [अ० लज्जत + प्रा० दार] स्वादिष्ट । मजेदार । जायकेदार ।

लज्जरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लज्जालू लता । लज्जावती ।

लज्जा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] [वि० लज्जित] १ अत करण की वह श्रवस्था जिसमें स्वभावतः अथवा अपने किसी भर्ते या बुरे आचरण की भावना के कारण नम्रो के सामने वृत्तियाँ मकुचित हो जाती हैं, चेष्टा मद पड जाती है, मुँह से, शब्द नहीं निकलता मिर नीचा हो जाता है और सामने ताका नहीं जाता । लाज । शर्म । हया ।

पर्या०—ह्री । त्रपा । ब्रीडा । मदास्य ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

मुहा०—(किसी बात की) लज्जा करना = किसी बात की बड़ाई की रक्षा का ध्यान करना । मर्यादा का विचार करना । इज्जत का ब्याल करना । जैसे,—अपने कुल की लज्जा करो ।

२ मान मर्यादा । पत । इज्जत । जैसे,—भगवान् लज्जा रखे ।

क्रि० प्र०—रखना ।

३ लज्जालु लता । लज्जाधुर का पौधा (को०) ।

लज्जाकर—वि० [सं०] [वि० स्त्री० लज्जाकरा, लज्जाकरी] दे० 'लज्जा-प्रद' (को०) ।

लज्जाकुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लज्जा + आकुल] लज्जा से व्याकुल । लज्जाभिभूत । शर्म में गडा । उ०—खुलने स्तवको की लज्जाकुल, नत वदना मधुमाधवी अतुल ।—अपरा, पृ० १४८ ।

लज्जाकृति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कृत्रिम मान मर्यादा या लज्जा । दिखावटी लज्जा (को०) ।

लज्जान्वित—वि० [सं०] हयादार । सकोची स्वभाव का । शर्मदार (को०) ।

लज्जापयिता—वि० [सं०] दे० 'लज्जाप्रद' (को०) ।

लज्जाप्रद—वि० [सं०] जिसमें लज्जा उत्पन्न हो । लज्जाजनक ।

लज्जाप्राया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] केशव के अनुसार मुग्धा नायिका के चार भेदों में से एक ।

लज्जारहित—वि० [सं०] निर्लज्ज । लज्जाशून्य (को०) ।

लज्जारुण—वि० [सं० लज्जा + अरुण] लज्जा में अभिभूत । शर्म के मारे सुर्ख । उ०—प्रणय सुरा हो, हृदय भरा हो, लज्जारुण मुख हो प्रतिभिवित । पी अधरामृत हो मृत जीवित, प्रीति सुरा भर, प्रीति सुरा नित ।—मधुज्वान, पृ० ३ ।

लज्जालु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लज्जालू का पौधा । लाजवती ।

लज्जावत्—वि० [सं० लज्जावत्] शर्माला । लज्जायुक्त । लजीला ।

लज्जावत—सञ्ज्ञा पुं० लज्जालू का पौधा । लाजवती ।

लज्जावती—वि० स्त्री० [सं०] लज्जाशील । शर्माला । उ०—सुसयत सकुमुम केशपाश मुशीला लज्जावती ।—वर्णा०, पृ० ६ ।

लज्जावती—सञ्ज्ञा स्त्री० लज्जालू का पौधा ।

लज्जावह—वि० [सं०] दे० 'लज्जाप्रद' (को०) ।

लज्जावान्—वि० [सं० लज्जावत्] [वि० स्त्री० लज्जावती] लज्जाशील । जिममें लज्जा हो । शर्मदार । हयादार ।

लज्जाशील—वि० [सं०] जिममें लज्जा हो । जो बात बात में शरमाता हो । लजीला ।

लज्जाशून्य—वि० [सं०] जिमें लज्जा न हो । जिसे कोई अनुचित या भर्ते बात करते कुछ सकोच या हिचक न हो । वेह्या ।

लज्जास्पद—वि० [सं०] लज्जाजनक । उ०—कॉप्रस की ऐसी लज्जा स्पद दुर्दशा होगी ।—प्रमथन०, भा० २, पृ० ३२५ ।

लज्जाहीन—वि० [सं०] लज्जाशून्य । वेह्या ।

लज्जित—वि० [सं०] लज्जा के वशीभूत । शर्म में पडा हुआ । शर्मिया हुआ ।

लज्जिनी, लज्जिरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लज्जारू । लज्जालू (को०) ।

लज्जी(पु)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लज्जा] प्रिया । लज्जाशील प्रियतमा । उ०—(क) फिरि वुल्ली लज्जी मुनहिं हो मडन तन वीर ।—पृ० २०, २५।७३२ । (ख) लज्जी मो मथ्य है दान खग अरु रूप ।—पृ० २०, २५।७३४ । (ग) सुन रे वैं लज्जी चर्व हूँ मँहन नर लोह ।—पृ० २०, २५।७३५ ।

लज्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लज्जा' । उ०—भृगु संग्या करि कहत सकल कुल लज्या लोपी ।—नद० प्र०, पृ० १८६ ।

लटग—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] एक प्रकार का वांस जो बरमा में होता है ।

लट—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लट्वा (= घुंघराले केश)] १ मिर के बालों का समूह जो नीचे तक लटके । बालों का गिरा हुआ गुच्छा । केशपाश । अलक । केशलता ।

मुहा०—लट छिटगना = सिर के बालों को खोलकर इधर उधर बिखराना ।

२ एक में उलभे हुए बालों का गुच्छा । परस्पर चिमटे हुए बाल ।

मुहा०—लट पडना = बालों का परस्पर उलभ या चिनट जाना ।

३ एक प्रकार का बेंत जो आमाम की आर बहुत होता है । ४ एक प्रकार के सूत के से महीन कीडे जो मनुष्य की आँतों में पड जाते हैं और मल के साथ निकलते हैं । चनूना ।

लट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लपट] लपट । लौ । अग्निशिखा । ज्वाला । उ०—(क) भपटे भपटत लपट, पटक फून फूटत, फल चटक लट लटल ड्रुम नवायो ।—सूर (शब्द०) । (ख) चट पट बोलहिं वांस बहु सिखि लट लागि अकास ।—गोपाल (शब्द०) ।

लट^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मूर्ख । बुद्धिहीन । २. लोप । गलती । ऐव । ३ डाकू । बटमार (को०) ।

लटक^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लटकना] १ लटकने की क्रिया या भाव । नीचे की ओर गिरता सा रहने का भाव । २ मुकाव । लचक । ३ अगो की मनोहर गति या चेष्टा । लुभावनी चाल । अग-भगी । उ०—प्राणनाथ सो प्राणपियारी प्राण लटक सो लोन्ह ।—सूर (शब्द०) ।

यौ०—लटक चाल ।

४ ढावू जमीन । ढाल । (पालकी के कहार) ।

लटक^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धोखेवाज । ठग । धूर्त । पाजी । दुष्ट । खल [को०] ।

लटकन^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लटकना] [स्त्री० लटकनी] १ लटकने की क्रिया या भाव । नीचे की ओर गिरता सा रहने का भाव । २ किसी वस्तु में लगी हुई दूसरी वस्तु जो नीचे लटकती या झूलती हो । लटकनेवाली चीज । ३ मनोहर अंगभंगो । लुभावनी चाल । लटक उ०—बभे जाइ खग ज्यो प्रिय छवि लटकनी लम ।—सूर (शब्द०) । ४ नाक में पहनने का एक गहना जो लटकता या झूलता रहता है । (यह या तो नाक के दोनों छेदों के बीच में पहना जाता है, अथवा नथ में लगा रहता है) । ५ कलगी या सिरपेंच में लगे हुए रत्नों का गुच्छा जो नीचे की ओर झुका हुआ हिलता रहता है । उ० लटकन सीस, कठ मनि भ्राजत मन्मथ कोट वारनै गए री ।—मूर (शब्द०) । ६. मलखम की एक कसरत जिसमें दोनों पैरों के अंगूठों में बेंत फँसाकर पिंडली को लपेटते हैं और पिंडली के ही बल पर अंगूठों से बेंत को ऊपर खींचते हुए जघों के बल पर का सारा घट नीचे को लटका देते हैं ।

लटकन^२—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लटकना ?] एक पेड़ जिसमें लाल रंग के फूल लगते हैं और जिसके बीजों को पानी में पीसने पर गेरुआ रंग निकलता है । इस रंग से कपड़े रंगते हैं ।

लटकना—क्रि० अ० [सं० लटन (= झूलना)] १. किसी ऊँचे स्थान से लग या टिककर नीचे की ओर अधर में कुछ दूर तक फँसा रहना । ऊपर से लेकर नीचे तक इस प्रकार गया रहना कि ऊपर का छोर किसी आधार पर टिका हो और नीचे का निराधार हो । झूलना । जैसे,—छन से फानूस लटकना, पेड़ से लता लटकना, कूर्प में डोरी लटकना ।

सयो० क्रि०—ग्राना ।—जाना ।

विशेष—'टंगना' और 'लटकना' इन दोनों के मूल भाव में अंतर है । 'टंगना' शब्द में किसी ऊँचे आधार पर टिकने या अडने का भाव प्रधान है और 'लटकना' शब्द में ऊपर से नीचे तक फँसे रहने या अधर में हिलने डोलने का । जैसे,—(क) तसवीर बहुत नीचे तक लटक आई है । (ख) कूर्प में डोरी लटक रही है । ऐसे स्थलों पर 'टंगना' शब्द का प्रयोग नहीं हो सकता ।

२ ऊँचे आधार पर टिकी हुई वस्तु का कुछ दूर नीचे तक आकर इधर से उधर हिलना डोलना । झूलना । ३ किसी ऊँचे आधार पर इस प्रकार टिकना कि टिके या अडे हुए छोर के अतिरिक्त और सब भाग नीचे की ओर अधर में हो । टंगना । जैसे,—वह एक पेड़ की डाल में लटक गया ।

सयो० क्रि०—जाना ।

४ किसी खड़ी वस्तु का किसी ओर को झुकना । नम्र होना । जैसे,—रामा पूरव की ओर कुछ लटका दिखाई देता है । ५ लचकना । बल खाना । उ०—लटकन चलत नदकुमार ।—सूर (शब्द०) ।

८-६०

मुहा०—लटकती चाल = बल खाती हुई मनोहर चाल । उ०—भृकुटी मटकनि पीत पट चटरु लटकती चान । चल चल चित्त-वनि चार चिन लियो विहारी लाल ।—विहारी (जबद०) ।

६ कोई काम पूरा न होने या किसी बात का निर्णय न होने के कारण दुःख में पड़ा रहना । झूलना । जैसे,—अभी तक लटक रहे हैं, कुछ फैसला नहीं हो रहा है । ७ किसी काम का बिना पूरा हुए पड़ा रहना । देर होना ।

लटकनि(उ)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लटकना] लटकने की क्रिया या भाव । उ०—वैसियै हंसनि चहनि पुनि बोलनि । वैसियै लटकनि, मटकनि, डोलनि ।—नद०, ग्र० पु० २६५ ।

लटकनाना—क्रि० सं० [हिं० लटकाना का प्रेर० रूप] लटकाने का काम दूसरे से कराना ।

लटकहरा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] तेली ।

लटका—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लटक] १ गति । चाल । ढव । २ वनावटी चेष्टा । हाव भाव । ३ वातचीत करने में स्वर का एक विशेष प्रकार से चढ़ाव उतार । वातचीत का वनावटी टग । जैसे,—लटके के साथ वात करना । ४ कोई शब्द या वाक्य जिसके बार बार प्रयोग का किसी को अभ्यास पड़ गया हो । सखुन-तकिया । ५ मत्र तत्र की छोटी युक्ति । टोटका । ६ किसी रोग या बाधा की शांति की छोटी युक्ति । सक्षित उपचार । छोटा नुसखा । जैसे,—यह फकीरी लटका है, इससे जरूर फायदा होगा । ७ एक प्रकार का चलता गाना । ८ लिंग । (वाजाह) ।

लटकाना—क्रि० सं० [हिं० लटकना] १ किसी ऊँचे स्थान से एक छोर लगा या टिकाकर शेष भाग नीचे तक इस प्रकार ले जाना कि ऊपर का छोर किसी आधार पर टिका हो और नीचे का निराधार हो । जैसे,—छन में फानूस लटकाना, कूर्प में डोरी लटकाना ।

सयो क्रि०—देना ।—चेना ।

विशेष—'टांगना' और 'लटकाना' इन दोनों शब्दों के मूल भाव में अंतर है । 'टांगना' शब्द में किसी ऊँचे आधार पर टिकाने या अडाने का भाव प्रधान है और 'लटकाना' शब्द में ऊपर से नीचे तक फँसाने या हिलाने डुलाने का । जैसे,—(क) घोंनी और नीचे तक लटका दो । (ख) कूर्प में डोरी लटका दो ।

२ किसी ऊँचे आधार पर इस प्रकार टिकाना कि टिके या अडे हुए छोर के अतिरिक्त और सब भाग अधर में हों । एक छोर या अण ऊपर टिकाना जिसे कोई वस्तु जमीन पर न गिरे । टांगना । जैसे,—अंगरखा खूंटो में लटका दो । ३ किसी खड़ी वस्तु को किसी ओर झुकाना, लचकना या नम्र करना । ४ किसी का कोई काम पूरा न करके उसे दुःख में डालना । आसरे में रखना । इतजार कराना । जैसे,—उम्र क्यों लटकाए हो, जो कुछ देना हा, दे दो । ५ किसी काम को पूरा न करके डाल रखना । देर करना ।

लटकीला—वि० [हिं० लटक + ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० लटकीली]

लटकू

भूमता हुआ । बल खाता हुआ । लचकदार । जैसे,—नटौली चाल ।

लटकू—सज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का पेड़ जिसकी छान का उमान से रंग निकलता है ।

लटकौआ, लटकौवा—वि० [हिं० लटकना] लटकनेवाला । जो लटकता हो ।

लौं—लटकौवा मालखम = वह मालखम जिसकी लकड़ी गडान रहकर ऊपर से नटकाई रहती है ।

लटजारा—सज्ञा पुं० [सं० लट् (= लट ?) + हिं० जारा] १ अणुमार्ग । चिचड़ा । २ एक प्रकार का जड़तन धान जो अणुहन में तैयार होता है और जिसका चावन बहुत दिनों तक रहता है ।

लटना—क्रि० अ० [सं० लट् (= हिलना डोलना)] १ बग़र गिर जाना । लडखडाना । उ०—मकट विकट भट जुटन गटन, न लटत तन जर्जर भए ।—तुलसी (शब्द०) ।

संयो० क्रि०—जाना । उ०—लटे तन जात किते छत जात ।—सूदन (शब्द०) ।

२ श्म, रोग प्रादि से शिथिल होना । अशक्त होना । दुबना और कमजोर होना । जैसे,—आजकल वे बीमारी से बहुत लट गए हैं । उ०—(क) श्री रघुवीर, निवारिए पीर रहों दरबार परी लटि लूजो ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) तेरे मुँह फेरे मोने कायर कपूत कूर लटे लटपटेनि को कौन पङ्गि गहेगो ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) कटो कटौली काति पै, लटी लटी अति जाय ।—रामसहाय (शब्द०) । ३ ढोला पडना । मद पडना । शक्ति और उत्साह से रहित होना । उ०—देखि भीरु लटै लगे, मन मन घटै लगे, पाछे पग हट लगे, क्रम क्रम नटै लगे ।—गोपाल (शब्द०) । ४ श्रम से निकम्मा हो जाना । अधिक काम करने के योग्य न रह जाना । शिथिल होना । थक जाना । उ०—रटत रटत रसना लटी वृषा सुखिगे अग ।—तुलसी (शब्द०) । ५ व्याकुल होना । उ०—फटे फन फनि कै श्री लटे दिगदती दीह, घटे बल कूरम विकलता का पाई है ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

लटना^३—क्रि० अ० [सं० लल, लट् (= ललघाना)] १ ललचाना । लेने के लिये लपकना । चाह करना । लुभाना । उ०—परिहरि सुरमनि सुनाम गुंजा लखि लटत ।—तुलसी (शब्द०) । २ लिप्त होना । अनुरक्त होना । प्रेमपूर्वक तत्पर होना । लीन होना । उ०—(क) उलटि तहाँ पग धारिए जामो मन मान्यो । छपद कज ताज वेलि सो लटि लटि प्रेम न जान्यो ।—पूर (शब्द०) । (ख) किन विमोह लटा फटो गगन मगन सियत ।—तुलसी (शब्द०) ।

लटपट—वि० [हिं० लट + (अनुकृणात्मकभिन्वयजन द्वित्व पट) दे० 'लटपटा']

लटपटा—वि० [हिं० लटपटाना] [वि० ली० लटपटी] १ गिरता पडता । लडखडाता हुआ । निर्बलता या मद प्रादि के कारण झुवर उधरें झुकता हुआ । २ से,—लटपटी चाल । उ०—घूरि

धीन तनु नैननि पजन, चतल लटपटी खान ।—पूर (शब्द०) । ३ जो ठीक तरह से न चलने के कारण खोता होकर नीचे की ओर गिरता जाता हो । डोनाडाना । जो दुबना और लुप्त हो जाता हो । गटगटन । निता पयाग गया । उ० (क) लटपटा पाग जनीरे विना उग गग जेता उगगगत ।—पूर (शब्द०) । (ख) लटपटी पाग पर जावन का छत जात ।—पूर (शब्द०) । ३ (लट प्रादि) जो स्पष्ट या ठाम क्रम में न जाय । टूटा फूटा । उ०—ज्या ज्या वनकति वन लटपटे गति पडतात । व्याप (शब्द०) । ४ जो ठीक क्रम में न हो । अनादि । अशुभ । अटपट । ५ बग़र गिरा गया । गग गया । अटक । प्रेम । उ०—तेरे मुँह के मां तथे कृत कूर लटे लटपटेनि का सोन परिगहयो ।—तुलसी (शब्द०) ।

लटपटा—क्रि० अ० जो नीचे तरफ गिरता है । जो न पानी की तरफ पतता हो प्रायः तदन अतिग तादा । मुटपुटा । जैसे,—लटपटी तरफा । २ मीजा हुआ । गिजा हुआ । मनादना हुआ । जो खर उधर गुंजा हुआ हो, ताक या बराब न हो । जिस गिन या निगल पटा हो । (कटा इत्यादि) । उ०—निगला तलाउन तमत लटपटा गारी चोट चटाटा प्रटाटी खान अटपटो ।—पूर (शब्द०) ।

लटपटान—म । ली० [हिं० लटपटाना] १ लटपटान की क्रिया या भाव । लटपटाहट । २ मनाहट गति या चाल । लटन । लचक । लटपटाना—क्रि० अ० [सं० लट् (= हिलना डोलना) + पत् (= गिना)] १. ली० टग ने न बनकर निर्बलता या मद प्रादि के कारण झुवर उधरें झुक झुक पटना । गिरना पडना । चउखडाना । उ०—कहत विचार जतयो नम्मूल ब्रज । लटपटान पग बरनि बरत गज ।—पूर (शब्द०) ।

संयो० क्रि०—जाना ।

२ खिर न रहना । जमान रहना । डिगना । विचलित होना । ३ ठीक तरह में न चलना । चुलत होना । झुक जाना । जैसे,—पैर लटपटाना, जीभ लटपटाना ।

लटपटाना^३—क्रि० प्र० [सं० लल, लट् (= लुभाना)] १. लुभाना । माहित होना । उ०—श्री हरदाय के स्वामी स्वामा कुज-बिहारी लटपटाइ रहे गगन नखं सुय चन ।—हरिदास (शब्द०) । २ लीन होना । लिप्त होना । अनुरक्त होना । लटपटानि^३—सज्ञा स्त्री० [हिं० लटपटाना] १ दे० 'लटपटान' । २ मनोहर गति या चाल । चक्र । लटक । उ०—श्री हरिदास के स्वामी स्वामा कुज बिहारी के दाग रग लटपटानि के भेद न्यारे जैते पानी में पानी नरीच ।—हरिदास (शब्द०) ।

लटपर्ण—सज्ञा पुं० [सं०] दारमिता । बड़ी दारचोनी [को०] ।

लटभ—वि० [सं०] मुहर [को०] ।

लटह—वि० [सं०, प्रा०] चुरत । गूगुरत [को०] ।

लटा—वि० [सं० लट्ट] [वि० ली० लटी] १ लोलुप । ललट । २ लुचवा । लचक । ३ लुब्ध । हीन । ४ गिरा हुआ । पतित । ५ बुरा । दराय । उ०—जग मे करो जो न टूट मान । नीकी करी, लटी उर अनै ।—बाल (शब्द०) ।

लटापटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लटापटाना] १ लटपटाने की क्रिया या भाव । २ लडाईं भगडा । भिडन । उ०—लटापटी होवन लगी मोहि जुदा करि देहु ।—गिरधर (शब्द०) ।

लटापोट ॐ†—वि० [हि० लोटपोट] लोटपोट । मोहित । मुग्ध । उ०—श्रद्धा मुत्तारक मति गर्द लूटि मुखन की मोट । लटापोट ह्वै लपटि गो लटकत लट की श्रोत ।—मुत्तारक (शब्द०) ।

लटिया सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लट] सूत आदि का लच्छा । लच्छी । श्रांटी । मुहा०—लटिया करना = सूत को लपेटकर श्रांटी या लच्छे के रूप में करना ।

लटियासन—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लट + मन] पटसन ।

लटी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लटा (= बुरा)] १ बुरी बात । २ झूठी बात । गप ।

मुहा०—लटी मारना = गप हाँकना । सीटना । झूठी बात कहना । ३, साधुनी । भक्तिन । ४ वेष्या । रडी ।

लटी^२—वि० [सं० लट्ट] दे० 'लटा' ।

लट्टा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुठन या लुण्ठन] दे० 'लट्टू' । उ०—नट्टा लौ प्रभु कर गहै निगुनी गुन लपटाय । वहै गुनी कर तै छुटै निगुनीयै ह्वै जाय ।—बिहारी (शब्द०) ।

लट्टक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लकुच] लकुट नाम का पेड़ और उसका फल । विशेष दे० 'लकुट' या 'लुकाट' ।

लट्टरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लट + उरी (प्रत्य०)] दे० 'लट्टरी' । उ०—लटकन ललित लट्टरियाँ मसि विदु गोरोचन ।—सूर (शब्द०) ।

लट्टू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुठन] दे० 'लट्टू' । उ०—(क) चार चकई तै धुनधुना लट्ट कचन को खेलि घरे लाल बाल ससन बुलाय रे ।—दीनदयाल (शब्द०) । (ख) रन भरन लट्ट को करम रथ, होत छट्टको सनु उर ।—गोपाल (शब्द०) ।

मुहा०—(किसी पर) लट्टू होना = (१) मोहित होना । ग्रामत होना । लुभाना । आशिक होना । उ०—(क) हम तो रीफि लट्ट भई लालन महाप्रेम तिय जाति ।—सूर (शब्द०) । (ख) रही लट्ट ह्वै लाल ही लखि वह बाल अनूप ।—बिहारी (शब्द०) । (ग) व्याह ही तै भए कान्ह लट्ट तब ह्वै है कहा जब होयगो गौना ?—पद्माकर (शब्द०) । (२) चाह मे हैरान होना । प्राप्ति के लिये उत्कण्ठित होना । उ०—जा सुख की लालमा लट्ट सिव सनकादि उदासी ।—तुलसी (शब्द०) ।

लट्टरी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लट्टू] कुप्पा ।

लट्टरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लट] सर के बालों का लटकता हुआ गुच्छा । केश । अलक । उ०—लटकन लसत ललाट लट्टरी । दमकति द्वे द्वे दंतुरियाँ रुरी ।—तुलसी (शब्द०) ।

लट्टेरा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लटजीरा या द्य०] एक प्रकार का धान जिसका स्वाद बहुत अच्छा होता है ।

लट्टेरा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लट (= चिपचिपाहट)] एक प्रकार का छोटा पेड़ । श्लेष्मातक । सपिस्ता । लिटोरा । लिबोडा ।

विशेष—इसकी पत्तियाँ गोल गोल और फल बेर के से होते हैं । यह वसत में पत्तियाँ भाडता है और भारतवर्ष में प्रायः सर्वत्र होता है । फलों में बहुत मा लसदार गूदा होता है । इसका फल श्रौषध के काम में आता है और सूखी खाँसी को ठीकी करने के लिये दिया जाता है । फारसी में इसे 'मपिस्ता' कहते हैं, और हकीम लोग मिस्री मिलाकर इसका 'लऊक मपिस्ता' नामक अवलेह बनाते हैं और खाँसी में चाटने के लिये देते हैं । संस्कृत में भी इसे 'श्लेष्मातक' कहते हैं ।

लट्टेरा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] दस इंच के करीब लंबा एक भारतीय पक्षी ।

विशेष—इसकी गरदन और मुँह काला, डंने नीलापन लिए हुए भूरे और दुम काली होती है । इसकी लंबाई दस इंच होती है । यह भारत में स्थायी रूप से रहता है और प्रायः मैदानों में ही पाया जाता है । यह तीन से छह तक अंडे देता है । इसके कई भेद होते हैं । जैसे,—मटिया, कजला, खरखला ।

लट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दुष्ट आदमी । दुर्जन ।

लट्ट पट्ट—वि० [अनु०] दे० 'लपपय' । उ०—प्रेम रग लट्ट पट्ट आवै जाय भट्ट पट्ट देववृद देखे परै मानो नट्ट वट्ट हैं ।—रघुराज (शब्द०) ।

लट्टू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुठन (= लुठकना)] गोल बट्टे के आकार का एक खिलौना जिसमें लपेटे हुए सूत के द्वारा जमीन पर फँकरकर लट्टके नचाते हैं ।

विशेष—इसके बीच में लोहे को एक कील जड़ी होती है, जिसे 'गूँज' कहते हैं । इसमें डोरी लपेटकर विशेष ढंग से जोर से फँकते हैं, जिससे यह बहुत देर तक चक्कर खाता हुआ घूमता रहता है ।

कि० प्र०—नचाना ।—फिराना ।

मुहा०—(किसी पर) लट्टू होना = दे० 'लट्टू' शब्द का मुहावरा ।

यौ०—लट्टूदार = (१) लट्टू के आकार के ममान । लट्टू जैमा । (२) लट्टू में युक्त । उ०—कतोदार, लट्टूदार या... ।—प्रेमधन०, भा० २, पृ० २०७ ।

लट्टूदार पगड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लट्टूदार + पगड़ी] एक प्रकार की पगड़ी जिसके ऊपर एक गोला सा बना होता है और आगे छज्जा सा भी निकला जाता है । इसे छज्जेदार पगड़ी भी कहते हैं ।

लट्टू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० यण्टि, प्रा० लट्टु] बड़ी लाठी । मोटा नया टडा ।

कि० प्र०—चलाना ।—मारना ।

यौ०—लट्टूगँवार । लट्टूवद । लट्टूवाज । लट्टूवाजी । लट्टूमार ।

मुहा०—किसी व्यक्ते या वस्तु के पीछे लट्टू लए फिरना = किसी का बराबर विरोध करना । किसी वस्तु के प्रतिकूल आचरण करना । जैसे,—तुम तो अक्ल के पीछे लट्टू लिए फिरते हो ।

लट्टू गँवार—वि० [हि० लट्टू + गँवार] महामूर्ख । उजड़ । उ०—आज विनय न जितनी चातें की, उतनी शायद और कभी न की थी, और भी नायकराम जैसे लट्टूगँवार से ।—रगभूमि, भा० २, पृ० ६५४ ।

लट्ठवद्—सञ्ज्ञा पुं [हिं लट्ठ + बाँधना] लाठी रखनेवाला । लाठी बाँधनेवाला । लाठी में रसै । लठैत । उ०—लट्ठवद् चौकमी करते चपरामियो और माली ।—भस्मावृत०, पृ० ५४ ।

लट्ठवाज—वि० [हिं लट्ठ + वाज्] १ लाठी लडनेवाला । लठैत । २ बड़ी लाठी बाँधनेवाला ।

लट्ठवाजी—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लट्ठवाज + ई (प्रत्य०)] लाठी की लड़ाई या मार पीट ।

लट्ठमार—वि० [हिं लट्ठ + मारना] १ लट्ठ मारनवाला । २ (वात या वचन) अप्रिय या कठोर । कर्कश । कटवा । जैसे,—उसकी बात लट्ठमार होती है ।

लट्ठर।—वि० [हिं लट्ठ] १ कठोर । कडा । ककश । २ गफ । मोटा । (कपडा आदि) ।

लट्ठा—सञ्ज्ञा पुं [हिं लट्ठ लाठी लट्टी का पुवत् रूप] १ लकड़ी का बहुत लंबा टुकड़ा । बल्ला । गहतीर । २ घर की छाजन या पाटन में लगा हुआ लकड़ी का बल्ला । धरन । कडो । ३ तकड़ी का रुभा । जैसे,—तालाब का लट्ठा, सरहद का लट्ठा । ४ खेत या जमीन नापने का वास या बल्ला जो ५३ गज का होता है और नाप के रूप में चलता है । ५ एक प्रकार का गाढा मोटा कपडा । गफ मारकौन ।

लट्ठावदी—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लट्ठा + फा० वदी] जमीन की साधारण नाप जो लट्ठे से की जाय ।

लट्ठव—सञ्ज्ञा पुं [सं०] १ घोडा । २ एक प्रकार का राग । ३ एक जाति का नाम (को०) । नाचनेवाला बालक । नृत्य करता हुआ बालक (को०) ।

लट्ठवा—सञ्ज्ञा स्त्री [सं०] १ एक प्रकार का करज । २ एक प्रकार का बाजा । ३ गीरा पच्ची । ४ कुमुभ । ५ चित्र बनाने की कूची । कलम । तुलिका । ६ व्यभिचारिणी स्त्री । ७ बाली की लट । अलक । ८ खेल । क्रीडा (को०) ।

लट्ठवाका—सञ्ज्ञा स्त्री [सं०] एक प्रकार का पच्ची (को०) ।

लठ—सञ्ज्ञा पुं [प्रा० लट्ठ] दे० 'लट्ठ' ।

लठा—सञ्ज्ञा पुं [हिं लाठी] दे० 'लट्ठ' । उ०—भारी लठा कोऊ लिए कोऊ लकुट निज कर मैं धरे ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० ११४ ।

लठियल।—वि० [हिं लाठी + इयल (प्रत्य०)] लाठी बाधने या चलानेवाला । लठैत ।

लठिया।—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लाठी + इया (प्रत्य०)] लाठी । लकड़ी । डडा ।

लठैत—सञ्ज्ञा पुं [हिं लठ + ऐत (प्रत्य०)] लाठी चलानेवाला । लाठी की लड़ाई लडनेवाला । लट्ठवाज ।

लडगा(७)।—सञ्ज्ञा पुं [हिं लडना + अगा (प्रत्य०)] लडाका । मोट्टा । लडैत । सैनिक । उ०—सनाहे अमल्ली, हिले फौज हल्ली । लडगे अलेखै, दिली ख्याल देखै ।—रा० रू०, पृ० ३१ ।

लडत—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लडना] १ लडाई । भिडत । २ सामना । युकावला ।

लडतिया—सञ्ज्ञा पुं [हिं लटत + इया (प्रत्य०)] लडनेवाला । गुणतीराज । उ०—चर्चा नित्य गी पचाम लडतिये आ छुटने है ।—गादान, पृ० १७७ ।

लड—सञ्ज्ञा स्त्री [सं० यष्टि, प्रा० लट्ट, हिं लड] १ मीघ में गुद्री हुई या एक दृमरी व लगी हुई एक ही प्रकार की वस्तुओं की पक्ति । गावा । जैम मानिया की लड । २—स्त्री का एक तार (जंग, कर्ष एव माव मिलाकर गटे जाय) । पाम । पान । ३ पक्ति । पाल । फनार । सिनमिला । श्रेणी ।

मुड।०—(किमी के गाव) लड मिनाना = मन करना । मित्रता करना । (किमी की) लड में रहना = रन या पत्न में रहना । अनुयायियों में रहना ।

४ पक्ति में लगे हुए फूलों या मजरियों का लडी के आकार का गुच्छा ।

लडउता।—वि० 'उडैता' ।

लडकटे।—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लट्टा + ई (प्रत्य०)] १ लडकन । पचन । बाल्यावस्था । २ अज्ञाता । नादाना । ३ चपनता । चचनता । चित्रविचित्रता ।

लडकखेल—सञ्ज्ञा पुं [हिं लडका + खेल] १ बालको का खेल । २ सहज काम । साधारण बात ।

लडकखेलवा।—सञ्ज्ञा पुं [हिं लडका + खेल] १ बालको का खेलवाड । २ सहज काम ।

लडकनी।—क्रि० प्र० [हिं लडकना] लडकना । उमग में भरना । आनंदित होना । उ०—जुगल बुंवर को लडकि लडावै । परम प्रेमरस पारस पावै । घनानद, पृ० २६१ ।

लडकपन—सञ्ज्ञा पुं [हिं लडका + पन] १ वह अवस्था जिसमें मनुष्य बालक ही । शाल्यावस्था । जैसे,—लडकपन में मैं वहाँ प्राय जाया करता था । लडको का सा चिलचिलापन । चपलता । चचलता । जैसे, हर दम लडकपन मत किया करा ।

क्रि० प्र०—करना ।

लडकबुद्धि—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लडका + बुद्धि] बालको की भी समझ । अपरिपक्व बुद्धि । इज्ञता । नासमझी ।

लडका—सञ्ज्ञा पुं [सं० लट (= लडका का सा आचरण करना) सं० लालव (= जिसका लाड किया जाय) अथवा लाड (= दुलार)] [स्त्री लडकी] १ छोटी अवस्था का मनुष्य । वह जिनकी उम्र कम हो । बालक । २ पुत्र । बेटा ।

यौ०—लडकावाला ।

मुड।०—लडको का खेल = (१) दिना महत्व की बात । (२) सहज बात या काम । ऐसा काम जिसका करना बहुत सहज हो । जैसे,—यह काम करना लडको का खेल नहीं है । राह वाट का लडका = ऐसा लडका जिसे किसी ने रास्ते में पडा पाया हो, और जिसके माता पिता का पता न हो । लडकी लडका = सतन । श्रीलाड ।

लडकाई।—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लडका + ई (प्रत्य०)] दे० 'लडकई' ।

लडका बाला—सञ्ज्ञा पुं [हिं लडका + सं० बालक, प्रा० बालप्र]

१ सतति । संतान । श्रौलाद । बाल वच्चा । जँमे,—उन्हे कोई लडका वाला नहीं है । २ पुत्र, कलत्र आदि । परिवार । कुटुंब । कुनवा । जैसे,—(क) परदेस मे लडके वालो की खबर न मिलने से जी धवराता है । (ख) वह अपने लडके वालो की खबर नहीं लेता ।

लडकिनी† = सञ्जा स्त्री [हि० लडकी + इनि (स्त्री० प्रत्य०)] लरकिनी । दे० 'लडकी' ।

लडकी—सञ्जा स्त्री [हि० लडका] १ छोटी अवस्था की स्त्री । बालिका । २ कन्या । पुत्री । बेटो ।

लडकीवाला—सञ्जा पुं [हि० लडकी + वाला (प्रत्य०)] विवाह सबब मे कन्या का पिता या सरलक । जैसे,—लडकीवाले को सदा दबकर रहना पडता है ।

लडकैया—सञ्जा पुं [हि० लडका + ऐया (प्रत्य०)] दे० 'लडकपन' । उ०—करो जतन माख साई मिलन की । गुडिया गुडवा सूप सुपलिया, तज दे दुव लडकैया खेलन की ।—कवीर श०, भा० १, पृ० ३३ ।

लडकोरी—वि० [हि० लडका + आरो (प्रत्य०)] दे० 'लडकोरी' । उ०—बेचारी अचमरी लडकोरी औरत को मारकर तुमने कोई बड़ी जवाँमदों का काम नहीं किया है ।—गोदान, पृ० २७३ ।

लडकोरी—वि० स्त्री [हि० लडका + आरो (प्रत्य०)] (स्त्री) जिसकी गोद में लडका हो । जिसके पास पालने पोसने के योग्य अपना बच्चा हो । जैसे,—लडकोरी स्त्री को तो बच्चे से ही छुट्टी नहीं मिलती ।

लडखडाना—क्रि० अ० [सं० लड (= डोलना) + खडा (या अनुरणनात्मक)] १ न जमने या न ठहरने के कारण इधर उधर हिल डोल जाना । पूर्ण रूप से स्थित न रहने के कारण खडा न रह सकना, इधर उधर भ्रुं पडना । भोका खाना । डगमगाना । डगना । जैसे,—पर लडखडाना, आदमी का लडखडाकर गिरना ।

सयो० क्रि०—जाना ।

२ डगमगाकर गिरना । भोका खाकर नीचे आ जाना । ३ ठीक तौर से न चलना । अपनी क्रिया मे ठीक न रहना । विचलित होना । च्युत होना । चूकना । जैसे,—कोई चीज उठाने मे उसका हाथ लडखडाता है ।

मुहा०—जीभ लडखडाना = (१) ठीक ठीक या पूरे शब्द और वाक्य मुँह से न निकलना । मुँह से स्पष्ट शब्द न निकलना । टूटे टूटे शब्द या वाक्य निकलना । (२) मुँह से रुक रुककर शब्द निकलना ।

लडखडी—सञ्जा स्त्री [हि० लडखडाना] लडखडाने की क्रिया या भाव । डगमगाहट ।

लडना—क्रि० अ० [सं० रण] १ आघात करनेवाले शत्रु पर आघात करने का व्यापार करना । आघात प्रातघात करना । एक दूसरे पर वार करना । एक दूसरे को चोट पहुँचाना । युद्ध करना । भिड़ना ।

सयो० क्रि०—जाना ।—पडना ।

यौ०—लडना भिडना ।

२ एक दूसरे को गिराने का प्रयत्न करना । कुशती करना । मल्ल-युद्ध करना । जैसे,—पहलवानो का अखाड मे लडना । ३ एक दूसरे को कठोर शब्द कहना । वाग्मुद्ध करना । भगडा करना । कलह करना । हृजत करना । तकरार करना । जैसे,—इसी बात पर दोनो घटो से लड रहे हैं । ४ वादविवाद करना । वहस करना । ५ दो वस्तुओ का वेग के साथ एक दूसरे से जा लगना । टकर खाना । टकराना । भिडना । जैसे,—रेलगाडियो का लडना, नावो का लडना । ६ विरोधा या प्रतिपक्षी के हानि पहुँचानेवाले प्रयत्न को निष्फल करने और उसे विफल करने का उद्योग करना । व्यवहार आदि मे सफलता के लिये एक दूसरे के विरुद्ध प्रयत्न करना । जैसे,—मुकदमा लडना । ७ पूर्ण रूप से घटित होना । एक बात का दूसरी बात के अनुकूल पडना । लक्ष्य के अनुकूल होना । मेल मिल जाना । उपयुक्त उतरना । सटीक बँठना । जैसे,—बात ही तो है, लड गई ।

मुहा०—हिसाब लडना = (१) लेखा ठीक उतरना । (२) किसी बात का सुभीता होना ।

८ अनुकूल पडना । ठीक होना । मुवाफिक उतरना । जैसे,—युक्ति लडना, किस्मत लडना । †१ बिच्छू, भिड आदि का डक मारना । जैसे,—भिड लड गई । (पश्चिम) । १० किसी स्थान पर पडना । किसी वस्तु से मयुक्त होना । लक्ष्य पर पहुँचना । भिडना । जैसे,—प्राँख लडना । निशाना लडना ।

लडवडाँ—[अनु०] १. (व्यजन) जो न बहुत गाढा और न बहुत पतला हो । लटपटा । २ जिसमे पीछे का अभाव हो । नपुसक ।

लडवडाना—क्रि० अ० [अनु०] दे० 'लडखडाना' ।

लडवावरा—वि० [सं० लड (= लडको का सा) अथवा लाड (= प्यार दुलार) + वावरा] [वि० स्त्री० लडवावरी] १. जो लडकपन लिए हो । जो चतुर और गमीर न हो । भोला भाला और उजड्ड । अलहड । मूर्ख । नासमझ । अहमक । उ०—(क) सखियाँ लडवावरी रावरी हैं तिनकी मति मे अति दीरति हों ।—बेनाप्रवीन (शब्द०) । (ख) नूर कहै न सुन, लडवावरी चदहि दोष कछु न भलाई ।—नूर (शब्द०) । २. गंवार । अनाडी । उ०—एरी लडवावरी ! अहोरि ऐसी वृष्णी तोहि नाहि सो सनेह कीज, नाह सो न कीजिए ।—केशव (शब्द०) । ३ मूर्खता से भरा हुआ । जिससे मूर्खता प्रकट हो । उ०—रावरी जो लडवावरी बात है सो सुनि राखियो, मैं न सहुंगी ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

लडवावलाँ—वि० [हि० लड + वावला] मूर्ख । बेवकूफ । दे० 'लडवावरा' ।

लडवौरा—वि० [हि० लाड + वौरा < वावरा] [वि० स्त्री० लडवौरी] दे० 'लडवावरा' । उ०—सुन री राधा आते लडवौरी जमुन गई तव सग कौन ही ।—सूर (शब्द०) ।

लडई—वि० [सं०, प्रा० लड, लडई] सुंदर । खूबसूरत (स्त्री) ।

लड्याना—क्रि० स० [हि० लाड (= प्यार)] लाड प्यार करना ।
दुलार करना । उ०—(क) मुगलौना मो क्यो पग तेरे तजे जाहि
पूत लो लाड लड्यावति है ।—लक्ष्मण (शब्द०) । (ख) कहते
हैं कि भर्ता की लड्याई हुई उस चडी ने उसके प्रतिज्ञा किए हुए
दो वरदान उगले ।—लक्ष्मण (शब्द०) ।

लडत—सज्ञा पुं० [म० लुण्ठन (= लुटकना)] कुशती का एक पेच जो
मुरगो या खरगोशो की लडाई का अनुकरण है ।

लडाई—सज्ञा पुं० [हि० लुटना] बँलगाडी ।

लडियाँ—सज्ञा स्त्री० [हि० लुटना, लुटकना या हि० लडा + इया
(प्रत्य०)] बँलगाडी ।

लत—सज्ञा स्त्री० [स० रति (= अनुक्ति, लीनता)] किमी बुरी बात
का अभ्यास और प्रवृत्ति । बुरी आदत । दुर्वसन । बुरी देव ।
उ०—यह एक घृणा उत्पादक लत है ।—कबीर म०,
पृ० १६७ ।

क्रि० प्र०—पढ़ना ।—लगना ।

लत—सज्ञा स्त्री० [हि०] लात । पाँव । पाद । यौगिक शब्दो मे
व्यवहृत । जैसे,—लतखोर, लतडी आदि ।

लतखोर—वि० [हि० लात + फा० खोर] दे० 'लतखोरा' ।

लतखोरा—वि० [हि० लात + फा० खोर (= खानेवाला)] [वि०
स्त्री० लतखोरिन] [सज्ञा लतखोरी] १ सदा लात खानेवाला ।
सदा ऐसा काम करनेवाला जिसके कारण मार खानी पडे
या भला बुरा सुनना पडे । २ नीच । कमीना ।

लतखोरा—सज्ञा पुं० १ दास । किकर । गुलाम । २ देहली । दहलीज
चौखट । ३ दरवाजे पर पडा हुआ पैर पीछेने का कपडा ।
पायदाज । गुलमगर्दा ।

लतडी—सज्ञा स्त्री० [देश०] केसारी नाम का अन्न ।

लतडी—सज्ञा स्त्री० [हि० लात (= पैर + डी (प्रत्य०)] एक प्रकार
की जूती जिसमे केवल तला ही होता है ।

लतपत—वि० [अनु०] दे० 'लपपत' । उ०—एक भैंसा कीचड
से लतपत आया और उस फर्श के ऊपर बँठ गया ।—कबीर
म०, पृ० १५६ ।

लतमर्दन—सज्ञा स्त्री० [हि० लत (= लात) + म० मर्दन] १ लातो
से दवाने की क्रिया । पैरो से रौंदने की क्रिया । २ लातो
की मार । पदाघात ।

लतर—सज्ञा स्त्री० [स० नता] बेल । बल्ली ।

लतरा—सज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार का मोटा अन्न जिसे 'बग्गरा'
और 'रँवछ' भी कहते हैं । इसकी फलियों की तरकारी भा
वनार्थ जाती है ।

लतरियाँ—सज्ञा स्त्री० [हि० लतरी + इया (प्रत्य०)] दे० 'लतडी' ।
उ० मात समुर को लातन भारत खमम को मारत लतरिया ।
—कबीर म०, भा० २ पृ० ५६ ।

लतरी—सज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की घास या पौधा जो खेतो

मे मटर के साथ बोया जाता है और जिनमे चिपटी चिपटी
फलियाँ लगती हैं ।

विशेष—इसके दानो से दाल निकलती है जिसे गरीब लोग खाते
हैं । यह बहुत मोटा अन्न माना जाता है । इसे 'मोट' और
'खिसारी' भी कहते हैं । पणुचारा के रूप मे काम आता है ।

लतरी—सज्ञा स्त्री० [हि० लात] एक प्रकार की हलकी जूती जो
केवल तले के रूप मे होती है और अँगूठे की फँकार पहनी
जाती है । चप्पल ।

लतहा—वि० [हि० लात + हा (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० लतही] लात
मारनेवाला (बँल या घोडा) । जैसे,—लतही घोडी ।

लतागी—सज्ञा स्त्री० [स०] कर्कट शृंगी । काकडानीगी ।

लता—सज्ञा स्त्री० [म०] १ वह पौधा जो मूत या लोरी के रूप मे
जमीन पर फैले अथवा किमी खडी वस्तु के साथ लिपटकर
ऊपर की ओर चडे । बल्ली । बेल । बीर ।

विशेष—जिस लता मे बहुत सी शाखाएँ इधर उधर निकलती
हैं और पत्तियों का भापस हाँता है, उसे सस्त्रुत मे 'प्रतालिनी'
कहते हैं ।

२ कोमल काड या शाखा । जैसे,—पद्मलता ।

विशेष—साँदर्य, कोमलता और सुकुमारता का सूचक होने के
कारण 'बाहु' या 'भुज' शब्द के साथ कभी कभी 'लता' शब्द
लगा दिया जाता है । जैसे,—बाहुलता, भुजलता । सुदरी
स्त्री के लिये भी 'कचनलता', 'कनकलता', 'कामलता', 'हिमलता'
आदि शब्दों का प्रयोग होता है । जैसे,—(क) गहि शशिवृत्त
नरिद सिडी लघत डहि थोरी । कामलता कल्हरी प्रेम मास्त
भकभारी ।—पृ० २१०, २५१, ३८१ । (ख) मानो किलता कचन
लहरि मत्ता वीर गजराज गहि ।—पृ० २१०, २५१, ३७४ ।

३ प्रियगु । ४ स्पृक्का । ५ अशनपर्णी । ६ ज्यातिष्मती लता ।
७ माधवी लता । ८ दूर्वा । दूर । ९ कैवतिका । १०.
सारिवा । ११ जातिपुष्प का पौधा । १२ सुदरी स्त्री ।
कुशोदरी । १३ मौलिया की लरी (को०) । १४ कशाघात या
चायुक । कोडा (को०) ।

लताकरज—सज्ञा पुं० [स० लताकरज] एक प्रकार का करज या
कजा । कटकरेज ।

पर्या०—दुष्पर्ण । वीरक्ष । वज्रजाक । वनदाक्षी । कटफन ।
कुबेराक्षी ।

विशेष बँद्यक मे यह कटु, उष्ण और वात कफ-नाशक कहा
गया है । इसका बीज दीपन, पथ्य तथा गुन्म और विप को
दूर करनेवाला माना जाता है ।

लताकर—सज्ञा पुं० [म०] नाचने मे हाथ हिलाने का एक प्रकार ।

लताकस्तूरिका—सज्ञा स्त्री० [स०] एक पौधा जो दक्षिण मे
होता है ।

विशेष—बँद्यक मे इसे निचत्वाद्रु, वृष्य, शीतल, लघु, नेत्रों को
हितकारी तथा श्लेष्मा, नृम्या और मुखरोग को दूर करने-
वाली माना है । इसे लताकरतुरी भी कहते हैं ।

लताकुंज—सज्ञा पुं० [सं० लताकुञ्ज] लताओं से छाया हुआ स्थान ।
उ०—लताकुंज में मधुप पुंज के 'गुन गुन गुन' गुंजन में ।—
अनामिका, पृ० २६ ।

लतागण—सज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में सूत या डोरी के रूप में फैलने-
वाले पौधों का वर्ग ।

विशेष—इस वर्ग के अंतर्गत ये पौधे हैं—पान, गर्च, सोमवल्ली,
विष्णुक्राता, स्वर्णवल्ली हृदसहारी, अद्भुतदंडी, आणशयेल,
वटपत्री, हिंगुपत्री, वशपत्री, वृहत्तला, अर्कपुष्पी, सर्पिणी, गुमा,
मूसाकानी, पोई, मोरशिव्वा, वववल्ली, कंकलता (नागकेसर),
जाती और माधवी ।

लतागुल्म—सज्ञा पुं० [सं०] लताओं का झुग्घुट । उ०—पेड़, पीपे,
लतागुल्म आदि भी इसी प्रकार कुछ भावों या तथ्यों की व्यंजना
करते हैं ।—रस०, पृ० १६ ।

लतागृह—सज्ञा सज्ञा [सं०] लताओं में महप की तरह छाया हुआ
स्थान । लताकुंज ।

लताजिह्व—सज्ञा पुं० [सं०] सर्प । सांप ।

लताड—सज्ञा स्त्री० [हिं० लथाड] दे० लथाड' ।

मुहाँ—लताड बताना = भर्त्सना करना । क्रुडियाँ सुनाना ।
उ०—प्रलकार प्रेमियों को लताड बताने के शुकल जी ने उन्हें
सावधान कर दिया है कि हैमियत से बाहर न बोला करें ।
—आचार्य०, पृ० १३५ ।

लताङ्गना—क्रि० सं० [हिं० लात] १ पैरों से कुचलना । रौंदना ।
२ लातों से मारना । ३ हँगन करना । श्रम में थिथिल
करना । ४ काना । ४ फटकारना । भिड़की सुनाना । ५ लेटे
हुए आदमी के शरीर पर खड़े होकर धीरे धीरे इधर उधर
चलना, जिससे उसके बदन की थकावट दूर होती है ।
(पश्चिम) ।

लतातरु—सज्ञा पुं० [सं०] १ नारंगी का पेड़ । २ ताड़ का पेड़ ।
३ शाल या साखू का पेड़ ।

लताताल—सज्ञा पुं० [सं०] हिलात वृक्ष ।

लताद्रुम—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लनातरु' ।

लतानन—सज्ञा पुं० [सं०] नाचने में हाथ हिलाने का एक ढंग ।

लतापती—सज्ञा पुं० [सं० लतापत्र] १ लता और पत्ते । पेड़ परों ।
पेड़ों और पौधों का समूह । २ पौधों की हरियाली । ३ जडी
बूटी । जैसे,—गाँव के लोग लतापता से दवा कर लेते हैं ।

लतापनस—सज्ञा पुं० [सं०] तंबूज । कलीदा ।

लतापर्ण—सज्ञा पुं० [सं०] विष्णु ।

लतापर्णी—सज्ञा स्त्री० [सं०] १ तालमूला । २ मधुरिका । मेउंडी ।

लतापाश—सज्ञा पुं० [सं०] लता का आपस या समूह । लताओं का
जाल ।

लताप्रदान—सज्ञा पुं० [सं०] लता के रेशे या तंतु [को०] ।

लतापत—सज्ञा स्त्री० [सं० लतापत] १. कोमलता । २ मृदुलता ।

नजाकत । २ शोभा । लालित्य । मुदरता । उ०—नन्ही एक
महदूष महताप ने, नताकन में गिमन निछव आव दे ।—
दमिखनी०, पृ० ७ । ३ बारीका । नूदमता (को०) । ४
स्वच्छता । शुद्धता (को०) । ५ नर्मीनता (को०) । ६ भाव की
गभीरता (को०) ।

लताफल—सज्ञा पुं० [सं०] पटोल । परग ।

लताभद्रा—सज्ञा पुं० [सं०] भद्रा या भद्राली नाम की एक
लता [को०] ।

लताभवन—सज्ञा पुं० [सं०] लताओं का कुंज । लताघट । उ०—
लताभवन में प्रगट भए तेहि अथनर दाउ भाइ । निकने जनु जुग
विमल त्रिधु जनद पटल विलगाइ ।—तुनमी (गद०) ।

लतामटप—सज्ञा पुं० [सं० लतामण्डप] छाई हुई लताओं से बना
हुआ मंडप या घर ।

लतामडल—सज्ञा पुं० [सं० लतामण्डप] छाई हुई लताओं का घेरा
या कुंज ।

लतामणि—सज्ञा पुं० [सं०] प्रवाल । मूंगा ।

लतामरुत्—सज्ञा पुं० [सं०] पृषा ।

लतामृग—सज्ञा पुं० [सं०] शाखामृग । मानर । वदर [को०] ।

लतायष्टि—सज्ञा स्त्री० [सं०] मजिष्ठा । मजीठ ।

लतायाचक्र—सज्ञा पुं० [सं०] १ प्रवाल । मूंगा । २ कनखा ।
अयुर [को०] ।

लतारद—सज्ञा पुं० [सं०] हस्ती । हाथी [को०] ।

लतारसन—सज्ञा पुं० [सं०] लताजिह्व । सर्प [को०] ।

लतार्क—सज्ञा पुं० [सं०] प्याज का पौधा । हरा प्याज ।

लतालक—सज्ञा पुं० [सं०] हाथी ।

लतावलय—सज्ञा पुं० [सं०] लताकुंज । लताघट [को०] ।

लतावृक्ष—सज्ञा पुं० [सं०] १ शल्लकी । सलई का पेड़ । २ नारियल
का वृक्ष [को०] ।

लतावेष्ट—सज्ञा पुं० [सं०] १ कामशास्त्र में मोलह प्रकार के रति-
बंधों में से तीमरा । २ एक पर्वत जो द्वारकापुरी से दक्षिण की
ओर पड़ता है । (हरिवंश) ।

लतावेष्टन—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का आलिंगन । बँठे हुए प्रिय
का लेटी हुई प्रिया द्वारा आलिंगन ।

लतावेष्टित—वि० [सं०] लताओं से घिरा हुआ या आच्छादित [को०] ।

लतावेष्टितक—सज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लतावेष्टन' [को०] ।

लत शकुतरु—सज्ञा पुं० [सं० लताशकुतरु] लताशख वृक्ष [को०] ।

लताशख—सज्ञा पुं० [सं० लताशख] शाल या साखू का पेड़ ।

लतासाधन—सज्ञा पुं० [सं०] तत्र या वाममार्ग की एक साधना
जिसका प्रधान अधिकरण लता या स्त्री है ।

विशेष—इसमें महारात्रि (शिवरात्रि) के दिन एक रजस्वला स्त्री
को लेकर उसके योनिदेश पर इष्टदेव का पूजन और जप
करते हैं ।

लतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छोटी लता । बँवर । वेल । विशेष दे० 'लता' ।

लतियर, लतियल—वि० [हि० लात + इयल (प्रत्य०)] जो सदा लात खाता रहता हो । लतखोर ।

लतियानां—कि० सं० [हि० लात + आना (प्रत्य०)] १ पैरो से दवाना या रौदना । २ खूब लातें मारना । प्रहार करना । दड देना । जैसे,—इसे खूब लतियाओ, तब मानेगा ।

लतिहर, लतिहल—वि० [हि० लात + इहर (प्रत्य०)] दे० 'लतियर' ।
लतीफ—वि० [अ० लतीफ] १. मजेशर । सुस्वादु । जायफेदार । २ अच्छा । बढिया । मनोहर ।

यौ०—लतीफ मिजाज = खुशदिन ।

लतीफा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लतीफा] १ हास्य रस पूर्ण छोटी कहानी । चुटकुला । २ चुहल की बात । हँसी की बात । ३ चमत्कार-पूर्ण बात । अनूठी बात ।

यौ०—लतीफा गो = लतीफा कहनेवाला । लतीफा वाज = विनोदी । चुहलभरी बातें कहनेवाला ।

मुहा०—लतीफा छोडना या कसना = चुहल या विनोद की बातें कहना ।

लत्त—सञ्ज्ञा स्त्री० [देशी लत्ता, लत्तिया] १. लात । २ बुरी आदत । लत ।
लत्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लत्तक] १ फटा पुराना कपडा । चीथड़ा । २ कपडे का टुकडा । वस्त्र खड । ३ कपडा । वस्त्र । उ०—
तन पर लत्ता नाहि लसम ओढाती सोई ।—पलटू०, भा० २, पृ० ७६ ।

यौ०—कपडा लत्ता = पहनने का वस्त्र ।

मुहा०—लत्ते लेना = आडे हाथ लेना । व्यग्य द्वारा उहास करना । बनाना । लत्ते उडाना = धजियाँ उडाना । बखिया उवेडना । फोल खोलना । उ०—भली भाँति निर्णय किया और उसके भली प्रकार लत्ते उडाए हैं । कबीर म०, पृ० ३७१ ।

लत्तिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गोवा । गोह ।

लत्ती^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [देशी लत्तिया, हि० लात] १ प्रहार के लिये उठाया या चलाया हुआ घोडे, गदहे आदि का पैर । पशुओ का पादप्रहार । लात । २ लात मारने की क्रिया । उ०—कोरु लरत लत्ती चलावत कोउ काई मारती ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० ११३ ।

क्रि० प्र०—चलाना ।—फटकारना ।—मारना ।

यौ०—दुलत्ती = घोडे, गवे आदि जानवरो का अपने पिछले दोनो पैरो से किसी पर प्रहार करना ।

लत्ती^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लत्ता] १, कपडे की लची धजी । २ वाँस से बँधी हुई कपडे की धजी जिसे ऊँचा करके कबूतर उडाते हैं । २ पतंग की दुम अर्थात् नीचे बंधी हुई कपडे की लची धजी । पुच्छला । ३, किसी शोर झुकी या कप्री खाती हुई पतंग को

ठीक रखने के लिये उसके विपरीत शोर की कमाची में बाँधने का लत्ता या धज्जी ।

क्रि० प्र०—बाँधना ।—लगाना ।

लथपथ—वि० [अनु०] १ जो भीगकर भारी हो गया हो । भीगा हुआ । तराशोर । जैसे,—(क) वह पानी में लथपथ हो गया । (ख) काम करते करते पसीने से लथपथ हो गए । २ (कीचड़ आदि में) सना हुआ । जो कीचड़ आदि के लगने से भारी हो गया हो । जैसे,—वह कीचड़ में फिसलकर फिर लथपथ दीडा ।

लथाड—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु० लथपथ] १ जमीन पर पटककर इधर उधर लोटाने या घसीटने की क्रिया । चपेट । जैसे,—ऐसी लथाड दी कि होश ठिकाने ही गए । २ हार । पराजय । ३ डाँटडपट । झिड़की । फटकार । ४ नुकसान । हानि ।

क्रि० प्र०—देना ।

मुहा०—लथाड खाना = झिड़का जाना । डाँटा जाना । घुड़की सुनना । लथाड पडना = डाँटा जाना । झिड़की सुनाई जाना । जैसे,—आज उसपर खूब लथाड पड़ी ।

लथाडना—क्रि० सं० [अनु० लथाड] १ दे० 'लथेडना' । २. दे० 'लताडना' ।

लथेडना, लथेरना(१)—क्रि० सं० [अनु० लथपथ] १ कीचड़ आदि से लपेटना । कीचड़ आदि पोतकर भारी करना । जैसे—दुपट्टे को क्यो कीचड़ में लथेड रहे हो । २ मिट्टी, कीचड़ आदि लिपटाकर गदा करना । जैसे,—कल ही कुरता पहना, आज ही मिट्टी में लथेड डाला । ३ जमीन पर पटककर इधर उधर लोटाना या घसीटना । उ०—हरि तेहि गहि महि माहि लथेरा ।—गोपाल (शब्द०) ।

सयो० क्रि०—ढालना ।

४ कुशती या लडाई में पछाडना । पटकना । हराना । ५ श्रम से शिथिल करना । हैरान करना । थकाना । ६ बातों या गालियों की बोझाइ से व्याकुल करना । भर्सना करना । झिड़किया, मुनाना । भला बुग कहना । डाँटना । डपटना ।

लदन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लदना] लदाव ।

लदना^१—वि० [हि०] लदी वस्तु को ढोनेवाला । बोझा ढोनेवाला । लदद ।

लदना^२—क्रि० अ० [अनुकरणात्मक देश०] भाराक्रात होना । भारयुक्त होना । बोझ ऊपर लेना । बोझ से भरना । ऊपर पड़ी हुई वस्तुओ के ढेर से भरना । जैसे,—(क) मेज किताबों से लदी हुई है । (ख) गाडी असवाव से लदी हुई आ रही है ।

सयो० क्रि०—जाना ।

२ किसी वस्तु का किसी वस्तु के समूह से ऊपर ऊपर भर जाना । आच्छादित होना । पूर्ण होना । जैसे,—(क) यह पेड फलों या फूलों से लदा है । (ख) वह स्त्री गहनो से लदी है । ३ सामान ढोनेवाली सवारी (जैसे, गाड़ी, घोड़ा, बेल, उट) का वस्तुओ

से पूर्ण होना । बोक से भर जाना या भरा जाना । जैसे,— गाडी लद रही है । ४ किसी भारी या वजनी चीज का दूसरी चीज के ऊपर होना या रखा जाना । किसी वस्तु के ऊपर बोक के रूप में पडना या रखा जाना । जैसे,— (क) तुम उसकी पीठ पर लद जाओ । (ख) मेज पर किताबें लदी हुई हैं । ५ सामान ढोनेवाली सवारी पर वस्तुओं का रखा जाना । बोक का ढाला या रखा जाना । जैसे,— गाडी पर उनका असवाव लद रहा है । ६ जेलखाने जाना । कैद होना । जैसे,— वह सात बरस के लिये लद गया । ७ परलोक सिधारना । मर जाना । जैसे,— आज वे भी लद गए । ८ समाप्त होना । खत्म होना ।

लटनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लटना] १ व्यापार । कारबार । २ लदन । लदाव । जैसे लटनी लदना । उ०—करै पाप पुत्र की लटनी जग ख्याल हा जग ख्याल हा ।—भीखा० श०, पृ० ८३ ।

लदलद—क्रि० वि० [अनु०] किसी गोली और गाडी या जमी हुई वस्तु के गिरने के शब्द का अनुकरण । जैसे,—भीगी मिट्टी ऊपर से लद लद गिर रही है ।

लदवाना—क्रि० स० [हि० लादना का प्रे० रूप] लादने का काम दूसरे से कराना । उ०—पाँच सहस इक सौ रथ आए । सहस निसान तोप लदवाए ।—सचल (शब्द०) ।

लदाव, लदाऊ(५)ँ—वि० [हि० लटना (= भरना)] लदाव । भराव । उ०—रेगुका की रासन में कीच कुस कासन में निकट निवासन में आसन लदाऊ के ।—पद्माकर (शब्द०) ।

लदान—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि०] लादने की क्रिया । लदाव । लदन ।

लदाना—क्रि० स० [हि० लादना का प्रे० रूप] लादने का काम दूसरे से कराना । दे० 'लदवाना' ।

सयो० क्रि०—देना ।—लेना ।

लदाफँदा—वि० [हि० लटना + फँदना] भांगपूर्ण । बोक से भरा या लदा हुआ ।

लदाव—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लादना] १ लादने की क्रिया या भाव । २ भार । बोक । ३ छत आदि का पटाव । ४ ईंटों की जोड़ाई जो बिना धरन या कडी के अघर में ठहरी हो । कडे की जोड़ाई । जैसे,— लदाव की छत । ५ वह छत या महाराव जिसमें ईंटों की जोड़ाई बिना धरन या कडी के महारे अघर में ठहरी हो ।

लदुवा—वि० [हि० लादना उवा (प्रत्य०)] बोक ढोनेवाला । पीठ पर बोक लेकर चलनेवाला । जैसे,— लदुवा घोडा, लदुआ बेल ।

लदूपक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पत्ती को० ।

लदू - वि० [हि० लादना] बोक ढोनेवाला । लदुवा । जैसे,— लदू घोडा ।

लदुड—वि० [हि० लटना (= भारी होना)] जिसमें तेजी और फुरती न हो । मुस्त । काहिल । झालसी । जैसे,— लदुड आदमी, लदुड घोडा ।

लदुडपन—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लदुड + पन (प्रत्य०)] काहिली । सुम्ती ढिलाई ।

लदुना(५)ँ—क्रि० स० [सं० लब्ध, प्रा० लड (= प्राप्त)] प्राप्त करना । हासिल करना । मिलना । पाना । भेटना । उ०— चोठर जमिया चून का वरी विरहा खद । वीछुरिया सो माजना वेद न काहू लद ।—कवीर (शब्द०) ।

लनटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का पौष या घास जिसका भाग बनाकर खाया जाता है ।

लना—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ एक पेड जिससे पजाव में सज्जी निकाली जाती है । इसका एक भेद 'गोरानला' है । २ शोग ।

लनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] पान की वारी में की ब्यारी ।

लनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] पजाव में होनेवाला एक पेड जिसमें सज्जी निकाली जाती है । छोटी जाति का 'लना' नाम का पेड ।

लप^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार की घास, जिसे 'धुरारी' भी कहते हैं ।

लप^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु०] १ वेत या लचीली छडी को पकडकर हिनाने से उत्पन्न शब्द या व्यापार । २ छुरी, तलवार आदि की चमक की गति ।

मुहा०—लप लप करना = (१) वेत या लचीली छडी आदि का पकडकर जोर से हिलाए जाने से शब्द करना । (२) झनकना । चमाचम करना । लप से = लौ या लपट की तरह तेजी में । भट से ।

लप—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ दोनों हथेलियों को मिलाकर बनाया हुआ सपुट जिसमें कोई वस्तु भरी जा सके । अंजली । जैसे,— लप भर आटा । २ अंजली भर वस्तु । जैसे,— लप भर निकालकर देना ।

लपक—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु० लप] १ उजाला । लपट । लौ । अग्नि शिक्षा । २ चमक । काति । लपलपाहट । जैसे,— बिजली को लपक से आँखें चौंधिया गईं । ३ लौ या लपट की तरह निकलने या चलने की तेजी । वेग । ४ चलने का वेग । झपट । फुरती ।

लपकना—क्रि० अ० [हि० लपक] १ चटपट या तेजी से चल पडना । तुरत दौड पडना । जैसे,— उमने लपककर भागते हुए चोर को पकड लिया । २ वेग में गमन करना । तेजी से जाना या चलना । जैसे,— वह उसी और लपका चला जा रहा है ।

मुहा०—लपक कर = (१) तुरत तेजी से जाकर । (२) तुरत । भट म । जैसे,— लपककर तुम्ही चले जाओ, लेते आओ । उ०—ताही समय उठे घन घोर दामिनी सी घाय उर लागी जाय स्याम घन सो लपकि कँ ।—केशव (शब्द०) ।

३ आक्रमण के लिये दौड पडना । झपटना । जैसे,— शेर उसकी और लपका । ४ कोई वस्तु लेने के लिये भट से हाथ बढाना । जैसे,— तुम सभी चीजे लेने के लिये लपकते हो ।

लपकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लपकना] एक प्रकार की सीधी सिलाई ।

- लपचा**—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] सिक्किम के पहाड़ों की एक जंगली जाति ।
- लपभ्रप**—वि० [अनु० लप+हि० भ्रपट] १ चंचल । चपल । स्थिर न रहनेवाला । २ चुपचाप न बैठनेवाला । अधीर । जैसे,—बाप चुपचुप, पूत लपभ्रप । ३ तेज । फुरतीला ।
- मुद्दा**—लपभ्रप चाल = वेदगी चाल । चपलता की चाल ।
- लपभ्रप**^३—सञ्ज्ञा स्त्री० १ चंचलता । चपलता । २ तेजी । तीव्रता । ३ सुकुमारता । कौमलता ४ एक प्रेम व्यञ्जक चेष्टा ।
- लपट**^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० लोक हि० लौ+पट (=विस्तार)] १. आग के दहकने से उठा हुआ जलती वायु का स्तूप । अग्नि-शिखा । ज्वाला । आग की लौ । उ०—इद्रजाल कदर्प को कहै कहा मतिराम । आगि लपट वर्षा करै ताप धरै घनस्याम ।—मतिराम (शब्द०) । २ तपी हुई वायु । हवा में फली हुई गरमी । आँच ।
- क्रि० प्र०**—आना ।—लगना ।
- ३, किसी प्रकार की गध से भरा हुआ वायु का भोका । जैसे,—क्या अच्छी गुलाब की लपट आ रही है । ४ गध । महक । भ्रमक । बू । उ०—सूरदास प्रभु को वानक देखे गोपा टारें न टरत निपट आवै सोधे की लपट ।—सूर (शब्द०) ।
- लपट**^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लिपटना] दे० 'लिपट' ।
- लपटना**^१—क्रि० अ० [स० लिप्त+हि० ना (प्रत्य०)] १. अगो से घेरना । लिपटना । चिमटना । आलिंगन करना । २ किसी सूत की सी वस्तु का दूसरी वस्तु के चारों ओर कई फेरों में घेरना । ३ लग जाना । सलमन होना । सटना । ४ उलभना । फँसना । लिप्त होना । उ०—आइ गयो काल मोहजाल में लपटि रह्यो महा । वकराल यमदूत ही दिखाइए ।—प्रियादाम (शब्द०) । ५. पारवेष्टित होना । घिर जाना । ६ लगा रहना । रत रहना ।
- लषटा**—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लपटा सा लपसी] १. गाढी गीली वस्तु । २ लपसी । लेई । ३ कढी । ४ एक प्रकार की घास । लपटौआँ ।
- लपटाना**^१—क्रि० स० [हि० लपटना] १ अगो से घेरना । लिपटना । चिमटाना । २. आलिंगन करना । गले लगाना । ३ किसी सूत की सी वस्तु को कई फेर करके टिकाना या बाँधना । लपेटना । उ०—दरसन आयो राना रूप चतुर्भुज जू के रहे प्रभु पौढ़ि हार सीस लपटायो है ।—प्रियादास (शब्द०) । ४ परिवेष्टित करना । घेरना ।
- लपटाना**^१—क्रि० अ० १ सलमन होना । सटना । उ०—यह नहिं भली तुम्हारी बानी । मैं गृहकाज रह्यो लपटानी ।—सूर (शब्द०) । २ उलभना । फँसना ।
- लपटौआँ**^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लपटना] एक प्रकार का जंगली तृण जिसकी बाल कपड़े में लिपट या फँस जाती है, और कठिनाता से छूटती है ।
- लपटौआँ**^१—वि० १ लिपटनेवाला । चिमटनेवाला । २ सटा या लिपटा हुआ ।

लपटौना^१—दश० पुं०, वि० [हि० लपटना] दे० 'लपटौआँ' ।

लपन—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ मुख । मुँह । २ भाषण । कथन । ३. बोलने वा कहने का भाव (को०) ।

लपना—क्रि० अ० [स० लपन] कहना । बोलना ।

लपना^१—क्रि० अ० [अनु० लप लप] १ बेंत या लचीली छड़ी का एक छोर पकड़कर जोर से हिलाए जाने से इधर उधर झुकना । भोक के साथ इधर उधर लचना । २ झुकना । लचना । ३ लपकना । ४ ललचना । उ०—साधन विनु सिद्धि सकल विकल लोग लपत ।—तुलसी (शब्द०) । ५ हैरान होना । परेशान होना ।

मुद्दा—लपना भ्रमना = हैरान हीना । उ०—साठि बरस जा लपई भ्रमई । छन एक गुपुन जाय जो जपई ।—जायसी (शब्द०) ।

लपलपाना^१—क्रि० अ० [अनु० लप लप] १. बेंत या लचीली छड़ी, टहनी आदि का एक छोर पकड़कर जोर से हिलाए जाने से इधर उधर झुकना । भोक के साथ इधर उधर लचना या लपना । जैसे,—बेंत का लपलपाना । २ किसी लचीली वस्तु का इधर उधर हिलना डोलना या किसी वस्तु के अंदर से बार बार निकलना । जैसे,—साँप की जीभ लपलपाती है ।

मुद्दा—जीभ लपलपाना = चखने की इच्छा या लोभ करना । जैसे,—मिठाई खाने के लिये उसकी जीभ लपलपाया करती है । ३ छुरी, तलवार आदि का चमकना । झलकना ।

लपलपाना^१—क्रि० स० १ बेंत या लचीली छड़ी, टहनी आदि का एक छोर पकड़कर जोर से इधर उधर झुकाना या भोका देना । भोक के साथ इधर उधर लचाना । फटकारना । लपाना । जैसे,—मारने के लिये बेंत लपलपाना । २ किसी लचीली चीज को इधर उधर हिलाना डुलाना या किसी वस्तु के अंदर से बार बार निकालना । जैसे,—साँप जीभ लपलपाता है । ३ छुरी, तलवार आदि को निकालकर चमकाना । चमकाना ।

लपलपाहट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लपलपाना+आहट (प्रत्य०)] १ लपलपाने की क्रिया या भाव । लचीली छड़ी या टहनी आदि का भोक के साथ इधर उधर लचकना । एक छोर पकड़कर जोर से हिलाए जाते हुए बेंत आदि का भोका । २ चमक । झलक । जैसे,—तलवारों का लपलपाहट ।

लपसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० लप्सिका] १ मुने हुए आटे में चीनी का शरबत डालकर पकाई हुई बहुत गाढ़ा लेई जो खाई जाती है । थोड़े घों का हलुवा । २ गोली गाढी वस्तु । जैसे,—ग्राज की तरकारी तो लपसी हो गई । ३ पानी में आटाया हुआ आटा जिसमें नमक मिला होता है और जो जेल में कौंदियों को दिया जाता है । लपटा ।

लपहा—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] पान का एक रोग । पान की गेरुई ।

लपाना—क्रि० स० [अनु० लपलप] १ लचीली छड़ी आदि को भोक के साथ इधर उधर चलाना । फटकारना । २. नरम लची चीज को डुलाना । ३, आग बढ़ाना ।

लपित'—वि० [सं०] कहा हुआ। बोला हुआ। कथित।

लपित'—सञ्ज्ञा पुं० कथन। बोल। आवाज [को०]।

लपिता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शार्ङ्गिका नामक पक्षी की एक जाति।

लपेट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लपेटना तुल० स लिप्त (लें किया हुआ)]
१ लपेटने की क्रिया या भाव। २ किसी सूत, डोरी या कपड़े की सी वस्तु को दूसरी वस्तु की परिधि से लपेटने या बाँधने की स्थिति। बधन का चक्कर। घुमाव। फेरा। जैसे—रुई लपेट बाँधोगे, तब मजबूत होगा। ३ बँधी हुई गठरी में कपड़े की तह की मोड़। ४—खोलिक लपेट मध्य मण्डल निहारि कौडा, समुक्ति विचारे हारै, मल मे न आयो है।—प्रियादास (शब्द०)। ४ ऐँठन। बल। मरोड़। ५ किमी लंबी वस्तु की मोटाई के चारो ओर का विस्तार। घेरा। परिधि। जैसे,—(क) हम खम्भे की लपेट ३ फुट है। (ख) इस पेड़ के तने की लपेट ५ फुट है। ६ उलझन। फँसाव। जाल या चक्कर। जैसे,—तुम उसकी बातों की लपेट में पड़ गए। ७—ग्राए इस्क लपेट में लागो चमम चपेट।—रसनिधि (शब्द०)। ७ कुशती का एक पेच।

विशेष—जब दोनो लडनेवाले एक दूसरे की बगल से मिर निकालते हैं और कमर को दोनो हाथों से पकटकर भीतर अडानी टाँग से लपेटते हैं, तब उसे लपेट कहते हैं।

८ पकड़। बधन। ९—वानर भालु लपेटनि भारत तब हँडै पछितायो।—(शब्द०)।

लपेटन'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लपेटना] लपेटने की क्रिया या भाव। लपेट।
२ फेरा। बल। ३ ऐँठन। मरोड़। ४ उलझन। फँसाव।

लपेटन'—सञ्ज्ञा पुं० १ लपेटनेवाली वस्तु। वह जो चारो ओर सटकर घेर ले। २ वह वस्तु जिसे किसी वस्तु के चारो ओर घुमाकर बाँधें। ३ वह कपड़ा जिसे किसी वस्तु के चारो ओर घुमाकर बाँधें। बाँधने का कपड़ा। वेष्टन। वेठन। ४ पैरो में उलझनेवाली वस्तु। जैसे,—रस्सी का टुकड़ा। (पालकी में कहारों का प्रयोग)। ५—काँट कुराय लपेटन लोटन ठाँवहि ठाँव बभाऊ रे।—तुलसी (शब्द०)। ५ वह लकड़ी जिसपर जुलाहे बुनकर तैयार कपड़ा लपेटते हैं। तूर। बेलन।

लपेटना - क्रि० सं० [सं० लिप्त, हिं० लिपटना] १ किसी सूत, डोरी या कपड़े की सी वस्तु को दूसरी वस्तु के चारो ओर घुमाकर बाँधना। घुमाव या फेरे के साथ चारो ओर फँसाना। चक्कर देकर चारो ओर ले जाना। जैसे,—(क) इस लकड़ी में तार लपेट दो। (ख) छड़ी में कपड़ा लपेटा हुआ है।

सयो० क्रि०—देना।—लेना।

२ सूत, डोरी या कपड़े की सी वस्तु चारो ओर ले जाकर घेरना। परिवेष्टित करना। जैसे,—इस डबे को कपड़े से लपेट दो। ३ डोरी, सूत या कपड़े की सी फँसी हुई वस्तु को तह पर तह मोड़ते या घुमाते हुए सकुचित करना। फँसी हुई वस्तु को लच्छे या गट्टर के रूप में करना। समेटना। जैसे,—(क) कपड़े का धान लपेटकर रख दो। (ख) तागा लपेटकर रख दो। ४.

मोड़े हुए कपड़े आदि के अंदर करके बंद करना। कपड़े आदि के अंदर बाँधना। जैसे,—पुस्तक लपेटकर रख दो। ५ हाथ पैर आदि अंगों को चारो ओर सटाकर घेरे में करना। पकड़ में बंद लेना। जैसे,—(क) उम्रे देवने ही उमने हाथों में लपेट लिया। (ख) अजर ने शेर का चारो ओर में लपेट लिया। ६ ऐसी स्थिति में करना कि कुछ करने में न पावे। गति विधि बंद करना। चारो ओर में चाल रोकना। जैसे,—तुमने तो उम्रे चारो ओर से ऐसा लपेटा है कि वह कुछ करे नही सकता। ७ पकड़ में लाना। काबू में करना। रमना। ८—जिमि बरि निबल दलै मृगराजू। लेह नयैहि लवा जिमि बाजू।—तुलसी (शब्द०)। ८. उलझन में डालना। ९ भ्रम में फँसाना। ९ गौरी गाढा वस्तु पीनना। लेपन करना। जैसे,—बट्ट बदन में काँवड लपेटे आ पहुँचा।

विशेष—यद्यपि 'लपेटना' और 'लपेटना' दोनो मकर्मक क्रियाएँ 'लपेटना' ही से बनी हैं, पर दोनों के प्रयोगों में अंतर है। 'लपेटना' में गलन करने या सटान का भाव प्रधान है। इसी से 'छाती से लपेटना', 'बदन में रुई लपेटना' आदि बोलते हैं। 'लपेटना' में घुमाकर या मोड़कर घेरने का भाव प्रधान है। इसी में 'डोरी लपेटना', 'कपड़ा लपेटना' आदि बोलते हैं।

लपेटनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लपेटना] जुलाहों की लपेटन नाम की लकड़ी। लपेटना। तूर।

लपेटवों—वि० [हिं० लपेटना] १ जो लपेटा हो। जिसे लपेट सकें। २ जो लपेटकर बना हो। ३ जिनमें मोने चाँदी के तार लपेटे गए हों। ४ जिसका अर्थ छिपा हो। गूढ। व्यग्य। जैसे—लपेटवाँ गालों। ५ जो सीधे ढग में न कहा या किया गया हो। घुमाव फिरोव का। चक्करदार। जैसे,—लपेटवाँ बात।

लपेटा'—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'लपेट'।

लपेटा'—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] लपट। म्पाड।

लपेट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पारस्कर गृह्यसूत्र में कथित बालरोगों के अघिष्ठाता एक देवता।

लपेटा'—सञ्ज्ञा पुं० [द्य०] लिसोडा। लबरा।

लपोटा', लपुडा'—सञ्ज्ञा पुं० [हिं०] दे० 'थप्पड'।

लपपा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ छत में लगी हुई वह लकड़ी जिसमें रेशमी कपड़े बुननेवाले जुलाहों के करघे की रस्सियाँ बँधी रहती हैं। २. एक प्रकार का गोटा।

लप्सिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लपसी।

लप्सुद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] (बकरे की) दाढ़ी [को०]।

लप्सुदी—वि० [सं०] दाढ़ीवाला (बकरा) [को०]।

लफगा—वि० [फ्रा० लफग] १ लपट। व्यवहारी। दुश्चरित्र। २ शोहदा। आधारा। कुमार्गी।

लफा'—सञ्ज्ञा स्त्री० [?] दे० 'लफ'।

लफटट—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लेफिटनेट] सेना का एक छोटा अफसर।

लफट्ट गवर्नर—सञ्ज्ञा पु० [अ० लेफिटनेट गवर्नर] किसी प्रात का शासक । छोटे सूवे का हाकिम ।

लफना(पुं०)—क्रि० अ० [अनु०] दे० 'लपना' । उ०—चिलक चिकनई चटर म्यो लफति मटर लो आय । नारि सलोनी सँवरी नागन लो डसि जय ।—विहारी (शब्द०) ।

लफलफाना(पुं०)—क्रि० अ० [अनु०] लपलपाना ।

लफलफानि(पुं०)—सञ्ज्ञा पुं० [अनु०] दे० 'लपलपाना' या लपलपाना । उ०—शामर तीर द्रुम डारि गहि भूलै फूले देखत सफ लफलफान गति मति वीरी है ।—प्रियादास (शब्द०) ।

लफाना(पुं०) क्रि० अ० [अनु०] दे० 'लपान' ।

लफज—सञ्ज्ञा पु० [अ० लफज] १ शब्द । २ वात । बोल ।

लफजो—वि० [अ० लफजो] शब्द सवधी । शब्द का । शाब्दिक [को०] ।

यो०—लफजो माने = शब्दार्थ । शब्द का अर्थ ।

लफतरा—वि० [अ० लफतरा] नीच । अथवा । कमीन । [को०] ।

लफका—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लफका] लपेटन या तह करने की क्रिया ।

मुहा०—लफका मारना = बिना दाँता मे अच्छी तरह कुँच हुए खाद्य पदार्थ जल्दो जल्दा नगलना ।

लफफाज—वि० [अ० लफफाज] वातुनी । बहुत बात करनेवाला । वाचाल [को०] ।

लफफाजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लफफाजी] वाचालता । वातुनीपन । मुखरता [को०] ।

लब—सञ्ज्ञा पु० [फा०] १ श्रोष्ठ । श्रोठ । होठ । २ तट । कूल । किनारा [को०] ।

यो०—लबगीर = तवाकू पीने की नली या पाइप । लबबरा । लबजदा = (१) दे० 'लबबद' । (२) बातें करने या बोलने वाला । लबबद = (१) चुन । खामाश । (२) बहुत मीठी वस्तु । लबे सडक = पथ के किनारे । लबरेज ।

लबगुरानया—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] गहरे बैंगनी रंग के रतालू की लता जो भारतवर्ष मे कई जगह बोई जाती है । इसकी जड़ खाई जाती है ।

लबचरा—सञ्ज्ञा पु० [फा०] दोस्तों के बीच मे रखा मेवा, दाना, चना आदि जिमे बातें करते हुए लोग खाते रहते हैं [को०] ।

लबभना(पुं०)—क्रि० अ० [देश०] उलभना । फँसना । उ०—लबभनी अग तरग बहु, सरिता रग अनूप । नव पकज अकुर जहाँ, घरत प्रवाल स्वरूप ।—गुमान (शब्द०)

लबड़ धोंधो—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० अनुकरणात्मक] १ निरर्थक या झूठ मूठ का हल्ला । व्यथ का गुल गपाडा ।

क्रि० प्र०—करना ।—मचना ।—मचाना ।

२ क्रम और व्यवस्था का अभाव । गडबड़ी । अचेर । बदइतजामी । कुव्यवस्था । ३ अन्याय । अनीति ।

क्रि० प्र०—मचना ।—मचाना ।

४. बातों का भुलाया । असल बात को टालने के लिये बकवाद

और कहासुनी । वेईमानी को चाल । जैसे,—यहाँ तुम्हारी यह लबड़धोवो न चलेगी ।

क्रि० प्र०—करना ।

मुहा०—लबड़धोवो चलना = वेईमानी की चाल सफल होना ।

लबडना(पुं०)—क्रि० अ० [सं० लप = बचना] १ झूठ बोलना । लवारी करना । २ गप हाँकना ।

लबडा—वि० [सं० लपन] दे० 'लवरा' ।

लबदा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लगुड] मोटा वेडील डडा ।

लवदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लवदा] छोटी छड़ी । पतली छड़ी । हलको लाठी ।

लवनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] १ मिट्टी की लवी हाँडी या मटकी जो ताड के पेडों मे बाँध दी जाती है और जिसमे ताजी इकट्ठी होती है । २ काठ की लवी डींडी लगा हुआ कटोरा । जमसे षड्माह म से शीरा निकालते हैं । डोई । डौवा ।

लवरा—वि० [सं० लवन (= बोलना)] [वि० स्त्री० लवरी] १ झूठ बोलनेवाला । उ०—मथवा मुडाय जोगी कपडा रंगोल गाता बाँव के होई गैले लवरा ।—क० बचनावली, पृ० २४३ । २ गप हाँक वाला । गप्पी । उ०—आप सभा में मत्स्य जू साहत लातची और लवरान को लवरा ।—रघुराज (शब्द०) । ३ षु वाया । बाई और का । वाम ।

लवरी—वि० स्त्री० [हिं० लवरा] झूठ बोलनेवाली । गप्पी । झूठा ।

लवरी—सञ्ज्ञा स्त्री० दे० 'लवड़ी' ।

लवरेज—वि० [फा० लवरेज] ऊपर तक भरा हुआ । किनारे तक भरा हुआ । मुहाँमुँह । लवालब [को०] ।

लवलवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० लव] बहक के घोडे की कमानी ।

लवलहका—वि० [हिं० लपना + लहकना] [वि० स्त्री० लवलहकी] १ किसी वस्तु को देखते ही उसकी ओर लपकनेवाला । अघोर और लालची । २ बिना प्रयोजन सब वस्तुओं को हाथ लगानेवाला । चचल । चपल ।

लवाचा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० लवाचह] कुर्ते आदि के ऊपर पहनने का एक विशेष पहनावा । लवादा । विशेष दे० 'अबा' [को०] ।

लवाद—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] वरसानी कोट [को०] ।

लवादा—सञ्ज्ञा पुं० [फा० लवादाह] १ रुईदार चोगा । दगला । २ वह लवा ढोला पहनावा जो अंगरखे आदि के ऊपर से पहन लिया जाता है और जिसका सामना प्रायः खुला होता है । अबा । चोगा ।

लवान—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ बच्च । सीना । छातो । २ लोबान [को०] ।

लवाब—वि० [अ० लुआब] चप । लम । लुआब ।

लवाब—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लुआब] १ साराण । खुलासा । सार तत्व । २ मूदा । मगज । तत्व [को०] ।

लवारी—वि० [सं० लपन (= बकन + आर (प्रत्य.)] १ झूठा । मिथ्यावादी । २. गप्पी । प्रपची । उ०—(क) आबु गए औरहि काहू के रिस पावति कहि बडे लवार ।—सूर (शब्द०) । (ख) तीली

लोल लोलुप ललाट लालची लवार वार वार लालच धरनि घन धाम को।—तुलसी (शब्द०)। (ग) वालि न कवहुँ गाल अश सारा। मिल तपसिन्ह तै भएसि लवारा।—तुलसी (शब्द०)।

लवारी'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लवार] झूठ बोलने का काम।

लवारी—वि० १ झूठा। २ चुगलखार। उ०—यह पापी अति चोर लवारी। ताहि दीन हम साँसति भारी।—विश्राम (शब्द०)।

लवालव—क्रि० वि० [फा०] मुँह या किनारे तक। छलकता हुआ। जैसे,—(क) यह तालाव भरा है। (ख) प्याला लवालव भरा है।

लवारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लिपडा] ईख का रप जो पकाकर खूब गाढ़ा और दानेदार कर दिया गया हो। राव।

लववृ—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लुव्व] काम-शाक्ते-वधक एक पाक [को०]।

यौ०—लवव कबीर, लवव सगीर = लवव नाम का पाक।

लवेचू—सञ्ज्ञा पुं० [देप०] जैन वैश्यो की एक जाति। लमेचू।

लवेद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० वेद का अनु०] १ वेद के विरुद्ध रीति, रुढ़ि वचन या प्रसंग। २ लोकाचार और दतकया। (बोलचाल)। जैसे,—वेद म यह सब कुछ नहीं ह, तुम्हारे लवेद मे हो, तो हो।

लवेदा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लगुड] [स्त्री० अल्पा० लवेदी] मोटा बड़ा डडा।

लवेदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लवेदा] १ छोटा डडा। लाठी। २ डडे का बल। जवरदस्ती।

लवरा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] लसोडे का पड़ या फल। लपेरा।

लवध—वि० [सं०] १ मिला हुआ। पाया हुआ। प्राप्त। २ उपार्जन। कमाया हुआ। ३ भाग करने से आया हुआ फल। (गरिण)।

लवध'—सञ्ज्ञा पुं० स्मृते के अनुसार दस प्रकार के दासो मे से एक।

लवधक—वि० [सं०] १ प्राप्त। उपलब्ध। मिला हुआ (को०)। २ पाने वाला। लवध करनेवाला।

लवधकाम—वि० [सं०] जिसकी कामना सिद्ध हो गई हो। जिसका मनोरथ सफल हो गया हो। जिसका मतलब हासिल हो गया हो।

लवधकीर्ति—वि० [सं० लवधकीर्ति] १ जिसने कीर्ति पाई हो। जिसने यश प्राप्त किया हो। २ विख्यात। प्रसिद्ध। नामवर।

लवधचेता—वि० [सं० लवधचेतस्] जिसकी चेतना लौट आई हो। जिसकी बेहोशी दूर हो गई हो [को०]।

लवधजन्मा—वि० [सं० लवधजन्मन्] जन्मा हुआ। उत्पादित [को०]।

लवधतीर्थ—वि० [सं०] जिसने कोई अवसर प्राप्त किया हो लवधावसर [को०]।

लवधदास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह दास जो दूसरे से मिला हो।

लवधनाम—वि० [सं० लवधनामन्] जिसने नाम पाया हो। नामवर। प्रसिद्ध।

लवधनाश—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ प्राप्त वस्तु का नष्ट हो जाना। २ उपार्जन का विनाश [को०]।

लवधप्रणाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पचतत्र का एक तत्र जिसमे प्राप्त का नाश दिखाया गया है।

लवधप्रतिष्ठ—वि० [सं०] जिसने प्रतिष्ठा पाई हो। प्रतिष्ठित। समानित।

लवधप्रत्यय—वि० [सं०] जिसने विश्वास प्राप्त किया हो। विश्वास-भाजन। विश्वसनीय [को०]।

लवधप्रशमन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनुस्मृति के अनुसार मिले हुए धन आदि का सत्पात्र को दान। (मनु०)।

लवधप्रसर—वि० [सं०] स्वच्छद। अवाधित [को०]।

लवधप्रसाद—वि० [सं०] प्रियपात्र। स्नेहभाजन [को०]।

लवधलक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जिसका वार ठीक निशाने पर जा लगे। २ जिसे अभिप्रेत वस्तु मिल गई हो।

लवधलक्षण—वि० [सं०] दे० 'लवधावसर' [को०]।

लवधलक्ष्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लवधलक्षण'।

लवधवर—वि० [सं०] जिसने वर प्राप्त किया हो।

लवधवर्ण—वि० [सं०] विद्वान्। पंडित।

लवधविद्य—वि० [सं०] विद्वान्। शिक्षित। प्राज्ञ [को०]।

लवधव्य—वि० [सं०] प्राप्य। पाने के योग्य [को०]।

लवधशब्द—वि० [सं०] विख्यात। प्रसिद्ध [को०]।

लवधश्रुत—वि० [सं०] विद्वान्। [नृणात्। बहुश्रुत [को०]।

लवधसङ्घ—वि० [सं०] दे० 'लवधचेता'।

लवधसिद्धि—वि० [सं०] जिसने पूर्णता प्राप्त की हो। दे० 'लवधकाम' [को०]।

लवधाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवधाक्] गरिण करने पर जो अक प्राप्त हो। जवाब।

लवधातर—वि० [सं० लवधान्तर] दे० 'लवधावकाश'।

लवधा'—वि० [सं० लवधृ] लवध करनेवाला। प्राप्त करनेवाला [को०]।

लवधा'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] विप्रलवधा नायिका।

लवधातिशय—वि० [सं०] जिस असाधारण शक्ति प्राप्त हुई हो।

लवधानुज्ञ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जिसने आज्ञा पा ली हो। २ जो उपनयन मे गृहीत ब्रह्मचारी के कर्तव्यों से मुक्त हो [को०]।

लवधावकाश—वि० [सं०] जिसने कोई अवसर प्राप्त किया हो। जिसे (कार्य का) क्षण या, अवसर मिला हो [को०]।

लवधावसर—वि० [सं०] दे० 'लवधावकाश'।

लवधस्पद—वि० [सं०] कोई सहारा या पद प्राप्त करने योग्य।

लब्धि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ प्राप्ति। लाभ। २ हिसाब का जवाब। गरिण का लवधाक। भागफल।

लब्धोदय—वि० [सं०] १ जन्मा या उगा हथा । २ समृद्ध ।
उत्पत्तिप्राप्त (को०) ।

लभधरि—सञ्ज्ञा पुं० [द्य०] कुदाल के मुँह पर का टेढ़ा भाग ।

लभन—सञ्ज्ञा पुं० [म०] [वि० लभ्य, लब्ध] १ प्राप्त करना ।
हासिल करना । पाना । २. गर्भ धारण करना । गर्भवती
होना (को०) ।

लभनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] दे० 'लवनी' ।

लभस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ घोड़ा बांधने की रस्ती । पिछाडी ।
२ धन । ३ याचक । माँगनेवाला ।

लभ्य—वि० [सं०] १ पाने योग्य । जो मिल सके । २. न्याययुक्त ।
उचित । मुनासिब ।

लभ—प्रत्य० [हि० लवा] लवा का सञ्ज्ञित रूप जो प्रायः यौगिक
शब्दों के आरम्भ में लगाया जाता है । जैसे,—लमतडग ।

लभई—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] मधुमक्खी का एक भेद । जिसे 'बठयाल'
भी कहते हैं ।

लभक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जार । उपपत्ति । २ लपट । विलासी ।

लभकना—क्रि० अ० [हि० लपकना] १. लपकना । २ उत्कृष्ट
होना । उ०—सजि ब्रजवाल नदलाल सो मिल के लिये,
लगनि लगालगी मे लमकि लमकि उठे ।—पद्माकर (शब्द०) ।
‡३ धीमे (वायु) चलना । शन शनः चलना ।

लभगला—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] इकतारा । ठिठवा ।

लभगिरदा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लवा + फा० गिर्द] लोहे की दानेदार
मोटी रेती जिसके दाने कटहल के छिलके के दानों के सदृश
होते हैं । यह रेती नारियल के छिलके (खोपडी) को रेतने
के काम में आती है ।

लभगोडा—वि० [हि० लवा + गोड] जिमकी टाँगें लवी हो ।

लभघिचा—वि० [हि० लवा + घिच या घेचा (= गर्दन)] लवी
गर्दनवाला ।

लभचा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार की जस्ताती घास जो काली
चिकनी मिट्टी की जमीन में बहुत पाई जाती है ।

लभछड—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लवा + छड] १ साँग । बरछी । भाला ।
२ मधूनरवाजो की लगी । ३ पुरानी चाल की लवी बटूक ।

लभछड़—वि० पतला और लवा ।

लभछुआ—वि० [हि० लवा + छूआ] दे० 'लवोतरा' ।

लभजक—सञ्ज्ञा पुं० [म० नामजक] कुश की तरह की एक घास
जिममें नुदर महक होती है । इसे 'ज्वराकुश' भी करते हैं
और ज्वर में श्रौषध के रूप में देते हैं । लामज ।

लभज्जुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लामज्जक] दे० 'लमजक' ।

लभटगा—वि० [हि० लवा + टाँग] [वि० स्त्री० लमतगी] जिसकी
टाँगें लवी हो ।

लभटगा—सञ्ज्ञा पुं० नारस पत्ती ।

लभडीगा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का जंगली जानवर ।

लमतडंग—वि० [हि० लंवा + ताड + अंग [वि० स्त्री० लमतडंगी]
बहुत लवा या लंबा । जैसे,—लमतड गा आदमी ।

लमधी—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] ममवी का तप । उ०—लमधी के घर
नमवी आया आयो बहू री भाई —कजीर (पद०) ।

लमहा—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'सहमा' ।

लमाना(पुं०)—क्रि० सं० [हि० लवा + ना (प्रत्य०)] १ उगा
करना । २ दूर तक आगे बढ़ाना । उ०—कंधो दमकयर
की मीचु मंडराति व्योम कंधो महाकाल कोपि रसना लमाई
है ।—रघुराज (शब्द०) ।

लमाना—क्रि० अ० दूर निकल जाना । चने में बहुत दूर बढ़ जाना ।

लय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक पदार्थ वा दूसरे पदार्थ में मिलना
या घुमना । प्रवेश । २ एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में
इस प्रकार मिलना कि वह तद्रूप हो जाय उसका मत्ता पृथक् न
रह जाय । विलीन होना । लीनता । भग्नता । ३ वित्त की
वृत्तियों का मत्र शीर से हटकर एक धार प्रवृत्त होना । ध्यान
में डूबना । एकाग्रता । ४ लगन । गूढ अनुराग । प्रेम ।
उ०—मन ते सकल वासना भागी । केवल राम चरण लय
लागी (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—लगना ।

५ कार्य का अपने कारण में समाविष्ट होना या फिर कारण के रूप
में परिणत हो जाना । ६ सृष्टि के नाना रूपों का लोप हाकर
अव्यक्त प्रकृति मात्र रह जाना । प्रकृत का विरूप परिणाम ।
जगत् का नाश । प्रलय । उ०—जो नभवं, पालन लय कारिनि ।
निज इच्छा लीना वपु धारिनि ।—तुलसी (शब्द०) । ७,
विनाश । लाप । उ०—गो बहेउ हरि वंकुठ सिधारे । शमदम
उन्हों सग पधारे । तप ततोप दया घरु गयो । जान यमादि
सर्व लय भयो ।—सूर०, १।२६० । ८ मिल जाना । मश्लेप ।
९ संगीत में नृत्य, गीत और वाद्य की समता । नाच, गान और
वाजे का मेल ।

विशेष—यह समता नाचनेवाले के हाव, पंर, गले और मुँह में
प्रकट होती है । संगीत दामोदर में हृदय, कठ शर कषात्र लय
के स्थान माने गए हैं । कुछ आचार्यों ने लय के द्विपदी,
लतिका और कलिका इत्यादि अनेक भेद माने हैं ।

१० स्थिरता । विश्राम । ११ मूछ । वेहोशी । १२ ईश्वर ।
ब्रह्म । परमेश्वर (को०) । १३. आनिगन (को०) । १४ वाग्य
का नीचे की ओर तीव्र गण (को०) । वह समय जो किसी
स्वर को निकालने में लगता है ।

विशेष यह तीन पाठर वा गाना गया है । दुत, मध्य और
विनवित ।

१६ एक पाठर का पाटा जिममें वैदिक वाद में सेव जोतान
उसकी मिट्टी को मम या बराबर करने में । शान्त उल्लेख पुनः
यजुर्वेद की वाजनेय महिता में है ।

लय—सञ्ज्ञा स्त्री० १ गाने का स्वर । गान में स्वर-निगमन वा टग ।
जैसे,—वह बड़ी नुदर लय से गाना है । २. गीत गाने का
ढंग या तर्ज । धुन ।

मुहा० - लय देखना = ठीक लय में गाना ।

३ मंगीत में सम ।

लयन—सञ्ज्ञा पुं० [ल०] १ विश्राम । लय । शांति । २ आश्रय । विश्रामस्थान । ३ आश्रयग्रहण । आठ लेना । पनाह लेना ।

लयनालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बौद्ध वा जैन संप्रदाय का मंदिर [को०] ।

लयपुत्री—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नटी । अभिनेत्री [को०] ।

लयारम्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लयारम्भ] अभिनेता । नर्तक [को०] ।

लयार्क—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्रलयकालीन सूर्य [को०] ।

लयालम्भ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लयालम्भ] नट । अभिनेता [को०] ।

लर(०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [पा० लड्डु] दे० 'लड' । उ०—नद के लाल होउ मन मोर । हौं बौठ पोवत मोतियन लर काँकर डारि चले सखि मोर ।—सूर (शब्द०) ।

लरकई(०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'लडकई' या 'लरिकाई' उ०—जदपि हूते जोवन नवल मधुर लरकई चाह । पै उत चतुराई अथिक प्रगटन रम व्यवहार ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) ।

लरकना(०)†—क्रि० प्र० [सं० लडन (- भूलना)] १ लटकना । उ०—चौटी गुही मोती अमल, तिन जानु लौ लर लरकती । मनु शरद वारिद की घटा जल बिंदु अबनी ढरकती ।—रघुराज (शब्द०) । २ झुकना । ३ खिसककर नीचे आना ।

सयो० क्रि०—जाना ।—पडना ।

लरका(०)†—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लडका] दे० 'लडका' ।

लरकाना(०)†—क्रि० सं० [हिं० लरकना] १ लटकाना । २ झुकाना । ३ नीचे खिसकाना ।

लरकिनी(०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लडकी] दे० 'लडकी' । उ०—वधू लरकिनी पर घर आई । राखेहु नयन पलक की नाई ।—तुलसी (शब्द०) ।

लरखरना(०)†—क्रि० प्र० [अनु०] दे० 'लरखराना' वा 'लडखडाना' । उ०—दिगयद लरखरत परत दसकठ मुख भर ।—तुलसी (शब्द०) ।

लरखरनि(०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लरखराना] १ लडखडाने की क्रिया या भाव । डगमगाहट । २ चलन या खड़े होने में परत न जमने का भाव । उ०—(क) हरिजू को बाल छवि कहो वरन । सकल सुख की सीव कोटि मनीज सोभा हरन । पुण्य फल अनुभवत सुनहिं विलोक के नंद धरन । सूर प्रभु की बसी उर किलकनि ललित लरखरनि ।—सूर (शब्द०) ।

लरखराना—क्रि० प्र० [हिं०] १ झुकाना । डगमगाना । डिगना । उ०—(क) धनि जसुमति बड भागिनी लिए स्याम सेलावै । लरखगत गिरि परत है चलि घुटुरुनि धावै ।—सूर (शब्द०) । (ख) रघुनाथ दौरत में दामिनी सी लमति है, गिरति है, फेर उठ दौरत है लरखगति ।—रघुनाथ (शब्द०) । (ग) चंचते लरखराते पैरो से । प्रेमधन०, भा० २, पृ० १४३ । २ डगमगाकर गिरना । उ०—गजउ सो गरजेउ

घोर । घुनि सुनि भूमि भूजर लरखरे ।—तुलसी (शब्द०) ।

३ दे० 'लडखडाना'—३ ।

लरजना—क्रि० प्र० [पा० लरजा (= कप)] १ काँपना । हिलना । उ०—(क) पात विनु कीन्हें ऐसी भाति मन त्रैलिन के, परत न चोन्हें जे ये लरजत लुज हैं ।—पद्माकर (शब्द०) । (ख) चचला चमार्क चहुँ शोरन ते चाह भरी, चरज गई ती फेर चरजन लागी री । कहै पद्माकर लवगन की लोनी लता, लरज गई ती फेर लरजन लागी री ।—पद्माकर (शब्द०) ।

सयो० क्रि०—उठना ।—जाना ।

२ भयभीत होना । दहल जाना । डरना । उ०—(क) शरणा राखि ले हो नदगाता । घटा आई गरजि, युवनि गई मन लरजि, वीजु चमकति तरजि, डरत गाता ।—सूर (शब्द०) । (ख) लाजन हौं लरजो गहिरी वंजो गहिरी बहिरी कहि दाइन ।—देव (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—उठना । जाना ।—पडना ।

लरजाँ—वि० [पा० लरजाँ] काँपनेवाला [को०] ।

लरजा—सञ्ज्ञा पुं० [पा० लरजहूँ] १ कप । कपकपी । थरथराहट । २ झुकप । झुवाल । ३ एक प्रकार का ज्वर जिसमें रोगी का शरीर ज्वर आते ही काँपने लगता है । जुड़ी ।

लरजिश—सञ्ज्ञा स्त्री० [पा० लरजिश] काँपने या थरथराने का भाव । कपकपी [को०] ।

लरभर(०)†—वि० [हिं० लड + भरना] बरसता हुआ । बहुत आधक परिमाण में प्राप्त । प्रचुर । उ०—जोचन लेति लगाइ ललक के लाल सलोना । लरभर ललित लुनाई ऐसी भई न होनी ।—ध्यास (शब्द०) ।

लरना क्रि० प्र० [हिं० लडना] दे० 'लडना' । उ०—माजि गई लारकाई मनो लरि क करि के दुहुँ दुहुँ भ शोधे ।—पद्माकर (शब्द०) ।

लरनि(०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लडना] १ युद्ध लडाई । उ०—मरे जय इदई भाव परयो । मन क दग मुनो री रजनी जैसे, मोहि निदरयो । आपुनि गयो सग सग लीन्हें प्रथमति इहै बरयो । मा मो वर प्रात करि हर सो ऐसी लरने लरयो । जो त्या नन रहे लपटाने तनहूँ भेद भरयो । सुनहु सूर अ नाइ इन्हें का अब ला रह्यो डरयो ।—सूर (शब्द०) ।

२ युद्ध करने का ढग । लडन का ढग । उ०—नामी लुम लसत लपेटि पटकत भट, देखा देखो लखन लरनि हनुमान की ।—तुलसी (शब्द०) ।

लराई(०)†—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लडना] दे० 'लडाई' । उ०—(क) जहँ तह पर अनक लराई, जानें सबल भूप धारिआई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) खजन नैन बौच नासा पुट राजत यह अनुहार । खजन युग मानो लरत लराई कीर बुझावत रार ।—सूर (शब्द०) ।

लराक(०)†—वि० [हिं० लडना, लरना + आका (प्रत्य०)] दे० 'लडाका' । उ०—लर लराक लाख महँ एका तीर अचूक चलावै ।—सत० दरिया, पृ० ११५ ।

लगाका (७) — वि० [हि०] 'लडाका' ।

लरिक (७) — सञ्ज्ञा पुं० [हि० लरिका] वचन । उ०—लटकिक लटकि खेलत लरिकाई । लरिक समे जनु भूपन पाई ।—नद० ग्र०, पृ० १२० ।

लरिक (३) — सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाल, हि० लरिका] दे० 'लडाका' । उ०—अवर लरिक की सका पाइ । तासौं ठाढो कितौ लिलाइ ।—नद० ग्र०, पृ० २४७ ।

लरिकई (३) — सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लरिका] १. लडकपन । बाल्यावस्था । उ०—निरखि नवोढा नारि तस छुटत लरिकई लेस । मो प्यारो प्रीतम तियन मानहुं चलत विदेस ।—विहारी (शब्द०) । २ लडकपन की चाल । लडको का व्यवहार ।

क्रि० प्र०—करना ।

३ चपलता । चचलता । उ०—लाल अलौकिक लरिकई लखि लखि सखी सिहाति । आज कालिह मे देखियत उर उकसौही भाँति ।—विहारी (शब्द०) ।

लरिक सलोरी (३) — सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लरिका + लोल (= चचल)] लडको का खेल । खेलवाड ।

लरिका (७) — सञ्ज्ञा पुं० [स्त्री० लरिकिनी] दे० 'लडाका' । उ०—(क) देखि कुठार वान धनुधारी । भई लरिकाई रिस बीच विचारी ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) खेलन को मैं जाउँ नहीं । और लरिकिनी घर घर खेलति मोटी को पै कहत तु ही ।—सूर (शब्द०) ।

लरिकाई (७) — सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लडाका + आई (प्रत्य०)] १ लडकपन । बालपन । बाल्यावस्था । उ०—(क) लरिकाई को नेह कही सखि कैसे छूटै ।—सूर (शब्द०) । (ख) तात कहहुं कछु करहुं ढिठाई । अनुचित छमउ जानि लरिकाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ग) भाजि गई लरिकाई मनौ लरिके कार कैं दुहुं दुहुं भौव ।—पद्माकर (शब्द०) । २ लडको का व्यवहार या आचरण । ३ चपलता ।

लरिकिनि — सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लडाका] दे० 'लडाकी' । उ०—तव वह लरिकिनि वाके घर मे जैन धर्म अनाचार भ्रष्ट देखि कै मन मे बोहोत दुख करन लागी ।—दो सौ बावन०, भा० १, पृ० ३८ ।

लरिया — सञ्ज्ञा पुं० [देश०] उपवस्त्व । दुपटा । दुपट्टा ।

लरिकी (३) — सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लडाकी] दे० 'लडाकी' । उ०—या लरिकी की तुमही कहूँ आछी घर, वर देखिके यहाँ तै दूरि देस मे कहूँ याको विवाह करि आओ ।—दो सौ बावन०, भा० २, पृ० २५३ ।

लरी (७) — सञ्ज्ञा स्त्री० [प्रा० लरि] दे० 'लडी' । उ०—(क) चपक वरन चरन करि कमलनि दाडिम दशन लरी । गति मराल अह विव अघर छवि अहि अनूप कवरी । अति करुना रघुनाथ गुमाई युग भर जात घरी ।—सूरदास प्रभु प्रिया

प्रेमवस निज महिमा विसरी ।—सूर (शब्द०) । (ख) कविरा मोतिन की लरी हीरन को परगाम । चांद सुरज की गम नहीं तहँ दरमन पावै दास ।—कवीर (शब्द०) ।

लरी — सञ्ज्ञा पुं० [हि० लरजना] सितार के एक तार का नाम । यह छह तारो मे पाँचवाँ और पीतल का होता है ।

ललतिका — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० ललन्तिका] १ नाभि तक लटकनी हुई माला या हार । २ गोह ।

लल (३) — वि० [सं०] १ विनोदी । क्रीडाप्रिय । २ कपित । हिलता हुआ । लपलपाता हुआ । जैसे, ललजिह्व । ३ इच्छुक । आकाङ्क्षी [को०] ।

लल — सञ्ज्ञा पुं० [सं० ललम्] १ शाखा । फुगगी । अकुर । २. वाटिका । उद्यान [को०] ।

ललक — सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० ललन (= लालना करना)] प्रबल अभिलाषा । गहरी चाह । उ०—महारांनी कीशल्यादिक तुम लिखती वारहि वारा । दुलहिन दूल्ह देखव केहि दिन लागी ललक अपारा ।—रघुराज (शब्द०) ।

ललकना — क्रि० प्र० [हि० ललक + ना (प्रत्य०)] १ किसी वस्तु को पाने की गहरी इच्छा करना । लालसा करना । ललचना । उ०—(क) ललकत स्याम, मन ललचात ।—सूर (शब्द०) । (ख) ललकत लखि ज्यो कगाल पातरी सुनाज की ।—तुलसी (शब्द०) । २. अभिलाषा से पूर्ण होना । चाह की उमग से भरना । उ०—बलकि बलकि बोलत वचन, ललकि ललकि ललटाति ।—(शब्द०) ।

ललकार — सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लडना या 'लेले' अनु० + कार] १ युद्ध के लिये उच्च स्वर से आह्वान । लडने के लिये तैयार होकर शत्रु या विपक्षी से पुकारकर कहना कि यदि हिम्मत हो, तो आकर लड । प्रचारण । हाँक । जैसे,—ललकार मुनकर वह सामने आया । २ किसी को किसी पर आक्रमण करने के लिये पुकारकर उत्साहित करना । लडने का बढ़ावा ।

ललकारना — क्रि० प्र० [हि० ललकार + ना (प्रत्य०)] १ युद्ध के लिये उच्च स्वर से आह्वान करना । लडने के लिये तैयार होकर विपक्षी से पुकारकर कहना कि हिम्मत हो, तो आ लड । प्रचारण । हाँक लगना । जैसे,—युद्ध के लिये मुझे ने बालि को ललकारा । २ किसी पर आक्रमण करने के लिये किसी को पुकारकर उत्साहित करना । लडने के लिये उकसाना या बढ़ावा देना । जैसे,—तुम्हारे ललकारने से ही उसकी हिम्मत बढ़ी ।

ललचना — क्रि० प्र० [हि० लालच + ना (प्रत्य०)] १ लालच करना । पाने की प्रवृत्ति इच्छा करना । प्राप्त करने की अभिलाषा ने अवीर होना । २ मोहित होना । आसक्त होना । लुब्ध होना । उ०—मनि मंदिर सुदर सब साजू । जाहि लगत ललचन मुर-राजू ।—रघुनाथ (शब्द०) । ३. किसी बात की प्रवृत्ति इच्छा

करना । अभिलाष से श्रधीर होना । लालसा करना । उ०—ती
मुख चद निरीछन को ललचै चख चारु चकोर लला के ।—
दीनदयाल (शब्द०) ।

मुहा०—जी ललचना = मन में पाने की प्रबल इच्छा उत्पन्न होना ।
ललचाना—क्रि० सं० [हि० ललचना] १ किसी के मन में लालच
उत्पन्न करना । प्राप्ति की अभिलाषा से श्रधीर करना । लालसा
उत्पन्न करना । २ मोहित करना । लुभाना । उ०—चूनरि
चारु जुई सो परै चटकीली हरी श्रंगिया ललचावै ।—पद्माकर
(शब्द०) । ३ कोई अच्छी या लुभानेवाली वस्तु सामने
रखकर किसी के मन में लालच उत्पन्न करना । कोई वस्तु
दिखा दिखाकर उसके पाने के लिये श्रधीर करना । जैसे,—
उसे दूर से दिखाकर ललचाना, देना कभी मत ।

मुहा०—जी या मन ललचाना = मन मोहित करना । मुग्ध करना ।
लुभाना । उ०—गनी में आय, तान मोहिनी सुनाय, मेरो मन
ललचाय भरघो कानन मे रस है ।—(शब्द०) ।

ललचाना०—क्रि० अ० दे० 'ललचना' । उ०—(क) भौहन चढाय
छिनु रहै लखि ललचाय, मुरि मुसुकाय-छिन सखी सो लगति
जाय ।—रघुनाथ (शब्द०) । (ख) सौम सम दीप को
बिलोकि ललचाय सोऊ लँबे को चहत दोऊ कर को उठावै
रो ।—दीनदयाल (शब्द०) ।

ललचौहाँ—वि० [हि० लालच + औहाँ (प्रत्य०)] [वि० ली०
ललचौही] लालच से भरा । ललचाया हुआ । जिससे प्रबल
लालसा प्रकट हो । उ०—(क) खरी खरी मुसुकाति है, लखि
ललचौहे लाल ।—विहारी (शब्द०) । (ख) चतई ललचौहें
चखनि डिट धू घट पट माहि ।—विहारी (शब्द०) ।

ललछौहाँ—वि० [हि० लाली + छूना] लाली लिए हुए । कुछ कुछ
लाल । उ०—आ, समदृष्टि प्रवृत्ति । विपरागा आगन मे
स्वर्गिक स्मिति भर, फूल उठे ये आडू, ललछौहे मुकुली मे
सु दर ।—अतिमा, पृ० १५ ।

ललजिह्व—वि० [सं०] १ जीभ लपलपाता हुआ । २ भयकर ।
खूंखार ।

ललजिह्व—सञ्ज्ञा पुं० १ कुत्ता । २ ऊँट ।

ललडिच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ललडिच] भीरा । लकड़ी या धातु का
बना हुआ एक प्रकार का खिलौना [को०] ।

विरोप—यह लट्टू के आकार का होता है । बच्चे इसके बीच की
कील में रस्सी लपेटकर इस प्रकार फेंकते हैं जिससे वह देर
तक नाचता रहता है ।

ललत—वि० [सं०] १ खेलता हुआ । क्रीडारत । २ हिलता डुलता
या कांपता हुआ । ३ लपलपाता हुआ । जैसे जीभ [को०] ।

यौ०—ललजिह्व = ललजिह्व । ललजिह्व = ललडिच ।

ललताई०—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लाल] १ 'लालिमा' । उ०—मुख
पर छवि बाढी श्रधिकई । गइ पियराइ भई ललताई ।—इन्द्रा०,
पृ० १६३ ।

ललतवु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ललतवु] नवृ का वृक्ष [को०] ।

ललदेया—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का धान जिसे फगन प्रगटन
में तैयार होता है ।

ललन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्यारा वाक्य । दुलारा वाक्य । २
नटका । नाटक । तुमार । ३ नायक क लिये प्यार का शब्द ।
प्रिय नायक या पति । उ०—(क) ललन चलन की चित धरी,
नन न पलन की श्रोत —विहारी (शब्द०) । (ख) मानह मुप,
दिखरागनी दुनिहिनि करि अनुगग । मामु मदन, मन नननह,
सौतिन दियो गुहाग ।—विहारी (शब्द०) । ४ तेल । क्रीडा ।
५ जीभ को लपलपाना । जीभ लपलप फगना या हिनाना
डुलाना [को०] । ६ माल । मागू वा पेठ । ७ पियार या
चिर्गोजी का पेठ । प्रियाल ।

ललना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ स्त्री । कामिनी । २ जिह्वा । जीभ ।
३ एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में भगण, गगण और
दो नगण होत ह । उ०—डागत ही सोण पुवरे पलना । चारिउ
भंया रो मुधरी ललना ।—छद प्रभावर (शब्द०) । ४ विना-
सिनी या कामुक श्रैरत । स्वैरिया [को०] ।

यो०—ललनाप्रिय = (१) श्री ता की प्रिय । जा रियो की प्रिय
हो । (२) स्वादु । स्वादु । ललनावर्था = धीरता में धिया
हुआ । माटनायो से श्रवृत्त ।

ललनाप्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ह्नीवेर नामक गधद्रव्य । २ कदर ।
कदर का वृक्ष ।

ललनिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ललना । स्त्री । मावाण स्त्री ।

ललनारि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० ललनी] राग का नती ।

ललनी०—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० ललन] ललन का स्त्री० रूप । दे० 'ललन' ।
उ०—भरि भाारि भरोया भाकि रहा ललनी ललना मुख
जोहत ह ।—मत० दरया, पृ० ६३ ।

ललरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लला] १ कान का नीचे का लटता
हुआ भाग । २ गले के भीतर नटकता मासपिंड । घाँटी ।
काना । लगर ।

लललल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तुतलाहट । हकलाकर बोलना [को०] ।

ललहा छठ—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] हलपथी । भाद्रपद दृश्य पथी जिस
दिन स्त्रिया देवी का धन श्रौर पूजन करना ह और हल क
कर्पण से उत्पन्न अन्न नहीं खाती ।

लला—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ललना । हि० 'लाल' का रूप] [स्त्री० लली]
१ प्यारा या दुलारा लडका । २ लडका । कुमर । ३ लडक
या कुमार के लिये प्यार का शब्द । ४ नयक या पति क
लिये प्यार का शब्द । प्रिय नायक या पति । उ०—नैन नगाइ
कह्यो मुमुकाइ लला फिर आइयो खेलन हारी ।—पद्माकर
(शब्द०) ।

ललाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लाल + लाई (प्रत्य०)] ल लीमा । मुखी ।
लाली । उ०—(क) रंगीले नैन मे श्रौंग ललाई दौरे आई
है ।—प्रताप (शब्द०) । (ख) लाल ललाई ललितई कलित
नई दरसाय ।—रामसहाय (शब्द०) ।

ललाक - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिश्न । लिंगेन्द्रिय ।

ललाटतपः—वि० [सं० ललाटतपः] १ शिर को जलाने या तपाने-
वाला (सूर्य) । २ अति पीडादायक [को०] ।

ललाटतर्—सञ्ज्ञा पुं० सूर्य [को०] ।

ललाट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भाल । मस्तक । माथा । उ०—नीको
लसन ललाट पर टीको जटिन जराय । छविहि बढावत रवि
मना समि मडल मे माय ।—त्रिहारो (शब्द०) ।

मुहो०—ललाट मे लिखा होना = भाग्य मे होना । किस्मत मे
होना ।

२ भाग्य का लेख । किस्मत का लिखा । जैसे,—जा ललाट मे
होगा, वही हागा ।

ललाटरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भाल । २ दे० 'ललाट' । ३ सुदर
मस्तक [को०] ।

ललाटपटल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'ललाटपटल' ।

ललाटपटल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मस्तक का तल । माथे की सतह ।
उ०—भृङ्गुटि मनार्ज चाप छ बेहारी । तिलक ललाटपटल
दुतिकारी ।—तुलसी (शब्द०) ।

ललाटपट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'ललाटपटल' [को०] ।

ललाटफलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ललाटपटल ।

ललाटरेखा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कपाल का लेख । मस्तक पर
ब्रह्मा का किया हुआ चिह्न जिसके अनुसार ससार मे प्राणी का
सुख या दुःख माना जाता है । भाग्यलेख । २ ललाट पर
की रेखा । मस्तक पर की लकीर [को०] । ३ मस्तक पर
लगाया हुआ रंगीन तिलक [को०] ।

ललाटलेखा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'ललाटरेखा' [को०] ।

ललाटाक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव जिनके तृतीय नेत्र का ललाट पर
होना पुराणो मे वर्णित है ।

ललाटाक्षी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दुर्गा ।

ललाटिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ माथे पर बांधने का एक गहना ।
२ माथ पर का टीका । तिलक ।

ललाटूल—वि० [सं०] ऊँचे या सुदर मस्तकवाला [को०] ।

ललाट्य—वि० [सं०] ललाट सबधी । ललाट के योग्य [को०] ।

ललाना (लु०)†—क्र० भ० [सं० ललान (= लालच करना)] किसी
वस्तु को पाने की इच्छा से अधीर होना । लोभ बख्ती ।
ललचना । लालायित होना । जैसे,—तुम सब कुछ खाते हो, फिर
भी ललाते रहते हो । उ०—(क) नीच निरादर भाजत कादर
कूकर टूकन हतु ललाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) कृम गात
ललात जा रोटिन को घरधात घर खुरमा खरिया ।—तुलसी
(शब्द०) ।

विशेष—'किसी वस्तु को ललाना' ऐसे प्रयोगो मे 'को' कर्म का
चिह्न नहीं है, 'के लिये' के अर्थ मे संप्रदान का चिह्न है ।

ललाम—वि० [सं०] १ रमणीय । सुदर । वदिया । उ०—आदो

रूप ललाम लै सन्मुख मेरे भेट ।—गकुंनला, पृ० ६१ । २.
लाल रग का । सुख । उ०—प्याम पै ललाम श्री ललामन पै
स्याम ऐसी मोभा सुभ सुभित है नाना रग गुल की ।—गोपाल
(शब्द०) । ३. श्रेष्ठ । बडा । प्रधान । ४ मस्तक पर लक्षण से
युक्त । चिह्नगला [को०] ।

ललाम—सञ्ज्ञा पुं० १ भूपण । अलकार । गहना । २ रत्न । उ०—
रामनाम ललिन ललाम कियो लाखन को, बेडा कूर कायर
कपूत कौडो आव को ।—तुलसी (शब्द०) ।

यौ०—चंद्रमाललाम = शिव, जिनका भूषण चंद्रमा है । उ०—
चपरि चढायो च.प चंद्रमाललाम को —तुलसी (शब्द०) ।

३ चिह्न । निशान । ४ दड और पताका । ध्वज । ५ सींग ।
शृंग । ६ घोड़ा । ७ घोड़े या गाय के माथे पर का चिह्न ।
अर्थात् दमरे रग का चिह्न । ८ घोड़े का गहना । ९ प्रभाव ।
१० घोड़े या सिंह की गर्दन पर का बाल । अयाल । ११
कतार । पात्त । श्रेणी [को०] । १२ पुच्छ । दुप [को०] ।
१३ तिलक । लल ट पर का तिलक [को०] ।

ललाम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ललामन्] १. आभूषण । साज सज्जा ।
२ अपने वर्ग मे उत्कृष्टतम वस्तु । ३ सांप्रदायिक चिह्न वा
तिलक । ५ दे० 'ललाम'—४ और १२ ।

ललामक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] माथे मे लपेटने की माला ।

ललामी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कान मे पहनने का एक गहना ।

ललामी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० ललाम+ई (प्रत्य०)] १. सुदरता । २
लालिमा । लाली । सुखा ।

ललारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ललाट] ललाट । लिलार । उ०—इसके
ललार की खाल सिकुड गई या, दाँत और ओठ दोनों बदरग
पड गए थे ।—श्यामा०, पृ० १४५ ।

ललित—वि० [सं०] १ सुदर । मनाहर । २ ईप्सित । मनचाहा ।
प्यारा । ३ हिलता डोलता हुआ । चलता हुआ । ४ निर्दोष ।
सरल [को०] । ५ क्रीडाशील । विनोदी [को०] । ६ रसिक ।
रसिया [को०] ।

ललित—सञ्ज्ञा पुं० १ शृंगार रस मे एक काव्यिक हाव या अगचेष्टा ।

विशेष—इसमे मुकुमारता (नजाकत) के साथ भी, आँख, हाथ,
पर आदि अंग हल्लाए जाते हैं । कहीं भूपण आदि से सजाने
को ललित हाव कहा है ।

२ एक विषम वर्णवृत्त जिसके पहले चरण मे सगण, जगण,
सगण, लघु, दूसरे चरण मे नगण, सगण, जगण, गुह, तीसरे मे
नगण, नगण, मगण, सगण, और चौथे मे सगण, जगण, सगण,
जगण होता है । जैसे—सब्र त्यागिए असत काम । शरण गहिए
सदा हरी । भव जनित सकल दुःख टरी । भ.जए अहोनि,श हरी,
हरी, हरी । ३. कुछ आचार्यों के मत से एक अलकार जिसमे
वर्ण्य वस्तु (बात) के स्थान पर उसका प्रतिबिंब वर्णन
किया जाता है । जैसे,—कहना तो यह था कि 'राम को गद्दी
मिलनी चाहिए थी, पर बनवास मिला ।' पर गोस्वामी
तुलसीदास जी इसे इस प्रकार करते हैं—(क) लिखत

सुधाकर लिखि गा राहू। इसी प्रकार 'जिसे ब्रह्मा अच्छा बनाना चाहते थे, उसे बुरा बना दिया' इसके स्थान पर यह कहना—(ख) विरचित हस काक क्रिय जेही। ४ पाडव जात का एक राग जो भैरव राग का पुत्र माना जाता है और जिसमें निपाद स्वर नहीं लगता, तथा घंवर और गाधार के अतिरिक्त और सब स्वर कोमल लगते हैं। इसके गाने का समय रात्रि के तीस दइ वीत जाने पर अर्थात् प्रात काल है। ५ नृत्य मे हाथो की एक विशेष मुद्रा (को)। ६ क्रीडा। विनोद (को)। ७ सौंदर्य। लावण्य। सुंदरता (का०)।

ललितई(पु) —सच्चा स्त्री० [सं० ललित + ई (प्रत्य०)] सौंदर्य। दे० 'ललिताई'। उ०—लाल ललाई ललितई कलित नई दरसाय। दरसो सारस रस भरे हग आदरस मंगाव। —रामसहाय (शब्द०)।

ललितक - सच्चा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक तीर्थ का नाम।

ललित कला—सच्चा स्त्री० [सं० ललित + कला] वे कलाएं या विद्याएं जिनके व्यक्त करने में किसी प्रकार के सौंदर्य को अपेक्षा हो। जैसे, संगीत, चित्रकला, वास्तुकला, मूर्तिकला इत्यादि। विशेष दे० 'कला'।

ललितकाता—सच्चा स्त्री० [सं० ललितकान्ता] दुर्गा।

ललितपद—वि० [सं०] जिसमें सुंदर पद या शब्द हो।

ललितपद—सच्चा पुं० एक मात्रिक छंद जिसके प्रत्येक चरण में १६ और १२ के हिसाब से २८ मात्राएं होती हैं। इसे सार, नरेंद्र और दौवे भी कहते हैं। जैसे,—प्रात समय उठि जनक नदिनी त्रिभुवननाथ जगार्बे।

ललितपुराण—सच्चा पुं० [सं०] बौद्धों का 'ललितविस्तर' नामक ग्रंथ जिसमें बुद्ध का चरित्र वर्णित है।

ललितप्रहार—सच्चा पुं० [सं०] हलका या मृदु आघात। प्यार से मारना [को०]।

ललितप्रिय—सच्चा पुं० [सं०] संगीत में एक ताल [को०]।

ललितललित—वि० [सं०] अति सुंदर। सुंदरतम।

ललित लुलित—वि० [सं०] कंपित, हतोत्साह या दुर्बल होने पर भी सुंदर [को०]।

ललितलोचन—वि० [सं०] सुंदर आँखोंवाला। प्रिय नेत्रोंवाला [को०]।

ललितवनिता—सच्चा स्त्री० [सं०] सुंदरी स्त्री। रूपवती स्त्री [को०]।

ललितविस्तर—सच्चा पुं० [सं०] दे० 'ललितपुराण'।

ललितन्यूह—सच्चा पुं० [सं०] १ बौद्ध शास्त्र के अनुसार एक समाधि। २ एक बोधिसत्व का नाम।

ललिता—सच्चा स्त्री० [सं०] १ एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण में तगण, भगण, जगण और रगण होते हैं। जैसे—ते भाजि री अलि छिपी फिरं कहीं। तूही बता थल हरी नहीं जहाँ। २ पद्मपुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण आदि के अनुसार राधिका की प्रधान आठ सखियों में से एक।

३ एक रागिनी जो संगीतदामोदर और हनुमन के मत से मेघ राग की और सोमेश्वर के मत से चमत राग की पत्नी है। इसका स्वग्राम इस प्रकार है—स ग म घ नि म अयवा स रे ग म प घ नि स (प्रथम), घ नि स ग म घ (द्वितीय) ४ कस्तूरी। ५. पुराणोक्त एक नदी।

विशेष—कालिका पुराण में लिखा है कि जब निम्न राजा के शाप से वशिष्ठ देहहीन हो गए, तब उन्होंने कामरूप देश में संध्याचल पर्वत पर घोर तप किया, जिससे प्रमत्त होकर विष्णु ने उन्हें वर दिया। वर के प्रभाव से वशिष्ठ ने एक अमृतकुंड बनाया। उसी अमृतकुंड के पूर्व ललिता नाम की एक मनोहर नदी है, जिसे शिव जी ले आए थे। वैशाख जुवन ३ को इसमें नहाने का बड़ा फल है।

६ महिला। कामिनी। सुंदरी स्त्री [को०]। ७ दुर्गा का एक नाम [को०]।

यो०—ललितापंचमी। ललितापट्टी। ललितासप्तमी।

ललिताई(पु) —सच्चा स्त्री० [हि० ललित + आई (प्रत्य०)] सुंदरता। सौंदर्य। उ०—(क) दक्षभाग अनुगम सहित इंदिरा अधिक ललिताई।—तुलसी (शब्द०)। (ख) सुकवि लली के यो ललिताई लहलहात तन।—सुकवि (शब्द०)।

ललितापंचमी—सच्चा स्त्री० [सं० ललितापञ्चमी] आश्विन महीने की शुक्ला पंचमी जिसमें ललिता देवी (पार्वती) की पूजा होती है।

ललिताभिनय—वि० [सं०] उत्तम या उत्कृष्ट अभिनय करनेवाला [को०]।

ललितार्थ—वि० [सं०] ललित अर्थ से युक्त या सुंदर (काव्य)। (रचना) जो शृंगार रसात्मक हो [को०]।

ललितापट्टी—सच्चा स्त्री० [सं०] भाद्र शुक्ल पट्टी। भाद्रो वदी छठ, जिस तिथि को स्त्रियां पुत्र की कामना से या पुत्र के हितार्थ ललितादेवी (पार्वती) का पूजन करती हैं और व्रत रक्ती हैं। पूजन कुश और पलाश की टहनियों पर सिद्ध आदि चढ़ाकर होता है।

ललितासप्तमी—सच्चा स्त्री० [सं०] भाद्र सुदी सप्तमी। भाद्र शुक्ल सप्तमी।

ललितोपमा—सच्चा स्त्री० [सं०] एक अर्थालंकार जिसमें उपमेय और उपमान की समता जताने के लिये सम, समान, तुल्य, लौ, इव आदि के वाचक पद न रखकर ऐसे पद लाए जाते हैं, जिनसे बराबरी, मुकाबला, मिश्रता, निरादर, ईर्ष्या इत्यादि भाव प्रकट होते हैं। जैसे,—साहि तनै सरजा सिवा की सभा जामधि है मेरुवारी सुर की सभा को निदरति है। ऐसो ऊँचो दुर्ग महाबली को जामे नखतावली सो बहस दीपावली करति है।—भूपण (शब्द०)।

ललितियां—सच्चा पुं० [हि० लाल + इया (प्रत्य०)] लाल रंग का बेल।

लली—सच्चा स्त्री० [हि० लला] १ लडकी के लिये प्यार का शब्द। २. दुलारी लडकी। ललली लडकी। जैसे,—वृषभानु लली,

जनक लली । ३ नायिका के लिये प्यार का शब्द । प्रेयसी । प्रेमिका ।

ललीतिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्राचीन तीर्थ । (महाभारत) ।

ललीहाँ—वि० [हि० लाल + श्रीहाँ (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० ललीही] सुखीं मायल । ललाई लए हुए । उ०—लाल लिलार लला को लखे गए लोचन ह्वै ललना के लली हैं ।—(शब्द०) ।

लल्लुर—वि० [सं०] हकला हकलाकर बोलनवाला [को०] ।

लल्ला—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लाल, लला] [स्त्री० लल्ला] १ लहके या बेटे के लिये प्यार का शब्द । (पाश्चम) । २ दुलारा लड़का ।

लल्लो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० ललना] जीभ । जिह्वा । जवान ।

लल्लो चप्पो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लल (= जीभ इधर उधर डोलना) + अनु० चप] चिकनी चुपड़ी बात जो कवल किसी का प्रसन्न करने के लिये कही जाय । ठकुरसुहाती ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

लल्लो पत्तो—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लल + पत] दे० 'लल्लो चप्पो' । उ०—(क) तुमको हमारे ऊपर कुछ शक है, तो इसमें लल्लो पत्तो काहे का है ? —बालवृष्ण मट्ट (शब्द०) । (ख) लल्ला पत्तो और जाहिरदारी इसे आती हा न थी ।—बालवृष्ण मट्ट (शब्द०) ।

लल्लू लाल—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] हिंदी गद्य के आरम्भिक लेखको में प्रमुख लेखक । इनका समय सन् १८२० से १८८५ तक है । हिंदी गद्य में प्रेमसागर, बंताल पचीसी, माधवविलास, सिंहासन बतीसी आदि इनकी रचनाएँ हैं ।

लल्लूहरा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक पौधा या घास जिसका साग खाया जाता है ।

लल्लूक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लल्लूक] एक प्रकार का वृक्ष [को०] ।

लल्लूग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लल्लूग] १ मलक्का द्वीप, जजिबार तथा दक्षिण भारत में होनेवाला एक पेड़ जिसकी सूखी कलियाँ मसाले और दवा के काम में आती हैं । विशेष—दे० 'लौंग' । २. उक्त वृक्ष की सूखी कली ।

लल्लूगक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लल्लूगक] लौंग [को०] ।

लल्लूगकलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लल्लूगकलिका] लौंग का फूल । लौंग [को०] ।

लल्लूगपुष्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लल्लूगपुष्प] देवकुमुद । लौंग ।

लल्लूगलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लल्लूगलता] १ लौंग का पेड़ या उसकी शाखा ।

विशेष—यद्यपि 'लौंग' के बड़े बड़े पेड़ होते हैं जो बीस वरस तक खड़े रहते हैं, तथापि भारतीय कविसंप्रदाय में 'लल्लूगलता' आदि के समान 'लल्लूगलता' शब्द का भी व्यवहार होता है । ऐसे स्थलो में लता का अर्थ शाखा या टहनी ही लेना चाहिए ।

२. राधिका की एक सखी का नाम । ३ प्रायः समोसे के आकार

की एक दँगला मिठाई जिसमें ऊपर से एक लौंग खोसा हुआ होता है और जिसके अंदर कुछ मेवे और मसाले आदि भरे होते हैं ।

लल्लूगदिचूर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लल्लूगदि चूर्ण] बंदक में एक प्रसिद्ध चूर्ण जो सग्रहणी, अतिसार आदि में दिया जाता है ।

विशेष—लौंग, मोथा, मोचरस, जीरा, घाय के फूल, लोष, इद्रजी, सुगंधवाला, जवाखार, सेंधा नमक और रसाजन बराबर लेकर पीम डाला जाता है । इसकी मात्रा दस रत्ती से बीस रत्ती तक है ।

लल्लूगदि वटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लल्लूगदि वटी] बंदक में लवण के योग के निमित्त एक गोली ।

लल्लू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बहुत थोड़ी मात्रा । बहुत छोटी मिकदार । अत्यंत अल्प परिमाण ।

मुहा०—लल्लूभर = थोड़ा सा । नाम मात्र को । जैसे,—उसे लल्लू भर भी डर नहीं है ।

२ काल का एक मान । दो काण्डा अर्थात् छत्तीस निमेष का अल्प समय । (कुछ लोग एक निमेष के आठवें भाग को लल्लू मानते हैं) । उ०—लल्लू निमेष परिमाण जुग वर्ष कल्पसत चड ।—तुलसी (शब्द०) । ३ लवा नाम की चिडिया । ४ जातीफल । ५. लवण । ६ लामज्जक । ज्वराकुश नाम का वृक्ष । ७. काटना । छेदना । कटाई । ८ विनाश । ९. ऊन, बाल या पर जो पशु पक्षियों के शरीर से कतर कर निकाले जाते हैं । १० सुरागाय की पूँछ के बाल, जो चंवर बनाने के लिये कतरे जाते हैं । ११. श्रीरामचंद्र के दो यमज पुत्रों में से एक ।

विशेष—जब लोकापवाद के कारण राम ने सीता जी को गर्भावस्था में वन में भेजवा दिया था, तब वही वाल्मीकि के अश्रम में लल्लू और कुश इन दो जोड़ुएँ पुत्रों की उत्पत्ति हुई थी । वाल्मीकि ऋषि ने इन्हें रामायण का गान सिखा दिया था । जब इन्होंने रामचंद्र को सभा में जाकर वह गान सुनाया, तब राम ने उन्हें पहचाना ।

लल्लूक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. लौनी या लवाई करनेवाला । फसल काटनेवाला किसान । २ एक द्रव्यविशेष [को०] ।

लल्लूकना—क्रि० अ० [सं० अल्लूकन] लौकना । दिखाई पडना । झलकना ।

लल्लूकना—क्रि० स० [हि० लिपटना] लिपटना । उ०—ज्यों मैं खाले किवार त्यों ही आनि लल्लूक गौ गरै ।—घनानंद, पृ० २९९ ।

लल्लूण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नमक । लोन । विशेष—दे० 'नमक' । २ काटना । काटने की क्रिया । लवना [को०] । ३ खड्ग-युद्ध का एक प्रकार [को०] । ४ वस्तु जिससे लवाई की जाय । काटने की वस्तु हौंसिया आदि [को०] । ५ एक असुर जो मधु दानव का पुत्र था और जिसे शत्रु ने मारा था । विशेष दे० 'लवणासुर' । ६ एक नरक का नाम [को०] । ७. पुराणोक्त

गान समुद्रों में से एक। त्वारे पानी का समुद्र। विशेष दे०
'नवणममुद्र'।

लवण—वि० [सं०] १ नमकीन। तारा। २ जिमप काटा जाय।
वाटानाना (ते०)। ३ त्वारण्ययुक्त। सलोना। सुदर।

लवणशिशु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लवणकि०का] मन्त्रायोतिमती
लता (ते०)।

लवणकतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नमक का व्यापारी (को०)।

लवणचार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ऊख के रस त बनाया हुआ एक
प्रकार का द्रव्य। २ एक प्रकार का नमक (को०)।

लवणजल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] समुद्र (को०)।

श्री०—लवणजलें द्रव्य = जल। पुक्ति।

लवणतृण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अवलोनी घास जिमका माग
खाते हैं। लोनी। लोनिया। २ कुलफा नामक माग।

लवणत्रय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में तीन प्रकार के नमकों का समूह,
सैवव, विट् और रुचक (सौत्रचल)।

लवणधेनु—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गाय के रूप में कल्पित नमक का
देर जिमके दान का बराहपुराण में बड़ा माहात्म्य लिखा है।

विशेष—गोबर में लिये स्थान में कुज के आसन पर सोलह पस्य
नमक का एक ढोका रखे और उने गाय के रूप में कल्पित
करे। चार प्रस्य और नमक पाम में रखकर उसे उम गाय
का बछड़ा माने। फिर चार गन्ने रखकर चार पीर, सोना
रखकर सींग, चादी रखकर चुंग, गुड या स्वर्ण रत्न कर मुँह,
फल रखकर दात, चीनी रखकर जीभ, गंधद्रव्य रखकर नाक,
रत्न रखकर नख, पत्र रखकर कान, मक्खन रखकर स्तन,
तागा रखकर पूँड़, ताप्रे का उत्तर रखकर पीठ, कुश रखकर
गोए और काना उत्तर दाहिनी पल्लवत करे। फिर यथा बधि
पूजन करके मंत्र चोटी दान कर दे।

लवणपाटलिजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नमक की पाटनी या पानी (को०)।

लवणप्रगाढ—वि० [सं०] जिममें अत्यधिक नमक हो। जिममें बहुत
तेज नमक गिला हो।

लवणमाश्चर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक का एक प्रसिद्ध चूर्ण जिममें
तीन नमक और अन्य कई तत्वविशेष पड़ते हैं और जो पेट
की अपच आदि बीमारियों में दिया जाना है।

लवणमट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का नमक। क्षार नमक (को०)।

लवणमेढ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खारी नमक।

लवणमंह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शुभ्रत के अनुगार प्रमेह रोग का एक
भेद जिममें पित्त के साथ लवण के समान तत्व होता है।

लवणयत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवणयत्र] दो मुँहोंदार बरतना के
मुँहों जाड़कर बनाया हुआ एक यत्र जिममें कुछ औषधियों
का पाक होता है। इनमें से एक बरतन में नमक भर दिया
जाता है।

लवणरूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार दुग् द्वीप के अंतर्गत एक
द्वीप का नाम।

लवणव्यापत्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] घोड़ों की एक प्रकार की गहरी
पीड़ा जो अधिक नमक खाने से होती है।

लवणशाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लवण द्वारा मथित वस्तु। सवान।
अचार (को०)।

लवणसमुद्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खारे पानी का समुद्र।

विशेष—यह पुराणोक्त सात समुद्रों में से एक है। पुराणों
में तो सातों समुद्रों की उत्पत्ति सागर के पुत्रों के खोदने से
या प्रियव्रत राजा के रथ के चलने से बताई गई है, पर
ब्रह्मवैवर्त में लिखा है कि श्रीकृष्ण की एक पत्नी विरजा
के गर्भ से सात पुत्र हुए, जो सात समुद्र हुए। इनमें से एक
पुत्र के रोने के कारण थोड़ी देर के लिये कृष्ण का वियोग
हो गया। इसपर विरजा ने उसे शाप दिया कि 'तू लवण
समुद्र होगा और तेरा जल कोई न पीएगा'। यह कथा बहुत
पीछे की कल्पित जान पड़ती है।

लवणातक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवणान्तक] १ लवणासुर को मारने-
वाले शत्रुन। २ नीवू।

लवणाबुराशि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवणाभुराशि] समुद्र (को०)।

लवणाभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवणाभस्] समुद्र। सागर (को०)।

लवणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ दीप्ति। आभा। २ महाज्योतिषमती
लता। ३ चुक। ४ चंगरी। ५ अमलोनी शाक। ६ एक
नदी का नाम। लूनी।

लवणाकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नमक की खान। २ समुद्र। ३
(लाक्ष०) मुदरता का खान। उ०—उपकी (स्यायी भाव)
अवस्था लवणाकर के समान होती है।—रस क०, पृ० ११।

लवणाचल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पहाड़ के रूप में कल्पित नमक का
देर जिमके दान का मत्स्यपुराण में बड़ा माहात्म्य लिखा है।

लवणादिव्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नमक का समुद्र (को०)।

लवणापण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नमक का हाट या बाजार (को०)।

लवणालय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ समुद्र। लवणाकर। २ लवणासुर
की बसाई हुई मधुपुरी जो पीछे मथुरा के नाम में प्रसिद्ध हुई।

लवणासुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मधु नामक असुर का पुत्र जो मथुरा
में रहता था और जिमें रामचंद्र का आज्ञा से शत्रुन ने
मारा था।

विशेष—रामायण में इसकी कथा इस प्रकार है। मत्स्ययुग में देव्य कुल
में तोला के गभ में 'मधु' नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने
घोर तप द्वारा शिव की प्रसन्न करके उनमें एक शूल प्राप्त
किया। फिर दूमरी बार तप करके उसने शिव में यह वर
मांगा कि वह शूल कुल में सदा बना रहे। शिव ने ऐसा
वर न देकर यह वर दिया कि शूल तुम्हारे ज्येष्ठ पुत्र को
मिलेगा। विषयावसु की कन्या अनला के गर्भ में कुमोतसी
नाम की एक कन्या थी। मधु ने उसके नाथ विवाह किया,
और उसी के गर्भ में लवणासुर उत्पन्न हुआ। शूल
पाकर वह अवगत हो गया और अनेक प्रकार के अत्याचार
करने लगा। जब रामचंद्र जी राजा हुए, तब ऋषिवा ने

जाकर उनकी दुहाई दी। राम की आज्ञा से जत्रुवन उसे मारने गए, और जिस समय उसके हाथ में शूल नहीं था, उस समय उसे मारा।

लवणित—वि० [सं०] लवणयुक्त। नमकीन। नमक मिलाया हुआ [को०]।

लवणित्मा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लवणित्मन्] १ लवणयुक्त होना। नमकीनी। २ सन्तोनापन। सौंदर्य। लावण्य [को०]।

लवणोत्कट—वि० [सं०] दे० 'लवणप्रगाढ' [को०]।

लवणोत्तम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मँधा नमक, जो सब नमको से श्रेष्ठ माना जाता है। २ यत्रचार। जराखार [को०]।

लवणोत्था—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ज्योतिष्मनी लता।

लवणोद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लवणोदक' [को०]।

लवणोदक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नमक मिला हुआ पानी। २ क्षार समुद्र। ३ समुद्र। मागर [को०]।

लवणोद्धि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लवणसमुद्र। लवणोदक।

लवन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० लवनीय, लव्य] १ काटना। छेदना। २ खेत की कटाई। तुनाई। ३ खेत काटने की मजदूरी में दिया हुआ अन्न। लौनी। ४ खेत की कटाई वा तुनाई करने का औजार हँसिया [को०]।

लवन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवण] नमक। उ०—इम नीर महि गरि जाय लवन एकमेकहि जानिए।—सुदर० ग्र०, भा० १, पृ० ५५।

लवना^३—क्रि० सं० [सं० लवन, हि० लुनना] पके हुए अन्न के पौधों को खेतों में काटकर एकत्र करना। लुनना। उ०—तुलसी यह तन खेत है, मन बच करम किसान। पाप पुन्य द्वै बीज हैं ब्राह्मणों लवै निदान।—तुलसी (शब्द०)।

लवना^४—क्रि० अ० [हि० लप या लो] दीप्त होना। चमकना। उ०—चटक चोप चपला हिय लवै। सबही दिस रम प्यासनि तवै।—घनानन्द, पृ० १८७।

लवना^५—वि० [सं० लवण] दे० 'लोना'।

लवनाई^६—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लावण्य] लावण्य। सुदरता।

लवनि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लवन] १ खेत में अनाज की पकी फसल की कटाई। तुनाई। २ वह अन्न जो मजदूरी में दिया जाता है। उ०—तुलसीदास जोरी देखत सुख सोभा अतुल न जान कही री। रूप रासि विरची विरचि मनो सिला लवनि रात काम लही री।—तुलसी (शब्द०)।

लवनी^८—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शरीफे का पहला फल।

लवनी^९—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लवन] १. दे० 'लवन'। २ औजार जिससे खेत की तुनाई की जाती है। हँसिया।

लवनी^{१०}—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० नवनीत] नवनीत। मन्खन।

लवनीय—वि० [सं०] तुनाई करने लायक। वाटने योग्य [को०]।

लवरी^{११}—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लपट] अग्नि की लपट। ज्वाला। उ०—

नारी गारी देत रावनहि जरत लवर की भाग।—देवस्वामी (शब्द०)।

लवलासी^{१२}—(पु०)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लव (= प्रेम) + लामी (= लसी, लगाव)] प्रेम की लगावट।

लवली^{१३}—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ हरफारेवरी नाम का पेड़ और उसका फल जो खाया जाता है। २. एक विषम वर्णवृत्त जिसके प्रथम चरण में १६, दूसरे चरण में १२, तीसरे चरण में ८ और चौथे चरण में २० वर्ण होते हैं। जैसे,—दनुज कुल अरि जग हित वरम धर्ता। माँवा अर्द्धि प्रभु जगन भर्ता। रामा अमुग सुहर्ता। मरवम तज मन भज नित प्रभु भवदुखहर्ता।

लवलीन^{१४}—वि० [हि० लव + लीन] तन्मय। तल्लीन। मग्न। उ०—(क) अवर मधुर मुमुकान मनोहर कोटि मदन मन हीन। मूरदाम जहँ दृष्टि परन न होत तही लवलीन।—सूर (शब्द०)। (ख) जय जय धुन मुने करत अमर गन नर नारा लवलीन।—सूर (शब्द०)। (ग) अरु जे विषयन के आधीना। तिनके उद्यम में लवलीना।—विश्राम (शब्द०)।

लवलेश^{१५}—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अत्यंत अल्प मात्रा। बहुत थोड़ी मिकदार। २ जरा सा लगाव। अल्प ससर्ग। जैसे, इस दूध में पानी का लवलेश नहीं है।

लवलेस^{१६}—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवलेस] दे० 'लवलेश'। उ०—(क) जाके बल लवलेस ते जितेहु चराचर भारि।—मानस, ६।२।१। (ख) जाकी कृपा लवलेस त मतिमद तुलसीदास हूँ।—मानस, ७।१३०।

लवहरा^{१७}—सञ्ज्ञा पुं० [अश०] एक साथ उत्पन्न दो बालक। यमज। जोड़वा।

लवा^{१८}—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाजा] अनाज का दाना जो भूतने से फूल गया हो। भूते हुए दान या ज्वार की खोल। लावा। उ०—मिनि माववा आदिक फूल के व्याज विनोद लवा बरसायो करै।—द्विजदेव (शब्द०)।

लवा^{१९}—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लव] तीतर की जाति का एक पक्षी जो तीतर से बहुत छोटा होता है। उ०—वाज भाट जनु लवा लुका-ने।—तुलसी (शब्द०)।

विशेष—यह तीतर की तरह जमीन पर अचिक रहता है। पूंजे बहुत लंबे होते हैं। नर और मादा में देहन में कोई भेद नहीं होता। मादा भूरे रंग के अंड देती है। जाड़े के दिना में इस चिटिया के झुंड क झुंड भाड़िया और जमीन पर दिखाई पड़ते हैं। यह दान आर फीड खाता है।

लवाई^{२०}—वि० स्त्री० [अश०] हाल को ब्याई हुई गाय। वह गाय जिसका बच्चा अभी बहुत ही छोटा है। उ०—(व) पुन पुनि मिलत साखन विलगाइ। बालवच्छ जनु धनु लवाई।—तुलसी (शब्द०)। (ज) कौसल्यादे मातु भव धाइ। निराख बच्छ जनु धनु लवाई।—तुलसी (शब्द०)।

लवाई^{२१}—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लवना + आई (प्रत्य०)] १. खेत की फसल की कटाई। तुनाई। २. फसल कटाई का मजदूरी।

लवाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ हंसिया । २ कटाई का काम । ३ काटनेवाला [को०] ।

लवाजमा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लवाजिम, लवाजिमा] १ किसी के साथ रहनेवाला दल दल और साज सामान । साथ में रहनेवाली भीड़भाड़ या असवाव । जैसे,—इतना लवाजमा साथ लेकर क्यों परदेश चलते हो ? २ आवश्यक सामग्री । सामान जो किसी बात के लिये जरूरी हो । जैसे,—सब लवाजमा इकट्ठा कर लो, तब तस्वीर में हाथ लगाओ ।

लवाजमात—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लवाजमात] लवाजिम का बहुवचन । सामग्री । उपकरण ।

लवाणक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हंसिया [को०] ।

लवारां—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लवाई] गौ का बच्चा । बछड़ा ।

लवासी^(१)—वि० [सं० लप, या लव (= वकना) + आभी (प्रत्य०)] १ बकवादी । गप्पी । झूठा । २ लपट । उ० - काहे दियो सूर सुख में दुख कपटी कान्ह लवासी ।—सूर (शब्द०) ।

लवि^१—वि० [सं०] तेज धारवाला । काटने में तेज ।

लवि^२—सञ्ज्ञा स्त्री० लवित्र । हंसिया [को०] ।

लवित्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] काटने का औजार । दाव । हंसिया [को०] ।

लवेटिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अन्न । अनाज [को०] ।

लवोपल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ओला । बर्फ का टुकड़ा ।

लश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गोद [को०] ।

लशकर—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] १ सेना । फौज । थोड़ाघो का दल । २. मनुष्यों का भारी समूह । भीड़भाड़ । दल । जैसे,—इतना बड़ा लशकर क्यों साथ लेकर चलते हो ? ३ फौज के टिकने का स्थान । मेना का पड़ाव । ४ जहाज में काम करनेवालो का दल । जहाजी आदमी ।

यौ०—लशकर आग = (१) सेना सज्जित करनेवाला । (२) सेना के साथ सामना करनेवाला । लशकर आराई—(१) युद्धार्थ सेना का व्यूहन । (२) सेना लेकर मुकाबला करना । लशकरकशी = चढाई । धावा । आक्रमण । लशकरगाह = शिविर । छावनी ।

लशकरी—वि० [फा० लशकर] १ फौज का । सेना सबधी । सेना से सबध रखनेवाला । २ जहाज पर काम करनेवाला । खलासी । जहाजी । ३ जहाज से सबध रखनेवाला ।

लशकरी—सञ्ज्ञा पुं० १ सैनिक । सिपाही । २ जहाजी आदमी । ३ जहाजियो या खलासियो की भाषा ।

यौ०—लशकरी कोश = जहाजियो की बोलचाल की भाषा का एक कोशग्रन्थ ।

लशकारना—क्रि० सं० [अ० लशकर] शिकारी कुत्तो को शिकार पकड़ने के लिये पुकारकर बढ़ावा देना । लहकारना । (शिकारी) ।

लशुन, लशून—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लहसुन ।

लषण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अभिलाषा । इच्छा । आकांक्षा [को०] ।

लपन^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मण] दे० 'लखन' ।

लपन^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लपना] लपने की क्रिया या भाव ।

लपना क्रि० सं० [सं० लप] दे० 'लपना' ।

लपित—वि० [सं०] वाञ्छित । अभिलपित [को०] ।

लष्प^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष] लाख की सख्या ।

लष्प^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नट । नाचनेवाला । नर्तक । अभिनेता [को०] ।

लष्पत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मण] दे० 'लखन' ।

लस^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ चिपकने या चिपकाने का गुण । श्लेषण ।

चिपचिपाहट । २ वह जिसके तगाव से एक वस्तु दूसरी वस्तु से चिपक जाय । लाग । ३ चिप लगने की बात । आकर्षण । जैसे,—वहाँ कुछ लम है, तभी वह नित्य जाता है ।

लस^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ रक्त चदन । २ ऊँट का उबर [को०] ।

लास^१—वि० [सं०] १ चमकता हुआ । शोभित । २ इधर उधर हिलना हुआ । कपेन [को०] ।

लासक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नाचनेवाला । नर्तक । २ एक वृक्ष का नाम [को०] ।

लसकर सञ्ज्ञा पुं० [फा० लशकर] दे० 'लशकर' । उ० विन लसकर विन फौज मुनुक में फिरो दुहाई ।—पलटू, भा० १, पृ० ६ ।

लसदसु—वि० [सं०] दीप्त या चमकीली फिरणोवाला, जैसे, सूर्य [को०] ।

लसदार—वि० [हिं० लस + फा० दार (प्रत्य०)] जिममें लम हो । जिसमें चिपकने या चिपकाने का गुण हो । गोद की तरह का । लसीला ।

लसना^१ क्रि० सं० [सं० लसन] एक वस्तु को दूसरी वस्तु के साथ इस प्रकार सटाना कि वह अलग न हो । चिपकाना । जैसे,—इस कागज को किताब पर लस दो ।

सयो० क्रि०—देना ।

लसना^(२)—क्रि० अ० १ शोभित होना । छजना । फवना । २. विराजना । विद्यमान होना । उ०—(क) लसत चारु कपोल दुहुँ विच सजल लोचन चारु ।—सूर (शब्द०) (ख) तहँ राजत दसरथ लसेँ देव देव अनूप ।—केशव (शब्द०) ।

लसनि^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लमना] १ स्थिति । विद्यमानता । २ शोभित होने की क्रिया या भाव । शोभा । छटा । उ०—कहत ही बातें श्री गोपाललान जू सो बाल सुने खरिका में खरी माधुरी लसनि सो ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

लसम—वि० [ग्नि०] जो खरा और चोखा न हो । दागी । झूपित । खोटा । जैसे,—लसम सोना । उ०—और भूप परपि कै ताइके मुलाखि लेत लसम को खसम तुही पै दशरथ के ।—तुलसी (शब्द०) ।

लसरका—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लगना या लस्तगा] सबध । लगाव । ताल्लुक । (लखनऊ) ।

लसलसा—वि० [हि० लस] [वि० स्त्री० लसलसी] लसदार । चिपचिपा ।
जो गोद की तरह चिपकनेवाला हो ।

लसलसाना—क्रि० अ० [अनु०] गोद या लसदार चीज की तरह
चिपकना । चिपचिपाना ।

लसलसाहट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लसलसा] लसदार होने का भाव ।
चिपक । चिपचिपाहट ।

लसा -सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ हल्दी । २ केशर (को०) ।

लसिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लाला । थूक ।

लसित—वि० [सं०] १ लसता हुआ । शोभित । २ व्यक्त । स्थित ।
प्रकट । ३ जो क्रीडा कर रहा हो । क्रीडाशील [को०] ।

लसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लस] १ लम । चिपचिपाहट । २ दिल लगने
की वस्तु । आकर्षण । जैसे,—वह कुछ लसी पाकर वहाँ जाता
है । ३ लाभ का योग । फायदे का डील । जैसे,—बिना लसी
के आप क्यों कहीं जाने लगे । ४ सबध । लगाव । मेलजोल ।
जैसे,—ऐसे आदमी से लमी लगाना ठीक नहीं ।

क्रि० प्र०—लगाना ।

५ दूध और पानी मिला शरवत ।

लसीका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. मांस और चमड़े के बीच में रहनेवाला
रस या पानी । २ लाला । ३ पीव (को०) । ४. मांसपेशी
(को०) । ५ ऊख का रस । इक्षुरस (को०) ।

लसीला—वि० [हि० लस + ईला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० लसीली] १
लसदार । जिसमें लस हो । जिसके लगाने से कोई वस्तु दूसरी
वस्तु से चिपक जाय । चिपचिपा । २ सुंदर । शोभायुक्त ।
उ०—लाड लड़ीली रस बरसीली लसीली हँसीली सनेहसगमगी ।
—नानाद, पृ० ४४७ ।

लसुन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लसुन] दे० 'लहसुन' ।

लसुनिया—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लहसुन] दे० 'लहसुनिया' ।

लसुप - वि० [सं०] चमकदार । दीप्त । चमकीला [को०] ।

लसोड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लम (= चिपचिपाहट)] एक प्रकार का
छोटा पेड़ । सपिस्ताँ । इनेष्मातक । लसोड़ा ।

विशेष - इसकी पत्तियाँ गोल गोल और फल वेर के से होते हैं ।
यह वमत में पत्तियाँ झाडता है, और हिंदुस्तान में प्रायः सर्वत्र
पाया जाता है । फल में बहुत ही लसदार गूदा होता है । यह
फल औषध के काम में आता है और सूखी खासी को ढाली करने
के लिये दिया जाता है । फारसी में इसे सपिस्ताँ कहते हैं ।
हकीम लोग मिर्ची मिलाकर इसका अक्लेह (चटनी) बनाने
हैं, जो खासी में चाटने के लिये दिया जाता है । संस्कृत में
भी इसे श्लेषमातक कहते हैं । इसका अचार भी बनता है ।

लसोड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'लसोड़ा' ।

लसोटा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लासा + ओटा (प्रत्य०)] बाँस का चागा
जिसमें बहेलिए चिटिया फँसाने का लामा रखते हैं ।

लस्टम पस्टम—क्रि० प्रि० [शिय०] १ धीरे धीरे । २ किमी न किमी

तरह में । अच्छी तरह या पूरे सामान के साथ नहीं । जैसे,—
लस्टम पस्टम काम चला जाता है ।

लस्त—वि० [सं०] १ क्रीडित । २ शोभायुक्त । मजावट में भरा ।
३ प्रवीण । कुशल । दक्ष । चतुर (को०) । ४ आनिगित ।
आनिगनवद्ध (को०) ।

लस्त—वि० [हि० लटना] १. थका हुआ । शिथिल । थम या थकावट
से ढीला । जैसे,—चलते चलते शरीर लस्त हो गया है । २
जिसमें कुछ करने की शक्ति या साहम न रह गया हो । अशक्त ।
उ०—वारी मुकुमारी जर्जर लस्त की व्याह दी जावे ।
प्रेमघन०, भा० २, पृ० १८७ ।

क्रि० प्र०—कग्ना ।—होना ।

लस्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धनुष का मध्य भाग । मूठ ।

लस्तकी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लस्तकिन्] धनुष [को०] ।

लस्तगाँ—सञ्ज्ञा पुं० [?] १ परस्पर सबध या लगाव । २ शृंखला ।
२ सिललिला । ३ शुद्धात । प्रारभ ।

लस्तान—वि० [अ०] वातूनी । वाचाल । वावदूक [को०] ।

लस्तानी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] वाचालना । वातूनीपन । उ०—वात
फरोशी हाय हाय । वह लस्तानी हाय हाय ।—भारतेंदु प्र०,
भा० १, पृ० ६७८ ।

लस्ती—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लम] १ लम । चिपचिपाहट । वि० दे०
'लसा' । २ छाँछ । मठा । तक्र । (पच्छिम) । ३ दही को
चीनी के साथ मथकर बर्फ मिला या हुआ शर्वत ।

यौ०—कच्ची लस्ती = अधिक पानी मिला हुआ दूध ।

लहँगा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लक (= कमर) + अगा] कमर के नीचे का सारा
अग ढाँकने के लिये स्त्रियों का एक घेरदार पहनावा । उ०—छुद्र
घटिका कटि लहँगा रंग तन तनसुख की सारी ।—सूर (शब्द०) ।

विशेष—यह मूत की डोरी या नाले (इजारवद) में कमर में कम-
कर पहना जाता है और इसमें बहुत सी चुनटें पड़ी रहती है ।
इसमें नाली के आकार का घेरेदार नाला पडा रहता है, जिसे
नेफा कहते हैं । लहँगे में केवल कटि के नीचे का भाग ढँकता
है, इससे इसके साथ थोड़ीनी भी थोड़ी जाती है ।

लहक—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लहकना] १ लहकने की क्रिया या भाव । २
आग की लोट । ३ चमक । छुति । ४ शोभा । छवि । ५.
उमग । उत्साह । जोश । उ०—देशभक्ति की लहक उमके अग
प्रत्यग में व्याप्त है ।—सुनीता, पृ० ११ ।

लहकना—क्रि० अ० [सं० लता (= हिलना डोलना) या अनु०] १
हवा में इधर उधर डोलना । भोके खाना । लहराना । उ०—
(क) सकपकाहि विप भरे पमारै । लहर भरे, लहकहि प्रति
कारै ।—जायसी (शब्द०) । (ख) जैठयो मसि ऊर मंभारि न
सकति भार वेली मानो लहकै नवेली सोनजुही की ।—रघुनाथ
(शब्द०) । (ग) नव मालती चहूँ दिमि महकत । जमुन लहर
तट लह लह लहकत ।—गोपाल (शब्द०) । (घ) लान लाल
की लर लटकाए लहकति छन जन ।—(शब्द०) ।

सयो० क्रि०—उठना ।

२ हवा का बहना । हवा का झोके देना । उ०—कत विनु वासर वसत लागे अतक से तीर ऐसे त्रिविध समीर लागे लहकन । —देव (शब्द०) । ३ आग का झर उधर लपट छोड़ना । लपट का निकलना । दहकना । जैसे,—आग लहकना । ४ चाह या उत्कठा से आगे बढ़ना । लपकना । ५ चाह से भरना । उत्कठित होना । ललकना । उ०—अँखियाँ अघर जूमि हा हा छाँडो कहै भूमि छतियाँ सो लगी लग लगी सी लहकि कै । —(शब्द०) । ६ किसी वस्तु का ठीक से न जमने के कारण हिलना या हचकना ।

लहकाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लहक] पतला गोटा । लचका ।

लहकाना—क्रि० स० [हि० लहकना] १ हवा में झर उधर हिलाना डुलाना । झोंका खिलाना । २ आगे बढ़ाना । ३ चाह या उत्कठा से आगे बढ़ाना । लपकाना । जैसे—तुमने लहका दिया, इसी से वह पीछे लगा । ४ उत्साह दिलाकर आगे बढ़ना । आगे बढ़ने के लिये उत्साहित करना । किसी और अप्रमर होने के लिये बढ़ावा देना । ५ किसी के विरुद्ध कुछ करने के लिये भड़काना । ताव दिलाना । बरगलाना । ६ दीप्त करना । प्रज्वलित करना । जैसे, आग लहकाना ।

सयो० क्रि०—देना ।

लहकारना—क्रि० स० [हि० ललकारना] १ किसी के विरुद्ध कुछ करने के लिये वहकाना । ताव दिलाना । २ उत्साहित करके आगे बढ़ाना । ३ कुत्ते को उत्साहित या क्रुद्ध करके किसी के पीछे लगाना ।

लहकौर—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लहना + कौर] दे० 'लहकौरि' ।

लहकौरि—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लहना + कौर (= ग्रास)] विवाह की एक रीति जिसमें दूल्हा और दुल्हिन कोहवर में एक दूसरे के मुँह में कौर (ग्रास) डालते हैं । उ०—(क) लहकौरि गौरि सिखाव रामहिं सीय सन सारद कहैं ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) गोदा रगनाथ मुख माँही । मेलति है लहकौरि तहाँ ही ।—रघुराज (शब्द०) ।

लहजा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लहजह्] गाने या बोलने का ढंग । स्वर । लय । जैसे,—वह बड़े अच्छे लहजे से गाता है ।

लहजा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लहजा] पल । अल्पकाल । क्षण ।

मुहा०—लहजा भर = क्षण भर । थोड़ी देर ।

लहटाना—क्रि० अ० [दश०] परचना ।

लहटाना—क्रि० स० [दश०] परचाना ।

लहद—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] कन्न । उ०—हो डेर अकेला जगल मे तू खाक लहद की फकिंगा —राम० धर्म०, पृ० ६१ ।

कहदि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लादी] दे० 'लादी' । उ०—धोवी घर के गदहा हँ ही ओदी लहदि लदेही ।—बबीर श०, पृ० २२ ।

लहदा—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लादना या प्रा० लद्] दे० 'लादी' ।

लहन—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] कजा नाम की कंटीली झाड़ी । विशेष दे० 'कजा' ।

लहना—सञ्ज्ञा पुं० [स० लभन] दे० 'लहना' ।

लहनदार—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लहना + फा० दार] वह मनुष्य जिसका कुछ लहना किसी पर बाकी हो । अण देनेवाला महाजन । उ०—जिम्ने अण चुगा देने को कर्मा क्रोधी और झूर लहन-दार की लाल लाल आँखें नही देखी हैं ।—भारतेंदु श०, भा० १, पृ० २८५ ।

लहना—क्रि० स० [स० लभन, प्रा० लहन] प्राप्त करना । लाभ करना । पाना । उ०—नाचत ही निम दिवस मरघो, पं नहि सुख कबहूँ लह्यो ।—पूर (शब्द०) ।

लहना—क्रि० स० [सं० लभन] १. काटना । छेदना । २. खेत की फसल काटना । ३. छोड़ना । तराश करना । कतरना ।

लहना—सञ्ज्ञा पुं० [स० लभन, प्रा० लहन] १. किन्नी को दिया हुआ धन जो बसूल करना हो । उधर दिया हुआ रुपया पैसा । जैसे,—हमारा सब लहना साफ कर दो । उ०—लहना देना विधि सी लिपि । बँटे हाट सराफी मिखै ।—अर्थ०, पृ० ६ ।

यो०—लहना देना = प्राप्य एव देय धन द्रव्य आदि । लहना पटवना = उधार चुकाने की क्रिया ।

मुहा०—लहना चुकाना, पटाना या साफ करना = किसी से लिया हुआ कर्ज अदा करना । लिया हुआ अण दे देना ।

२. वह धन जो किसी काम के बदले में किसी से मिलनेवाला हो । रुपया पैसा जो किसी कारण किसी से मिलनेवाला हो । ३. भाग्य । किस्मत । जैसे,—जिसके लहने का होगा, उमे मिलेगा ।

लहना वही—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लहना + वही] वह वही जिसमें अण लेनेवालों के नाम और रकमें लिखी जाती हैं, और जिसके अनुसार बसूली होती है ।

लहनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लहना] १. प्राप्ति । २. फलभोग । उ०—लहनी करम के पाछे । दियो आपनो लँहे सोई मिलै नही पाछे ।—सूर (शब्द०) ।

लहनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लहना (= काटना, छीलना)] वह औजार जिससे ठठेरे बरतन छीलते हैं ।

लहधर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लहर वहर ?] १. एक प्रकार का बहुत लंबा और ढीला ढाला पहनावा । चोगा । लबादा । २. एक प्रकार का तोता जिसकी गरदन बहुत लंबी होती है । ३. भडा । निशान । पताका ।

लहम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] गोश्त । मांस [को०] ।

लहमा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लहमह्] निमेष । पल । क्षण । अत्यंत अल्प काल । उ०—इक लहमा पकडि के खूब मला ।—पल्ल०, भा० २, पृ० ६ ।

लहमी—वि० [अ०] लहम अर्थात् मांस का विक्रेता । मांस बेचने वाला [को०] ।

लहर—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लहरी] १. हवा के झोंके से एक दूसरे के पीछे ऊँची उठती हुई जल की राशि । बड़ा हिलोरा । मौज । उ०—लोल लहर उठि एक एक पं चलि इमि आवत । —हरिश्चंद्र (शब्द०) ।

कि० प्र०—घाना ।—उठना ।

मुहा०—लहर लेना = समुद्र के किनारे लहर में स्नान करना ।

२. उमग । वेग । जोश । उठान । जैसे,—आनंद की लहर ।

उ०—फूलो धेनु, फूले धाम, फूली गोपी अग अग फिर तरार
आनंद लहर के ।—सूर (शब्द०) । ३ मन को मौज । /न
में आपसे आप उठी हुई प्रेरणा । मन में वेग के साथ उत्रा
भावना । जैसे,—उनके मन की लहर है, आज इधर ही
निकल आए । ४. शरार के अदर के किमी उपद्रव (जैसे,
वेहोशी, पीडा आदि) का वेग जो कुछ अंतर पर रह रहकर
उत्पन्न हो । भोका । जैसे,—साँप के काटने पर लहर आती
है । उ०—(क) सुनि के राजा गा मुरझाई । जानी लहरि
सुहज के आई ।—जायसी (शब्द०) । (ख) सूर सुरति तनु
की कछु आई उतरत लहरि के ।—सूर (शब्द०) ।

मुहा०—लहर देना या मारना = रह रहकर किसी प्रकार की
पीडा उठना । साँप काटने की लहर = साँप काटे आदमी की
वह अवस्था जिसमें वेहोशी के बीच बीच में वह जाग उठता
है । उ०—लाभो गुनी गोविंद को बाढी है अति लहरि ।
—सूर (शब्द०) ।

५ आनंद की उमग । हर्ष या प्रसन्नता का वेग । मजा । मौज ।
जैसे,—वहाँ चलो, वडी लहर आवेगी ।

यौ०—लहर बहर = सब प्रकार का आनंद और सुख ।

मुहा०—लहर आना = आनंद आना । लहर लेना या मारना =
आनंद भोगना । मौज करना ।

६ आवाज की गूँज । स्वर का कप जो वायु में उत्पन्न होता
है । ७ वक्र गति । इधर उधर मुडती हुई टेढ़ी चाल । जैसे,—
वह लहरें मारता चलता है ।

मुहा०—लहर मारना या देना = सीधा न जाकर इधर उधर
मुडना ।

८ बराबर इधर उधर मुडती या टेढ़ी होती हुई जानेवाली रेखा ।
चलते सर्प को सी कुटिल रेखा । ९ किसीदे की धारी । १०
हवा का भोका । ११ किसी प्रकार की गध से भरी हुई हवा
का भोका । महक । लपट । उ०—खुलि रही खुद खुसबोयन
की लहरि तैसे सीतल समीर डाल तनिकऊ न डोली में ।—
निहाल (शब्द०) ।

लहरदार—वि० [हि० लहर + फा० दार (प्रत्य०)] १ जो सीधा न
जाकर टेढ़ा मेढा गया हो । जो बल खाता गया हो । कुटिल
या वक्रगति से गया हुआ । जैसे,—यह लकीर सीधी नहीं है,
लहरदार है । २ दे० 'लहरियादार' ।

लहरना—क्रि० अ० [हि० लहर + ना (प्रत्य०)] १. दे० 'लहराना' ।
उ०—बरसाती तरिवर लहरत तहँ लता रही लूमि लूमि ।
—देवस्वामी (शब्द०) । २ दे० 'लहटना' ।

लहरपटोर—सज्ञा पु० [हि० लहर + पट] [अ० लहर पटोरी]
पुरानी चाल का एक प्रकार का रेशमी धारीदार कपड़ा ।
उ०—पुनि वह चीर आनि सब छोरी । सारो कचुकि लहर-
पटोरी ।—जायसी (शब्द०) ।

लहरा^१—सज्ञा पु० [हि० लहर] १ लहर । तरंग । २ मीज ।
आनंद । मजा । ३ वाजों की वह गत जो आरंभ में नाचन या
गाने के पहले समाँ बाँधन और आनंद बढ़ाने के लिये बजाई
जाती है । (हममें कुछ गाना नहीं होता, केवल ताल और स्वरो
की लय मात्र होती है ।) ४ कुछ देर तक वादनों का बरसना ।
कुछ समय तक जोगों की बर्षा होना । भर । रुझा । भागा ।

लहरा^२—सज्ञा पु० [दश०] एक प्रकार की घास ।

लहराना^१—क्रि० अ० [हि० लहर + आना (प्रत्य०)] १ हवा के भोके
से इधर उधर हिलना डोलना । प्रकपित होना । लहरें खाना ।
जैसे,—खेत लहराना, या खेतों में घान लहराना, लता लहराना
वाल लहराना, पताका लहराना । उ०—(क) आतप पर्यो
प्रभात ताहि सो खिल्यो कमलमुख । अलक भौर लहराय जूय
मिलि करत विविध सुख ।—व्यास (शब्द०) । (ख) मनु प्रगट
मनोरथ की लता ललकि ललकि लहराति है ।—गोपाल
(शब्द०) । २. हवा का चमना या पानी का हवा के भाके में
उठना और गिरना । बहना या हिलोर मारना । ३ सीधे न
चलकर साँप की तरह इधर उधर मुडते या भोका खाते हुए
चलना । जैसे,—यह लकोर लहराती हुई गई है । ४ मन का
उमग में होना । उल्लास में होना । जैसे,—यह सुनकर उनका
मन लहरा उठा । ५ किसी वस्तु के लिये उत्कण्ठित होना । प्राप्त
करने की इच्छा से अघीर होना । लपकना । जैसे,—उमके लिये
वह लहरा उठा । ६ आग की लपट का निकलकर इधर उधर
हिलना । दहकना । भडकना । उ०—श्रीपति मुकवि यो वियोगो
फहरन लागे, मदन को आगि लहरान लागो तन मे ।—श्रीपति
(शब्द०) । ७ शोभित होना । लसना । विराजना । शोभा-
पूर्वक रहना । उ०—(क) कहै पद्माकर अरीन की अवाई पर
साहन सवाई की ललाई लहराति है ।—पद्माकर (शब्द०) ।
(ख) त्यागि भय भाव चहुँ धूमत अनद भरे विपिन विहारी पर
मुखसाज लहरत ।—(शब्द०) ।

लहराना^२—क्रि० स० १ हवा के भोके में इधर उधर हिलाना या
हिलने डालने के लिये छोड़ देना । जैसे,—सिर के बाल
लहराना । २ सीधे न चलाकर साँप की तरह इधर उधर
मोडते हुए चलाना । वक्र गति में ले जाना । ३ बार बार
इधर से उधर हिलाना डुलाना । उ०—सूरदास प्रभु सोइ
कन्हैया लहरावति मलहरावति है ।—नूर (शब्द०) ।

लहरि(पु)†—सज्ञा स्त्री [सं०] दे० 'लहर' ।

लहरिया^१—सज्ञा पु० [हि० लहर] १. ऐसी समानांतर रेखाओं का
समूह जो सीधे न जाकर क्रम से इधर उधर मुडती हुई गई
हो । लहरदार चिह्न । टेढ़ी मेढ़ी गई हुई लकीरों की श्रृंखला ।
जैसे,—(क) इसका लहरिया किनारा है । (ख) इसमें लहरिया
काम बना हुआ है । २ एक प्रकार का कपडा जिनमें रंग विरंगी
टेढ़ी मेढ़ी लकीरें बनी होती हैं । ३ वह माटी या धोती जिनकी
रंगाई टेढ़ी मेढ़ी लकीरों के रूप में हो । उ०—(क) लहरत
लहर लहरिया लहर बहार । मोविन जडो विनरिया विधुर
वार ।—रहीम (शब्द०) । (ख) फहर फहर होव प्रीतम को

पीतपट, लहर लहर होत प्यारी को लहरिया ।—देव (शब्द०) ।
४ जरी के कपडो के किनारे बनी हुई बेल । ५ गोटे, लेस
आदि की लहरदार टंकाई ।

लहरिया^१—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लहर + ष्या] 'लहर' शब्द का पूरवी
निर्देशात्मक रूप । उ०—मे गँलिरँ सोई पिया मोर जागे, आइ
गई सुपमन लहरिया हो गमा ।—कवीर (शब्द०) ।

लहरियादार—वि० [हिं लहरिया + दार (प्रत्ये)] १ जिसमे
लहरिया बना हो । बेलघूटेदार । २ जिसमे बहुत सी टेढ़ी
मेढ़ी रेखाएँ हो । लहरदार ।

लहरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री [सं] लहर । तरंग । हितोर । मोज । उ०—
ऊरो, यमुषा मे सुषालहरी लला की बरनी, मैन कलावारी
कहि प्यारी कब बोलिहै ।—दीनदयाल (शब्द०) ।

लहरी^२—वि० [हिं लहर + ई (प्रत्ये)] मन की तरंग के अनुमार
बलनवाला । आनदी । मनमोजी । खुशमिजाज । उ०—
लहरी जवान है । कभी तो रात को तीन तीन बजे तक जागते
हैं कभी दिन को दो दो पहर तक सोया करते हैं—फिसाना०,
भा० ३, पृ० ३२ ।

लहरीला—वि० [हिं लहर + ईला (प्रत्ये)] [पि० स्त्री लहरीली] दे०
'लहरदार' । उ०—मरी लहरीली नीली श्रलकावली समान ।
—लहर, पृ० ६६ ।

लहल—सञ्ज्ञा पुं [?] एक प्रकार का राग जो दीपक राग का पुत्र
कहा जाता है ।

लहलह—वि० [हिं लहलहाना का अनु०] १ लहलहाता हुआ । हरा
भरा । सरस । उ०—लाल नील सित पीत कमल कुल सब श्रुतु
मे लहलहाई ।—देवस्वामी (शब्द०) । २ हर्ष से फूला हुआ ।
खुशी से खिला हुआ । प्रफुल्लित ।

लहलहा—वि० [हिं लहलहाना] [वि० स्त्री लहलही] १ लहलहाता
हुआ । फूल पत्तों से भरा और सरस । हरा भरा । २ आनन्द
से पूर्ण । खुशी से भरा हुआ । प्रफुल्ल । ३ हृष्ट पुष्ट । जैसे,—
देह लहलही होना ।

लहलहाना—क्रि० प्र० [हिं लहरना (पत्तियों का)] १ लहरान-
वाली हरी पत्तियों से भरना । हरा भरा होना । फूल पत्तों से
सरस और सजीव दिखाई देना । जैसे,—चारों ओर लहलहाते
खेत चले गए हैं ।

सयो० क्रि०—उठना ।—जाना ।

२ प्रफुल्ल होना । आनन्द मे पूर्ण होना । खुशी से भरना । जैसे,—
इतना मुनते ही वे लहलहा उठे । ३ टेढ़ी मेढ़ी रेखाओं के रूप
मे होना । रह रहकर दीप्त या व्यक्त होना । उ०—तहाँ कहति
है ब्रजभामिनी । लहलहाति जनु नव दामिनी ।—नद० प्र०,
पृ० ३२१ । ४ सूखे पेठ या पौधे में फिर से पत्तियाँ निकलना ।
पनपना । जैसे,—चार ही दिन पानी पाने से यह पौधा लहलहा-
उठा । ४ दुर्बल शरीर का फिर से हृष्ट और सजीव होना ।
शरीर पनपना ।

सयो० क्रि०—उठना ।

लहलही—वि० स्त्री [हिं लहलहाना] दे० 'लहलहा' ।

लहली^१—सञ्ज्ञा स्त्री [शं] वह दलदल जो किसी जलाशय के मूख
जान पर रह जाती है ।

लहसुआ^१—सञ्ज्ञा पुं [दश०] दे० लसोडा ।

लहसुन—सञ्ज्ञा पुं [सं लशुन] १ एक केंद्रों उन्नत चांग आर
गिरी हुई लमी लमी पतली पत्तिया का एक पीधा, जिसकी जड़
गोल गाँठ के रूप मे हातो ह । उ०—तुनगी श्रपना आचरण
भला न लागत कागु । तेहन वगाति जो खात नित लहसुन ह
की वासु ।—तुनसी (शब्द०) ।

विशेष—इसकी जड़ या कंद प्याज के ही समान तीक्ष्ण और उग्र
गन्धवाली होती है, इसमे इमे बहुत से आचारवान् हिंदू विवेकत
चँपणव नहीं खाते । प्याज की गाँठ और लहसुन की गाँठ की
चनावट मे बहुत अंतर हाँता है । प्याज की गाँठ कोमल कोमल
छिनको की तहों मे मड़ी हुई हाँती है, पर लहसुन की गाँठ
चारों ओर एक पत्ति मे गुथी हुई फाँको मे बनी होनी
है जिन्हे जवा कहते हैं । बँधक मे यह मातृवर्धक, शुक्र-
वर्धक, स्निग्ध, उष्णवीर्य, पाचक, मारक, बटु, मधुर, तीक्ष्ण,
दृढी जगह को ठीक करनेवाला, कफवाननाशक, फठगायक, गुरु,
रक्तपित्तवर्धक, बलकारक, वरुणप्रदायक, मेधाजनक, नेत्रों को
हितकारी, रसायन तथा हृद्दोग, जाणुजर, कुक्षिगुन, गुल्म,
अरुचि, कास, शोथ, अर्श, आमदोष, कुष्ठ, अग्निमाद्य, कृमि,
वायु, श्यास तथा कफनाशक माना जाता है । भाद्रप्रकाश मे
लिखा है कि लहसुन खानेवाला के लिये सट्टी चीजें, मद्य और
मांस हितजनक है, तथा कसरत, धूम, क्रोध, अधिक जल, दूध
और गुट अहितकर है । बँधक मे इसके बहुत गुण कहे गए
हैं । यह तरकारी के मसाले मे पडता है । 'भावप्रकाश' मे लहसुन
के सवध मे यह आस्थान लिखा है—जिस समय गरुड इद्र के
यहाँ से श्रमृत हरकर लिए जा रहे थे, उस समय उसकी एक
बूँद जमीन पर गिर पडी । उसी ने लहसुन का उत्पत्ति हुई ।
मनु आदि स्मृतियों मे इसके खाने का निषेध पाया जाता है ।

पर्या०—महोषध । अरिष्ट । महाकद । म्लेच्छकद । रमोनक ।
भूतघ्न । उग्रगध ।

२ मानिक का एक दोष जिसे सस्युल मे 'अशोभक' कहते हैं ।

लहसुनिया—सञ्ज्ञा पुं [हिं लहसुन] धूमिल रंग का एक रत्न या
बहुमूल्य पत्थर । रुद्राक्ष ।

विशेष—यह नवरत्नों मे है तथा लाल, पीले और हरे रंग का
भी होता है । जिसपर तीन अर्ध रेखाएँ हो, वह उत्तम समझा
जाता है और 'ढाई सूत का' कहलाता है ।

लहसुनी हींग—सञ्ज्ञा स्त्री [हिं लहसुन + हींग] एक प्रकार की
कृत्रिम हींग जो लहसुन के योग से बनाई जाती है ।

लहसुवा^१—सञ्ज्ञा पुं [दश०] १ लसोडा । दे० 'लहसुआ' । २ एक
प्रकार का साग ।

लहा^७—सञ्ज्ञा पुं [सं लाहा] दे० 'लाह' ।

लहाछेह—सञ्ज्ञा पुं [लवाक्षेप ?] १ मृत्यु की क्रियाओं मे से चौथी

क्रिया । नाच की एक गति । २ नाचने में तेजी और झपट ।
उ०—गोपिन संग निस सरद की रमत रसिक रसरज । लहा-
छेह अति गतिन की सबन लखे सब पास ।—बिहारी (शब्द०) ।
३ तीव्र वर्षा । जोरदार वर्षा । ४ झपट । कूद । धूम-
घडक्का ।

लहालह(५)†—वि० [हि० लहलह] दे० 'लहलहा' । उ०—(क)
मालति औ मुचकंद है केदलि के परकास । पुरइन जाभे
लहालहि शोभा अधिक प्रकास ।—कबीर (शब्द०) । (ख) नभ
पुर मगल गान निसान गहागहे । देखि मनोरथ सुगतर ललित
लहालहे ।—तुलसी (शब्द०) ।

लहालोट—वि० [हि० लाभ, लाह + लोटना] १ हंसी से लोटता
हुआ । हँसी में मग्न । २ खुशी से भरा हुआ । आनंद के मारे
उछलता हुआ । उल्लासमग्न । जैसे,—यह कविता सुनते ही
वह लहालोट हो गया । ३ प्रेममग्न । लुभाया हुआ । लुब्ध ।
मोहित । लट्टू । जैसे,—वह उसका रूप देखते ही लहालोट
हो गया ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

लहासा†—सञ्ज्ञा स्त्री० [तु० लाश] मुर्दा । मृत शरीर ।

लहासन—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] वह काली भैंस जिसकी कनपटी से माथे
तक का भाग लाल होता है । (गडेरिए) ।

लहासी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लभस, प्रा० लहस (= रस्ती)] १ वह
मोटी रस्ती जिससे नाव या जहाज बांधे जाते हैं । २ रस्ती ।
डोरी । ३ रास्ते में निकली हुई जड़ । (पालकी के कहार) ।

लहि†—अव्य० [हि० लहना (= प्राप्त होना, पहुंचना)] पर्यंत ।
तक । ताई । उ०—आवहु करहु कदरमस साजू । चढाहि बजाइ
जहाँ लहि राजू ।—जायसी (शब्द०) ।

लहित्ता†—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] दे० 'रहिला' ।

लहु(५)†—अव्य० [हि० लग] दे० 'ली' ।

लहु†—वि० [सं० लघु, प्रा० लहु] छोटा । अल्प । थोड़ा । उ०—वह
कलेसु कारज अल्प बढी आस लहु लाहु । उदासीन सीतारमनु
समय सरिस निरवाहु ।—तुलसी (शब्द०) ।

लहुआ†—वि० [सं० लघुक, प्रा० लहुआ] अत्यल्प । छोटा । हलका ।

लहुरा†—वि० [सं० लघु, प्रा० लहु + रा (प्रत्य०)] [वि० स्त्री०
लहुरी] छोटा । कनिष्ठ । जैसे,—लहुरा भाई ।

लहुरी†—वि० स्त्री० [हि० लहुरा] छोटी । कनिष्ठा ।

लहू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोह, हि० लोहू] रक्त । लोहू । रुबिर । खून ।

मुहा०—लहूलुहान होना = खून से भर जाना । अत्यंत लहू
बहना । विशेष रक्तस्राव होना । (अन्य मुहा० के लिये दे०
'खून' और 'रक्त' शब्द के मुहा०) ।

लहेर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लहना (= पाना)] ब्राह्मण । (सुनार) ।

लहेरा†—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लाह (= लाख) + ऐरा (प्रत्य०)] १.
एक जाति जो रेशम रंगने का काम करती है । २ लाह का
पक्का रंग चढ़ानेवाला । ३ पक्का रेशम रंगनेवाला ।

रंगरेज । उ०—तारकसी अतार घनेरे । जोलहा पुनि कलवार
लहेरे ।—गोपाल (शब्द०) ।

लहेरा†—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] छोटे ढील का एक सदाबहार पेड़ जो पंजाब,
दक्खिन, गुजरात और राजपूताने में बहुत होता है ।

विशेष—इसके हीर की लकड़ी बहुत चिपनी, साफ और मजबूत
होती है और कुरसी, मेज, आलमारी इत्यादि सजावट के
सामान बनाने के काम में आती है ।

लहेसना†—क्रि० सं० [श्य०] १ सचि के पल्लो को गाभे पर बैठाना ।
(बरतन बनानेवाले) । २ किमी लेप आदि को चढ़ाना ।
पोतना । पलस्तर करना ।

लह्व—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ स्वर । आवाज २ गाने का मधुर
स्वर । घुन [को०] ।

लह्वी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की चिड़िया ।

लागल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गल] १ खेत जोतने का हल । २. हल
के आकार का काष्ठ (को०) । ३ एक प्रकार की मजबूत लकड़ी
जो मकानों के बनाने में काम आती है (को०) । ४ फल तोड़ने
का एक प्रकार का लगगा जिसके सिरे पर एक जाली बँधी
रहती है (को०) । ५. चंद्रमा का अर्धान्त शृंग । ६ शिश्न ।
लिंग । ७ एक प्रकार का फूल । ८ एक प्रकार का चावल
(को०) । ९ ताड़ का पेड़ ।

लागलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलक] सुश्रुत के अनुसार हल के
आकार का वह धाव जो भगदर रोग में गुवा में शस्त्र चिकित्सा
करके किया जाता है ।

लागलकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गलकी] कलियारी नाम का
जहरीला पौधा ।

लागलग्रह—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलग्रह] खेतिहर । किसान ।

लागलचक्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलचक्र] फलित ज्योतिष में एक
प्रकार का चक्र जिसकी सहायता से खेती के सबध में शुभाशुभ
फल जाने जाते हैं । इसका आकार इस प्रकार का होता
है—



लागलदंड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलदण्ड] हरिस । हल का लट्ठा
[को०] ।

लागलध्वज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलध्वज] बलराम ।

लागलपद्धति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गलपद्धति] फूँड़ । हल जोतने
से बनी रेखाएँ [को०] ।

लांगलफाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलफाल] हल का फाल । हल
के अग्रभाग में लगी लोहे की नोक [को०] ।

लांगलमार्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलमार्ग] दे० 'लागलपद्धति' [को०] ।

लागला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गला] नारियल का पेड़ [को०] ।

लागलाख्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलाख्य] कलियारी नाम का
जहरीला पौधा ।

लागलि—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलि] १. कलियारी नाम का जहरीला

पीषा । २ मजीठ । ३ जलपीपल । ४ पिठवन । ५ कौछ ।
केवाँच । ६ गजपीपल । ७ चव्य । चाव । ८ महाराष्ट्री
या मराठी नाम की लता । ९ ऋषभक नाम की ऋष्टवर्गीय
श्रोपधि ।

लांगलिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलिक] एक प्रकार का स्थावर विप ।

लांगलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गलिका] दे० 'लांगलि' ।

लांगलिकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गलिकी] कलियारी ।

लांगलिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गलिनी] कलियारी । कलिहारी ।

लांगलो^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलिन] १ श्री बलराम जी । नारि-
यल । २ सर्प । साँव ।

लांगली^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गली] १ पुराणानुसार एक नदी का
नाम । २ कलियारी । ३ मजीठ । ४ पिठवन । ५ कौछ ।
केवाँच । ६ जलपीपल । ७ गजपीपल । ८ चव्य । चाव ।
९ महाराष्ट्री नाम की लता । १० ऋषभक नाम की ऋष्ट-
वर्गीय श्रोपधि ।

लांगलीश—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलीश] एक शिवालिक का नाम ।

लांगलीशाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गलीशाक] जलपीपल ।

लांगलीषा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गलीषा] हल का लट्टा । हरिस ।

लांगुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गुल] १ पूछ । दुम । २ शिश्न । लिंग ।

लांगुली—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गुली] १ बर । २ ऋषभ नामक
श्रोपधि । ३ पिठवन । ४ कौछ । केवाँच ।

लांगुलीका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गुलीका] पृश्निपर्णी । पिठवन ।

लांगूल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गूल] १ दुम । पूँछ । २ शिश्न । लिंग ।
३ घान्यकोष्ठ । घान्यागार (को०) ।

लौ—लांगूलबालन, लांगूलविद्वप = (१) दुम हिलाना । (२) पूँछ
फटकारना ।

लांगूला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गूला] १ केवाँच । काँछ । २ पिठवन ।
पृश्निपर्णी ।

लांगूली^१—सञ्ज्ञा पुं० [लाङ्गुली] बंदर । वानर ।

लांगूली^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गूली] १ ऋषभक नाम की ऋष्टवर्गीय
श्रोपधि । २ पिठवन । पृश्निपर्णी । लांगुलिका । लांगूलका ।
३ केवाँच । काँछ ।

लांचुल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाञ्चुल] घान्य । घान ।

लाछन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाञ्छन] १ चिह्न । निशान । २ दाग । ३
चंद्रमा का धब्बा (को०) । ४ आख्या । नाम (को०) । ५ भूमि-
सीमाकन । अकन (को०) । ६ दोष । कलक । जैसे,—तुम तो
यो ही सबको लाछन लगाया करते हो ।

क्रि० प्र०—लगाना ।

लाछना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाञ्छना] दे० 'लाछन' ।

लाछनित^७—वि० [सं० लाञ्छन] जिसे लाछन लगा हो । कलकित ।
दोषयुक्त । लाछित ।

लाछित—वि० [सं० लाञ्छित] १ चिह्नित । अकित । २ अभिहित ।

नामक । ३ अलकृत । सज्जित । ५ कलकित । जिसे लाछन
लगा हो (को०) ।

लाठनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाण्ठनी] पुश्चली । कुलटा । असती (को०) ।

लातकज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लान्तकज] जैनियों के एक प्रकार के देवताओं
का गण ।

लातव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लान्तव] जैनों के अनुसार सातवें स्वर्ग का
नाम ।

लापट्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाम्पट्य] १ लपट होने का भाव । लपटना ।
२ व्यभिचार ।

लौक^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक (= डठल या बाल)] १ जी, गेहूँ, चने,
अरहर इत्यादि के पके शोर कटे हुए पीसों का समूह जो भाड़ने
के वास्ते एकत्र हो । ताजी कटो हुई फसल । २ भूसा ।

लौक^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लक] १ कमर । कटि । उ०—लगाँ लौक
लोयन भरी लोयन लेति लगाय ।—विहारो (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—हालना ।—लगाना ।

२ परिमाण । मिकदार ।

लौंग—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाङ्गूल (= पूँछ)] घोती का वह भाग जो
दोनों जाँवों के नीचे से निकालकर पीछे की शोर कमर से खोस
लिया जाता है । काछ । जैसे,—घोती का लौंग ।

क्रि० प्र०—कसना ।—वाँघना ।—मारना ।—लगाना ।

लौंगड़ो—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाङ्गूल] हनुमान जी । (हिं०) ।

लौंग प्राइमर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] छापेखाने में एक प्रकार का टाइप
जिसका आकार आदि इस प्रकार का होता है - लौंग प्राइमर ।

लौघना—क्रि० सं० [सं० लङ्घन] १ किसी चीज के इस पार से उस
पार जाना । डौकना । नाँघना । जैसे,—लडके को लौघकर मत
जाया करो । २ किसी वस्तु को उछलकर पार करना । जैसे,—
यह नाला तो तुम यो ही लौघ सकने हो ।

सयो० क्रि०—जाना ।

लौघनी उड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लौघना + उड़ी (= कुदान)] मालखम
की एक कसरत जो साधारण उड़ी के ही समान होती है । इसमें
विशेषता यह है कि इसमें बीच का कुछ स्थान कूद या लौघकर
पार किया जाता है ।

लौच—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] रिशवत । घूस । उत्कोच ।

लौजी—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का घान ।

लौफिर्—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लौघना] बाधा । उल्लघन ।

लौङ्गा—सञ्ज्ञा पुं० [लिङ्ग, हिं० लङ] दे० 'लड' ।

लौवाँ—वि० [सं० लम्बक] दे० 'लवा' । उ०—(क) चारहि हँ खुर
वाके गरो अति लौवाँ सो मूँड उठावत है ।—सोताराम
(शब्द०) । (ख) सत योजन लौवाँ अरु अँवो ।—गिरधर
(शब्द०) । (ग) लौवाँ डग भरो ठौर ठौर गिर परी राम, देखी
जेहि घरी देख रही मुख रूप को ।—हृदयराम (शब्द०) ।
(घ) लहलही लौवाँ लटै लपटी सुलक पर ।—पयाकर
(शब्द०) ।

ला'—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लाँ] १ वे राजनियम या कानून जो देश या राज्य में शांति या सुव्यवस्था स्थापित करने के लिये बनाए जायँ। २ ऐसे राजनियमों या कानूनों का संग्रह। व्यवहारशास्त्र। धर्मशास्त्र। कानून। जैसे,—हिंदू लाँ। महमडन लाँ।

ला'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ ग्रहण या प्राप्ति की क्रिया। २ देना। प्रदान [को०]।

ला'—अव्य० [अ०] न। विना। नही। जैसे,—लाइलाज, लाइल्म, लापरवा आदि।

लाइ(पुं)।—सञ्ज्ञा पुं० [सं० अलात (= लुक), प्रा० अलाय] अग्नि। उ०—(क) तब तक हनुमत लाइ दई।—केशव (शब्द०)। (ख) ज्यो ज्यों बरसत घोर घन घनघमड गरुवाइ। त्यो त्यो परति प्रचड अति नई लगन की लाइ।—पद्माकर (शब्द०)।

लाइक वि० [अ० लाइक] दे० 'लायक'।

लाइची—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० एला + फा० ची ('च' प्रत्य०)] दे० 'इलायची'।

लाइट—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] प्रकाश। दीप्ति। रोशनी। उजाला।

लाइट हाउस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का स्तम्भ या मीनार जिसके सिरे पर एक बहुत तेज रोशनी रहती है जिसे जहाज चट्टान आदि से न टकराय, या और किसी प्रकार की दुर्घटना न हो। प्रकाशस्तम्भ।

लाइन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ कतार। श्रवली। २ पक्ति। सतर। ३ रेखा। लकीर। ४ रेल की सड़क। ५ घरो की वह पक्ति जिनमें सिपाही रहते हैं। बारिक। लैन। ६ व्यवसाय क्षेत्र। पेशा। जैसे,—(क) डाक्टरी लाइन अच्छी है, उसमें दो पैसे मिलते हैं। (ख) अनेक नवयुवक पत्रकार का काम करना चाहते हैं। राष्ट्रीय विद्यापीठों, गुरुकुलों के कितने ही स्नातक इस लाइन में आना चाहते हैं।

लाइन क्रिजयर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] रेलवे में सकेत या पत्र जो किसी रेलगाड़ी के ड्राइवर को यह सूचित करने के लिये दिया जाता है कि तुम्हारे जाने के लिये रास्ता साफ है। (बिना यह सकेत या पत्र पाए वह गाड़ी आगे नहीं बढ़ा सकता।)

क्रि० प्र०—देना।—पाना।—मिलना।

लाइफ—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लाइफ] जीवन। जिंदगी।

यौ०—लाइफ इन्श्योरेंस = जीवन बीमा। विशेष दे० 'बीमा'। लाइफ बॉय। लाइफवेल्ड = एक प्रकार की पेट्टी जो हुबने से बचाने के काम आती। लाइफबोट।

लाइफ बॉय—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लाइफबॉय] एक प्रकार का यंत्र जो ऐसे ढग से बना होता है कि पानी में डूबता नहीं, तैरता रहता है और डूबते हुए व्यक्ति के प्राण बचाने के काम में आता है। तरेंदा।

विशेष—यह कई प्रकार का होता है और प्रायः जहाजों पर रखा रहता है। यदि देवात् कोई मनुष्य पानी में गिर पड़े तो यह उसकी सहायता के लिये फेंक दिया जाता है। इसे पकड़ लेने से मनुष्य डूबता नहीं।

लाइफ बोट—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लाइफ बोट] एक प्रकार की नाव जो समुद्र में लोगों के प्राण बचाने के काम में लाई जाती है। जीवनरक्षक नौका।

विशेष—ये नावें विशेष प्रकार की बनी हुई होती हैं और जहाजों पर लटकती रहती हैं। जब तूफान या अन्य किसी दुर्घटना से जहाज के डूबने की आशंका होती है, तब ये नावें पानी में छोड़ी जाती हैं। लोग इनपर चढ़कर प्राण बचाते हैं।

लाइब्रेरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ वह स्थान जहाँ पढ़ने के लिये बहुत सी पुस्तकें रखी हो। पुस्तकालय। २ वह कमरा या भवन जहाँ पुस्तकों का संग्रह हो। पुस्तकालय।

लाइलाज—वि० [अ०] १ जिसकी चिकित्सा न हो सके। जिसका उपचार न हो। असाध्य। २ जिसका कोई उपाय न हो। दुष्कर [को०]।

लाइल्म—वि० [अ०] १. इल्म रहित। अशिक्षित। विद्याविहीन। २ नावाकिक। अपरिचित। अनजान [को०]।

लाइसेंस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दे० 'लैसंस'।

लाई'—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लावा, हि० लावा] उबाले हुए धान को सुखाकर गरम बालू में भूने से बनी हुई खीलें। धान का लावा।

लाई'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लाना (= लगाना)] छिपी शिकायत। चुगली। निंदा।

क्रि० प्र०—लगाना।

यौ०—लाई लुतरी = (१) चुगली। शिकायत। (२) वह जो इधर उधर दूसरे का चुगली खाती फिरती हो। एक से दूसरे की निंदा करनेवाली। चुगलखोर (स्त्री)।

लाई'—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] १ एक प्रकार का रेशमी कपड़ा। २ एक प्रकार की ऊनी चादर। ३ शराब की तलछट।

लाऊ—सञ्ज्ञा पुं० [हि० अलावू] लौकी। कद्दू। घिघ्रा। विशेष दे० 'घिया'।

लाक—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लॉक] ताला।

लाक अप—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लॉक अप] हवालात। जैसे,—अभियुक्त लाक अप में रखा गया है।

लाकड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लकड़ी] दे० 'लकड़ी'।

लाकर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लॉकर] सुरक्षा की दृष्टि से बको में ग्राहकों की मूल्यवान् वस्तुओं के रखने का स्थान।

लाकरी'—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लकड़ी] दे० 'लकड़ी'।

लाकिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तांत्रिकों के अनुसार एक योगिनी का नाम।

लाकुच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लकुच'।

लाकुटिक'—वि० [सं०] [वि० स्त्री० लाकुटिकी] लाठी या दंड धारण करनेवाला [को०]।

लाकुटिक^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अनुचर । सेवक । पहरेदार [को०] ।
 लाकेट—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह लटकन जो घड़ी की या और किसी प्रकार की पहनने की जड़ी में शोभा के लिये लगाया जाता है और नीचे की ओर लटकता रहता है ।
 लालकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सीता का एक नाम ।
 लाल्पा—वि० [सं०] १ लक्ष्मण सबधी । लक्ष्मण का । २ लक्ष्मणों का जानकार ।
 लाल्पाक^१—वि० [सं०] १ जिससे लक्ष्मण प्रकट हो । २ लक्ष्मण सबधी । ३ शब्द की लक्ष्मणा शक्ति द्वारा गम्य वा प्राप्त (को०) । ४ जो मुख्य न हो । अप्रधान । गौण (को०) । ५ पारिभाषिक (को०) ।
 लाल्पाक^२—सञ्ज्ञा पुं० १ वह छद्म जिसके प्रत्येक चरण में ३२ मात्राएँ हो । २ वह जो लक्ष्मणों का ज्ञाता हो । लक्ष्मण जाननेवाला । ३ वह अर्थ जो शब्द की अभिधा शक्ति द्वारा व्यक्त न हो अपितु शक्ति द्वारा व्यक्त हो (को०) । ४ पारिभाषिक शब्द लक्ष्मणा (को०) ।
 लाल्पाक्य—वि० [सं०] १ लक्ष्मणों का जानकार । लक्ष्मण बतानेवाला । २ लक्ष्मण सबधी (को०) ।
 लाल्पा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लाख । लाह ।
 लाल्पागृह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाख का वह घर जिसे दुर्घोषन ने वारणावत में पांडवों को जला देने की इच्छा से बनवाया था ।
 विशेष—दुर्घोषन की इस दुर्भविना की सूचना पाकर आग लगने से पहले ही पांडव लोग इस घर से निकल गए थे ।
 लाल्पातरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पलास का वृक्ष ।
 लाल्पातैल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का तेल जो साधारण तेल, हल्दी और मर्जठ आदि डालकर पकाने से बनता है । यह बाह्य और ज्वर का नाशक माना जाता है ।
 लाल्पादि तैल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वैद्यक में एक प्रकार का तेल ।
 विशेष—साधारण तेल में लाल, दूध या दही, लाल चदन, असगव, हलदी, दास हलदी, मुलेठी, कुटकी, रेणुका आदि ओषधियाँ पकाने से लाल्पादि तैल बनता है । यह जीर्णज्वर और राज्यक्ष्मा आदि रोगों को दूर करनेवाला और बलवधक माना जाता है ।
 लाल्पाप्रसद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पठनी लोघ ।
 लाल्पाप्रसादन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल लोघ ।
 लाल्पाभवन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लाल्पागृह' [को०] ।
 लाल्पास्त - वि० [सं०] लाल्पा में रजित । लाल्पा से रंगा हुआ [को०] ।
 लाल्पास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महावर, जो पानी में लाख औटाकर बनाते हैं ।
 लाल्पावृक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बाक । पलास । २ कोशाअ । कोसम ।
 लाल्पाक—वि० [सं०] १ लाल्पा सबधी । लाख का । २ लाख वा बना हुआ । लाखी ।
 लाख^१—वि० [सं० लक्ष, प्रा० लख] १ सौ हजार । २—लाखन हू

की भीर से आँखि वही चल जाहि । (शब्द०) । २ (लक्ष्मणा से) बहुत अधिक । गिनती में बहुत ज्यादा ।

मुहा०—लाख टके की बात = अत्यंत उपयोगी बात ।

लाख^२—सञ्ज्ञा पुं० सौ हजार की मस्या जो इस प्रकार लिखी जाती है ।—१,००,००० ।

लाख^३—हिं० वि० बहुत । अधिक । जैसे,—तुप लाख कहो, मैं एक न भानूँगा ।

मुहा०—नाख से लोव होना = अत्यधिक से अत्यल्प हो जाना । सब कुछ से कुछ न रह जाना । उ०—बहुतक भुवन सोह अंतरीखा । रहे जो लख भए ते लीखा ।—जायसी (शब्द०) ।
 लाख का घर राख हाना = लख राए का घर या खानदान नाश होना ।

लाख^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाल्पा] १ एक प्रकार का प्रसिद्ध लाल पदार्थ जो पलाम, पीपल, कुमुम, बेर, अरहर आदि अनेक प्रकार के वृक्षों की टहनियों पर कई प्रकार के कीड़ों से बनता है । लाह ।

विशेष एक प्रकार के बहुत छोटे कीड़े होते हैं, जिनकी कई जातियाँ होती हैं । ये कीड़े या तो कुछ वृक्षों पर आपसे आप हो जाते हैं या इमी लाल पदार्थ के लिये पाले जाते हैं । वृक्षों पर ये कीड़े अपने शरीर से एक प्रकार का लसदार पदार्थ निकालकर उससे घर बनाते हैं और उसी में बहुत अधिक अंडे देते हैं । कीड़े पालनेवाले बैसाख और अगहन में वृक्षों की शाखाओं पर से खुरचकर यह लाल द्रव्य निकाल लेते हैं और तब इसे कई तरह से साफ करके काम में लाते हैं । इनमें कई प्रकार के रंग, तेल, वारनिश और चूड़ियाँ, कुमकुमे आदि द्रव्य बन्ते हैं । चपड़ा भी इसी से तैयार होता है । लाख केवल भारत में ही होती है, और कहीं नहीं होती । यहीं से यह सारे ससार में जाती है । यहाँ इसका व्यवहार बहुत प्राचीन काल से, संभवतः वैदिक काल से, होता आया है । पहले यहाँ इमके काड़े और चमड़े आदि रंगने थे और पैर में लगाने के लिये अनता या महावर बनाते थे । वैद्यक में इमके कटु, स्निग्ध, कपाय, हलकी, शीतल, बलकारक और कफ, रक्तवित्त, हिचकी, खाँसी, ज्वर, विसर्प, कुष्ठ, रुधिरविकार आदि को दूर करनेवाली माना है ।

पर्या०—कीटजा । रक्तमातृका । अलक्तक । जतुका ।

२ लाल रंग के वे बहुत छोटे छोटे कीड़े जिनसे उक्त द्रव्य निकलता है । इनकी कई जातियाँ होती हैं ।

लाखना^१—क्रि० अ० [हिं० लाख + ना (प्रत्य०)] लाख लगाकर बरतन या और किसी चीज में का छेद बंद करना । उ०—शील तो सिधारयो तव सग न सिधारी जब तक भलो आजहू लौं फूंगे घट लाखनी ।—हृदयराम (शब्द०) ।

लाखना(पु)^२—क्रि० सं० [सं० लक्ष्मण] लख लेना । जान लेना । समझ लेना । उ०—सुनि कै महादेव कै भाखा । सिद्ध पुरुष राजें मन लाखा ।—जायसी (शब्द०) ।

लाखपती—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष्मणपति] दे० 'लखपती' ।

लाखा^१—सञ्ज्ञा पुं [हिं० लाख] १ लाख का बना हुआ एक प्रकार का रंग जिसे स्त्रियाँ सुदरता के लिये होठों पर लगाती हैं ।

क्रि० प्र०—जमाना ।—जगाना ।

२ गेहूँ के पौधों में लगनेवाला एक रोग जिससे पौधे की नाल लाल रंग की होकर सड़ जाती है । गेरुआ । कुकुहा ।

विशेष—यह एक प्रकार के बहुत ही सूक्ष्म लाल रंग के कीड़ों का समूह होता है । इसे गेरुआ या कुकुहा भी कहते हैं ।

लाखा^३—सञ्ज्ञा पुं [हिं० लाख (=लक्ष)] एक प्रसिद्ध भक्त जो मारवाड़ देश का निवासी था ।

लाखागृह—सञ्ज्ञा पुं [सं० लाक्षागृह] दे० 'लाक्षागृह' ।

लाखिराज—वि० [अ० लाखिराज] (भूमि) जिसका लगान न देना पड़ता हो । जिमपर कर न हो । जैसे,—लाखिराज जमीन ।

लाखिराजी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लाखिराज + ई (प्रत्य०)] वह भूमि जिसपर कोई लगान न हो ।

लाखी^१—वि० [हिं० लाख + ई (प्रत्य०)] लाख के रंग का । मटमैला लाल ।

लाखी^२—सञ्ज्ञा पुं मटमैला लाल रंग । लाख का सा रंग ।

लाखी^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लाख] लाख के रंग का घोडा ।

लाग—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लगना] १ संपर्क । सवध । लगाव । ताल्लुक । जैसे,—(क) इन दोनों में कहीं से कोई लाग तो नहीं मालूम होती । (ख) यह डडा अघर में बेलाग खडा है । २ प्रेम । प्रीति । मुहब्बत । ३ लगावट । लगन । मन की तत्परता । उ०—वरणत मान प्रवाम पुनि निरखि नेह की लाग ।—पद्माकर (शब्द०) । ४ युक्ति । तरकीब । उगय । ५ वह स्वांग आदि जिसमें कोई विशेष कौशल हो और जो जल्दी समझ में न आवे । जैसे,—किसी के पेट या गर्दन के आर पार (वास्तव में नहीं, बल्कि केवल कौशल से) तलवार या कटार गई हुई दिखलाना । ६ प्रतिस्पर्धा । प्रतियोगिता । चढा ऊपरी ।

घौं—लाग डिट ।

७ बँर । शत्रुता । दुश्मनी । झगडा ।

क्रि० प्र०—मानना ।—रखना ।

८ जाडू । मन्त्र । टोना । ९ वह चेष जिससे चेचक का अथवा इमी प्रकार का और टीका लगाया जाता है । १०. वह नियत धन जो विवाह आदि शुभ अवसरों पर ब्राह्मणों, भाटों, नाइयों आदि को अलग अलग रस्मों के सबध में दिया जाता है । ११ घातु को फूँषकर तैयार किया हुआ रस । भस्म । १२. दैनिक भोजन सामग्री । रसद । (बु देल०) । १३ भूमि-कर । लगान । उ०—अपनी लाग रोडू लेखा करि जो कछु राज अश को दाम ।—सूर (शब्द०) । १४ एक प्रकार का नृत्य । उ०—अरु लाग घाउ रायरगाल ।—केशव (शब्द०) ।

लागा^१—क्रि० वि० [हिं० लौं] पर्यंत । तक । उ०—मासेक लाग

चलत तेहि बाटा । उतरे जाइ समुद के घाटा ।—जायसी (शब्द०) ।

लागडॉट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लाग (=बँर) + डाँट] १ शत्रुता । दुश्मनी । बँर । २ प्रतिस्पर्धा । प्रतियोगिता । चढाऊपरी ।

लागडॉट^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लगनदण्ड] नृत्य की एक क्रिया ।

लागत—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लगना] वह खर्च जो किसी चीज की तैयारी या बनाने में लगे । कोई पदार्थ प्रस्तुत करने में होनेवाला व्यय । जैसे,—(क) इस मकान पर १०,०००) लागत आई है । (ख) तुम्हारा यह लिहाफ कितनी लागत का है ? (ग) तुमसे हम लागत भर लेंगे, मुनाफा नहीं लेंगे ।

क्रि० प्र०—आना ।—बँटना ।—लगाना ।

लागना^१—क्रि० अ० [हिं० लगना] दे० 'लगना' ।

लागना^२—सञ्ज्ञा पुं [हिं० लगना] १. वह जो किसी की टोह में लगा रहता हो । २. शिकार करनेवाला । अहेरी । उ०—पाँचवँ नग सो तहँ लागना । राजपखि पेखा गरजना । जायसी (शब्द०) ।

लागर—वि० [फा० लागूर] दुर्बल । क्षीण [को०] ।

लागरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा० लागूरी] दुर्बलता । क्षीणता । कमजोरी [को०] ।

लागि^१—अव्य० [हिं० लगना] १. कारण । हेतु । २ निमित्त । लिये । खातिर । वास्ते । उ०—(क) जे देव देवी सेइ अति हित लागि चित्त सनमानि कै । ते यंत्र मन्त्र सिखाय राखत सबनि सो पहिचानि कै ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) तुमहि लागि घरिहीं नर देहा ।—तुलसी (शब्द०) । ३ से । द्वारा । उ०—आहि जो मारै विरह कै आगि उठै तेहि लागि । हस जो रहा सरीर महँ पाँख जरा गा भागि ।—जायसी (शब्द०) ।

लागि^२—क्रि० वि० [हिं० लग या लौं] तक । पर्यंत । उ०—धन अमराउ लाग चहुँ पासा । उठा भूमि हुत लागि अकासा ।—जायसी (शब्द०) ।

लागुडिक—वि० [सं०] १ लठ्ठवद । लाठी बाँधे हुए । २ पहरेदार [को०] ।

लागू^१—वि० [हिं० लगना] १ जो लग सकता हो या लगने योग्य हो । प्रयुक्त होने योग्य । चरितार्थ होनेवाला । जैसे,—वही नियम यहाँ भी लागू है ।

लागू^२—सञ्ज्ञा पुं [सं० लगनक] प्रेमी । उ०—माँवलिया मेरे मन को लागू नित इत आवै ।—घनानंद, पृ० ४८२ ।

लागों—अव्य० [हिं० लगना] वास्ते । लिये । उ०—पुत्र शरीर परा तव आगे । रोवत मृपा जीव के लागे ।—जायसी (शब्द०) ।

लाघरक—सञ्ज्ञा पुं [सं०] हलीमक नामक रोग ।

लाघरकोलस—सञ्ज्ञा पुं [सं०] एक प्रकार का पाडू रोग । दे० 'लाघरक' [को०] ।

लाघव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. लघु होने का भाव । लघुता । हलकापन या छोटापन । २ थोड़ा होने का भाव । कमी । अल्पता । ३ हाथ की सफाई । फुर्ती । तेजी । जैसे, हस्तलाघव । ४ नपुसकता । ५ आरोग्यता । नीरोगता । तदुत्ती । ६ विवेक का अभाव । विवेकहीनता (को०) । ७ महत्वहीनता । कुछ महत्व का न होना (को०) । ८ चपलता । चंचलता । जैसे, बुद्धिलाघव (को०) ।

लाघव—अव्य० [सं०] फुरती से । जल्दी से । सहज से । उ०—अति लाघव उठाय धनु लीन्हा ।—तुलसी (शब्द०) ।

लाघवकारी—वि० [सं० लाघवकारिन्] क्षुद्र । अपमानजनक । अशोभन ।

लाघविक—वि० [सं०] लघु । छोटा (को०) ।

लाघवी^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाघव + ई (प्रत्य०)] फुर्ती । शीघ्रता ।

लाघवी^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाघविन्] जादूगर (को०) ।

लाचार^१—वि० [फ्रा०] १ जिसका कुछ वश न चलता हो । विवश । मजबूर । २ असहाय । अशक्त । दीन दुखी ।

लाचार^२—क्रि० वि० विवश होकर । मजबूर होकर ।

लाचारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [फ्रा०] लाचार होने का भाव । मजबूरी । विवशता ।

लाची—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० इलायची] दे० 'इलायची' । उ०—करत प्रनामासीस पान लाची त्यों धितरित ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० ३३ ।

लाचीदाना—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० इलायची + दाना] खाली चीनी की एक प्रकार की मिठाई जो छोटे छोटे गोल दानों के आकार की होती है । कभी कभी इसके अंदर सोंफ या इलायची का दाना भी भरा होता है । इलायची दाना ।

लाछन^(१)—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाच्छन] दे० 'लाछन' ।

लाछो^(१)—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लक्ष्मी, प्रा० लच्छि, लच्छी, वँग० लक्खी (लाखी ?)] लक्ष्मी ।

लाज^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लज्जा] लज्जा । शर्म । हया ।

क्रि० प्र०—प्राना ।—करना ।

मुहा०—लाज रखना = प्रतिष्ठा बचाना । आबरू खराब न होने देना । लाज से गठरी होना या गढ जाना = अत्यंत शर्मिदा होना । लज्जा के कारण नीचे सिर किए रहना ।

लाज^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ खस । उशीर । २ पानी में भीगा हुआ चावल । ३ धान का लावा । खील ।

लाजक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धान का भूना हुआ लावा । लाई ।

लाजना^(१)—क्रि० अ० [हिं० लाज + ना (प्रत्य०)] लज्जित होना । शरमाना । उ०—(क) ये अरुन अवर लखि लखि विवाफल

लाज^(२)—प्रताप (शब्द०) । (ख) जेहि तुरग पर राम विराजे । गति विलोकि खगन

लाजपेया—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह मांड जो खोई या लावा उवालन से निकले । इसका व्यवहार

लाजभक्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खोई या लावा का पकाया हुआ भात, जो रोगियों को पथ्य में दिया जाता है ।

लाजमण्ड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाजमण्ड] लावा का मांड । दे० 'लाजपेया' (को०) ।

लाजवत^(१)—वि० [हिं० लाज + वत (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० लाजवती] जिसे लज्जा ही । शर्मदार । हयादार । उ०—लाजवत तव सहज सुभाऊ । निज गुन निज मुख कहसि न काऊ ।—मानस, ६।२६ ।

लाजवती—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लज्जावती, हिं० लजालू] लजालू नाम का पौधा । छुईमुई ।

लाजवर्त—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० लाजवर्द] दे० 'लाजवर्द' । उ०—जनु लाजवर्त शिला जटित क्षुत्रीन राजी सोहती ।—प्रेमघन०, भा० १, पृ० ११७ ।

लाजवर्द—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] १. एक प्रकार का प्रसिद्ध कीमती पत्थर जिसे संस्कृत में 'राजवर्तक' कहते हैं । रावटी ।

विशेष—यह बगाली रंग का होता है और इसके ऊपर मुनहने छींटे होते हैं । यह वातज रोगों के लिये बलकारी और जन्माद आदि रोगों में उपकारी माना जाता है । आँखों में सुरमा लगाने के लिये इसकी मलाई भी बनती है जो बहुत अधिक गुणकारी मानी जाती है ।

२ विलायती नील जो गंधक के मेल से बनता और बहुत बढ़िया होता है ।

लाजवर्दी—वि० [फ्रा०] लाजवर्द के रंग का । हलका नीला ।

लाजवाय—वि० [फ्रा०] १ जिसके जोड़ का और कोई न हो । अनुपम । बेजोड़ । २ जो कुछ जवाब न दे सके । निरतर । चुप । खामोश ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

लाजशक्त्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खोई या लावा का सत्तू ।

लाजहोम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल का एक प्रकार का होम जिसमें खोई या धान का लावा आहुति में दिया जाता था ।

लाजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ चावल । २ भूनकर फुलाया हुआ धान । खील । लावा । उ०—अच्छत अकुर रोचन लाजा । मञ्जुल मजरि तुलसि विराजा ।—तुलसी (शब्द०) ।

यौ०—लाजाहुति = विवाह में एक प्रकार का होम जो धान के लावे से होता है । लाजाहोम = लाजहोम ।

लाजिक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ तर्क । २ तर्कशास्त्र ।

लाजिम—वि० [अ० लाजिम] १ जो अवश्य कर्तव्य हो । २ उचित । मुनासिब । वाजिब । ३ सबद्ध । लगा हुआ । सटा हुआ (को०) ।

लाजिमा—वि० [अ० लाजिमहू.] १. आवश्यक वस्तु । जरूरी सामान । २ अनिवार्य । लाजिमी (को०) ।

लाजिमी—वि० [अ० लाजिम + ई (प्रत्य०)] जो अवश्य कर्तव्य हो । जरूरी । आवश्यक ।

लाट^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लाट] १ किन्नी प्रात या देश का सबसे बड़ा शासक । गवर्नर ।

लाट^१—सञ्ज्ञा पुं० [अं० लाँट] बहुत सी चीजों का वह विभाग या समूह जो एक ही साथ रखा, बेचा या नीलाम किया जाय।

यौ०—लाटबंदी।

लाट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लट्टा ?] लकड़ी, पत्थर या किसी धातु का बना हुआ मोटा और ऊँचा खम्भा। जैसे,—अशोक की लाट, कुतुब साहब की लाट, तालाब के बीच में की लाट, कोल्हू के बीच की लाट, आदि।

लाट^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्राचीन देश जहाँ अब भडौच, अहमदाबाद आदि नगर हैं। गुजरात का एक भाग। २ इस देश के निवासी। ३ एक अनुप्रास जिसमें शब्द और अर्थ एक ही होते हैं, पर अन्वय में हेरफेर होने से वाक्यार्थ में भेद हो जाता है। ('शाब्दस्तु लाटानुप्रासो भेदे तात्पर्य मात्रतः।'—मम्मट, काव्यप्रकाश)। ४ वह लम्बा बाँध जो किसी मैदान के पानी के बहाव को रोकने के लिये बनाया जाता है। ५ फटा पुराना कपड़ा या गहना (को०)। ६ कपड़ा। वस्त्र (को०)। ७ बालको जैसी भाषा (को०)। ८ शिक्षित व्यक्ति (को०)।

लाटक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० लाटिका] लाट देश संबंधी।

लाटपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दारचीनी।

लाटपर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दारचीनी।

लाटरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लाँटरी] एक प्रकार की योजना जिसका आयोजन विशेषकर किसी सार्वजनिक कार्य के लिये धन एकत्र करने के निमित्त किया जाता है और जिसमें लोगों को किस्मत आजमाने का मौका मिलता है।

विशेष—इसमें एक निश्चित रकम के टिकट बेचे जाते हैं और यह घोषणा की जाती है कि एकत्र धन में से इतना धन उन लोगों को वाँटा जायगा जिनके नंबर या नाम की चिट्टें पहले निकलेगी। टिकट लेनेवाला के नाम या नंबर को चिट्टें किसी सट्टक आदि में डाल दी जाती हैं और कुछ निर्वाचित विशिष्ट व्यक्तियों की उपस्थिति में वे चिट्टें निकाली जाती हैं। जिनके नाम को चिट सबसे पहले निकलती है, उसे पहला पुरस्कार अर्थात् सबसे बड़ी रकम दी जाती है। इस प्रकार पहले निकलनेवालों में निश्चित धन यथाक्रम बाँट दिया जाता है। इसके लिये सरकार से अनुमति लेनी पड़ती है।

लाटाँ—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ भूने हुए महुआ और तिलो को कुटकर बनाए हुए लड्डू। २ भुना हुआ महुआ।

लाटानुप्रास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह शब्दालंकार जिसमें शब्दों को पुनरुक्ति तो हाती है, परन्तु अन्वय में हेरफेर करने से तात्पर्य भिन्न हो जाता है। जैसे,—पीय निकट जाके नहीं, धाम चाँदनी ताहि। पीय निकट जाके, नहीं धाम चाँदनी ताहि। दे० 'लाट'—३'।

लाटिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ साहित्य में चार प्रकार की रचनाओं में से एक प्रकार की रचना या रीति जिसमें बँदरों और पाचालों दोनों ही रीतियों का कुछ कुछ अनुसरण किया जाता

है। इसमें छोटे छोटे पद और छोटे छोटे समास हुआ करते हैं। २ एक प्राकृत बोली (को०)।

लाटी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [अनु० लट लट (=गाढ़ा या चिपचिपा होना)] १. वह अवस्था जिसमें मुँह का धूक और होठ सूख जाते हैं। ३.—सूखे हिं अचर लागि मुँह लाटी। जिउ न जाइ उर अवधि कपाटी।—तुलसी (शब्द०)।

क्रि० प्र०—लगना।

लाटी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ लाटिका रीति। २. एक प्राकृत बोली (को०)।

लाटीय—वि० [सं०] दे० 'लाटक' [को०]।

लाठ^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लाट] दे० 'लाट'।

लाठ^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लट्ठा] दे० 'लाट'।

लाठी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० यष्टी, प्रा० लट्ठी] वह लंबी और गोल बड़ी लकड़ी जिसका व्यवहार चलने में सहारे के लिये अथवा मारपीट आदि के लिये होता है। डंडा। लकड़ी।

क्रि० प्र०—बाँधना।—मारना।—रखना।—लगाना।

मुहा०—लाठी चलना=लाठियों की मारपीट होना। लाठी चलाना=लाठी से मारना। लाठी से मारपीट करना। लाठी बाँधना=लाठी लिए रहना। दंड धारण करना।

लाठी चाज—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लाठी+अं० चार्ज] भीड़ को हटाने के लिये पुलिस द्वारा लाठी चलाना।

लाड़—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लालन] बच्चों का लालन। प्यार। दुलार।

क्रि० प्र०—करना।—लडाना।

यौ०—लाडचाव।

लाड़लड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का साँप जो प्रायः वृक्षों पर रहा करता है।

लाड़लडैता—वि० [हिं० लाड+लडाना+ऐता (प्रत्य०)] जिसका बहुत अधिक लाड हो। प्यारा। दुलारा। उ०—तुम रानी वसुदेव गेहनी हों गंवारि ब्रजवासी। पठै देहू मेरो लाडलडैतो वारों ऐसी हाँसी।—सूर (शब्द०)।

लाड़ला—वि० [हिं० लाड=ला (प्रत्य०)] [वि० स्त्री० लाडली] जिसका लाड किया जाय। प्यारा। दुलारा।

लाड़ाँ—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लाड] [स्त्री० लाड़ी, लाड़ी] वर। दूल्हा।

लाड़िक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ भृत्य। दास। नौकर। २ लडका [को०]।

लाड़ूँ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लड्डू] १. लड्डू। मोदक। २ वक्षियों नारंगी।

लाड़िया—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] वह दलाल जो दूकानदार से मिला रहता है और ग्राहकों को धोखा देकर उसका माल विक्रम करता है।

लाड़ियापन—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लाड़िया=पन (प्रत्य०)] १ लाड़िया का काम। २ घुर्तता। चालाकी। धोखेबाजी।

लात^१—स्त्री० स्त्री० [देश० लता, लातना ?] १ पैर। पाँव। पद। उ०—तेहि अगद कहँ लात उगई। गहि पद पटकयो भूमि

भंगई।—तुलसी (शब्द०) । २ पैर से किया हुआ आघात या वार । पदाघात । पादप्रहार ।

मुद्दा०—लात खाना = (१) पैरो की ठोकण या मार सहना (२) मार खाना । लात चलाना = लात से मारना । लात से आघात करना । लात जाना = गौ भैंस आदि का दूध देते समय दूहन-वाले को लात मारकर दूर हट जाना । विमुकना । लात मारना = तुच्छ समझकर छोड़ देना । त्याग देना । जैसे,—(क) हम ऐसी दौलत को लात मारते हैं । (ख) तुमने जान बूझकर रोजी को लात मारी है । लात मारकर खड़ा होना = बहुत अधिक दृष्टावस्था से, विशेषतः स्त्रियों का प्रसव के उपरांत, नीरोग होकर चनेने फिरने के योग्य होना ।

लात^२—वि० [स०] गृहीत । प्राप्त [को०] ।

लातरा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लतरी] पुराना जूना ।

लातरा^२—वि० [अश०] लालची । (बच्चों के लिये प्रयुक्त) ।

लातरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लात + री] लतरी । पुराना जूना ।

लाति—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] लेना । प्राप्त करना [को०] ।

लातीनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] रुमियों की प्राचीन भाषा । लैटिन भाषा [को०] ।

लाथा^१—सञ्ज्ञा पुं० [अश०] व्याज । वहाना ।

लाद—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लादना] १ किसी को बँल या गाड़ी पर रखकर एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाने का कार्य । लादने की क्रिया ।

यो०—लाद फाँद = लादने की क्रिया ।

२ मिट्टी का वह ढोका जो पानी निकालने की ढेंकी के दूसरी ओर लगा रहता है । ३ पेट । उदर (जिसमें अंतर्डी आदि भरी रहती है) ।

मुद्दा०—लाद निकलना = पेट फूलकर आगे निकलना । तोड़ निकलना ।

४ आंत । अंतर्डी । जैसे,—उसने पेट में ऐसी छुरी मारी कि लाद निकल पड़ी ।

लादना—क्रि० म० [सं० लव्य, प्रा० लद्ध (= प्राप्त) + हि० ना (प्रत्य०)] १ किसी चीज पर बहुत सी वस्तुएँ रखना । एक पर एक चीजें रखना । जैसे,—गाड़ी पर असबाब लादना । २ गाड़ी या पशु को भार से युक्त करना । ढोने या ले जाने के लिये वस्तुओं को भरना । जैसे,—बँल लादना, गाड़ी लादना ।

यो०—लादना फाँदना = लादना और रखना ।

३ किसी के ऊपर किसी बात का भार रखना । जैसे,—तुम सब काम मुझ पर ही लादते चले जाते हो ।

सयो० क्रि०—देना ।

४ गुरती उठने समय विपत्ती को अपनी पीठ या कमर पर उठा लेना । (पटल०) ।

सयो० क्रि०—लेना ।

लादाचा—वि० [अ०] जिसका कोई दावा न रह गया हो । जो

अधिकार से रहित हो गया हो । जैसे,—उसने अपने लडके को ला दावा कर दिया है । (कानून) ।

मुद्दा०—ला दावा लिखना = यह लिखना कि अमुक वस्तु पर अब हमारा कोई दावा या अधिकार नहीं रह गया । दस्तवरदारी लिखना ।

लादिया—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लादना + इया (प्रत्य०)] वह जो किसी चीज पर बोझ लादकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाता हो ।

लादी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लादना] १ कपडों की वह गठरी जो घोवी गदहे पर लादता है । २ वह गठरी जो किसी पशु पर लादी जाती है ।

लाधना^१—क्रि० स० [सं० लव्य, प्रा० लद्ध + हि० ना (प्रत्य०)] प्राप्त करना । हासिल करना । पाना । उ०—(क) इन सब काहु न शिव अवरारवे । काहु न इन समान फल लाधे ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) छिन छिन परसत अग मिलावत प्रेम प्रगट ह्वै लाधा ।—सूर (शब्द०) ।

लानग—सञ्ज्ञा पुं० [अश०] एक प्रकार का अगूर ।

विशेष—यह कुमाऊँ और देहरादून में अधिकता में होता है । इससे अर्क निकाला जाता है और एक प्रकार की शराब बनाई जाती है ।

लान^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लॉन] हरी घास का बड़ा मैदान जिसपर गेंद आदि खेलते हैं । उ०—कहीं चमन, तो कहीं लान ।—प्रेमघन०, भा० २, पृ० १७६ ।

लान^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] धिक्कार । फटकार [को०] ।

लान टेनिस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] गेंद का एक खेल जो छोटे से मैदान में खेला जाता है ।

लानत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लानत, लानत] धिक्कार । फटकार । भर्त्सना । उ०—हजार लानत उस दिल पर जिसमें कि इश्के दिलदार न हो ।—भारतेंदु ग्र०, भा० २, पृ० ५६६ ।

यो०—लानत मलामत = धिक्कार और फटकार । जैसे—मामूली बात पर इतनी लानत मलामत, ठीक नहीं ।

मुद्दा०—लानत बरसना = लज्जित होना । तिरस्कृत होना । लानत की बौछार = अत्यधिक तिरस्कार । लानत भेजना = ठुकरा देना । धिक्कारना ।

लानती—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लानत + ई (प्रत्य०)] वह जो सदा लानत मलामत सुनने का श्रम्यस्त हो । सदा फिटकार मुचनेवाला । वह जो तिरस्कार करने लायक हो ।

लाना^१—क्रि० अ० [हि० लेना + आना, ले आना] १ कोई चीज उठाकर या अपने साथ लेकर आना । कोई चीज उभ जगह पर ले जाना, जहाँ उसे ग्रहण करनेवाला हो, अथवा जहाँ ले जानेवाला रहता हो । ले आना । जैसे,—(क) जरा वह किताब तो लाना । (ख) आप जब जाते हैं, तब कुछ न कुछ लाते हैं । (ग) उनकी स्त्री मैंके से बहुत सा धन लाई है ।

सयो० क्रि०—देना ।

२ प्रत्यक्ष करना । उपस्थित करना । सामने रखना । जैसे,—(क) अथ आप यह नया रंग लाए हैं । (ख) वह जब धाता है, तब नया रूप लाता है । (ग) अब वह उनपर मुकदमा लावेगा ।
३ उत्पन्न करना । पैदा करना । देना या सामने रखना । जैसे,—इस साल ये पेड़ बहुत फल लाए हैं ।

लाना^१—क्रि० म० [हि० लाय (=आग) + ना (प्रत्य०)] आग लगाना । जलाना । उ०—(क) कत वीसलोचन विलोकिए कुमत फल, ब्याल लक लाई कपे रांड की सी भोपडी ।—तुनसी (शब्द०) । (ख) गापद पयोवि कार होलिका ज्यौ लाय लक, निपट निणक पर पुर गलवक भो ।—तुनमी (शब्द०) ।

लाना^२—क्रि० स० [हि० लगाना] लगाना । उ०—(क) राम कुचरचा करहि सब सीतहि ताइ कलक ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) लै परजक निमक नवली को लाय गरे से लगे गहि गुमन ।—शम्भु (शब्द०) ।

मुहा०—लाना लगाना या लाने लगाना = ऋण के बदले में कोई पदार्थ दे देना या ले लेना ।

लाने^१—अव्य० [हि० लाना (=लगाना)] वास्ते । लिये । (बुदेल०) । उ०—तू अलवेली अकली डरे किन, क्यों डरौ मेरी सहाय के लान । है सखि सग मनोभव सो भट कान लौ वान सरासन ताने ।—पद्मकर (शब्द०) ।

लाप—सञ्ज्ञा पु० [सं०] १. सलाप । बोलना । बात करना । २. कलरव । चहचहाना । उ०—लाप के प्रलाप उनमाद के सँताप व्याधि, पापिन की आप नेकु बेग सुधि लाहियौ ।—घनानन्द, पृ० ५९२ ।

लापता—वि० [अ० ला (=विना) + हि० पता] १. जिसका पता न लगे । जो कहीं मिल न रहा हो । खोया हुआ । २. गुप्त । गायब ।

क्रि० प्र०—करना ।—रहना ।—होना ।

लापनिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] गपशप । बातचीत । वार्तालाप [को०] ।

लापरवा—वि० [अ० ला + फा० परवाह] [सञ्ज्ञा स्त्री० लापरवाई] १. जिसे किसी बात की परवा न हो । बेफिक्र । २. जो सावधानी से न रहता हो । असावधान ।

लापरवाह—वि० [फा०] दे० 'लापरवा' ।

लापरवाही—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० ला + फा० परवाह] १. लापरवा होने का भाव । बेफिक्री । २. असावधानी । प्रमाद ।

क्रि० प्र०—करना ।—दिखलाना ।—होना ।

लापसी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लप्सिका] दे० 'लपसी' । उ०—लुबुई नलित लापसा सोहे । स्वादु गुयास सहज मन मोहे ।—सुर (श-२०) ।

लापिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की पहेली या बुझीनल [को०] ।

लापी—वि० [सं० लापिन्] १. आलापी । बालनवाला । २. पछतानेवाला [को०] ।

लापु—सञ्ज्ञा पु० [सं० आलाप] दे० 'लाप' । उ०—चित धरि पितु वानी सूरज मानी कर जोरै करि लापु ।—सुजान०, पृ० २६ ।

लापु^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. एक वनीपधि । रदवती । रदती । २. एक श्रौजार [को०] ।

लाप्य—वि० [सं०] कथनीय । कहने योग्य । बोलने योग्य [को०] ।

लाव, लावक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लवा नामक पत्थी जिन्का प्राय शिकार करते हैं [को०] ।

लावर^१—वि० [सं० लपन (=वक्रता)] दे० 'लवार' । उ०—काल्हि के लावर वीस त्रिमे परौ वीस त्रिसे त्रन ते न टरा जू ।—केशव (शब्द०) ।

लावु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लौकी । कद्दू [को०] ।

लावुफायन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जैमिनि द्वारा उल्लिखित एक प्राचीन दार्शनिक विद्वान् [को०] ।

लावुकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की बीणा [को०] ।

लावू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लावु' ।

लाभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मिलना । प्राप्ति । लब्धि । २. फायदा । मुनाफा । नफा । ३. उपकार । भलाई । ४. सुख । प्रसन्नता [को०] । ५. विजय । परिग्रहण । वश । पराज [को०] । ६. प्रत्यक्ष ज्ञान । अनुभूति [को०] । ७. गडा हुआ धन । निखात निधि [को०] । ८. धन संपत्ति [को०] ।

यौ०—लाभकारी । लाभदायक ।

लाभक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. प्राप्ति । लब्धि । २. मुनाफा । फायदा । नफा [को०] ।

लाभकर, लाभकारक—वि० [सं०] जिससे लाभ होता हो । फलदायक । लाभदायक । फायदेमद ।

लाभकारी—वि० [सं० लाभकारिन्] [वि० स्त्री० लाभकारिणी] फायदा करनेवाला । गुण करनेवाला । फायदेमद ।

लाभक्षायिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जैनों के अनुसार वह अनत लाभ जो समस्त कर्मों का क्षय या नाश हो जाने पर आत्मा की शुद्धता के कारण प्राप्त होता है ।

लाभदायक—वि० [सं०] जिससे लाभ हो । गुणकारी । फायदेमद ।

लाभमद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जैनों के अनुसार वह मद जिसने मनुष्य अपने आपको लाभवाला और दूसरे को हीनपुरुष समझे ।

लाभलिप्सा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लाभ की प्रवृत्ति [को०] ।

लाभलिप्सु—वि० [सं०] १. लालची । लोभी । २. लाभच्छु । लाभ का इच्छुक [को०] ।

लाभस्थान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] फलित ज्योतिष के अनुसार जन्मकुठली में लग्न से ग्यारहवा स्थान, जिसे देखकर यह निश्चय किया जाता है कि धन, संपत्ति, सत्तान, आयु और विद्या आदि कंसी रहेंगी ।

लाभान्तराय—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाभान्तराय] वह अन्तराय कर्म जिसके उदय होने से मनुष्य के लाभ में बिन्ध पड़ता है ।

लाभालाभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाभ + अलाभ] फायदा और नुकसान ।
हानि और लाभ ।

लाभ्य—वि० [सं०] लाभ के योग्य । प्राप्ति के योग्य [को०] ।

लाम—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा० लार्म] १ सेना । फौज ।

मुहा०—लाम पर जाना = लड़ाई पर जाना । गोवें पर जाना ।
लाम बाँधना = चढ़ाई के लिये सेना तैयार करना ।

२ बहुत से लोगो का समूह ।

मुहा०—लाम बाँधना = (१) बहुत से लोगो को एकत्र करता ।
(२) बहुत सा सामान जमा करना ।

लामा^१—क्रि० वि० [सं० लम्ब] फासले पर । दूर ।

लाम^१—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] अरबी का एक अक्षर ।

लामकाफ—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लाम काफ] गानी गलीज । अपशब्द ।
उ०—लामकाफ वे कहें इमान को नाही डरते ।—पद्म०,
पृ० १८ ।

लामज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लामज्जक] एक प्रकार का तृण ।

विशेष—यह तृण उत्तर प्रदेश, पंजाब और सिंध में प्रायः बारहो
महीने पाया जाता है । यह खस फी तरह का और कुछ पीले
रंग का होता है, इसलिये इसे 'पीलावाला' भी कहते हैं । इसकी
जड़ के पास का भाग मोटा होता है और उसपर रोएँ होने हैं ।
इसका डठल सीधा होता है, जिसपर चिकने, पतले और लंबे
पत्ते होते हैं । बँसक में इसे उत्तेजक, आमवात में पसीना
लानेवाला, रुधिर को साफ करनेवाला, अजीर्ण, खाँसी आदि
दूर करनेवाला और विगूँविका तथा ज्वर में लाभकारी माना
जाता है ।

लामज्जक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लामज नामक तृण । पि० दे०
'लामज' । २ खस । उशीर ।

लामन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लम्बन] १ लटकना । झूलना । २ लहंगा ।
३ स्त्रियो की साड़ी का निचला भाग ।

लामय—सञ्ज्ञा पुं० [द्य०] एक प्रकार की घास जो प्रायः ऊसर भूमि
में पाई जाती है ।

लामा^१—सञ्ज्ञा पुं० [ति०] तिब्बत या मंगोलिया के बौद्धों का धर्मा-
चार्य, जो अनेक अशो में उनका राजनीतिक शासक भी होता
है । ऐसा धर्माचार्य सदा साधु और विरक्त हुआ करता है और
मठों में रहता है ।

लामा^१—सञ्ज्ञा पुं० [पेरू देश की भाषा] घास खाने और पागुर करने-
वाला एक जंतु जो ऊँट की तरह का होता है ।

विशेष—भाकार में यह जंतु ऊँट से कुछ छोटा होता है और
इसकी पीठ पर कूबड नहीं होता । यह दक्षिणी अमेरिका में
पाया जाता है । यह बहुत चपल, बलवान् और शीघ्रगामी होता
है । इसे जब तक हरी घास मिलती है तब तक पानी की कोई
आवश्यकता नहीं होती । इसकी सब उंगलियाँ अलग अलग होती
हैं और प्रत्येक उंगली में एक छोटा मजबूत खुर होता है । इसके
रोएँ बहुत मुलायम होते हैं और इसकी खाल का चरमा बहुत
मजबूत होता है, इसीलिये कुत्तो की सहायता से इसका शिकार

किया जाता है । जब कोई इसे छेड़ता है तब यह उनपर थक
देता है, जिसका कुछ विपला प्रभाव होता है । जगली दशा में
इसे 'धाना' और पातलू दशा में 'सामा' कहते हैं ।

लामा^१—वि० [सं० लम्ब] [वि० री० लामी] दे० 'नगा' । उ०—(क)
ऊँची हरि काहे के श्रतर्पामी । अजहुँ न आइ मिर्न द्रिहि श्रीगर
अवधि वतावत लामी ।—गुर (शब्द०) । (ख) लामी नून नमन
लपेटि पटकन भट देगो देतो लगन तरनि हनुमान की ।—
तुलसी (शब्द०) ।

लामी—सञ्ज्ञा पुं० [द्य०] एक प्रकार का फल जो प्रायः वातिश्व डेढ़
वालित्त लंबा होता है और दिल्ली तथा राजपूताने की प्रायः
पाया जाता है । इसकी तरकारी बनाई जाती है ।

लामे^१—क्रि० वि० [हिं० लाम (= दूर)] । अंतर पर । फामने पर ।
उ०—बूटो के सार में मित्रनस किं तोटे नि गंती । तामे लामे
जे बहुत सान बुभावत वाटस ।—नेग अली (शब्द०) ।

यो०—लामे लामे = दूर दूर ने । फामने से ।

लाय पु—सञ्ज्ञा जी० [सं० घनात, प्रा० अलाय] १ तपट । जमाना
२ आग । अग्नि । उ०—करीर चित चचल किया चहुँ दिमि
लागो लाय । हरि गुमिरन हाथे घडा नीजे बेगि बुझाय ।—
कवीर (शब्द०) ।

लायक^१—वि० [प्र० लायक] १ उचित । ठीक । वाजिब । २ उद्युक्त ।
मुनासिब । जँमे,—लडके के लायक टोपी चाहिए । उ०—
देगि मिवाहि सुरसिय मुमुकाही । बर लायक दुलहिनि जग
नाही ।—तुलसी (शब्द०) । ३ सुयोग्य । गुणवान् । सब
वातों में अच्छा । जैसे,—(क) उनके घर के सभी लडके बहुत
लायक हैं । (ख) अत्र तुम सयाने हुए, कुछ लायक बनो । उ०—
सो हग तो सिर वंठन लायक श्रेष्ठ सदा ।—गिरधर (शब्द०) ।
४ समर्थ । सामर्थ्यवान् । उ०—(क) सब दिन सब लायक
भयो गायक रघुनायक गुनगाम को ।—तुलसी (शब्द०) । (ख)
बहुनायक ही मय लायक ही मय प्यारिन के रस को लहिए ।—
रघुनाथ (शब्द०) ।

लायक^२—सञ्ज्ञा पुं० [मं० लाजा] धान का भूना हुआ नावा ।
लाजक । उ०—वरपा फल फूलन लायक की । जनु है तस्नी
रति नायक की ।—केशव (शब्द०) ।

लायकी—सञ्ज्ञा जी० [अ० लायक + ई (प्रत्य०)] १ नायक होने का
भाव या धर्म । २ सुयोग्यता । कात्रिलियत । जँमे,—यह आपकी
लायकी है, जो जाप ऐसा कहते हैं ।

लायची—सञ्ज्ञा जी० [सं० एला] दे० 'इलायची' ।

लायना^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लगना (= बदले में देना)] वह वस्तु जो
नगद रुपए लेकर उसके बदले में किसी के पाम रखी या उसे दी
जाय । बेची या रेहन रखी हुई चीज ।

लायना^१—सञ्ज्ञा पुं० [द्य०] विवाह में कन्या पक्ष की ओर से वर को
मिलनेवाला सामान ।

लायल—वि० [अ०] राजभक्त ।

लायलटी—सञ्ज्ञा जी० [अ०] राजभक्ति ।

लार^१—सज्ञा स्त्री० [सं० लाला] १. वह पतला लसदार थूक जो कोई बहुत कड़ुई खट्टी आदि चीज खाने या मुँह में कोई दवा आदि लगाने पर तार के रूप में निकलता है ।

मुहा०—मुँह में लार आना = दे० 'मुँह से लार टपकना' । मुँह से लार टपकना = किसी चीज को देखकर उसके पाने की परम लालसा होना । मुँह में पानी भर आना ।

२ कतार । पक्ति । ३ लासा । लुगवा । उ०—सो मुख चूमनि महुरि यशोदा दूध लार लपटानी हो ।—सूर (शब्द०) ।

लार^२—क्रि० वि० [? मि० मरा० लैर (= पीछे)] साथ । पीछे । उ०—(क) सत्ती जरि कोइला भई मूए मरे की लार । जउं वह जरती राम सौं साँचे सँग भरतार ।—दादू (शब्द०) । (ख) अर्धे अर्धा मिल चले दादू बाँधि कतार । कूप पडे हम देखना अर्धे अर्धा लार ।—दादू (शब्द०) । (ग) जो निर्गुण सुमिरन करै दिन में सौ सौ वार । नगर नायका सत करै जरै कौन की लार ।—कवीर (शब्द०) ।

मुहा०—लार लगाना = फँसाना । बझाना । उ०—(क) पट दरसन पाखड न्यावने भरमि परधो समार । वेद पुरान सबै मिलि गावैं कर्म लगायो लार ।—कवीर (शब्द०) । (ख) जन्म जन्म के दूत तिरोवन कोनहि लार लगाए ।—सूर (शब्द०) ।

लारी—सज्ञा स्त्री० [अ० लारी] यात्रियों के आवागमन के काम आनेवाली बड़ी मोटरगाड़ी । बस [को०] ।

लारू(पु)†—सज्ञा पुं० [हि० लारू] लड्डू ।

लार्ड—सज्ञा पुं० [अंग०] १. परमेश्वर । ईश्वर । २. मालिक । स्वामी । ३. भूम्यधिकारी । जमींदार । ४. इंग्लैंड के बड़े बड़े जमींदारों और रईसों आदि को मिलनेवाली कतिपय बड़ी उपाधियों का सूचक शब्द, जो उनके नाम के पहले लगाया जाता है । जैसे,—लार्ड कर्जन, लार्ड रीडिंग ।

लार्ड सभा—सज्ञा स्त्री० [अंग० हाउस ऑफ लार्ड्स] ब्रिटिश पार्लमेन्ट की वह शाखा या सभा जिसमें बड़े बड़े तालुकदारों और अमीरों के प्रतिनिधि होते हैं । इनकी संख्या लगभग ७०० है । इसे हाउस ऑफ लार्ड्स कहते हैं ।

लाल^१—सज्ञा पुं० [सं० लालक] १. छोटा और प्रिय बालक । प्यारा बच्चा । २. वेटा । पुत्र । लडका । उ०—(क) जसुमति माय लाल अपने को शुभ दिन डोल भुलायो । फगुवा दियो सकल गोपिन को भयो सवन मन भायो ।—सूर (शब्द०) । (ख) कहिके अरव में शरण जावो । बोलो लाल बहुत दुख पावो ।—विश्राम (शब्द०) । ३. प्रिय व्यक्ति । प्यारा आदमी । उ०—(क) शाजु यासो बोलि चलि हँसि खेलि लेहु लाल काहि ऐसी मारि लाऊँ काम की कुमारी मी ।—केशव (शब्द०) । (ख) वरनत कवि जोहै मुग्धा के भेदन में ललिता ललित मो प्रषट लाल लखि लेहु ।—रघुनाथ (शब्द०) । ४. प्रणयी । प्रेमी । उ०—(क) देत जताए प्रगट जो जावक लागी भाल । नव नागरि के नेह मो भले बने ही लाल ।—रसनिधि (शब्द०) । (ख) मेरई उर गढि गए तेरेई हृग लाल । जनि पतियाउ लखो छहै दरपन लँके लाल ।—रसनिधि (शब्द०) ।

विशेष—इम शब्द का प्रयोग प्रायः कविता और बोलचान में किसी प्रिय व्यक्ति के लिये संबोधन के रूप में होता है ।

४ श्रीकृष्ण चंद्र का एक नाम । उ०—नुमन कुज बिहरत सदा दै गलवाँहा मान । वदौं चरन सरोज नित जुगुन लालिनी लाल ।—मत्तलाल (शब्द०) ।

लाल^२—सज्ञा पुं० [अंग० लालन] डुलार । लाड । प्यार । उ०—जो बन सायर मुग्धो रमिया लाल कराय । अरव कपोर पाँजी परे पथी आवाहि जाय ।—कवीर (शब्द०) ।

लाल^३—सज्ञा पुं० [सं० लाला] पतला थूक जो प्रायः बच्चों और वृद्धों के मुँह में बहा करता है । लाना । लार ।

लाल(पु)†—सज्ञा स्त्री० [सं० लालना] लालसा । इच्छा । अभिलाषा । चाह । उ०—(क) मुन्न कलाई अति बनी सुभ्रजष गज चाल । सोरह शृंगार वरन के करहि देवता लाल ।—जायसी (शब्द०) । (ख) मुर नर गद्यन लाल कराही । उलटे चलहि स्वर्ग कहै जाही ।—जायसी (शब्द०) ।

लाल^४—सज्ञा पुं० [फा०] मानिक या माणिक्य नाम का रत्न । विशेष दे० 'मानिक' । उ०—(क) कचन के लभ मयारि मन्वा-डौंडी खचि हीरा बिच लाल प्रवाल ।—सूर (शब्द०) । (ख) यह ललित लाल कंधी लसत दिग्भामिनि के भाल को ।—केशव (शब्द०) । (ग) कुदन सी यह वाल कौं हीरा ताल लगाइ । रतन जटित की दुति तवै लीला हृग मरसाइ ।—रसनिधि (शब्द०) । (घ) नख नग जाल लाल अगुलि प्रवाल माल नूपुर मराल ये अनूप रव नाँउडे ।—देव (शब्द०) ।

मुहा०—लाल उगनना = बहुत अच्छी और प्यारी बातें कहना । मीठी और सुंदर बातें कहना ।

लाल^५—वि० १. मानिक, वीरजहुटी या लहू आदि के रंग का । रक्त वर्ण । सुर्ख । उ०—(क) लोचन लाल विसान चारु मंदार माल गर ।—गोपाचंद्र (शब्द०) । (ख) फून फूने हू क्या ही रगीले । कोई ऊजरो कोई लाल पीले ।—सं० शाकुं (शब्द०) । (ग) बौन दियो यह भाल में लाल गुलाब को फून कही कहै पायो ।—आश्रमध (शब्द०) ।

यौ०—लाल अगारा या लाल अभूषण = जो जने आदि के कारण अगारों की तरह लाल रंग का हो गया हो । ताप के कारण बहुत अधिक लाल । लाल बिच = बहुत अधिक लाल ।

२. जिमला नेहरा क्रोध के मारे तमतमा गया हो । जिसके चेहरे से गुस्सा मालूम होता हो । बहुत अधिक गुद । जैसे,—मातो मातो में लाल क्या होते हो ?

मुहा०—लाल आँखें निकालना या दिवाना = क्रोध से आँखें लाल करना । गुस्से में दिखना । लाल पटना या हाना = गुद होना । नाराज होना । उ०—दशरथ लाल हूँ कंगाल बटु लाल परि, भापत भयोई ननु रावणै न मनहो ।—पद्माकर (शब्द०) । लाल पीले होना = गुस्सा हाना । शोक करना । उ०—हू हू । एक बारगी उतने लाल पीले हो गए ।—हरिश्चंद्र (शब्द०) । लाल हो जाना = क्रोध में भर जाना । गुस्से में होना । लाल होना = गुद होना । नाराज होना ।

३. (चीमर के तेज में मोठी) जो चारों ओर में घूमकर बिलकुल बीच के स्थान में पहुँच गई हो, और जिगके लिये कोई बाल बाकी न रह गई हो। ४ (चीमर के रेत में खिलाठी) जिगकी सब मोटियाँ बीच के धर में पहुँच गई हों और जिग कोई बाल चलना बाकी न रह गया हो। (ऐसा खिलाठी जीता हुआ समझा जाता है।) ५ जो खेल में श्रीरा में पहले जीत गया हो (खेलाडी)।

मुहा०—लाल होना = (१) बहुत अधिक संपत्ति पाकर संपन्न होना। निहाल होना। जैसे, उम्र मगान में गढ़ा हुआ खजाना पाकर वह लाल हो गया। (२) चीमर आदि के रेत में जीत जाना।

लाल^१—सज्ञा पुं० १ एक प्रसिद्ध छोटी चिड़िया। लालमुनी। रायमुनी। उ०—(क) तूती लाल कर करे सारग कर ताने तीतर तुरमनी बटेर गहियत हैं।—रघुनाथ (७२०)। (ग) लालन को पिजरा कर लाल लिए प्रति कुजन कुजन ज्वं रहे।—जसजत (शब्द०)।

विशेष—इसका शरीर कुछ भूरापन लिए लाल रंग का होता है और जिगपर छोटी छोटी सफेद बुँदकियाँ पड़ी रहती हैं। यह बहुत कोमल और चंचल होता है और इसकी बोनी बहुत प्यारी होती है। लोग इसे प्रायः पालते हैं। इसकी मादा को 'मुनियाँ' कहते हैं।

२ चौपायों के मुँह का एक रोग।

लाल अचारी—सज्ञा स्त्री० [हिं० लाल + अचारी] एक प्रकार का पटुआ जिसके बीज दवा में काम आते हैं। २ षटमन की जाति का एक प्रकार का पौधा जिसे पटवा भी कहते हैं। विशेष दे० 'पटवा'।

लाल अगिन—सज्ञा पुं० [हिं० लाल + अगिन] पाय एक बालिष्ठ लंबा भूरे रंग का एक प्रकार का अगिन पत्ती।

विशेष—इस पत्ती का गला नीचे की ओर सफेद होता है। यह मध्य भारत तथा उड़ीसा में अधिकता से पाया जाता है, और घास फूस में प्याले के आकार का घोंसवा बनाकर उसमें चार तक अडे देता है।

लाल आलू—सज्ञा पुं० [हिं० लाल + आलू] १. रतानू। २ अरई।

लाल इलायची—सज्ञा स्त्री० [हिं० लाल + इलायची] उड़ी इलायची। विशेष दे० 'इलायची'।

लालक^१—सज्ञा पुं० [सं०] विदूषक [को०]।

लालक^२—वि० [सं०] लाठ प्यार करनेवाला [को०]।

लाल कच्चू—सज्ञा पुं० [हिं० लाल + कच्चू] गजकर्ण आलू। बड़ा।

लाल कलमो—सज्ञा पुं० [हिं० लाल + कलमी] चाँदनी या गुल-चाँदनी नाम का पौधा या उसका फूल।

लालकीन—सज्ञा पुं० [चीनी० नानकिङ्] एक प्रकार का वस्त्र। विशेष दे० 'नानकीन'।

लाल घास—सज्ञा स्त्री० [हिं० लाल + घास] गोमूत्र नामक वृक्ष।

लाल चदन—सज्ञा पुं० [हिं० लाल = चदन] एक प्रकार का चदन। रक्त चदन। देवी चदन।

विशेष—नाम चंदरा का यह पर में छोटा होता है और यह रंग प्रांत तथा प्रकाश में बग़ायवा के पाया जाता है। इसके ऊपर की लकड़ी गफेर और नीर की सहायि कुछ गन्नाज विण पात होती है। इसे विमने से प्यु। लाल रंग और प्रकाश मुक्त निकलती है। यह भी चंदरा की तरह पाते पर लालवा पना है। विशेष दे० 'चंदन'।

लालच—सज्ञा पुं० [सं० लालच] [हिं० लालच] कोई वस्तु, विशेषतः धन आदि प्राप्त करने की इच्छा प्रवृत्ति और ऐसी वाग्यना जो कुछ लालच और चेतनी का। कोई लालच की वस्तु सुरी तरह दृष्टा करता। लालच। लालच। लालच—इस शब्द में वस्तु जवाब दाना करता ठीक नहीं है।

कि० प्र०—घाना।—रगता।—रगता।—रगता।—रगता।—मरता।—होता।

मुहा०—लालच देना = किसी का मन में लालच उत्पन्न करना। जैसे,—उमंग लखें तो मिठाई का लालच देकर उमंग पर लखें ले लिए।

लाल चक्री—सज्ञा पुं० [सं० लालच] लालच। (हिं०)।

लालचहा—वि० [हिं० लालच + हा (प्रत्य०)] जिस वस्तु अधिक लालच हो। लालच। लालच। उ०—धुपुता की मंत्र मुने मकृन् पिय हा ज्यो ज्यो प्रति लालचहा।—महाभारत (१२०)।

लालचाँच—सज्ञा पुं० [हिं० लाल + चाँच] लाल। लाल। (हिं०)।

लालची—वि० [हिं० लालच + ई (प्रत्य०)] जिस वस्तु अधिक लालच हो। लालची।

लाल चाँता—सज्ञा पुं० [हिं० लाल + चाँता] लाल फूल का चिन्नक का चाँता। विशेष दे० 'चाँता'।

लाल चीनी—सज्ञा पुं० [हिं० लाल + चीनी] एक प्रकार का पुरात, जिम्मा मारा शरीर गफेर और शिर पर लाल निद्रिकियाँ होती हैं।

लालटेन—सज्ञा स्त्री० [सं० लालटेन] किसी प्रकार का यह लाल आदि जिगमें तेज का गजारा श्री जगान के लिये लगी लगी रहती है; और जिगके चारों ओर, तेज हम और पत्ती चाँदी के प्रदाने के लिये शीला या इरी प्रकार का लाल बोई पारदर्शी पदार्थ बना रहता है। कठिन।

विशेष—इसका व्यापार प्रकाश के लिये एक स्थानों पर होता है, जहाँ या तो प्रकाश तो प्रायः एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जान की आवश्यकता होती है और या ऐसी जगह स्वामी रूप से रखने के लिये होता है, जहाँ पारा आर से हम आया करती हो।

लालड़ी—सज्ञा पुं० [हिं० लाल (= रंग) + डी (प्रत्य०)] लाल रंग का एक प्रकार का नगीना जो प्रायः नया और बालियों घादि में मोती के दोना और लगाया जाता है।

लाल दाना—सज्ञा पुं० [हिं० लाल + दाना] लाल रंग का पोस्ते का दाना। लाल ससखत। (पूरव)।

लालसागर

लालसागर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लाल + सागर] भारतीय महासागर का वह अण जो अरब और अफ्रीका के मध्य में पड़ता है, और जो बाव एन मदव में स्वेज तक फैला हुआ है। लाल समुद्र । रेड सी (अ) ।

विशेष—यह सागर प्राय १४०० मील लम्बा है और डमकी अर्धक से अधिक चौड़ाई २३० मील है। इसके किनारों पर बहुत से छोटे छोटे टापू और प्रवालद्वीप हैं, जिनके कारण जहाजों को इसमें से होकर आने जाने में बहुत कठिनाता होती है। पहले यह भूमध्यसागर से अलग था, पर स्वेज की नहर खुद जाने से यह उससे मिल गया है। इसके पानी में कुछ ललाई मिलती है, इसी से इसे लाल सागर कहते हैं।

लालसिखाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'लालशिखी' ।

लालशिखी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लाल + शिखा] अरुणचूड़ । मुर्गा । उ०—प्रात उठी रतिमान भद्र धुनि लालसिखी की हिये खटकी है ।—मन्नालाल (शब्द०) ।

लालसिरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लाल + सिरा (= सिर)] एक प्रकार की वत्तख जिमका सिर लाल होता है।

लालसी—वि० [सं० लालसा + ई (प्रत्य०)] अभिलाषा करनेवाला । इच्छा करनेवाला । उत्सुक । उ०—सो हरि के पद के हम लालसी माया कि है न जहाँ प्रभुताई ।—रघुराज (शब्द०) ।

लालसीक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गिलगिला । पिच्छिल । २ रसयुक्त वस्तु । सुप । शोरवा (को०) ।

लाला—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लालक] १ एक प्रकार का सर्वोपन जिसका व्यवहार किसी का नाम लेते समय उसके प्रति आदर दिखलाने के लिये किया जाता है। महाशय । साहब । जैसे,—नाला गुरदयाल आज यहाँ आनेवाले हैं।

विशेष—इस शब्द का व्यवहार प्राय पश्चिम में खत्रियो, और बनियो आदि के लिये अधिकता से होता है।

मुहा०—लाला भइया करना = किसी को आदरपूर्वक सर्वोपन करना । इज्जत के साथ बातचात करना ।

२ कायस्थ जाति या कायस्थों का सूचक एक शब्द ।

यौ०—लाला भाई = कायस्थ ।

३ छोटे प्रिय बच्चे के लिये सर्वोपन । प्रिय व्यक्ति, विशेषत बालक । उ०—आनंद की निधि मुख लाला की, ताहि निरखि निःसिवापर सो तो छवि क्योंहूँ न जाति बखानी।—सूर (शब्द०) ।

लाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मुँह से निकलनेवाली लार । थूक ।

लाला—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] पोस्ते का लाल रंग का फूल जिममें प्राय काली खमखस पैदा होती है। गुले लाला । उ०—कोऊ कहै गुल लाला गुनाल की कोऊ कहै रँग रोरी के आव की ।—द्विज (शब्द०) ।

लाला—वि० [हि० लाल] लाल रंग का । विशेष दे० 'लाल' । उ०—(क) पाठ्य भयो विलोचन लाला । लाखि अनर्थक धर्म भुवाना ।—सवल (शब्द०) । (ख) केकी के काकी कका कीक कीक

का कीक । लोल लालि लोलै लली लाला लीला लीन ।—केशव (शब्द०) ।

लाला—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाला या लालायित] १ दे० 'लाले' । २ सकट । श्राफत ।

लालाकिलन्न—वि० [सं०] लार से भीगा हुआ (को०) ।

लालाटिक—वि० [सं०] [वि० स्त्री० लालाटिकी] ललाट सबधी । २ भाग्याधीन । ३ निम्न । नीच । निकम्मा । बेकार । ४ मावधान । दत्तचित्त (को०) ।

लालाटिक—सञ्ज्ञा पुं० १ स्वामी के कार्य में दत्तचित्त मेवक । २ बेकार या बेपरवाह व्यक्ति । ३ एक प्रकार का आलिंगन (को०) ।

लालाटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ललाट (को०) ।

लालाध—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गण । मूर्त्ति (को०) ।

लालापान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] (बच्चों द्वारा) अपना अंगूठा चूसना (को०) ।

लालाप्रमेह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का प्रमेह जिसमें मुँह की लार की तरह तार बँधकर पेशाव होता है।

लालाभक्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक नरक का नाम ।

विशेष—कहते हैं, जो लोग बिना देवताओं आदि को भोग लगाए अथवा बिना अतिथियों को भोजन कराए आप भोजन कर लेते हैं, वे इसी नरक में जाते हैं।

लालामेह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लालाप्रमेह' ।

लालायित—वि० [सं०] १ जिसके मुँह में बहुत अधिक लालच के कारण पानी भर आया हो । ललचाया हुआ । २ जिसका बहुत अधिक लालन किया गया हो । दुलारा ।

लालालु—वि० [सं०] दे० 'लालायित' ।

लालाविप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जतु जिमके मुँह की लार में विप हो । जैसे,—मकड़ी आदि ।

लालासव—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लालासव] मकड़ी । (डि०) ।

लालास्रव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुँह से लार बहना । २ मकड़ी ।

लालास्राव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मुँह से थूक या लार गिरना । २ मकड़ी का जाला ।

लालिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भैंसा । महिष ।

लालिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] विनोदपूर्ण उत्तर (को०) ।

लालित—वि० [सं०] १ जिमका लालन किया गया हो । दुलारा हुआ । लड़ाया हुआ । प्रिय । प्यारा । २ जो पाला पोसा गया हो । उ०—पुरुष ही विद्रोह कर चले मेरे ये लालित इन्द्रिय-गण ।—प्रपलक, पृ० ७७ ।

लालित—सञ्ज्ञा पुं० १ प्रसन्नता । आनंद । २ प्रेम । प्रियता । दुलार (को०) ।

लालितक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्रिय या दुलारा व्यक्ति (को०) ।

लालित्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ललित होने का भाव । सौंदर्य । सुदरता । सरसता । मनोहरता । जैसे,—आपकी भाषा में बहुत अधिक लालित्य होता है । २ श्रृंगारिक चेषटा । हाव भाव । विभ्रम (को०) ।

लालिनी—मन्ना खी० [सं०] पुंश्चयी या क्वापुक स्त्री । दुश्चरित्रा श्रीरत ।

लालिमा—सन्ना खी० [सं०] लाली । ललाई । अरुणता । सुर्खी ।

लाली^१—सन्ना खी० [हि० लाल + ई (प्रत्य०)] १ लाल होने का भाव । अरुणता । लालपन । सुर्खी । २ इज्जत । पत । आवरु । जैसे,—(क) आज आपकी ही कृपा से उनकी लाली रह गई । (ख) मेरी लाली तुम्हारे हाथ है ।

विशेष—कभी कभी खाली 'लाली' और कभी कभी 'भु'ह की लाली' भी बोलते हैं ।

३ पांसी हुई ईंटें जो चूने में मिलाई जाती हैं । सुरखी ।

लाली^२—सन्ना खी० [देश०] आसाम की एक नदी का नाम ।

लाली^३—सन्ना खी० [सं० लालिन्] वह व्यक्ति जो स्त्रियों को बहकाकर कुमार्ग की ओर प्रवृत्त करना हो ।

लाली^४—वि० दुलार करनेवाला । प्यार करनेवाला [को०] ।

लाली^५—सन्ना खी० [सं०] भूत प्रेत आदि से आविष्ट होना [को०] ।

लालील—सन्ना पुं० [सं०] अग्नि । आग ।

लालुका—सन्ना खी० [सं०] गले में पहनने का एक प्रकार का हार ।

लाले—सन्ना पुं० [सं० लाला या लालायित] लालपा । अभिलाषा । इच्छा । अग्रमान । जैसे,—हमें तो आपके देखने के ही लाले हैं ।

मुहा०—किसी चीज के लाले पडना = किसी चीज के देखने या पाने के लिये बहुत तरसना । किसी चीज के अप्राप्य या पहुँच के बाहर होने के कारण बहुत अधिक लालायित होना ।

२ आफत । विपत । सकट ।

विशेष—इस शब्द का प्रयोग सदा बहुवचन में होता है ।

लालो(७)—सन्ना पुं० [हि०] दे० 'लाले' ।

लालोलाल—वि० [हि० लाल + लाल] आनन्दमग्न । मस्त । सुखरू । उ०—रामसिंह गाढी ले जाते थे, माल अधिक विकता था । आजकल लालोलाल है ।—काले०, पृ० २१ ।

लाल्य—वि० [सं०] लालन करने योग्य । दुलार करने लायक ।

लालहाँ—सन्ना पुं० [हि० लाल साग (= मरसा)] मरसा नामक साग । उ०—चौलाई लालहाँ अरु पोई । मव्य मेलि निबुआनि निचोई ।—सूर (शब्द०) ।

लाव^१—सन्ना पुं० [सं०] १ लवा नामक पत्थी । विशेष दे० 'लवा' । २ लौंग । ३ काटना या खंडित करना ।

लाव^२—वि० १ काटनेवाला । खंडित करनेवाला । २ अवचयन करनेवाला । चयनकर्ता । एकत्र करनेवाला । ३. नष्ट भ्रष्ट या विव्वस्त करनेवाला [को०] ।

लावां(७)^३—सन्ना खी० [हि० लाय (= आग)] १ अग्नि । आग । आँच । २ लौ । लगन ।

लाव^४—मन्ना खी० [दश० या सं० रज्जु] १ वह मोटा रस्सा जिससे चरसा खींचते या इसी प्रकार का और कोई काम करते हैं । रस्सा । लास ।

मुहा०—लाव चलाना = चरसे के द्वारा कूर्प से पानी खींचकर खेत सीचना ।

२ रस्सी । डोरी । रज्जु । उ०—फिरि फिरि चितउत ही रहतु टुटी लाज की लाव । अग अग छवि भौर मे मयी भौर की नाव ।—विहारी (शब्द०) । ३ उतनी भूमि जितनी एक दिन में एक चरसे से सींची जा सके ।

लाव—सन्ना पुं० [हि० लगाना] वह ऋण जो किसी की चीज अपने पाम वधक रखकर उमे दिया जाय ।

मुहा०—लाव उठाना = (१) चीज वधक रखकर रुपया उधार देना । (२) किसानों को उनके कष्ट के समय ऋणस्वरूप धन देना । तकावी वाँटना ।

लावक^१—सन्ना पुं० [सं०] १ लवा पत्थी । उ०—तीतर लावक पदचर जूया । बरनि न जाइ मनोज बल्था ।—तुलसी (शब्द०) । २ काटने या खंड करनेवाला व्यक्ति (को०) । ३ वह जो अवचयन करे । काटकर इकट्ठा करनेवाला । कटैया (को०) ।

लावक^२—सन्ना पुं० [दश०] १ चावल की जाड़े की फल । २ चरमा । ३ मोट खींचने में वैलो के एक बार जाने और आने का काल ।

लावज^१—सन्ना पुं० [सं०] बहुत प्राचीन काल का एक प्रकार का बाजा जिसपर चमड़ा मढा हुआ होता था ।

लावज^२—सन्ना पुं० [सं०] १ मुँधनी । नस्य । २ लवणसमुद्र ।

लावण—वि० [सं०] १ जिसका सस्कार लवण द्वारा हुआ हो । २ लवण का । नमकीन । उ०—लावण लाँडु श्री पकवाँन । सेना सहित राज जीर्मीयी ।—वी० रामो, पृ० १११ ।

लावणसैधव—वि० [सं० लावण सैधव] समुद्रतट पर स्थित [को०] ।

लावणा—सन्ना पुं० [देश०] वैश्यों की एक जाति ।

लावणिक^१—वि० [सं०] १ जिसका लवण द्वारा सस्कार हुआ हो । २. लवण सवयी । नमक का । ३ लावणयुक्त । मनोहर । सुदर (को०) ।

लावणिक^२—सन्ना पुं० १ वह जो नमक बेचना हो । २ नमक का सौदागर । २ वह पात्र जिसमें नमक रखा जाता है । नमकदान ।

लावण्य—सन्ना पुं० [सं०] १ लवण का भाव या घर्म । नमकपन । २ अत्यंत सुदरता । नमक । लौनाई । उ०—जटा मुकुट सुरमरित मिर लोचन नलिन विशाल । नीलकंठ लावण्य निवे साह बालविधु भाल ।—तुलसी (शब्द०) । ३ शील की उत्तमता । स्वभाव का अच्छापन ।

यी०—लावण्यकलित = रूपसपन्न । सौंदर्ययुक्त । लावण्यकान्ति = सौंदर्य की दीप्ति वा प्रभा । लावण्यनेधि = सौंदर्य वा शोभा के समुद्र वा खजाना । लावण्यमय = सौंदर्ययुक्त । प्रिय । सुदर । लावण्यलक्ष्मी, लावण्यश्री = अत्यंत शोभा । अतशय सौंदर्य ।

लावण्यवान्—वि० [सं० लावण्यवत्] सौंदर्ययुक्त । प्रिय । सुदर [को०] ।

लावण्या—सन्ना खी० [सं०] ब्राह्मी नाम की वृद्धी ।

लावण्याजित^१—सन्ना पुं० [सं०] शश्वन । वह धन जो विवाहिता स्त्री को सास, ससुर आदि से प्राप्त हो [को०] ।

लावण्याजित^३—वि० सुदरता के कारण प्राप्त । लोनाई के माध्यम से अजित ।

लावदार^१—वि० [हि० लाव (= आग) + फ्रा० दार (प्रत्य०)] (तोप) जो छोड़ी जाने या रजक देने के लिये तैयार हो । उ०—लावदार रक्खो किए सबे अरावो एहु । ज्यो हरीफ आवे नजरि तबे घडाघड देहु ।—सूदन (शब्द०) ।

लावदार^२—सज्ञा पुं० तोप में बत्ता लगानेवाला । तोप छोड़नेवाला । तोपची । उ०—किते जगलदर आनदार लावदार हौ । किते निसानवान सान के भरे तयार हौ ।—सूदन (शब्द०) ।

लावना^१—सज्ञा पुं० [हि० लाव (= अग्नि) जलाने के काम आनेवाले पदार्थ । ईंधन । जैसे लकड़ी, बोंयला आदि ।

लावना^२—सज्ञा स्त्री० [सं० लावण्य + ता (प्रत्य०)] बहुत अधिक सौंदर्य । सुदरता । खूबमूरती । नमक । उ०—तुलसी तेहि अवसर लावना दसचारि नव तोनि एकोस सबे ।—तुलसी (शब्द०) ।

लावना^३—(पुं०)—क्रि० सं० [हि० लाना] । उ०—(क) विप्र कछौ घन लावनी करन सुता को व्याह । यहि थल चोर जुगय लिए भयो भोर दुख दाह ।—रघुराज (शब्द०) । (ख) जाहि अवन पापी हम चीन्हा । तेहि तब ढिग लावन मन कीन्हा । विश्वाश्र (शब्द०) । (ग) कीहेसि मधु लावइ लेइ मायो । कीहेसि भवर पखि अरु पाँखो ।—जायसी (शब्द०) ।

लावना—क्रि० सं० [हि० लगाना] १ लगाना । स्पर्श कराना । उ०—(क) लावत मैं सुगध लखी सब सौरभ की तन देत दसीहै ।—रघुनाथ (शब्द०) । (ख) तुलसिदास कह रूप देखावहु । मेरे शीश पाणि निज लावहु ।—रघुराज (शब्द०) । (ग) मेरे अग सहत सुगध सो सही है सदा लावन न देत और ऐमे हैं सुधर्मो ।—रघुनाथ (शब्द०) । (घ) सो मोहि लेइ मंगावई लावइ भूख १पभास । जउं न हात अस बइरीं केहि काहू कर आस ।—जायसी (शब्द०) । २ जलाना । आग लगाना । उ०—बहुरि इद्रजित ब्रह्मअस्त्रकृत हनुमत वचन गाया । सभागमन रावरा समुभावन लावन लक गनायो ।—रघुराज (शब्द०) ।

लावनि^१—सज्ञा स्त्री० [सं० लावण्य] सौंदर्य । लावण्य । सुदरता । नमक । उ०—(क) काट काम लावनि विहारी जा देखत सब दुख नसत ।—स्वामी हरिदास (शब्द०) । (ख) सुदर मुख की बलि बलि जाऊँ । लावनि निध गुणनिधि सोभानधि निरखि निरखि जीवत सब गाऊँ ।—सूर (शब्द०) ।

लावनि^२—सज्ञा स्त्री० [द्य०] दे० 'लावनी' ।

लावनिता^१—सज्ञा स्त्री० [हि० लखनि (= लावण्य) + ता (प्रत्य०)] दे० 'लावना' ।

लावनी—सज्ञा स्त्री० [देश०] १ गाने का एक प्रकार का छंद । २ इस छंद का एक प्रकार जो प्रायः च ग वजाकर गाया जाता है । इसे लयाल भी कहते हैं । ३ इस प्रकार का कोई गीत ।

लावनीवाज—सज्ञा पुं० [हि० लावनी + फ्रा० वाज] लावनी गाने या रचनेवाला । लावनी का प्रेमी ।

लावण्य^१—सज्ञा पुं० [सं० लावण्य] दे० 'लावण्य' । उ०—कृष्ण

नाम लावण्य भरचो है । मंथुरिम सार सकेलि घरचो है । —घनानंद, पृ० २५१ ।

लाववाली^१—सज्ञा पुं० [अ० लाउवाली] १ वह जिसे किसी प्रकार की चिंता आदि न हो । लापरवाह । बेफिक्र । २ वह जिसके विचार, धार्मिक दृष्टि से, बहुत ही स्वतंत्र और उजड़ू खन हो । ३ वह जो सदा निकम्मा घूमा करता हो । आनारा ।

लाववाली^२—सज्ञा स्त्री० लाववाली होने का भाव । लाववालीपन ।

लावर—वि० [सं० लवन (= वक्रता)] दे० 'लावर' । उ०—मकुया भरगो अरु हिलसी हरामजादे लावर दगै न म्यार आखिन दिखाए तैं ।—ठाकुर०, पृ० २७ ।

लावल्द—वि० [फ्रा०] जिसके बाल वच्चा न हो । नि मगन ।

लावल्दी—सज्ञा स्त्री० [फ्रा०] लावल्द या नि मतान होने का भाव या अवस्था ।

लावा^१—सज्ञा पुं० [सं० लावक] लवा नामक पत्थो । विशेष ३० 'लवा' । उ०—गयउ सहमि नहि कछु कहि आवा । जनु सचान वन भपटेउ लावा ।—तुलसी (शब्द०) ।

लावा^२—सज्ञा पुं० [सं० लाजा] भूना हुआ धान, ज्वार, बाजरा या रामदाना आदि जो भुनने के कारण फूटकर फूट जाता है और जिसके अंदर से सफेद गूदा बाहर निकल आता है । यह बहुत हलका और पथ्य समझा जाता है और प्रायः रोगियों को दिया जाता है । खील । लाई । फुन्ला ।

क्रि० प्र०—फूटना ।—भूतना ।

यौ०—लावा परछन ।

लावा^३—सज्ञा पुं० [अ०] राख, पत्थर और धातु आदि मिला हुआ वह द्रव पदार्थ जो प्रायः ज्वालामुखी पर्वतों के मुख से विस्फोट होने पर निकलना है ।

लावाचुक—सज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का धान ।

लावाणक—सज्ञा पुं० [सं०] प्राचीन काल के एक देश का नाम जो मगध के पास था ।

लावा परछन—सज्ञा पुं० [हि० लावा + परछना] विवाह के समय की एक रीत ।

विशप—इसमें वर के आगे कन्या खड़ी की जाती है और उसके हाथ में एक डलिया दी जाती है । कन्या का भाई उसी डलिया में धान का नावा डालता है । हवन और सप्तमी इसके बाद होती है ।

लावारां—वि० [हि०] आनारा ।

लावारिस—सज्ञा पुं० [अ०] १ वह मनुष्य जिसका कोई उत्तराधिकारी या वारिस न हो । २ वह संपत्ति जिसका कोई अधिकारी या स्वामी न हो । (क्व०) ।

लावारिसी—वि० [अ० लावारिस] (संपत्ति) जिसका कोई अधिकारी न हो ।

लाविक—सज्ञा पुं० [सं०] भैंसा । महिप [को०] ।

लाविका—सज्ञा स्त्री० [सं० लावा] १ लवा नामक पत्थो । २. भैंस ।

लाघुं—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लौघा । बद्ध । घिघ्रा ।
 लाघुय—वि० [सं०] लवाई के लायक । काटने योग्य [को०] ।
 लाश—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] किसी प्राणी का मृतक देह । लोथ ।
 मुरदा । शव ।
 मुहा०—लाश उठना = मुर्दा उठना । मौत होना । लाश पर लाश
 गिरना = लोथ पर लोथ गिरना । लडाईं में शवों का ढेर
 लग जाना ।
 लाशा^१—वि० [फा० लाशह] दुर्बल । क्षीण । कृशकाय [को०] ।
 लाशा^२—सञ्ज्ञा पुं० मुरदा । लोथ । शव [को०] ।
 लाप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लक्ष] लाख की सख्या वा अंक । दे० 'लाख' ।
 लाप^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाक्षा] लाख नामक लाल द्रव्य । लाह ।
 उ०—लाप भवन वैठार इष्ट ने भोजन में विप दीन्हो । सूर
 (शब्द०) । विशेष दे० 'लाख' ।
 यौ०—लापभवन = लखावर । लाक्षागृह ।
 लापना^१—क्रि० सं० [हिं०] दे० 'लखना' ।
 लापुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोभी । लालची ।
 लास^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लास्य] १ एक प्रकार का नाच । दे० 'लास्य' ।
 ललित नृत्य । २ मटक । उ०—लास भरी भौंहन विलास भरे
 भाल मृदु हास भरे अथर सुधारस घुरे परै ।—देव (शब्द०) ।
 लास^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जूम । रसा । शोरवा । २ उच्छलकूद ।
 स्वच्छद क्रीडा (को०) । ३ लास्य । एक नृत्य, विशेषतः स्त्रियों
 का (को०) ।
 लास^३—सञ्ज्ञा पुं० [?] उस छद्म के दोनो कोने जिसे पाल बाँधने के
 लिये मस्तूल में लटकाते हैं । (लश०) ।
 मुहा०—लास करना = चलती हुई नाव को रोकने के लिये बाँडो
 को बहते हुए पानी में वेड़े बल में ठहराना । (लश०) ।
 लासक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मयूर । मोर । २ नाचनेवाला ।
 नचनिया । नर्तक । ३ मटका । घडा । ४ शिव का एक नाम ।
 (को०) । ५ आलिगन करना (को०) । ६ इमारत की सबसे
 ऊँची मजिल पर बना हुआ कक्ष (को०) । ७ एक अस्त्र का
 नाम (को०) ।
 लासक^२—वि० १. चमकानेवाला । दीप्तिकारक । २ इधर उधर करता
 हुआ । क्रीडारत (को०) ।
 लासकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नटी । नाचनेवाली स्त्री । नर्तकी ।
 लासन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नाचना । क्रीडा करना । २ इधर उधर
 संचालन करना [को०] ।
 लासन^२—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लेशिंग] जहाज बाँधने का मोटा रस्सा ।
 लहासी ।
 क्रि० प्र०—खोलना ।—बाँधना ।—लगाना ।
 मुहा०—लासन देना = मस्तूल के चारो ओर रस्सी लपेटना ।
 कौडी लेना । (लश०) ।
 लासा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लस] १. कोई लसदार या चिपचिपी चीज ।
 चैप । लुभाव । उ०—(क) नाम लगी ल्याय लासा ललित

वचन कहि व्याध ज्यौ विषय विहगनि बझावौ ।—तुलसी
 (शब्द०) । (ख) चितवनि ललित नकुट लासा लटकनि पिय
 कार्प अलक तरंग ।—सूर (शब्द०) । २ एक विशेष प्रकार का
 चिपचिपा पदार्थ जो बहेलिए लोग चिड़ियों को फँसाने के लिये
 बरगद और गुलर के दूध में तीसी का तेल पराकर बनाते हैं ।
 विशेष—इस लामे को प्रायः वे लोग वृद्धों की डालियों पर लगा
 देते हैं, और जब पक्षी उनपर आकर बैठने है, तब उनके परो
 में यह लग जाता है, जिससे वे उड़ नहीं सकते । उस समय
 बहेलिए उन्हें पकड़ लेते हैं ।
 मुहा०—लासा लगाना = किसी को फँसाने के लिये किसी प्रकार
 का लालच या धोखा देना । फंदे में फँसाना । लामा होना =
 हरदम साथ लगे रहना । पीछा न छोड़ना ।
 लासानी—वि० [अ०] जिसका कोई सानी या जोड़ न हो । अनुपम ।
 अद्वितीय । वैजोड ।
 लास^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लास्य] दे० 'लास्य' । उ०—ताडव लासि
 और अग को गँवें जे जे रुचि उपजत जा के ।—स्वा० हरिदास
 (शब्द०) ।
 लासिक—वि० [सं०] नर्तक । नाचनेवाला [को०] ।
 लासिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. नर्तकी । २ पुष्पली । दुष्चाराया ।
 वेश्या । ३ एक नाट्यभेद । एक उपरूपक [को०] ।
 लासी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] जू की तरह का एक प्रकार का काला
 कीड़ा जो गेहूँ के पेड़ों से लगकर उन्हें निकम्मा कर देता है ।
 लासी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] दे० 'लसी' या 'लस्ती' ।
 लासु^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लास्य] दे० 'लास्य' ।
 लास्फोटनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छेदन का श्रौजार । गिलभिट ।
 बरमा [को०] ।
 लास्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ नृत्य । नाच । २ नाच या नृत्य के दो
 भेदों में से एक । वह नृत्य जा भाव और ताल आदि के सहित
 हो, कामल अंगों के द्वारा हो और जिसके द्वारा शृंगार आदि
 कामल रसों का उद्दीपन होता हो ।
 विशेष—साधारणतः स्त्रियों का नृत्य ही लास्य कहलाता है । कहते
 हैं, शिव और पार्वती ने पहले पहल मिलकर नृत्य किया था ।
 शिव का नृत्य ताडव कहलाया और पार्वती का 'लास्य' । यह
 लास्य दो प्रकार का कहा गया है—छुरित और योवत ।
 साहित्यदर्पण में इसके दस अंग बतलाए गए हैं, जिनके नाम इस
 प्रकार हैं—गेयपद, स्थितपाठ, आमीन, पुष्पगडिका, प्रच्छेदक,
 त्रिगूड, सैधवाख्य, द्विगूडक, उत्तमोत्तमक और युक्तप्रयुक्त ।
 ३ नट । अभिनेता । नर्तक (को०) ।
 लास्यक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नृत्य । नाच [को०] ।
 लास्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] नाचनेवाली । नर्तकी [को०] ।
 लाह^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाक्षा] लाख । चपडा । लाही । उ०—
 जाकी बाँकी वीरता मुनत सहमत धीर जाकी आंच घनहू लसत
 लक लाह सी ।—तुलसी (शब्द०) ।

लाह^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाभ, हिं० लाख] लाभ । फायदा । नफा ।
उ०—(क) दावा वरि पाहू को आवागौन मिसि ताके भानु
ससि अभिमति लाहा मे फिरत है ।—चरण (शब्द०) । (ख)
सारहि सव्द विचारिए सोइ सव्द सुख देय । अनसमभा सव्देक है
कछु न लाहा लेय ।—कवीर (शब्द०) । (ग) लहि जीवनमूर्ति
को लाह अली वै भले जुग चारि लीं जीवो करै ।—द्विजदेव
(शब्द०) । (घ) मैं तुमको कहि राखत हौं यह मान किए कछु
हैं न लाहै ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

लाह^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [? या सं० लाभ] चमक । आभा । काति । दीप्ति ।
उ०—सीसफूल वेनी बँदीं येमरि और वीरनि मैं हीरनि की लाह
मे हंसनि छवि छहरी ।—देव (शब्द०) ।

लाहर्ना—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] १ वह महुआ जो मद्य खींचने के उपरांत
देग मे बच रहता है । यह प्रायः पशुओं को खिलाया जाता
है । २ जूभी और महुए को मिलाकर उठाया हुआ खमीर ।
३ किमी प्रकार के पदार्थ का खमीर । ४ वे पेय ओपधियाँ
जो गीओ को बच्चा होने पर दी जाती हैं । ५ अनाज ढोने
की मजदूरी ।

लाहल—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लाहौल] दे० 'लाहौल' । उ०—लाहल पारख
शब्द के जो परखे सो पाक । तामे जो हल्ला करै सोई होइ
हलाक ।—कवीर (शब्द०) ।

लाहिक—वि० [अ० लाहिक] युक्त होनेवाला । मिलनेवाला [को०] ।

लाहीक—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लाहिकह] किसी शब्द के अंत मे लगनेवाला
अक्षर या शब्द । प्रत्यय [को०] ।

लाही^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लाक्षा, हिं० लाख, लाह] १ लाल रंग का
वह छोटा कीड़ा जो वृद्धों पर लाख उत्पन्न करता है । विशेष
दे० 'लाख' । २ इससे मिलता जुनता एक प्रकार का कीड़ा
जो प्रायः माघ फागुन मे पुरवा हवा चलने पर उत्पन्न होता
है और फसल को बहुत हानि पहुँचाता है ।

लाही^२—वि० लाह के रंग का । मटमलापन लिए लाल । उ०—
तनमुख सारी, लाही अंगिया, अतलस अंतरौटा, छवि, चारि
चारि चूरी पहुँचीनि पहुँची पमकि वनी नकफूल जेव मुख वीरा
चोका कौंवे सभ्रम भूली ।—स्वा० हरिदास (शब्द०) ।

लाही^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लावा] धान, बाजरे आदि के भूने हुए दाने ।
लावा । लाजा । खील ।

यौ०—लाही का सत्तू = धान की खीलों को पासकर बनाया हुआ
सत्तू जो बहत हलका होता है और प्रायः रोगियों को पथ्य के
रूप मे दिया जाता है ।

लाही^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] १ सरसो । २ काली सरसो । ३ तीसरी
बार का साफ किया हुआ शोरा ।

लाहु^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाभ] नफा । फायदा । प्राप्ति । लाभ ।
उ०—(क) हानि कुसग मुमगति लाहू । लोकहू, वेद विदित मव
काहू ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) मूर्कनि वचन लाहु मानो
अधनि लहे हैं विलोचन तारे ।—तुलसी (शब्द०) ।

लाहूत—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ ससार । दुनिया । जगत् । मर्त्य लोक ।
२. समाधि । ब्रह्मलीनता की अवस्था [को०] ।

लाहौर—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] भारत के पश्चिम पंजाब का एक प्रख्यात
एव प्राचीन नगर जो अब पाकिस्तान मे है ।

लाहौरी नमक—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लाहौरी + नमक] सैधव लवण । सेंवा
नमक । विशेष ० 'नमक' ।

लाहौल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक अरबी वाक्य का पहला शब्द जिमका
व्यवहार प्रायः भूत, प्रेत आदि को भगाने या घृणा प्रकट करने
के लिये किया जाता है । पूरा वाक्य यह है—'लाहौल बला
कूबत इल्ला विल्लाह' । इसका अर्थ है—ईश्वर के सिवा और
किसी मे कोई सामर्थ्य नहीं ।

मुहा०—लाहौल पढ़ना = (१) उक्त वाक्य का उच्चारण करना ।
(२) बहुत अधिक घृणा प्रकट करना ।

लाह्ला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] उल्लू पत्नी ।

लिंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्ग] १ वह जिससे किसी वस्तु की पहचान
हो । चिह्न । लक्षण । निशान । २ न्याय शास्त्र मे वह जिमसे
किमी का अनुमान हो । माधकहेतु । जैसे,—पर्वत मे आग है,
वहाँ घूम होने के कारण—यहाँ घूम अग्नि का लिंग है, अर्थात्
घूम से अग्नि के होने का अनुमान होता है ।

विशेष—लिंग चार प्रकार के होते हैं—(क) सव्द, जैसे,—घूम
अग्नि के साथ सव्द है । (ख) न्यस्त, जैसे,—गीग गाय के
साथ है । (ग) सव्दार्थ, जैसे,—भापा मनुष्य के साथ है । और
(घ) विपरीत, जैसे भला बुरे के साथ है ।

३ साक्ष्य के अनुसार मूल प्रकृति ।

विशेष—विकृति फिर प्रकृति मे लय को प्राप्त होती है, इसी से
प्रकृति को लिंग कहते हैं ।

४ पुष्प का चिह्न विशेष जिमके कारण स्त्री से उसका भेद जाना
जाता है । पुष्प की गुप्त इन्द्रिय । शिशन ।

पर्या०—उपस्थ । मदनाकुश । मोहन । कदरंगमुपल । शेफर् । मेढ़ ।
ध्वज । साधन ।

५ शिव की एक विशेष प्रकार की मूर्ति । ६ एक पुराण का
नाम ।

विशेष—लिंग पुराण मे लिखा है कि शिव के दो रूप हैं । निःक्रिय
और निर्गुण शिव अलिंग है और जगत्कारण रूप शिव लिंग
है । अलिंग शिव मे ही लिंग शिव की उत्पात्त हुई है । शिव को
लिंगी भी कहते हैं, और वह इसलिये कि लिंग या प्रकृति
शिव की ही है । इस प्रकार लिंग जगत्कारण रूप शिव का
प्रतीक है । पद्मपुराण मे शिव के इस रूप के सवध मे यह कथा
है—एक बार मंदराचल पर ऋषियो ने बडा भारी यज्ञ किया ।
वहाँ उन्होंने यह चर्चा छेडी कि ऋषियों का पूज्य देवता किसे
बनाना चाहिए । अत मे यह निश्चय हुआ कि शिव, विष्णु
और ब्रह्मा तीनों के पास चलकर इसका निर्णय करना चाहिए ।
सब ऋषि पहले शिव के पास गए । पर उस समय वे पार्वती के
साथ क्रीडा कर रहे थे, इससे नदी न द्वार पर उन्हें रोक
दिया । ऋषियो का प्रतीक्षा करते बहुत काल बीत गया । इम-
पर भृगु ऋषि ने कोप करके शाप दिया—'हे शिव ! तुमने

कामक्रीडा के चशीभून होकर हमारा अपमान किया, इसमें तुम्हारी मूर्ति योनि लिंग रूप होगी और तुम्हारा नैवेद्य काई ग्रहण न करेगा। पर इस कथा के सर्व्वष में यह ध्यान रखना चाहिए कि पद्मपुराण वैष्णवों का पुराण है।

किमी समय जगत्कारण के रूप में देवता या ईश्वर की उपासना के लिये लिंग का ग्रहण प्राचीन मिस्र, अरब, यहूद, यूनान और रोम आदि देशों में भी था। प्राचीन यूनानी लिंग को 'फेनस' कहते थे। यहूदियों में 'बाल' देवता की प्रतिष्ठा लिंग रूप में ही थी। बाबुन के खडहरो में मदिरों के अदर बहुत से 'निग' निकलते हैं, जो भारतीयों के शिवलिंग से बिल्कुल मिलते हैं। पर प्राचीन आर्यों में इस प्रकार की उपासना का पता नहीं लगता। वैदिक समय में कुछ अनार्य जातियों में 'लिंगपूजा' प्रचलित थी, इसका कुछ अभास वेद के एक मंत्र में मिलता है। उसमें 'शिशुदेवा' के प्रति उपासना का भाव प्रकट किया गया है। पर कब से वह शिव की प्रतिमा के रूप में गृहीत हुआ, इसका ठीक पता नहीं। इसके अतिरिक्त 'मोहनजोदड़ो' और 'हरप्पा' की खोदाई से प्राप्त अवशेषों में लिंग या उससे मिली जुलते आकार की उपास्य मूर्तियाँ मिली हैं।

६ व्याकरण में वह भेद जिसमें पुरुष और स्त्री का पता लगना है। जैसे—तुल्लिंग, स्त्रीलिंग। ७ मीमांसा में छह लक्षण जिनके अनुसार लिंग का निर्णय होता है। यथा—उपक्रम, उपसहार अभ्यास, अपूर्वता, अर्थवाद और उपपत्ति। ८ अठारह पुराणों में से एक। विशेष दे० 'लिंगपुराण'। ९ जाति। यह दो प्रकार का होती है—पुरुष तथा स्त्री (को०)। १० वेदान्त दर्शन के अनुसार सूक्ष्म शरीर। विशेष दे० 'लिंगदेह' (को०)। ११ ध्वजा। निशान। दाग (को०)। १२ सज्ञा का मूल रूप। प्रातिपदक (को०)। १३ कार्य। विपाक। परिणाम। फल (को०)। १४ उपाधि (को०)। १५ एक प्रकार का मकेत या सबध (संयोग, वियोग, साहचर्य आदि) जो किसी शब्द के किसी विशिष्ट अर्थ का ध्यान करने में सहायक होता है। अर्थद्योतक शक्ति (को०)। १६ प्रमाण। सवृत (को०)। १७ छत्र चिह्न, निशान या वेप (को०)। १८ रोग का निदान (को०)। १९ ईश्वर का प्रतीक चिह्न। देवमूर्ति (को०)।

लिंगक—सज्ञा सं० [सं० लिङ्गक] कपित्थ वृक्ष। कंध।

लिंगजोत्री—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गज्योति] एक विशेष प्रकार से गढा हुआ शिवलिंग। ज्योतिर्लिंग।

लिंगदेह—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गदेह] वह सूक्ष्म शरीर जो इस स्थूल शरीर के नष्ट होने पर भी मस्कार के कारण कर्मा का फल भोगने के लिये जीवात्मा के साथ लगा रहता है। (अध्यात्म)।

विशेष—इसमें ज्ञानेंद्रियों और कर्मेंद्रियों की सब वृत्तियाँ रहनी हैं, बसल उनका रूप नहीं रहते। इस देह में सत्रह तंत्र माने गए हैं—१० इंद्रियाँ, मन, ५ तन्मात्र और बुद्धि। उ०—लिंगदेह गुण यो निज मेह। दम इन्द्रिय दासी सो नेह।—सुर (शब्द०)।

लिंगधर—वि० [सं० लिङ्गधर] जो केवल चिह्न धारण किए हो। दोगी (को०)।

लिंगधारी—वि० [सं० लिङ्गधारिन्] चिह्न धारण करनेवाला।

लिंगन—सज्ञा पुं० [सं०] प्राक्लिङ्गन। छाती से लगाना (को०)।

लिंगनाश—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गनाश] १ अंग्रेज, जिसमें वस्तु की पहचान न हो सके। तिमेर। अवधार। २ आया का एक राग जिसमें पार्यों के सामने कभी अंग्रेज, कभी लाल पंजा आदि दिखाई पड़ता है। नीलका नामक राग।

विशेष—युशुन के अनुसार आँस के चौथे पटल में विकार होने में यह राग होता है। वात, पित्त और कफ के भेद में यह रोग तीन प्रकार का कहा गया है।

३. शिश्न का नाश (को०)। ४ उम चिह्न का न रहना जिसमें कोई वस्तु जानी जाय। परिचायक निशान, लक्षण आदि का नाश (को०)।

लिंगपरिवर्तन—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गपरिवर्तन] दे० 'लिंगविपर्यय'।

लिंगपीठ—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गपीठ] वह आधार जिसपर शिवलिंग स्थापित होता है। जलहरी। अरघा (को०)।

लिंगपुराण—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गपुराण] अठारह पुराणों में से एक जिसमें शिव का माहात्म्य और लिंग की पूजा की महिमा वर्णित है।

विशेष—इसकी श्लोकसंख्या ११,००० है। ब्रह्मा इसके मुख्य वक्ता है। इसमें शिव ही ब्रह्मा और विष्णु दोनों के अधिष्ठान कहे गए हैं। शिव जी ने अपने मुख में २८ अवतारों का वर्णन किया है। यह एक सांप्रदायिक पुराण है। जिस प्रकार विष्णु ने अपने उपासक अक्षरीय राजा की रक्षा की थी, उगी ढंग पर इसमें शिव द्वारा परम शत्रु दधौचि की रक्षा की कथा लिखी गई है। पहले पद्यरूप की सृष्टि की उत्पत्ति की कथा देकर फिर वैदिक मन्वन्तर के राजाओं की वंशावली श्रीकृष्ण के समय तक कही गई है। योग और अध्यात्म की दृष्टि में लिंगपूजा का गुह्यार्थ भी बताया गया है।

लिंगप्रतिष्ठा—सज्ञा स्त्री० [सं० लिङ्गप्रतिष्ठा] शिवलिंग की स्थापना (को०)।

लिंगवर्धन^१—वि० [सं० लिङ्गवर्धन] पुरुषेन्द्रिय को उत्तेजित करनेवाला (को०)।

लिंगवर्धन^२—सज्ञा पुं० कपित्थ। कंध (को०)।

लिंगवर्धिनी—सज्ञा स्त्री० [सं० लिङ्गवर्धिनी] अगामार्ग। चिचडा।

लिंगवर्धी—वि० [सं० लिङ्गवर्धिन्] दे० 'लिंगवर्धन' (को०)।

लिंगवस्त्ररोग—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गवस्त्ररोग] विगार्श नामक रोग।

लिंगवान^१—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गवान्] १ चिह्नवाला। लक्षणवाला। २ जिसमें शब्द के कई लिंग हों। ३ निर्विना धारण करनेवाला। जैसे, जगम आदि।

लिंगवान^२—सज्ञा पुं० पंखों का निगायत नामक संप्रदाय।

लिंगविपर्यय—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गविपर्यय] १ ध्यानरत में लिंग का परिवर्तन। २ भाव या पुत्र में स्त्री या स्त्री में पुरुष हो जाना।

लिंगवेदी—सज्ञा स्त्री० [सं० लिङ्गवेदी] निर्वाणता साधक। जलहरी। अरघा (को०)।

लिंगवृत्ति—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गवृत्ति] वह जो केवल बाहरी चिह्न या वेश बनाकर अपनी जीविका पैदा करता हो। आर्डररी। टकोनलेवाज।

लिंगशरीर—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गशरीर] दे० 'लिंगदेह'।

लिंगशास्त्र—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गशास्त्र] व्याकरण में लिंगविवेचन का प्रकरण। लिंगानुशासन [को०]।

लिंगशोफ—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गशोफ] शिरनेन्द्रिय का शोथ या मूजन [को०]।

लिंगस्थ—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गस्थ] ब्रह्मचारी। (मनुस्मृति)।

लिंगाकित—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गाकित] एक शैव सप्रदाय। वि० 'लिंगायत'।

लिंगाल्य—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गाल्य] सात्व्य मतानुसार सृष्टि का एक उपभेद [को०]।

लिंगाग्र—सज्ञा दे० [सं० लिङ्गाल्य] शिरनेन्द्रिय का भ्रगला भाग। मण्डि [को०]।

लिंगानुशासन—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गानुशासन] लिंगविवेचन शास्त्र। लिंगशास्त्र (व्याकरण)।

लिंगायत—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गायत] एक शैव सप्रदाय जिनका प्रचार दक्षिण में बहुत है।

विशेष—इन सप्रदाय के लोग शिव के अनन्य उपासक हैं और सोने या चाँदी के सपुट में शिवलिंग रखकर बाहु या गले में पहने रहते हैं। ये लोग 'जंगम' भी कहलाते हैं। इनके आचार और संस्कार भी श्रीरो से बिलक्षण होते हैं।

लिंगार्चन—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गार्चन] शिवलिंग का पूजन।

लिंगार्ग—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गार्ग] जननेन्द्रिय का एक रोग।

लिंगालिका—सज्ञा स्त्री [सं० लिङ्गालिका] एक प्रकार का छोटा चूड़ा [को०]।

लिंगिक—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गिक] लँगडापन [को०]।

लिंगिनी—सज्ञा स्त्री [सं० लिङ्गिनी] १ एक सता जिने पंच पुरिया कहते हैं और जो वैद्यक में कटु उष्ण दुर्ग्वनाशक तथा रसायन कही गई है। २ धर्मव्रजो या आडवर करनेवाली स्त्री।

लिंगी—वि० [सं० लिङ्गि] १ चिह्ननाम। निशानवाला। २ किसी चिह्न को धारण करने का अधिकारी [को०]। ३ जिनका मन और काम समान हो। विचार और कार्य में एक सा [को०]। ४ चिह्नित। अर्कत् [को०]। ५ नूझन शरीरो वा लिंगदही [को०]। ६ बाहरी रूपरंग या वेश बनाकर काम निकालनेवाला। आडवरी। धमव्वजी।

लिंगी—सज्ञा पुं० १ वरालिंगी। ब्रह्मचारी। २ शिवलिंग का पूजक। ३ दर्मी या छनी व्यक्त। ४ हाथी। ५ कारण। मूज। ६ परमात्मा। ७ एक शैव सप्रदाय [को०]।

लिंगेन्द्रिय—सज्ञा पुं० [सं० लिङ्गेन्द्रिय] पुरुषो की मूर्चेन्द्रिय।

लिट—सज्ञा पुं० [अ०] लूतेए में रंगा हुआ मुनायम कपडा या फलालीन जो धाव में भरहम लगाकर इसलिये भर दी जाती

है, जिसमें मुँह एकत्रारो बंद न हो जाय और मवाद न रुके।

लिटर, लिटल—सज्ञा पुं० [अ० लिटन] लोहे की छडो का जाल बाँधकर, उनके बीच इकहरी ईंटों की जोड़ाई तथा सीमेंट की ढलाई से बनी छत आदि जिसमें नीचे बरन आदि की आवश्यकता नहीं पडती [को०]।

लिहु—वि० [सं० लिहु] पिच्छिन। फिसलनवाली। जिनपर फिसलन हो [को०]।

लिप—सज्ञा पुं० [सं० लिप्] १ शिव का एक गण। २ लीपना। लेप करना [को०]।

लिपट—वि० सज्ञा पुं० [सं० लिपट] कामी। कामुक [को०]।

लिपाक—सज्ञा पुं० [सं० लिपाक] १ एक प्रकार का नीवू। २ खर। गदहा।

लिपि—सज्ञा स्त्री [सं० लिपि] दे० 'लिपि' [को०]।

लिफ—सज्ञा पुं० [अ०] शोतला का चेर जा टोका लगाने के काम में आता है।

लिए—हिंदी का एक कारक चिह्न जो सप्रदान में आता है, और जिन शब्द के आगे लगना है, उसके अर्थ या निमित्त किसी क्रिया का होना सूचित करता है। जंत,—मैं तुम्हारे लिए धाम लाया हूँ। यह चिह्न शब्द के संबन्ध कारक रूप 'का' के साथ लगता है। जैसे,—उसके लिए। बहुत से लोग इसकी व्युत्पत्ति मरुत्व 'वृते' से बताते हैं, पर 'लग्न' और 'लग्न' शब्द से इसका अधिक लगाव जान पड़ता है। पुरानी वाङ्मया विशेषत अरबी में 'लो' और 'लागे' रूप बराबर मिलते हैं यह प्राय 'लिये' भी लिखा जाता है।

लिकिन—सज्ञा पुं० [अ०] मटियाले रंग की एक बडी चिड़िया जिनकी टाँगें हाथ हाथ भर की और गरदन एक बालिश की होनी है।

लिक्चुच—सज्ञा पुं० [सं०] बडहर का पेड। लक्चु। चुक्र।

लिकखाड—सज्ञा पुं० [हि० लिखना { हि० लिख + खाड (प्रत्यय) }] बहुत लिखनेवाला। भारी लेखक। (व्यग्य या विनोद)।

लिकिडेटर—सज्ञा पुं० [अ०] वह अफसर जो किसी कंपनी या फर्म का कारखार उठाने, उसकी ओर से मामला मुकदमा लडने या दूसरे आवश्यक कार्य करने के लिये नियुक्त किया जाता है।

लिकिडेशन—सज्ञा पुं० [अ०] मरिचित पूँजी से चलनेवाली कंपनी या फर्म का कारखार बंद कर उसका संपत्ति से लेहनदारों का देना निपटाना और बचा हुई रकम को हिस्सेदारा में बाँट देना। जैसे,—वह कंपनी लिक्डेशन में बनी गई।

क्रि० प्र०—जाना।

लिच्चा—सज्ञा स्त्री [सं०] १ यूकाड। जूँ का चडा। लीच। २ एक परिमाण जो कई प्रकार का कहा गया है, जैसे,—कहाँ चार अणुपा की लिच्चा कही गई है, कहीं आठ बालाप्र की। (८ परमाणु = रज। ८ रज = बालाप्र)। ६ लिच्चा का एक सर्प (सरमो या राई) माना गया है।

लिच्चिका—सज्ञा स्त्री [सं०] लीच। जूँ [को०]।

लिखत^७—सज्ञा पुं [सं० लेख] भाग्य का लिखा । विधाता का लिखा । विधाता का लेख । भाग्य की बात । उ०—तजी है पीतम ने प्रीति मेरी, सखी ये लीला लिखत की है ।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ८५८ ।

लिखक—सज्ञा पुं [सं०] लेखक [को०] ।

लिखत—संज्ञा स्त्री [सं० लिखित] १ लिखी हुई बात । लेख । लिपिवद्ध विषय ।

यौ०—लिखन पढत ।

मुहा०—लिखत पढत होना = लिखा पढ़ी होना । लेख के रूप में पक्का होना ।

२ लिखित पत्र । ३ दस्तावेज ।

लिखधार^७—सज्ञा पुं [हिं० लिखना + धार (प्रत्य०)] लिखने-वाला । मुहम्मद या मुशी । उ०—साँचो सो लिखधार फहावै । काया ग्राम मसाहत करिकै जमा वाँधि ठहरावै ।—सुर (शब्द०)

लिखन—सज्ञा स्त्री [सं०] १ लिपि या लेख । लिखावट । २ लिखित पत्र । दस्तावेज (को०) । ३ चित्राकन । चित्रकारी (को०) । ४ कर्म की रेखा । भाग्य में निश्चित बात ।

लिखना—क्रि० सं० [सं० लिखन] १ किसी नुकाली वस्तु से रेखा के रूप में चिह्न करना । अंकित करना । २ स्याही में दूधी हुई कलम से अक्षरों की आकृति बनाना । अक्षर अंकित करना । लिपिवद्ध करना ।

यौ०—लिखना पढ़ना । लिखापढ़ी । लिखालिखी = दे० 'लिखापढ़ी' । उ०—लिखालिखी की है नहीं, देखा देखि की बात ।—कवीर सा०, पृ० ८५ ।

मुहा०—किसी के नाम लिखना = यह लिखना कि अमुक वस्तु किसी के जिम्मे है । जैसे,—१००) तुम्हारे नाम लिखे हैं । लिखना पढ़ना = विद्योपार्जन करना । विद्या का अभ्यास करना । जैसे,—वह लडका कुछ लिखता पढता नहीं । लिखा पढ़ा = शिक्षित ।

३. रंग से आकृति अंकित करना । चित्रित करना । चित्र बनाना । तस्वीर खीचना । जैसे,—चित्र लिखना । उ०—देखी चित्र लिखी सी टाढी ।—सुर (शब्द०) । ४ पुस्तक, लेख या काव्य आदि की रचना करना । जैसे,—यह पुस्तक किसकी लिखी है ?

सयो० क्रि०—डालना ।—देना ।—लेना ।

लिखनी^१—सज्ञा स्त्री [सं० लेखनी] १ कलम । २ भाग्यलिपि । प्रारब्ध । होनी । ३ लिखन की क्रिया या भाव [को०] ।

लिखवाई—सज्ञा स्त्री [हिं० लिखना] दे० 'लिखाई' ।

लिखवाना—क्रि० सं० [हिं० लिखाना] दे० 'लिखाना' ।

लिखवार, लिखहार^७—सज्ञा पुं [हिं० लिखना] दे० 'लिखधार' ।

लिखाई—सज्ञा स्त्री [हिं० लिखना] १ लेख । लिपि । २. लिखने का कार्य । ३ लिखने का ढंग । लिखावट ।

यौ०—लिखाई पढाई = विद्याभ्यास ।

४ लिखने की मजदूरी ।

लिखाना—क्रि० सं० [सं० लिखन] अंकित कराना । लिपिवद्ध कराना । दूसरे के द्वारा लिखने का काम कराना ।

सयो० क्रि०—डालना ।—देना ।—लेना ।

मुहा०—लिखाना पढाना = (१) शिक्षा देना । तालीम देना । (२) लेखवद्ध कराना ।

लिखापढ़ी—सज्ञा स्त्री [हिं० लिखना + पढ़ना] १ पत्रव्यवहार । चिट्ठियों का आना जाना । परस्पर लेखों द्वारा व्यवहार होना । जैसे,—(क) लिखापढ़ी करके उनसे यह बात तै कर लो । (ख) इसके बारे में बहुत दिनों तक लिखापढ़ी होती रही । २ किसी विषय को कागज़ पर लिखकर निश्चित या पक्का करना । जैसे,—पहले लिखापढ़ी करके तब रूपए दीजिए ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

लिखार^१—सज्ञा पुं [हिं० लिखना] १ दे० 'लिखाड' । २ दे० 'लिखवार' ।

लिखारी^१—सज्ञा स्त्री [हिं० लिखना] दे० 'लिखना' ।

लिखावट—सज्ञा स्त्री [हिं० लिखना + आवट (प्रत्य०)] १ लिखे हुए अक्षर आदि । लेख । लिपि । जैसे,—तुम्हारी लिखावट तो किसी से पढ़ी ही नहीं जाती । २ लिखने का ढंग । लेख-प्रणाली ।

लिखास—सज्ञा स्त्री [हिं० लिखना + आस (प्रत्य०)] लिखने की उतावली । उ०—तब एक सज्जन ने मेरी लिखास और युग की धारणा की दूरी को इन शब्दों में मझे लिखा या—आदर्मी बड़े भले हो । - हिमं (दो शब्द), पृ० ५ ।

लिखित^१—वि० [सं०] लिखा हुआ । लिपिवद्ध किया हुआ । अंकित । लिखित^२ सज्ञा पुं १ लिखी हुई बात । लेख ।

विशेष—व्यवहार (मामले, मुकदमे) में 'लिखित' चार प्रकार के प्रमाणों में से एक है । साक्षियों में भी एक लिखित साक्षी होते हैं । अर्थात् जिसे लाकर लिखा दे, वह लिखित साक्षी होगा । (मिताक्षरा) ।

२ रचना, लेख या पुस्तक आदि । ३ लिखी हुई सन्तद । प्रमाण-पत्र । ४ एक स्मृतिकार ऋषि । ४ चित्र । तस्वीर (को०) ।

लिखितक—सज्ञा पुं [सं० लिखित] एक प्रकार के प्राचीन चौखूँटे अक्षर जो खुतन (मध्य एशिया) में पाए गए शिलालेखों में मिलते हैं ।

लिखितव्य—वि० [सं०] आलेखन के योग्य । लिखने योग्य [को०] ।

लिखता—सज्ञा पुं [सं० लिखित] चित्रकार । चित्तेरा [को०] ।

लिखेरा सज्ञा पुं [हिं० लिखना] लिखनेवाला । लेखक ।

लिख्य—सज्ञा पुं [सं०] दे० 'लिख्य' [को०] ।

लिख्या - सज्ञा स्त्री [सं०] १ जूँ का अडा । लीख । १ एक परिमाण । विशेष दे० 'लिखा' ।

लिंगवृत्ति—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गवृत्ति] वह जो केवल बाहरी चिह्न या वेश बनाकर अपनी जीविका पैदा करता हो। आडवरी। ढकोसलेबाज।

लिंगशरीर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गशरीर] दे० 'लिंगदेह'।

लिंगशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गशास्त्र] व्याकरण में लिंगविवेचन का प्रकरण। लिंगानुशासन [को०]।

लिंगशोफ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गशोफ] शिशनेन्द्रिय का शोथ या मूजन [को०]।

लिंगस्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गस्थ] ब्रह्मचारी। (मनुस्मृति)।

लिंगाकित्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गाकित्त] एक शैव संप्रदाय। वि० 'लिंगायत'।

लिंगाख्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गाख्य] साख्य मतानुसार सृष्टि का एक उपभेद [को०]।

लिंगाग्र—सञ्ज्ञा दे० [सं० लिङ्गाग्र] शिशनेन्द्रिय का अग्रला भाग। मणि [को०]।

लिंगानुशासन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गानुशासन] लिंगविवेचन शास्त्र। लिंगशास्त्र (व्याकरण)।

लिंगायत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गायत] एक शैव संप्रदाय जिसका प्रचार दक्षिण में बहुत है।

विशेष—इस संप्रदाय के लोग शिव के अनन्य उपासक हैं और सोने या चाँदी के सपुट में शिवलिंग रखकर बाहु या गले में पहने रहते हैं। ये लोग 'जगम' भी कहलाते हैं। इनके आचार और संस्कार भी श्रीरो से विलक्षण होने हैं।

लिंगार्चन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गार्चन] शिवलिंग का पूजन।

लिंगार्थ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गार्थ] जननेन्द्रिय का एक रोग।

लिंगालिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लिङ्गालिका] एक प्रकार का छोटा चूड़ा [को०]।

लिंगिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गिक] लँगडापन [को०]।

लिंगिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लिङ्गिनी] १ एक लता जिसे पंच गुरिया कहते हैं और जो वैद्यक में कटु उष्ण दुर्गंधनाशक तथा रसायन कही गई है। २ धर्मस्वजी या आडवर करनेवाली स्त्री।

लिंगी—वि० [सं० लिङ्गिन्] १ चिह्नवाला। निशानवाला। २ किसी चिह्न को धारण करने का अधिकारी [को०]। ३ जिमका मन और काम समान हो। विचार और कार्य में एक सा [को०]। ४ चिह्नित। अर्कित् [को०]। ५ सूक्ष्म शरीरी वा लिंगदही [को०]। ६ बाहरी रूपरग या वेश बनाकर काम निकालनवाला। आडवरी। धमव्वजी।

लिंगी—सञ्ज्ञा पुं० १ वर्गलिंगी। ब्रह्मचारी। २ शिवलिंग का पूजक। ३ दर्भी या छली व्यक्त। ४ हाथी। ५ कारण। मूल। ६ परमात्मा। ७ एक शैव संप्रदाय [को०]।

लिंगेन्द्रिय—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्गेन्द्रिय] पुरुषो की मूर्धेन्द्रिय।

लिट—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] तूँट में रंगा हुआ मुलायम कपडा या फलालीन जो घाव में भरहम लगाकर इसलिये भर दी जाती

है, जिसमें मुँह एकबारगी बंद न हो जाय और मवाद न रुके।

लिटर, लिटल—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लिटेन] लोहे की छड़ों का जाल बाँधकर, उनके बीच इकट्ठी ईंटों की जोड़ाई तथा सीमेंट की ढलाई से बनी छत आदि जिसमें नीचे धरन आदि की आवश्यकता नहीं पड़ती [को०]।

लिटु—वि० [सं० लिन्दु] पिच्छिन। फिसलनवाली। जिसपर फिसलन हो [को०]।

लित्प—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिम्प] १ शिव का एक गण। २ लीपना। लेप करना [को०]।

लित्पट—वि० सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिम्पट] कामी। कामुक [को०]।

लिपाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिम्पाक] १. एक प्रकार का नीवू। २ खर। गदहा।

लिपि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लिम्पि] दे० 'लिपि' [को०]।

लिफ—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] शीतला का चेप जा टोंका लगाने के काम में आता है।

लिफ—हिंदी का एक कारक चिह्न जो संप्रदान में आता है, और जिस शब्द के आगे लगता है, उसके अर्थ या निमित्त किसी क्रिया का होना सूचित करता है। जैसे,—मैं तुम्हारे लिए आम लाया हूँ। यह चिह्न शब्द के सवध कारक रूप 'का' के साथ लगता है। जैसे,—उसके लिए। बहुत से लोग इसकी व्युत्पत्ति संस्कृत 'कृते' से बताते हैं, पर 'लग्न' और 'लग' शब्द से इसका अधिक लगाव जान पड़ता है। पुरानी वाक्यभाषा विशेषतः अन्वयी में 'लगि' और 'ला गे' रूप बराबर मिलते हैं यह प्रायः 'लिये' भी लिखा जाता है।

लिफिन—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] मटियाले रंग की एक बड़ी चिड़िया जिसकी टाँगें हाथ हाथ भर की और गरदन एक बालिश्व की होती है।

लिफुच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बड़हर का पेड़। लफुच। फुफ।

लिफखाड—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लिखना { हि० लिख + आड (प्रत्य०) }] बहुत लिखनेवाला। भारी लेखक। (व्यग्य या विनोद)।

लिफिडेटर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह अफमर जो किसी कपनी या फर्म का कारबार उठाने, उसका और से मामला मुकदमा लड़ने या दूबरे आवश्यक कार्य करने के लिये नियुक्त किया जाता है।

लिफिडेशन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] सन्निहित पूँजी से चलनेवाली कपनी या फर्म का कारबार बंद कर उसका संपत्ति से लेहूनदारों का देना निपटाना और बचा हुई रकम को हिस्सेदारों में बाँट देना। जैसे,—वह कपनी लिफिडेशन में चली गई।

क्रि० प्र०—जाना।

लिच्चा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ यूकाड। जूँ का अडा। लीख। २ एक परिमाण जो कई प्रकार का कहा गया है, जैसे,—कहो चार अणुओं की लिच्चा कही गई है, कही आठ बालाग्र की। (८ परमाणु = रज। ८ रज = बालाग्र)। ६ लिच्चा का एक सर्प (सरसो या राई) माना गया है।

लिच्छिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लीख। जूँ [को०]।

लिखत^(७)—सज्ञा पुं [सं लेख] भाग्य का लिखा । विवाता का लिखा । विवाता का लेख । भाग्य की बात । उ०—तजी है पीतम ने प्रीति मेरी, सखी ये लीला लिखत की है ।—पोद्दार अभि० ग्रं०, पृ० ८५८ ।

लिखत—सज्ञा पुं [सं] लेखक [को०] ।

लिखत—सज्ञा स्त्री [सं लिखित] १ लिपी हुई बात । लेख । निपिबद्ध विषय ।

यौ०—लिखन पदत ।

मुहा०—लिखत पदत होना = लिखा पढ़ी होना । लेख के रूप में पक्का होना ।

२ लिखित पत्र । ३ दस्तावेज ।

लिखधार^(७)—सज्ञा पुं [हि० लिखना + धार (प्रत्य०)] लिखने वाला । मुहूरि या मुशी । उ०—साँचो सो लिखधार कहावै । काया ग्राम मसाहत करिकै जमा बाँधि ठहरावै ।—सूर (शब्द०)

लिखन—सज्ञा स्त्री [सं] १ लिपि या लेख । लिखावट । २ लिखित पत्र । दस्तावेज (को०) । ३ चित्राकन । चित्रकारी (को०) । ४ कर्म की रेखा । भाग्य में निश्चित बात ।

लिखना—क्रि० सं [सं लिखन] १ किसी नुकाली वस्तु से रेखा के रूप में चिह्न करना । अंकित करना । २ स्याही में डूबी हुई कलम से अक्षरों की आकृति बनाना । अक्षर अंकित करना । लिपिबद्ध करना ।

यौ०—लिखना पढ़ना । लिखापढ़ी । लिखालिखी = दे० 'लिखापढ़ी' । उ०—लिखालिखी की है नहीं, देखा देखि की बात ।—कबीर सा०, पृ० ८५ ।

मुहा०—किमी के नाम लिखना = यह लिखना कि अमुक वस्तु किमी के जिम्मे है । जैसे,—१००) तुम्हारे नाम लिखे हैं । लिखना पढ़ना = विद्योपार्जन करना । विद्या का अभ्यास करना । जैसे,—वह लडका कुछ लिखता पढ़ता नहीं । लिखा पढ़ा = शिक्षित ।

३. रंग से आकृति अंकित करना । चित्रित करना । चित्र बनाना । तसवीर खींचना । जैसे,—चित्र लिखना । उ०—देखी चित्र लिखी सी राठी ।—सूर (शब्द०) । ४ पुस्तक, लेख या काव्य आदि की रचना करना । जैसे,—यह पुस्तक किसकी लिखी है ?

सयो० क्रि०—डालना ।—देना ।—लेना ।

लिखनीं—सज्ञा स्त्री [सं लेखनी] १ कलम । २ भाग्यलिपि । प्रारब्ध । होनी । ३ लिखन की क्रिया या भाव [को०] ।

लिखवाई—सज्ञा स्त्री [हि० लिखना] दे० 'लिखाई' ।

लिखाना—क्रि० सं [हि० लिखाना] दे० 'लिखाना' ।

लिखवार, लिखहार^(७)—सज्ञा पुं [हि० लिखना] दे० 'लिखधार' ।

लिखाई—सज्ञा स्त्री [हि० लिखना] १ लेख । लिपि । २. लिखने का कार्य । ३ लिखने का ढंग । लिखावट ।

यौ०—लिखाई पढ़ाई = विद्याभ्यास ।

४ लिखने की मजदूरी ।

लिखाना—क्रि० सं [सं लिखन] अंकित करना । निपिबद्ध करना । हमारे के द्वारा लिखने का काम करना ।

सयो० क्रि०—डालना ।—देना ।—लेना ।

मुहा०—लिखाना पढ़ाना = (१) शिक्षा देना । तालीम देना । (२) लेखवद्ध करना ।

लिखापढ़ी—सज्ञा स्त्री [हि० लिखना + पढ़ना] १. परव्यवहार । चिट्ठियों का आना जाना । परस्पर लेगे द्वारा व्यवहार देना । जैसे,—(क) लिखापढ़ी करके उनसे यह बात तै कर लो । (ख) इसके बारे में बहुत दिनों तक लिखापढ़ी होती रही । २ किमी विषय को कागज पर लिखकर निश्चित या पक्का करना । जैसे,—पहले लिखापढ़ी काके तब रूप दर्जिग ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

लिखारीं—सज्ञा पुं [हि० लिखना] १ दे० 'लिखाराड' । २ दे० 'लिखवार' ।

लिखारीं—सज्ञा स्त्री [हि० लिखना] दे० 'लिखनी' ।

लिखावट—सज्ञा स्त्री [हि० लिखना + आवट (प्रत्य०)] १ निचे हुए अक्षर आदि । लेख । लिपि । जैसे,—तुम्हारी लिखावट तो किसी से पढ़ी ही नहीं जाती । २ लिखने का ढंग । लेख-प्रणाली ।

लिखास—सज्ञा स्त्री [हि० लिखना + आस (प्रत्य०)] लिखने की उतावली । उ०—तब एक सज्जन ने मेरी निग्राम और युग की धारणा की दूरी को इन शब्दों में मुझे लिखा था—आदमी बड़े भले हो । - हिम० (दो शब्द), पृ० ५ ।

लिखित—वि० [सं] लिखा हुआ । लिपिबद्ध किया हुआ । अंकित । लिखित सज्ञा पुं १ लिखी हुई बात । लेख ।

विशेष—व्यवहार (मामले, मुकदमे) में 'लिखित' चार प्रकार के प्रमाणों में से एक है । साक्षियों में भी एक लिखित साक्षी होने ह । अर्थां जिसे लाकर लिखा दे, वह लिखित साक्षी होगा । (मिताक्षरा) ।

२ रचना, लेख या पुस्तक आदि । ३ लिखी हुई गनद । प्रमाण-पत्र । ४ एक स्मृतिकार श्रुति । ४ चित्र । तसवीर (को०) ।

लिखितक—सज्ञा पुं [सं लिखित] एक प्रकार के प्राचीन चाँटे अक्षर जो मुतन (मध्य एशिया) में पाए गए लिखालियों में मिलते हैं ।

लिखितव्य—वि० [सं] आलेखन के योग्य । लिखने योग्य [को०] ।

लिखता—सज्ञा पुं [सं लिखित] चित्रकार । चित्रकार [को०] ।

लिखेरा—सज्ञा पुं [हि० लिखना] लिखनेवाला । देखर ।

लिख्य—सज्ञा पुं [सं] दे० 'लिखनी' [को०] ।

लिख्या—सज्ञा स्त्री [सं] १ जूना आग । लीख । १. एक परि-माण । विशेष दे० 'लिखा' ।

लिंगदी—सज्ञा स्त्री० [दश०] कमजोर छोटी घोड़ी ।

लिंगु—सज्ञा पुं० [सं०] १ मन । २ मूर्ख । ३ मृग । ४ भूप्रदेश ।

लिचेन—सज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार की घाम जो पानी में होनी है ।

लिच्छवि, लिच्छवि—सज्ञा पुं० [सं०] एक इतिहासप्रसिद्ध राजवंश जिसका राज्य किसी समय में नेपाल, मगध और काश्ल में था ।

विशेष—प्राचीन ससृत्त साहित्य में क्षत्रियों की इन शाखा का नाम 'लिच्छवि' या 'लिच्छवि' मिलता है। पाली रूप 'लिच्छवि' है। मनुस्मृति के अनुसार लिच्छवि लोग व्रात्य क्षत्रिय थे। उसमें इनकी गणना भृत्त, मल्ल, नट, करण वंश और द्रविड के साथ की गई है। ये 'लिच्छवि' लोग वैदिक धर्म के विरोधी थे। इनकी कई शाखाएँ दूर दूर तक फैली थीं। वंशालीयाना शाखा में जैन तीर्थंकर महावीर स्वामी हुए और काश्ल की शाक्य शाखा में गौतम बुद्ध प्रादुर्भूत हुए। किसी समय मिथिला से लेकर मगध और कोशाल तक इस वंश का राज्य था। जिन प्रकार हिंदुओं के ससृत्त ग्रंथों में यह वंश हीन कहा गया है, उसी प्रकार बौद्धों और जैनों के पालि और प्राकृत ग्रंथों में यह वंश उच्च कहा गया है। गौतम बुद्ध के समामयिक मगध के राजा बिंबसार ने वंशाली के लिच्छवि लोगों के यहाँ मगध किया था। पीछे गुप्त सम्राट् ने भी लिच्छवि कन्या से विवाह किया था।

लिट्—वि० [सं०] लेहन करनेवाला। जैसे, मधुलिट् (ममासात में प्रयुक्त)।

लिटरेचर—सज्ञा पुं० [अ०] साहित्य। वाङ्मय। जैसे,—इंग्लिश लिटरेचर।

लिटरेरी—वि० [अ०] साहित्य संबंधी। साहित्यिक। जैसे,—लिटरेरी कानफरेंस।

लिटाना—क्रि० स० [हिं० लेटना] लेटने की क्रिया कराना। दूसरे को लेटने में प्रवृत्त कराना।

लिटोरा—सज्ञा पुं० [द्य०] दे० 'लिसोडा'।

लिट्टू—सज्ञा पुं० [द्य०] [स्त्री० अल्पा० लिट्टी] मोटी रोंटी जो बिना तवे के आग ही पर सेंकी जाय। अगारुडा। वाटी।

लिठोर—सज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का नमकीन पकवान।

लिडार'—सज्ञा पुं० [देश०] शृगाल। गीदड़।

लिडार'—वि० [द्य०] डरपोक। कायर। बुजबुल। उ०—शिशुद होइ शुद्ध को विरुद्ध वात ना कहौ। न वाचिहौ घट घुने लिडार हान ना चहौ।—केशव (शब्द०)।

लिडौरी—सज्ञा स्त्री० [देश०] अनाज के वे दाने जो पीटने के पीछे बाल में लगे रह जाते हैं। भुडारी। दाबरी। पकुरी। चित्ती।

विशेष—यह शब्द रबी का फल के लिये बोला जाता है।

लिप—सज्ञा पुं० [सं०] लेपन। लेप करना [क्रि०]।

लिपटना—क्रि० प्र० [सं० लिप्त] १ एक वस्तु का दूसरे को घेरकर उससे खूब सट जाना। किसी वस्तु से दृढतापूर्वक जा लगना। वेष्टित करके सलग्न होना। चिमटना। जैसे,—ताँत का पैर से लिपटना, बच्चे का माँ से लिपटना, लता का पेड़ से लिपटना।

सयो० क्रि०—जाना।

२ इस प्रकार लग जाना कि जन्दी न टूटे। लिपटना। ३ गले लगना। आनिगन करना। जैसे,—यह उममें लिपटार राने लगा। ४ किसी काम में जी जान में लग जाना। तनय होकर प्रवृत्त जाना। जैसे,—जिम काम में लिपटना है, उस पूरा करके छोड़ता है। ५. दगल देना। हस्तक्षेप करना।

लिपटाना—क्रि० ग० [हिं० लिपटना या सं० रूप] १. एक वस्तु को दूसरी वस्तु से मूत्र गटाना। मलमन करना। चिमटना। २. किसी तो हाथ में घेरकर प्रपन करीब में मूत्र गटाना। आनिगन करना। गले लगाना। उ०—कान्द के मानन छोड़ुंगे नाइ रहीं लिपटाइ तनगनता गी।—पद्माकर (शब्द०)। ३. परताना।

लिपटा—सज्ञा पुं० [द्य०] लुगना। लपटा। (बनदर)।

विशेष—बनदर भानू नाकर जय उममें जागा से कपटा मीगने का कहने हैं, तब 'लिपट', 'लिपटा' कहने ल।

लिपडा—वि० [हिं० लिप] लेई की तरह गोना और लिपचिता।

लिपड़ी—सज्ञा स्त्री० [हिं० लिपटा] लेई की तरह गोना और लिपचिता। लिपटा पदार्थ। जैसे,—हनुग पानी मयिा रीने से लिपटी रो गया।

लिपडी—सज्ञा स्त्री० [अ० लिपरी] २० 'लिपटी'।

लिपना—क्रि० प्र० [सं० लिप्] १ किसी रंग या गोली वस्तु को पतली तट में टक जाना। पोता जाना। जैसे,—भारा घर गोवर में लिप गया।

यौ०—लिपा पुता = रक्छ । माक । भक्त ।

२ रंग या गोली वस्तु का फैल जाना। जैसे,—हाथ पटने में कागज पर स्याही लिप गई।

सयो० क्रि०—जाना।

यौ०—लिपा पुता = जिमपर घचे आदि हो। बदरग।

लिपवाना—क्रि० म० [हिं० लीपना] लीपन का काम दूसरे में कराना। दूसरे को लीपने में प्रवृत्त करना।

लिपस्टिक—सज्ञा स्त्री० [अ०] मोठ रंगने की नाली। मोम इत्यादि में रंग मिलाकर बनी हुई एक वस्ती जिसे मियी मोठों पर रंगटकर उने लाल करता है। उ०—उममें मे एक गुनाशी रंग की साठी में नुसज्जित, पीडर की चमक और लिपस्टिक की रंगीनी में मुष्ोभित रमणों तथा चार परपो ने उतरकर भीतर प्रवेश किया।—सन्धासी, पृ० १३२।

लिपाई—सज्ञा स्त्री० [हिं० लिपना] १ किसी रंग या धुली हुई गोली वस्तु की तह फलाने की क्रिया या भाव। २ दीवार या जमीन पर धुली हुई मिट्टी या गोवर की तह फँसाना। लेपना। पोताई। ३ लीपने की मजदूरी।

लिपाना—क्रि० स० [हिं० लीपना] १ रंग या किसी गोली वस्तु की तह चढ़वाना। पुताना। २ दीवार या जमीन पर सफाई के लिये धुली हुई मिट्टी या गोवर की तह चढ़वाना। मिट्टी, गोवर आदि का लेप कराना। उ०—जागी महारि पुत्र मुख

देख्यो आनंद तूर बजायो हो। कचन कलस होय द्विज पूजा
चदन भवन लिपायो हो।—(शब्द०)।

सयो० क्रि०—डालना।—देना।—लेना।

लिपि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ अक्षर या वर्ण के अंकित चिह्न। लिखा-
वट। २ अक्षर लिखने की प्रणाली। वर्ण अंकित करने की
पद्धति। जैसे,—ब्राह्मी लिपि, खरोष्ट्री लिपि, अरबी लिपि।
३ लिखे हुए अक्षर या बात। लेख। जैसे—भाग्यलिपि।
उ०—जिनके भाल लिखी लिपि भेरी सुख की नही निसानी।
—तुलसी (शब्द०)। ४. लेप। लेपन (को०)। ५. चित्रकारी।
रेखाकन (को०)। ६ बाह्य आकृति। गढन (को०)।

लिपिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लेखक। कर्णिक। क्लार्क (को०)।

लिपिकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लेखक। लिखनेवाला। २. रंगाई
पुताई का काम करनेवाला (को०)। ३ उत्कीर्ण। करनेवाला।
नक्काश (को०)।

लिपिकर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिपिकर्मन्] अकन। लिखाई। चित्र-
कारी (को०)।

लिपिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लिपि। लिखावट। दे० 'लिपि'।

लिपिकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लिखनेवाला। लेखक। दे० 'लिपिकर'।

लिपिज्ञ—वि० [सं०] जो लिख सकता हो। लिपि का जानकार (को०)।

लिपिज्ञान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लिखने की कला (को०)।

लिपिन्यास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लेखनकला अथवा लिखने की क्रिया (को०)।

लिपिफलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पत्थर, तख्ती, धातुपत्र आदि जिनपर
अक्षर खोदे जायें।

लिपिवद्ध—वि० [सं०] लिखा हुआ। लिखित।

लिपिशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वह शाला जहाँ लिखना सिखाया
जाता हो। लेखन विद्यालय।

लिपिशाम्भ्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विभिन्न लिपियों के लिखने की विद्या।

लिपिसनाह—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिपिसनाह] मणिवव या कलाई पर
पहनने का एक पट्टा (को०)।

लिपिसञ्ज्ञा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लिखने का उपकरण। लिखने का
सामान (को०)।

लिप्त—वि० [सं०] १ जिसपर किसी गीली वस्तु (जैसे,—घुली मिट्टी,
चंदन आदि) की तह चढा हो। जिसपर लेप किया गया हो।
लिपा हुआ। पुता हुआ। चर्चित। २ जो लीपा गया हो।
जिसकी पतली तह चढी हो। ३. गाढ़ा लगा हुआ। खूब
सलगन। ४ खूब तत्पर। लीन। अनुरक्त। फँसा हुआ।
जैसे,—विषय भोग में लिप्त। ५ जहरीला किया हुआ। विपाक्त
किया हुआ। जैसे,—वाण का फल (को०)। ६ खाया हुआ।
भक्षित (को०)।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

लिप्तक—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] विष में बुझाया हुआ तीर। जहरीला
तीर (को०)।

लिप्तवासित—वि० [सं०] सित और सुवासित (को०)।

लिप्तहरत—वि० [सं०] किसी वस्तु में लिपटे या रंगे हुए हाथो-
वाला (को०)।

लिप्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] ज्योतिष के अनुसार काल का एक मान जो
एक मिनट के बराबर होता है।

लिप्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लेप। लेपन (को०)।

लिप्तिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लिप्ता' (को०)।

लिप्सा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्राप्ति की कामना। लालच। लोभ। २.
चाह। इच्छा। आकांक्षा।

लिप्सित—वि० [सं०] इच्छित। अभिलषित। आकांक्षित (को०)।

लिप्सितव्य—वि० [सं०] प्राप्त करने के योग्य। अभिलषणीय। जो
प्राप्त करने योग्य हो (को०)।

लिप्सु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाभ की इच्छा रखनेवाला। लोलुप।
लोभी। लालची। जैसे,—यशोलिप्सु।

लिफाफ—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लिफाफ] शव का आच्छादन। कफन (को०)।

लिफाफा—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लिफाफह] १. कागज की बनी हुई चौकोर
खोली या थैली जिसके अंदर चिट्ठी या कागजपत्र रखकर भेजे
जाते हैं। जैसे,—लिफाफे में बद करके चिट्ठी डाल देना।

मुहा०—लिफाफा खुल जाना = भेद खुल जाना। छिपी हुई बात
का प्रकट हो जाना।

२ ऊारी आच्छादन। सजावट की पोशाक। दिखावटी कपड़े
लत्ते। जैसे,—आज तो खूब लिफाफा बदलकर निकले हो।

मुहा०—लिफाफा बदलना = भड़कदार कपड़े पहनना।

३ ऊारी आडवर। झूठी तडक भडक। मुलम्मा। कलाई।

मुहा०—लिफाफा खुल जाना = असली रूप प्रकट हो जाना।
लिफाफा बनाना = (१) ठाठ वाट बनाना। (२) आडवर
करना। ढकोमला रचना।

४ खाल। थैला (को०)। ५ शवाच्छादन वस्त्र। कफन (को०)।

६ जल्दी नष्ट हो जानेवाली वस्तु। दिखाऊ चीज। काजू
भोजू चाज।

लिफाफिया—वि० [अ० लिफाफा + इया (प्रत्यय०)] तडक भडक वाला।
दिखाऊ। कमजार। निस्तत्व।

लिबडना—क्र० अ० [देश०] सन जाना। लथपथ होना।
। लभडना।

लिबडना^२—क्रि० सं० दे० 'लिभडना'।

लिबड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लिबरी, तुल० हिं० लुगडी] कपडा लत्ता।

यी०—लिबडी बरताना या बारदाना = निर्वाह का सामान।
असबाब। जैसे,—प्रपना लिबडी बरताना उठाओ, और
चल दो।

लिवरल—वि० [अ०] उदार नीतिवाला।

लिवरल^२—सञ्ज्ञा पुं० १ इंग्लैंड का एक राजनीतिक दल जिसकी नीति
अधीनस्थ देशों की व्यवस्था के सर्वध में तथा अन्य राज्यों के

माथ व्यवहार करने में उदार कही जाती है। २ (स्वतंत्रता-प्राप्ति के पूर्व का) भारत का एक राजनीतिक दल जो बहुत ही नीम्य उपायों में अपने देश को स्वतंत्र करता चाहता था।

लियास—सज्ञा पुं० [अ०] पहनने का कपड़ा। आच्छादन। पढ़ना। पोशाक। उ०—तुमने यह कुमुम विहग लियास, क्या अपने सुख से मय्य बुना ?—युगात्, पृ० ५०।

लियास—सज्ञा पुं० [सं० लिक्कुर] प्रतिलिपि करनेवाला। लेखक (को०)।

लियास—सज्ञा स्त्री० [सं०] लिपि। लिखावट।

लियासना—क्रि० प्र० [हिं० लिखना] दे० 'लिखना'। उ०—अपनी छाती पर कथा चून से लियाडी हुई उँगलिया का छाया लिए हुए पावे पान के शोभिने को फिर भाँ घूर रहे व।—नई०, पृ० ६६।

लियासना—क्रि० म० लक्ष्य करना। इधर उधर लेप देना। सान देना।

लियासना—सज्ञा पुं० [हिं० नीवू, निवुया] नीवू, उ०—गोरे के अंगना में एक पेट लियासना, ओ मारे दाईं पछा करत ह्य वमेर।—शुक्ल० अ० (साहित्य), पृ० १४३।

लियासना—सज्ञा स्त्री० [अ० लियासना] १ योग्यता। पापता। काविलियत। २ गुण। हुनर। ३ सामर्थ्य। समर्थ। हीमला। ४ शील। शिष्टता। श्रद्धा।

लियासना—सज्ञा स्त्री० [अ० लियासना, या लयसना, लासना] दे० 'लानत'। उ०—बडा काम फरमा जो मुजकों मजे, हे इम नाम ते मोत लियासना मुजे।—दक्खिनी०, पृ० २८६।

लियासना—सज्ञा पुं० [सं० लनाट] दे० 'लनाट'। उ०—जीउ काडि भुईं वरी ललाह।—जायसी ग्र० (गुप्त), पृ० २८५।

लियासना—क्रि० प्र० [हिं०] शनुरोध करना। रिरिया कर बात करना। गीस निकालना। उ०—लाभ कवन पहो इत घाइ। तहँ बि.घ वहतु लिलाइ लिलाइ।—नद० प्र०, पृ० २७३।

लियासना—सज्ञा पुं० [पुर्त० लीलाम] दे० 'लीलाम'। उ०—बिसी भाई का लिलाम पर चढा हुआ बंन लेन में जो पाप है, वही इस समय तुम्हारी गाय लेने में है।—गोदान, पृ० १०।

लियासना—सज्ञा पुं० [सं० ललाट] १ भाल। माथा। मस्तक। उ०—लेखनि लिलार की परेरनि मुरति है।—घनानन्द, पृ० २३। २ कूएँ का वह मिरा जहाँ मोट का पानी उलटत है।

लियासना—सज्ञा पुं० [हिं० नील, लील + कार] नीलगर। रंगरेज।

लियासना—सज्ञा पुं० [देश०] हाथ का बटा हुआ देशी सुत।

लियासना—वि० [सं० लल (= चाह करना)] लालची। अति लोभी। उ०—बूझिये की जक लागी है फान्हि केशव की रचि रूप लिलोही।—केशव (शब्द०)।

लियासना—सज्ञा स्त्री० [हिं०] लगन। ली।

लियासना—सज्ञा पुं० [अ०] दे० 'लीवर' (को०)।

लियाना—क्रि० म० [हिं० लीना का प्र० रूप] १ लेने का काम दूध में करना। प्रयोग करना। धमका। पारना। उ०—दूधाम भीम परनिजा प्राय निजाऊँ पैज गी।—गूर (ग० २०)।

लियाना—क्रि० म० [हिं० लीना का प्र० रूप] लाने का काम दूध में करना। जैमे, — लता मद्रूर ते निजा लाना।

लियाना—सज्ञा पुं० का प्रयोग मवाय्य क्रिया 'लाना' के साथ हाता है।

लियाना—क्रि०—लाना।

लियासना—लियासना = माथ ले अना।

लियासना—सज्ञा पुं० [हिं० लीना + लाना] लगी देनेवाला। लीनासना।

लियासना—सज्ञा स्त्री० [सं०] 'लीना' (को०)।

लियासना—सज्ञा पुं० [हिं० लीना] लीनासना।

लियासना—सज्ञा पुं० [हिं० लीना] लीनासना।

लियासना—वि० [सं०] लघुनासना। मज्जित (को०)।

लियासना—सज्ञा पुं० [सं०] लक्षक। लक्षकनासना।

लियासना—सज्ञा पुं० [सं०] १ लीना। लाना। लीना। २ भाषा। बोली। जमान (को०)।

लियासना—सज्ञा पुं० [हिं० लीना (= लिखावट)] लीनासना का एक पेट।

लियासना—इसके पत्ते कुछ गानाट लिखे होते हैं। इनके फल छोटे पैर के बराबर होते हैं और मुद्गा के समान हैं। पत्तों पर इसमें लमवार गूदा ही जाता है, जो गोद की तरह चिपकता है। यह गूदा हलौम लोण लोणी में दले हैं। पत्ते पीछे (लोणी की) के लिये लपेटने के काम में आते हैं। छान के रंग में रसम बटे जाते हैं। शंकर की लकड़ी भजवा होती है और बिरंगी तथा गेती के सामान बसाने के काम की होता है। इनके फूलों की लगारी और लकड़ों के लिये भी बरतते हैं। इनके 'लमेरा' और 'लियासना' भी लीनासना हैं।

लियासना—सज्ञा पुं०—शुद्धता। शूरचुम्बर।

लियासना—सज्ञा स्त्री० [सं०] फेहरिस्त। ताविका। फर्द।

लियासना—सज्ञा पुं० [सं०] चाटना।

लियासना—वि० चाटनेवाला। जीत, —महालिह।

लियासना—वि० [सं० लेहा] वह व्यक्ति जिसका स्वाद जीभ के द्वारा हो। उ०—चारि प्रकार विचित्र मुध्यजन। गुरु, भोज्य, पुम, लिह, मारजन।—नद० प्र०, पृ० ३०२।

लियासना—सज्ञा स्त्री० [अ०] वल्लन। छाल। बकला।

लियासना—सज्ञा स्त्री० [अ० लिहाज] १ व्यवहार या बरताव से किसी बात का ध्यान। कोई काम करते हुए उसके सबब में किसी बात का ध्यान। जैसे, — (क) उसकी तदुत्सनी के लिहाज से मैंने उसे हलका काम दिया। (ख) दया में मैंने खासी का लिहाज भी रखा है।

लियासना—क्रि० प्र०—करना।—रखना।

लियासना—२. उपापूर्वक किसी बात का ध्यान। मेहरबानी का खयाल। उपा-

दृष्टि ३ किसी को कोई बात अप्रिय या दुःखदायी न हो, इस बात का खयाल। मुरब्बत। मुलाहजा। शील सकोच। जैसे,—काम बिगड़ने पर वह कुछ भी लिहाज न करेगा। ४ पक्षगत। तरफदारी। ५ बड़ों के सामने ढिठाई आदि न प्रकट हो, इस बात का ध्यान। समान या मर्यादा का ध्यान। अदब का खयाल। जैसे,—बड़ों का लिहाज रखा करो। ६ लज्जा। शर्म। हया।

क्रि० प्र०—ग्राना।—करना।—रखना।

मुहा० लिहाज उठना या टूटना = लिहाज न रहना। मर्यादा, समान आदि का ध्यान न रहना। उ०—अब लिहाज टूट गया। शर्म मजिलो टूट है।—फियाना०, भा० ३, पृ० १४८।

लिहाजा—अव्य० [अ० लिहाजा] अत। अतएव। इसलिये।

लिहाजा—वि० [दश०] १ नीच। वा हयात। गिरा। २ खराब। निकम्मा।

लिहाजी^१—सच्चा स्त्री० [दश०] उपहास। विडवना। निंदा।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

मुहा०—लिहाजी लेना = (१) उपहास करना। ठूठा करना। बनाना। (२) निंदा करना।

लिहाजी^२—वि० [हि० लेना ?] लेनेवाला। उच्चारण करनेवाला। उ०—चाके कुल मे भक्त मम नाम लिहाजी होय। एक एक शत आपनी पीढ़ी तारत सोय।—(शब्द०)।

लिहाफ—सच्चा पुं० [अ० लिहाफ] १ रात को सोते समय ओढने का लुईदार कपडा। भारी रजाई। २ मोटा चदरा। ३ झूल (हाथो या घोडे की)।

लिहित^३—वि० [स० लिह] चाटता हुआ। उ०—उन्नत कष कटि खीन विशद भुज अग अग प्रात मुखदाई। सुभग कपोल नामिका, नैन छवि अलक लिहित घृन पाई।—पूर (शब्द०)।

लीक^४—सच्चा स्त्री० [स० लिख्] १ लवा चला गया चिह्न। लकीर। रेखा।

क्रि० प्र०—खीचना।

मुहा०—लीक करके = द० 'लीक खीचकर'। उ०—आगम निगम पुरान कहत करि लीक।—तुलसी (शब्द०)। लीक खीचना = (१) किसी बात का अटल और दृढ होना। इस प्रकार स्थिर किया जाना कि न टले। (२) मर्यादा बंधना। व्यवहार का प्रतिबध या नियम स्थापित होना। हृद या कायदा मुकर्रर होना। (३) साख बंधना। प्रातष्ठा स्थिर होना। उ०—हरि चरनारविंद तजि लागत अनत कहूँ तिनकी माण कांचो। सूरदास भगवत भजत जे तिनकी लोक चहूँ दिसि खांची।—सूर (शब्द०)। लीक खीचकर = इस बात की दृढ प्रातष्ठा करके कि ऐसा ही होगा। निश्चयपूर्वक। जोर देकर। उ०—सूर श्याम तेरे बस राधा, कहति लोक मैं खांची।—सूर (शब्द०)।

२. गहरी पड़ी हुई लकीर। ३. गाड़ी के पहिए से पड़ी हुई लकीर।

उ०—लोक लोक गाड़ी चलै लीक चलै कपूत।—(शब्द०)। ४ चलने चलने बना हुआ रास्ते का निशान। दुरी। जैसे,—यही लोक पकड़े सीधे चले जाओ।

मुहा०—लोक पकड़ना = दुरी पर चलना। पगडंडी पर होना। लोक पीटना = पुराने निकले हुए रास्ते पर चलना। चलो आती हुई प्रथा का ही अनुसरण करना। बंधी हुई रीति या प्रणाली पर ही चलना। लोक लोक चलना = द० 'लोक पीटना'।

५ महत्व या प्रतिष्ठा। मर्यादा। नाम। यश। उ०—दपति धरम आचरन नीका। अजहु गाव श्रुति जिन्की लोका।—तुलसी (शब्द०)। ६ बंधी हुई मर्यादा। लोकव्यवहार की बंधी हुई सीमा या व्यवस्था। लोकनियम। उ०—नंदनदन के नेह मेह जिन लोक लोक लापा।—सूर (शब्द०)। ७ बंधा हुई विधि। रीति। प्रथा। चाल। दस्तूर। ८ हृद। प्रतिबध। ९ कलक की रेखा। धम्मा। बदनामी। लाक्षण। उ०—तिहि देखत मेरो पट काढत लोक लगा तुम काज।—सूर (शब्द०)। १० गिनती के लिये लगाया हुआ चिह्न। गिनती। गणना। उ०—बारिदनद जठ सुत तासू। भट मह प्रथम लोक जग जामू।—तुलसी (शब्द०)।

लीक^५—सच्चा स्त्री० [दश०] मटियाले रंग को एक चिडेया जो बत्तख से कुछ छोटी होती है। २ द० 'लोक'।

लीकका—सच्चा स्त्री० [स०] द० 'लिक्का' [को०]।

लीख—सच्चा स्त्री० [स० लिक्का] १ जूँ का अडा। २ लिक्का नामक परिमाण।

लीग—सच्चा स्त्री० [अ०] १ सघ। सभा। समाज। जैसे,—मुसलिम लीग। लीग आफ नेशंस। २ एक नाम वा दूरी जो जल पर साठे तीन और सयल पर तीन मील की होती है (को०)।

लीगल रिमेवरेंसर—सच्चा पुं० [अ०] वह अफपर जो सरकार के कानूनी कागजपत्र रखता है और कानूनी सलाह देता है।

विशेष—अंग्रेजी शासन मे कलकत्ता, बर्मी और युक्त प्रदेश (उत्तर प्रदेश) मे लीगल रिमेवरेंसर होते रहे हैं जो प्राय सिविलियन होते थे। इनका दर्जा ऐडवोकेट जनरल के बाद है। इनका काम सरकारी मामले मुकदमों के कागजपत्र रखना और तैयार करना है और सरकार को कानूनी सलाह देना है।

लोचड़—वि० [दश०] १ सुस्त। काहिल। निकम्मा। २ जल्दी न छोड़नेवाला। चिपटनेवाला। ३ जिपका लेन देन ठोक न हो।

लीचर^६—वि० [दश०] चिपटनेवाला। जल्दी न छोड़नेवाला। द० 'लोचड़'। उ०—वाहक सुवाह नीच लीचर मरीच मिलि मुंह पीर केतुजा कुरोग जातुचान हं।—तुलसी (शब्द०)।

लीची—सच्चा स्त्री० [चीनी लीचू, लूचू] एक सदाबहार पेड़ और उसका फल जो खाने मे बहुत मोठा होता है।

विशेष—इसकी पत्तिया छोटी छोटी होती हैं, फल गुच्छों मे लगते और देखने में बहुत सुंदर होते हैं। छिलके के ऊपर कटावदार

दाने से उभरे होते हैं। गूदा सफेद खोली की तरह बीज से चिपका रहता है, पर बहुत जल्दी छूटकर अलग हो जाता है। यह पेड़ चान से आया है और बंगाल तथा बिहार में अधिक होता है।

लीज सञ्ज्ञा पुं० [अ० लीज] दे० 'लीस'।

लीभी^१ सञ्ज्ञा स्त्री० [ल०] १ देह में मले हुए उबड़न के साथ छूटी हुई मल की वस्तु। २ वह गूदा या रेखा जिसका रस दूध या निचोड़ लिया गया हो। मोठी।

लीभी^२—वि० १ नीरस। निस्सार। २ निकम्मा। उ०—श्री रघुराज कहे कहे रीकों भई तनु लोभों अर्जों दशा एतो।—रघुराज (शब्द०)।

लीडर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] अग्रग्रा। मुखिया। नेता। २ अग्रलेख। किसी समाचारपत्र में संपादक का लिखा हुआ प्रधान या मुख्य लेख। संपादक अग्रलेख। जैसे,—संपादक महोदय ने इस विषय पर जोरदार लीडर लिखा है। ३ किसी कथन की असमाप्ति आदि का बोधक एक टाइप जिममें तीन बिंदिया रहती है। (मुद्रण)।

लीडर आफ दी हाउस—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] पार्लमेण्ट या व्यवस्थापिका समा का मुखिया जो प्रधान मंत्री या मंत्रिमंडल का बड़ा सदस्य, विशेषकर स्वराष्ट्र सदस्य, होता है और जिसका काम विरोधी पक्ष का उत्तर देना और मरकरारी कामों का समर्थन करना होता है। प्रांतीय शासन में यही मुख्य मंत्री होता है।

लीडिंग आर्टिकल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] किसी समाचारपत्र में संपादक का लिखा हुआ प्रधान या मुख्य लेख। संपादकीय अग्रलेख। जैसे,—इस पत्र के लीडिंग आर्टिकल बहुत गवेषणापूर्ण होते हैं।

लीड—वि० [सं०] चाटा हुआ। आस्वादित [को०]।

लीथो—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लीथो (= पत्थर)] पत्थर का छापा, जिसपर हाथ से लिखकर अक्षर या चित्र छापे जाते हैं।

लीथोग्राफ—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लीथोग्राफ] दे० 'लीथो'।

लीथोग्राफर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लीथोग्राफ] वह जो लीथोग्राफों का काम करता हो। लीथो का काम करनेवाला।

लीथोग्राफी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लीथोग्राफी] लीथो की छपाई में एक विशेष प्रकार के पत्थर पर हाथ से अक्षर लिखने और खींचने की कला।

लीड—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] तुल० सं० लेड (लेड)] घाडे, गधे, कैंठ और हाथी आदि पशुओं का मल। घाडे आदि का पुरीप।

मुहा०—लीड करना = घाडे आदि का मलत्याग करना।

लीन—वि० [सं०] १ लय को प्राप्त। जो किसी वस्तु में समा गया हो। २ तन्मय। मग्न। हूवा हुआ। ३ विलकुल लगा हुआ। तत्पर। जैसे,—कार्य में लीन हाना। ४ ख्याल में हूवा हुआ। ध्यानमग्न। अनुरक्त। उ०—प्रांति ही चतुर सुजान जानमनि वा छवि पं भद्र मैं लीना।—सूर (शब्द०)। ५ किसी के सहारे टिका हुआ (को०)। ६ लुप्त। छिपा हुआ (को०)। ७ अपने रूप का त्याग करके मिला हुआ। घुला हुआ। जैसे, जल में नमक (को०)।

क्रि० प्र०—करना।—हीना।

लीनता—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] १ तन्मयता। तत्परता। २ तेजा मनुचित होकर रहना जिममें किसी को दुःख न पहुँचे। (जैन)।

लीनो टाइप मशीन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] एक प्रकार की कल या यंत्र जिममें अक्षरों की कपीज होने के समय लाइन की लाइन बलकर निकलती है।

विशेष—गाजर टिट्टिया में बड़े बड़े अंगरेजों अखबार इनो मशीन से कपीज होते हैं।

लीपना—क्रि० सं० [सं० वृत्ति > लीन] १ धुलें हुए रंग, मिट्टी, गाजर या शीर किसी गोली वस्तु को पतली नई चढाना। पोतना। २ सफाई के निये जमीन या दीवार पर धुलो हुई मिट्टी या गीसर फेरना। पानना।

थी०—लीपना पोतना = सफाई करना।

मुहा०—लीप पोतकर बरामद करना = किसी काम को बिगाडना। चीट करना। चीला नगाना। गलतनाश करना।

लीफ्लेट—सञ्ज्ञा पुं० [अ० फ्लैट] पुस्तिका। पर्चा।

लीवर, लीभर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लीवरना, निभटना] कीचड़। गदगो। मंत्र।

लीम—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ एक प्रकार का चीट का पेंड जिसमें सतारवान या अलतरा निफनता है। २ एक प्रकार की चिडिया।

लीमू—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] नाबू (को०)।

लीर—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] कपडे की धज्जी। चीर [को०]।

थी०—लीर कथोर = कपडे की चीर या धज्जी।

लील'—वि० [सं० नील] नील।

लील—वि० नाला। नालवर्ण का। नीले रंग का। उ०—नालाबुज तनु लील वमन म,ए चितयान जात धून क भार।—सूर (शब्द०)।

लीलरुठां—सञ्ज्ञा पुं० [सं० नीलरुठ] दे० नीलकंठ'।

लीलक'—अ० पुं० [हिं० लाल] वह हरा चमड़ा जो जूतों की नाक पर लगाया जाता है।

लीलक'—वि० नीला।

लीलगऊं—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० नील + गऊ] नील गाव।

लीलगर।—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० नील + गर] रगनाज। नोनगर। रंगरेज।

लीकना—क्रि० सं० [सं० गिलन या लीन] गल के नीचे पेट में उतारना। मुह में लकर पेट में डालना। निगलना। खा जाना। उ०—(क) बालधी विसाल विकराल ज्वालमाल मानो लक लीलिवे का काल रसना पसारो है।—तुलसी (शब्द०)। (ख) वाच गए सुरसा मिली और मिहिका नारे। लीलिवे लिया हनुमत तोहि, चडे उदर कहँ फारि।—केशव (शब्द०)।

सथी० क्रि०—जाना।—लना।

लीलया—क्रि० वि० [सं०] १ खेल में ही। सहेज में ही। बिना प्रयास।

लीलयैव—क्रि० वि० [सं० लीलया + एव] खेल में ही। सहेज में ही।

उ०—राचमद्र कटि सो पट वींघ्यो । लीलयाँव हर को धनु साध्यो ।—केशव (शब्द०) ।

ल लहिपु—क्रि० वि० [हि० लीला] खेल खेल मे । बिना प्रयास के । सहज मे । उ०—(क) अति उत्तम गिरि पादप लीलाहि लेहि उठाइ ।—मानस, ६।१ । (ख) अति उत्तम गर सैलगन लीलाहि लेहि उठाइ ।—तुलसी (शब्द०) ।

लीलाग—वि० [सं० लीलाङ्ग] सुंदर अंगोवाला [को०] ।

लीलांचित्त—वि० [सं० लीलाञ्चित] रम्य । सुंदर [को०] ।

लीलायुज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लीलायुज] दे० 'लीलाकमल' [को०] ।

लीला^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह व्यापार जो चित्त की उमंग से केवल मनोरजन के लिये किया जाय । केलि । क्रीडा । खेल । जैसे,—वाललीला । २ शृंगार की उमंगमरी चेष्टा । प्रेम का खेलवाड । प्रेमविनोद । ३ नायिकाओं का एङ्ग हाव जिसमे वे प्रिय के वेश, गति, वाणी आदि का अनुकरण करती हैं । ४ सौंदर्य । सुदरता । (को०) । ५ रहस्यपूर्ण व्यापार । विचित्र काम । जैसे,—यह ईश्वर की लीला है जो ऐसे स्थान मे ऐसा सुंदर पेड होता है । ६ मनुष्यों के मनोरजन के लिये किए हुए ईश्वरावतारों का अभिनय । चरित्र । जैसे,—रामलीला, कृष्ण लीला । ७ बारह मात्राओं का एक छंद जिसके अंत मे एक जगण होता है । ८ एक वर्णवृत्त जिसके प्रत्येक चरण मे भगण, नगण और एक गुरु होता है । ९ चौबीस मात्राओं का एक छंद जिसमें ७ + ७ + ७ + ३ के विराम से २४ मात्राएँ और अंत मे सगण होता है ।

लीला^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० नील] १ स्याह रग का घोडा । उ०—लीले, सुरग, कुर्मत श्याम लेहि परदे मद मन रग ।—(शब्द०) । २ गोदना ।

लीला^३—वि० नीला । उ०—कटि लहंगा लीलो बन्धो धों को जो देखि न मोहे ।—सूर (शब्द०) ।

लीलाकमल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कमल का फूल जिसे क्रीटा के लिये हाथ मे लिए हो ।

लीलकलह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्रणयकलह । प्यार की लडाईं [को०] ।

लीलागृह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] क्रीडागृह । आमोदभवन । प्रमोदभवन [को०] ।

लीलाचतुर - वि० [सं०] क्रीडाकुशल । सुदर [को०] ।

लीलातनु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खेलवाड के लिये धारण किया हुआ रूप [को०] ।

लीलातामरस—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लीलाकमल' [को०] ।

लीलादग्ध—वि० [सं०] बिना प्रयास के जला हुआ । सहज ही जला हुआ [को०] ।

लीलानटन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आनंद मात्र के लिये किया जानेवाला नृत्य [को०] ।

लीलानृत्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लीलानटन' [को०] ।

लीलापुरुषोत्तम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्रीकृष्ण ।

विशेष—राम श्रीर कृष्ण इन दो प्रधान अवतारों मे राम मयादा-पुरुषोत्तम कहलाते हैं और कृष्ण लीलापुरुषोत्तम ।

लीलाञ्ज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लीलाकमल' [को०] ।

लीलाभरण सञ्ज्ञा पुं० [सं०] केवल लीला वा शौक के लिये पहना हुआ गहना [को०] ।

लीलामनुष्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] छद्ममानव । नफली आदमी [को०] ।

लीलामय—वि० [सं०] क्रीडा के भाव से भरा हुआ । क्रीडायुक्त ।

लीलामात्र - सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खेल कूद । केवल खेलवाड (को०) ।

लीलायित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ क्रीडाविनोद । आमोद प्रमोद । २ कार्य जो सहजसाध्य हो [को०] ।

लीलारति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] आमोद प्रमोद । मनवहलाव [को०] ।

लीलारविद—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लालारविन्द] दे० 'लीलाकमल' [को०] ।

लीलावज्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] इद्र के वज्र के समान एक शस्त्र [को०] ।

लीलावती^१—वि० स्त्री० [सं०] क्रीडा करनेवाली । विलासवती ।

लीलावती^२—सञ्ज्ञा स्त्री० १ प्रसिद्ध ज्योतिर्विद भास्कराचार्य की पत्नी का नाम जिपने लीलावती नाम की गणित की एक पुस्तक बनाई थी । पीछे भास्कराचार्य न भी इस नाम की एक गणित का पुस्तक बनाई । २ सपूर्ण जाति की एक रागिनी जिसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं । यह रागिनी ललित, जयतश्री और देशकार से मिलकर वनी कही गई है । कोई कोई इसे दीपक राग की पुत्रवधू कहते हैं । ३ एक छंद जिसके प्रत्येक चरण मे १०, ८ और १४ के विराम से ३२ मात्राएँ होती हैं और अंत मे एक जगण होता है । ४ दुर्गा का एक नाम (को०) । ५ सुंदरी स्त्री । सौंदर्यशील महिला (को०) । ६ कामुकी या विलासप्रिय औरत (को०) । ७ मय दानव की पत्नी का नाम (को०) ।

लीलावान्—वि० [सं० लीलावत्] १ क्रीडापूर्ण । २ सुदर । रमणीय [को०] ।

लीलावापी सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] जलविहार के लिये निर्मित बावली [को०] ।

लीलावेश्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लीलागृह । आमोदगृह [को०] ।

लीलाशुक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पालतू तोता [को०] ।

लीलासाध्य—वि० [सं०] सहज ही होनेवाला । बिना प्रयास किया जानेवाला [को०] ।

लीलास्थल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] क्रीडा बरने का स्थान ।

लीली—वि० स्त्री० [सं० नील] नीले रग की । नीली । उ०—वदन शिरताटक गंड पर रतन जटित मणि लीली ।—सूर (शब्द०) ।

लीलोद्यान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ द्ववन । नदनवन । २. क्रीडा वा खेलकूद का उपवन । आमोद प्रमोद करने का वाग [को०] ।

लीव—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] छुट्टी । अवकाश । जैसे,—प्रिविलेज लीव । फरलो लीव ।

लीवर—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लिवर] १ यकृत । जिगर । विशेष दे० 'यकृत' । २. किसी भारी वस्तु को सरलता से उठाने का यंत्र

(को०) । ३ किमी मशीन, ताले या घड़ी आदि में लगा वह पुग्जा जो किसी दूसरे पुरजे को उठाता गिराता है (को०) ।

लीस—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लीज] जमीन या दूसरी किसी स्थावर मपत्ति के भोगमात्र का अधिकारपत्र जो किसी का जीवनपर्यन्त या निश्चित काल के लिये दिया जाय। पट्टा। जैसे,—(क) १९०३ में निजाम ने सदा के लिये अंगरेजी सरकार को बरार का लीम लिख दिया। (ख) यह अपना मकान लीस पर देने-वाला है।

क्रि० प्र०—देना ।—लेना ।—लिखना ।

लुग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुङ्ग] मातुलग वृक्ष ।

लुगा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ पत्र में धान रोपने की एक रीति। माच । २ दे० 'लुंगाडा' ।

लुगाडा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] गोहूदा । लुंगाडा ।

लुगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [बरमी । मि० हिं० लंगोट या लांग] १ ओती के स्थान पर कमर में लपेटने का छोटा टुकड़ा । तहमन ।

विशेष—इस देश में मुसलमान, मदरामी और बरमी लोग इस प्रकार कमर में कपडा लपेटते हैं, जिसमें पीछे लाग नहीं बांधी जाती ।

क्रि० प्र०—बांधना ।—मारना ।

२ कपडे का टुकड़ा जो प्रायः खादर का होता है और जो हजामत वनाते समय नाई इसलिये पैर पर आगे डाल देता है जिसमें बाल उमी पर गिरें । ३ लाल रंग का एक मोटा कपडा । खादवा ।

लुगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक बड़ी चिड़िया ।

विशेष—यह हिमालय के जंगलों में कुमाऊ में लेकर नैगल और भूटान तक, तानों के बिनारे पाई जाती है। इसकी लम्बाई मवा या डेढ़ हाथ के लगभग और आकृति मोर की भी होती है। इसका अगला भाग काला और लाल होता है। सफेद चित्ति भी होती है। चोंच भूरे रंग की होती है। जाड़े के दिनों में यह मैदान में उतर आती है और कीड़े मकोड़े खाकर रहती है। कुत्तों की सहायता से लोग इसका शिकार करते हैं।

लुगुप—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुङ्गुप] नीबू । छोल्ला (को०) ।

लुच, लुचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुञ्च, लुञ्चन] १ चुटकी में पकड़कर भट्टके के साथ उखाडना । नोचना । उखाडना । जैसे,—केश-लुचन । २ जैन यतियों की एक क्रिया जिसमें उनके मिर के बाल नोचे जाते हैं । ३ काटना । तराशना । अलग करना । दूर करना ।

क्रि० प्र०—करना ।—होना ।

लुचना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुञ्चना] सक्षिप्त मापण (को०) ।

लुचित—वि० [सं० लुञ्चित] उखाडा हुआ । नोचा हुआ । उत्पादित ।

लुचितकेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुञ्चित केश] जैन यति, जो अपने सिर के बाल नोचे रहते हैं ।

लुचित मूर्धज—वि० [सं० लुञ्चित मूर्धज] दे० 'लुचित केश' (को०) ।

लुज—वि० [सं० लुञ्जान (= काटना, उखाटना)] १ बिना हाथ पैर का । जिसके हाथ पैर बंधाए गए हों । लंगटा मूना । उ—ए ऊधो, कड़ियों मापत्र गा मदन मारि कोन्हा हम लुज । —मूर (शब्द०) । २ बिना पत्ने का पेड़ । टूट । उ०—पान त्रिगु कोन्हे ऐसी भाति मन येन के पत्र न बाह जंमे नम्रत लुज हैं ।—पद्मार (शब्द०) ।

लुटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुटक] एक शाय (को०) ।

लुटा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुटा] १ चोंगी । लूट । २ लाटना । लुठन । (को०) ।

लुटाक—वि० [सं० लुटाक] [वि० स्त्री० लुटाकी] टुगनाया । लुटायाया । हाका मारनाया ।

लुटाक—सञ्ज्ञा पुं० १ चाँ । तम्कर । २ धार । जोषा (को०) ।

लुटि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुट] दे० 'लुठ (को०) ।

लुटित—वि० [सं० लुटित] २० 'लुठे' (को०) ।

लुठरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुठरु] चार । लुटेरा ।

लुठन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुठन] [वि० लुठन] १ लुटना । २ लूटना । लुठाना ।

लुठना—क्रि० म० [सं० लुठन] लूटना ।

लुंठा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुंठा] २० 'लुटा' (को०) ।

लुंठाक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुंठाक] २० 'लुटा' (को०) ।

लुंठि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुंठि] चोंगी । लुंठाट (को०) ।

लुंठी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुंठी] १ घाँटे का लाटना । २ दे० 'लुंठे' । ३ लुठकना । लुठकने की क्रिया या भाव (को०) ।

लुड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुड] चोर ।

लुड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुड] बिना मिर का घट । लुचन । लड । उ०—लुड लुड त्रिगु चलो प्रचरा । तब प्रभु नाट लिए युग लुडा —विश्राम (शब्द०) ।

लुडमुड—वि० [सं० लुड + मुड] १ जिसका मिर, हाथ, पैर आदि बटे हों, केवल धड़ का लोडडा रह गया हो । २ बिना हाथ पैर का । लंगटा मूना । ३ बिना पत्ने का हूँठ । (पड) । ४ योही गठरी की तरह लगेटा हुआ ।

लुडा—वि० [सं० लुडा] [वि० स्त्री० लुडाकी] १ जिसकी पूँछ और पाँव भड़ गए हों या खलाह किए गए हों । (पत्ती) । २ जिसकी पूँछ पर धान गहा । (पत्ती) ।

लुडा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुडा] साफ किए हुए लपेटे मूत की पिंडी । लुकडी ।

लुडिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुडिका] १ न्यायमारिणी । सदाचार । सद्ब्यवहार । २ पिंडी । लुकडी (को०) ।

लुडी—वि० स्त्री० [हिं० लुडी] जिसकी पूँछ या पाँव भड़ गए हों ।

लुडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुडिका] लपेटे हुए मूत की पिंडी या गोली ।

लुडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुडी] न्यायसारिणी । विवेकपूर्ण व्यवहार । सद्ब्यवहार (को०) ।

लुडिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुडिका] एक प्रकार का बाजा ।

लहर लेत लहंगा की लुगी लाल रंगी रंगहेरा की।—देव (शब्द०) । ३ फटा पुराना कपडा । लत्ता ।

लुगरा^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] पीठ पीछे बुराई करनेवाला । चुगलखोर ।

लुगरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लुगरा] फटी पुरानी घोती ।

लुगरी^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] पीठ पीछे की हुई निंदा । चुगली ।

लुगई^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लोग] स्त्री । शीरत । उ०—(क) लगलगा वातनि अलग लग लगी आवै लोगन की लग ज्यो लुगाइन की लागरी ।—देव (शब्द०) । (ख) श्राव तजी मग वास के रूप ज्यो पथ के साथ ज्यो लोग लुगई ।—तुलसी (शब्द०) । २ पत्नी । जोर ।

लुगात—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लुगमत] १ लुगत का बहुवचन । २ शब्द-सग्रह । शब्दकोश । जैसे, नूर उल् लुगात ।

लुगी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लूगा] १ छोटा कपडा । २ फटी पुरानी घोती । २ लहंगे का सजाफ या चौडा किनारा । उ०—पीरे श्रंचरान स्वेत लुगरा लहरि लेत लुगी लहंगा की रंगी रंगी रगहेरा की ।—देव (शब्द०) ।

लुगुरा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लूगा] दे० 'लुगरा' ।

लुग्गा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लूगा] दे० 'लूगा' । उ०—चूर चूर देख्यो जब सुग्गा । शकुनि नैन पोछत लै लुग्गा ।—गोपाल (शब्द०) ।

लुघड़ना—क्रि० अ० [सं० लुगठन] दे० 'लुढ़कना' ।

लुचकना—क्रि० सं० [सं० लुञ्चन (= नोचना खसोटना)] दूसरे के हाथ से झटका देकर ले लेना । झटके से छीनना । जैसे,—वह मेरे हाथ से मिठाई लुचककर ले गया ।

सयो क्रि०—लेना ।

लुचरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लुचुरी + री (प्रत्य०)] दे० 'लुचुरी' ।

लुचवाना—क्रि० सं० [सं० लुञ्चन] नोचवाना । उखडवाना । चोथवाना ।

लुचुरी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रुचि, मा० लुचि] मंदे की पतली और मुलायम पूरी । लूची । उ०—लुचुरी पूरी सुहारी पूरी । इक तो ताती भौ सुठ कंवरी ।—जायसी (शब्द०) ।

लुच्चा—वि० [हिं० लुचकना] [वि० स्त्री० लुच्ची] १ दूसरे के हाथ से वस्तु लुचककर भागनेवाला । चाई । २ दुराचारी । कुमार्गी । कुचाला । ३ खोटा । कमीना । लफगा । शोहदा । बदमाश ।

लुच्ची^१—वि० स्त्री० [हिं० लुच्चा] खोटी या बदमाश (शरीरत) ।

लुच्ची^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [म० रुचि, मा० लुचि] दे० 'लुचुरी' ।

लुज्जा—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] समुद्र में वह स्थल जो बहुत गहरा हो । (लश०) ।

लुटंत^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लूट] लूट ।

लुटकना—क्रि० अ० [सं० लडन (= झूलना)] दे० 'लडकना' । उ०—गजगाह निहारि निगाह पुरै मुकुता लर पायल लौ लुटकै ।—गोपाल (शब्द०) ।

लुटना^१—क्रि० अ० [सं० लूट (= लुटना)] १ दूसरे के द्वारा लूटा

जाना । डाकुओं के हाथ धन खोना । जैसे,—रास्ते में वृत्त से मुमाफिर लुट गए ।

मुहा०—घर लुटना = घर का मान चोरी जाना या श्रपहृत होना । २ तबाह होना । बरवाद होना । मर्बस्व खोना । ३ बलि जाना । न्यौछावर होना । मुग्ध होना ।

सयो क्रि०—जाना ।

लुटना^२—क्रि० अ० [सं० लुगठन] दे० 'लुठना' ।

लुटरना—क्रि० अ० [हिं० लोटना] दे० 'लुढ़कना' । २ लोटना ।

लुटरा—वि० [हिं० लट्टरा] [वि० स्त्री० लुट्टरी] घूँघरदार । कुचित ।

लुटाना—क्रि० सं० [हिं० लूटना का प्रेर० रूप] १ दूसरे को लूटने देना । डाकुओं आदि को छीन लेने देना । जैसे,—तुम रात को टल गए और हमारा माल लुटा दिया । ३ मुफ्त में देना । बिना पूरा मूल्य लिए दे देना । जैसे,—तुम्हारा माल है, चाहे योही लुटा दो । ३ बरवाद करना । व्यर्थ फेंकना या व्यय करना । ४ मुट्ठी भर भर चारों ओर इसलिये फेंकना जिसमें जो चाहे, सो ले । बहुतायत से बाँटना । स्वच्छद वितरण करना । सबको बिना रोक टोक देना । श्रधाधुष दान करना । जैसे—बरात में उसने खूब रुप लुटाए ।

सयो क्रि०—देना ।

लुटावना^१—क्रि० सं० [हिं० लूटना का प्रेर० रूप] दे० 'लुटाना' ।

लुटिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लोटा + इया (प्रत्य०)] जल भरने या रखने का वातु का छोटा बरतन । छाटा लोटा ।

लुटेरवा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लुटेरा] एक प्रकार की पत्नी ।

लुटेरा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लूटना + एरा (प्रत्य०)] जबरदस्ती छीन लेनेवाला । डर दिखाकर या मार पीटकर दूसरे का माल ले लेनेवाला । लूटनेवाला । डाकू । दस्यु ।

लुट्टुर^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] वह भेड़ जिसके कान छोटे हो । (गडेरिए) ।

लुट्टुरी^१—वि० [हिं० लट्टरा] घँघराला (केल) ।

लुठन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] किसी वस्तु के लुढ़कने, ढरकने और लोटने की क्रिया या भाव [को०] ।

लुठना^१—क्रि० अ० [सं० लुठन] १ भूमि पर पडना । सारा शरीर पृथ्वी से लगाए हुए पडना । लोटना । उ०—राम मखा ऋषि बरबस भँटा । जनु महि लुठत मनेह सभेदा ।—तुलसी (शब्द०) । २ पृथ्वी पर नीचे ऊपर फिरते हुए बढना या गमन करना । लुढ़कना ।

लुठाना^१—क्रि० सं० [हिं० लुठना] १ भूमि पर या नीचे डालना । लोटाना । उ०—माथो चरणारविंद ऊपर लुठाय रघुराय सु उठाय किया छाती सो लगावना ।—हृदयराम (शब्द०) । २ लुढ़काना ।

लुठित^१—वि० [सं०] लुढ़का हुआ । जमीन पर लेटा या ढरका हुआ जैसे,—भूलुठित [को०] ।

लुठित^२—सञ्ज्ञा पुं० जमीन पर लोटना । भूमि पर लोटना । जैसे, घोड़े आदि का [को०] ।

लुप्त—सज्ञा पुं [सं०] चोरी का भाल। चौर्य का घन।
लुप्तोपमा—सज्ञा स्त्री [सं०] वह उपमा अलंकार जिसमें उसका कोई अंग (जैसे,—उपमेय, धर्म, वाचक शब्द) लुप्त हो, अर्थात् न कहा गया हो।

लुप्तपु—वि० [सं० लुप्त] लोपु। दे० 'लुप्त'। उ०—काम लुप्तव वानी मन्त्र का मन्त्रि।—पृ० २०, १।४१०।

लुप्तरी—सज्ञा स्त्री [अ० लुप्त (= लासा)] किसी तर्जल पदार्थ के नीचे की बँठी हुई मूल। तरौछ। गाद।

लुप्तपु पु—वि० [सं० लुप्त] दे० 'लुप्त'। उ०—अ्याघ विशिख विलोक नहि कन गान लुप्त कुरग।—तुलसी (शब्द०)।

लुप्तध—सज्ञा पुं लुप्तक। अहेरी। बहेलिया।

लुप्तघना—क्रि० अ० [हिं लुप्तघना (प्रत्य०)] लुप्त होना। माहित होना। लुभाना। उ०—त्रोन नाद मुनि लुप्तुपे मृग ज्यो त्या भइ दमा हमारी।—सूर (शब्द०)। (ख) भँवर न उठहि जो लुप्तुपे वासा।—जायसी (शब्द०)।

सयो० क्रि०—जाना।

लुप्तधा—वि० [सं० लुप्त, या लुप्तक] १ लोभी। लालची। २ चाहनवाला। इच्छुक। प्रेमी। उ०—घालि नैन भोहि राखिय, पल नहि कीजय ओट। पेम क लुप्तधा पाव ओह, काह नो बड का छाट।—जायसी (शब्द०)।

लुप्तध—वि० [सं०] १ लोभयुक्त। प्रबल आकांक्षायुक्त। अत्यत रागयुक्त। लुभाया हुआ। ललचाया हुआ। २ तन मन की सुख भूला हुआ। माहित। उ०—जाके पदकमल लुप्त मुनि मधुकर निकर परम सुगति हू लोभ नाहिन।—तुलसी (शब्द०)।

लुप्तध—सज्ञा पुं १ व्याध। बहेलिया। लुप्तक। २ कामुक (को०)।

लुप्तधक—सज्ञा पुं [म०] १ पशु पक्षियों को लालच दिखाकर पकड़ लेनेवाला। व्याध। बहेलिया। शिकारा। उ०—मूरदास प्रभुना मेरी गाँत जनु लुप्तधक कर मीन तस्थो।—सूर (शब्द०)। २ उलगा गोगार्ध वा एक बटल तेजवान तारा। (आधुनिक)। ३ लालचो आदमी। लोभी व्यक्ति (को०)। ४ वह व्यक्ति जो अत्यत रागी वा कामुक हा (को०)। ५ पिछला भाग। पीछे का हिस्सा (को०)।

लुप्तघना—क्रि० अ० [सं० लुप्त] दे० 'लुप्तघना'।

लुप्तघापति—सज्ञा स्त्री [सं०] केशव के अनुसार प्रीडा नायिका का चतुर्थ भेद। वह प्रीडा नायिका जो पति और कून के सब लागों की लज्जा करे। यथा,—सो लुप्तघापति जानिए केशव प्रगट प्रमान। कानि करे कुलपति सर्व प्रभुता प्रभुहि समान।—केशव (शब्द०)।

लुप्तध—सज्ञा पुं [अ०] १ बुद्धि। अमल। २ तत्व या सार भाग। ३ विशुद्ध। खालसा। ४ मज्ज। मीमां। गिरी (को०)।

लुप्तलुवाच—सज्ञा पुं [अ० लुप्ते लुवाच] १ गूदा। सार। २ किसी बात का तत्व। सारांश।

लुभाना—क्रि० अ० [हिं लोभ+आना (प्रत्य०)] १. लुप्त

होना। अत्यत रागयुक्त होना। मोहित होना। आर्कापित होना। रोझना। उ०—कूबरी के कौन गुन पै रहे कान्ह लुभाइ।—सूर (शब्द०)। २ लालसा करना। लालच में पडना। ३ तन मन की सुख भूतना। मोह में पडना।

सयो० क्रि०—जाना।

लुभाना—क्रि० स० १ लुप्त करना। अत्यत रागयुक्त करना। अपने ऊपर गह्रा प्रेम उत्पन्न कराना। मोहित करना। रिझाना। २ प्राप्त करने की गहरी चाह उत्पन्न करना। ललचाना। जैसे,—उसकी कारीगरी ने हमें लुभा लिया। २ सुख वृष भुनाना। आत करना। मोह में डालना। उ०—सूर हरि की प्रबल माया देति मोहि लुभाय।—सूर (शब्द०)।

सयो० क्रि०—लेना।

लुभित—वि० [हिं लुभाना] १. लुप्त। २ सुख। मोहित। ३ लुप्त। ललचाया हुआ (को०)।

लुर—वि० [फ्रा०] उजड़। धामड। मूर्ख। बुद्धिहीन (को०)।

लुरा—सज्ञा स्त्री [देश०] गुर। शऊर। समझ।

लुरकना—क्रि० अ० [सं० लुलन (= भूलना)] अवर में टँगकर हिलना डोलना। नीचे की ओर झुकना। लटकना। झूतना।

लुरका—सज्ञा पुं [हिं लुरकना (= लटकना)] झुपका।

लुरकी—सज्ञा स्त्री [हिं लुरकना (= लटकना)] कान में पहनने की वाली। मुरकी। उ०—देव जगामग जातिन का लर मोतिन की लुरकीन सो नाथो।—देव (शब्द०)।

लुरकी—सज्ञा स्त्री [हिं लोदा] दे० 'लुवकी'।

लुरना—क्रि० अ० [सं० लुलन (= भूलना)] १ ऊपर से नीचे तक चली आई हुई वस्तु का इधर उधर हिलना डोलना। लटकना। झूतना। लहरना। उ०—(क) छतियाँ पर लोल लुरं अलकें सिर फून अरुमि सो यो दुति है।—(शब्द०)। (ख) भाकें पलकें बियुरी अलकें अरु हार लुरं मुकुता गल मे।—सु दर (शब्द०)। २ ढल पडना। झुक पडना। टूट पडना। ३ कही से एकबारगी आ जाना। उ०—ब्रह्म की विभूति, करतूत विश्वकर्मा की, साहिबी सकल पुरहूत की लुरं परी।—(शब्द०)।

सयो० क्रि०—पडना।

४ आर्कापित होना। लुभा जाना। लड्डू होना। प्रवृत्त होना। उ०—सग ही सग बसो उनके, अँग अगन देव तिहारे लुरी है।—देव (शब्द०)।

सयो० क्रि०—पडना।

लुरियाना—क्रि० अ० [हिं लुरना] १ प्रेमपूर्वक स्पर्श करना या अंग रखना। प्यार करना। २ एकाएक आ पडना। दे० 'लुरना'—३।

लुरियाना—क्रि० स० [हिं] लुँडो करना। लपेटना।

लुरी—सज्ञा स्त्री [हिं लेखा (= बछड़ा ?)] वह गाय जिसे

बच्चा दिए थोड़े ही दिन हुए हैं। उ—लाडिली लीली कलोरी लुरी कहेँ लाल लुके कहेँ भाग लगाइके।—केशव (शब्द०)।

लुलन—सञ्ज्ञा सं० [सं०] [वि० लुलित] लटकते हुए इधर उधर हिलना डोलना। आदोलित होना। झूटना।

लुलना(पु)—क्रि० प्र० [सं० लुलन] लटकते हुए हिलना डोलना। झूलना, लहराना। दोलित होना।

लुलान—सञ्ज्ञा पु० [सं०] महिष। भैंसा [को०]।

यौ०—लुलापकद = महिषकद। लुनापकाता = भैंस।

लुलाय—सञ्ज्ञा [सं०] दे० 'लुलाप' [को०]।

यौ०—लुलायकद = महिषकद। लुनायकाता। लुनायकेतु।

लुलायकाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुलायकान्ता] भैंस।

लुलायकेतु—सञ्ज्ञा पु० [सं०] शिव का एक गण [को०]।

लुलित—वि० [सं०] १ लटकता या झूटना हुआ। आदोलित। २ छिनरया हुआ। अस्तव्यस्त (को०)। ३ लटका हुआ। बिखरा हुआ। जैसे, केश। ४ कुचला, दबा या चोट खाया हुआ (को०)। ५ थकामाँदा। क्लान्त (को०)। ७ सुंदर। शानदार (को०)।

यौ०—लुलितकुडल = हिलते हुए कुडलोवाला। लुलितपल्लव = हिलते हुए पत्तोवाला। लुलितमडन = अस्तव्यस्त आभरणवाला।

लुवार—वि० [हि० लू] गरमी के दिनों की तपी हुई गरम हवा। तप्त वायु। लू।

क्रि० प्र०—चलना।

लुशई—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक प्रकार की चाय जो आसाम और कछार में होती है।

लुशभ—सञ्ज्ञा पु० [सं०] दे० 'लुशभ' [को०]।

लुप—सञ्ज्ञा पु० [सं०] निषाद और चाणकी से उत्पन्न सतति [को०]।

लुपभ—सञ्ज्ञा पु० [सं०] मत्त वारण। मस्त हाथी [को०]।

लुस्त—सञ्ज्ञा पु० [सं०] धनुष का छोर या सिरा [को०]।

लुईगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोहाङ्ग] लोहा जड़ी हुई लाठी। ऐसी लाठी जिसके माटे सिर पर लोहा जड़ा रहता है। लोहबदा।

लुहना(पु)—क्रि० प्र० [सं० लुभन] लुभाना। ललचना। माहित होना। उ०—अरि के वह आशु अकेली गई खरिक हरि के गुन रूप लुही।—देव (शब्द०)।

लुहनी—सञ्ज्ञा पु० [देश०] एक प्रकार का अगहनी धान जिसका चावल बहुत दिन रह सकता है।

लुहार—सञ्ज्ञा पु० [सं० लोहकार, प्रा० लोहार] [स्त्री० लुहारिन, लुहारी] १ लोहे का काम करनेवाला। लोहे की चीजें बनानेवाला। २. वह जाति जो लोहे की चीजें बनाती है।

लुहारिन—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लुहार + इन (प्रत्य०)] लुहार जाति की स्त्री।

लुहारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लुहार] १ लुहार जाति की स्त्री। २ लोहे की वस्तु बनाने का काम। जैसे,—वह लुहारी सीख रहा है।

लुहुरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लघु, हि० लहुरा] छोटे कानोवाली भेंड। (गडेरिए)।

लूगा(पु)—सञ्ज्ञा पु० [सं० लवण, प्रा० लूरा] नमक। लवण।

लूबरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोमडी] दे० 'लोमडी'।

लू—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुक (= जलना), हि० ली (= लपट)] गरमी के दिनों की तपी हुई हवा। गरम हवा का लपट या भोका। तप्त वायु।

क्रि० प्र०—चलना।—बहना।

मुहा०—लू मारना या लगना = शरीर में तपी हुई हवा लगने से ज्वर आदि उत्पन्न होना।

लूक^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० लुक] एक प्रकार का जलता हुआ पिंड जो आकाश से गिरता हुआ कभी कभी दिखाई पड़ता है। टूटा हुआ तारा। विशेष दे० 'उल्का'। उ०—(क) दिन ही लूक परन विधि लागे।—मानस, ६।३१। (ख) लूक न असनि केतु नहि राह।—मानस, ६।३१।

लूक^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लुक (= जलना)] १ अग्नि की ज्वाला। आग की लपट। २ पतली लकड़ी जिमका छोर दहकता हुआ हो। जलती हुई लकड़ी। लुत्ती। उ०—दोउ लियो ठीक विचारि, इक लूक लीन्हो वारि।—रघुराज (शब्द०)।

मुहा०—लूक लगाना = जलती लकड़ी या वत्ती छुनाना। आग लगाना। उ०—मारि मुलुक से लूक लगायो।—लाल (शब्द०)। ३ गरमी के दिनों की तपी हुई हवा। तप्त वायु का भोका जो शरीर में लपट की तरह लगे। लू। उ०—ए ब्रजचद। चली कन वा ब्रज, लूकेँ बसत की ऊकन लागी।—पद्माकर (शब्द०)। ४ टूटा हुआ तारा। उल्का। लूक। उ०—सुमार राम तराक तोयनेधि लक लू ६ सो आया।—तुलसा (शब्द०)।

लूकट(पु)—सञ्ज्ञा पु० [हि० लूक] जलता हुई लकड़ा। लूक। लुकाठी।

लूकना(पु)^१—क्रि० सं० [हि० लूक + ना] आग लगाना। जलाना। उ—हिय अदर रावरो मदिर है तेहि या विरहानल लूकिए ना।—(शब्द०)।

लूकना(पु)^२—क्रि० प्र० [सं० लूक] दे० 'लूकना'। उ०—लूक केते रहे, धूके केते गए लूके केते दए, लूक केते चहे।—सूदन (शब्द०)।

लूका^१—सञ्ज्ञा पु० [सं० लुक (= जलना)] [स्त्री० अल्का० लूकी] १. अग्नि की ज्वाला। आग की ली या लपट। उ०—नखत अकासहि चढ़े दिपाई। तप्त तप्त लूका पराहि दिखाई।—जायसी (शब्द०)। २ चिनगो। चित्तगारी। स्फुलिंग। ३ पतली लकड़ी जिसका छोर दहकता हो। लकड़ी जिसके एक सिर में आग हो। लुत्ता।

मुहा०—लूका लगाना = आग छुनाना। आग लगाना। जलाना। मुँह में लूका लगाना = मुँह जलाना। तिरस्कार करना। (छियो की गाली)।

लूका^२—सञ्ज्ञा पु० [देश०] मछली फँसाने का एक प्रकार का जाल।

लूका^३—सञ्ज्ञा पु० [सं० लूकस] वाइविल का लूकस नामक सत।

लूकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लूका] १ आग को चिनगारी । स्फूर्तिग ।
उ०—हिया फाट वह जव ही लूकी । परै आँसु सब होइ
होइ लूकी ।—जायसी (शब्द०) । २ पतली लकड़ी या तिनके
का टुकड़ा जिसका सिरा जलता हो । लूका ।

मुहा०—लूकी लगाना = आग लगाना । जलाना ।

लूक—वि० [सं०] रूद्ध । रूखा [को०] ।

लूखा^७—वि० [सं० लुच् या (लूच् = रूद्ध, रूखा)] विना चिकनाहट
का । रूखा । उ०—मना मनोरथ छाँडि दे तेरा किया न होय ।
पानो मे घी तीकसै लूखा खाइ न कोय ।—कबीर (शब्द०) ।

लूगडा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लूगा] १ वस्त्र । कपड़ा । २ थोढ़नी ।
चादर ।

लूगाँ—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] १ वस्त्र । कपड़ा । उ०—रोटी लूगा नीके
राखै आगहु को वेद भाप्य भलो हूँहै तेरो ताते आनंद लहत
हां ।—तुलसी (शब्द०) । २ बोता ।

लूगर^७—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लूका] जलती हुई लकड़ी । लुकारी ।

लूधा—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] कन्न खोदनेवाला । गोरकन । (ठग) ।

लूट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लूटना] १ बलात् अपहरण । किसी के माल
का जबरदस्ती छीना जाना । किसी की धन संपत्ति या वस्तु
का बलपूर्वक लिया जाना । डकैती । जैसे,—(क) दगे मे बाजार
को लूट हुई । (ख) सिपाहियों को लूट का माल खूब मिला ।

क्रि० प्र०—करना ।—पढ़ना ।—मचना ।—होना ।

यौ०—लूट खमोट = (१) छीना भपटी । लूटमार । (२) शोपण ।
लूटखूँद, लूटमार, लूटपाट = लोगो को मारने पाटने और
उनका धन छीनने का व्यापार । डकैती और दगा ।

२ लूटने से मिला हुआ माल । अपहृत धन । जैसे,—लूट मे सब
सिपाहियों का हिस्सा लगा ।

लूटक—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लूट + क (प्रत्य०)] १ जबरदस्ती छीनने-
वाला । लूटनवाला । २ डाकू । लुटेरा । ३ काति हरनेवाला ।
शोभा मे बढ जानवाला । उ०—असनि सरासन लसत, सुचि
सर कर, तून कटि मुनिपट लूटक बसन के ।—तुलसी (शब्द०) ।

लूटखूँद—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लूटना + खूँदना] लोगो को मारने और
उनका धन छीनने का व्यापार । डाका और दगा । लूटमार ।

लूटना—क्रि० सं० [सं० लुट् (= लूटना)] १ बलात् अपहरण करना ।
जबरदस्ती छीनना । भय दिखाकर, मार पीटकर या छीन भपट-
कर ले लेना । जैसे,—रास्ते मे डाकुओ ने सारा माल लूट
लिया । उ०—(क) केशव फूलि नचै भ्रुकुटी, कटि लूटि नितब
लई बहु काली ।—कथव (शब्द०) । (ख) जानी न ऐसी चढा
चढी मे केहि घी कटि बीच ही लूटि लई सी ।—पद्माकर
(शब्द०) । (ग) चोर चख चोरिन चलाक चित चोरी भयो,
लूटि गई लाज, कुल कानि को कटा भयो ।—पद्माकर (शब्द०) ।

सयो० क्रि०—लेना ।

यौ०—लूटना पाटना । लूटना मारना ।

मुहा०—लूट खाना = दूसरे का धन किसी न किसी प्रकार ले लेना ।

२ बरवाद करना । तवाह करना । ३, बोखे से या अन्यायपूर्वक
किमी का धन हरण करना । अनुचित रीति से किसी का माल
लेना । जैसे,—कचहरी मे जाओ, तो भ्रमले लूटते हैं ।

मुहा० (किमी को) लूट खाना = किसी का धन अनुचित रीति से
ले लेना । किसी का माल मारना ।

४ बहुत अधिक मृत्यु लना । वाजिब से बहुत ज्यादा कीमत लेना ।
ठगना । जैसे,—वह दूकानदार गाहको को खूब लूटता है ।

५ मोहित करना । मुग्ध करना । वशीभूत करना । मन हाथ में
करना । उ० लूटी धुंधरारी लट, लूटी हैं वधूटी बट, टूटी
चट लाज तें न लूटी परी कहरै ।—दीनदयाल (शब्द०) । ५
भोग करना । भोगना । जैसे,—सुख लूटना, आनंद लूटना ।

विशेष—इस क्रिया का प्रयोग सुख या आनंद का भोग करने के
अर्थ मे भी मुख, आनंद, मौज आदि कुछ शब्दो के साथ होता
है । जैसे,—आनंद लूटना, मुख लूटना ।

लूटि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लूटना] दे० 'लूट' । उ०—गए कञ्चुकि
बँद टूटि लूटि हिरदय सो पाई । करति मनहि मन सेव निकट
रय दयो देखाई ।—सूर (शब्द०) ।

लूत^१—सञ्ज्ञा पुं० [इब्रानी] यहूदियों के एक पुराने पैगबर का
नाम ।

लूत^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लूता] मकड़ी । कर्णनाभ । उ०—लगे लूत
के जाल ए, लखो लमत रहि भौन ।—मतिराम (शब्द०) ।

लूत^३—वि० [फा०] नग्न । नगा [को०] ।

लूत^४—वि० [सं०] छिन्न । खडित । टूटा हुआ । विभक्त ।

लूता^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ मकड़ी । कर्णनाभ । २. फफोले की
तरह की फुनी जो, कहते हैं, मकड़ा के मूतने से निकलती
है । वृक्का । ममब्रण ।

विशेष—वैद्यक के ग्रंथो मे 'लूता' रोग कई प्रकार का कहा गया
है और कई प्रकार की विपत्ती मकड़ियों की चर्चा है । जैसे,—
त्रिमहला, श्वेता, कपिला, रवतलूता इत्यादि । विष के सबध
मे कहा गया है कि मकड़ी के धूक, नख, मूत्र, रज, शुक्र
और पुरीष के द्वारा विष का संचार होता है । लूता रोग
यदि अच्छा न हो, तो आदमी मर जाता है ।

३ पिपीलिका । च्यूँटी ।

लूता^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लूता] [स्त्री० अल्पा० लूती] लकड़ी
जिसका एक सिरा जलता हो । लूका । लुभाठा । उ०—सोवत
मनसिज आनि जगायो पठे सँदेस स्याम के दूते । विरह समुद्र
सुखाय कौन विधि किरचक योग आग के लूते ।—सूर
(शब्द०) ।

मुहा०—लूता लगाना = आग लगाना ।

लूतातलु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लूतातलु] मकड़ी का जाला [को०] ।

लूतात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चीटा [को०] ।

लूतापट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मकड़ी का अण्डा [को०] ।

लेई—अव्य० [सं० लग्न, हि० लगि] तक । पर्यंत ।

लेई—सद्वा स्त्री० [सं० लेहिन्, लेही या लेहा] १ पानी में घुले हुए क्रिमी चूर्ण को गाढ़ा करके बनाया हुआ लमीला पदार्थ जिसे उंगली से उठाकर चाट सकें । अवलेह । २ आंटे को भूनकर उसमें शरबत मिलाकर गाढ़ा किया हुआ पदार्थ जो खाया जाता है । लपसी ।

यौ०—लेई पूंजी = सारी जमा । सर्वम्ब ।

३. घुला हुआ धाटा जो आग पर पकाकर गाढ़ा और लसदार किया गया हा और जो कागज आदि चिपकाने के काम में आवे । ४ सुरसी मिला हुआ बरी का चूना जो गाढ़ा घाला जाता है और ईटा की जोडाई में काम आता है ।

लेक्चर—सद्वा पुं० [अ०] व्याख्यान । वक्तृता ।

क्रि० प्र०—देना ।

मुहा०—लेक्चर भाडना = धूमधाम से व्याख्यान देना । (व्यग्य) ।

लेक्चरवाजी—सद्वा स्त्री० [अ० लेक्चर + फा० वाजी] । १ खूब लेक्चर देने की क्रिया । २ वक्तृता । वक्तृत्वक ।

लेक्चर—सद्वा पुं० [अ०] १ वह जो लेक्चर देता हो । व्याख्याता । २ उपप्राध्यापक [को०] ।

लेख^१—सद्वा पुं० [सं०] १ लिखे हुए अक्षर । लिपि । २ लिखी हुई बात । ३ लिखावट । लिखाई । ४ लेखा । हिसाब किताब । उ०—गुन श्रौगुन विधि पूछव होइहि लेख अउ जोख ।—जायसी (शब्द०) । ५ पक्ति । लकीर । रेखा । ६ पत्र । चीठी (को०) । ७ देव । देवता । उ०—चढे विमानन लेख अलेखन वर्षाहि मुदित प्रसूना ।—रघुराज (शब्द०) ।

लेख^२—वि० १ लेख्य । लिखने योग्य । २ लेखा करने योग्य । हिमाव के लायक ।

लेख^३—सद्वा स्त्री० [हि० लीक] लकीर । पक्की रात । उ०—विश्व-भर श्रीपाति शिभुवनपति वेद विदित यह लेख ।—तुलसी (शब्द०) ।

लेखक—सद्वा पुं० [सं०] [स्त्री० लेखिका] १ जो किसी बात को अक्षरों में उतारे । लिखनेवाला । लिपिकार । लिपिक । २ चित्र लिखनेवाला । चित्रकार (को०) । ३ किसी विषय पर लिखकर अपने विचार प्रकट करनेवाला । लेख लिखनेवाला । प्रथकार । जैसे—इस पुस्तक का लेखक कौन है ? ३ एक प्रत का नाम । उ०—लेखक कहता बात त्रिवारी । वाग्मून सुन अपराध हमारी ।—सबल० (शब्द०) ।

यौ०—लेखकदोष, लेखकप्रमाद = लेखक की लिपि में त्रुटि । लिखनेवाले की भूल या प्रमाद ।

लेखन^१—सद्वा पुं० [सं०] [वि० लेखनीय, लेख्य] १ लिखने का कार्य । अक्षरविन्यास । अक्षर बनाना । २ लिखने की कला या विद्या । ३ चित्र बनाना । उ०—जल विनु तरंग, भीति विनु लेखन विनु चेतहि चतुराई ।—सूर (शब्द०) । ४ हिसाब करना । लेखा लगाना । कृतना । ५. छर्दन । उलटी

कग्ना । वमन करना । फेंक करना । ६ श्लोष द्वारा रमादि सप्त धातुश्रो या वात आदि दोषों का शोषण करके पतला करना । ७ इस काम के लिये उपयुक्त श्लोष । ८ शल्य क्रिया में काटना, चीरना या खरोचना (को०) । ९ इस काम में प्रयुक्त होनेवाला श्रौजार आदि (को०) । १० एक प्रकार का मरकंडा या नरमल जिमकी कलम बनाते हैं (को०) । ११ भोज-पत्र का वृत्त (को०) । १२ भोजपत्र या ताटपत्र, जिमपर प्राचीन काल में लिखा जाता था । १३ धानी । १४ उद्दीपन । उत्तेजन (को०) ।

लेखन^२—वि० [सं०] १ पुग्घनेवाला । २ दीप्त करनेवाला । उत्तेजक (को०) ।

लेखनवस्ति—सद्वा स्त्री० [सं०] रमादि सप्त धातु या वातादि त्रिदोष और वमन इत्यादि की पतला कर देनेवाली पिचकारी ।

लेखनसाधन—सद्वा पुं० [सं०] दे० 'लेखनाधन' (को०) ।

लेखनहार^१—वि० [हि० लेखन + हार] लिपि देने का काम करने-वाला । जो लिपि देता हो । लेखक ।

लेखना^१—क्रि० म० [सं० लेखन] १ अक्षर या चित्र बनाना । लिखना । उ०—कुदन लीक कभीठी में लेखी गी देखी सुनारि सुनारि सलोनी ।—देव (शब्द०) । २. हिसाब, राख्या या परिमाण आदि निश्चित करना । गिनती करना ।

यौ०—लेखना जोखना = (१) नाप, तौल या गिनती करके मर्यादा या परिमाण आदि निश्चित करना । ठीक ठीक अंदाज करना । हिसाब करना । (२) जांच करना । परीक्षा करना । उ०—लेखे जाखे चोखे चित तुलसी म्यारथ हित, नीके देखे देवता देव्या घने गथ के ।—तुलसी (शब्द०) ।

३ मन ही मन ठहराना । समझना । सोचना । विचारना । मानना । उ०—(फ) हूं आहि आपन दरपन लेगीं । करों सिगार भोर मुख देखों ।—जायसी (शब्द०) । (ख) जे जे तत्र सूर मुभट कीट सम न लेरों ।—सूर (शब्द०) । (ग) मिय सौमित्रि राम छवि देखहि । साधन मरल सफल करि लेखहि ।—तुलसी (शब्द०) ।

लेखनिक—सद्वा पुं० [सं०] १ पत्रवाहक । २ वह जो लिखना पठना न जानता हो । वह जो अपने बदले किसी को प्रतिनिधि बनाकर अधिकारपत्र लिखावे । ३ लिखक । लिखनेवाला । नकल उतारनेवाला (को०) ।

लेखनिका—सद्वा स्त्री० [सं०] १ कलम । लेखनी । २ तूलिका । चित्र लिपि देने की कलम (को०) ।

लेखनी—सद्वा स्त्री० [सं०] १ वह वस्तु जिससे लिपि या अक्षर बनावें । वस्तुतूलिका । कलम । लिखनी । फॉटिंग पेन । २ चमचा । फलछो (को०) ।

मुहा०—लेखनी उठाना = लिखना आरंभ करना ।

लेखनीय—वि० [सं०] १ लिखने, खीचने या चित्र बनाने के योग्य । २ जिससे घटाया या पतला किया जा सके (को०) ।

लेखपट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लेखपत्र' [को०]।

लेखपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [न०] १ लिखित पत्र। लिखा हुआ कागज। २. दस्तावेज।

लेखपत्रिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लेखपत्र' [को०]।

लेखपद्धति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लेखप्रणाली' [को०]।

लेखपाल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लेख + पाल] जमीन की नापजोख का लेखा रखनेवाला सरकारी कर्मचारी। पटवारी।

लेखप्रणाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लिखने की शैली। लिखने का ढंग।

लेखर्षभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] देवताओं में श्रेष्ठ, इन्द्र।

लेखशाला—सञ्ज्ञा स्त्री० [मं०] लिखना सिखानेवाला विद्यालय [को०]।

लेखशालिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लेखशाला का विद्यार्थी [को०]।

लेखशैली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लेखप्रणाली।

लेखसाधन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लिखने का साधन कलम, स्याही, कागज, पटरी आदि [को०]।

लेखहार, लेखहारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चिट्ठी ले जानेवाला। पत्रवाहक।

लेखहारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेखहारिन्] दे० 'लेखहार' [को०]।

लेखा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लिखना] १ गणना। गिनती। हिसाब किताब। जैसे,—(क) आमदनी और खर्च का लेखा लगा लो। (ख) इसका लेखा लगाओ कि वह आठ कोस रोज चलकर वहाँ कितने दिनों में पहुँचेगा। २ ठीक ठीक अदाज। कृत।

क्रि० प्र०—लगाना।

३ रुपए पैसे या और किन्हीं वस्तु की गिनती आदि का ठीक ठीक लिखा हुआ व्योरा। आय व्यय आदि का विवरण। जैसे,—तुम अपना लेखा पेश करो, रुपया चुका दिया जाय।

यौ०—लेखा वही। लेखा पत्तर।

मुहा०—लेखा जाँचना = यह देखना कि हिमाव ठीक है या नहीं। लेखा डेवढ करना = (१) हिसाब चुकता करना। (२) हिसाब बराबर करना। (३) चौपट करना। नाश करना। लेखा पूरा या साफ करना = हिसाब साफ करना। पिछला देना चुकाना। लेखा डालना = हिसाब किताब खोलना। लेनदेन के व्यवहार को वही में लिखना।

४ अनुमान। विचार। समझ।

मुहा०—किसी के लेखे = (१) किसी की समझ में। किसी के विचार के अनुसार। जैसे,—हमारे लेखे तो सब बराबर हैं। (२) किसी के लिये या वास्ते।

लेखा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. लिपि। लिखावट। २ रेखा। लकीर। जैसे,—चद्रलेखा। ३ कतार। पक्ति [को०]। ४ निशान। चिह्न [को०]। ५ किनारा। छोर। सिरा [को०]। ६ चद्राश। चद्रमा की कला। चद्रशृंग [को०]। ७ किर्रीट [को०]। ८ शरीर पर चदन आदि से रेखानिर्माण [को०]।

लेखाक्षर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लिखावट [को०]।

लेखाधिकारी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पत्र आदि लिखने लिखाने का अधिकारी। २ मंत्री। सचिव [को०]।

लेखानुजीवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लेखानुजीविन्] अनुचर। देवता [को०]।

लेखानुजीवी—वि० लेखन द्वारा जीविका चलानेवाला।

लेखावही—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लेखा + वही] वह वही जिममें रोकड़ के लेन देन का व्योरा रहता है।

लेखावलय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लकीरो का घेरा। चारों ओर से गोलाकार घेरी हुई रेखा [को०]।

लेखाविधि—सञ्ज्ञा स्त्री० [मं०] १ लिखने की प्रक्रिया। २ रेखाकन। चित्रलेखन की प्रक्रिया [को०]।

लेखामधि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लेखासन्धि] नासिकामूल का ऊपरी भाग जहाँ दोनो ओर की भाँहे मिलती हैं। भ्रूसधि [को०]।

लेखिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ लिखनेवाली। २ ग्रंथ या पुस्तक बनानेवाली। ३ छोटी या हलकी लकीर या रेखा [को०]।

लेखित—वि० [सं०] १ लिखाया हुआ। लिखाया हुआ। २ लिखित। लिखा हुआ [को०]।

लेखिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ कलम। लेखनी। २ करछी। चमचा [को०]।

लेखी—वि० [सं० लेखिन्] १ स्पर्श करनेवाला। छूनेवाला या छूता हुआ। २ लेखन करनेवाला [को०]।

लेखीलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पत्रवाहक। चिट्ठीरसा [को०]।

लेखी—अव्य० [हि० लेखा] १. विचार से। अनुमान से। २ लिये।

लेख्य—वि० [सं०] १ लिखने योग्य। २ जो लिखा जाने को हो।

लेख्य—सञ्ज्ञा पुं० १ लिखी बात। लेख। २ दस्तावेज।

विशेष—धर्मशास्त्र में 'लेख्य' मनुष्यप्रमाण के दो भेदों में से एक है। इसके भी दो भेद हैं—शासन और जानपद। (चीरक)।

लेख्यक—वि० [सं०] लिखा हुआ। लिखित [को०]।

लेख्यकृत—वि० [सं०] लिखित। लेखवद्ध [को०]।

लेख्यगत—वि० [सं०] चित्रित। चित्र द्वारा वर्णित [को०]।

लेख्यचूर्णिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चित्र बनाने की कुँची या लिखने की कलम, पेंसिल आदि [को०]।

लेख्यपत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लेख्य पत्रक'।

लेख्यपत्रक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दे० 'लेखपत्र'। २. ताडपत्र [को०]।

लेख्यप्रसंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेख्यप्रसङ्ग] दस्तावेज [को०]।

लेख्यस्थान—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लिखने का स्थान [को०]।

लेख्यारूढ़—वि० [सं०] जिसके सबंध में लिखा पढी हो गई हो। दस्तावेजी। जैसे,—लेख्यारूढ़ आधि।

लेजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० रज्जु, मागधी प्रा० लेज्जु] रस्सी। डोरी।

लेजम—सब्जा खी० [फा० लेज़म] १ एक प्रकार की नरम और लचकदार कमान जिससे धनुष चलाने का अभ्यास किया जाता है । २ वह कमान जिसमें लोहे की जज़ीर लगी रहती है और जिससे पहलवान लोग कसरत करते हैं ।

विशेष—इसे हाथ में लेकर कई तरह के पैतरों और बँठकों के साथ कसरत करते हैं ।

प्राइमरी स्कूलों में भी क्रीडा में इसको भाँजना सिखाया जाता है ।

क्रि० प्र०—भाँजना ।—हिलाना ।

लेजरग—सब्जा पुं० [लेज + हि० रग] भरकत या पन्ने की एक रगत जो उसका गुण मानी जाती है ।

लेजिम—सब्जा पुं० [फ्रा० लेज़म] दे० 'लेजम' ।

लेजिस्लेटिव एसंब्ली—सब्जा खी० [अ०] दे० 'व्यवस्थापिका परिषद्' ।

लेजिस्लेटिव काउंसिल—सब्जा खी० [अ०] प्रधान शासक या गवर्नर की वह सभा जो देश के लिये कानून बनाती है ।

लेजिस्लेटिव काँसिल—सब्जा खी० [अ० लेजिस्लेटिव काउंसिल] दे० 'व्यवस्थापिका सभा' ।

लेजुरा—सब्जा खी० [सं० रज्जु, मागधी प्रा० लेज्जु] १ रस्सी । डोरी । २ कूएँ से पानी खींचने की रस्सी । उ०—लेजुरि भइउं, नाथ, विनु तोही ।—जायसी (शब्द०) ।

लेजुरा—सब्जा पुं० [मा० प्रा० लेज्जु] दे० 'लेजुर' ।

लेजुरा—सब्जा पुं० [देश०] एक प्रकार का अगहनी घान जिसका चावल बहुत दिनों तक रहता है ।

लेजुरी—सब्जा खी० [मा० प्रा० लेज्जु] दे० 'लेजुर' ।

लेट—सब्जा खी० [देश०] सुरखी, ककड और चूना पीटकर बनाई हुई कडी चिकनी सतह । गच ।

लेट—वि० [अ०] जो निश्चित या ठीक समय के उपरांत आवे, रहे या हो । जिसे देर हुई हो । जैसे,—यह गाडी प्रायः लेट रहती है ।

खी०—लेट फी ।

लेट—सब्जा पुं० [सं०] मनु द्वारा उल्लिखित एक जाति का नाम । (मनु०) ।

लेटना—क्रि० अ० [सं० लुण्ठन, हि० लोटना] १ हाथ पैर और सारा शरीर जमीन या और किसी सतह पर टिकाकर पड रहना । पीठ जमीन या विस्तरे आदि से लगाकर बदन की मारी लवाई उमपर ऊहराना । खडा या बँठा न रहना । पीठना । जैसे,—जाकर चारपाई पर लेट रहो ।

सयो० क्रि०—जाना ।—रहना ।

२ किसी चीज का बगल की ओर झुककर जमीन पर गिर जाना ।

मुहा०—खेती लेट जाना = (१) फसल का अधिक पानी या हवा के कारण सीधा खडा न रहना, झुककर जमीन पर पड जाना ।

(२) नत होना । विनीत हो जाना । प्रभुत्व मान लेना । गुड हंट जाना = ताव बिगडने के कारण गुड का गोला और चिप-चिपा हो जाना ।

३ गर जाना ।

लेटपेट—सब्जा खी० [देश०] एक प्रकार की चाय ।

लेट फी—सब्जा खी० [अ०] वह फीम जो निश्चित समय के बाद डाकघराने में कोई चीज दाखिल करने पर देनी पडती है ।

विशेष—डाकघराने में प्रायः सभी कामों के लिये समय निश्चित रहता है । उस निश्चित समय के उपरांत यदि कोई व्यक्ति कोई चीज रजिस्टरी कराना या चिट्ठी खाना करना चाहे, तो उसे कुछ फीम देनी पडती है जो लेट फी कहलाती है ।

२ स्कूल, कालेज आदि में फीम जमा होना को निश्चित तिथि के बाद उक्त फीस के साथ देय कुछ प्रतिगित द्रव्य ।

लेटर—सब्जा पुं० [अ०] १ वर्ग । अक्षर । २ पत्र । चिट्ठी [को०] ।

लेटर पाउस—सब्जा पुं० [अ० लेटर + वास] डाकघराने का वह सूदक जिसमें कहीं भेजने के लिये लोग चिट्ठियाँ डालने हैं । चिट्ठी डालने का सूदक ।

लेटर्स पेटेंट—सब्जा पुं० [अ०] वह राजकीय आज्ञापत्र जिसमें किसी को कोई पद या स्वयं आदि देना या कोई मन्था स्थापित करने का वात लिखा रहता है । राजकीय आज्ञापत्र । जारी कर-गान । जैसे,—१८६१ में पार्लियमेंट ने कानून बनाकर महारानी को अधिकार दे दिया था कि अपने लेटर्स पेटेंट न बलकता, यवई, मद्रास और आगरा प्रदेशों में हाईकोर्ट स्थापित करें ।

लेटा—सब्जा पुं० [देश०] गन्ने का बाजार । मंडी ।

लेटाना—क्रि० न० [हि० लेटना का प्रेर० रूप] दूसरे को नेटने में प्रवृत्त करना ।

सयो० क्रि०—देना ।

लेड—सब्जा पुं० [अ०] १ सीमा नामक धातु । २ प्रायः दो अंगुल चौड़ी सीसे की डनी हुई पत्तर की तरह पतली पट्टी जो छापे-खाने में अक्षरों की पत्तियों के बीच में अक्षरों को ऊपर नीचे होने में रोकने के लिये दी जाती है ।

लेडमोल्ड—सब्जा पुं० [अ०] छापेखाने में अक्षरों की पत्तियों के बीच में रखने के लिये सीसे की पटरियाँ डालने का साँचा । लेड डालने का साँचा ।

लेडी—सब्जा खी० [अ०] १ भले घर की स्त्री । महिला । २ लार्ड या सरदार की पत्नी । ३ अंग्रेजी फैशन में डनी हुई औरत ।

लेत—सब्जा सं० [सं०] अशु । अशु [को०] ।

लेथो—सब्जा पुं० [अ० लीथो] दे० 'लीथो' ।

लेट—सब्जा पुं० [देश०] एक प्रकार का गीत जो फागुन में गाय जाता है ।

लेट—सब्जा पुं० [अ० लेथ] खरादने की मशीन । खराद मशीन ।

लेटवा—सब्जा पुं० [देश०] खेत में होनेवाली एक प्रकार की ककड़ी । फूट ।

लेदार—सब्जा पुं० [देश०] एक प्रकार की चिडिया ।

लेदी—सब्जा खी० [देश०] १ जलाशयों के किनारे रहनेवाली एक प्रकार की छोटी चिडिया । उ०—बोलहि मुझा डेक वक लेदी । रही अवाल मोन जलभेदी ।—जायसी (शब्द०) । २, पास का

पूला जिसे हल के नीचे के भाग में इपलिये बाँध देने हैं जिममें चौड़ी कूँड वने । ३ चारा । घास । पुत्राल आदि ।

लेना^१—सखा पुं० [हि० लेना] १ लेने की क्रिया या भाव ।

यौ०—लेन देन ।

२ वह रकम जो किसी के यहाँ बाकी हो या मिलनेवाली हो । लहना । पावना ।

लेना^१—सखा स्त्री० [अ०] गली । कूचा । जैसे,—प्यागीचरण सरकार लेन, कलकत्ता ।

लेनदार—सखा पुं० [हि० लेन + दार (प्रत्य०)] जिसका कुछ बाकी हो । जिसका ऋण चुकाना हो । महाजन । लहनेदार ।

लेनदेन—सखा पुं० [हि० लेना + देना] १ लेने और देने का व्यवहार । आदान प्रदान । २ रुपया ऋण देने और ऋण लेने का व्यवहार जो किसी के साथ किया जाय । जैसे, हमारा उसका लेनदेन नहीं है । ३. रुपए लेने देने का व्यवसाय । महाजनी । जैसे,—उसके यहाँ रुपए का लेनदेन होता है ।

मुहा०—लेनदेन न होना = व्यवहार न होना । सरोकार न होना । सबध या प्रयोजन न होना । उ०—हमें कछु लेन देन है ऐ वीर तुम्हारे ।—सूर (शब्द०) ।

लेनहार^१—वि० [हि० लेना + हार (प्रत्य०)] लेनेवाला । लेनदार । लहनेदार ।

लेना—क्रि० स० [स० लभन, हि० लहना] १ दूसरे के हाथ से अपने हाथ में करना । ग्रहण करना । प्राप्त करना । लाभ करना । जैसे,—उसने रुपया दिया, तो मैंने ले लिया ।

सयो० क्रि०—लेना ।

२ ग्रहण करना । धामना । पकडना । जैसे,—छटी अपने हाथ में ले लो और किताब मुझे दे दो ।

मुहा०—ऊपर लेना = सिर या कंधे पर रखना ।

३ मोल लेना । क्रय करना । खरीदना । जैसे,—बाजार में तुम्हें क्या क्या लेना है ?

मुहा०—ले देना = दूसरे को मोल लेकर देना । खरीद देना ।

४ अपने अधिकार में करना । कब्जे में लाना । जीतना । जैसे,—उसने सिंध के किनारे का देश ले लिया । ५ उधार लेना । कर्ज लेना । ऋण ग्रहण करना । जैसे,—१०००) महाजन से लिए, तब काम चला । ६. कार्य सिद्ध करना या समाप्त करना । काम पूरा करना । जैसे,—आधे से अधिक काम हो गया है, अब ले लिया । ७. जीतना । जैसे,—बाजी लेना । ८. भागते हुए को पकड़ना । धरना । जैसे,—लेना, जाने न पावे । ९ गोद में धामना । जैसे,—जरा बच्चे का ले लो । १० किसी आते हुए आदमी से आगे जाकर मिलना । अगवानो करना । अन्यधना करना । जैसे—शहर के सब रईस स्टेशन पर उन्हें लेन गए हैं । उ०—भरत आइ आगे मैं लीन्हें ।—तुलसी (शब्द०) । ११. प्राप्त होना । पहुँचना । जैसे,—घर लेना मुश्किल हो गया है । १२. किसी काय का भार ग्रहण करना । किसी काम को पूरा

करने का वादा करना । जिम्मे लेना । जैसे,—जब इस काम को लिया है, तब पूरा करके ही छाटूँगा ।

मुहा०—ऊपर लेना = जिम्मे लेना । भार ग्रहण करना । जैसे—इस काम को मैं अपने ऊपर लेता हूँ ।

१३ सेवन करना । पीना । जैसे—जहाँ कभी वे थोड़ी सी भाँग ले लेते हैं । १४ धारण करना । स्वीकार करना । अंगीकार करना । जैसे,—योग लेना, मन्याम लेना, बाना लेना । १५ काटार अलग करना । काटना । जैसे,—(क) नाखून लेना, दाँत लेना (ख) धीरे से ऊपर का हिस्सा ले लो, अदर छुरी न लगने पावे । १६ किमी को उपहास द्वारा लज्जित करना । हँसी ठट्टा करके या व्यंग्य बालकर शर्मिदा करना । जैसे,—आज उनकी खूब लिया ।

मुहा०—आड़े हाथों लेना = गूढ व्यंग्य द्वारा लज्जित करना । छिपा हुआ आक्षेप करके लज्जित करना ।

१७ पुरुष या स्त्री के साथ मभोग करना । १८ मचय करना । एकत्र करना । जैसे,—मैं गुह के लिय फूँ लेन गया था ।

मुहा०—ले आना = लेकर आना । लाना । ले उठना = (१) लेकर भाग जाना । (२) किसी बात को लेकर उमपर बहुत घुंठ कर चलना । किसी बात का मकेत पाते ही वितडावाद मटा करना । जैसे—तुमने तो जहाँ कोई बात सुनी, वस ले उठे । लेने के देने पडना = (१) लेने के स्थान पर उलटे देना पडना । भले के लिये कुछ करते हुए बुरा होना । (किसी मामले में) लाभ के बदले हानि होना । (२) बहुत कठिन समय आना । जान पर आ बनना । जैसे,—देखते देखते बच्चे के लेने के देने पड गए । ले चलना = (१) लेकर चलना । धामकर या ऊपर उठाकर चलना । (२) चलते समय किमी का माय करना । साथ साथ गमन करना या पहुँचाना । जैसे—मैले ने उन्हें भी ले चलो । ले जाना = लेकर जाना । पाम में रखकर प्रस्थान करना । जैसे—(क) यह किताब ले जाओ, अब काम नहीं है । (ख) यह पत्र उनके पास ले जाओ । ले डालना = (१) खराब करना । चौपट करना । नष्ट करना । (२) पराजित करना । हराना । (३) किसी काम को निवटा देना । पूरा करना । समाप्त करना । ले डूना = अपने साथ दूसरे का भी खराब करना । ले दे करना = (१) हज्जत करना । तकरार करना । (२) बहुत प्रयत्न करना । बटी काशिश करना । जैसे—बडा ल द की, तब जाकर काम पूरा हुआ । ले दकर = (१) लेना देना मव जाडकर । मव या देना आदि पटा कर । जस—मव ले दकर १००) बचत है । (२) मव मलाकर । जाड जाडकर । जम—ले दकर दतन हा रुपए ता होउ ह । (३) बटी मुशकत स । कठिनता स । लेना देना = (१) लेन और देन का व्यवहार । (२) रुपया उधार दो और लेन का व्यवसाय । लेना देना होना = मतलब या प्रयोजन होना । मरोतार राना । जैसे,—मुझे किसी स कुछ लेना देना है जा परया प । लेना एक न देना दो = कुछ मतलब नहीं । कुछ प्रयोजन नहीं । कुछ खराब

नही । उ०—मांगि के खैवो, मसीत को सोइवो लैवे को एक न दैवे को दोऊ । तुलसी (शब्द०) । ले निकलना = लेकर चल देना । ले पढना (१) अपने साथ जमीन पर गिरा देना । (२) समोग करने लगना । ले पालना = गोद लेना । दत्तक लेना । ले बैठना = (१) बोकू लिए हूव जाना । (नाव आद का) । (२) अपने साथ नष्ट या खराब करना । ३ किसी व्यवसाय का नष्ट होकर लगे हुए धन को नष्ट करना । जैसे—यह कारखाना सारा पूँजी ले बैठेगा । ले भागना = लेकर भाग जाना । ले मरना = अपने साथ नष्ट या बरबाद करना । ले रखना = लेकर रख छोड़ना । कान मे लेना = सुनना । उ०— करै घरी दस ता मैं कोऊ जो खवरि देत लेत नहि कान और मरवावही ।—प्रियादास (शब्द०) । ले = इस शब्द का प्रयोग किसी को संबोधन करके इन अर्थों का बोध कराने के लिये किया जाता है—(१) अच्छा, जो तू चाहना है, वही होता है । जैसे—ले, मैं चला जाता हूँ, जो चाहे सो कर । (२) अच्छा, जो तू किसी तरह नहीं मानता है तो मैं यहाँ तक करता हूँ । जैसे,—ले, तेरे हाथ जोड़ू हूँ, क्यों न गावेंगे ?—हरिश्चन्द्र (शब्द०) । ३ किसी के प्रतिकूल कोई बात हो जाने पर उसे बिद्वाने या लज्जित करने के लिये प्रयुक्त । देख । कैसा फल मिला । जैसे,—(क) ले । और बढ़ बढ़कर बातें कर । (ख) ले । कैसी मिठाई मिली ।

विशेष—इस क्रिया का प्रयोग सयो० क्रिया के रूप में सकर्मक और अकर्मक दोनों क्रियाओं के धातुरूप के आगे कही तो (क) केवल पूर्ति सूचित करने के लिये होता है, जैसे—इस बीच में उसने अपना काम कर लिया । और (ख) कही स्वयं वक्ता द्वारा किसी क्रिया का किया जाना सूचित करने के लिये । जैसे,—तुम रहने दो, मैं अपना काम आप कर लूँगा ।

लेनिहार^७—वि० [हि० लेना + हार] लेनेवाला । लेनदार । लहने-दार । उ०—जनु लेनिहार न लेहि जिउ हरहि तरासहि ताहि । एतने बोल आय मुख करै करै तराहि तराहि ।—जायसी (शब्द०) ।

लेप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ गीली या पानी आदि के साथ मिली हुई वस्तु जिसकी तह । किसी वस्तु के ऊपर फैलाकर चढ़ाई जाय । पोतन, छोपने या चुपडने की चीज । लेई के समान गाढी गीली वस्तु । मरहम । जैसे,—जहाँ चाट लगे है, वहाँ यह लेप चढ़ा देना ।

क्रि० प्र०—चढ़ाना ।—रखना ।—लगाना ।

२ गाढी गीली वस्तु की तह जो किसी वस्तु के ऊपर फैलाई जाय । ३ उवटन । वटना । ४ लगाव । सबध । ५ धब्बा । दाग (को०) । ६ किसा वस्तु में मिट्टी लगाना । मुत्तिकापेन (को०) । ७ नैतिक पतन या दोष । पाप । ८ खाद्यपदार्थ । ९ आद्य के समय पिंडदान के अनंतर हाथों में लगा हुआ पिंड का अन्न जिसे वेदी पर बिछे हुए कुशमूल में लगाते है । यह अन्न चौथी, पाँचवी और छठी पीढ़ी के लेखभागी पितर प्राप्त करते हैं ।

लेपक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लेप करनेवाला । पोतने या लगानेवाला । २ एक जाति या वर्ग । राजगोर (को०) । ३ सचि बनाने-वाला । ढलाई करनेवाला (को०) ।

लेपकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लेप करनेवाला । दे० 'लेपक' [को०] ।

लेपकामिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] सचि के द्वारा ढाली हुई नारीमूर्ति । दे० 'लेप्यनारी - २' [को०] ।

लेपची—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नेपालियों की एक जाति ।

लेपचू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ?] एक किस्म की उत्तम फोटि की चाय ।

लेपन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० लेपिता, लेप्य, लिप्त] १ गाढी गीली वस्तु की तह चढ़ाना । लेई सी गीली चीज पोतना या छोपना । २ तुफ्फ नामक एक गद्यद्रव्य (को०) । ३ लेपनीय वस्तु, उवटन, अगाराग, आदि (को०) । ४ माम (को०) ।

लेपना—क्रि० सं० [सं० लेपन] गाढी गीली वस्तु की तह चढ़ाना । कीचड या लेई सी गाढी चीज फैलाकर पोतना । छोपना ।

लेपभागी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेपभागिन्] पिता की और चौथी, पाँचवी और छठी पीढ़ी के पूर्वज (को०) ।

लेपभुज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लेपभागी' [को०] ।

लेपालक—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लेना + पालना] गोद लिया हुआ पुत्र । दत्तक पुत्र । पालट ।

लेपी^१—वि० [सं० लेपिन्] लेप करनेवाला ।

लेपी^२—सञ्ज्ञा पुं० १ लेखक । लिपिकार । २ राजगौर । यवई (को०) ।

लेप्य—वि० [सं०] १ लेपन करने योग्य । लेपनीय । ढालने लायक । सचि के द्वारा ढालने के योग्य (को०) ।

यौ०—लेप्यकार = लेप्यवृत् = दे० 'लेपक', 'लेपकर' । लेप्यनारी । लेप्यमयी । लेप्यस्त्री = दे० 'लेप्यनारी' ।

लेप्यनारी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ वह स्त्री जिसपर चदन आदि का लेप लगा हो । पत्थर या मिट्टी की बनी स्त्री की मूर्ति ।

लेप्यमयी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मिट्टी, पत्थर या काठ की बनी पुतली (को०) ।

लेफिटनेट—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लेफिटनेट] १ वह सहायक कर्मचारी जिसे यह अधिकार हो कि अपने से उच्च कर्मचारी के आज्ञानुसार या उसकी आज्ञा के अभाव में यथाभित्त कोई काम कर सके । जैसे,—लेफिटनेट कर्नल, लेफिटनेट गवर्नर, लेफिटनेट जनरल इत्यादि । २ सेना का वह अग्र्यज्ज जो कप्तान के मातहत होता है और कप्तान की अनुपस्थिति में सेना पर पूर्ण अधिकार रखता है ।

लेफिटनेट कर्नल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] सेना का एक अफसर जिसका दर्जा कर्नल के बाद ही है ।

लेफिटनेट जनरल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] सेना का एक अफसर जिसका दर्जा जेनरल के बाद ही है । सहायक सैन्याध्यक्ष ।

लेवर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] १ श्रम । मेहनत (विशेषतः शारीरिक) । २ श्रमिक वर्ग (को०) ।

यौ०—लेवरपाटों = वह सगठन या दल जो श्रमिकों का प्रति-

निधित्व करता हो। लेबर मैवर = शासन में श्रमिक वर्ग का प्रतिनिधि सदस्य। लेबर यूनियन = मजदूरों का सघ।

लेबरनां—क्रि० सं० [हि० लपेटना, लिबडना या लेबरना] ताने में माँड़ी लगाना। (जुलाहा)।

लेबरर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह जो शारीरिक परिश्रम द्वारा जीविका निर्वाह करता हो। मेहनत मजदूरी करके गुजर करनेवाला। श्रमजीवी। मजदूर।

लेबुल्ल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] पत्ते या विवरण आदि की सूचक वह चिट जो पुस्तकों, श्लेष आदि की पुडियो, वोटलो या गठरियो आदि पर लगाई जाती है। नामविधि।

लेबोरेटरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] वह शाला या मन्दिर जिसमें वैज्ञानिक परीक्षाएँ की जाती हो, किसी पारक्रिया की जाँच की जाती हो, अथवा रासायनिक पदार्थ, श्लेषियाँ इत्यादि बनाई या तैयार की जाती हो। प्रयोगशाला।

लेमन—सञ्ज्ञा पुं० [अ० । तुल० अ० लीमूँ] नीबू [को०]।

यौ०—लेमनचूस। लेमनजूस।

लेमनचूस—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लेमन + हि० चूसना] नीबू आदि के योग से बनी चीनी की गोलियाँ [को०]।

लेमनेड—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] नीबू का शरबत जो पहले नीबू के रस को शरबत में मिलाकर बनाते थे, पर जो अब नीबू के सत्त को शरबत में मिलाकर बनाते हैं और वोटल में हवा के जोर से बद करके रखते हैं। विलायती मीठा पानी। (यह प्रायः पाचक होता है।)

लेमर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक प्रकार का जतु।

विशेष—यह पेढी पर रहता है और फल, फूल, अकुर, पत्तियाँ, अड और कीड़े मकोड़े, जाँ पेढी पर रहते हैं, खाता है। पहले मेडागास्कर टापू में इसका पता लगा था। यह बदरो से मिलता जुलता होता है। इसकी अनेक जातियों का पता चला है, जो अफ्रीका और पूर्विय टापुओं में फिलिपाइन और सिलीबीज तक मिलती हैं। इनके सिवा इसकी एक और जाति है, जो विना पूँछ के होती है और मलाया, बोर्नियो, सुमात्रा आदि में मिलती है। इसकी पूँछ लवी होती है। इसकी कुछ जातियों का जतुओं को दिन में दिखाई नहीं देता।

लेमू—सञ्ज्ञा पुं० [फा०] नीबू [को०]।

लेमूनी—वि० [फा०] नीबू का। नीबू से युक्त। जिसमें नीबू का योग हो [को०]।

लेय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिंह राशि [को०]।

लेर—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लहर] दे० 'लहर'। (लश०)।

लेरुआर्—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लडुआ] दे० 'लडुआ'।

लेरुआ(५)^२—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] १ गाय का छोटा बच्चा। बछड़ा। २ बच्चा। शिशु। उ०—ललन लोने लख्या बलि मंया। सुख सोइए नीद वेरिया भइ चारु चरित चारथी भंया। —तुलसी प्र०, पृ० २७७।

लेरुआरी—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लट + आरी (प्रत्य०)] वह भेंड जिमके गले में लट लटका रहती है। (गडरिया)।

लेरुवा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लह] १ बछड़ा। उ०—(क) जो न बर्मा, लोल नैन, लरुवा मरहि सव खरक खरेई आजु सूनै सुनियतु है।—केशव (शब्द०)। (ख) लाडिली लाली कलौरी लुरी कहँ लाल लके कहाँ अग लगाइ कै। आजु तो केशव कंसहु लखवै लागत देत न कसहुँ आइ कै।—केशव (शब्द०)। २ शिशु। बच्चा। ब्राह्मक।

लेला^१—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] [स्त्री० लेली] १ भेंड या बकरी का बच्चा। २ वह जो साथ षगा रहता हो। पिछलग्गू।

लेला^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कप। कपन [को०]।

लेलापमाना—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अग्नि की सात जिह्वाओं में एक का नाम [को०]।

लेलितक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गधक [को०]।

लेलिह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जूँ। लोख। २ साँप।

लेलिहा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] तत्र में अंगुलियों की एक प्रकार की मुद्रा [को०]।

लेलीतक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लेलितक। गधक [को०]।

लेलिहान^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सर्प। साँप। २ शिव [को०]।

लेलिहान^२—वि० [सं०] बार बार जीभ से स्वाद लेनेवाला। चाटनेवाला।

लेव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेप्य] १ अच्छा तरह घुली हुई मिट्टी या पिसी हुई श्लेषियाँ जो किसी स्थान पर लगाई जायँ। लेप। २ मिट्टी आदि का लेप जो हड्डी या और वर्तनों की पेंदी पर, उन्हें आग पर चढ़ाने से पहले, जलाने से बचाने के लिये, किया जाता है। ३ दीवार पर लगाने का गिलावा। कहगल।

क्रि० प्र०—चढ़ना।—चढ़ाना।—देना।

मुहा०—लेव चढ़ना = मोटा होना। मोटाई आना। (व्यग्य)।

४. दे० 'लेवा'।

लेवक—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का वृक्ष जिसका लकड़ी इमारत के काम में आती है।

लेवडा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लेव + डा (प्रत्य०)] १ लेव। लेप। २ पलस्तर। किसी लेप आदि का वह चप्पड जो फूलकर गिरने लगता है। जैसे, लेवडा उखडना।

लेवरनां—क्रि० सं० [हि० लेव, या लेवडा] लेवा लगाना। कहगिल करना। लेव लगाना।

लेवा^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेप्य] १ गिलावा। २ मिट्टी का गिलावा। कहगिल। ३ नाव की पेंदी का वह तख्ता जो सरे से पतवार तक लगाया जाता है। ४. लेप। ५ पानी का इतना बरसना कि जोतने पर खेत की मिट्टी और पानी मिलकर गिलावा बन जाय।

क्रि० प्र०—लगना।

६. गाय, भैस आदि का थन।

†७ कथरी ।

लेवा^२—वि० [हि० लेना] लेनेवाला । जैसे,—नामलेवा । जानलेवा ।

विशेष—इस अर्थ में इसका व्यवहार केवल यौगिक शब्दों के अर्थ में होता है ।

यौ०—लेवा देई = लेने देना । आदान प्रदान । उ०—अपनी काज सँवार सूर सुनि हमहि बनावत कून । लेवा देई बराबर मे है कौन रक को भूप ।—सूर (शब्द०) ।

लेवार^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अग्रहार ।

लेवार^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लेव] लेव । गिलावा ।

लेवारना^१—क्रि० सं० १ दे० 'लेवरना' । २ दे० 'लेवरना' ।

लेवाल—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लेना + वाल (प्रत्य०)] लेने या खरीदने-वाला ।

लेवी—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ एक प्रकार का दरवार जो विलायत में राजा लाग और हिंदुस्तान में वायसराय करते थे । २ उद्देश्य-विशेष से खड़ी की हुई पलटन । जैसे,—मकरान लेवी कोर । विशेष दे० 'मिलिश' ।

लेश^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अणु । २ छुटाई । सूक्ष्मता । ३ चिह्न । निशान । उ०—राम सच्चिदानन्द दिनेसा । नहि तहँ मोहनिसा लवलेमा ।—तुलसी (शब्द०) । ४ ससर्ग । लगाव । सवध । उ०—जो कोइ कोप भरै मुख बना । सनमुख हतै गिरा सर पना । तुलसी तऊ नेस रिस नाहीं । सो सोतल कहिए जग माही ।—तुलसी (शब्द०) । ५ एक अलकार, जिसमें किसी वस्तु के वर्णन के केवल एक ही भाग या अक्षर में रीचकता आती है । ६ एक प्रकार का गाना । ७ समय का एक मान जो दो 'कला' (कुछ के मत से १२ कला) के बराबर होता है (को०) ।

लेश^२—वि० अल्प थोड़ा ।

लेशिक—सञ्ज्ञा पुं० [म०] घास काटनेवाला । घसियारा [को०] ।

लेशी—वि० [सं० लेशवत्] सूक्ष्म अक्षर से युक्त । लवलेशवाला [को०] ।

लेशोक्त—वि० [सं०] इ गित मात्र । संकेतित । इसारे में या दबी जयान से सुभाषा हुआ । सच्चेप में कहा गया [को०] ।

लेश्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] प्रकाश [को०] ।

लेश्या—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जैतियों के अनुसार जीव की वह अवस्था जिसके कारण कर्म जीव को बाधता है । यह छह प्रकार की मानी गई है—कृष्ण, नील, कपोत, पीत, पद्म और शुक्ल ।

विशेष—इसे जैन लोग जीव का पर्याय भी मानते हैं ।

२ प्रकाश (को०) ।

लेप^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेश] दे० 'लेश' ।

लेप^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेख] दे० 'लेख' ।

लेपना^१—क्रि० सं० [हि० लेखना] दे० 'लेखना' । उ०—दुख सुख अरु अपमान बडाई । सब सम लेपहि विपति विहाई ।—तुलसी (शब्द०) ।

लेपना^२—क्रि० सं० [सं० लेखन] दे० 'लेखना' । उ०—सीय स्वयवरु माई दोऊ भाई आए देपन । सुनत चली प्रमदा प्रमुदित मन, प्रेम पुलकि तन मनहुँ मदन मञ्जु मेपन । निरपि मनोहृताई सुपुमाई कहीं एक एक सो भूरि भाग हम धन्य आलो ए दिन एपन । तुलसी महज सनेह सुरग सब, सो समाज चित चित्रसार लागी लेपन ।—तुलसी (शब्द०) ।

लेपनी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लेखनी] दे० 'लेखनी' ।

लेपे^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि०] दे० 'लेखे' ।

लेष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मिट्टी का ढोका [को०] ।

यौ०—लेष्टभेदन = मिट्टी के ढोके तोड़ने का भोजार ।

लेसा^१—वि० [सं० लेश] दे० 'लेश' उ०—(क) लरिका और पढत शाला में, तिनहि करत उपदेश । हरि को भजन करा सबही मिलि आर जगत सब लेस ।—सूर (शब्द०) । (ख) राज देन कहि दान बन, माहि न सो दुख लेस । तुम्ह बिन भरतहि भूपतिह प्रजहि प्रचड कलेस ।—तुलसी (शब्द०) ।

लेस^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ कलावत्तू या किनारे पर टाँकने की इसी प्रकार की और कोई पट्टी । गाटा । २. बेल ।

यौ०—लेसदार = (१) बेलदार । जिसपर बेल लगी हो । (२) गाटेदार । जिसपर गाट टँकी हो ।

लेस^३—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लासा] १ मिट्टी का गिलावा जो दीवार पर लगाने के लिये बनाया जाता है । २. किसी वस्तु को पानी में धोलकर गाढा किया हुआ । गिलावा । चप । लस ।

यौ०—लेसदार = लसीला । चिपचिपा ।

लेसक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गजारोही । हाथी का सवार [को०] ।

लेसना^१—क्रि० सं० [सं० लेश्या (= प्रकाश)] जलाना । उ०—एहि विध लेसइ दीप तेजरासि विज्ञानमय । जातहि जासु नमीप जरहि मदादिक सलभ सब ।—तुलसी (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—देना ।

लेसना^२—क्रि० सं० [हि० लेस या लस] १. किसी चीज पर लेस लगाना । पोतना । २. घर की दीवार पर मिट्टी का गिलावा पोतना । कहगिल करना । ३. चिपकाना । सटाना । ४. इधर की बात उधर लगाना । चुगली खाना । ५. दो आदमियों में विवाद उत्पन्न करने के लिये उन्हें उत्तेजित करना ।

लेसिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लेसक' [को०] ।

लेसो^१—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] छह ढोली पान का एक गट्टा ।

लेह^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दे० 'अवलहेह' । २ लेहन करनेवाला (को०) । ३ खाना । आहार । भोजन (को०) । ४ ग्रहण का एक भेद जिसमें पृथ्वी की छाया (या राट्ट) सूर्य या चंद्रविष को जीभ के समान चाटता हुआ जान पड़ता है ।

लेह^२—सञ्ज्ञा पुं० [दश०] लोष नामक वृक्ष । विशेष दे० 'लोष' ।

लेहन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० लेहक, लेह्य] चाटना । उ०—जहँ जहँ भीर परत भक्तन को तहँ तहँ होत सहाय । अस्तुति कर मन हरप बड़ायो लेहन जाभ कराय ।—सूर (शब्द०) ।

लेहना^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेह (= आहार)] पशुओं का चारा ।

लेहना^२—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लहना] १ खेत में कटे हुए शस्य या फसल की वह ढाँठ जो काटनेवाले मजदूरों को काटने की मजूरी में दी जाती है । २ कटी हुई फसल का वह ढाल सहित ढल जो नाई, धोबी आदि को दिया जाता है । ३ ढल या ब्याल आदि की वह मात्रा जो उठानेवाले के दोनों हाथों के बीच में आ सके । ४ दे० 'लहना' ।

लेहसुआ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लेस] एक प्रकार की घास । कनकौवा ।

विशेष—इसकी पत्तियाँ चार अंगुल लंबी, तीन अंगुल चौड़ी, ऊपर की नुकीली और धारीदार होती हैं । यह घास वरसात में उत्पन्न होती है और बहुत कोमल तथा लमीली होती है । इसका साग भी बनाया जाता है और इसे पशु भी खाते हैं । इसके फूल नीले रंग के और छोटे छोटे होते हैं । इसकी पत्तियाँ वेसन में लपेटकर तेल आदि में तलने से रोटी की भाँति फूल जाती है ।

लेहसुर—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] कुम्हारों का एक औजार जिससे वे मिट्टी को मिलाते हैं । पाम् ।

लेहाजा—क्रि० वि० [अ० लिहाजा] इसलिये । इस वास्ते । इस कारण ।

लेहाडाँ—वि० [देश०] दे० 'लिहाडा' ।

लेहाडापन—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] दे० 'लिहाडापन' ।

लेहाड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लिहाड़ी] अप्रतिष्ठा । अपमान । (दलाल) ।
क्रि० प्र०—करना ।—लाना ।—होना ।

लेहाफ—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लिहाफ] दे० 'लिहाफ' ।

लेहिन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुहागा [को०] ।

लेही^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] कान के अग्रभाग में या ऊपर होनेवाला एक रोग [को०] ।

लेही^२—वि० [सं० लेहिन्] आस्वादन करनेवाला । चाटनेवाला [को०] ।

लेह्य^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ वह पदार्थ जो चाटने के लिये हो । वह जो चाटा जाय । यह भोजन के छह प्रकारों में से एक है । चटनी । उ०—विविध भाँति के रुचिर अचारा । लेह्य चोष्य वर पेय प्रकारा ।—रघुराज (शब्द०) । २ अवलेह ।

लेह्य^२—वि० चाटने के योग्य । जो चाटा जाय ।

लै ग^१—वि० [सं० लैङ्ग] व्याकरण में लिंग से संबंधित [को०] ।

लै ग^२—सञ्ज्ञा पुं० अठारह पुराणों में एक पुराण ।

लै गधूम—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लैङ्गधूम] अज्ञ पुरोहित । मूर्ख पुरोहित [को०] ।

लै गिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लैङ्गिक] १ वैज्ञानिक दर्शन के अनुसार अनुमान प्रमाण । वह ज्ञान जो लिंग द्वारा प्राप्त हो ।

विशेष—इसका स्पष्ट लक्षण सूत्र में न कहकर इसे उदाहरण द्वारा इस प्रकार लक्षित किया गया है कि यह इसका कार्य है, यह इसका कारण है, यह इसका सयोगी है, यह इसका विरोधी है, यह इसका समवाची है, आदि, इस प्रकार

का ज्ञान लैंगिक ज्ञान कहलाता है । इसी को न्याय में अनुमान कहते हैं ।

२ मूर्तिकार । शिल्पी । भास्कर । कारीगर [को०] ।

लैंगिक^१—वि० [वि० स्त्री० लैंगिकी] १ चिह्नो या लक्षणों पर आधारित । अनुमित [को०] । २. लिंग सबधी । जननेंद्रिय सबधी । ३ मूर्तिकार [को०] ।

लैंगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लैङ्गी] लिंगिनी नाम की वृद्धी [को०] ।

लैंगोद्भव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लैङ्गोद्भव] लिंग की उत्पत्ति को कया या आख्यान [को०] ।

लैङो—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] एक प्रकार की घोड़गाड़ी ।

विशेष—इस घोड़ागाड़ी में ऊपर की ओर टप होता है । यह टप बीच में से इस प्रकार खुलता है कि पिछला अंश पीछे की ओर और अगला आगे की ओर सिकुड़कर दब और नीचे बैठ जाता है । इससे आगने सामने दोनों ओर बैठने की चौकियाँ होती हैं ।

लैप—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] दीपक । चिराग ।

लैसर—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] रिसाले के सवारों के तीन भेदों में से एक जो भाला लिए रहते हैं और जिनके घोड़े भारी होते हैं ।

लैउ—अव्य [हिं० लगना] तक । पर्यंत ।

लैकुची—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विशेष प्रकार के रेशों, तंतुओं या सूत्रों से निमित्त एक परिधान [को०] ।

लैटिन—सञ्ज्ञा स्त्री० एक भाषा जो पूर्व काल में इटली देश में बोली जाती थी ।

विशेष—किसी समय में सारे यूरोप में यह विद्वानों और पादरियों की भाषा थी । इस भाषा का साहित्य बहुत उन्नत था, और इसीलिये अब भी कुछ लोग इसका अध्ययन करते हैं ।

लैतोलाल—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] हीला हवाला । टाल मटून [को०] ।

लैन—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ० लाइन] १ सीधी लकीर जिसमें लवाई मात्र हो । २ सीमा की लकीर । ३ कतार । पक्ति । ४ पैदल सिपाहियों की सेना ।

यौ०—लैनडोरी = पेशखेमा ।

५ मिपाहियों के रहने की जगह । वारक ।

लैयाँ—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लपना ?] वह वान जो अगहन में कटता है । जड़हन । शाली । लवक ।

लैरू—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लेह] दे० 'लेखा' । उ०—उद्विग्ना और विपुल विकला कयो न सो धेनु होगी । प्यारा लैरू अलग जिसकी आँख से हो गया है ।—प्रिय०, पृ० १३१ ।

लैल—सञ्ज्ञा स्त्री० [फा०] रात्रि । निशा । यामिनी ।

लैला—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ 'कैस' की प्रेमिका, जिसके प्रेम में वह पागल हो गया था । अतः सब उसे 'मजनू', 'मजनून' (पागल) कहने लगे थे । 'लैनामजनू' की प्रेमकथा की नायिका ।

यौ०—लैला मजनू = (१) लैला और मजनू का प्रेमाख्यान । इस नाम की प्रेमकथा । (२) प्रेमी प्रेमिका ।

२. प्रिया । प्रियसी । ३. सुंदरी । श्यामा [को०] ।

लैली—सं० [अ०] दे० 'लैला' ।

लैली—सं० पुं० [अ०] एक मुगलिन तरल पदार्थ जो एक पीये के फूजा में निकाला जाता है और जो इतर की भाँति कपडों में, या टकर पहँवान के लिये निर में लगाया जाता है ।

लैलम—सं० पुं० [अ० लादम] वह प्रमाणपत्र जिसके द्वारा किसी मनुष्य को विशेष अधिकार प्रदान किया जाता है । सनद । प्रमाणपत्र । जैसे,—अफीम बेचने का लैसस, एकका या गाड़ी हाँकन का लैसस, बंदूक रखने का लैसस ।

लैस'—सं० [अ० लैस] वहाँ और हथियारों में मजा हुआ । कटिबद्ध । लैस ।

लैस प्र०—होना ।

लैस'—सं० पुं० कपड़े पर चढ़ाने का फीता ।

लैस(पुं०)—सं० पुं० एक प्रकार का बाण जिमकी नोक लंबी और बड़ी होती है । उ०—किहूँ लैस कनी धरती धुमाई । किहूँ सैल की नै हट्यो चलाई ।—मूदन (शब्द०) ।

लैस'—सं० पुं० [हिं० लैस] १ एक प्रकार का मिरका । २ कमानो ।

लैस'—सं० पुं० [अ०] घेर । सिंह ।

लौ—अव्य० [हिं० लग] दे० 'लौ' ।

लौंटी—सं० स्त्री० [सं० लैला] कान का लोलक ।

लौंदा—सं० पुं० [सं० लुगठन] किसी गोले पदार्थ का वह अण जो डेने की तरह बँधा हो । जैसे—घो का लौंदा, दही का लौंदा, मिट्टी का लौंदा ।

लौ—अव्य० [हिं० लेना] एक अव्यय जिसका प्रयोग श्रोता को गंभीर बन करके उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने एवं आश्चर्य व्यक्त करने में किया जाता है । जैसे,—(क) लौ । सानी पीठे देख तुम्हें कैसी पत्र निम्बाने की सुझी । (ख) लौ । चलो मैं जाना हूँ । (ग) लौ । देखने जाओ, यह क्या कर रहा है । (घ) लौ । क्या ने क्या हो गया ।

लौथर—सं० [अ०] नीचे का । निम्न [क्रि०] ।

लौथर कौट—सं० पुं० [अ०] नीचे की अदानत । निम्न विचारालय । मातहत पदानत ।

लौइ(पुं०)—सं० पुं० [सं० लौक, प्रा० लोप्रो या लोयो] लोग । उ०—(क) देवि विनु करतूति कहियो जानिहै लघु लोइ । कहीं जो मुप की ममर नरि कालि कारिख धोइ ।—तुलसी (शब्द०)

लौइ'—सं० स्त्री० [सं० रोचि, प्रा० लोई] १ प्रभा । सौंदर्य । दीप्ति । उ०—(क) इनमें होइ दरमात है हर मूरत की लोइ । या तैं लोइ कहत हैं इनमों मिलि मव कोइ ।—रमनिधि (शब्द०) । (ख) कर्म ऐसे रूप की नर तैं उत्पति होइ । भूतल से निकसति दही विजु छटा का लोइ ।—लदमण (शब्द०) । २ खब । शिखा । उ०—इधन के टारे बिना बढ़ति न पावक लोइ । फन न उभावत नागू जो देख्यो नहिँ होइ ।—लदमण (शब्द०) ।

लौइन(पुं०)—सं० पुं० [सं० लाइय] लावण्य । नमक । सौंदर्य । नमकीनी । उ०—लौने हूँ साहस सहम, कीने जतन हजार ।

लोइन लोइन मिधु तन, पैरि न पावत पार ।—लल्लूलाल (शब्द०) ।

लोइन'—सं० पुं० [सं० लोचन, प्रा० लोयण, लोइण] दे० 'लोचन' । उ०—इनमें हूँ दरमात है हर मूरत की लोइ । या तैं लोइन कहत हैं इन मों मिलि मव कोइ ।—सं० सप्तक, पृ० १६३ ।

लोई'—सं० स्त्री० [सं० लोप्ती = प्रा० लोत्री] गुँधे हुए आटे का उतना अण जो एक रोटी मात्र के लिये निकालकर गोली के आकार का बनाया जाता है और जिसे बेलकर रोटी बनाते हैं । उ०—भाजी भावती है मझा मोदक मही की शोभा पूरी रची है कर लोनाई विधि लोई में ।—रघुनाथ (शब्द०) ।

लोई'—सं० स्त्री० [सं० लोमीय (= लोई)] एक प्रकार का कवल जो पतले ऊन से बुना जाता है और कंबल से कुछ अधिक लंबा और चौड़ा होता है । इसकी बुनावट प्रायः दुसुत्ती की सी होती है । उ०—सीतलपाटी टाट, लोई कम्बल ऊन के । वची न एकी हाट, खेस निवारहिँ आदिहै ।—सुदन (शब्द०) ।

लोई'—सं० पुं० [सं० लोक] लोग । दे० 'लोइ' । उ०—(क) नागर नवल कुँग्रार वर सुदर मारग जात लैत मन गोई ।—सुर (शब्द०) । (ख) सूरश्याम मनहरण मनोहर गोकुल वसि मोहे सब लोई ।—सुर (शब्द०) । (ग) बल बमदेव कुशल सब लोई । अर्जुन यह सुन दीने रोई ।—सुर (शब्द०) ।

लोकजन(पुं०)—सं० पुं० [सं० लोपाजन या हिं० लुकना + अजन] वह कल्पित अजन जिसे धाँस में लगाने से मनुष्य का अदृश्य होना माना जाता है । लोपाजन । उ०—जो कहिए विधना ही रची सिख तैं घर क्यों पग की सँग लीन्हो । जो कहिए कि विरचि रची है तो दखी न जाति कितो दृग दीन्हो । कीन्हो विचार न आवै मनै नृप मभू भनै तत्र मो प्रति चीन्हो । जो चितचोर की चित्त चुगवत राधे के लक लोकजन कीन्हो ।—शम्भु (शब्द०) ।

लोकदा'—सं० पुं० [हिं० लोकना ?] [स्त्री० लोकदी] विवाह में कन्या के डोले के साथ दासी की भेजना । उ०—छेरी बाधहि व्याह होत है मगल गावे गाई । वन के रोमू धी दायज दीन्हो गोह लोकदे जाई ।—कपीर (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—जाना । - भेजना ।

लोकदी'—सं० स्त्री० [हिं० लोकना ?] वह दासी जो कन्या के पहले पहल गसुराल जाते समय उसके साथ भेजी जाती है ।

लोकल'—सं० पुं० [सं०] १ स्थानविशेष जिमका बोव प्राणी को हो । विशेष—उपनिषदों में दो लोक माने गए हैं—इहलोक और परलोक । निरक्त में तीन लोकों का उल्लेख मिलता है—पृथ्वी, अतरेच और सुलाक । इनका दूसरा नाम 'भू', 'भुव' और 'स्व' है । ये महाव्याहृत कहलाते हैं । इन तीन महाव्याहृतियों की भाँति चार और 'मह', 'जन', 'तप' और 'सत्यम्' ण्ड हैं, जो तीनों महाव्याहृतियों के साथ मिलकर सप्तव्याहृत कहलाते हैं । इन सातों महाव्याहृतियों के नाम में पारार्णिक काल में सात लोकों की

कल्पना हुई, त्रिनके नाम इस प्रकार हैं—भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक और सत्यलोक। फिर पीछे इनके साथ सात पाताल—जिनके नाम अतल, नितल, वितल, गभस्तिमान्, तल, सुतल और पाताल हैं—और सब मिलाकर चौदह लोक किए गए। पुराणों में पातालों के नाम में मतभेद है। पद्मपुराण में इनके नाम अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रमातल, और पाताल बतलाए गए हैं। अग्निपुराण में अतल, सुतल, वितल, गभस्तिमान्, महातल, रसातल और पाताल, तथा विष्णुपुराण में अतल, वितल, नितल, गभस्तिमान्, महातल, सुतल और पाताल इनके नाम लिखे गए हैं। इस प्रकार चौदह लोक या भुवन माने गए हैं। मुश्रुत में लोक दो प्रकार का माना गया है—स्थावर और जगम।

२ ससार। जगत्। ३ स्थान। निवासस्थान। जंमे,—ब्रह्म लोक, विष्णु लोक इत्यादि। ४ प्रदेश। विषय। दिशा। जंसे,—लोकपाल, लोकपति इत्यादि। ५ लोग। जन। उ०—मायव या लगी है जग जीजतु। जाते हरि सो प्रेम परातन बहुरि नयो करि कीजतु। कहीं रवि राहु भयो रिपुमति रचि विधि मजोग बनायो। उहि उपकारि आजु यह औसर हरि दर्शन सञ्चु पायो। कहीं बसहि यदुनाथ सिधु तट कहीं हम गोकुल वासी। वह वियोग यह मिलनि कहीं अरु काल चाल औरासी। सूरदाम मुनि चरण चरचि करि मुर लोकनि रुचि मानी। तव अरु अरु यह दुसह प्रमानी निमिपो पीरि न जानी। मुर (शब्द०)। ६ समाज। मानव जाति। उ०—(क) सब से परम मनोहर गोपी। नंद नदन के नेह मेह जिन लोक लीक लोपी।—मूर (शब्द०)। (ख) सो जानव सतमग प्रभाऊ। लोकरु वेद न आन उपाऊ।—तुलसी (शब्द०)। ७ प्राणी। उ०—उगेहु अरुन अरुलोकहु ताता। पकज लोक कोक सुखदाता।—तुलसी (शब्द०)। ८ यज्ञ। कीर्ति। उ०—लोक में लोक बडो अपलोक मुकेशव दास जो होउ सो होऊ।—केशव (शब्द०)। ९ दृश्य या देखने योग्य वस्तु (को०)। १० प्रकाश (को०)। ११ ७ या १४ की संख्या। १२ अपना या निज का स्वरूप (को०)। १३ फज (को०)। १४ भोग्य वस्तु (को०)। १५ चक्षुरिन्द्रिय। देखने की इन्द्रिय। नेत्र (को०)।

लोक^३—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक प्रकार का पच्ची जो वत्स से बडा और खाकी रंग का होता है।

लोककटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोककटक] वह जो समाज का कटक, विरोधी या हानिकर हो। लोगों को कष्ट या हानि पहुंचाने-वाला। दुष्ट प्राणी।

लोककथा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] परंपरा से जनसामान्य में प्रचलित कथाएँ [को०]।

लोककर्ता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोककर्तृ] १ विश्व का निर्माता। ब्रह्मा। २ विष्णु। ३ शिव [को०]।

लोककल्प^१—वि० [सं०] १ विश्व के अनुरूप। समार से मिलता जुगता। २ विश्व के द्वारा मानित [को०]।

लोककल्प^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विश्व को अवधि। विश्व की आयु [को०]।
लोककान्त—वि० [सं० लोककान्त] सर्वजनप्रिय। सबका प्रिय जिसे सब चाहते हो [को०]।

लोककान्त—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोककान्ता] श्रीपद के काम आनेवाला ऋद्धि नामक एक पौधा [को०]।

लोककार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव [को०]।

लोककारण कारण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शिव का एक नाम [को०]।

लोकचित्—वि० [सं० लोकचित्] स्वर्ग लोक का निवासी।

लोकगति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मनुष्यों के क्रियाकलाप [को०]।

लोकगाथा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] परंपरा से जनसमाज में चले आते हुए गीत। लोकगीत जो जनभाषा (बोलचाल की भाषा) में निबद्ध हो [को०]।

लोकचञ्चु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य।

लोकचारित्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ससार की चलन। लोक का चरित्र वा आचार आदि। लोकाचार [को०]।

लोकजननी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लक्ष्मी। लोकमाता।

लोकजित्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बुद्ध। २ एक सत का नाम [को०]। वह जिसने ससार को जीत लिया हो।

लोकज्येष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बुद्ध।

लोहटी(पु)।—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं०] लोमड़ी।

लोकतत्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोक + तत्र] १. ससार का मार्ग या चलन। २ जनता का, जनता के लिये, जनता के द्वारा चलाया जाने-वाला शासन।

लोकनुपार—सञ्ज्ञा पुं० सं० कपूर।

लोकत्रय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तीनों लोकों की समष्टि। त्रिलोक [को०]।

लोकदम्भक—वि० [सं० लोकदम्भक] ससार को या सबको धोखा देनेवाला [को०]।

लोकद्वार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] स्वर्ग का द्वार [को०]।

लोकधर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सासारिक विषय। २ बौद्ध मतानुसार ससार की अवस्था [को०]।

लोकधाता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकधातृ] शिव [को०]।

लोकधातृ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जवुद्धीप का एक नाम [को०]।

लोकधारिणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] पृथ्वी।

लोकधुनि(पु)।—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोकधुनि] जनरव। अफवाह। उ०—चरचा चरनि सो चरची जानि मन रघुराइ। इत मुख सुनि लोकधुनि घर घरनि बूमो जाइ।—तुलसी (शब्द०)।

लोकन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अवलोकन। देखना [को०]।

लोकना—क्रि० सं० [सं० लोपन] १ ऊपर से गिरती हुई किसी वस्तु

को भूमि पर गिरने से पहले हो हाथों से पकड़ लेना । २ बीच में से ही उड़ा लेना । उ०—जाते जेर सब नोक विलोकि त्रिलोचन मो विप लोक लियो है ।—जुलसी (शब्द०) ।

क्रि० प्र०—लेना ।

लोकनाथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ब्रह्मा । २ लोकपाल । ३ बुद्ध ।

लोकनीति—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] दे० 'लोकदी' ।

लोकनीय—वि० [सं०] देखने योग्य । अवलोकनीय [को०] ।

लोकनेता—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकनेतृ] शिव [को०] ।

लोकप, लोकपति—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ ब्रह्मा । २ दिक्पाल । नरेश । लोकपाल । ३ राजा ।

लोकपक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] मानव का आदरभाव । सहज समान [को०] ।

लोकपथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सर्वसमत मार्ग । समाज द्वारा मान्य मामान्य चलन [को०] ।

लोकपद्धति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लोकपथ' [को०] ।

लोकपरोक्ष—वि० [सं०] समार से परे वा छिपा हुआ । गुप्त [को०] ।

लोकपाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ दिक्पाल ।

विशेष—पुराणानुसार आठ दिशाओं के अलग अलग लोकपाल हैं । यथा—इंद्र पूर्व दिशा का, आग्नि दक्षिणपूर्व का, यम दक्षिण का, सूर्य दक्षिणपश्चिम का, कुबेर उत्तर का और सोम उत्तर-पूर्व का । किसी किसी ग्रह में सूर्य और सोम के स्थान पर निर्द्धति और ईशानी या पृथ्वी के नाम मिलते हैं ।

२ अवलोकितेश्वर बोधित्व का एक नाम । ३ नरेश । राजा । नृपति । उ०—दिगपालन की भुवपालन की लोकपालन की किन मातु गई ज्वं ।—केशव (शब्द००) ।

लोकपितामह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ब्रह्मा ।

लोकप्रकाशन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य [को०] ।

लोकप्रत्यय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो ससार में सर्वत्र मिलता हो ।

लोकप्रदीप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बुद्ध ।

लोकप्रवाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जिसे ससार के सभी लोग कहते और ममकते हो । साधारण बात ।

लोकप्रसिद्ध—वि० [सं०] सब पर प्रकट । लोगो में ख्यात । सर्व-विदित । उजागर [को०] ।

लोकबंधु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकबन्धु] १ शिव । २ सूर्य ।

लोकबंधव—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकबन्धव] दे० 'लोकबन्धु' [को०] ।

लोकबाह्य—वि० [सं०] १ समाज से बहिष्कृत । जातिच्युत । अजाती । २. ससार से विपरीत मत रखनेवाला । सनकी [को०] ।

लोकभर्ता—वि० [सं० लोकभर्तृ] जगत् का पालक । ससार का पालन पोषण करनेवाला [को०] ।

लोकभावन—वि० [सं०] ससार का कल्याण करनेवाला [को०] ।

लोकमर्यादा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] प्रचलित या समाज द्वारा स्वीकृत रीति रिवाज या प्रथा [को०] ।

लोकमाता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोकमातृ] १. गौरी । पार्वती । २ रमा । लक्ष्मी [को०] ।

लोकमार्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सर्वस्वीकृत प्रथा [को०] ।

लोकयज्ञ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जनता के समर्थन की इच्छा । लोकपणा [को०] ।

लोकयात्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ व्यवहार । २ व्यापार । ३. क्रम । सासारिक अस्तित्व [को०] । ४. जीवनयापन का साधन । योगक्षेम [को०] ।

लोकरंजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकरञ्जन] लोकप्रियता । सबको प्रमत्न रखना [को०] ।

लोकरक्षक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकरक्षक] राजा । शासक [को०] ।

लोकरव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अफवाह । प्रवाद ।

लोकराी—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] चीथडा ।

लोकरावण—वि० [सं०] जनता या प्रजा का उत्पीडक [को०] ।

लोकल—वि० [अ०] १ प्रातिक्रि । प्रादेशिक । २ किसी एक ही स्थान जिले, नगर या प्रदेश आदि से सबंध रखनेवाला । स्थानीय । प्रादेशिक ।

थौं—लोकल बोर्ड । लोकल गवर्नमेंट ।

लोकल बोर्ड—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] वह स्थानीय समिति जिसके सम्पत्ती का चुनाव किसी स्थान के कर देनेवाले करते हो और जिमके अधिकार में उस स्थान की सफाई आदि की व्यवस्था हो ।

लोकलीक^(५)—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लोक + लीक] लोकमर्यादा । उ०—सरस असम सर सरसिज लोचनि बिलोकि लोकलीक लाज लोपिवे को आगरी ।—केशव (शब्द०) ।

लोकलेख—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ सार्वजनिक अभिलेख या दस्तावेज । २ सामान्य पत्र [को०] ।

लोकलोचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सूर्य [को०] ।

लोकवचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जनश्रुति । अफवाह [को०] ।

लोकचर्तन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विश्व के पोषण का आधार या साधन [को०] ।

लोकवाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ जनश्रुति । अफवाह । २ सर्वसाधारण की चर्चा का विषय । मवादिदित विवरण [को०] ।

लोकवार्ता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लोकवाद' [को०] ।

लोकविद्विष्ट—वि० [सं०] सबका अप्रिय । जिससे सारा सगार घृणा करता हो [को०] ।

लोकविधि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ समाजसमत म र्ग । प्रशस्त पथ । २ विश्व का लष्टा । ब्रह्मा [को०] ।

लोकविनायक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोगो का भविष्यति देवतावर्ग [को०] ।

लोकविभ्रम—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोकव्यवहार' [को०] ।

लोकविरुद्ध—वि० [सं०] जो लोकाचार के विपरीत हो [को०] ।

लोकविश्रुत—वि० [सं०] ससार भर में प्रसिद्ध । जगद्विख्यात ।

लोकविसर्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. प्रलंघ्य । विश्व की समाप्ति । २. विश्व का उद्भव । ससार की उत्पत्ति [को०] ।

लोकवृत्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोकव्यापार । लोक में प्रचलित प्रथा [को०] ।

लोकवृत्तांत—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकवृत्तान्त] १ ससार का तीर तरीका । लोकाचार । प्रचलन । २ घटनाक्रम [को०] ।

लोकव्यवहार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोकवृत्तांत [को०] ।

लोकव्रत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ससार का सामान्य व्यापार [को०] ।

लोकश्रुति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जनश्रुति । अफवाह । २ लोक-प्रसिद्धि [को०] ।

लोकसकरता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोकसङ्करता] समाज में सकरता या मिश्रण । ससार में घालमेल या अस्तव्यस्तता [को०] ।

लोकसमग्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकसङ्ग्रह] १ ससार के लोगो को प्रसन्न करना । २ ससार का कल्याण या सबको भलाई चाहना ।

लोकसमग्री—वि० [सं० लोकसङ्ग्रहिन्] लोककल्याण की कामना करनेवाला ।

लोकसंपन्न - वि० [सं० लोकसम्पन्न] लौकिक ज्ञान से युक्त [को०] ।

लोकसम्बाध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकसम्बाध] मनुष्यो का आवागमन । भीडभाड [को०] ।

लोकसंस्तुति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ भाग्य । विधियोग । २ ससार-मार्ग [को०] ।

लोकसाक्षिक—वि० [सं०] १ ससार की साक्षी माननेवाला । ससार के समक्ष । अगोपनीय । २. साक्षी द्वारा प्रमाणित [को०] ।

लोकसाक्षी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकसाक्षिन्] १ ब्राह्मण । २. अग्नि [को०] ।

लोकसाधक—वि० [सं०] लोको का बनानेवाला [को०] ।

लोकसाधारण—वि० [सं०] सर्वसामान्य (विषय) [को०] ।

लोकसारग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकसारङ्ग] विष्णु का एक नाम [को०] ।

लोकसिद्ध—वि० [सं०] १ लोकप्रचलित । सामान्य । प्रथानुसारी । २ सामान्यतः स्वीकृत [को०] ।

लोकसीमातिवर्ती—वि० [सं० लोकसीमातिवर्तिन्] असाधारण । असामान्य । लोकोत्तर [को०] ।

लोकसुन्दर—वि० [सं० लोकसुन्दर] सर्वानुमोदित । लोकप्रशंसित ।

लोकसुन्दर—सञ्ज्ञा पुं० बुद्ध का एक नाम [को०] ।

लोकसेवक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोक + सेवक] समाज या लोक की सेवा करनेवाला । जनता का सेवक ।

लोकस्थल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सामान्य घटना [को०] ।

लोकस्थिति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ अह्लाड का नियमन या अवस्थिति । २ लोकसमत विधिविधान [को०] ।

लोकहँदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लोक + हल्दी] एक प्रकार की हल्दी ।

लोकहार—वि० [सं० लोक + हरण] लोक को हरण करनेवाला । ससार को नष्ट करनेवाला । उ०—विद्योग सीय को न, काल लोकहार जानिए ।—केशव (शब्द०) ।

लोकह्रास्य—वि० [सं०] जगहँसाई का पात्र [को०] ।

लोकहित^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सबकी भलाई । सार्वजनिक कुशल [को०] ।

लोकहित^२—वि० [सं०] सर्वजनहितकारी । सर्वोपकारक [को०] ।

लोकांतर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकान्तर] वह लोक जहाँ मरने पर जीव जाता है । अन्य लोक ।

यौ०—लोकांतरगमन = अन्य लोक में गमन । स्वर्गवास ।

लोकांतरिक—वि० [सं० लोकान्तरिक] जो लोको के मध्य स्थित हो ।

लोकांतरित—वि० [सं० लोकांतरित] १ जो इस लोक से दूसरे लोक में चला गया हो । २ मरा हुआ । मृत । स्वर्गीय ।

लोकाकाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] विश्व जिसमें सब प्रकार के जीव और तत्व रहते हैं । (जैन) ।

लोकाक्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आकाशदिक् । दिशा । शन्य [को०] ।

लोकाचार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ससार में बरता जानेवाला व्यवहार । लोकव्यवहार ।

लोकाट—सञ्ज्ञा पुं० [चीनी लु + क्यू] एक पौधा जिसका फल खाया जाता है । लकुच । लुकाट ।

विशेष—इस पौधे की पत्तियाँ लंबी और नुकीली, तेंदू की पत्तियों के आकार की, पर उससे कुछ बड़ी होती है । इसका पेड़ वीम पचीस हाथ से अधिक ऊँचा नहीं होता । इसके पेड़ में फागुन चैत के महीने में मजरियाँ लगती हैं और बड़े बेर के बराबर फल लगते हैं, जो पकने पर पीले होते हैं और खाने में प्रायः मीठे, गुदार और स्वादिष्ट होते हैं । सहारनपुर में लोकाट बहुत अर्द्धा और मीठा उत्पन्न होता है । यह फल चीन और जापान देश का है और वही से भारतवर्ष में आया है ।

लोकातिग—वि० [सं०] असाधारण । लोकोत्तर [को०] ।

लोकातिशय—वि० [सं०] लोकोत्कृष्ट । असामान्य [को०] ।

लोकात्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोकात्मन्] विश्व का आत्मा [को०] ।

लोकादि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ विश्व का आरंभ । २ विश्व का लप्टा । विधाता [को०] ।

लोकाधिक—वि० [सं०] दे० 'लोकातिग' [को०] ।

लोकाधिप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लोकपाल । २ बुद्ध । ३ राजा [को०] ।

लोकानार्थी—क्रि० सं० [हिं० लोकना का प्रेर० रूप] अवर में फँकना । उछालना ।

लोकानुग्रह—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोक या जगत् का कल्याण । लोक-सपन्नता [को०] ।

लोकानुभावी—वि० [सं० लोकानुभाविन्] १ विश्व को पराभूत करनेवाला । विश्वव्यापी । जैसे, प्रकाश [को०] ।

लोकानुराग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मानवप्रेम । विश्वप्रेम । उदारता । दानशीलता [को०] ।

लोकानुवृत्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोकसेवा की भावना । लोकसेवा-भाव [को०] ।

लोकापवाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बदनामी । अपयश [को०] ।

लोकभिलजित—वि० [सं०] सर्वप्रिय [को०] ।

लोकाभ्युदय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोक का अभ्युदय । सबका कल्याण ।
नवका उदय [को०] ।

लोकायत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. वह मनुष्य जो इस लोक के अतिरिक्त
दूसरे लोक का न मानता हो । २. चावकि दर्शन, जिसमें
परलाक या पोल्लाद का खडन है । ३. किसी किमी के मत
ने दुर्दिल नामक छद्म का एक नाम ।

लोकायतिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नास्तिक । भौतिकवादी [को०] ।

लोकायत—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नारायण का एक नाम [को०] ।

लोकलोक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पूराणानुसार एक पर्वत का नाम ।
चक्रवाल ।

विश्व—कहते हैं, यह सातों समुद्रों और द्वीपों का चारों ओर
स अवेद्यत किए हुए है, जिसके बाहर सूर्य या चंद्र का प्रकाश
नहीं पहुँचता । बौद्ध ग्रंथों में इसे चक्रवाल कहा है ।

लोकित—वि० [सं०] अवलोकित । देखा हुआ [को०] ।

लोक—वि० [सं०] लोकित] १. लोक में रहनेवाला । २. लोक का
अभिप्राय ।

लोकेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. विश्व का स्वामी । ईश्वर । २. राजा ।
३. ब्राह्मण । ४. पारा [को०] ।

लोकेश्वर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. बुद्ध । २. भुवन और जनों का प्रभु ।
३. दे० 'लोकपाल' [को०] ।

लोकेश्वरात्मजा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बुद्ध की एक शक्ति का
नाम [को०] ।

लोकैपणा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. सासारिक अभ्युदय की कामना ।
२. मर्ग के सुख की कामना ।

लोकोक्ति—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. कहावत । मसल । २. काव्य में
वह अलंकार जिसमें किसी लोकोक्ति का प्रयोग करके कुछ
रोचकता या चमत्कार लाया जाय ।

लोकोत्तर—वि० [सं०] जो इस लोक में होनेवाले पदार्थों आदि से
श्रेष्ठ हो । बहुत ही अद्भुत और विलक्षण । अलौकिक । जैसे,—
(क) वहाँ एक योगी ने कई लोकोत्तर चमत्कार दिखलाए
ये । (ख) यह कौन सी लोकोत्तर वस्तु है जिसके लिये तुम
इतना अभिमान करते हो ।

लोकोपकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] ससार के उपकार का काम ।

लोकोपकारक—वि० [सं०] लोक का उपकार करनेवाला ।

लोखडी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लोमश] दे० 'लोमडी' ।

लोखर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोहा + खर] १. नाई के औजार ।
जैसे,—धुरा, कची, नहरनी आदि । २. लोहारों या बढइया
आदि के लाह के औजार । ३. इन औजारों को रखने का बक्स
या पटी ।

लोखरिया, लोखरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोखडी] दे० 'लोखडी' ।

लोग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोक] [स्त्री० लुगाई, लोगाई] जन । मनुष्य ।

आदमी । उ०—(क) देख रतन हीरामन गेवा । राजा जिव
लोगन हठ खोवा ।—जायसी (शब्द०) । (ख) अमृत वस्तु जानै
नहीं, मगन भए कित लोग । कहहि कवीर कामो नहीं जीवहि
मरन न जोग ।—कवीर (शब्द०) । (ग) जिन वीथिन विहरहि
सब भाई । थकित हाँहि सब लोग लुगाई ।—तुलसी (शब्द०) ।

विशेष—हिंदी में इस शब्द का प्रयोग सदा बहु चन में और
मनुष्यों के समूह के लिये ही होता है । जैसे,—लोग चले आ
रहे हैं ।

यौ०—लोगवाग = जनमवाग । सर्वसाधारण जन ।

लोगचिरकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [दश०] एक प्रकार का फूल ।

लोगाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोग + आई (प्रत्य०)] स्त्री । श्रील ।
उ०—(क) वृद वृद मिल चली लोगाई । सहज सिंगार किए
उठि घाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) पुने ज्वर दाँ दीनी पु
लाई । जरन लगे पुर लोग लुगाई ।—सूर (शब्द०) ।

विशेष—इस शब्द का शुद्ध रूप प्राय 'लुगाई' ही माना जाता है ।

लोच—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लचक] १. लचलचाहट । लचक । २.
कोमलता । उ०—चली चले छुटि जायगो नठ रावरे संकोच ।
खरे चढाए देत अब, आण लोचन लोच ।—विहारी (शब्द०) ।
३. अच्छा ढग ।

लोच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोच] अभिलाषा । उ०—मोको पर्यो
सोच यज्ञ पूरण को लोच, हिये लिए वाको नाम जिन गाम
तजि जाइए ।—प्रियादास (शब्द०) ।

लोच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुञ्चन] जँन साधुगों का अपने सिर के बालों
को उखाडना । लुचन ।

लोच—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आँसू [को०] ।

यौ०—लोचमर्कट = दे० 'लोचमस्तक' ।

लोचक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मूर्खजन । २. आँख की पुगली । ३.
काजल । ४. कान का एक गहना । ५. काला या नीला कपडा ।
६. प्रत्यचा । घनुप की डोरी । ७. माये पर पहनने का एक
गहना । बंदी । ८. मास का लोषडा । ९. माँप की केंचुल ।
१०. भुर्रों पडी खाल । ११. तनी हुई भौंह । १२. केने का
वृद्ध [को०] ।

लोचक—वि० १. मूर्ख । अज्ञ । बुद्धिहीन । २. दूध का आहार करने-
वाला । पयहारी ।

लोचन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. आँख । नेत्र । नयन ।

मुहा०—लोचन भर आना = आँखों में आँसू डबडबा आना ।
आँखें भर आना । उ०—यह सुनिके हलवर तहँ घाए । देखि
श्याम ऊखल सो बांधे, तबही दोउ लोचन भरि आए ।—सूर
(शब्द०) ।

२. देखना अवलोकने या देखने की क्रिया [को०] ।

लोचनगोचर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दृष्टि में आनेवाला दायरा ।
दृष्टिपथ ।

लोचनगोचर—वि० आँखों द्वारा देखने योग्य । उ०—मम लोचनगोचर

सोइ आवा । बहुरि कि अस प्रभु बनिहि बनावा ।—मानस,
पृ० १० ।

लोचनपथ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोचनगोचर' [को०] ।

लोचनपरुष—त्रि० [म०] कठोर या शुष्क दृष्टिवाला । क्रोधपूर्ण नेत्रो-
वाला [को०] ।

लोचनमग^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोचन + सं० मार्ग, प्रा० मग]
नेत्रमार्ग । उ०—लोचनमग रामहि उर आनी, दीन्हे पलक
कपाट सयानी ।—मानस, १२३२ ।

लोचनमार्ग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोचनपथ' [को०] ।

लोचनमालक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] आधी रात के पहले का सपना ।
पूर्व निशा का स्वप्न [को०] ।

लोचनहिता—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] तुत्याजन । नीला थोथा । शिखि-
प्रीव [को०] ।

लोचनाचल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोचनाञ्चल] अपाग । कटाक्ष । आँखों
की कोर [को०] ।

लोचना^१—क्रि० सं० [हि० लोचन] १ प्रकाशित करना । २ रुचि
उत्पन्न करना । उ०—निसि वासर लोचन रहत अपनो मन
अभिराम । या तैं पायो रसिक निधि इन नैं लोचन नाम ।—
रसनधि (शब्द०) । ३. अभिलाषा करना । उ०—स्वर्ग मे
देवगण भी लोचते हैं और इस बात के लिये तरसते हैं कि
भारत की कर्मभूमि मे किसी तरह एक बार हमारा जन्म
होता ।—हिंदी प्रदीप (शब्द०) ।

लोचना^२—क्रि० अ० शोभित होना । उ०—लोचै परी सियरी पर्यक
पै बीती घरीन खरी खरी सोचै ।—पद्माकर (शब्द०) ।

लोचना^३—क्रि० अ० १ अभिलाषा करना । कामना करना । उ०—
(क) कहति है सकोचति है सखी को बोलाइवे को लोचति है
भद्र बँठी सोचति है मन तैं ।—रघुनाथ (शब्द०) । (ख)
कुंभरि सयानि विलोकि मानु पितु सो कहि । गिरिजा जोग
जुरहि बर अनुदिन लोचहि ।—तुलसी (शब्द०) । २
ललचना । तरसना । उ०—अब तिनके बधन मोचहिगे । दास
बिना पुनै हम लोचहिगे ।—सूर (शब्द०) ।

लोचना^४—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लुञ्चन] नाई । हज्जाम (वत्र०) ।

लोचान^५—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] बुद्ध की एक शक्ति का नाम । लोके-
श्वरात्मजा [को०] ।

लोचना^६—सञ्ज्ञा पुं० [सं० रोचन (= रौली, हरिद्रा)] १ कन्या के सतान
होने पर कन्या के पितृगृह से भेजा जानेवाला मांगलिक
उपहार । २ वहू के सतानवती होने पर उसके पिता तथा
अन्य सगे सवाधया के यहाँ भेजा जानवाला शुभ सदेश ।

लोचनापात—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दृष्टिनिक्षेप [को०] ।

लोचनामय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नेत्ररोग [को०] ।

लोचनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक औषध । महाश्रावणिका [को०] ।

लोचमस्तक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मयूरशिखा । रुद्रजटा नाम का क्षुप [को०] ।

लोचारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक तरक का नाम ।

लोचिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दही, घी तथा गरम जल से गुंवे हुए
आटे की घां मे छानी गई महीन पूरी [को०] ।

लोचून—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहचूर्ण] । १ लोहे का चूरा । २ लोहे
की कीट का चूर्ण ।

लोजग—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोहा + जग ?] एक प्रकार की नाव
जिसके दोनों ओर के सिक्के लगे होते हैं ।

लोट^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोटना] लोटने का भाववाचक रूप । लोटने
की क्रिया या भाव । लुढ़कना ।

क्रि० प्र०—लगाना ।

मुहा०—लोट मारना = (१) लोटना । सोना । (२) किसी के प्रेम
मे वेगुष होना । लोट होना या हो जाना = (१) आसक्त होना ।
रीकना । (२) व्याकुल होना ।

लोट^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोटना] १ उतार । घाट । उ०—चारो
तरफ पुस्ता लोट वने ।—लल्लू (शब्द०) । २ ७ त्रिवली ।
उ०—(क) नार नवाए तकि हुरी करी काँकरी चाट । चोँके
कंपी भ्रमरों चकी चंगी हँपी गहि लोट ।—शृगार०
(शब्द०) । (ख) बढ़ति निकस कुच कार रुच कढत गौर
भुन मूल । मन लुटिगो लाटन चढन चूँटति ऊँचे फूल ।—
विहरी (शब्द०) ।

लोट^३—सञ्ज्ञा पुं० [अ० नोट] कागज की मुद्रा । नोट ।

लोटन^४—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लुढ़कना । लुठन [को०] ।

लाटन^५—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोटना] १. एक प्रकार का हल जिसकी
जोताई बहुत गहरी नहीं हाती । २ एक प्रकार का कबूतर
जो चोच पकडकर भूमि मे लुढ़का देने से लोटने लगता है,
और जबतक उठाया न जाय, लोटता रहता है । ३ राह मे
की पढी हुई छाटी बकडिया जो वायु चलने से इधर उधर
लुढ़कती रहती है । उ०—काँट कुराय लपेटन लोटान ठावहि
ठाव बभाऊ रे । जस जस चलिय दूरि तस तप निज वासना
भँट लगाऊ रे ।—तुलसी (शब्द०) ।

लोटनसज्जी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोटन + सज्जी] एक प्रकार की
सज्जी जो सफेद और गुलाबी रंग की होती है । यह प्रायः
मुरब्बे आदि के गलाने मे काम आती है ।

लोटना^६—क्रि० अ० [सं० लुण्ठन] १ भूमि पर या किसी ऐस ही
आधार के सहारे, उस सश करते हुए, ऊार नाचे हाते हुए
किसी का एक स्थान से दूसरे स्थान को आर जाना या गमन
करना । सीधे और उलटे लेटते हुए किया और को जाना ।
उ०—(क) परी कया भुद लोट कह रे जीव ।वतु भौव ।
को उठाय बँठारं वाज ।मयारे जीव ।—जायसी (शब्द०) ।
(ख) काम नारि अतै लाटत ।फरं । कत कत काह ।छात भुज
भरं ।—लल्लू (शब्द०) । २ लुढ़कना । उ०—जानहु लाटाँह
चढ़े भुअगा । बेवी बार मलय ।गार अगा ।—जायसी (शब्द०)
३. कष्ट से करवट बदलना । तडपना ।

क्रि० प्र०—जाना ।

मुहा०—लोट जाना = (१) वेगुष होना । वेहोश हो जाना ।

(२) मर जाना। जैसे,—एक ही बार में पांच कपूतर लोट गए।

४ विश्राम करना। लोटना।

मुहा०—लोट पोट करना = लोटना। विश्राम करना।

५ मुग्ध होना। चकित होना। उ०—मुनि गए नारद लोटि तामे देवि प्रभु बोलत भये।—रघुनाथ (शब्द०)।

लोटना^१—स्त्री० स्त्री० [स०] दाक्षिण्य। सौजन्य। शिष्टता। शालीनता [को०]।

लोटपटा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोटना + पाटा] १ विवाह के समय पीढा या स्थान बदलने की रीति। इसमें वर के स्थान पर वधू और वधू के स्थान पर वर बैठाय जाता है। फेरपटा या पटाफेर।

विशेष—फेरपटा की रस्म हो जाने के बाद द्विरागमन या गौने की रस्म आवश्यक नहीं मानी जाती और कन्या बरेक टोक ससुराल आने जाने लगती है।

२ बाजो का उलट फेर। दाँव का इधर से उधर हो जाना। उलटफेर। उ०—कौज कहा विधि को विधि को दियो दाँव लोटटा करिखे को।—रघुनाथ (शब्द०)।

लोटपोट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोटना + पोटना (= फँस जाना)] १ लेटने या शयन करने की क्रिया। २ हँसी आदि के कारण लुढ़कना। ३ मुग्ध होना।

क्रि० प्र०—करना।—होना।

लोटा^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोटना] [स्त्री० अल्पा० लुटिया] धातु का एक पात्र जो प्रायः गोल होता है और पानी रखने के काम में आता है। यह कलसे से छोटा होता है। कभी कभी इसमें टाटी भी लगाई जाती है, और ऐसे लोटे को टोटीदार लोटा कहते हैं।

मुहा०—लोटा या लुटिया डुबाना = (१) लक लगाना। (२) सब काम चौपट करना। सर्वनाश करना।

लोटा^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] अमलोनी का शाक। [को०]।

लोटिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] अमलोनी का शाक [को०]।

लोटिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोटा + इया (प्रत्य०)] छोटा गोल जलपात्र जो लाटे के आकार का हो। छोटा लोटा।

लोटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोटा + ई (प्रत्य०)] १ छोटा लोटा। २ वह वर्तन जिससे तमोली पान सींचते हैं।

लोट—सञ्ज्ञा पुं० [स०] जमीन पर लोटना या लुढ़कना [को०]।

यौ०—लोटभू = स्थान जहाँ घोड़े लोटते हैं।

लोठन—सञ्ज्ञा पुं० [स०] शिर हिलाना [को०]।

लोठारी नगर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोठारी + लगर] एक प्रकार का लगर जो जहाजी या बड़े लंगर से छोटा और केज लगर से बड़ा होता है। (लश०)।

लोडन—सञ्ज्ञा पुं० [स०] विलोडन। हिलाना डुलाना। क्षुभित करना। मथन [को०]।

लोड़ना^०—क्रि० स० [प० लोड (= आवश्यकता)] आवश्यकता

होना। दरकार होना। उ०—(क) तिमो घड़ी नव्याय मे कर जोरि वखाना। जेहा जिमनू लोटिया तेहा फुरमाना। ('फलपाना' शुद्ध पाठ)।—मूदन (शब्द०)। (ख) अमी हाल एहा हुआ राख्यो निजु साया। जेहा जिसनू लोटिए तेहा फल पावा।—मूदन (शब्द०)।

लोढ़कना^१—क्रि० अ० [स० लुठन] १ 'लुढ़कना'।

लोड़ना^१—क्रि० स० [स० लुण्ठन] १ छुटना। लोटना। जैसे,—फूल लोड़ना। उ०—कुमुम लोडन हम जाइव हो रामा।—गीत (शब्द०)। २ थोटना। जैसे,—कपास लोड़ना।

लोड़ना^२—क्रि० अ० [स० लुण्ठन] जमीन पर लोटना या धमिटना [को०]।

लोड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [स० लोष्ठ] [स्त्री० अल्पा० लोटिया] १ पत्थर का वह गोल लंबोतरा टुकड़ा जिसे मिल पर किसी चीज को रखकर पीसते हैं। बट्टा। उ०—फोरहि मिल लोडा सदन लागे अढुकि पहार। कायर फूर कपूत कलि घर घर सहर डहाय।—तुलसी (शब्द०)।

मुहा०—लोड़ा डालना = बराबर करना। उ०—धूमि चहु दिशि भूमि रहे धन वूँदन ते छिति डारत लाडे।—रघुनाथ (शब्द०)। लोड़ाढाल = चौपट। सत्यानाश। उ०—विष्णु कलोहल ख कहि कोप कियो मिकराल। ऋटकि पटकि भट लटकि कांस कोन्हो लोड़ाढाल।—(शब्द०)।

२ बुदेलख के बराबर नामक हल का एक अश।

विशेष—यह हल मोटी लकड़ी का होता है। इसमें दनुया या लोहे की कीलें लगी होती हैं, जिनमें पाम लगाया जाता है।

लोड़िया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोड़ा + इया (प्रत्य०)] छोटा लोड़ा। बट्टा। जैसे,—सिल लोड़िया ले आओ।

लोण^१—सञ्ज्ञा पुं० [स०] लोनी साग।

लोण^२—सञ्ज्ञा पुं० [स०] दे० 'लोन'।

लोणक—सञ्ज्ञा पुं० [स०] नमक। लवण [को०]।

लोणा, लोणाम्ला—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] लोनी। क्षुद्राम्लिका [को०]।

लोणार—सञ्ज्ञा पुं० [स०] एक प्रकार का क्षारविशेष। नमक [को०]।

लोणका—सञ्ज्ञा पुं० [स०] अमलोनी साग। लोणाम्ला।

लोणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [स०] क्षुद्राम्लिका। अमलोनी [को०]।

लोट—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ आसू। लोर। २ चित्त। निशा। ३. छूट का माल वा धन। ४ नमक [को०]।

लोत्र—सञ्ज्ञा पुं० [स०] १ नेत्रजल। आसू। लोर। २ चोरी का धन। छूट का माल [को०]।

लोथ, लोथि—सञ्ज्ञा स्त्री० [स० लोष्ठ या लोठ] किसी प्राणी का मृत शरीर। लाश। शव। उ०—(क) लोथिन्ह तें लहू के प्रवाह चले जहाँ तहाँ, मानहु गिरिन गेफ भरना भरत है।—तुलसी (शब्द०)। (ख) गृध शृगाल कूकर आपस में लड लड लोथे खँच खँच लाते।—लल्लू (शब्द०)। (ग) तब कस की लाय का घसीट जमुना तीर आए।—लल्लू (शब्द०)। (घ) भूपन बखाने

भूरि भूतन में टांगे चद्रायतन लोथै लटकत हैं।—भूपण (शब्द०)।

मुहा०—नोय गिरना = मारा जाना। लोथ डालना = मार गिराना। प्राणान करना। हत्या करना। लोथपोथ होना = यकने में चूर होना। अत्यंत शिथिल होना। लथपथ होना।

लोथडा—सज्ञा पुं० [हि० लोथ + डा] मास का बडा खड जिसमे हड्डी न हो। मासपिंड।

लोथरा^७—सज्ञा पुं० [हि० लोथडा] दे० 'लोथडा'।

लोथारी—सज्ञा स्त्री० [म० लुण्ठन] १ कम पानी में से नाव को खींचते या धीरे धीरे खेते हुए किनारे लगाना। २ लोथारी लगर डालकर पानी की तह का पता लेते हुए मार्ग में किनारे की ओर नाव बढ़ाना। (लश०)।

यौ०—लोथारी लगर।

मुहा०—लोथारी डालना = लोथारी लगर को थोड़े पानी में टाककर तल की थाह लेते हुए नाव को किनारे लगाना। लोथारी तानना = ठीक ओर नाव जाने के योग्य मार्ग से होकर नाव को किनारे ले जाना।

लोथारी लगर—सज्ञा पुं० [हि० लोथारी + लगर] सबसे छांटा लगर। विशेष—यह उम जगह डाला जाता है, जहा पानी कम होता है और यह जानना अभिप्रेत होता है कि यह किनारे जाने का मार्ग है या नहीं।

लोड—सज्ञा स्त्री० [म० लोड] दे० 'लोड'।

लोदी—सज्ञा पुं० [फा०] पठानों की एक जाति [को०]।

लोथ—सज्ञा स्त्री० [म० लोथ, लोथ] १ एक प्रकार का वृक्ष जो भारतवर्ष के जंगलों में उत्पन्न होता है।

विशेष—इस वृक्ष की छाल रंगने, चमड़ा मिझाने और धोपधियों में काम आती है। छाल को गरम पानी में भिगो देने से पीला रंग निकलता है। कहीं कहीं इसकी छाल पानी में उवालकर भी रंग निकाला जाता है। छाल को सज्जी मिट्टी के साथ पानी में उबाने से लाल रंग निकलता है, जिससे छोट छापते हैं। वैद्यक में इसकी छाल और लकड़ी दोनों का प्रयोग होता है। इसकी छाल कुछ कर्मली होती है और पेचिश आदि पेट के कई रोगों में दी जाती है। इसका गुण ठंडा है और २० ग्रेन तक इसकी मात्रा है। इसका काढ़े का भी प्रयोग किया जाता है। लोथ की लकड़ी के काढ़े में कुल्ला करने से मसूढ़े से रक्त निकलना जाता रहता है और वह दृढ़ हो जाता है। इसकी लकड़ी जल्दी फट जाती है, पर मजबूत होती है और कई तरह के काम में लाई जाती है।

२ एक जाति का नाम।

लोथरा—सज्ञा पुं० [स० लोथ] एक प्रकार का ताँबा जो जापान से आता है।

लोधी—सज्ञा [फा० लोदी] पठानों की एक जाति।

लोथ्र^१—सज्ञा पुं० [स०] १ लोथ नामक वृक्ष।

विशेष—इसके दो भेद होते हैं—श्वेत लोथ और रक्त लोथ। यह कर्सला, ठंडा और वात, पित्त नाशक माना जाता है। विशेष दे० 'लोथ'।

पथ्र^०—तिल्वक। गालव। शावर। तिराट। तिल्वक। मार्जन। भिल्लतर। काडकीलक। शवर। काडनीलक। हेमपुष्परु। भिल्ली।

२ एक जाति का नाम।

लोथ्र^२—सज्ञा पुं० [स० लोथ्र, हि० लोथरा] जापानी ताँबा। लोथरा।

लोथ्रक—सज्ञा पुं० [स०] दे० 'लोथ्र'।

यौ०—लोथ्रकवृक्ष = लोथ का पेड़।

लोथ्रतिलक—सज्ञा पुं० [स०] एक प्रकार का अन्नकार जो उपमा का एक भेद माना जाता है।

लोथ्ररेगु—सज्ञा पुं० [स०] लोथ्र के फूल का चूर्ण जिसका अग्रराग की तरह उपयोग होता था।

लोन^७—सज्ञा पुं० [म० लवण या लोण] १ लवण। नमक।

मुहा०—किसी का लोन खाना = अन्न खाना। पाला जाना। दास होना। उ०—पात्रे कश्यो लकापति सुनो हनुमान कपि रामचंद्र ही को एक तही लोन खायो है।—हनुमन्नाटक (शब्द०)। किसी का लोन निकलना = निमकहरामी का फल मिलना। अकृतज्ञता का फल पाना। उ०—ताते मन पोखित घोर बरतोर मिसि फूटि फूटि निकपत है लोन राम राय को।—तुलसी (शब्द०)। किसी का लोन न मानना = किसी का उपकार न मानना। कृतघ्न होना। उ०—नैनन को अब नाहि पस्याऊँ। बहुर्यो उनको बोलति हौ तुम हाइ हाइ लीजँ नहि नाऊँ। अब उनकी मैं नाहि बसाऊँ मेरे उनको नाही ठाऊँ। व्याकुल भई डोलत ही ऐसेहि वे जहँ हैं महाँ नहि जाऊँ। खाइ खवाइ बडे जत्र कीन्हें बसे जाइ अब औरहि गाऊँ। अतनो कियो आप पावंगे मैं काहे उनका पछिनाऊँ। जैसे लोन हमारो मान्यो कहा कहीं कहि काहि सुनाऊँ। मूरदाम मैं इन बिन रहिही कृपा करँ उनको मरमाऊँ।—सूर (शब्द०)। जले पर लोन लगाना या देना = दुःख पर दुःख देना। दुखी को दुखी करना। उ०—अति कटु वचन कहै कैकेई। मानो लोन जले पर देई।—तुलसी (शब्द०)। किसी बात का लोन सा लगाना = अस्विकार होना। अप्रिय होना। उ०—राज लोन सुनाव लागहु हैं जस लोन। आइ कुँहाइ महिर कहँ मिह जान औ गोन।—जायसी (शब्द०)। लोन चराना = नमकीन बनाना। जैसे,—ग्राम की लोन चराना।

२ मोंदर्य। लावण्य। उ०—जो उन महुँ देखेसि इक दासी। देखि लोन होय लोन विलासी।—जायसी (शब्द०)। विशेष दे० 'नमक'।

लोनहरामी^१—वि० [हि० लोन + अ० हरामी] कृतघ्न। नमक-हराम। उ०—मन भयो ढीठ इनहि के कीन्हें ऐसे लोन-हरामी। सूरदाम प्रभु इनह पत्याने आखिर बडे निकामी।—सूर (शब्द०)।

लोनहरामी^२—वि० [हि० लोन + अ० हरामी] कृतघ्न। नमक-हराम। उ०—मन भयो ढीठ इनहि के कीन्हें ऐसे लोन-हरामी। सूरदाम प्रभु इनह पत्याने आखिर बडे निकामी।—सूर (शब्द०)।

लोनहरामी^३—वि० [हि० लोन + अ० हरामी] कृतघ्न। नमक-हराम। उ०—मन भयो ढीठ इनहि के कीन्हें ऐसे लोन-हरामी। सूरदाम प्रभु इनह पत्याने आखिर बडे निकामी।—सूर (शब्द०)।

लोनहरामी^४—वि० [हि० लोन + अ० हरामी] कृतघ्न। नमक-हराम। उ०—मन भयो ढीठ इनहि के कीन्हें ऐसे लोन-हरामी। सूरदाम प्रभु इनह पत्याने आखिर बडे निकामी।—सूर (शब्द०)।

लोनहरामी^५—वि० [हि० लोन + अ० हरामी] कृतघ्न। नमक-हराम। उ०—मन भयो ढीठ इनहि के कीन्हें ऐसे लोन-हरामी। सूरदाम प्रभु इनह पत्याने आखिर बडे निकामी।—सूर (शब्द०)।

लोनहरामी^६—वि० [हि० लोन + अ० हरामी] कृतघ्न। नमक-हराम। उ०—मन भयो ढीठ इनहि के कीन्हें ऐसे लोन-हरामी। सूरदाम प्रभु इनह पत्याने आखिर बडे निकामी।—सूर (शब्द०)।

लोनहरामी^७—वि० [हि० लोन + अ० हरामी] कृतघ्न। नमक-हराम। उ०—मन भयो ढीठ इनहि के कीन्हें ऐसे लोन-हरामी। सूरदाम प्रभु इनह पत्याने आखिर बडे निकामी।—सूर (शब्द०)।

लोनहरामी^८—वि० [हि० लोन + अ० हरामी] कृतघ्न। नमक-हराम। उ०—मन भयो ढीठ इनहि के कीन्हें ऐसे लोन-हरामी। सूरदाम प्रभु इनह पत्याने आखिर बडे निकामी।—सूर (शब्द०)।

लोना^१—वि० [हि० लोन] [भाव० सञ्ज लोनाई] १ नमकीन । सलोना । २ सुदर । उ०—(क) लालन जोग लखन अति लोने । भे न भाइ अस अहहि न होंने ।—तुलसी (शब्द०) । (घ) नाउन अति गुन खानि ती बेगि बोलाइहो । करि सिंगार अति लोनि ती विहंसति आइहो ।—तु सी (शब्द०) ।

लोना^२—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोन] १ एक प्रकार का रोग जो ईंट, पत्थर और मिट्टी की दीवारों में लगता है । नोना ।

विशेष—इसमें दीवार भङ्गने लगती और कमजोर हो जाती है, थोड़े दिनों में उसमें गड्ढे पड़ जाते हैं, और वह कटकर गिर पड़ती है । यह रोग प्रायः नीव के पास के भग में आरंभ होता है और ऊपर की ओर बढ़ता है ।

क्रि० प्र०—लगना ।

२ वह धूल या मिट्टी जो लोना लगने पर दीवार से झटकर गिरती है । यह खेत में डाली जाती है और खाद का काम देती है । ३ नमकीन मिट्टी, जिससे शोरा बनाया जाता है । ४ वह क्षार जो चने की पत्तियों पर झकड़ा होता है और जमके कारण उसकी पत्तियाँ चाटने में खट्टी जान पड़ती हैं । ५ एक प्रकार का कोड़ा जो घोड़े की जाति का होता है और प्रायः नाव के पेंदों में चपका हुआ मिलता है । ६ अमलोनो नाम की घास जिसे रसायनी घातु सिद्ध करने के काम में लाते हैं । उ०—(क) कहाँ सो खोएहु विरवा लोना । जेहि तें छोइ रूप ओ सोना ।—जायसी (शब्द०) । (ख) जहँ लोना विरवा कँ जाती । कहि कँ सँदेस आन को पाती ।—जायसी (शब्द०) ।

लोना^३—क्रि० म० [सं० लवणा] फसल काटना । उ —बीज बोई जोई अत लोनि ए सोइ समुझि यह बात नहि चित्त बरई ।—पूर (शब्द०) ।

लोना^४—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] एक कल्पित स्त्री जो जाति की चमार और जादू टोने में बहुत प्रवीण कही जाती है । नोना चमाइन । उ०—तू काँवरू परा बस टोना । भूला जोग छरा तोहि लोना ।—जायसी (शब्द०) ।

लोनाई—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोना + ई (प्रत्य०)] लादशय । सुदरता । उ०—हृदय मराहत सीय लोनाई । गुरु समीप गवने दोड भाई ।—तुलसी (शब्द०) ।

लोनारां—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लून (= नमक) + आर (प्रत्य०)] या सं० लोन + हि० आर (प्रत्य०)] वह स्थान जहाँ ने नमक आता हो । जैसे,—नमक की खान, झील या क्यारी ।

लोनिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लवण, लोन] लोनी नामक साग । विशेष दे० 'लोनी' । उ०—रुचिबल जानि लोनिका फांगी । कहीं कृपालु दूसरी माँगी ।—सूर (शब्द०) ।

लोनिया^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लवण, लोन + इया (प्रत्य०)] एक जाति जो लोन या नमक बनाने का व्यवसाय करती है । यह जाति शूद्रों के अतर्गत मानी जाती है । लोनियाँ । (अब ये लोग अपने को बीहान कहते हैं) ।

लोनिया^२—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोन] लोनी नामक साग ।

लोनी^१—मज्ञा स्त्री० [हि० लवण, लोन] १ कुल्फे की जाति का एक प्रकार का साग ।

विशेष—इसकी पत्तियाँ उहव छोटी छोटी होती हैं । यह ठठी जगह पर, जहाँ गीट होती है, उत्पन्न होती है । यह म्वाद में मटाम लिए जाती है । इसमें रंग निरग के फूल लगते हैं । इसमें जोग गमलों में बोते हैं और विनायती बोनी बटने हैं । इसके बीज विनायन से आते हैं ।

२ वह क्षार जो चने की पत्तियों पर बँठता है । ३. एक प्रकार की मिट्टी जिसमें लोनियाँ लाग शोग और नमक बनाते हैं । ४ दे० 'लोना' ।

लोनी^२—वि० स्त्री० [हि० लोना] लावशयमयी । मुदरी

लोना(पु)^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० नवनीत] लोनी । मयवन । नवनीत ।

लोप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [मञ्ज लोपन] [वि० लुप्त, लोपक, लोपा, लोप्य] १ नाश । क्षय । २ विच्छेद । जैसे, - कर्म का लोप होना । ३ अदर्शन । अभाव । ४ व्याकरण के चार प्रधान नियमों में से एक, जिसके अनुसार शब्द के साधन में किसी वर्ण को उठा देते हैं । जैसे,—अपिधान में अ का लोप करके पिधान शब्द बनाया जाता है । ५ छिपना । अतर्कित होना । उ०——प्रह वरपि आयुव वारिधर सम दियो पटरय लोप कँ । - गिरिधर (शब्द०) । ६ तोटना । भग (को०) । ७ अति-क्रमण । उल्लघन (को०) । ८ अवहेतना । उपेक्षा (को०) । ९ व्याकुलता । आकुलता (को०) ।

लोपक^१—वि० [म०] नाशक (को०) ।

लोपक^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भग । उड (को०) ।

लोपन—सञ्ज्ञा पुं० [म०] १ लुप्त करना । तिरोहित करना । २ नष्ट करना । भग करना । विनाशन ।

लोपना^१—क्रि० सं० [सं० लोपन] १ लुप्त करना । मिटाना । उ०—(फ) कनि सको लोपं सुचालि निज कठिन कुचालि चलाई ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) नय ते परम मनोहर गोपी । नंद नदन के नेह मेह जिनि लोक लोक लोपी ।—सूर (शब्द०) । (ग) लोपे कोपे इद्र लीं रोपे प्रलय अकाल । गिरिधारी राखे मर्ज गो, गोपी, गोराल ।—विहारी (शब्द०) । २ छिपाना । ३ भग करना (को०) ।

लोपना^२—क्रि० अ० १ लुप्त होना । मिटना । उ०—राय दसरत्य के समर्थ राम राय मनि तेरे हेरे लोपे निपि विधिह गनक की ।—तुलसी (शब्द०) । २ छिपना । (को०) ।

लोपाजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोपाजन] वह कल्पित अजन जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि इसके लगाने से लगानेवाला अदृश्य हो जाता है ।

लोपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] १ एक प्रकार की चिडिया । २ दे० 'लोपाभुद्रा' ।

लोपक, लोपापक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गीदड़ । सियार ।

लोपापिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] शृगाली । मादा सियार (को०) ।

लोपामुद्रा—सञ्ज्ञा स्त्री० [नं०] १. अगस्त्य ऋषि की स्त्री का नाम । लोपा ।

विशेष—पुराणों में लिखा है कि अगस्त्य ने बहुत दीर्घ काल तक ब्रह्मचर्य धारण किया था और वे विवाह नहीं करते थे । एक नार उन्होंने स्वप्न में देखा कि हमारे पितर गड्ढे में उलटे लटके हुए हैं । अगस्त्य ने उन्हें इस प्रकार श्रयोमुख लटका देखकर उनसे कारण पूछा । पितरों ने कहा कि यदि तुम विवाह करके सतान उत्पन्न करो, तो हम लोग को इस यातना से छुट्टी मिले । अगस्त्य ने बहुत हूँडा, पर उनकी सर्वलक्षणों से युक्त कोई कन्या विवाह करने योग्य नहीं मिली । निदान उन्होंने सब प्राणियों के उत्तम उत्तम श्रग लेकर एक कन्या बनाई । उस समय विदर्भ देश का राजा पुत्र के लिये तप कर रहा था । अगस्त्य जी ने लोपामुद्रा उमी विदर्भराज को प्रदान की । जब वह बड़ा हुई, तब अगस्त्य जी ने विदर्भराज से कन्या की याचना की । विदर्भराज ने लोपामुद्रा अगस्त्य जी को सौंप दी और अगस्त्य जी ने उसका पाणिग्रहण कर उसे अपनी पत्नी बनाया ।

पर्या०—लोपा । कोशीतकी । वरप्रदा ।

२ एक तारे का नाम जो दक्षिण में अगस्त्य मंडल के पास उदय होता है ।

लोपायक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोपाक' ।

लोपायिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [म०] एक प्रकार की चिड़िया ।

ल पाश, लोपाशरु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गीदड़ । सियार ।

लोपिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक प्रकार की मिठाई [को०] ।

लोपी—वि० [सं० लोपिन्] १ भंग करनेवाला । नष्ट करनेवाला । २ हानि पहुँचानेवाला । ३ वह जो लुप्त हो सके [को०] ।

लोप्ता—वि० [सं० लोप्ट] भग करनेवाला । तोड़नेवाला । नाशक [को०] ।

लोप्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लूट का माल । चोरी की संपत्ति [को०] ।

लोवत—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ पुतली । गुडिया । २ खिलौना [को०] ।

यौ०—लोवतवाज = कठपुतली का खेल करनेवाला ।

लोवार्—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोमाश या हिं० लोमडी] लोमडी । उ०—कीन्हेमि लोवा इट्टर चांटी । कीन्हेसि बहुत रहहि खनि माटी ।—जायसी (शब्द०) ।

लोवान—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] एक वृक्ष का सुगंधित गोद ।

विशेष—यह वृक्ष अफ्रिका के पूर्वी किनारे पर, सुमालीलैंड में अरब के दक्षिणी समुद्रतट पर होता है और वही से लोवान अनेक रूपों में भारतवर्ष में आता है । कुहुर जकर, कुहुर उनस, कुहुर शफ, कुहुर कशफा आदि इसी के भेद हैं । इनमें से कई दवा के काम में आते हैं । इनमें लोवानकशफा, जिसे धूप भी कहते हैं, भारतवर्ष में लोवान के नाम से विक्रता है । यह गोद वृक्ष की छाल के साथ लगा रहता है । अरब से लोवान बवई आता है । वहाँ छाँट छाँटकर उसके भेद

किए जाते हैं । जो पीले रंग की वृंदों के रूप के साफ दाने होते हैं, वे कौडिया कहलाते हैं । उनको छाँटकर युरोप भेज देते हैं तथा मिला जुला और चूरा भारतवर्ष और चीन के लिये रख लेते हैं । एक और प्रकार का लोवान जावा, सुमात्रा आदि स्थानों से आता है, जिसे जावी लोवान कहते हैं । युरोप में इससे एक प्रकार का क्षार बनाया जाता है जिसे वैजोडक एसिड कहते हैं । लोवान प्रायः जलाने के काम में लाया जाता है, जिससे सुगंधित धूआँ निकलता है । वैद्यक में कुहुरलोवान का प्रयोग सुजाक में और जावी लोवान का प्रयोग खाँसी में होता है । यह अधिकतर मरहम के काम में लाया जाता है ।

लोवानी—वि० [अ०] १ लोवान से युक्त । लोवानवाला । लोवान जैसा ।

यौ०—लोवानी ऊद = एक प्रकार का सफेद ऊद या सुगंधित लकड़ी ।

लोविया—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोम्य, मि० अ०] एक प्रकार का बोड़ा ।

विशेष—यह सफेद रंग का और बहुत बड़ा होता है । इसके फल एक हाथ तक लंबे और तीन अंगुल तक चौड़े और बहुत कोमल होते हैं और पकाकर खाए जाते हैं । बीजों से दाल और दालमोट बनाते हैं । इसकी और भी जातियाँ हैं, पर लोविया सबसे उत्तम माना जाता है । इसकी पत्तियाँ उर्द के सदृश पर उससे बड़ी और चिकनी होती हैं । पौधा शोभा और भाजी के लिये बागों में बोया जाता है और बहुमूल्य होता है । उ०—कचन के घाम कहि काम जहाँ ये उपाधि, राम राज भलो जहा सब खाय लोविया ।—हनुमन्नाटक (शब्द०) ।

लोविया कजई—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लोविया + कजई] एक रंग जो गहरा हरा होता है ।

लोभ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] [वि० लुब्ध, लोभी] १ दूसरे के पदार्थ को लेने की कामना ।

—तृष्णा । लिप्सा । स्पृहापर्या० । काक्षा । शस । गर्द । इच्छा । वाछा । अभिलाषा ।

२ जैन दर्शन के अनुसार वह मोहनीय कर्म जिसके कारण मनुष्य किसी पदार्थ को त्याग नहीं सकता । अर्थात् यह त्याग का बाधक होता है । अधैर्यता । अधीरता (को०) । ४ कृप-रता । कजूसी ।

लोभन^१—वि० [सं०] [वि० स्त्री० लोभनी] लुभानेवाला । उलभाने या फँसानेवाला [को०] ।

लोभन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ प्रलोभन । लालच । आकर्षण । उलभन । २ सुवर्ण । सोना [को०] ।

लोभना^३—क्रि० अ० [हिं० लोभ] लुब्ध होना । मुग्ध होना । उ०—(क) करनफूल नासिक श्रति सोभा । ससि मुख श्राइ सुक जनु लोभा ।—जायसी (शब्द०) । (ख) सोहत सुवरन सुरय फनद मंदिर सम शोभा । जिनमें रतन विहग वने जेहि लखि जग लोभा ।—जरासंधवध (शब्द०) ।

लोमना^१—क्रि० स० [सं० लोमन] लुभाना । मुग्ध करना ।

लोमनीय—वि० [सं०] लुमानेवाला । आकर्षक [को०] ।

लोभविजयी—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह राजा जो असल में लड़ाई न करना चाहता हो, कुछ धन आदि चाहता हो ।

विशेष—कौटिल्य ने लिखा है कि ऐसे को कुछ धन देकर मित्र बना लेना चाहिए ।

लोभाना^१—क्रि० स० [हि० लोभाना का सक०] मोहित करना । मुग्ध करना । उ०—माँगहु वर बहु भौंति लोभाए । परम धीर नहि चले चलाए ।—तुलसी (शब्द०) ।

लोभाना^२—क्रि० अ० मोहित होना । मुग्ध होना । उ०—(क) अस विचारि हरि भजत मयाने । मुक्ति निरादरि भगति लोभाने ।—तुलसी (शब्द०) । (ख) वहुरि भगवान को निरखि सुदर परम कष्टो एहि माहि है सब भलाई । पै न इच्छा इन्हें है कछु वस्तु की, अरुन ए देखि मोहइ लोभाई ।—सूर (शब्द०) ।

लोभार^१—वि० [हि० लोभ + आर (प्रत्य०)] लुमानेवाला । मुग्ध करनेवाला । उ०—वय किशोर वय तद्वित वरन तन नख सिख अग लोभारे । है चित्तु कै हित लै सब छवि वितु विधि निज हाथ संचारे ।—तुलसी (शब्द०) ।

लोभित—वि० [सं०] लुब्ध । मुग्ध । लुभाया हुआ । उ०—नलिन पराग मेघ माधुरि सो मुकुलित अब कदव । मुनि मन मधुप सदा रस लोभित सेवत अज शिव अब ।—सूर (शब्द०) ।

लोभी—वि० [सं० लोभिन्] [वि० स्त्री० लोभिनी] १ जिसे किसी बात का लोभ हो । उ०—नए नए हरि दरसन लोभी श्रावण शब्द रसाल । प्रथम ही मन गयो तनु तजि तव मई वेहाल ।—(शब्द०) । २ बहुत अधिक लोभ करनेवाला । लालची । ३ लुब्ध । लुभाया हुआ । उ०—ए कैसी है लोभिनी छवि धरति चुराई । और न ऐसी करि सकै मयादा जाई ।—सूर (शब्द०) ।

लोभ्य—वि० [सं०] आकर्षक । लोमनीय [को०] ।

लोम^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ शरीर भर के छोटे छोटे बाल । रोवाँ । रोम । उ०—शतशत इद्र लोम प्रति लोमनि । शत लोमनि मेरे इक लोमनि ।—सूर (शब्द०) । २ बाल । जैसे,—गोलोम । ३ पूँछ [को०] । ४ ऊर्णा । ऊन [को०] ।

लोम^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोमशा] लोमड़ी । उ०—भूपन भनत भारे मालुक भयानक हैं भीतर भवन भेर लीलगऊ लोम हैं ।—भूषण (शब्द०) ।

लोमकरणी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. जटामासी । २ मांसी नामक घास ।

लोमकर्कटी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अजमोदा ।

लोमकर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शशक । खरगोश ।

लोमकी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोमकिन्] एक पक्षी [को०] ।

लोमकीट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जूँ [को०] ।

लोमकूप—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] शरीर में का वह छिद्र जो रोएँ की जड़ में होता है । लोमगर्त ।

लोमगर्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'रोमकूप' [को०] ।

लोमघ्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गंज नामक रोग । इंद्रमुसक ।

लोमड़ी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोमशा] कुत्ते या गीदड़ की जाति का एक जतु जो ऊँचाई में कुत्ते से छोटा होता है, पर विस्तार में लवा ।

विशेष—भारतवर्ष की लोमड़ी का रंग गीदड़ सा होता है, पर यह उमसे बहुत छोटी होती है । इसकी नाक नुकीली, पूँछ भवरी और शीर्ष बहुत तेज होती हैं और यह बहुत तेज भागनेवाली होती है । अच्छे अच्छे कुत्ते इसका पीछा नहीं कर सकने । चालाकी के लिये यह बहुत प्रसिद्ध है । ऋतु के अनुसार इसका रोंवाँ भड़ता और रंग बदलता है । यह कीड़े मकोड़ों और छोटे छोटे पक्षियों को पकड़कर खाती है । अन्य दशों में इसकी अनेक जातियाँ मिलती हैं । अमेरिका में लाल रंग की एक लोमड़ी होती है, और शीतकटिवध प्रदेशों में काले रंग की लोमड़ी होती है, जिसके रोएँ जाड़े में सफेद रंग के हो जाते हैं । कहीं कहीं बिल्कुल काली लोमड़ी भी होती है । उन सबके बाल या रोएँ बहुत कोमल होते हैं, और उनका शिकार उनकी खाल के लिये किया जाता है, जिसे समूर या पोन्तान कहते हैं । शीतकटिवध प्रदेश की लोमड़ियाँ बिल बनाकर झुंड में रहती हैं । यूरोप की लोमड़ियाँ बड़ी भयानक होती हैं । वे गाँवों में घुमकर अगूर आदि फलों का और पालतू पक्षियों का नाश कर देती हैं । भारत की लोमड़ी चैत वैसाख में बच्चे देती है । बच्चों की संख्या पाँच छह होती है, और वे डेढ़ वर्ष में पूरी वाढ को पहुँचते हैं । इनकी आयु तेरह चौदह वर्ष की कही गई है ।

लोमपाद—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अग देश के एक राजा का नाम ।

विशेष—यह राजा दशरथ के मित्र थे । एक बार इन्होंने ब्राह्मणों का अपमान किया । उससे क्रोध कर ब्राह्मणों उनका देश छोड़कर चने गए । ब्राह्मणों के चले जाने से अग देश में अवर्षण पड़ा । इसके निवारणार्थ राजा लोमपाद ने ऋष्यशृंग को राज्य में बुलाकर उन्हें अपने मित्र दशरथ की कन्या, जिसका नाम श्रोता था, प्रदान की, जिससे अनावृष्टि दूर हो गई । इन्हें रोमपाद भी कहते हैं ।

लोमपादपुर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चपा नगरी जिसे अब भागलपुर कहते हैं ।

लोमफल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोएँदार फल । भव्य नामक फल [को०] ।

लोममणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बाल से बना रत्नाकवच ।

लोमयूक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जूँ । यूका [को०] ।

लोमरध्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोमरन्ध्र] दे० 'रोमकूप' [को०] ।

लोमरां—वि० [हि० लोमडी] डरपोक । भगू । कायर । (उपेक्षा०) ।

लोमराजि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] रोमावलि [को०] ।

लोमरीं—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोमशा] दे० 'लोमड़ी' ।

लोमगेग—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] गज रोग । गजा होने का रोग । वह रोग जिसमें बाल भड़ जाते हैं [को०] ।

लोमलाताघर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पेट । उदर । तोद [को०] ।

लोमवाही—वि० [सं० लोमवाहिन्] १. पंखवाला । २. रोएँदार ।
३. तेज धारवाला [को०] ।

लोमविष^१—वि० [सं०] (पशु) जिसके रोएँ में विष होता है [को०] ।

लोमविष^२—सञ्ज्ञा पुं० व्याघ्र । बाघ ।

लोमश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. एक ऋषि का नाम ।
विशेष—पुराणों में इनको अमर कहा गया है । महाभारत के अनुमार ये युधिष्ठिर के साथ तीर्थयात्रा को गए थे और उन्हें सब तीर्थों का वृत्तांत बतलाया था ।
२. मेघ । मेढा । ३. एक पौधा ।

लोमश^२—वि० १. अधिक और बड़े बड़े रोएँवाला । भ्रूरा । २. ऊनी । ऊन का [को०] । ३. बालों से भरा या ढका हुआ [को०] । ४. घास से ढका हुआ [को०] ।

लोमशकर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक जानवर जो बिल या माँद में रहता है [को०] ।

लोमशकांडा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोमशकाण्डा] कर्कटी । ककडी ।

लोमशपर्णिनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] माषपर्णी नामक ओषधि ।

लोमशपर्णी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लोमशपर्णिनी' ।

लोमशपुष्पक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सिरिस । शिरीष ।

लोमशमार्जार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार की विल्ली जिसके बाल कोमल होते हैं और जिससे मुश्क निकलता है । गंधमार्जार । विशेष दे० 'गंधविलाव' ।

पर्या०—पूर्तिक । मारजातक । सुगंधी । मूत्रपातन ।

लोमशा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. वैदिक काल की एक स्त्री जो कई मंत्रों को रचयिता मानी जाती है । २. काकजघा । माँसी । ३. बच । ४. अतिबला । ५. कौछ । केवाँच । ६. नीला कसीस । कसीस । ७. लोमडी [को०] । ८. शृगाली । सियारिन [को०] । ९. दुर्गा की एक अनुचरी या शाकिनी [को०] ।

लोमशातन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हरताल ।

लोमशी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक वृद्ध [को०] ।

लोमश्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भ्रूरापन । भ्रूरे या घने लव्हे बालों का होना [को०] ।

लोमस—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोमश] दे० 'लोमश' ।

लोमहर्ष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रोमहर्ष । रोमाच [को०] ।

लोमहर्षक—वि० [सं०] रोगटे खड़े करनेवाला । रोमाचकारी [को०] ।

लोमहर्षण^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. पुराणों के अनुसार व्यास के एक शिष्य का नाम जो उग्रश्रवा के पुत्र थे । इन्हीं को सूत कहते हैं । २. रोमाच ।

लोमहर्षण^२—वि० ऐसा भीषण जिससे रोएँ खड़े हो जायँ । बहुत अधिक भयानक ।

लोमहृत्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हरताल । लोमशातन [को०] ।

लोमाच—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोमाञ्च] १. रोमाच । २. कोमल ऊन । मुलायम ऊन [को०] । ३. द्रुम । पूँछ [को०] ।

लोमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] वचा । वच् ।

लोमाद्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] जूँ की एक जाति [को०] ।

लोमालि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] छाती से नाभि तक उगे घने रोएँ । रोमावली [को०] ।

लोमालिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लोमडी [को०] ।

लोमाली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लोमालि' ।

लोमावलि, लोमावली—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] दे० 'लोमालि' [को०] ।

लोमाश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. सियार । गीदड । २. नर लोमडी ।

लोमाशिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. गीदडी । सियारिन । २. लोमडी [को०] ।

लोय^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोक] लोग । उ०—जहाँ प्रगट भूषण भनत हेतु काज ते होय । सो विभावना औरळ कहत सयाने लोय ।—भूषण (शब्द०) ।

लोय^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोचन, हिं० लोयन] आँख । नेत्र । नयन ।

लोय^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लव या लाव] लौ । लपट । ज्वाला । उ०—दुति निमल रत्न प्रदीप धरे बडी लोय सो आँखन ओरी जरे ।—लक्ष्मण (शब्द०) ।

लोय^४—अव्य० [हिं० लौ] तक । पर्यंत ।

लोयन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोचन, ज्ञा० लोयल] आँख । उ०—जनक सुता तब उर धरि धीरा । नील नलिन लोयन भरि नीरा ।—तुलसी (शब्द०) ।

लोयन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लावण्य] लावण्य । सौंदर्य ।

लोर^१—वि० [सं० लोल] १. लोल । चंचल । उ०—ग्रह वाणी कहत ही लजानी समुक्ति भई जिय और । सूरश्याम मुख निरखि चली घर आनंद लोचन लोर ।—सूर (शब्द०) । २. उत्सुक । इच्छुक ।

लोर^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोल] १. कान का कुडल । २. लटकन । ३. कान के नीचे का लटका हुआ भाग । लोलक ।

लोर^३—सञ्ज्ञा पुं० [देशी या सं० लोल (= अश्रु या हिं० लोण)] आँसु । उ०—बाल ढिग वैठारि ताको पोछि लोचन लोर । सूर प्रभु के बिरह व्याकुल सखी लखि मुख और ।—सूर (शब्द०) ।

लोरना^१—क्रि० अ० [सं० लोल] १. चंचल होना । २. लपकना । ललकना । उ०—गुनि उठि जागि देखै मुकुर नारि ललचान अक भरि लैन लोरै । सूर प्रभु भावती के सदा रस भरे नैन भरि भरि प्रिया रूप चोरै ।—सूर (शब्द०) । ३. लिपटना । उ०—लोरहि आइ भूमि तरु शाखाफल फूलन क भारा । नाना रग कुरग सग एक चरै सुदग अपारा ।—रघुराज (शब्द०) । ४. झुकना । उ०—देव कर जोरि जोरि वदति सुरात लघु लोगान के लोरि लोरि पायन परति है ।—देव (शब्द०) । ५. लोटना । उ०—कलप लता से लता वृद्धन विलासे, भुके अजब किता से भूमि लोरन के आसे है ।—रघुराज (शब्द०) ।

लोरवाँ—सञ्ज्ञा पुं० [दशा लोर + वा (प्रत्य०)] आसु । लोर । (पूरव) ।

लोरा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोल] १. एक प्रकार का गीत जो स्त्रियों बच्चों को सुलाने के लिये गाती हैं । साथ ही वे बच्चे को गाय

मे लेकर हिलाती भी जाती हूँ, अथवा खाट पर लेटाकर थपकी देती जाती है। २ तोते को एक जाति।

लोलव सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोलम्ब] बड़ा भौंरा को०।

लोल^१—वि० [सं०] १ हिलता डोलता। कपायमान। क्षय्य। अशात २ चचल। उ०—भाल तिलक कचन किरीट मिर कुडल लोन कपोलनि भाई। निरखहि नारि निकर विदेह पुर निमिषा की मरजाद मिटाई। तुलसी (शब्द०)। ३ परिवर्तनशील। ४ क्षणिक। क्षणभंगुर। ५ उत्सुक। अति इच्छुक।

लोल^२—सञ्ज्ञा पुं० लिंगेन्द्रिय।

लोलक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लटकन जो बालियों में पहना जाता है। यह मछरी के आकार का या किसी और आकार का होता है। तियाँ इमे नय या वाली में पिरोकर पहनती हैं। उ०—करनकून खुटिना अरु खुभिय। लोलक सोन सोक हूँ खुभिय।—सुदन (शब्द०)। २ कान की लव। लोलकी। ३ करघे में मिट्टी का एक लट्ठ जो राद्य में इसलिये लगाया जाता है कि उनका ऊपर या नीचे करके राद्य उठा या दबा सकें। ४ घटी या घटे के बीच में लगा हुआ लटकन जो हिलाने से छपर उधर टकराकर घटी में लगकर शब्द उत्पन्न करता है।

लोलकर्ण—वि० [सं०] लोगों की बात सुनने का आदती। सबकी बातें सुननेवाला (को०)।

लोलकी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोनक] कान का वह भाग जो गालों के किनारे छपर उधर नीचे को लटकता रहता है। इसी में छेद करके कुडन या वाली आदि पहनते हैं।

लोलघट—सञ्ज्ञा सं० [सं०] पवन जिनका शरीर चचल है (को०)।

लोलचक्षु—वि० [सं० लोलचक्षुस्] १ कामनायुक्त नेत्रों से देखनेवाला। प्रेम में देखनेवाला। ३ जिसके नेत्र चारों ओर नाचते हैं। चचलनेत्र (को०)।

लोलजट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वृहत्संहिता के अनुसार एक राज्य जो ईशान कोण में है।

लोलजिह्व^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सर्प जिसकी जीभ लपलपाती रहती है (को०)।

लोलजिह्व^२—वि० [सं०] लालची। चटोरा (को०)।

लोलता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ चापल्य। चचलता। २ लालसा। लालच। लोभ (को०)।

लोलत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोलता' (को०)।

लोलदिदेश—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोलार्क नामक सूर्य। उ०—लोमदिनेस त्रिलोचन नीचन करणघट घटा सी। तुलसी (शब्द०)।

लोलनयन—वि० [सं०] दे० 'लोलचक्षु'।

लोलना^(६)—क्रि० प्र० [सं० लोलन] हिलना। डोलना। उ०—गागरि नागरि लिए पनिघट तें चली धरहि आवैं। श्रीवा डोलत लोचन लोलत हरि के चितहि पुराचैं।—सूर (शब्द०)।

लोलनेत्र, लोललोचन—वि० [सं०] दे० 'लोलचक्षु' (को०)।

लोलालागूल—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोललाङ्गूल] १ चचल पूँछ। आस्फा-

लन करता हुआ पुच्छे। २. एक स्तंभ। हनुमान जी की एक स्तुति।

लोला^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १ जिह्वा। जीभ। २ लक्ष्मी। ३ मनु देव्य की माता। ४ एक योगिनी का नाम। ५ मुक्तेश्वरके के अनुसार एक प्रकार की नाव। ६ हाथ चौड़ी, ८ हाथ नगी और ६ हाथ ऊँची नौका। ६ चचलना गी। अथवा चपन औरत (को०)। ७ विद्युत्। तडित्। चपना (को०)। ८ एक वृत्त का नाम जिनके प्रत्येक चरण में मगण, नगण, उगण, भगण और अत में दो गुरु होते हैं। इसमें मान नात पर प्रति होती है। उ०—मा सोमी भग गी रा काहु नी मुव दवे। मिहारी कटि गाहे हस्ता चालहि पेदे। लाला मा मृदुवना पृथ्वी बाल नवीना। बोलो मातु फन ना वाणो नोति विद्याना।—छंद०, पृ० २००।

लोला^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लटका का एक रिलोना। यह एक उज होता है, जिनके दागों सिरा पर दो लट्टू होत हैं।

लोलाक्षि, लोलाक्षिका, लोलाक्षी,—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] यह स्त्री जिसके नेत्र चपल हों। चचल नेत्रवाली स्त्री (को०)।

लोलार्क—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ काशी के एक प्रसिद्ध तीर्थ का नाम। जिनमें लोलार्क कुछ कहते हैं। २ सूर्य का एक नाम (को०)।

लोलधिराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोलिधिराज] ब्राह्मणों के एक प्रथ के लोचक (को०)।

लोलिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] एक शाक। चागेरी। अमलीनी (को०)।

लोलित—वि० [सं०] १ श्लथ। २ ढोला। शिथिल। चुथ। कपित। हिलाया हुआ (को०)।

लोलिनी—वि० स्त्री० [सं० लाल] चचल प्रकृतिकाली। उ०—रहूँ लोलिनी वेडिनी गीत गावैं।—केशव (शब्द०)।

लोलुप—वि० [सं०] १ लोभो। लालची। २ चटोरा। चट्ट। ३ किसी बात के लिये परम उत्सुक। ४ विष्वसव। ताडफोड करनेवाला। नाशक (को०)।

लोलुपता—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोलुप+ता] लालच। तीव्र आकांक्षा। लालसा (को०)।

लोलुपत्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोलुपता' (को०)।

लोलुपा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] चलवती आकांक्षा। तीव्र इच्छा। गहरी लालसा (को०)।

लोलुभ—वि० [सं०] तीव्र आकांक्षा से युक्त। गहरी लालसावाला। लोलुप (को०)।

लोलुव—वि० [सं०] बहुत अधिक या बारबार कहनेवाला (को०)।

लोलेक्षण—वि० [सं०] चचल नेत्रवाला। लोलचक्षु (को०)।

लोवा^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोमशा] १ लोमड़ी। उ०—(क) बाएँ अकाले धंनरे आए। लोला दरस भाइ देखराए।—जायसी (शब्द०)। (ख) लोवा फिरि फिरि दरस देखावा। सुरभी सनमुख शिशुहि पियावा।—तुलसी (शब्द०)।

लोवा^२—सञ्ज्ञा पुं० [मं० लव, हिं० लवा] तीतर की जाति का एक पत्ती। लवा।

विशेष—यह बटेर में छोटा होता है और कश्मीर, मध्य प्रदेश तथा सयुक्त प्रांत में पाया जाता है। नर प्रायः मादा से कुछ अधिक बड़ा होता है। शिकारी इसका शिकार करते हैं। इसे गुरगा भी कहते हैं।

लोशन—सञ्ज्ञा पुं० [अ०] अधिक पानी में धुली हुई ओषधि जो शरीर में ऊपर से लगाने, किसी पीड़ित अंग को धोने या तर रखने आदि के काम में आती है।

लोष्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पत्थर। २ ढेला। डला। ३. लोहे का मोरचा (को०)।

यौ०—लोष्टगुटिका = मिट्टी की ढली या गोली। लोष्टघात = ढेले से मारना। लोष्टभजन, लोष्टभेदन = जिससे मिट्टी के ढेले तोड़े जायें। पटेला। लोष्टमर्दी = (१) ढेला तोड़नेवाला। मिट्टी के ढेले तोड़नेवाला, (२) दे० 'लोष्टघ्न'।

लोष्टक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ मिट्टी का ढेला। २ घव्वा। ३. किसी चिह्न या निशान को बतानेवाली वस्तु (को०)।

लोष्टघ्न—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] खेती का वह औजार जिससे खेत के ढेले फोड़ते हैं। पटेला। पाटा।

लोष्टभजन—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोष्टभञ्जन] दे० 'लोष्टघ्न' (को०)।

लोष्टु—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोष्ट'।

लोहंडा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहभाण्ड या हिं० लोह + डा (प्रत्यय०)] [स्त्री० लोहंडी] १ लोहे का एक प्रकार का पात्र जिसमें खाना पकाया जाता है। कभी कभी इसमें दस्ता भी लगा रहता है। २ तमला। उ०—चु बक लोहंडा औरटा खावा। भा हलुवा घिउ कंर निचोवा।—जायसी (शब्द०)।

लोह^१—वि० [सं०] १ लाल रगवाला। तामडा। ३. ताँवे का बना हुआ। २ लोहे का बना हुआ।

लोह^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. लोहा नामक प्रसिद्ध धातु। २ रक्त। खून। ३. लाल बकरा। ४ ताँबा (को०)। ५ इस्पात (को०)। ६. कोई धातु (को०)। ७ सोना (को०)। ८ शस्त्र। हथियार। उ०—लोह गहे लालच करि जिय को श्रीरी सुभट लजावै। सुरदास प्रभु जीति शत्रु को कुशल जेम घर आवै।—सूर (शब्द)। ९ मछली पकड़ने का काँटिया (को०)। १० शगुरु। अगर नामक गवद्रव्य (को०)।

लोहकटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहकण्टक] मदनफल का वृक्ष। मदनफल का पेड़। २ लोहे का काँटा (को०)।

लोहकटक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोहे की साँकल। सिक्कड़ (को०)।

लोहकात्त—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहकान्त] चु बक। अयस्कात।

लोहकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोहार।

लोहकार्पापरण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोहे का सिक्का या बाट।

लोहकिट्ट—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोहे की कीट या मँल जो मट्टे में छालकर लोहे को गलाने या ताव देने से निकलती है।

विशेष—वैद्यक में इसे कृमि, वात, पित्त, शूल, मेह, गुल्म और शोथ का नाशक लिखा है। इसका स्वाद मधुर और कटु तथा प्रकृति उष्ण मानी गई है। इसे महर भी कहते हैं।

पर्या०—किट्ट। लोहचूर्ण। अयोमल। लोहज। कृष्णचूर्ण। लोष्ट।

लोहकुभी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोहकुम्भी] लोहे का वह पात्र जिसमें कोई वस्तु खोलाई जाय। कटाहा (को०)।

लोहगन्ध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहगन्ध] महाभारत के अनुसार एक जाति का नाम।

लोहघातक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कर्मकार नामक जाति। इन जाति के लोग लोहे को तपाकर पीटते हैं। लाहार।

लोहचर्मवान्—वि० [सं० लोहचर्मवत्] (व्यक्ति) जो लोहे का कवच पहने हो (को०)।

लोहचारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक नरक (को०)।

लोहचालिका—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का बखतर जिसमें सारा शरीर ढका रहता था (को०)।

लोहचून—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहचूर्ण] दे० 'लोहचूर्ण'।

लोहचूर्ण—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लोहे का बुरादा या चूरा। लोहे की रेत। २ मोरचा। मँल (को०)।

लोहज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ कसकुट। कौसा। २. लोहे का चूरा (को०)।

लोहजाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] कवच। जिरहबस्तर (को०)।

लोहजित्—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हीरा (को०)।

लोहदारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक नरक का नाम। दे० 'लोहचारक' (को०)।

लोहद्रावी—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहद्राविन्] १ मोहागा। २ अमनवेत।

लोहनाल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] नाराच नामक अस्त्र। विशेष दे० 'नाराच'।

लोहनिर्यास—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोहकिट्ट' (को०)।

लोहनी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लोह + नी (प्रत्यय०)] लोहे का तसला जिससे मत्लाह नाव का पानी उलीचते हैं।

लोहपृष्ठ—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सारम। बगुला (को०)।

लोहप्रतिमा—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] १. निहाई जिमपर तपाया हुआ लोहा रखकर पीटते हैं। २. लोहे की बनी मूर्ति (को०)।

लोहवदा—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लोहा + वाँचना] वह डडा या छड़ी जिसका सिरा लोहे से मढा हो।

लोहबद्ध—वि० [सं०] लोहे से मढे हुए सिरैवान् (को०)।

लोहवान—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लोवान] दे० 'लावान'।

लोहमणि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सोने का पाँमा (को०)।

लोहमल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोहकिट्ट' (को०)।

लोहमात्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] भाला। बर्छा (को०)।

लोहमारक^१—वि० [सं०] लोहशोधक (को०)।

लोहमारक^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक साग (को०)।

- लोहमुक्तिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लाल मोती [को०] ।
 लोहरज—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लोहरजस्] मोरचा । जंग [को०] ।
 लोहराज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] चाँदी [को०] ।
 लोहलगर—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लोहा + लगर] १. जहाज का लगर ।
 २. बहुत भारी वस्तु ।
 लोहल'—वि० [सं०] १. लौहनिर्मित । लोहे का बना हुआ । २.
 अस्मृष्ट बोलनेवाला [को०] ।
 लोहल'—सञ्ज्ञा पुं० शृङ्खला का मुख्य छल्ला [को०] ।
 लोहलिंग—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहलिङ्ग] खून से भरा फोडा [को०] ।
 लोहवर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुवर्ण । सोना [को०] ।
 लोहवर्म—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहवर्मन्] लोहे का कवच [को०] ।
 लोहशकु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहशङ्कु] १. पुराणानुसार इक्ष्मीस नरको
 मे से एक नरक का नाम । २. लोहे का भाला [को०] ।
 लोहशुद्धिकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सुहागा [को०] ।
 लोहश्लेषण, लोहश्लेषक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुहागा ।
 लोहसकर—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहसङ्कर] १. धातुओं का मिश्रण ।
 २. वर्तलोह । नीला इस्पात [को०] ।
 लोहसश्लेषक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मुहागा [को०] ।
 लोहसार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. फौलाद । २. फौलाद को बनी
 जजीर । उ०—लोहसार हस्ती पहिराए । मेघ साम जनु गरजत
 आए ।—जायसी (शब्द०) ।
 लोहहारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] मनु के अनुसार एक नरक का नाम ।
 लोहागारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लाहाङ्गारक] दे० 'लाहहारक' ।
 लोहागी, लोहाँगी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लोहा + अग + ई] वह छड़ी या
 डडा जिसके एक किनारे पर लाहा लगा हाता है ।
 लोहा'—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहा] १. एक प्रासेद धातु जो ससार के सभी
 भागा में अनेक धातुओं के साथ मिली हुई पाई जाती है ।

विशेष—इसका रंग प्रायः काला होता है । वायु या जल के ससर्ग
 से इसमें मार्चा लग जाता है । भारतवर्ष में इस धातु का ज्ञान
 वैदिक काल से चला आता है । वेदा में लोहे को साफ करने की
 विधि पाई जाती है और उसके बने कठिन और तीक्ष्ण हथियारों
 का उल्लेख मिलता है । लोहे का ज्ञान पहले पहल ससार में
 किस, कब, कहाँ और किस प्रकार हुआ, इसका उल्लेख नहीं
 मिलता । वैदिक शास्त्र के अनुसार लाहा पाँच प्रकार का होता
 है—काची, पांडि, कात, कालग और वज्रक । इनमें काची,
 पांडि और कालग क्रमशः दक्षिण का काचापुरा, पडा और
 कर्लिंग देश के लोहे के नाम हैं, जा वहाँ का खाना से निकलते
 थे । जान पड़ता है, वज्रक उस लाहे का कहते थे, जो आकाश
 से उल्का के रूप में गिरता था, क्योंकि बहुत दिनों से ससार
 में यह बात चली आता है कि जबजली स या उल्कापात में
 लोहा गिरता है । काल हर एक स्थान के शुद्ध किए लोहे को
 कहते हैं । इन्हीं पाँच प्रकार के लोहों का प्रयोग वैदिक में
 सर्वश्रेष्ठ मानकर लिखा गया है । यह बलप्रद, शोथ, शूल, अर्श,

कुष्ठ, पांडू, प्रमेह मेद और वायु का नाशक, आँसुओं की
 ज्योति और आयु को बढ़ानेवाला, गुरु तथा पात्रक माना
 जाता है । कुछ लोगों का तो यह भी मत है कि लोहा सब रोगों
 का नाश कर सकता है, और मृत्यु तक को हटा देता है । वैदिक
 में लोहे के भस्म का प्रयोग होता है । भारतवर्ष का लोहा
 प्राचीन काल में ससार भर में प्रयात था । यहाँ के लोगों का
 ऐसे उपाय मालूम थे जिनमें लोहे पर संकटों वषों तक शत्रु
 का प्रभाव नहीं पड़ता था, और वर्षा तथा वायु के नष्टन से
 तथा मिट्टी में गड़े रहने से उनमें मोर्चा नहीं लगता था । दिल्ली
 का प्रसिद्ध स्तंभ इसका उदाहरण है, जिमें पंद्रह सौ वर्षों में
 अधिक बीत चुके हैं । उसपर अभी तक कहीं मार्च का नाम
 तक नहीं है । आज कल लोहे को जिन प्रणालियों से साफ करते हैं,
 वह यह है,—खान से निकले हुए लोहे का पहलें प्राग में डाल-
 कर जला देते हैं, जिससे पानी और गंधक आदि के अणु उनमें
 से निकल जाते हैं । फिर उस लाहे को कायले या परदर के चूने
 के साथ मिलाकर बर्तों में डालकर गलाते हैं । इससे आक्सीजन
 का अणु, जो पहली बार जलाने में नहीं निकल सकता है,
 निकल जाता है । इतना साफ करने पर भी लोहे में प्रात
 संकटा दो से पाँच अणु तक गंधक, कार्बन, मैंगनीज, फास्फोरस,
 थ्रुमीनम आदि रह जाते हैं । उन्हें अलग करने के लिये
 उसे फिर भट्टी में गरक लगाते हैं, और तब घन न पाँटते
 हैं । पहले का देगचून और दूसरे का लोहा या कभावा हुआ
 लोहा कहते हैं । इस कच्चे लोहे में भी संकटा पीछे ०.१५ से
 ०.५ तक कार्बन मिला रहता है । उसी कार्बन का निकालना
 प्रधान काम है । इस्पात में संकटे पीछे ०.६ से ०.२ तक
 कार्बन होता है । उत्तम लोहा वही माना जाता है, जिनपर
 अम्ल या एसिड आदि का कुछ भी प्रभाव न पड़े । विशुद्ध लोहे
 का रंग चाँदी की तरह सफेद होता है और जला करने पर
 वह चमकने लगता है । यदि लोहे को धना जाय, तो उसमें
 एक प्रकार की गंध सी निकलती है । पुराणों में लिखा है कि
 प्राचीन काल में जब देवताओं ने लामिल दत्त का वध किया,
 तब उसी के शरीर से लोहा उत्पन्न हुआ । तीक्ष्ण, मुड और
 कांत लोहों के पर्याय भी अलग अलग हैं । तीक्ष्ण क पर्याय शब्दा-
 यस्, शास्त्र्य, पिंड, शठ, आयस, निक्षित, तीव्र, सग, चित्रायस,
 मुडज इत्यादि । मुड के पर्याय—दृप्तसार, शलात्मज, अशभज,
 कृषिलोह इत्यादि । कुछ लोगों का कथन है कि आदि में 'लाहा'
 ताँबे को कहते थे । कारण यह है कि 'लोह' शब्द का प्रधान
 या यौगिक अर्थ है—लाल । पीछे इसका प्रयोग लाहे के लिये
 करने लगे । पर यह कथन कई कारणों से ठीक नहीं जान
 पड़ता । एक कारण यह है कि वेदों में लोह और अयस् शब्दों
 का प्रयोग प्रायः सब धातुओं के लिये मिलता है । दूसरे यह
 कि अब लोहे को आधुनिक विद्वान् लाल रंग का कारण मानने
 लगे हैं । उनकी धारणा है कि रक्त में लोहे के अणु ही के कारण
 ललाई है, और मिट्टी में लोहे का अणु मिला रहने से ही मिट्टी
 के बर्तन और ईंटें आदि पकाने पर लाल हो जाती हैं ।

मुहा०—लोहे के चने = अत्यंत कठिन और दु साध्य काम । लोहे के चने चवाना = अत्यंत कठिन काम करना ।

यौ०—लोहे की स्याही = एक प्रकार का रंग जो लोहे से तैयार किया जाता है ।

विशेष—यह रंग तैयार करने के लिये पहले गुठ या शीरे को पानी में धोल लेते हैं और उसमें लोहचून् छोड़कर धूप में रख देते हैं । कई दिनों में वह उठने लगता है, और उसके ऊपर भाग काले रंग का हो जाता है, तब जान लेते हैं कि रंग तैयार हो गया है । इसे 'कसेरे की स्याही' और 'कल्थ' भी कहते हैं । यह रंगाई के काम में आता है ।

२ अस्त्र । हथियार । उ०—नेही लोहा नूर लखि कटत कटाच्छन मांहि । असनेही हित खेत तजि भागत लोहे जाहि ।—रसनिधि (शब्द०) । ३. लडाईं । युद्ध ।

मुहा०—लोहा गहना = हथियार उठाना । युद्ध करना । उ०—काशीराम कहै रघुवशिन की रीति यही जासो कीजै मोह तासो लोह कैसे गहिए ।—हनुमन्नाटक (शब्द०) । लोहा वजना = युद्ध होना । उ०—दोनो वीर ललकार के ऐसे टूटे कि हाथियों के यूथ पै सिंह टूटे और लगा लोहा वजने ।—लल्लू (शब्द०) । लोहा बरसना = तलवार चलना । घमासान मचना । किसी का लोहा मानना = (१) किसी विषय में किसी का प्रभुत्व स्वीकार करना । किसी विषय में किसी से दबना । (२) पराजित होना । हार जाना । लोहा लेना = लडना । युद्ध करना । लडाईं करना । उ०—सनमुख लोह भरत सन लेऊँ । जियत न सुरसरि उतरन देऊँ ।—तुलसी (शब्द०) ।

४ लोहे की बनाई हुई कोई चीज या उपकरण । जैसे,—लगाम, कवच आदि । उ०—(क) राजा घरा भान के तन पहिरावा लोह । ऐसी लोह सो पहिरे चेत श्याम की ओह ।—जायसी (शब्द०) । (ख) पवन समान समुद्र पर धावाहि । बूडि न पांव पार होइ आवहि । थिर न रहहि रिस लोह चलाही । भाजहि पूछ सीस उपराही ।—जायसी (शब्द०) । ४ लाल रंग का बँल । ५ धाक । इबदवा । प्रभुत्व (को०) । ६ कपडे की शिकन डूर करनेवाली घोड़ी की इस्तिरी ।

लोहा^३—वि० [वि० लोही] १ लाल । २ बहुत अधिक कडा । कठोर ।

लोहार्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अगुरु [को०] ।

लोहाप्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] बाण के आगे लगी लोहे की नोक [को०] ।

लोहात्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल बकरा [को०] ।

लोहाना^१—क्रि० अ० [हि० लोहा + आना (प्रत्य०)] लोहे के बर्तन में रखी रहने के कारण किसी वस्तु में लोहे के गुण या रंग आदि का उतर आना । किसी पदार्थ में लोहे का रंग या स्वाद आ जाना ।

लोहाना^२—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] एक जाति का नाम ।

लोहाभिसार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोहाभिवार' ।

लोहाभिवार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] सेना का एक उत्सव जिसमें युद्धार्थ अस्त्र शस्त्रों की सफाई की जाती है ।

लोहामिष—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लाल बकरे का मांस [को०] ।

लोहायस—वि० [सं०] दे० 'लौहायस' ।

लोहार—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोहकार, प्रा० लोह + आर (प्रत्य०)] [स्त्री० लोहारिन या लोहाइन] एक जाति जो लोहे का काम करती है ।

विशेष—इस जाति के अनेक भेद हैं । उनमें से कुछ अपने को ब्राह्मण कहते हैं और यज्ञोपवीत धारण करते हैं । उनकी अंतर्जातियों के नाम भी श्रोत्रा आदि होते हैं । पर अधिकतर आचारहीन होते हैं और शूद्र माने जाते हैं । प्रत्येक अंतर्जाति का खान पान और विवाह सब पृथक् पृथक् होता है, और उनके नाम भी भिन्न होते हैं ।

यौ०—लोहार की स्याही = कसीस । हीरा कसीस ।

लोहारखाना—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोहार + फा० खानह्] लोहारों के काम करने का स्थान ।

लोहारीं—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लोहार + ई (प्रत्य०)] लोहारों का काम । लोहार का व्यवसाय या पेशा ।

लोहार्गल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ बराहपुराण में वर्णित एक तीर्थ का नाम । २ लोहे का सिक्का [को०] ।

लोहि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] श्वेत वर्ण का टकरादार । एक किस्म का सुहागा [को०] ।

लोहिका—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लोहे का पात्र, तमला आदि [को०] ।

लोहित^१—वि० [सं०] रक्त । लाल । उ०—दिवस का अवसान समीप था, गगन था कुछ लोहित हो चला ।—प्रिय०, पृ० १ ।

लोहित^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मंगल ग्रह । उ०—प्रति मंदिर कलसनि पर भ्राजहि मनि गन दुति अपनी । मानहुँ प्रगटि विपुल लोहित पुर पठइ दिए अवनो ।—तुलसी (शब्द) । २ लाल रंग (को०) । ३ साँप । ४ एक प्रकार का मृग । ५ ब्रह्मपुत्र नदी का एक नाम (को०) । ६ एक प्रकार का घान (को०) । ७. आँख का एक विशेष रोग (को०) । ८ एक रत्न । लाल । ९ ताँबा (को०) । १० खून । रक्त (को०) । ११ केसर (को०) । १२ युद्ध (को०) । १३ लाल चदन (को०) । १४ एक समुद्र (को०) । १५ रोहू मछली (को०) । १६ अपूर्ण या हीन इद्रधनु (को०) ।

लोहितक^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ पद्मराग मणि । लाल मणि । २. मंगल ग्रह । ३. एक प्रकार का घान । ४ फूल नामक धातु । ५. ताँबा । ६ आजकल के रोहितक नगर का प्राचीन नाम ।

लोहितक^२—वि० लाल । रक्त वर्ण का [को०] ।

लोहितकल्माष—वि० [सं०] लान घब्रोवाला [को०] ।

लोहितकृष्ण—वि० [सं०] गहरा लाल [को०] ।

लोहितक्षय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] रक्ताल्पता रोग [को०] ।

लोहितग्रीव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] अग्नि का एक नाम [को०] ।

लौंगियामिर्च—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लींग + इया (प्रत्य०) + मिर्च] एक प्रकार की बहुत कड़वी मिर्च जिसका पेड़ बहुत बड़ा और फल छोटे छोटे होते हैं। इसे मिरची भी कहते हैं।

लौंङां—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लिङ्ग वा देश०] पुरुष की सूत्रेन्द्रिय।

लौंङिया—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लौंङी + आ (प्रत्य०)]। दे० 'लौंङी'। उ०—तेकर होइवो लौंङिया, जे रहिया बनावे हो।—धरनी०, पृ० १२७।

लौंङी—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लौंङा] दासी। मजदूरनी। उ०—मन मनसा हँ लौंङी निकारि बारी, मारो हकार तृपणा कुबुधि कुवाड की।—कवीर (शब्द०)।

लौंढ—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लब्ध या लब्धि = (प्राप्ति) ?] अधिमास। मलमास।

लौंङरां—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लव (= वायु)] वह पानी जो ग्रीष्म ऋतु में वर्षा प्रारंभ होने से पहले बरसता है। लवंदरा। लवद। दौंगरा।

लौंदा^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोदा'।

लौंदी—सञ्ज्ञा स्त्री० [देश०] वह करछी जिससे खंडसार में पाक चलाया जाता है। (बुंदेला)।

लौंन^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवन] १. दे० 'लवन'। २. दे० 'लौंद'।

लौंन^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवण] दे० 'लौन'। उ०—तंसो इह कहिए भव कोन। दाघे पर जस लागत लौंन।—नद० प्र०, पृ० १७१।

लौं—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० दावा] १. आग की लपट। ज्वाला। उ०—जोरि जो धरी है वेदरद द्वारे तीन होरी, मेरी विरहागि की उलूकनि लौं लाइ आव।—पद्माकर (शब्द०)। २. दीपक की टेम। दीपशिखा।

लौं—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लाग] १. लाग। चाह। राग। उ०—लौं इनकी लागी रहै निज मन मोहन रूप। तातैं इन रसनिधि लयी लोचन नाम अनूप।—रसनिधि (शब्द०)। २. चित्त की वृत्ति।

लौं०—लौलीन = किसी के ध्यान में हुवा हुआ या मस्त। उ०—खसम न चीन्हें बावरी पर पुषप लौलीन। कर्हहि कवीर पुकारि के परी न बानी चीन्ह।—कवीर (शब्द०)।

३. आशा। कामना। उ०—लौं लगी लोचन में लिखि की जते गुरु लोगन को भय भारी।—सुदरीसर्वस्व (शब्द०)।

क्रि० प्र०—लगना।—लगाना।

लौं—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोलक] कान का लटका हुआ भाग। लोलकी।

लौंघा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लावुक] कद्दू। घोघ्रा।

लौंकना—क्रि० प्र० [सं० लोफन] दूर से दिखाई देना। उ०—मनि कुबल फनक अति लौंन। जखु कौंधा लौंकहि दुइ कोने।—जायसी (शब्द०)।

लौकांतिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लौकान्तिक] जँनो के अनुसार वे स्वर्गस्थ जीव जो पाँचवें स्वर्ग ब्रह्मलोक में रहते हैं। ऐसे जीवों का जो दूसरा अवतार होता है, वह प्रतिम होना है और समके उपरांत फिर उन्हें अवतार धारण करने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

लौकां—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लावुक] [स्त्री० लौकी] कद्दू। उ०—भइ भूजी लोका परवती। रंता कीन्ह काटि कै रती।—जायसी (शब्द०)।

लौकायतिक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] वह जो धार्मिक मत को मानता हो। नास्तिक। भौतिकवादी (को०)।

लौकिक^१—वि० [सं०] १. लोक संबंधी। साधारण। २. पार्थिव। भौतिक। ३. व्यावहारिक। ४. सामान्य। साधारण। प्रचलित। सार्वजनिक।

लौकिक^२—सञ्ज्ञा पुं० १. सात मात्राओं के छंदों का नाम। ऐसे छंद इक्कीस प्रकार के होते हैं। २. सांसारिक व्यवहार। लाक-व्यवहार या चलन (को०)।

लौकिकन्याय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोक में पाला जानेवाला नियम। साधारण नियम।

लौकिकाग्नि—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] अग्नि जिसका विधिपूर्वक उत्सार न हुआ हो। सामान्य अग्नि।

लौकिकज्ञ—वि० [सं०] लोकव्यवहार को जाननेवाला (को०)।

लौकीं—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लावुक] १. कद्दू। घोघ्रा। २. काठ की वह नली जिसे नबके में लगाकर मद्य चुभाते हैं।

लौक्य वि० [सं०] १. लौकिक। पार्थिव। २. साधारण। सामान्य। प्रचलित (को०)।

लौगावि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धर्मशास्त्र के कर्ता एक प्राचीन आचार्य का नाम।

लौज—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लौज] १. वादाम। २. एक प्रकार की मिठाई जो काटकर तिकोनिया बरफों के आकार की बनाई जाती है। इसमें प्रायः वादाम पीसकर डालते हैं।

लौं०—लौजात की गोट = वह ऐँठ की गोट जो समोसे के जोड़ों पर बनाई जाती है।

लौजीना—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लौजीना] १. वादाम का हलवा। २. पिस्ते वादाम से बनी मिठाई (को०)।

लौजोरा^(५)—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लौं + जोरना] पीतल या काँसे के कारखाने में वह काम करनेवाला जो बट्टों के पास बँठा हुआ यह देखता रहता है कि धातु गल गई या नहीं। धातु गलानेवाला।

लौट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लौटना] लौटने की क्रिया, भाव या ढग। घुमाव। मुड़ना। उ०—कर उठाय घूषुट करत उभरत पट गुफरोट। सुख मोटें लूटी ललन लखि ललना की लौट।—विहारी र०, दो० ४२४।

लौटनहारा^७—वि० [हि० लौटना + हारा (प्रत्य०)] लौटने, वापस होने या मुड़ जानेवाला । उ०—साँकरी खोर मे काँकरी की करि चोट चली फिरि लौटनहारी ।—पद्याकर (शब्द०) ।

लौटना^१—क्रि० अ० [हि० उलटना] १ कही जाकर पुनः वहाँ से फिरना । वापस आना । पलटना । उ०—(क) नख तें सिख लौं लखि मोहन को तन लाडिली लौटन पीठ दई । कवि वेनी छत्रीले भरी अँकवारि पसारि भुजा करि नेहमई । यह गुज की माल कठोर अहो रहो भो छत्रियाँ गडि पीर भई । उचकी लची चोंकी चकी मुख फेरि तरेरि बडी अँखियाँ चितई ।—वेनी (शब्द०) । २ इधर से उधर मुँह फेरना । पीछे की ओर मुँह करना । उ०—ताही समय उठो घन घोर शोर दामिनी सी लागी लौटि श्याम घन उर सो लपकि कै ।—केशव (शब्द०) ।

संयो क्रि०—जाना ।—पडना ।

लौटना^२—क्रि० स० इधर से उधर करना । पलटना । उलटना । जैसे—पुस्तक के पन्ने लौटना । (क०) ।

लौटपटा—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लौट + पटा] १ दे० 'लोटपोट' । २. 'लहालोट' ।

लौटपौट—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लौट + अणु० पौट] १ दोरुखी छपाई । वह छपाई जिसमें दोनों ओर एक से बेल बूटे दिखाई पडें । वह छपाई जिसमें उलटा सीधा न हो । २ उलटने पलटने की क्रिया । ३. दे० 'लोटपोट' ।

लौटफेर—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लौट + फेर] इधर का उधर हो जाना । उलटफेर । हेर फेर । भारी परिवर्तन ।

लौटान—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लौटना] लौटने की क्रिया या भाव ।

लौटाना—क्रि० स० [हि० लौटना का सक० रूप] १ फेरना । पलटाना । २ वापस करना । जैसे,—(क) यदि आप वहाँ जायें, तो उन्हें लौटाकर ला सकते हैं । (ख) अब आप ये नव पुस्तकें उन्हें लौटा दें । ३. किसी को उल्टे मुँह फेरना । वापस करना । ४ ऊपर नीचे करना । जैसे,—कपडा लौटाना । (व०) ।

लौटानी क्रि० वि० [हि० लौटना] लौटते समय । लौटती बार ।

लौड़ा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोल या हिं० लड] पुरुष की मूर्धेन्द्रिय ।

लौद, लौदरां—सञ्ज्ञा पुं० [सं० नव + डाली] [स्त्री० लौदही, लौदरी] अरहर आदि की नरम डाली जिससे छानी छाने का काम लेते हैं । (डुआब या अतवेद) ।

लौन^७—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवण] नमक । लवण । उ०—(क) कीन्हेहू को।टक जतन अब गहि काढे कौन । भो मनमोहन रूप मिलि पानी मे को लौन ।—बिहारी (शब्द०) । (ख) प्रीतम पै चाख्यो हगन रूप सलोने लौन । कहै इशक मँदान मे तौ कहू अचरज कौन ।—रसनिधि (शब्द०) ।

लौना^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लवन] फसल की कटाई । लौनी ।

लौनहारां—सञ्ज्ञा पुं० [हिं० लौना + हार (प्रत्य०)] [स्त्री० लौन-हारिन] खेत काटनेवाला । लौनी करनेवाला ।

लौनां^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लूम या रोम] वह रस्सी जिससे किसी पशु के एक अगले और एक पिछले पैर को एक साथ बांधते हैं, जिसमें खुला छोड़ देने पर भी वह दूर तक न जा सके ।

लौना^२—सञ्ज्ञा पुं० [सं० ज्वलन] ईंधन ।

लौना^३—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लवन] फसल काटने का काम । कटनी । कटाई । लौनी ।

लौना^७—वि० [सं० लावण्य (= लौन)] [वि० स्त्री० लौनी] लावण्ययुक्त । सुदर । उ०—खेलत है हरि वागे बने जहाँ वैठी प्रिया रात तें आत लौनी ।—केशव (शब्द०) ।

लौनी^१—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लौना] १ फसल की कटनी । कटाई । २ वह कटा हुआ डठल जो अँकवार मे आवे । अँकोरा । डावी । लहना ।

लौनी^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० नवनीत] नैनू । नवनीत । उ०—लौनी कर आनन परसत हैं कछुक खाइ कछु लग्यो कपोलनि । कहि जन सूर कहाँ लौं बरनीं घन्य नद जीवन युग तोलनि ।—सूर (शब्द०) ।

लौमनां—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लूम] दे० 'लौना' ।

लौमनीं—सञ्ज्ञा स्त्री० [हिं० लौना या लौनी] १ दे० 'लौना' । २. दे० 'लौनी' ।

लौरी—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं० लेह, हिं० लँरू] बछिया । उ०—सो सुनि राधिका काँपि गई डरि दौरि के लौरिहि सी लपटानी ।—सुधानिधि, पृ० ११६ ।

लौलय—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ अस्थिरता । चंचल वृत्ति । २. उत्सुकता । उत्कट अभिलाषा । लालच [को०] ।

लौस—सञ्ज्ञा पुं० [फ्रा०] १ लित होना । २ मिलावट । मिश्रण । ३ घन्वा । दाग [को०] ।

लौह^१—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ लोहा । २ शस्त्रास्त्र । ३ लाल बकरे का मास [को०] ।

लौह^२—वि० [सं०] १. लोहे का बना हुआ । २ ताम्रनिर्मित । ३. ताम्बा । तंबे के रंग का । लाल । ४ धातुनिर्मित [को०] ।

लौह^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [अ०] १ तख्ती । २ पुस्तक का सफा । पृष्ठ । पन्ना । पत्र ।

लौहकार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लोहार ।

लौहचारक—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] पुराणानुसार एक भीषण नरक का नाम ।

लौहज—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १. मँहूर । २ लोहे का मोरचा । जग [को०] ।

लौहबंध—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लौहबंध] लोहे की बड़ी या सिक्कड [को०] ।

लौहभांड—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लौहभाण्ड] लोहे का पात्र [को०] ।

लौहभू—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोहारमा' [को०] ।

लौहमल—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] दे० 'लोहज' ।

लौहशंकु—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लौहशङ्कु] लोहे का भाला [को०] ।

लौहशास्त्र—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धातुविद्या । धातुविज्ञान [को०] ।

लौहसार—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का लवण जो लोहे से बनाया जाता है । यह रासायनिक परिक्रिया द्वारा बनता है और औषधो में काम आता है ।

लौहा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लोह] दे० 'लोहा' ।

लौहाचार्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] धातुओं के तत्व को जाननेवाला आचार्य । वह जो धातुविद्या का अच्छा ज्ञाता हो । धातुविद्याविद् ।

लौहात्मा—सञ्ज्ञा पुं० [सं० लौहात्मन्] लोहे का पात्र । कढाही । केतली [को०] ।

मौहायस—वि० [सं०] लोहे या ताँबे का बना हुआ ।

लौहासव—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक प्रकार का आसव जो लोहे के योग से बनाया जाता है । (वैद्यक) ।

लौहि—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] हरिवंश के अनुसार अष्टक के एक पुत्र का नाम ।

लौहित—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] महादेव का त्रिशूल ।

लौहिता—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लोहा] वैश्यो की एक जाति जो लोहे का व्यापार करती है । लोहिया ।

लौहितायन—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] एक गोत्र का नाम ।

लौहिताश्व—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] लौहिताश्व । अग्नि [को०] ।

लौहितिक—वि० [सं०] लालिमायुक्त । ललाँहा [को०] ।

लौहित्य—सञ्ज्ञा पुं० [सं०] १ एक प्रकार का धान जिसके चावल लाल

रंग के होते हैं । २ गन्धपुत्र नदी । ३ एक पर्वत का नाम । ४. एक तीर्थ का नाम । ५ लाल भागर । ६ लालिमा । ललाँहा लाली [को०] ।

लौही—सञ्ज्ञा स्त्री० [सं०] लौहपात्र । कढाही प्रादि [को०] ।

लौहेष्ट—वि० [सं०] लोहे या अन्य किसी धातु के बने हुए वम में युक्त रथ [का०] ।

ल्याना^७—क्रि० म० [हि० ले + आना] १ २० 'लाना' । उ०—
(ग) ल्याई लान विलोकिए जिय की जीवन मूलि । रही मीन के बोन में नोनकुही मी फूनि —बिहारी (शब्द०) । (ख) काहे ने ल्याई फिर मोहन बिहारी जू को, फँसे वहाँ ल्यावो, जैसे बाको मन ल्याई है ।—पद्माकर (शब्द०) । (ग) विप्र वचन नुने मत्तो मुग्रानिनि खली जानकिहि ल्याई । कुँवर निरगि जयमान भेलि उर तुँपरि रहीं नकुचार्इ ।—तुलसी (शब्द०) ।

ल्यारी—सञ्ज्ञा पुं० [देश०] भेटिया । उ०—श्रीकृष्णचंद्र ने मुसकरा के कहा—उदृत अच्छा, तू बन भेटिया और मद्य माल चाल होवें मेढा । सो सुनते ही व्योमामुर वं फूँकर ल्यारी हुआ और माल चाल सब बन मेढे ।—लल्लू (शब्द०) ।

ल्यवना^७—क्रि० म० [हि० लाना] २० 'लाना' । उ०—पितहि भू ल्यावते, जगत पश पावते ।—केशव (शब्द०) ।

ल्यौ^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० ली] ध्यान । ली ।

लवाव—सञ्ज्ञा पुं० [अ० लुवाव] दे० 'लुवाव' ।

लवारि^७—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० गुमार] दे० 'लुह' ।

ल्वीन वि० [सं०] गत । गया हुआ [को०] ।

ल्हामां^१—सञ्ज्ञा पुं० [हि० लम] दे० 'लामा' ।

ल्होसा^२—सञ्ज्ञा पुं० तिब्बत की राजधानी जिसे लामा भी कहते हैं ।

ल्हीकां^३—सञ्ज्ञा स्त्री० [हि० लीक] १ जू । २ दे० 'लीख' ।

